॥ श्री वीतरागाय नमः ॥

युग प्रमुख चारित्र शिरोमणि सन्मार्ग दिवाकर आचार्य श्री विमल सागर जी महाराज की हीरक जयन्ती वर्ष के उपलक्ष में

पुष्प न ५५

मूल ग्रन्थ कर्त्ता श्रीमद् रविषेणाचार्य

श्री पद्म पुराण जी भाषा-वचनिका

हिन्दी अनुवाद

स्वर्गीय पण्डित दौलतरामजी कृत

प्रेरक

उपाध्याय श्री भरत सागर जी महाराज

निर्देशिका

आर्यिका स्याद्वादमती माताजी

~~स्व. पूज्य पिताजी मूलचन्द जी अजमेरा एवं स्व. पूज्य माताजी श्रीमती कमलाबाई की पुण्य स्मृति में सादर भेंट~~

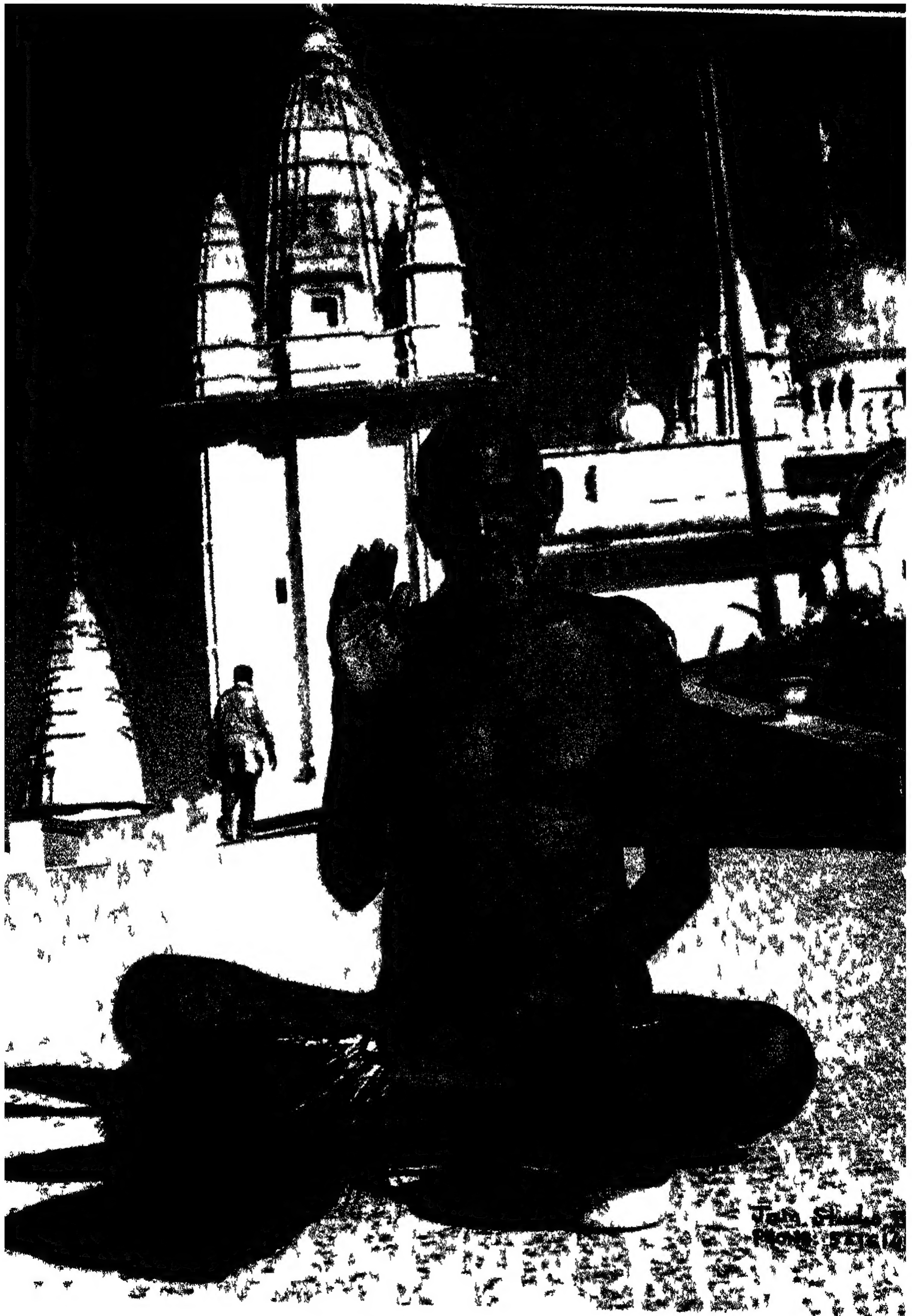
ताराचन्द अजमेरा

एच ५/५ कृष्णा नगर, दिल्ली ११० ०५१

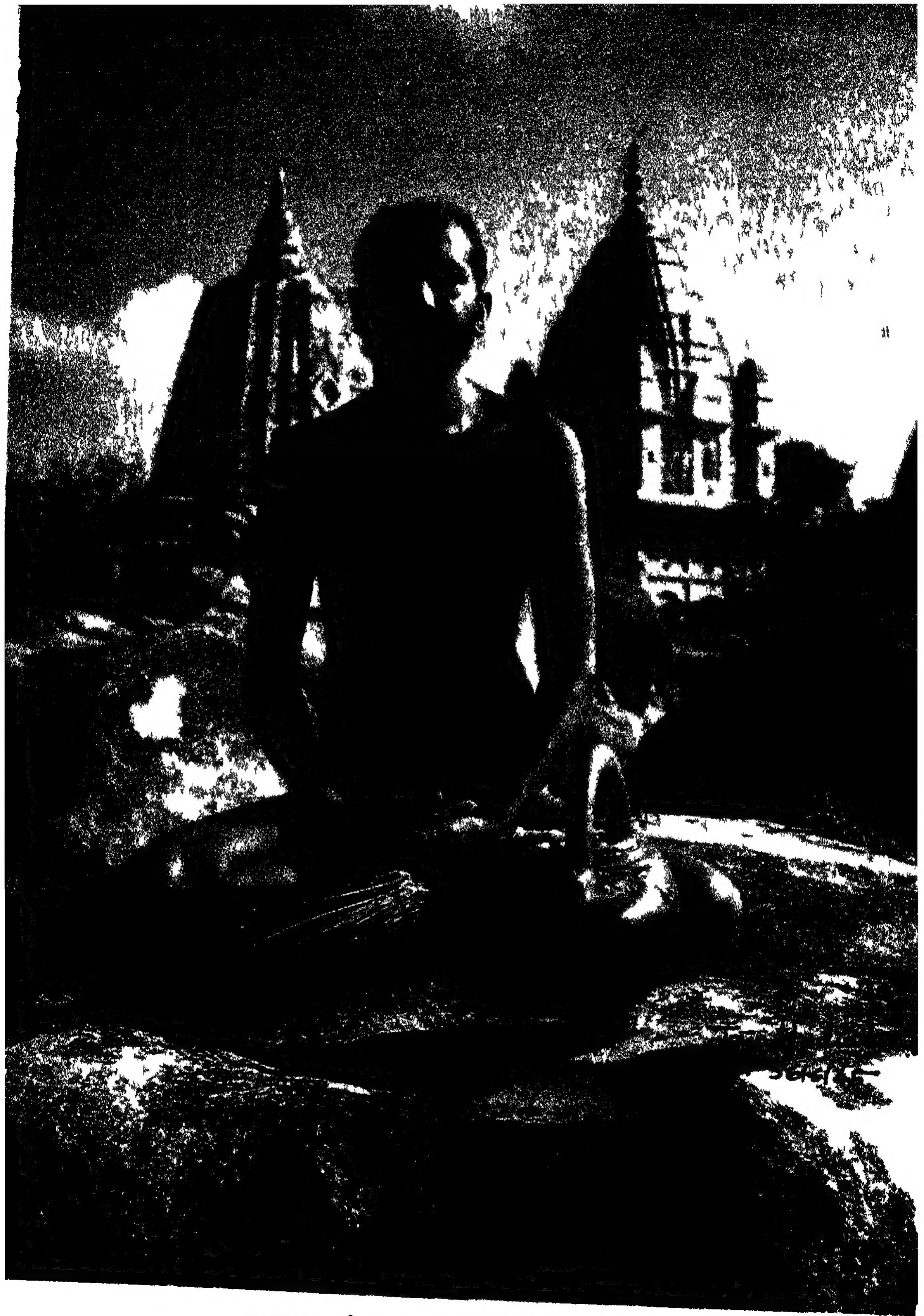
प्रबन्ध सम्पादक

ब्र श्री धर्मचन्द्र जी शास्त्री प्रतिष्ठाचार्य

जैनमदिर उदासीनआश्रम गुलाब वाटिका (लोनी रोड दिल्ली)
ब्र प्रभाजी पाटनी (आचार्य विमल सागरजी सघ)
प्रतिया १०००
न्योछावर रुपये १०१/ रुपये
जनवरी १९९१
वी नि स २५१६
मुद्रक
राधा प्रेस गाधी नगर दिल्ली
ग्रन्थ प्राप्ति स्थान
१ श्री आचार्य विमलसागरजी सघ
२ सुमेरचन्द जैन कटरा शाहन शाही दिल्ली ६
३ राजीव टेक्सटाईल महावीर बजार कटरा शाहन शाही दिल्ली ६
४ ताराचन्द जैन एण्ड क
१९५१ कटरा शाहन शाही चादनी चौक दिल्ली ११० ००६
५ अनेकान्त सिद्धान्त समिति लोहारिया जि बासवाड़ा
६ जैन मदिर गुलाब वाटिका लोनी रोड, दिल्ली ६
ताराचन्द्र अजमेरा
एच ५/५ कृष्णा नगर दिल्ली ११००५१ दूरभाष प्रतिष्ठान ३२६९८८४ निवास २२४२६६८



आचार्य श्री विमल सागर जी महाराज



उपाध्याय श्री भरत सागर जी महाराज

समर्पण

युगप्रमुख
चारित्र शिरोमणि
सन्मार्ग दिवाकर
करुणा निधि
वात्सल्य मूर्ति
अतिशय योगी
तीर्थोद्धारक चूड़ामणि
अपाय विचय धर्मध्यान के ध्याता
शान्ति सुधामृत के दानी
वर्तमान मे धर्म पतितो के उद्धारक
ज्योति पुञ्ज पतितो के पालक
तेजस्वी अमर पुञ्ज
कल्याणकर्ता दु खो के हर्ता समदृष्टा
बीसवी सदी के अमर सन्त
परम तपस्वी इस युग के महान साधक
जिन भक्ति के अमर प्रेरणास्रोत
पुण्य पुञ्ज
गुरुदेव आचार्यवर्य श्री १०८ श्री विमलसागरजी महाराज के कर कमलों में
ग्रन्थराज" समर्पित

आशीर्वाद

उपाध्याय मुनि श्री भरतसागर जी

आचार्य श्री विमलसागर जी महाराज का हीरक जयन्ती वर्ष हमारे लिए एक स्वर्णिम अवसर लेकर आया है । तीर्थकरों की वाणी स्याद्वाद वाणी का प्रसार सत्य का प्रचार है ।

असत्य का उखाडना है तो असत्य का नाम भी मुख से न निकालो सत्य स्वय ही प्रस्फुटित हो सामने आयेगा ।

वर्तमान में कुछ वर्षों से जैनागम को धूमिल करने वाला एक श्याम सितारा ऐसा चमक गया कि सत्य पर असत्य चादर थोपने लगा । वह है एकान्तवाद निश्चयाभास ।

असत्य को अपना रग चढाने में देर नहीं लगती यह कटु सत्य है । कारण जीव के मिथ्यासस्कार अनादिकाल से चले आ रहे हैं । फलत पिछले ७ ८ वर्षों में एकान्तवाद सस्कार ने जैन का टीका लगाकर निश्चयनय की आड में स्याद्वाद को कलकित करना चाहा । घर घर में मिथ्याशास्त्रों का प्रचार किया । आचार्य कुन्दकुन्द की आड में अपनी ख्याति चाही और भावार्थ बदल दिये अर्थ का अनर्थ कर दिया ।

बुधजनों ने अपनी क्षमता से मिथ्यात्व से लोहा लिया पर अपनी तरफ से जनता को सत्य साहित्य नहीं दिया । आर्यिका स्याद्वादमती जी ने इस हीरक जयन्ती वर्ष में एक नया निर्णय आचार्यश्री व हमारे सानिध्य में लिया कि असत् साहित्य हो हटाने के पूर्व हमारा आगम जन जन के सामने रखें अनेक योजनाओं में से एक मुख्य योजना सामने आई आचार्य प्रणीत ७५ ग्रन्थों का प्रकाशन हो । जिनागम का का भरपूर प्रकाशन हो सूर्य का प्रकाश जहा होगा श्याम सितारा वहा क्या करेगा । सत्य का मण्डन करते जाइए असत्य का खण्डन स्वय होगा । असत्य को निकालने के पूर्व सत्य को थोपना आवश्यक है ।

ग्रन्थों के प्रकाशनार्थ जिन भव्यात्माओं ने अपनी स्वीकृतिया दी हैं परोक्ष प्रत्यक्ष रूप से सहायता दी है सबको हमारा आशीर्वाद है ।

सकल्प

णाणा पयास सम्यग्ज्ञान का प्रचार प्रसार केवल ज्ञान का बीज है । आज कलयुग में ज्ञान प्राप्ति की तो होड लगी है पद्विया और उपाधिया जीवन का सर्वस्व बन चुकी हैं परन्तु सम्यग्ज्ञान की ओर मनुष्यों का लक्ष्य ही नही है ।

जीवन में मात्र ज्ञान नही सम्यग्ज्ञान अपेक्षित है । आज तथाकथित अनेक विद्वान् अपनी मनगढन्त बातों की पुष्टि पूर्वाचार्यों की मोहर लगाकर कर रहे हैं ऊटपटाग लेखनिया सत्य की श्रेणी में स्थापित की जा रही है कारण पूर्वाचार्य प्रणीत ग्रन्थ आज सहज सुलभ नहीं है और उनके प्रकाशन व पठन पाठन की जैसी और जितनी रुचि अपेक्षित है वैसी और उतनी दिखाई नहीं देती ।

असत्य को हटाने के लिए पर्चेबाजी करने या विशाल सभाओं में प्रस्ताव प्रारित करने मात्र से कार्य सिद्ध होना अशक्य है । सत्साहित्य का प्रचुर प्रकाशन व पठन पाठन प्रारम्भ होगा असत् का पलायन होगा । अपनी सस्कृति की रक्षा के लिए आज सत्साहित्य के प्रचुर प्रकाशन की महती आवश्यकता है —

यनैते विदेलन्ति वादिगिरय स्तुष्यन्ति वागीश्वरा
भव्या येन विदन्ति निवृतिपद मुञ्चति मोह बुधा ।
यद् बन्धुर्यमिना यदक्षयसुखस्याधार भूत मत
तल्लोकजपशुद्धिद जिनवच पुष्याद् विवेक श्रियम् । ।

सन् १९८४ से मेरे मस्तिष्क में यह योजना बन रही थी परन्तु तथ्य यह है कि सकल्प के बिना सिद्धि नहीं मिलती । सन्मार्ग दिवाकर आचार्य १ ८ श्री विमलसागर जी महाराज की हीरक जयन्ती के मागलिक अवसर पर मा जिनवाणी की सेवा का यह सङ्कल्प मैने प पूज्य गुरुदेव आचार्य श्री व उपाध्याय श्री के चरण सानिध्य में लिया । आचार्य श्री व उपाध्याय श्री का मुझे भरपूर आशीर्वाद प्राप्त हुआ । फलत इस कार्य में काफी हद तक सफलता मिली है ।

इस महान् कार्य में विशेष सहयोगी प धर्मचन्दजी व प्रभाजी पाटनी रहे । इन्हें व प्रत्यक्ष परोक्ष में कार्यरत सभी कार्यकर्त्ताओं के लिए मेरा पूज्य गुरुदेव के पावन चरण कमलों में सिद्ध-श्रुत आचार्य भक्ति पूर्वक नमोस्तु नमोस्तु नमोस्तु

सोनागिर ११-७ ९ —आर्यिका स्याद्वादमती

आभार

सम्प्रत्यस्ति न केवली किल कलौ त्रैलोक्यचूडामणि ।
स्तद्वाचः परमासतेऽत्र भरतक्षेत्रे जगद्योतिका ॥
सद्‌रत्नत्रयधारिणो यतिवरांस्तेषा समालम्बनं ।
तत्पूजा जिनवाक्पूजनमतः साक्षाज्जिनः पूजित ॥ पद्मनन्दी प ॥

वर्तमान में इस कलिकाल में तीन लोक के पूज्य केवली भगवान इस भरतक्षेत्र में साक्षात् नहीं है तथापि समस्त भरतक्षेत्र में जगत्प्रकाशिनी केवली भगवान की वाणी मौजूद है तथा उस वाणी के आधारस्तम्भ श्रेष्ठ रत्नत्रयधारी मुनि भी हैं इसलिये उन मुनियों की पूजन तो सरस्वती की पूजन है तथा सरस्वती की पूजन साक्षात् केवली भगवान की पूजन है ।

आर्ष परम्परा की रक्षा करते हुए आगम पथ पर चलना भव्यात्माओं का कर्त्तव्य है । तीर्थंकर के द्वारा प्रत्यक्ष देखी गई दिव्यध्वनि में प्रस्फुटित तथा गणधर द्वारा गूंथित वह महान आचार्यों द्वारा प्रसारित जिनवाणी की रक्षा प्रचार प्रसार मार्ग प्रभावना नामक एक भावना तथा प्रभावना नामक सम्यग्दर्शन का अग है ।

युगप्रमुख आचार्य श्री के हीरक जयति वर्ष के उपलक्ष में हमें जिनवाणी के प्रसार के लिये एक अपूर्व अवसर प्राप्त हुआ है । वर्तमान युग में आचार्य श्री ने समाज व देश के लिये अपना जो त्याग और दया का अनुदान दिया है वह भारत के इतिहास में चिरस्मरणीय रहेगा । ग्रन्थ प्रकाशनार्थ हमारे सानिध्य या नेतृत्व प्रदाता पूज्य उपाध्याय श्री भरतसागरजी महाराज व निर्देशिका तथा जिन्होंने परिश्रम द्वारा ग्रन्थों की खोजकर विशेष सहयोग दिया ऐसी पूज्या आ स्याद्वादमतीमाताजी के लिये मैं शत शत नमोस्तु वन्दामि अर्पण करती हू । साथ ही त्यागीवर्ग जिन्होंने उचित निर्देशन दिया उनको शत शत नमन करती हू । तथा ग्रन्थ के सम्पादक महोदय श्रीमान् ब्र प धर्मचन्द जी शास्त्री प्रतिष्ठाचार्य ग्रन्थ के संशोधक तथा ग्रन्थ प्रकाशनार्थ अनुमति प्रदाता ग्रन्थमाला एव ग्रन्थ प्रकाशानार्थ अमूल्य निधि का सहयोग देने वाले द्रव्यदाता एव प्रकाशक श्री ताराचन्द जी अजमेरा की मैं आभारी हू तथा यथा समय शुद्ध ग्रन्थ प्रकाशित करने वाले आदि की भी मैं आभारी हू । अन्त में प्रत्यक्ष व परोक्ष रूप में सभी सहयोगियों के लिये कृतज्ञता व्यक्त करते हुए सत्य जिनशासन की व जिनागम की भविष्य में इसी प्रकार रक्षा करते रहें ऐसी भावना करती हू ।

कु. प्रभा पटनी संघस्थ

महामत्र णमोकार

णमो अरिहताणं
णमो सिद्धाण
णमो आइरियाण
णमो उवज्झायाण
णमो लोए सव्व साहूण

महामत्र एक दर्पण

श्री महामत्र का पाठ, करो नित प्रात, बात यह मानो ।
शिव मारग निधि पहिचानो ॥
यह महामत्र जिन शासन का, जिनवाणी के उद्घाटन का ।
इस महामत्र की शक्ति स्वय में जानो शिव मारग. ॥
शिव मार्ग स्वरूपी महामत्र, हर पद जिसका निज में स्वतत्र ।
हर पद की व्याख्या स्वय सिद्धमय ज्ञानो शिव मारग. ॥
है नमन् । प्रथम अरिहतों को, शिव मार्ग रूप भगवन्तों को ।
निज अनुशासन का भेद स्वय विज्ञानो शिव मारग ।
दूजा पद सिद्ध स्वरूपी है, अन्तर आतम अनुभूति है ।
अनुपम अनुभूति अन्तर मन में ध्यानो शिव मारग. ॥
तीजा पद है आचार्यों का, शिवमारग के शुभ कार्यों का ।
श्रावक से श्रमण बनाकर जग कल्याणो शिव मारग. ॥
है ' णमो णमो उवऽझायाण, जिनवाणी का करते वाचन ।
जिन वचन स्वय में जान सबै समझानो शिव मारग. ॥
है नमन् स्वय के साधक को, आतम गुण क आराधक को ।
कर्मों से काटें कर्म, धार मुनि बानो शिव मारग.. ॥
है ऐसो पच णमोकारो, जग का पापों से उद्धारो ।
मगल हो सबका तारा भावना मानो शिव मारग. ... ॥

यह महामंत्र एक दर्पण है, आतम साधक हित अर्पण है ।
आतम में परमातम मय रूप दिखानो शिव मारग.... ॥
नहिं वर्ण भेद, नहिं जाती है, यह महामंत्र एक थाती है ।
मन, वच, तन से करलो इसका श्रद्धानो शिव मारग. ॥
श्रद्धा से जो धारण करता, शिव मारग का राही बनता ।
निश्चय से होता मुक्त, सत्य यह मानो शिव मारग. ॥
श्री महामंत्र का पाठ, करो नित प्रात, बात यह मानो ।
शिव मारग निधि पहिचानो ॥

श्री जिनायनम
दो शब्द
स्वाध्याय परमम् तप

स्वाध्याय ही सर्वोत्कृष्ट तप है । सद् शास्त्रों का पठन पाठन करने से ही सद्ज्ञान या सम्यग् ज्ञान की प्राप्ति होती है । ससार में सब वस्तुए उपलब्ध हो सकती है पर सम्यग्ज्ञान का प्राप्त होना बडा दुर्लभ है कवि ने भी लिखा है कि धन कन कचन राजसुख सबहि सूलभ कर जान । दुर्लभ है ससार में एक यथारथ ज्ञान ॥ यथारथ ज्ञान अर्थात सम्यग् ज्ञान का प्राप्त होना बडा दुर्लभ है और उस सम्यग ज्ञान की प्राप्ति आगमोक्त शास्त्रों के स्वाध्याय से ही हो सकती है इस हेतु से ही परम पूज्य घोर तपस्वी निमित्त ज्ञान शिरोमणी १ ८ आचार्य प्रवर श्री विमल सागर जी महाराज की ७५वीपृ जयन्ती पर सघस्थ स्याद्वाद केशरी उपाध्याय श्री १ ८ भरत सागर जी महाराज ने एव १ ५ सघस्थ आर्यिका श्री स्याद्ववाद मती माता जी ने जन कल्याण हेतु तथा सम्यग्ज्ञान की उपलब्धी हेतु ७५ ग्रथों के प्रकाशन की योजना समाज के सामने रक्खी और उन की सद प्रेरणा और आशीर्वाद से अब तक कई ग्रथ प्रकाशित भी हो गये तथा हो रहे हैं उन्हीं में से एक ग्रन्थ है श्री पद्म पुराण (पद्म पुराण यह प्रथमानु योग का महान ग्रथ है) जिसमें मर्यादा पुरूषोत्तम भगवान राम चन्द्र का जीवन चरित्र है यह एक ऐसा सर्वमान्य ग्रथ है जिसका जैनाजैन सभी सम्मान पूर्वक स्वाध्याय करते हैं वैदिक आम्नय की रामायण भी इसीका अश है सघ में इस विशाल महान ग्रथ के प्रकाशन की चर्चा चल रही थी कि निमित्त से स्वाध्याय प्रेमी श्री ताराचद जी अजमेरा दिल्ली वालों का परम पूज्य आचार्य श्री के दर्शनार्थ श्री दि जैन सिद्धक्षेत्र सोनागिर जी जाने का सुअवसर आ गया सघ के दर्शन किये वहीं इस ग्रथ के प्रकाशन की चर्चा चली थी श्री ताराचद जी सा का ध्यान इस ओर गया और भावना हो गई कि यदि यह सौभाग्य मुझे प्राप्त हो जावे तो कितना अच्छा हो आपने ग्रंथ प्रकाशन का निश्चय कर आचार्य श्री से अपनी भावना व्यक्त की । पूज्य उपाध्याय श्री भरत सागर जी महाराज और पूज्य आर्यिका स्यादद्वाद माताजी से भी श्री ताराचद जी ने स्वीकृति हेतु निवेदन किया आप की तीव्र अभिलाषा देखते हुये आप को ग्रथ प्रकाशन की स्वीकृति प्राप्त हो गई साथ ही आपने उपाध्याय श्री भरत सागर जी महाराज से निवेदन किया कि मुझे सदैव ग्रंथ प्रकाशन में मेरे भ्राता पडित लाडली प्रसाद जी पापड़ीवाल सवाई माधोपुर वालों का सहयोग मिलता रहा है अत उन से भी चर्चा करलू । मेरे सामने श्री ताराचद जी ने इस ग्रथ के प्रकाशन की चर्चा की मुझे बडी प्रसन्नता हुई और मैंने कह दिया कि यह बहुत उत्तम कार्य है मेरे से जो सेवा बन सकेगी अवश्य सहयोग करूगा और पूज्य आचार्य श्री का आशिर्वाद लेकर श्री पदम पुराण की प्राचीन प्रति प्रकाशनार्थ ले आये तथा प्रयत्न और लगन पूर्वक छपवार्ने का कार्य प्रारभ कर दिया जो ग्रथ आप के कर कमलों में है

श्री ताराचद जी का सक्षिप्त जीवन परिचय

श्री तागचद जी स्व श्रीमान लाला फूलचद जी सा अजमेरा दिल्ली निवासी के सुपुत्र है आप की मातुश्री स्व कमलाबाई जी थी । दोनों ही गुरू भक्त धर्म परायण सरल स्वभावी श्रावक के षट कर्मो का पालन करने वाले थे दि जैन खडेलवाल ममाज में आप का बहुमान था श्रीमति कमलाबाई ने तीन पुत्र रत्नों को जन्म दिया । पदमचद जी ताराचद जा और माणक चद जी ।तीनो ही पुत्र पूर्ण धार्मिक वृत्ति के हुय ।श्री ताराचद जी का जन्म अगस्त १९२१ दिल्ली में हुआ । आप प्रारभ से ही चचल प्रकृति के परिश्रमी एव स्वाभिमानी रहे हैं धार्मिक विचार भी आप के प्रारभ से ही रहे हें आपका विवाह आगरा निवासी धर्म परायण लाला कुन्दनलाल जी लुहाडया की सुपुत्री सौ किरणबाई के साथ हुआ ये भी बहुत ही सरल स्वभावी गुरू भक्त धार्मिक वृति की है । श्रावक के षट कर्मो का पालन दोनों तन मन धन से करते हैं । आपका सारा परिवार धार्मिक वृत्ति का है । श्री ताराचद जी के दो पुत्र ललित कुमार जी एव सुमत कुमार जी है जो कपडे के प्रसिद्ध व्यवसाई हैं । तीन पौत्र मनीष सन्केत और सौरभ है दोनों पुत्रवधु सौ शशी और सौ मधु आज्ञाकारिणी हैं । यद्यपि श्री ताराचद जी ने दिल खोलकर कपडे का व्यवसाय किया पर अब आपने व्यवसाय का सारा कार्य भार अपने दोनों पुत्रों को सभला दिया है और अब आपका अधिकाश समय धर्माराधन गुरूसेवा में व्यतीत होता है । तीर्थवदना साहित्य प्रकाशन में अपनी चचला लक्ष्मी का सदुपयोग करते रहते हैं ।मैं प्रभु से यही प्रार्थना करता हू कि इनका दाम्पत्य जीवन दीर्घायु हो सुखी हो और आप मदैव इसी प्रकार चचला लक्ष्मी का धार्मिक कार्यों में सदुपयोग करते रहें । परमपूज्य आचार्य श्री के चरणों में शतश नमन करते हुये श्री वीर प्रभु से प्रार्थना करता हू कि आचार्य श्री दीर्घायु हों आरोग्यपूर्वक रत्नत्रय का पालन करते हुए चिरकाल तक धर्म देशना देते रहें ।

प लाड़ली प्रसाद जैन पापडी वाल सवाई माधोपुर (राज)

प्रकाशकीय

तुभ्य नम परम धर्म प्रभाव काय ।
तुभ्य नम परम तीर्थ सुवृन्दकाय।
स्याद्वाद सूक्ति सरणि प्रतिबोधकाय ।
तुभ्य नम विमल सिन्धु गुणार्णवाय ॥

महानुभाव धर्म बन्धुओ !

यह मेरा परम सौभाग्य है कि प्रात स्मरणीय सन्मार्ग दिवाकर करुणा निधि निमित्त ज्ञान शिरोमणि आचार्य श्री १ ८ पूज्य विमल सागर जी महाराज की हीरक जयन्ती वर्ष के शुभ अवसर परम पूज्य उपाध्याय विद्यागुरु ज्ञान दिवाकर श्री १ ८ भरत सागरजी महाराज एव पूज्य आर्यिका १ ५ स्याद्वाद मती श्री माताजी के प्रेरणा एव निर्देशन में हीरक जयन्ती वर्ष पर आचार्य श्री जी के शुभाशीर्वाद से ७५ ग्रन्थों के प्रकाशन का निर्णय लिया गया । इस मुख्य योजना में एक ग्रन्थ मुझको भी सोपा गया तदनुसार उसी श्रृखला मे इस ग्रन्थ का प्रकाशन किया जा रहा है सम्प्रति आचार्य वर्य पूज्य विमलसागरजी महाराज एवं उपाध्याय भरतसागरजी महाराज आर्यिका स्याद्वाद मती माताजी समस्त सघ के प्रति कृतज्ञता ज्ञापन करता हुआ उनके श्री चरण कमलों में शत शत नमोस्तु करता हू ।

आचार्य श्री १ ८ कल्याण सागर जी महाराज की भी मुझ सेवक पर असीम कृपा रही है जिन्होंने मुझसे श्रवणाचार (दश भक्ति सग्रह) का प्रकाशन करवाकर इस मार्ग पर प्रेरित किया और मेरे द्वारा श्रवणाचार (दस भक्ति सग्रह) का प्रकाशन हुआ मै उन्ही के अनुकम्पा पूर्ण मगलमय आशीर्वाद से यह भार उठाने में समर्थ हुआ हू । उनके पावन

चरणार विन्दों में भी मैं शत शत वन्दन करता हू ।

मैं उन सभी महानुभावों का भी आभारी हू जिन्होंने मुझे इस ग्रन्थ के प्रकाशन मे मेरा उत्साह वर्धन किया । मैंआदरणीय विद्वद्वर प्रतिष्ठाचार्य भाई सा प श्री लाडली प्रसाद जी पापडीवाला (सवाई माधोपुर) का भी अत्यन्त आभारी हू जो इस ग्रन्थ के प्रकाशन में समय समय पर मुझे सुझाव देते हुए मेरा मार्ग दर्शन करने रहे हैं ।

इस ग्रन्थ के प्रकाशन में एक सो इक्कीस रीम कागज का उपयोग हुआ है जिसमें भाई साहब श्री एस के जैन कटरा शाहन शाही वालोने ६ रीम कागज का भार उठा कर सहयोग प्रदान किया मैं भाई सुनील सुधीर सुबोध कुमार वडजात्या का भी आभारी हू जिन्होंने इस ग्रन्थ की वाइन्डिंग जिल्द का भार उठाकर अपना सहयोग प्रदान किया में अपनी धर्म पत्नि श्रीमती किरण देवी अपने सुपुत्र ललित कुमार एव सुमत कुमार पुत्र वधू शशी देवी मधु देवी का भी आभारी हू जिन्होंने मेरी अथक सेवा करके मुझे इस योग्य बनाया जिससे मै यह कार्य पूरा कर सका हू । मैं भाई श्री व्यास नन्दन शर्मा सचालक राधा प्रेस का भी आभारी हू जिन्होंने बडी तत्परता और ध्यान से इस ग्रन्थ के प्रकाशन का कार्य किया मै श्री धर्मचन्द जी शास्त्री जी का भी धन्यवाद ज्ञापित करता हू जिनके अथक प्रयत्न और सहयोग से यह ग्रन्थ प्रकाशित हो रहा है ।

अन्त मे मै पूज्य समस्त साधु समाज और पुन उन सभी सहयोगियों का आभारी हू जिन्होंने मुझे प्रत्यक्ष वा परोक्ष मे आशीर्वाद देकर सहयोग प्रदान किया ।

आज आपके कर कमलों मे यह परम पवित्र ग्रन्थ जैसा भी बन सका प्रस्तुत है इस ग्रन्थ के प्रकाशन हेतु प्रेणास्रोत तो परम पूज्य आचार्य श्री एव उपाध्याय श्री तथा आर्यिका माताजी ही हैं जिनके मगलाशीर्वादों से यह ग्रन्थ छप सका मेरी सभी साधु वृन्दों के चरणो मे करबद्ध प्रार्थना है कि मैं किसी प्रकार से भी ऐसे ग्रन्थों को प्रकाशित कराने में समर्थ नही हू न ही मुझ में इतनी शक्ति ही है यह तो सब आप श्री गुरुओ का आशीर्वाद है । इस ग्रन्थ के छपने में अनेक प्रकार की त्रुटिया रह जाना स्वाभाविक है । अत उसके लिए क्षमायाचना करता हुआ आप सभी से आशीर्वाद की कामना करता हू ।

जनवरी सन १९९१
निवास एच ५/५ कृष्णा नगर
दिल्ली ११ ५१

आपका विनम्र
ताराचन्द अजमेरा

मेरी जो दिन चर्या है उसमे जो कार्य है

वह मेरे पाप पुण्य का समागम है

मेरा पुरुषार्थ कुछ भी नही

(पुरुषार्थ पुरुष अर्थ आत्मा अर्थ)

आत्मा को यथार्थ जानने का नाम पुरुषार्थ है

तारा

एक चिन्तन

क्रोध पी जाता है, जो मुस्कराता है,
मान अपमान से जो ऊपर उठ जाता है ।
जो वीतरागी है, जगत् की चाहों से ऊपर,
आदमी वह भगवान की श्रेणी में आता है ॥

कोई पनघट का उथला नीर होता है,
कोई मरघट का उजला तीर होता है ।
कहानी जग सुनाता है बहारो की मजारों की,
इन्ही काटो के पथ चल रहा महावीर होता है ॥

आदमी के हृदय मे अनुराग होना चाहिए,
आदमी क जिगर मे एक आग होनी चाहिये ।
इन सारी बातो को बनाये रखने के लिए,
आदमी के जीवन में कुछ त्याग होना चाहिये ॥

जिसने समय को पहचाना उसन सब कुछ पाया है,
जिसने समय को नहीं जाना उसने कुछ गवाया है ।
क्षण मात्र भी प्रमाद मत कर मानव,
समय ने ही इन्सान को भगवान बनाया है ॥

आर्चाय विमलसागरजी की हीरक जयन्ती पर सादर नमन

ताराचन्द्र	किरनवाई	फर्म
ललीत कुमार	शशि कुमारी	ताराचन्द्र जैन एन्ड कम्पनी
सुमन कुमार	मधु कुमारी	थोक कपडे के व्यापारी
मनीष सन्केत	सौरव अजमेरा	कटरी शाहन शाही चादनी चौक
		दिल्ली ११ ६
		दूरभाष ३२६९८८४
		घर २२४२६६८

वीराष्टक

वद्यास्पद हित पद पद पदं, प्रत्यय सत्यग् पर पर पर ।
हेयेतरा कार बुध बुधं बुध वीरं स्तुवे विश्व हितं हित हितं ॥१ ॥
दिव्य वचोयस्य सभा सभा सभा, निपीय पीयूष पित पित पित ।
बभूव त्रप्ता सुरा सुरा सुरा, वीरं स्तुवे विश्व हित हित हित ॥२ ॥
शत्रु प्रमाण्यैर जिता जिता जिता, गुणावली येन धृता धृता धृता ।
सवादन तीर्थम् कर करं करं, वीरं स्तुवे विश्व हित हितं हित ॥३ ॥
मयूषमालेय महा महा महा, लोकोपकार सविता विता विता ।
विभाति यो गध कुटी कुटी कुटी वीर स्तुवे विश्व हित हितं हित ॥४ ॥
सराग सस्तुत्य गुणा गुणा गुणा, सभाजयिष्णु स शिव शिव शिव ।
लक्ष्मीवता पूज्य तम तम तम, वीर विश्व हित हित हितं ॥५ ॥
सिद्धार्थाम् सत्रद नमा नमा नमा, नदा द्विवर्धेघ सदा सदा सदा ।
यस्यो परिष्टा कुसुम सुम सुमं, वीर स्तुवे विश्व हित हित हितं ॥६ ॥
प्रत्यक्षमध्वै दचित चितं, चित योमेयमार्थम् सकल कल कल ।
व्यपेत दोषा वरणं रण रण वीरं स्तुवे विश्व हित हित हित ॥७ ॥
युक्त्यागमावाधि गिर गिर गिर, वित्रीर्यतास्त्येय भर भर भर ।
सख्यावता चित्त हर हर हर, वीर स्तुवे विश्व हित हित हित ॥८ ॥
अध्यैष्टाममध्यभीष्ट परम, शब्द चक्रिविदंश्चक्रेय परिशील ।
नादिमति भेदैरागमालकृतिं, विद्यानद भवा मरादि सुयशान ॥९ ॥
तेन भुनानिर्मितवीरार्हत्परमेश्वरस्य यमकस्तोत्राष्टक मगलं ।
भट्टारकै कृत स्तोत्रोयपठेद्यमकाष्टकं सर्वदा, सभवेद्‌भव्यो भारती मुख दर्पणा. ॥१ ॥

॥इति भट्टारक अमर कीर्ति कृत यमकाष्ट स्तोत्रम ॥

श्री वर्धमान नमस्कारम्

जनन जलधि सकुर्दु ख विध्वसहेतु
निहितमकरकेतुर्मारितानक्र मेतु ।
जन जनन समस्तो नष्ट निशेष-धातु
र्जयतिजगति चन्द्रो वर्द्धमानो जिनेन्द्र. ॥१ ॥
शम दम यमकर्त्ता सार ससार हर्ता
सकल भुवन तर्त्ता भूरि कल्यान कर्त्ता ।
परम सुख समर्ता सर्व सदेह हर्ता
जयति जगति चन्द्रो वर्द्धमानो जिनेन्द्र ॥ २ ॥
कुगति पथ विनेता मोक्षमार्गस्य नेता
प्रकृति-गमन-हन्ता तत्व सन्तान सन्ता ।
गगन गमन गन्ता मोक्ष रामा रमन्ता
जयति जगति चद्रो वर्द्धमानो जिनेन्द्र. ॥ ३ ॥
सजन जल-निनादो निर्जिताशेषवादो
नरपति-नुत पादो यस्तु तत्व जगाद ।
जयभुवकृतपादोऽनेक-क्रोधाग्नि-कदो
जयति जगति चद्रो वर्द्धमानो जिनेन्द्र ॥ ४ ॥
प्रबल-बल-करालो मुक्ति-कान्ता रसालो
विमल गुण विशालो नीति कल्लोल-माल ।
समवशरण-नीलो धारितानन्त शीलो
जयति जगति चद्रो वर्द्धमानो जिनेन्द्र ॥ ५ ॥

विषय विष-विनाशो भूरि भाषा निवासो
हत भव-भय-पाश कीर्ति-वल्ली निवास ।
शरण सुख निवासो वर्तसपूरिताशो
जयति जगति चद्रो वर्द्धमानो जिनेन्द्र ॥ ६ ॥
मद मदन-विहारी चारू-चारित्र धारी
नरकगति निवारी मोक्षमार्ग प्रसारी ।
नृ सुर नयनहारी केवलज्ञान धारी
जयति जगति चद्रो वर्द्धमानो जिनेन्द्र. ॥ ७ ॥
वचन रवन धीर. पाप धूली समीर.
कनक-निकर गौर. क्रूर कर्म्मारि शूर. ।
कलुष दहन नीर.पालितानन्त वीरो
जयति जगति चद्रो वर्द्धमानो जिनेन्द्र.

आचार्य श्री विमलसागरजी की हिरक जयन्ती पर सादर नमन

सुरेन्द्र कुमार जैन धर्मपत्नी सरला जैन
राजीव जैन धर्मपत्नी अन्जु जैन
पौत्र गौरव जैन
जी १४१८ चित्तरन्जन पार्क
कालकाजी
नई दिल्ली ११ १९

फर्म राजीव टेक्स्टाईल्स
कपडे के थोक व्यापारी
महावीर बजार कटरा शाहन शाही
चादनी चौक दिल्ली
दूरभाष ३२७६८१७
निवास ६४३९२८७

श्री अम्बिकाष्टकम्

व्यालोलालम्बमानप्रवणरणझणत्किङ्किणीक्वाणरम्य
ध्वस्तध्वान्त समन्तान्मणिकिरणगणाडम्बरोल्लासितेन ।
देवी दिव्याशुकाना ध्वजपटपटलै शोभमान विमान
लीलारूढा भ्रमन्ती भुवनकृतनति पातु मामम्बिका सा ॥१ ॥
या देवी दिव्यदामाञ्चितचिकुरभरामोदमुग्धालिमाला
भास्वन्माणिक्यमालामिलदमलमहोमण्डलीमण्डिताङ्गा ।
सन्मुक्तातारहारैर्गगनतलगतास्तारकास्तर्जयन्ती
वक्त्रालङ्कारभासा हसितरविकरा पातु मामम्बिका सा ॥२ ॥
या कौबेर विहाय स्वपतिपरिभवात् साधुदानप्ररूढात्
स्थान श्रान्तातिमार्गे श्रमशमनकृते सश्रिता चूतवृक्षम ।
क्षुत्क्षामौ वीक्ष्य पुत्रौ कृतसुकृतवशात् प्रार्थयन्ति फलानि
क्षिप्र सम्प्राप तानि स्वचरितमुदिता पातु मामम्बिका सा ॥३ ॥
देवी याऽत्रोपविष्टा सरणिगतपति वीक्ष्य कम्प दधाना
स्मृत्वा श्रीरैवताद्रिं व्यवसितमरणा साधुधर्म स्मरन्ती ।
आरूह्योत्तुङ्गश्रृङ्ग प्रपतनविधिना दिव्यदेवत्वमाप्ता
जैनेन्द्रे पादपीठे सततनतशिरा पतुमामम्बिका सा ॥४ ॥
या पश्चात्तापतप्त गतमदमदन दुष्कृत स्व स्मरन्ती
दष्ट्रास्य पिङ्गनेत्र खरनखरकर केसरालीकराल ।
पुच्छाच्छोटप्रकम्पावनिवलयतल दिव्यसिंह स्वकान्त
सरूढा याति नित्य जिनपतिनिलये पातु मामम्बिका सा ॥५ ॥

सान्द्राम्रालुम्बिहस्ता तरलहरिगता बालकाभ्यामुपेता
ध्यातासा सिद्धकामैर्विघटितडमरा साधकैर्भक्तियुक्तै ।
रक्ता रागानुरक्तै स्फटिकमणिनिभा क्लेशविध्वसधीभि
पीता वश्यानुभावैर्विहितजनहिता पातु मामम्बिका सा ॥६ ॥
देवी विद्याधरेन्द्रासुरसुरमनुजैर्वन्द्यपादारविन्दा
प्रत्यूहान्निक्षिपन्ती क्षपितकलिमला बिभ्रती विश्वरक्षाम् ।
जैनेन्द्र शासन या प्रकटयति महोत्साहशक्त्या स्वभक्त्या
नित्य नाम्ना नराणा विशदशिवफला पातु माम्बिका सा ॥७ ॥
एव वृत्ताष्टकेन स्तुतिमुखरमुख सस्तुति य करोति
ध्यानाधीनान्तरात्मा प्रशममुपगतो नित्यमेकाग्रचित्त ।
प्रातर्मध्ये निशाया शयनतलगतो यत्र कुत्रापि सस्थो
देवी तस्य प्रकाम प्रकटयति पटु प्रौढमम्बा प्रसादम् ॥८ ॥

श्री अम्बिकास्तुति

ॐ महातीर्थरैवतगिरिमण्डने । जैनमार्गस्थिते । विघ्नभीखण्डने । ।
नेमिनाथाड्घ्रिजीवसेवापरे । त्व जयाम्बे । जगज्जन्तुरक्षाकरे ।
ह्रीं महामन्त्ररूपे । शिवे । शङ्करे । देवि । वाचालसत्किङ्किणीनूपुरे । ।
तारशङ्करेहारावलीराजितोर स्थले । कर्णताटङ्करूचिरम्यगण्डस्थले ।
अम्बिके । ह्रा स्फुरद्बीजविद्ये । स्वय ह्री समागच्छ मे देहि दु खक्षयम ।
ह्रा ह्रूँ त द्रावय द्रावयोपद्रवान् ह्रीं द्रहि क्षुद्रसर्पेभकण्ठीरवान्
क्लीं प्रचण्डे ? प्रसिद प्रसीद क्षण ब्लूँ सदा प्रसन्ने ! विधेहीक्षणम् ।
स सता दत्तकल्याणमालोदये । ह्स्कल्ह्रीं नमस्तेऽम्बिकेऽङ्कस्थपुत्रद्वये

इत्थमद्भूतमाहात्म्यमन्त्रस्तुते । क्रो समालीढषट्कोणयन्त्रस्थिते ।
ह्रीयुतेऽम्बे । मरून्मण्डलालङ्कृते । देहि मे दर्शन ह्री त्रिरेखावृते ।
नाशिताशेषमिथ्यादृशा दुर्मदे । शान्तिकीर्तिद्युतिस्वस्तिसिद्धिप्रदे ।
दुष्टविद्याबलोच्छेदनप्रत्यन्ते । नन्द नन्दाम्बिके । निश्चले । निर्मले ।
देवि । कूष्माण्डि । दिव्याशुके । भैरवे । दु सहे दुर्जये । तप्तहेमच्छवे ।
नाममन्त्रेण निर्णाशितोपद्रवे । पाहि मामधिपीठस्थकण्ठीरवे ।
देवदेविगणै सेविताङ्घ्रिद्वये जागरूकप्रभावैकलक्ष्मीमये ।
पालिताशेषजैनेन्द्रचैत्यालये । रक्ष मा रक्ष मा देवि । अम्बालये ।



॥ श्रीवीतरागाय नमः ॥

स्वर्गीय पंडित दौलतरामजी कृत

श्रीपद्मपुराणजी भाषा वचनिका

(मूलग्रन्थ—कर्ता श्रीमद्—रविषेणाचार्य)

भाषाकारका मंगलाचरण ।

दोहा ।

चिदानन्द चैतन्यके, गुण अनन्त उर धार । भाषा पद्मपुराणकी, भाषूं श्रुति अनुसार ॥१॥
पंच परमपद पद प्रणमि, प्रणमि जिनेश्वरबानि । नमि जिनप्रतिमा जिनभवन जिनमारग उर आनि ॥२॥
ऋषभ अजित संभव प्रणमि, नमि अभिनन्दन देव । सुमति जु पद्म सुपार्श्व नमि, करि चन्द्राप्रभ सेव ॥३॥
पुष्पदंत शीतल प्रणमि, श्री श्रेयांसको ध्याय । वासुपूज्य विमलेश नमि, नमि अनंतके पाय ॥४॥
धर्म शांति जिन कुन्थु नमि और मल्लि यशगाय । मुनिसुव्रत नमि नेमि नमि, नमि पारसके पाय ॥५॥
वर्द्धमान वरवीर नमि, गुरुगौतम मुनि वंद । सकल जिनंद मुनिन्द नमि, जैनधर्म अभिनन्द ॥६॥
निर्वाणादि अतीत जिन, नमो नाथ चौबीस । महापद्म परमुख प्रभू, चौबीसों जगदीश ॥७॥

होंगे तिनको वंदिकर, द्वादशांग उरलाय। सीमंधर आदिक नमूं, वंदू दूने जिनराय ॥ ८ ॥
विहरमान भगवान ये, क्षेत्र विदेहमझारि। पूज जिनको सुरपती, नागपती निरधार ॥ ९ ॥
द्वीप अढाईकेविषं, भये जिनेन्द्र अनंत। होंगे केवलज्ञानमय, नाथ अनंतानंत ॥१०॥
सबको वंदन कर सदा, गणधर मुनिवर ध्याय। केवलि श्रुतिकेवलि नमूं, आचारज उवझाय ॥११॥
वंदूं शुद्ध स्वभावको, धर सिद्धनको ध्यान। सतनको परणाम कर, नमि दृग व्रत निज ज्ञान ॥१२॥
शिवपुरदायक सुगुरु नमि, सिद्धलोक यश गाय। केवल दर्शन ज्ञानको, पूजूं मन वच काय ॥१३॥
यथाख्यातचारित्र अरु, क्षपकश्रेणि गुण ध्याय। धर्म शुक्ल निज ध्यानको, वंदू भाव लगाय ॥१४॥
उपशम वेदक क्षायिका, सम्यग्दर्शन सार। कर वंदन समभावको, पूजूं पंचाचार ॥१५॥
मूलोत्तर गुण मुनिनके, पंच महाव्रत आदि। पंच समिति अरु गुप्तित्रय, ये शिवमूल अनादि ॥१६॥
अनित्य आदिक भावना, सेऊं चित्त लगाय। अध्यातम आगम नमूं, शांतिभाव उरलाय ॥१७॥
अनुप्रेक्षा द्वादश महा, चिंतवं श्रीजिनराय। तिनकी थुति करि भावसों, षोडशकारण ध्याय ॥१८॥
दशलक्षणमय धर्मको, धर सरधा मनमांहि। जीवदया सत शील तप, जिनकर पाप नसांहि ॥१९॥
तीर्थंकर भगवानके, पूजूं पांच कल्याण। अवर केवलिनको नमूं, केवल अरु निर्वाण ॥२०॥
श्रीजिनतीरथक्षेत्र नमि, प्रणमि उभयविध धर्म। थुतिकर चउविध संघकी, तजकर मिथ्या भर्म ॥२१॥
वंदू गौतम स्वामिके, चरण कमल सुखदाय। वंदूं धर्म मुनींद्रको, जंबू केवलि ध्याय ॥२२॥
भद्रबाहुको कर प्रणति, भद्र भाव उरलाय। वंदि समाधि सुतंत्रको, ज्ञानतणे गुणगाय ॥२३॥
महाधवल अरु जयधवल, तथा धवल जिनग्रंथ। वंदू तन मन वचन कर, जे शिवपुरके पंथ ॥२४॥
षटपाहुड नाटक जु त्रय, तत्त्वारथसूत्रादि। तिनको वंदू भाव कर, हरैं दोष रागादि ॥२५॥

गोमटसार अगाध श्रुत, लब्धिसार जगसार। क्षपणसार भवताप है, योगसार रसधार ॥२६॥
ज्ञानार्णव है ज्ञानमय, नमूं ध्यानका मूल। पद्मनंदिपच्चीसिका, करै कर्म उन्मूल ॥२७॥
यत्याचार विचार नमि, नमूं श्रावकाचार। द्रव्यसंग्रह नयचक्र फुनि, नमूं शांति रसधार ॥२८॥
आदिपुराणादिक सबै, जैनपुराण बखान। वंदूं मन वच काय कर, दायक पद निर्वान ॥२९॥
तत्त्वसार आराधना,—सार महारस धार। परमातमपरकाशको, पूजूं बारबार ॥३०॥
वंदूं विशाखाचार्यवर, अनुभवके गुणगाय। कुन्दकुन्दपद धोक दे, कहूं कथा सुखदाय ॥३१॥
कुमुदचंद्र अकलंक नमि, नेमिचंद्र गुण ध्याय। पात्रकेशरीको प्रणमि, समंतभद्र यशगाय ॥३२॥
अमृतचंद्र यतिचंद्रको, उमास्वामिको वंद। पूज्यपादको कर प्रणति, पूजादिक अभिनंद ॥३३॥
ब्रह्मचर्यव्रत वदिकर, दानादिक उरलाय। श्रीयोगीन्द्रमुनींद्रको, वंदूं मन वच काय ॥३४॥
वंदूं मुनि शुभचंद्रको, देवसेनको पूज। करि वंदन जिनसेनको, जिनके सम नहिं दूज ॥३५॥
पद्मपुराणनिधानको, हाथ जोडि सिरनाय। ताकी भाषा वचनिका, भाखूं सब सुखदाय ॥३६॥
पद्मनाम बलभद्रका, रामचंद्र बलभद्र। भये आठवें धार नर, धारक श्रीजिनमुद्र ॥३७॥
तापीछे मुनिसुव्रतके, प्रगटे अतिगुणधाम। सुरनरवंदित धर्ममय, दशरथके सुत राम ॥३८॥
शिवगामी नामी महा,—ज्ञानी करुणावंत। न्यायवंत बलवंत अति, कर्महरण जयवंत ॥३९॥
जिनके लक्ष्मण वीर हरि, महाबली गुणवंत। भ्रातृभक्त अनुरक्त अति, जैनधर्म यशवंत ॥४०॥
चंद्र सूर्यसे वीर ये, हरैं सदा परपीर। कथा तिनोंकी शुभमहा, भाषी गौतम धीर ॥४१॥
सुनी सब श्रेणिक नृपति, धर सरधा मनमांहि। सो भाषी रविषेणने, यामैं संशय नांहि ॥४२॥ ३
महा सती सीता शुभा, रामचंद्र की नारि। भरत शत्रुघन अनुज हैं, यही बात उरधारि ॥४३॥

तवभव शिवगामी भरत, अरु, लवअंकुश पूत । मुक्त भये मुनिवरत धरि, नमै तिनै पुरहूत ॥४४॥
रामचंद्र को करि प्रणति, नमि रविषेण ऋषीश । रामकथा भाखू यथा, नमि जिनश्रुति मुनिईश ॥४५॥

संस्कृत ग्रंथकारका मंगलाचरण ।

सिद्धं संपूर्णभव्यार्थं सिद्धेः कारणमुत्तमम् । प्रशस्तदर्शनज्ञानचारित्रप्रतिपादनम् ॥१॥
सुरेन्द्रमुकुटाश्लिष्टपादपद्मांशुकेसरम । प्रणमामि महावीरं लोकत्रितयमंगलम् ॥२॥

अर्थ—सिद्ध कहिये कृतकृत्य है और सम्पूर्ण भए हैं सब सुन्दर अर्थ जिनके, अथवा भव्य जीवोंके सर्वअर्थ पूर्ण करै है, आप उत्तम अर्थात मुक्त है, औरोंको मुक्तिके कारण है । प्रशंसायोग्य दर्शन ज्ञान और चारित्रके प्रकाशनहारे है । बहुरि सुरेंद्रके मुकुटकर पूज्य हैं किरणरूप केसर ताकों धरें चरणकमल जिनके, ऐसे भगवान महावीर, तीन लोकके प्राणियोंका मंगलरूप है, तिनको नमस्कार करू हू ।

भावार्थ—सिद्धि कहिए मुक्ति अर्थात सब बाधारहित, उपमारहित अनुपम अविनाशी जो सुख ताकी प्राप्तिके कारण श्रीमहावीर स्वामी जो काम, क्रोध, मान, मद, माया, मत्सर, लोभ, अहंकार, पाखंड, दुर्जनता, क्षुधा, त्रिषा, व्याधि, वेदना, जरा, भय, रोग, शोक, हर्ष, जन्म, मरणादि रहित है । शिव कहिये अविनश्वर हैं, द्रव्यार्थिकनयसे जिनकी आदि भी नाहीं और अंत भी नाहीं, अछेद्य अभेद्य क्लेशरहित, शोकरहित, सर्वव्यापी, सर्वसम्मुख, सर्व विद्याके ईश्वर हैं । यह उपमा औरोंको नाहीं बने है । जो मीमांसक, सांख्य, नैयायिक, वैशेषिक, बौद्धादिक मत है तिनके कर्त्ता जैमिनि, कपिल, काणभिक्ष, अक्षपाद, कणादबुद्ध हैं वे मुक्तिके कारण नाहीं । जटा मृगछाला वस्त्र

अस्त्र शस्त्र स्त्री रुद्राक्ष कपालमाला के धारक हैं और जीवोंके दहन घातन छेदनविषै प्रवृत्त हैं। विरुद्ध अर्थ कथन करनेवाले है। मीमांसो तो धर्म का अहिंसा लक्षण बताय हिंसाविषै प्रवृत्ते हैं और सांख्य जो है सो आत्माको अकर्ता और निर्गुण भोक्ता माने है और प्रकृतिहीको कर्त्ता माने हैं। और नैयायिक वैशेषिक आत्माको ज्ञान रहितजड माने हैं। और जगतकर्त्ता ईश्वर माने हैं। और बौद्ध क्षण-भंगुर माने है। शून्यवादी शून्य माने है। और वेदान्तवादी एक ही आत्मा त्रलोक्यव्यापी नर नारक देव तिर्यंच मोक्ष सुख दुःखादि अवस्था विष माने हैं। तातै ये सब ही मुक्तिके कारण नाहीं। मोक्षका कारण एक जिनशासन ही है जो सब जीवमात्रका मित्र है। और सम्यग्दर्शन, ज्ञान, चारित्र का प्रकट करने वाला है। ऐसे जिनशासनको श्रीवीतराग देव प्रकट कर दिखावै है। कैसे है श्रीवर्द्धमान, वीतरागदेव? वह सिद्ध कहिये जीवनमुक्त हैं और सब अर्थकरि पूर्ण है, मुक्तिके कारण है, सर्वोत्तम हैं और सम्यकदर्शन ज्ञान चारित्रके प्रकाशनहारे है। बहुरि कसे है? इन्द्रनिके मुकुटनिकर स्पर्शे गये है चरणारविंद जिनके ऐसे श्रीमहावीर वर्द्धमान सन्मतिनाथ अंतिम तीर्थंकर तिनकू नमस्कार करू हू। तीनलोकके सब प्राणियो को महामंगलरूप हैं, महा योगीश्वर है, मोहमल्लके जीतनहारे हैं, अनंत बलके धारक हैं, संसारसमुद्रविषै डूबरहे जे प्राणी तिनके उद्धार करनहारे हैं। शिव, विष्णु, दामोदर, त्र्यम्बक, चतुर्मुख बुद्ध, ब्रह्मा, हरि, शंकर, रुद्र, नारायण, हर, भास्कर, परममूर्ति इत्यादि जिनके अनेक नाम है तिनको शास्त्र की आदिविषै महा मंगलके अर्थि सर्व विघ्नके विनाशवे निमित्त मन वचन कायकर नमस्कार करू हू।

इस अवसर्पिणीकालमें प्रथम ही भगवान श्रीऋषभदेव भए, सर्व योगीश्वरनिके नाथ, सर्व विद्याके निधान स्वयम्भू तिनको हमारा नमस्कार होहु। जिनके प्रसाद कर अनेक भव्यजीव १

भवसागरसे तिरे। बहुरि दूजा श्रीअजितनाथस्वामी, जीते है बाह्य अभ्यंतर शत्रु जिन्होने, हमको रागादिक रहित करहु। अर तीजे संभवनाथ, जिनकरि जीवनको सुख होय और चौथे श्रीअभिनंदन स्वामी आनंदके करनहारे है, अर पांचवें सुमति के देनहारे सुमतिनाथ मिथ्यात्वके नाशक है और छठे श्रीपद्मप्रभ, ऊगते सूर्यकी किरणो कर प्रफुल्लित कमलके समान है प्रभा जिनकी, अर सातवें श्रीसुपार्श्वनाथस्वामी सबके वेत्ता सर्वज्ञ सबनिके निकटवर्ती ही है। बहुरि शरद की पूर्णमासीके चंद्रमा समान है प्रभा जिनकी ऐसे आठवें श्रीचंद्रप्रभ, ते हमारे भवताप हरो। बहुरि प्रफुल्लित कुन्दके पुष्प समान उज्ज्वल है दंत जिनके ऐसे नवमे श्रीपुष्पदंत जगतके कंत है और दशवें शीतलनाथ शुक्ल-ध्यानके दाता परमइष्ट, ते हमारे क्रोधादिक अनिष्ट हरो। अर जीवनिकू सकल कल्याण के कर्ता धर्मके उपदेशक ग्यारहवें श्रीश्रेयांसनाथ स्वामी ते हमको परम आनंद करो। अर देवनिकू पूज्य संतोके ईश्वर कर्म शत्रुओ के जीतनेहारे बारहवें श्रीवासुपूज्य स्वामी ते हमको निज वास देवो, और संसारके मूल जो रागादि मल तिनसे अत्यंत दूर ऐसे तेरहवें श्रीविमलनाथ देव, ते हमारे कर्मकलंक हरो, अर अनंत ज्ञानके धरनहारे, सुन्दर है दर्शन जिनका ऐसे चौदहवें श्रीअनन्तनाथ देवाधिदेव हमको अनंतज्ञानकी प्राप्ति करो। और धर्म की धुराके धारक पंद्रहवें श्रीधर्मनाथ स्वामी हमारे अधर्मको हरकर परम धर्म की प्राप्ति करो। बहुरि जीते है ज्ञानावरणादिक शत्रु जिन्होंने ऐसे सोलहवें श्रीशांतिनाथ परमशांत हमको शांतभावकी प्राप्ति करो। अर कुंथु आदि सब जीवोंके हितकारी सतरहवें श्रीकुंथुनाथ स्वामी हमको भ्रमरहित करो। समस्त क्लेशसे रहित मोक्षके मूल अनन्त सुखके भण्डार अठारहवें श्रीअरनाथ स्वामी कर्मरजरहित करो। संसार के तारक मोहमल्लके जीतने हारे बाह्याभ्यन्तर मलरहित ऐसे उन्नीसवें श्रीमल्लिनाथ स्वामी ते अनन्तवीर्यकी प्राप्ति करो। अर भले

वृतोके उपदेशक समस्त दोषोके विदारक बीसवें श्रीमुनिसुवृतनाथ जिनके तीर्थविषै श्रीरामचन्द्रका शुभचरित्र प्रगट भया ते हमारे अवृत मेट महावृतकी प्राप्ति करो। और नमीभूत भये हैं सुर अर असुरोंके इन्द्र जिनको ऐसे इक्कीसवें श्रीनमिनाथ प्रभु ते हमको निर्वाणकी प्राप्ति करो। अर समस्त अशुभकर्म, तेई भये अरिष्ट तिनके काटिवेकू चक्रकी धारा समान बाईसवें श्रीअरिष्टनेमि भगवान् हरिवंशके तिलक श्रीनेमिनाथ स्वामी ते हमको यम नियमादि अष्टांग योग सिद्धि करो और तेईसवें श्रीपार्श्वनाथ देवाधिदेव इन्द्र नागेन्द्र चन्द्र सूर्य्यादिक कर पूजित हमारे भव सन्ताप हरो। अर चौबीसवें श्रीमहावीर स्वामी जो चतुर्थकालके अन्तमें भये हैं ते हमारे महा मंगल करो। और भी जो गणधरादिक महामुनि तिनको मन, वचन, काय कर बारम्बार नमस्कार कर श्रीरामचन्द्रके चरित्र का व्याख्यान करूं हूं।

कैसे हैं श्रीराम ? लक्ष्मीकर आलिंगित है हृदय जिनका और प्रफुल्लित है मुखरूपी कमल जिनका, महापुण्याधिकारी हैं, महाबुद्धिमान हैं, गुणनके मंदिर हैं, उदार है चरित्र जिनका, जिनका चरित्र केवलज्ञानके ही गम्य है ऐसे जो श्रीरामचन्द्र उनका चरित्र श्रीगणधरदेव ही किंचित् मात्र कहनेको समर्थ है। यह बड़ा आश्चर्य है कि—जो हम सारिखे अल्पबुद्धि पुरुष भी उनके चरित्र को कहे हैं। यद्यपि हम सारिखे इस चरित्र को कहने को समर्थ नाहीं तथापि परंपरासे महामुनि जिस प्रकार कहते आए हैं उनके कहे अनुसार कुछ इक संक्षेपता कर कहूं हूं जैसे जिस मार्ग विषैं मदमाते हाथी चालें, तिस मार्ग विषै मृग भी गमन करैं हैं और जैसे युद्धविषैं महा सुभट आगे होय कर शस्त्रपात करे हैं तिनके पीछे और भी पुरुष रणविषै जाय हैं, अर सूर्य करि प्रकाशित जे पदार्थ तिनकूं नेत्रवारे लोक सुखसूं देखे हैं अर जैसे वज्रसूचीके मुख कर भेदी जो मणि उस विषै सूत्र भी

प्रवेश करे है तस ज्ञानीनकी पकति कर भाषा हुआ चला आया जो रामसम्बन्धी चरित्र ताके कहनेको भक्ति कर प्रेरी जो हमारी अल्प बुद्धि सो भी उद्यमवती भई है। बडे पुरुषके चिंतवन कर उपजा जो पुण्य ताके प्रसाद कर हमारी शक्ति प्रकट भई है, महा पुरुषनके यशकोत्तनसे बुद्धिकी वृद्धि होय है और यश अत्यन्त निमल होय है और पाप दूर जाय है।

यह प्राणीनका शरीर अनेक रोगोकर भरा है। इसकी स्थिति अल्पकाल है अर सत्पुरुषको कथा कर उपज्या जो यश सो जब तक चाद सूर्य्य है तब तक रहे है। इसलिए जो आत्मवेदी पुरुष है वे सब यत्नकर महापुरुषनके यश कीतनसे अपना अपना यश स्थित करे हैं। जिसने सज्जनोको आनदकी देनहारी जो सत्पुरुषनकी रमणीक कथा उसका आरम्भ किया उसने दोनों लोकका फल लिया। जो कान सत्पुरुषन की कथा श्रवण विषै प्रवृत्ते हैं वे ही कान उत्तम हैं और जे कुकथाके सुननेहारे कान है वे कान नहीं, वृथा आकारकू धरे है। और जे मस्तक सत्पुरुषनकी चेष्टाके वणन विषै घूमे हैं ते ही मस्तक धन्य है और जे शेष मस्तक है वे थोथे नारियल समान जानने। अर सत्पुरुषनके यशकीतन रूप अमृत के आस्वाद विषै जो रसना प्रवरती सोई धन्य है और रसना दुवचनकी बोलन हारी छुरी के अग्रभाग समान जाननी। अर सत्पुरुषनके यशकीतन विषै प्रवृत्ते जे होठ ते ही श्रेष्ठ हैं और जे शेष होठ हैं ते जोंककी पीठ समान विफल जानने। जे पुरुष सत्पुरुषन की कथाके प्रसग विषै अनुरागको प्राप्त भये उनहीका जन्म सफल है। और मुख वे ही हैं जो मुख्य पुरुषनकी कथा के विषै रत भये। शेष मुख मलका भरया दातरूपी कीडनका बिल समान हैं। और जो सत्पुरुषनकी कथा के वक्ता हैं अथवा श्रोता हैं सो ही पुरुष प्रशसायोग्य हैं और शेष पुरुष चित्राम समान जानने। गुण और दोषन के सग्रहविषै जे उत्तम पुरुष हैं ते गुणन ही को ग्रहण

करै है, जैसे दुग्ध और पानी के मिलाप विषै हंस दुग्ध ही को ग्रहण करै है। और गुण दोषनके मिलाप विषै जे नीच पुरुष है ते दोषनही को ग्रहण करै है। जैसे गजके मस्तकविषै मोती मांस दोऊ हैं तिन विषै काग मोती को तज मांस ही को ग्रहण कर हैं। जो दुष्ट है ते निर्दोष रचनाको भी दोष रूप देखे हैं, जैसे उल्लू सूर्यके बिम्बको तमाल वृक्षके पत्र समान स्याम देखे है। जे दुर्जन हैं ते सरोवरमें जल आनेका जाली समान है, जसे जाली जल को तज तृण पत्रादि कटकादिकका ग्रहण करै है तैसे दुर्जन गुणको तज दोषनही को धार है। इसलिये सज्जन और दुर्जनका ऐसा स्वभाव जानकर जो साधु पुरुष हैं ते अपने कल्याणनिमित्त सत्पुरुषनकी कथा के प्रबंध विषैही प्रवृत्त हैं। सत्पुरुषनकी कथाके श्रवणसे मनुष्योंको परम सुख होय है। जे विवेकी पुरुष है उनको धर्मकथा पुण्यके उपजावनेका कारण है। सो जैसा कथन श्रीवर्द्धमान जिनेंद्रकी दिव्यध्वनिमें खिरा तिसका अर्थ गौतम गणधर धारते भये। अर गौतमसे सुधर्माचार्य धारते भये। ता पीछे जंबूस्वामी प्रकाशते भये। जंबूस्वामीके पीछे पांच श्रुतकेवली और भए वे भी उसी भांति कथन करते भये। इसी प्रकार महापुरुषनकी परम्पराकर कथन चला आया उसके अनुसार रविषेणाचार्य व्याख्यान करते भये। यह सब रामचन्द्रका चरित्र सज्जन पुरुष सावधान होकर सुनो। यह चरित्र सिद्धपदरूप मंदिरकी प्राप्तिका कारण है और सर्वप्रकारके सुख का देनहारा है। और जे मनुष्य श्रीरामचन्द्रको आदि दे जे महापुरुष तिनको चिंतवन करे हैं वे अतिशयकर भावनके समूहकर नम्रीभूत होय प्रमोदको धरे हैं। तिनका अनेक जन्मोंका संचित किया जो पाप सो नाशको प्राप्त होय है। और जे सम्पूर्ण पुराण का श्रवण करें तिनका पाप दूर अवश्य ही होय, यामें संदेह नाहीं। कैसा है पुराण? चन्द्रमा समान उज्ज्वल है। इसलिये जे विवेकी चतुर पुरुष हैं ते इस चरित्रका सेवन करें। यह चरित्र बडे पुरुषनिकर सेवन योग्य है।

इस ग्रन्थ विषै ६ महा अधिकार है। तिन विषै अवातर अधिकार बहुत हैं। मूल अधिकारनके नाम कहै है। प्रथम ही १ लोकस्थिति, बहुरि २ वंशनिकी उत्पत्ति, पीछे ३ वनविहार अर संग्राम तथा ४ लवणांकुशकी उत्पत्ति, बहुरि ५ भव निरूपण अर ६ रामचन्द्रका निर्वाण। ते श्रीवर्धमान देवाधिदेव सब कथनके वक्ता है, जिनको अति वीर कहिये वा महावीर कहिये है। रामचरित्रहूके कथनहारे हैं। जात ताके कारण श्री महावीर स्वामी है, तातै प्रथम ही तिनका कथन कीजिये है।

विपुलाचल पर्वतके शिखर पर समोसरणविषै श्रीवर्धमान स्वामी विराजे। तहां श्रेणिकराजा गौतमस्वामीसो प्रश्न करते भये। कैसे हैं गौतमस्वामी? भगवानके मुख्य गणधर हैं, महा महंत है, जिनका इन्द्रभूति भी नाम है। आगे श्रीगौतम स्वामी कहै है तहां प्रश्न विषै प्रथम ही युगलिका कथन है। बहुरि कुलकरनिकी उत्पत्ति, अकस्मात् चन्द्र सूर्य के अवलोकनतै जुगलियानिकू भयका उपजना, सो प्रथम कुलकर प्रतिश्रुतके उपदेशतै भयका दूर होना, बहुरि नाभिराजा अन्तके कुलकर तिनके घर श्रीऋषभदेव का जन्म, सुमेरु पर्वत विषै इन्द्रादिक देवनिकर जन्माभिषेक। बहुरि बाललीला अर राज्याभिषेक, कल्प वृक्षनिके वियोगकरि उपज्या प्रजानिकू दुःख, सो कर्मभूमिकी विधिके बतावने करि दूर होना। बहुरि भगवानका वैराग्य, केवलोत्पत्ति, समोसरनकी रचना, जीवनिकू धर्मोपदेश बहुरि भगवान का निर्वाणगमन, भरत चक्रवर्ती अर बाहुबलिके परस्पर युद्ध। बहुरि विप्रनकी उत्पत्ति, इक्ष्वाकु आदि वंशनिका कथन, विद्याधरनिका वर्णन, तिनके वंशविषै राजा विद्युद्दंष्ट्र का जन्म। संजयत स्वामीकू विद्युद्दंष्ट्रने उपसर्ग किया सो उपसर्ग सहि करि अंतकृत्केवली होइ करि निर्वाण भये। विद्युद्दंष्ट्रने उपसर्ग किया यह जानि धरणेंद्रने तासू कोप किया, ताकी विद्या छेद करी। बहुरि श्री १०
अजितनाथ स्वामीका जन्म, पूर्णमेघ विद्याधर भगवानके शरणें आया। राक्षस द्वीपका स्वामी व्यन्तर

देवताने प्रसन्न होइ पूर्णमेघकू राक्षसद्वीप दिया। बहुरि सगरचक्रवर्तीकी उत्पत्तिका कथन, पुत्रनिके दु:ख करि दीक्षा ग्रहण, अर मोक्ष प्राप्ति, पूर्णमेघके वशविषै महारक्षका जन्म, अर वानरवंशी विद्याधरनिकी उत्पत्तिका कथन, बहुरि विद्युत्केशी विद्याधरका चरित्र, बहुरि उदधिविक्रम अर अमर-विक्रम विद्याधरका कथन, वानरवंशीनिकं किहकधापुरका निवास, अर अंधक विद्याधरका कथन, श्रीमाला विद्याधरीका संगम, विजयसिंघके मरणतै अशनिवेगके क्रोधका उपजना और सुकेशीके पुत्रनिका लंका आवनेका निरूपण, निर्घात विद्याधरके बधतैं माली नाम विद्याधर रावण के दादेका बडा भाई, ताके संपदा की प्राप्ति का कथन, अर विजयार्द्धकी दक्षिणकी श्रेणी विषै रथनूपुर नगरमें इंद्रनामा विद्याधरका जन्म, इंद्र सब विद्याधरनिका अधिपति है। इंद्रके अर मालीके युद्ध विषै मालीका मरण, अर लंकाविषै इंद्रका राज्य अर वैश्रवण नामा विद्याधर का थाणै रहना। अर सुमालीके पुत्र रत्नश्रवाका पुष्पांतक नामा नगर बसावना, अर केकसीका परणना और केकसीके शुभस्वप्नका अवलोकन, रावणका जन्म। अर विद्यानिका साधन, विद्यानिके साधन विषै अनावृत देव आय विघ्न किया तहा रावण का अचल रहना। बहुरि बहुत विद्यानि का सिद्ध होना अर अनावृत देवका वश होना, अपने नगर आय माता पितासू मिलना, बहुरि अपने पिताका पिता जो राजा सुमाली, ताकू बहुत आदरसू बुलावना, बहुरी मंदोदरीका रावणसों विवाह और बहुत राजानिकी कन्याका व्याहना, कुंभकरणका चरित्र, वैश्रवणका कोप, यक्ष अर राक्षस कहावै ऐसे विद्याधर तिनका बडा संग्राम, वैश्रवणका भागना बहुरि तप धरना, अर रावणका लंकामैं कटुम्ब सहित आवना अर सब राक्षसनिकू धीरज बधावना, अर ठौर ठौर जिनमंदिरनका निर्मापण करना, अर जिनधर्मका उद्योत करना और श्रीहरिषेण चक्रवर्ती का चरित्र राजा सुमालीने रावणकू

कह्या सो भावसहित सुनना ।

कैसा है हरिषेण चक्रवर्तीका चरित्र ? पापनिका नाश करणहारा, बहुरि त्रिलोकमंडण हाथीका वश करना, अर राजा इन्द्रका लोकपाल यम नामा विद्याधर ताने वानरवंशीनिका राजा सूर्यरजकू पकडकर बंदीखाने डारया, सो रावण सम्मेदशिखरकी यात्रा करि डेरा आये थे सो सूर्यरजके समाचार सुनि ताही समय गमन करना, अर जाय यमकू जीतना । यमके थाने उठावना अर यमका भाजना, राजा सूर्यरजकू बंदीखानेतें छुडावना अर किष्कन्धापुरका राज्य देना । बहुरि रावणकी बहिन सूर्पनखा ताकू खरदूषण हरि लेगया सो वाहीकू परिणाय देना, अर ताहि पाताल लंकाका राज्य देना, सो खरदूषणका पाताललंका जाना अर चंद्रोदरकों युद्ध विषै हनना, अर चंद्रोदरकी रानी अनुराधाकू पतिके वियोगतें महा दु:खका होना, अर चंद्रोदरके पुत्र विराधितका राज्यभ्रष्ट होइ कहू का कहू रहना अर बालीका वैराग्य होना, सुग्रीवकू राज्यकी प्राप्ति अर कैलाशपर्वतविषै बालीका विराजना, रावणका बालीसू कोपकरि कैलाश उठावना, अर चैत्यालयनिकी भक्तिके निमित्त बाली पगका अगूठा दाब्या तब रावणका दबिकर रोवना, अर रानीनिकी दीनतीतें बाली का अगुष्ठका ढीला करना । अर बालीके भाई सुग्रीव का सुतारासू विवाह अर साहसगति विद्याधर के सुताराकी अभिलाषा हुती सो अलाभतें संतापका होना अर राजा अनारण्य अर सहस्ररश्मिका वैराग्य होना, अर रावणने यज्ञ नाश किया ताका वर्णन, अर राजा मधुके पूर्व भवका व्याख्यान, अर रावणकी पुत्री उपरम्भाका मधुसों विवाह, अर रावणका इन्द्रपर जाना, इन्द्रपर विद्याधरकों युद्धकरि जीतना, पकरिकरि लंकामें ल्यावना बहुरि छोडना, अर ताका वैराग्य लेय निर्वाण होना अर रावण का प्रताप अर सुमेरु पर्वत गमन बहुरि पाछा आवना, अर अनंतवीर्य मुनिकू केवलज्ञानकी प्राप्ति, रावणका नेम ग्रहण—जो परस्त्री मोहि न अभिलाषै ताहि मैं न सेवू बहुरि हनुमानकी उत्पत्ति

कैसे है ? हनुमान वानरवंशीनिविषै महात्मा है अर कैलाश पर्वतविषै अंजनीका पिता जो राजा महेन्द्र तानै पवनजयका पिता जो राजा प्रह्लाद तासो सम्भाषण किया—जो हमारी पुत्रीका तुम्हारे पुत्रसूं सम्बन्ध करहु । सो राजा प्रह्लादने प्रमाण किया । अंजनीका पवनजयसूं विवाह होना, बहुरि पवनजयका अंजनीसो कोप, अर चकवा चकवीके वियोगका वृत्तात देखि अंजनीसूं प्रसन्न होना, अंजनीके गर्भका रहना । अर हनुमान के पूर्व जन्म वनमें अंजनीकूं मुनि ने कहा । अर हनुमान का गिरिकी गुफाविषै जन्म, बहुरि अनुरुद्ध द्वीपमें वृद्धि, प्रतिसूर्य मामाने अंजनीकूं बहुत आदरसों राखी, बहुरि पवनजयका भूताटवीविषै प्रवेश अर पवनजयके हाथी कूं देखि सूयका तहा आवना, पवनजयकूं अंजनीके मिलाप का परम उत्साह होना, पुत्रका मिलाप होना अर पवनजयका रावणके निकट आना । अर आज्ञातैं वरुणसूं युद्धकरि ताहि जीतना । रावणके बडे राज्यका वर्णन, तीर्थंकरों की आयु काय अंतरालका वर्णन, बलभद्र, नारायण, प्रतिनारायण, चक्रवर्तीनिके सकल चरित्रका वर्णन । अर राजा दशरथकी उत्पत्ति, अर केकईकूं वरदानका देना, राम, लक्ष्मण, भरत, शत्रुघ्न का जन्म, सीताकी उत्पत्ति, भामंडलका हरण, अर ताकी माताकूं शोकका होना । अर नारदने सीताका चरित्र चित्रपट भामण्डलकूं दिखाया सो देखकर मोहित होना । बहुरि जनककै स्वयंवर मंडपका वृत्तात, अर धनुष रतनका स्वयंवर मंडपमें धरना, श्रीरामचन्द्रका आवना, धनुषका चढावना अर सीताकूं विवाहना । अर सर्वभूतशरण्यमुनिके निकट दशरथका दीक्षा लेना । अर भामण्डलकों पूर्व जन्मका ज्ञान होना । अर सीताका दर्शन । बहुरि केकयीके वरतैं भरतका राज्य, अर राम लक्ष्मण सीताका दक्षिण दिशाकूं गमन करना । वज्रकिरणका चरित्र, लक्ष्मणकूं कल्याणमालाका लाभ, अर रुद्रभूतकों वश करना अर बालखिल्यका छुडावना, अर अरुणग्रामविषै श्रीराम आए तहा

वनमें देवतानिने नगर बसाये तहां चौमासे रहना । लक्ष्मणके वनमालाका संगम, अतिवीर्यका वैराग्य, बहुरि लक्ष्मणके जितपद्माकी प्राप्ति, अर कुलभूषण देशभूषण मुनिका चरित्र अर श्रीराम ने वंशस्थल पर्वतविषं भगवान के मंदिर कराए तिनका वर्णन, अर जटायु पक्षीने नेमकी प्राप्ति, पात्रदानके फलकी महिमा, सम्बुकका मरण, सूपनखाका मिलाप, खरदूषणसूं लक्ष्मणका युद्ध, सीता, का हरण, सीताकूं रामके वियोगका अत्यन्त शोक, अर रामकूं सीताके वियोगका अत्यन्त शोक बहुरि विराधितविद्याधरका आगमन अर खरदूषणका मरण, अर रतनजटीकै रावणकरि विद्याका छेद, अर सुग्रीवका रामके निकट आवना, बहुरि सुग्रीवके कारण श्रीरामने साहसगतिको मारया, अर सीताका वृत्तांत रतनजटीने श्रीरामसूं कह्या । श्रीरामका लंका उपरि गमन । राम रावणके युद्ध । राम लक्ष्मणकूं सिंहवाहिनी गरुडवाहिनी विद्याकी प्राप्ति । लक्ष्मणके रावणकी शक्तिका लगना, अर विशल्याके प्रसादतैं शक्ति दूर होना, रावणका शांतिनाथके मंदिर विषैं बहुरूपिणी विद्याका साधना अर रामके कटकके विद्याधर कुमारनिका लंकाविषैं प्रवेश, अर रावणके चित्तके डिगावनेका उपाय, पूर्णभद्र मानभद्रके प्रभावतैं विद्याधर कुमारनिका कटकमें पाछा आवना । रावणकूं विद्याकी सिद्धि, बहुरि राम रावणके युद्ध, रावणका चक्र लक्ष्मण के हाथ आवना । अर रावणका परलोक गमन, रावणकी स्त्रीनिका विलाप । बहुरि केवलीका लंकाके वनविषैं आगमन । इन्द्रजीत कुंभकर्णादिका दीक्षा ग्रहण । अर रावणकी स्त्रीनिका दीक्षा ग्रहण । अर श्रीरामका सीतासूं मिलाप । विभीषण के भोजन, कइक दिन लंकाविषैं निवास, बहुरि नारद का रामके निकट आवना । रामका अयोध्यागमन भरतके अर त्रिलोकमंडन हाथी के पूर्व भवका वर्णन । भरतका वैराग्य, राम लक्ष्मणका राज्य अर रणविषैं मधुका अर लवणका मरण । मथुराविषैं शत्रुघ्नका

राज्य, मथुराविषै अर सकलदेशविषै धरणीन्द्रके कोपतैं रोगानिकी उत्पत्ति, बहुरि सप्तऋषिनिके प्रभावतैं रोगनिकी निवृत्ति। अर लोकापवादतैं सीताका वनविषैं त्यजन अर वज्रजंघ राजाका वनविषैं आगमन, सीताकू बहुत आदरतै ले जाना। तहां लवणांकुशका जन्म। अर लवणांकुश बडे होई अनेक राजानिकू जीति वज्रजंघके राज्य का विस्तार किया। बहुरि अयोध्या जाय श्रीरामसू युद्ध किया। अर सर्वभूषण मुनिकू केवलज्ञानकी प्राप्ति, देवनिका आगमन। सीताके शीलतैं अग्नि-कुण्डका शीतल होना। अर विभीषणके पूर्वभवका वर्णन। कृतान्तवक्त्रका तप लेना। स्वयम्वर मण्डपविषै रामके पुत्रनितै लक्ष्मणके पुत्रनिका विरोध। बहुरि लक्ष्मणके पुत्रनिका वैराग्य। अर विद्युत्पाततै भामण्डलका मरण। हनुमान का वैराग्य। लक्ष्मण की मृत्यु। रामके पुत्रनिका तप। श्रीरामकू लक्ष्मण के वियोगतैं अत्यन्त शोक अर देवतानिके प्रतिबोधतैं मुनिव्रतका अंगीकार, केवल ज्ञानकी प्राप्ति। निर्वाण गमन।

यह सब रामचन्द्रका चरित्र सज्जन पुरुष मनकू समाधान करिके सुनहु। यह चरित्र सिद्धपदरूप मंदिरकी प्राप्तिका सिवाण है, अर सवप्रकार सुखनिका दायक है। श्रीरामचन्द्रको आदि दे जे महामुनि तिनका जे मनुष्य चिंतवन करै हैं, अर अतिशयपणेकरि भावनिके समूह करि नम्रीभूत होइ प्रमोदकू धरै है तिनका अनेक जन्मनिका संचित जो पाप सो नाश होइ है। सम्पूर्ण पुराणका जे श्रवण करैं तिनका पाप दूर होय ही होय, तामें संदेह कहा? कैसा है पुराण? चन्द्रमा समान उज्ज्वल है। तातै जो विवेकी चतुर पुरुष है ते या चरित्रका सेवन करहु। कैसा है चरित्र? बडे पुरुषनिकरि सेइवे योग्य है। जैसे सूर्यकरि प्रकाश्या जो मार्ग ताविषै भले नेत्रनिके धारक पुरुष काहेकू डिगे?

इति श्रीरविषेणाचार्य विरचित पद्मपुराण संस्कृत ग्रन्थ की भाषावचनिकाविषै पीठबंध विधान नामा प्रथम पर्व पूर्ण भया ॥१॥

अथ लोकस्थिति महा अधिकार ।



मगधदेशके राजगृह नगरमें श्रीमहावीर स्वामीके समोसरणका आना और राजा श्रेणिकका श्रीरामचन्द्रजीकी कथा पूछना।

जम्बूद्वीपके भरतक्षेत्रमें मगधदेश अति सुन्दर है, जहा पुण्याधिकारी बसै है, इन्द्रके लोक समान सदा भोगोपभोग करै हैं, जहा योग्य व्यवहार से लोक पूर्ण मर्यादारूप प्रवृत्ते ह और जहा सरोवर में कमल फूल रहे ह और भूमिमें अमृतसमान मीठे साठेनके बाड़े शोभायमान ह और जहा नाना प्रकारके अन्नोके समूहके पर्वत समान ढेर होय रहे, अरहटकी घडीसे सींचे जीरानके धणाके खेत हरित होय रहे हैं, जहा भूमि अत्यन्त श्रेष्ठ ह, सब वस्तु निपजे है। चावलों के खेत शोभायमान और मूंग मोठ ठौर२ फल रहे है। गेहूं आदि सब अन्नकू काहू भांति विघ्न नाहीं और जहा भैसकी पीठपर चढ़े ग्वाला गावें है, गऊओंके समूह अनेक वर्णके हैं, जिनके गलेमें घटा बाजे हैं और दुग्ध झरती अत्यन्त शोभे है, जहा दूधमयी धरती होरही है, अत्यन्त स्वादु रसके भरे तृण तिनको चरकर गाय भैंस पुष्ट होय रही हैं और श्याम सुन्दर हिरण हजारों विचरे है, मानो इन्द्रके हजारों नेत्र ही है। जहा जीवनको कोई बाधा नहीं। जिनधर्मियोका राज्य है और बनके प्रदेश केतककी धूलिकरि धूसरित होय रहे है, फूलों से धवल होय रहे हैं, गंगा के पुलिन समान उज्ज्वल बहुत शोभायमान हैं और जहा केसरकी क्यारी अति मनोहर है और जहा ठौर ठौर नारियलके वृक्ष है और अनेक प्रकार के शाक पत्रसे खेत हरित होरहे है और वनपाल नारेल आदि मेवानका आस्वाद करे हैं और जहा दाडम के बहुत वृक्ष ह। जहां सूवादि अनेक पक्षी बहुत प्रकार के फल भक्षण करे हैं, जहा बंदर अनेक प्रकार किलोल करे है, बिजौराके वृक्ष फल रहे हैं। बहुत स्वादरूप अनेक जाति के फल तिनका रस पीकर

पखी सुखसों सोय रहे हैं और दाखके मण्डप छाय रहे है। जहा वन विषैं देव विहार करे हैं, जहां खजूरको पथिक भक्षण करे हैं, केलाके वन फल रहे हैं। ऊचे ऊचे अरजुन वृक्षों के वन सोहे हैं और नदी के तट गोकुलनके शब्दसे रमणीक हैं। नदियोमें मच्छीनिके समूह किलोल करैं हैं, तरंगके समूह उठे हैं। मानो नदी नृत्य ही करे ह और हसोंके मधुर शब्दो कर मानों नदी गान ही करे है, जहां सरोवरके तीरपर सारस क्रीडा करे हैं और वस्त्र आभरण सुगन्धादि सहित मनुष्योंके समूह तिष्ठे हैं, कमलोंके समूह फूल रहे हैं, और अनेक जीव क्रीडा करे हैं। जहा हसो के समूह उत्तम मनुष्योंके गुणोंके समान उज्ज्वल सुन्दर शब्द, सुन्दर चालवाले तिनकर वन धवल होय रहा ह। जहा कोकिलानके रमणीक शब्द और भवरोका गु जार, मोरोके मनोहर शब्द, सगीतकी ध्वनि, बीन भवगोंका बाजना, इनकरि दशों दिशा रमणीक होय रही हैं और वह देश गुणवत पुरुषोसे भरा है, जहा दयावान क्षमावान शीलवान उदारचित्त तपस्वी त्यागी विवेकी आचारी लोग बसे हैं, मुनि विचरै है, आर्यिका विहार करे हैं, उत्तम श्रावक श्राविका बसे हैं। शरदकी पूणमासी के चन्द्रमाके समान है जिसकी वृत्ति जिनकी, मुक्ताफल समान उज्ज्वल हैं। आनन्दके देनेहारे हैं, और वह देश बडे बडे गृहस्थोन कर मनोहर है। कैसे है गृहस्थी ? कल्पवृक्ष समान हैं, तृप्त किये है अनेक पथिक जिन्होने। जहा अनेक शुभ ग्राम हैं। जिनमें भलेभले किसान बसे हैं, और उस देश विषै कस्तूरी कपूरादि सुगन्ध द्रव्य बहुत हैं और भांति भांतिके वस्त्र आभूषणों कर मण्डित नर नारी विचरे है, मानो देव देवी ही हैं। जहा जैन वचनरूपी अंजन [सुरमा] से मिथ्यात्वरूपी दृष्टिविकार दूर होवे है। और महा मुनियोंके तप रूपी अग्निसे पाप रूपी वन भस्म होय है। ऐसा धर्मरूपी महा मनोहर मगध देश बसै है ॥

मगधदेश में राजगृह नामा नगर महा मनोहर, पुष्पोकी वासकर महा सुगन्धित, अनेक सम्पदा कर

भरया है। मानो तीन भुवनका यौवन ही है और वह नगर इन्द्रके नगर समान मनका मोहने वाला है। इन्द्रके नगरमें तो इन्द्राणी कुंकुम कर लिप्त शरीर विचरै है, और इस नगरमें राजा की रानी सुगंध कर लिप्त शरीर विचरे है। महिषी ऐसा नाम रानीका है, और भैंसका भी है, सो जहां भैंस भी केसरकी क्यारीमें लोटकर केसरसों लिप्त भई फिरे है। और सुन्दर उज्ज्वल घरों की पंक्ति और टांकीनके घडे सफेद पाषाण तिनकी शिलानिकरि मंदिर बने हैं, मानो चन्द्रकांति मणिनका नगर बना है। मुनियोंको तो वह नगर तपोवन भासे है (मालूम होता है) वेश्याको काम मंदिर। नृत्यकारनीको नृत्यका मंदिर और वैरीको यमपुर है, सुभटको वीरनिका स्थान, याचकनिको चिंतामणि, विद्यार्थीको गुरुगृह, गीतशास्त्रके पाठीको गंधर्व नगर, चतुरनकूं सबकला (चतुराई) सीखनेका स्थान और ठगनिको धूर्तनिका मंदिर भासे है। संतनको साधुओंका संगम, व्यापारीको लाभभूमि, शरणागतको वज्रपिंजर, नीतिके वेत्ताको नीतिका मंदिर, कौतुकी (खिलारियों) को कौतुकका निवास, कामिनिको अप्सराओंका नगर, सुखियाको आनन्दका निवास भासे है। जहां गजगामिनी शीलवती व्रतवंती रूपवती अनेक स्त्री हैं। जिनके शरीरकी पद्मरागमणिकीसी प्रभा है और चन्द्रकांति मणि जैसा बदन है, सुकुमार अंग हैं, पतिव्रता हैं, व्यभिचारीको अगम्य हैं, महा सौन्दर्य हैं, मिष्ट वचनकी बोलनेहारी हैं, और सदा हर्षरूप मनोहर है मुख जिनके और प्रमाद रहित है चेष्टा जिनकी, सामायिक प्रोषध प्रतिक्रमणकी करनेहारी हैं, व्रत नेमादि विषै सावधान हैं, अन्नका शोधन, जलका छानना, पात्रनिकू भक्तिकरि दान देना और दुखित भुखित जीवको दयाकर दान देना इत्यादि शुभ क्रियामें सावधान हैं। जहां महा मनोहर जिनमंदिर हैं, जिनेश्वरकी भक्ति और सिद्धांतकी चरचा ठौर ठौर है। ऐसा राजगृह नगर बसा है जिसकी उपमा कथनमें न आवे। स्वर्ग लोक तो केवल भोगही का

विलास है, और यह नगर भोग और योग दोनो ही का निवास है। जहा पर्वत समान तो ऊंचा कोट है, और महागम्भीर खाई है, जिसमें वैरी प्रवेश नहीं कर सकते, ऐसा देवलोक समान शोभायमान राजगृह नगर बसे है।

राजगृह नगरमें राजाश्रेणिक राज्य करे है, जो इन्द्र समान विख्यात है। बडा योद्धा, कल्याण-रूप है प्रकृति जिसकी। कल्याण ऐसा नाम स्वर्णका भी है और मगलका भी है। सुमेरु तो सुवर्ण रूप है, और राजा कल्याणरूप है। वह राजा समुद्र समान गम्भीर है, मर्यादा उलघनका है भय जिसको, कलाके ग्रहणमें चन्द्रमाके समान है, प्रतापमें सूर्य समान है, धन सम्पदामें कुबेरके समान है, शूरवीरपनेमें प्रसिद्ध है, लोकका रक्षक है, महा न्यायवत है। लक्ष्मीकरि पूर्ण है, गर्वसे दूषित नहीं, सब शत्रुओंको विजय कर बैठा है तथापि शस्त्र (हथियार) का अभ्यास रखता है और जे आपसे नम्रीभूत भये है तिनके मानका बढावनहारा है। जे आपतें कठोर है तिनके मानका मोडनहारा है। और आपदा विषै उद्वेगचित्त नाहीं, सम्पदा विषै मदोन्मत्त नाहीं। जाकी निर्मल साधुनिविषै रतबुद्धि है, और रत्नके विषै पाषाणबुद्धि है, जो दानयुक्त क्रियामें बडा सावधान है, और ऐसा सामन्त है कि मदोन्मत्त हाथीको कीट समान जाने है और दीन पर दयालु है, जिसकी जिनशासनमें परम प्रीति है। धन और जीतव्यमें जीर्ण तृण समान बुद्धि है, दशो दिशा वश करी है, प्रजा के प्रतिपालनमें सावधान है, और स्त्रियोंको चर्मकी पुतली के समान देखे है, धनको रज समान गिने है, गुणनकर नम्रीभूत जो धनुष ताहीको अपना सहाई जाने है,चतुरग सेनाको केवल शोभारूप माने है। (भावार्थ) अपने बल पराक्रमसे राज करे है। जिसके राजमें पवन भी वस्त्रादिका हरण नहीं करे तो ठग चोरोंकी क्या बात ? जिसके राजमें क्रूर पशु भी हिंसा न करते भये तो मनुष्य हिंसा कैसे करे? यद्यपि

राजा श्रेणिकसे वासुदेव बडे होते ह, परन्तु उन्होने वृष कहिए वृषासुरका पराभव किया ह, और यह राजा श्रेणिक वृष कहिये धर्म ताका प्रतिपालक ह, इसलिए उनसे श्रेष्ठ ह । और पिनाकी कहिये शकर उसने राजा दक्षके वगकू आताप किया । अर यह दक्ष अर्थात चतुर पुरुषोंको आनन्दकारी हैं, इसलिए शकरसे भी अधिक ह । और इन्द्रके वश नाहीं, अर यह वश करि विस्तीण है । और दक्षिण दिशाका दिग्पाल जो यम, सो कठोर ह, यह राजा कोमल चित्त ह । और पश्चिम दिशाका दिग्पाल जो वरुण सो दुष्ट जलचरोका अधिपति ह, इसके दुष्टोंका अधिकार ही नाहीं । और उत्तर दिशाका अधिपति जो कुवेर, वह धनका रक्षक है, यह धनका त्यागी है । और बौद्धके समान क्षणिकमती नाहीं, चन्द्रमाकी नाई कलकी नाहीं । यह राजा श्रेणिक सर्वोत्कृष्ट ह । जिसके त्यागका अर्थी पार न पावै, जिसकी बुद्धिका पार पण्डित न पावते भये । शूरवीर जिसके साहसका पार न पावते भये । जिसकी कीर्ति दशो दिशा में विस्तरी ह, जिनके गुणनकी सख्या नाहीं, सम्पदा का क्षय नाहीं । सेना अर बहुत बडे बडे सामत सेवा करै है । हाथी घोडे रथ पयादे सब ही राजा का ठाठ सबसे अधिक है । और पृथिवीविषै प्राणीका चित्त जिससे अति अनुरागी होता भया, जिसके प्रतापका शत्रु पार न पावते भए । सब कलाविषै प्रवीण है, इसलिए हम सरीखे पुरुष वाके गुण कैसैं गा सकैं ? जिसके क्षायिक सम्यक्त्वकी महिमा इन्द्र अपनी सभा विषै सदा ही करै है, वह राजा मुनिराजके समूहमें वेतकी लताके समान नमीभूत है । अर उद्धत वैरीनिको वज्रदण्डसै वश करनेवाला है । जिसने अपनी भुजाओंसे पृथिवीकी रक्षा करी । कोट खाई तो नगरकी शोभामात्र है । जिनचैत्यालयों का करानेवाला, जिनपूजाका करानेवाला है । जिसके चेलना नामा रानी महा पतिवृता शीलवती गुणवती रूपवती कुलवती शुद्ध सम्यग्दर्शन को धरनहारी, श्राविकाके वृत पालनेवाली, सब-कला-निपुण, उसका वर्णन

कहा लग करैं ? ऐसा उपमा कर रहित राजा श्रेणिक गुणोका समूह राजगृह नगरमें राज करे है।

आगें अन्तिम तीर्थंकरका समवसरणका आगमन आनि राजा श्रेणिक उछाहसहित भए ताका वर्णन करिए है—

एक समय राजगृह नगरके समीप विपुलाचल पर्वतके ऊपर भगवान महावीर अन्तिम तीर्थंकर समोसरण सहित आय विराजे। तब भगवानके आगमनका वृत्तात वनपालने आकर राजासे कहा और छहों ऋतुओंके फल फूल लाकर आगें धरे। तब राजाने सिंहासन से उठकर सात पैंड पर्वतके सम्मुख जाय भगवानको अष्टांग नमस्कार किया और वनपालको अपने सब आभरण उतारकर पारितोषिकमें देकर भगवानके दर्शनों की तयारी करता भया।

श्रीवर्धमान भगवानके चरण-कमल सुर नर असुरोंसे नमस्कार करने योग्य है। गर्भकल्याणविषै छप्पन कुमारियोंने शोधा जो माताका उदर, उसमें तीन ज्ञान संयुक्त अच्युत स्वर्गसे आय विराजे है। और इन्द्रके आदेशसे धनपतिने गर्भमें आवनेसे छहमास पहिले से रत्नवृष्टि करके जिनके पिताका घर पूरया है। अर जन्मकल्याणकमें सुमेरपर्वतके मस्तक पर इन्द्रादि देवोंने क्षीरसागर के जलकर जिनका जन्माभिषेक किया है और धरा है महावीर नाम जिनका। और बाल अवस्थामें इन्द्रने जो देवकुमार रखे तिन सहित जिन्होंने क्रीडा करी है। और जिनके जन्ममें माता पितान कूं तथा अन्य समस्त परिवारकूं अर प्रजाकूं और तीन लोकके जीवनिकूं परम आनन्द हुआ। नारकियोंका भी त्रास एक मुहूरत के वास्ते मिट गया। जिनके प्रभावकरि पिताके बहुत दिनोंके विरोधी जो राजा थे, ते स्वयमेव ही आय नमीभूत भये और हाथी घोडे रथ रत्नादिक अनेक प्रकारके भेंट किये और छत्र चमर वाहनादिक तज, दीन होय हाथ जोड आय पायन पडे। और नाना देशों की प्रजा आयकर निवास करती भई। जिन भगवान का चित्त जोगविषैं सदारत, भोगनिविषैंरत न भया। जैसे सरोवर

में कमल जलसे निर्लेप रहै तैसे भगवान जगतकी मायासे अलिप्त रहे। वह भगवान स्वयबुद्ध बिजली के चमत्कारवत जगतकी मायाको चचल जान वरागी भये। और किया ह लौकातिक देवोंने स्तवन जिनका, मुनिव्रतको धारण कर सम्यग्दशन ज्ञान चारित्रका आराधनकर घातिया कर्मों का नाशकर केवलज्ञानको प्राप्त भये। वह केवलज्ञान समस्त लोकालोकका प्रकाशक ह। ऐसे केवलज्ञानके धारक भगवानने जगतके भव्य जीवोके उपकारके निमित्त धमतीथ प्रगट किया। वह श्रीभगवान मलरहित पसेवसे रहित ह। जिनका रुधिर क्षीर (दूध) समान ह और सुगन्धित शरीर, शुभलक्षण, अतुलबल मिष्टवचन, महा सुन्दर स्वरूप, समचतुरससस्थान, वज्रवृषभनाराच सहनन के धारक हैं। जिनके, विहारमें चारो ही दिशाओमें दुर्भिक्ष नाहीं। सकल ईति भीतिका अभाव रह ह, और सर्वविद्याके परमेश्वर ह। जिनका शरीर निमल स्फटिक समान ह, अर आखो की पलक नाहीं लागै। अर नख केश बढे नाहीं, समस्त जीवोमें मत्रीभाव रहता ह, और शीतल मन्द सुगन्ध पवन पीछे लगी आवै ह। छह ऋतुके फल फूल फलै ह, और धरती दपण समान निर्मल हो जाती ह, और पवनकुमार देव एक योजन पर्यंत भूमि तृण पाषाण कटकादि रहित करै है। और मेघकुमार देव पीछे गधोदककी सुवृष्टि महा उत्साहसे कर और प्रभुके विहारमें देव चरणकमलके तल स्वर्णमयी कमल रचै हैं। चरणों को भूमि का स्पश नाहीं, आकाशमें ही गमन करै ह। धरतीपर छह ऋतुके सव धान्य फलै हैं। शरद के सरोवरके समान आकाश निर्मल होय है। अर दशो दिशा धूमादिरहित निर्मल हो रही ह, सूर्यकी कातिको हरणेवाला सहस्र आरोंसे युक्त धर्मचक्र भगवान के आगे चलै ह। इस भाति आर्य खण्ड में विहार कर श्रीमहावीर स्वामी विपुलाचल पर्वत ऊपर आय विराजे है। उस पर्वत पर नाना प्रकारके जलके निरझरने झरै है, उनका शब्द मनका हरणहारा है। जहा वेलि और वृक्ष शोभायमान है। और

अहा जातिविरोधी जीवोने भी वैर छोड दिया है। पक्षी बोल रहे है, उनके शब्दों से मानो पहाड़ गुञ्जार ही करै है, और भ्रमरोके नादसे मानो पहाड गान ही करै है। सघन वृक्षों के तलें हाथियों के समूह बैठे है। गुफाओके मध्य सिंह तिष्ठ है। जैसे कैलाश पर्वतपर भगवान ऋषभदेव विराजे थे तैसे विपुलाचलपर श्रीवर्द्धमान स्वामी विराजे है॥

जब श्रीभगवान समोसरणमें केवलज्ञान संयुक्त विराजमान भये, तब इन्द्रका आसन कम्पायमान भया, तदि इन्द्र जानी कि भगवान केवलज्ञानसयुक्त विराजे हैं, मैं जायकर वंदना करू। सो इन्द्र ऐरावत हाथीपर चढकर आए। वह हाथी शरदके बादल समान उज्ज्वल है। मानो कैलाश पर्वत सुवर्णकी साकलनिकरि संयुक्त है। जिसका कुम्भस्थलभ्रमरोकी पंक्तिकरि मंडित है, जिसने दशों दिशा सुगन्ध से व्याप्त करी है, महा मदोन्मत्त है, जिसके नख सचिक्कण है, जिसके रोम कठोर हैं जिसका मस्तक भले शिष्यके समान बहुत विनयवान और कोमल है, जिसका अंग दृढ है, और, दीर्घ काय है, जिसका स्कंध छोटा है, मद झर है, अर नारदसमान कलहप्रिय है। जैसे गरुड नागको जीतै तैसैं यह नाग अर्थात् हाथियो को जीत है। जैसैं रात्रि नक्षत्रों की माला कहिए पंकति ताकरि शोभै है। तसैं यह नक्षत्रमाला जो आभरण तासो शोभ है। सिंदूर कर अरुण (लाल) ऊंचा जो कुंभस्थल उससे देव मनुष्यो के मनको हरै है। ऐसे ऐरावत गजपर चढ़कर सुरपति आए। और भी देव अपने अपने वाहनों पर चढकर इन्द्रके संग आए, जिनके मुख कमल जिनेंद्रके दर्शनके उत्साह से फूल रहे है। सोलह ही स्वर्गोंके समस्त देव और भवनवासी, व्यंतर, ज्योतिषी सबही आए। कमलायुध आदि अखिल विद्याधर अपनी स्त्रियो सहित आए। वे विद्याधर रूप और विभवमें देवोंके समान हैं।

तहा समोसरणविषै इन्द्र भगवानको ऐसे स्तुति करते भए। हे नाथ! महामोहरूपी निद्रामें सोता

यह जगत तुमने ज्ञानरूप सूर्य के उदयसे जगाया। हे सर्वज्ञ वीतराग! तुमको नमस्कार होहु, तुम परमात्मा पुरुषोत्तम हो, संसार समुद्रके पार तिष्ठो हो। तुम बडे सार्थवाही हो। भव्य जीव चेतनरूपी धनके व्यापारी तुम्हारे संग निर्वाण द्वीपको जायेंगे तो मार्गमें दोषरूपी चोरोंसे नाहीं लूटेंगे। तुमने मोक्षाभिलाषियोंको निर्मल मोक्षका पथ दिखाया और ध्यानरूपी अग्नि कर कर्म ईंधनको भस्म किया है। जिनके कोई बांधव नाहीं, नाथ नाहीं, दुःखरूपी अग्निके ताप कर संतापित जगतके प्राणी तिनके तुम भाई हो और नाथ हो, परम प्रतापरूप प्रगट भए हो। हम तुम्हारे गुण कैसे वर्णन कर सकें। तुम्हारे गुण उपमारहित अनन्त हैं, सो केवलज्ञानगोचर हैं। इस भांति इन्द्र भगवानकी स्तुति कर अष्टांग नमस्कार करते भये। समोसरणकी विभूति देख बहुत आश्चर्यको प्राप्त भये सो संक्षेपकरि वर्णन करिये है—

वह समोसरण नाना वर्णके अनेक महारत्न और स्वर्णसे रचा हुवा। जिसमें प्रथमही रत्नकी धूलि का धूलिसाल कोट है। और उसके ऊपर तीन कोट हैं, एक एक कोट के चार चार द्वार हैं, द्वारे २ अष्ट मंगल द्रव्य है, और जहां रमणीक वापी है, सरोवर हैं। और ध्वजा अद्भुत शोभा धरै है। तहां स्फटिक मणिकी भीति (दिवार) करि बाहर कोठे प्रदक्षिणरूप बने हैं। एक कोठेमें मुनिराज हैं। दूसरेमें कल्पवासी देवोंकी देवांगना हैं। तीसरेमें आर्यिका हैं। चौथेमें ज्योतिषी देवोंकी देवी हैं। पांचवेंमें व्यन्तर देवी हैं, छठेमें भवनवासिनी देवी हैं। सातवेंमें ज्योतिषी देव हैं। आठवेंमें व्यंतर देव हैं। नववेंमें भवनवासी, दशवेंमें कल्पवासी, ग्यारवेंमें मनुष्य, बारहवेंमें तिर्यंच। सर्व जीव परस्पर वैर भाव रहित तिष्ठैं हैं। भगवान अशोक वृक्षके समीप सिंहासनपर विराजैं हैं। वह अशोकवृक्ष प्राणियों के शोकको दूर करै है। और सिंहासन नाना प्रकार के रत्नो के उद्योत से इन्द्रधनुषके समान अनेक

रत्नोंको धरै है, इन्द्रके मुकुटमें जो रत्न लगे ह, उनकी काति के समूहको जीतै हैं। तीन लोक की ईश्वरताके चिह्न जो तीन छत्र उनसे श्रीभगवान शोभायमान है। और देव पुष्पोंकी वर्षा करै हैं। चौसठ चमर सिरपर ढुरै है। दुदुभी बाजै रज ह। उनकी अत्यन्त सुन्दर ध्वनि होय रही है।

राजगृह नगरसे राजा श्रेणिक आवते भये। अपना मन्त्री तथा परिवार और नगरवासियों सहित समवसरणके पास पहुच, समवसरणको देख दूरहीसे छत्र चमर वाहनादिक तज कर स्तुति पूर्वक नमस्कार करते भये। पीछे आयकर मनुष्योके कोठे में बैठे, अर कु वर वारिषेण, अभयकुमार, विजय-बाहु इत्यादिक राजपुत्र भी नमस्कार कर आय बठे। जहा भगवान की दिव्यध्वनि खिरै है, देव मनुष्य तिर्यंच सबही अपनी अपनी भाषामें समझ ह। वह ध्वनि मेघके शब्दको जीतै है। देव और सूर्यकी कातिको जीतने वाला भामण्डल शोभै ह। सिंहासन पर जो कमल ह, उसपर आप अलिप्त विराजै है। गणधर प्रश्न करै हैं, और दिव्यध्वनि विषै सबका उत्तर होय है।

गणधर देवने प्रश्न किया कि हे प्रभो! तत्त्वके स्वरूपका व्याख्यान करो। तब भगवान् तत्त्वनिका निरूपण करते भये। तत्त्व दो प्रकार के हैं एक जीव दूसरा अजीव। जीवोके दो भेद हैं—सिद्ध और ससारी। ससारी के दो भेद है—एक भव्य दूसरा अभव्य। मुक्त होने योग्य को भव्य कहिए और कोरडू (कुडकू) मू ग समान जो कभी भी न सीझै तिसको अभव्य कहिए। भगवान्के भाषे तत्त्वों का श्रद्धान भव्य जीवोंके ही होय अभव्यको न होय। और ससारी जीवोके एकेंद्रिय आदि भेद और गति काय आदि चौदह मार्गणाका स्वरूप कहा और उपशमश्रेणी क्षपकश्रेणी दोनों का स्वरूप कहा और ससारी जीव दु:खरूप कहे,सो मूढो को दु:खरूप अवस्था सुखरूप भासै है। चारो ही गति दु:ख रूप हैं। नारकियोंको तो आखके पलकमात्र भी सुख नाहीं, मारण, ताडन, छेदन, भेदन शूलारोपणादिक अनेक प्रकारके दु:ख निरन्तर है। अर तिर्यंचोको ताडन, मारण, लादन, शीत-उष्ण,भूख-प्यास आदिके अनेक दु:ख हैं। और मनुष्योंको इष्टवियोग और अनिष्टसयोग आदि अनेक दु:ख हैं। और देवोंको बडे देवोकी

विभूति देखकर सताप उपजै है और दूसरे देवोका मरण देख बहुत दु ख उपज है, तथा अपनी देवागनाओं का मरण देख वियोग उपजै है और जब अपना मरण निकट आवै तब अत्यन्त विलाप कर झूरै है। इसी भाति महादु ख कर सयुक्त चतुर्गतिमें जीव भ्रमण कर है । कर्मभूमिमे जो मनुष्य जन्म पाकर सुकृत (पुण्य) नाहीं कर है, उनके हस्तमें प्राप्त हुआ अमृत जाता रहे है । ससारमें अनेक योनियोमें भ्रमण करता हुआ यह जीव अनत कालमें कभी ही मनुष्य जन्म पावै है । तब भीलादिक नीच कुलमें उपजा तो क्या हुआ? अर म्लेच्छ खडो में उपजा तो क्या हुआ ? और कदाचित् आर्यखण्ड में उत्तम कुलमे उपज्या, और अगहीन हुआ तो क्या, और सुन्दररूप हुआ और रोग सयुक्त हुआ तो क्या ? और सब ही सामग्री योग्य भी मिली परन्तु विषयाभिलाषी होकर धर्ममे अनुरागी न भया तो कुछ भी नहीं । इसलिए धर्मकी प्राप्ति अत्यन्त दुर्लभ है । कई एक तो पराये किंकर होकर अत्यन्त दु खसे पेट भरै है, कई एक सग्राममे प्रवेश करै है । सग्राम शस्त्रके पातसे भयानक है और रुधिर के कदम (कीचड) से महा ग्लानि रूप है । और कई एक किसाण वृत्तिकर क्लेश से कुटुम्बका भरण पोषण करै हैं, जिसमें अनेक जीवोंकी हिंसा करनी पडती है। इसभाति अनेक उद्यम प्राणी करै है । उनमें दु ख क्लेशही भोग है । ससारी जीव विषयसुखके अत्यन्त अभिलाषी है। कई एक तो दरिद्रता से महादुखी है,कई एकधन पायकर चोर वा अग्नि वा जल वा राजादिके भयये सदा आकुलतारूप रहे है। और कई एक द्रव्यको भोगते है । परन्तु तृष्णारूप अग्निके बढनेसे जलैहै,कई एकको धर्मकी रुचि उपजी है,परन्तु उनको दुष्ट जीव ससार ही के माग में डारै है । परिग्रहधारियोके चित्त की निर्मलता कहासे होय,और चित्त की निर्मलता बिना धर्म का सेवन कैसे होय? जब तक परिग्रह की आसक्तता है तब तक जीव हिंसा-विषै प्रवृत्तै है और हिंसा से नरक निगोद आदि कुयोनिमें महा दु ख भोगे है ससारभ्रमण का मूल हिंसा ही है । अर जीवदया मोक्ष का मूल है । परिग्रह के सयोग से राग द्वेष उपजै है सो राग द्वेष ही ससार के दु ख के कारण है । कई एक जीव दर्शन मोह के प्रभाव से सम्यग्दर्शन को भी

पावें हैं, परन्तु चारित्रमोह के उदय से चारित्र को नहीं धरि सकें हैं, और कई एक चारित्र को भी धारकर बाईस परीषहों से पीडित होकर चारित्र से भ्रष्ट होय हैं। कई एक अणुवृत ही धारें हैं और कई एक अणुवृत भी धार नहीं सके है, केवल अवृत सम्यक्त्वी ही होय है। अर संसार के अनंत जीव सम्यक्त्व से रहित मिथ्यादृष्टि ही हैं। जो मिथ्यादृष्टि हैं वे बार बार जन्म मरण करै हैं, दुःखरूप अग्नि से तप्तायमान भवसंकटमैं पड़े हैं। मिथ्यादृष्टि जीव जीभ के लोलुपी हैं और काम कलंक से मलीन हैं, क्रोध मान माया लोभ मैं प्रवृत्ते है। और जो पुण्याधिकारी जीव संसार शरीर भोगनितैं विरक्त होइ करि शीघ्र ही चारित्र को धारें हैं, और निबाहैं है और संयम मैं प्रवृत्ते है। वे महाधीर परम समाधि से शरीर छोड़कर स्वर्ग में बड़े देव होकर अद्‌भुत सुख भोगे है। वहां से चयकर उत्तम मनुष्य होकर मोक्ष पावै है। कई एक मुनि तपकर अनुत्तर विमान मैं अहिमेन्द्र होय हैं, तहातै चय-कर तीर्थंकर पद पावै है, कई एक चक्रवर्ती बलदेव कामदेव पद पावै हैं। कई एक मुनि महातप कर निदान बांध स्वर्ग में जाय वहां से चयकर वासुदेव होय है। वे भोग को नाहीं तज सकैं हैं। इस प्रकार श्रीवर्द्धमान स्वामी के मुख से धर्मोपदेश श्रवण कर देव मनुष्य तिर्यंच अनेक जीव ज्ञान को प्राप्त भये। कई एक उत्तम पुरुष मुनि भए, कई एक श्रावक भए, कई एक तिर्यंच भी श्रावक भए। देव वृत नहीं धारण कर सकते हैं तातैं अवृत सम्यक्त्वको ही प्राप्त भए। अपनी अपनी शक्ति अनुसार अनेक जीव धर्ममें प्रवृत्त पापकर्मके उपार्जन से विरक्त भए। धर्म श्रवण कर भगवानको नमस्कार कर अपने अपने स्थान गए। श्रेणिक महाराज भी जिनवचन श्रवण कर हर्षित होय अपने नगरको गए।

अथानंतर सन्ध्या समय सूर्य अस्त होनेको सन्मुख भया, अस्ताचलके निकट आया, अत्यन्त आर-क्तता (सुरखी) को प्राप्त भया, किरण मन्द भई, सो यह बात उचितही है। जब सूर्यका अस्त होय तब किरण मंद होय ही होय, जैसे अपने स्वामीको आपदा परे तब किसके तेजकी वृद्धि रहे ? चकवीनके अश्रुपात सहित जे नेत्र तिनको देख मानो दयाकर सूर्य अस्त भया। भगवानके समवसरणविषै तो सदा

प्रकाश ही रहै है, रात्रि दिनका विचार नाहीं। अर सब पृथ्वीविषै रात्रि पडी, सन्ध्यासमय दिशा लाल भई सो मानो धर्म श्रवणकर प्राणियोके चित्तसे नष्ट भया जो राग, सो सन्ध्याके छलकर दशों दिशानमें प्रवेश करता भया। (भावार्थ) रागका स्वरूप भी लाल होय है, अर दिशाविषै भी ललाई भई। अर सूर्यके अस्त होने से लोगोके नेत्र देखनेसे रहित भए, क्योंकि सूर्यके उदयसे जो देखने की शक्ति प्रकट भई थी सो अस्त होनेसे नष्ट भई, अर कमल सकुचित भए। जैसे बडे राजाओं के अस्त भए चौरादिक दुर्जन जगत विषै परधन हरणादिक कुचेष्टा करें तैसे सूर्यके अस्त होनेसे पृथ्वी विषै अंधकार फैल गया। रात्रि समय घर घर चम्पेकी कली के समान जो दीपक तिनका प्रकाश भया। वह दीपक मानो रात्रिरूप स्त्री के आभूषण ही हैं। कमलके रससे तृप्त होकर राजहंस शयन करते भए, अर रात्रिसम्बन्धी शीतल मंद सुगंध पवन चलती भई, मानो निशा (रात) का स्वास ही है। अर भ्रमरोके समूह कमलोमें विश्राम करते भए। अर जैसे भगवानके वचनोंकर तीन लोक के प्राणी धर्मका साधनकर शोभायमान होय है, तैसें मनोज्ञ तारोके समूहसे आकाश शोभायमान भया। अर जैसे जिनेन्द्रके उपदेशसे एकांतवादियोका संशय विलाय जाय तैसे चन्द्रमाकी किरणों से अन्धकार विलाय गया। लोगोके नेत्रोको आनंदका करनहारा चंद्रमा उद्योत समय कम्पायमान भया, मानो अन्धकारपर अत्यन्त कोप भया। [भावार्थ] क्रोध समय प्राणी कम्पायमान होय है। अन्धकार कर जे लोक खेदको प्राप्त भए थे वे चन्द्रमाके उद्योतकर हर्षको प्राप्त भए। अर चन्द्रमाकी किरणको स्पर्श कर कुमुद प्रफुल्लित भए। इस भांति रात्रिका समय लोगोको विश्रामका देनहारा प्रगट भया। राजा श्रेणिकको सन्ध्यासमय सामायिकपाठ करते, जिनेन्द्रकी कथा करते करते घनी रात्रि गई, सोने को उद्यमी भया। कैसा है रात्रिका समय, जिसमें स्त्री पुरुषोंके हितकी वृद्धि होय है। राजाके शयनका महल गंगाके पुलिन [किनारों] समान उज्ज्वल है, अर रत्नोकी ज्योतिसे अति उद्योत रूप है। अर फूलोंकी सुगंधि जहां झरोखोंके द्वारा आवै है, अर महलके समीप सुन्दर स्त्री मनोहर गीत गाय रही

हैं। अर महलके चौगिरद सावधान सामंतो की चौकी है, अर अति शोभा बन रही है। सेजपर अति कोमल बिछौने बिछ रहे हैं। वह राजा भगवानके पवित्र चरण अपने मस्तक पर धारै हैं, अर स्वप्न में भी बारम्बार भगवान होका दर्शन करै है। अर स्वप्नमें गणधरदेवसे भी प्रश्न करै है। इस भांति सुखसे रात्रि पूर्ण भई, पीछे मेघकी ध्वनिके समान प्रभातके वादित्र बाजते भए। उनके नादसे राजा निद्रासे रहित भया।

प्रभात समय देहक्रिया करि राजा श्रेणिक अपने मनमें विचार करता भया कि भगवान की दिव्यध्वनिमें तीर्थंकर चक्रवर्त्यादिकके जो चरित्र कहे गए वे मैंने सावधान होकर सुने। अब श्रीरामचन्द्रके चरित्र सुनने में मेरी अभिलाषा है। लौकिक ग्रन्थोमें रावणादिकको मांसभक्षी राक्षस कहा है परन्तु वे विद्याधर महाकुलवंत कैसे मद्य मांस रुधिरादिकका भक्षण करैं? अर रावणके भाई कुम्भकरणको कहै है कि वह छै महीनेको निद्रा लेता था। अर उसके ऊपर हाथी फेरते अर ताते तेलसे कान पूरते तो भी छह महीना से पहले नहीं जागता, तब ऐसी भूख प्यास लगती कि अनेक हस्ती महिषी (भैंसा) आदि तिर्यंच, अर मनुष्यो को भक्षण कर जाता था। अर राधि रुधिरका पान करता तौ भी तृप्ति नहीं होती थी। अर सुग्रीव हनुमानादिकको बानर कहे है। परन्तु वे तो बडे राजा विद्याधर थे, बडे पुरुष को विपरीत कहने में महा पापका बंध होय है। जैसे अग्नि के संयोग से शीतलता न होय, अर तुषार (बर्फ) के संयोग से उष्णता (गरमी) न होय, जलके मथन से घी की प्राप्ति न होय, अर बालू रेत के पेलने से तैल की प्राप्ति न होय, तैसे महापुरुषों के चरित्र विरुद्ध सुनने से पुण्य न होय। अर लोक ऐसा कहै हैं कि देवो के स्वामी इन्द्र को रावण ने जीता, परन्तु यह बात न बनै। कहा वह देवो का इन्द्र? अर कहा यह मनुष्य—जो इन्द्र के कोपमात्र से ही भस्म हो जाय, जाके ऐरावत हस्ती, वज्रसा आयुध, जिसकी ऐसी सामर्थ कि सर्व पृथिवी को वशकर ले। सो ऐसे स्वर्ग के स्वामी इन्द्र को यह अल्प शक्ति का धनी मनुष्य विद्याधर कैसे लाकर बन्दी में डारै है, मुगसे

सिंह को कसे बाधा होय ? तिलसे शिला को पीसना, अर गिंडोले से साप का मारना, अर श्वान से गजेंद्र का हनना कस होय ? अर लोक कहे है कि रामचन्द्र मृगादिककी हिंसा करते थे सो यह बात न बन । वे व्रती विवेकी दयावान महापुरुष कैसें जीवों की हिंसा करैं, अर कसै अभक्ष्यका भक्षण करैं ? अर सुग्रीव का बडा भाई बाली को कहै है कि उसने सुग्रीव की स्त्री अंगीकार करी । सो बडा भाई जो बाप समान ह कस छोटे भाई की स्त्री अंगीकार कर, सो यह सब बात सभव नाहीं । इसलिए गणधर देवको पूछकर श्रीरामचन्द्र की यथाथ कथा श्रवण करू । ऐसा विचार श्रेणिक महाराज ने किया । बहुरि मनमें विचार ह कि नित्य गुरुनिके दर्शन किए, धम के प्रश्न किए, तत्व निश्चय किएतै परम सुख होय है । ये आनन्द के कारण है । ऐसा विचार कर राजा सेज से उठे, अर रानी अपने स्थान गई । कसी ह रानी ? जिसकी काति लक्ष्मी समान है, महा पतिवृता अर पतिकी बहुत विनयवान है । अर कसा ह राजा ? जिसका चित्त अत्यन्त धर्मानुराग में निष्कम्प है । दोनों प्रभात क्रिया का साधन करते भए । अर जैसें सूर्य शरद के बादलो से बाहिर आवै तैसै राजा सुफेद कमलके समान उज्ज्वल सुगध महल से बाहिर आवते भए । उस सुगध महल में भवर गु जार करै हैं ।

इति श्री रविषेणाचार्यविरचित महा पद्मपुराणकी भाषा टीकाविषै श्र णिकने रामचन्द्र रावण के चरित्र सुनने के अर्थ प्रश्न करने का विचार किया एसा द्वितीय अधिकार सपूर्ण भया ॥ २ ॥

आगैं राजा सभा मै आय सव आभरण सहित विराजे ताकी शोभा कहिये हैं । प्रभात ही बडे बडे सामन्त आये, उनको द्वारपालने राजाका दर्शन कराया । सामतो के वस्त्र आभूषण सुन्दर हैं । उन समेत राजा हाथी पर चढकर नगर से समोसरण को चाले । आगै बन्दीजन विरद बखानते जाय है । राजा समोसरण के पास पहुँचे । कैसा है समोसरण—जहा अनत महिमाके निवास महावीर स्वामी विराजै है । तिनके समीप गौतम गणधर तिष्ठ है । तत्त्वों के व्याख्यानमें तत्पर अर काति में चन्द्रमा के तुल्य, प्रकाश में सूर्यके समान, जिनके चरण वा नेत्ररूपी कमल अशोक वृक्ष के पल्लव समान

लाल हैं, अर अपनी शांतिताकरि जगत को शांत करै है,मुनियो के समूह के स्वामी हैं। राजा दूर से ही समोसरण को देख करि हाथी से उतर समोसरण गए। हर्ष कर फूल रहे हैं मुखकमल जिनके सो भगवानकी तीन प्रदक्षिणा दे हाथ जोड नमस्कार कर मनुष्यों की सभा में बैठे ॥

प्रथम ही राजा श्रेणिक ने श्रीगणधरदेव को 'नमोऽस्तु' कहकर समाधान (कुशल) पूछकर प्रश्न किया—भगवन ! मै रामचरित्र सुनने की इच्छा करू हू। यह कथा जगत में लोगों ने और भांति प्ररूपी है। इसलिए हे प्रभो ! कृपाधार सदेहरूप कर्दमसे जीवनिको काढो।

राजा श्रेणिकका प्रश्न सुन श्रीगणधरदेव अपने दांतों की किरणसे जगतको उज्ज्वल करते गंभीर मेघ ध्वनि समान भगवानकी दिव्यध्वनिके अनुसार व्याख्यान करते भए। हे राजा ! तू सुन, मैं जिन आज्ञाप्रमाण कहू हू। जिनवचन तत्त्वके कथनमें तत्पर हैं। तू यह निश्चय कर कि रावण राक्षस नहीं, मनुष्य है, मांसका आहारी नहीं, विद्याधरोंका अधिपति है, राजा विनमिके वंशमें उपज्या है। अर सुग्रीवादिक बन्दर नहीं, ये बडे राजा मनुष्य ह, विद्याधर है। जसै नींव बिना मंदिरका मांडण न होय तैसे जिन-वचन-रूपी मूल विना कथाकी प्रमाणता न होय ह। इसलिए प्रथम ही क्षेत्र काला-दिकका वणन सुन, अर फिर महा पुरुषो का चरित्र जो पापका विनाशनहारा ह सो सुन।

लोकालोक कालचक्र कुलकर नाभिराजा और श्रीऋषभदेव और भरतका वर्णन।

गौतम स्वामी कहै है कि हे राजा श्रेणिक ! अनन्तप्रदेशी जो अलोकाकाश, ता मध्य तीन वात-वलयनै वेष्टित तीनलोक तिष्ठै हैं। तीनलोकके मध्य यह मध्यलोक है। इसमें असख्यातद्वीप और समुद्र हैं। तिनके बीच लवणसमुद्रकरि वेढ्या लक्षयोजनप्रमाण यह जबूद्वीप है। उसके मध्य सुमेर पर्वतहै,वह मूलमें वज्रमणिमयी है, अर ऊपर समस्त सुवर्णमयी है, अनेक रत्नोंसे संयुक्त है। संध्या समय रक्त-ताको धरै है, मेघोंके समूहके समान स्वर्गपर्यंत ऊंचा शिखर है। शिखरके और सौधर्म्मस्वर्गके बीचमें एक बालकी अणीका अन्तर है। सुमेरु पर्वत निन्यानवें हजार योजन ऊंचा है। अर एक हजार योजन

स्कन्ध है। अर पृथ्वीविषै तो दशहजार योजन चौडा है, अर शिखर पर एक हजार योजन चौडा है। मानो मध्य लोकके नापनेका दंड ही है। जम्बूद्वीपमें एक देवकुरु एक उत्तरकुरु भोगभूमि है, अर भरत आदि सप्त क्षेत्र हैं, षट्कुलाचलोंसे जिनका विभाग है। जम्बू अर शाल्मली यह दोय वृक्ष हैं। जम्बूद्वीपमें चौतीस विजयार्ध पर्वत है। एक एक विजयार्धमें एक सौ दश दश विद्याधरोंकी नगरी हैं। एक एक नगरीकूं कोटि कोटि ग्राम लागे हैं। अर जम्बूद्वीपमें बत्तीस विदेह, एक भरत, एक ऐरावत ऐसैं चौतीस क्षेत्र हैं। एक एक क्षेत्र मैं एक एक राजधानी है। अर जम्बूद्वीपमैं गंगा आदिक १४ महानदी हैं, अर छह भोगभूमि हैं। एक एक विजयार्धपर्वतमैं दोय दोय गुफा है। सो चौतीस विजयार्धके अडसठ गुफा हैं। षटकुलाचलो मैं अर विजयार्ध पर्वतों मैं तथा वक्षार पर्वतो में सर्वत्र भगवानके अकृत्रिम चैत्यालय है, अर जम्बूद्वीप अर शाल्मली वृक्ष मैं भगवान के अकृत्रिम चैत्यालय हैं जो रत्नों की ज्योति से शोभायमान हैं। जम्बूद्वीपकी दक्षिण दिशाकी ओर राक्षसद्वीप है,अर ऐरावत क्षेत्र की उत्तर दिशामैं गन्धर्व नामा द्वीप है,अर पूर्व विदेहकी पूर्व दिशामैं वरुण द्वीप है,अर पश्चिम विदेहकी पश्चिम दिशामें किन्नर द्वीप है। वे चारों ही द्वीप जिन मन्दिरो से मण्डित हैं ॥

जैसैं एक मास में शुक्लपक्ष अर कृष्णपक्ष यह दोय पक्ष होय है तैसैं ही एक कल्पमें अवसर्पिणी अर उत्सर्पिणी दोनों काल प्रवर्त्तै हैं। अवसर्पिणी काल मैं प्रथम ही सुखमासुखमा, काल की प्रवृत्ति होयहै, फिर दूसरा सुखमा, तीसरा सुखमादुखमा, चौथा दुखमासुखमा, पांचवा दुखमा अर छठा दुखमदुखमा प्रवर्त्तै है। तिसके पीछे उत्सर्पिणी काल प्रवर्त्तैहै। उसकी आदिमें प्रथम ही छठा काल दुखमादुखमा प्रवर्त्तै है, फिर पांचवा दुखमा, फिर चौथा दुखमासुखमा फिर तीसरा सुखमादुखमा, फिर दूसरा सुखमा,फिर पहला सुखमासुखमा। इसी प्रकार अरहटकी घडी समान अवसर्पिणी के पीछे उत्सर्पिणी अर उत्सर्पिणी पीछे अवसर्पिणी है। सदा यह कालचक्र इसी प्रकार फिरता रहता है,परन्तु इस काल का पलटना केवल भरत अर ऐरावत क्षेत्र में ही है। तातैं इनमें ही आयु कायादिककी हानि वृद्धि होय है। अर महावि-

देह क्षेत्रादि में तथा स्वर्ग पाताल में, अर भोग भूमि आदिक में तथा सर्व द्वीप समुद्रादिक में कालचक्र नाहीं फिरता, इसलिये उनमें रीति पलट नाहीं, एक ही रीति रहे है। देवलोकविर्षे तो सुखमासुखमा जो पहला काल है सदा उसकी ही रीति रहे है। अर उत्कृष्ट भोगभूमिमें भी सुखमासुखमा कालकी रीति रहै है, अर मध्य भोगभूमि में सुखमा अर्थात दूजे काल की रीति रहै है, अर जघन्य भोगभूमिमें सुखमा-दुखमा जो तीसरा काल है, उसकी रीति रहै है। अर महा विदेह क्षेत्रोंमें दुखमासुखमा जो चौथा काल है, उसकी रीति रहे ह। अर अढ़ाई द्वीपके परे अन्तके आधे स्वयभूरमण द्वीप पर्यंत बीचके असख्यात द्वीपसमुद्रमें जघन्य भोगभूमिविषै सदा तीजे कालकी रीति है। अर अतके आधे द्वीपविषै तथा अतमें स्वयभूरमणसमुद्रविषै तथा चारो कोणमें दुखमा अर्थात पचम कालकी रीति सदा रहै है। अर नरकमें दुखमादुखमा जो छठा काल उसकी रीति रहै है। अर भरत ऐरावत क्षेत्रोंमें छहों काल प्रवर्ते है। जब पहला सुखमासुखमा काल ही प्रवर्ते है, तब यहा देवकुरु उत्तरकुरु भोगभूमिकी रचना होय है, कल्पवृक्षोंसे मडित भूमि सुखमयी शोभै है, अर मनुष्यनिके शरीर तीन कोष ऊचे अर तीन पल्यकी आयु सब ही मनुष्य तथा पचेंद्रिय तिर्यंचनिकी होय है, अर ऊगते सूर्य समान मनुष्यकी कांति होय है। सब लक्षणपूर्ण लोक शोभे है। स्त्री पुरुष युगल ही उपजै है, अर साथ ही मरै है। स्त्री पुरुषों में अत्यन्त प्रीति होय है, मरकर देवगति पावै है। भूमि कालके प्रभावसे रत्न सुवर्णमयी है। अर कल्पवृक्ष दश जातिके सब ही मनवाछित पूर्ण करै है। जहा चार चार अगुलके महासुगध महामिष्ट अत्यन्त कोमल तृणोंसे भूमि आच्छादित है सर्व ऋतुकेफल फूलोंसे वृक्ष शोभैहैं। अर जहा हाथी घोडे गाय भैंस आदि अनेक जातिके पशु सुखसे रहै हैं। अर कल्पवृक्षकरि उत्पन्न महा मनोहर आहार मनुष्य करै हैं। जहा सिंहादिक भी हिंसक नाहीं, मासका आहार नाहीं, योग्य आहार करै हैं। अर जहा वापी सुवर्ण अर रत्ननिके सिवाण तिनकरि सयुक्त कमलनकर शोभित दुग्ध दही घी मिष्टान्नकी भरी अत्यन्त शोभाको धरै है। अर पहाड अत्यन्त ऊंचे नाना प्रकार रत्नकी किरणोंसे मनोज्ञ, सर्व प्राणियों

को सुखके देनहारे, पांच प्रकारके वर्णको धरैं विराजै हैं। अर जहां नदी जलचरादि जन्तुरहित महारमणीक दुग्ध (दूध) घी मिष्टान्न जलको भरी अत्यन्त स्वाद संयुक्त प्रवाहरूप बहै हैं, जिनके तट रत्ननिकी ज्योति से शोभायमान हैं। जहां बेइंद्री तेइंद्री चौइंद्री असैनी पंचेन्द्री तथा जलचरादि असैनी पंचेन्द्री जीव नाहीं, जहां थलचर, नभचर गर्भज, तिर्यंच हैं, सो तिर्यंच भी युगल उपजै हैं। वहां शीत उष्ण वर्षा नाहीं, तीव्र पवन नाहीं। शीतल मंद सुगंध पवन चलै है। अर काहू प्रकारका भय नाहीं, सदा अद्भुत उछाहही प्रवर्तै है। अर ज्योतिरांग जाति के कल्पवृक्षोंकी ज्योति कर चांद सूर्य नजर नाहीं आवै हैं। अर दशही जातिके कल्पवृक्ष सबही इन्द्रियनिके सुखास्वादके देनहारे शोभैं हैं, जहां खाना, पीना, सोना, बैठना, वस्त्र, आभूषण, सुगंधादिक सबही कल्पवृक्षोंसे उपजै हैं। यह कल्पवृक्ष वनस्पतिकाय नाहीं, अर देवाधिष्ठित भी नाहीं, केवल पृथ्वीकायरूप सार वस्तु हैं। तहां मनुष्योंके युगल ऐसे रमैं हैं जैसे स्वर्गलोकमें देव। या भांति गणधर देवने भोगभूमिका वर्णन किया।

आगैं राजा श्रेणिक भोगभूमिमें उपजनैका कारण पूछते भये तो गणधर देव कहै हैं—जो सरलचित्त साधुनकूं आहारादिक दानके देनहारे ते भोगभूमिविषै मनुष्य होय हैं। जैसैं भले खेतमें बोया बीज बहुतगुणा होकर फलै है, अर इक्षु (सांठे) में प्राप्त हुआ जल मिष्ट होय है, अर गायने पिया जो जल सो दूध होय परिणमै है। तैसैं व्रतनिकर मंडित परिग्रहरहित मुनिको दिया जो दान सो महाफल को फलै है। अर जैसैं नीरस क्षेत्रमें बोया बीज अल्पफलको प्राप्त होय, अर नींबमें गया जल कटुक होय है तैसे ही भोगतृष्णासे जे कुदान करै हैं ते भोगभूमिमें पशुजन्म पावै हैं। भावार्थ—दान चार प्रकारका है—एक आहारदान, दूजा औषधदान, तीजा शास्त्रदान, चौथा अभयदान। तिसमें मुनि आर्यिका उत्कृष्ट श्रावकोंको भक्तिकर देना पात्रदान है। अर गुणोंकर आप समान साधर्मीजनोंको देना समदान है। अर दुखित जीवको दया भावकर देना करुणादान है। सर्व त्याग करके मुनिव्रत लेना सकलदान है। ये दानके भेदकहे। आगे कालचक्रकी रीति कहै हैं। जैसैं एक मास विषै शुक्लपक्ष

अर कृष्णपक्ष होय होय हैं तैसें एक कल्पविषे अवसर्पिणी उत्सर्पिणी दो काल प्रवर्तै हैं। अवसर्पिणी काल विषैं प्रथम ही सुखमासुखमा,प्रवर्त्या बहुरि दूजा सुखमा,तीजे कालमें पल्यका आठवां भाग बाकी रहा तब कुलकर उपजे। प्रथम कुलकर प्रतिश्रुति भये। तिनके वचन सुनकर लोक आनन्दको प्राप्त भये। यह कुलकर अपने तीन जन्मको जाने हैं। अर उनकी चेष्टा सुन्दर है, अर वह कर्मभूमि में व्यवहारका उपदेशक हैं। अर तिनके पीछे सहस्र कोटि असंख्यात वर्षगये दूजा कुलकर सन्मति भया। तिनके पीछे तीसरा कुलकर क्षेमकर, चौथा क्षेमंधर, पांचवा सीमंकर, छठा सीमंधर, सातवा विमलवाहन, आठवा चक्षुष्मान्, नवां यशस्वी, दशवा अभिचन्द्र, ग्यारहवा चन्द्राभ, बारहवा मरुदेव, तेरहवा प्रसेनजित, चौदहवा नाभिराज, यह चौदह कुलकर प्रजाके पिता समान शुभ कर्मसे उत्पन्न भये। जब ज्योतिराग जातिके कल्पवृक्षों की ज्योति मंद भई, अर चांदसूर्य नजर आए, तिनको देखकर लोग भयभीत भये। कुलकरोंको पूछते भये—हे नाथ! यह आकाशमें क्या दीखै हैं? तब कुलकरने कहा कि अब भोगभूमि समाप्त हुई, कर्मभूमिका आगमन है। ज्योतिराग जातिके कल्पवृक्षोंकी ज्योति मंद भई है, इसलिए चांदसूर्य नजर आए हैं। देव चार प्रकारके हैं—कल्पवासी, भवनवासी, व्यन्तर, अर ज्योतिषी। तिनमें चांदसूर्य ज्योतिषियोंके इन्द्र प्रतींद्र है। चन्द्रमा तो शीत किरण है,अर सूर्य उष्णकिरण है। जब सूर्य अस्त होय है तब चन्द्रमा कांतिको धरै है। अर आकाश विषै नक्षत्रोंके समूह प्रगट होय हैं, सूर्यकी कांतिसे नक्षत्रादि नहीं भासै है। इसी प्रकार पहिले कल्पवृक्षों की ज्योति से चन्द्रमा सूर्यादिक नाहीं भासते थे, अब कल्पवृक्षोंकी ज्योति मंद भई, तातैं भासै हैं। यह कालका स्वभाव जानकर तुम भय तजो। यह कुलकरका वचन सुनिकर तिनका भय निवृत्त भया।

अथानन्तर चौदहवें कुलकर श्रीनाभिराजा जगतपूज्य तिनके समयमें सब ही कल्पवृक्षोंका अभाव भया। अर युगल उत्पत्ति मिटी। ते अकेले ही उत्पन्न भये, तिनके मरुदेवी राणी मनको हरणहारी, उत्तम पतिव्रता, जैसे चन्द्रमाके रोहिणी,समुद्रके गंगा,राजहंसके हंसिनी तैसे यह नाभिराजाकेहोती भई। २५

कैसी ह राणी ? सदा राजाके मन विष बस है, जाकी हंसिनीकीसी चाल अर कोयल कैसे वचन है। जैसे चकवीकी चकवेसो प्रीति होय है तैसे राणीकी राजासौं प्रीति होती भई। राणी कू क्या उपमा दी जाय—वह पदार्थ राणीसें न्यून दीखै ह। सब लोकपूज्य मरुदेवी—असे धमके वया होय तैंमे त्रैलोक्यपूज्य जो नाभिराजा—उसके परमप्रिय होती भई। मानो यह राणी आतापकी हरणहारी चन्द्रकलानि ही कर निरमयी (बनाई) है आत्मस्वरूपकी जाननहारी—सिद्धपदका ह ध्यान जिसको त्रैलोक्यकी माता पुण्याधिकारणी मानू जिनवाणी ही है। अर अमतका स्वरूप तृष्णाकी हरणहारी मानू रत्नवष्टि ही है। सखियोको आनन्दकी उपजावनहारी महा रूपवती कामकी स्त्री जो रति उससे भी अति सुन्दरी है। महा आनन्दरूप माता जिसका शरीर ही सब आभूषण है, जिसके नेत्रो के समान नीलकमल नाहीं, अर जाके केश भ्रमरहुतै अधिक श्याम, सो केश ही ललाटके शृंगार हैं, यद्यपि इनको आभूषणोकी अभिलाष नाहीं, तथापि पतिकी आज्ञा प्रमाण कर कर्णफूलादि आभूषण पहिरे हैं। जिनके मुखका हास्य ही सुगन्धित चूर्ण है—उन समान कपूरकी रज कहा ? अर जिनकी वाणी वीणाके स्वरको जीते है, उनके शरीरके रंगके आगे स्वर्ण कुंकुमादिक का रंग कहा ? जिनके चरणारविन्दनि पर भ्रमर गुंजार करैं हैं। नाभिराजा करि सहित मरुदेवी राणी के यशका वर्णन सैकडों ग्रन्थों में भी न हो सकै तो थोडे से श्लोकोंमैं कैसे होय ?

जब मरुदेवीके गर्भविष भगवानके छह महीना बाकी रहे तब इन्द्रकी आज्ञासें छप्पन कुमारिका हर्षित भईथकी माताकी सेवा करती भई। अर १ श्री २ ह्री ३ धृति ४ कीर्ति ५ बुद्धि ६ लक्ष्मी यह षट् (६) कुमारिका स्तुति करती भई—हे मात! तुम आनन्दरूप हो, हमको आज्ञा करहु, तुम्हारी आयु दीर्घ होऊ। या भांति मनोहर शब्द कहती भई। अर नाना प्रकारकी सेवा करती भई। कई एक वीणा बजाय महा सुन्दर गान कर माताको रिझावती भई। अर कई एक आसन बिछावती भई, अर कईएक कोमल हाथोंसे माताके पाव पलोटती भई। कईएक देवी माताको तांबूल (पान) देती

भई। कई एक खड्ग हाथमें धारणकर माता की चौकी देतीभई। कईएक बाहरले द्वारमें सुवर्ण आसे लिये खडी होती भई। अर कईएक चँवर ढोरती भई। कईएक आभूषण पहरावती भई, कईएक सेज बिछावती भई, कईएक स्नान करावती भई, कइएक आगन बहारती भइ, कईएक फूलोंके हार गूथती भई, कईएक सुगन्ध लगावती भइ, कइएक खाने पीनेकी विधिमें सावधान होती भई, कईएक जिसको बुलावै उसको बुलावती भइ। या भाति सब काय देवी करती भइ,माताकू काहू प्रकारकी भी चिन्ता न रहती भइ।

एक दिन माता कोमल सेज पर शयन करती हुती, उसने रात्रिके पिछले पहर अत्यन्त कल्याण-कारी सोलह स्वप्न देखे। १ पहले स्वप्नमें ऐसा चन्द्र समान उज्ज्वल मद झरता गाजता हाथी देखा जिसपर भ्रमर गु जार करै है। २ दूजे स्वप्नमें शरदके मेघ समान उज्ज्वल धवल वहाडता हुआ बैल देखा जिसके बडे-बडे कन्धे हैं। ३ तीसरे स्वप्नमें चन्द्रमाकी किरण समान सफेद केशावली विराज-मान सिह देखा। ४ चौथे स्वप्नमें लक्ष्मीको हाथी सुवणके कलशोंसे स्नान करावता देखा, वह लक्ष्मी प्रफुल्लित कमलपर निश्चल तिष्ठै ह। ५ पाचवें स्वप्नमें दो पुष्पोकीमाला आकाशमें लटकती हुई देखीं जिनपर भ्रमर गु जारकर रहे हैं। ६ छठे स्वप्नमें उदयाचल पवत के शिखर पर तिमिर के हरण हारे मेघपटलरहित सूयकू देख्या। ७सातवें स्वप्नमें कुमुदिनी को प्रफुल्लित करण हारा रात्रिका आभूषण-जिसने किरणोंसे दशोदिशा उज्ज्वल करी है, ऐसा तारोका पति चन्द्रमा देख्या। ८ आठवें स्वप्नमें निर्मलजलमें कलोल करते अत्यन्त प्रेमके भरे हुवे महामनोहर मीन युगल (दो मच्छ) देखे। ९ नवमें स्वप्नमें जिनके गलेमें मोतियोके हार अर पुष्पोंकी माला शोभायमान है ऐसे पच प्रकारके रत्नों कर पूर्ण स्वर्णके कलश देखे। अर १०दशवें स्वप्नमें नानाप्रकारके पक्षियोंसे सयुक्त, कमलोंकर मण्डित, सुन्दर सिवाण (पैडी) कर शोभित, निर्मल जलकर भरघा महा सरोवर देख्या। ११ ग्यारहवें स्वप्न में आकाश तुल्य निर्मल समुद्र देख्या जिसमे अनेक प्रकार के जलचर केलि करै हैं, अर उतग लहरें

उठे है। १२ बारहवें स्वप्नमें अत्यन्त ऊंचा नाना प्रकारके रत्नोकर जडित स्वर्णका सिंहासन देख्या। १३तेरहवें स्वप्नमें देवताओंके विमान आवते देखे जो सुमेरुके शिखर समान, अर रत्ननिकरि मंडित चामरादिककरि शोभित देखे। अर१४ चौदहवें स्वप्नमें धरणेन्द्रका भवन देख्या। कैसा है भवन? जाके अनेक खण (मंजिल) है, अर मोतियों की मालाकरमंडित, रत्नोकी ज्योतिकर उद्योत मानो कल्पवृक्ष कर शोभित है। १५ पंद्रहवें स्वप्नमें पंचवर्णके महारत्ननिकी राशि अत्यन्त ऊंची देखी,जहां परस्पर रत्नोकी किरणोके उद्योतसे इन्द्रधनुष चढ रहा है' १६ सोलहवें स्वप्नमें, निर्धूम अग्नि ज्वाला के समूहकरि प्रज्वलित देखी। अथानन्तर सुन्दर हैं दर्शन जिनका ऐसे सोलह स्वप्न देखकर मंगल शब्दनिके श्रवणकरि माता प्रबोध कूं प्राप्त भई। जिन मंगल शब्दनिका कथन सुनहु।

सखी जन कहैं हैं—हे देवी! तेरे मुखरूप चन्द्रमाकी कांतितें लज्जावान हुआ जो यह निशाकर (चन्द्रमा), सो मानो कांतिकररहित हुआ है। अर उदयाचलपर्वतके मस्तकपर सूर्य उदयहोनेको सन्मुख भया है, मानो मंगलके अर्थ सिंदूरसे लिप्त स्वर्णका कलश ही है। अर तुम्हारे मुखकी ज्योतिसे, अर शरीरकी प्रभासे तिमिरका क्षय होयगा।अपना उद्योत वृथा जान दीपक मंद ज्योति भये हैं। अर पक्षियों के समूह मनोहर शब्द करै हैं, सो मानो तिहारे अर्थ मंगल ही पढै है। अर जो यह मन्दिरमें बाग है, ताके वृक्षोके पत्र प्रभातकी शीतल मंद सुगंध पवनतें हालै हैं, अर मंदिरकी वापिकामें सूर्यके बिम्बके विलोकनसे चकवी हर्षित भई, मिष्ट शब्द करती सती चकवेको बुलावै है। अर ये हंस तिहारी चाल देखकरि करी है—अति अभिलाषा जिन्होने—सो हर्षित होय महामनोहर शब्दकर है। अर सारसनिके समूहनि करि सुन्दर शब्द होय रहे हैं। तातैं हे देवी! अब रात्रि पूर्ण भई, तुम निद्राको तजो। यह शब्द सुनकर माता सेजसे उठी। कैसी है सेज? बिखर रहे हैं कल्पवृक्षनिके फूल अर मोती जाविषैं, मानो तारानिकरि संयुक्त आकाश ही है।

मरुदेवी माता सुगन्ध महलसें बाहिर आई, अर सकल प्रभात की क्रियाकर जैसे सूर्यकी प्रभा सूर्य

के समीप जाय तैसै नाभिराजाके समीप गई। राजा देखकर सिंहासनतै उठे,राणी बराबर आय बैठी, हाथ जोडकर स्वप्ननिके समाचार कहे। तब राजाने कहा—हे कल्याणरूपिणी ! तेरे त्रैलोक्यका नाथ श्रीआदीश्वर स्वामी प्रकट होयगा। यह शब्द सुनकर कमलनयनी चन्द्रवदनी परमहर्षको प्राप्त भई। अर इन्द्रकी आज्ञासे कुबेर पन्द्रह महिनोतक रत्नोकी वर्षा करते भए। जिनके गर्भमें आए छै मास पहिलेसे ही रत्नोंकी वरषा भई। इसलिए इन्द्रादिक देव इनका हिरण्यगर्भ ऐसा नाम कहि स्तुतिकरते भए। अर तीनज्ञानकर संयुक्तभगवान माताके गर्भमें आय विराजे। माताकू काहू प्रकारकी पीड़ा न भई।

जैसै निर्मल स्फटिककमहलसे बाहिर निकसिए तैसेनवमें महीने ऋषभवेव स्वामीगर्भसे बाहिरआए, तब नाभिराजाने पुत्रके जन्मका महान उत्सव किया। त्रैलोक्यके प्राणी अति हर्षितभए। इन्द्रके आसन कम्पायमान भए। अर भवनवासी देवनिके यहा बिना बजाये शंख बाजे। अर व्यंतरनि के स्वयमेवही ढोल बाजे,अर ज्योतिषीनिके देवोंके अकस्मात् सिंहनाद बाजे, अर कल्पवासीनके बिना बजाये घंटा बाजे, या भांतिशुभ चेष्टानि करि तीर्थंकर देवका जन्मजान इन्द्रादिक देवता नाभिराजा के घर आये। कंसे हैं इन्द्र ? ऐरावत हाथीपर चढे ह,अर नानाप्रकारके आभूषण पहरे है। अनेक प्रकारके देव नृत्य करते भए। देवनिके शब्दकरि दशोदिशा गु जार करती भई। अयोध्यापुरीकी तीन प्रदक्षिणा देयकरि राजाके आंगनमें आए। कंसी ह अयोध्या ? धनपतिनेरची ह,पवत समान ऊंचेकोटसे मंडितहै,जिसकी गंभीर खाई है, अर जहा नानाप्रकारके रत्नोंके उद्योतसे घर ज्योतिरूप होय रहेहैं। तब इन्द्रनेइन्द्राणी कू भगवानकेलावनेको माताके पास भेजी। इन्द्राणीजाय नमस्कार कर मायामयी बालकक् माताके निकट राखि, भगवानको लाय इन्द्रके हाथमें दिया। क से है भगवान? त्रलोक्यके रूपको जीतै ऐसा है रूप जिनका। सो इन्द्र हजारनेत्रनिकरि भगवानकारूप देखता तृप्त न भया। बहुरि भगवानकू सौधर्म

इन्द्र गोद में लेय हस्ती पर चढे ईसान इन्द्रनेछत्र धरे,अर सनत्कुमार—महेंद्र चमर ढोरते भये। अन्य सकल इन्द्र अर देव जय जयकार शब्द उच्चारते भए। फिर सुमेरु पर्वतके शिखरपर पांडुक शिलापर

सिंहासन ऊपर धराये, अर अनेक बाजोंका शब्द होता भया,जसा समुद्र गरजै । अर यक्ष किन्नर गंधर्व तुंबरु नारद अपनी स्त्रियो सहित गान करते भये। कसा है वह गान? मन अर श्रोत (कान)का हरण-हारा है । जहा बीन आदि अनेक वादित्र बाजते भए,अप्सरा हाव भावकर नृत्य करती भई, अर इन्द्र स्नानके अर्थ क्षीरसागरके जलतैं स्वर्णकलश भर अभिषेक करनेको उद्यमीभए। कैसेहै कलश? जिनका मुख एक योजनका है, अर चार योजनका उदर है, आठ योजन ओंडे, अर कमल तथा पल्लवनि करि ढके है मुख जिनके । असे एक हजार आठ कलशोंसे इन्द्रने अभिषेक कराया । विक्रिया ऋद्धिकी समर्थतासे इन्द्रने अपने अनेक रूप किए। अर इन्द्रोंके लोकपाल सोम वरुण यम कुवेर सबहीअभिषेक करावते भए । इन्द्राणी आदि देवी अपने हाथोंसे भगवानके शरीर पर सुगंधका लेपन करती भई । कैसी है इन्द्राणी ? पल्लव (पत्र) समान है कर जाके । महागिरि समान जो भगवान तिनको मेघ समान कलशनित अभिषेक कराया, गहना पहरावनेका उद्यम किया । चांद सूर्य समान दोय कुंडल कानोंमें पहराये, अर पद्मरागमणिके आभूषण मस्तक विषै पहराए, जिनकी कांति दशो दिशाविषै प्रकट होती भई, अर अर्द्धचन्द्राकार ललाटविषै चंदनका तिलक किया, अर दोनो भुजानविषै रत्नों के बाजूबंद पहराए, अर श्रीवत्सलक्षणकरयुक्त जो हृदय उसपर नक्षत्रमाला समान मोतियो का सत्ताईस लड़ीका हार पहराया, अर अनेक लक्षणके धारक भगवान को महामणि मई कड़े पहराए, अर रत्नमयी कटि-सूत्रसे नितंब शोभायमान भया, जैसा पहाड़का तट सांझकी बिजली कर शोभै, अर सर्वअंगुरियोविषै रत्नजडित मुद्रिका पहराई ।

इसभांति भक्तिकरि देवियोंने सब आभूषण पहराये, सो त्रैलोक्यके आभूषण जो श्री भगवान तिनके शरीरकी ज्योतितैं आभूषण अत्यन्त ज्योतिको धारते भए । अर आभूषणोंकी आपके शरीरको कहा शोभा होय ? अर कल्पवृक्षके फूलोंसे युक्त जो उत्तरासन सो भी दिया । जैसैं तारानितैं आकाश शोभै है तैसे पुष्पन कर यह उत्तरासन शोभै है । बहुरि पारिजातसन्तानकादिक जे कल्पवृक्ष तिनके

पुष्पनिकरि सेहरा रच्या, सिरपर पधराया जापर भ्रमर गुंजार करै हैं। या भांति त्रैलोक्यभूषणको आभूषण पहराए। इन्द्रादिक देव स्तुति करते भए, हे देव! कालके प्रभावकरि नष्ट हो गया है धर्म जाविषै ऐसा यह जगत् महा अज्ञान अन्धकारकरि भरया है। ताविषै भ्रमण करते भव्य जीव, तेई भए कमल, तिनको प्रफुल्लित करने को, अर मोहतिमिरके हरणको तुम सूर्य उगे हो। हे जिनचन्द्र! तुम्हारे वचनरूप किरणोंसे भव्य जीवरूपी कुमुदनीकी पंक्ति प्रफुल्लित होगी। भव्योंको तत्त्व दिखावनेके अर्थि इस जगत्‌रूप घरमें तुम केवलज्ञानमयी दीपक प्रकट भए हो। अर पापरूप शत्रुओं के नाशनेके अर्थि मानो तुम तीक्ष्ण बाण ही हो। अर तुम ध्यानाग्निकरि भवअटवीको भस्म करनेवाले हो। अर दुष्ट इन्द्रियरूप जो सर्प तिनके वशिकरणेके अर्थि तुम गरुडरूप ही हो। अर संदेहरूप जे मेघ तिनके उडावनेको महा प्रबलपवन ही हो। हे नाथ! भव्यजीवरूपी पपैए तिहारे धर्मामृतरूप वचनके तिसाए तुमहीको महामेघ जानकरि सन्मुख भए देखै हैं। तुम्हारी अत्यन्त निर्मल कीर्ति तीन लोकमें गाई जाती है, तुम्हारे ताईं नमस्कार होहु। अर तुम कल्पवृक्ष हो, गुणरूपपुष्पनिकरि मण्डित मनवांछित फलके देनेहारे हो, कर्मरूप काष्ठके काटने को तीक्ष्ण धारके धरण हारे महा कुठाररूप हो, तातै हे भगवन्! तुम्हारे अर्थि हमारा बारम्बार नमस्कार होहु। अर मोहरूप पर्वतके भंजिबे को महा वज्ररूप ही हो, अर दुःखरूप अग्निके बुझावनेको तुम जलरूप ही हो, या अर्थि तुमको बारम्बार नमस्कार करूं हूं। हे निर्मलस्वरूप! तुम कर्मरूपरजके समूहसे रहित केवल आकाशरूप ही हो। या भांति इन्द्रादिक देव भगवान्‌की स्तुति करि बारम्बार नमस्कार करि, ऐरावत गजपर चढाय, अयोध्यामैं लावनेको सन्मुख भए। अयोध्या आए। इन्द्र माताकी गोद विषै भगवानको पधराय कर परम आनन्दित हो ताण्डव नृत्य करते भए। या भांति जन्मोत्सव कर देव अपने अपने स्थान को गए। ४१
माता पिता भगवान को देखकर बहुत हर्षित भए। कैसे हैं श्रीभगवान्? अद्‌भुत आभूषणनितैं विभूषित हैं। बहुरि परम सुगन्धके लेपतैं चरचित हैं, अर सुन्दर चारित्र है जिनके। अपने शरीर की कांतिसे

दशोंदिशा प्रकाशित हो रही हैं, महा कोमल शरीर है । माता भगवान को देख करि महा हर्षको प्राप्त भई । अर कहनेमें न आवै सुख जिसका,ऐसे परमानन्द सागरमै मग्न भई । वह माता भगवानको गोदमें लिए ऐसी शोभती भई जस ऊगते सूर्यतै पूर्वदिशा शोभै । अर त्रैलोक्य के ईश्वर को देख नाभिराजा आपको कृतार्थ मानते भए, पुत्रके गात्रको स्पर्शकर नेत्र हर्षित भए,मन आनन्दित भया । समस्तजगत-विषै मुख्य ऐसे जे जिनराज तिनका ऋषभनाम धर माता पिता सेवा करते भए। हाथके अंगुष्ठमेंइन्द्रने अमृत रस मेल्या,उसको पान कर शरीर वृद्धिको प्राप्त भया । बहुरि प्रभुकी वय (उमर)प्रमाण इन्द्रने देवकुमार राखे, तिन सहित निःपाप क्रीडा (खेल) करते भए । कैसी है वह क्रीडा ? माता पिता को अतिसुख देनहारी ह ।

अथानन्तर भगवानके आसन शयन सवारी वस्त्र आभूषण अशन पान सुगन्धादि-विलेपन गीत नृत्य वादित्रादि सब सामग्री देवोपनीत होती भई । थोडेही कालमै अनेक गुणनिकी वृद्धि होती भई । उनका रूप अत्यन्त सुन्दर जो वचनमें न आवै, मन अर नेत्रनिका तृप्त करनहारा,मेरुकी भीति समान महा उन्नत, महादृढ वृक्षस्थल शोभता भया । अर दिग्गजनिके थंभसमान बाहु होती भई । कैसीहै वह बाहु? जगतकेअर्थ पूर्ण करनेको कल्पवृक्ष ही ह । बहुरि दोऊ जंघा त्रैलोक्यरूपघरके थामवेको थंभही हैं,अर मुख महासुन्दर मनोहर जिसने अपनी कांतित चन्द्रमाको जीता है, अर दीप्तिकरि जीता है सूर्य जिसने अर दोऊ हाथ कोमलहूते अति कोमल, अर लाल है हथेली जिनकी, अर केश महासुन्दर सघन दीर्घ वक्र पतले चीकने श्याम हैं । मानो सुमेरुके शिखरपर नीलाचल ही विराजे हैं । अर रूप महा अद्भुत अनुपम सवलोकके लोचनको प्रिय, जिसपर अनेक कामदेव वारि नाखिए । ऐसे सर्व उपमा को उलंघै, सबका मन अर नेत्र हरै । या भांति भगवान कुमार अवस्थामें भी जगतको सुखदायक होते भए ।उस समय कल्पवृक्ष सर्वथा नष्ट भए, अर बिना बाहे धान आपतै आप ऊगे । तिनतै पृथ्वी शोभती भई । अर लोक निपट भोले, षट्कर्मतै अनजान, उन्होंने प्रथम इक्षुरसका आहार किया । वह आहार कांति

अर वीर्याविकके करनेको समय है। कईएक दिन पीछे लोगोको क्षुधा बढी जो इक्षु रसतै तृप्ति न भई। तब सब लोक नाभिराजाके निकट आए, अर नमस्कारकर विनती करते भए कि—हे नाथ ! कल्पवृक्ष समस्त क्षय हो गए, अर हम क्षुधा तृषाकर पीडित है, तुम्हारे शरण आए है, तुम रक्षा करो। यह कितनेक फलयुक्त वृक्ष पृथ्वीपर प्रकट भए ह इनकी विधि हम जानते नहीं है। इनमें कौन भक्ष्य है कौन अभक्ष्य है। अर गाय भैंसके थनोसे कुछ झरै ह,पर वह क्या ह? अर यह व्याघ्र सिंहादिक पहले सरल थे, अब वक्रतारूप दीखै है। अर ये महामनोहर स्थलपर अर जलमें पुष्प दीखै है सो कहा हैं ? हे प्रभु ! तुम्हारे प्रसाद कर आजीविकाका उपाय जान तो हम सुखसो जीव। यह वचन प्रजाके सुन करि नाभिराजाको दया उपजी। नाभिराजा महाधीर तिनसो कहते भए कि या संसारविर्षे ऋषभ-देव समान और कोऊ भी नाहीं। जिनकी उत्पत्तिमें रत्नोकी वृष्टि, अर इन्द्रादिक देवों का आगमन भया, लोकनिको हर्ष उपज्या, वह भगवान महा अतिशय संयुक्त ह। तिनके निकट जायकर हम तुम आजीवकाका उपाय पूछै, भगवानका ज्ञान मोहतिमिरसे अतीतिष्ठया ह। तिन प्रजासहित नाभिराजा भगवानके समीप गए अर समस्त प्रजा नमस्कार कर भगवानकी स्तुति करती भई—हे देव ! तुम्हारा शरीर सब लोकनिको उलंघकर तेजमय भासै है। सब लक्षणसंपूर्ण महा शोभायमान है, अर तुम्हारे अत्यन्त निर्मलगुण सब जगतमै व्याप रहे हं, वे गुण चन्द्रमाकी किरण समान उज्ज्वल महा आनंदके करणहारे हैं। हे प्रभु ! हम या कार्यके अर्थ तुम्हारे पिताके पास आये थे सो ये तुम्हारे निकट लाए हैं। तुम महापुरुष महाविद्वान् महा अतिशयकरमंडित हो, जो ऐसे बडे पुरुष भी तुमको सेवैं हैं, इस-लिए तुम दयालु हो, हमारी रक्षा करो। क्षुधा—तृषा हरनेका उपाय कहो,अर याकरि सिंहादिक क्रूर जीवनिका भी भय मिटै सो उपाय बताओ। तब भगवान कृपानिधि,कोमल है हृदय जिनका, इनको कर्मभूमिकी रीति प्रकट करनेकी आज्ञा करते भए। प्रथम नगर ग्राम गृहादिक की रचना भई। अर जो मनुष्य शूरवीर जाने, तिनको क्षत्री वर्ण ठहराए, अर उनको यह आज्ञा भई कि—तुम दीन अनाथनिको

रक्षा करो । कईएकनको वाणिज्यादिक कर्म बताकर वश्य ठहराए । अर जो सेवादिक अनेक कर्मके करनहारे थे,उनको शूद्र ठहराए । या भांति भगवानने किया जो यह कर्मभूमिरूप युग उसको प्रजा कृत-युग (सत्ययुग) कहते भए अर परम हर्षको प्राप्त भए । श्रीऋषभदेवके सुनंदा अर नंदा यह दो राणी भई । बडी राणीके भरतादिक सौ पुत्र अर एक ब्राह्मी पुत्री भई । अर दूसरी राणीके बाहुबल एक पुत्र अर सुन्दरी एक पुत्री भई । ऐसे भगवान ने त्रेसठ लाखपूर्वकाल तक राज किया,अर पहले बीसलाख पूर्व कुमार रहे । या भांति तिरासीलाख पूर्व गृहमें रहे ।

एक दिन नीलांजना अप्सरा भगवानके निकट नृत्य करती करती विलाय (मर) गई, ताको देखकर भगवानकी बुद्धि वैराग्यमें तत्पर भई । वह विचारने लगे कि ये संसारके प्राणी वृथाही इंद्रियों को रिझाकर उन्मत्त चारित्रनिकी विडंबना करे हैं, अपने शरीरको खेदका कारण जो जगतकी चेष्टा, तातैं जगतके जीव सुख माने हैं । इस जगतके कईएक तो पराधीन चाकर होय रहे हैं । कईएक आपको स्वामी मान तिनपर आज्ञा करे हैं, जिनके वचन गर्वतैं भरे हैं । धिक्कार है या संसार को, जामें जीव दुःख ही भोगै है, अर दुःखहीको सुख मान रहे हैं । तातैं मैं जगतके विषय-सुखोंको तजकर तपसंयमादि शुभ चेष्टा कर मोक्षसुखकी प्राप्तिकेअर्थि यत्न करूं । यह विषयसुख क्षणभंगुर हैं,अर कर्मके उदय से उपजे है, इसलिए कृत्रिम (बनावटी) है । या भांति श्रीऋषभदेवका मन वैराग्यचिंतवन में प्रवरत्या । तब ही लौकांतिक देव आय स्तुति करते भए कि—हे नाथ ! तुमने भली विचारी । त्रैलोक्य में कल्याण का कारण यह ही है । भरतक्षेत्रमें मोक्षका मार्ग विच्छेद भया था,सो आपके प्रसादतैं अब प्रवरतैगा । ये जीव तुम्हारे दिखाए मार्गसे लोकशिखर अर्थात् निर्वाणको प्राप्त होंगे । या भांति लौकांतिक देव स्तुतिकर अपने धाम गए । अर इन्द्रादिक देव आयकर तपकल्याणका समय साधते भए । रत्न जडित सुदर्शन नामा पालकीमें भगवानको चढाया । कैसी है वह पालकी ? कल्पवृक्षनिके फूलों की मालातैं महा सुगंधित है, अर मोतिनके हारोसे शोभायमान है । भगवान ता पालकीपर चढकर घरतैं वनको

चले। नानाप्रकारके वादित्रोंके शब्द अर देवो क नृत्यसे दशोदिशा शब्दरूप भई। अर महा विभूति सयुक्त तिलकनामा उद्यानमें गए। माता पिताविक सब कुटुंबतें क्षमाभाव कराकर अर सिद्धों को नमस्कारकर मुनिपद अंगीकार किया। समस्त वस्त्र आभूषण तजे। अर केशोंका लोंच किया। वे केश इन्द्रने रत्नोंके पिटारेमें रखकर क्षीरसागरमें डारे। भगवान जब मुनिराज भए, तबि चार हजार राजा मुनिपदको न जानते हुवे केवल स्वामीकी भक्तिके कारण तिनके साथ नग्नरूप भए। भगवानने छः महिने पर्यंत निश्चल कायोत्सर्ग धरया। अर्थात सुमेरु पर्वत समान निश्चल होय तिष्ठे, अर इन्द्रियनिका निरोध किया।

अथानतर कच्छ महाकच्छादिक राजा जो नग्नरूप धारण करि दीक्षित भए हुते ते सर्व ही क्षुधा तृषादि परीषहनिकरि चलायमान भए। कईएक तो परीषहरूप पवनके मारे भूमिपर गिर पडे। कई एक जो महा बलवान हुते, वे भूमिपर तो न पडे परन्तु बैठ गए। कई एक कायोत्सर्गको तज क्षुधा तृषातैं पीडित होय फलादिक आहार करते भए। अर कई एक गरमीतैं तप्तायमान होयकर शीतल-जलमें प्रवेश करते भए। तिनकी यह चेष्टा देखकर आकाश में देववाणी भई कि 'मुनिरूप धारकर तुम ऐसा काम मत करो। यह रूप धार तुमको ऐसा कार्य करना नरकादि दुःखनिका कारण है। तबि वे नग्नमुद्रा तजकर वल्कल पत्र धारते भए, कई एक चरमादि धारते (पहनते) भए। कई एक दर्भ (कुशादिक) धारते भए अर फलादिकतं क्षुधाको, शीतल जलतैं तृषाको निवारते भए। या प्रकार ये लोग चरित्र–भ्रष्ट होयकर, अर स्वेच्छाचारी बनकर भगवानके मतसे पराङ्मुख होय शरीर का पोषण करते भए। किसीने पूछा कि तुम यह कार्य भगवानकी आज्ञातैं करो हो? तब उन्होंने कहया कि भगवान तो मौनरूप हैं, कुछ कहते नाहीं। हम क्षुधा तृषा शीत उष्णसे पीडित होइकर यह कार्य करैं हैं। बहुरि कईएक परस्पर (आपसमें) कहते भए, कि आवो गृहमैं जाय कर पुत्र दारादिक का अवलोकन करैं। तबि उनमेंतै किसीने कहा–जो हम घरमैं जावेंगे तो भरत घरमें तैं निकास देइगे।

अर तीव्रदण्ड देंगे, इसलिए घर नहीं जाना । तदि बन ही में रहे । इन सबमें महामानी मारीच भरतका पुत्र, भगवानका पोता भगवे वस्त्र पहनकर परिव्राजिक (सन्यासीका) मार्ग प्रकट करता भया ।

अथानन्तर कच्छ महाकच्छके पुत्र नमि विनमि आयकर भगवानके चरणो में पडे, अर कहने लगे कि हे प्रभु ! तुमने सबको राज दिया, हमको भी दीजिये । या भांति याचना करते भए । तब धरणींद्र का आसन कम्पायमान भया । धरणींद्रने आयकर इनको विजयार्द्ध का राज दिया । कैसा है वह विजयार्द्ध पर्वत ? भोगभूमिके समान है । पृथ्वी तलसे पच्चीस योजना ऊंचा है,अर सवा छै योजनका कन्द है, अर भूमिपर पचास योजन चौडा है, अर भूमितै दश योजन ऊंचे उठिए तहां दश दश योजनि की दोय श्रेणी है -एक दक्षिणश्रेणी, एक उत्तरश्रेणी । इन दोनो श्रेणियोमें विद्याधर बसैं हैं । दक्षिण श्रेणीकी नगरी पचास, अर उत्तर श्रेणीकी साठ । एक-एक नगरीको कोटि कोटि ग्राम लागै है । अर दश योजनमे बहुरि ऊपर दश योजन जाइये तहां गंधर्वकिन्नर देवोंके निवास हैं । अर पांच योजन ऊपर जाइये तहां नवशिखर हैं । उनमें प्रथम सिद्धकूट उसमें भगवान के अकृत्रिम चैत्यालय हैं, अर देवोंके स्थान है । सिद्धकूटपर चारणमुनि आयकर ध्यान धरे है । विद्याधरोंकी दक्षिणश्रेणी की जो पचास नगरी है उनमें रथनूपुर मुख्य है । अर उत्तरश्रेणी की जो साठ नगरी हैं उनमें अलकावती नगरी मुख्य है । कैसा है वह विद्याधरनिका लोक ? स्वर्गलोकसमान है सुख जहां, सदा उत्साह ही प्रवर्तै है । नगरीके बडे बडे दरवाजे, अर कपाटयुगल,अर सुवर्णके कोट, गम्भीर खाई,अर वन उपवन वापी कूप सरोवरादिसे महाशोभायमान है । जहां सब ऋतुके धान अर सर्व ऋतुके फलफूल सदा पाइए है । जहां सब औषधि सदा पाइये हैं, जहां सब कामका साधन है, सरोवर कमलोंसे भरे जिनमें हंस क्रीडा करै हैं,अर जहां दधिदुग्धघृतमिष्टान्नोंके नीझरने बहे हैं । कैसी है वापी ? जिनके मणिसुवर्ण के सिवान (पैडी) हैं और कमलके मकरंदोंसे शोभायमान है । जहां कामधेनुसमान गाय हैं, अर पर्वत समान अनाजके ढेर हैं,अर मार्ग धूलकंटकादिरहित हैं,मोटे वृक्षोंकी छाया है । अर महामनोहर जलके

निवाण हैं। चौमासेमें मेघ मनवांछित बरसै है, अर मेघोंकी आनन्दकारी ध्वनि होय है। शीतकालमें शीतकी विशेष बाधा नाहीं। अर ग्रीष्मऋतुमें विशेष आताप नाहीं। जहां छहोंऋतुके विलास हैं, जहां स्त्री सर्वआभूषणमंडित कोमलअंगवाली हैं अर सबकलानिमें प्रवीण षटकुमारिका समान प्रभावाली हैं। कैसी हैं वे विद्याधरी ? कई एक तो कमलके गर्भ समान प्रभाको धरैं है, कईएक श्यामसुन्दर नील कमलकी प्रभाको धारैं है, कईएक सिहभ्रुनाके फूलसमान रंगकूं धरैं हैं, कई एक विद्युत समान ज्योतिको धरैं हैं। ये विद्याधरी, महासुगंधित शरीरवाली है मानों नवनवनकी पवनहीसे बनाई हैं। सुन्दर फूलों के गहने पहरे हैं सो मानो बसन्तकी पुत्री ही है। अर चन्द्रमा समान कांति है मानो अपनी ज्योतिरूप सरोवरमें तिरै ही हैं। अर श्याम श्वेत सुरंग तीन वर्णके नेत्रनि की शोभा को धरनहारी, मृगसमान हैं नेत्र जिनके, हंसनी समान है चाल जिनकी, वे विद्याधरी देवांगना समान शोभै हैं। अर पुरुष विद्याधर महासुन्दर शूरवीर सिंहसमान पराक्रमी हैं। महाबाहु, महापराक्रमी, आकाशगमनविषै समर्थ, भले लक्षण-भली क्रियाके धरणहारे, न्यायमार्गी, देवोंके समान हैं प्रभा जिनकी, ऐसी अपनी स्त्रियो सहित विमानमें बैठे अढाई द्वीपमें जहां इच्छा होय तहां ही गमन करै हैं। या भांति दोनों श्रेणियोंमें वे विद्याधर देवतुल्य इष्टभोगनिको भोगते महाविद्याओं को धरैं हैं। कामदेवसमान है रूप जिनका, अर चन्द्रमाके समान है वदन जिनका, धर्मके प्रसाद से प्राणी सुख सम्पति पावै हैं। तातैं एक धर्म ही विषै यत्न करो, अर ज्ञान रूप सूर्य अज्ञानरूप तिमिरको हरो।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराणकी भाषाटीकाविषै विद्याधर लोकका कथन जाविषै है ऐसा तीसरा अधिकार संपूर्ण भया ॥ ३॥

अथानन्तर वे भगवान ऋषभदेव महाध्यानी, सुवर्ण समान प्रभाके धरणहारे प्रभु, जगतके हित करने निमित्त छैमास पीछै आहार लेनेको प्रवृत्ते। लोक मुनिके आहारकी विधि जानैं नाहीं। अनेक

नगर ग्रामविषै विहार किया,मानो अद्भुत सूर्य ही विहार करै है। जिन्होंने अपने देहकी कांतिसे पृथ्वी-मंडल पर प्रकाश कर दिया है, जिनके कांधे सुमेरुके शिखर समान देदीप्यमान हैं, अर परम समाधानरूप अधोदृष्टि देखते, जीव दया पालते, विहार करै है। पुर ग्रामादिमें लोक अज्ञानी नाना प्रकार के वस्त्र रत्न हाथी घोडे रथ कन्यादिक भेट करते सो प्रभुके कुछ भी प्रयोजन नाहीं। या कारण प्रभु फिर वनको चले जाय है। या भांति छ महीने तक विधिपूर्वक आहारकी प्राप्ति न भई अर्थात् दीक्षा समयसे एक वर्ष बिना आहार बीता। पीछे विहार करते हुए हस्तिनापुर आये। तबि सब ही लोक पुरुषोत्तम भगवानको देखकर आश्चर्यको प्राप्तभये। राजा सोमप्रभ अर तिनके लघुभ्राता श्रेयांस ये दोनो ही भाई उठकर सन्मुख चाले। श्रेयांसको भगवानके देखनतें ही पूर्वभवका स्मरण भया, अर मुनिके आहारकी विधि जानी। वह नृप भगवानकी प्रदक्षिणा देते ऐसे शोभै है मानो सुमेरुकी प्रदक्षिणा सूर्य ही दे रहा है। अर बारम्बार नमस्कार कर रत्नपात्रतें अर्घ देय चरणारविन्द धोय,अर अपने शिर के केशनितैं पोंछे। तबि आनन्दके अश्रुपात आये,अर गदगद वाणी भई। श्रेयांसने—जिसका चित्तभगवान के गुणनिमैं अनुरागी भया है, महा पवित्र रत्नन के कलशोंमें रखे हुवे महा शीतल मिष्ट इक्षुरसका आहार दिया। परम श्रद्धा अर नवधा भक्तिसे दान दिया। वर्षोपवास पारणा भया ताके अतिशयतें देव हर्षित होय पांच आश्चर्य करते भए। प्रथम ही रत्ननिकी वर्षा भई। बहुरि कल्पवृक्षों के पंच प्रकारके पुष्प बरसे। शीतल मंद सुगन्ध पवन चाली। अर अनेक प्रकार दुन्दुभी बाजे बाजे। अर यह देव-वाणी भई कि धन्य यह पात्र, अर धन्य यह दान, अर दानका देनहारा श्रेयांस! ऐसे शब्द देवताओं के आकाशमें भये। श्रेयांसकी कीर्ति देखकर दानकी रीति प्रकट भई। देवतानिकर श्रेयांस प्रशंसा योग्य भए, अर भरतने अयोध्यातैं आयकर श्रेयांसकी बहुत स्तुति करी, अति प्रीति जनाई। भगवान आहार लेयकर वनमें गये।

अथानन्तर भगवानने एक हजार वर्षपर्यंत महातप किया। अर शुक्लध्यानतैं मोहका नाशकर

केवलज्ञान उपजाया। कैसा है वह केवलज्ञान ? लोकालोकका अवलोकन है जाविषै। अब भगवान् केवलज्ञानको प्राप्त भए तदि अष्ट प्रातिहार्य प्रकटे, प्रथम तो आपके शरीरकी कांतिका ऐसा मडल हुआ जातै चन्द्र सूर्यादिका प्रकाश मद नजर आवै, रात्रि दिवसका भेद नजर न आवे। अर अशोकवृक्ष रत्नमई पुष्पोंसे शोभित, रक्त है पल्लव जाके। अर आकाशतै देवोंने फूलों की वर्षा करी, जिनकी सुगध से भ्रमर गु जार कर है। महा दु दुभी बाजोकी ध्वनि होती भई, जो समुद्रके शब्दनितैं भी अधिक देवोंने बाजे बजाए। कसे हैं देव ? जिनका शरीर मायामइ करि दीखता नाहि। अर चन्द्रमाकी किरणतैं भी अधिक उज्ज्वल चमर इन्द्रादिक ढारते भए, अरु सुमेरुके शिखरतुल्य पृथ्वीका मुकुट सिंहासन आपके विराजनेको प्रकट भया। कसा ह सिंहासन ? अपनी ज्योतिकर जीती है सूर्यादिककी ज्योति जानै, अर तीन लोकको प्रभुताके चिह्न मोतियोकी झालरसे शोभायमान तीन छत्र अति शोभै है, मानो भगवान के निर्मल यश ही है। अर समोसरणमैं भगवान सिंहासन पर विराजे सो समोसरणकी शोभा कहने केवली ही समर्थ है, और नाहीं। चतुरनिकायके देव सबही वदना करनेको आए। भगवानके मुख्य गणधर वृषभसेन भये। आपके द्वितीय पुत्र अर अन्य भी बहुत जे मुनि भए थे वे महा वैराग्यके करणहारे मुनि आदि बारह सभाके प्राणी अपने अपने स्थानकविषै बैठे। तदनन्तर भगवानकी दिव्यध्वनि होती भई, जो अपने नादकर दु दुभी बाजोकी ध्वनिको जीत है। भगवान जीवोंके कल्याणनिमित्त तत्त्वार्थका कथन करते भये कि—तीनलोकमें जीवोंको धर्म ही परम शरण है। याहीतैं परम सुख होय है। सुखके अर्थि सर्वी चेष्टा करै है, अर सुख धर्मके निमित्तसे ही होय है। ऐसा जानकर धर्मका यत्न करहु। जैसे मेघ बिना वर्षा नाहीं, बीज बिना धान्य नाहीं, तैसे जीवनिके धर्म बिना सुख नाहीं। अर जैसे कोई पगु (लगड़ा) पुरुष चलने की इच्छा करै, अर गू गा बोलनेकी इच्छा करै, अर अधा देखनेकी इच्छा करै, तैसै मूढप्राणी धर्म बिना सुखकी इच्छा करै ह। जसे परमाणुतैं और कोई अल्प (सूक्ष्म) नाहीं, अर आकाशतैं कोई महान् (बडा) नाहीं, तैसै धर्म समान जीवोंका अन्य कोई मित्र नाहीं, अर दया समान कोई धर्म नाहीं।

मनुष्यके भोग, अर स्वर्ग के भोग, अर सिद्धनके परमसुख धर्महीत होय हैं। तातैं धर्म बिना और उद्यमकर कहा? जे पंडित जीवदयाकर निर्मल धर्मको सेवै हैं, तिनहीका ऊर्ध्वगमन है,दूसरे अधोगति जाय हैं। यद्यपि द्रव्यलिंगी मुनि तपकी शक्ततैं स्वर्गलोकमें जाय हैं, तथापि बडे देवोंके किंकर होयकर तिनकी सेवा करै हैं। देवलोकमें नीच देव होना देव-दुर्गति है। सो देवदुर्गतिके दुःखको भोगकर तिर्यंच गतिके दुखको भोगै है। अर जे सम्यग्दृष्टि जिनशासनके अभ्यासी, तपसंयमके धरणहारे, देवलोकमें जाय हैं, ते इन्द्रादिक बडे देव होयकर बहुत काल सुख भोग, देवलोकतैं चय, मनुष्य होय मोक्ष पावै हैं। सो धर्म दोय प्रकारका है—एक यतिधर्म दूसरा श्रावक धर्म। तीजा धर्म जो मानै है वे मोहअग्निसे दग्ध है। पांच अणुव्रत, तीन गुणव्रत, चार शिक्षाव्रत यह श्रावकका धर्म है। श्रावक मरण समय सब आरम्भ तज शरीरतै भी निर्ममत्व होय, समाधिमरण करि उत्तमगतिको जाय हैं। अर यतीनको धर्म पंच महाव्रत, पंच समिति,तीन गुप्ति यह तेरह प्रकारका चारित्र है। दशो दिशा ही यतिके वस्त्र हैं। जो पुरुष यतिका धर्मधारै है, वे शुद्धोपयोगके प्रसाद करि निर्वाण पावै हैं। अर जिनके शुभोपयोगकी मुख्यता है ते स्वर्ग पावै हैं, परम्पराय मोक्ष जाय है। अर जे भावोंसे मुनियोंकी स्तुति करै है ते हू धर्मको प्राप्त होय हैं? कैसे है मुनि ? परम ब्रह्मचर्यकेधारण हारे है। यह प्राणी धर्मके प्रभावतैं सब पापोंसे छूटै है अर ज्ञानकूं पावै है। इत्यादिक धर्मका कथन देवाधिदेवने किया सो सुनकर सब पापनितैं निवृत्त भए। अर देव मनुष्य सर्व ही परम हर्षकूं प्राप्त भए। कईएक तो सम्यक्त्वको धारण करते भए, कईएक सम्यक्त्व सहित श्रावकके व्रतकूं धारते भए, कईएक मुनिव्रत धारते भए। बहुरि सुर असुर मनुष्य धर्मश्रवण कर अपने अपने धाम गए। भगवानने जिन जिन देशोंमें गमन किया उन उन देशोंमें धर्मका उद्योत भया। आप जहां जहां विराजे तहां तहां सौ सौ योजन तक दुर्भिक्षादिक सब बाधा मिटी। प्रभुके चौरासी गणधर भए, अर चौरासी हजार साधु भए। इनकरि मंडित सर्व उत्तम देशनिविषै विहार किया। ५०

अथानन्तर भरत चक्रवर्तीपदकूं प्राप्त भए, अर भरतके भाई सब ही मुनिव्रत धार परमपदको

पद्म पुराण ११

प्राप्त भए। भरतने कुछ काल छ खंडका राज्य किया, अयोध्या राजधानी, नवनिधि चौदह रत्न, प्रत्येक की हजार हजार देव सेवा करै, तीन कोटि गाय, एक कोटि हल, चौरासी लाख हाथी, इतने ही रथ, अठारा कोड घोडे, बत्तीस हजार मुकुटबद्ध राजा अर इतने ही देश महासंपदाके भरे, छियानवे हजार रानी देवांगना समान, इत्यादिक चक्रवर्तीके विभवका कहा तक वर्णन करिए। पोदनापुरमें दूसरी माताका पुत्र बाहुबली, सो भरतकी आज्ञा न मानते भए। कहया कि—हम भी ऋषभदेव के पुत्र हैं, किसकी आज्ञा मानें? तब भरत बाहुबलिपर चढे, सेनाका युद्ध न ठहरा, दोऊ भाई परस्पर युद्ध करैं—ठहरा। तीन युद्ध थापे १ दृष्टियुद्ध, २ जलयुद्ध, अर ३ मल्लयुद्ध। तीनोंही युद्धोंमें बाहुबली जीते, अर भरत हारे। तब भरतने बाहुबलीपर चक्र चलाया, वह उनके चरम शरीरपर घात न कर सका, लौटकर भरतके हाथपर आया। भरत लज्जित भए, बाहुबली सर्व भोग त्याग कर वैरागी भए। एकवर्षपर्यंत कायोत्सर्ग धरि निश्चल तिष्ठे, शरीर बेलोसे वेष्टित भया, सार्पोंने बिल किए। एक वर्ष पीछे केवलज्ञान उपज्या। भरतचक्रवर्तीने आय कर केवलीकी पूजा करी। बाहुबली केवली कुछ कालमें निर्वाणको प्राप्त भए। अवसर्पिणीकालमें प्रथम मोक्षको गमन किया। भरत चक्रवर्तीने निष्कंटक छै खंडका राज्य किया। जिसके राज्यमें विद्याधरोंके समान सब संपदाके भरे, अर देवलोक समान नगर, महा विभूति कर मंडित, जिनमें देवो समान मनुष्य नानाप्रकारके वस्त्राभरण करि शोभायमान अनेक प्रकारकी शुभ चेष्टा कर रमते है। लोक भोगभूमि समान सुखी, अर लोकपाल समान राजा। अर मदनके निवासकी भूमि, अप्सरा समान नारियां। जैसे स्वर्गविषै इन्द्र राज करै तैसैं भरतने एक छत्र पृथिवीविषै राज किया। भरतके सुभद्रा राणी इन्द्रानी समान भई। जिसकी हजार देव सेवा करैं। चक्रीके अनेक पुत्र भए तिनको पृथ्वीका राज दिया। इस प्रकार गौतम स्वामी ने भरतका चरित्र श्रेणिक राजा से कहा। ११

अथानन्तर श्रेणिकने पूछा—हे प्रभो! तीन वर्णकी उत्पत्ति तुमने कही सो मैंने सुनी, अब विप्रों

की उत्पत्ति सुना चाहू हू सो कृपाकर कहो। गणधर देव जिनका हृदय जीवदयाकर कोमल है, अर मदमत्सरकर रहित है, वे कहते भए कि एक दिन भरतने अयोध्याके समीप भगवान का आगमन जान, समोसरणमे जाय वदना कर मुनिके आहारकी विधि पूछी। तब भगवानकी आज्ञा भई कि मुनि तृष्णाकर रहित, जितेंद्री, अनेकमासोपवास कर, पराए घर निर्दोष आहार लेय अतराय पडे तो भोजन न कर, प्राणरक्षानिमित्त निर्दोष आहार कर, अर धर्मके हेतु प्राणको राखै, अर मोक्षके हेतु उस धर्मको आचर, जिसमै किसी भी प्राणीको बाधा नाहीं। यह मुनिका धर्म सुन कर चक्रवर्ती विचार है—'अहो! यह जनका व्रत महा दुर्धर है। मुनि शरीरसे भी नि स्पृह (निर्ममत्व) तिष्ठे हैं तो अन्य वस्तुमैं तो उनकी वाछा कसे होय? मुनि महा निर्ग्रंथ निर्लोभी सर्व जीवोंकी दयाविषै तत्पर हैं। मेरे विभूति बहुत है, मैं अणुव्रती श्रावकको भक्ति कर दू, अर दीन लोकनिको दया कर दू। ये श्रावक भी मुनिके लघु भ्राता है। ऐसा विचारकर लोकनिको भोजनके अर्थि बुलाए, अर व्रतियोंकी परीक्षा निमित्त—आगणमे जो शालि धान उद मूगनि बोए थे, तिनके अकुर ऊगे। सो अविवेकी लोक तो हरितकायको खूदते आए। अर जे विवेकी थे, वे अकुर जान खडे होय रहे। तिनको भरत अकुररहित जो माग उसपर बुलाया, अर व्रती जान बहुत आदर किया। अर यज्ञोपवीत(जनेऊ) कठमैं डाला, आदरसे भोजन कराया, वस्त्राभरण दिये, अर मनवाछित दान दिये। अर अकुरको दल मलते आए थे, तिनको अव्रती जान उनका आदर नहिं किया। अर व्रतियोको ब्राह्मण ठहराए, चक्रवर्तीके माननेसे कई एक तो गर्वको प्राप्त भए, अर कईएक लोभकी अधिकतातै धनवान् लोकनिको देखकर याचनाको प्रवर्तै।

तब मतिसमुद्र मत्रीने भरतसे कहा—समोसरणमें मैंने भगवानके मुखसे ऐसा सुना है कि जो तुमने विप्र धर्माधिकारी जानकर माने हैं, ते पचमकालमैं महा मदोन्मत्त होयगे, अर हिंसामैं धर्म जानकर जीवोंको हनेंगे, अर महा कषायसयुक्त सदा पाप क्रियामैं प्रवर्त्तैंगे, अर हिंसाके प्ररूपक ग्रथों को अकृत्रिम मानकर समस्त प्रजाको लोभ उपजावैंगे। महा आरम्भविषैं आसक्त, परिग्रहमैं तत्पर, जिनभा-

चित जो मार्ग ताकी सदा निंदा करेंगे। निर्ग्रंथ मुनिको देख महा क्रोध करेंगे। ए वचन सुन भरत इन पर क्रोधायमान भए। तब यह भगवानके शरण गए। भगवानने भरतको कहा— हे भरत! जो कलिकालविषै ऐसा ही होना है, तुम कषाय मत करो। इसभांति विप्रोंकी प्रवृत्ति भई, अर जो भगवानके साथ वैराग्यको निकले ते चारित्रभ्रष्ट भए। तिनमेंतैं कच्छादिक कईएक तो सुलटे। अर मारीचादिक नहीं सुलटे। तिनके शिष्य प्रतिशिष्यादिक सांख्य योगमैं प्रवर्त्ते, कोपीन (लंगोटी) पहरी, वल्कलादि धारे। यह विप्रनिकी अर परिव्राजक कहिए दंडीनिकी प्रवृत्ति कही।

अथानन्तर अनेक जीवनिको भवसागरसे तारकर भगवान ऋषभ कैलाशके शिखर से लोकशिखर जो निर्वाण उसको प्राप्त भए। अर भरत भी कुछकाल राज्य कर जीर्ण तृणवत् राज्यको छोड़कर वैराग्यको प्राप्त भए। अन्तर्मुहूर्तमें केवलज्ञान उपज्या। पीछे आयु पूर्णकर निर्वाणको प्राप्त भए।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराणकी भाषाटीकाविषै श्रीऋषभका कथन जाविषै है ऐसा चौथा अधिकार संपूर्ण भया ॥४॥

अथ वंशोत्पत्ति नामा महाधिकार ॥२॥

अथानन्तर गौतम स्वामी राजा श्रेणिकसे वंशोंकी उत्पत्ति कहते भए कि—हे श्रेणिक इस जगतविषै महावंश जो चार तिनके अनेक भेद हैं।

१ प्रथम इक्ष्वाकु वंश। यह लोकका आभूषण है, इसमैंसे सूर्य वंश प्रवर्त्या है। २ दूसरा सोम (चन्द्र) वंश, चन्द्रमाकी किरण समान निर्मल है। ३ तीसरा विद्याधरोंका वंश अत्यन्त मनोहर है। ४ चौथा हरिवंश जगत विषै प्रसिद्ध है। अब इनका भिन्न भिन्न विस्तार कहूं हूं—

इक्ष्वाकुवंशमैं भगवान ऋषभदेव उपजे, तिनके पुत्र भरत भए, भरतके पुत्र अर्ककीर्ति भए। राजा अर्ककीर्ति महा तेजस्वी राजा हुए। इनके नामतैं सूर्यवंश प्रवर्त्या है। अर्क नाम सूर्यका है, अर्ककीर्तिका वंश सूर्यवंश कहलाता है। इस सूर्यवंशमैं राजा अर्ककीर्तिके सितयश नामा पुत्र भए। इनके बलांक, तिनके सुबल, रवितेज, तिनके महाबल, महाबलके अतिबल, तिनके अमृत, अमृतके सुभद्र, तिनके

सागर, तिनके भद्र, तिनके रवितेज, तिनके शशी, तिनके प्रभूततेज, तिनके तेजस्वी, तिनके तपबल, महाप्रतापी, तिनके अतिवीर्य, तिनके सुवीर्य, तिनके उदितपराक्रम, तिनके सूर्य, तिनके इन्द्रद्युमणि, तिनके महेन्द्रजित, तिनके प्रभूत, तिनके विभु, तिनके अविध्वंस, तिनके वीतभी, तिनके वृषभध्वज, तिनके करुणाक, तिनके मृगाक। इस भांति सूर्यवंशविषैं अनेक राजा भए, ते संसारके भ्रमणतैं भयभीत पुत्रोंको राज देय मुनिव्रतके धारक भए, महा निर्ग्रन्थ, शरीरसे भी निस्पृही। या सूर्यवंशकी उत्पत्ति तुझे कही। अब सोमवंशकी उत्पत्ति तुझे कहिये है सो सुन।

ऋषभदेवकी दूसरी राणीके पुत्र बाहुबली, तिनके सोमयश, तिनके सौम्य, तिनके महाबल, तिनके सुबल, तिनके भुजबली, इत्यादि अनेक राजा भये, निर्मल है चेष्टा जिनकी मुनिव्रत धार परम धाम को प्राप्त भए। कईएक देव होय मनुष्य जन्म लेकर सिद्ध भए। यह सोमवंशकी उत्पत्ति कही। अब विद्याधरनके वंशकी उत्पत्ति सुनहु।

नमि, रत्नमाली, तिनके रत्नवज, तिनके रत्नरथ, तिनके रत्नचित्र, तिनके चन्द्ररथ, तिनके वज्रजंघ, तिनके वज्रसेन, तिनके वज्रदंष्ट्र, तिनके वज्रध्वज, तिनके वज्रायुध, तिनके वज्र, तिनके सुवज्र, तिनके वज्रभृत, तिनके वज्राभ, तिनके वज्रबाहु, तिनके वज्रांक, तिनके वज्रसुन्दर, तिनके वज्रास्य, तिनके वज्रपाणि, तिनके वज्रभानु, तिनके वज्रवान, तिनके विद्युन्मुख, तिनके सुवक्त्र, तिनके विद्युद्दंष्ट्र, अर उनके पुत्र विद्युत, अर विद्युदाभ, अर विद्युद्वेग, अर विद्युत इत्यादि विद्याधरोंके वंशमें अनेक राजा भए। अपने अपने पुत्रनिको राज देय जिनदीक्षा धर, रागद्वेषका नाशकर सिद्धपदको प्राप्त भए। कई एक देवलोक गये। जे मोहपाश से बंधे हुते ते राज्यविषैं ही मरकर कुगतिको गए।

अब संजयतिमुनिके उपसर्गका कारण कहै है कि—विद्युद्दंष्ट्र नामा राजा दोऊ श्रेणीका अधिपति विद्याबलसे उद्धत विमानमें बैठा विदेहक्षेत्रमें गया। तहां संजयतिस्वामीको ध्यानारूढ देख्या, जिनका शरीर पर्वत समान निश्चल है। उस पापीने मुनिको देखकर पूर्वजन्मके विरोधसे उनको उठाकर पंचगिरि

पर्वतपर धरे, अर लोकोको कहा कि इसे मारो। पापी जीवोंने यष्टि मुष्टि पाषाणादि अनेक प्रकार से उनको मारया। मुनिको शम भावके प्रसादसे रंचमात्र भी क्लेश न उपज्या, दुस्सह उपसर्गको जीत लोकालोकका प्रकाशक केवलज्ञान उपार्ज्या, सबदेव वंदनाको आए। धरणींद्र भी आए। वह धरणींद्र पूर्वभवमें मुनिके भाई थे, इसलिए क्रोधकर सब विद्याधरनिको नागफाससे बांधे। तब सबनने विनती करी कि यह अपराध विद्युद्दष्ट्रका है। तब और तो छोडे, अर विद्युद्दष्ट्रको न छोडया, मारनेको उद्यमी भए। तवि देवोने प्रार्थना करके छुडाया सो छोडया, परन्तु विद्या हर लो, तब याने प्रार्थना करी कि हे प्रभो! मुझे विद्या कैसे सिद्ध होयगी। धरणींद्रने कहा कि संजयतिस्वामीकी प्रतिमाके समीप तप क्लेश करनेसे तुमको विद्या सिद्ध होयगी, परन्तु चैत्यालयके उल्लंघनसे तथा मुनियोके उल्लंघनसे विद्याका नाश होवेगा। इसलिए तुमको तिनकी वंदना करके आगे गमन करना योग्य है। तब धरणींद्र ने संजयतिस्वामीको पूछया कि—हे प्रभो! विद्युद्दष्ट्रने आपको उपसर्ग क्यों किया? भगवान संजयति स्वामीने कहा—कि मैं चतुर्गतिविषे भ्रमण करता शकट नामा ग्राममें दयावान प्रियवादी हितकार नामा महाजन भया। निष्कपटस्वभाव साधुसेवामें तत्पर, सो समाधिमरण कर कुमुदावती नगरीमें न्यायमार्गी श्रीवर्धन नामा राजा हुआ। उस ग्राममें एक ब्राह्मण जो अज्ञान तपकर कुदेव हुआ था तहासे चयकर राजा श्रीवर्धनसे वह्निशिख नामा पुरोहित भया। वह महादुष्ट अकार्यका करणहारा आपको सत्यघोष कहावे। एक नेमिदत्त सेठके रत्न हरे। राणी रामदत्ताने जूवामें पुरोहितकी अंगूठी जीती अर दासीके हाथ पुरोहितके घर भेजकर रत्न मंगाये, अर सेठको दिए। राजाने पुरोहितको तीव्र दंड दिया। वह पुरोहित मरकर एकभवके पश्चात् यह विद्याधरोंका अधिपति भया, अर राजा मुनिव्रत धार कर देव भए। कईएक भवके पश्चात् यह हम संजयति भए, सो इसने पूर्वभवके प्रसंगसे हमको उपसर्ग किया। यह कथा सुन नागेन्द्र अपने स्थानको गए। ५५

अथानन्तर उस विद्याधरके दृढरथ भए, ताके अश्वधर्मा पुत्र भए, उसके अश्वायु, उसके अश्वध्वज,

उसके पद्मनाभि, उसके पद्ममाली, उसके पद्मरथ, उसके सिंहजातिन, उसके मृगोधर्मा, उसके मेघास्त्र, उसके सिंहप्रभ, उसके सिंहकेतु, उसके शशांक, उसके चन्द्राह्ण,उसके चन्द्रशेखर,उसके इन्द्ररथ, ताके चन्द्ररथ ताके वज्रधर्मा, ताके वज्रायुध, उसके चक्रधर्मा, उसके चक्रायुध, उसके चक्रध्वज, उसके मणिग्रीव, उसके मण्यंक, उसके मणिभासुर, उसके मणिरथ, उसके मण्यभास, उसके बिम्बोष्ठ, उसके लबिताधर, उसके रक्तोष्ठ, उसके हरिचन्द्र, उसके पूर्णचन्द्र, उसके बालेंद्र, उसके चन्द्रमा, उसके चूड, उसके व्योमचन्द्र, उसके उडपानन, उसके एकचूड, उसके द्विचूड, उसके त्रिचूड, उसके वज्रचूड, उसके भूरिचूड, उसके अर्कचूड, उसके वन्हिजटी, उसके वन्हितेज, याभांति अनेक राजा भए। तिनमें कई एक पुत्रनिको राज देय मुनि होय मोक्ष गए। कईएक स्वर्ग गये, कईएक भोगासक्त होय, वैरागी न भए, सो नरक तिर्यंच-गतिको प्राप्त भए। या भांति विद्याधरका वंश कह्या। आगे द्वितीय तीर्थंकर श्री अजितनाथ स्वामी उनकी उत्पत्ति कहे हैं।

जब ऋषभदेवको मुक्ति गए पचास लाख कोटिसागर भये, चतुर्थकाल आधा व्यतीत भया। जीवनिकी आयु, काय, पराक्रम घटते गए। जगतमें काम लोभादिककी प्रवृत्ति बढ़ती भई। अथानंतर इक्ष्वाकुकुलमें ऋषभदेव हीके वंशमें अयोध्या नगरमें राजा धरणीधर भए। तिनके पुत्र त्रिदशजय देवोंके जीतनेहारे, तिनके इन्द्ररेखा रानी, ताके जितशत्रु पुत्र भया। सो पोदनापुरके राजा भव्यानन्द, तिनके अम्भोदमाला राणी, ताकी पुत्री विजया जितशत्रुने परणी। जितशत्रुको राज देयकर राजा त्रिदश जय कैलाश पर्वतपर निर्वाणको प्राप्त भए। अथानन्तर—राजा जितशत्रुकी राणी विजयादेवीके अजितनाथ तीर्थंकर भए। तिनका जन्माभिषेकादिकका वर्णन ऋषभदेववत् जानना। जिनके जन्म होते ही राजा जितशत्रुने सब राजा जीते। तातें भगवानका अजित नाम धरया। अजितनाथके सुनया, नन्दा आदि अनेक राणी भई। जिनके रूपकी समानता इन्द्राणी भी न करसकें। एक दिन भगवान अजितनाथ राजलोक सहित प्रभातसमयमें ही वनक्रीडाको गए, सो कमलोंका वन फूल्या हुवा देख्या।

अर सूर्यास्त समय उसही वनको सँकुचा हुआ देख्या, सो लक्ष्मीकी अनित्यता मानकर परम वैराग्यको प्राप्त भए। माता पितादि सर्व कुटुम्बतै क्षमाभावकर ऋषभदेवकी भांति दीक्षा धरी। दशहजार राजा साथ निकसे। भगवानने बेला पारणा अंगीकार किया। ब्रह्मदत्त राजाके घर आहार लिया। चौदह वर्ष तप करके केवलज्ञान उपजाया। चौतीस अतिशय तथा आठ प्रातिहार्य प्रकट भए। भगवानके नब्बे गणधर भए, अर एक लाख मुनि भए।

अजितनाथके काका विजयसागर जिनकी ज्योति सूर्यसमान है, तिनकी राणी सुमंगला, तिनके पुत्र सगर द्वितीय चक्रवर्ती भए। सो नवनिधि चौदहरत्न आदि इनकी विभूति भरत चक्रवर्तीके समान जाननी। तिनके समयमें एक वृत्तान्त भया सो हे—श्रेणिक! तुम सुनहु। भरतक्षेत्रके विजयार्धकी दक्षिणश्रेणीमें चक्रवाल नगर, तहां राजा पूर्णघन विद्याधरनिके अधिपति, महाप्रभाव-मंडित, विद्या-बलकरि अधिक, तिनने विहायतिलक नगरके राजा सुलोचनकी कन्या उत्पलमती याची। राजा सुलोचनने निमित्तज्ञानीके कहनेतै ताकू न दीनी, अर सगर चक्रवर्तीकू देनी विचारी। तब पूर्णघन सुलोचन पर चढ़ि आए। सुलोचनके पुत्र सहस्रनयन अपनी बहिनको लेकर भागे, सो वनमें छिप रहे। पूर्णघनने युद्धमें सुलोचनको मार नगरमें जाय कन्या ढूंढ़ी, परन्तु न पाई। तदि अपने नगरको चले गये। सहस्रनयन निबल, सो बापका बध सुन पूर्णमेघ पर क्रोधायमान भए, परन्तु कछु कर नाहीं सकै। छिद्र हेरै। गहरे वनमें घुसा रहे। कैसा है वह वन? सिंह व्याघ्र अष्टापदादिकनिकर भरचा है। पश्चात् चक्रवर्तीको एक मायामई अश्व लेय उड़चा, सो जिस वनमें सहस्रनयन हुते, तहां आये। उत्पलमतीने चक्रवर्तीको देखकर भाईको कह्या कि चक्रवर्ती आप ही यहां पधारे हैं। तदि भाई प्रसन्न होयकर चक्रवर्तीको बहिन परणाई। सो यह उत्पलमती चक्रवर्तीकी पटराणी स्त्रीरत्न भई। ५७
अर चक्रवर्तीने कृपा करि सहस्रनयनको दोनो श्रेणीका अधिपति किया। सो सहस्रनयनने पूर्णघन पर चढ़कर युद्धमें पूर्णघनको मारचा, अर बापका बैर लिया। चक्रवर्ती छहखंड पृथ्वीका राज करै।

अर सहस्रनयन चक्रवर्तीका साला विद्याधरनिकी दोऊ श्रेणीका राज करै। अर पूर्णमेघका बेटा मेघवाहन भयकर भाग्या। सहसनयनके योधा मारनेको लारें (पीछे) दौडे सो मेघवाहनने समोसरणमे श्रीअजितनाथकी शरण आया। इन्द्रने भयका कारण पूछ्या। तब मेघवाहनने कहा—'हमारे बापने सुलोचनको मारया था। सो सुलोचनके पुत्र सहस्रनयनने चक्रवर्तीका बल पाय, हमारे पिताको मारया, अर हमारे बधु क्षय किये, अर मेरे मारनेके उद्यमम है। सो मै मदिर त हसोंके साथ उडकर भगवानकी शरण आया हू'। ऐसा कहिकर मनुष्यनिके कोठेमें बैठ्या। अर सहस्रनयनके योधा याके मारणे को आ.ये हुते इसको समोसरणमे आया जान, पाछे गए। अर सहस्रनयनको सकल वृत्तान्त कह्या। तब वह भी समोसरणमें आया। भगवानके चरणारविंदके प्रसादतैं दोनों निर्वैर होय तिष्ठे। तबि गणधरने भगवानकू इनके पिताका चरित्र पूछ्या। भगवान कहै है कि—जम्बूद्वीपके भरतक्षेत्रविषैं सद्मति नामा नगर, तहाँ भावन नामा वणिक, ताके आतकी नामा स्त्री, अर हरिदास नामा पुत्र, सो भावन चार कोटि द्रव्यका धनी हुता तो भी लोभ करि व्यापार निमित्त देशातरको चाल्या। सो चलते समय पुत्रको सब धन सौंप्या, अर द्यूतादिक कुव्यसन न सेवनेकी शिक्षा दीनी। हे पुत्र! यह द्यूतादि (जूवा) कुव्यसन सब दोषनिका कारण ह, इनको सवथा तजने, इत्यादि शिक्षा देकर आप धनतृष्णा के कारण ज्हाजके द्वारा द्वीपातरको गया। पिताके गए पीछे पुत्रने सब धन वेश्या, जूआ अर सुरापान इत्यादिक कुव्यसनकरि खोया। जब सर्व धन जाता रह्या, अर जुआरीनका देनदार होय गया तबि द्रव्यके अर्थि सुरग लगाय राजाके महलमें चोरी को गया। सो राजाके महलतैं द्रव्य लावै अर कुव्यसन सेवै। कईएक दिनोमें भावन परदेशतैं आया। घरमें पुत्रको न देख्या तबि स्त्रीको पूछ्या। स्त्री ने कही कि "इस सुरगमें होयकर राजाके महिलमें चोरीको गया है।" तब यह पिता, पुत्रके मरण को आशका करि ताके लावनेको सुरगमें पठ्या। सो वह तो आवै था, अर पुत्र आवै था सो पुत्रने जान्या यह कोई बैरी आवै है, सो उसने बैरी जानि खडगसे मारया। पीछे स्पर्शकर जान्या वह तो

मेरा बाप है, तब महादुखी होय, डरकर भाग्या। अर अनेक देश भ्रमणकरि मरया। सो पिता पुत्र दोन्यों कुत्ते भए। फिर गीदड, फिर मार्जार भए, फिर रींछ भये, फिर न्योला भये, फिर भैंसे भये, फिर बलध भये, सो इतने जन्मोमे परस्पर घातकरि मरे। फिर विदेहक्षेत्रविषै पुष्कलावती देश में मनुष्य भये। उग्र तप करि एकादश स्वर्ग में उत्तर अनुत्तर नामा देव भए। तहातें आयकर जो भावन नामा पिता हुता वह तो पूर्णमेघ विद्याधर भया, अर हरिदास नामा पुत्र हुता सो सुलोचन नामा विद्याधर भया। या ही पूर्णमेघने सुलोचनको मारया।

तब गणधर देवने सहस्रनयनको अर मेघवाहनको कह्या—तुम अपने पिताओंका या भांति चरित्र जान ससारका बैर तजकर समताभावकू धरो। अर सगरचक्रवर्तीने गणधरदेवको पूछाकि हे महाराज! मेघवाहन, अर सहस्रनयनका बर क्यो भया? तवि भगवानकी दिव्यध्वनिमें आज्ञा भई कि जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्रविषै पद्मक नामा नगर है। तहा आरम्भ नामा गणितशास्त्रका पाठी महाधनवंत, ताके दोय शिष्य एक चन्द्र एक आवली भये। इन दोनोंमें मित्रता हुती, अर दोनों धनवान गुणवान विख्यात हुए। सो इनके गुरु आरम्भने जो अनेक नयचक्रमें अति विचक्षण हुता, मनमें विचारी कि कदाचित यह दोनो मेरा पदभग करें। ऐसा जानकर इन दोनोंके चित्त जुदे कर डारे। एक दिन चन्द्र गाय बेचनेकू गोपालके घर गया सो गाय बेचकर वह तो घर आवता हुआ, अर आवलीको उसी गायको गोपालतै खरीदकर लावता देख्या, इस कारण मागमें चन्द्रने आवलीको मारया। सो म्लेच्छ भया, अर चन्द्र मरकर बलध भया, सो म्लेच्छने बलधको भख्या। म्लेच्छ नरक तिर्यंच योनिमें भ्रमणकरि मूसा भया, अर चन्द्रका जीव मार्जार भया। मार्जारने मूसा भख्या। फिर ये दोऊ पापकर्मके योगतें अनेक योनिमें भ्रमणकरकाशीमे सम्भ्रमदेवकी दासीके पुत्र दोऊ भाई भए। एकका नाम कूट अर एकका ५९
नाम करवट, सो इन दोनोंको सम्भ्रम देवने चैत्यालयकी टहलकू राखे। सो मरकर पुण्यके योगतें रूपानन्द अर स्वरूपानद नामा व्यतरदेव भए। रूपानद तो चद्रका जीव, अर स्वरूपानन्द आवलीका जीव। फिर

रूपानन्द तो चयकर कलूवीका पुत्र कुलधर भया। अर स्वरूपानन्द पुरोहितका पुत्र पुष्पभूत भया। ए दोनों परस्पर मित्र एक हालीके अर्थि बरको प्राप्त भये, अर कुलधर पुष्पभूतके मारणेको प्रवृत्या। एक वृक्षके तलै साधु विराजते हुते तिनसो धम श्रवणकर कुलधर शात भया। राजाने याको सामत जान बहुत बढाया। पुष्पभूत, कुलधरको जिनधमके प्रसादतै सपत्तिवाहन देखकरि जैनी भया। वृतधर तीसरे स्वर्ग गया, अर कुलधर भी तीसरे स्वग गया। स्वगतै चयकर दोनो धातकीखडके विदेहविषै अरिजय पिता अर जयावती माताके पुत्र भये। एकका नाम अमरश्रुत दूजेका नाम धनश्रुत। ये दोनों भाई बडे योधा सहस्रशिरसके एतबारी चाकर जगतमे प्रसिद्ध हुवे। एक दिन राजा सहस्रशिरस हाथी पकडने को बनमे गया। ये दोनो भाई साथ गये। बनमें भगवान केवली बिराजे हुते, तिनके प्रतापतै सिंह मृगादिक जातिविरोधी जीवोको एक ठौर बठे देख राजा आश्चर्यको प्राप्त भया, आगै जाकर केवली-का दर्शन किया। राजा तो मुनि होय निर्वाण गये, अर ये दोनो मुनि होय, ग्यारहवें स्वर्ग गए। तहांतै चयकर चन्द्रका जीव अमरश्रुत तो मेघवाहन भया, अर आवलीका जीव धनश्रुत सो सहस्र-नयन भया। यह इन दोनोंके बैरका वृत्तात है। फिर सगरचक्रवर्तीने भगवानकू पूछ्या कि हे प्रभो! सहसनयनसों मेरा जो अतिहित ह, सो इसमै क्या कारण है, तबि भगवानने कह्या कि वह आरम्भ नामा गणित शास्त्रका पाठी मुनिनको आहार दान देकर देवकुरुभोगभूमि गया। तहातैं प्रथम स्वर्ग का देव होय कर पीछे चन्द्रपुरमें राजा हरि राणी धरादेवीके प्यारा पुत्र व्रतकीर्तन भया। मुनिपद धार स्वर्ग गया, अर विदेहक्षेत्रमें रत्नसचयपुरमें महाघोष पिता चन्द्राणी माताके पयोबलनामा पुत्र होय, मुनिव्रत धार, चौदहवें स्वग गया। तहातै चयकर भरतक्षेत्रमें पृथ्वीपुर नगरमें यशोधर राजा, अर राणी जयाके घर जयकीर्तन नामा पुत्र भया। सो पिताके निकट जिनदीक्षा लेकर विजय विमान गया। तहातैं चयकर तू सगरचक्रवर्ती भया, अर आरम्भके भवमें आवली शिष्यके साथ तेरा स्नेह हुता सो अब आवलीका जीव सहस्रनयन, तासों तेरा अधिक स्नेह है। यह कथा सुन चक्रवर्तीके विशेष

धर्मरुचि हुई। अर मेघवाहन तथा सहस्रनयन दोनो अपने पिताके, अर अपने पूर्वभव श्रवणकर निर्वैर भए, परस्पर मित्र भए। अर इनको धर्मविषै अतिरुचि उपजो। पूर्वभव दोनोंको याद आये। महाश्रद्धावत होय भगवानकी स्तुति करते भए कि हे नाथ! आप अनाथके नाथ हैं। ये ससार के प्राणी महादुखी है, तिनको धर्मोपदेश देकर उपकार करो हो, तुम्हारा किसीसे भी कुछ प्रयोजन नाहीं। तुम नि·कारण जगतके बन्धु हो, तुम्हारा रूप उपमा रहित है। अर अप्रमाण बलके धरणहारे हो, इस जगतमे तुम समान और नाहीं। तुम पूर्ण परमानन्द हो, कृतकृत्य हो, सदा सर्वदर्शी सबके वल्लभ हो, किसीके चितवनमें नहीं आते हो, जाने हैं सर्व पदार्थ जिनने, सबके अतर्यामी, सर्वज्ञ, जगतके हितु हो, हे जिनेन्द्र! ससाररूप अधकूपमें पडे ये प्राणी, तिनको धर्मोपदेशरूप हस्तावलवन ही हो। इत्यादिक बहुत स्तुति करी। अर यह दोनों मेघवाहन अर सहस्रनयन गद्गद वाणी होय, अश्रुपातकरि भीज गए हैं नेत्र जिनके, परम हर्षको प्राप्त भए। अर विधिपूर्वक नमस्कार कर तिष्ठे। सिंहवीर्यादिक मुनि, इन्द्रादिक देव, सगरादिक राजा परम आश्चर्यको प्राप्त भये॥

अथानन्तर भगवानके समोसरणविषै राक्षसोंका इद्र भीम अर सुभीम मेघवाहनतै प्रसन्न भए अर कहते भए, कि—हे विद्याधरके बालक मेघवाहन, तू धन्य है—जो भगवान अजितनाथकी शरणमें आया। हम तेरेपर अति प्रसन्न भए है। हम तेरी स्थिरताका कारण कहे है। तू सुन—इस लवणसमुद्र में अत्यन्त विषम महारमणीक हजारों अतरद्वीप है। लवणसमुद्रमें मगर मच्छादिकके समूह रमैं हैं। अर तिन अतर्द्वीपोंमें कहीं तो गधर्व क्रीडा करैं है, कहीं किन्नरोके समूह रमै है, कहीं यक्षोके समूह कोलाहल करै हैं, कहीं किंपुरुष जातिके देव केलि करै है। उनके मध्यमें एक राक्षसद्वीप है, जो सातसौ योजन चौड़ा, अर सातसौ योजन लम्बा है। उसके मध्यमें त्रिकूटाचल पर्वत है जो अत्यन्त दुष्प्रवेश है, शरणकी ठौर है, पर्वतके शिखर सुमेरुके शिखर समान मनोहर हैं। अर पर्वत नवयोजन ऊचा, पचास योजन चौडा है। नाना प्रकारकी रत्नोंकी ज्योतिके समूहकर जडित है। जाके सुवर्णमयी सुन्दर

तट है। नानाप्रकारकी बेलो कर मंडित कल्पवृक्षनिकर पूर्ण है। ताके तल तीसयोजन प्रमाण लंका नामा नगरी है। रत्न अर सुवर्णके महलनिकर अत्यन्त शोभ है। जहां मनोहर उद्यान है, कमलनिकर मंडित सरोवर है, बडे बडे चैत्यालय है, वह नगरी इंद्रपुरी समान है। दक्षिण दिशाका मंडन (भूषण) है। हे विद्याधर! तू समस्त बांधववर्गकर सहित तहां बसिकर सुखसे रहो। ऐसा कहकर भीमा नामा राक्षसनिका इन्द्र ताकू रत्नमई हार देता भया, वह हार अपनी किरणोसे महाउद्योत कर है। तथा धरतीके बीचमें पाताललंका जिसमें अलंकारोदय नगर, छः योजन औंडा, अर एकसौ साढ़े इकतीस योजन, अर डेढकला चौडा यह भी दिया। उस नगरमें बैरियोंका मन भी प्रवेश न कर सके, स्वर्ग समान महा मनोहर है। राक्षसोंके इन्द्रने कहा—कदाचित् तुझकूं परचक्रका भय हो तो इस पाताल-लंकामैं सकल वंशसहित सुखसो रहियो, लंका तो राजधानी, अर पाताललंका भय निवारणका स्थान है। याभांति भीम सुभीमने पूर्णघनके पुत्र मेघवाहनको कह्या।

तब मेघवाहन परमहर्षको प्राप्त भया, भगवानकूं नमस्कार करके उठ्या। तदि राक्षसोंके इन्द्रने राक्षसविद्या दीनी, सो आकाशमार्गसे विमानमें चढकर लंकाको चले, तदि सब भाइयोंने सुनी कि—मेघवाहनको राक्षसोंके इन्द्रने अति प्रसन्न होय, लंका दी है सो समस्त ही बंधुवर्गोंके मन प्रफुल्लित भए। जैसे सूर्यके उदयतै समस्त ही कमल प्रफुल्लित होय, तैसे सब ही विद्याधर मेघवाहनपै आए। तिनकरि मंडित मेघवाहन चाले। कईएक तो राजा आगे जाय हैं, कईएक पाछें, कईएक दाहिने, कई एक बायें, कईएक हाथियों पर चढे, कईएक तुरगनि (घोडो) पर चढ़े, कईएक रथोंपर चढ़े जाय हैं, कईएक पालकीपर चढे जाय है। अर अनेक पियादे ही जाय हैं। जय जय शब्द होय रहे हैं। दुंदुभी बाजे बाजैं है, राजा पर छत्र फिर है। अर चमर ढुरैं हैं, अनेक निशान (झंडे) चले जाय हैं। अनेक विद्याधर शीस निवावैं है। या भांति राजा चलते चलते लवणसमुद्र ऊपर आए। वह समुद्र आकाश समान विस्तीर्ण, अर पाताल समान ऊंडा, तमालवन समान श्याम है तरंगोंके समूहतैं भरया है। अनेक

मगरमच्छ जिसमें कलोल कर हैं। उस समुद्रको देख राजा हर्षित भए, पर्वतके अधोभागमें कोट, अर दरवाजे अर खाइयोंकर संयुक्त लंकानामा महापुरी है, तहां प्रवेश किया। लंकापुरीमें रत्नोंकी ज्योति करि आकाश संध्यासमान अरुण (लाल) होय रह्या है, कुंदके पुष्प समान उज्ज्वल ऊंचे भगवानके चैत्यालयनिकरि मंडित पुरी शोभे है। चैत्यालयोंपर ध्वजा फहरा रही हैं। चैत्यालयोंकी बन्दना कर राजाने महलमें प्रवेश किया, और भी यथायोग्य घरोंमें तिष्ठे रत्नोंकी शोभासे उसके मन अर नेत्र हरे गए।

अथानन्तर किन्नरगीतनामा नगरविषै राजा रतिमयूख, अर राणी अनुमती तिनके सुप्रभा नामा कन्या, नेत्र अर मनकी चौरनहारी, कामका निवास, लक्ष्मीरूप, कुमुदनीके प्रफुल्लित करनेकूं चन्द्रमा की चांदनी, लावण्यरूप जलकी सरोवरी, आभूषणोंका आभूषण, इन्द्रियनको प्रमोदकी करणहारी, सो राजा मेघवाहनने ताकूं महा उत्साह करि परणी। ताके महारक्षनामा पुत्र भया। जैसे स्वर्गमें इन्द्र इन्द्राणीसहित तिष्ठै तैसे राजा मेघवाहन राणी सुप्रभा सहित लंकाविषै बहुत काल राज किया।

अथानन्तर एक दिन राजा मेघवाहन अजितनाथके वंदनाके अर्थि समोसरणमें गए। तहां और कथा हो चुकी तदि सगरने भगवानकूं नमस्कारकरि पूछ्या कि हे-प्रभो! इस अवसर्पिणीकालविषैं धर्मचक्रके स्वामी तुम सारिखे जिनेश्वर कितने भए, अर कितने होवेंगे? तुम तीन लोकके देने वाले हो, तुम सारिखे पुरुषोंकी उत्पत्ति लोकविषै आश्चर्यकारिणी है। अर चक्ररत्नके स्वामी कितने होवेंगे तथा वासुदेव, प्रतिवासुदेव, बलभद्र कितने होवेंगे? या भांति सगरने प्रश्न किया। तब भगवान अपनी ध्वनि करि देवदुंदुभीनिकी ध्वनिको निराकरण करते हुए व्याख्यान करते भए। अर्धमागधीभाषाके भाषणहारे भगवान तिनके होंठ न हालें, यह बडा आश्चर्य है। कैसी है दिव्यध्वनि? उपजाया है, श्रोतानिके कानोंको उत्साह जाने। उत्सर्पिणी अवसर्पिणी प्रत्येक कालविषैं चौबीस तीर्थंकर होय हैं। मोहरूप अंधकारकरि समस्त जगत आच्छादित हुवा, जा समय धर्मका विचार नाहीं, और कोई भी राजा नाहीं,

ता समय भगवान ऋषभदेव उपजे, तिनने कर्मभूमिकी रचना करी। तबते कृतयुग कहाया। भगवानने क्रियाके भेदसे तीन वर्ण थापे। अर उनके पुत्र भरतने विप्र वर्ण थापा। भरतका तेज भी ऋषभ समान है, भगवान ऋषभदेवने जिनदीक्षा धरी, अर भवतापकर पीडित भव्यजीवनिकों शमभावरूप जलकरि शांत किया। श्रावकके धर्म, अर यतीके धर्म दोऊ प्रकट किए। जिनके गुणनिकी उपमाकूं जगत-विषै कोऊ पदार्थ नाहीं, कैलाशके शिखरतें प्राप्त निर्वाण पधारे। ऋषभदेवकी शरण पाय अनेक साधु सिद्ध भए, अर कईएक स्वर्गके सुखको प्राप्त भए, कईएक भद्रपरिणामी मनुष्यभवको प्राप्त भए, अर कईएक मरीचादि मिथ्यात्वके रागकरि संयुक्त अत्यन्त उज्ज्वल जो भगवानका मार्ग ताहि न अवलोकन करते भए, जैसे घुग्घू (उल्लू) सूर्यके प्रकाशको न जानै तैसे कुधर्मकूं अंगीकारकरि कुदेव भए, बहुरि नरकतिर्यंचगतिकूं प्राप्त भये। भगवान ऋषभदेवको मुक्ति गये पचास लाख कोटि सागर गये, तब सर्वार्थसिद्धिसे चय करि द्वितीय तीर्थंकर हम अजित भए। जब धर्मकी ग्लानि होय, अर मिथ्यादृष्टीनिका अधिकार होय, आचारका अभाव होय, तब भगवान तीर्थंकर प्रकट होय धर्मका उद्योत करैं हैं। अर भव्यजीव धर्मको पाय सिद्धस्थानकों प्राप्त होय हैं। अब हमको मोक्ष भये पीछे बाईस तीर्थंकर और होंगे। तीनलोकविषै उद्योत करनेवाले ते सब मो सारिखे कांति वीर्य विभूतिके धनी त्रैलोक्यपूज्य ज्ञानदर्शनरूप होंगे। तिनमें तीन तीर्थंकर शांति, कुंथु, अर ए तीन चक्रवर्ती पदके भी धारक होवेंगे। तिनि चौबीसोंके नाम सुनहु—ऋषभ १, अजित २, संभव ३, अभिनन्दन ४, सुमति ५, पद्मप्रभ ६, सुपार्श्व ७, चन्द्रप्रभ ८, पुष्पदंत ९, शीतल १०, श्रेयांस ११, वासुपूज्य १२, विमल १३, अनन्त १४, धर्म १५, शांति १६, कुंथु १७, अर १८, मल्लि १९, मुनिसुव्रत २०, नमि २१, नेमि २२, पार्श्वनाथ २३, महावीर २४, ये सबही देवाधिदेव जिनमार्गके धुरंधर होहिंगे। अर सबके गर्भावतारविषै रत्ननिकी वर्षा होयगी। सबके जन्मकल्याणक सुमेरुपर्वतपर क्षीरसागरके जल-करि होवेंगे। उपमारहित है तेजरूप सुख अर बल जिनके, ऐसे सब ही कर्मशत्रुनिके नाशनहारे

महावीर स्वामीरूपी सूर्यके अस्त भए पीछे पाखंडरूप अज्ञानी चमत्कार करेंगे। ते पाखंडी संसाररूपी कूपविषै आप पडंगे अर औरनिकों पाडैंगे। चक्रवर्त्तिनिमें प्रथम तो भरत भए, दूसरा तू सगर भया, अर तीसरा मघवा, चौथा सनत्कुमार, अर पांचवा शांति, छठा कुंथु, सातवा अर, आठवां सुभूम, नवमा महापद्म, दसवां हरिषेण, ग्यारहवा जयसेन, बारहवा ब्रह्मदत्त, ये बारह चक्रवर्ती, अर वासुदेव नव, अर प्रतिवासुदेव नव, बलभद्र नव होहिंगे। इनका धर्मविषै सावधान चित्त होगा। ये अवसर्पणीके महापुरुष कहे। याही भांति उत्सर्पणीविषै भरत ऐरावतमें जानने। या भांति महापुरुषोंकी विभूति अर कालकी प्रवृति अर कर्मनिके वशतैं संसारका भ्रमण, अर कर्म रहितोंको मुक्तिका निरुपम-सुख—यह सबकथन मेघवाहनने सुना। यह विचक्षण चित्तविषै विचारता भया कि हाय! हाय!! जिन कर्मनिकर यह जीव आतापको प्राप्त होय है तिन्हीं कर्मनिको मोहमदिराकरि उन्मत्त भया यह जीव बांधै है। यह विषय विषवत प्राणनिके हरणहारे कल्पनामात्र मनोज्ञ हैं। दुःखके उपजावनहारे हैं। इनमें रति कहा? या जीवने धन स्त्री कुटुंबादिविषै अनेकभव राग किया परन्तु ये पदार्थ याके नाहीं हुये। यह सदा अकेला संसारविषै परिभ्रमण करै है, अर सब कुटुम्बादिक तब तक ही स्नेह करै है जबतक दानकरि उनका सम्मान करै है, जैसे श्वानके बालकको जब लग टूक डारिए, तोलग अपना है। अंतकालमें पुत्रकलत्रबांधवमित्रधनादिकके लार (साथ) कौन गया? अर ये कौन के साथ गये? ये भोग हैं, ये कालसर्पके फण समान भयानक हैं। नरकके कारण हैं, तिनविषै कौन बुद्धिमान संग करै, अहो यह बडा आश्चर्य है। लक्ष्मी ठगनी अपने आश्रितनिकों ठगै है या समान और दुष्टता कहा! जैसैं स्वप्नविषै किसी वस्तु का समागम होय है, तैसैं कुटुम्बका समागम जानना, अर जैसैं इन्द्रधनुष क्षण-भंगुर है, तैसैं परिवारका सुख क्षणभंगुर जानना। यह शरीर जलके बुदबुदा समान असार है, अर यह जीवितव्य बिजलीके चमत्कारवत् असार चंचल है। तातै इन सबनिको तजिकरि एक धर्म ही का सहाय अंगीकार करूं। धर्म कैसा है? सदा कल्याणकारी ही है, कदापि विघ्नकारी नाहीं। अर संसार

शरीर भोगादिक चतुरगतिके भ्रमणके कारण है, महा दुखरूप है। ऐसा जानकरि उस राजा मेघवाहनने जिसके बकतर महा वैराग्य ही है, महारक्ष नामा पुत्रको राज्य देकर भगवान श्रीअजितनाथके निकट दीक्षा धारी, राजाके साथ एकसौ दश राजा वैराग्य पाय घररूप बंदीखानेतें निकसे।

अथानन्तर मेघवाहनका पुत्र महारक्ष राजपर बैठ्या। सो चन्द्रमा समान दानरूपी किरणनिकरि कुटुम्बरूपी समुद्रको पूर्ण करता संता लंकारूपी आकाशविषै प्रकाश करता भया। बडे २ विद्याधरनिके राजा स्वप्नविषै भी ताकी आज्ञाको पायकर आदरतें प्रतिबोध होय, हाथ जोड नमस्कार करते भए। उस महारक्षके विमलप्रभा राणी होती भई। कैसी है वह राणी? मानो छाया समान पतिकी अनुगामिनी है। ताके अमररक्ष, उदधिरक्ष, भानुरक्ष ये तीन पुत्र भए। कैसे हैं वे पुत्र? नानाप्रकारके शुभकर्म करि पूर्ण जिनका बडा विस्तार, अति ऊंचे, जगतविषै प्रसिद्ध मानो तीन लोक ही हैं।

अथानन्तर अजितनाथ स्वामी अनेक भव्यजीवनिका निस्तारकर सम्मेदशिखरतें सिद्धपदको प्राप्त भए। सगरके छाणवें हजार राणी इन्द्राणी तुल्य, अर पुत्र साठ हजार ते कदाचित बंदनाकूं कैलाश पर्वतपर आए। भगवानके चैत्यालयनिकी वंदनाकर दंडरत्नतें कैलाशके चौगिरद खाई खोदते भए। सो तिनको क्रोधकी दृष्टि करि नागेंद्रने देख्या, सो ये सब भस्म होगए! उनमें तें दोय आयुकर्मके योगतें बचे, एक भीमरथ, अर दूसरा भगीरथ। तब सबनिने विचारी जो अचानक यह समाचार चक्रवर्तीको कहेंगे तो चक्रवर्ती तत्काल प्राण तजैंगे। ऐसा जान इनको मिलनेतें, अर कहवेतें पंडित लोकोंने मना किए। सर्व राजा अर मंत्री जा विधि आए थे, ताही विधि आए, विनयकरि चक्रवर्तीके पास अपने अपने स्थानपर बैठे। तासमय एक वृद्ध ब्राह्मण कहता भया कि 'हे सगर! देखहु या संसारकी अनित्यता जिसको देखकर भव्यजीविनिका मन संसारविषै न प्रवर्त्ते। तो आगैं तुम्हारे समान पराक्रमी राजा भरत भए, जिनने छै खंड पृथ्वी दासी समान वश करी, ताके अर्ककीर्ति पुत्र भये—महापराक्रमी जिनके नामतें सूर्यवंश प्रवर्त्या। या भांति जे अनेक राजा भये ते सर्वकालवश भये। सो राजानिकी

बात तो दूर ही रहो, जे स्वर्गलोकके इन्द्र महा विभव करि युक्त हैं तेहू क्षणमें विलाय जाय हैं। अर जे भगवान तीर्थंकर तीनों लोककू आनन्द करणहारे हैं, ते हू आयुके अन्त होनेपर शरीरको तज निर्वाण पधारे हैं। जैसे पक्षी एक वृक्षपर रात्रिको आय बसैं हैं प्रभात अनेक दिशानिकू गमन करैं हैं। यह प्राणी कुटुम्बरूपी वृक्षविषै आय बसे हैं, स्थिति पूरीकर अपने कर्मकेवशतैं चतुर्गतिविषै गमन करैं हैं। सबनितैं बलवान महाबली यह काल है, जाने बडे २ बलवान निर्बल किये। अहो! बडा आश्चर्य है! बडे पुरुषनिका विनाश देखकर हमारा हृदय नाहीं फट जाय। इन जीवनिका शरीर सम्पदा अर इष्टका संयोग, सब इन्द्रधनुष, वा स्वप्न वा बिजली, वा झाग, वा बुदबुदा तिन समान जानना। इस जगतविषै ऐसा कोई नाहीं जो कालतैं बचै। एक सिद्ध ही अविनाशी हैं। अर जो पुरुष पहाडको हाथतैं चूर्णकर डारैं, अर समुद्र शोष जावें तेहू कालके वदनमें प्राप्त होय हैं। यह मृत्यु अलंघ्य है। यह त्रैलोक्य मृत्युके वश है। केवल महामुनि ही जिनधर्मके प्रसादकरि मृत्युको जीते हैं। ऐसे अनेक राजा कालवश भए तैसे हमहू कालवश होवेंगे। तीन लोकका यह मार्ग है। ऐसा जानकर ज्ञानी पुरुष शोक न करैं, शोक संसारका कारण है। या भांति वृद्ध पुरुषने कही, अर याही भांति सब सभाके लोगोंने कही। ताही समय चक्रवर्तीने दोऊ बालक देखे। तब ये मनमें विचारी कि सदा ये साठहजार भेले होय मेरे पास आवते हुते, नमस्कार करते, अर आज ये दोनों ही दीनवदन दीखें हैं, तातैं जानिये है कि और सब कालवशि भए। अर ये राजा मुझे अन्योक्तिकर समझावे हैं। मेरा दुःख देखबेको असमर्थ हैं। ऐसा जानि राजा शोकरूप सर्पका डसा हुआ भी प्राणनिको न तजता भया। मन्त्रियोंके वचनतैं शोकको दबाय, संसारको कदलीके गर्भवत् असार जानि, इन्द्रियनिके सुख छोड, भगीरथको राज देय जिनदीक्षा आदरी। यह संपूर्ण छै खंड पृथ्वी जीर्ण तृण समान जान तजी। भीमरथ सहित श्रीअजित-नाथके निकट मुनि होय केवलज्ञान उपाय सिद्धपद को प्राप्त भए।

अथानन्तर एक समय सगरके पुत्र भगीरथ श्रुतसागर मुनिको पूछते भये कि हे प्रभो! जो हमारे

भाई एक ही साथ मरणको प्राप्त भये, तिनविषै म बचा, सो काहेत बचा ? तब मुनि बोले कि एक समय चतुर्विधसघ वदना निमित्त समेदशिखरको जाते हुते, सो चलते २ अतिकग्राममें आय निकसे। तिनको देखकर अतिकग्रामके लोक दुवचन बोलते भए, हसते भए। तहा एक कुम्हारने तिनको मन करी। अर मुनियो ो स्तुति करता भया, तवनन्तर ता ग्रामके एक मनुष्यने चोरी करी। सो राजाने सव ग्राम जला दिया। उस दिन वह कुम्हार काहू ग्रामको गया हुता सो ही बचा। वह कुम्हार मरकर वणिक भया, अर अन्य जे ग्र।मके मरे थे क्षिद्रद्री, कौडी भये। कुम्हारके जीव महाजनने सव कौडी खरीदी। बहुरि वह महाजन मरकर राजा भया, अर कौडी मरकर गिजाई भई, सो हाथीके पगके तले चूरी गई। राजा मुनि होय कर देव भये, देवतै तू भगीरथ भया। ग्रामके लोक कईएक भव लेय सगरके पुत्र भये। सो मुनिके सघकी निद के पापतै जन्मजन्ममें कुगति पाई, अर तू स्तुति करनेतै ऐसा भया। यह पूवभव सुन ़र भगीरथ प्र बोधको पाय मुनिराजका व्रत धर परमपदको प्राप्त भये।

बहुरि गौतम स्वामी राजा श्रेणिकसे कहे हैं—हे श्रेणिक! यह सगरका चरित्र तो तुझे कह्या। आगे लकाकी कथा कहिये है, सो सुनहु। महारिक्ष नामा विद्याधर बडी सम्पदाकरि पूण लकाविष नि कटक राज्य करै। सो एक दिन प्रमद नामा उद्यानविषै राजलोक सहित क्रीडाकू गये। कैसा है प्रमद नामा उद्यान ? ऊचे पवतोंसे महा रमणीक है, अर सुगधित पुष्पोंसे फूल रहे वृक्षोंके समूहसे मडित, अर मिष्ट शब्दोके बोलनहारे पक्षियोंके समूहसे अतिसुन्दर है, जहा रत्नोकी राशि है, अर अति सघन पत्र पल्लवन कर मडित लत।ओ (बेलो) के मडप तिनकरि छाय रह्या है। ऐसे बनमें राजा राजलोकनिसहित नानाप्रकारकी क्रीडा करि रतिसागरविष मग्न हुवा, जसे नन्दनवनविषै इन्द्र क्रीडा करै तैसै क्रीडा करी। ६८

अथानन्तर सूयके अस्त भये पीछै कमल सकोचको प्राप्त भये। तिनविषै भ्रमरको मूवा देखि राजाके चिंता उपजी। कैसा ह राजा ? मोहको भइ है मदता जाके, अर भवसागरते पार होने का इच्छा

उपजी है। राजा विचार है कि देखो मकरदके रसमे आसक्त यह मूढ भौंरा गधतै तृप्त न भया, तातैं मृत्युकू प्राप्त भया। धिक्कार होहु य। इच्छाकू। जैसे यह कमलके रसका आसक्त मधुकर मूवा, तैसैं मैं स्त्रियोंके मुखरूप कमलका भ्रमर हुआ मरकर कुगतिको प्राप्त होऊंगा। जो यह एक नासिका इद्रियका लोलुपी नाशको प्राप्त भया, तो मै तो पच इन्द्रियोंका लोभी हू मेरी क्या बात ? अथवा यह चोइद्री जीव अज्ञानी भूलै तो भूल, मै ज्ञानसम्पन्न विषयनिके वशि क्यों भया ? शहदकी लपेटी खडगकी धाराके चाटनेत सुख कहा ? जीभहीके खड होय है, तैसे विषयसेवनमें सुख कहा ? अनन्त दु खोका उपार्जन ही होय है। विषफल तुल्य ये विषय तिनतै पराङ्मुख है, तिनको मैं मनवचकाय करि नमस्कार करू हू। हाय! हाय!! यह बडा कष्ट है जो मै पापी घने दिनतक इन दुष्ट विषयनिकरि ठगाया गया। इन विषयनिका प्रसग विषम है। विष तो एक भव प्राण हरै है, अर ये विषय अनन्तभव प्राण हरै है। यह विचार राजाने किया तासमय वनमें श्रुतसागरमुनि आये। वह मुनि अपने रूप करि चन्द्रमाकी चादनीको जीते है, अर दीप्तिकरि सूर्यकू जीते हैं, स्थिरताकरि सुमेरुतै अधिक है। जिनका मन एक धर्मध्यानविषै ही आसक्त है, अर जीते है रागद्वेष दोय जिन्होने, और तजे है मनवचकायके अपराध जिन्होंने, चार कषायोके जीतनेहारे, पाच इन्द्रियनिके वश करणहारे, छह कायके जीवनिपर दयालु, अर सप्तभयवर्जित, आठमदरहित, नव नयके वेत्ता, शीलके नववाडिके धारक, दशलक्षणधर्मके स्वरूप परमतपके धरणहारे, साधुवोके समूह सहित, स्वामी पधारे। सो जीव जतुरहित पवित्रस्थान देख वनमें तिष्ठे। जिनके शरीरकी ज्योतिका दशों दिशामें उद्योत हो गया।

अथानन्तर वनपालके मुखतें स्वामीको आया सुन राजा महारिक्ष विद्याधर वनमें आये! कैसे हैं राजा ? भक्तिभाव करि विनयरूप है मन जिनका। वह राजा आयकरि मुनिके पाव पडे। कैसे हैं मुनि ? अति प्रसन्न है मन जिनका, अर कल्याणके देनहारे है चरण कमल जिनके राजा समस्त सघको नमस्कार करि समाधान (कुशल) पूछ एक क्षण बैठिकरि भक्तिभावतें मुनि धर्मका स्वरूप पूछते

भये। मुनिके हृदयमें शांतिभावरूपी चन्द्रमा प्रकाश कर रहा था सो वचनरूपी किरणनिकरि उद्योत करते सते व्याख्यान करते भये कि—हे राजा! धर्मका लक्षण जीवदया ही है। अर ये सत्य वचनादि सब धर्महीका परिवार है। यह जीव कर्मके प्रभावतैं जिस गतिमें जाय है ताही शरीरमें मोहित होय है। इसलिए तीनलोककी संपदा जो कोई देय तौहू प्राणी अपने प्राणको न तजै। सब जीवनिको प्राण समान और कुछ प्यारा नाहीं। सब ही जीवनको इच्छे है, मरनेको कोई भी न इच्छे। बहुत कहवेकरि कहा? जैसे आपको अपने प्राण प्यारे हैं तैसे ही सबनिको प्यारे हैं। तातैं जो मूरख परजीवनिके प्राण हरै हैं ते दुष्टकर्मी नरकमें पडै हैं। उन समान और कोऊ पापी नाहीं। यह जीव जीवनिके प्राण हरि अनेक जन्म कुगतिमें दुःख पावै है। जैसे लोहेका पिंड पानीमें डूबि जाय है तैसे हिंसक जीव भवसागरमें डूबै है। जे वचनकर मीठे बोल बोलै हैं, अर हृदयमें विषके भरे हैं, इन्द्रियनिके वशि भए मलीन मन हैं, भले आचारतैं रहित, स्वेच्छाचारी, कामके सेवनहारे हैं ते नरक तिर्यंच गतिविषै भ्रमण करै हैं। प्रथम तो या संसारविषै जीवनिको मनुष्यदेह दुर्लभ है, बहुरि उत्तमकुल, आर्यक्षेत्र, सुन्दरता, धनकरपूर्णता, विद्याका समागम, तत्वका जानना, धर्मका आचरण ये सब अति दुर्लभ हैं। धर्मके प्रसादतैं कईएक तो सिद्धपद पावै हैं, कईएक स्वर्गलोकविषै सुख पायकरि परम्पराय मोक्षको जाय हैं, अर कईएक मिथ्यादृष्टि अज्ञान तपकरि देव होय स्थावरयोनिमें आय पडै हैं। कईएक पशु होय हैं, कईएक मनुष्यजन्ममें आवैं हैं। कैसा है माताका गर्भ? मलमूत्रकर भरया है, अर कृमियोंके समूहकर पूर्ण है, महादुर्गंध अत्यन्त दुस्सह, ताविषै पित्त श्लेष्मके मध्य चर्मके जालतैं ढके ये प्राणी, जननी के आहारका जो रसांश ताहि चाटै है। जिनके सब अंग संकुचि रहे हैं। दुःखके भारकर पीडित नवमहीना उदरविषै बसिकरि योनिके द्वारतैं निकसै है। मनुष्यदेह पाय पापी धर्मको भूलैं हैं। मनुष्यदेह सर्वयोनियोंमें उत्तम है। मिथ्यादृष्टि नेम धर्म आचारवर्जित पापी विषयनिको सेवै हैं। जे ज्ञानरहित कामके वशि पडे स्त्रीके वशी होय हैं, ते महादुःख भोगवते हुए संसारसमुद्रविषै डूबे हैं। तातैं विषयकषाय न

सेवने। हिंसाका वचन जामैं परजीवनिको पीडा होय सो न बोलना। हिंसा ही संसारका कारण है। चोरी न करनी, साच बोलना, स्त्रीकी संगति न करनी, धनकी वांछा न रखनी, सर्वपापारम्भ तजने, परोपकार करना, पर पीडा न करनी। यह मुनिकी आज्ञा सुनकर धर्मका स्वरूप जान राजा वैराग्यको प्राप्त भए। मुनिकों नमस्कार करि अपने पूर्वभव पूछे। चार ज्ञानके धारक मुनि श्रुतसागर संक्षेपताकरि पूर्वभव कहते भए कि हे राजन्! पोदनापुरविषै हित नामा एक मनुष्य, ताके माधवी नामा स्त्री, ताकै प्रीतम नामा तू पुत्र भया। अर ताही नगरविषै राजा उदयाचल, राणी उदयश्री, ताका पुत्र हेमरथ राज करै। सो एक दिन जिनमंदिरविषै महापूजा करवाई। वह पूजा आनन्दकी करणहारी है, सो ताके जयजय-कार शब्द सुनकर तूने भी जयजयकार शब्द किया सो पुण्य उपार्ज्या। कालपाय मुवा, अर यक्षोंमें महायक्ष हुवा। एकदिन विदेहक्षेत्रविषै कांचनपुर नगरके वनमें मुनियोंको पूर्वभवके शत्रुने उपसर्ग किया सो यक्षने ताको डराकर भगा दिया अर मुनिनकी रक्षा करी, सो अति पुण्यकी राशि उपार्जी। कईएक दिन आयु पूरी करि यक्ष तडिदंगद नामा विद्याधर, ताकी श्रीप्रभा स्त्रीके उदित नामा पुत्र भया। अमरविक्रम विद्या-धरोंके ईश वंदनाके निमित्त मुनिके निकट आये थे। तिनको देखकरि निदान किया। महा तपकर दूसरे स्वर्ग जाय तहांतै चयकर तू मेघवाहनके पुत्र हुवा। हे राजा! तूने सूर्यके रथकी नाईं संसारमें भ्रमण किया। जिह्वाका लोलुपी स्त्रियोंके वशवर्ती होय, तैं अनन्तभव धरे। तेरे शरीर या संसारमें एते व्यतीत भए जो उनको एकत्र करिए तो तीनलोकमें न समावै। अर सागरोंकी आयु स्वर्गविषै तेरी भई। जब स्वर्गहीके भोगनितैं तू तृप्त न भया तो विद्याधरोंके अल्प भोगनितैं तू कहा तृप्त होइगा? अर तेरी आयु भी अब आठ दिन बाकी है, यातैं स्वप्न इन्द्रजाल समान जे भोग तिनतैं निवृत होहु। ऐसा सुन अपना मरण जान्या तोहू विषादको न प्राप्त भया। प्रथम तो जिन चैत्यालयविषै बडी पूजा कराई। पीछै अनन्त संसारके भ्रमणतै भयभीत होकर अपने बडे पुत्र अमररक्षको राज देय, अर लघु-पुत्र भानुरक्षको युवराजपद देय, आप परिग्रहको त्यागकरि तत्त्वज्ञानविषै मग्न होय, पाषाणके थंभ

तुल्य निश्चल होय ध्यानम तिष्ठे, अर लोभकर रहित भए। खानपानका त्यागकर शत्रुमित्रमें समान बुद्धि धार निश्चल होय कर मौनवृतके धारक समाधिमरणकरि स्वर्गविष उत्तम देव भए।

अथानन्तर किन्नरनाद नामा नगरविषे श्रीधर नामा विद्यार राजा, ताके विद्या नामा राणी, ताक अरिजयानामा कन्या, सो अमररक्षने परणी। अर गंधर्वगीतनगरविषे सुरसन्निभ राजा, ताकै पुत्री गंधर्वा सो भानुरक्षने परणी। बडे भाई अमररक्षके दश पुत्र भए, अर देवांगना समान छह पुत्री भई, जिनके गुण ही आभूषण ह। अर लघु भाई भानुरक्षके दश पुत्र अर छह पुत्री भई। सो उन पुत्रोनें अपने अपने नामके नगर बसाए। कसे ह वे पुत्र? शत्रुनिके जीतनेहारे, पृथ्वीके रक्षक हैं। हे श्रेणिक! उन नगरोंके नाम सुनो—सन्ध्याकार १, सुवेल २, मनोह्लाद ३, मनोहर ४, हंसद्वीप ५, हरि ६, जोध ७, समुद्र ८, कांचन ९, अर्धस्वर्ग १०, ए दश नगर तो अमररक्षके पुत्रनिने बसाए। अर आवर्तनगर १, विघट २, अम्भोद ३, उतकट ४, स्फुट ५, रतुग्रह ६, तट ७, तोय ८, आवली ९, रत्नद्वीप १० ये दश नगर भानुरक्षके पुत्रोने बसाए। कसे हैं वे नगर? जिनमें नानाप्रकारके रत्नोसे उद्योत होरहा ह, सुवर्णकी भांति तिनकरि देदीप्यमान वे नगर क्रीडाके अर्थी राक्षसोंके निवास होते भए। बडे बडे विद्याधर देशान्तरोंके वासी तहां आये, महा उत्साहकरि निवास करते भए।

अथानन्तर पुत्रनिको राज देय अमररक्ष भानुरक्ष यह दोनों भाई मुनि होय महातपकर मोक्षपद को प्राप्त भए। या भांति राजा मेघवाहनके वंशमें बडे बडे राजा भए। ते न्यायवंत प्रजापालन कर सकल वस्तुनित विरक्त होय मुनिके व्रत धार कईएक मोक्षको गए, कईएक स्वर्गविषे देव भए। ता वंशविषै एक राजा महारक्ष भए, तिनकी राणी मनोवेगा, ताके पुत्र राक्षस नामा राजा भए। तिनके नामते राक्षसवंश कहाया। ये विद्याधर मनुष्य है, राक्षसयोनि नाहीं। राजा राक्षसके राणी सुप्रभा, ७२
ताके दोय पुत्र भए। आदित्यगति नामा बडा पुत्र अर छोटा बृहतकीर्ति। ये दोऊ चन्द्र सूर्य समान अन्यायरूप अंधकारको दूर करते भए। तिन पुत्रनिको राज देय राजा राक्षस मुनि होय देवलोक गए।

राजा आदित्यगति राज्य करै, अर छोटा भाई युवराज हुवा। बडे भाईकी स्त्री सदनपद्मा अर छोटे भाईकी स्त्री पुष्पनखा भई। आदित्यगतिका पुत्र भीमप्रभ भया। ताकै हजार राणी देवांगना समान, अर एकसौ आठ पुत्र भए सो पृथ्वीके स्तम्भ होते भए। उनमें बडे पुत्रको राज्य देय राजा भीमप्रभ वैराग्यको प्राप्त होय परमपदको प्राप्त भए। पूर्व राक्षसनिके इन्द्र भीम सुभीमने कृपाकर मेघवाहनको राक्षसद्वीप दिया सो मेघवाहनके वशमें बडे बडे राजा राक्षसद्वीपके रक्षक भए। भीमप्रभका बडा पुत्र पूजार्ह सोहू अपने पुत्र जितभास्करकों राज्य देय मुनि भए। अर जितभास्कर सपरकीर्ति नामा पुत्र को राज्य देय मुनि भए। अर सपरकीर्ति सुग्रीव नामा पुत्रको राज्य देय मुनि भए। सुग्रीव हरिग्रीव को राज्य देय उग्रतपकरि देवलोक गया। अर हरिग्रीव श्रीग्रीवको राज्य देय वैराग्यको प्राप्त भए। अर श्रीग्रीव सुखमुख नामा पुत्रको राज्य देय मुनि भए। अपने बडो ही का माग अंगीकार किया अर सुखमुख भी सुव्यक्तको राज देय आप परम ऋषि भए। अर सुव्यक्त अमृतवेगको राज देय वैरागी भए। अर अमृतवेग भानुगतिको राज देय यति भए। अर वेहू चिंतागतिको राज देय निश्चिन्त भए, मुनिव्रत आदरतैं भये, अर चिन्तागति भी इन्द्रको राजदेय मुनीन्द्र भए। या भांति राक्षसवशमें अनेक राजा भये। तथा राजा इन्द्रके इन्द्रप्रभ, ताकै मेघ,ताकै मृगीदमन, ताकै इन्द्रजीत, ताकै भानुवर्मा, ताकै भानु सूर्यसमान तेजस्वी, ताकै मुरारी, ताकै त्रिजित्, ताकैभीम, ताकै मोहन,ताकै उद्धारक, ताकै रवि, ताकै चाकार, ताकै वज्रमध्य, ताकै प्रबोध, ताकै सिंहविक्रम, ताकै चामुंड, ताकै मारण, ताकै भीष्म, ताकै द्युपवाहन, ताकै अरिमर्दन, ताकै निर्वाणभक्ति, ताकै उग्रश्री, ताकै अर्हद्भक्त, ताकै अनुत्तर, ताकै गतभ्रम, ताकै अनिल, ताकै लंक, ताकै चंड, ताकै मयूरवाहन, ताकै महाबाहु, ताकै मनोरम्य, ताकै भास्करप्रभ, ताकै बृहद्गति, ताकै बृहत्कांत, अर ताकै अरिसंत्रास, ताकै चन्द्रावर्त, ताकै महारव, ताकै मेघध्वान, ताकै ग्रहक्षोभ, ताकै नक्षत्रदमन। या भांति कोटिक राजा भए। बडे विद्याधर महाबल करि मंडित, महाकांतिके धारी, पराक्रमी, परदाराके त्यागी, निजस्त्रीमें है संतोष जिनके, ऐसे लंकाकेस्वामी,महासुन्दर,

अस्त्रशस्त्रकलाके धारक, स्वर्गलोकके आए अनेक राजा भए। ते अपने पुत्रनिकों राज देय, जगततैं उदास होय, जिनदीक्षा धारि, कईएक तो कर्म काट निर्वाणको गए, जो तीन लोकका शिखर हैं। अर कईएक राजा पुण्यकें प्रभावतै प्रथमस्वर्गको आदि देय सर्वार्थसिद्धिपर्यन्त प्राप्त भए। या भांति अनेक राजा व्यतीत भए—जैसैं स्वर्गविषे इन्द्र राज्य करै। लंकाका अधिपति धनप्रभ ताकी राणी पद्माका पुत्र कीर्तिधवल प्रसिद्ध भया। अनेक विद्याधर जिसके आज्ञाकारी, जैसे स्वर्गमें इन्द्र राज करै तैसे लंकामें कीर्तिधवल राज करता भया। या भांति पूर्वभवविषै किया जो तप, ताके बल करि यह जीव देवगतिके तथा मनुष्यगतिके सुख भोगवै है। अर सर्वत्यागकर महाव्रत धरि, आठ कर्म भस्म करि सिद्ध होय है। अर जे पापी जीव खोटे कर्मनिविषैं आसक्त हैं ते याही भवविषैं लोकनिंद्य होय मरकर कुयोनिमें जाय है। अर अनेक प्रकार दुःख भोगवै हैं। ऐसा जान पापरूप अंधकारके हरवेको सूर्य समान जो शुद्धोपयोग ताको भजो।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराणकी भाषाटीकाविषैं राक्षसका कथन जाविषै है ऐसा पांचवां अधिकार संपूर्ण भया ॥५॥

अथानन्तर गौतम स्वामी कहै हैं—हे राजा श्रेणिक! यह राक्षसवंश अर विद्याधरनिके वंशका वृत्तांत तो तुमसे कह्या। आगैं वानर वंशनिका कथन सुन। स्वर्ग समान जो विजयार्धगिरि ताकी दक्षिणश्रेणी विषै मेघपुर नामा नगर ऊंचे महलों से शोभित है। तहां विद्याधरनिका राजा अतींद्र पृथ्वीविषै प्रसिद्ध भोगसंपदामें इन्द्रतुल्य, ताकै श्रीमती नामा रानी लक्ष्मी समान हुई। ताके मुखकी चांदनीकरि सदा पूर्णमासी समान प्रकाश होय है। ताकै श्रीकंठ नामा पुत्र भया। शास्त्रमें प्रवीण, जिसके नामको सुनकरि विचक्षण पुरुष हर्षको प्राप्त होंय। अर ताकै छोटी बहिन महामनोहर देवी नामा हुई, जाके नेत्र कामके बाण ही है। ७४

अथानन्तर रत्नपुर नामा नगर अति सुन्दर तहां पुष्पोत्तर नाम राजा विद्याधर महाबलवान, ताकै

पद्माभा नाम पुत्री देवांगना समान अर पद्मोत्तर नामा पुत्र महा गुणवान, जाकै देखनेतैं अति आनंद होय। सो राजा पुष्पोत्तर अपने पुत्रके निमित्त राजा अतीन्द्रकी पुत्री देवीको बहुत बार याचना करी, तोहू श्रीकंठ भाई ने अपनी बहिन लंका के धनी कीर्तिधवलकों दीनी, अर पद्मोत्तरको न दीनी। यह बात सुन राजा पुष्पोत्तरने अति कोप किया, अर कहा कि देखो हममें कुछ दोष नाहीं। दारिद्र दोष नाहीं, मेरा पुत्र कुरूप नाहीं, अर हमारे उनके कुछ वैर भी नाहीं, तथापि मेरे पुत्रको श्रीकंठने अपनी बहिन न परणाई, यह क्या युक्त किया ?

एक दिन श्रीकंठ चैत्यालयनिकी वंदनाके निमित्त सुमेरु पर्वत पर विमानमैं बैठकर गए। कैसा है विमान? पवन समान वेगवाला, अर अतिमनोहर है। सो वंदनाकर आवते हुते। मार्गमें पुष्पोत्तरकी पुत्री पद्माभाका राग सुण्या, अर वीनका बजाना सुण्या। कैसा है राग ? मन और श्रोत्रका हरनहारा, सो राग सुन मन मोहित भया। तब अवलोकन किया, सो गुरु समीप संगीत गृहविषै वीण बजावती पद्माभा देखी। ताके रूपसमुद्रविषै उसका मन मग्न होगया, मनकू काढिवेको असमर्थ भया। वांकी ओर देखता रह्या। अर यह भी अति रूपवान, सो याके देखवेकरि वह भी मोहित भई। ये दोनो परस्पर प्रेमसूतकर बंधे। सो ताका मन जान श्रीकंठ ताहि आकाशमैं लेयचल्या। तब परिवारके लोगोंने राजा पुष्पोत्तरप पुकार करी कि तुम्हारी पुत्रीको राजा श्रीकंठ लेगया। सो राजा पुष्पोत्तरके पुत्रकी श्रीकंठ ने अपनी बहिन न परणाई, ताकरि वह क्रोधरूप था ही। अब अपनी पुत्रीके हरवेकरि अत्यन्त कुपित होय सब सेना लेय श्रीकंठके मारवेको पीछे लग्या। दांतनिकरि होंठनिको पीसता, क्रोधकरि जिसके नेत्र लाल हो रहे हैं, ऐसे महाबलीको आवते देख श्रीकंठ डरया। अर भाजकर अपने बहनेऊ लंकाके धनी कीर्तिधवलकी शरण आया। सो समय पाय बडोंके शरणै जाय यह न्यायही है। राजा कीर्तिधवल श्रीकंठको देखि अपना साला जान बहुत स्नेह करि सामा आय मिल्या, छातीसों लगाय बहुत सन्मान किया। इनमें आपसमें कुशलवार्ता हो रही थी कि पुष्पोत्तर सेना सहित आकाशमें आए। कीर्तिधवल

ने उनको दूरतैं देख्या । राजा पुष्पोत्तरके सग अनेक विद्याधरोंके समूह महा तेजवान हैं । खड्ग, सेल, धनुषबाण इत्यादि शस्त्रनिके समूहकरि आकाशमें तेज होय रह्या है । ऐसे मायामई तुरग—वायुके समान है वेग जिनका, अर काली घटासमान मायामई गज—चलायमान है घटा अर सूंड जिनकी, मायामई सिंह, अर बड़े २ विमान तिनकरि मंडित आकाश देख्या । उत्तर दिशाकी ओर सेनाका समूह देख राजा कीर्तिधवल क्रोधसहित हँसकर मंत्रियोंको युद्ध करनेकी आज्ञा दीनी । तवि श्रीकंठ लज्जात नीचे होय गए । अर श्रीकंठने कीर्तिधवलसे कह्या जो मेरी स्त्री अर मेरे कुटुम्बकी तो रक्षा आप करो अर मैं आपके प्रतापतैं युद्धमें शत्रुनिको जीत आऊंगा । तब कीर्तिधवल कहते भए कि यह बात तुमको कहना अयुक्त है । तुम सुखसों तिष्ठो, युद्ध करनेको हम घने ही हैं । जो यह दुर्जन नरमीतैं शांत होय, तो भला ही है, नहीं तो इनको मृत्युके मुखमें देखोगे । ऐसा कहि अपने स्त्रीके भाईको सुखसे अपने महलमें राखि पुष्पोत्तरके निकट बड़ी बुद्धिके धारक दूत भेजे । ते दूत जाय पुष्पोत्तरसों कहते भए । जो हमारे मुखतैं तुमको राजा कीर्तिधवल बहुत आदरत कहै है—कि तुम बड़े कुलमें उपजे हो, तुम्हारी चेष्टा निर्मल है । तुम सब शास्त्रके वेत्ता हो, जगतमें प्रसिद्ध हो, अर सबनिमैं वयकर बड़े हो । तुमने जो मर्यादाकी रीत देखी है सो काहूने काननिसे सुनी नाहीं । यह श्रीकंठ हू चंद्रमाकी किरण समान निर्मल कुलविषै उपज्या है । अर धनवान है, विनयवान है, सुन्दर है, सबकलामें निपुण है, यह कन्या ऐसे ही वरको देने योग्य है । कन्याके अर याके रूप अर कुल समान है । तातैं तुम्हारी सेनाका क्षय कौन अर्थ करावना ? यह तो कन्यानिका स्वभाव ही है कि जो पराए गृहका सेवन करें । दूत जबलग यह बात कह ही रहे थे कि पद्माभाकी भेजी सखी पुष्पोत्तरके निकट आई, अर कहती भई कि तुम्हारी पुत्रीने तुम्हारे चरणारविंदको नमस्कार कर बीनती करी है । जो मैं तो लज्जा करि तुम्हारे समीप नहीं आई, तातै सखीको पठाई है । 'हे पिता ! याँ श्रीकंठका रंचमात्रहू दूषन नाहीं, अल्पहू अपराध नाहीं । मैं कर्मानुभव करि याके संग आई हूं । जे बड़े कुलमें उपजी स्त्री हैं तिनके एक ही

वर होय है, तातैं याँ टालि (इसके सिवाय) मेरे अन्य पुरुषका त्याग है। ऐसैं प्राय सखीने बीनती करी तब राजा सचिन्त होय रहे, मनमें विचारी कि मैं सब बातोंमे समर्थ हू, युद्धमें लकाके धनीको जीत श्रीकंठ को बांधकर ले जाऊ। परन्तु मेरी कन्याहीने इसको वरया, तो मैं याकू कहा कहू ? ऐसा जान युद्ध न किया। अर जो कीर्तिधवलके दूत आये हुते तिनको सन्मान करि विदा किये। अर जो पुत्रीकी सखी आई थी ताको भी सन्मानकर विदा दीनी। ते हर्ष करि भरे लंका अर राजा पुष्पोत्तर सब अर्थ के वेत्ता पुत्रीकी बीनतीतें श्रीकंठ पर क्रोध तजि अपने स्थानको गए।

अथानन्तर मार्गशिर सुदी पडवाके दिन श्रीकंठ अर पद्माभा का विवाह भया। अर कीर्तिधवलने श्रीकंठसों कही जो 'तुम्हारे वैरी विजयार्धमें बहुत हैं, तातैं तुम इहां ही समुद्रके मध्यमें जो द्वीप हैं तहां तिष्ठो, तुम्हारे मनको जो स्थानक रुचे सो लेवो, मेरा मन तुमको छोडि नाहीं सकैं है। अर तुमहू मेरी प्रीतिका बंधन तुडाय कैसे जावोगे ? ऐसे श्रीकंठसों कहिकर अपने आनन्दनामा मंत्रीसों कही—'जो तुम महाबुद्धिमान हो, अर हमारे दादेके मुह आगिले हो, तुमतें सार असार किछू छाना नाहीं। या श्रीकंठके योग्य जो स्थानक होय सो बताओ। तब आनन्द कहते भये कि—महाराज! आपके सब ही स्थानक मनोहर हैं। तथापि आपही देखकरि जो दृष्टिमें रुचै सो देहु। समुद्रके मध्यमें बहुत द्वीप हैं, कल्पवृक्षसमान वृक्षोंसे मंडित जहां नाना प्रकारके रत्ननिकरि शोभित बडे बडे पहाड हैं। जहां देव क्रीडा करै है। तिन द्वीपोंमे महारमणीक नगर हैं, जहां स्वर्ण रत्ननिके महल हैं, सो तिनके नाम सुनहु—सन्ध्याकार, सुवेल, कांचन, हरिपुर, जोधन, जलधिध्वान, हंसद्वीप, भरक्षमठ अर्धस्वर्ग, कूटावर्त, विघट, रोधन, अमलकांत, स्फुटतट, रत्नद्वीप, तोयावली, सर अलंघन, नभोभान, क्षेम इत्यादि मनोज्ञ स्थानक हैं। जहां देव भी उपद्रव न कर सकैं। यहांतैं उत्तरभागविषै तीनसौ योजन समुद्रके मध्य वानरद्वीप है, जो पृथ्वीमें प्रसिद्ध है, जहां अवांतरद्वीप बहुत ही रमणीक हैं। कईएक तो सूर्य-कांत मणिनकी ज्योतिसे देदीप्यमान हैं। अर कईएक हरितमणिनिकी कांतिकरि ऐसे शोभै है मानो

उगते हरे तणोसे भूमि व्याप्त होय रही है। अर कईएक श्याम इन्द्रनीलमणिकी कांतिके समूहसे ऐसे शोभ है मानो सूर्यके भयत अंधकार वहां शरण आयकरि रह्या है। अर कहूं लाल जे पद्मरागमणि नके समूहकरि मानो रक्त कमलोका वन ही शोभ है। अर जहां ऐसो सुगंध पवन चाल है कि आकाशमे उडते पक्षी भी सुगंधसे मग्न हो जाय है, अर तहां वृक्षनिपर आय बैठे है। अर स्फटिकमणिनिके मध्य मिली जो पद्मरागमणि तिनकरि सरोवरमे कमल जाने जाय है। उन मणिनिकी ज्योति करि कमलनिके रंग न जाने जाय है। जहां फूलनिकी बासतं पक्षी उन्मत्त भए ऐसे उन्मत्त सुन्दर शब्द करै है मानो समीपके द्वीपनिसो अनुराग भरी बात करै है। जहां औषधिनिकी प्रभाके समूहकरि अंधकार दूर होय है, सो अंधारे पक्षमे भी उद्योत ही रहै है। जहां फल पुष्पनिकरि मंडित वृक्षोका आकार छत्र समान है। जिनके बडे बडे डाले है, उनपर पक्षी मिष्ट शब्द कर रहे है। जहां बिना बाहे धान आपसे ही उगे है। कैसे है वे धान? वीर्य, अर कांतिको विस्तीरणहारे सो मंद पवनकरि हिलते हुए शोभै है। तिनकरि पृथ्वी मानो कंचुकी (चोली) पहरे है। अर जहां लालकमल फूल रहे है। जिनपर भ्रमरोके समूह गुंजार करै है, सो मानो सरोवरी ही नेत्रनिकरि पृथ्वीका विलास देखै है। नीलकमल तो सरोवरीनके नेत्र भए, अर भमर भौंह भए। जहां पौंढे अर साठानिकी विस्तीर्ण बाडे है। सो पवनकरि हालनेतं शब्द करै है। ऐसा सुन्दर बानरद्वीप है। उसके मध्यविषै किहकु दा नामा पर्वत है। वह पर्वत रत्न अर स्वर्णकी शिलाके समूहकरि शोभायमान है। जैसा यह त्रिकुटाचल मनोज्ञ है, तैसा ही किहकु द पर्वत मनोज्ञ है। अपने शिखरनिकरि दिशारूपी कांताको स्पर्श करै है। आनन्द मंत्रीके ऐसे वचन सुनकर राजा कीर्तिधवल बहुत आनन्द रूप भए, अर बानरद्वीप श्रीकंठको दिया। तब चैतके प्रथम दिन श्रीकंठ परिवारसहित वानरद्वीपमे गए। मार्गमे पृथ्वीको शोभा देखते चले जाय है। वह पृथ्वी नीलमणिनिकी ज्योतिकरि आकाश समान शोभै है, अर महाग्रहोके समूहकरि संयुक्त समुद्रको देखि आश्चर्यको प्राप्त भए वानरद्वीप जाय पहुंचे। वानरद्वीप मानो दूसरा स्वर्ग ही

है। अपने नीझरनोके शब्दसे मानो राजा श्रीकंठको बुलाव ही है। नीझरनेके छींटे आकाशको उछले है, सो मानो राजाके आवेकरि अति हर्षको प्राप्त भए आनन्दकर हंसे है। नानाप्रकारकी मणिनिकी कांतिकरि उपज्या जो कांतिका सुंदर समूह ताकरि मानो तोरणनिके समूह ही ऊंचे चढ रहे हैं। अब राजा वानरद्वीपमें उतरे, अर सब ओर चौगिरद अपनी नीलकमलसमान दृष्टि सर्वत्र विस्तारी। छुहारे, आंवले, कैथ, अगरचन्दन, लाख, पीपरली, अर्जुन कहिए सहीजणा अर कदम्ब, आमली, चारोली केला, दाडिम, सुपारी, इलायची, लवंग, मौलश्री अर सब जातिके मेवोंसे युक्त नानाप्रकारके वृक्षनिकरि द्वीप शोभायमान देख्या। ऐसी मनोहर भूमि देखी जिसके देखे और ठौर दृष्टि न जाय। जहां वृक्ष सरल अर विस्तीर्ण ऊपरि छत्रसे बन रहे हैं। सघन सुन्दर पल्लव अर शाखा फूलनिके समूहकरि शोभैं है, अर महा रसीले स्वादिष्ट, मिष्ट फलनिकर नमीभूत होय रहे हैं। अर वृक्ष अति रसीले, अति ऊंचे हू नाहीं अति नीचे हू नाहीं, मानो कल्पवृक्ष ही शोभैं है। अर जहां बेलनिपर फूलोंके गुच्छे लगरहे हैं, जिनपर भ्रमर गुंजार करैं हैं सो मानो यह बेलि तो स्त्री हैं, उनके जो पल्लव हैं सो हाथोंकी हथेली हैं, अर फूलोंके गुच्छे कुच है, अर भ्रमर नेत्र है, वृक्षोंसे लग रहे हैं। अर ऐसे ही तो सुन्दर पक्षी बोलै हैं, अर ऐसे ही मनोहर भ्रमर गुंजार करैं हैं, मानों परस्पर आलाप करैं हैं। जहां कईएक देश तो स्वर्णसमान कांतिको धरैं हैं, कईएक कमल समान, कईएक वैडूर्य मणि समान हैं। ते देश नानाप्रकार के वृक्षनिकरि मंडित हैं, जिनको देखकर स्वर्गभूमि हू नाहीं रुचै है। जहां देव क्रीडा करैं हैं। जहां हंस सारिस, सूवा, मैना, कबूतर, कमेडी इत्यादि अनेक जातिके पक्षीनिके युगल क्रीडा करैं हैं। जहां जीवनिको किसीप्रकारकी बाधा नाहीं। नानाप्रकारके वृक्षनिकी छायाके मंडप, रत्न स्वर्णके अनेक निवास, पुष्पनिकी अति सुगंधी, ऐसे उपवनमें सुन्दर शिलानिके ऊपर राजा जाय विराजे, अर सेना भी सकल वनमें उतरी। हंसो, सारिसो, मयूरोंके नाना प्रकारके शब्द सुने अर फल फूलोंकी शोभा देखी। सरोवरनिमें मीन केल करते देखे। वृक्षोंके फूल गिरैं हैं, अर पक्षियोंके शब्द होय रहे हैं। सो मानों वह

बन राजाके आवनेत फूलनिकी वर्षा ही करै है, अर जयजयकार शब्द कर ह । नानाप्रकारके रत्ननि-करि मडित पथ्वीमडल की शोभा देखि विद्याधरनिका चित्त बहुत सुखी भया। बहुरि नन्दनवन सारिखा वह बन ताम राजा श्रीकठने क्रीडा करते सते बहुत बानर देखे। जिनकी अनेक प्रकारकी चेष्टा ह । राजा देखकरि मनमें चितवने लगा कि—तियच योनिके ये प्राणी मनुष्य समान लीला कर ह । जिनके हाथ पग मव आकार मनुष्यकासा ह, सो इनकी चेष्टा देखि राजा चकित होय रह । निकटवर्ती पुरुष निसो कही जो 'इनको मेरे समीप लाओ' । सो राजाकी आज्ञात कईएक बानरनिको पकरि लाए सो राजाने उनको बहुत प्रीतिसौं राखे । अर तिनिको नत्य करणा सिखाया, अर उनके सफेद दात दाडिमके फूलनिसो रगकर तमाशे देखे । अर उनके मुखमें सोनेके तार लगाय कौतूहल करावता भया । वे आपसमे परस्पर जूवा काढ तिनके तमाशे देखे, अर वे आपसम स्नेह कर, वा कलह कर तिनके तमाशे देखे। राजाने ते कपि पुरुषनिकू रक्षा निमित्त सोपे । अर मीठे मीठे भोजनकरि तिनको पोखे। तिन बानरोको साथ लेकर किहकु द पवत पर चढे। राजाका चित्त सु दर वक्ष बेलि पानीके नीझरणो से हरा गया। तहा पवतके ऊपर विषमतारहित विस्तीण भूमि देखी। तहा किहकु द नामा नगर बसाया। कसा है वह नगर ? जहा बरियोका मन भी प्रवेश न कर सक । चौदह योजन लबा और चौदह योजन चौडा, अर जो परिक्रमा करिए तो बियालीस योजन कछुइक अधिक होय। जाके मणियोके कोट, रत्नोके दरवाजे वा रत्नोके महल। रत्नोका कोट इतना ऊचा ह कि अपने शिखरकरि मानो आकाशसो ही लग रह्या ह, अर दरवाजे ऊचे मणियो से ऐसे शोभ ह मानो यह अपनी ज्योतिसे थिरीभूत होय रहे है । घरनिकी देहली पद्मराग मणिनकी ह, सो अत्य त लाल ह, मानो यह नगरी नारी स्वरूप ह, सो ताबूलकरि अपने अधर (होंठ) लाल कर रही ह । अर दरवाजे मोतिनकी मालाकरि युक्त ह, सो मानो समस्त लोकको सपदाको हसै ह । अर महलनिके शिखरिन पर च द्रकाति मणि लगि रही ह, सो रात्रिम ऐसा भासै ह, मानो अधेरी रात्रिम च द्र उग रहा ह । अर नानाप्रकारके रत्नोकी प्रभाकी पक्ति करि मानो ऊचे तोरण चढ़ रहे

हैं। तहा घरनिकी पंक्ति विद्याधरनिकी बनाई हुई बहुत शोभ है। घरनिके चौक मणिनके हैं, अर जहाँ नगरके राजमार्ग बाजार बहुत सीधे हैं, तिनमें वक्रता नाहीं। अति विस्तीर्ण हैं, मानो रत्ननिके सागर ही हैं। सागर जलरूप हैं, यह स्थलरूप हैं। अर मन्दिरके ऊपर लोगोंने कबूतरनिके निवास निमित्त नीलमणिनिके स्थान कर राखे हैं। सो कैसे शोभे हैं— मानो रत्ननिके तेजते अंधकार नगरीतें काढ दिया है, सो शरण आयकर समीप पड्या है। इत्यादि नगरका वर्णन कहा तक करिए। इन्द्रके नगरके समान वह नगर जिसमें राजा श्रीकंठ पद्माभा राणीसहित जैसे स्वर्गविषै शचीसहित सुरेश रमै है, तैसे बहुतकाल रमते भए। जे वस्तु भद्रशालवनमें तथा सोमनसवनमें तथा नन्दनवनमें न पाइए ते राजाके वनमें पाई जावें।

एक दिन राजा महल ऊपर विराज रहे थे, सो अष्टाह्निकाके दिनोमें इन्द्र चतुरनिकायके देवनिसहित नन्दीश्वर द्वीपको जाते देखे, अर देवनिके मुकुटनिकी प्रभाके समूहसे आकाशको अनेक रंगरूप ज्योतिसहित देख्या। अर बाजा बजानेवालोके समूहकरि दशो दिशा शब्दरूप देखी। किसीको किसीका शब्द सुनाई न देवे। कईएक देव मायामई हंसनपर तथा तुरगनिपर तथा हंसनिपर अनेकप्रकारके वाहननिपर चढे जाते देखे। सो देवोंके शरीरकी सुगंधतासे दशोदिशा व्याप्त हो गई। तब राजा यह अद्भुत चरित्र देखि मनमें विचारी कि नंदीश्वर द्वीपको देव जाय हैं। यह राजा हू अपने विद्याधरोसहित नंदीश्वर द्वीपको जानेकी इच्छा करते भए। विना विवेक विमान पर चढकरि राणी सहित आकाशके पथसे चाले, परन्तु मानुषोत्तरके आगे इनका विमान न चल सक्या, देवता चले गए, यह अटक रहे। तब राजाने बहुत विलाप किया, मनका उत्साह भंग होय गया। कांति और ही होय गई। मनमें विचारै हैं कि हाय! बडा कष्ट है, हम हीनशक्तिके धनी विद्याधर मनुष्य अभिमानको धरें सो धिक्कार है हमको। मेरे मनमे यह हुती कि नन्दीश्वर द्वीपमें भगवानके अकृत्रिम चैत्यालय हैं उनका मैं भावसहित दर्शन करूंगा, अर महामनोहर नानाप्रकारके पुष्प, धूप, गंध इत्यादि अष्ट ८१

द्रव्यनिकरि पूजा करूंगा, बारबार धरतीपर मस्तक लगाय नमस्कार करूंगा, इत्यादि जो मनोरथ किये हुते ते पूर्वोपार्जित अशुभ कमकरि मेरे मदभागीके भाग्यमें न भए। अथवा मैंने आगै अनेक बार यह बात सुनी हुती कि मानुषोत्तर पवतको उल्लघकर मनुष्य आग न जाय ह, तथापि अत्यन्त भक्ति रागकर यह बात भूल गया। अब ऐसे कम करू जो अन्य जन्मविष नन्दीश्वर द्वीप जाने की मेरी शक्ति हो। यह निश्चयकर वजकठ नामा पुत्रको राजदेय सब परिग्रहको त्यागकर राजा श्रीकठ मुनि भए। एक दिन वजकठने अपने पिताके पूवभव पूछनेका अभिलाष किया। तब वद्ध पुरुष वजकठको कहते भए कि जो हमको मुनियोने उनके पूवभव ऐसे कहे हुते—जो पूवभवमें दो भाई वणिक हुते। तिनमें प्रीत बहुत हुती, सो स्त्रियोने वे जुदे किए। तिनमें छोटा भाई दरिद्री अर बडा भाई धनवान। सो बडा भाई सेठकी सगतित श्रावक भया। अर छोटा भाई कुव्यसनी दुखसो दिन पूरे कर। बडे भाईने छोटे भाईको यह दशा देखि बहुत धन दिया। अर भाईको उपदेश देय व्रत लिवाए, अर आप स्त्रीका त्यागकर मुनि होय समाधिमरण करि इन्द्र भए। अर छोटा भाई शातपरिणामी होय, शरीर छोड देव हुवा। देवसे चयकरि श्रीकठ भया। बडे भाईका जीव इन्द्र भया था, सो छोटे भाईके स्नेहतै अपना स्वरूप दिखावता सता नन्दीश्वर द्वीप गया सो इद्रको देखि राजा श्रीकठको जातिस्मरण हुवा, सो वरागी भए। यह अपने पिताका व्याख्यान सुन राजा वजकठहू इन्द्रायुधप्रभ पुत्रको राज देय मुनि भए। अर इन्द्रायुधप्रभ भी इन्द्रभूत पुत्रको राज्य देय मुनि भए, तिनक मेरु, मेरुक मदिर तिनक समीरणगति, तिनक रविप्रभ, तिनक अमरप्रभ पुत्र हुआ। सो लकाके धनीकी बेटी गुणवती परणी, सो गुणवती राजा अमरप्रभके महलमें अनेक भातिके चित्राम देखती भई। कहीं तो शुभ सरोवर देखे जिनमें कमल फूल रहे ह, अर भमर गुंजार कर ह। कहीं नीलकमल फूल रहे ह। हंसके युगल क्रीडा कर रहे है, जिनकी चूचनिमें कमलनिके ततु, ऐसे हसनिके युगल क्रीडा कर ह। अर क्रोच, सारस इत्यादि अनेक पक्षियोके चित्राम देखे सो प्रसन्न भई। अर एक ठौर पच प्रकारके रत्नोके चूणसे वानरोके स्वरूप देखे।

वे विद्याधरोंने चितेरे है, सो राणी वानरोके चित्राम देखि भयभीत होय कापने लगी। रोमाच होय आए। पसेवकी बूंदोसे माथेका तिलक बिगड गया, अर आखोके तारे फिरने लगे। राजा अमरप्रभ यह वृत्तात देखि घरके चाकरोसे बहुत खिझे कि मेरे विवाहमें ये चित्राम किसने कराए। मेरी प्यारी राणी इनको देखि डरी। तबि बडे लोगोने अरज करी कि महाराज! इसमें किसीका अपराध नहीं। आपन कही जो यह चित्राम कराणेहारे हमको विपरीत भाव दिखाया, सो ऐसा कौन है जो आपकी आज्ञा सिवाय काम कर? सबनिके जीवनमूल आप हो, आप प्रसन्न होयकर हमारी विनती सुनो।

आप तुम्हारे वशमें पृथ्वीपर प्रसिद्ध राजा श्रीकंठ भए। जिनने यह स्वर्ग समान नगर बसाया, अर नानाप्रकारके कौतूहलका धारणहारा जो यह देश ताके ते मूलकारण ऐसे होते भए जस कर्मोका मूलकारण रागादिक प्रपच है। वननिके मध्य लतागहमे सुखसो तिष्ठी हुई किन्नरी जिनके गुण गाव है, अर किन्नर हू गाव है। इन्द्र समान जिनकी शक्ति थी ऐसे ते राजा, तिन्होने अपनी स्थिर प्रकृतितैं लक्ष्मीकी चचलता करि उपज्या जो अपयश सो दूर किया। सो राजा श्रीकंठ इन वानरो को देखकर आश्चय को प्राप्त भए अर इन सहित रमे, मीठे २ भोजन इनको दिये। अर इनके चित्राम कढाये। पीछे उनके वशमे जो राजा भए, तिनने मगलीक कार्योंमें इनके चित्राम मँडाए, अर वानरनिसो बहुत प्रीत राखी? तातं पूवरीत प्रमाण अब हू लिखे है। ऐसा कह्या तबि राजा क्रोध तजि प्रसन्न होय आज्ञा करते भये—जो हमारे बडेनिने मगलकायमें इनके चित्राम दिखाए तो अब भूमिमें मत डारो जहा मनुष्यनिके पाव लगे, मैं इनको मुकुटविषै राखूंगा। अर ध्वजाओमें इनके चिन्ह कराओ, अर महलोके शिखर तथा छत्रोके शिखरपर इनके चिन्ह करावो। यह आज्ञा मन्त्रियोको करीसो मन्त्रियोने उस ही भाति किया। राजाने गुणवती राणीसहित परम सुख भोगते विजयार्धकी दोऊ श्रेणीके जीतने का मन किया। बडी चतुरग सेना लेकर विजयार्ध गये। राजाकी ध्वजाओमे अर मुकुटोमे कपिनिके चिन्ह है। राजाने विजयार्ध जायकर दोऊ श्रेणी जीत करि सब राजा वश किए। सर्व देश अपनी

आज्ञामें किए। किसी का भी धन न लिया। जो बडे पुरुष हैं तिनका यह व्रत है जो राजानिको नवाय, अपनी आज्ञामें कर, किसीका धन न हरें। सो राजा विद्याधरनिको आज्ञामें कर पीछे किहकूपुर आए। विजयार्धके बडे २ राजा साथ आए। सब विद्याधरोका अधिपति होय घने दिनतक राज्य किया। लक्ष्मी चचल हुती सो नीतिकी बेडी डालि निश्चल करी। तिनके पुत्र कपिकेतु भए, जिनके श्रीप्रभा राणी बहुत गुणकी धरणहारी। ते राजा कपिकेतु अपने पुत्र विक्रमसपन्नको राज्य देय वैरागी भए। अर विक्रमसम्पन्न प्रतिबल पुत्रको राज्य देय वैरागी भए। यह राज्यलक्ष्मी विषकी बेलके समान जानो। बडे पुरुषोके पूर्वोपार्जित पुण्यके प्रभावकरि यह लक्ष्मी विना ही यत्न मिले है। परन्तु उनके लक्ष्मीमें विशेष प्रीति नाहीं। लक्ष्मी को तजते खेद नाहीं होय है। किसी पुण्यके प्रभावकरि राज्य-लक्ष्मी पाय देवोके सुख भोग फिर वैराग्यको प्राप्त होयकर परमपदको प्राप्त होय है। मोक्षका अवि-नाशी सुख उपकरणादि सामग्रीके आधीन नाहीं। निरन्तर आत्माधीन है। वह महासुख अन्तरहित है, अविनश्वर है। ऐसे सुखको कौन न वाछै ? राजा प्रतिबलके गगनानन्द पुत्र भए, तिनके खेचरा-नन्द, उसके गिरिनन्द, या भाति वानरवंशियोके वशमें अनेक राजा भये। ते राज्य तजि वैराग्य धर स्वर्ग मोक्षको प्राप्त भए। इस वंशके समस्त राजाओके नाम अर पराक्रम कौन कह सके ? जिसका जैसा लक्षण होय सो तैसा ही कहावे। सेवा करे तो सेवक कहावे, धनुष धारे सो धनुषधारी कहावे, परकी पीडा टाले सो शरणगति प्रतिपाल होय क्षत्री कहावे, ब्रह्मचर्य पाले सो ब्राह्मण कहावे। जो राजा राज्य तजिकर मुनि होय सो मुनि कहावे। श्रम कहिये तप धारे सो श्रमण कहावै। यह बात प्रकट ही है—लाठी राखे सो लाठीवाला कहावे, सेल राखे सो सेलवाला कहावे। तैसे यह विद्याधर छत्र ध्वजाओ पर वानरो के चिन्ह राखते भये तातें वानरवंशी कहाए। भगवान श्रीवासुपूज्यकेसमय राजा अमरप्रभ भए। तिनने वानरो के चिन्ह मुकुट छत्र ध्वजानिमें बनाए तबतै इनके कुलमें यह रीति चली आई। या भाति सक्षेपतै वानर वंशियोकी उत्पत्ति कही।

अथानन्तर या कुल विषै महोदधि नामा राजा भए, जिनके विद्युतप्रकाशा नामा राणी भई। वह राणी पतिव्रता स्त्रियोके गुण की निधान है, जिसने अपने विनय अंगकरि पतिका मन प्रसन्न किया है। राजाके सुन्दर सकडो रानी हैं, तिनकी यह राणी शिरोमाग्य है। महा सौभाग्यवती रूपवती ज्ञानवती है। उस राजाके महापराक्रमी एक सौ आठ पुत्र भये। तिनको राज्यका भार देय राजा महासुख भोगते भये। मुनिसुव्रतनाथके समयमें वानरवंशियनिमे यह राजा महोदधि भये। अर लंकामें विद्युतकेशके अर महोदधिके परम प्रीति भई। कैसे है ये दोऊ ? सकल प्राणियोके प्यारे, अर आपसमें एक चित्त, देह न्यारी भई तो कहा, सो विद्युतकेश मुनि भये। यह वृत्तांत सुन महोदधि भी वैरागी भए। यह कथा सुन राजा श्रेणिकने गौतम स्वामी सो पूछी–'हे स्वामी! राजा विद्युतकेश किस कारणसे वैरागी भये ? तब गौतम स्वामीने कहा कि एक दिन विद्युतकेश प्रमदानामा उद्यानमें क्रीडा करनेको गये। कैसा है उद्यान ? जहां क्रीडाके निवास अति सुन्दर है, निर्मल जलके भरे सरोवर है, तिनमें कमल फूल रहे हैं। अर सरोवरनिमें नाव डार राखी है। वनमें ठौर ठौर हिंडोले हैं, सुन्दर बेल अर क्रीडा करनेके सुवर्णके पर्वत, जिनके रत्नोके सिवाण, वृक्ष मनोज्ञ फल फूलनिकरि मंडित, जिनके पल्लवसों हालती लता अति शोभे है, अर लताओसे लिपटि रहे हैं। ऐसे बनमें राजा विद्युतकेश राणियोके समूह विषै क्रीडा करते हुते। कैसी है राणी ? मनकी हारणहारी, पुष्पादिकके चूंटनेमे आसक्त है। जिनके पल्लव समान कोमल सुगंध हस्त अर मुख की सुगंध करि भ्रमर जिनपर भ्रमै है। क्रीडाके समय राणी श्रीचन्द्राके कुच एक वानरने नखनि तै विदार, तदि राणी खेदखिन्न भई। रुधिर आय गया। राजाने राणीको दिलासा देय करि अज्ञानभावतै वानरको बाणतै बींध्या सो वानर घायल होय एक गगनचारण महामुनिके पास जाय पड्या। वे दयालु वानरको कांपता देखि दयाकरि पंचनमोकार मन्त्र देते भये। सो वानर मरकर उदधिकुमार जातिका भवनवासी देव उपज्या। यहां बनमे वानरके मरण पीछैं राजाके लोक अन्य बानरोको मार रहे थे सो उदधिकुमारने अवधिसे विचारकर बानरो को

मारते जान, मायामई वानरो की सेना बनाई । वे वानर ऐसे बने, जिनकी दाढ विकराल, वदन विकराल, भोह विकराल, सिंदूर सारिखा लाल मुखसो डरानेवारे शब्दको कहते हुवे आये । कईएक हाथमें पर्वत धरें, कईएक मूल से उपारे वृक्षोको धर, कईएक हाथनिसो धरती कूटते सते, कईएक आकाशमें उछलते सते, क्रोधके भारकर रौद्र है अग जिनका, उन्होने आय राजाको घेरया, अर कहते भये—अरे दुराचारी? सम्हार तेरी मृत्यु आई है । तू बानरोकू मारकरि अब किसकी शरण जायगा ?

तब विद्युतकेश डरया अर जान्या कि यह वानरोका बल नाहीं, देवमाया है । तब देहकी आशा छोडि महामिष्ट वाणी करके विनती करता भया कि—"महाराज ! आज्ञा करो, आप कौन हो, महादेदीप्यमान प्रचंड शरीर जिनके, यह बानरनिकी शक्ति नाहीं । आप देव है ।" तदि राजाको अति विनयवान देखि महोदधि कुमार बोले "हे राजा ! बानर पशु जाति जिनका स्वभाव ही अति चञ्चल है, उनको तैने स्त्रीके अपराधसो हते, सो मैं साधुके प्रसादसे देव भया । मेरी विभूति तू देखि ।" राजा कांपने लग्या, हृदयविषै भय उपज्या, रोमाच होय आए । तब महोदधि कुमारने कही—"तू मत डर ।' तब इसने कह्या, कि "जो आप आज्ञा करो सो करू ।" तब देव इसको गुरुके निकट लेय गया । वह देव अर राजा ये दोनो मुनिकी प्रदक्षिणा देय नमस्कार कर जाय बैठे । देवने मुनिसो कही कि—"मैं बानर हुता सो आपके प्रसादत देव भया, अर राजा विद्युतकेशने मुनिसो पूछ्या कि मुझे क्या कर्त्तव्य है । मेरा कल्याण किस तरह होय ? तदि मुनि चार ज्ञानके धारक हुते सो तपोधन कहते भए—कि हमारे गुरु निकट ही है, उनके समीप चालो । अनादिकालका यह धर्म है कि गुरुओके निकट जाय धर्म सुनिये । आचार्यनिके होते सते जो उनके निकट न जाय अर शिष्य ही धर्मोपदेश देय तो वह शिष्य नहीं, कुमार्गी है, आचारसे भ्रष्ट है । ऐसा तपोधनने कह्या तब देव अर विद्याधर चित्तमें चिंतवते भये कि ऐसे महापुरुष है, ते भी गुरुकी आज्ञा बिना उपदेश नाहीं करै है । अहो ! तपका माहात्म्य अति अधिक है । मुनिकी आज्ञासे वह अर देव विद्याधर मुनिके गुरुपै गये । जहा आयकर तीन प्रदक्षिणा

देय नमस्कारकर गुरुके निकट न अति नीरे न घने दूरे बैठे। महामुनिकी मूर्ति देखि देव अर विद्याधर आश्चर्यको प्राप्त भये। कैसी है महामुनिकी मूर्ति? तपकी राशिकर उपजी जो दीप्ति ताकरि देदीप्यमान है। देखकरि नेत्रकमल फूल गये। महा विनयवान होय देव अर विद्याधर धर्मका स्वरूप पूछते भये।

कैसे है मुनि? जिनका मन प्राणियोंके हितमें सावधान है, अर रागादिक जो संसारके कारण हैं तिनके प्रसंगसे दूर है। जैसे मेघ गम्भीर ध्वनिकरि गर्जे अर बरसे, तैसे महागम्भीर ध्वनिकर जगतके कल्याणके निमित्त परम धर्मरूप अमृत बरसाते भए। जब मुनि ज्ञानका व्याख्यान करने लगे तबि मेघकासा नाद(शब्द)जान लताओंके मंडपमें जो मयूर तिष्ठे थे वे नृत्य करते भए। मुनि कहते भए—अहो देव विद्याधरो! तुम चित्त लगाय सुनो, तीन भवका आनन्द करणहारे श्रीजिनराजने जो धर्मका स्वरूप कह्या है सो मैं तुमको कहूं हूं। कईएक जो प्राणी नीचबुद्धि हैं, विचार रहित जड़चित्त हैं, ते अधर्महीको धर्म जानि सेवे हैं। जो मार्गको न जाने सो घने कालमें भी मनवांछित स्थानको न पहुंचे। मंदमति मिथ्यादृष्टि विषयाभिलाषी जीव हिंसा कर उपज्या जो अधर्म ताको धर्म जान सेवे हैं ते नरक निगोदके दुख भोगवे हैं। जे अज्ञानी खोटे दृष्टांतनिके समूहकरि भरे महापापनिके पुंज मिथ्या ग्रंथोंके अर्थ तिनकर धर्म जान प्राणिघात करे हैं, ते अनन्तसंसार भ्रमण करे हैं। जे अधर्मचर्चा करके वृथा बकवाद करे हैं ते दंडोंसे आकाशको कूटे हैं, सो कैसे कूटा जाय? जो कदाचित मिथ्यादृष्टियोंके कायक्लेशादि तप होय, अर शब्द ज्ञान भी होय, तो भी मुक्तिका कारण नाहीं। सम्यग्दर्शन बिना जो जानपना है, सो ज्ञान नाहीं। अर जो आचरण है, सो कुचारित्र है। मिथ्यादृष्टियनिका जो तप व्रत है सो पाषाण बराबर है, अर अज्ञानी पुरुषोंके जो तप है सो सूर्यमणि समान है। धर्मका मूल
जीवदया है, अर दयाका मूल कोमल परिणाम है। सो कोमल परिणाम दुष्टोंके कैसे होय? अर परिग्रहधारी पुरुषनिको आरंभ करि हिंसा अवश्य होय है। तातें दयाके निमित्त परिग्रह आरम्भ तजना

चाहिए । तथा सत्यवचन धर्म है, परन्तु जिस सत्यसे परजीवोको पीडा होय, सो सत्य नाहीं, झूठ ही है। अर चोरीका त्याग करना, परनारी तजनी, परिग्रहका परिमाण करना, संतोष व्रत धरना, इन्द्रियोके विषय निवारने, कषाय क्षीण करने, देव गुरु धर्मका विनय करना, निरंतर ज्ञानका उपयोग राखना, यह सम्यग्दृष्टि श्रावकोके व्रत तुझे कहे । अब घरके त्यागी मुनियोके धर्म सुनो । सब आरम्भका परित्याग, दशलक्षण धर्मका धारण, सम्यग्दर्शनकर युक्त महाज्ञान, वैराग्यरूप यतिका मार्ग है । महामुनि पंच महाव्रतरूप हाथीके कांधे चढे हैं, अर तीन गुप्तिरूप दृढ बकतर पहरे हैं । अर पांच समितिरूप पयादोंसे संयुक्त हैं । नानाप्रकार तपरूप तीक्ष्ण शस्त्रोंसे मंडित हैं, अर चित्तके आनंद करणहारे हैं । ऐसे दिगम्बर मुनिराज कालरूप वैरीको जीते हैं । वह कालरूप बैरी मोहरूप मस्त हाथीपर चढा है, अर कषायरूप सामंतोंसे मंडित है । यतीका धर्म परमनिर्वाणका कारण है, महामंगलरूप है । उत्तम पुरुषनिकरि सेवने योग्य है । अर श्रावक का धर्म तो साक्षात स्वर्गका कारण है, अर परम्पराय मोक्षका कारण है । स्वर्गमे देवोके समूहके मध्य तिष्ठता मनवांछित इन्द्रियोके सुखको भोग है । अर मुनिके धर्मसे कर्म काट मोक्षके अतींद्रिय सुखको पावै है, अतीन्द्रिय सुख सब बाधा रहित अनुपम है, जिसका अंत नाहीं, अविनाशी है । अर श्रावकके व्रतकरि स्वर्ग जाय तहांते चय, मनुष्य होय मुनिराज के व्रत धर परमपदको पावै है । अर मिथ्यादृष्टि जीव कदाचित तपकर स्वर्ग जाय तो चयकर एकेंद्रियादिक योनिविषै आयकर प्राप्त होय हैं, अनंत संसार भ्रमण करै है । तातैं जैन ही परम धर्म है, अर जैन ही परम तप है, जैन ही उत्कष्ट मत है । जिनराजके वचन ही सार है । जिनशासनके मार्गसे जो जीव मोक्ष प्राप्त होनेको उद्यमी हुआ, ताको जो भव धरने पडैं तो देव विद्याधर राजानिके भव तो विना चाहे सहज ही होय हैं, जैसे खेतीके करणहारेका उद्यम धान्य उपजानेका है, घास कवाड पराल इत्यादि सहज ही होय है, अर जैसे कोऊ पुरुष नगरको चाल्या ताको मार्गमें वृक्षादिकका संगम खेदका निवारण है, तैसे ही शिवपुरीको उद्यमी भए । जे महामुनि हैं तिनको इन्द्रादिक पद शुभोपयोगके कारणसे

होय हैं, मुनिका मन तिनमें नाहीं। शुद्धोपयोगके प्रभावसे सिद्ध होनेका उपाय है। अर श्रावक अर मुनिके धर्मसे जो विपरीत मार्ग है सो अधर्म जानना। जिससे यह जीव नानाप्रकार कुगतिमें दुःख भोगै है। तिर्यंच योनिमें मारण, ताडन, छेदन, भेदन, शीत, उष्ण, भूख, प्यास इत्यादि नानाप्रकारके दुःख भोग हैं। अर सदा अंधकारसू भरे जे नरक तिनविषै अत्यन्त उष्ण शीत महा विकराल पवन जहां अग्निके कण बरसैं है, नानाप्रकारके भयंकर शब्द जहां नारकियोंको घानीमें पेलै हैं, करोतेसे चीरै हैं। जहां भयकारी शाल्मली वृक्षोंके पत्र चक्र खड्ग सेलसमान हैं। तिन करि तिनके तन खंड खंड होय हैं। जहां तांबा शीशा गालकर मदिराके पीवनहारे पापियों को प्यावै हैं। अर मांस भक्षियोंको तिनहींके मांस काट काट उनके मुखमें देवें है, अर लोहके तप्त गोले सिंडासीसे मुख फाड़ फाड़ जोरावरी से मुखमें देवै है। अर परदारासंगम करनहारे पापियोंको ताती लोहेकी पुतलियोंसे चिपटावैं है। जहां मायामई सिंह, व्याघ्र, स्याल इत्यादि अनेक प्रकार बाधा करै है। अर जहां मायामयी दुष्ट पक्षी तीक्ष्णचोंचसे चूंटै है। नारकी सागरोंकी आयुपर्यंत नानाप्रकारके दुख, त्रास, मार भोगै है, मारते मरै नाहीं, आयु पूर्ण कर ही मरै है। परस्पर अनेक बाधा करै है, अर जहां मायामयी मक्षिका अर मायामयी कृमि सूई समान तीक्ष्ण मुखतैं चूंटै है। यह सब मायामयी जानने। अर पशु पक्षी तथा विकलत्रय तहां नाहीं, नारकी जीव ही है। तथा पंच प्रकारके स्थावर सर्वत्र ही है। नरकमें जो दुःख जीव भोगै है, उसके कहनेको कौन समर्थ है? तुम दोऊ कुगतिमें बहुत भ्रमे हो ऐसा मुनिने कह्या। तब यह दोऊ अपना पूर्वभव पूछते भए। संयमी मुनि कहै है कि तुम मन लगाकर सुनो—यह दुःखदाई संसार यामें तुम मोहसे उन्मत्त होकर परस्पर द्वेष धरते आपसमें मरण मारण करते अनेक योनिमें प्राप्त भए। तिनमें एक तो काशी नामा देशमें पारधी भया, दूजा श्रावस्तीनामा नगरीमें राजाका सूर्यदत्त नामा मंत्री भया। सो गृह त्यागकर मुनि भया, महा तपकर युक्त अतिरूपवान पृथ्वीमें विहार करै। सो एक दिन काशीके वनमें जीव जंतुरहित पवित्र स्थानकमें मुनि विराजे हुते। अर श्रावक श्राविका अनेक दर्शनको आए हुते,

सो वह पापी पारधी मुनिको देख तीक्ष्ण वचनरूप शस्त्रत मुनिको बींधता भया। यह विचारकर कि यह निलज्ज मागभ्रष्ट स्नानरहित मलीन मुझको शिकारमें जानेको अमंगलरूप भया है। ये वचन पारधीने कहे तब मुनिको ध्यानका विघ्न करणहारा सक्लेशभाव उपज्या। फिर मनमें विचारी कि म मुनि भया, सो मोकू क्लेशरूप भाव कर्तव्य नाहीं। ऐसा क्रोध उपज ह जो एक मुष्टि प्रहारकर इस पापी पारधीको चूर्ण कर डारू। मुनिके अष्टम स्वर्ग जायवेको पुण्य उपज्या था सो कषायके योगत क्षीण पुण्य होय मरकर ज्योतिषीदेव भया, तहात चयकर तू विद्युतकेश विद्याधर भया। अर वह पारधी बहुत ससार भ्रमणकर लकाके प्रमदनामा उद्यानमें वानर भया, सो तुमने स्त्रीके अर्थि बाण कर मारचा सो बहुत अयोग्य किया। पशुका अपराध सामन्तोको लेना योग्य नाहीं। वह वानर नवकार मत्रके प्रभावत उदधिकुमार देव भया।

ऐसा जानकर हे विद्याधरो! तुम वरका त्याग करो जिससे इस ससारमें तुम्हारा भ्रमण होय रह्या है, जो तुम सिद्धोके सुख चाहो हो तो रागद्वेष मत करो। सिद्धोके सुखोका मनुष्य अर देवोसे वरणन न होय सके, अनन्त अपार सुख ह। जो तुम मोक्षाभिलाषी हो अर भले आचारकर युक्त हो तो श्रीमुनि सुव्रतनाथकी शरण लेहु। परम भक्तिसे युक्त इन्द्रादिक देव भी तिनको नमस्कार कर ह। इन्द्र, अहमिंद्र, लोकपाल सब उनके दासोके दास ह। वे त्रिलोकीनाथ, तिनकी तुम शरण लेयकर परम कल्याणको प्राप्त होवोगे। वे भगवान ईश्वर कहिए समर्थ है, जिनके सब अर्थपूर्ण ह, कृतकृत्य ह। ये जो मुनिके वचन, तेई भयी सूर्यकी किरण, तिनकरि विद्युतकेश विद्याधरका मन कमलवत फूल्या, सुकेशनामा पुत्रको राज्य देय मुनिके शिष्य भए। राजा महाधीर ह, सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्रका आराधन कर उत्तम देव भए। किहकुपुरके स्वामी राजा महोदधि विद्याधर वानरवशीनके अधिपति चन्द्रकातमणियो के महल ऊपर विराजे हुते अमतरूप सुन्दर चर्चाकर इन्द्रसमान सुख भोगते भए। तिनतै एक विद्याधर श्वेतवस्त्र पहरे शीघ्र जाय नमस्कार कर कहता भया कि प्रभो! राजा विद्युतकेश मुनि होय स्वर्ग

सिधारे । यह सुनकर राजा महोदधिने भोगभावत विरक्त होय जैनदीक्षाविषै बुद्धि धरी, अर ए वचन कहे कि मै भी तपोवनको जाऊंगा । ये वचन सुनि राजलोक मंदिरमें विलाप करते भए, सो विलाप कर महल गूंजि उठ्या । कैसा है राजलोक ? वीणा बासुरी मृदंगकी ध्वनि समान हैं शब्द जिनके । अर युवराज भी आयकर राजासो विनती करता भया कि--राजा विद्युतकेशका अर अपना एक व्यवहार है । राजाने बालक पुत्र सुकेशको राज दिया है, सो तिहारे भरोसे दिया है । सो सुकेशके राज्यकी दृढता तुमको राखनी । जैसा उनका पुत्र तैसा तिहारा--तात कईएक दिन आप वैराग्य न धारें । आप नव यौवन हो । इन्द्रकेसे भोगनिकरि यह निःकंटक राज्य भोगो । या भांति युवराजने वीनती करी । अर अश्रुपातनिकी वर्षा करी तौ भी राजाके मनमें न आई । अर मंत्री महानयके वेत्ताने भी अति दीन होय वीनती करी कि हे नाथ ! हम अनाथ है । जैसे बेल वृक्षनिसो लगि रही हैं, तैसे तुम्हारे चरणसे लगि रहे है, तुम्हारे मनमें हमारा मन तिष्ठै है, सो हमको छाँडिकर जाबो योग्य नाहीं । या भांति बहुत विनती करी तो हू राजा न मानी । अर राणीने बहुत विनती करी, चरणोमें लौट गई । बहुत अश्रुपात डारे । कैसी है राणी ? गुणनिके समूहकरि राजाकी प्यारी हुती, सो विरक्तभावकरि राजाने नीरस देखी । तब राणी कहै है कि--हे नाथ ! हम तिहारे गुणनिकर बहुत दिननिकी बंधी, अर तुम हमको बहुत लडाई, (लाड प्यार किया) महालक्ष्मी समान हमको मायाकरि राखी, अब स्नेहपाश तोडि कहा जावो हो? इत्यादि अनेक बात करी, सो राजा चित्तमें न धरी । अर राजाके बडे २ सामंतो ने भी वीनती करी कि--हे देव ! इस नवयौवनमें राज छाडि कहा जावो हो ? सबनित मोह क्यो तज्यो ? इत्यादि अनेक स्नेहके वचन कहे परन्तु राजाने किसीकी न सुनी । स्नेहपाश छेदि, सर्वपरिग्रहका त्यागकरि, प्रतिचंद्र पुत्रको राज्य देय आप अपने शरीर हुत भी उदास होय दिगम्बरीदीक्षा आदरी । कैसे हैं राजा ? पूर्ण बुद्धिवान, महाधीर--वीर, पृथ्वी पर चन्द्रमा समान उज्ज्वल है कीर्ति जाकी, सो ध्यानरूप गजपर चढकरि तपरूपी तीक्ष्णशस्त्रसो कर्मरूपशत्रुको काट सिद्धपदको प्राप्त भए । प्रतिचन्द्र भी कईएक दिन

राजकर अपने पुत्र किहकधको राज्य देय अर छोटे पुत्र अधकरूढको युवराजपद देय आप दिगम्बर होय शुक्लध्यानके प्रभावकरि सिद्धस्थानको प्राप्त भए ।

अथानन्तर राजा किहकध, अर अधकरूढ दोऊ भाई चाद सूयसमान औरोके तेजको दाबिकरि पथ्वीपर प्रकाश करते भए। तासमय विजयाधपवतकी दक्षिणश्रेणीविष रथनूपुरनामा नगर सुरपुर समान, तहा राजा अशनिवेग महापराक्रमी, दोऊ श्रेणीके स्वामी जिनकी कीर्ति शत्रुनिका मानको हरनहारी, तिनके पुत्र विजयसिह महारूपवान, ते आदित्यपुरके राजा विद्यामदिर विद्याधर, ताकी राणी वेगवती, ताकी पुत्री श्रीमाला, ताके विवाहनिमित्त जो स्वयवर मडप रचा हुता, अर अनेक विद्याधर आए हुते, तहा अश.निवेगके पुत्र विजयसिह भी पधारे । कसी ह श्रीमाला ? जाकी कातिकरि आकाशविष प्रकाश होय रह्या है । सकल विद्याधर सिहासनपर बठे है । बडे २ राजाओके कु वर थोडे २ साथ सो तिष्ठ ह, सबनिकी दृष्टि—सोई भई नीलकमलनिकी पाँति, सो श्रीमालाके ऊपर पडी । श्रीमालाको किसीसे भी रागद्वेष नाहीं, मध्यस्थ परिणाम ह । अर ते विद्याधरकुमार मदनकरि तप्त ह चित्त जिनका, ते अनेक सविकार चेष्टा करते भए । कईएक तो माथेका मुकुट निकप था तो भी उसको सुन्दर हाथनिकरि ठीक करत भए । कईएक खजर पास धरचा था तो भी करके अग्रभागसो हिलावते भए, कटाक्षकरि करी ह दष्टि जिन्होने, अर कईएक के किनारे मनुष्य चमर ढोरते हुते, अर वीजना करते हुते तौभी लीलासहित महासु दर रूमालसे अपने मुखको वयार करते भए । अर कईएक वाम चरणपर दाहिना पाव मेलते भए । कसे ह राजानिके पुत्र ? सुन्दर रूपवान ह, नवयौवन ह, कामकलामें निपुण हैं । दष्टि तो कन्याकी ओर अर पगके अगुष्ठसो सिंहासनपर किछू लिखते भए । अर कईएक महा मणियोके समूहकरि युक्त जो सूत्र, कटिमें गाढा बध्या हुता तौभी उसे सवार गाढा बाधते भए । अर कईएक चचल ह नेत्र जिनके, निकटवर्तीनितैं केलिकथा करते भये । कईएक अपने सुन्दर कुटिल केशनिको सभारते भए । कईएक जापर भ्रमर गु जार कर ह, ऐसे कमलको दाहिने हाथसों फिरावते

पद्म
पुराण
६३

भए, मकरवको रज विस्तारते भए। इत्यादि अनेक चेष्टा राजानिके पुत्र स्वयबरमडपमें करते भए। कैसा ह स्वयबरमडप ? जाविष बीन बासुरी मवग नगारे इत्यादि अनेक बाजे बाज रहे हैं। अर अनेक मगलाचरण होय रहे ह। अर बदीजनोके समूह सत्पुरुषनिके अनेक शुभ चरित्र वणन करैं हैं। उस स्वयवरमडपमें सुमगला नामा धाय जाके एक हाथमें स्वणको छडी, एक हाथमें बेंतकी छडी, कन्याको हाथ जोड महा विनय कर कहती भई। कन्या नानाप्रकारके मणि भूषणनिकरि साक्षात कल्पवेल समान ह। हे पुत्री ! यह मातडकु डल नामा कु वर नभस्तिलकके राजा चद्रकु डल, राणी विमला तिनका पुत्र ह, अपनी कातिकरि सूयको भी जीतनहारा अति रमणीक ह, अर गुणनिका मडन ह। या सहित रमवेकी इच्छा ह तो याकू वर, यह शस्त्रशास्त्र विद्यामें निपुण ह। तब यह कन्या याको देख यौवनसो कछुइक विरया जानि आग चाली। बहुरि धाय बोली हे कन्या ! यह रत्नपुरका राजा विद्याग राणी लक्ष्मी, तिनका पुत्र विद्यासमुद्रघात नामा बहुत विद्याधरोका अधिपति, याका नाम सुन बरी ऐसा काप जस पीपलका पत्र पवनसो काप। महामनोहर हारोसे युक्त याका सुन्दर बक्षस्थल विष लक्ष्मी निवास कर ह, तेरी इच्छा होय तो याको वर। तवि याको भी सरलदृष्टिकरि देख आग चाली। बहुरि धाय बोली कैसी है धाय ? जो कन्याके अभिप्रायकी जाननहारी है। हे सुते ! यह इन्द्र-सारिखा राजा बजशीलका कु वर खेचरभानु बज्रपजर नगरका अधिपति ह, याकी दोऊ भुजानिमैं राज्यलक्ष्मी—चचल ह तो हू निश्चल तिष्ठ, याकू देखकरि अन्य विद्याधर आगिया समान भासै हैं। यह सूय समान भासै ह। एक तो मानकरि याका माथा ऊचा है ही, अर रत्ननिके मुकुटकरि अति ही शोभै ह, तेरी इच्छा है तो याके कठविष माला डारि। तवि यह कन्या कुमुदनी समान खेचरभानुको देख सकुच गई आगे चाली। तवि धाय बोली हे कुमारी ! यह राजा चद्रानन—चद्रपुरका धनी राजा चित्रागद राणी पद्मश्रीका पुत्र। याका वक्षस्थल महा सुन्दर चदनकरि चर्चित जैसैं कैलाशका तट चद्रकिरणकरि शोभै तस शोभै है। उछले है किरणोंके समूह जाविष ऐसा मोतियोंका हार याके उर-

विषै शोभै है, जैसे कैलाशपर्वत उछलते हुए नीझरनोंके समूह करि शोभै है। याके नामके अक्षरकरि वैरीनिकाहू मन परम आनन्दको प्राप्त होय है, अर दुख आताप करि रहित होय है। धाय श्रीमाला सो कहै है—हे सौम्यदर्शने! कहिए, सुखकारी है, दर्शन जाका ऐसो जो तू, तेरा चित्त या विषै प्रसन्न होय तो जैसे रात्रि चंद्रमात संयुक्त होय प्रकाश करै है, तैसे याके संगमकरि आल्हादको प्राप्त हो। तदि याविषै भी याका मन प्रीतिको प्राप्त न भया। जैसे चन्द्रमा नेत्रनिको आनन्दकारी है, तथापि कमलनिकी याविषै प्रसन्नता नाहीं। बहुरि धाय बोली—हे कन्ये! मंदरकुंज नगरका स्वामी राजा मेरुकांत राणी श्रीरंभाका पुत्र पुरंदर, मानो पृथ्वीपर इन्द्र ही अवतरया है। मेघ समान है ध्वनि जाकी अर संग्रामविषै जाकी दृष्टि शत्रु सहारवे समर्थ नाहीं, तो ताके वाणनिकी चोट कौन सहार? देव भी यासों युद्ध करवेको समर्थ नाहीं, तो मनुष्यनिकी तो कहा बात? अति उन्नत याका सिर सो तू या परि माला डारि, ऐसा कह्या तौ भी याके मनमें न आया, क्योंकि चित्तकी प्रवृत्ति विचित्र है। बहुरि धाय कहती भई—हे पुत्री! नाकार्धपुरका रक्षक राजा मनोजव राणी वेगिनी, तिनका पुत्र महाबल, सभारूप सरोवरविषै कमल समान फूल रह्या है। अर याके गुण बहुत है, गिननेमें आवें नाहीं, यह ऐसा बलवान है, जो अपनी भौंह टेढी करवे करिही पृथ्वी मंडलको वश करै है। अर विद्याबल करि आकाशविषै नगर बसावै है, अर सब ग्रहनक्षत्रादिकको पृथ्वीतलपर दिखावै है। चाहै तो एक लोक नया और बसावै, इच्छा करै तो सूर्यको चन्द्रमा समान शीतल करै, पर्वत चूर डारै, पवनको थांभै, जलका स्थलकरि डारै, स्थलका जल कर डारै। इत्यादि याके विद्याबल वर्णन किये तथापि याका मन वाविषै अनुरागी न भया। और भी अनेक विद्याधर धायने दिखाए सो कन्याने दृष्टिमें न धरे तिनको उलंघि आगे चाली। जैसे चन्द्रमाकी किरण पर्वतनिको उलंघै, ते पर्वत श्याम होय जाय तैसे जिन विद्याधरनिको उलंघि यह आगे गई तिनका मुख श्याम होय गया। सब विद्याधरनिको उलंघकरि याकी दृष्टि किहकंधकुमारपर गई। ताके कंठमें वरमाला डारी। तदि विजयसिंह विद्याधर

की दृष्टि क्रोधकी भरी, किहकध अर अधक दोऊ भाईनि पर गई। कसा ह विजयसिंह ? विद्याबल करि गर्वित ह, सो किहकध अर अधकको कहता भया कि यह विद्याधरो का समाज, तहा तुम वानर कौन अर्थ आए ? विरूप ह दर्शन तुम्हारा। क्षुद्र कहिये तुच्छ हो ? कसे हो तुम ? विनयरहित हो, या स्थानविष फलोसे नमीभूत जे वृक्ष तिनकरि सयुक्त कोई रमणीक वन नाहीं। अर गिरनिकी सुन्दर गुफा नीझरणोकी धरणहारी—जहा बानरोके समूह क्रीडा कर, सो नाहीं। लालमुखके बानरो! तुमको इहा कौनने बुलाया ? जो नीच दूत तुम्हार बुलवानेको गया होय ताका निपात करू, अपने चाकरनिको कही—इनको इहात निकाल देवो। ये वृथाही विद्याधर कहाव ह।

ये शब्द सुनकरि किहकध अधक दोनो भाई बानरध्वज महाक्रोधको प्राप्त भए, जसे हाथिनि पर सिह कोप कर। अर तिनकी समस्त सेनाके लोक अपने स्वामियोका अपवाद सुन विशेष क्रोधको प्राप्त भए। कईएक सामत अपने दाहिने हाथकरि बावीं भुजाका स्पर्श करि शब्द करते भए। अर कईएक क्रोधके आवेशकरि लाल भए ह नेत्र जिनके, सो मानो प्रलयकालके उलकापात ही हैं, महाकोपको प्राप्त भए। कईएक पृथ्वीविष दृढ बाधी ह जड जिनकी ऐसे वृक्षनिको उखाडते भए। कसे ह वृक्ष ? फल अर पल्लवनिको धार ह। कईएक थम्भ उखाडते भए, अर कईएक सामतोके अगले घाव भी क्रोधसो फट गए। तिनमेंसे रुधिरकी धारा निकसती भई, सो मानो उत्पातके मेघ ही बरस ह। कईएक गाजते भए, सो दशोदिशा शब्दकर पूरित भई। अर कईएक योधा सिरके केश विकरालते भए, मानो रात्रि ही होय गई। इत्यादि अपूर्व चेष्टाओसे वानरवशी विद्याधरनिकी सेना समस्त विद्याधरनिकी सेना सुभटनिको मारनेको उद्यमी भई। हाथियोसे हाथी, घोडोसे घोडे, रथोसे रथ युद्ध करते भए। दोनो सेनाओमें महायुद्ध प्रवरत्या। आकाशमें देव कौतुक देखते भए। यह युद्धकी वार्ता सुनकर राक्षसवशी ९५
विद्याधरोंके अधिपति राजा सुकेश, लकाके धनी वानरवशियोकी सहायताको आए। राजा सुकेश किह-कध अर अधकके परम मित्र हैं, मानो इनके मनोरथ पूर्ण करनेको ही आये ह। जसे भरत चक्रवर्तीके

समय राजा अकपनकी पुत्री सुलोचनाके निमित्त अककीर्ति जयकुमारका युद्ध भया हुता तसा यह युद्ध भया। यह स्त्री ही युद्धका मूलकारण है। विजयसिंहके अर अधकके राक्षसवशी वानरवशिनिके महायुद्ध भया, तासमय किहकध कन्याको ले गया। अर छोटे भाई अधकने खडगकरि विजयसिंहका सिर काटचा। एक विजयसिंहके विना ताकी सव सेना बिखर गई, जस एक आत्मा विना सव इन्द्रियों के समूह विघटि जाहि। तवि राजा अशनिवेग विजयसिंहका पिता अपने पुत्रका मरण सुनकरि शोक मूर्छाको प्राप्त भया। अपनी स्त्रियोके नेत्रके जलकरि सींचा ह वक्षस्थल जाका, सो घनी बेरमें मूर्छा से प्रबोधको प्राप्त भया। पुत्रके वरकरि शत्रुनिपर भयानक आकार किया, तासमय ताका आकार लोक देख न सके, मानो प्रलयकालके उत्पातका सूय ताके आकारको धर है। सव विद्याधरनिको लार लेजाकर किहकधको घेरचा। सो नगरको घेरचा जानि भाई वानरध्वज सुकेश सहित अशनिवेगसो युद्ध करवेको निकस्या। सो परस्पर महायुद्ध भया। गदाओसे, शक्तियोसे, बाणोसे, पासोसे, शेलोसे, खडगोसे महायुद्ध भया। तहा पुत्रके बधसो उपजी जो क्रोधरूप अग्निकी ज्वाला, उससे प्रज्वलित जो अशनिवेग सो अधकके सन्मुख भया। तब बडे भाई किहकधने विचारी कि मेरा भाई अधक तो नव यौवन ह, अर यह पापी अशनिवेग महा बलवान ह, सो म भाईकी मवव करू। तब किहकध आया अर अशनिवेग का पुत्र विद्युद्वाहन किहकधके सन्मुख आया। सो किहकधके अर विद्युद्वाहनके महायुद्ध प्रवरत्या ता समय अशनिवेगने अधकको मारचा। सो अधक पृथ्वीपर पडचा, जसा प्रभातका चन्द्रमा कातिरहित होय, तसा अधकका शरीर कातिरहित होय गया। अर किहकधने विद्युद्वाहनके वक्षस्थल पर शिला चलाई सो वह मूर्छित होय गिरचा। बहुरि सचेत होय, तान वही शिला किहकध पर चलाई सो किहकध मूर्छा खाय घूमने लग्या। सो लकाके धनीने सचेत किया। अर किहकधको किहकुम्पुर ले आए। तब किहकधने दृष्टि उघाड देख्या तो भाई नाहीं। तब निकटवर्तीनिको पूछने लग्या— मेरा भाई कहाँ ह? तब लोक नीचे होय रहे, अर राजलोकमें अधकके मरवेका विलाप हुवा, सो

विलाप सुन किहकध भी विलाप करने लग्या। शोकरूप अग्निकरि तप्तायमान भया है चित्त जाका, बहुत बेरतक भाईके गुणनिका चितवन करता सता शोकरूप समुद्रमें मग्न भया। हाय भाई! मेरे होते सते तू मरणको प्राप्त भया, मेरी दक्षिण भुजा भग भई। जो म एकक्षण तुझे न देखता तो महा व्याकुल होता सो अब तुम्हारे बिना प्राणनिको कसे राखू गा। अथवा मेरा चित्त वज्रका है, जो तेरा मरण सुनकर भी शरीरको नाहीं तज ह। हे बाल! तेरा वह मुलकना अर छोटी अवस्थामें महा वीरचेष्टा चितार चितार मुझको महादु ख उपज ह। इत्यादि महाविलापकरि भाईके स्नेहसो किहकध खेदखिन्न भया। तब लकाके धनी सुकेशने तथा और बडे बडे पुरुषोने किहकधको बहुत समझाया—जो धीर पुरुषनिको यह रक चेष्टा योग्य नाहीं। यह क्षत्रीयनिका वीरकुल ह, सो महा साहसरूप है। अर या शोकको पडितोने बडा पिशाच कह्या ह। कर्मोंके उदयकरि भाईयनिका वियोग होय है, यह शोक निरथक ह। यदि शोक किए फिर आगमन होय तो शोक करिये। यह शोक शरीरको शोख ह, अर पापोका बध कर ह। महामोहका मूल ह। तात या बरी शोकको तजकरि प्रसन्न होय कायमें बुद्धि धारो। यह अशनिवेग विद्याधर अति प्रबल बरी ह। अपना पीछा छोडेगा नाहीं। नाशका उपाय चितव ह, तात अब जो कतव्य होय सो विचारो। बरी बलवान होय तदि प्रच्छन्न (गुप्त) स्थानविष कालक्षेप करिये तो शत्रुसे अपमानको न पाइए। फिर कईएक दिनमें वरीका बल घट तब वरीको दबाइए। विभूति सदा एक ठौर नाहीं रह ह। तात अपनो पाताललका जो बडोस आसरेकी ठौर है, सो कुछ काल तहा रहिये। जो अपने कुलमें बडे ह ते वा स्थानककी बहुत प्रशसा करे हैं—जाको देखे स्वगलोकमें भी मन न लाग। तात उठो, वह जायगां वरियोसे अगम्य ह। या भाति राजा किहकधको राजा सुकेशीने बहुत समझाया तो भी शोक न छाड। तदि राणी श्रीमालाको दिखाई सो ताके देखनेत शोकनिवृत्ति भया। तब राजा सुकेशो अर किहकिध समस्त परिवारसहित पाताललकाको चाले, अर अशनिवेगका पुत्र विद्युद्वाहन तिनके पीछें लग्या। अपने भाई विजयसिहके वरत महा क्रोधवत शत्रु-

निके समूल नाश करनेको उद्यमी भया। तदि नीतिशास्त्रके पाठियोने जो शुद्धबुद्धिके पुरुष है, समझाया जो अवी भाग तो ताके पीछें न लाग। अर राजा अशनिवेगने भी विद्युद्वाहनसो कही जो अघकने तुम्हारा भाई हत्या, सो तो म अधकको रणमें मारया। तात हे पुत्र! इस हठसो निवृत होवो। दु खीपर दया ही करनी। जिस कायरने अपनी पीठ दिखाई सो जीवित ही मतक ह। ताका पीछा क्या करना? या भाति अशनिवेगने विद्युद्वाहनको समझाया। इतनेमें राक्षसवशी अर वानरवशी पाताललका जाय पहुँचे। कसा ह नगर? रत्नोक प्रकाशकरि शोभायमान ह। तहा शोक अर हर्ष धरते दोए निर्भय रहै। एक समय अशनिवेग शरदमें मेघपटल देखे, अर उनको विलय होत देखे, विषयोसे विरक्त भए। चित्त विष विचारी 'यह राज सपदा क्षणभगुर ह, मनुष्यजन्म अति दुलभ ह, सो म मुनिव्रत धरि आत्मकल्याण करू।' ऐसा विचारि सहसारि पुत्रको राजदेय आप विद्युद्वाहन सहित मुनि भए। अर लकाविष पहिले अशनिवेगने निर्घातनामा विद्याधर थानै राख्या हुता सो अब सहसारकी आज्ञाप्रमाण लकाविष थान रह। एक समय निर्घात दिग्विजयको निकस्या सो सम्पूण राक्षस द्वीपविष राक्षसनिका सचार न देख्या। सब ही घुस रहे ह, सो निर्घात निर्भय लकामें रह ह। एक समय राजा किहकध राणी श्रीमालासहित सुमेरु पवतसो दशन कर आव था, मागमें दक्षिणसमुद्रके तटपर देवकुरुभोगभूमि समान पृथ्वीमें करनतटनामा वन देख्या, देखकरि प्रसन्न भए, अर श्रीमाला राणीसो कहते भए। राणीके सुन्दर वचन वीणाके स्वर समान ह। हे देवी! तुम यह रमणीक वन देखो। जहा वक्ष फूलोकरि सयुक्त ह। निर्मल नदी बह ह, अर मेघके आकार समान धरणीमाली नामा पवत शोभै ह। पवतके शिखर ऊचे ह, अर कुदपुष्प समान उज्ज्वल जलके नीझरने झरे ह। सो मानो यह पवत हस ही ह। अर वृक्षोकी शाखासे पुष्प पड ह। सो मानो हमको पुष्पाजलि ही देवे ह। अर पुष्पनिकी सुगध करि पूण पवनतै हालते जो वक्ष तिनकरि मानो यह वन हमको देखि उठिकरि ताजिम ही कर ह। अर वक्ष फलनिकरि नम्रीभूत होय रहे ह, सो मानो हमको नमस्कार ही कर। जसै गमन करते पुरुषोंको स्त्री अपने गुणनितै

मोहितकर आगे जाने न दे है, खडा कर है, तैसे यह वन अर पर्वतकी शोभा हमको मोहितकर राखे है, आगे जाने न देहै। अर मैं भी इस पर्वतको उलंघ आगे नहीं जाय सकूं, तातें यहां ही नगर बसाऊंगा। जहां भूमिगोचरियोंका गमन नहीं। पाताललंकाकी जगह ऊंडी है, और तहां मेरा मन खेदखिन्न भया है। सो अब यहां रहनेतें मन प्रसन्न होगया। या भांति राणी श्रीमालासों कहिकर आप पहाडसों उतरे। तहां पहाड ऊपर स्वर्गसमान नगर बसाया। नगरका किहकंधपुर नाम धरया। तहां आप सब कुटुम्ब सहित निवास किया। कैसा है राजा किहकंध? सम्यग्दर्शन करि संयुक्त है, अर भगवानकी पूजाविषै सावधान है। सो राजा किहकंधकी राणी श्रीमालाके योगतैं सूर्यरज अर रक्षरज दोय पुत्र भए, अर सूर्यकमला पुत्री भई, जाकी शोभकरि सब विद्याधर मोहित हुए।

अथानन्तर मेघपुरका राजा मेरु ताकी राणी मघा, पुत्र मृगारिदमन तानें, किहकंधकी पुत्री सूर्य कमला देखी। सो ऐसा आसक्त भया कि रातदिवस चैन जाके नाहीं पडै। तब वाके अर्थि वाके कुटुम्ब के लोगोंने सूर्यकमला जाची। सो राजा किहकंधने राणी श्रीमालासे मन्त्रकर अपनी पुत्री सूर्यकमला मृगारिदमनको परणाई सो परणकर जावै था। मार्गमें कर्णपर्वत विषै कर्णकुण्डल नगर बसाया।

अर लंकापुर कहिये पाताललंका, उसमें सुकेश राजा, इन्द्राणी नामा राणी, ताके तीन पुत्र भये। माली, सुमाली अर माल्यवान। बडे ज्ञानी, गुण ही हैं आभूषण जिनके। अपनी क्रीडाओंसे माता पिताका मन हरते भए। देवों समान है क्रीडा जिनकी। सो तीनों पुत्र बडे भए। महा बलवान, सिद्ध भई है, सब विद्या जिनको। एक दिन माता पिताने इनको कह्या कि जो तुम क्रीडा करनेको किहकंधपुरकी तरफ जाओ तो दक्षिणके समुद्रकी ओर मत जाओ। तदि ये नमस्कारकर माता पिताको कारण पूछते भए। तब पिताने कही हे पुत्रो! यह बात कहिवेकी नाहीं। तब पुत्रोंने बहुत हठि करि पूछी तब पिताने कही कि लंकापुरी अपने कुलक्रमतें चली आवै है। श्री अजितनाथ स्वामी दूसरे तीर्थंकरके समयसो लगायकर अपना इस खंडमें राज है। आगै अशनिवेगके अर अपने युद्ध भया। सो परस्पर

बहुत मरे, लंका अपनेत छूटी। अशनिवेगने निर्घात विद्याधरकू थापि राख्या। सो महाबलवान है, अर क्रूर है, तान देश देशमें हलकारे राखे है। अर हमारा छिद्र हेरे है। यह पिताके दुखकी वार्ता सुनकर माली निश्वास नाखता भया, अर आंखनित आंसू निकसे। क्रोधसे भर गया है चित्त जिसका, अपना भुजाओंका बल देखकरि पितासो कहता भया कि हे तात! एते दिनोतक यह बात हमसो क्यों न कही, तुमने स्नेहकरि हमको ठगे। जे शक्तिवंत होयकरि विना काम किए निरथक गाज है, ते लोकविषै लघुताको पावै है। सो अब हमको निर्घातपर चढनेकी आज्ञा देओ, हमारे यह प्रतिज्ञा है—लंकाको लेकरि ही और काम करं। तवि माता पिताने महा धीर वीर जान इनको स्नेहदृष्टिसे आज्ञा दी। तब ये पाताललंकासो ऐसे निकसे मानो पाताललोकसे भवनवासी देव निकसे है। वैरी ऊपर अतिउत्साहित चाले। कैसे है तीनो भाई! शस्त्रकलामें महाप्रवीण है। समस्त राक्षसोकी सेना इनके लार चाली। त्रिकूटाचल पर्वत दूरसो देख्या। देखकरि जान लिया कि लंका याके नीचे बसै है। सो मानो लंका लेहीली। मार्गविषै निर्घातके कुटुम्बी जो दैत्यादि कहावै, ऐसे विद्याधर मिले सो युद्ध करके बहुत मरे। कईएक पायन परे, कईएक स्थान छोड भाग गये, कईएक वैरीके कटकमें शरण आये। पृथ्वीमें इनकी बडी कीर्ति विस्तरी। निर्घात इनका आगमन सुन लंकासो बाहिर निकस्या। कैसा है निर्घात? जो युद्धमें महाशूर वीर है, छत्रकी छायाकरि आच्छादित किया है सूर्य जान। तब दोऊ सेनामें महायुद्ध भया। मायामई हाथिनिकरि, घोडनिकरि, विमाननिकरि, रथनिकरि परस्पर युद्ध प्रवरत्या। हाथिनिके मद झरवेत आकाश जलरूप होय गया। अर हाथनिके कान, ते ही भए ताडके बीजने, उनकी पवनसे आकाश मानो पवन रूप हो गया। परस्पर शस्त्रोंके घातकरि प्रकटी जो अग्नि, ताकरि मानो आकाश अग्निरूप हीहो गया। या भांति बहुत युद्ध भया। तब मालीने विचारी कि दीननिके मारवेकरि कहा होय? निर्घातहीको मारिये, यह विचारि निर्घातपर आए। ऐसे शब्द कहते भये—कहा वह पापी निर्घात है? सो निर्घातको देखकरि प्रथम तो तीक्ष्ण बाणोकरि रथत नीचे डारया, फेर वह उठया, महायुद्ध किया। तब मालीने खड्ग-

करि निर्घात को मारया। सो ताकू मरया जानकर ताके वंशके भागकरि विजयार्धविषै अपने अपने स्थानक गये, अर कईएक कायर होय मालीहीकी शरण आये। माली आदि तीनो भाइयनिने लंकामें प्रवेश किया। कसी ह लंका ? महा मंगलरूप ह। माता पिता आदि समस्त परिवारनिको लंकामें बुलाया। बहुरि हेमपुरका राजा मेघ विद्याधर, रानी भोगवती, तिनकी पुत्री चन्द्रमती सो मालीने परणी। कसी ह चन्द्रमती ? मनको आनन्दकरणहारी ह। अर प्रीतिकूट नगरका राजा प्रीतिकांत, राणी प्रीतिमती, तिनकी पुत्री प्रीतिसंज्ञका सो सुमाली परणी। अर कनककांत नगरका राजा कनक, राणी कनकश्री, तिनकी पुत्री कनकावली सो माल्यवानने परणी। इनके कईएक पहिली राणी हुती, तिनमें यह प्रथम राणी भई। अर प्रत्येक के हजार २ राणी कछुइक अधिक होती भई। मालीने अपने पराक्रम सें विजयार्धकी दोऊ श्रेणी वश करी। सब विद्याधर इनकी आज्ञा आशीर्वादकी नाइ माथ चढावते भए। कइएक दिनोमें इनके पिता राजा सुकेश मालीको राज देय महा मुनि भए। अर राजा किहकंध अपने पुत्र सूर्यरजको राज देय वरागी भए। ए दोऊ परम मित्र राजा सुकेश अर किहकंध समस्त इन्द्रियनिके सुखका त्यागकर अनेक भवके पापोका हरणहारा जो जिनधर्म ताको पायकर सिद्ध स्थानके निवासी भये। हे श्रेणिक ! या भांति अनेक राजा प्रथम राज्य अवस्थामें अनेक विलास कर फिर राज तजकर आत्मध्यानके योगसे समस्त पापनिको भस्म कर अविनाशी धामको प्राप्त भए। ऐसा जानकरि हे राजा ! मोहको नाशकर शांतिदशाको प्राप्त होउ।

इति श्रीरविषणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रन्थ ताकी भाषा वचनिकाविषै वानरवंशीनिका निरूपण है जाविषै ऐसा छठा पर्व पूर्ण भया ॥ ६ ॥

अथानन्तर रथनूपुर नगरमें राजा सहसार राज्य कर। ताके राणी मानसुन्दरी, रूप अर गुणो में अति सुन्दर, सो गर्भिणी भई। अत्यन्त कृश भया ह शरीर जाका, शिथिल होय गए ह सब आभूषण जाके। तब भरतार बहुत आदरसो पूछी—हे प्रिए ! तेरे अंग काहेतै क्षीण भए ह, तेरे कहा अभिलाषा

ह । जो अभिलाषा होय सो म अवार ही समस्त पूण करू, हे देवी ! तू मेरे प्राणोसे अधिक प्यारी ह या भाति राजाने कही । तब राणी बहुत विनयकर पतिसो वीनती करती भई कि हे देव ! जा दिनतैं बालक मेरे गभमें आया ह, ता दिनत यह मेरी वाछा ह कि इ द्रकीसी सम्पदा भोगू । सो मने लाज तज आपके अनुग्रहसे आपसो अपना मनोरथ कह्या ह, नातर स्त्रीको लज्जा प्रधान ह, सो मनकी बात कहिवेमें न आव । तदि राजा सहसारने जो महा विद्याबलकरि पूण हुता, सो तिनने क्षणमात्रमे याके मनोरथ पूण किए । तब यह राणी महा आनन्दरूप भई, सब अभिलाषा पूण भई, अत्यन्त प्रताप अर कातिको धरती भई । सूय ऊपर होय निसर, सो वाहूका तेज न सहार सके । सबदिशानिके राजा निपर आज्ञा चलाया चाह । नव महीने पूण भए तदि पुत्रका ज म भया । कसा ह पुत्र ? समस्त बाधवनिको परम सम्पदाका कारण ह ! तब राजा सहसारने हर्षित होय पुत्रके जन्मका महान उत्सव किया । अनेक बाजानिके शब्द करि दशो दिशा शब्दरूप भई । अर अनेक स्त्री नत्य करती भइ । राजाने याचकजनको इच्छापूण दान दिया । ऐसा विचार न किया जो यह देना न देना, सब ही दिया । अर हाथी गरजते हुते ऊची सू डकरि नत्य करते भए । राजा सहसार े पुत्रका इन्द्र नाम धरया, जादिन इ द्रका जन्म भया तादिन समस्त बरीनिके घरमें अनेक उत्पात भए, अपशकुन भए । अर भाइयनिके तथा मित्रनिके घरमें महा कल्याणके करणहारे शुभ शकुन भए । अर इन्द्र कु वरकी बाल क्रीडा तरुण पुरुषोकी शक्तिको जीत ेहारी, सु दर कमकी करणहारी बरियोका गव छेदती भइ । अनुक्रमकरि कु वर यौवनको प्राप्त भया । कसा ह कु वर ? अप े तेजकरि जीत्या ह सूयका तेज जिस े, अर कातिसे जीत्या ह च द्रमा, अर स्थिरतासे जीत्या ह पवत, अर विस्तीण ह वक्षस्थल जाका, दिग्गजनिके कु भस्थल समान ऊचे ह काधे जाके, अर अति दढ सुन्दर ह भुजा—दश दिशानि-की दाबनहारी । अर दोऊ जघा जिसकी महा सु दर यौवनरूप महलके थाभ े को थभे समान होती भइ । विजयाध पवतविष सब विद्याधर जा े सेवक किये । जो यह आज्ञा कर सो सब करे । यह महा

विद्याधर बलकर मडित, यान अपने यहा सब इन्द्रकीसी रचना करी। अपना महल इन्द्रके महल समान बनाया, अडतालीस हजार विवाह किये। पटरानीका नाम शची धरचा, छब्बीस हजार नटवा नृत्य करै, सदा इन्द्रकसा अखाडा रह। महामनोहर अनेक इन्द्रकसे हाथी, घोडे, अर चन्द्रमा समान महा उज्ज्वल ऊचा आकाशके आगनमें गमन करनेवाला, किसीसे निवारचा न जाय, महा बलवान, अष्टदत करि शोभित गजराज, जिसका महा सुन्दर सूड सो पाट हाथी उसका नाम ऐरावत धरचा। चतुरनिकायके देव थापे, अर परम शक्तियुक्त चार लोकपाल थापे—सोम १, वरुण २, कुवेर ३, यम ४। अर सभा का नाम सुधर्मा, बज, आयुध तीन सभा, अर उवशी मेनका रभा इत्यादि हजारा नत्यकारिणी तिनकी अप्सरा सज्ञा ठहराई। सेनापतिका नाम हिरण्यकेशी, अर आठ बसु थापे, अर अपने लोकनिको सामानिक त्रायस्त्रिशतादि दश भेद देवसज्ञा धरी। गानेवालोका नाम नारद १, तुम्बुरु २, विश्वासु ३, यह सज्ञा धरी। मन्त्रीका नाम वहस्पति, इत्यादि सव रीति इन्द्र समान थापी। सो यह राजा इन्द्र समान सब विद्यारधरनिका स्वामी पुण्यके उदयकरि इन्द्रकसी सम्पदाका धरनहारा होता भया। ता समय लका में माली राज कर, सो महामानी जस आगे सव विद्याधरनिपर अमल कर था तसा ही अबहू कर, इन्द्रकी शका न राख, विजयाधक समस्त पुरोमे अपनी आज्ञा राख। सव विद्याधर राजानिके राजमे महारत्न हाथी, घोडे, मनोहर कन्या, मनोहर वस्त्राभरण, दोनो श्रेणियोमे जो सार वस्तु होयसो, मगाय लेय। ठौर २ हलकारे फिरवे कर। अपने भाइयनिके गवत महा गववान पथ्वीपर एक आपहीको बलवान जान।

अब इन्द्रके बलत विद्याधर लोक मालीकी आज्ञा भग करने लगे। सो यह समाचार मालीने सुना तब अपने सव भाई, अर पुत्र, अर कुटुम्ब समस्त राक्षसवशी अर किहकधके पुत्रादि समस्त वानरवशी तिनको लार लेय विजयाध पवतके विद्याधरनि पर गमन किया। कईएक विद्याधर अति ऊचे विमानो पर चढे ह। कईएक चालते महल समान सुवणके रथोपर चढे ह, कईएक कालो घटा समान हाथियो

पर चढे हैं, कईएक मनसमान शीघ्रगामी घोडोपर चढे, कईएक सिंह शार्दूलोपर चढे, कईएक चीतोपर चढे, कईएक ऊंटोपर, कईएक खच्चरोपर, कईएक भैंसोपर, कईएक हंसोपर, कईएक स्यालोपर इत्यादि अनेक मायामई वाहनोपर चढे, आकाशका आंगन आच्छादते हुवे, महा देदीप्यमान शरीर धरकर मालीकी लार चढे। प्रथम प्रयाणमें ही अपशकुन भए। तदि मालीते छोटा भाई सुमाली कहता भया। कैसा है वह? बडे भाईमें है अनुराग जाका। हे देव! यहां ही मुकाम करिये, आगे गमन न करिये, अथवा लोकामें उलटा चलिये, आज अपशकुन बहुत भए हैं। सूखे वृक्षकी डालीपर एक पगको संकोचे कागतिष्ठ्या है। अत्यन्त आकुलित है चित्त जाका, बारबार पंख हलावै है, सूखा काठ चोंचमें लिए सूर्यकी ओर देखै है, अर क्रूरशब्द बोलै है। सो हमारा गमन मनै करै है, अर दाहिनी ओर रौद्र है मुख जाका, ऐसी स्यालिनी रोमांच धरती हुई भयानक शब्द करै है। अर सूर्यके बिंबके मध्य प्रविष्ट हुई जलरीभो रुधिर झरता देखिये है। अर मस्तकरहित धड नजर आवै है। अर महा भयानक वज्रपात होय है। कैसा है वज्रपात? कम्पाया है समस्त पर्वत जाने। अर आकाशमें बिखरि रहे हैं केश जिसके ऐसी मायामई स्त्री नजर आवै है। अर गर्दभ आकाशकी तरफ ऊंचा मुखकर खुरके अग्रभागकरि धरतीको खोदता हुवा कठोर शब्द करै है। इत्यादि अपशकुन होय है। तदि राजा माली सुमालीतै हंसकर कहते भए। कैसा है राजा माली? अपनी भुजानिके बलकरि शत्रुनिको गिनते नाहीं। अहो वीर! वैरिनको जीतना मनमें विचार, विजय हस्तीपर चढे महा पुरुष धीरताको धरते कैसे पीछे बाहुडै? जे शूरवीर—दांतनिकरि डसा है अधर जिन्होंने, अर टेढी करी है भौंह जिन्होने, अर विकराल है मुख जिनका, अर वैरीनिको डरानेवाली है आंख जिन्होंकी, तीक्ष्ण बाणनिकरि पूर्ण, अर बाजे है अनेक बाजे जिनके, अर मदझरते हाथिनिपर चढे हैं, अथवा तुरंगनपर चढे हैं, महावीररसके स्वरूप आश्चर्य की दृष्टि करि देवोंने देखे जो सामंत वे कैसे पाछे बाहुडैं? अर मैंने या जन्ममें अनेक लीलाविलास किये, सुमेरुपर्वतकी गुफा तहां नन्दनवन आदि मनोहरवन तिनमें देवांगना समान अनेकराणीसहित

नानाप्रकारकी क्रीडा करी, अर आकाशमें लगरहे ह शिखर जिनके, ऐसे रत्नमयी चैत्यालय जिनेंद्रदेवके कराए, विधिपूवक भाव सहित जिनेंद्रदेवकी पूजा करी, अर अर्थी जो जाचे सो दिया। ऐसें किमिच्छिक दान दिये। इस मनुष्यलोकमें देवोकेसे भोग भोगे। अर अपने यशकरि पृथ्वीपर वश उत्पन्न किया। तात या जन्ममें तो हम सब बातोमें इच्छा पूण ह। अब जो महा सग्राममें प्राणोंको तजै तो यह शूरवीरनिकी रीति ही ह। परन्तु क्या हम लोकोसे यह कहावें कि माली कायर होय, पाछे हट गया, अथवा तहा ही मुकाम किया। यह निदाके लोकनिके शब्द धीरवीर कसे सुनें? धीर वीरोका चित्त क्षत्रियवतमें सावधान ह। भाईको या भाति कहि आप वताडके ऊपर सेना सहित क्षणमात्रमें गये। सब विद्याधरो पर आज्ञा पत्र भेजे। सो कईएक विद्याधरनने न माने, तिनके पुर ग्राम उजाडे, अर उद्याननिके वृक्ष उपार डारे, जसें कमलके वनको मस्त हाथी उखाड तैसैं राक्षसजातिके विद्याधर महाक्रोधको प्राप्त भए ह। तदि प्रजाके लोग मालीके कटकत डरकर कापते सते रथनूपुर नगरमें राजा सहसारके शरण गये। चरणनिको नमस्कारकर दीनवचन कहते भए कि—हे प्रभो! सुकेशका पुत्र माली राक्षसकुली समस्त विद्याधरनिपर आज्ञा चलाव, सब विजयार्धमे हमको पीडा कर ह। आप हमारी रक्षा करो, तब सहसारने आज्ञा करी कि हे विद्याधरो! मेरा पुत्र इद्र ह, ताके शरण जाय सब वीनती करो। वह तुम्हारी रक्षा करनेको समथ ह। जस इन्द्र स्वगलोककी रक्षा कर ह तस यह इन्द्र समस्त विद्याधरोका रक्षक है।

तब समस्त विद्याधर इन्द्रप गए, हाथ जोडि नमस्कार करि सब वत्तात कहे। तब इद्र माली ऊपर क्रोधायमान होय गर्वकरि मुलकते सते सर्वलोकनिको कहते भए। कसे है इन्द्र? पास धरचा जो वज्रायुध ताकी ओर देख्या, लाल भए ह नेत्र जिनके। म लोकपाल लोकनिकी रक्षा करू, जो लोकका कटक होय ताहि हेरकर मारू, अर वह आप ही लडने को आया तो या समान और क्या? रणके नगारे बचाए। कसे है ते वादित्र? जिनके श्रवणकरि माते हाथी गजके बधनको उखाड है। समस्त

विद्याधर युद्धका साजकरि इन्द्रपै आए, बकतर पहरे । हाथमें अनेकप्रकारके आयुध लिए, परम हर्ष धरतेसते कईएक रथनिपर, कईएक घोडनिपर चढे तथा हस्ती ऊट सिंह व्याघ्र स्याली तथा मृग हंस छेला, बलद, मींडा इत्यादि मायामई अनेक वाहनोपर बैठि आए । कईएक विमानमें बैठे, कईएक मयूरोपर चढे, कईएक खच्चरनिकरि चढकर आए । इन्द्रने जो लोकपाल थापे हैं, ते अपने अपने वर्गसहित नानाप्रकारके हथियारनिकरयुक्त भोंह टेढी किये आए । भयानक है मुख जिनके । पाट हस्तीका नाम ऐरावत तापर इन्द्र चढे बकतर पहिरे शिरपर छत्र फिरते हुए, रथनूपुरते बाहिर निकसे । सेनाके विद्याधर जो देव कहावै, सो इन देवनिके अर लंकाके राक्षसनिके साथ महायुद्ध प्रवरत्या ।

हे श्रेणिक ! ये देव अर राक्षस समस्त विद्याधर मनुष्य हैं । नमि विनमिके वंशके हैं । ऐसा युद्ध प्रवरत्या जो कायरनिते देख्या न जाय । हाथियनिते हाथी, घोडनिते घोडे, पयादनिते पयादे लडे । सेल मुद्गर, सामान्य चक्र, खडग, गौफण, मूसल, गदा, कनक पाश इत्यादि अनेक आयुधनिकरि युद्ध भया । सो देवोकी सेनाने कछुइक राक्षसोका बल घटाया, तब वानरवंशी राजा सूर्यरज रक्षरज राक्षसवंशियोके परममित्र राक्षसोकी सेनाको दव्या देख युद्धको उद्यमी भए । सो इनके युद्धते समस्त इन्द्रकी सेनाके लोक देवजातिके विद्याधर पाछे हटे । इनका बल पाय राक्षसकुली विद्याधर लंकाके लोक देवनितै महायुद्ध करते भए । शस्त्रोके समूहसे आकाशमें अंधेरा कर डारया । राक्षस अर वानरवंशियोसे देवोका बल हरया देख इन्द्र आप युद्ध करनेको उद्यमी भए । सो समस्त राक्षसवंशी अर वानरवंशी मेघरूप होकर इन्द्ररूप पर्वतपर गाजते हुये शस्त्रकी वर्षा करते भये । सो इन्द्र महायोधा कुछ भी विषाद न करता भया । किसी का वाण आपको न लगने दिया । सबनिके बाण काट डारे, अर अपने बाणनिकरि कपि अर राक्षसोको दबाये । तब राजा माली लंकाके धनी अपनी सेनाको इन्द्रके बलकरि व्याकुल देख इन्द्रते युद्ध करणेको आप उद्यमी भये । कैसे है राजा माली ? क्रोधकरि उपज्या जो तेजताकरि समस्त आकाशमें किया है उद्योत जिन्होने ! इन्द्रके अर मालीके परस्पर महायुद्ध प्रवरत्या ।

मालीके ललाट पर इद्रने वाण लगाया सो मालीने उस वाणकी वेदना न गिनी, अर इन्द्रके ललाट पर शक्ति लगाई, सो इन्द्रके रुधिर झरने लगा। अर माली उछलकर इन्द्रप आया, तब इन्द्रने महा क्रोधसे सूर्यके बिब समान चक्रसे मालीका शिर काटचा, माली भूमिपर पड्या, तब सुमाली मालीको मुवा जानि अर इन्द्रको महा बलवान जानि सब परिवार सहित भाग्या। मालीको भाईका अत्यन्त दुख हुवा। जब यह राक्षसवशी अर वानरवशी भागे तब इन्द्र इनके पीछे लाग्या। तब सौमनामा लोकपालने जो स्वामीकी भक्तिमें तत्पर है—इन्द्रसे विनती करी कि हे प्रभो! जब मो सारिखा सेवक शत्रुनिके मारनेको समर्थ है तब आप इनपर क्यो गमन करे, सो मुझे आज्ञा देवो। शत्रुनिको निर्मूल करूं। तब इन्द्रने आज्ञा करी, यह आज्ञा प्रमाण इनके पीछे लाग्या। अर वाणनिके पुंज शत्रुओपर चलाये, सो कपि अर राक्षसनिकी सेना वाणनिकरि बेधीगई। जैसे मेघकी धाराकरि गायनिके समूह व्याकुल होय तैसे तिनकी सब सेना व्याकुल भई।

अथानन्तर अपनी सेनाको व्याकुल देखि सुमालीका छोटाभाई माल्यवान बाहुडकर सौमपर आये अर सौमकी छातीमें भिण्डिपाल नामा हथियार मारा, सो मूर्छित होया। सो जबलग वह सावधान होय तब लग राक्षसवशी अर वानरवशी पाताललका जाय पहुचे। मानो नया जन्म भया, सिहके मुखसे निकले। सौमने सावधान होकर सब दिशा शत्रुओसे शून्य देखी। तब लोकनिकरि गाइये जस जाके, बहुत प्रसन्न होय इन्द्रके निकट गया। अर इन्द्र विजय पाय ऐरावत हस्तीपर चढ्या लोकपाल निकरि मंडित शिरपर छत्र फिरते चँवर ढुरते, आगे अप्सरा नृत्य करती बडे उत्साहसे महाविभूति सहित रथनूपुरविषे आये। कैसा है रथनूपुर? रत्नमयी वस्त्रोकी ध्वजाओसे शोभे है, ठौर ठौर तोरणनिकरि शोभायमान है। जहा फूलनिके ढेर होय रहे है, अनेक प्रकार सुगधसे देवलोक समान है। १०७
सुन्दर नारियाँ झरोखोमे बैठी इन्द्रकी शोभा देखे है। इन्द्र राजमहलमें आए, अति विनयथकी मातापिताके पायन पडे। तदि मातापिताने माथे हाथ धरचा, अर गात्र स्पर्शे, आशीष दई। इन्द्र वैरीनिकूं

जीति अति आनन्दको प्राप्त भया । प्रजापालनविषै तत्पर इन्द्रके समान भोग भोगे । विजयार्ध पर्वत तो स्वर्ग समान अर यह राजा इन्द्र सब लोकविषै प्रसिद्ध भया ।

गौतम स्वामी राजा श्रेणिकसे कहै है—कि हे श्रेणिक ! अब लोकपालकी उत्पत्ति सुनो । ये लोकपाल स्वर्गलोकतै चयकर विद्याधर भए है । राजा मकरध्वज राणी अदिति, तिनका पुत्र सोम नामा लोकपाल महा कांतिधारी, सो इन्द्रने ज्योतिपुर नगरमें थापा अर पूर्व दिशाका लोकपाल किया । अर राजा मेघरथ, राणी वरुणा, उनका पुत्र वरुण, उसको इन्द्रने मेघपुर नगरमें थापा अर पश्चिम दिशाका लोकपाल किया, जाके पास पाश नामा आयुध—जिसका नाम सुनकर शत्रु अति डरै । अर राजा किहकधसूर्य, राणी कनकावली, उसका पुत्र कुबेर महा विभूतिवान, उसको इन्द्रने कांचनपुरमें थापा,अर उत्तरदिशाका लोकपाल किया । अर राजा बालाग्नि विद्याधर, राणी श्रीप्रभा,उसका पुत्र यम नामा तेजस्वी उसको किहकधपुरमें थापा,अर दक्षिणदिशाका लोकपाल किया । अर असुर नामा नगर ताके निवासी विद्याधर,वे असुर ठहराये । अर यक्षकीर्ति नामा नगरके विद्याधर यक्ष ठहराए । अर किन्नर नगरके किन्नर, गंधर्व नगरके गंधर्व, इत्यादिक विद्याधरोकी देव संज्ञा धरी । इन्द्रकी प्रजा देव जैसी क्रीडा करै । यह राजा इन्द्र मनुष्य योनिमे लक्ष्मीका विस्तार पाय, लोगोसे प्रशंसा पाय, आपको इन्द्र ही मानता भया, अर कोई स्वर्गलोक है, इन्द्र है, देव है—यह सब बात भूल गया । अर आप ही को इन्द्र जान, विजयार्धगिरिको स्वर्ग जाना, अपने थाप लोकपाल जाने, अर विद्याधरोको देव जाने । या भांति गर्वको प्राप्त भया कि मोतै अधिक पृथ्वीपर और कोऊ नाहीं, मै ही सबकी रक्षा करूं, यह दोनो श्रेणिका अधिपति होय ऐसा गर्वा कि मै ही इन्द्र हूं ।

अथानन्तर कौतुकमंगल नगरका राजा व्योमबिंदु पृथ्वीपर प्रसिद्ध, उसके राणी मंदवती, उसके दो पुत्री भई, बडी कौशिकी छोटी केकसी । सो कौशिकी राजा विश्रवको परणाई । जे यज्ञपुर नगरके धनी, वैश्रवण पुत्र भया । अति शुभ लक्षणका धारणहारा, कमल सारिखे नेत्र जाके, उसको इन्द्रने बुलाकर

तिसका बहुत सन्मान किया, अर लकाके थाने राखा। अर कहा मेरे आगे चार लोकपाल हैं,तैसे तू पाचवा महा बलवान है। तब वश्रवणने विनती करी कि—"प्रभो जो आज्ञा करो, सो ही मै करू" ऐसा कह इन्द्रको प्रणाम कर लकाको चल्या। वो इन्द्रकी आज्ञा प्रमाण लकाके थाने रह। जाको राक्षसोकी शका नाहीं, जिसकी आज्ञा विद्याधरोके समूह अपने सिर पर धरै है।

पाताललकाविष सुमालीके रत्नश्रवा नामा पुत्र भया। महा शूरवीर, दातार, जगत का प्यारा, उदारचित्त मित्रनिके उपकार निमित्त ह जीवन जाका, अर सेवकोके उपकार निमित्त है प्रभुत्व जाके, पडितोके उपकार निमित्त ह प्रवीणपणा जाका, भाइयोके उपकार निमित्त ह लक्ष्मीका पालन जाके, दरिद्रियोके उपकार निमित्त ह ऐश्वय जाका, साधुओको सेवा निमित्त ह शरीर जाका, जीवन के कल्याण निमित्त ह वचन जाका, सुकृतके स्मरण निमित्त ह मन जाका, धमके अर्थि ह आयु जाकी, शूरवीरताका मूल ह स्वभाव जाका, सो पिता समान सब जीवोंको दयालु, जाके परस्त्री माता समान, परद्रव्य तृण समान, पराया शरीर अपने शरीर समान, महा गुणवान, जो गुणवतोकी गिनती करै तहा याको प्रथम गिणे, अर दोषवन्तोकी गिणतीविष नहीं आव, उसका शरीर अद्भुत परमाणुओं कर रचा है, जसी शोभा इसमें पाइये तसी और ठोर दुलभ ह, सभाषणमे मानो अमृत ही सीचें ह, अर्थियोको महादान देता भया। धम अथ काममें बुद्धिमान, धमका अत्यत प्रिय, निरतर धमहीका यत्न कर, जन्मान्तरसे धमको लिये आया है, जिसके बडा आभूषण यश ही ह, अर गुण ही कुटुम्ब ह, सो धीर वीर वरियोका भय तजकर विद्या साधनके अथ पुष्पक नामा वनमे गया। कैसा है वह वन ? भूत पिशाचादिकके शब्दसे महा भयानक ह। यह तो वहा विद्या साधे है, अर राजा व्योमबिंदुने अपनी पुत्री केकसी इसकी सेवा करणेको इसके ढिग भेजी, सो सेवा करे, हाथ जोडे रहे, आज्ञाकी है अभिलाषा जाके। कईएक दिनोमें रत्नश्रवाका नियम समाप्त भया। सिद्धोको नमस्कार कर मौन छोडा। केकसीको अकेली देखी। कसी है केकसी ? सरल हैं नेत्र जाके, नीलकमल समान सुन्दर, अर

लालकमल समान है मुख जाका, कुंदके पुष्प समान हैं दन्त, अर पुष्पोकी माला समान हैं कोमल सुन्दर भुजा, अर मूंगा समान है कोमल मनोहर अधर, मौलश्रीके पुष्पोकी सुगंध समान है निश्वास जाके, चंपेकी कली समान है रंग जाका, अथवा उस समान चंपक कहां अर स्वर्ण कहां ?मानो लक्ष्मी रत्नश्रवाके रूपमें वश हुई, कमलोके निवासको तज, सेवा करनेको आई है। चरणारविंदकी ओर हैं नेत्र जाके, लज्जासे नम्रीभूत है शरीर जाका, अपने रूप वा लावण्यसे कूंपलोकी शोभाको उलंघती हुई, स्वासनकी सुगंधतासे जाके मुखपर भ्रमर गुंजार करं हैं। अति सुकुमार है तनु जाका, अर यौवन आवतासा है, मानो इसकी अति सुकुमारताके भयसे यौवन भी स्पर्शता शंकै है। मानो समस्त स्त्रियोंका रूप एकत्रकर बनाई है। अद्भुत है सुन्दरता जाकी, मानो साक्षात विद्या हो शरीर धारकर रत्नश्रवाके तपसे वशी होकर महा कांतिकी धरणहारी आई है। तब रत्नश्रवा जिनका स्वभाव ही दयावान है केकसीको पूछते भए कि तू कौनकी पुत्री है, अर कौन अर्थ अकेली यूथसे बिछुरी मृगीसमान महा वनमें रहै है, अर तेरा क्या नाम है ? तब यह अत्यंत माधुर्यतारूप गदगद वाणीसे कहती भई—'हे देव! राजा व्योमबिंदु राणी नन्दवती, तिनकी मैं केकसी नामा पुत्री आपकी सेवा करणेको पिताने राखी है। ताही समय रत्नश्रवाको मानस्तम्भिनी विद्या सिद्ध भई। सो विद्याके प्रभावसे उसी वनमें पुष्पांतकनामा नगर बसाया। अर केकसीको विधिपूर्वक परणा। अर उसी नगरमें रह कर मनवांछित भोग भोगते भए। प्रिया प्रीतममें अद्भुत प्रीति होती भई। एक क्षण भी आपसमें वियोग सहार न सके। यह केकसी रत्नश्रवाके चित्तका बंधन होती भई। दोनो अत्यंत रूपवान नवयौवन महा धनवान इनके धर्मके प्रभावसे किसी भी वस्तुकी कमी नाहीं। यह राणी पतिव्रता पतिकी छाया समान अनुगामिनी होती भई।

एक समय यह राणी रत्नके महलमें सुंदर सेजपर पडी हुती। कैसी है सेज ? क्षीरसमुद्रकी तरंग समान उज्ज्वल है वस्त्र जहां, अर महा कोमल है, अनेक सुगंधकरि मंडित है, रत्नोंका उद्योत होय

रहा है। राणीके शरीरकी सुगंधसे भ्रमर गुंजार कर है। अपने मनका मोहनहारा जो अपना पति उसके गुणोको चितवती हुई। अर पुत्रकी उत्पत्तिको बाछती हुई पडी हुती। सो रात्रिके पीछले पहर महा आश्चर्यके करणहारे शुभ स्वप्ने देखे। बहुरि प्रभातविषै अनेक बाजे बाजे, शंखोंका शब्द भया, मागध बंदीजन विरद बखानते भए। तब राणी सेजसे उठकर प्रभातक्रिया कर महामंगलरूप आभूषण पहरे सखियोकर मंडित पति ढिंग आई। राजा राणीको देख उठे, बहुत आदर किया। दोऊ एक सिंहासनपर विराजे, राणी हाथ जोड राजासे विनती करती भई–"हे नाथ! आज रात्रिके चतुर्थ-पहरमे तीन शुभ स्वप्न देखे हैं। एक महाबली सिंह गाजता, अनेक गजेंद्रोके कुंभस्थल विदारता हुआ परम तेजस्वी आकाशसे पृथ्वीपर आय मेरे मुखमें होकर कुक्षिमें आया, अर सूर्य अपनी किरणोंसे तिमिरका निवारण करता मेरी गोदमें आय तिष्ठया, अर चन्द्रमा अखंड है मंडल जाका, सो कुमुदन को प्रफुल्लित करता अर तिमिरको हरता हुआ, मैंने अपने आगे देख्या। यह अद्भुत स्वप्न मैंने देखे सो इनके फल क्या है? तुम सब जानने योग्य हो। स्त्रियोको पतिकी आज्ञा ही प्रमाण है। तब यह बात सुन राजा स्वप्नके फलका व्याख्यान करते भए। राजा अष्टांग निमित्तके जाननहारे जिनमार्ग मे प्रवीण हैं। हे प्रिये! तेरे तीन पुत्र होंगे जिनकी कीर्ति तीन जगतमें विस्तरगी। बडे पराक्रमी, कुलके वृद्धि करणहारे, पूर्वोपार्जित पुण्यसे महासम्पदाके भोगनहारे, देवोसमान अपनी कांतिसे जीत्या है चन्द्रमा, अपनी दीप्तिसे जीता है सूर्य, अपनी गम्भीरताकरि जीत्या है समुद्र, अर अपनी स्थिरतासे जीत्या है पर्वत जिन्होने, स्वर्गके अत्यन्त सुख भोग मनुष्यदेह धरेगा। महाबलवान, जिनको देव भी न जीत सकैं, मनवांछित दानके देनहारे, कल्पवृक्ष समान अर चक्रवर्ती समान है ऋद्धि जिनके, अपने रूपकरि सुन्दर स्त्रियोके मन हरणहारे, अनेक शुभ लक्षणोकर मंडित उतंग है वक्षस्थल जिनका, जिनका नाम ही
श्रवणमात्र से महा बलवान बैरी भय मानेंगे। तिनमें प्रथम पुत्र आठवा प्रतिवासुदेव होयगा। महासाहसी शत्रुओके मुखरूप कमल मुद्रित करनेको चन्द्रमासमान। तीनो भाई ऐसे योद्धा होंगे कि युद्धका नाम सुन

कर जिनके हर्षके रोमाच होयगे। अर बडा भाई कछुइक भयकर होयगा, जिस वस्तुको हठ पकडेगा सो न छोडेगा, जिसको इन्द्र भी समझानेको समर्थ नाहीं। ऐसा पतिका वचन सुनकर राणी परम हर्षको प्राप्त होय विनयथकी भरतारको कहती भई—हे नाथ! हम दोऊ जिनमार्गरूप अमृतके स्वादी कोमलचित्त, अपने पुत्र क्रूरकर्मा कसे होय? अपने तो जिनवचनमें तत्पर कोमल परिणामी होना चाहिए। अमृतकी बेलपर विषपुष्प कसे लागे? तब राजा कहते भए कि—हे वरानने! सुन्दर है मुख जाका ऐसी तू हमारे वचन सुन। यह प्राणी अपने कर्मके अनुसार शरीर धरे है, तातै कर्म ही मूल कारण है, हम मूलकारण नाहीं, हम निमित्त कारण है। तेरा बडा पुत्र जिनधर्मी तो होयगा परन्तु कछुइक क्रूरपरिणामी होयगा, अर ताके दोऊ लघु वीर महाधीर जिनमार्गविषै प्रवीण, गुणग्रामकरि पूर्ण भली चेष्टाके धरणहारे, शीलके सागर होवेंगे। ससार भ्रमणका है भय जिनको, धर्मविषै अति दृढ, महा दयावान, सत्य वचनके अनुरागी होवेंगे। तिन दोऊनिके ऐसा ही सौम्यकर्मका उदय है। हे कोमलभाषिणी! हे दयावती! प्राणी जैसा कर्म करे है तैसा ही शरीर धरे है। ऐसा कहकर वे दोऊ राजा राणी जिनेंद्रकी महापूजाविषै प्रवरते। कसे है ते? रात दिवस नियम धर्मविषै सावधान है।

अथानन्तर प्रथम ही गर्भविषै रावण आए, तब माताकी चेष्टा कछुइक क्रूर होती भई। यह वाछा भई कि बरियोके सिरपर पाव धरूं। राजा इन्द्रके ऊपर आज्ञा चलाऊं, विनकारण भौंहें टेढी करनी, कठोर वाणी बोलना यह चेष्टा होती भई। शरीरमें खेद नाहीं। दर्पण विद्यमान है तो भी खडगमें मुख देखना, सखीजनसूं खिझ उठना, काहूकी शका न राखनी ऐसी उद्धत चेष्टा होती भई। नवमें महीने रावण का जन्म भया। जा समय पुत्र जन्म्या तासमय बरियोके आसन कम्पायमान भए। सूर्यसमान है ज्योति जाकी ऐसा बालक ताकूं देखकर परिवारके लोकनिके नेत्र थकित होय रहे है। देव दुदुभी बाजे बजाने लगे, बरीनिके घरविषै अनेक उत्पात होने लगे। माता पिताने पुत्रके जन्मका अति हर्ष किया। प्रजाके सब भय मिटे, पृथ्वीका पालक उत्पन्न भया, सेजपर सूते पडे अपनी लीला कर देवनिसमान है दर्शन

जिनका। राजा रत्नश्रवाने बहुत दान दिया। आगे इनके बडे जो राजा मेघवाहन भए उनको राक्षसनिके इन्द्र भीमने हार दिया हुता, जाकी हजार नागकुमारदेव रक्षा करें, सो हार पास धरा था। सो प्रथम दिवस ही के बालकने खैंच लिया। बालकको मुट्ठीमें हार देख माता आश्चर्यको प्राप्त भई। अर महा-स्नेहतै बालकको छातीसे लगाय लिया। अर सिर चूम्बा, अर पिताने भी हारसहित बालकको देख मनमें विचारी कि यह कोई महापुरुष है। हजार नागकुमार जाकी सेवा करैं ऐसे हारतै होता ही बालक क्रीडा करता भया। यह सामान्य पुरुष नाहीं, याकी शक्ति ऐसी होयगी जो सब मनुष्योंको उलंघ। आगे चारणमुनिने मुझे कह्या हुता कि तेरे पदवीधर पुत्र उत्पन्न होवेंगे। सो अपने प्रति-वासुदेव शलाका पुरुष प्रकट भए है। हारके योगसे दशवदन पिताको नजर आए, तब उसका दशानन नाम धर्या। बहुरि कुछ कालमें कुम्भकर्ण भए, सो सूर्य समान है तेज जिनका। बहुरि कुछएक कालमें पूर्णमासीके चन्द्रमा समान है वदन जाका ऐसी चन्द्रनखा बहिन भई। बहुरि विभीषण भए। महा सौम्य, धर्मात्मा, पापकर्मत रहित, मानो साक्षात धर्म ही देहधारी अवतरा है। यद्यपि जिनके गुणनिकी कीर्ति जगतविषै गाइए है ऐसे दशाननकी बालक्रीडा दुष्टनि भयरूप होती भई। अर दोऊ भाइनकी क्रीडा सौम्यरूप होती भई। कुम्भकर्ण अर विभीषण दोनोंके मध्य चन्द्रनखा चाद सूर्यके मध्य सन्ध्या समान शोभती भई। रावण बाल अवस्थाको उलंघ कर कुमार अवस्थामें आया। एकदिन रावण अपनी माताकी गोदमें तिष्ठे था, अपने दातनिकी कातिसे दशो दिशामें उद्योत करता संता जिनके सिरपर चूडामणि रत्न धरा है ता समय वैश्रवण आकाशमार्गसे जाय था। सो रावणके ऊपर होय निकस्या। अपनी काति करि प्रकाश करता संता विद्याधरोंके समूहकरि युक्त, महा बलवान विभूतिका धनी, मेघसमान अनेक हाथियोंकी घटा मदकी धारा बरसाते,जिनके बिजली समान साकल चमक, महा शब्द करते आकाश मार्गसे निकसे। सो दशों दिशा शब्दायमान होय गई। आकाश सेना करि व्याप्त होयगया। सो रावणने ऊंची दृष्टिकर देख्या तो बडा आडम्बर देखकर माताकू पूछी यह कौन है?

अर अपने मानसे जगतको तण समान गिनता महा सेनासहित कहा जाय है ? तब माता कहती भई "तेरी मौसीका बेटा ह, सव विद्या याकू सिद्ध ह, महालक्ष्मीवान ह, शत्रुओको भय उपजावता सता

पथ्वीविष विचर ह । महा तेजवान ह, मानो दूसरा सूय ही ह । राजा इन्द्रका लोकपाल ह । इन्द्रन तिहारे दादाका भाई माली युद्धमें हराया, अर तुम्हारे कुलमे चली आइ जो लकापुरी वहासे तुम्हारे दादेको निकासकर ये राख्या । सो लकामें थाण रह ह । यह लकाके लिए तेरा पिता निरतर अनेक मनोरथ कर ह, रात दिन चन नाहीं पड ह, अर म भी इस चितामें सूख गई हू । हे पुत्र ! स्थानभ्रष्ट होनेत मरण भला ? ऐसा दिन कब होय जो तू अपने कुलकी भूमिको प्राप्त होय, अर तेरी लक्ष्मी हम देखें, तेरी विभूति देखकर तेरे पिताका अर मेरा मन आनन्दको प्राप्त होय । ऐसा दिन कब होयगा जब तेरे यह दोनो भाईयोकी विभूति सहित तेरी लार इस पथ्वीपर प्रतापयुक्त हम देखेंगे । तिहारे कटक न रहेगा ।" यह माताके दीनवचन सुन अर अश्रुपात डारती देखकर विभीषण बोले । कसे है विभीषण ? प्रकट भया ह क्रोधरूप विषका अकुर जिनके, हे माता ! कहा यह रक वश्रवण विद्याधर, जो देव होय तो भी हमारी दष्टि मे न आवे । तुमने इसका इतना प्रभाव वरणन किया सो कहा ? तू वीरप्रसवनी अर्थात योधाओकी माता ह, महाधीर ह, अर जिनमार्गमे प्रवीण ह, यह ससारकी क्षणभगुर माया तोत छानी नाहीं । काहेको ऐसे दीन वचन कायर स्त्रियोके समान तू कह ह ? क्या तोकू रावण की खबर नाहीं ह । यह श्रीवत्सलक्षणकर मडित अद्भुत पराक्रमका धरणहारा महाबली, अपार है चेष्टा जाकी, भस्म करि जसे अग्नि दबी रह तसे मौन गह रह्या । यह समस्त शत्रुवर्गनिके भस्म करणेको समथ ह, तेरे मनविष अबतक नहीं आया ह । यह रावण अपनी चालसे चित्तको भी जीते
ह । अर हाथ की चपेटसे पवतोको चूर कर डारे ह । याकी दोऊभुजा त्रिभुवनरूप मन्दिरके स्तम्भ है ११४
अर प्रतापको राजमाग ह, क्षत्रवतीरूप वक्षके अकुर ह, सो तने क्या नहीं जाने ? या भाति विभीषण ने रावणके गुण वणन किये । तब रावण मातासे कहता भया, हे माता ! गवके वचन कहने योग्य

नाहीं, परन्तु तेरे सन्देहके निवारन अर्थि मै सत्य वचन कहूहू, सो तू सुन। जो यह सकल विद्याधर अनेक प्रकार विद्याकरि गर्वित दोऊ श्रेणियनिके एकत्र होयकर मेरेसे युद्ध करै तौ भी मै सबनिकू एक भुजासे जीतू।

तथापि हमारे विद्याधरनिके कुलविषै विद्याका साधन उचित है। सो करते लाज नाहीं। जैसे मुनिराज तपका आराधन करै तैसे विद्याधर विद्याका आराधन करै, सो हमको करणा योग्य है। ऐसा कहकर दोऊ भाईनिसहित माता पिताको नमस्कारकर नवकार मन्त्रका उच्चारणकर रावण विद्या साधनेको चाले। माता पिताने मस्तक चूमा अर असीस दीनी। पाया है मंगलसंस्कार जिन्होने, स्थिरभूत है चित्त जिनका, घरतै निकसिकर हर्षरूप होय भीम नामा महावनमें प्रवेश किया। कैसा है वन? जहां सिंहादि क्रूर जीव नाद कर रहे है, विकराल है दाढ अर वदन जिनके, अर सूते जे अजगर तिनके निश्वाससे कम्पायमान है बडे बडे वृक्ष जहां, अर नीच है व्यंतरोके समूह जहां, जिनके पायनसे कम्पायमान है पृथ्वीतल जहां, अर महा गंभीर गुफाओमें अंधकारका समूह फैल रहा है, मनुष्योकी तो कहा बात? जहां देव भी गमन न कर सकै है। जाकी भयंकरता पृथ्वीमें प्रसिद्ध है। जहां पर्वत दुर्गम महा अंधकारको धरै, गुफा अर कंटकरूप वृक्ष है, मनुष्योका संचार नाहीं। तहां ये तीनो भाई उज्ज्वल धोती दुपटटा धारे शांतिभावको ग्रहणकर, सब आशा निवृत्तकर विद्याके अर्थ तप करवेको उद्यमी भए। कैसे है ते भाई? निशंक है चित्त जिनका, पूर्ण चन्द्रमा समान है वदन जिनका, विद्याधरनिके शिरोमणि, जुदे जुदे वनमे विराजे है। डेढ दिनमें अष्टाक्षर मंत्रके लक्ष जाप किये, सो सर्वकामप्रदा विद्या तीनो भाईयनिको सिद्ध भई। सो मनवांछित अन्न इनको विद्या पहुंचावे। क्षुधाकी वांछा इनके न होती भई। बहुरि ये स्थिरचित्त होय सहस्रकोटि षोडशाक्षरमन्त्र जपतें भए। उससमय जम्बूद्वीपका अधिपति अनावृत्ति नामा यक्ष, स्त्रीनि सहित क्रीडा करता आय प्राप्त हुवा। सो ताकी देवांगना इन तीनो भाईनिकू महा रूपवान, अर नवयौवन, तपविषै सावधान है मन जिनका, ऐसे देख

कौतुक कर इनके समीप आई। कमल समान है मुख जिनके, भ्रमर समान हैं श्याम सुन्दर केश जिनके। कईएक आपसमें बोली—"अहो! यह राजकुमार अतिकोमलशरीर कांतिधारी वस्त्राभरणरहित कौन अर्थ तप कर है? ऐसे इनके शरीरकी कांति भोगनि विना न सोहै। कहा इनकी नवयौवन वय अर कहा यह भयानक वनविष तप करना?" बहुरि इनके तपके डिगावनेके अर्थ कहती भई—"अहो अल्प बुद्धि! तुम्हारा सुन्दर रूपवान शरीर भोगका साधन है, योगका साधन नाहीं। तात काहेको तपका खेद करो हो, उठो घर चलो, अब भी कुछ गया नाहीं।" इत्यादि अनेक वचन कहे, परन्तु इनके मन में एकहू न आई। जैसे जलकी बूंद कमलके पत्र पर न ठहरै। तब वे आपसमें कहती भईं। हे सखी! ये काष्ठमई हैं, सब अंग इनके निश्चल दीखै हैं। ऐसा कहकर क्रोधायमान होय तत्काल समीप आई। इनके विस्तीर्ण हृदय पर कुंडलकी दीनी तौ भी ये चलायमान न भए। स्थिरीभूत है चित्त जिनका, कायर पुरुष होय सोई प्रतिज्ञासे डिगै, देविनिके कहते अनावृत यक्षने हंसकर कहा—भो सत्पुरुषो! काहेको दुर्धर तप करो, अर किस देवको आराधो हो—ऐसे कह्या, तौहू ये बोले नाहीं, चित्रामके होय रहे। तब अनावृतयक्षने क्रोध किया कि जम्बूद्वीपका देव तो मैं हूं, मुझको छांडकर कौनकूं ध्यावै है। ये मंदबुद्धि हैं, इनको उपद्रव करनेकेअर्थ अपने किंकरनिको आज्ञा दई। सो किंकर स्वभावही से क्रूर हुते अर स्वामीके कहेसे उन्होंने और भी अधिक अनेक उपद्रव किये। कईएक तो पर्वत उठाय उठाय लाए अर इनके समीप पटके,तिनके भयंकर शब्द भए। कईएक सर्प होय सब शरीरसे लिपट गए। कईएक नाहर होय मुख फाडकर आए, अर कईएक शब्द कानविर्षे ऐसे करते भए जिनको सुनकर लोक बहिरे होजाय, तथा मायामई डंस बहुत किये, सो इनके शरीरतें आय लगे। अर मायामई हस्ती दिखाये, असराल पवन चलाई, मायामई दावानल लगाई। या भांति अनेक उपद्रव किए, तो भी यह ध्यानसे न डिगे। निश्चल है अंतःकरण जिनका। तब देवोंने मायामई भीलनिकी सेना बनाई। अंध-कार समान काल विकराल आयुधोंको धर इनको ऐसी माया दिखाई कि पुष्पांतक नगर मारया।

अर महायुद्धमें रत्नश्रवाको कुटुम्ब सहित बधा हुवा दिखाया। अर यह दिखाया कि माता केकसी बिलाप कर है, कि हे पुत्रो! इन चाडाल भीलनिने तिहारे पिताकू महाउपद्रव किया। अर ये चाडाल मोकू मार है, पावोमें बडी डारी है, माथेके केश खींचे है। हे पुत्रो! तुम्हारे आगे मोकू ये म्लेच्छ भील पल्लीमें लिए जाय है। तुम कहते हुते जो समस्त विद्याधर एकत्र होय मुझसे लडै, तौ भी न जीता जाऊ, सो यह वार्ता तुम मिथ्या ही कहते। अब तुम्हारे आगे म्लेच्छ चाडाल मोकू केश पकड खींचे लिये जाय है। तुम तीनो ही भाई इन म्लेच्छनित युद्ध करवे समर्थ नाहीं। मद पराक्रमी हो। हे दशग्रीव! तेरा स्तोत्र विभाषण वथा ही कर था, तू तो एक ग्रीवा भी नाहीं जो माताकी रक्षा न कर। अर यह कुम्भकरण हू हमारी पुकार काननित सुन नाहीं। अर ये विभीषण कहावे है, सो वृथा है। एक भी रत लडने समर्थ भी नाहीं। अर यह म्लेच्छ तिहारी बहिन चन्द्रनखाको लिये जाय है। सो तुमको लज्जा नाहीं। अर विद्या जो साधिए, सो माता पिताकी सेवा अर्थ, सो विद्या किस काम आवेगी? इत्यादि मायामई देवनिन चेष्टा दिखाई तोहू ये ध्यानसे नाहीं डिगे। तदि देवोने एक भयानक माया दिखाई अर्थात रावणके निकट रत्नश्रवाका सिर कटया दिखाया। रावणके निकट भाईनिके भी सिर कटे दिखाए अर भाइयोके निकट रावणका भी सिर कटया दिखाया सो रावण तो सुमेरुपर्वत समान अति निश्चल ही रहे। जो ऐसा ध्यान महामुनि कर तो अष्टकर्मनिकू छेदे, परन्तु कुम्भकर्ण विभीषण के कछुइक व्याकुलता भई, परन्तु कुछ विशेष नाहीं, सो रावणको तो अनेक सहस विद्या सिद्धि भई। जेते मत्र जपनेके नेम किये थे ते पूर्ण होनेसे पहिले ही विद्या सिद्ध भई। धर्मके निश्चयत कहा न होय? ऐसा दृढ निश्चय भी पूर्वोपार्जित उज्ज्वल कर्मत होय है, कर्म ही संसारका मूलकारण है, कर्मानुसार यह जीव सुखदुख भोगवे है। समयविषै उत्तम पात्रोको विधिसे दान देना अर दयाभाव करि सदा ही सबको देना, अर अन्त समयमें समाधिमरण करना, अर सम्यग्ज्ञानकी प्राप्ति किसी उत्तम जीवहीके होय है। कईएकके तो विद्या दश वर्षमें सिद्ध होय है, कईएकके क्षणमात्रमें। यह सब

कमनिका प्रभाव जानो । रात दिन धरतीविषै भ्रमण करो, अथवा जलविषै प्रवेश करो तथा पर्वतके मस्तक परो । अनेक शरीरके कष्ट करो तथापि पुण्यके उदय विना कार्यसिद्धि नाहीं । जे उत्तम कर्म नाहीं करै हैं ते वृथा ही शरीर खोवै हैं । तातैं आचार्यनिकी सेवा कार्य सब आदरत करनी, पुरुषनिको सदा पुण्य ही करना योग्य है । पुण्य विना कहांतैं सिद्धि होय ? हे श्रेणिक ! पुण्यका प्रभाव देखि जो थोडे ही दिनोमें विद्या अर मन्त्रविधि पूर्ण भये पहिले ही रावणको महाविद्या सिद्ध भई । जे जे विद्या सिद्धि भई जिनके सक्षेपतासे नाम सुनहु । नभ सचारिणी, कामदायिनी,कामगामिनी, दुर्निवारा, जगतकपा, प्रगुप्ति, भानुमालिनी, अणिमा, लघिमा, क्षोभ्या, मनस्तभनकारिणी, सवाहिनी, सुरध्वसी, कौमारी, वद्धकारिणी, सुविधाना, तमोरूपा, दहना, विपुलोदरी, शुभप्रदा, रजोरूपा, दिनरात्रिविधायिनी, वज्रोदरी, समाकर्षिट, अदर्शिनी, अजरा, अमरा, अनवस्तभिनी, तोयस्तभिनी, गिरिदारिणी, अवलोकिनी, ध्वशी, धीरा, घोरा, भुजगिनी, वीरिनी, एकभुवना,अवध्या, दारुणा, मदनासिनी, भास्करी, भयसभूति, ऐशानी, विजया, जया, बधिनी, मोचनी, बाराही, कुटिलावर्त्ति, चित्तोद्भवकरी, शाति, कौवेरी, वशकारिणी, योगेश्वरी, वलोत्साही, चडा, प्रीतिप्रवर्षिणी, इत्यादि अनेक महा विद्या रावण को थोडे ही दिननिमे सिद्ध भई । तथा कुम्भकरणको पाच विद्या सिद्ध भई । उनके नाम सर्वहारिणी, अतिसर्वधिनी, जभिनी, व्योमगामिनी, निद्रानी तथा विभीषणको चार विद्या सिद्ध भईं—सिद्धार्था, शत्रुदमनी, व्याघाता, आकाशगामिनी यह तीनो ही भाई विद्याके ईश्वर होते भए, अर देवनिके उपद्रवत मानो नवे जन्ममें आए । तब यक्षोका पति अनावत जबूद्वीपका स्वामी इनको विद्यायुक्त देखकर बहुत स्तुति करी अर दिव्य आभूषण पहराए । रावणने विद्याके प्रभावकरि स्वयप्रभ नगर बसाया । वह नगर पर्वतके शिखर समान ऊचे महलोकी पक्तिसे शोभायमान है, अर रत्नमई चैत्यालयोसे अति ११
प्रभावको धरै है । जहा मोतीनिकी झालरीकरि ऊचे झरोखे शोभै हैं, पद्मराग मणियोके स्तम्भ हैं । नानाप्रकारके रत्ननिके रगके समूहकरि जहा इन्द्रधनुष होय रहा है । रावण भाईनि सहित ता नगरमें

विराजे। कैसे है राजमहल ? आकाशमें लग रहे हैं शिखर जाके, विद्यावलकरि पंडित रावण सुखसू तिष्ठै।

जम्बूद्वीपका अधिपति अनावत देव रावणसो कहता भया—"हे महामते ! तेरे धैर्यकरि मैं बहुत प्रसन्न भया, अर मैं सब जम्बूद्वीपका अधिपति हूं, तू यथेष्ट वैरियोको जीतता संता सर्वत्र विहार कर। हे पुत्र ! मैं बहुत प्रसन्न भया, अर स्मरणमात्रतै तेरे निकट आऊंगा। तब तुझे कोई भी न जीत सकेगा। अर बहुत काल भाइयोसहित सुखसो राज कर, तेरे विभूति बहुत होहु" या भांति आशीर्वाद देय बारम्बार याकी स्तुतिकर यक्ष परिवारसहित अपने स्थानको गया। समस्त राक्षसवंशी विद्याधरोने सुनी जो रत्नश्रवाका पुत्र रावण महाविद्यासयुक्त भया सो सबको आनन्द भया। सब ही राक्षस बडे उत्साह सहित रावणके पास आए। कईएक राक्षस नृत्य करै हैं, कईएक गान करै हैं, कईएक शत्रुपक्षको भयकारी गाजै हैं, कईएक ऐसे आनन्दकरि भर गए हैं कि आनन्द अगमें न समावै है। कईएक हसै हैं, कईएक केलि कर रहे हैं, सुमाली रावणका दादा अर छोटा भाई माल्यवान तथा सूर्यरज रक्षरज राजा वानरवशी सब ही सुजन आनन्दसहित रावणपै चाले। अनेक वाहनोपर चढे, हर्षसो आवै हैं। रत्नश्रवा रावणके पिता पुत्रके स्नेहकरि भर गया है मन जाका, ध्वजाओसे आकाशको शोभित करता संता परम विभूतिसहित महामंदिरसमान रत्ननिके रथपर चढि आया। बदीजन विरद बखानै है। सब इकट्ठे होयकर पंचसगम नामा पर्वतपर आए। रावण सन्मुख गया। दादा पिता अर सूर्यरज रक्षरज बडे हैं, सो इनको प्रणामकर पायन लाग्या, अर भाईनिको बगलगीरिकर मिला, अर सेवक लोगोको स्नेहकी नजरसे देख्या अर अपने दादा पिता अर सूर्यरज रक्षरजसो बहुत विनयकर कुशलक्षेम पूछी। अर बहुरि उन्होने रावणसे पूछी। रावणको देख गुरुजन ऐसे खुशी भये जो कहनेमे न आवै। बारम्बार रावणको सुखवार्ता पूछै, अर स्वयप्रभ नगरको देखिकरि आश्चर्यको प्राप्त भए। देवलोक समान यह नगर ताकू देखकर राक्षसवंशी अर वानरवंशी सब ही अति प्रसन्न भए, अर पिता रत्नश्रवा अर माता केकसी, पुत्रके गातको स्पर्शते संते अर इसको बारबार प्रणाम करता हुता देख

कर बहुत आनन्दको प्राप्त भए। दुपहरके समय रावणने बडोको स्नान करावनेका उद्यम किया। तदि सुमाली आदि रत्नोकें सिहासनपर स्नानके अर्थ विराजे। सिहासनपर इनके चरण पल्लवसारिखे कोमल अर लाल कसे शोभते भए जसे उदयाचल पवतपर सूय शोभ। बहुरि स्वणरत्नोके कलशादि से स्नान कराया। कलश कमलके पत्रनिकरि आच्छादित ह मुख जिनके, अर मोतियोकी मालाकरि शोभ ह, अर महा कातिको धर ह, अर सुगधजलकरि भरे ह, जिनकी सुगधिकरि दशो दिशा सुगध-मयी रोय रही ह, अर जिनपर भमर गु जार कर रहे ह। स्नान करावते जब कलशोका जल डारिए ह तदि मेघ सारिखे गाज ह। पहले सुगध द्रव्यनिका उबटना लगाया पीछे स्नान कराया। स्नानके समय अनेक प्रकारके वादित्र बाजे। स्नान कराकर दिव्य वस्त्राभूषण पहराए, अर कुलवतिनी राणियो ने अनेक मगलाचरण किए। रावणादि तीनो भाई देवकुमार सारिखे गुरुनिका अति विनयकर चरणो की वदना करते भए। तदि बडो ने बहुत आशीर्वाद दिये—'हे पुत्रो ! तुम बहुत काल जीवो और महासपदा भोगो, तुम्हारीसी विद्या औरमें नाहीं'' । सुमाली, माल्यवान, सूयरज, रक्षरज अर रत्नश्रवा इन्हो ने स्नेहकरि रावण, कुभकरण, विभीषणको उरसो लगाया। बहुरि समस्त भाई अर समस्त सेवकलोग भलीविधिसो भोजन करते भए। रावणने बडेनिकी बहुत सेवा करी अर सेवक लोगोका बहुत सन्मान किया। सबनिको वस्त्राभूषण दिये। सुमाली आदि सब ही गुरुजन फूलगए ह नेत्र जिनके, रावणसे अति प्रसन्न होय कहते भए। हे पुत्रो ! तुम बहुत सुखसे रहो। तब नमस्कार कर कहते भये—हे प्रभो हम आपके प्रसादकरि सदा कुशलरूप ह। बहुरि मालीकी बात चाली, सो सुमाली शोकके भारकरि मूर्छा खाय गिरा, तदि रावणने शीतोपचारकरि सचेत किया, अर समस्त शत्रुओके समूहके घातरूप सामतता के वचन कहकर दादाको बहुत आनन्दरूप किया। सुमाली कमलनेत्र रावणको देखकरि अति आनन्दरूप भए। सुमाली रावणको कहते भए—अहो पुत्र ! तेरा उदार पराक्रम जाहि देख देवता प्रसन्न होय। अहो काति तेरी सूयको जीतनहारी, गभीरता तेरी समुद्रसे अधिक ह, पराक्रम तेरा सब सामतनिकू

उलघ, अहो वत्स ! हमारे राक्षस कुलका तू तिलक प्रकट भया ह। जस जम्बूद्वीपका आभूषण सुमेरु है, अर आकाशके आभूषण चाद सूय ह ! तसे हे पुत्र रावण ! अब हमारे कुलका तू मडन है। महा आश्चयकी करणहारी चेष्टा तेरी सकल मित्रोको आनन्द उपजाव है। जब तू प्रकट भया तब हमको क्या चिता है। आगे अपने वशमें राजा मेघवाहन आदि बडे २ राजा भए, वे लकापुरीका राज करके पुत्रोको राज देय मुनि होय मोक्ष गए, अब हमारे पुण्यकरि तू भया। सव राक्षसोके कष्टका हरणहारा, शत्रुवगका जीतनहारा तू महा साहसी, हम एक मुखत तेरी प्रशसा कहालों करें। तेरे गुण देव भी न कहि सक। ये राक्षसवशी विद्याधर जीवनकी आशा छोड बठे हुते, सो अब सबकी आशा बधी। तू महाधीर प्रकट भया ह। एक दिन हम कलाश पवत गए हुते, तहा अवधिज्ञानीमुनिको हमने पूछी कि–'हे प्रभो ! लकामें हमारा प्रवेश होयगा कि नाहीं ?' तब मुनिने कही कि–'तुम्हारे पुत्रका पुत्र होयगा। ताके प्रभावकरि तुम्हारा लकामें प्रवेश होयगा। वह पुरुषोमें उत्तम होयगा। तुम्हारा पुत्र रत्नश्रवा राजा व्योमबिदुकी पुत्री केकसीको परणगा। ताकी कुक्षिमें वह पुरुषोत्तम प्रकट होयगा। सो भरतक्षेत्रके तीन खडका भोक्ता होगा। महा बलवान, विनयवान, जाकी कीर्ति दशोंदिशामें विस्तरैगी। वह बरियोसे अपना बास छुडावगा, अर बरियोके बास दाबगा। सो यामें आश्चर्य नाहीं। सो तू महा उत्सवरूप कुलका मडन प्रकट्या ह। तेरासा रूप जगतमें और काहूका नाहीं, तू अपने अनुपमरूपकरि सबके नेत्र अर मनको हर ह। इत्यादिक शुभ वचनोसे सुमालीने रावणकी स्तुति करी। तब रावण हाथ जोड नमस्कारकर सुमाली सौं कहता भया कि हे प्रभो ! तुम्हारे प्रसादकरि ऐसा ही होहु। ऐसा कहिकर णमोकार मत्र जप पचपरमेष्ठीनिको नमस्कार किया, सिद्धोका स्मरण किया जिससे सव सिद्ध होय।

आगै गौतम स्वामी राजा श्रेणिकसों कह ह–हे श्रेणिक ! उस बालकके प्रभावसे बधुवर्ग, सव राक्षसवशी अर बानरवशी अपने अपने स्थानक आय बसे। बरियोका भय न किया। या भाति पूर्व

भवके पुण्यसे पुरुष लक्ष्मीको प्राप्त होय है। अपनी कीर्तिसे व्याप्त करी ह दशो दिशा जिसने, इस पथ्वीमें बडी उमरका बूढा होना तेजस्विताका कारण नाहीं ह जस अग्निका कण छोटा ही बडे वन को भस्म कर ह, अर सिंहका बालक छोटा ही माते हाथियोके कुंभस्थल विदारै हैं, अर चन्द्रमा उगता ही कुमुदोको प्रफल्लित कर ह अर जगतका सताप दूर कर ह, अर सूय ऊगता ही कालीघटा समान अधकारको दूर कर ह।

इति श्रीरविषणाचायविरचित महापद्मपुराण सस्कृत ग्रन्थ ताकी भाषा वचनिकाविषं रावणका जन्म और विद्यासाधन कहनेवाला सातवा पव पूण भया ॥ ६ ॥

अथानन्तर दक्षिण श्रेणीमें असुरसगीत नामा नगर, तहा राजा मय विद्याधर, बडे योधा विद्याधरोमें दत्य कहाव। जस रावणके बडे राक्षस कहाव, इन्द्रके कुलके देव कहाव। ये सब विद्याधर मनुष्य ह। राजा मयकी रानी हमवती, पुत्री मदोदरी, जिसके सव अगोपाग सुन्दर, विशाल नेत्र, रूप अर लावण्यता रूपी जलकी सरोवरी, ताको नवयौवनपूण देख पिताको परणावनेकी चिंता भई। तदि अपनी राणी हमवतीसो पूछया—'हे प्रिये! अपनी पुत्री मदोदरी तरुण अवस्थाको प्राप्त भई, सो हमको बडी चिंता ह। पुत्रियोके यौवनके आरम्भसे जो सतापरूप अग्नि उपज तामें माता पिता कुटुम्बसहित इधनके भावको प्राप्त होय ह। तात तुम कहो, यह कन्या किसको परणाव? गुण कुलमें कातिमें इसके समान होय ताको देनी। तब राणी कहती भई—हे देव! हम पुत्रीके जनने अर पालनेमें ह, परणावना तुम्हार आश्रय ह। जहा तुम्हारा चित्त प्रसन्न होय तहा देहु। जो उत्तम कुल की बालिका ह ते भरतारके अनुसार चाल ह। जब राणीने यह कह्या तदि राजाने मन्त्रीनितैं पूछया। तब किसीने कोई बताया, किसीने इन्द्र बताया कि वह सब विद्याधरोका पति ह ताकी आज्ञा लोपतै सव विद्याधर डर ह। तब राजा मयने कही मेरी तो रुचि यह ह—जो यह कन्या रावणको देनी, क्योंकि उसको थोडे ही दिनामें सर्व विद्या सिद्ध भई ह, तातैं यह कोई बडा पुरुष है, जगतको आश्चय का

कारण है। तब राजाके वचन मारीच आदि सब मन्त्रियोने प्रमाण किये। मन्त्री राजाके साथ कार्यमें प्रवीण है। तब भले ग्रह लग्न देख, क्रूर ग्रह टार, मारीचको साथ लेय राजा मय कन्याके परणावने को कन्या रावणप ले चाले। रावण भीम नामा वनमें चन्द्रहास खडग साधनेको आए हुते, अर चन्द्र-हासकी सिद्धिकर सुमेरुपर्वतके चैत्यालयोकी वंदनाको गए हुते। सो राजा मय हलकारोके कहनेसे भीम नामा वनमें आए। कैसा है वह वन ? मानो काली घटाका समूह ही है, जहां अति सघन अर ऊंचे वृक्ष हैं। वनके मध्य एक ऊंचा महल देख्या, मानो अपने शिखरनिकरि स्वर्गको स्पर्शे है। रावण ने जो स्वयंप्रभ नामा नया नगर बसाया है ताके समीप ही यह महल है। सो राजा मय विमानतें उतरि करि महलके समीप डेरा किया, अर वादित्रादि सब आडम्बर छोडि कयक निकटवर्ती लोकनि सहित मन्दोदरीको लेय महलपर चढे। सातवें खण गए तहां रावणकी बहिन चन्द्रनखा बैठी हुती। कैसी है चन्द्रनखा ? मानो साक्षात वनदेवी ही है। या चन्द्रनखाने राजा मयको अर ताकी पुत्री मंदो-दरीको देखकर बहुत आदर किया, सो बडे कुलके बालकनिके यह लक्षण ही है। बहुरि विनयसंयुक्त इनके निकट बैठी। तब राजा मय चन्द्रनखाको पूछते भए—'हे पुत्री ! तू कौन है ? कौन कारण या वनमें अकेली बसे है ?' तब चन्द्रनखा बहुत विनयसो बोली—'मेरा बडा भाई रावण सो बेलाकरि चन्द्रहास खडगको सिद्धकरि अब मोहि खडगकी रक्षा सौंपि सुमेरुपर्वतके चैत्यालनिकी वंदनाको गए हैं। मैं भगवान श्रीचन्द्रप्रभुके चैत्यालयविषै तिष्ठूं हूं। तुम बडे हितू सम्बन्धी हो, जो तुम रावणसूं मिलवे आये हो तो क्षणइक यहां विराजो।" या भांति इनके बात होय है। अर रावण आकाशके मार्ग होय आए ही, सो तेजका समूह नजर आया। तब चन्द्रनखाने कही 'अपने तेजसे सूर्यके तेजको हरता थका यह रावण आया है।" तब राजा मय मेघनिके समूह समान श्याम सुन्दर अर बिजुरी समान चमकते हुये आभूषण पहिरे रावणकूं देखि बहुत आदरतें उठ खडे रहे, अर रावणसे मिले, अर सिंहासनपर विराजे। तब राजा मयके मन्त्री मारीच तथा वज्रमध्य अर वज्रोदर अर नभस्तडित, उग्रनक्र, मरुध्वज,

मेधावी, सारण, शुक्र ये सब ही रावणको देखि बहुत प्रसन्न भए अर राजा मयसो कहते भए। हे देव! आपकी बुद्धि अति प्रवीण है, जो मनुष्यनिमें महा पदार्थ था सो तुम्हारे मनमें बस्या।' या भांति मयसे कहकर ये मयके मन्त्री रावणसो कहते भए—'हे रावण! हे महाभाग्य! आपका अद्भुतरूप अर महा पराक्रम है, अर आप अति विनयवान अतिशयके धारी अनुपम वस्तु हो। यह राजा मय दैत्योंका अधिपति दक्षिण श्रेणीमें असुरसंगीत नामा नगरका राजा है, पृथ्वीविषै प्रसिद्ध है। हे कुमार! तुम्हारे निर्मल गुणनिविषै अनुरागी हुआ आया है।'

तब रावणने इनका बहुत श्रेष्ठाचार किया अर पाहुणगति करी, अर बहुत मिष्ट वचन कहे। सो यह बड़े पुरुषनिके घरकी रीति ही है कि जो अपने द्वार आवै तिनका आदर करै ही करै। रावण मयके मन्त्रीनिसो कहा कि ये दैत्यनाथ बड़े हैं, मोहि अपना जान अनुग्रह किया। तब मयने कहा कि हे कुमार! तुमको यही योग्य है, जे तुम सारिखे साधु पुरुष हैं तिनके सज्जनता ही मुख्य है। बहुरि रावण श्रीजिनेश्वरदेवकी पूजा करनेको जिनमंदिरविषै गए। राजा मयको अर याके मन्त्रीनिहूकूं ले गए। रावणने बहुत भावसे पूजा करी, भगवानके आगे स्तोत्र पढ़े, बारबार हाथ जोडि नमस्कार किये, रोमांच होय आए, अष्टांग दंडवतकर जिनमंदिरतैं बाहिर आए। कैसे हैं रावण? अधिक है उदय जिनका, अर महा सुन्दर है चेष्टा जिनकी, चूड़ामणि करि शोभै है शिर जिनका। चैत्यालयतैं बाहिर आय राजा मय सहित आप सिंहासनपर विराजे। राजासे वैताड़ पर्वतके विद्याधरोंकी बात पूछी, अर मंदोदरीकी ओर दृष्टि गई तो देखकर मन मोहित भया। कैसी है मंदोदरी? सौभाग्यरूप रत्ननिकी भूमिका, सुन्दर हैं नख जाके, कमल समान हैं चरण जाके, स्निग्ध है तनु जाका, अर केलाके थम्भ समान मनोहर हैं जंघा जाकी, लावण्यतारूप जलका प्रवाह ही है, महा लज्जाके योगते नीची है दृष्टि जाकी, सुवर्णके कुंभसमान हैं स्तन जाके, पुष्पोंसे अधिक है सुगंधता अर सुकुमारता जाकी, अर कोमल हैं दोऊ भुजलता जाकी, अर शंखके कंठ समान है ग्रीवा (गरदन) जाकी, पूर्णिमाके

चन्द्रमा समान है मुख जाका, शुकहूत अधिक सुन्दर है नासिका जाकी, मानो दोऊ नेत्रनिकी कांति-रूपी नदीका यह सेतुबंध ही है। मूंगा अर पल्लवसे अधिक लाल है अधर (होठ) जाके, अर महाज्योति को धरे अति मनोहर है कपोल जाके, अर वीणाका नाद, भ्रमरका गुंजार, अर उन्मत्त कोयलके शब्दसे भी अति सुन्दर है शब्द जाके, अर कामकी दूती समान सुन्दर है दृष्टि जाकी, नीलकमल अर रक्त-कमल अर कुमुद भी जीते ऐसी श्यामता आरक्तता शुक्लताको धरे, मानो दशोदिशामें तीन रंगके कम-लोंके समूह ही विस्तार राखे हैं। अर अष्टमीके चन्द्रमा समान मनोहर है ललाट जाका, अर लंबे बांके काले सुगंध सघन सचिक्कण हैं केश जाके, कमल समान हैं हाथ अर पांव जाके, अर हंसनीकूं अर हस्तिनीकूं जीतें ऐसी है चाल जाकी, अर सिंहहूत अति क्षीण है कटि जाकी, मानो साक्षात लक्ष्मी ही कमलके निवासको तजकर रावणके निकट ईर्षाको धरती हुई आई है। क्योंकि मेरे होते सते रावण के शरीरको विद्या क्यों स्पर्शे ? ऐसे अदभुत रूपको धरणहारी मंदोदरी रावणके मन अर नयननिकूं हरती भई। सकल रूपवती स्त्रीनिके रूप लावण्य एकत्रकरि इसका शरीर शुभ कर्मनिके उदयकरि बना है। अंग अंगमें अदभुत आभूषण पहरे, महा मनोज्ञ मंदोदरीको अवलोकनकर रावणका हृदय काम बाणकरि बींध्या गया। महा मधुरताकरि युक्त जो वह, ताविषै रावणकी दृष्टि गयी सती नीठ नीठ पाछी आई। परन्तु मत्त मधुकर की नाईं घूमने लग गई। रावण चित्तमें चितवे है कि यह उत्तम नारी कौन है ? श्री ह्री धृति कीर्ति बुद्धि लक्ष्मी सरस्वती इनमेंसो यह कौन है ? परणी है वा कुमारी ? समस्त श्रेष्ठ स्त्रियोंकी यह शिरोभाग्य है। यह मन इन्द्रियनिको हरणहारी जो मैं परणूं तो मेरा नवयौवन सफल है, नाहीं तो तृणवत वृथा है। ऐसा चिंतवन रावणने किया तदि राजा मय, मंदोदरी के पिता बड़े प्रवीण, याका अभिप्राय जानि मन्दोदरीको निकट बुलाय रावणसो कही—"याके तुम ही पति हो।" यह वचन सुन रावण अति प्रसन्न भया, मानो अमृतकरि सींच्या है गात जाका, हर्षके अंकुर समान रोमांच होय आए। सब वस्तुनिकी इनके सामग्री हुती ही, ताही दिन मन्दोदरीका

विवाह भया। रावण मन्दोदरीको परणकरि अति प्रसन्न होय स्वयप्रभ नगरमें गए। राजा मय भी पुत्रीको परणाय निश्चित भए। पुत्रीके विछोहत शोक सहित अपने देशको गए। रावणने हजारो राणी परणीं, उन सबकी शिरोमणी मन्दोदरी होती भई। मन्दोदरी भरतारके गुणोमें हरा गया है मन जाका, पतिकी अति आज्ञाकारिणी होती भई। रावण तासहित जस इन्द्र इन्द्राणी सहित रम तस सुमेरुके नदन वनादि रमणीक स्थाननिमैं रमते भये। कसी ह मन्दोदरी? सब चेष्टा मनोज्ञ हैं जाकी। अनेक विद्या जो रावणने सिद्ध करी है तिनकी अनेक चेष्टा रावण दिखावते भए। एक रावण अनेक रूप धर अनेक स्त्रियोके महलोमें कोतूहल कर। कभी सूयकी नाइं तप, कभी चन्द्रमाकी नाइ चादनी विस्तर, अमत बरस, कभी अग्निकी नाइं ज्वाला विसतार, कभी मेघकी नाई जलधारा सूव कभी पवनकी नाइ पहाडोको चलाव, कभी इन्द्रकोसी लीला कर, कभी वह समुद्रकोसी तरग धरै, कभी वह पवत समान अचल वशा ग्रह। कभी माते हाथी समान चेष्टा कर, कभी पवनत अधिक बेगवाला अश्व बन जाय। क्षणमें नजीक, क्षणमे अदृश्य, क्षणमें सूक्ष्म, क्षणमें स्थूल, क्षणमें भयानक, क्षणमें मनोहर या भाति रमता भया।

एक दिवस रावण मेघवर पवतपर गया तहा एक वापिका देखी। निमल ह जल जाका, अनेक जातिके कमलनिसे रमणीक ह, अर क्रौंच, हस, चकवा, सारस इत्यादि अनेक पक्षीनिके शब्द होय रहे हैं। अर मनोहर ह तट जाके, सुन्दर सिवाणोकरि शोभित ह। जिसके समीप अर्जुन आदि जातिके बडे बडे वक्षोकी छाया होय रही ह। जहा चचल मीनकी कलोल करि जलके छींटे उछल रहे ह। तहा रावण अति सुन्दर छ हजार राजकन्या क्रीडा करती देखी। कईएक तो जलकेलिमें छींटे उछाल है, कईएक कमलनिके वनमे घुसी हुई कमलवदनी कमलनिकी शोभाको जीत ह। भमर कमलोकी शोभाको छोडकर इनके मुखपर गुजार कर ह। कईएक मदग बजाव ह, कईएक बीण बजाव ह। ये समस्त कन्या रावणको देखकरि जलक्रीडाको तज खडी होय रहीं। रावण भी उनके बीच जाय जलक्रीडा करने लगे। तब

वे भी जलक्रीडा करने लागईं। वे सव रावणका रूप देख कामवाणकरि बींधी गईं। सबकी दृष्टि यासौं ऐसी लगी जो अन्यत्र न जाय। याके अर उनके रागभाव भया। प्रथममिलापकी लज्जा अर मदनका प्रकट होना सो तिनका मन हिडौलेमें झूलता भया। तिन कन्याओमें जो मुख्य है उनका नाम सुनो। राजा सुरसुन्दर राणी सवश्रीकी पुत्री पद्मावती, नीलकमल सारिखे है नेत्र जाके। बहुरि राजा बुध राणी मनोवेगा, ताकी कन्या अशोकलता, मानो साक्षात अशोककी लता ही है। अर राजा कनक राणी सध्याकी पुत्री विद्युत्प्रभा, जो अपनी प्रभाकर बिजुलीकी प्रभाको लज्जावत करै है, सुन्दर है दर्शन जाका, बडे कुलनिकी बेटी, सब ही अनेक कलाकरि प्रवीण, उनमें ये मुख्य है। मानो तीन लोककी सुन्दरता ही मूर्त्ति धरकर विभूति सहित आई है। सो रावणने छ हजार कन्या गधर्व विवाह कर परणी। ते भी रावणसहित नानाप्रकारकी क्रीडा करती भईं।

तबि इनकी लार जे खोजे वा सहेली हुतीं ते इनके माता पिताओसे सकल वृत्तात जाकर कहती भई। तब उन राजाओने रावणके मारिवेको क्रूर सामन्त भेजे। ते भ्रकुटी चढाए होठ डसते आए, नानाप्रकारके शस्त्रोकी वर्षा करते भए। ते सकल अकेले रावणने क्षणमात्रमें जीत लिये। तबि भाग कर कापते हुये राजा सुरसुन्दरप गए। जायकर हथियार डार दिये अर वीनती करते भए—'हे नाथ! हमारी आजीवकाको दूर करो, अथवा घर लूट लेवो, अथवा हाथ पाव छेदो तथा प्राण हरो, हम रत्नश्रवाका पुत्र जो रावण तासू लडवेको समथ नाहीं। ते समस्त छ हजार राजकन्या उसने परणीं अर उनके मध्य क्रीडा कर है। इन्द्र सारिखा सुन्दर, चद्रमा समान कातिधारी, जाकी क्रूर दृष्टि देव भी न सहार सकें, ताके सामने हम रककौन? हमने घने ही शूरवीर देखे, रथनूपुरका धनी राजा इन्द्र आदि याकी तुल्य कोऊ नाहीं। यह परम सुन्दर महा शूरवीर है। ऐसे वचन सुन राजा सुरसुन्दर महा क्रोधायमान होय राजा बुध अर कनक सहित बडी सेना लेय निकसे। और भी अनेक राजा इनके सग भए, सो आकाशसे शस्त्रनिकी कातिसे उद्योत करते आए। इन सब राजाओको देखकरि ये

समस्त कन्या भयकर व्याकुल भइ, अर हाथ जोड रावणसो कहती भइ कि हे नाथ ! हमारे कारण तुम अत्यन्त सशयको प्राप्त भए, हम पुण्यहीन ह, अब आप उठकर कहीं शरण लेवो, क्योकि ये प्राण दुलभ ह तिनकी रक्षा करो। यह निकट ही श्रीभगवानका मदिर ह तहा छिप रहो, यह क्रूर बैरी तुमको न देख आप ही उठ जावेंगे। ऐसे दीन वचन स्त्रीनिके सुन अर शत्रुनिका कटक निकट आया देख रावणने लाल नेत्र किये अर इनसो कहते भए—'तुम मेरा पराक्रम नाहीं जानो हो, काक अनेक भेले भए तो कहा गरुडको जीतेंगे ? एक सिहका बालक अनेक मदोन्मत्त हाथियोके मदकू दूर करै ह। ऐसे रावणके वचन सुन स्त्री हर्षित भइ, अर वीनती करी। 'हे प्रभो ! हमारे पिता अर भाई अर कुटुम्बनिकी रक्षा करहु' तब रावण कहते भये—'हे प्यारी हो ! ऐस ही होयगा, तुम भय मत करो, धीरता गहो।' यह बात परस्पर होय ह। इतनेमें राजाओके कटक आए, तबि रावण विद्याके रचे विमानम बठ क्रोधकरि उनके सन्मुख भया। ते सकल राजा उनके योधाओके समूह जसै पवतपर मोटी धारा मेघकी बरस तस बाणोकी वर्षा करते भए। वह रावण विद्याओके सागर, ताने शिलानिपरि सव शस्त्र निवारे, अर कईएकनिको शिलानकरि ही भयको प्राप्त किए। बहुरि मनमें विचारा कि इन रकोके मारवेकरि कहा ? इनमें जो मुख्य राजा है तिनहीको पकड लेवो। तब इन राजानिको तामस शस्त्रोसे मूर्छितकर नागपाससे बाधलिया। तब इन छ हजार स्त्रियोने विनती कर छुडाये। तबि रावणने तिन राजानिकी बहुत सुश्रुषा करी। तुम हमारे परम हितू सबधी हो। तब वे रावणका शूरत्वगुण देख, महा विनयवान रूपवान देख बहुत प्रसन्न भए। अपनी अपनी पुत्रीनिका विधिपूवक पाणिग्रहण कराया। तीन दिन तक महा उत्सव प्रवरत्या। ते राजा रावणकी आज्ञा लेय अपने अपने स्थानको गए। रावण मदोदरीके गुणोकर मोहित ह चित्त जाका सो स्वयप्रभ नगरमें आए। तब याको स्त्रीनसहित आया सुन कुम्भकरण, विभीषण भी सन्मुख गए। रावण बहुत उत्साहसे स्वयप्रभनगरमें आए अर सुरराजवत् रमते भए।

अथानन्तर कुंभपुरका राजा मदोदर ताके राणी स्वरूपा, ताकी पुत्री तडिन्माला सो, कुंभकर्ण जाका प्रथम नाम भानुकर्ण था, ताने परणी। कैसे हैं कुंभकर्ण? धर्मविषै आसक्त है बुद्धि जिनकी, अर महा योधा है, अनेक कलागुणमें प्रवीण हैं। हे श्रेणिक! अन्यमती लोक जो इनकी कीर्ति और भांति कहे हैं कि मांस अर लोहूका भक्षण करते हुते, छह महीनाकी निद्रा लेते सो नाहीं। इनका आहार बहुत पवित्र स्वादरूप सुगंधमय था। प्रथम मुनीनिको आहार देय अर आर्यानिको आहार देय दुखित भुखित जीवनिको आहार देय, कुटुम्ब सहित योग्य आहार करत हुते मांसादिककी प्रवृत्ति नहीं थी। अर निद्रा इनको अर्धरात्रि पीछे अल्प थी। सदाकाल धर्मविषै लवलीन था चित्त जिनका, चरमशरीरी। जो लोग बडे पुरुषनिको झूठा कलंक लगावे हैं ते महा पापका बंध करे हैं। ऐसा करना योग्य नाहीं।

अथानन्तर दक्षिण श्रेणीमें ज्योतिप्रभनामा नगर, तहां राजा विशुद्धकमल राजा मयका बडा मित्र, ताके राणी नन्दनमाला, पुत्री राजीवसरसी, सो विभीषणने परणी। अति सुन्दर उस राणी सहित विभीषण अति कौतूहल करते भए। अनेक चेष्टा करते, जिनको रतिकेल करते तृप्ति नहीं। कैसे हैं विभीषण? देवनि समान परम सुन्दर है आकार जिनका। अर कैसी है राणी? लक्ष्मीसे भी अधिक सुन्दर है। लक्ष्मी तो पद्म कहिए कमल ताकी निवासिनी है अर यह राणी पद्मरागमणिके महल की निवासिनी है।

अथानन्तर रावणकी राणी मंदोदरी गर्भवती भई, सो याको माता पिताके घर लेगए। तहां इन्द्रजीत का जन्म भया। इन्द्रजीतका नाम समस्त पृथ्वीविषै प्रसिद्ध हुआ। अपने नानाके घर वृद्धिको प्राप्त भया, सिंहके बालककी नाईं साहसरूप उन्मत्त क्रीडा करता भया। रावणने पुत्रसहित मंदोदरी अपने निकट बुलाई। सो आज्ञा प्रमाण आई। मंदोदरीके माता पिताको इनके बिछोहका अति दुःख भया।
रावण पुत्रका मुख देखकरि परम आनन्दको प्राप्त भया, सुपुत्र समान और प्रीतिका स्थान नाहीं। फिर मंदोदरीको गर्भ रह्या तदि माता पिताके घर फिर लेगए। तहां मेघनादका जन्म भया। फिर

भरतारके पास आई, भोगके सागरमे मग्न भई। मवोदरीने अपने गुणोसे पतिका चित्त वश किया। अब ये दानो वालक इद्रजीत अर मेघनाद सज्जनोको आनदके करणहारे, सुन्दर चारित्रके धारक, तरुण अवस्थाको प्राप्त भए। विस्तीण ह नेत्र जिनके, सो वषभ समान पथ्वीका भार चलावनहारे ह।

अथानतर वश्रवण जिन जिन पुरोमे राज कर, उन हजारो पुरोमें कुभकरण धावे करते भये। जहा इद्रका, वश्रवणका माल होय सो छीनकर अपने स्वयप्रभ नगरीमे ले आव। या बातसो वश्रवण, इद्रके जोरकरि अति गवित ह, सो वश्रवणका दूत द्वारपालसो मिल सभामें आया अर सुमालीसो कहता भया। ह महाराज! वश्रवण नरेद्रने जो कह्या ह सो तुम चित्त देय सुनो। वश्रवणने यह कहा ह कि—तुम पडित हो, कुलीन हो, लोकरीतिके ज्ञायक हो, बडे हो, अकायत भयभीत हो, औरोको भले मागके उपदेशक हो, ऐसे जो तुम सो तुम्हारे आग ये बालक चपलता कर तो क्या तुम अपने पोतानिको मन न करो? तियच अर मनुष्यमे यही भेद ह कि मनुष्य तो योग्य अयोग्यको जाने ह अर तियच न जान ह। यही विवेककी रीति ह। करने योग्य काय करिए, न करने योग्य काय न करिए। जो दढ चित्त ह वे पूव वत्तातको नाही भूले ह। अर बिजुलीसमान क्षणभगुर विभूतिके होते सते भी गवको नाहीं धर ह। आग क्या राजा मालीके मरवेकरि तुम्हारे कुलकी कुशल भई ह? अब यह क्या स्यानपन ह जो कुलके मूलनाशका उपाय करते हो। ऐसा जगतमे कोऊ नाहीं जो अपने कुलके मूल नाशको आदर। तुम कहा इद्रका प्रताप भूल गए जो ऐसे अनुचित काम करो हो। कसे ह इन्द्र? विध्वस किये ह समस्त बरी जान, समुद्र समान अथाह ह। सो तुम मींडकके समान सपके मुखमें क्रीडा करो हो? कसा ह सपका मुख? दाढरूपी कटकनिकरि भरया ह, अर विषरूपी अग्निके कण जामत निकस ह। ये तुम्हारे पोते चौर ह। अपने पोते पडोतोको जो तुम शिक्षा देनेको समथ नाहीं हो तो मुझ सौंपो, म इनको तुरत सीधे करू। अर ऐसा न करोगे तो समस्त पुत्र पौत्रादि कुटुम्बसहित

बेडियोसे बधे मलिन स्थानमें रुके देखोगे, ताम अनेक भातिकी पीडा इनको होगी। पाताल लकतैं नीठि २ (मुश्किलसे) बाहिर निकसे हो। अब फिर तहा ही प्रवेश किया चाहो हो ? या प्रकार दूतके कठोर वचनरूपी पवनकरि स्पर्श्या ह मनरूपीजल जिसका, ऐसा रावणरूपी समुद्र अति क्षोभको प्राप्त भया। क्रोधकरि शरीरमें पसेव आयगया अर आखोकी आरक्ततासो समस्त आकाश लाल होय गया। अर क्रोधरूपी स्वरके उच्चारणत सव दिशा बधिर करते हुवे अर हाथियोका मद निवारते हुवे गाज कर ऐसा बोल्या "कौन ह वश्रवण अर कौन ह इन्द्र ? जो हमारे गोत्रको परिपाटी करि चली आई जो लका, ताको दाब रहे ह। जस काग अपने मनमे सियाना होय रह अर स्याल आपको अष्टापद मान, तस वह रक आपको इन्द्र मान रह्या ह। सो वे निलज्ज ह, अधम पुरुष ह, अपने सेवकनिपै इन्द्र कहाया तो क्या इन्द्र होयगया ? हे कुदूत ! हमारे निकट तू ऐसे कठोर वचन कहता हुआ कुछ भय नाहीं करता ?" ऐसा कहकर म्यानत खडग काढ्या सो आकाश खडगके तेज करि ऐसा व्याप्त होगया जसै नीलकमलोके वनकरि महा सरोवर व्याप्त होय।

तब विभीषणने बहुत विनयकरि रावणसो विनती करी अर दूतको मारने न दिया, अर यह कहा "हे महाराज ! यह पराया चाकर ह, इसका अपराध क्या ? जो वह कहाव सो यह कह। याम पुरुषार्थ नाहीं। अपनी देह आजीविकानिमित्त पालने को बेची ह। यह सूआ समान ह, ज्यो दूसरा बुलाव त्यो बोल। यह दूत लोग ह। इनके हिरदेमें इनका स्वामी पिशाचरूप प्रवेश कर रह्या है, उसके अनुसार वचन प्रवर्तें ह। जसें बाजित्रो जा भाति बादित्रको वजाव ताही भाति बाज, तसै इनका देह पराधीन ह स्वतन्त्र नाहीं। तात हे कृपानिधे ! प्रसन्न होवो अर दुखी जीवो पर दया ही करो। हे निष्कपट महाधीर ! रकनिके मारवेत लोकम बडी अपकीर्ति होय ह। यह खडग तुम्हारा शत्रु लोगोके शिरपर पड़ैगा, दीननिके बधकरनेयोग्य नाहीं। जस गरुड गेडुओको न मार तस आप अनाथनिको न मारो।" या भाति विभीषणने उत्तम वचन रूपी जलकरि रावणको क्रोधाग्नि बुझाई। कसे ह विभीषण ? १३१

महा सत्पुरुष हैं, न्यायके वेत्ता है। रावणके पायनि पड़ि दूतको बचाया अर सभाके लोकोने दूतको बाहिर निकाला। धिक्कार है सेवकका जन्म जो पराधीन दुःख सहै है।

दूतने जायकरि सब समाचार वैश्रवणको कहे। रावण-मुखकी अत्यन्त कठोरवाणीरूप ईंधनसो वैश्रवणके क्रोध रूपी अग्नि उठी सो चित्तविषै न समाय, वह मानो सब सेवकोके चित्तको बांट दीनो। भावार्थ—सब क्रोधरूप भए। रण संग्रामके बाजे बजाए, वैश्रवण सब सेना लेय युद्धके अर्थि बाहिर निकसे, या वैश्रवणके वंशके विद्याधर यक्ष कहावै, सो समस्त यक्षोको साथ लेय राक्षसनिपर चाले। अति झलझलाट करते खड्ग सेल चक्र बाणादि अनेक आयुधोको धरै हैं। अंजनगिरि समान माते हाथीनिके मद झरे है, मानो नीझरने ही है। तथा बडे रथ अनेक रत्नोकरि जडे सध्याके बादलके रंग समान मनोहर, महा तेजवंत, अपने वेगकरि पवनको जीतै है, तसे ही तुरंग अर पयादनिके समूह समुद्र समान गाजते, युद्धके अर्थि चाले। देवोके विमान समान सुन्दर विमानो पर चढे विद्याधर राजा वैश्रवण के लार चले। अर रावण इनके पहिले ही कुम्भकरणादि भाईनि सहित बाहर निकसे। युद्धकी अभि-लाषा रखती हुई दोनो सेनाओका संग्राम गुंज नामा पर्वतके ऊपर भया। शस्त्रोके संपातसे अग्नि दिखाई देने लगी। खड्गोके घातसे, घोडोके हींसनेसे, पयादोके नादसे, हाथियोंके गरजनेसे, रथोंके परस्पर शब्दसे, वादित्रोके बाजनेसे तथा बाणोके उग्र शब्दसे इत्यादि अनेक भयानक शब्दोसे रणभूमि गाज रही है। धरती आकाश शब्दायमान होय रहे हैं, वीर रसका राग होय है, योधाओंके मद चढ रह्या है, यमके वदन समान चक्र तीक्ष्ण है धारा जिनकी, अर यमराजकी जीभ समान खड्ग रुधिर धारा वर्षावनहारी, अर यमके रोम समान सेज, यमकी आंगुली समान शर (बाण), अर यमकी भुजा समान परिघ (कुल्हाडा), अर यमकी मुष्टि समान मुद्गर इत्यादि अनेक शस्त्रकरि परस्पर महायुद्ध प्रवरत्या। कायरोको त्रास अर योधाओको हर्ष उपज्या। सामंत सिरके बदले यशरूप धनको लेवै हैं। अनेक राक्षस अर कपि जातिके विद्याधर, अर यक्ष जातिके विद्याधर परस्पर युद्ध कर परलोकको

प्राप्त भए। कछुइक यक्षोके आगे राक्षस पीछे हटे। तदि रावण अपनी सेनाको दबी देख आप रण-संग्रामको उद्यमी भए। कैसे हैं रावण? महामनोज्ञ सफेद छत्र सिरपर फिर है जाके। कालमेघसमान चंद्रमंडलकी कांतिका जीतनहारा रावण धनुष बाण धारे, इन्द्रधनुषसमान अनेक रंगका बकतर पहिरे, शिरपर मुकुट धरे, नानाप्रकारके रत्नोके आभूषण संयुक्त, अपनी दीप्ति करि आकाशमें उद्योत करता आया। रावणको देखकर यक्ष जातिके विद्याधर क्षणमात्र विलखे, तेज दूर हो गया, रणकी अभिलाषा छोड पराङमुख भए, त्रासकरि आकुलित भया है चित्त जिनका, भ्रमरकी नाई भ्रमते भए। तब यक्षो के अधिपति बडे बडे योधा इकट्ठे होयकरि रावणके सम्मुख आए। रावण सबके छेदनेको प्रवरत्या, जैसे सिंह उछलकर माते हाथियोके कुंभस्थल विदारै तैसे रावण कोपरूपी वचनके प्रेरे अग्नि स्वरूप होयकर शत्रुसेनारूपी वनको दाह उपजावते भए। सो पुरुष नाहीं, सो रथ नाहीं, सो अश्व नाहीं, सो विमान नाहीं, जो रावणके बाणोसे न बींध्या गया। तब रावणको रणमें देख वैश्रवण भाईपनेका स्नेह जनावता भया, अर अपने मनमें पछताया। जैसे बाहुबलि भरतसो लडाई करि पछताए हुते तैसे वैश्रवण रावणसो विरोध कर पछताया। हाय! मैं मूर्ख ऐश्वर्यसे गर्वित होयकर भाईके विध्वंस करने में प्रवरत्या। यह विचार करि वैश्रवण रावणसो कहता भया—'हे दशानन! यह राजलक्ष्मी क्षणभंगुर है, याके निमित्त तू कहा पाप करै। मैं तेरी बडी मौसीका पुत्र हूं, तातै भाइयोसे अयोग्य व्यवहार करना योग्य नाहीं। अर यह जीव प्राणियोकी हिंसा करके महा भयानक नरकको प्राप्त होय है। नरक महा दुखसो भरया है। कैसे है जगतके जीव? विषयोकी अभिलाषामें फंसे है। आंखोकी पलक मात्र क्षण मात्र जीवना क्या तू न जानै है? भोगोके कारण पापकर्म काहेको करै है? तब रावणने कह्या—'हे वैश्रवण! यह धर्मश्रवणका समय नाहीं, जो माते हाथियोपर चढ अर खड्ग हाथमें धरै सो शत्रुवोको मारे तथा आप मरै। बहुत कहनेसे क्या? तू तलवारके मार्गविषै तिष्ठ अथवा मेरे पांव- परि पड। यदि तू धनपाल है तो हमारा भंडारी हो, अपना कर्म करते पुरुष लज्जा न करै। तब

वश्रवण बोले—'हे रावण ! तेरी आयु अल्प ह, तात ऐसे क्रूर वचन कह ह । शक्ति प्रमाण हमारे ऊपर शस्त्रका प्रहार कर । तब रावण कही—तुम बडे हो, प्रथम बार तुम करो । तवि रावण ऊपर वश्रवण बाण चलाये, जसे पहाडके ऊपर सूय किरण डारे । सो वैश्रवणके बाण रावणने अपने बाणनिकरि काट डारे अर अपने वाणनिकरि शर मण्डप करि डारे । बहुरि वैश्रवण अधचन्द्र बाणकरि रावणका धनुष छेद्या अर रथत रहित किया । तवि रावणने मेघनावनामा रथपर चढकर वश्रवणसू युद्ध किया, उल्कापात समान वजदडोसे वश्रवणका बकतर चूर डारचा । अर वश्रवणके सुकोमल हृदयविष भिण्डि माल मारी, सो मूर्छा प्राप्त भया । तब ताको सेनाविष अत्यन्त शोक भया, अर राक्षसोके कटकविष बहुत हष भया । अर वश्रवणके लोक वश्रवणकू खेतत उठायकरि यक्षपुर लेगए । अर रावण शत्रुवोको जीतकर रणसे निवत्ते । सुभटनिके शत्रुनिके जीतवेहीका प्रयोजन ह, धनादिकका प्रयोजन नाहीं ।

अथानन्तर वैश्रवणका वद्योने यतन किया सो अच्छा हुवा । तब अपने चित्तमें विचारे ह—जसे पुष्प रहित वक्ष तथा सींग टूटा बल, कमल विना सरोवर न सोह, तस म शूरवीरता बिना न सोहू । जे सामत ह अर क्षत्रीवत्तिका विरद धार ह तिनका जीतव्य सुभटताही करि शोभ ह । अर तिनकू ससारविष पराक्रमहीत सुख ह । सो मेरे अब नाहीं रहा । तात अब ससारका त्यागकर मुक्तिका यत्न करू । यह ससार असार ह क्षणभगुर ह, याहीत सत्पुरुष विषय सुखको नाहीं चाहं । अतराय सहित ह, अर अल्प ह, दुखो ह । ये प्राणी पूर्वभवविष जो अपराध कर ह ताका फल इस भवविष पराभव होय ह । सुख दु खका मूलकारण कम ही ह, अर प्राणी निमित्तमात्र ह । तात ज्ञानी तिनसे कोप न कर । कसा ह ज्ञानी ? ससारक स्वरूपको भली भाति जान ह । यह केकसीका पुत्र रावण मेरे कल्याण का निमित्त हुवा ह जान मोकू गहवासरूप महा फासीसे छुडाया । अर कुम्भकरण मेरा परम बाधव, १३४
जान यह सग्रामका कारण मेरे ज्ञानका निमित्त बनाया । ऐसा विचार कर वैश्रवणने दिगम्बरी दीक्षा आदरी । परम तपकू आराधकर परमधाम पधारे, ससार भ्रमणसे रहित भए ।

अथानन्तर रावण अपने कुलका अपमानरूप मल धोकर सुख अवस्थाको प्राप्त भया । समस्त भाइयोने उसको राक्षसोका शिखर जाना । वश्रवणकी असवारीका पुष्पकनामा विमान महा मनोग्य ह, रत्नोकी ज्योतिके अकुर छुट रहे ह, झरोखे ही ह नेत्र जाका, निमल कातिके धारणहारे, महा मुक्ताफलकी झालरोसे मानो अपने स्वामीके वियोगसे अश्रुपात हो डार ह, अर पद्मरागमणियोंकी प्रभासे आरक्तताको धारे ह, मानो यह वश्रवणका हृदय ही रावणके किये घावसे लाल हो रहा ह । पर इन्द्रनील मणियोकी प्रभा कसे अतिश्याम सुन्दरताको धर ह मानो स्वामीके शोकसे सावला होय रहा ह, चत्यालय वन वापी सरोवर अनेक मन्दिरोसे मडित मानो नगरका आकार ही ह । रावणके हाथके नाना प्रकारके घावसे मानो घायल हो रहा ह । रावणके मन्दिरसमान ऊचा जो वह विमान उसको रावणके सेवक रावणके समीप लाए । वह विमान आकाशका मडन ह । इस विमानको बैरी के भगका चिह्न जान रावणने आदरा, अर किसीका कुछ भी न लिया । रावणके किसी वस्तुकी कमी नाहीं । विद्यामई अनेक विमान ह तथापि पुष्पक विमानमें विशेष अनुरागसे चढे । रत्नश्रवा तथा केकसी माता अर समस्त प्रधान सेनापति तथा भाई बेटो सहित आप पुष्पक विमानमें आरूढ भया । अर पुरजन नाना प्रकारके वाहनो पर आरूढ भए । पुष्पकके मध्य महा कमलवन ह तहा आप मन्दोदरी आदि समस्त राजलोको सहित विराजे । कसे ह रावण ? अखड ह गति जिनकी, अपनी इच्छासे आश्चय-कारी आभूषण पहरे ह, अर श्रेष्ठ विद्याधरी चमर ढोरे ह, मलयागिरिके चन्दनादि अनेक सुगन्ध अगपर लगो ह, चन्द्रमाकी कीर्ति समान उज्ज्वल छत्र फिर ह, मानो शत्रुओके भगसे जो यश विस्तारा ह उस यशसे शोभायमान ह । धनुष त्रिशूल खडग सेल पाश इत्यादि अनेक हथियार जिनके हाथमें ऐसे जो सेवक, तिनकरि सयुक्त ह । महा भक्तियुक्त ह, अर अद्भुत कमनिके करणहारे, ह । तथा बडे १३५
बडे विद्याधर राजा सामन्त शत्रुनिके समूहके क्षय करणहारे, अपने गुणनिकरि स्वामीके मनके मोहन हारे, महा विभवकरि शोभित, तिनकरि दशमुख मडित ह । परम उदार, सूयकासा तेज धारता,

पूर्वोपार्जित पुण्यका फल भोगतासता दक्षिण समुद्रकी तरफ जहा लका ह ता ओर इन्द्रकोसी विभूति-करि युक्त चाल्या। कुम्भकरण भाई हस्तीपर चढे, विभीषण रथपर चढे, अपने लोगो सहित महा विभूतिकरि मडित रावणके पीछे चाले। राजा मय मदोदरीके पिता दत्य जातिके विद्याधरोके अधि पति भाइयो सहित अनेक सामतनिकरि युक्त तथा मारीच अवर विद्युतवज वजोदर बुधवजाक्षक्रूर क्रूरनक्र सारन सुनय शुक इत्यादि मत्रियो सहित महा विभूतिकर मडित अनक विद्याधरोके राजा रावणके सग चाले। कईएक सिहोके रथ चढे, कईएक अष्टापदोके रथपर चढकर वन पवत समुद्रकी शोभा देखते पथ्वीपर विहार किया अर समस्त दक्षिण दिशा वश करी।

अथान तर एक दिन रावणने अपने दादा सुमालीसे पूछ्या—'हे प्रभो! हे पूज्य! या पवतके मस्तक पर सरोवर नाही सो कमलनिका दन कसे फूल रहा ह? यह आश्चय ह, अर कमलोका वन चचल होय यह निश्चल ह।' या भाति सुमालीसू पूछ्या। कसा ह रावण? विनयकर नमीभूत ह शरीर जाका। तब सुमाली 'नम सिद्धेभ्य' ये मत्र पढकर कहते भए—हे पुत्र! यह कमलनिके वन नाहीं, या पवतके शिखरविष पद्मरागमणिमयी हरिषेण चक्रवर्तीके कराए चत्यालय है। जिनपर निमल ध्वजा फरहरे ह। अर नाना प्रकारके तोरणोसे शोभ ह। कसे ह हरिषेण? महा सज्जन पुरुषोतम थे जिनके गुण कहनेमे न आव। हे पुत्र! तू उतरकर पवित्र मन होकर नमस्कार कर। तब रावण बहुत विनय-करि जिनमदिरनिकू नमस्कार किया अर बहुत आश्चयको प्राप्त भया अर सुमालीसू हरिषेण चक्र-वर्तीकी कथा पूछी। हे देव! आपने जिसके गुण वणन किए ताकी कथा कहो।' यह विनती करी। कसा ह रावण? वश्रवणका जीतनहारा, बडेनिविष ह अति विनय जाको। तब सुमाली कहै ह—हे रावण! त भली पूछी। पापका नाश करणहारा हरिषेणका चरित्र सो सुन। कपिल्यानगरविष राजा सिहध्वज तिनके राणी वप्रा महा गुणवती सौभाग्यवती। राजाके अनेक राणी थी, परन्तु राणी वप्रा उनमें तिलक थी, ताक हरिषेण चक्रवर्ती पुत्र भए। चौसठ शुभ लक्षणकरि युक्त, पापकमके

न'श करनहारे। सो इनकी माता वप्रा महा धर्मवती सदा अष्टाह्निकाके उत्सवमें रथयात्रा किया कर। सो याकी सौकन राणी महालक्ष्मी सौभाग्यके मदसे कहती भई कि पहिले हमारा ब्रह्मरथ नगरमें भ्रमण हुआ करेगा, पीछे तिहारा निकसेगा। यह बात सुन राणी वप्रा हृदयविषै खेदभिन्न भई, मानो वज्रपातकरि पीडी गई। उसने ऐसी प्रतिज्ञा करी कि हमारे वीतरागका रथ अठाइयोमें पहिले निकसे तो हमको आहार करना अन्यथा नाहीं। ऐसा कहकर सब काज छोड दिया। शोककरि मुरझाय गया है मुखकमल जाका, अर अश्रुपातकी बूंद आंखनिसो डालती हुई। माताको देखकर हरिषेण कही—'हे मात! अब तक तुमने स्वप्नमात्रमें भी रुदन न किया, अब यह अमंगलकार्य क्यों करो हो?' तदि माता सब वृत्तांत कह्या। सुनकर हरिषेण मनमें सोची कि क्या करूं? एक ओर पिता अर एक ओर माता। मैं संकटमें पड्या, माताके अश्रुपात सहित देखवे समर्थ नाहीं। अर एक ओर पिता जिनसूं कछु कहा न जाय। तदि उदास होय घरतै निकसि वनकूं गए। तहां मिष्ट फलनिका भक्षण करते अर सरोवरनिका निर्मल जल पीवते निर्भय विहार किया। इनका सुन्दर रूप देखकर ता वनके निर्दयी पशु भी शांत हो गये। ऐसे भव्य जीव किसको प्यारे न हो? तहां वनविषै जब माताका रुदन याद आवै तब इनकूं ऐसी बाधा उपजै जो वनकी रमणीकताका सुख भूल जावै। सो हरिषेण चक्रवर्ती वनविषै वनदेवता समान भ्रमण करते, जिनको मृगी नेत्रनिकरि देखे है। सो वनविषै विहार करते शतमन्यु नामा तापसके आश्रममें गये। कैसा है आश्रम? वनके जीवनिका है आश्रय जहां।

अथानन्तर कालकल्प नामा राजा अति प्रबल, जाका बडा तेज अर बडी फौजसूं आनकर चंपा नगरी घेरी। सो तहां राजा जनमेजय। सो जनमेजय अर कालकल्पमें युद्ध भया। आगे जनमेजयने महलमें सुरंग बना राखी हुती सो ता मार्ग होयकर जनमेजयकी माता नागमती अपनी पुत्री मदनावली सहित निकसी, अर शतमन्यु तापसके आश्रममें आई। सो नागमतीकी पुत्री हरिषेण चक्रवर्तिका रूप देखकर कामके बाण करि बींधी गई। कैसे हैं कामके बाण? शरीरमें विकलताके करणहारे हैं। १३७

तब वाकू और भांति देख नागमती कहती भई—हे पुत्री ! तू विनयवान होयकर सुन कि मुनिने पहिले ही कहा हुता कि यह कन्या चक्रवर्तीको स्त्रीरत्न होयगी। सो यह चक्रवर्ती तेरे वर है। यह सुनकर अति आसक्त भई। तब तापसीने हरिषेणको निकास दिया, क्योंकि उसने विचारी कि कदाचित इनके संसर्ग होय तो इस बातसे हमारी अपकीर्ति होयगी। सो चक्रवर्ती इनके आश्रमसे और ठौर गये, अर तापसीको दीन जान युद्ध न किया। परन्तु चित्तमें वह कन्या बसी रही। सो इनको भोजनविषै अर शयनविषै काहू प्रकार स्थिरता नाहीं। जैसे भ्रामरी विद्याकरि कोऊ भ्रमै तैसे ये पृथ्वीमें भ्रमते भए। ग्राम नगर वन उपवन लताओंके मंडपमें इनको कहीं भी चैन नाहीं। कमलकोंके वन दावानल समान दीखैं। अर चन्द्रमाकी किरण वज्रकी सूई समान दीखै। अर केतकी बरछीकी अणी समान दीखै। पुष्पोंकी सुगंध मनको न हरै। चित्तमें ऐसा चितवते भए जो मैं यह स्त्रीरत्न वरूं तो मैं जायकर माताका भी शोक संताप दूर करूं। नदियोंके तटपर अर वनमें, ग्राममें, नगरमें, पर्वतपर भगवानके चैत्यालय कराऊं। यह चितवन करते संते अनेक देश भ्रमते सिंधुनंदन नगरके समीप आए। कैसे हैं हरिषेण ? महा बलवान अति तेजस्वी है। वहां नगरके बाहिर अनेक स्त्री क्रीडाको आई हुतीं। एक अंजनगिरि समान हाथी मद झरता स्त्रियोंके समीप आया। महावतने हेला मारकर स्त्रियोंसे कही 'जो यह हाथी मेरे वश नाहीं, तुम शीघ्र ही भागो। तब वे स्त्रियां हरिषेणके शरणे आईं। हरिषेण परमदयालु है महायोधा है। वह स्त्रियोंको पीछे करके आप हाथीके सन्मुख भए, अर मनमें विचारी जो वहां तो वे तापस दीन थे तातैं उनसे मैंने युद्ध न किया, वे मृग समान थे, परन्तु यहां यह दुष्ट हस्ती मेरे देखते स्त्री बालादिकको हनै, अर मैं सहाय न करूं। सो यह क्षत्रीवृत्ति नाहीं। यह हस्ती इन बालादिक दीन जनको पीडा देनेको समर्थ है। जैसे बैल सींगोंसे बमई को खोदै परन्तु पर्वतके खोदनेको समर्थ नाहीं। अर कोई बाणसे केलेके वृक्षको छेदै परन्तु शिलाको न छेद सकै, तैसे ही यह हाथी योधावोंको उडायवे समर्थ नाहीं। तदि आप महावतको कठोर वचनकरि कही कि हस्ती को यहांसे

दूर कर । तब महावतने कही तू भी बडा ढीठ है, हाथीको मनुष्य जाने है । हाथी आप ही मस्त होय रहा है । तेरी मौत आई है अथवा दुष्ट ग्रह लग्या है, तू यहासे वेग भाग । तब आप हँसे अर स्त्रियो को तो पीछे कर दिया अर आप ऊपरको उछल हाथीके दातनिपर पग देय कुम्भस्थलपर चढे, अर हाथीसे बहुत क्रीडा करी । कैसे है हरिषेण ? कमल सारिखे हैं नेत्र जिनके, अर उदार है वक्षस्थल जिनका, अर दिग्गजो के कुम्भस्थल समान है कांधे जिनके, अर स्तम्भ समान है जांघ जिनकी । तब ये वृत्तांत सुन सब नगरके लोग देखनेको आए । राजा महल ऊपर चढ्या देख था सो आश्चर्यको प्राप्त भया । अपने परिवारके लोग भेज इनको बुलाया । यह हाथीपर चढ नगरमें आए । नगरके नर–नारी समस्त इनको देख मोहित होय रहे । क्षणमात्रमें हाथीको निमद किया । यह अपने रूपसे समस्तका मन हरते नगरविषै आए । राजाकी सौ कन्या परणी । सब लोकनिमें हरिषेणकी कथा भई । राजासे अधिकार सम्मान पाय सर्व बातोसे सुखी है तो भी तपसियोके वन में जो स्त्री देखी थी उस बिना एक रात्रि वर्ष समान बीते । मनमें चितवते भये जो मुझ बिना वह मृगनयनी उस विषम वनमें मृगी समान परम आकुलताको प्राप्त होयगी । तातै मैं उसके निकट शीघ्र ही जाऊं । यह विचारते रात्रिविषै निद्रा न आती जो कदाचित अल्प निद्रा आई तौ भी स्वप्नमें उसहीको देखा । कैसी है वह ? कमल सारिखे हैं नेत्र जाके, मानो इनके मनहीमें बस रही है ।

अथानन्तर विद्याधर राजा शक्रधनु ताकी पुत्री जयचन्द्रा, उसकी सखी वेगवती, वह हरिषेणको रात्रिविषै उठायकर आकाशमें ले चाली । निद्राके क्षय होनेपर आपको आकाशमें जाता देख कोपकर उससे कहते भए–हे पापिनी ! हमको कहाँ ले जाय है । यद्यपि यह विद्याबलकर पूर्ण है तौ भी इनको क्रोध रूप मुष्टि बांधे, होठ डसते देखकर डरी, अर इनसे कहती भई हे प्रभु ! जैसे कोई मनुष्य जा वृक्षकी शाखापर बैठा होय ताहीको काटै तो क्या यह सयानपना है ? तैसे मैं तिहारी हितकारिणी, अर तुम मोहि हतो, यह उचित नाहीं । मैं तुमको जाके पास ले जाऊं हूं जो निरंतर तुम्हारे मिलापकी अभि-

लाषिनी ह । तब यह मनमें विचारते भए कि यह मिष्टभाषिणी परपोडाकारिणी नाहीं ह । इसकी आकृति मनोहर वीख ह अर आज मेरी दाहिनी आख भी फडक ह । इसिलये यह हमारी प्रियाकी सगमकारिणी ह । फिर इसको पूछा—'हे भद्रे ! तू अपनी आवनेका कारण कह ।' तब वह कहै ह कि— सूर्योदय नगरमें राजा शक्रधनु, राणी धारा, अर पुत्री जयचन्द्रा, वह गुण रूपके मद से महा उन्मत्त ह। कोई पुरुष उसकी वष्टिमें न आव । पिता जहा परणाया चाहे सो यह धार नाहीं । मैंने जिन जिन राजपुत्रोंक रूप चित्रपटपर लिखे दिखाए उनमें कोऊ भी उसके चित्तमें न रुच । तदि मैंने तुम्हारे रूपका चित्रपट दिखाया । तब वह मोहित भई, अर मोकू ऐस कहती भई कि मेरा इस नरसे सयोग न होय तो म मत्युकू प्राप्त होऊगी, अर अधम नरसे सबध न करू गी । तब मैंने उसको धीय बधाया, अर मैं ऐसी प्रतिज्ञा करी—जहा तेरी रुचि ह म उसे न लाऊ तो अग्निमे प्रवेश करू गी । अति शोकवत देख मैंने यह प्रतिज्ञा करी । ताके गुणकरि मेरा चित्त हरया गया ह, सो पुण्यके प्रभावसे आप मिले, मेरी प्रतिज्ञा पूण भई । ऐसा कह सूर्योदय नगरमे लेगई । राजा शक्रधनुसे व्योरा कहा । सो राजाने अपनी पुत्रीका इनसे पाणिग्रहण कराया, अर वेगवतीका बहुत यश माना । इनका विवाह देख परिजन अर पुरजन हर्षित भए । कसे ह ये वरकन्या ? अदभुतरूपक निधान ह । इनके विवाहकी वार्ता सुन कन्याके मामाके पुत्र गगाधर महीधर क्रोधायमान भए । जो या कन्याने हमको तजकर भूमिगोचरी वरया । यह विचारकर युद्धको उद्यमी भए । तब राजा शक्रधनु हरिषेणसू कहता भया कि मैं युद्ध मे जाऊ हू, आप नगरमें तिष्ठो । वे दुराचारी विद्याधर युद्ध करनेको आए ह । तब हरिषेण ससुरसे कहते भए कि जो पराए कार्यको उद्यमी होय सो अपने कायको कसें उद्यम न करें ? तात हे पूज्य ! मोहि आज्ञा करो । म युद्ध करू गा । तब ससुरने अनेक प्रकार निवारण किया, पर यह न रहे । नाना
प्रकार हथियारनिकरि पूण ऐसे रथपर चढ जिसमे पवनगामी अश्व जुरे, अर सूयवीय सारथी हाके, इनके पीछे बडे २ विद्याधर चाले । कई हाथियोपर चढे, कई अश्वो पर चढे, कई रथोपर चढे । परस्पर

महा युद्ध भया। कछुइक शक्रधनुकी फौज हटी तब आप हरिषेण युद्ध करनेको उद्यमी भए, सो जिस ओर रथ चलाया उस ओर घोडा हस्ती मनुष्य रथ कोऊ टिक नाहीं। सब बाणनिकरि बींधे गए। सब कापते युद्धसे भागे। महा भयभीत होय कहते भए 'गगाधर महीधरने बुरा किया जो ऐसे पुरुषोत्तमत युद्ध किया। यह साक्षात सूय समान है, जसे सूय अपनी किरण पसार, तसे यह बाणकी वर्षा कर ह।' अपनी फौज हटी देख गगाधर महीधर भाजे, तब इनके क्षणमात्रमें रत्न भी उत्पन्न भए। दशवा चक्रवर्ती महा प्रतापको धर पृथ्वीविष प्रकट भया। यद्यपि चक्रवर्तीकी विभूति पाई परन्तु अपनी स्त्री रत्न जो मदनावली उसके परणवेकी इच्छास द्वादश योजन परिमाण कटक साथ ले राजाओको निवारते तपस्वियोके बनके समीप आए। तपस्वी बनफल लेकर आय मिले। पहिले इनका निरादर किया था, ताकरि शकावान हुते, सो इनको अति विवेकी पुण्याधिकारी देख हर्षित भए। शतमन्युका पुत्र जो जनमेजय अर मदनावलीकी माता नागमती उन्होने मदनावली, चक्रवर्तीको विधिपूवक परणाई। तब आप चक्रवर्तीकी विभूतिसहित कम्पिल्यानगर आए, बत्तीस हजार मुकुटबध राजाओने सग आकर माताके चरणारविंदको हाथ जोडकर नमस्कार किया। माता वप्रा ऐसे पुत्रको देखि ऐसी हर्षित भई जो गातमें न समाव। हषके अश्रुपात करि व्याप्त भए है लोचन जाक। तब चक्रवर्तीने जब अष्टाह्निका आई तो भगवान का रथ सूयसे भी महा मनोज्ञ काढा, अष्टाह्निकाकी यात्रा करी। मुनि श्रावकनिकू परम आनद भया, बहुत जीव जिनधम अगीकार करते भए। सो यह कथा रावण को सुमाली ने कही। हे पुत्र! ता चक्रवर्तीने भगवानके मदिर पृथ्वीविष, सवत्र पुर ग्रामादिविष, पवतनिपर तथा नदीनके तटपर अनेक चत्यालय रत्नस्वणमयी कराये। वे महापुरुष बहुतकाल चक्रवर्तीकी सपदा भोगि मुनि होय महा तपकर लोकशिखर सिधारे। यह हरिषेणका, चरित्र रावण सुनकर हर्षित भया। सुमालीकी बारबार स्तुति करी, अर जिन मदिरनिका दशनकर रावण डेरा आये। डेरा सम्मेदशिखरके समीप भया।

अथानन्तर रावणको दिग्विजयमें उद्यमी देख मानो सूय भी भयकरि दृष्टिगोचरसू रहित भया,

ताकी अरुणता प्रकटी, मानो रावणके अनुराग ही करि जगत हर्षित भया। बहुरि सध्या मिन्कर रात्रिका अन्धकार फल्या, मानो अधकार प्रकाशके भयसे दशमुखके शरण आया। बहुरि रात्रि व्यतीत भई अर प्रभात भया। अर रावण प्रभातकी क्रियाकर सिहासन विराजे। अकस्मात एक ध्वनि सुनी, मानो वर्षाकालका मेघही गरज्या। जाकरि सकल सेना भयभीत हुई। अर कटकके हाथी जिन वक्षोसे बधे थे तिनका भग करते भये। कनसेरे ऊचेकर तुरग हींसते भये। तब रावण बोले—'यह क्या है? यह मरणेको हमारे ऊपर कौन आया? यह वश्रवण आया अथवा इन्द्रका प्रेरा सोम आया अथवा हमको निश्चल तिष्ठे देख कोई और शत्रु आया।' तब रावणकी आज्ञा पाय प्रहस्त सेनापति उस ओर देखनेको गया सो पवतके आकार मदोन्मत्त अनेक लीला करता हाथी देख्या।

तब आय रावणसौ वीनती करी कि हे प्रभो! मेघकी घटा समान हाथी ह। इसको इन्द्र भी पकडनेको समथ न भया। तब रावण हसकर बोले—हे प्रहस्त! अपनी प्रशसा करणी योग्य नाहीं, म इस हाथीको क्षणमात्रमे वश करू गा। यह कहकर पुष्पक विमानमें चढि, जाय हाथी देख्या। भले २ लक्षणनिकरि इन्द्रनीलमणि समान अति सुन्दर ह श्याम शरीर जाका, कमल समान आरक्त ह तालुवा जाका, अर महामनोहर उज्ज्वल दीघगोल ह नेत्र जाके, दात सात हाथ ऊचा, नौ हाथ लाबा, दश हाथ चौडा कछुइक पीत ह, सुन्दर ह पीठ जाकी, अगला अग उतग ह, अर लम्बी पूछ ह, अर बडी सूड ह, अत्यन्त स्निग्ध सुन्दर नख ह, गोल कठोर सुन्दर कुम्भस्थल ह, प्रबल चरण ह, माधुयताको लिये महावीर गभीर ह गजना जाकी, अर क्षरते हुवे मदकी सुगधतासे गु जार करे ह भ्रमर जापर, दुदुभी बाजनिकी ध्वनि समान गभीर ह नाद जाका, अर ताडवक्षके पत्र समान जो कान तिनकू हलावता, मन अर नेत्रनिकी हरनहारी सुन्दर लीलाको करता, रावण हस्तीकू देख्या। देखकर बहुत प्रसन्न भया। हष कर रोमाच होय आए। तब पुष्पक नामा विमानसे उतर, गाढी कमर बाधकर उसके आग जाय शख पूरया। ताके शब्दकरि दशोदिशा शब्दायमान भई। तब शखका शब्द सुन

चित्तमें क्षोभको पाय हाथी गरज्या, अर दशमुखके सम्मुख आया। बलकर गर्भित तब रावण अपने उत्तरासनका गेंद बनाय शीघ्र ही हाथीकी ओर फेंका। रावण गजकेलिमें प्रवीण है, सो हाथी तो गेंदके सूंघनेको लगा। अर रावण आकाशविषं उछलकर भ्रमरोंकी ध्वनिसे शोभित गजके कुम्भस्थल पर हस्ततल मारचा, हाथी सूंडसे पकडनेको उद्यम किया। तदि रावण अति शीघ्रता कर दोऊ दांतके बीच होय निकस गए। हाथीसूं अनेक क्रीडा करी। दशमुख हाथीकी पीठ पर चढ बैठे। हाथी विनयवान शिष्यकी न्याई खडा होय रहा। तब आकाशसे रावण पर पुष्पोंकी वर्षा भई। अर देवोंने जयजयकार शब्द किए। अर रावणकी सेना बहुत हर्षित भई। रावणने हाथीका त्रैलोक्यमंडन नाम धरचा, याको पाय रावण बहुत हर्षित भया। रावणने हाथीके लाभका बहुत उत्सव किया। अर सम्मेदशिखर पर्वतपर जाय यात्रा करी। विद्याधरोंने नृत्य किया। वह रात्रि वहां ही रह्या। प्रभात हुवा, सूर्य उगा, मानो दिवसने मंगलका कलश रावणको दिखाया। कैसा है दिवस? सेवाकी विधिमें प्रवीण है, तब रावण डेरामें आय सिंहासनपर विराज्या, हाथीकी कथा सभामें कहते भये।

ता समय एक विद्याधर आकाशतें रावणके निकट आया। सो अत्यन्त कम्पायमान, जाके पसेवकी बूंद झरे है, बहुत खेदखिन्न घायल हुआ, अश्रुपात डारता, जर्जरा है तनु जाका, हाथ जोड नमस्कार कर विनती करता भया। हे देव! आज दशवां दिन है, राजा सूर्यरज रक्षरज बानरवंशी विद्याधर तिहारे बलकरि है बल जिनमें, सो आपका प्रताप जानि अपने किहकंध नगर लेनेके अर्थ अलंकारोदय जो पाताललंका तातें अति उछाहसे चाले। कैसे हैं दोऊ भाई? तिहारे बलकरि महा अभिमान युक्त जगतको तृण समान मानै, ते किहकंधपुर जाय घेरचा। तहां इन्द्रका यमनामा दिग्पाल, ताके योधा युद्ध करनेको निकसे, हाथमें हैं आयुध जिनके। बानरवंशिनिके अर यमके लोकोंमें महायुद्ध भया। परस्पर बहुत मारे गए। तब युद्धका कलकलाट सुन यम आप निकसा। कैसा है यम? महाक्रोधकरि पूर्ण, अति भयंकर, न सहा जाय है तेज जाका। सो यमके आवते ही बानरवंशियोंका बल भागा। अनेक आयुधनि-

कर घायल भए। यह कथा कहता कहता वह विद्याधर मूर्छाको प्राप्त भया। तब रावणने शीतोपचारकरि सावधान किया। अर पूछा—'आगे क्या भया ? तब वह विश्राम पाय हाथ जोड फिर कहता भया—'हे नाथ ! सूयरजका छोटा भाई रक्षरज अपने बलको व्याकुल देख आप युद्ध करने लगे। सो यमके साथ बहुत बेरतक युद्ध किया। यम अतिबली, उसने रक्षरजको पकड लिया। तब सूयरज युद्ध करने लगे, बहुत युद्ध भया। यमने आयुधका प्रहार किया, सो राजा घायल होय मूर्छित भए। तब अपने पक्षके सामतोने राजाको उठाय मेघला वनमें ले जाय शीतोपचार कर सावधान किया। बहुरि यम अपना यमपना सत्य करता सता एक बदीगह बनाया। उसका नरक नाम धरचा। तहा वतरनी आदि सब विधि बनाई। जे जे वाने जीते, अर पकडे वे सब नरकमें दिये। सो उस नरकमें कईएक तो मर गए, कईएक दुख भोग ह। वहा उस नरकमें सूयरज अर रक्षरज ये भी दोनो भाई ह। यह वत्तात म देखकर बहुत व्याकुल होय आपके निकट आया हू। आप उनके रक्षक हो, अर जीवनमूल हो। उनके आपका ही विश्वास ह, अर मेरा नाम शाखावली ह, मेरा पिता रणदक्ष, माता सुश्रोणी। म रक्ष रजका प्यारा चाकर, सो आपको यह वत्तात कहनेको आया हू। म तो आपको जतावा देय निश्चिन्त भया। अपने पक्षको दुख-अवस्थामें जान आपको जो कतव्य होय सो करो।

तब रावणने उसे दिलासा कर, याहि सतोष दे, याके घावका यत्न कराया, अर तत्काल सूयरज रक्षरजके छुडावनेको महाक्रोधकर यमपर चाले। अर मुसकरायकर कहते भए—कहा यम रक हमसे युद्ध कर सक ? जो मनुष्य उसने वतरणी आदि क्लेशके सागरमें डार राखे हैं, म आज ही उनको छुडाऊगा। अर उस पापीने जो नरक बना राख्या ह, ताहि विध्वस करूगा। देखो दुजनकी दुष्टता ! जीवोको ऐसे सताप देह। यह विचारकर आपही चाले। प्रहस्त सेनापति आदि अनेक राजा बडी सेनासे आगे दौडे। नानाप्रकारके वाहनोपर चढे शस्त्रोके तेज से आकाशमें उद्योत करते अनेक वादित्रोके नाद होते महा उत्साहसे चाले, विद्याधरोके अधिपति किहकू पुरके समीप गए। सो दूरसे नगरके घरोंकी १४४

शोभा देखकर आश्चर्य को प्राप्त भए । किहकू पुरकी दक्षिण दिशाके समीप यम विद्याधरका बनाया हुवा अकीतम नरक देख्या । जहा एक ऊचा खाडा खोद राखा है । अर नरककी नकल बनाय राखी है । अनेक नरनिके समूह नरकमें राखे ह । तब रावणने उस नरकके रखवारे, जे यमके किंकर हुते, कूट कर काढ दिये, अर सब प्राणी सूयरज रक्षरज आदि दुख सागरसे निकासे । कसे ह रावण ? दीननके बधु, दुष्टोको दड देनहारे हैं । वह सब नरक स्थान ही दूर किया । यह वत्तात परचक्रके आवनेका सुन यम बडे आडबरसे सब सेनासहित युद्ध करवेकू आया । मानो समुद्र ही क्षोभको प्राप्त भया । पवत सारिखे अनेक गज मदधारा झरते, भयानक शब्द करते, अनेक आभूषणयुक्त, उनपर महा योधा चढे, अर तुरग पवन सारिखे चचल जिनकी पूछ चमर समान हालती, अनेक आभूषण पहिरे, उनकी पीठ पर महाबाहु सुभट चढे, अर सूयके रथ समान अनेक ध्वजाओकी पक्तिसे शोभायमान, जिनमें बडे बडे सामत बकतर पहरे, शस्त्रोके समूह धार बठे, इत्यादि महा सेना सहित यम आया । तब विभीषणने यमकी सब सेना अपने बाणोसे हटाई । कसे ह विभीषण ? रणविष प्रवीण, रथविषै आरूढ ह । विभीषणके बाणोसे यम किंकर पुकारते हुये भागे । यम, किंकरोके भागने अर नारकियो के छुडानेसे महा क्रूर होकर विभीषणपर रथ चढ्या धनुषको धारे आया । ऊचो ह ध्वजा जाकी, काले सप समान कुटिल ह केश जाके, भकुटी चढाए लाल ह नेत्र जाके, जगत रूप ई धनके भस्म करणे को अग्नि समान आप तुल्य जो बडे बडे सामत उन कर मडित, युद्ध करणे को अपने तेजसे आकाश विष उद्योत करता सता आया । तब रावण यमको देख विभीषणको निवार आप रणसग्राममें उद्यमी भए । यमके प्रतापसे सब राक्षस सेना भयभीत होय रावणके पीछे आय गई । कसा ह यम ? अनेक आडम्बर धर ह, भयानक ह मुख जाका । रावण भी रथपर आरूढ होकर यमके सन्मुख भए । अपने बाणनके समूह यमपर चलाए । इन दोनोके बाणनिकरि आकाश आच्छादित भया । कसे हैं बाण ? भयानक ह शब्द जिनका । जसे मेघोके समूहसे आकाश व्याप्त होय तसे बाणोसे आच्छादित होगया ।

रावणने यमके सारथीको प्रहार किया, सो सारथी भूमिमें पडा, अर एक बाण यमके लगाया सो यम भी रथसे गिरता भया। तब यम रावणको महा बलवान देखि दक्षिण दिशाका दिग्पालपणा छोड भाग्या। सारे कुटुम्बको लेकर परिजन पुरजन सहित रथनूपुर गया। इन्द्रसू नमस्कार कर विनती करता भया। "हे देव! आप कपा करो, अथवा कोप करो, आजीविका राखहु अथवा हरो, तिहारी जो बाछा होय सो करो। यह यमपणा मुझसे न होय। मालीके भाई सुमालीका पोता दशानन महा योधा, जिसने पहिले तो वश्रवण जीता वह तो मुनि होगया। अर मुझे भी उसने जीता सो म भाग कर तुम्हारे निकट आया हू। उसका शरीर वीररसस बना ह। वह महात्मा ह, वह जेष्ठके मध्याह्नका सूय समान कभी भी न देखा जाय ह।" यह वार्ता सुन कर रथनूपुरका राजा इन्द्र सग्रामको उद्यमी भया, तब मन्त्रियोके समूहने मने किया। कसे ह मत्री? वस्तुका यथाथ स्वरूप जाननहारे ह। तब इन्द्र समझकर बठ रहा। इन्द्र यमका जमाई ह, उसने यमको दिलासा दिया कि तुम बडे योधा हो, तुम्हारे योधापनेमें कमी नाहीं। परन्तु रावण प्रचड पराक्रमी ह याते तुम चिता न करो, यहा ही सुखसे तिष्ठो। ऐसा कहकर इनका बहुत सन्मान कर राजा इन्द्र राजलोकमे गए अर कामभोगके समुद्रमें मग्न भए। कसा ह इन्द्र? बडा ह विभूतिका मद जाके। रावणके चरित्रके जो जो वत्तात यमने कहे हुते, वश्रवणका वराग्य लेना, अर अपना भागना वह इन्द्र ऐश्वयके मदमें भल गए, जसे अभ्यास विना विद्या भूल जाय। अर यम भी इन्द्रका सत्कार पाय, अर असुर सगीत नगरका राज पाय मान भगका दुख भूल गया। मनमें मानता भया कि—जो मेरी पुत्री महा रूपवन्ती सो तो इन्द्रके प्राणो से भी प्यारी ह, अर मेरा अर इन्द्रका बडा सम्बन्ध ह। ताते मेरे कहा कमी ह?

अथानन्तर रावणने किहकधपुर तो सूयरजको दिया अर किहकूपुर रक्षरजको दिया। वोउनको सदाके हितू जान बहुत आदर किया। रावणके प्रसादसे बानरवशी सुखसे तिष्ठे। रावण सब राजों का राजा महा लक्ष्मी अर कीर्तिको धर दिग्विजय कर। बडे २ राजा दिनप्रति आय आय मिलै।

सो रावणका कटकरूप समुद्र अनेक राजावोकी सेनारूपी नदीसे पूरित होता भया। अर दिन दिन विभव अधिक होता भया। जसे शुक्लपक्षका चन्द्रमा दिन दिन कलाकर बढता जाय तैसे रावण दिन दिन बढता जाय। पुष्पक नामा विमानविषे आरूढ होय त्रिकूटाचलके शिखरपर आय तिष्ठा। कैसा है विमान? रत्ननकी मालासे मंडित है, अर ऊचे शिखरोकी पंक्तिकर विराजित है, शीघ्र जहाँ चाहै वहाँ जाय। ऐसे विमानका स्वामी रावण, महा धीयताकरि मण्डित, पुण्यके फलका है उदय जाके। जब रावण त्रिकूटाचलके शिखर सिधारे सब बातोमें प्रवीण तब राक्षसोके समूह नाना प्रकारके वस्त्राभूषण कर मण्डित परमहर्षकू प्राप्त भए। सब राक्षस रावणको ऐसे मंगल वचन गम्भीर शब्द कहते भये "हे देव! तुम जयवंत होवो, आनन्दको प्राप्त होवो, चिरकाल जीवो, वृद्धिको प्राप्त होवो, उदयको प्राप्त होवो"। निरंतर ऐसे मंगल वचन गम्भीर शब्द कर कहते भए। कई एक सिंह शारदूलोपर चढे, कई एक हाथी घोडोपर चढे, कईएक हंसो पर चढे, प्रमोदकर फूल रहे हैं नेत्र जिनके, देवो जैसा आकार धरं, जिनका तेज आकाश विषे फैल रहा है, वन पर्वत अन्तरद्वीपके विद्याधर राक्षस आए समुद्रको देखकर विस्मय को प्राप्त भए। कैसा है समुद्र? नही दीखै है पार जिनका, अति गम्भीर है, महामत्स्यादि जलचरो कर भरा है, तमाल वन समान श्याम है, पर्वत समान ऊंचो ऊंचो उठै है लहर के समूह जाविषै, पाताल समान ओंडा, अनेक नाग नागनिकरि भयानक, नानाप्रकारके रत्नोंके समूह करि शोभायमान, नानाप्रकारकी अद्भुत चेष्टाको धारं। अर लंकापुरी अति सुन्दर हुती ही अर रावणके आनेसे अधिक समारी गई है। कैसी है लंका? अति देदीप्यमान रत्नो का कोट है जाके, अर गम्भीर खाईकर मण्डित है, कुन्दके पुष्प समान अति उज्ज्वल स्फटिक मणिके महल हैं जिनमे। इन्द्र नीलमणियोकी जाली शोभै है, अर कहू इक पद्मराग मणियोके अरुण महिल है, कहू एक पुष्पराग मणिनके महल, कहू एक मरकन्दमणिनके महल है इत्यादि अनेक मणियोके मन्दिरोसे लंका स्वर्गपुरी समान है। नगरी तो सदा ही रमणीक है परन्तु धनीके आयवेकरि अधिक बनी है। रावणने अतिहर्षसे

लकामें प्रवेश किया। कसा ह रावण ? जाको काहूकी शका नाहीं, पहाड समान हाथी, तिनकी अधिक शोभा बनी ह, अर मन्दिर समान रत्नमई रथ बहुत सवारे ह, अश्वोके समूह हींसते, चलायमान चमर समान ह पूछ जिनकी, अर विमान अनेक प्रभाको धर इत्यादि महा विभूति कर रावण आया। चद्रमा के समान उज्ज्वल सिरपर छत्र फिरते, अनेक ध्वजा पताका फहराती, बदीजनके समूह विरद बखानते, महामगल शब्द होते, बीण वासुरी शख इत्यादि अनेक वादित्र बाजते, दशोदिशा अर आकाश शब्दायमान होरहा ह। इस विधि लकामें पधारे। तब लकाके लोग अपने स्वामी का आगमन देख दशनक लालसी हाथमे अघ लिए, पत्र फल पुष्प रत्न लिए, अनेक सुन्दर वस्त्र आभूषण पहरे, राग रग सहित रावणके समीप आए। वद्धनकू आगे धर तिनके पीछे आय नमस्कार कर कहते भये 'हे नाथ! लकाके लोग अजितनाथके समयसे आपके घरके शुभचितक ह। सो स्वामीको अति प्रबल देख अति प्रसन्न भए ह भाति भातिकी आशीस दीनी। तब रावणने बहुत दिलासा देकर सीख दीनी। तब रावणके गुण गावते अपने अपने घरको गये।

अथानतर रावणके महलमे कौतुकयुक्त नगरकी नरनारी अनेक आभूषण पहिर, रावणके देखने की ह इच्छा जिनको, सव घरके काय छोड २ पथ्वीनाथके देखनेको आई। कसे ह रावण ? वश्रवण के जीतनहारे तथा यम विद्याधरके जीतनहारे अपने महलविष राजलोकसहित सुखसू तिष्ठे। कसा है महल ? चूडामणि समान मनोहर ह। और भी विद्याधरोके अधिपति यथायोग्य स्थानकेविष आनन्दसो तिष्ठे, देवन समान ह चरित्र जिनके।

अथानन्तर गौतम स्वामी राजा श्रेणिकसू कह ह—हे श्रेणिक! जो उज्ज्वल कमके करणहारे ह तिनका निमल यश पथ्वीविष होय ह, नाना प्रकारके रत्नादिक सम्पदाका समागम होय है, अर प्रबल शत्रुओका निमूल पथ्वी विष होय ह, सकल त्रलोक्यविष गुण विस्तर ह। या जीवके प्रचण्ड बरी पाच इद्रियोके विषय ह, जो जीवकी बुद्धि हर, अर पापोको बध करै ह। यह इन्द्रियोके विषय

धमके प्रसादसे वशीभूत होय ह अर राजाओके बाहिरले बरी प्रजाके बाधक ते भी प्राय पावोविष पडे है। ऐसा मानकर जो धमके विरोधी विषयरूप बरी ह वे विवेकियोको वश करने योग्य ह। तिनका सेवन सवथा न करना। जसे सूयकी किरणोसे उद्योत होते सते भली दष्टिवाले पुरुष अन्धकारकरि व्याप्त ओडे खधकविष नहीं पडे ह, तसे जे भगवानके मागविष प्रवर्त्तै ह तिनके पापबुद्धिकी प्रवृत्ति नहीं होय ह।

इति श्री विषणाचायविरचित महापद्मपुराण भाषा वचनिकाविष दशग्रीवका निरूपण करनेवाला आठवा पर्व पूण भया ॥ ८ ॥

अथानन्तर आगे अपने इष्टदेवकू विधिपूवक नमस्कार करि, उनके गुण स्तवनकरि किहकधपुर विष राजा सूयरज वानरवशो, तिनकी राणी चन्द्रमालिनो अनेक गुणसम्पन्न, ताके बालो नामा पुत्र भए। सो वणन करिए ह। सो हे भव्य! तू सुन। कसे ह बालो? सदा उपकारो शीलवान पडित प्रवोण धीर—लक्ष्मीवान शूरवीर ज्ञानी अनेक—कला सयुक्त सम्यकदष्टि महाबली राजनीतिविष प्रवीण धीयवान दयाकर भीगा ह चित्त जिनका, विद्याके समूह गर्वित मडित कातिवान तेजवत है।

ऐसे पुरुष ससारमे विरले ही ह जो समस्त अढाई द्वीपोके जिनमदिरोके दशनमें उद्यमी है। कसे है वे जिनमदिर? अति उत्कष्ट प्रभावकर मडित ह। बाली तीनो काल अति श्रेष्ठ भक्तियुक्त सशय रहित श्रद्धावत जम्बूद्वीपके सव चत्यालयनिके दशन कर आव। महा पराक्रमी, शत्रुपक्षका जीतनहारा, नगरके लोगोके नेत्ररूपी कुमुदके प्रफुल्लित करनेको चन्द्रमा समान, जिसको किसीकी शका नाहीं। किहकधपुरमें देवनकी न्याई रम। कसा ह किहकधपुर? महारमणीक नाना प्रकारके रत्नमयी मदिरो से मडित, गज तुरग रथादिसे पूण, नाना प्रकारका व्यापार ह जहा, अर अनेक सुन्दर हाटनकी पक्तिन कर युक्त ह, जहा जसे स्वगविष इन्द्र रम तसे रम ह। अनुक्रमत जाके छोटा भाई सुग्रीव भया।
सो महाधीर वीर मनोज्ञरूप कर युक्त, महा नीतिवान विनयवान ह। ये दोनो ही वीर कुलके आभूषण होते भए जिनका, आभूषण बडोका विनय ह। सुग्रीवके पीछे श्रीप्रभा बहिन भई जो साक्षात लक्ष्मी,

रूपकर अतुल्य ह । अर किहकधपुरविष सूयरजका छोटा भाई रक्षरज, ताकी राणी हरिकाता, ताके पुत्र नल, अर नील होते भए । सुजनोके आनन्दके उपजावनहारे महासामत रिपुकी शकारहित मानो किहकधपुरके मडन ही ह । इन दोनो भाइयोके दो दो पुत्र महागुणवत भए । राजा सूयरज अपने पुत्रोको यौवनवत देख मर्यादाके पालक जान, आप विषयोको विष मिश्रित अन्न समान जान, ससारसे विरक्त भए । कसे ह राजा सूयरज ? महाज्ञानवान ह । बालीको पथ्वीके पालने निमित्त राज दिया, अर सुग्रीवको युवराजपद दिया, अपने स्वजन परजन समान जाने, अर यह चतुरगतिरूप जगत महादु ख करि पीडित देख विहतमोह नामा मुनिके शिष्य भए । जसा भगवानने भाष्या तसा चारित्र धारचा । कसे ह मुनि सूयरज ? शरीरविष भी नहीं ह ममत्व जिनके, आकाश सारिखा निमल ह अत करण जिनका, समस्त परिग्रहरहित, पवनकी नाई पथ्वीविष विहार किया । विषयकषायरहित मुक्तिके अभिलाषी भए ।

अथानन्तर बालीके ध्रु वा नामा स्त्री महा पतिव्रता, गुणोके उदयसे सकडो राणियोमें मुख्य उस सहित ऐश्वयको धर राजा बाली बानरवशियोके मुकुट, विद्याधरनि करि मानिये ह आज्ञा जाकी, सुन्दर ह चरित्र जाके, सो देवनके ऐसे सुख भोगते भए, किहकधपुरमे राज कर ।

रावणकी बहिन च द्रनखा, जिसक सव गात मनोहर, राजा मेघप्रभका पुत्र खरदूषणने जिस दिन से इसको देखा उस दिनसे कामबाणकरि पीडित भया, याको हरा चाह । सो एक दिन रावण, राजा प्रवर राणी आवली, उनकी पुत्री तनूदरी उसके अथ एक दिन रावण गए, सो खरदूषणने लका रावण विना खाली देख चि तारहित होय च द्रनखा हरी । कसा ह खरदूषण ? अनेक विद्याका धारक, मायाचारमें प्रवीण ह बुद्धि जाकी । दोऊ भाई कुम्भकरण अर विभीषण बडे शूरवीर ह, परन्तु छिद्र १५
पायकरि मायाचारकरि कन्याकू हर ले गया । तब वे क्या कर, ता पीछे सेना दौडनी लगी । तब कुम्भकरण विभीषणने यह जानकर मनै करी कि खरदूषण पकडचा तो जाव नाहीं, अर मारणा

योग्य नाहीं । बहुरि रावण आए, तदि ए वार्ता सुनि अति क्रोध किया । यद्यपि मागके खेदसे शरीर-विष पसेव आया हुता, तथापि तत्काल खरदूषणपर जानेको उद्यमी भए । कसा ह रावण ? महामानी ह । एक खडगहीका सहाय लिया, अर सेना भी लार न लीनी, यह विचारा कि जो महावीयवान परा-क्रमी ह, तिनके एक खडगहीका सहारा ह । तब मदोदरीने हाथ जोड विनती करी–'हे प्रभो ! आप प्रकट लौकिक स्थितिके ज्ञाता हो, अपनी घरकी कन्या औरको देनी, अर औरोकी आप लेनी । इन कन्याओकी उत्पत्ति एसी ही ह । अर खरदूषण चौदह हजार विद्याधरोका स्वामी ह, जो विद्याधर युद्धसे कद ही पीछे न हटें, बडे बलवान ह, अर इस खरदूषणको अनेक सहस विद्या सिद्ध ह, महागव-वत ह, आप समान शूरवीर ह, यह वार्ता लोकनिसे क्या आपने नाहीं सुनी ह । आपके अर उसके भयानक युद्ध प्रवरते तब भी हारजीतका सदेह ही ह । अर वह कन्या हर ले गया ह, सो वह हरणकरि दूषित भई ह, औरनकू जो न देने आव सो खरदूषणके मारनेसे वह विधवा होय ह । अर सूयरजको मुक्ति गए पीछे चद्रोदर विद्याधर पातालल्कामे थाने हुता । ताहि काढकर यह खरदूषण तुम्हारी बहिन-सहित पातालल्काविषे तिष्ठ ह, तिहारा सम्बन्धी ह ।' तब रावण बोले हे प्रिये ! म युद्धसे कभी नहीं डरू । परन्तु तिहारे वचन नहीं उलघने, अर बहिन विधवा नहीं करणी, सो हमने क्षमा करी । तब मदोदरी प्रसन्न भई ।

अथानन्तर कमनिके नियोगसे चद्रोदर विद्याधर कालकू प्राप्त भया । तब ताकी स्त्री अनुराधा गर्भिणी, विचारी भयानक वनमे हिरणीकी नाई भम, सो मणिकात पवतपर सुन्दर पुत्र जना । शिला ऊपर पुत्रका जन्म भया, कसी ह शिला ? कोमल पल्लव अर पुष्पोके समूहसे सयुक्त ह । अनुक्रमसे बालक वद्धिको भया । यह बनवासिनी माता उदास चित्त पुत्रकी आशासे पुत्रको पाल । जब यह पुत्र गभमें आया तब हीसे इनके माता पिताको वरियोसे विराधना उपजी, तातै याका नाम विराधित, राजसम्पदावर्जित जहा २ राजनिप जाय तहाँ तहाँ याका आदर न होय । सो जैसे सिरका केश स्थानक

से छूटा आदर न पावे तैसे जो निज स्थानकसे रहित होय उसका सन्मान कहांते होय ? सो यह राजा का पुत्र खरदूषणको जीतिवे समर्थ नाहीं सो चित्तविषै खरदूषणका उपाय चितवता हुआ सावधान रहे। अर अनेक देशोंमें भ्रमण कर, षट कुलाचलनिविषै अर सुमेरु आदि पर्वतनिविषै तथा रमणीक वनोंमें जो अतिशय स्थानक हैं, जहाँ देवनिका आगमन है, तहाँ यह विहार कर, अर संग्रामविषै योद्धा लड़ें तिनके चरित्र आकाशमें देवोंके साथ देखे, संग्राम गज अश्व रथादिकर पूर्ण है। अर ध्वजा छत्रादिककर शोभित है। या भांति विराधित कालक्षेप करै अर लंकाविषै रावण इंद्रकी नाई सुखसूं तिष्ठै।

अथानन्तर सूर्यरजका पुत्र बाली, रावणकी आज्ञातै विमुख भया। कैसा है बाली ? अद्भुत कर्मों की करणहारी जो महाविद्या तिनकरि मण्डित है, अर महाबली है। तब रावणने बालीपै दूत भेजा। सो दूत महा बुद्धिमान किहकंधपुर जायकर बालीसे कहता भया—'हे वानराधीश ! दशमुख तुमकूं आज्ञा करी है सो सुनो। कैसे है दशमुख ? महाबली महातेजस्वी महालक्ष्मीवान महानीतिवान महासेनाकरियुक्त, प्रचंडनकूं दंड देनहारे, महा उदयवान, जिस समान भरतक्षेत्रमें दूजा नाहीं। पृथ्वीके देव अर शत्रुवोंका मान मर्दन करनहारा है, यह आज्ञा करी है, जो तिहारे पिता सूर्यरजको मैंने राजा यम बैरीको काढकर किहकंधपुरमें थाप्या अर तुम सदाके हमारे मित्र हो, परन्तु आप अब उपकार भूलकर हमसों पराङमुख हो गए हो, यह योग्य नाहीं है। मैं तुम्हारे पितासे भी अधिक प्रीति तुमसे करूंगा। अब तुम शीघ्र ही हमारे निकट आवो, प्रणाम करो, अर अपनी बहिन श्रीप्रभा हमको परणावो, हमारे सम्बंधसे तुमको सब सुख होयगा। दूतने कही—ऐसी रावणकी आज्ञा प्रमाण करो। सो बालीके मनमें और बात तो आई, परन्तु एक प्रणाम की न आई, काहेतै ? जो याकै देव गुरु शास्त्र विना औरको नमस्कार नाहीं करै, यह प्रतिज्ञा है। तब दूतने फिर कही हे कपिध्वज ! अधिक कहनेसे कहा ? मेरे वचन तुम निश्चय करो, अल्प लक्ष्मी पाकर गर्व मत करो, या तो दोनों हाथ जोड प्रणाम करो या आयुध पकडो।

या तो सेवक होयकर स्वामीपर चवर ढौरो या भागकर दशो दिशाविष विचरो, या सिर नवावो या खैंचिके धनुष निवावो, या रावणकी आज्ञाको कणका आभूषण करहु, या धनुषकी प्रत्यचा खैंचकर कानोतक लावो। रावण आज्ञा करी है कि या तो मेरे चरणारविंदकी रज माथे चढावहु या रणसंग्रामविष सिरपर टोप धरो, या तो बाण छोडो या धरती छोडो, या तो हाथमें वेत्र दंड लेकर सेवा करो या बरछी हाथमें पकडो, या तो अंजली जोडहु या सेना जोडहु। या तो मेरे चरणोंके नखविष मुख देखहु या खड्गरूप दर्पणमें मुख देखहु। ये कठोर वचन रावणके दूतने बालीसें कहे। तदि बालीका व्याघ्रविलंबी नामा सुभट कहता भया। रे कुदूत! नीचपुरुष! तू ऐसे अविवेक वचन कहै है सो तू खोटे ग्रहकर ग्रह्या है। समस्त पृथ्वीविष प्रसिद्ध है पराक्रम अर गुण जाका, ऐसा बाली देव तेरे कुराक्षसने अबतक कर्णगोचर नहीं किया। ऐसा कहकर सुभटने महा क्रोधायमान होकर दूतके मारणेकूं खड्गपर हाथ धर्या, तदि बालीने मने किया, जो इस रंकके मारणेसे कहा? यह तो अपने नाथके कहे प्रमाण वचन बोलै है। अर रावण ऐसे वचन कहावै है। सो उसीकी आयु अल्प है, तदि दूत डर कर सिताब रावणपै गया। रावणको सकल वृत्तांत कह्या, सो रावण महाक्रोधकूं प्राप्त भया। दुस्सह तेजवान रावणने बडी सेनाकरि मंडित बखतर पहन शीघ्र ही कूच किया। रावणका शरीर तेजोमय परमाणुवोंसे रचा गया है। रावण किहकंधपुर पहुंचे। तदि बाली संग्रामविष प्रवीण महा भयानक शब्द सुनकर युद्धके अर्थ बाहिर निकसनेका उद्यम किया। तब महाबुद्धिमान नीतिवान जे सागर वृद्धादिक मंत्री, तिनने वचनरूप जलकर शांत किया कि—हे देव! निष्कारण युद्ध करनेसे कहा? क्षमा करो, आगे अनेक योधा मान करके क्षय गए। कैसे हैं वे योधा? रण ही है प्रिय जिनकूं, अष्टचन्द्र विद्याधर अर्ककीर्तिके भुजके आधार, जिनके देव सहाई तौ भी मेघेश्वर जयकुमारके बाणों कर क्षय भए। रावणकी बडी सेना है जिसकी ओर कोई देख सकै नाहीं, खड्ग गदा सेल बाण इत्यादि अनेक आयुधोंकर भरी है, अतुल्य है। तातैं आप संदेहकी तुला जो संग्राम उसके अर्थ न चढो। तब

बालीने कही अहो मन्त्री हो ! अपनी प्रशसा करनी योग्य नाहीं तथापि म तुमको यथार्थ कहू हूँ कि इस रावणको सेनासहित एक क्षणमात्रमें बावें हाथकी हथेलीसे चूर डालनेको समथ हूँ, परन्तु यह भोग क्षणविनश्वर है, इनके अथ निदय कम कौन कर ? जब क्रोधरूपी अग्निसे मन प्रज्ज्वलित होय तब निदय कम होय ह । यह जगतके भोग केलेके थभ समान असार ह । तिनको पाकर मोहवत जीव नरकमें पड ह । नरक महा दुखोसे भरया ह । सब जीवोको जीतव्य वल्लभ ह । सो जीवोके समूह को हत कर इद्रियोके भोग सुख पाइए ह तिनकरि गुण कहाँ ? इन्द्रियसुख साक्षात दु:ख ही ह । ये प्राणी ससाररूपी महाकूपमें अरहटकी घडीके यत्र समान रीती भरी करते रहते है । कसे हैं ये जीव ? विकल्प जालस अत्यन्त दु खी ह । श्रीजिनेंद्र देवके चरणयुगल ससारके तारणेके कारण ह, तिनकू नमस्कारकरि औरकू कसे नमस्कार करू ? मैंने पहिलेसे ऐसी प्रतिज्ञा करी ह कि देव गुरु शास्त्रके सिवाय औरको प्रणाम न करू ? तात म अपनी प्रतिज्ञा भग भी न करू अर युद्धविष अनेक प्राणियोका प्रलय भी न करू । बलिक मुक्तिकी देनहारी सब सगरहित दिगम्बरी दीक्षा धरू । मेरे जो हाथ श्रीजिनराजकी पूजा में प्रवरतें, दानविष प्रवरतें, अर पथ्वीकी रक्षाविष प्रवरत, वे मेरे हाथ कसे किसीको प्रणाम करें ? अर जो हस्तकमल जोडकर पराया किकर होवे, उसका कहाँ ऐश्वय ? अर कहा जीतव्य ? वह तो दीन ह । ऐसा कहकर सुग्रीवको बुलाय आज्ञा करते भये कि 'हे बालक ! सुनो, तुम रावणको नमस्कार करो वा न करो, अपनी बहिन उसे देवो अथवा मत देवो, मेरे कछु प्रयोजन नाहीं । म ससारके माग से निवृत्त भया, तुमको रुच सो करो । ऐसा कहकर सुग्रीवको राज्य देय आप गुणन कर गरिष्ठ श्रीगगनचन्द्र मुनित परमेश्वरी दीक्षा आदरी । परमाथमें लगाया ह चित्त जिनने, अर पाया ह परम उदय जिनने, वे बाली योधा परम ऋषि होय एक चिद्रूप भावमें रत भए । सम्यग्दशन ह निमल जिनके, १५४
सम्यक्ज्ञान कर युक्त ह आत्मा जिनका, सम्यकचारित्रविष तत्पर, बारह अनुप्रेक्षाओका निरतर विचार करते भए । आत्मानुभवमें मग्न मोह जालरहित स्वगुणरूपी भूमिपर विहार करते भये । कसी है

गुण भूमि ? निर्मल आचारी जे मुनि तिनकरि सेवनीक हैं। बाली मुनि पिताकी नाईं सब जीवोपर दयालु बाह्याभ्यतर तपसे कर्मकी निर्जरा करते भए। वे शांतबुद्धि तपोनिधि महाऋद्धिके निवास होते भए, सुन्दर है दर्शन जिनका, ऊंचे ऊंचे गुणस्थानरूपी जे सिवाण तिनके चढनेमें उद्यमी भए। भेदी है अंतरंग मिथ्याभावरूपी ग्रंथि (गांठ) जिनने, बाह्याभ्यतर परिग्रहरहित, जिन सूत्रके द्वारा कृत्य अकृत्य सब जानते भये। महा गुणवान, महासंवरकर मंडित कर्मोंके समूहको खिपावते भए। प्राणोकी रक्षा-मात्र सूत्रप्रमाण आहार लेय हैं। अर प्राणनिकू धर्मके निमित्त धारे हैं, अर धर्मकू मोक्षके अर्थ उपारजे हैं, भव्यलोकनिकू आनंदके करनहारे उत्तम है आचरण जिनके, ऐसे बाली मुनि और मुनियो को उपमा योग्य होते भये। अर सुग्रीव रावणको अपनी बहिन परणायकर रावणकी आज्ञा प्रमाण किहकंधपुरका राज्य करता भया।

पृथ्वीविषै जो जो विद्याधरोकी कन्या रूपवती थीं रावणने वे समस्त अपने पराक्रमसे परणी। नित्यालोक नगरमें राजा नित्यालोक राणी श्रीदेवी, तिनकी रत्नावली नामा पुत्री, उसको परणकर रावणलंकाको आवते हुते, सो कैलाश पर्वत ऊपर आय निकसे। सो पुष्पक विमान तहांके जिनमंदिरनि के प्रभाव करि अर बाली मुनिके प्रभाव करि आगे न चल सका। कैसा है विमान ? मनके वेग समान चंचल है। जैसे सुमेरुके तटकू पायकरि वायुमंडल थंभ तैसे विमान थम्भा। तदि घंटाकिंककका शब्द होता रह गया। मानो विलषा होय मौनको प्राप्त भया। तदि रावण विमानको अटका देख मारीच मन्त्रीसे पूछते भए कि यह विमान कौन कारणसे अटक्या। तदि मारीच सब वृत्तांत विषै प्रवीण, कहता भया। हे देव ! सुनो यह कैलाश पर्वत है। यहां कोई मुनि कायोत्सर्गकरि तिष्ठे हैं, शिला के ऊपर रत्नके थंभ समान सूर्यके सन्मुख ग्रीष्ममें आतापनयोग धर तिष्ठे हैं। अपनी कांति से सूर्य की कांतिको जीतता हुआ विराजे है। यह महामुनि धीरवीर हैं, महाघोर वीर-तपको धरे हैं, शीघ्र ही मुक्तिको प्राप्त हुआ चाहे हैं। इसलिए उतरकर दर्शन करि आगे चालो तथा विमान पीछे फेर कैलाशको छोडकर और

मार्ग होय चलो। जो कदाचित हठकर कलाशके ऊपर होय चालोगे, तो विमान खड खड होजायगा। यह मारीचके वचन सुनकर राजा यमका जीतनहारा रावण अपने पराक्रमसे गर्वित होकर कलाश पवतको देखता भया। कसा ह पवत ? मानो व्याकरण ही ह, क्योकि नानाप्रकारके धातुनि करि भरचा ह। अर सहस गुण युक्त नाना प्रकारके सुवणको रचनासे रमणीक पद पक्तियुक्त नानाप्रकार के स्वरो कर पूण ह। बहुरि कसा ह पवत ? ऊचे तीखे शिखरोके समूहकरि शोभायमान ह। आकाश से लग्या ह, निसरते उछलते जे जलके नीझरने तिनकरि प्रकट हँसे ही ह। कमल आदि अनेक पुष्प, तिनकी सुगध, सोई भई सुरा, ताकरि मत्त जे भमर, तिनकी गु जारसे अति सुन्दर ह। नानाप्रकारके वक्षोकर भरचा ह, बडे २ शालके जो वक्ष तिनकर मडित जहा छहो ऋतुओके फल फूल शोभ ह। अनेक जातिके जीव विचर ह। जहा ऐसी ऐसी औषध ह जिनके वासत सर्पोके समूह दूर रह ह। महा मनोहर सुगधसे मानो वह पवत सदा नवयौवनहीको धर ह। अर मानो वह पवत पूवपुरुष समान ही ह। विस्तीण जे शिला वे ही ह हृदय जाक, अर शाल वक्ष वे ही महा भुजा, अर गभीर गुफा सो ही वदन, अर वह पवत शरद ऋतुके मेघ समान निमल तट तिनकरि सु दर, मानो दुग्ध समान अपनी काति से दशो दिशाको स्नान ही कराव ह। कईएक गुफानिविष सूते जे सिह तिनकर भयानक ह, कहू एक सूते जो अजगर तिनके स्वासकरि हाल ह वक्ष जहा। कहू एक भमत क्रीडा करते जे हिरणोके समूह तिनकर शोभ ह कहूएक मात हाथियोके समूहसे मडित ह वन जहा, कहूएक फूलनिके समूह करि मानो रोमाच होय रहा ह। अर कहूएक वनकी सघनता करि भयानक ह, कहूएक कमलोके वनसे शोभित ह सरोवर जहा, कहूएक वानरनिके समूह वक्षनिकी शाखानिपर के लि कर रहे ह। अर कहूएक गडान के षगकर छेदे गए ह जो चदनादि सुगध वक्ष—तिनकरि सुगध होय रहा ह। कहूएक बिजलीके उद्योत करि मेल्या जो मेघमण्डल उस समान शोभाको धर ह, कहूइक दिवाकर समान जो ज्योतिरूप शिखर तिनकरि उद्योतरूप किया ह आकाश जान। ऐसा कलाशपवत देखि रावण विमानत उतरचा। तहाँ

ध्यानरूपी समुद्रविषै मग्न, अपने शरीरके तेजसे प्रकाश करी है दशो दिशा जिनने, ऐसे बाली महामुनि देखे। दिग्गजनकी सूण्ड समान दोऊ भुजा लम्बाए, कायोत्सर्ग धर खडे, लिपटि रहे हैं शरीरसे सर्प जिनके, मानो चंदनके वृक्ष ही हैं। आतापनि शिलापर निश्चल खडे प्राणियोको ऐसा दीख मानो पाषाणका थंभ ही है। रावण बाली मुनिको देखकरि पूर्व बैर चितारि पापी क्रोधरूपी अग्निसे प्रज्वलित भया। भृकुटि चढाय होठ डसता कठोर शब्द मुनि को कहता भया—'अहो यह कहा तप तेरा, जो अब भी अभिमान न छूटचा। मेरा विमान चलता थाम्या। कहाँ उत्तम क्षमारूप वीतरागका धर्म अर कहाँ पापरूप क्रोध? तू वृथा खेद करै है। अमृत अर विषको एक किया चाहै है। तातै तेरा गर्व दूर करूंगा, तुझ सहित कैलाशपर्वतको उखाड समुद्र में डार दूंगा।" ऐसे कठोर वचन कहकर रावणने विकराल रूप किया। सर्व विद्या जे साधी है तिनकी अधिष्ठाता देवी चितवनमात्रसे आय ठाढी भई, सो विद्याबलकरि रावणने महारूप किया, धरतीको भेद पातालमें पैठा। महा पापविषै उद्यमी है, प्रचंड क्रोधकरि लाल है नेत्र जाके, अर हुंकार शब्दकरि वाचाल है मुख जाका, भुजावोकर कैलाशपर्वतके उखाडनेका उद्यम किया। तदि सिंह हस्ती सर्प हिरण इत्यादि अनेक जीव अर अनेक जातिके पक्षी भयकरि कोलाहल शब्द करते भए। जलके नीझरन टूट गए, जल गिरने लगा, वृक्षोके समूह फट गए, पर्वतकी शिला अर पाषाण पडते भए, तिनके विकराल शब्दकरि दशूं दिशा कैलाश पर्वत चलायमान भया। जो देव क्रीडा करते हुते ते आश्चर्यको प्राप्त भए, दशो दिशाकी ओर देखते भए। अर जो अप्सरा लतावोके मण्डपमें केलि करती हुतीं सो लतावोको छोड आकाशमें गमन करती भई। भगवान बालीने रावणका कर्त्तव्य जान आप धीरवीर क्रोध रहित कछु भी खेद न मान्या, जैसे निश्चल विराजे हुते तैसे ही रहे। चित्तमें ऐसा विचार किया—जो पर्वतपर भगवानके चैत्यालय अति उत्तम महासुन्दरताकरि शोभित, सर्व रत्नमयी, भरत चक्रवर्तीके कराए हैं, जहां निरंतर भक्तिसंयुक्त सुर असुर विद्याधर पूजाको आवै है, मति या पर्वतके कम्पायमान होनेकरि चैत्यालयोका भंग होय,

अर यहा अनेक जीव विचर ह तिनकू बाधा न होय, ऐसा विचारकरि अपने चरणका अगुष्ठ ढीला दाब्या। सो रावण महाभाराक्रात होय दब्या। बहुरूप बनाया था सो भग भया, महादु ख कर व्याकुल नेत्रोसे रक्त झरने लगा, मुकुट टूट गया अर माथा भीग गया, पवत बठ गया, रावणके गोडे छिल गए, जघा भी छिल गई तत्काल पसेवमे भीग गया, अर धरती पसेव करि गीली भई। रावणके गात्र सकुच गए, कछुवे समान हो गया, तब रोणे लगा, ताही कारणसे पथ्वीमे रावण कहाया। अब तक दशानन कहावे था। इसके अत्यत दीन शब्द सुनकरि इसकी राणी अत्यत विलाप करती भई। अर मत्री सेना पति लारके सव सुभट पहिले तो भमकर वथा युद्ध करनेको उद्यमी भए थे, पीछे मुनिका अतिशय जान सव आयुध डार दिये। मुनिके कायबल ऋद्धिके प्रभावत देव दु दुभी बजाने लगे, अर कल्पवक्षोके फूलो की वर्षा भई, तापर भमर गु जार करते भए, आकाशमे देव देवी नत्य करते भए, गीतकी ध्वनि होती भई। तब महामुनि परमदयालु अगुष्ठ ढीला किया।

रावणने पवतके तलेस निकसि बाली मुनिके समीप आय नमस्कार कर क्षमा कराई। अर जान्या ह तपका बल जान, योगीश्वरकी बारम्बार स्तुति करते भये। हे नाथ! तुमने घरहीतें यह प्रतिज्ञा करी हुती जो म जिनेंद्र मुनींद्र जिनशासन सिवाय काहूकू भी प्रणाम न करू, सो यह सब सामथ्य का फल ह। अहो धन्य ह निश्चय तिहारा, धन्य यह तपका बल! हे भगवान! तुम योग शक्तिसे त्रैलोक्य को अन्यथा करनेको समथ हो, परन्तु उत्तमक्षमा धमके योगसे सबप दयालु हो, किसीपर क्रोध नाहीं। हे प्रभो! जसा तपकरपूण मुनिको बिना ही यत्न परमसामथ होय ह तसी इन्द्रादिकके नाहीं। धन्य गुण तिहारे, धन्य रूप तिहारा, धन्य काति तिहारी, धन्य आश्चयकारी बल तिहारा, अदभुत दीप्ति तिहारी, अदभुत शील, अदभुत तप, त्रलोक्यमें जे अदभुत परमाणु ह तिनकरि सुकतका आधार तिहारा शरीर बना ह, जन्महीत महाबली, सव सामथके धरणहारे, तुम नव यौवनमें जगतकी मायाको तजकरि परम शातभावरूप जो अरहतकी दीक्षा ताहि प्राप्त भए हो, सो यह अदभुत काय

तुम सारिखे सत्पुरुषोकर ही बने ह । मुझ पापीने तुम सारिखे सत्पुरुषोसे अविनय किया सो महा पाप का बध किया ! धिक्कार मेरे मन वचन कायको । म पापी मुनिद्रोहमें प्रवरत्या, जिनमंदिरनिका अविनय भया । आप सारिखे पुरुषरत्न अर मुझ सारिखे दुबुद्धि सो सुमेरु अर सरसोकासा अतर ह । मोकू मरतेकू आज आप प्राण दिए । आप दयालु हम सारिखे दुष्ट दुजन तिन ऊपर भी क्षमा करो इस समान और कहा । म जिनशासनको श्रवण करू हू, जानू हू देखू हू, जो यह ससार असार हैं, अस्थिर ह, दु खभाव ह । तथापि म पापी विषयनिसे वराग्यको नाहीं प्राप्त भया । धन्य ह वे पुण्यवान महापुरुष, अल्प ससारी, मोक्षके पात्र, जे तरुण अवस्थाहीमें विषयोको तजि, मोक्षका माग मुनिवत आचर ह । या भाति मुनिकी स्तुतिकर तीन प्रदक्षिणा देय नमस्कारकरि अपनी निंदा करि बहुत लज्जावान होय मुनिके समीप जे जिनमंदिर हुते तहा वदनाको प्रवेश किया । चद्रहास खडगको पृथ्वी विष मेलि अपनी राणीनिकरि मंडित जिनवरका अचन करता भया । भुजामेसे नस रूप तात काढ कर बीण समान बजाता भया । भक्तिमें पूण ह भाव जाका, स्तुतिकर जिनेंद्रके गुणानुवाद गावता भया । हे देवाधिदेव ! लोकालोक देखनहारे, नमस्कार हो तुमकू । कसे हो ? लोकको उलघे ऐसा है तेज तिहारा । हे कताथ महात्मा ! नमस्कार हो । कसे हो ? तीन लोककरि करी ह पूजा जिनकी, नष्ट किया ह मोहका वेग जिन्होंने, वचनसे अगोचर गुणोके समूहके धरनहारे, महा ऐश्वयकरि मंडित, मोक्ष मागके उपदेशक, सुखकी उत्कण्टतामें पूण, समस्त कुमागसे दूर, जीवनको भुक्ति अर मुक्तिके कारण, महाकल्याणके मूल, सव कर्मके साक्षी, ध्यानकर भस्म किए ह पाप जिन्होंने, जन्म मरणके दूर करनहारे, समस्तके गुरु, आपके कोई गुरु नाहीं, आप किसीको नव नाहीं, अर सबकरि नमस्कार करने योग्य, आदि अन्तरहित, समस्त परमाथके जाननहारे, आपको केवली बिना अन्य न जान सक, सब रागादिक उपाधिसे शून्य, सवके उपदेशक, द्रव्यार्थिक नयसे सब नित्य ह अर पर्यायार्थिक नयसे सब अनित्य ह—ऐसा कथन करनहारे, किसी एक नयसे द्रव्य गुणका भेद, किसी एक नयसे द्रव्य गुण

का अभेद—ऐसा अनेकात दिखावन हारे, जिनेश्वर, सवरूप, एकरूप चिद्रूप, अरूप, जीवनको मुक्ति के देनहारे, ऐसे जो तुम, तिनको हमारा बारम्बार नमस्कार होहु ।

श्री ऋषभ, अजित, सम्भव, अभिनन्दन, सुमति, पदमप्रभ, सुपाश्व, चन्द्रप्रभ पुष्पदत, शीतल, श्रेयास, वासुपूज्यके ताई बारम्बार नमस्कार हो । पाया ह आत्मप्रकाश जिन्होने विमल अनन्त धम शातिके ताई नमस्कार हो । निरतर सुखोके मूल सबको शातिके करता कुन्थु जिनेन्द्रके ताई नमस्कार हो । अरनाथके ताई नमस्कार हो । मल्लिमहेश्वरके ताई नमस्कार हो । मुनिसुव्रतनाथके ताई जे महाव्रतोके देनहारे, अर अब जो होवेंगे नमि नेम पाश्व वद्धमान तिनके ताई नमस्कार हो । अर जो पदमनाभादिक अनागत होवेंगे तिनको नमस्कार हो । अर जो निर्वाणादिक अतीत जिन भए तिनको नमस्कार हो । सदा सवदा साधुओको नमस्कार हो, अर सव सिद्धोको निरतर नमस्कार हो । कसे ह सिद्ध ? केवलज्ञानरूप, केवलदशनरूप, क्षायक सम्यक्त्वरूप इत्यादि अनत गुणरूप ह ।" यह पवित्र अक्षर लकाके स्वामीने गाए ।

रावण द्वारा जिनेन्द्रदेवकी महा स्तुति करनेसे धरणेन्द्रका आसन कम्पायमान भया । तब अवधि ज्ञानसे रावणका वत्तात जान हषसे फूले ह नेत्र जिनके, सुन्दर ह मुख जिनका, देदीप्यमान मणियो के ऊपर जो मणि उनकी कातिसे दूर किया ह अधकारका समूह जिनने, पातालसे शीघ्र ही नागोके राजा कलाश पर आए । जिनेन्द्रको नमस्कारकरि विधिपूवक समस्त मनोज्ञ द्रव्योसे भगवानकी पूजा करि रावणसे कहते भए—'हे भव्य ! तने भगवानकी स्तुति बहुत करी, अर जिनभक्तिके बहुत सुन्दर गीत गाए । सो हमको बहुत हष उपज्या, हष करि हमारा शरीर आनन्दरूप भया । हे राक्षसेश्वर ! धन्य ह तू जो जिनराजकी स्तुति कर । तेरे भावकरि अबार हमारा आगमन भया ह । म तेरेसे सतुष्ट भया, तू वर माग । जो मनवाछित वस्तु तू मागे सो दू । जो वस्तु मनुष्योको दुलभ ह सो तुम्हें दू । तब रावण कहते भए हे नागराज ! जिनवदनातुल्य और कहा शुभ वस्तु ह, सो म आपसे मागू । आप सब

बात समर्थ मनवांछित देने लायक है। तब नागपति बोले—हे रावण! जिनेन्द्रकी वंदनाके तुल्य और कल्याण नाहीं। यह जिनभक्ति अराधी हुई मुक्तिके सुख देव है। तातैं या तुल्य और कोई पदार्थ न हुआ न होयगा।' तब रावणने कही—हे महामते! जो इससे अधिक और वस्तु नाहीं तो मैं कहा याचूं?' तब नागपति बोले—'तात जो कहा सो सब सत्य है। जिनभक्तिसे सब कुछ सिद्ध होय है, याको कुछ दुर्लभ नाहीं। तुम सारिखे, मुझ सारिखे, अर इन्द्र सारिखे अनेक पद सब जिनभक्तिसे ही होय हैं। अर यह संसारके सुख अल्प हैं, विनाशीक हैं, इनकी क्या बात? मोक्षके अविनाशी जो अतींद्रीसुख वे भी जिनभक्तिकरि प्राप्त होय हैं। हे रावण! तुम यद्यपि अत्यन्त त्यागी हो, महा विनयवान बलवान हो, महाऐश्वर्यवान हो, गुणकरि शोभित हो तथापि मेरा दर्शन तुमको वृथा मत होय। तेरेसे प्रार्थना करूं हूं कि तू कुछ मांग। यह मैं जानूं हूं तू जाचक नाहीं, परन्तु मैं अमोघ विजयानामा शक्ति विद्या तुझे दूं हूं सो हे लंकेश! तू ले। हमारा स्नेह खण्डन मत कर। हे रावण! किसीकी दशा एकसी कभी नहीं रहती, संपत्तिके अनन्तर विपत्ति अर विपत्तिके अनन्तर सम्पत्ति होती है। जो कदाचित मनुष्य शरीर है अर तुझपर विपत्ति पडे तो यह शक्ति तेरे शत्रुकी नाशनहारी अर तेरी रक्षाकी करनहारी होयगी। मनुष्योंकी क्या बात, इससे देव भी डरे हैं। यह शक्ति अग्नि ज्वालाकरि मंडित विस्तीर्ण शक्तिकी धारनेहारी है। तब रावण धरणेन्द्रकी आज्ञा लोपनको असमर्थ होता हुआ शक्ति को ग्रहण करता भया, क्योंकि किसीसे कुछ लेना अत्यन्त लघुता है। सो इस बातसे रावण प्रसन्न नहीं भया। रावण अति उदारचित्त है। तब धरणेन्द्रसे रावणने हाथ जोड नमस्कार किया। धरणेन्द्र आप अपने स्थानको गए। कैसे हैं धरणेन्द्र? प्रकटा है हर्ष जिनके। रावण एक मास कैलाश पर रहकर भगवानके चैत्यालयोंकी महाभक्तिसे पूजाकरि अर बालीमुनिकी स्तुतिकरि अपने स्थानक गए।

बालीमुनिने जो कछुएक मनके क्षोभसे पापकर्म उपार्ज्या हुता सो गुरुवोंके निकट जाय प्रायश्चित्त लिया, शल्य दूरकर परम सुखी भए। जैसे विष्णुकुमार मुनिने मुनियोंकी रक्षानिमित्त बालीका परा

भव किया हुता अर गुरुसे प्रायश्चित्त लेय परम सुखी भए थे तस बाली मुनिने चैत्यालयोकी अर अनेक जीवोकी रक्षा निमित्त रावणका पराभव किया, कैलाश थाम्भा, फिर गुरुपै प्रायश्चित्त लेय शल्य मेट परम सुखी भए। चारित्रसे, गुप्तिसे, धर्मसे, अनुप्रेक्षासे, समितिसे, परीषहोके सहनेसे महासंवरको पाय कर्मोंकी निर्जराकरि बाली मुनि केवलज्ञानको प्राप्त भए। अष्टकर्मसे रहित होय तीन लोकके शिखर अविनाशी स्थानमे अविनाशी अनुपम सुखको प्राप्त भए। अर रावणने मनमें विचारा कि जो इद्रियो को जीते तिनको मै जीतिवे समर्थ नाही, तातै राजाओको साधुओकी सेवा ही करना योग्य है। ऐसा जान साधुओकी सेवामे तत्पर होता भया। सम्यग्दर्शनसे मंडित जिनेश्वरमें दृढ है भक्ति जिसकी, काम भोगमे अतृप्त, यथेष्ट सुखसे तिष्ठता भया।

यह बालीका चरित्र पुण्याधिकारी जीव, भावविषै तत्पर है बुद्धि जाकी भलीभांति सुनै सो कबहू अपमानकू प्राप्त न होइ। अर सूर्य समान प्रतापकू प्राप्त होय।

इति श्री रविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण भाषा वचनिकाविषै बाली मुनिका निरूपण करनेवाला नवमा पर्व पूर्ण भया॥ ९॥

अथानन्तर गौतम स्वामी राजा श्रेणिकतै कहै है—हे श्रेणिक! यह बालीका वृत्तात तोकू कह्या, अब सुग्रीव अर सुतारा राणीका वृत्तांत सुन। ज्योतिपुर नामा नगर, तहा राजा अग्निशिख, राणी ह्री, उनकी पुत्री सुतारा, जो सम्पूर्ण स्त्रीगुणोसे पूर्ण, सर्व पृथ्वीमे रूप गुणकी शोभासे प्रसिद्ध, मानो कमलोका निवास तज साक्षात लक्ष्मी ही आई है। अर राजा चक्राक, उसकी राणी अनुमति, तिनका पुत्र साहसगति, महादुष्ट। एक दिन अपनी इच्छासे भ्रमण कर था, सो तानै सुतारा देखी, देखकर काम शल्यसे अत्यन्त दुखीहोकर निरन्तर सुताराको मनमें धरता भया। दशा जाकी उन्मत्त है ऐसा, दूत भेज सुताराको याचता भया, अर सुग्रीव भी बारम्बार याचता भया। कैसी है वह सुतारा? महामनोहर है। तब राजा अग्निशिख सुताराका पिता दुविधामे पड भया कि कन्या किसको देनी। तब महाज्ञानी १६२

मुनिको पूछी । मुनीद्रने कहा कि साहसगतिकी अल्प आयु है, अर सुग्रीवकी दीर्घ आयु है । तब अमृत समान मुनिके वचन सुनकर राजा अग्निशिख, सुग्रीवको दीर्घ आयुवाला जानकर अपनी पुत्रीका पाणिग्रहण कराया । सुग्रीवका पुण्य विशेष है जो सुताराकी प्राप्ति भई । तदनन्तर सुग्रीव अर सुतारा के अंग अर अंगद दोय पुत्र भए, अर वह पापी साहसगति निलज्ज सुताराकी आशा छोड नाहीं । धिक्कार है कामचेष्टाको । वह कामाग्निकर दग्ध चित्तविषै ऐसा चितवै कि वह सुखदायिनी कैसे पाऊं? कब उसका मुख चंद्रमासे अधिक मैं निरखूं ? कब उस सहित नंदनवनविषै क्रीडा करूं ? ऐसा मिथ्या चितवन करता संता रूपपरवर्तिनी शेमुषी नामा विद्याके आराधनेको हिमवंत नामा पर्वतपर जायकरि अत्यन्त विषम गुफाविषै तिष्ठकर विद्याके आराधवेको आरम्भ करतो लगा । जैसे दुखी जीव प्यारे मित्रको चितारै तैसे विद्याको चितारता भया ।

अथानन्तर रावण दिग्विजय करनेको निकस्या । वन पर्वतादिकरि शोभित पृथ्वी देखता अर समस्त विद्याधरोंके अधिपति अंतरद्वीपोंके वासियोंको अपने वश करता भया । अर तिनको आज्ञाकारी कर तिनहीके देशोंमें थापता भया । कैसा है रावण? अखण्ड है आज्ञा जाकी, अर विद्याधरोंमें सिंहसमान बडे बडे राजा महापराक्रमी रावणने वश किये । तिनको पुत्र समान जान बहुत प्रीति कर भया । महन्त पुरुषोंका यही धर्म है कि नमतामात्रसे ही प्रसन्न होवें । राक्षसोंके वंशमें अथवा कपिवंशमें जे प्रचंड राजा हुते वे सब वश किए । बडी सेनाकरि संयुक्त आकाशके मार्ग गमन करता जो दशमुख, पवन समान है वेग जाका, उसका तेज विद्याधर सहिबेको असमर्थ भए । सध्याकार, सुवेल, हेमा, पूर्ण, सुयोधन, हंसद्वीप, बारिहल्लादि इत्यादि द्वीपोंके राजा विद्याधर नमस्कार कर भेंट ले आय मिले । सो रावणने मधुर वचन कह बहुत संतोषे, अर बहुत संपदाके स्वामी किए । जे विद्याधर बडे २ गढ़ोंके निवासी हुते वे रावणके चरणारविंदको नम्रीभूत होय आय मिले, जो सार वस्तु थी सो भेंट करी । हे श्रेणिक ! समस्त बलोंविषै पूर्वोपार्जित पुण्यका बल प्रबल है, ताके उदयकरि कौन वश न होय ? सब

१६३

ही वश होय है।

अथानन्तर रथनूपुरका राजा जो इन्द्र उसके जीतिवेको रावण गमनको प्रवरत्या। सो जहा पाताल लकाविषै खरदूषण बहणेऊ है, वहा जाय डेरा किया। पाताललकाके समीप डेरा भया। रात्रिका समय था, खरदूषण शयन कर था सो चन्द्रनखा रावणकी बहिनने जगाया। पाताललकासे निकसकरि रावणके निकट आया, रत्नोके अर्घ देय महा भक्तिसे परम उत्साहकरि रावणकी पूजा करी। रावणने भी बहणेऊपनाके स्नेहकरि खरदूषणका बहुत सत्कार किया। जगतविषै बहिन बहणेऊ समान और कोई स्नेहका पात्र नाही। खरदूषणने चौदह हजार विद्याधर मनवाछित नाना रूपके धारनहारे रावणको दिखाए। रावण खरदूषणकी सेना देख बहुत प्रसन्न भए। आप समान सेनापति किया। कैसा है खरदूषण? महा शूरवीर है। उसने अपने गुणोसे सब सामतोका चित्त वश किया है। हिडब, हैहिडिब, विकट, त्रिजट, हयमाकोट, सुजट, टक, किहकधाधिपति, सुग्रीव, तथा त्रिपुर, मलय, हेमपाल कोल, वसुदर इत्यादिक अनेक राजा नानाप्रकारके वाहननिपर चढे, नानाप्रकार शस्त्र विद्याविषै प्रवीण, अनेक शस्त्रनके अभ्यासी तिनकरि युक्त, पाताललकाते खरदूषण रावणके कटकविषै आया? जैसे पाताललोकसे असुरकुमारोके समूह करि युक्त चमरेंद्र आवे। या भाति अनेक विद्याधर राजाओके समूहकरि रावणका कटक पूर्ण होता भया। जैसे बिजली अर इन्द्रधनुषकर युक्त मेघमालानिके समूह तिनकर श्रावणमास पूर्ण होय। ऐसे एकहजार ऊपर अधिक अक्षोहिणी दल रावणके होय चुका। दिन दिन बढता जाय है। अर हजार हजार देवनिकरि सेवायोग्य रत्न, नानाप्रकार गुणनिके समूहके धारणहारे उनकर युक्त, अर चन्द्रकिरण समान उज्ज्वल चमर जापर ढुरै है, उज्ज्वल छत्र सिरपर फिरै है, जाका रूप सुन्दर है, महाबाहु महाबली पुष्पक नामा विमानपर चढा, सुमेरु समान स्थिर, सूर्यसमान ज्योति, अपने विमानादि बाहन सम्पदाकरि सूर्यमण्डलको आच्छादित करता हुवा इन्द्रका विध्वस मनमें विचारकर रावणने प्रयाण किया। कैसा है रावण? प्रबल है पराक्रम जाका, मानो आकाशको समुद्र

समान करता भया, देदीप्यमान जे शस्त्र, सोई भई कलोल, अर हाथी घोडे प्यादे ये ही भए जलचर जीव, अर छत्र भवर भए, अर चमर तुरग भए, नानाप्रकारके रत्नोकी ज्योति फल रही ह, अर चमरो के दण्ड मीन भए–'हे श्रेणिक! रावणकी विस्तीण सेनाका वणन कहाँलग करिये, जिसको देखकर देव डरें तो मनुष्यनिकी बात कहा? इन्द्रजीत मेघनाद कुम्भकण विभीषण खरदूषण निकुम्भ कुभ इत्यादि बहुत सुजन रणमें प्रवीण, सिद्ध ह विद्या जिनको, महाप्रकाशवन्त, शस्त्र शास्त्र विद्यामें प्रवीण ह, जिनकी कीर्ति बडी ह, महासेनाकरि युक्त, देवताओंकी शोभा को जीतते हुए रावणके सग चाले। विंध्याचल पवतके समीप सूय अस्त भया। मानो रावणके तेजकरि विलखा होय तेज रहित भया। वहा सेनाका निवास भया, मानो विंध्याचलने सेना सिरपर धारी ह। विद्याके बलसे नाना प्रकारके आश्रय लिये। फिर अपनी किरणनिकरि अधकार के समूहकू दूर करता सता चद्रमा उदय भया, मानो रावणके भयकरि रात्रि रत्नका दीपक लाई ह। अर मानो निशा स्त्री भई, चादनीकरि निमल जो आकाश सोई वस्त्र, उसको धर तारानिके जे समूह तेई सिरविष फूल गूथे ह, चद्रमा ही है वदन जाका, नाना प्रकारकी कथाकर तथा निद्राकर सेनाके लोकनिने रात्रि पूण करी। फिर प्रभात के वादित्र बाजे, मगल पाठ कर रावण जागे। प्रभात क्रिया करी, सूयका उदय भया, मानो सूय भुवन-विष भ्रमणकर किसी ठौर शरण न पाया तब रावणहीके शरण आया। पुन रावण नमदाके तट आए। कसी ह नमदा? शुद्ध स्फटिक मणि समान ह जल जाका, अर उसके तीर अनेक वनके हाथी रह ह सो जलमें केलि कर ह, उसकर शोभायमान ह। अर नानाप्रकारके पक्षियोके समूह मधुर गान करे ह सो मानो परस्पर सभाषण ही कर ह। फेन कहिए झागके पटल इन कर मडित ह तरगरूप जे भोह उनके विलास करि पूण ह। भवर ही ह नाभि जाके, अर चचल जे मीन तेई ह नेत्र जाके, अर सुन्दर जे पुलिन तेई ह कटि जाके, नानाप्रकारके पुष्पनिकरि सयुक्त निमल जल ही ह वस्त्र जाका, मानो साक्षात सुन्दर स्त्री ही है। ताहि देखकर रावण बहुत प्रसन्न भए। प्रबल जे जलचर उनके

समूहकरि मण्डित है, गंभीर है, कहूंएक वेगरूप बहै है, कहूं एक मंदरूप बहै है, कहूं एक कुण्डलाकार बहै है, नानाचेष्टानिकरि पूर्ण ऐसी नर्मदाको देखकर कौतुकरूप भया है मन जाका सो रावण नदीके तीर उतरा। नदी भयानक भी है अर सुन्दर भी है।

अथानन्तर माहिष्मती नगरीका राजा सहस्ररश्मि पृथ्वीविषैं महा बलवान मानो सहस्ररश्मि कहिये सूर्य ही है। उसके हजारो स्त्री, सो नर्मदाविषै रावणके कटकके ऊपर सहस्ररश्मिने जलयंत्रकरि नदी का जल थांभ्या अर नदीके पुलिनविषै नानाप्रकारकी क्रीडा करी। कोई स्त्री मान कर रही थी ताको बहुत शुश्रूषाकरि प्रसन्न करा, दर्शन स्पर्शन मान फिर मानमोचन प्रणाम परस्पर जलकेलि हास्य, नानाप्रकार पुष्पोंके भूषणनिके शृंगार इत्यादि अनेक स्वरूप क्रीडा करी। मनोहर है रूप जाका, जैसे देवियोसहित इन्द्र क्रीडा करै तैसे राजा सहस्ररश्मिने क्रीडा करी। जे पुलिनके बालू रेतविषै रत्नके मोतियोके आभूषण टूटकर पडे सो न उठाये, जैसे मुरझाई पुष्पोंकी मालाको कोई न उठावै। कईएक राणी चंदनके लेपकरि संयुक्त जलविषै केलि करती भई सो जल धवल होगया। कईएक केसरिके कीचकरि जलको गाले हुए सुवर्णके समान पीत करती भई, कईएक ताम्बूलके रंगकरि लाल जे अधर तिनके प्रक्षालनिकरि नीरको अरुण करती भई, कईएक आंखोके अंजन धोवनेकरि श्याम करती भई, सो क्रीडा करती जे स्त्री उनके आभूषणनिके सुन्दर शब्द, अर तीर विषै जे पक्षी, उनके सुन्दर शब्द राजाके मनको मोहित करते भये। अर नदीके निवासकी ओर रावणका कटक था सो रावण स्नानकरि पवित्र वस्त्र पहरि, नानाप्रकारके आभूषणनिकरि युक्त नदीके रमणीक पुलिनमें बालूका चौतरा बंधाय उसके ऊपर वडूर्यमणियो के है दंड जिसके, ऐसा मोतियो की झालरी संयुक्त चंदोवा ताण, श्रीभगवान अरहंतदेवकी नाना प्रकार पूजा करै था, बहुत भक्तिसे पवित्रस्तोत्रो करि
स्तुति करै था, सो उपरासका जलका प्रवाह आया, सो पूजामें विघ्न भया। नाना प्रकार की कलुषिता सहित प्रवाह वेग से आया, तब रावण प्रतिमाजी को लेय खडे भये, अर क्रोधकरि कहते भए—जो यह

क्या ह सो सेवकने खबर दीनी कि हे नाथ! यह कोई महाक्रीडावत पुरुष सुन्दर स्त्रीनिके बीच परम उदयको धर नाना प्रकारकी लीला कर ह, अर साम त लोक शस्त्रनिकू धरे दूर २ खडे हैं, नानाप्रकार जलके यत्र बाधे उनसे यह चेष्टा भई ह, अ य राजाओके सेना चाहिए तात उसके सेना तो शोभामात्र ह अर उसके पुरुषार्थ ऐसा ह जो और ठौर दुलभ ह, बडे २ सामतोसे उसका तेज न सहा जाय, अर स्वगविष इ द्र ह परन्तु यह तो प्रत्यक्ष ही इ द्र देखा। यह वार्ता सुनकर रावण क्रोधको प्राप्त भए, भोह चढ गई, आख लाल हो गई, ढोल बाजने लगे, वीररसका राग होने लगा, नानाप्रकारके शब्द होय ह घोडे हीसैं हैं, गज गाजे ह, रावणने अनेक राजाओको आज्ञा करी कि यह सहस्ररश्मि दुष्टात्मा ह इसे पकड लावो। ऐसी आज्ञाकरि आप नदीके तटपर पूजा करने लगे। रत्न सुवणके जे पुष्प उनको आदि देय अनेक सुन्दर जे द्रव्य उनसे पूजा करी। अर अनेक विद्याधरोके राजा रावणकी आज्ञा आशिषकी नाई माथे चढाय युद्धकू चाले। राजा सहसरश्मिने परवलको आवता देखि स्त्रियोको कहा कि तुम डरो मत, धीय बधाय आप जलसे निकसे। कलकलाट शब्द सुन, परवल आया जान, माहिष्मती नगरीके योधा सजकर हाथी, घोडे, रथोपर चढे। नानाप्रकारके आयुध धरे स्वामी धर्मके अत्यन्त अनुरागसे राजाके ढिग आए। जसे सम्मेदशिखर पवतका एक ही काल छहो ऋतु आश्रय कर तसे समस्त योधा तत्काल राजाप आए। विद्याधरोकी फौज आवती देखकर सहसरश्मिके सामत जीतव्यकी आशा छोडकर धनव्यूह रचकर धनीकी आज्ञा विना ही लडनको उद्यमी भए। जब रावण के योद्धा युद्ध करने लगे तब आकाशमें देवनिकी बाणी भई कि अहो (यह बडी अनीति है ये भूमि गौचरी अल्प बली विद्याबलकरि रहित माया युद्धकू कहाँ जान? इनसे विद्याधर मायायुद्ध कर यह कहा योग्य ह) अर विद्याधर घने यह थोडे। ऐसे आकाशविषै देवनिके शब्द सुनकर जे विद्याधर सत्पु-
रुष थे, लज्जबान होय भूमिमे उतरे, दोनो सेनाओमें परस्पर युद्ध भया। रथोके, हाथियोके, घोडोके, असवार तथा पियादे तलवार बाण गदा सेल इत्यादि आयुधोकरि परस्पर युद्ध करने लगे, सो बहुत

युद्ध भया। परस्पर अनेक मारे गये, याय युद्ध भया, शस्त्रोके प्रहारकरि अग्नि उठी, सहसरश्मिकी सेना रावणकी सेना करि कछुइक हटी तदि सहसरश्मि रथपर चढकर युद्धको उद्यमी भए। माथ मुकुट धरे बखतर पहरे धनुष को धार, अर अति तेजको धर विद्याधरोके बलको देखकरि तुच्छमात्र भी भय न किया, तब स्वामीको तेजवत देखि सेनाके लोग जे हते हुते थे ते आग आय करि युद्ध करने लगे। दैदीप्यमान ह शस्त्र जिनके, अर जे भूल गए है घावोकी वेदना, ये रणधीर भूमिगोचरी राक्षसो की सेना में ऐसैं पडे जसैं माते हाथी समुद्रमें प्रवेश करें। अर सहसरश्मि अति क्रोधको करते हुए बाणोके समूहकरि जसै पवन मेघको हटाव तसैं शत्रुओको हटावते भए। तदि द्वारपाल रावणसे कही हे देव! देखो इसने तुम्हारी सेना हटाई ह, यह धनुषका धारी रथपर चढा जगतको तणवत देख ह, इसके बाणनिकरि तुम्हारी सेना एक योजन पीछे हटी ह। तब रावण सहसरश्मिको देखि आप त्रलो क्यमडन हाथीपर सवार भया। रावणको देखकरि शत्रु भी डरे। रावण बाणोकी वर्षा करता भया। सहसरश्मिको रथसे रहित किया। तब सहसरश्मि हाथीपर चढकरि रावणके सन्मुख आया अर बाण छोडे सो रावणके बक्तरको भेदि अगविष चुभ। तब रावणने बाण देहसे काढि डारे। सहसरश्मिने हसकर रावणसो कहा—अहो रावण! तू बडा धनुषधारी कहाव ह, ऐसी विद्या कहातें सीखी, तुझ कौन गरु मिल्या, पहिले धनुषविद्या सीख, फिर हमसे युद्ध करि। ऐसे कठोर शब्द श्रवणत रावण क्रोधको प्राप्त भया। सहसरश्मिके केशनिम सेलकी दीनी, तब सहसरश्मिके रुधिरकी धारा चली, जाकरि नेत्र घूमने लगे। पहले अचेत होय गया पीछे सचेत होय आयुध पकडने लग्या तदि रावण उछलकरि सहसरश्मिपर आय पडे। अर जीवता पकड लिया, बाधकर अपने स्थान ले आए। ताहि देखि सब विद्याधर आश्चयको प्राप्त भए कि सहसरश्मि जसे योधाको रावणने पकड्या। कसे है
रावण? धनपति यक्षके जीतनहारे, यमके मान मर्दन करनहारे, कलाशके कम्पावनहारे। सहसरश्मि का यह वत्तात देखि सहसरश्मि जो सूय सो भी मानो भय करि अस्ताचलको प्राप्त भया, अधकार

फल गया। भावार्थ—रात्रिका समय भया। भला बुरा दृष्टिमें न आवे। तब चन्द्रमाका बिंब उदय भया। सो अंधकार के हरणेको प्रवीण, मानो रावणका निर्मल यश ही प्रकट्या है। युद्धविषं जे योधा घायल भये थे तिनका वैद्योंकरि यत्न कराया, अर जो मूवे थे तिनको अपने बंधुवर्ग रणखेतसो ले आये तिनकी क्रिया करी। रात्रि व्यतीत भई, प्रभातके वादित्र बाजने लगे, फिर सूर्य रावणकी वार्ता जानने के अर्थि राग कहिए ललाईको धारता हुआ कम्पायमान उदय भया। सहस्ररश्मिका पिता राजा शत-बाहु जो मुनिराज भए थे, जिनको जंघाचारण ऋद्धि थी, वे महातपस्वी चन्द्रमाके समान कांत, सूर्य समान दीप्तिमान, मेरुसमान स्थिर, समुद्र सारिखे गंभीर, सहस्ररश्मिको पकड्या सुनकर जीवनकी दयाके करणहारे परम दयालु शांतचित्त जिनधर्मी जान रावणपै आये। रावण मुनिको आवते देख उठ सामने जाय पायन पडे, भूमिमें लग गया है मस्तक तिनका, मुनिको काष्ठके सिंहासनपर विराज-मान करि रावण हाथ जोड नमीभूत होय भूमिविषं बैठे। अति विनयवान होय मुनिसो कहते भए—हे भगवन! कृपानिधान! तुम कृतकृत्य, तुम्हारा दर्शन इन्द्रादिक देवोंको दुर्लभ है, तुम्हारा आगमन मेरे पवित्र होनेके अर्थि है। तब मुनि इसको शलाका पुरुष जानि प्रशंसाकरि कहते भए। हे दशमुख! तू बडा कुलवान बलवान विभूतिवान देवगुरुधर्मविषं भक्तिभावयुक्त है। हे दीर्घायु शूरवीर क्षत्रियो की यही रीति है जो आपसे लडे उसका पराभव करै उसे वश करै। सो तुम महाबाहु परम क्षत्री हो, तुमसे लडवेको कौन समर्थ है? अब दयाकर सहस्ररश्मिको छोडो। तब रावण मंत्रियो सहित मुनि को नमस्कार करि कहते भये। हे नाथ! मैं विद्याधर राजानिको वश करनेको उद्यमी भया हूं। लक्ष्मी कर उन्मत्त रथनूपुरका राजा इन्द्र तानै मेरे दादेका बडा भाई राजा माली युद्धमें मारया है, तासूं हमारा द्वेष है। सो मैं इन्द्र ऊपर जाय था। मार्गमें रेवा कहिये नर्मदा उसपर डेरा भया सो पुलिन पर बालूके चौतरे पर पूजा कर था सोई इसने उपरासकी, अर जलयंत्रोंकी केलि करी, सो जलका बेग निवासको आया। सो मेरी पूजामें विघ्न भया, तातै यह कार्य किया है। विना अपराध मैं द्वेष न

करू, अर मैं इनके ऊपर गया तब भी इनने क्षमा न कराई कि प्रमादकरि विना जाने मैंने यह कार्य किया है, तुम क्षमा करो। उलटा मानके उदयकरि मेरेसे युद्ध करने लग्या। अर कुवचन कहे। कारण ऐसा भया, जो मैं भूमिगोचरी मनुष्योंको जीतने समर्थ न भया तो विद्याधरोंको कैसे जीतूंगा। कैसे हैं विद्याधर? नानाप्रकारकी विद्याकरि महापराक्रमवंत हैं। तातैं जो भूमिगोचरी मानी हैं, तिनको प्रथम वश करूं, पीछे विद्याधरोंको वश करूं। अनुक्रमसे जैसे सिवान चढे मंदिरमें जाइए हैं तातैं इनको वश किया, अब छोडना न्याय ही है। फिर आपकी आज्ञा समान और क्या? कैसे हो आप? महापुण्यके उदयतैं होय है दर्शन जाका। ऐसे वचन रावणके सुन इंद्रजीतने कही है—नाथ! आपने बहुत योग्य वचन कहे। ऐसे वचन आप बिना कौन कहै। तब रावणने मारीच मंत्रीको आज्ञा करी कि सहस्ररश्मिको छुडाय महाराजके निकट ल्यावो। तब मारीचने अधिकारीको आज्ञा करी। सो आज्ञा प्रमाण जो नागी तलवारनिके हवाले था सो ले आये। सहस्ररश्मि अपने पिता जो मुनि तिनको नमस्कार करि आय बैठ्या। रावणने सहस्ररश्मिका बहुत सत्कार करि बहुत प्रसन्न होय कह्या हे महाबल! जैसैं हम तीनों भाई तैसे चौथा तू। तेरे सहायकरि रथनूपुरका राजा इंद्र भ्रमतैं कहावै है, ताहि जीतूंगा। अर मेरी राणी मंदोदरी ताकी लहुरी बहिन स्वयंप्रभा सो तुझे परणाऊंगा। तब सहस्ररश्मि बोले धिक्कार है इस राज्यको। यह इंद्रधनुषसमान क्षणभंगुर है। अर विषयनिको धिक्कार है। ये देखने मात्र मनोज्ञ हैं, महा दुखरूप हैं। अर स्वर्गको धिक्कार, जो अव्रत असंयमरूप है। अर मरणके भाजन इस देहको भी धिक्कार, अर मोको धिक्कार, जो एते काल विषयासक्त होय इतने काल कामा-दिक वैरीनि करि ठगाया। अब मैं ऐसा करूं जाकरि बहुत संसार वनविषै भ्रमण न करूं। अत्यन्त दुःखरूप जो चारगति तिनमें भ्रमण करता बहुत थक्या। अब भवसागरमें जासों पतन न होय सो करूंगा। तब रावण कहते भए—यह मुनिका व्रत वृद्धनिकूं शोभै है। हे भव्य! तू तो नवयौवन है। तब सहस्ररश्मिने कहा—'कालके यह विवेक नाहीं जो वृद्धहीको ग्रसै, तरुणको न ग्रसै। काल सब-

भक्षी है, बाल वृद्ध युवा सबहीको ग्रसै है। जैसे शरदका मेघ क्षणमात्रमें विलायजाय तसैं यह देह तत्काल विनसै है। हे रावण ! जो इन भोगनिहीके विषय सार होय तौ महापुरुष काहेको तजै ? उत्तम है बुद्धि जिनकी ऐसे अर यह पिता इन्होने भोग छोड योग आदरया। सो योग ही सार है'। यह कह कर अपने पुत्र को राजदेय रावणसो क्षमा कराय पिता निकट जिनदीक्षा आदरी। अर राजा अरण्य, अयोध्याका धनी सहसरश्मिका परममित्र है सो उनसे पूर्ववचन था—जो हम पहिले दीक्षा धरेंगे तो तुम्हें खबर करेंगे। अर उनने कही हुती—हम दीक्षा धरेंगे तो तुम्हें खबर करेंगे, सो उनपै वैराग्यके समाचार भेजे। भले मनुष्योने राजा सहसरश्मिका वैराग्य होनेका वृत्तांत राजा अरण्यसे कह्या, सो सुनकर पहिले तो सहसरश्मिका गुण स्मरणकरि आंसू भरि विलाप किया, फिर विषादको तजिकर अपने समीपवर्ती लोगनिकूं महा बुद्धिमान कहते भए जो रावण वैरीका वेषकरि उनका परम मित्र भया, जो ऐश्वर्यके पींजरे विषै राजा रुक रहे थे, विषयोकर मोहित था चित्त जिनका, सो पींजरे तैं छुडाया। यह मनुष्यरूपी पक्षी, मायाजालरूप पींजरमें पड्या है, सो परम हितू ही छुडावै है। माहिष्मती नगरीका धनी राजा सहसरश्मि धन्य है जो रावण रूप जहाजको पायकरि संसार रूप समुद्रको तिरगा। कृतार्थ भया—अत्यंत दुखका देनहारा जो राजकाज महापाप, ताहि तजकर जिनराजका व्रत लेनेको उद्यमी भया। या भांति मित्रकी प्रशंसाकरि आप भी लघु पुत्रको राजदेय बडे पुत्र सहित राजा अरण्य मुनि भए। हे श्रेणिक ! कोई एक उत्कृष्ट पुण्यका उदय आवै तब शत्रुका अथवा मित्रका कारण पाय जीवको कल्याणकी बुद्धि उपजै, अर पापकर्मके उदयकरि दुर्बुद्धि उपजै। जो कोई प्राणीको धर्मके मार्ग में लगावै सोई परम मित्र है अर जो भोग सामग्रीमें प्रेरै सो परम वैरी है, अस्पर्श्य है। हे श्रेणिक ! जो भव्य जीव यह राजा सहसरश्मिकी कथा भाव धर सुनै सो मुनिव्रतरूप संपदाको प्राप्त होयकरि परम निर्मल होय। जसैं सूर्यके प्रकाशकरि तिमिर जाय तसैं जिनवाणीके प्रकाशकरि मोहतिमिर जाय।

इति श्रीरविषेणाचार्य विरचित महापद्मपुराण भाषावचनिकाविषै सहस्ररश्मि अर अरण्यके वैराग्य निरूपण करने वाला दसवांपर्व पूर्णभया॥१०॥

अथानंतर रावणने जे जे पृथ्वीविषै मानी राजा सुने ते ते सब नवाए, अपने वश किये, अर जो अपने आप आयकरि मिले तिनपर बहुत कृपाकरी। अनेक राजानिकरि मंडित सुभूम चक्रवर्तीकी नाई पृथ्वी विषै विहार किया। नाना देशनिके उपजे, नानाभेषके धारणहारे, नानाप्रकार आभूषणनिके पहरन हारे, नानाप्रकारकी भाषाके बोलनहारे, नानाप्रकारके वाहनोपर चढे, नानाप्रकारके मनुष्यनि करि मंडित अनेक राजा तिन सहित दिग्विजय करता भया। ठौर २ रत्नमयी सुवर्णमयी अनेक जिन मंदिर कराए, अर जीर्ण चैत्यालयनिका जीर्णोद्धार कराया, देवाधिदेव जिनेंद्रदेवकी भावसहित पूजाकरी, ठौर २ पूजा कराई। जो जैनधर्मके द्वेषी दुष्टमनुष्य हिंसक थे तिनको शिक्षा दीनी, अर दरिद्रीनिको दयाकरि धनकरि पूर्ण किया, अर सम्यग्दृष्टि श्रावकनिका बहुत आदर किया। साधर्मीनिपर है वात्सल्य भाव जाका, अर जहाँ मुनि सुने तहां जाय भक्तिकरि प्रणाम करै, जे सम्यक्त्व रहित द्रव्यलिंगी मुनि अर श्रावक हुते तिनकी भी सुश्रुषा करी, जैनीमात्रका अनुरागी उत्तर दिशाको दुस्सह प्रताप प्रकट करता संता विहार करता भया। जैसे उत्तरायणके सूर्यका अधिक प्रताप होय तैसैं पुण्यकर्मके प्रभाव करि रावणका दिन दिन अधिक तेज होता भया।

अथानंतर रावणने सुनी कि राजपुरका राजा बहुत बलवान है, अतिअभिमानको धरता थका किसी को प्रणाम नाही करै है, अर जन्महीतै दुष्टचित्त है, मिथ्यामार्गकरमोहित है, अर जीवहिंसारूप यज्ञ-मार्गविषै प्रवर्त्या है। तदि यज्ञका कथन सुन राजा श्रेणिकने गौतमस्वामीसे कह्या हे प्रभो! रावणका कथन तो पीछे कहिये, पहिले यज्ञ की उत्पत्ति कहो। यह कौन वृत्तांत है जामें प्राणी जीवघातरूप घोर कर्ममें प्रवरते है। तदि गणधरने कही—'हे श्रेणिक! अयोध्याविषै इक्ष्वाकुवंशी राजा ययाति ताकी राणी सुरकांता अर पुत्र वसु था, सो जब पढने योग्य भया तब क्षीरकदंब ब्राह्मणपै पढनेको सौंप्या। क्षीरकदंब १७२
की स्त्री स्वस्तिमती थी। अर एक नारद ब्राह्मण देशांतरी धर्मात्मा, सो क्षीर कदंबपै पढै, अर क्षीर कदंबका पुत्र पर्वत महापापी सोहू पढै। क्षीरकदंब अति धर्मात्मा, सर्वशास्त्रनिमें प्रवीण, शिष्यनिकूं

सिद्धात तथा क्रियारूप ग्रथ तथा मत्रशास्त्र काव्य व्याकरणादि अनेक ग्रथ पढाव । एक दिन नारद, वसु अर पवत–इन तीनो सहित क्षीरकदब वनविष गए । तहा चारणमुनि शिष्यनि सहित बिराजे हुते । सो एक मुनिने कह्या ये चार जीव ह–एक गुरु, तीन शिष्य । तिनमत एक गुरु एक शिष्य ये दोयतो सुबुद्धि ह, अर दो शिष्य कुबुद्धि ह । ऐसे शब्द सुन्किरि क्षीरकदब ससारत अत्यत भयभीत भए, शिष्यनिको तो सीख दीनी सो अपने २ घर गए, मानो गायके बछडे बधनसे छूटे, अर क्षीरकदबने मुनिप दीक्षा धरी । जब शिष्य घर आए तदि क्षीरकदबकी स्त्री स्वस्तिमती पवतको पूछती भई-तेरा पिता कहा ह ? तू अकेला ही घर क्यो आया ? तदि पवतने कही हमको तो पिताजीने सीख दीनी । अर कह्या—हम पीछेसे आव ह । यह वचन सुन स्वस्तिमती महाशोकवती होय पथ्वीपर पडी । अर रात्रिविष चकवीकी नाई दुख करि पीडित विलाप करती भई–हाय हाय ! म मदभागिनी प्राणनाथ बिना हती गई । किसी पापीने उनको मारचा अथवा किसी कारणकरि देशातरको उठ गए, अथवा सवशास्त्रविष प्रवीण हुते सो सवपरिग्रहको त्यागकरि वराग्य पाय मुनि होयगए । या भाति विलाप करते रात्रि पूण भई । जब प्रभात भया तब पवत पिताको ढूढने गया । उद्यानमे नदीके तटपर मुनियोके सघसहित श्रीगुरु विराजे हुते तिनके समीप विनयसहित पिता बठचा देख्या । तदि पाछा जायकर मातासो कही कि–हे माता ! हमारा पिता तो मुनियोने मोहचा ह । सो नग्न होयगया ह । तब स्वस्तिमती निश्चय जानकरि पति के वियोगते अति दुखी भई । हाथनिकरि उरस्थलको कूटती भई, अर पुकारकर रोवती भई । सो नारद महाधर्मात्मा यह वत्तात सुनकरि स्वस्तिमतीप शोकका भरचा आया । ताके देखकरि अत्यन्त रोवने लगी, अर सिर कूटती भई । शोकविष अपनेको देखकरि शोक अतीव बढ ह । तदि नारदने कही–हे माता काहेको वृथा शोक करो हो । वे धर्मात्मा जीव पुण्याधिकारी, सुन्दर ह चेष्टा जिनकी, जीतव्यको अस्थिर जानि तप करनेको उद्यमी भए ह सो निर्मल ह बुद्धि जिनकी, अब शोक किएतै पीछे घर न आव ।
या भाति नारदने सबोधी तदि किंचित शोक मद भया, घरविष तिष्ठी । महा दु खित भरतारकी स्तुति

भी कर अर निन्दा भी कर । यह क्षीरकदबके वराग्यका वत्तान्त सुन राजा ययाति तत्त्वके वेत्ता हू वसु पुत्रको राज देय महामुनि भए । वसुका राज्य पथ्वीविष प्रसिद्ध भया । आकाशतुल्य स्फटिक मणि ताके सिहासनके पाये बनाए । ता सिहासन पर तिष्ठ, सो लोक जानै कि राजा सत्यके प्रतापकरि आकाश विष निराधार तिष्ठ ह ।

अथानन्तर हे श्रेणिक ! एक दिन नारदके अर पवतके शास्त्र चर्चा भई । तदि नारदने कही कि भगवान वीतरागदेवने धर्म दोयप्रकार प्ररूप्या ह —एक मुनिका, दूसरा गहस्थीका । मुनिका महाव्रत रूप ह, गहस्थीका अणुव्रतरूप ह । जीवहिंसा, असत्य, चोरी, कुशील, परिग्रह इनका सवथा त्याग सो तो पच महाव्रत, तिनकी पच्चीस भावना, यह मुनिका धम ह । अर इन हिसादिक पापोका किचित त्याग सो श्रावकके व्रत ह । श्रावकके व्रतनिमें पूजा दान शास्त्रविष मुख्य कह्या ह । पूजाका नाम यज्ञ ह (अजयष्टव्य) । या शब्दका अथ मुनिने याभाति कह्या ह जो बोसे न ऊगें, जिनमे अकुरशक्ति नाहीं, ऐसे शालिधान यव, तिनका विवाहादिक क्रियानिविष होम करिए । यह भी आरभी श्रावककी रीति ह । ऐसें नारदके वचन सुन पापी पवत बोला —अज कहिये छेला (बकरा), तिनका आलबन कहिये हिसन, ताका नाम यज्ञ ह । तदि नारद कोपकरि दुष्ट पवतसो कहते भये —हे पवत ! ऐसे मत कह, महा भयकरवेदना ह जाविष, ऐसे नरकमे तू पडेगा । दया ही धम ह, हिसा पाप ह । तब पवत कहने लाग्या मेरा तेरा न्याय राजा वसुप होयगा । जो झूठा होयगा ताकी जिह्वा छेदी जायगी । या भाति कहकर पवत माताप गया । नारदक अर याक जो विवाद भया सो सब वत्तात मातासो कह्या । तदि माताने कह्या कि तू झूठा ह । तेरा पितासो हमने व्याख्यान करते अनेकबार सुन्या ह जो अज—बोई हुई न उग, ऐसी पुरानी शालि तथा पुराना यव तिनका नाम ह, छेलेका नाहीं । जीवनिका भी कभी होम किया जाय ह ? तू देशातर जाय मासभक्षणका लोलुपी भया ह । तात मानके उदयकरि झूठ कह्या, सो तुझ दु खका कारण होयगा । हे पुत्र ! निश्चय सेती तेरी जिह्वा छेदी जायगी । म पुण्यहीन अभा

गिनी पति अर पुत्ररहित भई क्या करू गी ? याभाति पुत्रसो कहकरि वह पापिनी विचारती भई कि राजा वसुके गुरुदक्षिणा हमारी धरोहर है। ऐसा जानि अति व्याकुल भई वसुके समीप गई। राजा ने स्वस्तिमतीको देखि बहुत विनय किया, सुखासन बैठाई। हाथ जोडि पूछता भया हे माता ! तुम आज दुखित दीखो हो, जो तुम आज्ञा करो सोही करू ? तदि स्वस्तिमती कहती भई—हे पुत्र ! मै महा दुखिनी हू। जो स्त्री अपने पतिकरि रहित होय ताको काहेका सुख ? ससार में पुत्र दोय भातिके है। एक पेटका जाया एक शास्त्रका पढाया। सो इनमें पढाया पुत्र विशेष है। एक समल है दूसरा निमल है। मेरे धनीके तुम शिष्य हो, तुम पुत्रते हू अधिक हो। तुम्हारी लक्ष्मी देखकरि मैं धीर्य धरू हू। तुम कही थी—माता दक्षिणा लेवो। म कही समय पाय लू गी। यह वचन याद करो। जे राजा पृथ्वीके पालनमे उद्यमी है ते सत्य ही कहे है। अर जे ऋषि जीवदयाके पालनमें तिष्ठे है ते भी सत्य ही कहे है। तू सत्यकर प्रसिद्ध है। मोको दक्षिणा देवो। या भाति स्वस्तिमतीने कह्या। तदि राजा विनयकरि नमीभूत होय कहते भये—हे माता ! तिहारी आज्ञात जो नाहीं करने योग्य काम है सो भी म करू। जो तिहारे चित्तमे होय सो कहो। तब पापिनी ब्राह्मणीने नारद अर पवतके विवादका सव वत्तात कह्या, अर कह्या—मेरा पुत्र सवथा झूठा है, परतु याके झूठको तुम सत्य करो। कारण ताका मानभग न होय। तदि राजाने यह अयोग्य जानते हुए भी ताकी बात दुगतिकाकारण, प्रमाण करी। तदि वह राजाको आशीर्वाद देय घर आई। बहुत हर्षित भई। दूजे दिन प्रभात ही नारद अर पवत राजाके समीप आए। अनेक लोक कौतूहल देखनेको आए। सामत मन्त्री, देशके लोग बहुत आय भेले भए। तदि सभाके मध्य नारद पवत दोऊनिमे बहुत विवाद भया। नारद तो कहे अज शब्दका अथ अकुर-शक्तिरहित शालि है। अर पवत कहे पशु है। तदि राजा वसुको पूछ्या। तुम सत्यवादीनिमे प्रसिद्ध हो जो क्षीरकदब अध्यापक कहते हुते सो कहो। तदि राजा, कुगतिको जानहारा, कहता भया जो पवत कहै है सोई क्षीरकदब कहते हुते। याभाति कहते ही सिंहासनके स्फटिकके पाए टूट गये, सिंहासन भूमिमें

गिर पड्या। तदि नारदने कह्या, हे वसु! असत्यके प्रभावतैं तेरा सिंहासन डिगा। अबहू तुमकू साच कहना योग्य है। तदि मोहके मदकरि उन्मत्त भया यह ही कहता भया—जो पर्वत कहै सो सत्य है। तदि महापापके भारकरि हिंसामार्गके प्रवर्तनतैं तत्काल ही सिंहासनसमेत धरतीमें गडि गया। राजा मरकरि सातवें नरक गया। कैसा है नरक? अत्यंत भयानक है वेदना जहां। तदि राजा वसुको मूवा देखि सभाके लोग वसु अर पर्वतको धिक्कार धिक्कार कर कहते भए। अर महा कलकलाट शब्द भया। दयाधर्म उपदेशकरि नारदकी बहुत प्रशंसा भई, अर सब कहते भये (यतो धर्मस्ततो जय) पापी पर्वत हिंसाके उपदेशकरि धिक्कारदंडको प्राप्त भया। पापी पर्वत देशांतरोंमें भ्रमण करता संता हिंसामई शास्त्रकी प्रवृत्ति करता भया, आप पढै औरनिको पढावै। जैसे पतंग दीपकमें पडै तैसे कई एक बहिरमुख जीव कुमार्गमें पडे। अभक्ष्यका भक्षण, अर न करनेयोग्य काम करना, असा लोकनिको उपदेश दिया, अर कहता भया कि यज्ञहीके अर्थ ये पशु बनाये है, यज्ञ स्वर्गका कारण है। तातैं जो यज्ञमें हिंसा होय सो हिंसा नाहीं। अर सौत्रामणिनाम यज्ञके विधानकरि सुरापानका हू दूषण नाहीं। अर गोयज्ञ नाम यज्ञ विषै अगम्यागम्यहू (परस्त्रीसेवन भी) करै है। असा पर्वतने लोकनिको हिंसादिमार्गका उपदेश दिया। आसुरी मायाकरि जीव स्वर्ग जाते दिखाये। कएक क्रूर जीव कुकर्ममें प्रवर्तकरि कुगतिके अधिकारी भये। हे श्रेणिक! यह हिंसायज्ञकी उत्पत्तिका कारण कह्या। अब रावणका वृत्तांत सुनो।

रावण राजपुर गए, तहां राजा मरुत हिंसाकर्ममें प्रवीण यज्ञशालाविषै तिष्ठै था। संवर्तनामा ब्राह्मण यज्ञ करावै था, तहां पुत्रदारादिसहित अनेक विप्र धनके अर्थी आए हुते और अनेक पशु होम निमित्त लाए। ता समय अष्टम नारद पदवीधर बडे पुरुष आकाशमार्गतैं आय निकसे। बहुत लोकनिका समूह देख आश्चर्य पाय चित्तमें चितवते भए कि यह नगर कौनका है और यह दूरपर सेना कौनकी पडी है। अर नगरके समीप एते लोग किस कारण एकत्र भए है। ऐसा मनमें विचार आकाशतैं भूमिपर उतरे।

पद्म पुराण १७७

अथानन्तर यह बात सुन राजा श्रेणिक गोतमस्वामीको पूछते भए हे भगवन! यह नारद कौन है? यामें कैसे कैसे गुण अर याकी उत्पत्ति किह भांति है? तदि गणधरदेव कहते भए। हे श्रेणिक! एक ब्रह्मरुचि नामक ब्राह्मण था, ताके कुरमी नामा स्त्री, सो ब्राह्मण तापसके व्रत धरि वनमें जाय कंदमूल फल भक्षण करै। ब्राह्मणी भी संग रहै। ताको गर्भ रह्या। तहां एकदिन मार्गके वशतैं कुछ संयमी महामुनि आए। क्षणएक विराजे। ब्राह्मणी अर ब्राह्मण समीप आय बैठे। ब्राह्मणी गर्भिणी, पांडुर है शरीर जाका, गर्भके भारकरि दुखित सांस लेती मानो सर्पणी ही है, ताको देखिकरि मुनिको दया उपजी। तिनमें सु बड़े मुनि बोले—देखो यह प्राणी कर्मके वशकरि जगतविषै भ्रमै है। धर्मकी बुद्धिकरि कुटुम्बको तजिकरि संसारसागरतैं तरणेके अर्थि तो वनविषै आया। सो हे तापस! तैंने क्या दुष्टकर्म किया? स्त्री गर्भवती करी। तेरेमें अर गृहस्थीमें कहा भेद है? जैसे वमन किया जो आहार ताकूं मनुष्य न भखै तैसे विवेकी पुरुष तजे हुए कामादिकनिको फिर नाहीं आदरै। जो कोई भेष धरै अर स्त्रीका सेवन करै सो भयानक वनमें स्यालिनी होय अनेक कुजन्म पावै। नरकनिगोदमें पड़ै है। जो कोई कुशील सेवता संता आरम्भनिमें प्रवर्त्या मदोन्मत्त आपको तापसी मानै है सो महा अज्ञानी है। यह कामसेवन ताकरि दग्ध दुष्टचित्त जो दुरात्मा, आरम्भविषै प्रवर्तै ताकै तप काहेका? कुदृष्टि कर गर्वित भेषधारी विषयाभिलाषी जो कहै मैं तपसी हूं, सो मिथ्यावादी है। काहेका व्रती! सुखसों बैठना, सुखसूं सोवना, सुखसूं आहार विहार करना, ओढना बिछावना आदि सब काज करै, अर आपको साधु मानै सो मूर्ख आपको ठगै है। बलता जो घर तहांतैं निकसै फिर ताहीमें कैसे प्रवेश करै? अर जैसें छिद्र पाय पिंजरेसे निकस्या पक्षी भी फिर आपको पिंजरेविषै नाहीं डारै, तैसे विरक्त होय फिर कौन इन्द्रीनिके वश परै? जो इन्द्रीनिके वश होय सो लोकविषै निंदा योग्य है। आत्मकल्याण को न पावै है। सर्व परिग्रह के त्यागी मुनिनिको एकाग्रचित्त कर एक आत्मा ही ध्यावने योग्य है। सो तुम सारिखे आरंभी तिन करि आत्मा कैसे ध्याया जाय? प्राणीनिके परिग्रहके प्रसंगकरि राग १७७

द्वेष उपजे है, रागकरि काम उपजै है, द्वेषकरि जीवहिंसा होय है, कामक्रोध करि पीडित जो जीव ताके मनको मोह पीडे है। मूर्खके कृत्य अकृत्यविषै विवेकरूप बुद्धि न होय। जो अविवेकतैं अशुभ कर्म उपारजे है सो घोरसंसारसागरमैं भ्रमै है। यह संसगके दोष जानकरि जे पंडित हैं ते शीघ्र ही वैरागी होय है। आपकरि आपको जानि विषयवासनातैं निवृत्त होय परमधामको पावै है। या भांति परमार्थरूप उपदेशनिके वचननिकरि महामुनिने संबोध्या। तबि ब्राह्मण ब्रह्मरुचि निरमोही होय मुनि भया। कुरमी नामा स्त्रीका त्यागकरि गुरुके संग ही विहार किया। गुरुमैं है धर्मराग जाके अर वह ब्राह्मणी कुरमी शुद्ध है बुद्धि जाकी सो पापकर्मतैं निवृत होय श्रावकके व्रत आदरे। जान्या है रागादिकके वशतैं संसारका परिभ्रमण जानै, सो कुमार्गका संग छोड्या। जिनराजकी भक्तिविषै तत्पर होय भरताररहित अकेली महासती सिंहनीकी नाईं महावनविषै भ्रमै। दसवें महीनें पुत्रका जन्म भया। तबि वाको देखकरि वह महासती ज्ञानक्रियाकी धरणहारी चित्तविषै चिंतवती भई जो यह पुत्र परिवारका संबंध महा अनर्थका मूल मुनिराजनें कहा हुता सो सत्य है। तातैं मैं या पुत्रका प्रसंगका परित्यागकरि आत्मकल्याण करूं। अर यह पुत्र महा भाग्यवान है याके रक्षक देव हैं याने जे कर्म उपारजे है तिनका फल अवश्य भोगेगा। वनमैं तथा समुद्रविषै अथवा वैरियोंके वशविषै पड्या जो प्राणी ताकी पूर्वोपार्जित कर्म ही रक्षा करै है, और कोऊ नाहीं। अर जाकी आयु क्षीण होय है सो माताकी गोदविषै बैठा हू मृत्युके वश होय है। ये सब संसारी जीव कर्मोंके आधीन है। भगवान सिद्ध परमात्मा कर्मकलंकरहित हैं, ऐसा जान्या है तत्त्वज्ञान जानै, सो महानिर्मल बुद्धिकरि बालकको वनविषै तजकरि यह ब्राह्मणी विकल्परूप जो जडता ताकरि रहित अलोकनगरविषै आई। जहां इन्द्रमालिनी नामा आर्या अनेक आर्यानिकी गुरुनी हुती तिनके समीप आर्या भई, सुन्दर है चेष्टा जाकी।

अथान्तर आकाशके मार्ग जंभ नामा देव जाता हुता, सो पुण्याधिकारी रुदनादिरहित जो बालक ताहि देख्या। दयावान होय उठाय लिया, बहुत आदरतैं पाल्या, अनेक आगम अध्यात्मशास्त्र पढाए, तातैं

सिद्धातका रहस्य जानने लग्या, महा पडित भया, आकाशगामिनी विद्या हू सिद्ध भई, यौवनको प्राप्त भया, श्रावकके व्रत धारे, शीलव्रत विषे अत्यन्त दृढ अपने माता पिता जे आर्यिका मुनि भये हुते, तिनकी वदना करै। कैसा है नारद ? सम्यग्दर्शनविषे तत्पर, ग्यारमी प्रतिमाके छुल्लक श्रावकके व्रत लेय विहार किया, परन्तु कर्मके उदयतै तीव्र वैराग्य नाहीं। न गृहस्थी न सयमी। धर्मप्रिय है, अर कलह भी प्रिय है। वाचालपनेमें प्रीति है, गायन विद्यामें प्रवीण अर राग सुननै विषै विशेष अनुरागवाला है मन जाका, महाप्रभावकरि युक्त, राजानिकरि पूजित, जाकी आज्ञा कोई लोप न सकै। पुरुष स्त्रीनिविषै सदा जिसका अति सन्मान है। अढाई द्वीपविषै मुनि जिन चैत्यालयनिका दर्शन करै। सदा धरती आकाश विषै भ्रमता ही रहै। कौतूहलमें लगी है दृष्टि जाकी, देवनिकरि वृद्धि पाई, अर देवनके समान है महिमा जाकी, पृथ्वीविषै देवऋषि कहावै, सदा सर्वत्र प्रसिद्ध, विद्याके भावकरि किया है अद्भुत उद्योत जाने।

सो नारद विहार करते संते कदाचित मरुतके यज्ञकी भूमिपर जाय निकसे। सो बहुत लोकनिकी भीड देखी अर पशु बधे देखे। तब दयाभावकरि सयुक्त होय यज्ञभूमिमें उतरे। तहा जायकरि मरुतसे कहने लगे—'हे राजा ! जीवनकी हिंसा दुर्गतिका ही द्वार है, तैने यह महापापका कार्य क्यो रच्या है ?" तब मरुत कहता भया— यह सवर्त ब्राह्मण सर्व शास्त्रनिके अर्थविषै प्रवीण यज्ञका अधिकारी है। यह सब जानै है, याहीतै धर्मचर्चा करो। यज्ञकर उत्तम फल पाइये है।' तदि नारद यज्ञ करावनहारे से कहते भए—'अहो मानव ! तै यह क्या कर्म आरम्भ्या है ? यह कर्म—सर्वज्ञ जो वीतराग है तिननें दुःखका कारण कह्या है। तदि सवर्त ब्राह्मण कोपकरि कहता भया—अहो अत्यन्त मूढता तेरी। तू सर्वथा अमिलती बात कहै है। तैनें कोई सर्वज्ञ रागवर्जित वीतराग कह्या, सो जो सर्वज्ञ वीतराग होय सो वक्ता नाहीं, अर जो वक्ता है, सो सर्वज्ञवीतरागी नाहीं। अर अशुद्ध मलिन जे जीव तिनका कह्या वचन प्रमाण नाहीं, अर जो अनुपम सर्वज्ञ है सो कोई देखनेमे आवै नाहीं। तातैं वेद अकृत्रिम है, वेदोक्तमार्ग प्रमाण है। वेदविषै शूद्र विना तीन वर्णनिको यज्ञ करावना कह्या है। यह यज्ञ अपूर्व

धर्म है, स्वर्गके अनुपम सुख देवै है। वेदीके मध्य पशूनिका वध पापका कारण नाहीं, शास्त्रनिमें कह्या जो मार्ग सो कल्याण हीका कारण है। अर यह पशूनिकी सृष्टि विधाताने यज्ञहीके अर्थि रची है तातैं यज्ञमें पशुके वधका दोष नाहीं। ऐसे संवर्त ब्राह्मणके विपरीत वचन सुन नारद कहते भए—हे विप्र! तैंने यह सर्व अयोग्य रूप ही कह्या है—कैसा है तू? हिंसामार्गकर दूषित है आत्मा जाका। अब तू यथार्थ का यथार्थ भेद सुन। तू कहै है सर्वज्ञ नाहीं, सो यदि सर्वथा सर्वज्ञ न होय तो शब्दसर्वज्ञ, अर्थसर्वज्ञ, बुद्धिसर्वज्ञ यह तीन भेद काहेकूं कहे। जो सर्वज्ञ पदार्थ है तदि ही कहनेंमें आवै है। जैसे सिंह है तो चित्राममें लिखिए है। तातैं सर्वका देखनहारा सबका जाननेहारा सर्वज्ञ है। सर्वज्ञ न होय तो अमूर्तीक अतींद्रिय पदार्थको कौन जानै? तातैं सर्वज्ञका वचन प्रमाण है। अर तैंने कह्या जो यज्ञमें पशुका वध दोषकारी नाहीं, सो पशुको वध करते समय दुःख होय है कि नाहीं? जो दुःख होय है तो पापहू होय है। जैसे पारधी हिंसा करै है सो जीवनको दुःख होय है, अर उसको पापहू होय है। अर तैंने कही विधाता सर्वलोक का कर्ता है, अर यह पशु यज्ञके अर्थि बनाए हैं। सो यह कथन प्रमाण नाहीं, भगवान कृतार्थ है। तिनको सृष्टि बनाने तैं क्या प्रयोजन? अर कहोगे ऐसी क्रीडा है सो क्रीडा तो कृतार्थका काज नाहीं। क्रीडा करै ताकूं बालक समान जानिए। अर जो सृष्टि रचै तो आप सारिखी रचै। वह सुखपिंड अर यह सृष्टि दुःखरूप है। जो कृतार्थ होय सो कर्ता नाहीं, अर कर्ता है सो कृतार्थ नाहीं। जाकै कछु इच्छा है सो ही करै। जाकै इच्छा है ते ईश्वर नाहीं, अर ईश्वर विना करवे समर्थ नाहीं। तातैं यह निश्चय भया—जाकै इच्छा है सो करने समर्थ नाही। अर जो करवेमें समर्थ है ताकै इच्छा नाहीं। तातैं जाको तुम विधाता कर्ता मानो हो, सो कर्मकर पराधीन तुम सारखा ही है। अर ईश्वर है, सो अमूर्तीक है, जाकै शरीर नाहीं। सो शरीर विना सृष्टि कैसे रचै? अर यज्ञके निमित्त पशु बनाए सो वाहनादिकर्मविषै क्यों प्रवर्त्तें? तातैं यह निश्चय भया कि इस भवसागरविषै अनादिकालतै इन जीवोंने, रागादिभावकरि कर्म उपार्जे हैं तिनकरि नानायोनिविषै भ्रमण करै है। यह जगत अनादिनिधन है काहूका किया नाहीं, संसारीजीव कर्माधीन है।

अर जो तुम यह कहोगे कि—कम पहिले ह या शरीर पहिले ह ? सो जस बीज अर वृक्ष तस कम अर शरीर जानने। बीज त वक्ष ह अर वक्षत बीज ह। जिनके कमरूप बीज दग्ध भया तिनके शरीररूप वक्ष नाहीं। अर शरीरवक्ष विना सुख दुखादि फल नाहीं। तात यह आत्मा मोक्ष अवस्थामें कमरहित मनइन्द्रियनित अगोचर अदभुत परम आनन्दको भोग ह। निराकारस्वरूप अविनाशी ह, सो अविनाशी पद दयाधमत ही पाईए ह। तू कोई पुण्यके उदय कर मनुष्य भया, ब्राह्मणका कुल पाया, ताते पारधियोके कमत निवत्त हो। अर जो जीवहिंसातैं यह मानव स्वग पाव ह तो हिंसाके अनुमोदनतैं राजा वसु नरकमें क्यो पडे ? जो कोई चूनका पशु बनायकरि घात कर ह सो भी नरकका अधिकारी होय ह, तो साक्षात पशुघातकी कहा बात ? अबहू यज्ञक करणहारे ऐसा शब्द कह—ह—'हो वसु ! उठ स्वग विष जावो।' यह कहकर अग्निविष आहुति डार ह। तातैं सिद्ध भया कि वसु नरकमें गया, अर स्वग न गया। तातैं 'हे सवर्त ! यह यज्ञ कल्याणका कारण नाहीं। अर जो तू यज्ञ ही कर तो जस हम कहें सो कर। यह चिदानन्द आत्मा सो तो जजमान नाम कहिए यज्ञका करणहारा, अर शरीर ह सो विनय कुण्ड कहिए होमकुण्ड अर सतोष ह सो पुरोडास कहिए यज्ञकी सामग्री, अर जो सव परिग्रह ह सो हवि कहिए होमनेयोग्य वस्तु, अर माधुय कहिए केश तेई दभ कहिए—डाभ, तिनका उपारना, लोच करना, अर जो सर्व जीवनिकी दया सोई दक्षिणा, अर जाका फल सिद्धपद ऐसा जो शुक्लध्यान सोई प्राणायाम, अर जो सत्यमहाव्रत सोई यूप कहिए यज्ञविष काष्ठका स्थम्भ—जातैं पशुको बाध ह, अर यह चचल मन सोई पशु। अर तपरूप अग्नि अर पाच इन्द्रिय तेई समाधि कहिए इधन। यह यज्ञ धमयज्ञ कहिए ह। अर तुम कहोहो कि यज्ञकरि देवोकी तप्ति कीजिये ह सो देवनक तो मनसा आहार ह, तिनका शरीर सुगधमय ह ! अन्नादिकहीका आहार नाहीं तो मासादिकको कहा बात ? कसा ह मास ? महा दुर्गंध जो देख्या न जाय, पिताका वीय माताका लहू ताकरि उपज्या, कमोनिकी ह उत्पत्ति जिसविष, महा अभक्ष सो मास देव कसे भख ? अर तीन अग्नि या शरीरविष ह, एक ज्ञानाग्नि, दूसरी दशनाग्नि, तीसरी

उदराग्नि । सो इन्हीं को आचार्य दक्षिणाग्नि, गार्हपत्य, आहवनीय कहे हैं । अर स्वर्गलोकके निवासी देव हाडमासका भक्षण करें तो देव काहेके ? जैसे स्वान स्याल काक तैसे वे भी भए । ये वचन नारदने कहे ।

कैसे हैं नारद ? देवऋषि हैं, अनेकांतरूप जिनमार्गके प्रकाशिवेको सूर्य समान महा तेजस्वी, वदीप्यमान है शरीर जिसका शास्त्रार्थज्ञानके निधान तिनको मंदबुद्धि सर्वत कहा जीतें ! सो पराभवको प्राप्त भया । तदि निर्दई क्रोधके भारकर कम्पायमान आशीविष सर्पसमान लाल हैं नेत्र जाके महा कलकलाट करि अनेक विप्र भेले होय लडनेको कांछकछि हस्तपादादिकर नारदकै मारनेको उद्यमी भए । जैसे दिनमें काक घूघू पर आवें सो नारद भी कयकनिको मुक्कीनते, कयकनिको मुगदरसे, कई एकनिको कोहनीसे मारते हुए भ्रमण करते हुए, अपने शरीररूप शस्त्रकरि अनेकनिको हत्या, बहुत युद्ध भया । निदान यह बहुत अर नारद अकेले, सो सर्वगात्रमें अत्यन्त आकुलताको प्राप्त भये । पक्षी की नाईं, बधकोंने घेरचा । आकाशविषै उडवेको असमर्थ भए, प्राण संदेहको प्राप्त भए, ताही समय रावणका दूत राजा मरुतपै आयाहुता सो नारदको घेरचा देखि पाछा जाय रावणतें कही—हे महाराज जाके निकट मोहि भेज्या हुता सो महा दुर्जन है, ताके देखते थके द्विजोंने अकेले नारदको घेरचा है । अर मारे है जैसे कीडी दल सर्पको घेरै । सो मैं यह बात देख न सक्या । सो आपको कहिने को आया हूं । तदि रावण यह वृत्तान्त सुन क्रोधको प्राप्त भया, पवनसे भी शीघ्रगामी जे वाहन तिनपर चढि चलनेको उद्यमी भया, अर नंगी तलवारनिके धारक जे सामन्त ते अगाऊ दौडाए । ते एक पलकमें यज्ञ शाला जाय पहुचे । तत्काल ही नारदको शत्रुओंके घेरतें छुडाया अर निरदई मनुष्य जो पशुनिको घेरि रहे हुते सो सकल पशु तत्काल छुडाए । यज्ञके यूप कहिए स्तंभ ते तोड डारे, अर यज्ञके करावनहारे विप्र बहुत कूटे, यज्ञशाला बखेर डारी । राजाको भी पकड लिया, रावणने द्विजनि पर बहुत कोप किया ।
जो मेरे राज्यविषै जीवघाति करें यह क्या बात ? सो ऐसे कूटे जो अचेत होय धरतीपर गिर पडे । तब सुभटलोक इनको कहते भये—अहो जैसा दुख तुमको बुरा लागे है, अर सुख भला लागे है, तैसा पशुनि

के भी जानो । अर जसा जीतव्य तुमको बल्लभ ह, तसा सकल जीवनिको जानो । तुमको कूटते कष्ट होय ह तो पशुवोको विनाशनेते क्यो न होय ? तुम पापका फल सहो, आग नरकनिमें दुख भोगोगे । सो घोडो आदिके सवार तथा खेचर भूचर सब ही पुरुष हिसकनिको मारने लगे। तब वे विलाप करने लगे, हमको छोडो फिर ऐसा काम न करेंगे—ऐसे दीन वचन कह, विलाप करते भए । अर रावणका तिन पर अत्यत क्रोध सो छोडे नाही, तदि नारद महा दयावान रावणसो कहने लगे हे राजन ! तेरा कल्याण होव, तने इन दुष्टोसे मुझे छुडाया । अब इनको भी दयाकर, जिनशासनमें काहूको पीडा देनी लिखी नाहीं । सब जीवनिको जीतव्य प्रिय ह । तने सिद्धातमें क्या यह बात न सुनी ह कि जो हुडाव सर्पिणी कालविष पाखडिनिकी प्रवर्त्ति होय ह । जबके चौथेकालके आदिमें भगवान ऋषभ प्रकटे तीन जगतमें उच्च जिनको जन्मते ही देव सुमेरु पवत पर ले गये । क्षीरसागरके जलकरि स्नान कराया । वे महाकातिके धारी ऋषभ, जिनका दिव्य चरित्र पापोका नाश करनहारा तीनलोकमें प्रसिद्ध ह, सो तने क्या न सुन्या ? वे भगवान जीवोके दयालु जिनके गुण इन्द्र भी कहनेको समथ नाहीं । त वीत राग निर्वाणके अधिकारी इस पथ्वीरूप स्त्रीको तजकरि जगतके कल्याण निमित्त मुनिपदको आदरतै भये । कसे ह प्रभु ! निमल ह आत्मा जिनका, कसी ह पथ्वीरूप स्त्री ? जो विध्याचल पवत अर हिमालय पवत तेई ह उतग कुच जाके, अर आयक्षेत्र ह मुख जाका, सुन्दर नगर तेई चूडे तिनकरि युक्त ह । अर समुद्र ह कटिमेखला जाकी, अर जे नीलवन, तेई ह सिरके केश जाके, नानाप्रकारके जे रत्न तेई आभूषण ह । ऋषभदेवने मुनि होयकरि हजार वष तक महातप किया, अचल ह योग जिनका लम्बायमान ह बाहु जिनकी । स्वामीके अनुरागकरि कच्छादि चार हजार राजावोने मुनिके धम जाने विनाही दीक्षा धरी । सो परीषह सह न सके, तदि फलादिकका भक्षण, वक्कलादिको धारणकरि तापसी भए । ऋषभदेवने हजार वष तपकर वटवृक्षके तले केवलज्ञान उपजाया । तदि इन्द्रादिक देवोने केवलज्ञानकल्याण किया, समोसरणकी रचना भई । भगवानकी दिव्यध्वनिकर अनेक जीव कताथ

भए। जे कच्छादिक राजा चारित्र भ्रष्ट भये हुते ते धर्ममें दृढ होय गए, मारीचके दीर्घ संसारके योगतें मिथ्याभाव न छूटया। अर जिस स्थानपर भगवानको केवलज्ञान उपज्या ता स्थानकमें देवोंकरि चैत्यालयनिकी स्थापना भई। ऋषभदेवकी प्रतिमा पधराई, अर भरत चक्रवर्तीने विप्रवर्ण थाप्या हुता ते जलविषै तेलकी बूंदवत विस्तारको प्राप्त भया। उन्होंने यह जगत मिथ्याचार करि मोहित किया, लोक अति कुकर्मविषै प्रवर्ते, सुकृतका प्रकाश नष्ट होयगया। जीव साधूनिके अनादरमें तत्पर भए। आगे सुभूम चक्रवर्तीने नाशको प्राप्त किए थे तौ भी इनका अभाव न भया, हे दशानन! तो करि कैसे अभावको प्राप्त होहिंगे? तातें तू प्राणीनिकी हिंसातें निवृत्त होहु। काहूको कभी भी हिंसा कर्तव्य नाहीं। अर जब भगवानके उपदेशकरि जगत मिथ्यामार्गकरि रहित न होय, कोई एक जीव सुलटै तो हम सारिखे तुम सारिखो कर सकल जगतका मिथ्यात्व कैसे जाय? कैसे हैं भगवान? सबके देखनहारे, सबके जाननेहारे। या भांति देवर्षि जे नारद तिनके वचन सुनकर केकसी माताकी कुक्षमें उपज्या जो रावण सो पुराण कथा सुनकर अति प्रसिद्ध भया, अर बारम्बार जिनेश्वरदेवको नमस्कार किया। नारद अर रावण महापुरुषनिकी मनोज्ञ जे कथा तिनके कथनकरि क्षणएक सुखसों तिष्ठे, महापुरुषोंकी कथामें नानाप्रकारका रस भरचा है जिनमें ऐसी है।

अथानन्तर राजा मरुत हाथ जोडि धरतीसों मस्तक लगाय रावणको नमस्कारकर विनती करता भया—हे देव, हे लंकेश! मैं आपका सेवक हूं, आप प्रसन्न होहु, मैं अज्ञानीनिके उपदेशकरि हिंसामार्ग रूप खोटी चेष्टा करी। सो आप क्षमा करो। जीवोंके अज्ञानकरि खोटी चेष्टा होय है। अब मुझे धर्मके मार्गमें लेवो, अर मेरी पुत्री कनकप्रभा आप परणो। जे संसारमें उत्तम पदार्थ हैं तिनके आपही पात्र हो। तदि रावण प्रसन्न भए। कैसे हैं रावण? जो नमीभूत होय ताविषै दयावान हैं। तब रावणने पुत्री परणी, अर ताहि अपनो कियो। सो रावणके अति वल्लभा भई। मरुतने रावणके सामंतलोक बहुत पूजे, नानाप्रकारके वस्त्राभूषण हाथी घोडे रथ दिए। कनकप्रभा सहित रावण रमता भया। ताके एक

वर्ष बाद कतचित्रनामा पुत्री भई, सो देखनहारे लोकनिको रूपकरि आश्चयकी उपजावनहारी मानों मूर्तिवत शोभा ही ह। रावणके सामत महाशूरवीर तेजस्वी जीतकरि उपज्या ह उत्साह जिनने, सपूर्ण पृथ्वीतलम भमते भए। तीन खडमें जो राजा प्रसिद्ध हुता अर बलवान हुता, सो रावणके योधानिके आग दीनताको प्राप्त भया। सबही राजा वश भए। कसे ह राजा ? राज्य के भगका है भय जिनको, विद्याधरलोक भरतक्षेत्रका मध्यभाग देखि आश्चयको प्राप्त भए। मनोज्ञ नदी, मनोज्ञ पहाड, मनोज्ञ वन तिनको देख लोक कहते भए—अहो स्वग भी यात अधिक रमणीक नाहीं। चित्तविषै ऐसे उपजै ह जो यहा ही वास करिए। समुद्रसमान विस्तीण सेना जाकी, ऐसा रावण, जा समान और नाहीं। अहो अदभुत वीय, अदभुत उदारता या रावणकी, यह सब विद्याधरनिम श्रेष्ठ नजर आव ह। या भाति समस्त लोक प्रशसा कर ह। जा जा देशविष रावण गया तहा तहा लोक प्रशसा कर। फिर जहा जहा रावण गया, तहा तहा लोक सनमुख आय मिलते भए। जे जे पृथ्वीविष राजानिकी सुन्दर पुत्री हुती ते रावणने परणी। जा नगरके समीप रावण जाय निकस ताहीं नगरके नर नारी देखकरि आश्चय प्राप्त होवें। स्त्री सकल काम छोडि देखवेको दौडी, कईएक झरोखोमें बठि ऊपरसे असीस देय फूल डार। कसा ह रावण ? मेघसमान श्यामसुन्दर, पाको किंदूरीसमान लाल ह अधर जाके। अर मुकुट विष नानाप्रकारकी जे मणि तिनकरि शोभ ह सीस जाका, मुक्ताफलनिकी ज्योति सोई भया जल, ताकरि पखारचा ह चद्रमासमान बदन जाका, इन्द्रनीलमणि समान श्याम सघन जे केश, अर सहस्र पत्र कमलसमान नेत्र, तत्काल खच्या नमीभूत हुआ जो धनुष, ताक समान वक्र श्याम चिकने, भौंह युगल, ताकरि शोभित शखसमान ग्रीवा (गरदन) जाकी, अर वृषभसमान कांधे जाके, पुष्ट विस्तीण वक्षस्थल जाके, दिग्गजकी सूंडसमान भुजा जाके, केहरी समान कटि जाकी, कदलीके समान सुन्दर जघा जाकी, कमल समान चरण, समचतुरससस्थानको धर महामनोहर शरीर जाका, न अधिक लबा न अधिक ओछा, न कश न स्थूल, श्रीवत्सलक्षणको आदि देय बत्तीस लक्षणनिकरि

युक्त, अर अनेकप्रकार रत्ननिकी किरणोकरि ददीप्यमान ह मुकुट जाका, अर नानाप्रकारकी मणिनि करि मंडित नानाप्रकारके मनोहर ह कुण्डल जाके, बाजूबंदकी दीप्तिकरि ददीप्यमान ह भुजा जाकी, अर मोतिनके हारकरि शोभ ह उर जाका, अर्धचक्रवर्तीकी विभूतिका भोगनहारा, ताहि देख प्रजा के लोक बहुत प्रसन्न भए। परस्पर बात कर ह कि यह दशमुख महाबलवान, जीत्या ह मौसीका बेटा वैश्रवण जान, अर जीत्या ह राजा यम जिसने, कैलाशके उठावेको उद्यमी भया, अर प्राप्त किया है राजा सहस्ररश्मिका वैराग्य जाने, मरुतके यज्ञका विध्वंस करणहारा, महा शूरवीर, साहसका धारी, हमारे सुकृतके उदयकरि या दिशाको आया। यह केकसी माताका पुत्र, याके रूपका अर गुणनिका कौन वर्णन कर सक ? याका दर्शन लोकनिको परम उत्सवका कारण ह। वह स्त्री पुण्यवती धन्य ह जाके गर्भते यह उत्पन्न भया, अर वह पिता धन्य ह जातै यानै जन्म पाया, अर वे बंधु लोक धन्य ह जिनके कुलविष यह प्रकटचा। अर जे स्त्री इनकी राणी भई तिनके भाग्यकी कौन कह ? या भांति स्त्री झरोखानिमै बैठी बात कर ह, अर रावणकी असवारी चली जाय ह। जब रावण आय निकस तदि एक महूर्त गावकी नारी चित्रामकीसी होय रह, ताके रूप सौभाग्यकरि हरचा गया ह चित्त जिनका। स्त्रीनिको अर पुरुषनिको रावणकी कथाके टारि और कथा न रही। देशनिविष तथा नगर ग्राम तथा गावनिके बाडे तिनविष जे प्रधानपुरुष ह ते नानाप्रकारकी भेंट लेयकरि आय मिले, अर हाथ जोडि नमस्कारकरि विनती करते भए—हे देव! महाविभवके पात्र तुम, तिहारे घरविष सकल वस्तु विद्यमान ह, हे राजानिके राजा! नन्दनादि वनमै जे मनोज्ञ वस्तु पाइए ह ते भी सकल वस्तु चिंतवनमात्रत ही तुमको सुलभ ह। ऐसी अपूर्व वस्तु क्या ह जो तुम्हारी भेंट करें ? तथापि यह न्याय ह कि रीते हाथनि राजानिसो न मिलिए। तात कछू हम अपनी माफिक भेंट कर ह। जैसै भगवान जिनेंद्रदेवको देव सुवर्णके कमलोकर पूजा कर ह, तिनको क्या मनुष्य आप योग्य सामग्रीकर नाहीं पूजे है ? या भांति नानाप्रकारके देश देशनिके सामंत बडी ऋद्धिके धारी रावणको पूजते भए। रावण तिनका मिष्टवच

ननि करि बहुत सन्मान करता भया। रावण पृथ्वीको बहुत सुखी देख प्रसन्न भया, जस कोई अपनी स्त्रीको नानाप्रकारके रत्नआभूषणनिकर मंडित देख सुखी होय। जहा रावण मार्गके वशतै जाय निकस ता देशविषै विना बाहे धान स्वयमेव उत्पन्न भए। पृथ्वी अति शोभायमान भई, प्रजाके लोक परम आनंदको धरत संते अनुरागरूपी जलकरि याकी कीर्तिरूपी बेलिको सींचते भए। कसी है कीर्त्ति? निर्मल है स्वरूप जाका। किसान लोग ऐसे कहते भए कि बडे भाग्य हमारे, जो हमारे देशमें रत्नश्रवा का पुत्र रावण आया। हम रंक लोग कृषिकर्ममें आसक्त, रूखे अंग, खोटे वस्त्र, हाथ पग करकश, क्लेशतै हमारे सुख स्वाद रहित एता काल गया, अब इसके प्रभावतै हम संपदादिकरि पूर्ण भए। पुण्य का उदय आया, सब दुखनिका दूर करणहारा रावण आया। जिन जिन देशनिमें यह कल्याणका भरचा विचरै ते देश सब संपदा करि पूर्ण होय। दशमुख दरिद्रीनिका दरिद्र-देख न सकै। जिनको दुःख मेटवेकी शक्ति नाही तिन भाईनिकरि कहा सिद्ध होय है? यह तो सब प्राणियोका बडा भाई होता भया। यह रावण अपनें गुणनिकरि लोगनिको आनन्द उपजावता भया। जाके राजमें शीत अर उष्ण भी प्रजाको बाधा न करसकै तो चोर चुगल बटमार तथा सिंह गजादिकनिकी बाधा कहा से होय? जाके राज्यविषै पवन पानी अग्निकी भी प्रजाको बाधा न होय, सबबात सुखदाई ही होती भई।

अथानन्तर रावणको दिग्विजयविषै वर्षाऋतु आई, मानो रावणसो साम्ही आय मिली, मानो इन्द्रने श्यामघटा रूपी गजकी भेंट भेजी। कैसे है काले मेघ? महा नीलाचल समान बिजुरीरूप स्वर्ण की साकल धरै, अर बुगुलनिकी पंक्ति भई ध्वजा, तिनकरि शोभित है शरीर जिनके, इन्द्रधनुष रूप आभूषण पहरे जब वर्षाऋतु आई तदि दशोदिशानमें अंधकार होगया। रात्रि दिवसका भेद जान्या न पडै। सो यह युक्त ही है, श्याम होय सो श्यामता ही प्रकट करै, मेघ भी श्याम अर अंधकार भी श्याम। पृथ्वीविषै मेघ की मोटी धारा अखंड बरसती भई। जो माननी नायिकानिके मनविषै मानका भार हुता, सो मेघके गर्जनकरि क्षणमात्रविषै विलाय गया। अर मेघकी ध्वनिकरि भयको पाई जे

मानिनी भामिनी ते स्वयमेव ही भरतारसो स्नेह करती भई । जे शीतल कोमल मेघकी धारा, ते पथीनिको बाणके भावको प्राप्त करती भई । ममकी विदारणहारी धारानिके समूहकरि भेदा गया है हृदय जिनका, ऐसे पथी, ते महा व्याकुल भए हैं। मानो तीक्ष्णचक्रकरि विदारे गए हैं। नवीन जो वर्षाका जल ताकरि जडताको प्राप्त भए पथी, क्षणमात्रमें चित्रामकेसे होय गए। अर जानिए कि क्षीरसागरके भरे जो मेघ सो गायनिके उदर विष बठे ह। तात निरन्तर ही दुग्धकी धारा वर्षे ह। वर्षा के समय किसान कृषिकमको प्रवर्त्तें है। रावणके प्रभावकरि महाधनके धनी होते भए। रावण सब ही प्राणियोको महा उत्साहका कारण होता भया।

गौतम स्वामी राजा श्रेणिक सो कह ह कि हे श्रेणिक! जे पूण पुण्याधिकारी है तिनके सौभाग्य का वणन कहाँ तक करिए। इन्दीवर कमल सारिखा श्याम रावण स्त्रियो के चित्तको अभिलाषी करता सता मानो साक्षात वर्षाकालका स्वरूप ही ह, गम्भीर है ध्वनि जाकी, जैसा मेघ गाज तसा रावण गाज। सो रावणकी आज्ञात सव नरेन्द्र आय मिले, हाथ जोड नमस्कार करते भए। जो राजानिकी कन्या महा मनोहर ते रावणको स्वयमेव वरती भई। ते रावणको वरकर अत्यन्त क्रीडा करती भई। जस वर्षा पहाडको पायकरि अति वरष। कसी ह वर्षा? पयोधर जे मेघ तिनके समूहकरि सयुक्त ह। अर कसी ह स्त्री पयोधर जे कुच तिनकरि मडित ह। कसा है रावण? पृथ्वीके पालनेको समथ ह। वैश्रवण यज्ञका मानमदन करनहारा दिग्विजयको चढ्या। समस्त पृथ्वीको जीतै सो ताहि देखकरि मानो सूय लज्जा अर भयकरि व्याकुल होय दबि गया। भावाथ—वर्षाकालविषै सूय मेघपटलनिकरि आच्छादित होय ह। अर रावणके मुखसमान चद्रमा भी नाहीं, सो मानो लज्जा करि भी दब गया, क्योकि वर्षाकालमें चद्रमा भी मेघमालाकरि आच्छादित होय ह, अर तारे भी नजर नहीं आवे ह। सो मानो अपना पति जो चद्रमा ताहि रावणके मुखकरि जीत्या जानि भाज गए। अर रावणको हथेली, पगतली अत्यन्त लाल अर रावणकी स्त्रियोकी अत्यन्तलाल जानकर

लज्जावान होय, कमलोके समूह भी छिप गए, मानो यह वर्षाऋतु स्त्री समान ह । बिजुरी तेई कटि-मेखला, जो इन्द्रधनुष वह वस्त्राभूषण, पयोधर जे मेघ ते ही पयोधर कहिए कुच,अर रावण महामनोहर केतकोकी वास तथा पदमनी स्त्रियोके शरीरको सुगन्ध इत्यादि सवसुगन्ध अपने शरीरकी सुगन्धताकरि जीतता भया । जाके सुगन्ध श्वासरूप पवनके खचे भ्रमरनिके समूह गुंजार करते भए । गगाका तट जो अति मनोहर ह तहा डेराकरि वर्षाऋतुपूण करी । कसा ह गगाका तट ? जाके तीर सुन्दर हरित-तण शोभै ह, नानाप्रकारके पुष्पोकी सुगन्धता फल रही ह । बडे बडे वक्ष शोभै हैं । कसा है रावण ? जगतका बन्धु कहिए हितु ह । अति सुखसो चातुर्मास्यपूण किया । हे श्रेणिक! जे पुण्याधिकारी मनुष्य ह तिनका नाम श्रवणकर सवलोक नमस्कार कर ह, अर सुन्दर स्त्रियोके समूह स्वयमेव आय वर ह, अर ऐश्वयके निवास परम विभव प्रकट होय ह । उनके तेजकरि सूय भी शीतल होय ह । ऐसा जानकरि आज्ञा मान सशय छोड पुण्यके प्रबन्धका यत्न करो ।

इति श्रीरविषेणाचाय विरचित महापद्मपुराण सस्कृत ग्रन्थ ताकी भाषावचनिकाविष मरुतके यज्ञका विध्वस अर रावणके दिग्विजयका वणन करनेवाला ग्यारहवा पव पूण भया ॥ ११ ॥



अथानन्तर रावण मन्त्रियोसे विचार करता भया एकातविष । अहो मन्त्रियो ! यह अपनी कन्या कतचित्रा कौनको परनाव । इन्द्रसो सग्रामविष जीतनेका निश्चय नाहीं । तातं पुत्रीका पाणिग्रहण मगलकाय प्रथम करना योग्य ह । तदि रावणको पुत्रीके विवाहकी चिंताविष तत्पर देखि राजा हरि-वाहनने अपना पुत्र निकट बुलाया । सो हरिवाहनके पुत्रको अति सुन्दराकार विनयवान देखिकर पुत्रीके परणायवेका मनोरथ किया । रावण अपने मनमे चितवता भया कि सव नीतिशास्त्रविषै प्रवीण १८९
अहो मथुरा नगरीका नाथ राजा हरिवाहन निरतर हमारे गुणनिकी कीर्तिविष आसक्त है मन जाका, याका प्राणोहूते प्यारा मधु नामा पुत्र प्रशसा योग्य ह । महाविनयवान प्रीतिपात्र महारूपवान

अति गुणवान मेरे निकट आया। तब मंत्री रावणसो कहते भए—'हे देव! यह मधुकुमार महापराक्रमी याके गुण वर्णनमें न आवें तथापि कछुइक कहूं हूं। याके शरीरविषै अत्यन्त सुगन्धता है, जो सबलोक-
पद्म पुराण १६ निके मनको हरै ऐसा है रूप जाका। याका मधु नाम यथार्थ है। मधुनाम मिष्टान्नका है, सो यह मिष्ट-वादी है। अर मधुनाम मकरंदका है सो यह मकरंदवत भी अतिसुगंध है। अर याके एते ही गुण आप मत जानो, असुरनका इन्द्र जो चमरेंद्र ताने याको महागुणरूप त्रिशूलरत्न दिया है। सो त्रिशूलरत्न वैरिनपर डारचा वृथा न जाय, अत्यन्त देदीप्यमान है, सो आप याकी करतूत करि, याके गुण जानोगे। वचनोंकरि कहांलग कहैं तातें—'हे देव! यासो संबंध करनेकी बुद्धि करो। यह आपसे सम्बंधकरि कृतार्थ होयगा। ऐसा जब मंत्रियोंने कह्या तब रावणने याको अपना जमाई निश्चय किया। अर जमाई योग्य जो सामग्री, सो याको दीनी। बडी विभूतिसो रावणने अपनी पुत्री परणाई। सबलोक हर्षित भए। यह रावणकी पुत्री साक्षात पुण्य लक्ष्मी, महा सुन्दर शरीर, पतिके मन अर नेत्रनिकी हरनहारी, जगतमें ऐसा सुगंध नाहीं—ऐसे सुगंधशरीरको धारनहारी, ताको पायकर मधु अति प्रसन्न भया।

अथानन्तर राजा श्रेणिक जिनको कौतूहल उपज्या है सो गौतमस्वामीसो पूछते भए—हे नाथ! असुरेन्द्रने मधुको कौन कारण त्रिशूल रत्न दिया, दुर्लभ है संगम जाका। तब गौतमस्वामी जिनधर्मी निते है वात्सल्य जिनके, त्रिशूल रत्नकी प्राप्तिका कारण कहते भए। हे श्रेणिक! धातकीखंड नामा द्वीप, तहां ऐरावत क्षेत्र, शतद्वारा नगर, तहां दोय मित्र होते भए। महा प्रेमका है बंधन जिनके, एकका नाम सुमित्र, दूसरेका नाम प्रभव। सो ये दोनो एक चटशालामें पढ़कर पंडित भए। कईएक दिनोंमें सुमित्र राजा भया। सब सामंतनिकरि सेवित पूर्वोपार्जित पुण्यकर्मके प्रभावतैं परम उदयको प्राप्त भया। अर दूजा मित्र प्रभव सो दरिद्रकुलमें उपज्या, महादरिद्री। सो सुमित्रने महास्नेहतैं अपनी बराबर कर लिया। एक दिन राजा सुमित्रको दुष्ट घोडा हरकर वनमें लेगया। तहां द्विरदंष्ट्रनाम भीलनिका राजा सो याको अपने घर ले गया। ताको वनमाला पुत्री परणाई। सो वह वनमाला

साक्षात वनलक्ष्मी, ताको पाय राजा सुमित्र अति प्रसन्न भया। एक मास तहा रह्या। बहुरि भीलो की सेना लेकर स्त्री सहित शतद्वार नगरम आव था, अर प्रभव ढूढनेको निकस्या। सो मार्गमें स्त्री सहित मित्रको देखा। कसी ह वह स्त्री मानो कामकी पताका ही ह। सो देखकरि यह पापी प्रभव मित्रको भार्याविष मोहित भया, अशुभकर्मके उदयसे नष्ट भई ह कृत्य—अकृत्यकी बुद्धि जाकी, प्रबल कामके वाणनिकरि बींध्या सता, अति आकुलताको प्राप्त भया। आहार निद्राविक सब विस्मरण भया। ससारमें जेती व्याधी ह तिनमे मदन व्याधी ह जाकरि परम दु ख पाइए ह। जसे मव देवनमे सूय प्रधान ह, तसे समस्त रोगनिके मध्य मदन प्रधान ह। तब सुमित्र प्रभवको खेद खिन्न देखि पूछते भए—हे मित्र! तू खेदखिन्न क्यो ह? तदि यह मित्रको कहने लगा——जो तुम वनमाला परणी ताको देखकरि चित्त व्याकुल भया ह। यह बात सुन करि राजा सुमित्र मित्रमे ह अति स्नेह जाका, अपने प्राण समान मित्रको अपनी स्त्रीके निमित्त दुखी जानि स्त्रीको मित्रके घर पठावता भया। अर आप आपा छिपाय मित्रके झरोखेमे जाय बठा। अर देखे कि यह क्या कर, जो मेरी स्त्री याकी आज्ञा प्रमाण न कर, तो म स्त्रीका निग्रह करू। अर जो याकी आज्ञा प्रमाण कर, तो सहस ग्राम दू। वनमाला रात्रिके समय प्रभवके समीप जाय बठी। तवि प्रभव पूछता भया—हे भद्रे! तू कौन ह। तब इसने विवाह पयन्त सब वृत्तान्त कह्या। सुनकरि प्रभव प्रभारहित होय गया। चित्तविष अति उदास भया। विचार ह—हाय! हाय! म यह क्या अशुभ भावना करी, मित्रकी स्त्री माता समान कौन वांछ है। मेरी बुद्धि भ्रष्ट भाई, या पापत म कब छूटू? अब तो अपना सिर काट डारू, कलकयुक्त जीवन करि कहा? ऐसा विचार मस्तक काटनेके अथ म्यानत खडग काढ्या, खडगकी काति करि दशो दिशाविष प्रकाश होय गया। तब तलवारको कठके समीप ल्यायो, अर सुमित्र झरोखेमें बठता हुता, सो कूदकर आय हाथ पकड लिया, मरतेको बचाय लिया। छातीसो लगाय करि कहने लगा—हे मित्र! आत्म घातका दोष तू न जाने ह। जे अपने शरीरका अविधिसे निपाता कर ह, ते शूद्र मरकरि नरकविष जाय

पड़े है। अनेक भव अल्प आयुके धारक होय है। यह आत्मघात निगोदका कारण है। या भांति कह करि मित्रके हाथसो खडग छीन लिया, अर मनोहर वचनकरि बहुत संतोष्या। अर कहने लगा कि हे मित्र! अब आपसमें परस्पर परम मित्रता है, सो यह मित्रता परभवमें रहे कि न रहे। यह संसार असार है। यह जीव अपने कर्मके उदयकरि भिन्न भिन्न गतिको प्राप्त होय है। या संसारमें कौन किसका शत्रु है, सदा एक दशा न रहे है। यह कहिकर दूसरे दिन राजा सुमित्र महामुनि भए। पर्याय पूर्ण करि दूजे स्वर्गमें ईशान इन्द्र भये। तहांते चयकरि मथुरापुरीमें राजा हरिवाहन, जाके राणी माधवी तिनकै मधु नामा पुत्र भए। हरिवंशरूप आकाशविषै चन्द्रमा समान भए। अर प्रभव सम्यक्त्व बिना अनेक योनियोमें भ्रमणकरि विश्ववसुकी ज्योतिषमती जो स्त्री, ताके शिखी नाम पुत्र भया। सो द्रव्यलिंगी मुनि होय, महातपकरि निदानके योगते असुरोंके अधिपति चमरेंद्र भए। तब अवधिज्ञान करि अपने पूर्व भव विचार सुमित्र नामा मित्रके गुण अति निर्मल अपने मनविषै धार, सुमित्र राजा का अतिमनोज्ञ चरित्र चितारकरि असुरेंद्रका हृदय प्रीतिकरि मोहित भया। मनविषै विचारया कि राजा सुमित्र महागुणवान मेरा परम मित्र हुता, सब कार्योंमे सहाई था। ता सहित मैं चटशालाविषै विद्या पढ़ा, मैं दरिद्री हुता ताने आप समान विभूतिवान किया। अर मैं पापी दुष्टचित्तने ताकी स्त्री विषै खोटे भाव किए तो हू ताने द्वेष न किया। स्त्री मेरे घर पठाई। मैं मित्रकी स्त्रीको माता समान जान अति उदास होय, अपना सिर खडगते काटने लाग्या, तब ताहीने थाम्भ लिया। अर मैंने जिनशासन की श्रद्धा बिन मरकर अनेक दुःख भोगे। अर जे मोक्षमार्गके प्रवरतनहारे साधु पुरुष तिनकी निंदा करी, सो कुयोनिविषै दुःख भोगे, अर वह मित्र मुनिव्रत अंगीकारकरि दूजे स्वर्ग इन्द्र भया। तहांते चयकरि मथुरापुरीविषै राजा हरिवाहनका पुत्र मधुवाहन भया है। अर मैं विश्ववसुका पुत्र शिखीनाम द्रव्य- १९२
लिंगी मुनि होय असुरेन्द्र भया। यह विचार उपकारका खच्या, परम प्रेमकरि भीजा है मन जाका, अपने भवनसे निकसकरि मध्यलोकविषै आय मधुवाहन मित्रसो मिल्या। महारत्नोकरि मित्रका

पूजन किया। सहसात नामा त्रिशूल रत्न दिया, मधुवाहन चमरेन्द्रको देखि बहुत प्रसन्न भया। फिर चमरेन्द्र अपने स्थानको गया। हे श्रेणिक! शस्त्र विद्याका अधिपति, सिंहोंका है वाहन जाके, ऐसा मधु कुंवर हरिवंशका तिलक, रावण है श्वसर जाका, सुखसो तिष्ठ है। यह मधुका चरित्र जो पुरुष पढ सुन सो कांतिको प्राप्त होय, अर ताके सव अर्थ सिद्ध होय।

अथानन्तर मरुतके यज्ञका नाश करणहारे जो रावण सो लोकविषे अपना प्रभाव विस्तारता हुवा, शत्रुनिको वश करता सता अठारह वर्ष विहार करि, जैसे स्वर्गमें इन्द्र हर्ष उपजावे तैसे उपजावता भया। पृथ्वीका पति कैलाश पर्वतके समीप आय प्राप्त भया। तहां निर्मल है जल जाका, ऐसी मंदाकिनी कहिए गंगा समुद्रकी पटराणी, कमलनिके मकरंदकरि पीत है जल जाका, ऐसी गंगाके तीर कटकके डेरे कराए और आप कैलाशके कुक्षविषे डेरा करि क्रीडा करता भया। गंगाका स्फटिक समान जल निर्मल तामें खेचर, भूचर, जलचर क्रीडा करते भए। जे घोडे रजविषे लौटकरि मलिन शरीर भए हुते, ते गंगामें निह-न्हाय जलपान कराय फिर ठिकाने लाय बांधे। हाथी सपराए! रावण बालीका वृत्तांत चितार चैत्याल यनिको नमस्कारकरि धर्मरूप चेष्टा करता तिष्ठ्या।

अथानन्तर इन्द्रने दुलंघिपुर नामा नगरविषे नलकूवर नामा लोकपाल थाप्या हुता। सो रावणको हलकारोंके मुखतैं नजीक आया जानि इन्द्रके निकट शीघ्रगामी सेवक भेजे और सव वृत्तांत लिख्या। जो रावण जगतको जीतता समुद्ररूप सेनाको लिए हमारी जगह जीतनेके अर्थि निकट आया पड्या है, या ओरके सवलोक कंपायमान भए हैं। सो यह समाचार लेकर नलकूवरके इतबारी मनुष्य इन्द्र निकट आये। इन्द्र भगवानके चैत्यालयनिकी वंदनाको जाते हुते, सो मार्गविषे इन्द्रको पत्र दिया। इन्द्रने बांच-कर सव रहस्य जानकरि पाछा जवाब लिख्या। जो मैं पांडुवनके चैत्यालयनिकी वंदनाकरि आऊं हूं। १६३
इतने तुम बहुत यत्नसो रहना, अमोघशस्त्र कहिए खाली न पड---ऐसा जो शस्त्र ताके धारक हो, अर मैं भी शीघ्रही आऊं हूं। ऐसी लिखकर वंदनाविषे आसक्त है मन जाका, वैरीकी सेनाको न गिनता

सता पाडुकवन गया । अर नलकूवर लोकपालने अपने निज वगसो मत्रकरि नगरकी रक्षामें तत्पर विद्यामय सौ यौजन ऊचा, वज्रशाल नामा कोट बनाया, प्रदक्षिणाकरि तिगुणा । रावणने नलकूवर का नगर जाननेके अर्थि प्रहस्त नामा सेनापति भेज्या । सो जायकरि पाछा आय रावणसो कहता भया-हे देव ! मायामई कोटकरि मडित वह नगर है सो लिया न जाय । देखो प्रत्यक्ष दीख है । सब दिशाओ में भयानक विकराल दाढको धरे सर्प समान शिखर जाके, अर बलता जो सघन बासन का वन ता समान देखी न जाय ऐसी ज्वालाके समूहकरि सयुक्त उठ है स्फुलिगोकी राशि जामें, अर याके यत्र वतालका रूप धर विकराल है दाढ जिनकी, एक योजनके मध्य जो मनुष्य आव ताको निगल है, तिन यत्रनिविष प्राप्त भए जे प्राणियोके समूह तिनका यह शरीर न रह, जन्मातरमे और शरीर धर । ऐसा जानकर आप दीर्घदर्शी हो, सो या नगरके लेनेका उपाय विचारो । तदि रावण मत्रियो से उपाय पूछने लाग्या । सो मत्री मायामई कोटके दूर करवेका उपाय चितवते भए । कसे है मत्री ? नीति शास्त्रविष अति प्रवीण है ।

अथानन्तर नलकूवरकी स्त्री उपरभा इन्द्रकी अप्सरा जो रभा ता समान है गुण, अर रूप जाका पृथ्वीविष प्रसिद्ध, सो रावणको निकट आया सुन अति अभिलाषा करती भई । आगे रावणके रूप गुण श्रवणकर अनुरागवती थी ही रात्रिविष अपनी सखी विचित्रमालाको एकातमें ऐसे कहती भई-हे सुन्दरी ! मेरे तू प्राण समान सखी है, तो समान और नाहीं । अपना अर जाका, एक मन होय ताको सखी कहिए, मेरेमें अर तेरेमे भेद नाहीं । तात हे चतुरे ! निश्चयत मेरे कार्यका साधन तू कर तो तुझ अपनी चित्तकी बात कहूँ । जे सखी है ते निश्चयसेती जीतव्यका अवलबन होय है । जब ऐसे रानी उपरभाने कह्या तदि सखी विचित्रमाला कहती भई-हे देवी ! एती बात कहा कहो हो ? हम तो तिहारे आज्ञाकारी जो मनबाछित कार्य कहो सोही कर । मै अपने मुखसो अपनी स्तुति कहा करू, अपनी स्तुति करना लोकविष निद्य है, बहुत क्या कहू । मोहि तुम मूर्तिवती साक्षात कार्यकी

सिद्धि जानो। मेरा विश्वासकरि तिहारे मनविषै जो होय सो कहो। हे स्वामिनी! हमारे होते तोहि खेद कहा? तब उपरंभा निश्वास लेकर कपोलविषै कर धर मुखमेंतैं न निकसते जो वचन ते बारम्बार प्रेरणा करि बाहिर निकासती भई। हे सखी! बालपनेहीसो लेकर मेरा मन रावणविषै अनुरागी है। मैं लोक-

विषै प्रसिद्ध महासुन्दर ताके गुण अनेक बार सुने हैं। सो मैं अंतरायके उदयकरि अबतक रावणके संगमको प्राप्त न भई। चित्तविषै परम प्रीति धरूं हूं। अर अप्राप्तिका मेरे निरंतर पछतावा रहै है। हे रूपिणी! मैं जानूं हूं यह कार्य प्रशंसा योग्य नाहीं। नारी दूजे नरके संयोगकरि नरकविषै पड़े है। तथापि मैं मरणको सहिबे समर्थ नाहीं, तातैं हे मिष्टभाषिणी! मेरा उपाय शीघ्र कर। अब वह मेरे मन का हरणहारा निकट आया है! काहू भांति प्रसन्न होय मेरा तासो संयोग कर दे। मैं तेरे पायन पड़ूं हूं। ऐसा कहकरि वह भामिनी पायं पड़ने लागी, तदि सखीने सिर थांभ लिया, अर यह कही कि हे स्वामिनी! तिहारा कार्य क्षणमात्रविषै सिद्धि करूं। यह कहि कर दूती घरसे निकसी। जाने है इन सकल बातनकी रीति। अति सूक्ष्म श्याम वस्त्र पहनकर आकाशके मार्ग रावणके डेरेविषै आई। राज लोकमें गई। द्वारपालतैं अपने आगमनका वृत्तांत कहकर रावणके निकट जाय प्रणाम किया। आज्ञा पाय बैठकर विनती करती भई—हे देव! दोष के प्रसंगतैं रहित तिहारे सकल गुणनिकरि यह सकल लोक व्याप्त हो रह्या है, तुमको यही योग्य है। अति उदार है विभव तिहारा, या पृथ्वीविषै सबही को तृप्त करो हो। तुम सबके आनन्द निमित्त प्रकट भए हो। तिहारा आकार देखकर यह मनविषै जानिए है कि तुम काहूकी प्रार्थना भंग न करो, तुम बड़े दातार, सबके अर्थ पूर्ण करो हो, तुम सारिखे महंत पुरुषनिको जो विभूति है सो परोपकारहीके अर्थि है। सो आप सबनिको सीख देयकरि एक क्षण एकांत विराजकर चित्त लगाय मेरी बात सुनो तो मैं कहूं। तदि रावणने ऐसा ही किया। तदि याने
उपरंभाका सकल वृत्तांत कानविषै कह्या।

तदि रावण दोनो हाथ काननपर धरि, सिर धुनि, नेत्र संकोच, केकसी माताके पुत्र पुरुषनिविषै

उत्तम, सदा आचार परायण कहते भए—हे भद्रे ! कहा कही ? यह काम पापके बंधका कारण कैसे करनेमें आवे ? मैं परनारियोंको अंगदान करनेविषै दरिद्री हूं । ऐसे कर्मोंको धिक्कार होउ । तब अभिमान तजकर यह बात कही, परन्तु जिनशासनकी यह आज्ञा है कि विधवा अथवा धनीकी राणी अथवा कुंवारी अथवा वेश्या सब ही परनारी सदाकाल सर्वथा तजनी । परनारी रूपवती है तो कहा ? यह कार्य लोक अर परलोकका विरोधी विवेकी न करै । जो दोनो लोक भ्रष्ट करै सो काहेका मनुष्य—? हे भद्रे परपुरुषकरि जाका अंग मर्दित भया ऐसी जो परदारा, सो उच्छिष्ट भोजन समान है, ताहि कौन नर अंगीकार करै ? यह बात सुन विभीषण महामंत्री सकल नयके जाननहारे, राजविद्याविषै श्रेष्ठ है बुद्धि जिनकी, रावणको एकांतविषै कहते भए— हे देव ! राजानिके अनेक चरित्र हैं । काहू समय काहू प्रयोजनके अर्थ किंचितमात्र अलीक भी प्रतिपादन करैं । तातैं आप यासूं अत्यन्त रूखी बात मत कहो । वह उपरंभा वशभई संती कछु गढके लेनेका उपाय कहेगी । ऐसे वचन विभीषणके सुनकर रावण राजविद्यामें निपुण मायाचारी विचित्रमाला सखीसो कहते भए हे—भद्रे ! वह मेरेमें मन राखे है, अर मेरे विना अत्यन्त दुखी है, तातैं वाके प्राणनिकी रक्षा मोकूं करनी योग्य है । सो प्राणोसे न छूटे या प्रकार पहले उसको लेआवो । जीवोंके प्राणोकी रक्षा यही धर्म है । ऐसा कहकर सखीको सीख दीनी, सो जायकर उपरंभाको तत्काल ले आई । रावणने याका बहुत सन्मान किया । तदि वह मदन सेवनकी प्रार्थना करती भई । रावण ने कही—हे देवी ! दुर्लंघ नगर विषै मेरी रमणेकी इच्छा है । यहां उद्यानविषै कहा सुख ? ऐसा करो जो नगरविषै तुम सहित रमूं । तदि वह कामातुर ताकी कुटिलताको न जानकरि, स्त्रियोंका मूढ स्वभाव होय है, तातैं नगरके मायामई कोटभंजनका उपाय आसालिका नाम विद्या दीनी, अर बहुत आदरतैं नानाप्रकारके दिव्य शस्त्र दिये, देवनिकरि करिए है रक्षा जिनकी । तदि विद्याके लाभतैं तत्काल मायामई कोट जाता रह्या । जो सदाका कोट था सोई रह गया । तदि रावण बडी सेनाकर नगरके निकट गया । अर नगरके कोलाहल शब्द सुनकर राजा नलकूवर क्षोभको

प्राप्त भया। मायामई कोटको न देखकरि विषादमन भया, अर जानी कि रावणने नगर लिया, तथापि महा पुरुषार्थ धरता सता युद्ध करवेको बाहरि निकस्या। अनेक सामतनि सहित परस्पर शस्त्रनके समूहकरि महासग्राम प्रवरत्या। जहा सूर्यकी किरण भी नजर न आवे, क्रूर ह शब्द जहा। विभीषणने शीघ्र ही लातकी दे नलकूवरका रथ तोड डारचा, अर नलकूवरको पकड लिया। जस रावणने सहस्रकिरणको पकडा हुता तस विभीषणने नलकूवरको पकडचा। रावणकी आयुधशालाविष सुदर्शन चक्ररत्न उपज्या। उपरभाको रावणने एकातविष कही,— जो तुम विद्यादानसो मेरी गुरु हो, अर तुमको यह योग्य नाहीं जो अपने पतिको छोड दूजा पुरुष सेवो। अर मुझे भी अन्यायमार्ग सेवना योग्य नाहीं ? या भाति याको दिलासा करी अर नलकूवरको याके अर्थि छोडचा। कसा ह नलकूवर ? शस्त्रनिकरि विदारचा गया ह बख्तर जाका, नहीं लगा ह शरीरके घाव जाके। रावणने उपरभासे कही या भरतारसहित मनवाछित भोगकर। कामसेवनविषै पुरुषोमें कहा भेद ह। अर अयोग्यकाय करनेत मेरी अकीर्ति होय, अर म ऐसे करू तो लोग भी या माग विष प्रवर्त्ते। पृथ्वीविष अन्यायकी प्रवत्ति होय। अर तू राजा आकाशध्वजकी बेटी, तेरी माता मदुकाता, सो तू विमलकुलविष उपजी शीलको राखने योग्य ह। या भाति रावणने कही तदि उपरभा लज्जायमान भई, अपने भरतारविष सतोष किया, अर नलकूवर भी स्त्रीका व्यभिचार न जान स्त्रीसहित रमता भया, अर रावण सो बहुत सन्मान पाया। रावणकी यही रीति ह कि जो आज्ञा न मान ताका पराभव कर, अर जो आज्ञा मानताका सन्मान कर। अर युद्ध विष मारचाजाय सो मारचा जावो, अर पकडचा आव ताको छोड दे। रावणने सग्रामविष शत्रुनिको जीतनेत बडा यश पाया, बडी ह लक्ष्मी जाके महासेनाकरि सयुक्त वताड पवतके समीप जाय पडचा। १६७

तब राजा इन्द्र रावणको समीप आया सुनकर अपने उमराव जे विद्याधर देव कहाव तिन समस्त ही सो कहता भया —हो विश्वसी आदि देव हो ! युद्धकी तयारी करो। कहा विश्राम कर रहे हो ?

राक्षसनिका अधिपति आया। यह कर करि इन्द्र अपने पिता जो सहसार तिनके समीप सलाह करवेको गया। नमस्कारकरि बहुत विनयसयुक्त पृथ्वीपर बैठ बापसो पूछी—हे देव! बैरी प्रबल अनेक शत्रुनिको जीतनहारा निकट आया है सो क्या कर्तव्य है? हे तात! मैंने काम बहुत विरुद्ध किया जो यह बैरी होता ही प्रलयको न प्राप्त किया, कांटा उगता ही होंठनते टूटे, अर कठोर परे पीछे चुभै, रोग होता ही मिटै तो सुख उपजै अर रोगकी जड़ बंधे तो कटना कठिन है, तैसे क्षत्री शत्रुकी वृद्धि होने न दें, मैं याके निपातका अनेक बेर उद्यम किया परन्तु आपने वृथा मने किया, तब मैं क्षमा करी। हे प्रभो! मैं राजनीतिके मार्गकरि विनती करूं हूं। याके मारवेमें असमर्थ नाहीं हूं। ऐसे गर्व अर क्रोधके भरे पुत्रके वचन सुनकर सहसारने कही—हे पुत्र! तू शीघ्रता मत करि, अपने श्रेष्ठ मंत्री हैं तिनसो मंत्र विचारि। जे विना विचारे कार्य करे हैं, तिनके कार्य विफल होय हैं। अर्थकी सिद्धिका निमित्त केवल पुरुषार्थ नाहीं है। जैसे कृषिकर्मका है प्रयोजन जाके, ऐसा जो किसान ताकूं मेघकी वृष्टि विना कहा कार्य होय? अर जैसे चटशालाविषै शिष्य पढे हैं, सब ही विद्याको चाहै है परन्तु कर्मके वशतै काहूको विद्यासिद्धि होय है, काहूको सिद्धि न होय। तातै केवल पुरुषार्थसो ही सिद्धि न होय। अब रावणसो मिलापकरि। जब वह अपना भया, तब तू पृथ्वीका निःकंटक राज्य करेगा। अर अपनी पुत्री रूपवती नामा महारूपवती रावणको परणाय दे। यामें दोष नाहीं। यह राजानिकी रीति ही है। पवित्र है बुद्धि जिनकी ऐसे पिताने इन्द्रको न्यायरूप वार्त्ता कही, परंतु इन्द्रके मनमें न आई। क्षणमात्रमें रोसकरि लाल नेत्र होय गए, क्रोधकरि पसेव आय गये। महाक्रोधरूप वाणी कहता भया—हे तात! मारने योग्य वह शत्रु ताहि कन्या कैसे दीजिये। ज्यो ज्यो उमर अधिक होय, त्यो त्यो बुद्धि क्षय होय है। तात तुम यह बात योग्य न कही। कहो मैं कौनसो घाटि हूं, मेरे कौन वस्तुकी कमी है। जातै तुम ऐसे कायर वचन कहे। जा सुमेरुके पायनि चांद सूर्य लागि रहे सो उतंग सुमेरु कैसे औरनिकूं नवै। जो वह रावण पुरुषार्थ करि अधिक है, तो मैं भी तात अत्यंत अधिक हूं। अर दैव उसके

अनुकूल है यह बात निश्चय तुम कैसे जानी ? अर जो कहोगे, तानै बहुत वरी जीते हैं तो अनेक मृगनिको हतनहारा जो सिंह ताहि कहा अष्टपाद न हनै ? हे पिता ! शस्त्रनके संपातकरि उपज्या है अग्निका समूह जहां ऐसे संग्रामविषै प्राण त्यागना भला है। परन्तु काहूसो नमीभूत होना बडे पुरुषनिको योग्य नाहीं। पृथ्वीपर मेरी हास्य होय कि यह इन्द्र रावणसो नमीभूत हुवा। पुत्री देकर मिल्या, सो तुमने यह तो विचारा ही नाहीं ! अर विद्याधरपनेकरि हम अर वह बराबर हैं, परंतु बुद्धि पराक्रममें वह मेरी बराबर नाहीं। जैसे सिंह अर स्याल दोऊ वनके निवासी हैं परन्तु पराक्रममें सिंह तुल्य स्याल नाहीं। ऐसे पितासो गर्वके वचन कहे। पिताकी बात मानी नाहीं। पितातैं विदा होयकरि आयुधशालामें गए। क्षत्रीनिको हथियार बांटे अर बक्तर बांटे अर सिंधूराग होने लगे, अनेक प्रकारके वादित्र बजने लगे। अर सेनामें यह शब्द भया कि हाथियोंको सजावो, घोडोंके पलान कसो, रथोंके घोडे जोडो, खडग बांधो, बक्तर पहरो, धनुष बाण लो, सिरपर टोप धरो, शीघ्र ही खंजर लावो इत्यादि शब्द देव जातिके विद्याधरोंके होते भए।

अथानन्तर योधा कोपको प्राप्त भए, ढोल बाजने लगे, हाथी गाजने लगे, घोडे हींसने लगे और धनुषके टंकार होने लगे, योधाओंके गुंजार शब्द होने लगे और बंदीजन विरद बखानने लगे। जगत शब्दमई होय गया, सब दिशा तरवार तथा तोमर जातिके शस्त्र तथा पासिन करि, ध्वजानिकरि, शस्त्रनिकरि और धनुषनिकरि आच्छादित भई। और सूर्य भी आच्छादित होय गया। राजा इन्द्रकी सेनाके जे विद्याधर देव कहावै ते समस्त रथनूपुरतें निकसे। सब सामग्री धर युद्धके अनुरागी दरबाजे आय भेले भए। परस्पर कहै हैं रथ आगे करि, माता हाथी आया है। हे महावत! हाथी इस स्थानतैं परै करि। हो घोडेके सवार ! कहा खडा हो रह्या है, घोडेको आगे ले, या भांतिके वचनालाप होते संते शीघ्रही देव बाहिर निकसे, गाजते आए। सेनाविषै शामिल भए, और राक्षसोंके सन्मुख आए। रावणके अर इन्द्रके युद्ध होने लगा। देवोंने राक्षसोंकी सेना कछु हटाई। शस्त्रनिके जे समूह तिनके

प्रहारकरि आकाश आच्छादित होय गया। तदि रावणके योधा बजवेग, हस्त, प्रहस्त, मारीच, उद्भव, बज, वक्र, शुक्र, घोन, सारन, गगनोज्वल, महाजठर, मध्याभक्रूर इत्यादि अनेक विद्याधर बडे योधा राक्षसवशी नानाप्रकारके बाहनोपर चढे अनेक आयुधोके धारक देवोसे लडने लगे। तिनके प्रभावकरि क्षणमात्रमें देवनिकी सेना हटी। तब इन्द्रके बडे योधा कोपकरि भरे, युद्धको सनमुख भए, तिनके नाम मेघमाली, तडसग, ज्वलिताक्ष, अरि सचर, पाचकासिदन इत्यादि बडे बडे देवोने शस्त्रोके समूह चलावते सते राक्षसनिको दबाया, सो कछुएक शिथिल होय गए। तब और बडे २ राक्षस इनको धीय बधावते भये। महासामन्त राक्षसवशी विद्याधर प्राण तजते भये। परन्तु शस्त्र न डारत भए। राजा महेन्द्रसेन बानरवशी राक्षसनिके बडे मित्र तिनका पुत्र प्रसन्नकीर्त्ति ताने बाणोके प्रहारकरि देवनिकी सेना हटाई, राक्षसनिके बलकू बडा धीर्य बधाया, तब प्रसन्नकीर्त्तिके बाणनिके प्रभावकरि देव हटे। तदि अनेक देव प्रसन्नकीर्तिपर आये, सो प्रसन्नकीर्तिने अपने बाणनिकरि विदारे। जसे खोटे तपस्वियोका मन मन्मथ (काम) विदारे। तब और बडे २ देव आए, कपि राक्षस अर देवोके खड्ग कनक गदा शक्ति धनुष मुदगर इनकरि अति युद्ध भया। तब माल्यवानका वेटा श्रीमाली रावणका काका, महा प्रसिद्धपुरुष अपनी सेनाकी मददके अर्थि देवनिपरि आया। सूर्य समान है कांति जाकी, सो ताके बाणनिकी वर्षात देवोकी सेना हट गई। जस महाग्राह समुद्रको झकोल तस देवनकी सेना श्रीमालीने झकोली। तब इन्द्र के योधा अपन बलकी रक्षानिमित्त महाक्रोधके भरे अनेक आयुधोके धारक शिखि केशर बडाग्र कनक प्रवर इत्यादि इन्द्रके भानजे बाण वर्षाकरि आकाशको आच्छादते सते श्रीमाली पर आए। सो श्रीमाली २० अर्धचन्द्र बाणत उनके शिररूप कमलोकरि पृथ्वी आच्छादित करी। तब इन्द्रने विचारया कि यह श्रीमाली मनुष्योविषै महायोधा, राक्षसवशियोका अधिपति माल्यवानका पुत्र है। याने मेरे बडे २ देव मारे है। अर ये मेरे भानजे मारे या राक्षसके सन्मुख मेरे देवोमें कौन आवे? यह अतिवीर्यवान महा तेजस्वी देख्या न जाय। तातें मैं युद्धकरि याहि मारू। नातर यह मेरे अनेक देवनिको हतगा। ऐसाविचारि

अपने जे देवजाति के विद्याधर श्रीमालीत कम्पायमान भये हुते तिनको धीय बधाय, आप युद्ध करवेको उद्यमी भया। तब इन्द्रका पुत्र जयंत बापके पायनपरि विनती करता भया—हे देवेन्द्र! मेरे होते सते आप युद्ध करो, तवि हमारे जन्म निरथक है। हमको आपने बाल अवस्थाविष अति लडाए, अब तिहारे ढिग शत्रुनिको युद्धकरि हटाऊ। यह पुत्रका धम है। आप निराकुल विराजियो जो अकुर नखत छेद्या जाय तापर फरसी उठावना कहा? ऐसा कहकरि पिताकी आज्ञा लेय मानो अपने शरीरकरि आकाशको ग्रसगा—ऐसा क्रोधायमान होय युद्धके अर्थि श्रीमालीपर आया। श्रीमाली याको युद्धयोग्य जान खुशी भया—याके सन्मुख गए। ये दोनो ही कुमार परस्पर युद्ध करने लगे। धनुष खच बाण चलावते भये। इन दोनो कुमारनिका बडा युद्ध भया। दोनो ही सेनाके लोक इनका युद्ध देखते भए। सो इनका युद्ध देखि आश्चयको प्राप्त भये। श्रीमालीने कनक नामा हथियारकरि जयन्तका रथ तोडया। अर ताको घायल किया, सो मूर्छा खाय पडया। फिर सचेत होय लडने लग्या। श्रीमालीके भिंडमालकी दीनी, रथ तोडया, अर मूर्छित किया, तवि देवनिकी सेनाविष अति हष भया—अर राक्षसनिको सोच भया। फिर श्रीमाली सचेत भया—तदि जयतके सन्मुख भया, दोनोमें महायुद्ध भया। दोनो सुभट राजकुमार युद्ध करते शोभते भए। मानो सिहके बालक ही है। बडी देरमें इन्द्रके पुत्र जयतने माल्यवान का पुत्र जो श्रीमाली ताके गदाकी छाती विष दीनी सो पृथ्वी पर पडया, बदन कर रुधिर पडने लग्या। तत्काल सूय अस्त होजाय तसैं प्राणात होय गया। श्रीमालीको मार करि इन्द्रका पुत्र जयत शखनाद करता भया। तवि राक्षसनिकी सेना भयभीत भई अर पाछी हटी। माल्यवानके पुत्र श्रीमालीको प्राणरहित देख, अर जयत को उद्यम देखि रावणके पुत्र इन्द्रजीतने अपनी सेनाको धीय बधाया अर कोपकरि जयतके सन्मुख आया। सो इन्द्रजीतने जयतका बखतर तोड डाल्या, अर अपने बाणनि करि जयतको जजरा किया। तवि इन्द्र जयतको घायल देखि छेद्या गया है बखतर जाका, रुधिरकरि लाल होयगया है शरीर जाका, ऐसा देखकरि आप युद्धको उद्यमी भया। आकाशको अपने आयुधनिकरि आच्छादित

करता सता अपने पत्रकी मददके अर्थि रावणके पुत्रपर आया, तब रावणको सुमति नामा सारथीने कहा-हे देव ! ऐरावत हाथीपर चढ्या लोकपालनिकरि मंडित, हाथविष धर मुकुटके रत्ननिकी प्रभाकरि उद्योत करता सता, उज्ज्वल छत्रकरि सूयको आच्छादित करता सता, क्षोभको प्राप्त भया ऐसा जो समुद्र ता समान सेनाकरि सयुक्त जो यह इन्द्र महाबलवान ह । इन्द्रजीतकुमार यासू युद्ध करने समथ नाहीं । तात आप उद्यमी होयकरि अहकारयुक्त जो यह शत्रु ताहि निराकरण करो। तब रावण इन्द्रको सन्मुख आया देखि आग मालीका मरण यादकरि अर हाल श्रीमालीका बधकरि महाक्रोधरूप भया । अर शत्रुनिकरि अपनें पुत्रको बेढ्या देख आप दौडया । पवन समान ह वेग जाका, ऐसे रथविष चढ्या दोनो सेनाके योधानिविष परस्पर विषम युद्ध होना भया, सुभटनिके रोमाच होय आए। परस्पर शस्त्र निके निपात करि अधकार होय गया, रुधिरकी नदी बहने लगा, योधा परस्पर पिछानें न पर, केवल ऊचे शब्दकरि पिछाने पर, अपने अपने स्वामीके प्रेर योधा अति युद्ध करते भए । गदा शक्ति बरछी मूसल खडग वाण, परिधजातिके शस्त्र, कनकजातिके शस्त्र, शक्र कहिये सामान्यचक्र, बरछी तथा त्रिशूल पाश मुखडी जातिके शस्त्र, कुहाडा मुदगर वज्र पाषाण हलवड कोणजातिके शस्त्र अर नाना प्रकारके शस्त्र तिनकरि परस्पर अति युद्ध भया । परस्पर उनके शस्त्र उनने काटे, उनके उन्होने काटे। अति विकराल युद्ध होते परस्पर शस्त्रनिके घातकरि अग्नि प्रज्ज्वलित भई । रणविष नानाप्रकारके शब्द होय रहे ह, कही मारलो मारलो ये शब्द होय ह । कहीं एक रण २ कहीं किण २, त्रम २, दम दम, छमछम, पटपट, छसछस, ट्रढट्ट तथा तटतट, चटचट, घघघघ इत्यादि शत्रुनिकरि उपजे अनेक प्रकारके शब्दनिकर रणमडल शब्दरूप होयगया । हाथीनिकरि हाथी मारे गए, घोडनिकर घोडे मारे गये, रथोपर रथ तोडे गये, पियादनिकर पियादें हते । हाथियोकी सूडकर उछले जे जलके छींटे तिनकरि शस्त्र सपातकर उपजी थी जो अगिन सो शात भई । परस्पर गज युद्धकर हाथीनके दात टूट पडया, गजमोती बिखर गय । योधानिमें परस्पर यह आलाप भए-हो शूरवीर ! अस्त्र चलाय, कहा

कायर होय रह्या है ? हे भटसिंह ! हमारे खड्गका प्रहार सम्भार, हमारेतैं युद्धकरि । यह मूवा तू अब कहा जाय है । अर कोईसूं कहै है—तू यह युद्धकला कहा सीख्या, तरवारका भी सम्हारना न जाने है । अर कोई कहै है तू इस रणतैं जा, अपनी रक्षाकर, तू कहा युद्ध करना जाने ? तेरा शस्त्र मेरे लाग्या सो मेरी खाज भी न मिटी, तैं वृथा ही धनकी आजीविका अब तक खाई, अबतक तैं युद्ध कहीं देख्या नाहीं । कोई ऐसे कहै है—तू कहा कांपै है, तू थिरता भज, मुष्टि दृढ राख, तेरे हाथतैं खड्ग गिरैगा । इत्यादि योधानिमें परस्पर आलाप होते भये । कैसे हैं योद्धा ? महा उत्साहरूप हैं, जिनको मरनेका भय नाहीं । अपने अपने स्वामीनिके आगे सुभट भले दिखाये । किसीकी एक भुजा शत्रुकी गदाके प्रहारकरि टूट गई है, तो भी एक ही हाथतैं युद्ध करता रह्या । काहूका सिर टूट पड्या, तो धड ही लडै है । योधानिके बाणनिकरि वक्षस्थल विदारे गये, परन्तु मन न चिगे । सामंतनिके सिर पडे, परन्तु मान न छोड्या । शूरवीरनिकै युद्धमें मरण प्रिय है, टरकर जीवना प्रिय नाहीं । ते चतुर महा धीरवीर महापराक्रमी महासुभट यशकी रक्षा करते संते शस्त्रनिके धारक प्राण त्याग करते भये, परन्तु कायर होयकरि अपयश न लिया । कोई एक सुभट मरता थका भी वैरीके मारवे की अभिलाषा करि क्रोधका भर्या, वैरीके ऊपर जाय पड्या, ताको मार आप मर्या । काहूके हाथनितैं शस्त्र शत्रुके शस्त्र घातकरि निपात भए ? तदि वह सामंत मुष्टिरूप जो मुद्गर ताके घातकरि शत्रुको प्राणरहित करता भया । कोई एक महासुभट शत्रुनिको भुजानितैं मित्रवत् आलिंगनकरि मसल डारता भया । कोई एक सामंत परचक्रके योधानिकी पंक्तिको हणता संता अपने पक्षके योधानिका मार्ग शुद्ध करता भया ।
कोई एक योधा रणभूमिविषै परते संते भी वैरीनिको पीठ न दिखावते भए, सूधे पडे । रावण अर इन्द्रके युद्धमें हाथी घोडे रथ योधा हजारो पडे । पहिले जो रज उठी हुती सो मदोन्मत्त हाथियोंके मदझरनेकरि तथा सामंतनिके रुधिरका प्रवाहकरि दबगई । सामंतोके आभूषणनिकरि रत्नो की ज्योतिकरि आकाशविषै इन्द्रधनुष होयगया । कोईएक योधा बायें हाथकरि अपनी आंतो थांभकरि महा

भयाकर खडग काढि वरी ऊपर गया। कोईएक योधा अपनी आतहो करि गाढी कमर बाधे होट डसता शत्रु ऊपर गया। कोईएक आयुधरहित होय गया तो भी रुधिरका रग्या रोषविष तत्पर वरीके माथे

पर हस्तका प्रहार करता भया। कोईएक रणधीर महा शूरवीर युद्धका अभिलाषी पाशकरि बरीको बाधकरि छोड देता भया, रणकर उपज्या ह हर्ष जाके ऐसा। कईएक न्यायसग्रामविष तत्पर बरीको आयुध रहित देखकरि आप भी आयुध डारि खडे होय रहे, कईएक अन्त समय सन्यास धार नमोकार मन्त्रका उच्चारणकरि स्वर्ग प्राप्त भये। कईएक योधा आशीविष सर्पसमान भयाकर पडता २ भी प्रतिपक्षीको मारकरि मरया। कईएक अधसिर छेद्या गया ताहि बाये हाथविष दाबि महापराक्रमी दौडकर शत्रुका सिर फाडया। कईएक सुभट पर्वतीकी आगल समान जो अपनी भुजा तिनहीकरि युद्ध करते भए। कईएक परम क्षत्रिय धमज्ञ शत्रुको मूर्छित भया देखि आप पवन झोल सचेत करते भए। या भाति कायरनिको भयका उपजावनहारा अर योधानिको आनदका उपजावनहारा महा सग्राम प्रवर्त्या। अनेक गज, अनेक तुरग, अनेक योधा शस्त्रनिकरि हते गए। अनेक रथ चूण होयगए, अनेक हाथियोकी सूड कट गई, घोडानिके पाव टूट गए, पूछ कट गई, पियादे काम आय गए। रुधिर के प्रवाहकरि सव दिशा आरक्त होयगई। एता रण भया सो रावण किंचितमात्र भी न गिन्या। रणविष ह कौतूहल जाके ऐसे सुभटभावका धारक रावण सुमति नामा सारथीको कहता भया—हे सारथी! इस इन्द्रक सन्मुख रथ चलाय, अर सामान्य मनुष्योके मारवेकरि कहा? ये तण समान सामान्य मनुष्य तिनपर मेरा शस्त्र न चाल। मेरा मन महायोधावोके ग्रहणविष तत्पर ह, यह क्षुद्र मनुष्य अभिमानत इन्द्र कहाव ह। याहि आज मारू अथवा पकडू। यह विडम्बनाका करणहारा पाखड करि रह्या है, सो तत्काल दूर करू। देखो याकी ढीठता, आपको इन्द्र कहाव ह अर कल्पनाकर लोक पाल थापे ह, अर इन मनुष्योने विद्याधरोको देव सज्ञा धरी ह। देखो अल्पसी विभूति पाय मूढमती भया है, लोकहास्यका भय नाहीं। जस नट साग धरया ह, दुर्बुद्धि आपको भल गया। पिताके वीर्य माताके

रुधिर करि मास हाडमई शरीर माताके उदरत उपज्या तोहू वथा आपको देवेंद्र मानै ह । विद्याके बलकरि या‍े यह कल्पना करी ह । जस काग आपको गरुड कहाव तसैं यह इन्द्र कहावै हैं। या भाति जब रावणने कह्या तब समति सारथीने रावणका रथ इ‍द्रके स‍मुख किया। रावणको देख इन्द्रके सब सुभट भागे। रावणसो युद्ध करवेको कोई समथ नाहीं। रावण सबको दयालु दृष्टिकर कीट समान देख, रावणके स‍मुख ए इ‍द्र ही टिका अर सब कत्रिमदेव याका छत्र देख भाज गए। जस चद्रमाके उदयतैं अधकार जाता रह। कसा ह रावण ? बरियोकर झेल्या न जाय। जसैं जलका प्रवाह ढाहेनिकरि थाम्या न जाय अर जस क्रोधसहित चित्तका वेग मिथ्यादष्टि तापसीनिकर थाम्या न जाय तस सामतोकरि रावण थाम्या न जाय। इ‍द्र भी कलाश पवतसमान हाथीपर चढ्या, धनुषनिको धरे तरकशतै तीर काढता रावणके स‍मुख आया। कानतक धनुषको खीच रावणपर बाण चलाया। जसें पहाडपर मेघ मोटी धारा बर्षाव तैसे रावणपर इ‍द्रने बाणनिकी वर्षा करी। रावणने इ‍द्रके बाण आवते आवते काट डारे अर अपने बाणनिकरि शरमडप किया। सूर्यकी किरण बाणनिकी वृष्टिकरि न आव, ऐसा युद्ध देख नारद आकाशविष नत्य करता भया। कलह देख उपज ह हर्ष जाको। जब इद्रने जा‍या कि यह रावण सामा‍य शस्त्रकर असाध्य ह, तबि इद्र‍े अग्निबाण रावणपर चलाया। ताकरि रावणकी सेनाविष आकुषलता उपजी। जस बासनिका वन प्रजल, अर ताकी तडतडात ध्वनि होय, अग्निकी ज्वाला उठ, तेस अग्निबाण प्रज्वलता सता आया। तब रावणने अ‍नी सेनाको व्याकुल देख तत्कालही जलबाण चलाया। सो मेघमाला उठी, पवत समान जलकी मोटी धारा बरसने लगी, क्षणम‍ात्रमैं अग्निबाण बुझ गया। तब इद्र‍े रावणपर तामस बाण चलाया। ताकरि दशो दिशानिमे अधकार होयगया। रावणके कटकविष काहूको कुछ भी न सूझे। तब रावणने प्रभास्त्र कहिए प्रकाश बाण चलाया, ताकरि क्षणमात्रमें सकल अधकार विलय होयगया, जस जिनशासनके प्रभावकरि मिथ्यात्वका माग विलय जाय। फिर रावणन कोपकरि इद्रप नागबाण चलाया, सो मानो महाकाले

नाग ही चलाए। भयकर ह जिह्वा जिनकी, ते सप इन्द्रक अर सकल सेनाक लिपट गए। सपनिकरि बेढ्या इन्द्र अति व्याकुल भया, जस भवसागरविष जोव कमजालकर बेढ्या व्याकुल होय ह। तब इद्र ने गरुडबाण चितारया सो सवणसमान पीत पखनिके समूहकरि आकाश पीत होय गया, अर पाखी निकी पवनकरि रावणका कटक हालने लग्या, मानो हिडोलेमें झूल ह। गरुडके प्रभावकर नाग ऐसे विलाय गए जस शुक्लध्यानके प्रभावकरि कमनिके बध विलय होय जाय। जब इन्द्र नागबधनित छूटकर जेठके सूयसमान अति दारुण तपता भया तदि रावणने त्रलोक्यमडन हाथीको इन्द्रके ऐरावत हाथीपर प्रेरया। कसा ह त्रलोक्यमडन ? सदा मद झर ह और बरियोको जीतनहारा ह। इन्द्रने भी ऐरावतको त्रलोक्यमडन पर धकाया। दोनो गज महा गवके भरे लडने लगे। झर ह मद जिनके, क्रूर ह नेत्र जिनके, हाल ह कण जिनके, ददीप्यमान ह विजुरी समान स्वणकी साकल जिनके, दोऊ हाथी शरदके मेघसमान अति गाजते, परस्पर अति भयकर जो दात तिनक घातनिकरि पथ्वीको शब्दायमान करते, चपल ह शरीर जिनका, परस्पर सूडोसे अदभुत सग्राम करते भए।

तब रावणने उछलकरि इन्द्रके हाथीके मस्तकपर पग धरि अति शोघताकरि गजके सारथी को पाद प्रहारत नीचें डारया अर इन्द्रको वस्त्रत बाध्या, अर बहुत दिलासा देयकरि पकडि अपने गज पर लेय आया। अर रावणके पुत्र इन्द्रजीतने इन्द्रका पुत्र जयत पकडया, अपने सुभटोको सौंप्या, आप इन्द्रके सुभटोपर दौडया। तदि रावणने मन किया—हे पुत्र ! अब रणत निवत्त होवो, क्योकि समस्त विजयाधके जे निवासी विद्याधर तिनका चूडामणि पकड लिया ह। अब समस्त अपने अपने स्थानक जावो, सुखसो जीवो। शालित चावल लिया, तब परालका कहा काम ? जब रावणने ऐसा कह्या तब इन्द्रजीत पिताकी अज्ञात पाछा बाहुडया, अर सब देवनिकी सेना शरदके मेघसमान भाग गई। जसें पवनकरि शरदके मेघ विलाय जाय। रावणकी सेनामें जीतके वादित्र बाजे, ढोल नगारे शख झाझ इत्यादि अनेक वादित्रनिका शब्द भया। इन्द्रको पकडया देख रावणकी सेना अति हर्षित भई। रावण

लकामे चलवेको उद्यमी भया, सूयके समान रथ ध्वजानिकरि शोभित, अर चचल तुरग नृत्य करते भए। अर मद झरते हुए नाद करते हाथी तिनपरि भमर गु जार कर ह, इत्यावि महासेनाकरि मडित राक्षसनिका अधिपति रावण लकाके समीप आया। तब समस्त बधुजन अर नगरके रक्षक तथा पुरजन सब ही दशनके अभिलाषी भेंट लेय लेय सन्मुख आए, अर रावणकी पूजा करते भए। जे बडे है तिनकी रावणने पूजा करी। रावणको सकल नमस्कार करते भए अर बडोको रावण नमस्कार करता भया। कईएकनिको कपादष्टिकरि, कईएकनिको मदहास्य करि, कईएकनिको वचननिकरि रावण प्रसन्न करता भया। बुद्धिके बलत जान्या ह सबका अभिप्राय जान। लका तो सदा ही मनोहर ह, परन्तु रावण बडी विजयकरि आया तात अधिक समागी ह। ऊचे रत्ननिके तोरण निरमापे, मदमद पवनकरि अनेक वणकी ध्वजा फरहर ह। कु कुमादि सुगध मनोज्ञ जलकरि सींच्या ह समस्त पथ्वीतल जहा और सब ऋतुके फूलनिकरि पूरित ह राजमाग जहा, अर पच वण रत्ननिके चूण करि रचे है मगलीक माडने जहा, अर दरवाजोपर थाभे ह पूण कलश, कमलोके पत्र पर पल्लवनित ढके। सम्पूण नगरी वस्त्राभरणकरि शोभित ह। जस देवोसे मडित इन्द्र अमरावतीमें आव, तस विद्याधरनिकरि बेढ्या रावण लकामें आया। पुष्पक विमानमे बठ्या, ददीप्यमान ह मुकट जाका, महारत्नोके बाजूबद पहरि, निमल प्रभाकरयुक्त, मोतियोका हार वक्षस्थल पर धार, अनेक पुष्पोके समूह करि विराजित, मानो वसतहीका रूप ह। सो ताको हर्षत पूण नगरके नर नारी देखते देखते तप्त न भए। ऐसी मनोहर मूरत ह। आसीस देय ह। नानाप्रकारके वादित्रोके शब्द होय रहे ह। जय जयकार शब्द होय ह। आनन्दत नत्यकारिणी नत्य कर ह। इत्यादि हषसयुक्त रावणने लकामें प्रवेश किया। महा उत्साहकी भरी लका ताहि दखि रावण प्रसन्न भए। बधुजन सेवकजन सब ही आनदको प्राप्त भए। रावण राजमहलमें आये। देखो भव्यजीव हो! रथनूपुरके धनी राजा इन्द्रने पूवपुण्यके उदयत समस्त वरियोके समूह जीतकर सव सामग्रीपूण तिनको तणवत जानि सबको जीतकर दोन्यो श्रेणिका राज बहुत वष किया। अर इन्द्रके

तुल्य विभूतिको प्राप्त भया । अर जब पुण्य क्षीण भया, तबि सकल विभूति विलय होयगई, रावण ताको पकड करि लकामें ले आया । तात मनुष्यके चपल सुखको धिक्कार होहु । यद्यपि स्वर्गलोकके देवनिका विनाशीक सुख ह तथापि आयुपयत और रूप न होय अर जब दूसरी पर्याय पाव तब औररूप होय । अर मनुष्य तो एक ही पर्यायमें अनेक दशा भोग । तात मनुष्य होय जे मायाका गव कर हैं ते मूख हैं । अर यह रावण पूवपुण्यत प्रबल वरीनिको जीतिकरि अति वद्धिको प्राप्त भया । यह जानकरि भव्य जीव सकल पापकमका त्याग कर शुभकमही को अगीकार करो ।

इतिश्री रविषेणाचायविरचित मह पद्मपुराणसंस्कृतग्रंथ ताकी भाषावचनिकाविष इन्द्रका परामवनाम बारहवा पव पूण भया ॥ १२ ॥



अथानन्तर इन्द्रके सामत धनीके दुःखत व्याकुल भए । तबि इन्द्रका पिता सहसार जो उदासीन श्रावक ह, तासो बीनती करि इन्द्रके छुडावनेके अर्थि सहसारको लेयकरि लकामें रावणके समीप गये । द्वारपालनिसो बीनती करि इन्द्रके सकल वत्तात कहकरि रावणके ढिग गये । रावणने सहसारको उदासीनश्रावक जानकरि बहुत विनय किया । इनको सिंहासन दिया, आप सिंहासनत उतरि बठे, सहसार रावणको विवेकी जानि कहता भया । हे दशानन ! तुम जगजीत हो सो इन्द्रको भी जीत्या । तिहारि भुजानिकी सामथ्य सबने देखी । ज बड राजा ह ते गववतनिके गव दूरकरि फिर कृपा कर, तात अब इन्द्रको छोडो ! यह सहसारने कही अर जे चारो लोकपाल हुते तिनके मुहत भी यही शब्द निकस्या । मानो सहसारका प्रतिशब्द ही कहते भए । तब रावण सहसारको तो हाथ जोडि यही कही जो आप कहो सोई होगा, अर लोकपालनितैं हसकरि क्रीडारूप कही जो तुम चारो लोकपाल नगरविष बुहारी देवो, कमलनिका मकरद अर तृण कटकरहित पुरी करो, सुगन्ध करि पृथ्वीको सींचो अर पाच वणके सुगध मनोहर जो पुष्प तिनत नगरीको शोभित करो । यह बात जब रावणने

कही तब लोकपाल तो लज्जावान होय नीचे होय गये। अर सहसार अमृतरूप वचन बोले, हे धीर तुम ज्ञाको जो आज्ञा करो सोही वह कर, तुम्हारी आज्ञा सर्वोपरि ह। यदि तुम सारिखे गुरुजन पृथ्वीके शिक्षादायक न होय तो पृथ्वीके लोक अन्यायमार्गविष प्रवरत। यह वचन सुनकर रावण अति प्रसन्न भए, अर कही, हे पूज्य! तुम हमारे ताततुल्य हो, अर इन्द्र मेरा चौथा भाई, याको पायकर मैं सकल पृथ्वी कटकरहित करूंगा। याको इन्द्रपद वसा ही ह। अर यह लोकपाल ज्योंके त्यो ही हैं। अर दोन्यो श्रेणीके राज्यत और अधिक चाहो सो लेहु। मोम अर याम कछु भेद नाहीं। अर आप बडे हो, गुरुजन हो, जस इन्द्रको शिक्षा देवो तस मोहि देवो, तिहारी शिक्षा अलकाररूप ह। अर आप रथनूपुरविष विराजो अथवा यहा विराजो, दोऊ आपहीकी भूमि है। ऐस प्रिय वचनकरि सहसार का मन बहुत सतोष्या। तब सहसार कहने लाग्या, हे भव्य! तुम सारिखे सज्जन पुरुषनिकी उत्पत्ति सव लोकनिको आनदकारणी ह। हे चिरजीव! तिहारे शूरवीरपनेका आभूषण यह उत्तम विनय समस्त पृथ्वीविष प्रशसाको प्राप्त भया ह। तिहारे देखनेकरि हमारे नेत्र सुफल भए। धन्य तिहारे माता पिता, जिनत तिहारी उत्पत्ति भई। कुदके पुष्पसमान उज्ज्वल तिहारी कीर्ति, तुम समथ अर क्षमावान, दातार अर निगर्व, ज्ञानी अर गुणप्रिय, तुम जिनशासनके अधिकारी हो। तुमने हमको जो कही यह तिहारा घर ह, अर जस इन्द्र पुत्र तस मै, सो तुम इन बातोंके लायक हो, तिहारे मुखत ऐसे ही वचन झर। तुम महाबाहु, दिग्गजकी सूड समान भुजा तिहारी, तुम सारिखे पुरुष या ससारविष बिरले ह। परन्तु जन्मभूमि माता समान ह, सो छाडी न जाय। जन्मभूमिका वियोग चित्तको आकुल कर ह, तुम सव पृथ्वीके पति हो, परन्तु तुमको भी लका प्रिय ह। मित्र बाधव अर समस्त प्रजा हमारे देखनेके अभिलाषी आवनेका माग देख हैं। तात हम रथनूपुर ही जायेंगे। अर चित्त सदा तुम्हारे समीप ही ह। हे देवनके प्यारे! तुम बहुतकाल पृथ्वीको निर्विघ्न रक्षा करो। तब रावणने ताही समय इन्द्रको बुलाया और सहसारके लार किया। अर आप रावण कितनीक दूर तक सहसार

को पहुंचाने गए। और बहुत विनयकरि सीख दीनी। सहस्रार इंद्रको लेयकरि लोकपालनि सहित विजयार्धगिरिपर आए, सबराज ज्योंका त्योंही है। लोकपाल आयकरि अपने अपने स्थानकबैठे परन्तु मान भंगसे असाताको प्राप्त भए। ज्यों २ विजयार्धके लोक इंद्रके लोकपालनिको और देवनिको देखैं त्यों २ यह लज्जा कर नीचे होय जाय। अर इंद्र के भी न तो रथनूपुर से प्रीति, न राणियोंमें प्रीति, न उपवनादिमेंप्रीति न लोकपालोंमें प्रीति, न कमलोंके मकरंदसो पीत होय रह्या है जल जिनका, ऐसे मनोहर सरोवर तिनमें प्रीति, और न किसी क्रीडाविषै प्रीति, यहांतक कि अपने शरीरसो भी प्रीति नाहीं। लज्जाकर पूर्ण है चित्त जाका। सो ताको उदास जानि अनेक विधिकर प्रसन्न किया चाहै और कथाके प्रसंगतें वह बात भुलाया चाहै परन्तु यह भूले नाहीं। सब लीला विलास तजे, अपने राजमहलके मध्य गंधमादन पर्वतके शिखर समान ऊंचा जो जिनमंदिर ताके एक थंभके माथेविषै रहै। कांतिरहित होय गया है शरीर जाका। पंडितनिकरि मंडित यह विचार करै है कि धिक्कार है या विद्याधर पदके ऐश्वर्यको जो एक क्षणमात्रविषै विलाय गया। जैसे शरद ऋतुके मेघनिके समूह अत्यन्त ऊंचे होवें परन्तु क्षण मात्रविषै विलय जाय। तैसे ते शस्त्र, ते हाथी, ते योधा, ते तुरंग पूर्वं अनेक बार अद्भुत कार्यके करणहारे समस्त तृणसमान होयगए। अथवा कर्मोंकी यह विचित्रता है, कौन पुरुष अन्यथा करनेको समर्थ है ? तातें जगतमें कर्म प्रबल है। मैं पूर्व नानाविधि भोग सामग्रियोंके निपजावनवारे कर्म उपार्जे हुते सो अपना फल देयकरि खिरि गए जातें यह दशा वरतै है। रणसंग्रामविषै शूरवीर सामंतनिका मरण होय तो भला, जाकरि पृथ्वीविषै अपयश न होय। मैं जन्मतें लेकर शत्रुओंके सिरपर चरण देकर जिया। सो मैं इंद्र शत्रुका अनुचर होयकर कैसे राज्यलक्ष्मी भोगूं ? तातें अब संसारके इंद्रियजनित सुखोंकी अभिलाषा तजकर मोक्षपदकी प्राप्तिके कारण जे मुनिव्रत तिनको अंगीकार करूं। रावण शत्रुका भेष धरि मेरा महामित्र आया। तानें मोहि प्रतिबोध दिया। मैं असार सुखके आस्वादविषै आसक्त हुता। ऐसा विचार इंद्रने किया। ताही समय निर्वाणसंगम नामा चारण मुनि विहार करते

हुए आकाश मागत जाते हुते सो चत्यालयनिके प्रभावकरि उनका आग गमन न होय सक्या। तब वे चत्यालय जानि नीचे उतरे, भगवानके प्रतिबिबका दशन किया। मुनि चारज्ञानके धारक थे। सो उनको राजा इन्द्र ने उठकरि नमस्कार किया। मुनिक समीप जाय बठया, बहुत देर तक अपनी निंदा करी। सवससारका वत्तात जाननहारे मुनिने परम अमतरूप वचनकरि इन्द्रको समाधान किया कि—हे इन्द्र! जस अरहटकी घडी भरी रीति होय है अर रीती भरी होय ह, तस यह ससारकी माया क्षणभगुर ह। याके और प्रकार होनेका आश्चय नाहीं। मुनिके मुखसो धर्मोपदेश सुन इन्द्रने अपने पूवभव पूछे। तब मुनि कह ह। कसे ह मुनि? अनेक गुणनिके समूहत शोभयमान है। हे राजन! अनादिकालका यह जीव चतुरगतिविष भमण कर ह, जो अनन्तभव धर सो केवलज्ञानगम्य हैं। कई एक भव कहिए ह सो सुन।

शिखापद नामा नगरविष एक मानुषी महा दलिद्रनी जाका नाम कुलवती। सो चीपडी, अमनोज्ञ नेत्र, नाक चिपटी, अनेक व्याधिकी भरी, पापकमके उदयकरि लोगनिकी जूठ खायकर जीव। खोटे वस्त्र, अभागिनी, फाटचा अग महा रुक्ष खोटे केश, जहा जाय तहा लोक अनादर ह, जाको कहीं सुख नाहीं। अतकालविष शुभमति होय एक मुहूतका अनशन लिया। प्राण त्यागकरि किपुरुष देवक शीलधरा नामा किन्नरी भई। तहासो चय करि रत्ननगरविष गोमुखनामा कलु बी, ताक धरनी नामा स्त्री, ताके सहसभाग नामा पुत्र भया। सो परम सम्यक्त्वको पायकरि श्रावकके व्रत आदरे, शुक्रनामा नवमा स्वग तहा जाय उत्तम देव भया। तहास चयकर महा विदेहक्षेत्रके रत्नसचय नगरविष मणि
नामा मत्री, ताक गुणावली नामा स्त्री, ताक सामतवधन नामा पुत्र भया। सो पिताके साथ वराग्य अगीकार किया। अति तीव तप किए। तत्त्वाथविष लग्या ह चित्त जाका, निमल सम्यक्त्वका धारी, कषायरहित, बाईस परीषह सहकरि शरीर त्याग नवग्रीवक गया। अहमिंद्रके बहुत काल सुख भोगकरि राजा सहमार विद्याधरके रानी हृदयसुन्दरी तिनके तू इन्द्र नामा पुत्र भया। या रथनूपुर नगर

विष जन्म लिया। पूवके अभ्यासकरि इन्द्रके सुखमें मन आसक्त भया। सो तू विद्याधरोका अधिपति इन्द्र कहाया। अब तू वथा मनविष खेद कर ह, जो म विद्याविष अधिक हुता सो शत्रुनिकरि जीत्या गया ह। सो हे इन्द्र! कोई निबुद्धि कोदो बोयकरि वथा शालिकी प्राथना कर ह। ये प्राणी जस कम कर ह तस फल भोग ह। तनें भोगका साधन शुभकम पूव किया हुता, सो क्षीण भया। कारण विना कायकी उत्पत्ति ना होय ह। या बातका आश्चय कहा? तूने याही जन्मविष अशुभ कम किए, तिनकरि यह अपमानरूप फल पाया। अर रावण तो निमित्तमात्र ह। तनें जो अज्ञान चेष्टा करी सो कहा नाही जान ह? तू ऐश्वय मदकरि भष्ट भया बहुत दिन भए, तात तोहि याद नाहीं आव ह। एकाग्रचित्तकरि सुन! अरिजयपुर में वह्निवेग नामा विद्याधर राजा, ताकी रानी वेगवती, पुत्री अहिल्या, ताका स्वयबरमडप रच्या हुता। तहा दोनो श्रेणिक विद्याधर अति अभिलाषी होय विभवकरि शोभायमान गये। अर तू भी बडी सम्पदासहित गया। अर एक चद्रावत नामा नगरका धनी राजा आनदमाल सो भी तहा आया। अहिल्याने सबको तजकरि ताके कठविष वरमाला डाली। कसी ह अहिल्या? सुन्दर ह सव अग जाका। सो आनदमाल अहिल्याको परणकरि जस इन्द्र इन्द्राणीसहित स्वगलोकमें सुख भोग, तैस मनबाछित भोग भोगता भया। सो जा दिनत अहिल्या परणी ता दिनतै तरे यासो ईर्षा बढी। तन वाको अपना बडा बरी जान्या। कईएक दिन वह घर विष रह्या। फिर वाको ऐसी बुद्धि उपजी कि यह देह विनशीक ह, यासो मुझे कछु प्रयोजन नाहीं, अब म तप करू जाकरि ससारका दु ख दूर होय। ये इन्द्रियनिके भोग महाठग, तिनविष सुखकी आशा कहां? ऐसा मनमें विचार करि वह ज्ञानी अतर आत्मा सव परिग्रहको तजकरि परम तप आचरता भया। एक दिन हसावली नदी के तीर कायोत्सग धर तिष्ठ था सो तनें देख्या। ताके देखनेंमात्र रूप ईंधनकरि बढ़ी ह क्रोधरूप अग्नि जाके, सो त मूढनें गवकर हासी करी। अहो आनन्दमाल! तू काम भोगविष अति आसक्त हुता, अहिल्या का रमण अब कहा? विरक्त होय पहाड सारिखा निश्चल तिष्ठ्या ह। तत्त्वाथके चिंतवन

विष लग्या है अत्यंत स्थिर मन जाका। या भांति परम मुनिकी तैने अवज्ञा करी। सो वह तो आत्म सुखविष मग्न, तेरी बात कुछ हृदयविषै न धरी। उनके निकट उनका भाई कल्याण नामा मुनि तिष्ठै था तानै तोहि कही–यह महामुनि निरपराध, तैं इनकी हासी करी। सो तेरा भी पराभव होगा। तब तेरी स्त्री सर्वश्री सम्यग्दृष्टि साधूनिकी पूजा करनहारी, तानै नमस्कारकरि कल्याणस्वामीको उपशांत किया। जो वह शांत न करती तो तू तत्काल साधूनिकी कोपाग्नितैं भस्म हो जाता। तीनलोकमें तप समान कोई बलवान नाहीं। जैसी साधुओंकी शक्ति है, तैसी इन्द्रादिक देवोंकी शक्ति भी नाहीं। जो पुरुष साधु लोगोंका निरादर करै है ते इस भवमें अत्यंत दुःख पाय नरक निगोदविषै पड़े हैं। मनकर भी साधुओंका अपमान न करिए। जे मुनिजनका अपमान करै हैं सो इसभव अर परभवविषै दुखी होय हैं। क्रूरचित्त, मुनियोंको मारै अथवा पीड़ा करै है, सो अनंतकाल दुःख भोगवै है। मुनिकी अवज्ञा समान और पाप नाहीं, मनवचनकायकरि यह प्राणी जैसे कर्म करै है तैसे ही फल पावै है। या भांति पुण्य पाप कर्मोंके फल भले बुरे जीव भोगै है। ऐसा जानकरि धर्मविषै बुद्धिकरि, अपने आत्माकों संसारके दुःखनितैं निवृत्ति करो। महा मुनिके मुखसों राजा इन्द्र पूर्वभव सुन आश्चर्यको प्राप्त भया। नमस्कारकरि मुनिसों कहता भया–हे भगवान! तिहारे प्रसादतैं मैंने उत्तम ज्ञान पाया अब सकल पाप क्षणमात्रविषै विलय गए, साधुनिके संगतैं जगतविषै कुछ दुर्लभ नाहीं। तिनके प्रसादकर अनन्त जन्मविषै न पाया जो आत्मज्ञान सो पाइए है। यह कहकरि मुनिको बारम्बार वंदना करी। मुनि आकाशमार्ग विहार कर गए। इन्द्र गृहस्थाश्रमतैं परम वैराग्यको प्राप्त भया। जलके बुदबुदा समान शरीरको असार जानि धर्मविषै निश्चल बुद्धिकर अपनी अज्ञान चेष्टाको निंदता संता वह महापुरुष अपनी राजविभूति पुत्रकों देयकरि अपने बहुत पुत्रनिसहित अर लोकपालनिसहित तथा अनेक राजानि सहित सर्वकर्मनिकी नाशकरनहारी जिनेश्वरी दीक्षा आदरी, सर्व परिग्रहका त्याग किया। निर्मल है चित्त जाका, प्रथम अवस्थाविषै जैसा शरीर भोगमें लगाया हुता तैसा ही तपके समूहमें लगाया।

ऐसा तप औरनित न बन पडे । पुरुषोकी बडी शक्ति है जसी भोगो में प्रवर्तें तस विशुद्धभावविषै प्रवर्तें है । राजा इन्द्र बहुत काल तपकरि शुक्लध्यानके प्रतापत कर्मनिका क्षयकरि निर्वाण पधारे । गौतम स्वामी राजा श्रेणिकसो कहै है—देखो! बडे पुरुषोके चरित्र आश्चर्यकारी है, प्रबल पराक्रमके धारक बहुत काल भोगकरि वैराग्य लेय अविनाशीसुखको भोगवै है । यामे कुछ आश्चर्य नाहीं । समस्त परिग्रहका त्यागकर क्षणमात्रविषै ध्यानके बलत मोटे पापनिका क्षय करै है । जसे बहुत कालत इंधनकी राशि सचय करी सो क्षणमात्रमें अग्निके सयोगकरि भस्म होय है । ऐसा जानकर हे प्राणी! आत्म कल्याणका यत्न करो । अत करण विशुद्ध करो, मृत्युके दिनका कुछ निश्चय नाहीं । ज्ञानरूप सूर्यके प्रतापकरि अज्ञान तिमिरको हरो ।

इतिश्री रविषेणाचार्यविरचित महा पद्मपुराण संस्कृतग्रन्थ ताकी भाषावचनिकाविषै इन्द्रका निर्वाणगमन नामा तेरहवां पर्व पूर्ण भया ॥ १३ ॥



अथानन्तर रावण विभव और देवेंद्रसमान भोगनिकरि मूढ है मन जाका, सो मनवांछित अनेक लीला विलास करता भया । यह राजा इन्द्रका पकडनहारा एकदिन सुमेरुपर्वतके चैत्यालयनिकी वंदना करि पीछे आवताहुता । सप्त क्षेत्र, षट कुलाचल तिनकी शोभा देखता नानाप्रकारके वृक्ष नदी सरोवर स्फटिकमणिहू ते निर्मल महा मनोहर अवलोकन करता थका, सूर्यके भवन समान विमानमें विराजमान, महा विभूतिकरि संयुक्त, लंकाविषै आवनेका है मन जाका, सो तत्काल महा मनोहर उतगनाद सुनता भया । तब महा हर्षवान होय, मारीच मंत्रीको पूछता भया—हे मारीच! यह सुन्दर महानाद काहेका है और दशोदिशा काहेत लाल होय रही है । तब मारीचने कहा—हे देव! यह केवलीकी गंधकुटी है और अनेक देव दर्शनको आवै है । तिनके मनोहर शब्द होय रहे है । अर देवनि के मुकुटआदि की किरणनिकरि यह दशोदिशा रंगरूप होयरही है । इस स्वर्णपर्वतविषै अनंतवीर्य मुनि तिनको

केवलज्ञान उपज्या ह । ये वचन सुनकरि रावण बहुत आनन्दको प्राप्त भया । सम्यकदर्शनकरि सयुक्त ह, अर इन्द्रका वश करणहारा ह, महाकांतिका धारी आकाशत केवलीकी बदनाके अर्थि पृथ्वीपर उतरचा, बदनाकर स्तुति करी । इन्द्रादिक अनेक देव केवलीके समीप बठे हुते, रावण भी हाथ जोड नमस्कारकरि अनेक विद्याधरनि सहित उचित स्थानमें तिष्ठचा ।

चतुरनिकायके देव तथा तियच अर अनेक मनुष्य केवलीके समीप तिष्ठे हुते । तासमय किसी शिष्यने पूछचा । हे देव, हे प्रभो ! अनेक प्राणी धम अर अधमके स्वरूप जाननेकी तथा तिनके फल जाननेकी अभिलाषा राख है, अर मुक्तिके कारण जानना चाह ह, सो तुम ही कहने योग्य हो । तब भगवान केवलज्ञानी अनन्तवीय मर्यादारूप अक्षर जिनमें विस्तीणअर्थ, अति निपुण शुद्ध सदेहरहित सबके हितकारी प्रियवचन कहते भए । अहो भव्य जीव हो ! यह जीव चेतनालक्षण अनादिकालका निरन्तर अष्टकर्मनिकरि बध्या, आच्छादित ह आत्मशक्ति जाकी, सो चतुरगतिमें भ्रमण कर ह, चौरासीलाख योनियोमें नानाप्रकार इन्द्रियोकरि उपजी जो वेदना ताहि भोगता सता सदाकाल दुखी होय रागी द्वेषी मोही हुआ, कमनिके तीव्र मंद मध्य विपाकत कुम्हारके चक्रवत पाया ह चतुरगतिका भ्रमण जान, ज्ञानावरणी कमकरि आच्छादित ह ज्ञान जाका, सो अतिदुलभ मनुष्यदेही पाई । तो भी आत्म हितको नाहीं जान ह । रसनाका लोलुपी, स्पश इन्द्रीका विषयी, पाच हूँ इन्द्रियोके वश भया । अति निद्य पापकर्मकरि नरकविष पडे ह । जस पाषाण पानीमें डूब ह । कसा ह नरक ? अनेक प्रकारकरि उपजे जे महादुख तिनका सागर ह । महा दुखकारी ह । जे पापी क्रूरकर्मा धनके लोभी, माता, पिता, भाई, पुत्र, स्त्री, मित्र इत्यादि सुजन तिनको हन ह, जगतमें निद्य ह चित्त जिनका, ते नरकमें पडे ह । तथा जे गभपात कर ह तथा बालक हत्या कर ह, वृद्धको हन ह, अबला (स्त्रियो) की हत्या कर ह, मनुष्योको पकडे ह, रोक ह बाध ह, मार ह, पक्षी तथा मृगनिको हन ह, जे कुबुद्धि स्थलचर जलचर जीवो की हिंसा कर ह, धमरहित ह परिणाम जिनका ते महावेदनारूप जो नरक ता विष पडे ह । अर

जे पापी शहदके अर्थि मधुमाखियोका छाता तोडे है तथा मास आहारी मद्यपायी शहदके भक्षण करन हारे, वनके भस्म करनहारे, तथा ग्रामनिके बालनहारे, बदीके करणहारे गायनके घेरनहारे, पशुघाती महा हिसक, भील, अहेडी, बागरा, पारधी इत्यादि पापी महानरकमैं पडे है। अर जे मिथ्यावादी परदोषके भाषणहारे, अभक्ष्यके भक्षण करनहारे, परधनके हरणहारे, परदाराके रमनहारे, वेश्यानिके मित्र है ते घोर नरकमे पडे है जहा काहू की शरण नाहीं। जे पापी मासका भक्षण कर है ते नरक में प्राप्त होय है तहा तिनहीका शरीर काट काट तिनके मुखविषै दीजिए है, अर ताते लोहेके गोले तिनके मुखमें दीजिए है। अर मद्यपान करनेवालोके मुखमें सीसा गाल गाल डारिये है। अर परदारा लपटियोका ताती लोहेकी पुतलियोसे आलिंगन करावै है। जे महापरिग्रहके धारी महा आरभी, क्रूर है चित्त जिनका, प्रचड कर्मके करनहारे है ते सागरापर्यंत नरकमें बसै है। साधुओके द्वेषी, पापी मिथ्या दृष्टि, कुटिल कुबुद्धी रौद्रध्यानी मरकर नरकमे प्राप्त होय है। जहा विक्रियामई कुहाडे तथा खडग, चक्र, करोत, अर नानाप्रकारके विक्रियामई शस्त्र तिनकरि खड खड कीजिए है, फिर शरीर मिल जाय है, आयु पर्यंत दुख भोगवै है। तीक्ष्ण है चौंच जिनकी, ऐसे मायामई पक्षी ते तन विदारै है, तथा मायामई सिह व्याघ स्वान सर्प अष्टापद ल्याली बीछू तथा और प्राणियोसे नानाप्रकारके दुख पावै है। नरकके दुखनिको कहा लग वरणन करिए। अर जे मायाचारी प्रपची विषयाभिलाषी है ते प्राणी तिर्यचगतिको प्राप्त होय है, तहा परस्पर बध अर नानाप्रकारके शस्त्रनकी घातते महादुख पावै है। २१६
तथा वाहन तथा अति भारका लादना शीत उष्ण क्षुधा तृषादिकरि अनेक दुख भोगवै है। यह जीव भवसकटविषै भ्रमता स्थलविषै जलविषै गिरिविषै तरुविषै और गहनवनविषै अनेक ठौर सूता। एकेंद्री वेइद्री, तेइद्री, चौइद्री, पचेंद्री अनेक पर्यायनिमें अनेक जन्म मरण किए। जीव अनादिनिधन है, याका आदि अत नाहीं। तिलमात्र भी लोकाकाशविषै प्रदेश नाहीं जहा ससारभ्रमणविषै इस जीवने जन्म मरण न किए हो। अर जे प्राणी निगर्व है, कपटरहित, स्वभाव ही कर सतोषी है, ते मनुष्यदेहको पावै

है। सो यह नर देह परम निर्वाण सुखका कारण ताहि पायकरि भी जे मोहमदकरि उन्मत्त कल्याण-मार्गको तजकरि क्षणमात्रमें सुखकेअर्थि पाप करै है, ते मूर्ख है। मनुष्य भी पूर्वकर्मके उदयकरि कोई आर्यखंडविषै उपजै है, कोई म्लेच्छखंडविषै उपजै है तथा कोई धनाढ्य, कोई अत्यन्त दरिद्री होय है, कोई कर्मके प्रेरे अनेक मनोरथ पूर्ण करै है, कोई कष्टसो पराए घरोमें प्राणपोषण करै है, केई कुरूप केई रूपवान, केई दीर्घआयु, केई अल्पआयु, केई लोकनिको वल्लभ, केई अभावने, केई सभाग, केई अभागे, केई औरोको आज्ञा देवे, केई औरनके आज्ञाकारी, केई यशस्वी, केई अपयशी, केई शूर, केई कायर, केई जलविषै प्रवेश करै, केई रणमें प्रवेश करै, केई देशांतरमें गमन करै, केई कृषिकर्म करै, केई व्यापार करै, केई सेवा करै। या भांति मनुष्यगतिविषै भी सुखदुखकी विचित्रता है। निश्चय विचारिए तो सर्वगतिमें दुख ही है, दुखहीको कल्पनाकर सुख मानै है। अर मुनिव्रत तथा श्रावकके व्रतनिकरि तथा अव्रत सम्यक्त्वकरि तथा अकामनिर्जरातैं तथा अज्ञानतपतैं देवगति पावै है। तिनमें केई बडी ऋद्धिके धारी, केई अल्पऋद्धिके धारी, आयु कांति प्रभाव बुद्धि सुख लेश्याकरि ऊपरले देव चढते, अर शरीर अभिमान अर परिग्रहसे घटते, देवगतिमें भी हर्ष विषादकर कर्मका संग्रह करै है। चतुरगतिमें यह जीव सदा अरहटकी घडीके यंत्र समान भ्रमण करै है। अशुभ संकल्पनितैं दुख को पावै है, अर दानके प्रभावतैं भोगभूमिविषै भोगनिको पावै है। जे सर्व परिग्रह रहित मुनिव्रतके धारक है सो उत्तमपात्र कहिये, अर जे अणुव्रतके धारक श्रावक है तथा आर्यिका सो मध्यमपात्र कहिए है। अर व्रतरहित सम्यग्दृष्टि है सो जघन्यपात्र कहिए है। इन पात्रनिको विनयभक्तिकरि आहार देना पात्रका दान कहिये। अर बाल वृद्ध अंध पंगु रोगी दुर्बल दुखित भुखित इनको करुणाकर अन्न जल औषधि वस्त्रादिक दीजिए सो करुणादान कहिये। पात्रके दानकरि उत्कृष्ट भोगभूमि, अर मध्यपात्र के दानकरि मध्य भोगभूमि, अर जघन्यपात्रके दानकरि जघन्य भोगभूमि होय है। जो नरक निगोदादि दुखनितैं रक्षा करै सो पात्र कहिये। सो सम्यग्दृष्टि मुनिराज है, ते जीवनकी रक्षा करै है। जे सम्यक

दर्शन, ज्ञान, चारित्रकर निर्मल हैं ते परमपात्र कहिए। जिनके मान अपमान, सुख दुख, तृण कांचन दोनो बराबर हैं, तिनको उत्तमपात्र कहिए। जिनके रागद्वेष नाहीं। जे सर्वपरिग्रहरहित महा तपस्वी, आत्मध्यानविषै तत्पर ते मुनि उत्तम पात्र कहिए, तिनको भावकरि अपनी शक्तिप्रमाण अन्न जल औषध देनी तथा वनमें तिनके रहनेके निमित्त वस्तिका करावनी तथा आर्यानिको अन्न जल वस्त्र औषधी देनी। श्रावक श्राविका सम्यग्दृष्टियोको अन्न जल वस्त्र औषधि इत्यादि सब सामग्री देनी। बहुत विनयकरि सो पात्रदानकी विधि है, दीन अंधादि दुःखित जीवोको अन्न वस्त्रादि देना। बंदीते छुडावना। यह करुणादानकी रीति है।

यद्यपि यह पात्रदान तुल्य नाहीं। तथापि योग्य है, पुण्यका कारण है। अर पर उपकार सो ही पुण्य है। अर जैसे भले क्षेत्रमें बोया बीज बहुत गुणा होय फलै है तैसे शुद्धचित्तकरि पात्रनिको दिया दान अधिक फलको फलै है, अर जे पापी मिथ्यादृष्टि रागद्वेषादियुक्त व्रतक्रिया रहित महामानी ते पात्र नाहीं, अर दीन हू नाहीं। तिनको देना निष्फल है। नरकादिका कारण है। जैसे ऊसर (कल्लर) खेतविषै बोया बीज वृथा जाय है और जैसे एक कूपका जल ईखविषै प्राप्त भया मधुरताको लहै है, अर नींबविषै गया कटुकताको भजै है तथा एक सरोवरका जल गायने पिया सो दूधरूप होय परणवै है, अर सर्पने पिया विषहोय परणवै है, तैसे सम्यकदृष्टि पात्रनिको भक्तिकर दिया जो दान सो शुभफलको फलै है। अर पापी पाखंडी मिथ्यादृष्टि अभिमानी परिग्रही तिनको भक्तिकरि दिया दान अशुभफलको फलै है। जे मांसआहारी मद्यपायी कुशीली आपको पूज्य मानैं, तिनका सत्यकार न करना, जिनधर्मियोकी सेवा करनी, दुःखियोको देख दया करनी, अर विपरीतियोसे मध्यस्थ रहना, दया सब जीवोपर राखनी, किसीको क्लेश न उपजावना। अर जे जिनधर्मते पराङ्मुख हैं, परवादी हैं ते भी धर्मको करना ऐसा कहै हैं, परन्तु धर्मका स्वरूप जानै नाहीं। तातै जे विवेकी हैं ते परखकरि अंगीकार करै हैं। कैसे हैं विवेकी? शुभोपयोगरूप है चित्त जिनका, ते विचार करै हैं—जे गृहस्थ स्त्रीसयुक्त आरम्भी, परिग्रही, हिंसक

कामक्रोधादिकर सयुक्त, गर्भवत, धनाढ्य अर आपको पूज्य मान तिनको भक्तिकरि बहुत धन देना ताविष कहा फल ह ? अर तिनकरि आप कहा पाव ? अहो यह बडा अज्ञान ह, कुमारगत ठगे जीव ताहि पात्रदान कह ह और दु खी जीवोको करुणादान न कर ह। दुष्ट धनाढ्यनिको सब अवस्थामें धन देय ह । सो वथा धनका नाश कर ह, धनवतनिको देनेतैं कहा प्रयोजन, ? दुखियोको देना काय कारी ह । धिक्कार ह तिन दुष्टनिको जे लोभके उदयकरि खोटे ग्रथ बनाय मूढ जीवनिको ठगैं ह, जे मषावादके प्रभावत मासहूका भक्षण ठहराव ह । पापी पाखडी मासका भी त्याग न कर तो और कहा करेंगे ? जे क्रूर मासका भक्षण कर ह तथा जो मासका दान कर ह ते घोरवेदनायुक्त जो नरक ताविष पडे ह और जे हिसाके उपकरण शस्त्रादिक तथा जे ब धनके उपाय पासी इत्यादि तिनका दान कर ह तथा पचेंद्रिय पशुओका दान कर ह, और जे इन दोनोको निरूपण कर ह ते सवथा निद्य ह । जो कोई पशुका दान कर और वह पशु बाधनेकरि मारबेकरि ताडवेकरि दुखी होय तो देनहारे को दोष लाग और भूमिदान भी हिसाका कारण ह । जहा हिसा तहा धम नाहीं । चत्यालयके निमित्त भूमिका दना युक्त ह, और प्रकार नाहीं । जो जीव घातकरि पुण्य चाह ह, ते जीव पाषाणत दुग्ध चाह ह । तातैं एकेंद्री आदि पचेंद्री पयत सब जीवनिको अभयदान देना और विवकियोको ज्ञानदान देना, पुस्तकादि देना और औषध अन्न जल वस्त्रादि सबको देना, पशुओको सूखे तण देना । और जससमुद्र विष सीप मेघका जल पिया सो मोती होय परणव ह, तैस ससारविष द्रव्यके योगत सुपात्रनिको यव आदि अन्न भी दिये तो महा फलको फल ह, अर जो धनवान होय सुपात्रोको श्रेष्ठ वस्तुका दान नाहीं कर ह सो निद्य ह । दान बडा धम ह, सो विधिपूवक करना । पुण्य पापविषैं भाव ही प्रधान ह । जो विना भाव दान कर हैं सो गिरिके सिर पर बरसे जल समान ह, सो कायकारी नाहीं । क्षेत्रविष बरसे ह सो कायकारी ह । जो कोई सवज्ञ वीतरागदेवको ध्याव ह और सदा विधिपूवक दान कर ह ताके फलको कौन कह सक ? तातैं भगवानके प्रतिबिब तथा जिनमन्दिर, जिनपूजा, जिनप्रतिष्ठा, सिद्धक्षेत्रोकी

यात्रा, चतुरविध सघकी भक्ति, शास्त्रोका सव देशोविष प्रचार करना। यह धन खचनेके सप्त महाक्षेत्र ह। तिनविष जो धन लगावै सौ सफल ह। तथा करुणावान परोपकारविष लाग सो सफल ह।

अर जे आयुधका ग्रहण कर ह ते द्वेषसयुक्त जानने। जिनके रागद्वेष ह तिनके मोह भी ह। अर जे कामिनीके सगतैं आभूषणोको धारण कर ह ते रागी जानने। अर मोह विना रागद्वेष होय नाहीं। सकल दोषो का मोह कारण ह। जिनके रागादि कलक ह ते ससारी जीव ह। जिनके ये नाहीं ते भगवान ह। जे देशकालकामादिके सेवनहारे ह ते मनुष्यतुल्य ह तिनमें देवत्व नाहीं। तिनकी सेवा शिवपुरका कारण नाही। अर काहूके पूवपुण्यके उदयकरि शुभ मनोहर फल होय ह, सो कुदेवसेवाका फल नाहीं। कुदेवनकी सेवातैं सासारिक सुख भी न होय तो शिवसुख कहातैं होय? तातैं कुदेवनिको सेवना बालूको पेल तेलका कढना ह। अर अग्निके सेवनतैं तषाका बुझावना ह। जैसैं कोई पगुको पगु देशातर न ले जाय सक तसै कुदेवोके आराधनतैं परमपदकी प्राप्ति कदाचित न होय। भगवान विना और देवो के सेवनका क्लेश कर सो वथा ह। कुदेवनमें देवत्व नाहीं। अर जे कुदेवोके भक्त ह ते पात्र नाहीं। लोभकरि प्रेर प्राणी हिसाकमविष प्रवरत ह, हिसाका भय नाहीं। अनेक उपायकर लोकनिसैं धन लेय ह। ससारी लोक भी लोभी, सो लोभियोप ठगाव ह। तातैं सवदोषरहित जिनआज्ञा प्रमाण जो महा दान कर, सो महाफल पाव। वाणिज्य समान धम ह, कभी किसी वाणिज्यविष अधिक नफा होय, कभी अल्प होय, कभी टोटा होय, कदे मूल ही जाता रह। अल्पत बहुत होय जाय, बहुततैं अल्प होय जाय। अर जैसैं विषका कण सरोवरीमें प्राप्त भया सरोवरीको विषरूप न कर तैसैं चत्यालयादि निमित्त अल्प हिसा सो धमका विघ्न न कर, तातैं गहस्थी भगवानके मदिर कराव। कसे ह गृहस्थी? जिनेंद्रकी भक्तिविषै तत्पर ह, अर व्रत क्रियामैं प्रवीण ह। अपनी विभूतिप्रमाण जिनमदिर कराय जल चदन धूप दीपादिकर पूजा करनी। जे जिनमदिरादिमें धन खरचैं, ते स्वगलोकमें तथा मनुष्य लोकविषै अत्यन्त ऊचे भोग भोग परमपद पाव ह। अर जे चतुरविधसघको भक्तिपूवक दान कर ह,

ते गुणनिके भाजन हैं, इन्द्रादिपदके भोगोको पावे हैं। तातें जे अपनी शक्ति प्रमाण सम्यग्दृष्टि पात्रनिको भक्तिकरि दान करें हैं तथा दुखियोको दयाभावकरि दान करें हैं सो धन सफल है। अर कुमारगत लाग्या जो धन सो चोरनिकरि लूट्या जानो। अर आत्मध्यानके योगतैं केवलज्ञानकी प्राप्ति होय है। जिनको केवलज्ञान उपज्या तिनको निर्वाणपद है। सिद्ध सब लोकके शिखर तिष्ठे हैं। सब बाधा रहित, अष्टकर्मरहित, अनंतज्ञान, अनंतदर्शन, अनंतसुख, अनंतवीर्यकरि संयुक्त, शरीरतैं रहित, अमूर्तिक पुरुषाकार जन्ममरणतैं रहित अविचल विराजे हैं। जिनका संसारविषै आगमन नाहीं। मन इन्द्रीनतैं अगोचर है। यह सिद्धपद धर्मात्मा जीव पावे है। अर पापी जीव लोभरूप पवनसे वृद्धिको प्राप्त भई जो दुखरूप अग्नि, तामैं बलते, सुकृतरूप जल विना सदा क्लेशको पावे है, पापरूप अंधकारके मध्य तिष्ठे मिथ्यादर्शनके वशीभूत है। कोई एक भव्यजीव धर्मरूप सूर्यकी किरणनिकरि पाप तिमिरको हर, केवलज्ञानको पावै है। अर ये जीव अशुभरूप लोहके पिंजरेमें पडे आशारूप पाशकरि बेढे धर्मरूप बांधव करि छूटे है। व्याकरणहूतैं धर्मशब्दका यही अर्थ होय है—जो धर्म आचरतासंता दुर्गतिविषै पडते प्राणियोको थांभे सो धर्म कहिए। ता धर्मका जो लाभ सो लाभ कहिए। जिनशासनविषै जो धर्मका स्वरूप कह्या है सो संक्षेपसे तुमको कहे है। धर्मके भेद अर धर्मके फलके भेद एकाग्र मनकर सुनो। हिंसातैं, असत्यतैं, चोरीतैं, कुशीलतैं धन अर परिग्रहके संग्रहतैं विरक्त होना, इन पापोका त्याग करना सो महाव्रत कहिए। विवेकियोको उसका धारण करना, अर भूमि निरख कर चलना, हितमित संदेहरहित वचन बोलना, निर्दोष आहार लेना, यत्नतैं पुस्तकादि उठावना मेलना, निर्जंतुभूमिविषै शरीरका मल डारना, ये पांचसमिति कहिए, तिनका पालना यत्नकरि। अर मनवचनकायकी जो वृत्ति ताका अभाव, ताका नाम तीन गुप्ति कहिए। सो परम आदरतैं साधुनिको अंगीकार करनी। क्रोध मान माया लोभ ये कषाय जीवके महाशत्रु है। सो क्षमातैं क्रोधको जीतना, अर मार्दव कहिए निगर्व परिणाम तिनकरि मानको जीतना। अर आर्जव कहिए—सरल परिणाम—निकपट भाव ताकरि

मायाचारको जीतना। अर संतोषतैं लोभको जीतना। शास्त्रोक्त धर्मके करनहारे जे मुनि तिनको कषायोंका निग्रह करना योग्य है। ये पांच महाव्रत, पंचसमिति, तीन गुप्ति कषायनिग्रह मुनिराजका धर्म है। अर मुनिका मुख्यधर्म त्याग है। जो सर्वत्यागी होय सो ही मुनि है। अर स्पर्शन रसना घ्राण चक्षु श्रोत्र ये प्रसिद्ध पांच इन्द्री तिनका वश करना ही सो धर्म है। अर अनशन कहिए उपवास, अवमौदर्य कहिए अल्प आहार, व्रतपरिसंख्या कहिए विषम प्रतिज्ञाका धारणा, अटपटी बात विचारनी या विधि आहार मिलेगा तो लेवेंगे नातर नाहीं। अर रसपरित्याग कहिए रसनिका त्याग, विविक्त शय्यासन कहिए एकांत वनविषै रहना, स्त्री तथा बालक तथा नपुंसक तथा ग्राम्यपशु इनकी संगति साधुवोंको न करनी। तथा और भी संसारी जीवोंकी संगति न करनी। मुनिको मुनिहीकी संगति करनी। अर कायक्लेश कहिए ग्रीष्ममें गिरिशिखर, शीतविषै नदीके तीर, वर्षामें वृक्षके तले, तीनोंकाल के तप करने तथा विषमभूमिविषै रहना। मासोपवासादि अनेक तप करना, ये षट् बाह्य तप कहे। अर आभ्यंतर षट तप सुनो—प्रायश्चित्त कहिए जो कोई मनतैं तथा वचनतैं तथा कायतैं दोष लाग्यासो सरल परिणामकरि श्रीगुरुके निकट प्रकाशकरि तपादि दंड लेना। बहुरि विनय कहिये देवगुरु शास्त्र साधर्मियोंका विनय करना तथा दर्शन ज्ञान चारित्रका आचरण सोही इनका विनय, अर इनके जे धारक तिनका आदर करना, आपतैं जो गुणाधिक होय ताहि देखकरि उठ खडा होना, सन्मुख जाना। आप नीचे बैठना उनको ऊंचे बिठाना। मिष्ट वचन बोलना, दुख पीडा मेटनी, अर वैयावृत कहिए जे तप करि तप्तायमान हैं रोगकरि युक्त हैं गात्र जिनका, वृद्ध हैं अथवा नववयके जे बालक हैं तिनका २२२
नानाप्रकार यत्न करना, औषध पथ्य देना, उपसर्ग मेटना, अर स्वाध्याय कहिए जिनशासनका वाचना पूछना। आम्नाय कहिये परिपाटी, अनुप्रेक्षा कहिए बारम्बार चितारना, धर्मोपदेश कहिए धर्मका उपदेश देना। अर व्युत्सर्ग कहिये शरीरका ममत्व तजना तथा एकदिवस आदि वर्ष पर्यंत कायोत्सर्ग धरना। अर ध्यान कहिये आर्तरौद्र ध्यानका त्यागकर धर्मध्यान शुक्लध्यानका ध्यावना, ये छह प्रकार

के आभ्यन्तर तप कहे। ये बाह्याभ्यन्तर द्वादश तप सब ही धर्म हैं। या धर्मके प्रभावसे भव्यजीव कर्मनिका नाश करे हैं, अर तपके प्रभावकरि अद्भुत शक्ति होय है। सब मनुष्य अर देवोको जीतनेकू समर्थ होय है। विक्रियाशक्तिकरि जो चाहे सो करै। विक्रियाके अष्ट भेद है। अणिमा, महिमा, लघिमा, गरिमा, प्राप्ति, प्राकाम्य, ईशत्व, वशित्व। सो महामुनि तपोनिधि परम शांत हैं, सकल इच्छातै रहित है, अर ऐसी सामर्थ्य है—चाहे तो सूर्यका आताप निवारै, चाहें तो जल वृष्टि करि क्षण-मात्रविषै जगतको पूर्ण करैं, चाहे तो भस्म करैं, क्रूरदृष्टिकर देखे तो प्राण हरैं, कृपादृष्टिकर देखै तो रंकसे राजा करैं, चाहे तो रत्न स्वर्णकी वर्षा करैं, चाहे तो पाषाणकी वर्षा करैं, इत्यादि सामर्थ्य है, परन्तु करै नाहीं। करैं तो चारित्रका नाश होय। तिन मुनियोके चरणरजकर सब रोग जाय। मनुष्योको अद्भुत विभवके कारण तिनके चरण कमल हैं। जीव धर्मकर अनंतशक्तिको प्राप्त होय है, धर्म करि कर्मनिको हरै है। अर कदाचित कोउ जन्म लेय तो सौधर्म स्वर्ग आदि सर्वार्थसिद्धिपर्यंत जाय स्वर्गविषै इन्द्रपद पावै। तथा इन्द्र समान विभूतिके धारक देव होय। जिनके अनेक खणके मंदिर स्वर्णके स्फटिक मणिके, वैडूर्यमणिके थंभ, अर रत्नमई भीति, देदीप्यमान अर सुन्दर झरोखनिकरि शोभायमान, पद्मरागमणि आदि नानाप्रकारकी मणिके शिखर हैं जिनके, अर मोतियोकी झालरोसे शोभित अर जिनमहलो में अनेक चित्राम सिंहोके, गजोके, हंसोके स्वानोके, हिरणोके, मयूर कोकिलादिकोके दोनो भींतिविषै रत्नमई चित्राम शोभायमान है। चन्द्रशालादिकरि युक्त, ध्वजोकी पंक्तिकर शोभित, अत्यन्त मनके हरणहारे, मंदिर सजे हैं। आसनादिकरि संयुक्त जहां नानाप्रकारके वादित्र बाजे हैं, आज्ञाकारी सेवक देव अर महामनोहर देवांगना, अद्भुत देवलोकके सुख, महा सुन्दर सरोवर, कमलादिक रसयुक्त कल्पवृक्षोके वन, विमान आदि विभूतियें, यह सभी जीव धर्मके प्रभावकरि पावै हैं। अर कैसे हैं स्वर्ग निवासी देव? अपनी कांतिकरि अर दीप्तिकरि चांद सूर्यको जीते हैं। स्वर्गलोकविषै रात्रि अर दिवस नाहीं। निद्रा नाहीं। अर देवोका शरीर माता पितासे उत्पन्न नहीं होता। जब अगला देव खिर जाय

तब नया देव उत्पादिक शय्याविषै उपजै है । जैसे कोई सूता मनुष्य सेजतैं जाग उठै तैसे क्षणमात्रमें देव उत्पादिक शय्याविषै नवयौवनको प्राप्त भया प्रकट होय है । कैसा है तिनका शरीर ? सात उपधातु रहित, निर्मल, रज पसेव अर रोगनित रहित, सुगंध पवित्र कोमल, परम शोभायुक्त, नेत्रोको प्यारा, ऐसा उत्पादिक शुभ वैक्रियक देवोका शरीर होय, सो ये प्राणी धर्मकरि पावै है । जिनके आभूषण महा देदीप्यमान तिनकी कांतिके समूह करि दशोदिशामें उद्योत होयरह्या है । अर तिनके देवनके देवांगना महासुंदर है, कमलोके पत्र समान सुन्दर है चरण जिनके, अर केलेके थंभ समान है जंघा जिनकी, कांचीदाम(तागडी)करि शोभित है सुन्दर कटि अर नितंब जिनके । जैसे गजनिके घंटोका शब्द होय तैसैं कांचीदामकी क्षुद्र घंटिकनिका शब्द होय है । उगते चन्द्रमासैं अधिक कांति धरै है । मनोहर है स्तनमंडल जिनका, रत्नोके समूहकरि ज्योतिको जीतै अर चांदनीको जीतै, ऐसी है प्रभा जिनकी, मालतीकी जो माला तातैं अति कोमल है भुजलता जिनकी, महा अमौलिक बाचाल मणिमई चूडेनिकरि शोभित है हाथ जिनके, अर अशोकवृक्षकी कोंपल समान कोमल अरुण है हथेली जिनकी, अति सुन्दर करकी आंगुली, शंख समान ग्रीवा, कोकिलहूतैं अति मनोहर है कंठ जिनके, अति लाल, अति सुन्दर रसके भरे अधर, तिनकरि आच्छादित कुंदके पुष्प समान दंत, अर निर्मल दर्पणसमान सुन्दर है कपोल जिनके, लावण्यताकरि लिप्त भई है सर्वदिशा, अर अति सुन्दर तीक्ष्ण कामके बाण समान नेत्र, सो नेत्रोकी कटाक्ष कर्णपर्यंत प्राप्त भई है सोई मानो कर्णाभरण भए । अर पद्मरागमणि आदि अनेक मणिनिके आभूषण अर मोतियोके हार तिनकरि मंडित, अर भ्रमर समान श्याम, अति सूक्ष्म, अति निर्मल अति चीकने, अति सघन, वक्रता धरै लंबे केश, अति कोमल शरीर, अति मधुर स्वर, अत्यन्त चतुर सर्व उपचारकी जाननहारी, महा सौभाग्यवती, रूपवती, गुणवती, मनोहर क्रीडाकी करणहारी, नंदनादि वनोतैं उपजी जो सुगंध तातैं अति सुगंध है श्वास जिनके, पराए मनका अभिप्राय चेष्टामें जान जाय ऐसी प्रवीण, पचेंद्रियोके सुखकी उपजावनहारी, मनवांछित रूपकी धारण-

हारी ऐसी स्वगमें जो अप्सरा सो धमके फलत पाइए ह। अर जो इच्छा कर सो चितवतमात्र सव सिद्धि होय। इच्छा कर, सो ही उपकरण प्राप्त होय, जो चाह सो सदा सग ही ह। देवागनानिकर देव मनवाछित सुख भोग ह। जो देवलोकमें सुख ह तथा मनुष्यलोकविष चक्रवर्त्यादिकनिके सुख ह, सो सव धमका फल जिनेश्वर देवने कह्या ह। अर तीनलोकमें जो सुख ऐसा नाम धराव ह, सो सर्व धमकरि ही उत्पन्न होय ह। जे तीथकर तथा चक्रवर्ती, बलभद्र, कामदेवादि, दाता भोक्ता मर्यादाके कर्त्ता, निरतर हजारो राजनिकरि तथा देवनिकरि सेइए ह, सो सव धमका फल ह। अर जो इन्द्र स्वग लोकका राज्य, हजारो जे देव मनोहर आभूषणके धरणहारे तिनका प्रभुत्व धर ह सो सव धर्मका फल ह। यह तो सकल शुभोपयोगरूप व्यवहार धमके फल कहे। अर जे महामुनि निश्चल रत्नत्रयके धरणहारे मोहरिपुका नाशकरि सिद्धिपद पाव ह सो शुद्धोपयोगरूप आत्मीक धमका फल ह। सो मुनिका धम मनुष्यज म विना नहीं पाइए ह। तात मनुष्य देह सवज मविष श्रेष्ठ ह। जस मग कहिए उनके जीव तिनमें सिह अर पक्षियोविष गरुड अर मनुष्योविष राजा, देवोविष इन्द्र, तणनिविष शालि, वक्षनिविष चदन, अर पाषाणविष रत्न श्रेष्ठ ह, तस सकल योनिविष मनुष्यजन्म श्रेष्ठ ह। तीन लोकविष धम सार ह, अर धमविष मुनिका धर्म सार ह। सो मुनिका धर्म मनुष्य देहत ही होय ह। तात मनुष्य ज म समान और नाही। अनत काल यह जीव परिभ्रमण कर ह। तामें मनुष्यज म कबहू ही पाव ह। यह मनुष्य देह महादुलभ ह। ऐसे दुलभ मनुष्यदेहको पाय जो मूढ प्राणी, समस्त क्लेशनिकरि रहित करणहारा जो मुनिका धर्म अथवा श्रावकका धर्म नाहीं कर ह सो बारम्बार दुगतिविष भ्रमण कर ह। जस समुद्रविष गिरचा महागुणनिका धरणहारा रत्न बहुरि हाथ आवना दुलभ ह, तस भवसमुद्रविष नष्ट भया नरदेह बहुरि पावना दुलभ ह। या मनुष्यदेहविष शास्त्रोक्त धर्मका साधनकरि कोई मुनिव्रत धर सिद्ध होय ह, अर कोई स्वगनिवासी देव तथा अहमिन्द्रपद्र पावै, परम्परा मोक्ष पद पाव ह। या भाति धर्म अधर्मके फल केवलीके मुखत सुनकरि सब ही सुखको प्राप्त

भए। ता समय कमल सारिखे ह नेत्र जाके, ऐसा कुभकरण, सो हाथ जोड नमस्कारकरि पूछता भया, उपज्या ह अति आनन्द जाके, हे नाथ! मेरे अब भी तप्ति न भई, तात विस्तारकरि धमका व्याख्यान विधिपूवक मोहि कहो। तब भगवान अनन्तवीय कहते भए—'हे भव्य! धमका विशेष वणन सुनो—जाकरि यह प्राणी ससारके बधननित छूट सो धर्म दोय प्रकार ह—एक महाव्रतरूप, दूजा अणुव्रतरूप। सो महाव्रतरूप यतिका धर्म ह, अणुव्रतरूप श्रावकका धम ह। यति घरके त्यागी है, श्रावक गृहवासी ह। तुम प्रथम ही सव पापनिका नाश करणहारा सव परिग्रहके त्यागी जे महामुनि तिनका धम सुनो।

या अवसपणी कालविष प्रवतक ऋषभदेवत लगाय मुनिसुव्रतपर्यंत बीस तीर्थंकर हो चुके ह, अब चार और होयेंगे। या भाति अनन्त भए, अर अनन्त होवेंगे, सो सबनिका एक मत ह। यह श्रीमुनिसुव्रतनाथका समय ह। सो अनेक महापुरुष जन्ममरणके दुखकरि महा भयभीत भए या शरीरको एरडकी लकडी समान असार जानि सवपरिग्रहका त्याग करि मुनिव्रत को प्राप्त भए। ते साधु अहिंसा, असत्य, अचौय, ब्रह्मचय, परिग्रहत्यागरूप पचमहाव्रत तिनविष रत, तत्वज्ञानविष तत्पर, पचसमिति के पालनहारे, तीन गुप्तिके धरनहारे, निमलचित्त, महापुरुष, परमदयालु, निजदेहविष भी निर्ममत्व रागभावरहित, जहा सूय अस्त होय तहा ही बठ रह कोई आश्रय नाहीं, तिनके कहा परिग्रह होय? पापका उपजावनहारा जो परिग्रह सो तिनके बालके अग्रभाग मात्र हू नाहीं। ते महाधीर महामुनि, सिहसमान साहसी, समस्त प्रबध रहित, पवन सारिखे असगी, तिनके रचमात्र भी सग नाहीं। पृथ्वी समान क्षमा, जल सारिखे विमल, अग्नि सारिखे कर्मको भस्म करनहारे, आकाश सारिखे अलिप्त, अर सव सम्बध रहित, प्रशसा योग्य ह चेष्टा जिनकी, चन्द्र सारिखे सौम्य, सूय सारिखे तिमिरके हरता, समुद्र सारिखे गम्भीर, पवत सारिखे अचल, काछिवा समान इन्द्रियोके सकोचनहारे, कषायनिकी तीव्रतारहित, अठाईस मूलगुण, चौरासीलाख उत्तरगुणोके धरणहारे, अठारह हजार शीलके

भेद तिनके धारक, तपोनिधि मोक्षमार्गी, जिनधममें लवलीन, जनशास्त्रोंके पारगामी, अर सांख्य-पात ञ्जल, बौद्ध, मीमासक, नयायिक,वशेषिक,वेदाती इत्यादि पर शास्त्रोंके भी वेत्ता,महाबुद्धिमान सम्यग्दृष्टि, यावज्जीव पापनिके त्यागी, यम नियमके धरनहारे, परमसयमी, परम शात, परम त्यागी, निगव, अनेक ऋद्धिसयुक्त, महामगलमूर्ति जगतके मडन, महागुणवान। केई एक तो ताही भवमें कर्मकाट सिद्ध होय, कईएक उत्तमदेव होय दोय तीन भवमें ध्यानाग्निकरि समस्त कर्मकाष्ठ बाल, अविनाशी सुखको प्राप्त होय ह। यह यतीका धम कह्या। अब स्नेहरूपी पींजरेमें पडे जे गहस्थी तिनका द्वादश व्रतरूप जो धम सो सुनो। पाच अणुव्रत, तीनगुणव्रत, चार शिक्षाव्रत, अर अपनी शक्तिप्रमाण हजारो नियम, त्रसघातका त्याग, अर मषावादका परिहार, परधनका त्याग, परदारा परित्याग, अर परिग्रह का परिमाण, तष्णाका त्याग ये पाच अणुव्रत, अर हिसादिका प्रमाण, देशोका प्रमाण, जहा जिन धम का उद्योत नाहीं तिन देशनिका त्याग, अनथदडका त्याग ये तीन गुणव्रत हैं। अर सामायिक, प्रोषधोपवास, अतिथि सविभाग, भोगोपभोगपरिमाण, ये चार शिक्षाव्रत, ये बारहव्रत हैं। अब इन व्रतोंके भेद सुनो। जस अपना शरीर आपको प्यारा ह तसा सबनिको प्यारा ह। ऐसा जान सवजीव निकी दया करनी। उत्कष्ट धम जीव दया ही भगवानने कह्या ह। जे निदई जीव हन ह तिनके रच मात्र भी धम नाहीं। अर जामे परजीवनिको पीडा होय सो वचन न कहना। परबाधाकारी वचन सोई मिथ्या, अर पर उपकाररूप वचन सोई सत्य। अर जे पापी चोरी कर, पराया धन हर ह ते इस भवमे बधबधनादि दुख पाव ह, कुमरणत मर ह, अर परभव नरकम पडे ह, नानाप्रकारके दुख पाव हैं। चोरी दुखका मूल ह। तात बुद्धिमान सवथा पराया धन न हर हैं। सो जाकरि दोनो लोक बिगडे ताहि कैस करै? अर सर्पिणी समान परनारीको जानिकरि दूरहीत तजो। यह पापिनी परनारी कामलोभके वशीभूत पुरुषको नाश करनहारी ह। सर्पिणी तो एकभव ही प्राण हर ह अर परनारी अनत भव प्राण हरै हैं। कुशीलके पापत निगोदमें जाय ह सो अनन्त जन्म मरण करै ह। अर याही भवविषै मारना ताडना

आदि अनेक दु ख पावै है । यह परदारासंगम नरकनिगोदके दुस्सह दुखनिका देनहारा है । जैसे कोई परपुरुष अपनी स्त्रीका पराभव करै तो आपको बहुत बुरा लागै, अति दु ख उपजै, तैसे ही सकलकी व्यवस्था जाननी ? अर परिग्रहका परिमाण करना, बहुत तृष्णा न करनी । जो यह जीव इच्छाको न रोकै तो महा दुखी होय । यह तृष्णा ही दु खका मूल है, तृष्णा समान और व्याधि नाहीं । या ऊपर एक कथा है सो सुनो—एक भद्र दूजा काचन, ये दोष पुरुष हूते । तिनमें भद्र फलादिकका बेचनहारा सो एक दीनारमात्र परिग्रहका परिमाण करता भया । एक दिवस मार्गमें दीनारोका बटवा पड्या देख्या तामसो एक दीनार कोतूहलकरि लीनी । अर दूजा काचन है नाम जिसका, तानै सब बटवा ही उठाय लिया । सो दीनारनिकास्वामी राजा, तानै बटवा उठावता देखि काचनको पिटाया, अर गामतै काढ्या । अर भद्रनै एक दीनार लीनी हुती सो राजाको विना मागे स्वयमेव सौंप दीनी । राजानै भद्रका बहुत सन्मान किया ऐसा जानकरि बहुत तृष्णा न करनी । संतोष धरना ये पांच अणुव्रत कहे ।

बहुरि चार दिशा, चार विदिशा, एक अध , एक ऊर्ध्व, इन दश दिशानिका परिमाण करना कि इस दिशाको एती दूर जाऊंगा, आगे न जाऊंगा । बहुरि अपध्यान कहिए खोटा चितवन, पापोपदेश कहिए अशुभकार्यका उपदेश, हिंसादान कहिए विष फांसी लोहा सीसा खडगादि शस्त्र तथा चाबुक इत्यादि जीवनके मारवेके उपकरण माग्या देना तथा जे जाल रस्सा इत्यादि बंधनके उपाय तिनका व्यापार, अर श्वान मार्जार चीतादिकका पालना, अर कुश्रुति श्रवण कहिए कुशास्त्रका श्रवण, प्रमादचर्या कहिए प्रमादकरि वृथा छ कायके जीवोकी विराधना करनी, ये पाचप्रकारके अनर्थदंड तजने । अर भोग कहिए आहारादिक, उपभोग कहिए स्त्रीवस्त्राभूषणादिक, तिनका परिमाण करना । अर्थात ये विचार जे अभक्ष्य भक्षणादि, परदारा सेवनादि अयोग्य विषय है तिनका तो सर्वथा त्याग, अर जे योग्याहार तथा स्वदारसेवनादि तिनका नियमरूप परिमाण । यह भोगोपभोग परिसंख्याव्रत कहिए । ये तीन गुणव्रत कहे । अर सामायिक कहिए समताभाव, पंचपरमेष्ठी अर जिनधर्म, जिनवचन, जिन

प्रतिमा, जिनमदिर तिनका स्तवन, अर सब जीवोसो क्षमाभाव, सौ प्रभात मध्याह्न सायकाल छ छ घडी तथा चार २ घडी तथा दोय दोय घडी अवश्य करना। अर प्रोषधोपवास कहिए दोय आठें, दोय चोदस एक मासमें चार उपवास, षोडश पहरके पोसे सयुक्त अवश्य करने। सोलह पहरतक ससारके कायका त्याग करना, आत्मचितवन तथा जिनभजन करना। अर अतिथिसविभाग कहिए अतिथि जे परिग्रहरहित मुनि, जिनके तिथि वारका विचार नाहीं सो आहारके निमित्त आव, महागुणोके धारक तिनको विधिपूवक अपन वत्तानुसार बहुत आदरत योग्य आहार देना, अर आयुके अत विष अनशन वतधर समाधिमरण करना सो सलेखनावत कहिए। ये चार शिक्षावत कहे। या प्रकार पाच अणुवत, तीन गुणवत, चार शिक्षावत ये बारहवत जानने। जे जिनधर्मी ह तिनके मद्य मास मधु, माखण, उदबरादि अयोग्य फल, रात्रिभोजन, बीध्या अन्न, अनछाना जल, परदारा तथा दासी वेश्यासगम इत्यादि अयोग्य क्रियाका सवथा त्याग होय ह। यह श्रावकके धम पालकर समाधिमरण कर उत्तम देव होय, फिर उत्तम मनुष्य होय सिद्धपद पाव ह। अर जे शास्त्रोक्त आचरण करनेको असमथ हैं, न श्रावकके वत पाल, न यतिके परतु जिनभाषितकी दृढ श्रद्धा ह ते भी निकट ससारी ह, सम्यक्तके प्रसादसे वतको धारण करि शिवपुरको प्राप्त होय ह। सब लाभमे श्रेष्ठ जो सम्यग्दशनका लाभ ताकरि ये जीव दुगतिके त्रासत छूट ह। जो प्राणी भावत श्रीजिनेद्रदवको नमस्कार कर ह सो पुण्याधिकारी पापोके क्लेशत निवृत्त होय ह। अर जो प्राणी भावकरि सवज्ञदवको ह सुमर ता भव्यजीवके अशुभ कम कोटि भवके उपारजे तत्काल क्षय होय ह। अर जो महाभाग्य त्रलोक्यविष सार जो अरहतदेव तिनको हृनयविष धारे ह सो भवकूपविष नाहीं पर ह। ताके निरतर सब भाव प्रशस्त ह। अर ताको अशुभ स्वप्न न आव, अर शुभ स्वप्न ही आवें, अर शभ शकुन ही होय ह। अर जो उत्तम जन "अहते नम" यह वचन भावत कह ह ताके शीघ ही मलिन कमका नाश होय ह, याविष सदेह नाहीं।

१। इस जगह देशावकाशिकव्रतका उल्लख नहा किया उसकी जगह सल्लेखनाव्रत लिखकर चार शिक्षाव्रत परे किये गये हैं।

मुक्तियोग्य प्राणीका चित्तरूप कुमुद, परम निमल वीतराग जिनचद्रकी कथारूप जो किरण तिनके प्रसगत प्रफुल्लित होय ह । अर जो विवेकी अरहतसिद्धसाधुवो ताई नमस्कार कर ह सो सव जिन धर्मीनिका प्यारा ह । ताहि अल्प ससारी जानना । अर जो उदारचित्त श्री भगवानके चत्यालय कराव, जिनबिब पधराव ह, जिनपूजा कर ह, जिनस्तुति कर ह तिनक या जगतविष कछु दुलभ नाहीं । नर नाथ कहिए राजा होहु अथवा कुटु बी होहु, किसान होहु, धनाढ्य होहु तथा दलिद्री होहु, जो मनुष्य धमकरि युक्त ह सो सव त्रलोक्यविष पूज्य ह । जे नर महाविनयवान ह, अर कत्य अकत्यके विचार विष प्रवीण ह, जो यह काय करना यह न करना ऐसा विवेक धर ह, ते विवेकी धमके सयोगत गह-स्थिविष मुख्य ह । ज जन मधु मास मद्य आदि अभक्ष्यका ससग नाहीं कर ह तिनहीका जीवन सफल ह । अर शका कहिए जिन वचनोमे सदेह, काक्षा कहिये या भवविष अर परभवविष भोगनिकी बाछा, विचिकित्सा कहिए रोगी वा दुखीको देख घणा करणी, आदर नाहीं करना, अर आत्मज्ञानत दूर जे परदष्टि कहिए जिनधमत पराडगमुख मिथ्यामार्गी तिनकी प्रशसा करनी, अर अन्यशासन कहिए हिंसा माग ताके सवनहारे जे निदयी मिथ्यादष्टि तिनके निकट जाय स्तुति करनी, ये पाच सम्यकदशनके अतीचार ह । तिनके त्यागी जे जत कहिए प्राणी ते गहीस्थनिविष मुख्य ह । अर जो प्रियदशन कहिए प्यारा ह दशन जाका, सु दर वस्त्राभरण पहिरे, सुगध शरीर, माग चालते, धरतीको देखता, निर्विकार जिनमन्दिरमें जाय ह, शुभकार्योंविष उद्यमी ताके पुण्यका पार नाहीं । अर जो पराए द्रव्यको तणसमान देख ह, अर परजीवको आप समान दख ह, अर परनारीको माता समान देखे ह सो धन्य ह । अर जाके ये भाव ह—ऐसा दिन कब होयगा जो म जिनेंद्रीदीक्षा लेयकरि महामुनि होय पथ्वीविष निद्वद्व विहार करू गा, ये कमशत्रु अनादिके लगे ह तिनका क्षयकरि कब सिद्धपद प्राप्त करू ,या भाति निरतर ध्यान कर निमल भया ह चित्त जाका ताके कम कस रह ह ? भयकरि भाग जाय । कईएक विवेकी सात आठ भवमें मुक्ति जाय ह, कईएक दोय तीन भवविष ससारसमुद्रके पार होय ह, कईएक चरमशरीरी उग्र

तपकरि शुद्धोपयोगके प्रसादन तद्भव मोक्ष होय ह । जस कोई मागका जाननहारा पुरुष शीघ्र चल तो शीघ्र ही स्थानको जाय पहुँचे, अर कोई धीरे २ चल तो घने दिनमें जाय पहुँचे, परन्तु माग चाले सो पहुँचे ही, अर जो माग ही न जान अर सौ–सौ योजन चाल तो भी भ्रमता ही रह, इष्ट स्थानको न पहुँचे । तस मिथ्यादृष्टि उग्र तप कर तो भी जन्ममरणवर्जित जो अविनाशीपद ताहि न प्राप्त होय । ससार वनहीविष भ्रम, नहीं पाया ह मुक्तिका माग तिनने । कसा ह ससारवन ? मोहरूप अधकारकरि आच्छादित ह, अर कषायरूप सपनिकरि भरया ह । जिस जीवके शील नाहीं, व्रत नाहीं, सम्यक्त नाहीं, त्याग नाहीं, वराग्य नाहो, सो ससारसमुद्रको कस तिर ? जस विध्याचल पवतत चल्या जो नदीका प्रवाह ताकरि पवत समान ऊचे हाथी बह जाय तहा एक शसा क्यो न बह ? तस जन्मजरा मरणरूप भ्रमणको धर ससाररूप जो प्रवाह ताविष जे कुतीर्थो कहिए मिथ्यामार्गी अज्ञान तापस है तेई डूबे ह, फिर तिनके भक्तोका कहा कहना ? जस शिला जलविष तिरवे समथ नाहीं तस परिग्रहके धारी कुदृष्टि शरणागतनिको तारवे समथ नाहीं । अर जे तत्त्वज्ञानी तपकरि पापनिके भस्म करणहारे हलके होय गए ह कम जिनके, ते उपदेशथकी प्राणियोको तारने समथ ह । यह ससारसागर महाभयानक ह । याम यह मनुष्यक्षेत्र रत्नद्वीप समान ह सो महा कष्टत पाइए ह । तात बुद्धिवतनिको या रत्नद्वीपविष नेमरूप रत्न ग्रहण करने अवश्य योग्य ह । यह प्राणी या देहको तजकरि परभवविष जायगा । अर जस कोई मूख तागाके अर्थि महामणिके हारका तागा निकालनेको महामणियोका चूण करै तस यह जडबुद्धि विषयके अथ धमरत्नको चूण कर ह अर ज्ञानी जीवोको सदा द्वादश अनुप्रेक्षाका चितवन करना । ये शरीरादि सव अनित्य ह, आत्मा नित्य ह, या ससारविष कोई शरण नाहीं, आपको आप ही शरण ह तथा पच परमेष्ठीका शरण ह । अर ससार महा दुखरूप ह, चतुगतिविष काहू ठौर सुख नाहीं, एक सुखका धाम सिद्धपद ह । यह जीव सदा अकेला ह, याका कोई सगी नाहीं, अर सव द्रव्य जुदे जुदे ह, कोई काहूसो मिल नाहीं । अर शरीर महा अशुचि ह, मलमूत्रका भरया भाजन ह ।

आत्मा निर्मल है । अर मिथ्यात्व अव्रत कषाय योग प्रमादनिकरि कर्मका आस्रव होय है । अर व्रत, समिति, गुप्ति, दशलक्षण धर्म, अनुप्रेक्षानिकाचितवन, परीषहजय चारित्रकरिसवर होय है । आस्रवका रोकना सो सवर अर तपकर पूर्वोपार्जित कर्मकी निर्जरा होय है । अर यह लोक षटद्रव्यात्मक अनादि अकृत्रिम शाश्वत है । लोकके शिखर सिद्धलोक है । लोकालोकका ज्ञायक आत्मा है, अर जो आत्म स्वभाव जो ही धर्म है, जीवदया धर्म है । अर जगतविषै शुद्धोपयोग दुर्लभ है, सोई निवारणका कारण है । या प्रकार द्वादश अनुप्रेक्षा विवेकी सदा चितवै । या भांति मुनि अर श्रावकके धर्म कहे । अपनी शक्ति प्रमाण जो धर्म सेवै उत्कृष्ट मध्यम तथा जघन्य सो सुरलोकादिविषै तैसा ही फल पावै । या भांति केवली कही तब भानुकर्ण कहिए कुंभकर्णने केवलीसो पूछी—हे नाथ ! भेदसहित नियमका स्वरूप जानना चाहू हू । तब भगवानने कही— हे कुंभकर्ण ! नियममें अर तपमे भेद नाहीं, नियमकरि युक्त जो प्राणी सो तपस्वी कहिए । तातै बुद्धिमान नियमविषै सर्वथा यत्न करै । जेता अधिक नियम करै सो ही भला । अर जो बहुत न बनै तो अल्प ही नियम करना, परन्तु नियम विना न रहना । जैसे बनै सुकृतका उपार्जन करना । जैसे मेघकी बूंद परै है तिन बूंदनिकर महानदीका प्रवाह होय जाय है, सो समुद्रविषै जाय मिलै है तैसे जो पुरुष दिनविषै एक महूर्तमात्र भी आहारका त्याग करै सो एक मासमे एक उपवासके फलको प्राप्त होय । ताकरि स्वर्गविषै बहुत काल सुख भोगै, मनवांछित भोग प्राप्त होय । जो कोई जिनमार्गकी श्रद्धा करता सता यथाशक्ति तप नियम करै ता महात्माके दीर्घ काल स्वर्गविषै सुख होय बहुरि स्वर्गतै चयकर मनुष्यभवविषै उत्तम भोग पावै है ।

एक अज्ञान तापसीकी पुत्री वनविषै रहै सो महादुखवती वदरीफल (बेर) आदि कर आजीविका पूर्ण करै । तानै सत्संगतै एक मुहूर्तमात्र भोजनका नियम लिया । ताके प्रभावतै एक दिन राजाने देखी, आदरतै परणी, बहुत सम्पदा पाई अर धर्मविषै बहुत सावधान भई, अनेक नियम आदरे । सो जो प्राणी कपटरहित होय जिनवचनको धारण करै सो निरंतर सुखी होय, परलोकमें उत्तमगति पावै ।

अर जो दो मुहूत प्रति दिवस भोजनका त्याग कर ताके एकमास विष दोय उपवासका फल होय। तास मुहूतका एक अहोरात्र गिनो। अर तीनमुहूत प्रति दिन अन्नजलका त्याग करै तो एक मास विष तीन उपवासका फल होय। या भाति जेता अधिक नियम तेता ही अधिक फल। नियमके प्रसादकरि ये प्राणी स्वगविष अदभुत सुख भोग ह, अर स्वगत चयकर अदभुत चेष्टाके धरणहारे मनुष्य होय हैं। महाकुलवती, महारूपवती, महागुणवती, महालावण्यकरलिप्त, मोतियोके हार पहर, अर मनके हरनहारे जे हाव भाव विलास विभ्रम तिनको धरें जे शीलवती स्त्री, तिनके पति होय है। अर स्त्री स्वगत चयकर बडे कुलविष उपज बडे राजानिकी रानी होय ह, लक्ष्मी समान ह, स्वरूप जिनका। अर जो प्राणी रात्रि भोजनका त्याग कर ह अर जलमात्र नाहीं ग्रह ह ताके अति पुण्य उपज है। पुण्यकरि अधिक प्रताप होय ह। अर जो सम्यग्दष्टि व्रत धार ताक फलका कहा कहना? विशेष फल पाव, स्वगविष रत्नमई विमान तहा अप्सरावोक समूहके मध्यमें बहुतकाल धमके प्रभावकरि तिष्ठ ह। बहुरि दुलभ मनुष्य देही पाव। तात सदा धमरूप रहना अर सदा जिनराजकी उपासना करनी। जे धमपरायण हैं तिनको जिनेंद्रका आराधन ही परमश्रेष्ठ ह। कसे ह जिनेन्द्रदेव? जिनके समोसरणकी भूमि रत्नकचनकर निरमापित, देव मनुष्य तियचनिकर वदनीक ह। जिनेंद्रदेव आठ प्रातिहाय, चौंतीस अतिशय, महा अदभुत हजारो सूयसमान तेज, महा सुन्दर रूप, नेत्रोको सुखदाता ह। जो भव्यजीव भगवानको भावकर प्रणाम करै सो विचक्षण थोडे ही कालविष ससार समुद्रको तिर।

श्रीवीतरागदेवके सिवाय कोई दूसरा जीवनिको कल्याणकी प्राप्तिका उपाय और नाहीं। तातै २३३
जिनेन्द्रचन्द्रहीका सेवन योग्य ह। अर हजारो मिथ्यामाग तिनविष प्रमादीजीव भूल रहे हैं। तिन कुतीर्थीनिके सम्यक्त्व नाहीं। अर मद्य मासादिकके सेवनत दया नाहीं। अर जैनविष परमदया ह, रचमात्र भी दोषकी प्ररूपणा नाहीं। अर अज्ञानी जीवोके यह बडी जडता है जो दिवसमें आहारका त्याग करै अर रात्रिमें भोजनकर पाप उपार्जे। चार पहर दिन अनशन व्रत किया ताका फल रात्रिभोजनत

जाता रहै, महापापका बंध होय। रात्रिका भोजन महा अधम, जिन पापियोने धर्म कहि कलप्या, कठोर है चित्त जिनका तिनको प्रतिबोधना बहुत कठिन है। जब सूर्य अस्त होय, जीवजन्तु दृष्टि न आवें तब जो पापी विषयनिका लालची भोजन करै है सो दुर्गतिके दुखको प्राप्त होय है। योग्य अयोग्यको नहीं जानै है। जो अविवेकी पापबुद्धि अंधकारके पटल कर आच्छादित भए हैं नेत्र जाके, रात्रिको भोजन करै है सो मक्षिका कीट केशादिकका भक्षण करै है। जो रात्रिभोजन करै है सो डाकिन राक्षस स्वान मार्जार मूसा आदिक मलिन प्राणियोका उच्छिष्ट आहार करै है। अथवा बहुत प्रपंचकर कहा? सर्वथा यह व्याख्यान है कि जो रात्रिको भोजन करै है सो सर्व अशुचिका भोजन करै है। सूर्यके अस्त भये पीछे कछु दृष्टि न आवै। तातें वाय मुहूर्त दिवस बाकी रहै तबतें लेकर दोय महूर्त दिन चढै तक विवेकियोको चौविधि आहार न करना। अशन पान खाद्य स्वाद्य ये चार प्रकारके आहार तजने। जो रात्रि भोजन करै हैं ते मनुष्य नहीं पशु है। जो जिनशासनतें विमुख व्रत नियमसेरहित रात्रिदिवस भखै ही करे हैं सो परलोकविषै कैसैं सुखी होय? जो दयारहित जीव जिनेंद्रदेवकी, जिनधर्मकी अर धर्मात्माओंकी निंदा करे है सो परभवमेंमहा नरकमें जाय है। अर नरकतें निकसकर तिर्यंच तथा मनुष्य होय सो दुर्गंधमुख होय है। मांस मद्य मधु,निशि भोजन, चोरी अर परनारी जो सेवै है सो दोनो जन्म खोवें है। जो रात्रिभोजन करे हैं सो अल्पआयु, हीन, व्याधिपीडित सुख रहित, महादुखी होय है। रात्रिभोजनके पापतें बहुतकाल जन्म मरणके दुख पावै है, गर्भवासविषै बसे है। रात्रिभोजी अनाचारी शूकर, कूकर, गरदभ,मार्जार, काग, वन, नरकनिगोद स्थावर त्रस अनेक योनियोमें बहुत काल भ्रमण करे है, हजारो अवसर्पणीकाल अर हजारो उत्सर्पणी काल योनिनविषै दुःख भोगे है। जो कुबुद्धि निशिभोजन करै है सो निशाचर कहिए राक्षस समान है। अर जो भव्यजीव जिनधर्मको पायकर नियमविषै तिष्ठे, है सो समस्त पापोको भस्मकर मोक्षपदको पावै है। जो व्रत लयकरि भंग करे सो दुःखी ही है। जे अणुव्रतोमे परायण रत्नत्रयके धारक श्रावक है ते दिवसविषै ही भोजन करै, दोषरहित योग्य आहार करै। जे दयावान रात्रिभोजन न करै ते स्वर्गविषै सुख भोग-

कर तहात चयकर चक्रवर्त्यादिकके सुख भोग ह । शुभ ह चेष्टा जिनकी, उत्तमव्रतनियम चेष्टाके धरन-हारे सौधर्मादि स्वगविष ऐसे भोग पाव जो मनुष्योको दुलभ है, अर देवोत मनुष्य होय सिद्धपद पावै हैं । कसे मनुष्य होय ? चक्रवर्ति, कामदेव, बलदेव, महामडलीक, मडलीक, महाराजा, राजाधिराज महा विभूतिके धनी, महागुणवान, उदारचित्त, दीर्घायु, सुन्दररूप, जिनधमके मर्मी, जगतके हितु, अनेक नगर ग्रामादिकोके अधिपति, नानाप्रकारके वाहनोकरमडित, सवलोकके वल्लभ, अनेक सामतोके स्वामी दुस्सह तेजके धारनहारे ऐसे राजा होय ह । अथवा राजावोके मत्री पुरोहित सेनापति राजश्रेष्ठी तथा श्रेष्ठी, बडे उमराव महा सामत, मनुष्योमें यह पद रात्रिभोजनके त्यागी पाव ह । देवनिके इन्द्र, भवन वासियोके इद्र चक्रके धनी, मनुष्योके इद्र महालक्षणोकर सम्पूण दिनभोजनत होय हैं । सूय सारिखे प्रतापी, चद्रमा सारिखे सौम्यदशन, अस्तको प्राप्त न होय प्रताप जिनका, देवनि समान ह भोग जिनके ऐसे, तेई होइ जे सूय अस्त भए पीछे भोजन न कर । अर स्त्री रात्रिभोजनके पापत माता, पिता,भाई, कुटुम्बरहित, अनाथ कहिए पतिरहित, अभागिनी, शोक दलिद्रकर पूण, रूक्ष फटे अधर हस्तपावादि, सूखा शरीर, चिपटी नासिका, जो देखे सो ग्लानि कर, दुष्टलक्षण बुरी, माजरी, आधी, लूली, गूगी, बहरी, बावरी, कानी, चीपडी, दुरगधयुक्त, स्थूलअधर, खोटे कण, भूरे ऊचे बुरे सिरके केश, तूवडीके बीज समान दात, कुवरण, कुलक्षण, कातिरहित, कठोरअग, अनेकरोगोकी भरी, मलिन फटे वस्त्र, उच्छिष्ट की भक्षणहारी, पराई मजूरी करणहारी नारी होय ह । रात्रिभोजनकी करणहारी नारी जो पति पाव तो कुरूप कुशील कोढी, बुरे कान, बुरी नाक, बुरी आख, चितावान, धन कुटुम्बरहित ऐसा पाव । रात्रि भोजनत विधवा, बालविधवा, महादुखवती, जल काष्ठादिक भारके बहनहारी, दुखकर भर ह उदर जाका, सव लोग कर ह अपमान जाका, वचनरूप वसूलोकर छीला ह चित्त जाका, अनेक फोडा फुन्सी की धरणहारी, ऐसी नारी होय ह ।

अर जे नारी शीलवती, शात है चित्त जिनका, दयावती रात्रि भोजनका त्याग करै हैं, ते स्वगविषै

मनवाछित भोग पाव है । तिनकी आज्ञा अनेक देव देवी सिरपर धार ह, हाथजोड सिरनिवाय सेवा करै ह । स्वगमें मनवाछित भोग कर और महा लक्ष्मीवान ऊचकुलमें जन्म पाव । शुभलक्षण, सम्पूण सव गुणमडित, सवकलाप्रवीण, देखनहारोके मन और नेत्रोको हरणहारी, अमतसमान वचन बोले, आनन्द को उपजावनहारी, जिनके परिणवेकी अभिलाषा चक्रवर्ती बलदेव वासुदेव तथा विद्याधरोके अधिपति राखें, बिजुरी समान ह काति जिनकी, कमल समान ह वदन जिनका, सुन्दर कुण्डल आदि आभूषण-निकी धरणहारी, सुन्दरवस्त्रोकी पहरनहारी, नरेंद्रकी राणी दिन भोजनत होय ह । जिनके मनवाछित अन्न धन होय ह और अनेक सेवक नानाप्रकारकी सेवा कर । जे दयावती रात्रिविष भोजन न करै श्रीकाता, सुभद्रा, लक्ष्मी तुल्य होव । तात नर अथवा नारी नियमविष ह चित्त जिनका तें निशि भोजनका त्याग कर । यह रात्रिभोजन अनेक कष्टका देनहारा ह, रात्रिभोजनके त्यागविष अति अल्प कष्ट ह, परन्तु याके फलकरि अति उत्कष्ट होय ह । तात विवेकी यह व्रत आदर । अपने कल्याणको कौन न वाछे ? धम तो सुखकी उत्पत्तिका मूल ह और अधम दुखका मूल ह । ऐसा जानकर धमको भजो अधर्मको तजो । यह वार्ता लोकविष समस्त बालगोपाल जान ह—जो धमत सुख होय ह अर अधमकरि दु ख होय ह । धमका माहात्म्य देखो जाकरि देवलोकके चये उत्तम मनुष्य होय ह, जलस्थल के उपजे जे रत्न तिनके स्वामी, अर जगतकी मायात उदास, परन्तु कईएक दिनतक महाविभूतिके धनी होय गहवास भोग ह, जिनके स्वण रत्न वस्त्र धान्यनिके अनेक भण्डार ह, जिनके विभवकी बडे २ सामत, नानाप्रकारके आयुधोके धारक रक्षा कर, तिनक बहुत हाथी, घोडे, रथ पयादे, बहुत गाय भस, अनेक देश ग्राम नगर, मनके हरनहारे पाच इन्द्रियोके विषय, अर हसनीकोसी चाल चलें, अति सुन्दर शुभ लक्षण, मधुर शब्द, नेत्रोको प्रिय, मनोहर चेष्टाकी धरणहारी, नानाप्रकार आभूषण की धरणहारी स्त्री होय हैं । सकल सुखका मूल जो धम ह ताहि कईएक मूख जानै ही नाहीं, तातै तिनके धमका यत्न नाहीं । अर कईएक मनुष्य सुनकर जान ह—जो धम भला ह परन्तु पापकर्मके वशतं

अकायविष प्रवरत ह, सुखका उपाय जो धम ताहि नाहीं सेव ह। अर कईएक अशुभकमके उपशात होते उत्तम चेष्टाके धरणहारे श्रीगुरुके निकट जाय धमका स्वरूप उद्यमी होय पूछ ह। ते श्रीगुरुके वचन प्रभावत वस्तुका रहस्य जानकर श्रेष्ठ आचरणको आचर ह। ये नियम धर्मात्मा बुद्धिमान पापक्रियात रहित होयकर कर ह ते महा गुणवत स्वगविष अदभुत सुख भोग हैं। परम्पराय मोक्ष पाव ह। जे मुनिराजोको निरतर आहार देय ह, अर जिनके ऐसा नियम ह कि मुनिके आहारका समय टार भोजन कर, पहिले न कर, ते धन्य ह। तिनके दशनको अभिलाषा देव राख ह। दानके प्रभावकरि मनुष्य इन्द्रका पद पाव अथवा मनवाछित सुखका भोक्ता इन्द्रके बराबरके देव होय ह। जस वटका बीज अल्प ह सो बडा वक्ष होय परणव ह, तस दानतप अल्प भी महाफलके दाता हैं। सहसभट सुभटने यह वत लिया हुता कि मुनिके आहारकी बेला उलघकर भोजन करूगा। सो एक दिन ऋद्धिके धारी मुनि आहार को आए, सो निरतराय आहार भया। तब रत्नवष्टि आदि पचाश्चय सुभटके घर भए। वह सहसभट धमके प्रसादत कुवेरकात सेठ भया। सबके नेत्रोको प्रिय, धम विष जाकी बुद्धि सदा आसक्त ह, पथ्वीविष विख्यात ह नाम जाका, उदार, पराक्रमी, महा धनवान, जाके अनेक सेवक, जस पूणमासीका चन्द्रमा तसा कातिधारी, परमभोगोका भोक्ता, सवशास्त्र प्रवीण, पूवधमके प्रभावकरि ऐसा भया। बहुरि ससारत विरक्त होय जिनदीक्षा आदरी। ससारको पार भया। तात जो साधुके आहारके समयत पहिले आहार न करनेका नियम धार ते हरिषेण चक्रवर्ती की नाई महा उत्सवको प्राप्त होय ह। हरिषेण चक्रवर्ती याही वतके प्रभाव करि महा पुण्यको उपाजन कर अत्यन्त लक्ष्मीका नाथ भया। एसे ही जे सम्यग्दष्टि समाधानके धारी भव्य जीव मुनिके निकट जायकर एकवार भोजनका नियम कर ह, ते एकभुक्तिके प्रभावकर स्वग विमानविष उपजैं हैं। जहा सदा प्रकाश ह अर रात्रि दिवस नाहीं, निद्रा नाहीं, तहा सागरापर्यंत अप्सरावोके मध्य रमै ह। मोतिनके हार, रत्नोके कडे, कटिसत्र, मकट, बाजबद इत्यादि आभूषण पहरें, जिनपर छत्र फिरें

चमर ढुरें, ऐसे देवलोकके सुखभोग चक्रवर्त्यादि पद पावे हैं। उत्तम व्रतोविषै आसक्त जे अणुव्रतके धारक श्रावक, शरीरको विनाशीक जानकर शांत भया है हृदय जिनका, अष्टमी चतुर्दशीका उपवास मनशुद्ध होय प्रोषध संयुक्त धारे हैं, ते सौधर्मादि सोलहवें स्वर्गविषै उपजे हैं, बहुरि मनुष्य होय भव वनको तजे हैं, मुनिव्रतके प्रभावकरि अर्हमिंद्रपद तथा मुक्तिपद पावे हैं। जे व्रत गुणशील तपकर मंडित हैं ते साधु जिनशासनके प्रसादकरि सर्वकर्मरहित होय सिद्धनिका पद पावे हैं। जे तीनो काल विषै जिनेंद्रदेवकी स्तुति करें मन वचन काय कर नमस्कार करे हैं, अर सुमेरु पर्वत सारिखे अचल मिथ्यात्वरूप पवनकर नाहीं चले हैं, गुणरूप गहने पहरें, शीलरूप सुगंध लगावें हैं, सो कईएक भव उत्तम देव उत्तम मनुष्यके सुख भोगकर परम स्थानको प्राप्त होय है। ये इन्द्रियनिके विषय जीवने जगतविषै अनंतकाल भोगे, तिन विषयोंसे मोहित भया विरक्त भावको नाहीं भजे है, यह बडा आश्चर्य है ? जो इन विषयोंको विषमिश्रित अन्नसमान जानकर पुरुषोत्तम कहिए चक्रवर्ती आदि उत्तम पुरुष भी सेवे है। संसारमें भ्रमते हुवे इस जीवके जो सम्यक्त्व उपजे और एक भी नियम व्रत साधे तो यह मुक्तिका बीज है। और जिन प्राणधारियोंके एक भी नियम नाहीं ते पशु हैं, अथवा फूटे कलश हैं गुणरहित हैं। अर जो भव्य जीव संसारसमुद्रको तिरा चाहे हैं, ते प्रमादरहित होय गुण अर व्रतनिकरि पूर्ण सदा नियमरूप रहे। जो मनुष्य कुबुद्धि खोटे कर्म नाहीं तजै हैं अर व्रत नियम को नाहीं भजै हैं ते जन्मके अंधेकी नाई अनंतकाल भववनविषै भटके हैं। या भांति जो श्री अनन्तवीर्य केवली, तेई भए तीनलोकके चन्द्रमा, तिनके वचनरूप किरणके प्रभावतै देव, विद्याधर, भूमिगोचरी, मनुष्य तथा तिर्यंच सब ही आनन्दको प्राप्त भए। कईएक उत्तम मानव मुनि भए तथा श्रावक भए। सम्यक्त्वको प्राप्त भए और कोई एक उत्तम तिर्यंच भी सम्यकदृष्टि श्रावक अणुव्रत धारी भए, अर चतुरनिकायके देवोंमें कई एक सम्यकदृष्टि भए, क्योंकि देवनिके व्रत नाहीं।

अथानन्तर एक धर्मरथ नामा मुनि रावणको कहते भए—हे भद्र कहिये भव्यजीव ! तू भी अपनी

शक्ति प्रमाण कछु नियम धारण कर। यह धमरत्नका द्वीप है, अर भगवान केवली महा महेश्वर है। या रत्नद्वीपते कछु नियमरूप रत्न ग्रहण कर। काहेको चिंताके भारके वशि होय रह्या है ? महापुरुषनिके त्याग खेदका कारण नाहीं। जैसे कोई रत्नद्वीपमें प्रवेश करे अर वाका मन भ्रमे—जो मैं कैसा रत्न लूं ? तैसे याका मन आकुलित भया जो मैं कैसा व्रत लूं। यह रावण भोगासक्त, सो याके चित्तमें यह चिंता उपजी जो मेरे खान पान तो सहज ही पवित्र है। सुगंध मनोहर पौष्टिक शुभ स्वाद, मांसादि मलिन वस्तुके प्रसंगते रहित आहार है, अर हिंसा व्रत आदि श्रावकका एकहू व्रत करिवे समर्थ नाहीं। मैं अणुव्रत हू धारवे समर्थ नाहीं तो महाव्रत कैसे धारूं ? माते हाथी समान चित्त मेरा सव वस्तु विषै भ्रमता फिरै है। मैं आतमभावरूप अंकुशते याको वशकरवे समर्थ नाहीं। जे निर्ग्रंथका व्रत धरै हैं, ते अग्निकी ज्वाला पीवै है, अर पवनको वस्त्रमें बांधै हैं, अर पहाडको उठावै है। मैं महाशूरवीर भी तप व्रत धरने समर्थ नाहीं। अहो धन्य है वे नरोत्तम ! जो मुनिव्रत धारै हैं। मैं एक यह नियम धरूं जो परस्त्री अत्यन्त रूपवती भी होय तो ताहि बलात्कार करि न इच्छूं, अथवा सवलोकमें ऐसी कौन रूपवती नारी है जो मोहि देखकर मनमथकी पीडी बिकल न होय ? अथवा ऐसी कौन परस्त्री है जो विवेकी जीवनिके मनको वश करै ? कैसी है परस्त्री, परपुरुषके संयोगकरि दूषित है अंग जाका, स्वभावहीकरि दुर्गंध, बिष्टाकी राशि, ताविषै कहा राग उपजै ? ऐसा मनमें विचार भावसहित अनंत वीर्य केवलीको प्रणाम करि देव मनुष्य असुरोंकी साक्षितामें प्रकट ऐसा वचन कहता भया—हे भगवान ! इच्छारहित जो परनारी ताहि मैं न सेवूं। यह मेरे नियम है। अर कुंभकरण अर्हंत सिद्ध साधु केवलीभाषित धर्मका कारण अंगीकार करि, सुमेरु पर्वत सारिखा है अचल चित्त जाका, सो यह नियम करता भया—जो मैं प्रात ही उठकर प्रति दिन जिनेंद्रकी अभिषेक पूजा स्तुति कर, मुनिको विधिपूर्वक आहार देयकरि आहार करूंगा, अन्यथा नाहीं। मुनिके आहारकी वेला पहिले सर्वथा भोजन न करूंगा। अर सब पुरुष, साधुनिको नमस्कार कर और भी घने नियम लिए। अर देव कहिये कल्पवासी, असुर

कहिये भवनत्रिक, अर विद्याधर मनुष्य हर्षत प्रफुल्लित है नेत्र जिनके, सब केवलीको नमस्कार कर अपने अपने स्थान गए। रावण भी इन्द्रकीसी लीला धर प्रबल पराक्रमी लंकाकी ओर पयान करता भया, अर आकाशके मार्ग शीघ्र ही लंकाविषै प्रवेश किया। कैसा है रावण? समस्त नरनारियोंके समूहोंने किया है गुण वरणन जाका। अर कैसी है लंका? वस्त्रादिकरि बहुत समारी है। राजमहल में प्रवेश कर सुखसे तिष्ठते भए। राजमन्दिर सब सुखका भर्या है। पुण्याधिकारी जीवनिके जब शुभकर्मका उदय होय है, तब नानाप्रकारकी सामग्री विस्तार होय है। गुरुके मुखतैं धर्मका उपदेश पाय परमपदके अधिकारी होय हैं। ऐसा जानकरि जिनश्रुतमें उद्यमी हैं मन जिनका ते बारम्बार निजपरका विचारकर धर्मका सेवन करैं। विनयकर जिन शास्त्र सुननेवालोंके जो ज्ञान है सो रवि समान प्रकाशको धरै है मोहतिमिरका नाश करै है।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रन्थ ताकी भाषा वचनिकाविषै अनन्तवीर्यकेवलीके धर्मोपदेशका वर्णन करने वाला चौदहवां पर्व पूर्ण भया ॥ १४ ॥

अथानंतर ताही केवलीके निकट हनुमानने श्रावक के व्रत लिए अर विभीषणने भी व्रत लिए, भाव शुद्ध होय व्रत नियम आदरे। जैसा सुमेरु पर्वतका स्थिरपना होय ताहूतैं अधिक हनुमानका शील अर सम्यक्त परम निश्चल प्रशंसा योग्य है। जब गौतम स्वामीने हनुमानका अत्यन्त सौभाग्य आदि वर्णन किया तब मगध देशके राजा श्रेणिक हर्षित होय गौतमस्वामीसों पूछते भए। हे भगवन गणाधीश! हनुमान कैसे लक्षणोंका धरणहारा, कौनका पुत्र, कहां उपज्या? मैं निश्चय कर ताका चरित्र सुन्या चाहूं हूं। तदि सत्पुरुषनिकी कथाकरि उपज्या है प्रमोद जाको ऐसे, इन्द्रभूत कहिए गौतमस्वामी आह्लादकारी वचन कहते भए—'हे नृप! विजयार्ध पर्वतकी दक्षिण श्रेणी पच्चीसों दश योजन ऊंची, तहां आदित्यपुर नामा मनोहर नगर, तहां राजा प्रह्लाद, रानी केतुमती, तिनके पुत्र वायुकुमार, ताका विस्तीर्ण वक्षस्थल लक्ष्मीका निवास। सो वायुकुमारको सम्पूर्ण यौवन धरे देखकरि पिताके मनविषै

इनके विवाहकी चिंता उपजी। कसा ह पिता ? परम्पराय सतानके बढावनेकी ह वाछा जाके। अब जहाँ यह वायुकुमार परणेगा सो कहिए ह। भरतक्षेत्रमें समुद्रत पूव बक्षिण विशाके मध्य बतीनामा पवत, जाके ऊचे शिखर आकाश लगि रहे ह। नानाप्रकार वक्ष औषधि तिनकरि सयुक्त, अर जलके नीझरने झर ह, जहाँ इद्र तुल्य राजा महेंद्र विद्याधर, तान महे द्रपुर नगर बसाया। राजाके हृदयवेगा रानी, ताके अरिदमादि सौ पुत्र, महागुणवान, अर अजनी सु दरी पुत्री, सो मानो त्रलोक्यकी सु दरी जे स्त्री तिनके रूप एकत्रकरि बनाई ह। नील कमल सारिखे ह नेत्र जाके, कामके बाण समान तीक्ष्ण दूरदर्शी कर्णा तक कटाक्ष, अर प्रशसायोग्य करपल्लव, रक्तकमल समान चरण, हस्तीके कु भस्थल समान कुच, अर केहरी समान कटि, सु दर नितम्ब, कदलीस्तभ समान कोमल जघा, शुभलक्षण, प्रफुलित मालती समान मदु बाहुयुगल, गधर्वादि सव कलाकी जाननहारी, मानो साक्षात सरस्वती ही ह। अर रूपकरि लक्ष्मीसमान सवगुणमडित। एक दिवस नवयौवनमें कदुक क्रीडा करती भमण करती सखियो सहित रमती पिताने देखी, सो जस सुलोचनाको देखकर राजा अकम्पनको चिता उपजी हुती, तस अजनीको देख राजा महे द्रको चिता उपजी। तब याके वर ढू ढनेविष उद्यमी भए। ससारविष माता पिताको क या दु खका कारण ह। जे बडे कुलके पुरुष ह तिनको क याकी ऐसी चिंता रह ह। यह मेरी कन्या प्रशसायोग्य पतिको प्राप्त होय, अर बहुत काल याका सौभाग्य रह, अर कन्या निर्दोष सुखी रह। राजा महे द्रने अपने मत्रीनिसो कही—जो तुम सव वस्तुविष प्रवीण हो, कन्यायोग्य श्रेष्ठ वर मोहि बतावो। तदि अमरसागर मत्रीने कही—यह क या राक्षसोका अधीश जो रावण ताहि देवो। २४१
सव विद्याधरनिका अधिपति ताका सम्ब ध पाय तुम्हारा प्रभाव समुद्रात पथ्वीविष होयगा, अथवा इ द्रजीत अथवा मेघनादको देवो। अर यह भी तुम्हारे मनविषं न आव तो क याका स्वयबर रचो। ऐसा कहकरि अमरसागर मत्री चुप रह्या। तब सुमतिनामा मत्री महापडित बोल्या—रावणके तो स्त्री अनेक ह, अर महा अहकारी, ताको परणाव तो भी आपसमें अधिक प्रीति न होय। अर कन्या

की वय छोटी अर रावणकी वय अधिक सो बन नाहीं। इन्द्रजीत तथा मेघनादको परण तो उन दोनोंमें परस्पर विरोध होय। आगे राजा श्रीषेणके पुत्रों विषै विरोध भया, तातै यह न करना। तब ताराधन्य मंत्री कहता भया—दक्षिण श्रेणीविषै कनपुर नामा नगर है तहां राजा हिरण्यप्रभ ताके रानी सुमना, पुत्र सौदामिनीप्रभ, सो महा यशवंत कीर्तिधारी, नवयौवन, नववय, अति सुन्दर रूप, सब विद्या कलाका पारगामी, लोकनिके नेत्रनिकों आनन्दकारी, अनुपम गुण, अपनी चेष्टातैं हर्षित किया है सकल मंडल जाने, अर ऐसा पराक्रमी है जो सब विद्याधर एकत्र होय तासों लड़ै तो भी ताहि न जीतैं। मानो शक्तिके समूहकरि निरमाप्या है। सो यह कन्या वाहि देहु। जैसी कन्या तैसा वर, योग्य संबंध है। यह वार्ता सुनकर संदेहपराग नामा मंत्री माथा धुनि, आंख मीचकर कहता भया। वह सौदामिनीप्रभ महा भव्य है ताके निरन्तर यह विचार है कि यह संसार अनित्य है। सो संसारका स्वरूप जान बरस अठारहमें वैराग्य धारेगा, विषयाभिलाषी नाहीं, भोग रूपगजबंधन तुड़ाय गृहस्थीका त्याग करेगा, बाह्याभ्यंतर परिग्रह परिहारकरि केवलज्ञानको पाय मोक्ष जायगा, सो याहि परणावै तो कन्या पति विना शोभा न पावै, जैसे चन्द्रमा विना रात्रि नीकी न दीखै। कैसा है चन्द्रमा ? जगतमें प्रकाश करणहारा है, तातैं तुम इन्द्रके नगर समान आदित्यपुर नगर है, रत्ननिकर सूर्य समान देदीप्यमान है। तहां राजा प्रह्लाद महाभोगी पुरुष, चन्द्रमासमान कांतिका धारी, ताके राणी केतुमती कामकी ध्वजा, तिनके वायुकुमार कहिए पवनंजय नामा पुत्र, पराक्रमका समूह, रूपवान, शीलवान, गुणनिधान, सब कलाका पारगामी, शुभ शरीर, महावीर, खोटी चेष्टासों रहित, ताके समस्त गुण सब लोकनिके चित्तविषै व्याप रहे हैं, हम सौ वर्षमें हू न कह सकें, तातैं आप ही वाहि देख लेहु। पवनंजयके ऐसे गुण सुन सबही हर्षको प्राप्त भए। कैसा है पवनंजय ? देवनिके समान है द्युति जाकी। जैसे निशाकरकी किरणोंकर कुमुदनी प्रफुल्लित होय तैसे कन्या भी यह वार्ता सुनकरि प्रफुल्लित भई।

अथानन्तर बसंत ऋतु आई, स्त्रियोंके मुख कमलकी लावण्यताकी हरणहारी शीतऋतु गई।

कमलिनी प्रफुल्लित भई, नवीन कमलोके समूहकी सुगधताकरि दशो दिशा सुगध भई, कमलोपर भ्रमर गु जार करत भये। कसे ह भ्रमर ? मकरद कहिये पुष्पनिकी सुगधरज ताके अभिलाषी ह। वृक्षनिके पल्लव पत्र पुष्पादि नवीन प्रकट भए। मानो बसतक लक्ष्मीके विलाससो हषके अकुर ही उपजे हैं, अर आम मौल आए, तिनपर भ्रमर भ्रम ह, लोकनिके मनको कामबाण बींधते भए, कोकिलनके शब्द मानिनी नायिकानिके मानका मोचन करते भए। बसतसमय परस्पर नर नारियनिके स्नेह बढता भया। हिरण जो ह सो दूबके अकुर उखाड हिरणीके मुखमें देता भया। सो ताको अमृत समान लाग, अधिक प्रीत होती भई। अर बेल वृक्षनित लिपटी, कसी ह बेल ? भ्रमर ही ह नेत्र जिनके। दक्षिण दिशाकी पवन चाली सो सब ही को सुहावनी लागी। पवनके प्रसगकरि केसरके समूह पडे सो मानो बसतरूपी सिहके केशोके समूह ही है। महा सघन कौरव जातिके जे वृक्ष तिनपर भ्रमरो के समूह शब्द कर ह, मानो वियोगिनी नायिकानिके मनको खेद उपजायवेको बसतन प्रेरे ह। अर अशोक जातिके वृक्षनिकी नवीन कोपल लहलहाट कर ह सो मानो सौभाग्यवती स्त्रियोके रागकी राशि ही भाष ह। अर वनोमें केसूला (टेसू) अत्यन्त फूल रहे ह, सो मानो वियोगिनी नायिकानिके मनको दाह उपजावनेको अग्नि समान ह। दशो दिशाविष पुष्पनिके समूहकी सुगध रज ताहि मक-रद कहिये, सो परागकरि ऐसी फल रही ह मानो बसत जो ह पटवास कहिए सुगध चूण अबीर, ताकरि महोत्सव कर ह। ताकरि एक दिन भी स्त्री पुरुष परस्पर वियोगको नहीं सहा सक है। ता ऋतुविष विदेश गमन कस रुच ? ऐसी रागरूप बसत ऋतु प्रकट भई। तासमय फागुण सुदि अष्टमीसो लेकर पूणमासी तक अष्टाह्निकाके दिन महामगलरूप ह। सो इन्द्रादिक देव शची आदि पूजाके अर्थि नन्दीश्वर द्वीप गए, अर विद्याधर पूजाकी सामग्री लेयकर कलाश गये। श्रीऋषभदेवके निर्वाणकल्याणक करि वह पवत पूजनीक ह। सो समस्त परिवार सहित अजनीके पिता राजा महेन्द्र हू गए। तहा भगवान की पूजाकरि स्तुतिकरि अर भावसहित नमस्कारकर सुवणकी शिलापर सुखसों विराजे। अर राजा

२४३

प्रह्लाद पवनजयके पिता तेहू भरत चक्रवर्तीके कराये जे जिनमन्दिर तिनकी बदनाकेअर्थि कलाश पवत पर गए। सो वदनाकरि पवतपर विहार करते राजा महेन्द्रकी दष्टिविष आए। सो महेन्द्रको देखकर प्रीतिरूप ह चित्त जिनका, प्रफुल्लित भए ह नेत्र जिनके, ऐसे जो प्रह्लाद ते निकट आए। तब महेन्द्र उठकरि सन्मुख आयकर मिला। एक मनोज्ञ शिलापर दोनो हितसो तिष्ठे, परस्पर शरीरादि कुशल पूछते भए। तब राजा महेंद्रने कही हे मित्र! मेरे कुशल काहेकी? कन्या वरयोग्य भई सो ताके परणावनेकी चिताकरि चित्त व्याकुल रह ह। जसी कन्या ह तसा वर चाहिए, अर बडा घर चाहिए, कौनको दें, यह मन भ्रम ह। रावणको परणाइए तो ताके स्त्री बहुत ह अर आयु अधिक ह। अर जो ताके पुत्रोविष देइ तो तिनमे परस्पर विरोध होय। अर हेमपुरका राजा कनकद्युति ताका पुत्र सौदामिनीप्रभ कहिए विद्युत्प्रभ सो थोडे ही दिन विष मुक्तिको प्राप्त होयगा, यह वार्ता सब पथ्वीपर प्रसिद्ध ह, ज्ञानीमुनिने कही ह। हमने भी अपने मत्रियोके मखत सुनी ह। अब हमारे यह निश्चय भया ह कि आपका पुत्र पवनजय कन्याके बरिवे योग्य ह, यही मनोरथ करि हम आए ह। सो आपके दशनकर अति आनन्द भया जाकरि कछु विकल्प मिटचा। तब प्रह्लाद बोले मेरे भी चिता पुत्रके परणावनेकी ह तातमैं भी आपका दशनकरि अर वचन सुन वचनत अगोचर सुखको प्राप्त भया, जो आप आज्ञा करो सो ही प्रमाण। मेरे पुत्रका बडा भाग्य जो आपने कपा करी। वर कन्याका विवाह मानसरोवरकेतट पर करना ठहरचा। दोनो सेनामे आनन्दके शब्द भए। ज्योतिषयोने तीन दिनका लग्न थाप्या।

अथानन्तर पवनजयकुमार अजनीके रूपकी अदभुतता सुनकरि तत्काल देखनेको उद्यमी भया।
तीन दिन रह न सक्या सगमकी अभिलाषाकरि यह कुमार कामके वश हुआ, कामके दश वेगोकर पूरित भया। प्रथम विषयकी चिताकरि व्याकुल भया, अर दूजे वेग देखनेकी अभिलाषा उपजी, तीजे वग दीघ उच्छवास नाखने लग्या, चौथे वग कामज्वर उपज्या मानो चन्दनके अग्नि लागी, पाचवें वेग अग खेदरूप भया, सुगन्ध पुष्पादित अरुचि उपजी, छठे वेग भोजन विषसमान बुरा लाग्या, सातवें वेग

ताकी कथाकी आसक्तताकर विलाप उपज्या, आठवें वेग उन्मत्त भया विभ्रमरूप सपकर डस्या गीत नत्यादि अनेक चेष्टा करने लग्या, नवमे वग महामूर्छा उपजी, दशवें वेग दु खके भारसो पीडित भया। यद्यपि यह पवनजय विवेकी था, तथापि कामके प्रभावकरि विह्वल भया। सो कामको धिक्कार हो, कसा ह काम ? मोक्षमागका विरोधी ह, कामके वेगकरि पवनजय धीरजरहित भया, कपोलनिके कर लगाय शोकवान होय बठ्या। पसेवसे टपके ह कपोलनित जाके, उष्ण निश्वासकर मुरझाए है होठ जाके, अर शरीर कम्पायमान भय, बरम्बार जभाई लेने लग्या, अर अत्यन्त अभिलाषारूप शल्यतै चितावान भया, स्त्रीके ध्यानत इन्द्रिय व्याकुल भई। मनोज्ञ स्थान भी याको अरुचिकारी भास, चित्तकी शून्यता धारता सता तजी ह समस्त शृगारादि क्रिया जान। क्षणमात्रविष तो आभूषण पहिर, क्षणमात्रविष खोलडार, लज्जारहित भया। क्षीण होयगया ह समस्त अग जाका, ऐसी चिता धारता भया कि वह समय कब होय जो म वा सुन्दरीको अपने पास बठी देखू अर वाके कमलतुल्य गात्रको स्पश करू, वा कामिनीसे रसकी वार्ता करू। वाकी बात ही सुन करि मेरी यह दशा भई ह, न जानिए और कहा होय। वह कल्याणरूपिणी जाके हृदयमे बस ह ता हृदयमे दु खरूप अग्निका दाह क्यो होइ ? स्त्री तो निश्चयसेती स्वभावत ही कोमलचित्त होय ह, मोहि दुख देवे अर्थि चित्त कठोर क्यो भया ? यह काम पथ्वीविष अनग कहाव ह। जाके अग नाहीं सो अगविना ही मोहि अगरहित कर ह, मार डार ह! जो याके अग होय तो न जाने कहा कर ? मरो देहविष घाव नाहीं परन्तु वेदना बहुत ह। म एक जगह बठ्या हू अर मन अनेक जगहमें भ्रम ह। ये तीन दिन वाहि देख विना मोहि कुशलसो न जाय, तात ताके देखनका उपाय करू जाकरि शाति होय। अथवा सव कार्योंमें मित्र समान जगतविषै और आनदका कारण कोई नाहीं, मित्रत सव काय सिद्ध होय ह। ऐसा विचार अपना जो प्रहस्त नामा मित्र, सर्व विश्वासका भाजन तासो पवनजय गदगद बाणी करि कहता भया। कसा ह मित्र ? किनारे ही बठ्या ह, छायाकी मूर्ति ही ह, अपना ही शरीर मानो विक्रियाकरि दूजा शरीर होय रह्या

है, ताहि या भाति कही–हे मित्र ! तू मेरा सर्व अभिप्राय जान है, तोहि कहा कहू ? परन्तु यह मेरी
दु ख अवस्था मोहि वाचाल कर है । हे सखे ! तुम बिना यह बात कौनसो कही जाय ? तू समस्त जगत
पद्म की रीति जान है । जसे किसान अपना दु ख राजासो कहै, अर शिष्य गुरुसो कहै, अर स्त्री पतिसो
२४६ कहै, अर रोगी वैद्यसो कहै, बालक मातासो कहै तो दुख छूटै, तसे बुद्धिमान अपने मित्रसो कहै, तातै
मै तोहि कहू हू । वह राजा महेन्द्रकी पुत्री, ताके श्रवण ही कर कामबाणकरि मेरी विकलदशा भई
है, जो ताके देखे विना मै तीन दिन निबाहिवे समर्थ नाहीं । तात कोई ऐसा यत्न कर जो मै वाहि
देखू , ताहि देखे विना मेरे स्थिरता न आवै, अर मेरी स्थिरतासो तोहि प्रसन्नता होय । प्राणियोको
सव कायसे जीतव्य वल्लभ है, क्योकि जीतव्यके होते सते आत्मलाभ होय है । या भाति पवनजयने
कही तदि प्रहस्त मित्र हसे, मानो मित्रके मनका अभिप्राय पायकरि काय सिद्धिका उपाय करते भए ।
हे मित्र ! बहुत कहनेकरि कहा ? अपने माहीं भेद नाहीं, जो करना होय ताकरि ढील न करना । या
भाति तिन दोनोके बचनलाप होय है, एते ही सूर्य मानो इनके उपकार निमित्त अस्त भया । तब सूर्य
के वियोगसो दिशा काली पड गई, अधकार फल गया, क्षणमात्रमें नीलावस्त्र पहिरे निशा प्रकट भई ।
तब रात्रिके समय उत्साह सहित मित्रको पवनजय कहत भए । हे मित्र ! उठो, आवो तहा चल, जहा
वह मनकी हरणहारी प्राणवल्लभा तिष्ठै है । तदि ये दोनो मित्र विमानमें बैठि आकाशके मार्ग चाले,
मानो आकाशरूप समुद्रके मच्छ ही है । क्षणमात्रविषै जाय अजनीके सतखणे महलपर चढि झरोखो
में मोतिनकी झालरोके आश्रय छिप बैठे । अजनी सुन्दरी को पवनजय कुमारने देख्या कि पूर्णमासी २४७
के चन्द्रमाके समान है मुख जाका, मुखकी ज्योतिसो दीपक मद ज्योति होय रहे है, अर श्याम–श्वेत–
अरुण त्रिविध रगको लिए नेत्र महा सुन्दर है, मानो कामके बाण ही है, अर कुच ऊचे महा मनोहर
श्रृगाररसके भरे कलश ही है नवीन कोपलसमान लाल सुन्दर सुलक्षण है हस्त अर पाव जाके, अर
नखकी कातिकरि मानो लावण्यताको प्रकट करती शोभै है, अर शरीर महासुन्दर है, अति नाजुक

क्षीणकटि कुचोंके भारनित मति कदाचित भग्न हो जाय—ऐसी शंकाकरि मानो त्रिवलीरूप डोरीतैं प्रतिबद्ध है। अर जाकी जंघा लावण्यताको धरै है, सो केलेहूतैं अति कोमल, मानो कामके मंदिरके स्तम्भ ही हैं सो मानो वह कन्या चांदनी गत ही है। मुक्ताफलरूप नक्षत्रनिकरि इन्दीवर—कमल समान है रूप जाका। सो पवनंजय कुमार एकाग्र लगे हैं नेत्र जाके, अंजनीको भले प्रकार देख सुखकी भूमिको प्राप्त भया। ताही समय बसंततिलका नामा सखी महाबुद्धिवती अंजना सुन्दरीतैं कहती भई—हे सुरूपे! तू धन्य है जो तेरे पिताने तुझे वायुकुमारको दीनी। ते वायुकुमार महा प्रतापी है, तिनके गुण चंद्रमाकी किरण समान उज्ज्वल है, तिनकरि समस्त जगत व्याप्त होय रह्या है। तिनके गुण सुन अन्य पुरुषोंके गुण मंद भासै है। जैसे समुद्रमें लहर तिष्ठै तैसे तू वा योधाके अंगविषै तिष्ठैगी। कैसी है तू? महा मिष्टभाषिणी, चंद्रकांति रत्ननिकी प्रभाको जीतै ऐसी कांति तेरी, तू रत्नकी धरा रत्नाचल पर्वतके तटविषै पड़ी, तुम्हारा सम्बन्ध प्रशंसाके योग्य भया, याकरि सवही कुटुम्बके जन प्रसन्न भए। या भांति जब पतिके गुण सखीने गाए तदि वह लाजकी भरी चरणनिके नखकी ओर नीचे देखती भई। आनन्दरूप जलकरि हृदय भर गया। अर पवनंजयकुमारहू हर्षतैं फूल गए हैं नेत्रकमल जाके, हर्षित भया है वदन जाका।

ता समय एक मिश्रकेशी नामा दूजी सखी होंठ दाबिकर चोटी हिलायकर बोली अहो परम अज्ञान तेरा, यह कहा पवनंजयका सम्बन्ध सराह्या? जो विद्युतप्रभ कुंवरसों सम्बन्ध होता तो अतिश्रेष्ठ था। जो पुण्यके योगतैं कन्या का विद्युतप्रभ पति होता तो याका जन्म सफल होता। हे बसंतमाला! विद्युतप्रभ और पवनंजयमें इतना भेद है जितना समुद्र अर गोष्पदमें भेद है। विद्युतप्रभकी कथा बड़े बड़े पुरुषोंके मुखतैं सुनी है। जैसे मेघके बूंदकी संख्या नाहीं तैसे ताके गुणनिका पार नाहीं। वह नवयौवन है। महा सौम्य, विनयवान, देदीप्यमान, प्रतापवान, रूपवान, गुणवान, विद्यावान, बुद्धिमान, बलवान सब जगत चाहै है दर्शन जाका। सब यही कहै है कि यह कन्या वाहि देनी थी। सो कन्याके बाप

पद्म पुराण २४

ने सुनी— वह थोडे ही वर्षमें मुनि होयगा तात सम्बन्ध न किया सो भला न किया, विद्युत्प्रभका सयोग एक क्षणमात्र ही भला अर क्षुद्र पुरुषका सयोग बहुतकाल भो किस अर्थ ? यह वार्ता सुनकर पवनजय क्रोधरूप अग्निकर प्रज्वलित भए, क्षणमात्रमे और ही छाया होयगई, रसत विरस आयगया, लाल आख होय गइ, होठ डसकर तलवार म्यानसो काढी अर प्रहस्त मित्रसो कहते भए—ताहो हमारी निंदा सुहाव ह अर यह दासी ऐसे निंद्यवचन कहे अर यह सुन सो इन दोनोका शिर काट डारू । विद्युतप्रभ इनके हृदयका प्यारा ह, सो कस सहाय करेगा ? यह वचन पवनजयके सुन प्रहस्तमित्र रोष कर कहता भया—हे सखे हे मित्र ! ऐसे अयोग्य वचन कहनेकरि कहा ? तिहारी तलवार बडे सामतनिके सीसपर पड, स्त्री अबला अबध्य ह तापर कसे पडे ? यह दुष्ट दासी इनके अभिप्राय विना ऐसे कह ह । तुम आज्ञा करो तो या दासीको एकदडकी चोटसो मार डालू , परन्तु स्त्रीहत्या, बालहत्या, पशुहत्या, दुबल मनुष्यकी हत्या इत्यादि शास्त्रमे वर्जनीय कही ह । ये वचन मित्रके सुनकर पवनजय क्रोधको भूल गए अर मित्रको दासी पर क्रूर देखिकर कहते भए । हे मित्र ! तुम अनेक सग्रामके जीतनहारे, यशके अधिकारी, माते हाथियोके कुभस्थल विदारनहारे तमको दीनपर दया ही करनी योग्य ह । अर सामान्य पुरुष भी स्त्रीहत्या न करें तो तुम कस करो ? जे बडे कुलमें उपजे पुरुष ह अर गुणोकरि प्रसिद्ध ह, शूर वीर ह तिनका यश अयोग्य क्रियात मलिन होय ह । तात उठो जा माग आए ताही माग चालो । जस छाने आए हुते तस ही चाले । पवनजयके मनमें भाति पडी कि या कन्याको विद्युतप्रभ ही प्रिय ह, तात वाकी प्रशसा सुने ह, हमारी निंदा सुने ह । जो याहि न भाव तो दासी काहेको कह । यह रोष धर अपने कहे स्थानक पहुचे । पवनजयकुमार अजनीसो अति फीके पड गए । चित्तमें ऐसे चितवते भए कि दूजे पुरुष का है अनुराग जाको ऐसी जो अजना सो विकराल नदीकी नाई दूर हीत तजनी । कसी ह वह अजनारूप नदी ? सदेहरूप जे विषम भमर तिनको धर ह, अर खोटे भावरूप जे ग्राह तिनसो भरी ह । अर वह नारी वनी समान ह, अज्ञानरूप अधकारसो भरी इन्द्रियरूप जे सर्प तिनको धर ह, पडितनि २४८

को कदाचित न सेवना। खोटे राजाकी सवा और शत्रुके आश्रय जाना और शिथिलमित्र और अना सक्त स्त्री तिनत सुख कहा ? देखो जे विवेकी ह ते इष्टबन्धु तथा सुपुत्र अर पतिव्रत नारी इनको भी त्यागकर महाव्रत धारे ह और शूद्र पुरुष कुसग भी नहीं तजे ह। मद्यपायी वद्य और शिक्षारहित हाथी, अर निःकारण वरी, क्रूरजन, अर हिंसारूपधम, अर मूर्खनित चर्चा, अर मर्यादाका उलघना, निदयी देश, बालक राजा, स्त्री परपुरुष अनुरागनी इनको विवेकी तज। या भाति चितवन करता पवनजयकुमार ताके जस दुलहिनि सो प्रीति गई तस रात्रि हू गई, अर पूव दिशाविष सध्या प्रकट भई, मानो पवनजयने अजनीका राग छोड्या सो भमता फिर ह। (भावाथ) रागका स्वरूप लाल ह अर इनत जो राग मिट्या सो तान सध्याके मिसकरि पूव दिशामे प्रवेश किया ह। अर सूय ऐसा आरक्त उग्या। जस स्त्रीके कोपत पवनजयकुमार कोप्या। कसा ह सूय ? तरुणबिबको धरे ह। बहुरि जगतकी चेष्टाका कारण ह। तब पवनजयकुमार प्रहस्त मित्रको कहते भए, अत्यन्त अरुचिको धरे अजनीसो विमुख ह मन जाका, हे मित्र ! यहा अपने डेरे ह सो यहात वाका स्थानक समीप ह। सो यहा सवथा न रहना। ताको स्पशकर पवन आव सो मोहि न सुहाव। तात उठो, अपने नगर चाल, ढील करनी उचित नाहीं। तब मित्र कुमारकी आज्ञा प्रमाण सेनाक लोगोको पयानेकी आज्ञा करता भया। समुद्रसमान सेना रथ घोड, हाथी पयादे इनका बहुत शब्द भया। कन्याका निवास नजीक ही ह सो सेनाके पयान के शब्द कन्याके कानमें पडे तब कुमारका कूच जानकर कन्या अति दुखित भई। वे शब्द कानको ऐसे बुरे लागे जस वज्रकीशिला कानमें प्रवेश कर अर ऊपरसो मुदगरनिकी घात पडे। मनमें विचारती
भई—हाय हाय ! मोहि पूर्वोपार्जित कमने महानिधान दिया था सो छिनाय लिया, कहा करू ? अब कहा होय। मेरे मनोरथ हुता जो इस नरेन्द्रके साथ क्रीडा करूगी सो और ही भाति वष्टि आव हैं, तो अपराध कछु न जान पडे ह, परन्तु यह मेरी बरिन मिश्रकेशी ताने निद्य वचन कहे हुते सो कदाचित कुमारको यह खबर पहुची होय अर मोविष कुमाया करी होय। यह विवेकरहित पापिनी कटुभाषिणी

धिक्कार, याहि जान मेरा प्राणवल्लभ मोत कपारहित किया। अब जो मेरे भाग्य होय अर मेरा पिता मुझपर कपाकरि प्राणनाथको पाछा बहोडे अर उनकी सुदृष्टि होय तो मेरा जीतव्य ह। अर जो नाथ मेरा परित्याग कर तो म आहारको त्यागकरि शरीरको तजू गी। एसा चितवन करती वह सती मूर्छा खाय धरतीपर पडी। जसे बेलिकी जड उपाडी जाय अर वह आश्रयत रहित होय कुमलाय जाय, तसैं कुमलाय गई। तब सब सखीजन—यह कहा भया ऐसे कहकर अति सभ्रमको प्राप्त भइ। शीतल क्रिया सो याहि सचेत किया। तब यासू मूर्छाका कारण पूछ्या सो यह लज्जाकरि कहि न सक, निश्चल लोचन होय रही।

अथानतर पवनजयकी सेनाके लोक मनविष आकुल भए अर विचार करते भए जो निःकारण कूच काहेका ? यह कुमार विवाह करने आया हुता सो दुलहिनको परण करि क्यो न चल, याके कोप काहेत भया ? याँको कौनने कह्या ? सब वस्तुकी सामग्री ह, काहू वस्तुकी कमी नाहीं। याका सुसर बडा राजा कन्या अति सुन्दरी, यह पराङमुख क्यो भया ? तब कईएक हँसि करि कहते भए याका नाम पवनजय ह सो अपनी चचलतात पवनहू को जीत ह। अर कईएक कहते भए अभी स्त्रीका सुख नाहीं जान ह तात ऐंसी क याको छोडकरि जायवेको उद्यमी भया ह। जो याक रतिकालका राग होय तो जस वनहस्ती प्रेमक बधनकरि बध ह तसे यह बध जाय। या भाति सेनाके सामत कह ह, अर पवनजय शीघगामी वाहन पर चढ चलनेको उद्यमी भए। तब कन्याका पिता राजा महेन्द्रकुमार कूच सुनकर अति आकुल भया, समस्त भाईनि सहित राजा प्रह्लादप आया। प्रह्लाद अर महेंद्र दोनो आय, कुमारको कहते भए—हे कल्याणरूप ! हमको शोकका करणहारा यह कूच काहेको करिए ह। अहो कौनने आपको कह्या ह, शोभायमान तुम कौनको अप्रिय हो, जो तुमको न रुचे सो सबहीको न रुच। तिहारे पिताका अर हमारा वचन जो सदोष होय तो भी तुमको मानना योग्य ह। सो तो हम समस्त दोषरहित कह ह तुमको अवश्य धारना योग्य ह। हे शूरवीर ! कूचत पाछे फिरो, हमारे

दोउनिके मनवांछित सिद्ध करो । हम तुम्हारे गुरुजन है, सो तुम सारिखे सतपुरुषो को गुरुजनोकी आज्ञा आनन्दका कारण है । ऐसा जब राजा महेंद्रने अर प्रह्लादने कह्या तब ये कुमार धीर वीर विनयकरि नमीभूत भया है मस्तक जाका, तब तातन अर ससुरने बहुत आदरसो हाथ पकडे तब यह कुमार गुरुजनोकी जो गुरुता सो उलंघनको असमर्थ भया । तिनकी आज्ञाते पाछा बाहुड्या अर मनमें विचारी कि याहि परणकरि तजदूंगा ताकि दु:खसो जन्म पूरा करे, अर परका भी याहि संयोग न होय सके ।

अथानन्तर कन्या प्राणवल्लभको पाछा आया सुनकर हर्षित भई । रोमांच होय आए । लग्नके समय इनका विवाहमंगल भया । जब दुलहिनका करग्रहण कराया सो अशोकके पल्लव समान आरक्त अति कोमल कन्याके कर सो या विरक्तचित्तके अग्निकी ज्वाला समान लागे । विना इच्छा कुमारकी दृष्टि कन्याके तनपर काहू भांति गई सो क्षणमात्र भी न सह सक्या, जैसे कोई विद्युतपातको न सह सके । कन्याके प्रीति, वरके अप्रीति, यह याके भावको न जाने, ऐसा जाने मानो अग्नि हसती भई और शब्द करती भई, बडे विधानसो इनको विवाहकरि सवबंधुजन आनंदको प्राप्त भए । मानसरोवरके तट विवाह भया । नानाप्रकार वृक्षलता फल पुष्प विराजित जो सुन्दर वन तहां परम उत्सवकरि एक मास रहे । परस्पर दोनो समधियोने अति हितके वचन आलाप कहे । परस्पर स्तुति महिमा करी, सन्मान किए, पुत्रीके पिताने बहुत दान दिया । अपने अपने स्थानको गए ।

हे श्रेणिक ! जे वस्तुका स्वरूप नाहीं जाने है अर विना समझे पराये दोष ग्रहे, ते मूर्ख है । अर पराए दोष करे आप ऊपर दोष आय पडे है सो सब पापकर्मका फल है । पाप आतापकारी है । २५१

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रंथ ताकी भाषा वचनिकाविषै अंजनापवनंजयका विवाह वर्णन करने वाला पन्द्रहवा पर्व पूर्ण भया ॥१५॥

अथानन्तर पवनजयकुमारने अजनी सुन्दरीको परण कर ऐसी तजी जो कबहू बात न बूझ । सो वह सुन्दरी पतिके असभाषणत अर कपादष्टि कर न देखवेत परम दु ख करती भई । रात्रिमें भी निद्रा न लेय । निरतर अश्रुपात ही भरा कर, शरीर मलिन होय गया, पतिसो अति स्नेह, धनीका नाम अति सुहाव, पवन जाव सो भी अति प्रिय लाग, पतिका रूप तो विवाह वेदीमें अवलोकन कीना हुता ताका मनमें ध्यान करवो करे अर निश्चल लोचन सब चेष्टारहित बठी रह । अ तरग ध्यानमें पतिका रूप निरूपणकरि बाह्य भी दशन किया चाह सो न होय । ताद शोककरि बठी रह, चित्रपटविष पतिका चित्राम लिखनेका उद्यम कर, तदि हाथ काप करि कलम गिर पडे । दुरबल होय गया ह समस्त अग जाका ढीले होय कर गिर पडे ह सब आभूषण जाके, दीघ उष्ण जे उच्छवास तिनकरि मुरभाय गए ह कपोल जाक अगम वस्त्रके भी भारकरि खदको धरती सती अपने अशुभ कर्मोंको निदती, माता पितानिको बारम्बार याद करती सती, शू य भया ह हृदयजाका, दु खकर क्षीण शरीर, मूर्छा आयजाय, चेष्टा रहित होय जाय, अश्रुपातकरि रुक गया ह कठ जाका, दु खकर निकस ह वचन जाके, विह्वल भई सती, देव कहिए पूर्वोपार्जित कम ताहि उलाहना देय च द्रमाकी किरण हू करि जाका अतिदाह उपज, अर मदिरविष गमन करती मूर्छा खाय गिर पडे, अर विकलपकी मारी ऐसे विचार करि अपने मनहीमें पतिसो बतलाव । हे नाथ ! तिहार मनोज्ञ अ ग मेरे हृदयमे निर तर तिष्ठ ह मोहि आताप क्यो कर ह, अर म आपका कछु अपराध नाहीं किया, नि कारण मेरेपर कोप क्यो करो ? अब प्रसन्न होवो, म तिहारी भक्त हू, मेरे चित्तके विषादको हगे । जस अ तरग दशन देवो हो, तस बहिरग देवो । यह म हाथ जोड बीनती करू हू । जस सूय विना दिनकी शोभा नाहीं और च द्रमा विना रात्रिकी शोभा नाहीं और दया क्षमा शील सतोषादि गुण विना विद्या शोभ नाही, तस तिहारी कपा विना मेरी शोभा नाहीं । या भाति चित्तविष बस जो पति ताहि उलाहना देय अर बडे मोतियो समान नेत्रनित आसुवनिकी बू द भरै, महा कोमल सेज अर अनेक सामग्री सखीजन कर पर तु याहि कछु न सुहाव, चक्रारूढ समान मनमें

उपज्या है वियोगसे भ्रम जाको, स्नानादि संस्कार रहित कभी भी केश समारे गूथे नाहीं, केश भी रूखे पड गए, सब क्रियामें जड, मानो पृथ्वीहीका रूप होय रही है। अर निरंतर आंसवनिके प्रवाहत मानो जलरूप ही होय रही है। हृदयके दाहके योगत मानो अग्निरूप ही होय रही है। अर निश्चल चित्तके योगत मानो वायुरूप ही होय रही है। अर शून्यताके योगत मानो गगनरूप ही होय रही है। मोहके योगत आच्छादित होय रह्या है ज्ञान जाका, भूमिपर डार दिए हैं सब अंग जानैं, बैठ न सकै अर तिष्ठै तो उठ न सकै, अर उठै तो देहीको थांभ न सकै, सो सखीजनका हाथ पकडि विहार करै सो पग डिग जाय। अर चतुर जे सखीजन तिनसो बोलनेकी इच्छा करै परन्तु बोल न सकै। अर हंसनी कबूतरी आदि गृहपक्षी तिनसो क्रीडा किया चाहै पर कर न सकै। यह विचारी सबोंसे न्यारी बैठी रहै। पतिमें लग रहा है मन अर नेत्र जाका, निःकारण पतित अपमान पाया सो एक दिन बरस बराबर जाय। यह याकी अवस्था देखि सकल परिवार व्याकुल भया, सब ही चितवते भए कि—एता दुख याहि विना कारण क्यो भया है? यह कोई पूर्वोपार्जित पापकर्मका उदय है। पिछले जन्ममें यानै काहूके सुखविषै अंतराय किया है, सो याकै भी सुखका अंतराय भया। वायुकुमार तो निमित्तमात्र है। यह बारी भोरी निर्दोष याहि परणकरि क्यो तजी? ऐसी दुलहिन सहित देवनिसमान भोग क्यो न करै? यानै पिताके घर कभी रंचमात्र हू दुख न देख्या सो यह कर्मानुभव कर दुखके भारको प्राप्त भई। याकी सखीजन विचारै है कि कहा उपाय करै, हम भाग्यरहित हमारे यत्नसाध्य यह कार्य नाहीं। कोई अशुभकर्मकी चाल है। अब ऐसा दिन कब होयगा, वह शुभ मुहूर्त शुभ बेला कब होयगी जो वह प्रीतम या प्रियाको समीप लेय बैठेगा अर कृपादृष्टिकर देखैगा, मिष्टवचन बोलैगा। यह सबके अभिलाषा लाग रही है।

अथानंतर राजा वरुण ताके रावणसो विरोध पड्या, वरुण महा गर्ववान रावणकी सेवा न करै, सो रावणने दूत भेज्या। दूत जाय वरुणसो कहता भया। दूत धनीको शक्तिकर महाकांतिको धरै

है । अहो विद्याधराधिपते वरुण ! सबका स्वामी जो रावण तानैं यह आज्ञा करी है जो आप मोहि प्रणाम करो, अथवा युद्धकी तयारी करो । तब वरुणने हसकर कही, हो दूत ! कौन है रावण, कहा रहे है जो मोहि दबावे है, सो मैं इन्द्र नाहीं हूं, वह वृथा गर्वित लोकनिंद्य हुता, मैं वैश्रवण नाहीं, मैं यम नाहीं, मैं सहस्ररश्मि नाहीं, मैं मरुत नाहीं । रावणके देवाधिष्ठित रत्नोंकरि महा गर्व उपज्या है । वाकी सामर्थ्य है तो आवो, मैं वाहि गर्वरहित करूंगा । अर तेरी मृत्यु नजीक है जो हमसो ऐसी बात कहे है । तब दूत जायकर रावणसो सब वृत्तांत कहता भया । रावणने कोपकर समुद्र तुल्य सेनासहित जाय वरुणका नगर घेरचा अर यह प्रतिज्ञा करी जो मैं याहि देवाधिष्ठित रत्न विना ही वश करूंगा । मारूं अथवा बांधूं । तब वरुणके पुत्र राजीव पुंडरीकादिक क्रोधायमान होय रावणके कटकपर आए । रावणकी सेनाके अर इनके बडा युद्ध भया । परस्पर शस्त्रनिके समूह छेद डारे । हाथी हाथियोसे, घोडे घोडोसे, रथ रथोसे, भट भटोसे महायुद्ध करते भए । बडे २ सामंत होठ डसि डसि करि लाल नेत्र है जिनके वे महा भयानक शब्द करते भए । बडी बेरतक संग्राम भया । सो वरुणकी सेना रावणकी सेनासो कछुइक पीछे हटी । तब अपनी सेनाको हटी देख वरुण राक्षसनिकी सेनापर आप चलायकरि आया, कालाग्निसमान भयानक तब रावण वरुणको दुर्निवारण भूमिविषै सन्मुख आवता देखकर आप युद्ध करनेको उद्यमी भया । वरुणके रावणके आपसविषै युद्ध होणे लगा, अर वरुणके पुत्र खरदूषणसो युद्ध करते भए । कैसे है वरुणके पुत्र ? महाभटोके प्रलय करनहारे, अर अनेक माते हाथियोके कुम्भस्थल विदारनहारे । सो रावण क्रोधकरि दीप्त है मन जाका, महाक्रूर जो भृकुटि तिनकरि भयानक है मुख जाका, कुटिल है केश जाके, जबलगि धनुषके बाण तान वरुणपर चलावै तब लग वरुणके पुत्रो ने रावणके बहनेऊ खरदूषणको पकड लिया, तब रावणने मनमे विचारी जो हम वरुणसो युद्ध करें अर खरदूषणका मरण होय तो उचित नाहीं, तातै संग्राम मंद किया । जे बुद्धिमान है ते मंत्रविषै चूकै नाहीं । तब मंत्रियोने मंत्रकर सब देशोके राजा बुलाए, शीघ्रगामी पुरुष भेजे, सबनको लिखा बडी-सेना

सहित शीघ्र ही आवो । अर राजा प्रह्लादपर भी पत्र लेय मनुष्य आया सो राजा प्रह्लादने स्वामीकी भक्तिकरि रावणके सेवकनिका बहुत सन्मान किया, अर उठकर बहुत आदरसो पत्र माथैं चढाया अर बाच्या । सो पत्रविषै या भांति लिखा था कि पातालपुरके समीप कल्याण रूप स्थानकमैं तिष्ठता महा-क्षेमरूप विद्याधरोके अधिपतियोका पति सुमालीका पुत्र जो रत्नश्रवका ताका पुत्र राक्षसवशरूप आकाशविषै चन्द्रमा ऐसा जो रावण सो आदित्य नगरके राजा प्रह्लादको आज्ञा करै है । कैसा है प्रह्लाद? कल्याणरूप है, न्यायका वेत्ता है, देशकालविधानका ज्ञायक है । हमारा बहुत बल्लभ है । प्रथम तो तिहारे शरीरकी कुशल पूछै है, बहुरि यह समाचार है कि—हमको सब खेचर भूचर प्रणाम करै हैं, हाथोकी अगुली तिनके नखकी ज्योतिकर ज्योतिरूप किए है निज शिरके केश जिनने, अर एक अति बुद्धि वरुण पाताल नगरमें निवास करै है, सो आज्ञात पराङमुख होय लडनेको उद्यमी भया है । हृदयको व्यथाकारी विद्याधरोके समूहकरि युक्त है । समुद्रके मध्य द्वीपको पायकर वह दुरात्मा गर्वको प्राप्त भया है, सो हम ताके ऊपर चढकर आए है । बडा युद्ध भया । वरुणके पुत्रोंने खरदूषणको जीवता पकडया है । सो मन्त्रियोने मन्त्रकरि खरदूषणके मरणकी शकातै युद्ध रोक दिया है, तातै खर दूषणको छुडावना अर वरुणको जीतना सो तुम अवश्य शीघ्र आइयो, ढील मत करियो, तुम सारिखे पुरुष कर्तव्यमें न चूकै । अब सब विचार तिहारे आयवेपर है । यद्यपि सूर्य तेजका पुंज है तथापि अरुण सारिखा सारथी चाहिए । तब राजा प्रह्लाद पत्रके समाचार जानि मन्त्रियोसो मन्त्र कर रावणके समीप चलनेको उद्यमी भया । तब प्रह्लादको चलता सुनकर पवनजयकुमारने हाथ जोडि गोडनित धरती स्पर्श नमस्कारकर विनती करी । हे नाथ ! मुझ पुत्रके होते सते तुमको गमन युक्त नाहीं, पिता जो पुत्रको पालै है सो पुत्रका यही धर्म है कि पिताकी सेवा करै । जो सेवा न करै तो जानिए पुत्र भया ही नाहीं । तातै आप कूच न करै, आज्ञा करै । तब पिता कहते भए—हे पुत्र ! तुम कुमार हो, अबतक तुमने कोई युद्ध देख्या नाहीं । तातै तुम यहाँ रहो, मै जाऊंगा । तब पवनजयकुमार कनकाचलके तट

समान जो वक्षस्थल ताहि ऊचाकर तेजके धरणहारे वचन कहता भया–हे तात ! मेरी शक्तिका लक्षण तुमने देख्या नाहीं, जगतके दाहवेमें अग्निके स्फुलिगेका क्या वीय परखना । तुम्हारी आज्ञारूप आशिष कर पवित्र भया ह मस्तक मेरा, ऐसा जो म इन्द्रको भी जीतनेको समथ हू, याम सदेह नाहीं । ऐसा कहकर पिताको नमस्कारकर महाहष सयुक्त उठकरि स्नान भोजनादि शरीरकी क्रिया करी अर आदरसहित जे कुलम वद्ध ह, तिन्होने अशीष दीनी । भावसहित अरहत सिद्धको नमस्कारकरि परम कातिको धरतासता महा मगलरूप पितासो विदा होवेको आया सो पिताने अर माताने मगलके भयत आसू न काढे, आशीर्वाद दिया । हे पुत्र ! तेरी विजय होय, छातीसो लगाय मस्तक चूम्या । पवनजय कुमार श्रीभगवानका ध्यान धर माता पिताको प्रणामकरि जे परिवारके लोग पायन पडे तिनको बहुत धीय बधाय सबसो अति स्नेह कर विदा भए । पहले अपना दाहना पाव आग धर चाले । फुरक ह दाहिनी भुजा जिनकी, अर पूण कलश जिनके मुखपर लाल पल्लव तिनपर प्रथम ही दष्टि पडी अर थभ सो लगी हुई द्वार खडी जो अजना सुदरी आसुवनि करि भीज रह ह नेत्र जाके, ताबूलाविरहित धूसरे होय रहे ह अधर जाके, मानो थम्भविष उकेरी पुतली ही ह । कुमारकी दष्टि सुन्दरीपर पडी सो क्षण मात्रविष दष्टि सकोच कोपकरि बोले–हे दुरीक्षणे कहिए दुखकारी ह दशन जाका, या स्थानकत जावो, तेरी दष्टि उल्कापात समान ह, सो म सहार न सकू । अहो बडे कुलकी पुत्री कुलवती, तिनम यह ढीठपणा कि मने किए भी निलज्ज ऊभी रह । य पतिके अतिक्रूर वचन सुने तो भी याहि अति प्रिय लाग–जस घने दिनके तिसाए पपयेको मेघकी बूद प्यारी लाग सो पतिके वचन मनकरि अमत समान पीवती भई, हाथ जोडि चरणारविंदकी ओर दष्टि धरि गदगद बाणीकर डिगते डिगते वचन नीठि नीठि कहती भई–हे नाथ ! जब तुम यहा बिराजते हुते तबहू म वियोगिनी ही हुती परन्तु आप निकट ह सो आशाकरि प्राण कष्टत टिक रह ह । अब आप दूर पधार ह म कस जीऊगी ? मैं तिहारे वचन रूप अमतके आस्वादनेकी अति आतुर तुम परदेशको गमन करत समय स्नेहत दयालु चित्त होयकर

वस्तीके पशु पक्षियोको भी दिलासा करी, मनुष्योकी तो कहा बात ? सबसो अमत समानवचन कहे। मेरा चित्त तिहारे चरणारविंदविष ह, म तिहारी अप्राप्तिकर अति दुखी औरनिकी श्रीमुखत एती दिलासा करी, मेरी औरनिके मुखत ही दिलासा कराई होती। जब मोहि आपने तजी तब जगतमें शरण नाहीं, मरण ही ह। तब कुमारने मुख सकोचकर कोपसो कही—मर। तब यह सती खेद खिन्न होय धरतीपर गिर पडी। पवनकुमार यासो कुमयाहोविष चाले। बडी ऋद्धि सहित हाथी पर असवार होय सामतोसहित पयान किया। पहले ही दिनविष मानसरोवर जाय डेरे भए, पुष्ट ह बाहन जिनके सो विद्याधरनिकी सेना देवोकी सेना समान आकाशत उतरती सती अति शोभायमान भासती भई। कसी ह सेना ? नानाप्रकारके जे बाहन अर शस्त्र तेई ह आभूषण जाके। अपने २ बाहनोके यथायोग्य यत्न कराये, स्नान कराये, खानपानका यत्न कराया।

अथानन्तर विद्याके प्रभावत मनोहर एक बहुखणा महल बनाया, चौडा अर ऊचा, सो आप मित्र सहित महल ऊपर विराजे। सग्रामका उपज्या ह अति हर्ष जिनके झरोखनिकी जाली के छिद्रकरि सरोवरके तटके वृक्षनिको देखते हुते, शीतल मद सुगध पवनकरि वृक्ष मद मद हालते हुते अर सरोवरविष लहर उठती हुती। सरोवरके जीव कछुवा, मीन, मगर अर अनेकप्रकारके जलचर गर्वके धरणहारे तिनकी भुजानिकरि किलोल होय रही ह। उज्ज्वल स्फटिक मणि समान निर्मल जल ह जाम, नानाप्रकारके कमल फूल रहे है। हस, कारड, क्रौंच सारस इत्यादि पक्षी सुन्दर शब्द कर रहे है, जिनके सुननेत मन अर कर्ण हर्ष पाव। अर भ्रमर गुजार कर रह ह। तहा एक चकवी, चकवे विना अकेली वियोगरूप अग्नित तप्तायमान, अति आकुल, नानाप्रकार चेष्टाकी करणहारी, अस्ताचलकी ओर सूर्य गया सो वा तरफ लग रहे ह नेत्र जाके, अर कमलिनीके पत्रनिके छिद्रोविष बारम्बार देख ह, पाखनिको हिलावती उठै है अर पडे है ? अर मृणाल कहिए कमलकी नालका तार ताका स्वाद विष समान देख है, अपना प्रतिबिम्ब जलविष देखकरि जाने ह कि वह मेरा पीतम ह, सो ताहि बुलाव ह, सो प्रतिबिम्ब कहा

आव ? तदि अप्राप्तित परम शोकको प्राप्त भई ह । कटक आय उतरया ह, सो नाना देशनिके मनुष्योंके शब्द अर हाथी, घोडा आदि नानाप्रकारके पशुवनिके शब्द सुनकर अपने वल्लभ चकवाकी आशाकर, भ्रम ह चित्त जाका, अश्रुपात सहित हं लोचन जाके, तटके वृक्षपर चढि चढिकरि दशोदिशाकी ओर देख ह, पीतमको न देखकरि अति शीघ्र ही भूमिपर आय पडे ह पाख हलाय कमलिनीकी जो रज शरीरके लागी ह सो दूर कर ह । सो पवनकुमारने घनी बेर तक दृष्टि धारि चकवीकी दशा देखी । दयाकर भीज गया ह चित्त जाका, चित्तमें ऐसा विचार ह कि पीतमके वियोग करि यह शोक रूप अग्निविष बल ह । यह मनोज्ञ मानसरोवर, अर चन्द्रमाकी चादनी चदन समान शीतल, सो या वियोगिनी चकवीको दावानल समान ह, पति विना याको कोमल पल्लव भी खडग समान भास है । चद्रमाकी किरण भी वज समान भास ह स्वर्ग हू नरकरूप होय आचर ह । ऐसा चितवनकर याका मन प्रिया विष गया । अर या मानसरोवरपर ही विवाह भया हुता सो वे विवाहके स्थानक दृष्टिमें पडे सो याको अति शोकके कारण भए, मर्मके भेदनहारे दुःसह करौत समान लागे । चित्तविष विचारता भया—हाय ! हाय ! म क्रूरचित्त पापी, वह निर्दोष वृथा तजी, एक रात्रिका वियोग चकवी न सहार सक तो बाईस वषका वियोग वह महासुन्दरी कस सहार ? कटुक वचन वाकी सखीने कहे हुते, वाने तो न कहे हुते, म पराए दोषकरि काहेको ताका परित्याग किया । धिक्कार ह मो सारिखे मूर्खको, जो विना विचारे काम कर । ऐसे निष्कपट प्राणीको विनाकारण दुख अवस्था करी । म पापचित्त हूं, वज समान ह हृदय मेरा, जो मने एते वष ऐसी प्राणवल्लभाको वियोग दिया, अब क्या करूं ? पितासो विदा होयकर घरत निकस्या हू, कस पाछा जाऊ ? बडा सकट पडया, जो म वासो मिले विना सग्राममें जाऊ तो वह जीव नाहीं, अर वाके अभाव भए मेरा भी अभाव होयगा । जगतविष जीतव्य समान कोई पदाथ नाहीं, तात सव सदेहका निवारणहारा मेरा परम मित्र प्रहस्त विद्यमान ह वाहि सव भेद पूछू । वह सव प्रीतिकी रीतिमें प्रवीण ह । जे विचारकर काय कर हैं, ते प्राणी सुख पाव

ह । ऐसा पवनकुमारको विचार उपज्या, सो प्रहस्त मित्र ताके सुखविषै सुखी दुखविषै दुखी, याको चिंतावान देख पूछता भया कि—हे मित्र ! तुम रावणकी मदद करनेको वरुण सारिखे योधासो लडनेको जावो हो, सो अति प्रसन्नता चाहिए तब कार्यकी सिद्धि होय । आज तिहारा वदनरूप कमल क्यो मुरझाया दीख ह, लज्जाको तजकरि मोहि कहो, तुमको चिंतावान देखकर मेरे व्याकुलभाव भया है। तब पवनजयने कही—हे मित्र ! यह वार्ता काहूसो कहनी नाहीं, परन्तु तू मेरे सव रहस्यके भाजन हो तोसू अतर नाहीं । यह बात कहते परम लज्जा उपज ह । तब प्रहस्त कहते भए जो तिहारे चित्त विषै होय सो कहो, जो तुम आज्ञा करो सो बात और कोई न जानेगा । जस तातें लोहेपर पडी जलकी बूद विलाय जाय, प्रकट न दीखै तस मोहि कही बात प्रकट न होय । तब पवनकुमार बोले—हे मित्र ! सुनो—म कदापि अजनी सुदरीसो प्रीति न करी । सो अब मेरा मन अति व्याकुल ह, मेरी क्रूरता देखो, ऐते वष परणे भए सो अबतक वियोग रह्या, निष्कारण अप्रीति भई, सदा वह शोककी भरी रही । अश्रुपात झरते रहे, अर चलते समय द्वार खडी विरह रूप दाहसो मुरझाय गया ह मुखरूप कमल जाका, सव लावण्य सम्पदारहित मने देखी । अब ताके दीघ नेत्र नीलकमल समान मेरे हृदयको बाणवत भेद हैं । तातै ऐसा उपाय कर जाकरि मरा वासो मिलाप होय । हे सज्जन ! जो मिलाप न होयगा तो हम दोनो हीका मरण होयगा । तब प्रहस्त क्षणएक विचारकरि बोले तुम माता पितासो आज्ञा माग शत्रुके जीतवेको निकसे हो, तात पीछे चलना उचित नाहीं । अर अबतक कदापि अजना सुन्दरी याद करी नाही, अर यहा बुलाव तो लज्जा उपज ह, तात गोप्य चलना अर गोप्य ही आवना, वहा रहना नाही । उनका अवलोकनकर सुख सभाषणकरि आनन्दरूप शीघ ही आवना । तब आपका चित्त निश्चल होयगा, परम उत्साहरूप चलना, शत्रुके जीतनेका निश्चय यही उपाय ह । तब मुदगर नामा सेनापतिको कटक रक्षा सौंपकरि मेरुकी वदनाका मिसकरि प्रहस्त मित्रसहित गुप्त ही सुगधादि सामग्री लेयकरि आकाशके मागसो चाले । सूय भी अस्त होयगया अर साझका प्रकाश भी होयगया,

निशा प्रकट भई। अजनीसुन्दरीके महलपर जाय पहुँचे, पवनकुमार तो बाहिर खडे रहे, प्रहस्त खबर देनेको भीतर गए। दीपकका मद प्रकाश था, अजनी कहती भई—कौन ह ? बसतमाला निकट ही
५८ सोती हुती, सो जगाई। वह सब बातोविष निपुण उठकर अजनीका भय निवारण करती भई। प्रहस्त
२६० ने नमस्कार करि जब पवनजयके आगमका वत्तात कह्या तब सुन्दरीने प्राणनाथका समागम स्वप्न समान जान्या। प्रहस्तको गदगद बाणीकरि कहती भई—हे प्रहस्त ! म पुण्यहीन, पतिकी कपा करिर्वाजत, मेरे ऐसा ही पाप कमका उदय आया, तू हमसो कहा हस ह ? पतिसो जिसका निरादर होय वाकी कौन अवज्ञा न कर ? म अभागिनी दु ख अवस्थाको प्राप्त भई, कहात सुख अवस्था होय ? तब प्रहस्तने हाथ जोडि नमस्कारकरि विनती करी—हे कल्याणरूपिणी ! हे पतिव्रते ! हमारा अपराध क्षमा करो, अब सब अशुभ कम गए, तुम्हार प्रेमरूप गुणका प्रेरचा तेरा प्राणनाथ आया। तुमसे अति प्रसन्न भया, ति (व) प्रसन्नताकरि कहाकहा आनन्द न होय, जस चन्द्रमाके योगकरि रात्रिकी अति मनोज्ञता होय। तब अजनास दरी क्षणएक नीची होय रही अर बसतमाला प्रहस्तसो कही—हे भद्र ! मेघ बरम जब ही भला, तात प्राणनाथ इनक महल पधारे, सो इनका बडा भाग्य, अर हमारा पुण्यरूप वक्ष फल्या। यह बात होय रही हुती ताही समय आनन्दके अश्रुपातकरि व्याप्त होयगए ह नेत्र जिनके सो कुमार पधारे ही। मानो करुणारूप सखी ही पीतमको ढिग ले आई। तब भयभीत हिरणीके नेत्र समान सुन्दर ह नेत्र जाके, ऐसी प्रिया पतिको देख सन्मुख जाय, हाथ जोडि, सीस निवाय पायनि पडी। तब प्राणबल्लभने अपने करत सीस उठाय खडी करी। अमत समान वचन कहे कि—हे देवी ! क्लेशका २६०
सकल खेद निवत्त होव। सुन्दरी हाथ जोडि पतिके निकट खडी हुती। पतिने अपने करत कर पकड करि सेजपर बिठाई, तब नमस्कारकर प्रहस्त तो बाहिर गए अर बसतमाला हू अपने स्थान जाय बठी। पवनजयकुमारने अपने अज्ञानत लज्जावान होय सुन्दरीसो बारम्बार कुशल पूछी अर कही हे प्रिए ! मने अशुभ कमके उदयत जो तिहारा वथा निरादर किया सो क्षमा करो। तब सुन्दरी नीचा मुखकरि

मदमद वचन कहती भई–हे नाथ ! आपने पराभव कछु न किया, कर्मका ऐसा ही उदय हुता, अब आपने कृपा करी, अति स्नेह जताया तो मेरे सब मनोरथ सिद्ध भए । आपके ध्यान कर संयुक्त हृदय मेरा, सो आप सदा हृदयहीविषे विराजते, आपका अनादर हू आदर समान भास्या ।

या भांति अंजना सुन्दरीने कह्या तब पवनजयकुमार हाथ जोड कहते भए कि हे प्राणप्रिये ! मै वृथा अपराध किया । पराये दोषतै तुमको दोष दिया । सो तुम सब अपराध हमारा विस्मरण करो । मै अपना अपराध क्षमावने निमित्त तिहारे पायन परूं हूं, तुम हमसो अति प्रसन्न होवो । ऐसा कहकर पवनजयकुमारने अधिक स्नेह जनाया, तब अंजनासुन्दरी पतिका एता स्नेह देखकरि बहुत प्रसन्न भई । अर पतिको प्रियवचन कहती भई, हे नाथ ! मै अति प्रसन्न भई, हम तिहारे चरणारविंदकी रज हैं, हमारा इतना विनय तुमको उचित नाहीं, ऐसा कहकर सुखसो सेजपर विराजमान किये, प्राणनाथकी कृपाकरि प्रियाका मन अति प्रसन्न भया । अर शरीर अतिकांतिको धरता भया, दोनो परस्पर अतिस्नेहकं भरे एक चित्त भए । सुखरूप जागते रहे, निद्रा न लीनी । पिछले पहिर अल्प निद्रा आई, प्रभातका समय होय आया । तब यह पतिव्रता सेजसो उतर पतिके पाय पलोटने लगी, रात्रि व्यतीत भई, सोसुखमें जानी नाहीं, प्रात समय चन्द्रमाकी किरण फीकी पडगई, कुमार आनन्दके भारमें भर गए । अर स्वामीकी आज्ञा भूलगए, तब मित्र प्रहस्तने कुमारके हितविषै है चित्त जाका, ऊंचा शब्दकर बसंतमालाको जगाकर भीतर पठाई अर मंदमंद आपहू सुगंधित महलमैं मित्रके समीप गए, अर कहते भए–हे सुन्दर ! ऊठो, अब कहा सोवो हो ? चन्द्रमा भी तिहारे मुखकी कांतिकरि रहित होयगया है । वह वचन सुनकर पवनजय प्रबोधको प्राप्त भए । शिथिल है शरीर जिनका, जंभाई लेते, निद्राके आवेशकरि लाल हैं नेत्र जिनके, कानोको बाए हाथकी तर्जनी अंगुलीसो खुजावते, खुले हैं नेत्र जिनके, दाहिनी भुजा संकोचकरि अरिहंतका नाम लेकर सेजसो उठे । प्राणप्यारी आपके जगनेतै पहिलें ही सेजसो उतरकरि भूमिविषै विराजै है, लज्जाकर नम्रीभूत हैं नेत्र जाके, उठते ही पीतमकी दृष्टि प्रियापर पडी, बहुरि प्रहस्त

को देखकरि, आवो मित्र शब्द कहकर सेजसो उठे। प्रहस्तने मित्रसो रात्रिकी कुशल पूछी, निकट बैठे मित्र नीतिशास्त्रके वेत्ता कुमारसो कहते भए–हे मित्र! अब उठो प्रियाजीका सन्मान बहुरि आय कर करियो, कोई न जान, या भांति कटकमें जाय पहुँच। अन्यथा लज्जा ह। रथनूपुरका धनी किन्नर गीतनगरका धनी रावणके निकट गया चाह ह सो तिहारी ओर देख ह—जो वे आग आव तो हम मिलकर चलें। अर रावण निरतर मन्त्रियोत पूछ जो पवनजयकुमारके डेरे कहा है अर कब आवेंगे? तात अब आप शीघ्र ही रावणके निकट पधारो। प्रियाजीसो विदा मागो, तुमको पिताकी अर रावण की आज्ञा अवश्य करनी ह। कुशल क्षेमसो कार्यकर सिताब ही आवगे, तब प्राणप्रियासो अधिक प्रीत करियो। तब पवनजयने कही हे मित्र! ऐसे ही करना। ऐसा कहकर मित्रको तो बाहिर पठाया अर आप प्राणवल्लभासो अतिस्नेहकर उरसो लगाय कहते भए–हे प्रिये! अब हम जाय ह, तुम उदवेग मत करियो, थोडे ही दिनोमे स्वामीका कामकर हम आवेंगे, तुम आनन्दसो रहियो। तब अजना, सुन्दरी हाथ जोडकर कहती भई–हे महाराजकुमार! मेरा ऋतुसमय ह सो गर्भ मोहि अवश्य रहेगा और अबतक आपकी कृपा नहीं हुती यह सब जान ह सो माता पितासो मेरे कल्याणके निमित्त गर्भ का वृत्तात कह जावो। तुम दीर्घदर्शी सब प्राणियोमें प्रसिद्ध हो। ऐसे जब प्रियाने कह्या तब प्राण बल्लभाको कहते भए–हे प्यारी! म माता पितासो विदा होय निकस्या। सो अब उनके निकट जाना बन नाहीं, लज्जा उपज ह। लोक मेरी चेष्टा जान हसगे, तात जबतक तिहारा गर्भ प्रकाश न पाव ताके पहिले ही म आवू हू, तुम चित्त प्रसन्न राखो, अर कोई कह तो ये मेरे नामकी मुद्रिका राखो, हाथोके कडे राखो, तुमको सब शाति होयगी। ऐसा कहकर मुद्रिका दई अर बसतमालाको आज्ञा दई–इनकी सेवा बहुत नीके करियो। आप सेजसो उठे, प्रिया विषे लग रह्या ह प्रेम जिनका। कसी ह सेज सयोगके योगत बिखर रहे ह हारके मुक्ताफल जहा। अर पुष्पनकी सुगन्ध मकरदत भ्रम ह भ्रमर जहा, क्षीरसागरकी तरग समान अति उज्ज्वल बिछे ह पट जहाँ। आप उठकर मित्रके सहित विमानपर बैठि

आकाशके माग चाले। अजना सुन्दरीने अमगलके कारण आसू न काढे। हे श्रेणिक! कदाचित् या लोकविष उत्तमवस्तुके सयोगत किचित सुख होय ह सो क्षणभगुर ह। अर देहधारियोके पापके उदयतै दुख होय ह सुख दुख दोनो विनश्वर ह, तात हष विषाद न करना। हो प्राणी हो! जीवोको निरतर सुखका देनहारा दु खरूप अधकारका दूर करणहारा जिनवरभाषित धम सोई भया सूय ताके प्रताप करि मोहतिमिर हरहु।

इति श्रीरविषेणाचायविरचित मह पद्मपुराण सस्कृत ग्रथ ताकी भाषा वचनिकाविष पवनजय अजनाका सयोग वणन करने वाला सोलहवा पव पूण भया ॥ १६ ॥

अथान तर कईएक दिनोविष महेद्रकी पुत्री जो अजना ताके गभके चिह्न प्रकट भए। कछुइक मुख पाडुवण होयगया। मानो हनुमान गभमें आया सो तिनका यश ही प्रकट भया ह। मद चाल चलने लगी जसा मदोमत्त दिग्गज विचर ह। स्तनयुगल अति उन्नतिको प्राप्त भए, श्यामलीभूत ह अग्रभाग जिनके। आलसत वचन मदमद निसर, भौहोका कप होता भया, इन लक्षणनिकरि ताहि सासू गर्भिणी जानकर पूछती भई। तने यह कम कौन त किया? तब यह हाथ जोड प्रणामकर पतिके आवनेका समस्त वत्तात कहती भई। तदि केतुमती सासू क्रोधायमान भई। महा निठुरवाणीरूप पाषाणकर पीडती भई—हे पापिनी! मेरा पुत्र तेरेत अति विरक्त, तेरा आकार भी न देख्या चाह, तेरे शब्दको श्रवण-विष धार नाहीं, माता पितासो विदा होयकर रणसग्रामको बाहिर निकस्या। वह धीर कस तेरें मदिर में आव? हे निलज्ज! धिक्कार ह तुझ पापिनीको। चद्रमाकी किरण समान उज्ज्वल वशको दूषण लगावनहारी यह दोनो लोकमें निद्य अशुभक्रिया तनें आचरी, अर तेरी यह सखी बसतमाला याने तोहि ऐसी बुद्धि दीनी। कुलटाके पास वेश्या रह तब काहेकी कुशल? मुद्रिका अर कडे दिखाए तौ भी ताने न मानी अत्यत कोप किया। एक क्रूर नामा किंकर बुलाया, वह नमस्कारकर आय ठाढा भया। २६३

तब क्रोधकर केतुमतीने लाल नेत्र कर कहा—हे क्रूर ! सखी सहित याहि गाडीमें बठाय महेंद्र नगरके निकट छोड आव । तब क्रूर केतुमतीको आज्ञात सखीसहित अ जनाको गाडीमें बठायकर महेंद्रके नगर की ओर ले चाल्या । कसी ह अ जना सुन्दरी ? अति काप ह शरीर जाका, महा पवनकर उपडी जो बेल तासमान निराश्रय, अति आकुल, कातिरहित, दु खरूप अग्निकर जल गया ह हृदय जाका, भय कर सासूको कछु उत्तर न दिया । सखीकी ओर धरे ह नेत्र जान, मनकर अपने अशुभकमको बारबार निंदती, अश्रुधारा नाखती, निश्चल नहीं ह चित्तजाका, सो क्रूर इनको लेय चाल्या । सो क्रूरकमविष अति प्रवीण ह । दिवसके अ तमें महे द्रनगरके समीप पहुँचायकर नमस्कार कर मधुर वचन कहता भया—हे देवी ! म अपनी स्वामिनीकी आज्ञात तुमको दुखका कारण काय किया, सो क्षमा करहु । ऐसा कह कर सखीसहित सु दरीकू गाडीत उतार, विदा होय, गाडी लेय स्वामिनीप गया । जाय विनती करी—आपकी आज्ञाप्रमाण तिनकू तहा पहुँचाय आया हू ।

अथान तर महाउत्तम महापतिव्रता जो अ जना सु दरी ताहि पतिके योगत दुखके भारत पीडित देख सूय भी मानो चिताकर मद होगई ह प्रभा जाकी, अस्त होयगया । अर रुदनकर अत्यन्त लाल होय गए ह नेत्र जाक, ऐसी अ जना मानो याके नेत्रकी अरुणताकर पश्चिमदिशा रक्त होयगई । अ धकार फल गया, रात्रि भई । अ जनाके दु खत निकसी जो आसूनकी धारा, तेई भए मेघ, तिनकर मानो दशो दिशा श्याम होयगई । अर पछी कोलाहल शब्द करते भए सो मानो अजनीके दुखत दुखी भए पुकार ह । वह अजना अपवादरूप महादु खका जो सागर ताम डूबी क्षुधादिक दुख भूलगई । अत्य त
भयभीत अश्रुपात नाख, रुदनकर, सो बसतमाला सखी धीय बधाव । रात्रिको पल्लवका साथरा बिछाय दिया सो याको निद्रा रच भी न आई । निरतर उष्ण अश्रुपात पडे सो मानो दाहके भयत निद्रा भाज गई । बसतमाला पाव दाब, खेद दूर किया दिलासा करी । दुखके योगकर एक रात्रि वष बराबर बीती । प्रभातमें साथरेको तजकर नाना सकल्प विकल्पनिके सकडानि शका करि अति विह्वल पिताके घर

की ओर चाली । सखी छाया समान सग चाली । पिताके मन्दिरके द्वार जाय पहुँची । भीतर प्रवेश करती द्वारपालने रोकी । दु खक योगत और ही रूप होयगया सो जानी न पडी । तब सखीने सब वृत्तात कह्या । तदि राजाके निकट प्रसन्नकीर्ति बठा जानकर शिलाकवाट नामा द्वारपालने एक और मनुष्य को द्वार मेलि आप राजाके निकट जाय नमस्कार करि विनती करी । पुत्रीके आगमनका वत्तात कह्या । तब राजाके निकट प्रसन्नकीर्ति नामा पुत्र बठ्या हुता । सो राजाने पुत्रको आज्ञा करी—तुम सन्मुख जाय उसका शीघ्र ही प्रवेश करावो, अर नगरकी शोभा करावो, तुमतो पहिले जावो, और हमारी असवारी तयार करावो, हम भी पीछेत आव ह । तदि द्वारपालने हाथ जोड नमस्कारकर यथाथ विनती करी । तब राजा महेंद्र लज्जाका कारण सुनकर महा कोपवान भए । अर पुत्रको आज्ञा करी कि पापिनीकू नगरमें त काढ देवो, जाकी वार्ता सुनकर मेरे कान मानो वजकर हते गए है । तब एक महोत्साह नामा बडा सामत राजाका अतिबल्लभ, सो कहता भया—हे नाथ ! ऐसी आज्ञा करनी उचित नाहीं, बसतमालासो सब ठीक पाड लेहु, सासू केतुमती अति क्रूर ह, अर जिनधमत पराङ्मुख ह, लौकिकसूत्र जो नास्तिकमत ताविष प्रवीण ह । तान विना विचारया झूठा दोष लगाया । यह धर्मात्मा श्रावकके व्रतकी धरणहारी, कल्याण आचारविष तत्पर । पापिनी सासूने निकासी है अर तुम भी निकासो तो कौनके शरण जाय ? जस व्याघकी दृष्टित मगी त्रासको प्राप्त भई सती महागहन वनका शरण लेय, तस यह भोली निष्कपट सासूत शकित भई, तुम्हारे शरण आई ह । मानो जेठके सूयकी किरणके सतापत दुखित भई, महावृक्षरूप जो तुम सो तिहारे आश्रय आई ह । यह गरीबिनी, विह्वल है आत्मा जाका, अपवादरूप जो आपात ताकर पीडित, तिहारे आश्रय भी साता न पाव तो कहा पाव ? मानो स्वगत लक्ष्मी ही आई ह । द्वारपालने रोकी सो अत्यन्त लज्जाको प्राप्त भई । विलखि करि माथा ढाकि द्वार खडी ह । आपके स्नेहकर सदा लाडली ह, सो तुम दया करो । यह निर्दोष है, मन्दिरमाहि प्रवेश करावो । अर केतुमतीकी क्रूरता पृथ्वीविष प्रसिद्ध ह । ऐसे न्यायरूप वचन महोत्साह

सामतने कहे, सो राजा कान न धर । जस कमलोके पत्रनिविष जलकी बू ब न ठहर तैस राजाके चित्तमें यह बात न ठहरी । राजा सामतसो कहते भए—यह सखी बसतमाला सदा याके पास रह, अर याही के स्नेहक योगत कदाचित सत्य न कह तो हमको निश्चय कस आव ? यात याके शीलविष सदेह ह, सो याको नगरत निकास देहु । जब यह बात प्रसिद्ध होयगी तो हमारे निमल कुलविष कलक आवगा । जे बडे कुलकी बालिका निमल ह अर महा विनयवती उत्तम चेष्टाकी धरणहारी ह ते पीहर सासुर सवत्र स्तुति करने योग्य ह । जे पुण्याधिकारी बडे पुरुष ज महोत निमल शील पाल ह, ब्रह्मचयको धारण कर ह, अर सव दोषका मूल जो स्त्री तिनको अगीकार नाहीं करै ह ते धन्य ह । ब्रह्मचय समान और कोई व्रत नाहीं, अर स्त्रीके अगीकारमें यह सफल होय ह । जो कुपूत बेटा बेटी होय अर उनके अवगुण पथ्वीविष प्रसिद्ध होय तो पिताका धरतीमें गड जाना होय ह । सबही कुलको लज्जा उपज ह । मेरा मन आज अति दु खित होय रह्या ह, म यह बात पूव अनेकबार सुनी हुती जो यह भरतारके अप्रिय ह, अर वह याहि आखत नाहीं देख ह, सो ताकरि गभकी उत्पत्ति कसे भई, तात यह निश्चयसेती सदोष ह । जो कोई याहि मेरे राज्यमें राखेगा सो मेरा शत्रु ह । ऐसे वचन कहकर राजाने कोपकर जस कोई जान नाहीं, या भाति याको द्वारत निकाल दीनो । सखीसहित दुख की भरी अजनी राजाके निजवगके जहा जहा आश्रयके अर्थि गई, सो आन न दीनो, कपाट दिए, जहा बाप ही क्रोधायमान होय निराकरण कर तहा कुटुम्बकी कसी आशा, वे तो सब राजाके आधीन ह । ऐसा निश्चयकर सबत उदास होय सखीसो कहती भई । आसूवोके समूहकर भीज गया ह अग जाका, हे प्रिये ! यहा सव पाषाणचित्त ह, यहा कसा वास ? तात वनम चाल, अपमानत तो मरना भला । ऐसा कहकर सखीसहित वनको चाली, मानो मगराजत भयभीत हो ह । शीत, उष्ण अर वातके खेद करि महा दुखकरि पीडित वनम बठि महा रुदन करती भई । हाय हाय ! म मदभागिनी दुखदाई जो पूर्वोपार्जित कम ताकरि महाकष्टको प्राप्त भई । कौनके शरण जाऊ, कौन मेरी रक्षा कर, म दुर्भाग्य-

सागरके मध्य कौन कमत पडी ? नाथ मेरा अशुभ कमका प्रेरया कहाते आया ? काहेको गभ रह्या, मेरा दोनो ही ठौर निरादर भया। माताने भी मेरी रक्षा न करी, सो वह कहा कर ? अपने धनी की आज्ञाकारिणी पतिव्रतानिका यही धम ह। अर नाथ मेरा यह वचन कह गया हुता कि तेरे गभ की वद्धित पहिले ही म आऊगा सो हाय नाथ! दयावान होय वह वचन क्यो भूले ? अर सासूने विना परखे मेरा त्याग क्यो किया ? जिनके शीलमें सदेह होय तिनके परखनेके अनेक उपाय है। अर पिता को म बालअवस्था विष अति लाडिली हुती, निरतर गोदमें खिलावते हुते सो विना परखे मेरा निरादर किया, तिनकी एसी बुद्धि क्यो उपजी ? अर मातान मुझे गभमें धारी, प्रतिपालन किया, अब एक बात भी मुखत न निकाली कि इसके गुण दोषका निश्चय कर लेवें। अर भाई जो एक माताके उदरसो उत्पन्न भया हुता, सोहू मा दु खिनीको न राखा सक्या, सब ही कठोरचित्त होय गए। जहा माता पिता भ्राताहीकी यह दशा, तहा काका बाबाके दूर भाई तथा प्रधान सामत कहा कर ? अथवा उन सबका कहा दोष ? मरा जो कमरूप वृक्ष फल्या सो अवश्य भोगना। या भाति अजना विलाप कर, सो सखी भी याके लार विलाप कर। मनत धीय जाता रह्या, अत्यन्त दीनमन होय यह ऊचे स्वरत रुदन कर। सो मगी भी याकी दशा देखा आसू डालवे लागी। बहुत देर तक रोनेत लाल होय गए है नेत्र जाके। तब सखी बसतमाला महाविचक्षण याहि छातीसू लगाय कहती भई—हे स्वामिनी! बहुत रोनेतै क्या लाभ ? जो कम तने उपार्ज्या ह सो अवश्य भोगना ह। सब ही जीवनिके कम आग पीछै लाग रहें है, सो कमके उदयविष शोक कहा ? हे देवी! जे स्वगलोकके देव सकडो अप्सरावोके नेत्रनिकर निरतर अवलोकिए ह, तेहू सुकतके अत होते परम दु ख पाव है। मनमैं चिंतिए कछू और, होय जाय कछु और, जगतके लोक उद्यमम प्रवरत ह तिनको पूर्वोपार्जित कमका उदय ही कारण ह। जो हितकारी वस्तु आय प्राप्त भई सो अशुभकमके उदयत विघटिजाय, अर जो वस्तु मनत अगोचर ह सो आय मिल। कमनिकी गति विचित्र ह। तात बाई! तू गभके खेदकरि पीडित है, वथा क्लेश मत कर, तू

अपना मन दृढ कर। जो तने पूर्वजन्म में कर्म उपारजे हैं तिनके फल टारे न टर, अर तू तो महाबुद्धि मती है तोहि कहा सिखावू ? जो तू न जानती होय तो म कहू। ऐसा कहकर याके नेत्रनिके अपने वस्त्रत आसू पोछे, बहुरि कहती भई—हे देवी! यह स्थानक आश्रय रहित ह, तात उठो, आग चालैं या पहाड के निकट कोई गुफा होय जहा दुष्ट जीवन का प्रवेश न होय। तेरे प्रसूति का समय आया ह सो कएक दिन यत्नसू रहना। तब यह गर्भके भारत जो आकाशके माग चलनेमें ह असमथ ह तो भूमिपर सखीके सग गमन करती महा कष्टकरि पाव धरती भई। कसी ह वनी ? अनेक अजगरनित भरी, दुष्ट जीवनके नादकरि अत्यत भयानक, अति सघन नानाप्रकारके वृक्षनिकरि सूर्यकी किरणका भी सचार नाहीं, जहा सूईके अग्रभाग समान डाभकी अणी अतितीक्ष्ण, जहा ककर बहुत अर माते हाथीनिके समूह अर भीलोके समूह बहुत ह। अर वनीका नाम मातगमालिनी ह, जहा मनकी भी गम्यता नाहीं तो मनुष्यनिकी क् ा गम्यता ? सखी आकाशमागत जायवेको समथ अर यह गर्भके भारकरि समय नाहीं, तात सखी याके प्रेमके बधनसो बधी शरीरकी छाया समान लार लार चाल ह। अजनी वनीको अतिभयानक देखकर काप ह, दिशा भूल गई। तब बसतमाला याको अति व्याकुल जानकर हाथ पकडकर कहती भई— हे स्वामिनी! तू डर मत, मेर पाछ पाछ चली आव।

तब यह सखीके काधेपर हाथ रखकर चली जाय, ज्यो २ डाभकी अणी चुभ त्यो २ खेदखिन्न होय विलाप करती, देहको कष्टतें धारती, जलके नीझरने जे अति तीव वेग सयुक्त बहैं तिनको अति कष्ट त पार उतरती, अपने जे सब स्वजन अति निर्दई तिनका अति चितारकरती, अपन अशुभ कर्मको बार बार निंदती, बेलोको पकड, भयभीत हिरणीकेसे ह नेत्र जाके, अगविष पसेवको धारती, काटोसे वस्त्र लाग २ जाय सो छुडावती, लहूत लाल होयगए ह चरण जाके, शोकरूप अग्निके दाहकरि श्यामताको धरती, पत्र भी हाल तो त्रासको प्राप्त होती, चलायमान ह शरीर जाका, बारबार विश्राम लेती, ताहि सखी निरतर प्रियवाक्य कर धीय बधाव, सो धीरे २ अजनी पहाडकी तलहटीतक आई, तहा आसू भर

बठ गई । सखीसो कहती भई–अब मुझमें एक पग धरनेकी ह शक्ति नाहीं, यहा ही रहूगी, मरण होय तो होय । तब सखी अत्यन्त प्रेमकी भरी महा प्रवीण मनोहर वचननिकरि याको शाति उपजाय नमस्कार कर सकती भई–हे देवी ! देख, यह गुफा नजदीक ही ह, कपाकर इहात उठकर तहा सुखसो तिष्ठो । यहा क्रूर जीव विचर ह, तोको गभकी रक्षा करनी ह, तात हठ मति कर । ऐसा कह्या तब वह आतापकी भरी सखीके वचननिकरि अर सघनवनके भयकरि चलवेको उठी । तब सखी हस्तावलवन देयकर याको विषम भूमित निकासकर गुफाके द्वारपर लेयगई । विना विचारे गुफामें बठनेका भय होय । सो ये दोनो बाहिर खडी विषम पाषाणके उलघवेकर उपज्या ह खेद जिनको, तात बठ गई । तहा दष्टि धर देख्या । कसी ह दष्टि ? श्याम श्वेत आरक्त कमल समान प्रभावको धर । सो एक पवित्र शिलापर विराजे चारणमुनि देखे । जो पल्यकासन धर, अनेक ऋद्धि सयुक्त, निश्चल ह श्वासोच्छवास जिनके, नासिकाके अग्र भागपर धरी ह दष्टि जिनने, शरीर स्तभ समान निश्चल ह, गोदपर धरघा ह जो वामा हाथ ताके ऊपर दाहना हाथ, समुद्र समान गभीर, अनेक उपमासहित विराजमान, आत्मस्वरूपका जो यथाथ स्वभाव जसा जिनशासनविष गाया ह तसा ध्यान करते, समस्त परिग्रहरहित, पवन जसे असगी, आकाश जस निमल, मानो पहाडके शिखर ही ह । सो इन दोनोने देखे । कसे ह वे साधु ? महापराक्रमके धारी महाशाति ज्योतिरूप ह शरीर जिनका । ये दोनो मुनिके समीप गइ । सव दु ख विस्मरण भया । तीन प्रदक्षिणा देय हाथ जोडि नमस्कार किया, मुनि परम बाधव पाए, फूल गए ह नेत्र जिनके । जा समय जो प्राप्ति होनी होय सो होय । तदि ये दोनो हाथ जोड विनीत करती भइ । मुनिके चरणारविंदकी ओर धरे ह अश्रुपातरहित स्थिर नेत्र जिनने । हे भगवान ! हे कल्याणरूप ! हे उत्तम चेष्टाके धरणहारे ! तिहारे शरीरमें कुशल ह ? कसा ह तिहारा देह ? सव तपवत आदि साधननिका मूल कारण ह । हे गुणके सागर ! ऊपरा ऊपर तपकी ह वृद्धि जिनकी, हे महाक्षमावान , शातिभावके धारी, मनइन्द्रियोके जीतनहारे ! तिहारा जो विहार ह सो जीवनक

कल्याणनिमित्त है। तुम सारिखे पुरुष सकल पुरुषनिको कुशलके कारण हैं, सो तिहारा कुशल कहा पूछना। परन्तु यह पूछनेका आचार है, तातैं पूछी है। ऐसा कहि विनयतैं नमीभूत भया है जिनका, सो चुप होय रही अर मुनिके दर्शनतैं सब भय रहित भई।

अथानन्तर मुनि अमृततुल्य परमशांतिके वचन कहते भये—हे कल्याणरूपिणी! हे पुत्री! हमारे कर्मानुसार सब कुशल है। ये सब ही जीव अपने अपने कर्मोंका फल भोगवै है। देखो कर्मनिकी विचित्रता यह राजा महेंद्रकी पुत्री अपराधरहित कुटुम्बके लोगनिने काढी है। सो मुनि बड़े ज्ञानी, विना कहे सब वृत्तांत के जाननहारे, तिनको नमस्कारकर बसंतमाला पूछती भई—हे नाथ! कौन कारणतैं भरतार यासो बहुत दिन उदास रहे? बहुरि कौन कारण अनुरागी भए? अर यह महासुखयोग्य बनविषै कौन कारणतैं दुखको प्राप्त भई? कौन मंदभागी याके गर्भमें आया जाकरि याको जीवनेका संशय भया? तबि स्वामी अमितिगति तीन ज्ञानके धारक सब वृत्तांत यथार्थ कहते भए। यही महापुरुषोंकी वृत्ति है जो पराया उपकार करैं। बसंतमालासो कहै है—हे पुत्री! याके गर्भविषै उत्तम बालक आया है, सो प्रथम तो ताके भव सुनि, बहुरि जा कारणतैं यह अंजनी ऐसे दुखको प्राप्त भई जो पूर्व भवमें पापका आचरण किया सो सुन।

जम्बूद्वीपमें भरत नामा क्षेत्र, तहां प्रियनंदी नामा गृहस्थ, ताके जाया नामा स्त्री, अर दमयंत नामा पुत्र हुता, सो महा सौभाग्य संयुक्त कल्याणरूप जे दया क्षमा शील संतोषादि गुण तेई हैं आभूषण जाके। एक समय बसंतऋतुमें नंदनवन तुल्य जो वन तहां नगरके लोग क्रीडाको गए। दमयंतने भी अपने मित्रों सहित बहुत क्रीडा करी, अबीरादि सुगंधनिकरि सुगंधित है शरीर जाका, अर कुंडलादि आभूषणनिकरि शोभायमान सो तानै ताही समयविषै महामुनि देखे। कैसे हैं मुनि? अम्बर कहिए आकाश सो ही है अम्बर कहिए वस्त्र जिनके, तप ही है धन जिनका, अर ध्यान स्वाध्याय आदि जे क्रिया तिनविषै उद्यमी। सो यह दमयंत महा देदीप्यमान क्रीडा करते जे अपने मित्र तिनको छोड

मुनियोकी मडलीमे गया। बदना कर धमका व्याख्यान सुन सम्यकदशन सयुक्तभया, श्रावक व्रत धारे। नाना प्रकारके नियम अगीकार किये। एकदिन जे सप्त गुण दाताके अर नवधा भक्ति तिनकरि सयुक्त होय साधुनिको आहार दान दिया। कईएक दिनविषै समाधिमरणकर स्वगलोकको प्राप्त भया, नियमके अर दानके प्रभावत अदभुत भोग भोगता भया। सकडो देवागनानिके नेत्रनिकी काति ही भई नीलकमल, तिनकी मालाकरि अचित चिरकाल स्वगके सुख भोगे। बहुरि स्वगत चयकरि जबूद्वीप में मगाकनामा नगरमें हरिचन्द्र नामा राजा, ताको प्रियगुलक्ष्मी राणी, ताक सिहचन्द्र नामा पुत्र भया। अनेक कला गुणनिविषै प्रवीण अनेक विवेकियोके हृदयमें बस। तहा भी देवोके से भोग किए, साधुवोकी सेवा करी। बहुरि समाधिमरण कर देवलोक गया। तहा मनवाछित अति उत्कृष्ट सुख पाए। कसा है वह ? देव देवियोके जे वदन, तेई भए कमल, तिनके जो वन तिनके प्रफुल्लित करनेको सूय समान है। बहुरि तहात चयकरि या भरतक्षेत्रविषै विजयाध गिरिपर अहनपुर नगरमें राजा सुकठ रानी कनकोदरी ताक सिहबाहन नामा पुत्र भया। अपने गुणनिकरि खचा है समस्त प्राणियोका मन जान। तहा देवोकेसे भोग भोगे। अप्सरा समान स्त्री तिनके मनके चोर। भावाथ—अतिरूपवान अति गुणवान सो बहुत दिन राज्य किया। श्रीविमलनाथजी के समोसरणम उपज्या है आत्मज्ञान अर ससारत वराग्य जिनको, सो लक्ष्मीबाहन नामा पुत्रको राज्य देय, ससारको असार जानि, लक्ष्मी-तिलक मुनिके शिष्य भए। श्रीवीतराग देवका भाख्या महाव्रतरूप यतिका धम अगीकार किया। अनित्यादि द्वादश अनुप्रेक्षाका चितवनकरि ज्ञानचेतनारूप भए। जो तप काहू पुरुषत न बन सो तप किया। रत्नत्रयरूप अपने निजभावनिविषै निश्चल भए। तत्वज्ञानरूप आत्माके अनुभव विषै मग्न भए। तपके प्रभावत अनेक ऋद्धि उपजी। सव वात समथ, जिनके शरीरको स्पशकरि पवन आव सो प्राणियोके अनेक रोग दुःख हर, परन्त आप कम निजराके कारण बाईस परीषह सहते भए। बहुरि आयुपूणकर धमध्यानके प्रभावत ज्योतिषचक्रको उलघकर सातवा लातव नामा जो स्वग तहा

बडी ऋद्धिके धारी देव भए। चाहे जसा रूप कर, चाहे जहा जाय, जो वचनकरि कहनेमें न आव। ऐसे अद्भुत सुख भोगे परन्तु स्वर्गके सुखविषे मग्न न भए। परमधामकी ह इच्छा जिनको, तहाते चयकरि या अजनाकी कुक्षिविषे आए हैं सो महा परमसुखके भाजन हैं। बहुरि देह न धारेंगे, अविनाशी सुखको प्राप्त होवेंगे, चरम शरीरी ह। यह तो पुत्रके गर्भमें आवनेका वृत्तात कह्या। अब हे कल्याणचेष्टिनी! यान जिसकारणत पतिका विरह अर कुटुम्बत निरादर पाया सो वृत्तात सुनो।

इस अजनीसुन्दरीने पूर्वभवमें देवाधिदेव श्रीजिनेंद्रदेवकी प्रतिमा पटराणी पदके अभिमानकरि सौकन (सौत) के ऊपर क्रोधकर मदिरत बाहिर निकासी। ताही समय एक श्रीआर्यिका याके घर आहारको आई हुती, तपकर पृथ्वीपर प्रसिद्ध हुती, सो याके द्वारा श्रीजीकी मूर्तिका अविनय देख पारणा न किया। पीछे चाली, अर याको अज्ञानरूप जान महा दयावती होय उपदेश देती भई। जे साधुजन ह ते सबका भला ही चाह ह। जीवनिके समझावनेके निमित्त बिना पूछे ही साधुजन श्रीगुरु की आज्ञात धर्मोपदेश देनेको प्रवरत ह। ऐसा जानकर वह सयमश्री शील–सयमरूप आभूषणकी धर णहारी पटराणीको महामाधुर्य अनुपम वचन कहती भई–हे भोरी! सुन, तू राजाकी पटराणी ह, अर महारूपवती ह राजाका बहुत सन्मान है, भोगनिका स्थानक ह शरीर तेरा, सो पूर्वोपार्जित पुण्यका फल ह। या चतुर्गतिविषे जीव भ्रम ह, महादुःख भोग ह। कबहूक अनतकालविषे पुण्यके योगत मनुष्य देह पाव ह। हे शोभने! मनुष्यदेह काहू पुण्यके योगत पाई ह, तात यह निद्य आचार तू मत कर, योग्य क्रिया करनेके योग्य ह। यह मनुष्यदेह पाय जो सुकृत न कर ह सो हाथमे आया रत्न खोव ह। मन तथा वचन तथा कायसे जो शुभ क्रियाका साधन ह, सोई श्रेष्ठ ह, अर अशुभ क्रियाका साधन ह सो दुःखका मूल ह। जे अपने कल्याणके अर्थि सुकृतविषे प्रवरत ह, तेई उत्तम ह। यह लोक महानिंद्य अनाचारका भर्या ह। जे सत ससारसागरत आप तिर ह औरनिको तार ह, भव्यजीवोको धर्मका उपदेश देय ह तिन समान और उत्तम नाहीं, ते कृतार्थ ह। तिन मुनिके नाथ, सब जगतके नाथ धर्मचक्री

श्रीअरहत देव तिनके प्रतिबिबका जे अविनय कर ह ते अज्ञानी अनेक भवविष कुगतिके महादुख पाव ह। सो वे दु ख कौन वणन कर सक ? यद्यपि श्रीवीतरागदेव रागद्वेषरहित हैं, जे सेवा कर तिनत प्रसन्न नाहीं, अर जे निदा कर तिनत द्वेष नाहीं, महामध्यम भावको धार ह। परन्तु जे जीव सेवा कर ते स्वग-मोक्ष पाव ह। जे निदा कर ते नरक निगोद पाव। काहेत ? जीवोके शुभ अशुभ परणामनित सुखदु ख की उत्पत्ति होय ह। जस अग्निके सेवनत शीतका निवारण होय ह अर खानपानत क्षुधा तषाकी पीडा मिट ह, तस जिनराजक अचनत स्वयमेव ही सुख होय ह अर अविनयत परमदुख होय ह। अर हे शोभने ! जे ससारविष दुख दीख ह ते सव पापके फल ह। अर जे सुख ह ते धमके फल है। सो तू पूवपुण्यके प्रभावत महाराजकी पटराणी भई, अर महासपत्तिवती भई, अर अदभुत कायका करण-हारा तरा पुत्र ह। अब तू ऐसा कर जो सुख पाव। अपना कल्याणकर मेरे वचनतैं। हे भव्ये ! सूयके अर नेत्रके होतेसते तू कूपमे मत पडे। जो ऐसे कम करेगी तो घोर नरकमें पडेगी। देवगुरुशास्त्रका अविनय करना अनत दु खका कारण ह। अर ऐसे दोष देखे जो म तोहि न सबोधू तो मोहि प्रमाद का दोष लाग ह। तात तेरे कल्याण निमित्त धर्मोपदेश दिया ह। जब श्रीआर्यिकाजीने ऐसा कह्या तदि यह नरकत डरी। सम्यग्दशन धारण किया, श्राविकाके वत आदरे, श्रीजीकी प्रतिमा मदिरविष पधराई, बहुत विधानत अष्टप्रकारकी पूजा कराई। या भाति राणी कनकोदरीको आर्यिका धमका उपदेश देय अपने स्थानकको गई। अर वह कनकोदरी श्रीसवज्ञदेवका धम आराधकर समाधिमरण कर स्वगलोकमें गई। तहा महासुख भोगे, अर स्वगत चयकर राजा महेन्द्रकी राणी जो मनोवेगा
ताके अजनासुन्दरी नामा तू पुत्री भई। सो पुण्यके प्रभावत राजकुलविष उपजी, उत्तम वर पाया, अर जो जिनेन्द्रदेवकी प्रतिमाको एकक्षण मदिरके बाहिर राखो ताक पापकरि धनीका वियोग अर कुटुम्बत पराभव पाया। विवाहके तीनदिन पहिले पवनजय प्रछन्नरूप आए रात्रिमें तिहारे झरोखे-विष प्रहस्तमित्रके सहित बठे हुते। सो तासमय मिश्रकेशी सखीने विद्युत्प्रभकी स्तुति करी, अर पवनजय

की निंदा करी। ताकारण पवनजय द्वेषको प्राप्त भए। बहुरि युद्धके अर्थ घरत चाल, मानसरोवर पर डेरा किया, तहा चकवीका विरह देखकर करुणा उपजी। सो करुणा ही मानो सखीका रूप होय कुमारको सुन्दरीके समीप लाई। तब ताकरि गर्भ रह्या। बहुरि कुमार प्रछन्न ही पिताकी आज्ञाके साधिवके अर्थि रावणके निकट गए। ऐसा कहकर फिर मुनि अजना सो कहते भए महा करुणाभाव कर अमतरूप वचन गिरते भए—हे बालिके! तू कमके उदयकरि ऐसे दुःखको प्राप्त भई तात बहुरि ऐसा निद्यकम मत करना। ससारसमुद्रके तारणहारे जे जिनेन्द्रदेव तिनकी भक्ति कर। या पृथ्वीविष जो सुख ह ते सव जिन भक्तिके प्रतापत होय ह। ऐसे अपने भव सुनकर अजना विस्मयको प्राप्त भई। अर अपने किए जे कम तिनको निद्यती अति पश्चाताप करती भई। तब मुनिने कही—हे पुत्री! अब तू अपनी शक्तिप्रमाण नियम लेहु, अर जिनधमका सेवन कर, यति वतियोकी उपासना कर। तन ऐसे कम किए थे जो अधोगतिको जाती, परन्तु सयमश्री आर्याने कपाकर धमका उपदेश दिया सो हस्तावलबन देय कुगतिके पतनत बचाई। अर यह बालक तेरे गर्भविष आया ह सो महा कल्याणका भाजन ह। या पुत्र के प्रभावतैं तू परमसुख पावेगी। तेरा पुत्र अखडवीय ह, देवनिहूकरि जीत्या न जाय। अर अब थोडे ही दिनमें तेरा तेरे भरतारतैं मिलाप होयगा। तातैं हे भव्ये! तू अपने चित्तमें खेद मत कर, प्रमावरहित जो शुभ क्रिया ताम उद्यमी होहु। ये मुनिके वचन सुन अजनी अर बसतमाला बहुत प्रसन्न भइ, अर बारबार मुनिको नमस्कार किया, फूल गए ह नेत्रकमल जिनके। मुनिराजने इनको धर्मोपदेश देय आकाशमार्गतैं विहार किया। सो निमल ह चित्त जिनका ऐसे सयमिनको यही उचित ह कि जो निजन स्थानक होय तहाँ निवास कर, सो भी अल्प ही रह। या प्रकार निजभव सुन अजना पाप कमतैं अति डरी, अर धमविष सावधान भई। वह गुफा मुनिके विराजवेतैं पवित्र भई हुती सो तहाँ अजनी बसतमालासहित पुत्रका प्रसूति समय देखकर रही।

गौतम स्वामी राजा श्रेणिकतैं कह ह—हे श्रेणिक! अब वह महेन्द्रकी पुत्री गुफामें रह। बसतमाला

विद्याबलकरि पूर्ण, विद्याके प्रभावकरि खानपान आदि याके मनवाछित सव सामग्री कर । अथानतर अजना पतिव्रता पिया रहित वनविष अकेली, सो मानो सूय याका दुख देख न सक्या सो अस्त होने लग्या । मानो याके दुखत सूयहूको किरण मद होयगई, सूय अस्त होय गया, अर पहाडके शिखर अर
५८ वक्षनिक अग्रभागमें जो किरणोका उद्योत रह्या था सो भी सकोच लिया ।
२७५ अथानन्तर मध्याकर क्षणएक आकाशमडल लाल होय गया, सो मानो अब क्रोधका भरया सिंह आवेगा, ताके लाल नेत्रनिको ललाई फली ह । बहुरि होनहार जो उपसग ताकी प्रेरी शीघ ही अध कारका स्वरूप रात्रि प्रकट भई, मानो राक्षसिनी ही रसातलत नोसरी ह । पक्षी सध्या समय चिग चगाटकर गहन वन में शब्दरहित वक्षनिके अग्रभागपर तिष्ठे, मानो रात्रिको श्यामरूप डरावनी देख भयकर चुप होय रह । शिवा कहिए स्यालिनी तिनके भयानक शब्द प्रवरत सो मानो होनहार उप सगके ढोल ही बाज ह ।

अथानन्तर गुफाके मुख सिंह आया, कसा ह सिंह ? विदारे ह हाथियोके जे कु भस्थल, तिनके रुधिर कर लाल होय रह ह केश जाके, अर काल समान क्रूर भकुटीको धर, अर महा विषम शब्द करता, जिसके शब्दकरि बन गू जि रह्या ह, अर प्रलयकालकी अग्निकी ज्वाला समान जीभको मुखरूप गुफात काढता, कसो ह जीभ ? महाकुटिल ह, अनेक प्राणियोकी नाश करनहारी, बहुरि जीवनिक खचनेको जाकी अकुश समान श्याम जीभ, तीक्षण दाढ, महा कुटिल ह रौद्र सबनिको भयकर ह, अर जाके नेत्र अतित्रासके कारण ऊगता जो प्रलयकालका सूय ता समान तेजको धर, दिशाओके समूहको रग रूप २७५
कर वह सिंह पू छको अणीको मस्तक ऊपर धरे, नखकी अणीत विदारी ह धरती जान, पहाडके तट समान उरस्थल, अर प्रबल ह जाघ जाकी, मानो वह सिंह मत्युका स्वरूप दत्य समान, अनेक प्राणि-योका क्षय करणहारा, अनकको भी अतक समान, अग्नित भी अधिक प्रज्वलित, ऐसे डरावने सिंह को देखकर वनके सब जीव डरे । ताके नादकर सब गुफा गाज उठी, सो मानो भयकरि पहाड रोवने

लाग्या। अर याका निठुर शब्द वनके सब जीवोंके काननिको ऐसा बुरा लाग्या मानो भयानक मुद गरका घात ही है। जाके चिरमी समान लाल नेत्र। सो ताके भयकरि हिरण चित्राम कैसे होय रहे, अर मदोन्मत्त गजनिका मद जाता रह्या। सब ही पशुगण अपने अपने ताइ बचावनेके लिए भयकर कम्पायमान वृक्षोंके आसर होय रहे। नाहरकी ध्वनि सुन अंजनाने ऐसी प्रतिज्ञा करी जो उपसर्गते मेरा शरीर जाय तो मेरे अनशनव्रत है, उपसर्ग टरे भोजन लेना। अर सखी बसतमाला खड्ग है हाथमें जाके, कबहू तो आकाशविषै जाय, कबहू भूमिपर आवै, अतिव्याकुल भई पक्षीनिकी नाइ भ्रमै। ये दोनो महा भयवान, कम्पायमान है हृदय जिनका। तब गुफाका निवासी जो मणिचूल नामा गन्धर्वदेव, तासू ताकी रत्नचूल नामा स्त्री महादयावती कहती भई—हे देव! देखो ये दोनो स्त्री सिहत महाभय भीत है, अर अति विह्वल है, तुम इनकी रक्षा करो। तब गधर्वदेवको दया उपजी, तत्काल विक्रिया करि अष्टापदका स्वरूप रच्या! सो सिंहका अर अष्टापदका महा भयकर शब्द होता भया। सो अंजनी हृदयमें भगवानका ध्यान धरती भई, अर बसतमाला सारसकी नाई विलाप करै, हाय अंजना! पहिले तो तू धनीके अप्रिय दुर्भागिनी भई, बहुरि काहूइक प्रकार धनीका आगमन भया तो तातै तोको गर्भ रह्या, सो सासने विना समझे घरतै निकासी बहुरि माता पितानेहू न राखी, सो महा भयानक वनविषै आई। तहा पुण्यके योगतै मुनिका दर्शन भया, मुनिने धीर्य बधाय पूर्वभव कहे, धर्मोपदेश देय आकाशके मार्ग गए, अर तू प्रसूतिकेअर्थि गुफाविषै रही सो अब या सिंहके मुखमें प्रवेश करेगी। हाय! हाय! राजपुत्री निर्जनवनविषै मरणको प्राप्त होय है, अब या वनके देवता दयाकर रक्षा करो। मुनिने कही हुती कि तेरा सकल दुःख गया, सो कहा मुनिहूके वचन अन्यथा होय है? या भांति विलाप करती बसतमाला हिंडोल झूलनेकी नाइ एक स्थल न रहै, क्षणविषै सुन्दरीके समीप आवै क्षणविषै बाहिर जावै।

अथानन्तर वह गुफाका गधर्वदेव जो अष्टापदका स्वरूप धरि आया हुता, ताने सिंहके पजोकी

वीनी। तब सिंह भाग्या, अर अष्टापद सिंहको भजाय कर निजस्थानको गया। यह स्वप्नसमान सिंह और अष्टापदके युद्धका चरित्र देख बसंतमाला गुफामें अंजनी सुंदरीके समीप आई, पल्लवों से भी अति कोमल जो हाथ तिनकरि विश्वासती भई। मानो नवा जन्म पाया। हितका संभाषण करती भई। सो एक वर्ष बराबर जाय है रात्रि जिनको ऐसो यह दोनो कभी तो कुटुम्बके निर्दईपनेकी कथा करें, कभी धर्मकथा करें। अष्टापदने सिंहको ऐसें भगाया जैसें हाथीको सिंह भगावे अर सर्पको गरुड भगावे। बहुरि वह गंधर्वदेव बहुत आनंदरूप होय गावने लग्या सो ऐसा गावता भया, जो देवोंके भी मनको मोहै तो मनुष्योंकी कहा बात? अर्धरात्रिके समय शब्दरहित होयगए तब यह गावता भया, अर बारबार वीणको अति रागते बजावता भया, और भी तारबाजे बजावत भया, अर मंजीरादिक बजावता भया, मृदंगादिक बजावता भया, बांसुरी आदिक फूंकके बाजे बजावता भया। अर सप्तस्वरोंमें गाया तिनके नाम निषाद १, ऋषभ २, गांधार ३, षडज ४, मध्यम ५, धैवत ६, पंचम ७। इन सप्तस्वरो के तीन ग्राम शीघ्र मध्य विलंबित, अर इक्कीस मूर्छना हैं, सो गंधर्वोंमें जे बडे देव हैं तिनके समान गान किया। या गानविद्यामें गंधर्वदेव प्रसिद्ध हैं। उंचास स्थानक रागके हैं सो सब ही गंधर्वदेव जानें हैं। भगवान श्रीजिनेंद्रदेवके गुण सुंदर अक्षरोंमें गाए। मैं श्रीअरिहंत देवको भक्ति कर वंदूं हूं। कैसे हैं भगवान? देव अर दैत्योंकर पूजनीक हैं। देव कहिये स्वर्गवासी, दैत्य कहिए ज्योतिषी व्यंतर अर भवनवासी, ये चतुरनिकायके देव हैं, सो भगवान सब देवोंके देव हैं, जिनको सुरनाय विद्याधर अष्ट द्रव्यतें पूजें हैं। बहुरि कैसे हैं? तीन भुवनमें अति प्रवीन हैं, अर पवित्र हैं अतिशय जिनके, ऐसे जे श्री मुनिसुव्रतनाथ तिनके चरणयुगलमें भक्ति पूर्वक नमस्कार करूं हूं, जिनके चरणारविंदके नखनिकी कांति इंद्रके मुकुटकी रत्नोंकी ज्योतिको प्रकाश करै है। ऐसें गान गंधर्वदेवने गाए। सो बसंतमाला अतिप्रसन्न भई। ऐसे राग कभी सुने नाहीं थे, सो विस्मयकर व्याप्त भया है मन जाका, वा गीतकी अतिप्रशंसा करती भई। धन्य यह गीत काहूने अतिमनोहर गाए, मेरा हृदय अमृतकर आच्छादित

किया। अजनी को बसतमाला कहती भई—यह कोई दयावान देव है जान अष्टापदका रूपधरि सिंहको भगाया, अर हमारी रक्षा करी, अर यह मनोहर राग याहीन अपने आनन्दके अर्थि गाए है। हे देवी! हे शोभन, हे शीलवती! तेरी दया सब ही कर। जे भव्य जीव ह तिनके महाभयकर वनमें देव मित्र होय ह। या उपसगके विनाशत निश्चय तेरा पतिसो मिलाप होयगा, अर तेरे पुत्र अदभुत पराक्रमी होयगा। मुनिके वचन अयथा न होय मो मुनिके ध्यानकर जो पवित्र गुफा ताविष श्रीमुनिसुव्रतनाथ की प्रतिमा पधराय दोनो सुगध द्रव्यनित पूजा करती भइ। दोनोके चित्तविष यह विचार कि प्रसूति सुखत होय। बसतमाला नानाभाति अजनीके चित्तको प्रसन्न कर ह, अर कहती भई कि हे देवी! मानो यह वन अर गिरि तिहारे पधारनेत परम हषको प्राप्त भया ह, सो नीझरनेके प्रवाहकर यह पवत मानो हस ही ह। अर यह वनके वक्ष फलोके भारत नमीभूत लहलहाट कर ह। कोमल ह पल्लव जिनके, बिखर रहे ह फूल जिनके, सो मानो हषको प्राप्त भए ह। अर जे मयूर सूवा मना कोकिला दिक मिष्ट शब्द कर रहे ह सो मानो वन पहाडत वचनालाप कर ह। पवत नानाप्रकारकी जे धातु तिनकी ह खान जहा, अर सघनवक्षोक जे समूह सो इस पवतरूप राजाके सुन्दर वस्त्र ह, अर यहाँ नानाप्रकारके रत्न ह सोई या गिरिके आभूषण भए। अर या पवतमे भली—भली गुफा ह अर यहाँ अनेक जातिके सुगध पुष्प ह, अर या पवत ऊपर बडे बडे सरोवर ह तिनमें सुगध कमल फूल रहे ह। तेरा मुख महासुन्दर अनुपम सो चन्द्रमाकी और कमलकी उपमाको जीत ह। हे कल्याणरूपिणी! चिताके वश मति होहु, धीय धर, या वनमें सब कल्याण होयगा, देव सेवा करेंगे। पुण्याधिकारिनी तेरा शरीर निष्पाप ह, हषत पक्षी शब्द कर ह सो मानो तेरी प्रशसा ही करे ह। यह वक्ष शीतल मद सुगधके प्रेरे पत्रोके लहलहाटत मानो तेरे विराजवे करि महाहषको प्राप्त भए नत्य ही कर ह। अब प्रभातका समय भया ह, पहले तो आरक्त सध्या भई सो मानो सूयने तरी सेवा निमित्त सखी पठाई। अर अब सूय भी तेरा दशन करनेके अर्थि मानो उदय होनेको उद्यमी भया ह। यह प्रसन्न करनेकी

बात बसतमालान जब कही तब अजनी सुदरी कहती भई—हे सखी ! तोहि होते सते मेरे निकट सब कुटुम्ब ह अर यह वन ही तेरे प्रसादत नगर ह। जो या प्राणीको आपदाम सहाय कर ह सो ही परम बाधव ह। अर जो बाधव दु खदाता ह सो ही परम शत्रु ह। या भाति परस्पर मिष्ट सभाषण करती ये दोनो गुफाम रह, श्रीमुनिसुव्रतनाथकी प्रतिमाका सेवन पूजन कर। विद्याके प्रभावत बसतमाला खान पान आदि बडी विधिसेती सब सामग्री कर। वह गधवदेव सब प्रकार इनकी दुष्ट जीवनित रक्षा कर, अर निरतर भक्तित भगवानक अनेक गुण नानाप्रकारके राग रचनाकरि गाव।

अथानतर अजनीके प्रसूतिका समय आया तब बसतमाला से कहती भई—हे सखी ! आज मेरे कछु व्याकुलता ह। तब बसतमाला बोली—ह शोभने ! तेरे प्रसूतिका समय ह, तू आनन्दको प्राप्त होहु। तब याके लिए कोमल पल्लवोकी सेज रची। तापर याक पुत्रका जन्म भया। जस पूव दिशा सूयको प्रकट कर तस यह हनुमानको प्रकट करती भई। पुत्रके जन्मत गुफाका अधकार जाता रह्या, प्रकाशरूप होय गई। मानो सुवणमई ही भई। तदि अजनी पुत्रको उरसो लगाय दीनताके वचन कहती भई कि—हे पुत्र ! तू गहन वनविष उत्पन्न भया, तेरे जन्मका उत्सव कसे करू ? जो तेरा दादेके तथा नानाके घर जन्म होता तो जन्मका बडा उत्सव होता। तेरा मुखरूपचद्रमाके देखवेत कौनको आनद न होय, म कहा करू ? मदभागिनी सब वस्तु रहित हू। देव कहिए पूर्वोपार्जित कमने मोहि दु ख दायिनी दशाको प्राप्त करी, जो म कछु करनेको समथ नाही हू, परन्तु प्राणीनिको सब वस्तुत दीर्घायु होना दुलभ ह। सो हे पुत्र ! तू चिरजीव हो, तू ह तो मेरे सब ह। यह प्राणोको हरणहारा २७१
महा गहन वन ह, याम जो म जीवू हू सो तो तेरे ही पुण्यके प्रभावत। ऐसे दीनताके वचन अजनी के मुखत सुनकरि बसतमाला कहती भई कि—हे देवी ! तू कल्याणपूण ह ऐसा पुत्र पाया। यह सुन्दर लक्षण शुभरूप दीख ह, बडी ऋद्धिका धारी होयगा। तेरे पुत्रके उत्सवत मानो यह बेलरूप वनिता नृत्य कर ह, चलायमान ह, कोमल पल्लव जिनके अर जो भ्रमर गुजार कर ह सो मानो सगीत कर

है। यह बालक पूर्ण तेज है, सो याके प्रभावकरि तेरे सकल कल्याण होयगे। तू वथा चिंतावती मत हो। या भांति इन दोऊनिके वचनालाप होते भए।

अथानन्तर बसंतमालाने आकाशमें सूर्यके तेज समान प्रकाशरूप एक ऊंचा विमान देख्या, सो देख कर स्वामिनीसो कह्या। तब वह शंका कर विलाप करती भई, यह कोई निःकारण वैरी पुत्रको ले जायगा अथवा मेरा कोई भाई है। तिनके विलाप सुन विद्याधरने विमान थांभ्या, दया संयुक्त आकाशतें उतरया, गुफाके द्वार पर विमानको थांभि महा नीतिवान, महा विनयवान शंकाको धरता हुवा स्त्री सहित भीतर प्रवेश किया। तब बसंतमालाने देखकरि आदर किया। यह शुद्ध मन विनयतें बैठ्या, और क्षणएक बैठ करि महामिष्ट अर गंभीरवाणी कहकर बसंतमालाको पूछता भया। ऐसे गम्भीर वचन कहता भया मानो मयूरनिको हर्षित करता मेघ ही गरज्या है। सुमर्यादा कहिए मर्यादाकी धरणहारी यह बाई कौनकी बेटी, कौनके परणी, कौन कारणतें महावनमें रहै है। यह बड़े घरकी पुत्री है, कौन कारणतें सब कुटुम्बतें रहित भई है? अथवा या लोकविषै रागद्वेष रहित जे उत्तम जीव हैं तिनके पूर्व कर्मोंके प्रेरे निःकारण वैरी होय है। तदि बसंतमाला दुःखके भारकरि रुकगया है कंठ जाका, आंसू डारती नीचो है दृष्टि जाकी, कष्टकर वचन कहती भई—महानुभाव! तिहारे वचनहीतें तिहारे मनकी शुद्धता जानी जाय है। जैसे रोग और मृत्युका मूल जो विषवृक्ष ताकी छायाहू सुन्दर न होय, अर जैसे दाहके नाशका मूल जो चन्दनका वृक्ष ताकी छाया भी सुंदर लागै है, सो तुम सारिखे जे गुणवान पुरुष हैं सो शुद्धभाव प्रकट करनके स्थानक हैं। आप बड़े ही दयालु हो। यदि तिहारे याके दुःख सुनवेकी इच्छा है तो सुनहु मैं कहूं हूं। तुम सारिखे बड़े पुरुषनिको कह्या संता दुःख निवृत्त होय है। तुम दुःखहरी पुरुष हो, तिहारा यही स्वभाव ही है जो आपदाविषै सहाय करो। सो मैं कहूं सुनहु। यह अंजनी सुन्दरी राजा महेंद्रकी पुत्री है। वह राजा पृथ्वीपर प्रसिद्ध महा यशवान नीतिवान निर्मल स्वभाव है। और राजा प्रह्लादका पुत्र पवनंजय गुणोंका सागर ताकी प्राणहूतें

प्यारी यह स्त्री है। सो पवनंजय एक समय बापकी आज्ञातैं आप तो रावणके निकट वरुणसों युद्धके अर्थि विदा होय चाले हुते सो मानसरोवरतैं रात्रिको याके महलमैं गोप्य आए। तातैं याको गर्भ रह्या, सो याकी सासूका क्रूर स्वभाव दयारहित महामूर्ख था ही, वाके चित्त में गर्भका भ्रम उपज्या। तब वान याको पिताके घर पठाई। यह सब दोषरहित महासती शीलवती निर्विकार है, सो पिताने भी अकीर्तिके भयतैं न राखी। जे सज्जन पुरुष हैं ते झूठे भी दोषतैं डरे हैं। यह बडे कुलकी बालिका सब आलंबन रहित या वनविषै मृगीसमान रहै है। मैं याकी सेवा करूं हूं। इनके कुलक्रमतैं हम आज्ञाकारी सेवक हैं, इतबारी हैं, अर कृपापात्र हैं। सो यह आज या वनविषै प्रसूति भई है। यह वन नाना उपसर्गका निवास है। न जानिए कैसे याको सुख होयगा? हे राजन! यह याका वृत्तांत संक्षेपतैं तुम सो कह्या, अर सम्पूर्ण दुःख कहांतक कहूं? या भांति स्नेहकरि पूरित जो बसंतमालाके हृदयका राग सो अंजनीके तापरूप अग्नितैं पिघल्या संता अंगमें न समाया, सो मानो बसंतमालाके वचन द्वारकरि बाहिर निकस्या। तब वह राजा प्रतिसूर्य हनूरुहनामद्वीपका स्वामी बसंतमालासूं कहता भया—हे भव्ये! मैं राजा चित्रभानु अर राणी सुंदरमालिनीका पुत्र हूं, यह अंजनी मेरी भानजी है। मैंने बहुत दिनमें देखी सो पिछानी नाहीं। ऐसा कहकर अंजनीको बालावस्थातैं लेकर सकल वृत्तांत कहकर गदगद वाणीकर वचनालापकर आंसू डालता भया। तब पूर्ण वृत्तांत कहिनेतैं अंजनीने याको मामा जान गले लागि बहुत रुदन किया। सो मानो सकल दुःख रुदनसहित निकस गया। यह जगतकी रीति है हितुकै देख अश्रुपात पडै है। वह राजा भी रुदन करने लाग्या अर ताकी रानी भी रोवने लागी। बसंतमालाने भी अति रुदन किया। इन सबके रुदनतैं गुफा गुंजार करती भई, सो मानो पर्वतने भी रुदन किया। जलके जे नीझरने, तेई भए अश्रुपात, तिनतैं सब वन शब्दमई होयगया। वनके जीव जे मृगादि सो भी रुदन करते भए। तदि राजा प्रतिसूर्यने जलतैं अंजनीका मुख प्रक्षालन कराया अर आप भी जलतैं मुख पखाल्या। वन हू शब्द रहित होयगया। मानो इनकी वार्ता सुनना चाहै है। अंजनी प्रति

सूयकी स्त्रीत सम्भाषण करती भई। सो बडोकी यह रीति ह जो दु खविष हू कतव्यतै न चूकै। बहुरि अजनी मामासो कहती भई —हे पूज्य ! पुत्रका समस्त शुभाशुभ वत्तात ज्योतिषीनित पूछो। तब सावत सर नामा ज्योतिषी लार था ताको पूछ्या। तब ज्योतिषी बोल्या बालकके जन्मकी वेला बतावो। तब बसतमालाने कही आज अधरात्रि गए जन्म भया ह। तब लग्न थाप कर बालकके शुभ लक्षण जान ज्योतिषी कहता भया कि यह बालक मुक्तिका भाजन ह। बहुरि जन्म न धरगा। जो तिहारे मनमें सदेह ह तो म सक्षेपतासो कह हू सो सुन। चत्रवदी अष्टमीकी तिथि ह, अर श्रवण नक्षत्र ह, अर सूय मेषका उच्चस्थानविष बठ्या ह, अर चन्द्रमा वषका ह अर मकरका मगल ह, अर बुध मीनका है अर बहस्पति ककका ह सो उच्च ह। शुक्र तथा शनश्चर दोनो मीनके ह। सूय पूण दष्टिकर शनिको देख ह, अर मगल दश विश्वा सूयको देख ह अर वहस्पति पन्द्रह विश्वा सूयको देख ह। अर सूय वहस्पतिको दश विश्वा देख ह अर चन्द्रमाको पूण दष्टि करि वहस्पति देख ह, अर वहस्पतिको चन्द्रमा देख ह, अर वह स्पति शनिश्चरको पन्द्रहविश्वा देख ह, अर शनिश्चर वहस्पतिको दशविश्वा देखै ह। अर वहस्पति शुक्रको पन्द्रह विश्वा देखै ह अर शुक्र वहस्पतिको पन्द्रह विश्वा देखै ह। याकै सब ही ग्रह बलवान बठ ह। सूय और मगल दोनो याका अदभुत राज्य निरूपण कर ह। अर वहस्पति अर शनि मुक्ति का देनहारा जो योगी द्रपद निणय कर ह। जो एक वहस्पति ही उच्चस्थान बठ्या होय तो सब कल्याणके प्राप्तिका कारण ह। अर ब्रह्मनामा योग ह, अर मुहूत शुभ ह, सो अविनाशी सुखका समागम याके होयगा। या भाति सब ही ग्रह अति बलवान बठे ह, सो सब दोषरहित यह होयगा। ऐसा ज्योतिषीने जब कह्या तब प्रतिसूयने ताको बहुत दान दिया अर भानजीको अतिहष उपजाया अर कही कि—हे वत्से ! अब हम सब हनूरुहद्वीपको चाल। तहा बालकका जन्मोत्सव भली भाति

१ नोट—मूलग्रन्थमें नक्षत्रादि दूसरे प्रकार वणन किए हैं परन्तु हम नही समझ सकते कि यह ग्रह ठीक हैं या मूल ग्रन्थके ठीक हैं। इसकारण हमने भाषाग्रन्थके मुजिब ही रक्खा है मूल ग्रन्थके माफिक ग्रहादिकको भी ग्रन्थके अन्तमे हम लिखगे। बुद्धिमान विचार लेवें।

होयगा। तदि अंजना भगवानकी वंदना कर पुत्रको गोदीमें लेय, गुफाका अधिपति जो वह गंधर्वदेव तासो बारम्बार क्षमा कराय प्रतिसूर्यके परिवार सहित गुफात निकसी, अर विमानके पास आय ऊभी रही, मानो साक्षात वनलक्ष्मी ही है। कैसा है विमान ? मोतीनिके जे हार सोई मानो नीझरने हैं, अर पवनकी प्रेरी क्षुद्रघण्टिका बाज रही है, अर लहलहाट करती जे रत्नोकी झालरी तिनत शोभायमान, अर केलिके वनोत शोभायमान है, सूर्यके किरणके स्पर्श कर ज्योतिरूप होय रह्या है, अर नानाप्रकारके रत्ननिकी प्रभाकर ज्योतिका मंडल पड रह्या है। सो मानो इन्द्रधनुष ही चढि रह्या है। अर नानाप्रकारके वर्णोकी सकडो ध्वजा फरहर है। अर वह विमान कल्पवृक्ष समान मनोहर नानाप्रकारके रत्ननिकरि निर्मापित नानारूपको धरै मानो स्वर्गलोकत आया है। सो वा विमानमें पुत्रसहित अंजना, बसंतमाला तथा राजा प्रतिसूर्यका परिवार सकल बैठकर आकाशके मार्ग चाले। सो बालक कौतुककर मुलकता संता माताकी गोदमेंत उछलकर पर्वत ऊपर जा पड्या। माता हाहाकार करती भई, अर राजा प्रतिसूर्यक सबलोक हाहाकार करते भए। अर राजा प्रतिसूर्य बालकके ढूंढनेको आकाशत उतरिकरि पृथ्वी पर आया, अंजना अतिदीन भई विलाप कर है। ऐसा विलाप कर है जाको सुनकर तिर्यञ्चनिका मन भी करुणा कर कोमल होय गया। हाय पुत्र ! कहा भया ? दैव कहिए पूर्वोपार्जित कर्मने कहा किया ? मोहि रत्न सम्पूर्ण निधान दिखायकरि बहुरि हरलिया। वियोगके दुःखत व्याकुल जो मैं सो मेरे जीवनका अवलंबन जो बालक भया हुता सो भी पूर्वोपार्जित कर्मने छिनाय लिया। सो माता तो यह विलाप कर है, अर पुत्र पत्थर पर पड्या, सो पत्थरके हजारो खंड होय गए,
अर महा शब्द भया। प्रतिसूर्य देखे तो बालक एक शिला ऊपर सुखसे विराजै है, अपने अंगूठे आप ही चूसै है, क्रीडा कर है, अर मुलक है, अति शोभायमान सूधे पडे हैं, लहलहाट कर है कर चरणकमल जिनके, सुन्दर है शरीर जिनका, वे कामदेव पदके धारक, उनको कौनकी उपमा दीजै ? मंद मंद जो पवन ताकरि लहलहाट करता जो रक्तकमलोंका वन ता समान है, प्रभा जिनकी अपने तेजकरि पहाडके खंड-खंड

किए। ऐसे बालकको दूरत देखकर राजा प्रतिसूय अति आश्चयको प्राप्त भया। कसा ह बालक ? निष्पाप है शरीर जाका, धमका स्वरूप, तेजका पुंज। ऐसे पुत्रको देख माता बहुत विस्मयको प्राप्त भई, उठाय सिर चूमा अर छातीसो लगायलिया। तब प्रतिसूय अजनीत कहता भया—हे बालिके! यह बालक तेरा समचतुरससस्थान, वजवषभनाराचसहननका धरणहारा, महा वजका स्वरूप ह। जाके पडने करि पहाड चूण होय गया। जब या बालककी ही देवनित अधिक अदभुत शक्ति ह तो यौवन अवस्थाकी शक्ति का कहा कहना ? यह निश्चय सेती चरमशरीरी ह। तदभवमोक्षगामी ह, फिर देह न धारगा। याकी यही पर्याय सिद्धपदका कारण ह। ऐसा जानकर तीन प्रदक्षिणा देय हाथ जोड सिर नवाय, अपनी स्त्रीनिके समूह सहित बालकको नमस्कार करता भया। यह बालक, ताकी जे स्त्री, तिनके जे नेत्र, तेई भए श्याम श्वेत अरुण कमल, तिनकी जे माला, तिनकरि पूजनीक अति रमणीक मद मद मुलकनका करणहारा, सब ही नरनारीनिका मन हर। राजा प्रतिसूय पुत्रसहित अजनी भानजीको विमानम बठाय अपने स्थानक लेय आया। कसा ह नगर ? ध्वजा तोरणनिकरि शोभायमान ह। राजाको आया सुन सब नगरके लोक नाना प्रकारके मगल द्रव्यनिसहित सन्मुख आए। राजा प्रतिसूयने राजमहलमें प्रवश किया। वादित्रोके नादत व्याप्त भई ह दशो दिशा जहा, बालकके जन्म का बडा उत्सव विद्याधरने किया। जसा स्वगलोकविष इन्द्रकी उत्पत्तिका उत्सव देव कर हं। पवत विष जन्म पाया, अर विमानत पडकरि पवतको चूण किया। तात बालकका नाम माता अर बालक के मामा प्रतिसूयने श्रीशल ठहराया। अर हनूरुहद्वीपविष जन्मोत्सव भया तात हनूमान यह नाम
पथ्वीविष प्रसिद्ध भया। वह श्रीशल (हनूमान) हनूरुहद्वीपविष रम। कसा ह कुमार ? देवनि समान ह प्रभा जाकी, महाकातिवान, सबको महा उत्सवरूप ह शरीरकी क्रिया जाकी, सबलोकके मन अर नेत्रनिको हरनहारा प्रतिसूयके पुरविष विराज ह।

अथानन्तर गणधर देव राजा श्रेणिकत कह ह—हे नप! प्राणीनिके पूर्वोपार्जित पुण्यके प्रभावत

गिरिनका चूरण करनहारा महाकठोर जो वज्र सो भी पुष्प समान कोमल होय परणवे है। अर महा आतापकी करणहारी जो अग्नि सो भी चन्द्रमाकी किरण समान तथा विस्तीर्ण कमलनीके वन
५ष समान शीतल होय है। अर महा तीक्ष्ण खडगकी धारा सो महा मनोहर कोमल लता समान होय
पु ।० है। ऐसा जानकर जे विवेकी जीव है ते पापतें विरक्त होय है। कैसा है पाप ? महा दुःख देनेविषै
२८५ प्रवीण है। तुम जिनराजके चरित्र विषै अनुरागी होवो। कैसा है जिनराजका चरित्र ? सारभूत जो मोक्षका सुख ताके देने विषै चतुर है। यह समस्त जगत निरंतर जन्मजरामरणरूप सूर्यके आतापतें तप्तायमान है। ताम हजारों जे व्याधि है सोई किरणोंका समूह।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महा पद्मपुराण संस्कृत ग्रंथ ताकी भाषा वचनिकाविषै हनुमानकी जन्म कथाका वर्णन करने वाला सत्रहवां पर्व पूर्ण भया ॥ १७ ॥

अथानन्तर गौतमस्वामी राजा श्रेणिकसों कहै है—हे मगधदेशके मंडन ! यह हनुमानजीके जन्मका वृत्तांत तो तोहि कह्या, अब हनुमानके पिता पवनंजयका वृत्तांत सुन। पवनंजय पवनकी नाईं शीघ्र ही रावणपै गया, अर रावणतें आज्ञा पाय वरुणतें युद्ध करता भया। सो बहुत बेरतक नाना प्रकारके शस्त्रनिकरि वरुणके अर पवनंजयके युद्ध भया, सो युद्धविषै वरुणको बांध लिया। तानैं जो खरदूषणको बांध्या हुता तो छुड़ाया, अर वरुणको रावणके समीप लाया। वरुणने रावणकी सेवा अंगीकार करी। रावण पवनंजयतें अति प्रसन्न भए। तब पवनंजय रावणसों विदा होय अंजनीके स्नेहतें २८५
शीघ्र ही घरको चाले। राजा प्रह्लादने सुनी कि पुत्र विजय कर आया, तब ध्वजा तोरण मालादिकोंसे नगर शोभित किया। तब सब पुरिजन पुरजन लोग सन्मुख आय नगरके सब नर नारी इनके कर्त्तव्यकी प्रशंसा करैं है। राजमहलके द्वारे अर्घादिककरि बहुत सन्मानकर भीतर प्रवेश कराया। सारभूत मंगलीक वचननिकरि कुंवरकी सबहीने प्रशंसा करी। कुंवर माता पिताको प्रणामकरि सबका मुजरा

लेय क्षणएक सभाविषै सबनकी शुश्रूषाकर आप अंजनीके महल पधारे। प्रहस्तमित्र लार सो वह महल जैसा जीवरहित शरीर सुन्दर न लागै, तैसे अंजनी विना मनोहर न लागा। तब मन अप्रसन्न होय गया। प्रहस्तसो कहते भए—हे मित्र! यहां वह प्राणप्रिया कमलनयनी नहीं दीखै है सो कहां है? यह मन्दिर ताके विना मुझे उद्यान समान भासै है, अथवा आकाश समान शून्य भासै है। तातै तुम वार्ता पूछो, वह कहां है? तब प्रहस्त माहिले लोगनितै निश्चयकर सकल वृत्तांत कहता भया। तब याके हृदयको क्षोभ उपज्या। माता पितासो विना पूछे ही मित्रसहित महेन्द्रके नगरमें गए। चित्तमें उदास जब राजा महेन्द्रके नगरके समीप जाय पहुँचे तब मनमें ऐसा जान्या जो आज प्रियाका मिलाप होयगा। तदि मित्रसो कहत भए कि—हे मित्र! देखो यह नगर मनोहर दीखै है, जहां वह सुन्दर कटाक्ष की धरनहारी सुन्दरी विराजै है। जैसे कैलाश पर्वतके शिखर शोभायमान दीखै है तैसे यह महलके शिखर रमणीक दीखै है। अर वनके वृक्ष ऐसे सुन्दर है मानो वर्षाकालकी सघनघटा ही है। ऐसी वार्ता मित्रसो करते संते नगरके पास जाय पहुंचे। मित्र भी बहुत प्रसन्न करता आया। राजा महेंद्र ने सुनी कि पवनजयकुमार विजयकर पितासो मिल यहां आए है, तब नगरकी बड़ी शोभा कराई। अर आप अर्घादिक उपचार लेय सन्मुख आया, बहुत आदरतै कुंवरको नगरमें लाए। नगरके लोगो ने बहुत आदरतै गुण वर्णन किये। कुंवर राजमंदिरमें आए। एक मुहूर्त ससुरके निकट विराजे, सबहीका सन्मान किया, अर यथायोग्य वार्ता करी। बहुरि राजातै आज्ञा लेयकर सासूका मुजरा करया, बहुरि प्रियाके महल पधारे। कैसे है कुमार? कांताके देखनेकी है अभिलाषा जाके। तहां भी स्त्रीको न देख्या तब अति विरहातुर होय काहूको पूछ्या—हे बालिके! हमारी प्रिया कहां है? तब वह बोली हे देव! यहां तिहारी प्रिया नाहीं। तब वाके वचनरूप वज्रकर हृदय चूर्ण होयगया अर कान मानो ताते खारे पानीसे सींचे गए। जैसा जीवरहित मृतक शरीर होय तैसा होय गया। शोकरूप दाहकरि मुरझाय गया है मुखकमल जाका, यह ससुरालके नगरतै निकसिकरि पृथ्वीविषै स्त्रीके वार्ताके निमित्त

भमता भया, मानो वायुकुमारको वायु लागी। तब प्रहस्तमित्र याको अति आतुर देखकरि याके दुखतें अति दुखी भया, अर यासो कहता भया—हे मित्र! कहा खेद-खिन्न होय है? अपना चित्त निराकुल कर। यह पृथ्वी केतीक है जहा होयगी वहा ठीककर लेवेंगे। तब कुमारने मित्रसो कही—तुम आदित्य पुर मेरे पिताप जावो अर सकल वृत्तात कहो। जो मुझे प्रियाकी प्राप्ति न होयगी तो मेरा जीवना नहीं होयगा। म सकल पृथ्वीपर भ्रमण करू हू, अर तुम भी ठीक करो। तब मित्र यह वृत्तात कहने को आदित्यपुर नगरविष आया, पिताको सब वृत्तात कह्या। अर पवनकुमार अम्बरगोचर हाथीपर चढकरि पृथ्वीविष विचरता भया। अर मनविष यह चिंता करी कि वह सुन्दरी कमलसमान कोमल शरीर शोकके आतापको सतापको प्राप्त भई कहा गई? मेरा ही हृदयविष ध्यान जाके वह गरीबिनी विरहरूप अग्नित प्रज्वलित विषम बनमें कौन दिशाको गई? वह सत्यवादिनी नि कपट धर्मकी धरनहारी, गर्भ का है भार जाक,मत कदापिबसतमालासो रहित होय गई होय। वह पतिव्रता श्रावकके व्रत पालनहारी राज कुमारी शोककर अध होय गए है दोनो नेत्र जाके, अर विकट वन विहार करती, क्षुधासो पीडित, अजगरकर युक्त जो अधकूप ताम ही पडी हो अथवा वह गर्भवती दुष्ट पशुओके भयकर शब्द सुन प्राणरहित ही होय गई होय। वह प्राणनित भी अधिक प्यारी या भयकर अरण्यविष जलविना प्यास कर सूखगए है कठतालु जाके, सो प्राणोसे रहित होय गई होय? वह भोरी कदाचित गगाविष उतरी होय तहा नानाप्रकारके ग्राह सो पानीमें बह गई हो, अथवा वह अतिकोमल तनु डाभको अणीकर विदारे गए होय चरण जाके सो एक पड भी पग धरनेकी शक्ति नाहीं सो न जानिए कहा दशा भई?
अथवा दु खत गर्भपात भया होय अर कदाचित वह जिनधर्मको सेवनहारी महाविरक्तभाव होय आर्या भई होय। ऐसा चितवन करते पवनजयकुमारन पृथ्वीविष भ्रमण किया। सो वह प्राणवल्लभा न देखी। तबि विरहकर पीडित सबजगतको शून्य देखता भया, मरणका निश्चय किया। न पर्वतविष न मनोहर वृक्षनिविष, न नदीके तटपर काहू ठौर ही प्राणप्रिया विना उसका मन न रमता भया। ऐसा

विवेकवर्जित भया जो सुन्दरीकी वार्ता वृक्षनिको पूछ भ्रमता २ भूतरुवर नामा वनमे आया। तहा हाथीत उतरचा अर जस मुनि आत्माका ध्यान कर तस प्रियाका ध्यान कर। बहुरि हथियार अर बखतर पृथ्वीपर डार दिए अर गजेन्द्रत कहते भए—हे गजराज ! अब तुम वनस्वच्छन्द विहारी होवो। हाथी विनयकरि निकट खडचा ह। आप कह ह—हे गजेन्द्र ! नदीके तीरमें शल्यकी वन ह ताके जो पल्लव सो चरते विचरो। अर यहा हथिनीनिके समूह ह सो तुम नायक होय विचरो। कुवरनें ऐसा कह्या परतु वह कृतज्ञ, धनीके स्नेहविष प्रवीण कुवरका सग नहीं छोडता भया, जस भला भाई भाईका सग न छोडे। कुवर अति शोकवत ऐसे विकल्प कर कि अति मनोहर जो वह स्त्री ताहि यदि न पाऊ तो या वन विष प्राण त्याग करू। प्रिया विष लग्या ह मन जाका, ऐसा जो पवनजय ताहि वनविष रात्रि भई। सो रात्रिके चार पहर चार वष समान बीते। नानाप्रकारके विकल्पकरि व्याकुल भया।

यहाकी तो यह कथा, अर मित्र पिताप गया सो पिताको सव वृत्तात कह्या। पिता सुनकर परम शोकको प्राप्त भया। सबको शोक उपज्या। अर केतुमती माता पुत्रके शोककरि अति पीडित होय रोवती सती प्रहस्तसू कहती भई कि जो तू मेरे पुत्रको अकेला छोड आया सो भला न किया। तदि प्रहस्तने कही मोहि अति आग्रहकर तिहारे निकट भेज्या सो आया, अब तहा जाऊगा। सो माताने कही—वह कहा ह ? तब प्रहस्तने कही जहाँ अजनी ह तहा होयगा। तदि यान कही अजनी कहा ह, तान कही— म न जानू। हे माता ! जो विना विचार शीघ्र ही काम कर तिनको पश्चाताप होय। तिहारे पुत्रने ऐसा निश्चय किया कि जो म प्रियाको न देखू तो प्राणत्याग करू। यह सुनकर माता अति विलाप करती भई। अत पुरकी सकल स्त्री रुदन करती भइ, माता विलाप कर ह—हाय मो पापिनीने कहा किया जो महासतीको कलक लगाया, जाकरि मेरा पुत्र जीवनके सशयको प्राप्त भया। म क्रूरभावकी धरणहारी महावक्र मदभागिनीने विना विचारे यह काम किया। यह नगर, यह कुल, अर विजयार्ध पवत, अर रावणका कटक पवनजय विना शोभ नाहीं। मेरे पुत्र समान और कौन ?

जानै वरुण जो रावणहूतैं असाध्य ताहि रणविषै क्षणमात्रमें बांध लिया। हाय वत्स! विनयके आधार, गुरु पूजनमैं तत्पर, जगतसुन्दर, विख्यातगुण तू कहां गया? तेरे दुखरूप अग्निकरि तप्तायमान जो मैं, सो हे पुत्र! मातासों वचनालाप कर, मेरा शोक निवार। ऐसे विलाप करती अपना उरस्थल अर सिर कूटती जो केतुमती सो तान सब कुटुम्ब शोकरूप किया। प्रह्लाद हू आंसू डारते भए। सब परिवारको साथ लेय प्रहस्तको अगवानी कर अपने नगरतैं पुत्रको ढूंढनेको चाले। दोनों श्रेणियोंके सब विद्याधर प्रीतिसों बुलाये सो परिवार सहित आए। सब ही आकाशके मार्ग कुंवरको ढूंढ हैं, पृथ्वीमें देखै है, अर गंभीर वन और लतावोंमें देख हैं। अर प्रतिसूर्यके पास भी प्रह्लादका दूत गया सो सुन कर महा शोकवान भया। अर अंजनासो कह्या। सो अंजना प्रथम दुखतैं भी अधिक दुखको प्राप्त भई। अश्रुधारा करि वदन पखालती रुदन करती भई, कि हाय नाथ! मेरे प्राणोंके आधार! मुझमें बांध्या है मन जिन्होंने सो मोहि जन्मदुखारीको छोडकरि कहां गए? कहा मुझसों कोप न छोडो हो, जो सब विद्याधरनितैं अदृश्य होय रहे हो। एकबार एक भी अमृत समान वचन मोसों बोलो। एते दिन ये प्राण तिहारे दर्शनकी वांछाकरि राखे हैं, अब जो तुम न दीखो तो ये प्राण मेरे किस कामके हैं? मेरे यह मनोरथ हुता कि पतिका समागम होयगा सो दैवने मनोरथ भग्न किया। मुझ मंदभागिनी के अर्थि आप कष्ट अवस्थाको प्राप्त भए। तिहारे कष्टकी दशा सुनकर मेरे प्राण पापी क्यो न विनश जांय। ऐसें विलाप करती अंजनाको देखकरि बसंतमाला कहती भई—हे देवी! ऐसे अमंगल वचन मत कहो, तिहारे धनीसो अवश्य मिलाप होयगा। अर प्रतिसूर्य बहुत दिलासा करता भया कि तेरे पतिको शीघ्र ही लावे हैं। ऐसा कहकर राजा प्रतिसूर्यने मनतैं भी उतावला जो विमान ताविषै चढ़ कर आकाशतैं उतरकर पृथ्वीविषै ढूंढ्या। प्रतिसूर्यके लार दोनों श्रेणियोंके विद्याधर, अर लंकाके लोग यत्नकरि ढूंढै हैं। देखते देखते भूतरवर नामा अटवीविषै आए। तहां अंबरगोचर नामा हाथी देख्या। वर्षाकालके सघन मेघसमान है आकार जाका, तब हाथीको देखकरि सब विद्याधर प्रसन्न भए कि जहां यह

हाथी है तहाँ पवनजय है । पूर्वे हमने यह हाथी अनेकबार देख्या है । यह हाथी अंजनगिरि समान है रंग जाका, अर कुंदके फूल समान श्वेत हैं दांत जाके, अर जैसी चाहिये तैसी सुन्दर है सूंड जाकी । जब हाथी के समीप विद्याधर आए तब वाहि निरंकुश देख डरे अर हाथी विद्याधरोंके कटकका शब्द सुन महाक्षोभ को प्राप्त भया । हाथी महाभयंकर दुर्निवार शीघ्र है वेग जाका, मदकर भीज रहे हैं कपोल जाके, अर हाले है अर गाजै है कान जाके । जिस दिशाको हाथी दौडे ताही दिशात विद्याधर हट जावें । यह हाथी लोगोंका समूह देख स्वामीकी रक्षाविषै तत्पर, सूंडसों बंधी है तलवार जाके, महाभयंकर पवनंजयका समीप न तजै । सो विद्याधर आसपास याके समीप न आवैं । तब विद्याधरोंने हथिनियोंके समूहसों याहि वश किया, क्योंकि जेते वशीकरणके उपाय हैं, तिनमें स्त्री समान और कोई उपाय नाहीं । तब ये आगे आय पवनकुमारको देखते भए । मानो काठका है, मौनसों बैठ्या है । वे यथायोग्य याका उपचार करते भए पर यह चितामें लीन काहूसों न बोलै । जैसे ध्यानारूढ मुनि काहूसों न बोलै । तब पवनंजयके माता पिता आंसू डारते याके मस्तकको चूमते भए, अर छातीसों लगावते भए, अर कहते भए कि–हे पुत्र ! तू ऐसा विनयवान हमको छोडकरि कहां आया ? महाकोमल सेजपर सोवनहारा तेरा शरीर या भीमवनविषै कैसे रात्रि व्यतीत करी ? ऐसे वचन कहे तो भी न बोलै । तबि याहि नमीभूत और मौनवत धरे, मरणका है निश्चय जाके ऐसा जानकरि समस्त विद्याधर शोकको प्राप्त भए, पिता सहित सब विलाप करते भए ।

तदि प्रतिसूर्य अंजनीका मामा सब विद्याधरनिको कहता भया कि मैं वायुकुमारसों वचनालाप करूंगा । तब वह पवनंजयको छातीसों लगायकर कहता भया–हे कुमार ! मैं समस्त वृत्तांत कहूं हूं सो सुनो । एक महा रमणीक सन्ध्याभ्रनामा पर्वत, तहां अनंगवीचि नामा मुनिको केवलज्ञान उपज्या था, सो इन्द्रादिकदेव दर्शनको आए हुते, अर मैं भी गया हुता । सो वंदनाकर आवता हुता सो मार्गमें एक पर्वतकी गुफा, ता ऊपर मेरा विमान आया, सो मैंने स्त्रीके रुदनकी ध्वनि सुनी । मानो बीन बाजै

है। तब मैं वहां गया, गुफाविषै अंजनी देखी। मैंने वनके निवासका कारण पूछया। तदि बसंतमाला ने सब वृत्तांत कह्या। अंजनी शोक कर विह्वल रुदन कर सो मैं धीर्य बंधाया, अर गुफामें ताके पुत्र का जन्म भया, सो गुफा पुत्रके शरीरकी कांतिकर प्रकाश रूप होयगई, मानो सुवर्णकी रची है। यह वार्ता सुनकर पवनंजय परम हर्षको प्राप्त भए। अर प्रतिसूर्यको पूछते भए—बालक सुखसो तिष्ठै है? तब प्रतिसूर्यने कह्या—"बालकको मैं विमानमें थापकर हनूरुहद्वीपको जाता था सो मार्गमें बालक एक पर्वतपर पड्या।" सो पर्वतके पडनेका नाम सुनकर पवनजयने हाय हाय ऐसा शब्द कह्या। तदि प्रतिसूर्यने कह्या—"सोच मत कर, जो वृत्तांत भया सो सुनहु, जाकरि सब दुखसो निवृत्ति होय। बालकको पड्या देख मैं विलाप करता भया। विमानतैं नीचे उतरया, तब क्या देखा—पर्वतके खंड-खंड होय गए, अर एक शिलापर बालक पड्या है, अर ताकी ज्योतिकरि दशोदिशा प्रकाशरूप होय रही है। तब मैंने तीन प्रदक्षिणा देय नमस्कार कर बालकको उठाय लिया, अर माता को सौंप्या। सो माता अति विस्मयको प्राप्त भई। पुत्रका श्रीशैल नाम धर्या। बसंतमाला अर पुत्र सहित अंजनीको हनुरुहद्वीप लेय गया। वहां पुत्रका जन्मोत्सव भया। सो बालकका दूजा नाम हनुमान भी है। यह तुमको मैंने सकल वृत्तांत कह्या। हमारे नगरमें वह पतिव्रता पुत्रसहित आनंदसो तिष्ठै है।" यह विरतांत सुनकर पवनंजय तत्काल अंजनीके अवलोकन के अभिलाषी हनुरुहद्वीपको चाले। अर सब विद्याधर भी इनके संग चाले। हनुरुहद्वीपमें गए। सो दोय महीना सबको प्रतिसूर्यने बहुत आदर सो राख्या। बहुरि सब प्रसन्न होय अपने अपने स्थानकको गए। बहुत दिनोमें पाया है स्त्रीका संयोग जान सो ऐसा पवनंजय
यहां ही रहै। कैसा है पवनजय? सुन्दर है चेष्टा जाकी, और पुत्रकी चेष्टा सो अति आनन्दरूप हनुरुहद्वीपमें देवनकी नाई रमते भए। हनुमान नवयौवनको प्राप्त भए। मेरुके शिखर समान सुन्दर है सीस जाका, सब जीवनिके मनके हरणहारे होते भए। सिद्ध भई हैं अनेक विद्या जाको, अर महाप्रभाव रूप विनयवान, बुद्धिमान, महाबली, सब शास्त्रनिके अर्थविषै प्रवीण, परोपकार करनेको चतुर, पूर्वभव

स्वर्गमें सुख भोगि आए, अब यहा हनुरुहद्वीपविषै देवोकी नाई रमै है।

हे श्रेणिक ! गुरुपूजामें तत्पर श्रीहनुमानके जन्मका वर्णन, अर पवनजयका अंजनीसों मिलाप, यह अद्भुत कथा नानारसकी भरी है। जे प्राणी भावधर यह कथा पढे पढावें, सुनै सुनावै तिनको अशुभ कर्ममें प्रवृत्ति न होय, शुभक्रियाके उद्यमी होय। अर जो यह कथा भावधर पढै पढावें उनको परभवमें शुभगति, दीर्घ आयु होय, शरीर निरोग सुन्दर होय, महापराक्रमी होय, अर उनकी बुद्धि करनेयोग्य कार्यके पारकों प्राप्त होय, अर चन्द्रमा समान निर्मलकीर्ति होय, अर जासों स्वर्गमुक्तिके सुख पाइए ऐसे धर्मकी बढवारी होय, जो लोकविषै दुर्लभ वस्तु हैं सो सब सुलभ होय, सूर्य समान प्रतापके धारक होय।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महा पद्मपुराण संस्कृत ग्रन्थ ताकी भाषा वचनिकाविषै पवनजय अजनाका मिलाप वर्णन करने वाला अठारहवां पर्व पूर्ण भया ॥ १८ ॥

अथानन्तर राजा वरुण बहुरि आज्ञालोप भया तदि कोपकरि तापर रावण फेर चढे। सब भूमिगोचरी विद्याधरनिको अपने समीप बुलवाया, सबके निकट आज्ञापत्र लेय दूत गए। कैसा है रावण ? राज्यकार्यविषै निपुण है, किहकधापुरके धनी, अर लकाके धनी, रथनूपुर अर चक्रवालपुरके धनी तथा वैताढ्यकी दोनो श्रेणीके विद्याधर तथा भूमिगोचर, सब ही आज्ञा प्रमाण रावणके समीप आए। हनुरुहपद्वीपविषै भी प्रतिसूर्य तथा पवनजयके नाम आज्ञापत्र लेय दूत आए सो ये दोनो आज्ञापत्रको माथे चढाय दूतका बहुत सन्मानकर, आज्ञाप्रमाण गमनके उद्यमी भए। तदि हनुमानको राज्याभिषेक देने लागे। वादित्रादिकके समूह बाजने लागे। अर कलश है जिनके हाथमें ऐसे मनुष्य आगे आय ठाढे भए। तदि हनुमानने प्रतिसूर्य अर पवनजयको पूछ्या यह कहा है ? तदि उन्होंने कही—हे वत्स ! हनुरुहद्वीपका प्रतिपालन कर, हम दोनोको रावण बुलावै है सो जाय हैं, रावणको मददके अर्थि। रावण वरुण पर जाय है। वरुणने बहुरि माथा उठाया है, महासामंत है, ताके बडी सेना है, पुत्र बलवान हैं, अर गढका बल

ह । तबि हनुमान विनय कर कहते भए कि मेरे होते तुमको जाना उचित नाहीं, तुम मेरे गुरुजन हो । तब उन्होने कही—हे वत्स ! तू बालक ह अबतक रण देख्या नाहीं । तबि हनुमान बोले—अनादिकालतै जीव चतुर्गतिविषै भ्रमण कर ह, पचमगति जो मुक्ति सो जबतक अज्ञान का उदय हैं तबतक जीवने पाई नाहीं, परन्तु भव्यजीव पाव ही ह । तस हमने अब तक युद्ध किया नाहीं, परन्तु अब युद्धकर वरुणको जीतहींगे । अर विजय कर तिहारे पास आवैं । सो जब पिता आदि कुटुम्बके जन उनने राखने का घना ही यत्न किया, परन्तु यें न रहते जाने, तदि उन्होने आज्ञा दई । यह स्नान भोजन कर पहिले पहिल मगलीक द्रव्यो कर भगवान की पूजा कर, अरहत सिद्धको नमस्कार कर माता पिता अर मामाकी आज्ञा लेय, बडोका विनयकरि, यथायोग्य सभाषण कर, सूर्यतुल्य उद्योत रूप जो विमान ताम चढ़करि शस्त्रके समूहकरि सयुक्त जे सामत उन सहित, दशो दिशामें व्याप्त रहचा ह यश जाका, लकाकी ओर चाल्या । सो त्रिकूटाचलके सन्मुख विमान में बठचा जाता ऐसा शोभता जसा मदराचलके सन्मुख जाता ईशान इन्द्र शोभै ह । तबि जलबीचीनामा पर्वतपर सूर्य अस्त भया । कसा ह पर्वत ? समुद्रकी लहरोके समूहकर शीतल हैं तट जाके । तहा रात्रिसुखसो पूर्ण करी । अर करी ह महा योधानित वीररसकी कथा जानै, महा उत्साहकर नाना प्रकारके देश द्वीप पर्वतोको उलघता, समुद्रके तरगनिकरि शीतल जे स्थानक तिनको अवलोकन करता, समुद्रविषै बडे-बडे जलचर जीवनिको देखता, रावणके कटकमें पोहच्या । हनुमानकी सेना देखकरि बडे बडे राक्षस विद्याधर विस्मयको प्राप्त भए । परस्पर वार्ता कर है यह बली श्रीशल हनुमान भव्यजीवोंविषै उत्तम, जाने बाल अवस्थामें गिरिको चूर्ण किया । ऐसे अपने यश श्रवण करता हनुमान रावणके निकट गया । रावण हनुमानको देखकर सिंहासनसो उठे अर विनय किया । कसा हैं सिंहासन ? पारिजातादिक कहिए कल्पवृक्षोके फूलोसे पूरित हैं, जाकी सुगन्धकरि भमर गुजार कर हैं, जाके रत्ननिकी ज्योतिकर आकाशविषै उद्योत होय रहचा ह, जाके चारों ही तरफ बडे सामत है । ऐसे सिंहासनतै उठकर रावनने हनुमानको उरसो लगाया । कैसा ह हनुमान ? रावणके विनयकरि नम्रीभूत होय गया है शरीर जाका ।

रावण हनुमानको निकट लेय बैठ्या, प्रीतिकर प्रसन्न है मुख जाका, परस्पर कुशल पूछी। अर परस्पर रूपसंपदा देख हर्षित भए। दोनो ही महाभाग्य ऐसे मिले मानो दोय इन्द्र मिले। रावण अति स्नेह करि पूर्ण है मन जाका, सो कहता भया—पवनकुमारने हमसे बहुत स्नेह बढाया जो ऐसा गुणोका सागर पुत्र हमपर पठाया। ऐसे महाबलीको पायकरि मेरे मनोरथ सिद्ध होवेंगे। ऐसा रूपवान, ऐसा तेजस्वी और नाहीं, जैसा यह योधा सुन्या तैसा ही है, यामे संदेह नाहीं। यह अनेक शुभ लक्षणो का भर्या है, याके शरीरका आकार ही गुणोको प्रकट करै है। रावणने जब हनुमानके गुण वर्णन किए तदि हनुमान नीचा होय रह्या, लज्जावत पुरुषकी नाईं नम्रीभूत है शरीर जाका, सो संतोकी यह रीति है। अब रावणका वरुणसे संग्राम होयगा सो मानो सूर्य भयकर अस्त होनेको उद्यमी भया, मंद होय गई है किरण जाकी। सूर्यके अस्त भए पीछे संध्या प्रकट भई, बहुरि गई, तो मानो प्राणनाथकी विनयवती पतिव्रता स्त्री ही है, अर चन्द्रमारूप तिलकको धरे रात्रिरूप स्त्री शोभती भई। बहुरि प्रभात भया सूर्यकी किरणनिकरि पृथ्वीविषै प्रकाश भया। तब रावण समस्त सेनाको लेय युद्धको उद्यमी भया। हनुमान विद्याधर समुद्रको भेद वरुणके नगरविषै गया, वरुणपर जाता हनुमान ऐसी कांतिको धरता भया जैसा सुभूम चक्रवर्ती परशुरामके ऊपर जाता शोभै। रावणको कटकसहित आया जानकर वरुणकी प्रजा भयभीत भई। पाताल पुण्डरीक नगरका वह धनी सो नगरमें योधावो के महाशब्द होते भए। योधा नगरसो निकसे, मानो वह योधा असुरकुमार देवोके समान है। अर वरुण चमरेंद्र तुल्य है, महाशूरवीरपनेविषै गर्वित। अर वरुणके सौ पुत्र महा उद्धत युद्ध करनेको आए। नानाप्रकारके शस्त्रोके समूहकरि रोका है सूर्यका दर्शन जिन्होंने। सो वरुणके पुत्रोने आवते ही रावणका कटक ऐसा व्याकुल किया जैसे असुरकुमार देव क्षुद्र देवोको कम्पायमान करै। चक्र, धनुष, वज्र, सेल, बरछी इत्यादि शस्त्रोके समूह राक्षसनिके हाथसे गिर पडे, अर वरुणके सौ पुत्रनिके आगे राक्षसनिका कटक ऐसा भ्रमता भया जैसा वृक्षनिका समूह असनपातके भयसे भ्रमै। तब अपने

कटककू व्याकुल देख रावण वरुणके पुत्रनिपर गया। जस गजेंद्र वृक्षनिकू उपाडे तसै बडे बडे योधानिकू उपाडे। एक तरफ रावण अकेला एक तरफ वरुणके सौ पुत्र, सो तिनके बाणनिकर रावणका शरीर भेदा गया तथापि रावण महायोधाने कछु न गिन्या। जस मेघके पटल गाज तैसै वर्षते सूर्यमडलको आच्छादित करें तस वरुणके पुत्रनिने रावणको बेढ्या, अर कुम्भकरण इन्द्रजीतसू वरुण लडने लाग्या। जब हनुमानने रावणको वरुणके पुत्रनिकर बेध्या टेसूके फूलोके रगसमान आरक्त शरीर देख्या तदि रथम असवार होय वरुणके पुत्रनिपर दौडया। कसा ह हनुमान ? रावणसू प्रीति युक्त ह चित्त जाका, अर शत्रुरूप अधकारके हरिवेकू सूर्य समान ह। पवनके वेगसे भी शीघ्र वरुणके पुत्रो पर गया सो हनुमानसे वरुणके पुत्र सौ कम्पायमान भए, जस मेघके समूह पवनसे कम्पायमान होय। बहुरि हनुमान वरुणके कटकपर एसा पडया जसा माता हाथी कदलीके वनमें प्रवेश कर। कईयनिकू विद्यामई लागूल पाशकर बाध लिया, अर कइयोको मुदगरके घात कर घायल किया। वरुण का समस्त कटक हनुमानत हारया, जस जिनमार्गीके अनेकातनयकरि मिथ्यादृष्टि हार। हनुमानको अपने कटकविष रण क्रीडा करते देख राजा वरुण ने कोपकर रक्तनेत्र किए, अर हनुमान पर आया। तब रावण वरुणकू हनुमान पर आवता देख आप जाय रोक्या, जस नदीके प्रवाहको पर्वत रोकै। वरुणके अर रावणके महायुद्ध भया। तब ताही समयमे वरुणके सौ पुत्र हनुमानने बाध लिए अर कईएकनिकू मुदगरनिके घातकरि घायल किए। सो वरुण सौऊ पुत्रनिकू बाधे सुनकर शोककर विह्वल भया। अर विद्याका स्मरण न रह्या तदि रावणने याको पकड लिया। सो मानो वरुण सूर्य, अर याके पुत्र किरण तिनके रोकनेकरि मानू रावण राहूका रूप धारता भया। वरुणको कुम्भकरण के हवाले किया अर आप डेरा भवनोन्माद नाम वनमे किया। कसा ह वह वन ? समुद्र की शीतल पवनसे महाशीतल ह। सो ताके निवासकर सेनाको रणजनित खेद रहित किया। अर वरुणको पकडा सुन उसकी सेना भाजी, पुण्डरीकपुरविष जाय प्रवेश किया। देखो पुण्यका प्रभाव जो एक नायकके

हारनेत सबही हारे, अर एक नायकके जीतनेत सब ही जीते। कुम्भकरण ने कोपकर वरुणके नगर लूटनेका विचार किया तदि रावणने मने किया, यह राजानिका धम नाहीं। कसे हैं रावण ? वरुणपर कोमल ह चित्त जाका सो कुम्भकरण सें कहते भए—हे बालक ! तने यह दुराचारकी बात कही ? जो अपराध था सो तो वरुणका था, प्रजाका कहा अपराध ? दुबलको दुखदेना दुरगतिका कारण है, अर महाअन्याय ह। ऐसा कहकर कु भकरणको प्रशात किया अर वरुणको बुलाया। कसा ह वरुण ? नीचा ह मुख जाका। तदि रावण वरुणको कहते भए—हे प्रवीण ! तुम शोक मत करो, जो युद्ध-विष पकड़ा गया। योधावोकी दोय ही रीति ह मारे जाय अथवा पकडे जाय। अर रणतें भागना यह कायरनिका काम ह। तात हमप क्षमा करो, अर अपने स्थानक जाय कर मित्र बान्धव सहित सकल उपद्रवरहित अपना राज्य सुखत करहु। ऐसे मिष्ट वचन रावणके सुनकर वरुण हाथ जोड रावणसू कहता भया—हे वीराधिवीर ! हे महाधीर ! तुम या लोकविष महापुण्याधिकारी हो, तुमसे जो वर भाव कर सो मूख ह। अहो स्वामिन ! यह तिहारा परम धीय हजारो स्तोत्रनिस स्तुति करने योग्य ह, तुमने देवाधिष्ठित रत्न विना मुझे सामान्य शस्त्रोसे जीता। कसे हो तुम ? अदभुत ह प्रताप जिनका। अर इस पवनके पुत्र हनुमानके अदभुत प्रभावकी कहा महिमा कहू ? तिहारे पुण्यके प्रभावत ऐसे सत्पुरुष तिहारी सेवा कर ह। हे प्रभो ! यह पथ्वी काहूके गोत्रमें अनुक्रमणकर नाहीं चली आई ह। यह केवल पराक्रमिणिके वश ह। शूरवीर ही याके भोक्ता ह। सो आप सब योधावोके शिरो-मणि हो, सो भूमिका प्रतिपालन करहु। हे उदारकीर्ति ! हमारे अपराध क्षमा करहु। हे नाथ ! आप जसी उत्तम क्षमा कहू न देखी। तात आप सारिखे उदार चित्त पुरुषसे सम्बन्ध कर म कताथ होऊंगा। तात मेरी सत्यवती नामा पुत्री आप परणो, याके परिणवे योग्य आप ही हो। या भांति वीनती कर अति उत्साहत पुत्री परणाई। कसी ह वह सत्यवती ? सवरूपवतियोका तिलक ह, कमल समान है मुख जाका। वरुणने रावणका बहुत सत्कार किया अर कईएक प्रयाण रावणके लार गया।

रावणने अतिस्नेहकरि सीख दीनी। तदि रावण अपनी राजधानीमें आया। पुत्रीके वियोगतें व्याकुल है चित्त जाका। कलाशकप जो रावण ताने हनुमानका अति सन्मानकर अपनी बहिन जो चन्द्रनखा ताकी पुत्री अनगकुसुमा महारूपवती सो हनुमानको परणाई। सो हनुमान ताकू परण कर अतिप्रसन्न भए। कैसी है अनगकुसुमा? सवलोकविषै जो प्रसिद्ध गुण तिनकी राजधानी है। बहुरि कैसी है? कामके आयुध है नेत्र जाके। अर अति सम्पदा दीनी, अर कर्णकुण्डलपुरका राज्य दिया, अभिषेक कराया। ता नगरमें हनुमान सुखसू विराजे, जैसे स्वर्गलोकमे इन्द्र विराजे। तथा किहकू पुर नगरका राजा नल, ताकी पुत्री हरमालिनी नामा रूप सम्पदाकर लक्ष्मीको जीतनहारी सो महाविभूतितै हनुमानको परणाई। तथा किन्नरगीत नगरविषै जे किन्नरजातिके विद्याधर तिनकी सौ पुत्री परणी। या भांति एकसहस रानी परणीं। पृथ्वीविषै हनुमानका श्रीशैल नाम प्रसिद्ध भया। काहेतै? पर्वतकी गुफामें जन्म भया था। सो हनुमान पहाडपर आय निकसे सो देख अति प्रसन्न भए। रमणीक है तलहटी जाकी। वह पर्वत भी पृथ्वीविषै प्रसिद्ध भया।

अथानन्तर किहकधपुर नगरविषै राजा सुग्रीव ताके रानी सुतारा, चन्द्रसमान कांतिकू धरैं है मुख जाका, अर रति समान है रूप जाका, तिनके पुत्री पद्मरागा, नवीन कमल समान है रग जाका, अर अनेक गुणनिकरि मंडित है, पृथ्वीपर प्रसिद्ध, लक्ष्मी समान सुन्दर हैं नेत्र जाके, ज्योतिके मण्डल से मंडित है मुखकमल जाका, अर महा गजराजके कुम्भस्थल समान ऊंचे कठोर स्तन हैं जाके, अर सिंह समान है कटि जाकी महा विस्तीर्ण, अर लावण्यतारूप सरोवरमें मग्न है मूर्ति जाकी, जाहि देख चित्त प्रसन्न होय, शोभायमान है चेष्टा जाकी। ऐसी पुत्रीको नवयौवन देख मातापिताकों याके परणावेकी चिंता भई। या योग्य वर चाहिए, सो माता पिताको रातदिन निद्रा न आवै। अर दिनमें भोजनकी रुचि गई, चिंता रूप है चित्त जिनका। तब रावणके पुत्र इन्द्रजीत आदि अनेक राजकुमार कुलवान शीलवान तिनके चित्रपट लिखे, रूप लिखाय सखियोंके हाथ पुत्रीको दिखाए।

सुन्दर है काति जिनकी सो कन्याकी दृष्टिमें कोई न आया अपनी दृष्टि सकोच लीनी। बहुरि हनुमानका चित्रपट देख्या ताहि देखकर शोषण, सतापन, उच्चाटन, मोहन, वशीकरण कामके यह पचबाणोसे बधी गई। तब ताहि हनुमानविषै अनुरागिनी जान सखीजन ताके गुण वर्णन करती भई।

हे कन्ये! यह पवनजयका पुत्र हनुमान ताके अपारगुण कहालो कहै। अर रूप सौभाग्य तो याके चित्रपटमें तने देखे, तात याको वर माता पिताकी चिता निवार। कन्या तो चित्रपटको देख मोहित भई हुती और सखी जनोने गुण वर्णन किया ही है तब लज्जाकर नीचो होयगई अर हाथमें क्रीडा करनेका कमल था ताकी चित्रपट में दी। तब सबनो जाना कि यह हनुमानसे प्रीतवती भई। तब याके पिता सुग्रीवने याका चित्रपट लिखाय भले मनुष्यके हाथ वायुपुत्रप भेजा। सो सुग्रीवका सेवक श्री नगरमें गया अर कन्याका चित्रपट हनुमानको दिखाया। सो अजनाका पुत्र सुताराकी पुत्रीके रूपका चित्रपट देख मोहित भया। यह बात सत्य है कि कामके पाच ही बाण है परन्तु कन्याके प्रेरे पवन पुत्रके मानो सौ बाण होय लागे। चित्तमें चितवता भया, म सहस विवाह किए अर बडी २ ठौर परणा, खरदूषणकी पुत्री रावणकी भाणजी परणी तथापि जबलग यह पद्मरागा न परणू तौलग परणा ही नाहीं। ऐसा विचार, महाऋद्धिसयुक्त एकक्षणमें सुग्रीवके पुरमें गया। सुग्रीव सुना जो हनुमान पधारे, तब सुग्रीव अति हर्षित होय सन्मुख आए। बडे उत्साहसे नगरमें ले गए सो राजमहल की स्त्री झरोखनिकी जालीसे इनका अद्भुत रूप देख सकल चेष्टा तज आश्चर्यरूप होयगई। अर सुग्रीवकी पुत्री पद्मरागा इनके रूपको देखकर थकित होय गई। कैसी है कन्या? अति सुकुमार है शरीर जाका। बडी विभूतिकरि पवनपुत्रसे पद्मरागाका विवाह भया। जसा वर तसी वींदनी। सो दोनो अति हर्षको प्राप्त भए। स्त्री सहित हनुमान अपने नगरमें आए। राजा सुग्रीव और राणी सुतारा पुत्रीके वियोगत कईएक दिन शोकसहित रहे। अर हनुमान महालक्ष्मीवान समस्त पृथ्वीपर प्रसिद्ध है कीर्ति जाकी, सो एसे पुत्रकू देख पवनजय महासुखरूप समुद्रविषै मग्न भए। रावण तीन

खडका नाथ, अर सुग्रीव समस्त है पराक्रम जाका, हनुमान सारिखे महाभट विद्याधरोंके अधिपति तिनका नायक लंका नगरीविषै सुखसो रमै। समस्त लोककू सुखदाई जैसें स्वर्गलोकविषै इन्द्र रमै तैसे रमै। विस्तीर्ण है कांति जाकी, महासुन्दर, अठारह हजार राणी, तिनके मुखकमल, तिनका भ्रमर भया। आयु व्यतीत होती न जानी। जाके एक स्त्री कुरूप और आज्ञारहित होय सो पुरुष उन्मत्त होय रहे है, जाके अष्टादश सहस्र पदमनी पतिव्रता आज्ञाकारिणी लक्ष्मीसमान होय ताके प्रभावका कहा कहना? तीन खंडका अधिपति, अनुपम है कांति जाकी, समस्त विद्याधर अर भूमिगोचरी सिरपर धारे हैं आज्ञा जाकी, सो सब राजावोंने अर्धचक्री पदका अभिषेक कराया और अपना स्वामी जान्या। विद्याधरनिके अधिपति तिनकरि पूजनीक है चरणकमल जाके, लक्ष्मी कीर्ति कांति परिवार जासमान औरके नाहीं, मनोज्ञ है देह जाका, वह दशमुख राजा चन्द्रमा समान बडे-बडे पुरुषरूप जे ग्रह तिनसे मंडित, आह्लादका उपजावनहारा कौनके चित्तको न हरै? जाके सुदर्शनचक्र, सब कार्यकी सिद्धि करणहारा, देवाधिष्ठित मध्याह्नके सूर्यकी किरणोंके समान है किरणोंका समूह जाविषै, उद्धत प्रचंड नृपवर्ग आज्ञा न मानै तिनका विध्वंसक, अति देदीप्यमान, नानाप्रकारके रत्ननिकरि मंडित शोभता भया। और दंड-रत्न दुष्ट जीवनिको कालसमान भयंकर, देदीप्यमान है उग्र तेज जाका, मानो उल्कापातका समूह ही है सो प्रचंड जाकी आयुधशाला विषै प्रकाश करता भया। सो रावण आठमा प्रतिवासुदेव, सुन्दर है कीर्ति जाकी, पूर्वोपार्जित कर्मके वशतैं कुलकी परिपाटीकर चली आई जो लंकापुरी ताविषै संसारके अद्भुत सुख भोगता भया। कैसा है रावण! राक्षस कहावैं ऐसे जो विद्याधर तिनके कुलका तिलक है। २९९
अर कैसी है लंका? कोईप्रकारका प्रजाको नहीं है दुख जहां, मुनिसुव्रतनाथके मुक्ति गए पीछे और नमिनाथके उपजनेसे पहिले रावण भया, सो बहुत पुरुष जे परमार्थरहित मूढलोक तिन्होंने उनका कथन औरसे और किया, मांसभक्षी ठहराया, सो वे मांसाहारी नहीं थे, अन्नके आहारी थे। एक सीताके हरणका अपराधी बना, उसकर मारे गए और परलोकविषै कष्ट पाया। कैसा है श्रीमुनिसुव्रत

नाशका समय ? सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्रकी उत्पत्तिका कारण है । सो वह समय बीते बहुत वर्ष भए । तात तत्त्वज्ञानरहित विषयी जीवोंने बडे पुरुषनिका वर्णन औरसे और किया । पापाचारी शीलव्रत-रहित जे मनुष्य सो तिनकी कल्पना जालरूप फांसीकर अविवेकी मंदभाग्य जे मनुष्य तेई भए मृग सो बांधे । गौतमस्वामी कहे हैं ऐसा जानकर हे श्रेणिक ! इन्द्र धरणेंद्र चक्रवर्त्यादि कर वंदनीक जो जिन राजका शास्त्र, सोई रत्न भया, ताहि अंगीकार कर । कैसा है जिनका शास्त्र ? सूर्यतैं अधिक है तेज जाका । और कैसा है तू ? जिनशास्त्रके श्रवणकर जान्या है वस्तुका स्वरूप जाने और धोया है मिथ्यात्व-रूप कर्दमका कलंक जाने ।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रन्थ ताकी भाषा वचनिकाविषै रावणका चक्रराज्याभिषेक वर्णन करने वाला उन्नीसवां पर्व पूर्ण भया ॥ १९ ॥

अथानन्तर राजा श्रेणिक महा विनयवान, निर्मल है बुद्धि जाकी सो विद्याधरनिका सकल वृत्तान्त सुन कर गौतम गणधरके चरणारविंदको नमस्कार कर आश्चर्यको प्राप्त होता संता कहता भया— हे नाथ ! तिहारे प्रसादतैं आठवां प्रतिनारायण जो रावण ताकी उत्पत्ति और सकल वृत्तांत मैंने जान्या तथा राक्षसवंशी और वानरवंशी जे विद्याधर तिनके कुलका भेद भली भांति जान्या । अब मैं तीर्थंकरोंके पूर्व भव सहित सकल चरित्र सुना चाहूं हूं ? सो कैसा है तिनका चरित्र ? बुद्धिकी निर्मलताका कारण है, अर आठवें बलभद्र जे श्रीरामचन्द्र, सकल पृथ्वीविषै प्रसिद्ध सो कौन वंश विषै उपजे तिनका चरित्र कहो । अर तीर्थंकरनिके नाम अर उनके माता पिताके नाम सब सुनवेकी मेरी इच्छा है सो तुम कहने योग्य हो । या भांति श्रेणिकने प्रार्थना करी, तब गौतम गणधर भगवत चरित्रके प्रश्न कर बहुत हर्षित भए ! कैसे हैं गणधर ? महा बुद्धिमान, परमार्थविषै प्रवीण । ते कहे हैं कि— हे श्रेणिक ! तू सुन, चौबीस तीर्थंकरनिके नाम अर इनके पितादिकनिके नाम सब पूर्व भव सहित ३१०

कथन करूं हूं पापके विध्वंसका कारण इन्द्रादिक कर नमस्कार करवे योग्य ऋषभ १, अजित २, संभव ३, अभिनन्दन ४, सुमति ५, पद्मप्रभ ६, सुपार्श्व ७, चन्द्रप्रभ ८, पुष्पदंत (दूजा नाम सुविधिनाथ) ९, शीतल १०, श्रेयांस ११, वासुपूज्य १२, विमल १३, अनन्त १४, धर्म १५, शांति १६, कुंथु १७, अर १८, मल्लि १९, मुनिसुव्रत २०, नमि २१, नेमि २२, पार्श्व २३, महावीर २४, जिनका अब शासन प्रवर्ते है। ये चौबीस तीर्थकरनिके नाम कहे हैं। अब इनकी पूर्व भवकी नगरीनिके नाम कहे हैं। पुण्डरीकनी १, सुसीमा २, क्षमा, ३, रत्नसंचयपुर ४, ऋषभदेव आदि तीन तीन एक एक नगरविषै अनुक्रमतें वासुपूज्य पर्यंतकी ये चार नगरी पूर्व भवके निवासकी जाननी। अर महानगर १३, अरिष्टपुर १४, सुभद्रिका १५, पुण्डरीकनी १६, सुसीमा १७, क्षेम १८, वीतशोका १९, चम्पा २०, कौशाबी २१, नागपुर २२, साकेता २३, छत्राकार २४, ये चौवीस तीर्थंकरनिकी या भवके पहले जो देवलोक, ता भव पहिले जो मनुष्यभव ताका स्वर्गपुरी समान राजधानी कही। अब तिनके परभवके नाम सुनो–वज्रनाभि १, विमलवाहन २, विपुलख्याति ३, विपुलवाहन ४, महाबल ५, अतिबल ६, अपराजित ७, नंदिषेण ८, पद्म ९, महापद्म १०, पद्मोत्तर ११, पंकजगुल्म १२, कमल समान है मुख जाका ऐसा नलिनगुल्म १३, पद्मासन १४, पद्मरथ १५, दृढरथ १६, मेघरथ १७, सिंहरथ १८, वैश्रवण १९, श्रीधर्मा २०, सुरश्रेष्ठ २१, सिद्धार्थ २२, आनन्द २३, सुनन्द २४ ये तीर्थंकरनिके या भव पहिले तीजे भवके नाम कहे। अब इनके पूर्वभवके पितानिके नाम सुन–वज्रसेन १, महातेज २, रिपुदमन ३, स्वयंप्रभ ४, विमलवाहन ५, सीमंधर ६, पिहितास्रव ७, अरिंदम ८, युगंधर ९, सर्वजनानन्द १०, अभयानन्द ११, वज्रदंत १२, वज्रनाभि १३, सर्वगुप्ति १४, गुप्तिमान १५, चिंतारक्ष १६ विमलवाहन १७, घनरव १८, धीर १९, संवर २०, त्रिलोकीरवि २१, सुनन्द २२, वीतशोक २३, प्रोष्ठिल २४, ये पूर्व भवके पितावोंके नाम कहे। अब चौवीस तीर्थंकर जिस जिस देवलोकसे आए

वजयन्त ६, मध्यग्रवेयक ७, वजयन्त ८, अपराजित ९, आरणस्वर्ग १०, पुष्पोत्तर विमान ११, कापिष्ठ-स्वग १२, शुक्रस्वर्ग १३, सहसारस्वग १४, पुष्पोत्तर १५, पुष्पोत्तर १६, पुष्पोत्तर १७, सर्वार्थसिद्धि १८, विजय १९, अपराजित २०, प्राणत २१, वजयन्त २२, आनत २३, पुष्पोत्तर २४, ये चौबीस तीर्थंकरोके आवनके स्वग कहे।

अब आगे चौवीस तीथकरनिकी ज मपुरी, जन्म नक्षत्र, माता—पिता अर वराग्यके वक्ष अर मोक्ष के स्थान म कहूह सो तुम सुनो। अयोध्यानगरी, पिता नाभिराजा, माता मरुदेवी राणी, उत्तरा षाढ नक्षत्र बटवक्ष कलाश पवत प्रथम जिन हे मगध देशके भूपति! तोहि अतींद्रिय सुखकी प्राप्ति करहु १। अयोध्यानगरी, जितशत्रु पिता, विजया माता रोहिणी नक्षत्र, सप्तच्छदवक्ष, सम्मेदशिखर अजितनाथ हे श्रेणिक तुम्हे मगलके कारण होउ २। श्रावस्ती नगरी जितारि पिता, सना माता पूर्वाषाढ नक्षत्र शालवक्ष सम्मेदशिखर, सभवनाथ तेरे भव बधन हरहु ३। अयोध्यापुरी नगरी, सवर पिता सिद्धार्था माता, पुनवसु नक्षत्र, सालवक्ष, सम्मेदशिखर, अभिन दन तोहि कल्याणके कारण होउ ४। अयोध्यापुरी नगरी, मेघप्रभ पिता, सुमगला माता, मघा नक्षत्र, प्रियगुवक्ष, सम्मेदशिखर, सुमतिनाथ जगतमें महामगलरूप तेरे सवविघ्न हरहु ५। कौशाबीनगरी, धारणपिता, सुसीमामाता, चित्रा नक्षत, प्रियगु वक्ष सम्मदशिखर, पदमप्रभ तेरे कामक्रोधादि अमगल हरहु ६। काशीपुरी नगर, सुप्रतिष्ठ पिता, पथ्वी माता, विशाखा नक्षत्र, शिरीषवक्ष, सम्मेदशिखर, सुपाश्वनाथ हे राजन तेरे ज मजरामत्यु हरहु ७। चद्रपुरी नगरी, महासेन पिता, लक्ष्मणा माता, अनुराधा नक्षत्र, नागवक्ष, सम्मेदशिखर, च द्रप्रभ तोहि शातिभावके दाता होहु ८। काकदी नगरी, सुग्रीवपिता, रामामाता, मूल-नक्षत्र, शालवक्ष, सम्मेदशिखर, पुष्पदत तेर चित्तको पवित्र करहु ९। भद्रिकापुरी नगरी, दढरथ पिता, सुन न्दा माता, पूर्वाषाढ नक्षत्र, प्लक्षवक्ष, सम्मेदशिखर, शीतलनाथ तरे त्रिविधताप हरहु १०। सिंह-पुरी नगरी, विष्णुराज पिता, विष्णुश्री देवी माता, श्रवननक्षत्र, तिन्दुक वक्ष, सम्मेदशिखर, श्रेयास-

नाथ तेरे विषय, कषाय हरहु, कल्याण करहु ११। चपापुरी नगरी, वासुपूज्य पिता, विजया माता, शतभिषा नक्षत्र, पाठलवक्ष, निर्वाणक्षेत्र चम्पापुरीका बन, श्रीवासुपूज्य तोहि निर्वाणकी प्राप्ति करहु १२। कपिलानगरी, कतवर्मापिता, सुरम्यामाता, उत्तराषाढ नक्षत्र, जबूवक्ष, सम्मेदशिखर, विमलनाथ तोहि रागादिमल रहित करहु १३। अयोध्यानगरी, सिंहसेन पिता, सवयशामाता रेवती नक्षत्र, पीपलवक्ष, सम्मदशिखर, अनतनाथ तुझे अतररहित करहु १४। रत्नपुरी नगरी, भानु पिता, सुव्रता माता, पुष्य नक्षत्र, दधिपण वक्ष, सम्मेदशिखर, धमनाथ तोहि धमरूप करहु १५। हस्तनागपुरनगर, विश्वसेनपिता, ऐरा माता, भरणीनक्षत्र, नदीवक्ष,सम्मेदशिखर, शातिनाथ तुझे सदा शाति करहु १६। हस्तनागपुर नगर, सूय पिता, श्रीदेवी माता, कतिका नक्षत्र, तिलक वक्ष, सम्मेदशिखर, कुथुनाथ हे राजेन्द्र! तेरे पाप हरणके कारण होहु १७। हस्तिनागपुर नगर, सुदशन पिता, मित्रा माता, रोहिणी नक्षत्र, आमवक्ष, सम्मेदशिखर, अरनाथ हे श्रणिक! तेरे कमरज हरहु १८। मिथिलापुरी नगरी, कुभपिता, रक्षतामाता, अश्विनी नक्षत्र, अशोकवक्ष, सम्मेदशिखर, मल्लिनाथ हे राजा! तुझे मन शोक रहित करहु १९। कुशाग्रनगर, सुमित्रपिता, पदमावतीमाता, श्रवणनक्षत्र, चम्पकवक्ष, सम्मेदशिखर, मुनिसुव्रतनाथ सदा तेरे मनविष बसहु २०। मिथिलापुरी नगरी, विजयपिता,वप्रा माता, अश्विनी नक्षत्र, मौलश्रीवक्ष, सम्मेदशिखर, नेमिनाथ तुझे धमका समागम करहु २१। सौरीपुर नगर, समुद्रविजय पिता, शिवादेवी माता, चित्रानक्षत्र, मेषश्रृग वक्ष, गिरिनार पवत, नेमिनाथ तुझे शिवसुखदाता होवहु २२। काशीपुरी नगरी, अश्वसेन पिता, वामा माता, विशाखा नक्षत्र, धवलवक्ष, सम्मेदशिखर, पार्श्व-
नाथ तेरे मनको धोय देहु २३। कुण्डलपुरनगर, सिद्धाथ पिता, प्रियकारिणी माता, उत्तराफाल्गुनी नक्षत्र, शालवक्ष, पावापुर, महावीर तुझे परम मगल करहु, आपसमान करहु २४। ऋषभदेवका निर्वाणकल्याण कलाश १, वासुपूज्यका चपापुर, २, नेमिनाथका गिरनार ३, महावीरका पावापुर ४ औरनिका सम्मेदशिखर हैं। शाति कुथु अर तीन तीर्थंकर चक्रवर्ती भी भए और कामदेव भी भए,

राज्य छोड वैराग्य लिया। और वासुपूज्य, मल्लिनाथ, नेमिनाथ, पार्श्वनाथ महावीर ये पाच तीर्थंकर कुमार अवस्थामें वैरागी भए, राज भी न किया और विवाह भी न किया। अन्य तीर्थंकर महामडलीक राजा भए, राजछोड वैराग्य लिया। और चन्द्रप्रभ पुष्पदत ये दोय श्वेत वर्ण भए, और श्रीसुपार्श्वनाथ प्रियगुपञ्जरीक रग समान हरितवर्ण भए और पार्श्वनाथका वर्ण कच्चा शालि समान हरितवर्ण भया, पद्मप्रभका वर्ण कमल समान आरक्त भया, और वासुपूज्यका वर्ण टेसूके फूलसमान आरक्त भया, और मुनिसुव्रतनाथका वर्ण अजनी गिरिसमान श्याम, और नेमिनाथका वर्ण मोरके कठ समान श्याम, और सोलह तीर्थ करोंके वर्ण ताता सोनेके समान वर्ण भया। ये सब ही तीर्थंकर इन्द्र धरणेन्द्र चक्रवर्त्यादिकोंसे पूजने योग्य और स्तुति करने योग्य भए और सबहीका सुमेरुके शिखर पाडुकशिला पर जन्माभिषेक भया। सबहीके पचकल्याणक प्रकट भये, सम्पूर्ण कल्याणकी प्राप्ति का कारण है सेवा जिनकी, वे जिनेन्द्र तेरी अविद्या हर। या भाति गणधर देवने वर्णन किया। तब राजाश्रेणिक नमस्कारकर विनती करते भए—हे प्रभो! छट्ठो कालकी वर्तमान आयुका प्रमाण कहो और पापकी निवृत्तिका कारण परम तत्त्व जो आत्मस्वरूप उसका वर्णन बारम्बार करो और जिस जिनेन्द्रके अतरालमें श्रीरामचन्द्र प्रकट भए सो आपके प्रसादत मैं सब वर्णन सुना चाहू हू। ऐसा जब श्रेणिकने प्रश्न किया तब गणधरदेव कृपा कर कहते भए— कैसे हैं गणधरदेव ? क्षीरसागरके जल समान निर्मल है चित्त जिनका, हे श्रेणिक! कालनामा द्रव्य है सो अनन्त समय है, जाकी आदि अत नाहीं, ताकी सख्या कल्पनारूप दृष्टातसे पल्यसागरादि रूप महामुनि कहे है। एक महायोजन प्रमाण लम्बा चौडा ऊचा गोल गर्त (गड्ढा) उत्कृष्ट भोगभूमिका तत्कालका जन्म्याहुवा मेंढका बच्चा, ताके रोमके अग्रभागत भरिए, सो गर्त घनागाढा भरिए और सौ वर्ष गए एक रोम काढे सो व्योहारपल्य कहिए। सो यह कल्पना दृष्टात मात्र है, काहूने ऐसा किया नाहीं। यातैं असख्यात गुणी उद्धारपल्य है। इससे सख्यातगुणो अद्धापल्य है। ऐसी दसकोटाकोटि पल्य जाय तदि एक सागर कहिए और दश

कोटाकोटि सागर जाय तब एक अवसर्पिणीकाल कहिए और दसकोटाकोटि सागरको एक उत्सर्पिणी और बीसकोटाकोटि सागरका कल्पकाल कहिए। जस एक मासमें शुक्लपक्ष और कृष्णपक्ष ये दोय वर्तें तस एक कल्पकालविष एक अवसपणी और एक उत्सर्पिणी ये दोय वर्तें। इनके प्रत्येक २ छह छह काल ह तिनमें प्रथम सुखमासुखमाकाल चार कोटाकोटि सागरका ह, दूजा सुखमाकाल तीन कोटाकोटि सागरका ह, तोजा सुखमा दुखमा काल दो कोटाकोटि सागरका ह, और चौथा दुखमासुखमाकाल बयालीसहजार वष घाट एक कोटाकोटि सागरका ह, पचमा दु खमाकाल इक्कीस हजार वषका ह, छठा दु खमादु खमाकाल, सो भी इक्कीस हजार वषका ह। यह अवसपणीकालकी रीति कही। प्रथमकालसे लेय छठे काल पयत आयुआदि सब घटती गई और इससे उलटी जो उत्सपणी उसमें फिर छठेसे लेकर पहिले पयत आयु काय बल पराक्रम बढते गए। यह कालचक्रकी रचना जाननी।

अथान तर जब तीजे कालमे पल्यका आठवाँ भाग बाकी रहा तब चौदह कुलकर भए। तिनका कथन पूव कर आए ह। चौदहवें नाभिराजा तिनके आदि तीथकर ऋषभदेव पुत्र भए। तिनको मोक्ष गए पीछे पचासलाख कोटिसागर गए श्री अजितनाथ द्वितीय तीथकर भए। उनके पीछे तीसलाख कोटि सागर गये श्रीसभवनाथ भये। ता पीछे दशलाख कोटि सागर गये श्री अभिनन्दन भये। ता पीछ नव लाख कोटिसागर गये श्रीसुमतिनाथ भये। ता पीछें नव्वे हजार कोटिसागर गये श्री पद्मप्रभ भये। ता पीछे नव हजार कोटिसागर गये श्रीसुपाश्वनाथ भये। ता पीछे नौसौ कोटिसागर गये श्रीचन्द्रप्रभ भये। ता पीछे नव्वे कोटिसागर गये श्री पुष्पदन्त भये। ता पीछें नव कोटिसागर गये श्रीशीतलनाथ भए। ता पीछे सौसागर घाट कोटिसागर गये श्रेयासनाथ भये। ता पीछे चव्वन सागर गये श्रीवासुपूज्य भये। ता पीछे तीससागर गये श्रीविमलनाथ भये। ता पीछे नवसागर गये श्रीअनन्तनाथ भये। ता पीछे चारसागर गये श्रीधमनाथ भये। ता पीछे पौन पल्यघाट तीनसागर गये श्रीशातिनाथ भये। ता पीछे आधापल्य गये श्रीकु थुनाथ भये। ता पीछे हजारकोटि वषघाट पाव पल्य गये श्रीअरनाथ

भये । उनके पीछे पसठलाख चोरासी हजार वषघाट हजार कोटिवष गये श्रीमल्लिनाथ भये । ता पीछे चौवनलाखवष गये श्रीमुनिसुवतनाथ भए । उनके पीछे छहलाख वष गये श्रीनमिनाथ भए । उनके पीछे पाचलाख वषगए श्रीनेमिनाथ भये । उनके पीछे पौने चौरासी हजार वष गए श्रीपार्श्वनाथ भए । उनके पीछे अढाई सौ वष गए श्रीवद्धमान भए । जब वद्धमानस्वामी मोक्षको प्राप्त होवेंगे तब चौथेकालके तीन वष साढे आठ महीना बाकी रहेंगे । और इतने ही तीजेकालके बाकी रहे थ तब श्रीऋषभदेव मुक्ति पधारे । हे श्रेणिक ! धमचक्रके अधिपति श्रीवद्धमान इन्द्रके मुकुटके रत्ननिकी जो ज्योति, सोई भया जल, ताकरि धोए ह चरणयुगल जिनके, सो तिनको मोक्षपधारे पीछे पाचवाकाल लगेगा । जामैं देव निका आगमन नाहीं और अतिशयके धारक मुनि नाहीं, केवलज्ञानकी उत्पत्ति नाहीं, चक्रवर्ती बल भद्र और नारायणकी उत्पत्ति नाहीं, तुम सारिखे न्यायवान राजा नाहीं, अनीतिकारी राजा होवेंगे और प्रजाके लोक दुष्ट, महा ढीठ, परधन हरवेको उद्यमी होवगे, शील रहित, वत रहित, महाक्लेश व्याधिके भरे, मिथ्यादष्टि घोरकर्मी होवेंगे और अतिवष्टि अनावष्टि, टिडडी, सूवा, मूषक, अपनी सेना और पराई सेनायें जो सप्तईतियें, तिनका भय सदाही होयगा । मोहरूप मदिराके माते, रागद्वेषके भरे, भौंहको टेढा करनहार, क्रूरदष्टि, पापी महामानी, कुटिलजीव होवेंगे । कुवचनके बोलनहारे, क्रूरजीव, धनके लोभी पथ्वीपर एसे विचरेंगे जसे रात्रिविष घूघू विचर । और जस पटबीजना चमत्कारकर तस थोडे ही दिन चमतकार करेंगे । वे मूखदुजन जिनधमस पराङमुख कुधर्मविष आप प्रवर्तेंगे, औरोको प्रव र्तावेंगे । परोपकार रहित पराए कार्योंमें निरुद्यमी आप डूबेंगे औरोको डुबोवेंगे । वे दुगतिगामी आपको महत मानेंगे । त क्रूरकम चडाल मदोन्मत्त अनथकर माना ह हष जिन्होने, मोहरूप अधकारकरि अधे, कलिकालके प्रभावत हिसारूप जे कुशास्त्र वेई भए कुठार, तिनकरि अज्ञानी जीवरूप वृक्षनिको काटेंगे । पचम कालके आदिमें मनुष्योका सात हाथका ऊचा शरीर होयगा और एकसौ बीस वषकी उत्कृष्ट आयु होयगी । फिर पचमकालके अन्त दोय हाथका शरीर और बीस वषकी आयु उत्कष्ट रहैगी ।

बहुरि छठेके अन्त एक हाथका शरीर, उत्कृष्ट सोला वर्षकी आयु रहेगी। वे छठे कालके मनुष्य महा विरूप, मांसाहारी, महादुखी, पापक्रियारत, महारोगी, तिर्यच समान महा अज्ञानी होवेंगे। न कोई सम्बन्ध, न कोई व्यवहार, न कोई ठाकुर, न कोई चाकर, न राजा न प्रजा, न धन न घर, न सुख, महादुखी होवेंगे। अन्याय कामके सेवन हारे धर्मरहित, आचारसे शून्य, महापापके स्वरूप होंहिंगे। जैसे कृष्णपक्षमें चन्द्रमाकी कला घटै और शुक्लपक्षमें बढ़ै तैसे अवसर्पिणीकालमें घटै, उत्सर्पिणीविषै बढ़ै। और जैसे दक्षिणायणमें दिन घटै और उत्तरायणमें बढ़ै तैसे अवसर्पिणी उत्सर्पिणीविषै हानि वृद्धि जाननी। ये तीर्थकरनिका अंतराल तोहि कह्या।

हे श्रेणिक! अब तू तीर्थकरनिके शरीरकी ऊंचाईका कथन सुन! प्रथम तीर्थंकरका शरीर पांच सौधनुष ५००, दूजेका साढे चारसौ ४५०, तीजेका चारसौ धनुष ४००, चौथेका साढेतीनसै धनुष ३५०, पांचवेंका तीनसै धनुष ३००, छठेका ढाईसौ धनुष २५०, सातवेंका दो सौ धनुष २००, आठवेंका डेढ़सो धनुष १५०, नौवेंका सौ धनुष १००, दसवेंका नब्बे धनुष ९०, ग्यारहवेंका अस्सी धनुष ८०, बारहवेंका सत्तर धनुष ७०, तेरहवेंका साठ धनुष ६०, चौदहवेंका पच्चास धनुष ५०, पन्द्रहवेंका पतालीस धनुष ४५, सोलहवेंका चालीस धनुष ४०, सत्रहवेंका पैंतीस धनुष ३५, अठारवेंका तीस धनुष ३०, उन्नीसवेंका पच्चीस धनुष २५, बीसवेंका बीस धनुष २०, इक्कीसवेंका पन्द्रह धनुष १५, बाईसवेंका दस धनुष १०, तेईसवेंका नौहाथ ९, चौवीसवेंका सात हाथ ७।

अब आगे इन चौवीस तीर्थंकरनिकी आयुका प्रमाण कहिए है। प्रथमका चौरासी लाख पूर्व (चौरासी लाख वर्षका एक पूर्वांग और चौरासी लाख पूर्वांगका एक पूर्व होय है), और दूजेका बहत्तर लाखपूर्व, तीजेका साठलाखपूर्व, चौथेका पचासलाख पूर्व, पांचवेंका चालीसलाखपूर्व, छठेका तीसलाख पूर्व, सातवेंका बीसलाखपूर्व, आठवेंका दसलाखपूर्व, नवमेंका दोय लाखपूर्व, दसवेंका लाखपूर्व, ग्यारवेंका चौरासीलाख वर्ष, बारवेंका बहत्तरलाख वर्ष, तेरवेंका साठलाख वर्ष, चौदवेंका तीसलाख वर्ष, पन्द्रवे

का दस लाख वर्ष, सोलवेंका लाख वर्ष, सत्रणेका पचानवे हजार वर्ष, अठारणेका चौरासी हजार वर्ष, उन्नीसणेका पचावनहजार वर्ष, बीसवेंका तीसहजार वर्ष, इक्कीसवेंका दसहजार वर्ष, बाईसवेंका हजार वर्ष, तेईसवेंका सौ वर्ष, चौबीसवेंका बहत्तर वर्षका आयु प्रमाण जानना।

अथानन्तर ऋषभदेवके पहिले जे चौदह कुलकर भए तिनके आयुकायका वर्णन करिए है—प्रथम कुलकरकी काय अठारहसौ धनुष, दूसरेकी तेरासौ धनुष तीसरेकी आठसौ धनुष, चौथेकी सातसौ पिचत्तर धनुष, पाचवेंकी साढे सातसौ धनुष, छठेकी सवा सातसौ धनुष, सातवेंकी सातसौ धनुष, आठवेंकी पौने सातसौ धनुष, नवमेकी साढे छसौ धनुष, दसवेंकी सवाछसौ धनुष, ग्यारवेंको छसौ धनुष, बारवेंकी पोन छसौ धनुष, तेरवेंकी साढे पाचसौ धनुष, चौदहवेंकी सवा पाच सो धनुष।

अब इन कुलकरनिकी आयुका वर्णन करै है—पहिलेकी आयु पल्यका दसमा भाग, दूजेकी पल्यका सौवा भाग, तीजेकी पल्यका हजारवा भाग, चौथेकी पल्यका दसहजारवा भाग, पाचमेंकी पल्यका लाखवा भाग, छठेकी पल्यका दसलाखवा भाग सातवेंकी पल्यका कोडवा भाग, आठवेंकी पल्यका दस कोडवा भाग, नौवमेंकी पल्यका सौकोडवा भाग, दसवेंकी पल्यका हजार कोडवा भाग, ग्यारवेंकी पल्य का दस हजार कोडवा भाग, बारवेंकी पल्यका लाख कोडवा भाग, तेरवेकी पल्यका दसलाख कोडवा भाग, चौदहवेकी कोटि पूर्वकी आयु भई।

अथानन्तर हे श्रेणिक! अब तू बारह जे चक्रवर्ती तिनकी वार्ता सुन। प्रथम चक्रवर्ती भरत, श्री ऋषभदेवके यशस्वती राणी, ताकू सुनन्दा भी कहै है ताके पुत्र, या भरतक्षेत्रका अधिपति। ते पूर्वभवविषै पुण्डरीकनी नगरीविषै पीठ नाम राजकुमार थे। वे कुशसेन स्वामीके शिष्य होय मुनिव्रत धर सर्वार्थसिद्धि गए। तहांसे चयकर षटखंडका राज्य कर फिर मुनि होय, अंतर्मुहूर्तमें केवलज्ञान उपजाय, निर्वाणको प्राप्त भए। फिर पृथ्वीपुर नामा नगरविषै राजा विजयतेज, यशोधर नामा मुनिके निकट जिनदीक्षा धर विजयनाम विमान गए। वहांसे चयकर अयोध्याविषै राजा विजय, राणी सुमंगला,

तिनके पुत्र सगर नाम द्वितीय चक्रवर्ती भए। ते महा भोग भोगकर इन्द्रसमान, देव-विद्याधरनिकरि धारिए ह आज्ञा जिनकी, ते पुत्रनिके शोककरि राज्यका त्यागकर अजितनाथके समोसरणमें मुनि होय, केवलज्ञान उपजाय,सिद्ध भए। और पु डरीकनी नगरीविष एक राजा शशिप्रभ वह विमलस्वामीका शिष्य होय ग्रवेयक गये। वहासे चयकर श्रावस्ती नगरीमें राजा सुमित्र, राणी भद्रवती, तिनके पुत्र मघवा नाम ततीय चक्रवर्ती भए। लक्ष्मीरूप बेलके लिपटनेको वक्ष ते श्रीधमनाथके पीछे शातिनाथके उपजने स पाहले भए। समाधान रूप जिनमुद्राधार सौधमस्वग गए। फिर चौथे चक्रवर्ती जो श्रीसनत्कुमार भए, तिनकी गौतमस्वामीने बहुत बडाई करी। तब राजा श्रेणिक पूछते भए-हे प्रभो! वे किस पुण्य से ऐसे रूपवान भए। तब उनका चरित्र सक्षेपताकरि गणधर कहते भए। कसा ह सनत्कुमारका चरित्र? जो सौवषमें भी कोऊ कहिवेको समथ नाही। यह जीव जबलग जनधमको नाहीं प्राप्त होय ह तब लग तियच नारकी कुमानुष कुदेव कुगतिम दु ख भोगव ह। जीवोने अनतभव किए सो कहालो कहिए। परन्तु एक एक भव कहिए ह। एक गोवधन नाम ग्राम, वहा भले भले मनुष्य बस। तहा एक जिन-दत्त नामा श्रावक बडा गहस्थ, जस सव जलस्थानकोसे सागर शिरोमणि ह और सव गिरनिम सुमेरु, और सव ग्रहोविष सूय, तणोमें इक्षु, बेलोमें नागरबेल, वक्षोमें हरिचदन प्रशसायोग्य ह तस कुलोमें श्रावकका कुल सर्वोत्कष्ट आचारकर पूजनीक ह, सुगतिका कारण ह। सो जिनदत्त नामा श्रावक गुणरूप आभूषणनिकरि मडित श्रावकके व्रत पाल उत्तम गति गया। और ताकी स्त्री विनयवती महा पतिव्रता श्रावकके व्रत पालनेहारी सो अपने घरकी जगहमें भगवानका चत्यालय बनाया, सकल द्रव्य
तहा लगाया और आर्या होय महातपकर स्वगमें प्राप्त भई। अर ताही ग्रामविष एक और हेमबाहु नामा गहस्थ, आस्तिक, दुराचारसे रहित, सो विनयवतीका कराया जो जिनमदिर ताकी भक्तिकरि जयदेव भया। सो चातुर्विधसघकी सेवामें सावधान, सम्यग्दष्टि, जिनवदनामें तत्पर, सो चयकर मनुष्य भया। बहुरि देव बहुरि मनुष्य। या भाति मगधर महापुरी नगरीविषै सुप्रभ नामा राजा। ताके तिलक

सुन्दरीरानी गुणरूप आभूषणकी मंजूषा, ताके धर्मरुचि नामा पुत्र भया। सो राज्य तज सुप्रभनामा पिता जो मुनि ताका शिष्य होय, मुनिव्रत अंगीकार करता भया। पंच महाव्रत, पंच समिति, तीन गुप्तिका प्रतिपालक आत्मध्यानी गुरुसेवामें अत्यन्त तत्पर अपनी देहविषै अत्यन्त निस्पृह, जीवदया का धारक, मन इन्द्रियोंका जीतनहारा, शीलका सुमेरु, शंका आदि जे दोष तिनसे अतिदूर, साधुओं का वैयावृत करनहारा, सो समाधिमरणकर चौथे देवलोकविषै गया। तहां सुख भोगता भया। तहां से चयकर नागपुरमें राजा विजय, राणी सहदेवी, तिनके सनत्कुमार नामा पुत्र चौथा चक्रवर्ती भया। छहखण्ड पृथ्वीमें जाकी आज्ञा प्रवरती, सो महारूपवान। एकदिवस सौधर्मइन्द्रने इनके रूपकी अति प्रशंसा करी सो रूप देखनेको देव आए। सो प्रच्छन्न आयकर चक्रवर्तीका रूप देख्या। ता समय चक्र वर्तीने कुस्तीका अभ्यास किया था, सो शरीर रजकर धूसरा होय रहा था अर सुगंध उबटना लगाया था, अर स्नानकी एक धोती ही पहिने नानाप्रकारके जे सुगंध जल तिनसे पूर्ण नानाप्रकारके रत्ननिके कलश, तिनके मध्य स्नानके आसनपर विराजे हुते। सो देव रूपको देख आश्चर्यको प्राप्त भए। परस्पर कहते भए—जैसा इन्द्रने वर्णन किया तैसा ही है यह मनुष्यका रूप, देवोंके चित्तको मोहित करण हारा है। बहुरि चक्रवर्ती स्नानकर वस्त्राभरण पहर सिंहासन पर आय विराजे। रत्नाचलके शिखर समान है ज्योति जाकी। अर वह देव प्रकट होयकर द्वारे आय ठाढे रहे। अर द्वारपालसे हाथ जोड चक्रवर्तीको कहलाया जो स्वर्गलोकके देव तिहारा रूप देखने आए हैं। तब चक्रवर्ती अद्भुत शृंगार किए विराजे हुते ही तब देवोंके आयबेकर विशेष शोभा करी, तिनको बुलाया। ते आय चक्रवर्तीका रूप देख माथा धुनते भए। अर कहते भए—एकक्षण पहिले हमने स्नानके समय जैसा देखा था तैसा अब नाहीं। मनुष्योंके शरीरकी शोभा क्षणभंगुर है धिक्कार है। इस असार जगतकी मायाको। प्रथम दर्शन में जो रूप यौवनकी अद्भुतता हुती सो क्षणमात्रमें ऐसे विलाय गई जैसे बिजुली चमत्कारकर क्षणमात्रमें विलाय जाय है। ये देवनिके वचन सनत्कुमार सुन, रूप अर लक्ष्मीको क्षणभंगुर जान, वीतराग भावधर,

महामुनि होय, महातप करते भए। महाऋद्धि उपजी। पुनि कर्मनिर्जरा निमित्त महारोगकी परीषह सहते भए, महाध्यानारूढ होय समाधिमरण कर सनत्कुमार स्वर्ग सिधारे। वे शांतिनाथके पहले अर मघवा तीजा चक्रवर्ती ताके पीछे भए। अर पुण्डरीकनी नगरीविषै राजा मेघरथ,वह अपने पिता धनरथ तीर्थंकरके शिष्य मुनि होय सर्वार्थसिद्धि को पधारे। तहांतै चयकर हस्तनागपुरमें राजा विश्वसेन, राणी ऐरा, तिनके शांतिनाथ नामा सोलहवें तीर्थंकर, अर पंचम चक्रवर्ती भए। जगतकू शांतिके करणहारे, जिनका जन्म कल्याणक सुमेरु पर्वतपर इन्द्रने किया,बहुरि षटखण्डके भोक्ता भए। तृण समान राज्यको जान तजा,मुनिव्रत धर मोक्ष गए। बहुरि कुंथुनाथ छठे चक्रवर्ती सत्रहवें तीर्थंकर, अरनाथ सातवें चक्रवर्ती अठारवें तीर्थंकर तें मुनि होय निर्वाण पधारे सो तिनका वर्णन तीर्थंकरोंके कथनमें पहिले कहा ही है। अर धान्यपुर नगरमें राजा कनकप्रभ, सो विचित्रगुप्त स्वामीके शिष्य मुनि होय, स्वर्ग गए। तहांतै चयकर अयोध्या नगरीविषै राजा कीर्तिवीर्य, राणी तारा, तिनके सुभूमि नामा अष्टम चक्रवर्ती भए। जाकरि यह भूमि शोभायमान भई। तिनके पिताका मारणहारा जो परशुराम तानै क्षत्री मारे हुते, अर तिनके सिर थम्भनविषै चिनाए हुते, सो सुभूमि अतिथिका भेषकर परशुरामके भोजनको आए। परशुरामने निमित्तज्ञानीके वचानत क्षत्रीनिके दांत पात्रमें मेलि सुभूमिको दिखाये, तदि दांत क्षीरका रूप होय परणये, अर भोजनका पात्र चक्र होय गया। ता करि परशुरामको मारचा। परशुरामने क्षत्री मारे, पृथ्वी निःक्षत्री करी हुती सो सुभूमि परशुरामको मार द्विजवर्गतै द्वेष किया। पृथ्वी अब्राह्मण करी। जैसे परशुरामके राज्यमें क्षत्री कुल छिपाय रहे हुते तैसे याके राज्यमें विप्र अपने कुल छिपाए रहे। सो स्वामी अरनाथके मुक्ति गए पीछे ३११
अर मल्लिनाथके होयवे पहिले सुभूमि भए। अति भोगासक्त निर्दयपरिणामी अव्रती मरकर सातवें नरक गए। अर वीतशोका नगरी, ताविषै राजा चित्तसुप्रभ स्वामीके शिष्य मुनि होय ब्रह्मस्वर्ग गए। तहांतै चयकर हस्तनागपुर विषै राजा पद्मरथ राणी मयूरी, तिनके महापद्म नामा नौमे चक्रवर्ती भए। षट्खण्ड पृथ्वीके भोक्ता, तिनकू आठ पुत्री महारूपवती, सो रूपके अतिशयकरि गर्वित, तिनके विवाहकी इच्छा

नाहीं। सो विद्याधर तिन हर ले गये। सो चक्रवर्तीने छुडाय मगाई। ये आठो ही कन्या आर्यिकाके बृत धर समाधिमरणकर देवलोकमें प्राप्त भइ। अर विद्याधर इनको लेगए हुते तेभी विरक्त होय मुनिवत धर आत्मकल्याण करते भए। यह वत्तात देख महापदम चक्रवर्ती पदमनामा पुत्रको राज देय विष्णु नामा पुत्र सहित वरागी भए। महातपकर केवल उपजाय मोक्षको प्राप्त भए। अरनाथ स्वामीके मुक्ति गए पीछ अर मल्लिनाथके उपजनेसे पहिले सुभूमिके पीछे भए। अर विजय नामा नगरविषै राजा महेन्द्रदत्त, ते अभिनन्दन स्वामीके शिष्य होय महेंद्र स्वगको गए। तहासे चयकर कापिलनगरमें राजा हरिकेतु ताको राणी विप्रा, तिनके हरिषेण नामा दसवें चक्रवर्ती भए। तिननें सव भरतक्षेत्रकी पृथ्वी चैत्यालयनिकरि मडित करी, अर मुनिसवतनाथ स्वामीके तीथमें मुनि होय सिद्धपदकू प्राप्त भए। अर राजपुर नामा नगरमे राजा जो असीकात थे वह सुधममित्र स्वामीके शिष्य मुनि होय ब्रह्मस्वग गये। तहात चयकर राजा विजय, राणी यशोवती तिनके जयसेन नामा ग्यारवें चक्रवर्ती भए। ते राज्य तज दिगम्बरी दीक्षा धर रत्नत्रयका आराधनकर सिद्धपदको प्राप्त भए। यह श्रीमुनिसुवतनाथ स्वामीके मुक्ति गए पीछे नमिनाथ स्वामीके अतरालमे भये। अर काशीपुरीमे राजा सम्भूत, ते स्वतत्र लिग स्वामीके शिष्य मुनि होय पदमयुगल नामा विमानविष देव भए। तहात चयकर कापिल नगर मे राजा ब्रह्मरथ राणी चूला, तिनके ब्रह्मदत्त नामा बारवो चक्रवर्ती भए। ते छ खण्ड पृथ्वीका राज्य कर, मुनिवत विना रौद्रध्यानकर सातवें नरक गये। यह श्रीनेमिनाथ स्वामीको मुक्ति गये पीछे पार्श्व नाथ स्वामीके अतरालमें भए। ये बारह चक्रवर्ती बडे पुरुष है, छ खड पृथ्वीके नाथ जिनकी आज्ञा देव विद्याधर सब ही मान ह। हे श्रेणिक! तोहि पुण्य पापका फल प्रत्यक्ष कह्या सो यह कथन सुन कर योग्य काय करना, अयोग्य काम न करना। जसे बटसारी विना कोई मागमें चल तो सुखसू स्थानक नाहीं पहुँचे, तसे सुकृत विना परलोकमें सुख न पाव। कलाशके शिखर समान जे ऊचे महल तिनमें जो निवास कर ह सो सव पुण्यरूप वृक्षका फल ह। अर जहा शीत उष्ण पवन पानीकी बाधा

ऐसी कुटियोमें बस ह, दलिद्ररूप कीचमें फसे ह, सो सव अधमरूपवक्ष का फल ह । विध्याचल पवतके शिखर समान ऊचे जे गजराज उनपर चढकर सेनासहित चल ह, चवर ढुर हैं, सो सव पुण्यरूप वक्षका फल ह । जे महा तुरगनिपर चमर ढुरते अर अनेक असवार पियादे जिनके चौगिद चल हैं सो सब पुण्यरूप राजाका चरित्र ह । अर देवनिके विमान समान मनोज्ञ जो रथ तिनपर चढकर जे मनुष्य गमन कर ह सो पुण्यरूप पवतके मीठे नीझरने ह । अर जो फटे मले कपडे अर पियादे फिर ह सो सब पाप रूप वृक्षका फल ह । अर जो अमृत सारिखा अन्न स्वणके पात्रमें भोजन कर ह सो सब धम रसायन का फल मुनियोने कहा ह । अर जो देवोका अधिपति इन्द्र, अर मनुष्योका अधिपति चक्रवर्ती तिनका पद भव्यजीव पाव ह सो सब जीवदयारूप बेलका फल ह । कसे हैं भव्यजीव ? कमरूप कु जरको शार्दूल समान ह । अर राम कहिए बलभद्र, केशव कहिए नारायण तिनके पद जो भव्यजीव पाव ह सो सब धमका फल ह ।

हे श्रेणिक ! आगे वासुदेवोका वणन करिए ह सो सुनो—या अवसपणीकालके भरतक्षेत्रके नव वासुदेव ह । प्रथम ही इनके पूवभवकी नगरियोके नाम सुनो—हस्तिनागपुर १, अयोध्या २, श्रावस्ती ३, कौशाबी ४, पोदनापुर ५, शलनगर ६, सिहपुर ७, कौशाबी ८, हस्तनागपुर ९ । ये नव ही नगर कसे ह ? सव ही द्रव्यके भरे ह अर ईतिभीतिरहित ह । अब वासुदेवोके पूव भवके नाम सुनो—विश्व नन्दी १, पवत २, धनमित्र ३, सागरदत्त ४, विकट ५, प्रियमित्र ६, मानचेष्टित ७, पुनवसु ८, गग-देव जिसे निर्णामिक भी कहे है । ९ । ये नव ही वासुदेवोके जीव पूवभवविष विरूप दौर्भाग्य राज्य भ्रष्ट होय ह । बहुरि मुनि होय महा तप कर ह । बहुरि निदानके योगत स्वगविष देव होय ह । तहात चयकर बलभद्रके लघुभ्राता वासुदेव होय ह । तात तपत निदान करना ज्ञानियोको वर्जित ह । निदान नाम भोगाभिलाषका ह, सो महा भयानक दु ख देनेको प्रवीण है । आगे वासुदेवोके पूवभवके गुरुवो के नाम सुनो, जिनपै इन्होने मुनिवत आदरे—सभूत १, सुभद्र २, वसुदशन ३, श्रेयास ४, भूतिसग ५, ३१३

वसुभूति ६, घोषसेन ७, पराभोधि ८, द्रुमसेन ९। अब जिस जिस स्वर्गतें आय वासुदेव भए तिनके नाम सुनो–महाशुक्र १, प्राणत २, लांतव ३, सहसार ४, ब्रह्म ५, महेंद्र ६, सौधर्म ७, सनत्कुमार ८, महाशुक्र ९। आगे वासुदेवोंकी जन्मपुरियोंके नाम सुनो–पोदनापुर १, द्वापुर २, हस्तनागपुर ३, बहुरि हस्तनागपुर ४, चक्रपुर ५, कुशाग्रपुर ६, मिथिलापुर ७, अयोध्या ८, मथुरा ९। ये वासुदेवोंके उत्पत्तिके नगर हैं। कैसे हैं नगर? समस्त धन धान्य कर पूर्ण महाउत्सवके भरे हैं। आगे वासुदेवोंके पिताके नाम सुनो–प्रजापति १, ब्रह्मभूति २, रौद्रनन्द ३, सौम ४, प्रख्यात ५, शिवाकर ६, सममूर्धाग्निनाद ७, दशरथ ८, वासुदेव ९। बहुरि इन नव वासुदेवोंकी माताओंके नाम सुनो–मृगावती १, माधवी २, पृथिवी ३, सीता ४, अंबिका ५, लक्ष्मी ६, केशिनी ७, सुमित्रा ८, देवकी ९। ये नव ही वासुदेवोंकी नव माता। कैसी हैं? अतिरूपगुणनिकरि मंडित महा सौभाग्यवती जिनमती हैं। आगे नव वासुदेवोंके नाम सुनो–त्रिपृष्ट १, द्विपृष्ट २, स्वयंभू ३, पुरुषोत्तम ४, पुरुषसिंह ५, पुण्डरीक ६, दत्त ७, लक्ष्मण ८, कृष्ण ९। आगे नव ही वासुदेवोंकी पटराणियोंके नाम सुनो–सुप्रभा १, रूपिणी २, प्रभवा ३, मनोहरा ४, सुनेत्रा ५, विमलसुन्दरी ६, आनन्दवती ७, प्रभावती ८, रुक्मिणी ९। ये वासुदेवोंकी मुख्य पटराणी। कैसी हैं? महागुण कलानिपुण धर्मवती व्रतवती हैं।

अथानन्तर अब नव बलभद्रोंका वर्णन सुनो। सो पहिले नव ही बलभद्रोंकी पूर्वजन्मकी पुरियोंके नाम कहे हैं–पुण्डरीकनी १, पृथिवी २ आनंदपुरी ३, नंदपुरी ४, वीतशोका ५, विजयपुर ६, सुसीमा ७, क्षेमा ८, हस्तनागपुर ९। और बलभद्रोंके नाम सुनो–बल १, मारुतवेग २, नंदिमित्र ३, महाबल ४, पुरुषर्षभ ५, सुदर्शन ६, वसुंधर ७, श्रीचन्द्र ८ सखिसंज्ञ ९। अब इनके पूर्वभवके गुरुवोंके नाम सुनो जिनपै इन्होंने जिनदीक्षा आदरी –अमृतार १, महासुव्रत २, सुव्रत ३, वृषभ ४, प्रजापाल ५, दमवर ६, सुधर्म ७, अर्णव ८, विद्रुम ९। बहुरि नव बलदेव जिन जिन देवलोकनितैं आए तिनके नाम सुनहु–तीन बलभद्र तो अनुत्तरविमानतें आए, अर तीन सहसार स्वर्गतें आए, दो ब्रह्मस्वर्गतैं

आए, अर एक महाशुक्त आया। अब इन नव बलभद्रोकी मातानिके नाम सुनो, क्योंकि पिता तो बलभद्रोके और नारायणोके एक ही होय ह। ऋद्राभोजा १, सुभद्रा २, सुवेषा ३, सुदशना ४, सुप्रभा ५, विजया ६, वजयती ७, अपराजिता जाहि कौशल्या भी कह ह ८, रोहिणी ९। नव बलभद्र, नव नारायण, तिनमें पाच बलभद्र, पाच नारायण तो श्रेयासनाथ स्वामीके समय आदि ले धमनाथ स्वामीके समय पयत भए और छठे और सातवें अरनाथ स्वामीको मुक्ति गए पीछे मल्लिनाथ स्वामीके पहिले भए और अष्टम बलभद्र वासुदव मुनिसुवतनाथ स्वामीके मुक्ति गए पीछे नेमिनाथ स्वामीके समयके पहिले भए। अर नवमें श्रीनेमिनाथके काकाके बेटे भाई महाजिनभक्त अदभुत क्रियाके धारणहारे भए। अब इनके नाम सुनहु–अचल १, विजय २, भद्र ३, सुप्रभ ४, सुदशन ५, नदिमित्र (आनद) ६, नन्दिषेण (नन्दन) ७, रामचन्द्र ८, पदम ९। आगें जिन महामुनियोप बलभद्रोने दीक्षा धरी तिनके नाम कहिए ह–सुवणकुम्भ १, सत्यकीर्ति २, सुधम ३, मगाक ४, श्रुतिकीर्ति ५, सुमित्र ६, भवनश्रुत ७, सुव्रत ८, सिद्धाथ ९। यह बलभद्रोके गुरुवोक नाम कहे। महातपको धारकरि कमनिजराके करण हारे, तीन लोकमें प्रकट ह कीर्ति जिनकी, नव बलभद्रोमें आठ तो कमरूप वनको भस्म कर मोक्ष प्राप्त भए। कसा ह ससार वन ? आकुलताको प्राप्त भए ह नानाप्रकारकी व्याधिकर पीडित प्राणी जहाँ, बहुरि वह वन कालरूप जो व्याघ ताकरि अति भयानक ह। अर कसा ह यह वन ? अनत जन्मरूप जो कटकवृक्ष तिनका ह समूह जहाँ। विजय बलभद्र आदि श्री रामचन्द्र पर्यंत आठ तो सिद्ध भए और पदम-नाभा जो नवमा बलभद्र वह ब्रह्मस्वगमें महाऋद्धिका धारी देव भया। ३१५

अब नारायणोके शत्रु जे प्रतिनारायण तिनके नाम सुनो–अश्वग्रीव १, तारक २, मेरक ३, मधु-कटभ ४, निशुभ ५, बलि ६, प्रह्लाद ७, रावण ८, जरासिंध ९। अब इन प्रतिनारायणोकी राज-धानियोका नाम सुनो–अलका १, विजयपुर २, नदनपुर ३, पृथ्वीपुर ४, हरिपुर ५, सूयपुर ६, सिंह पुर ७, लका ८, राजगृही ९। ये नौ ही नगर कसे ह ? महा रत्न जडित, अति देदीप्यमान, स्वगलोक

समान हैं ।

हे श्रेणिक ! प्रथम ही श्रीजिनेन्द्रदेवका चरित्र तुझे कह्या, बहुरि भरत आदि चक्रवर्तियोका कथन कह्या और नारायण बलभद्र तिनका कथन कह्या, इनके पूव जन्म सकल वृत्तात कहे, अर नव ही प्रतिनारायण तिनके नाम कहे । ये त्रेसठ शलाकाके पुरुष है । तिनमें कईएक पुरुष तो जिनभाषित तपकरि ताहि भवमें मोक्षको प्राप्त होय ह, कईएक स्वग प्राप्त होय पीछे मोक्ष पाव ह, अर कईएक जे वैराग्य नाहीं धर ह चक्री तथा हरि प्रतिहरि ते कईएक भव धर फिर तपकर मोक्षको प्राप्त होय ह । ये ससारके प्राणी नानाप्रकारके पाप तिनकरि मलीन, मोहरूप सागरके भमणमें मग्न, महा दु खरूप चार गति तिनमें भमणकर तप्तायमान सदा व्याकुल होय ह । ऐसा जानकर जे निकटससारी भव्यजीव ह ते ससारका भमण नाहीं चाह ह, मोह तिमिरका अतकर सूयसमान केवलज्ञानका प्रकाश कर ह ।

इति श्रीरविषेणाचायविरचित महा पद्मपुराण सस्कृत ग्र थ ताकी भाषा वचनिकाविष चोदह कुलकर चोबीस तीथङ्कर बारह चक्रवर्ती नव नारायण नव प्रतिनारायण नव बलभद्र ग्यार रुद्र इनके माता पिता पूवभव नगरीनिके नाम पूव गुरु कथन नाम वणन करने वाला बीसवा पव पूण भया ॥ २ ॥

अथानन्तर गौतमस्वामी कह ह–हे मगधाधिपति ! आग बलभद्र जो श्रीरामचन्द्र, तिनका सम्बन्ध कहिए ह, सो सुनहु, अर राजनिके वश अर महा पुरुषनिकी उत्पत्ति, तिनका कथन कहिए ह सो उरमें धारहु । भगवान दशम तीथकर जे शीतलनाथस्वामी तिनको मोक्ष गये पीछे कौशाबी नगरमें एक राजा सुमुख भया, अर ताही नगरमे एक श्रेष्ठी वीरक, ताकी स्त्री बनमाला, सो अज्ञानके उदयत राजा सुमुखने घरम राखी । फिर विवेकको प्राप्त होय मुनियोको दान दिया । सो मरकर विद्याधर और वह वनमाला विद्याधरी भई, सो ता विद्याधरने परणी । एक दिवस ये दोनो क्रीडा करवेकू हरिक्षेत्र गए अर वह श्रेष्ठी वीरक वनमालाका पति विरहरूप अग्निकर दग्धायमान सो तपकर देव-

लोकको प्राप्त भया । एक दिवस अवधिकर वह देव अपने बरी सुमुखके जीवको हरिक्षेत्रविष क्रीडा करता जान क्रोधकर तहात भार्या सहित उठाय लाया, सो या क्षेत्रमें हरि ऐसा नामकरि प्रसिद्ध भया । जाही कारणसे याका कुल हरिवंश कहलाया । ता हरिके महागिरि नामा पुत्र भया, ताके हिमगिरि ताके वसुगिरि, ताके इन्द्रगिरि, ताक रत्नमाल, ताके सभूत, ताके भूतदेव इत्यादि सकडो राजा हरिवंश-विष भए । ताही हरिवंशविष कुशाग्र नामा नगर विष एक राजा सुमित्र जगतविष प्रसिद्ध भया । कसा ह राजा सुमित्र ? भोगोकर इन्द्रसमान, कातिकरि जीत्या ह चन्द्रमा जाने, अर दीप्तिकर जीत्या ह सूय, अर प्रतापकर नवाए ह शत्रु जान । ताके राणी पदमावती, कमल सारिखे ह नेत्र जाके, शुभ लक्षणनिकरि सपूण, अर पूण भये ह सकल मनोरथ जाके, सो रात्रिविष मनोहर महलमें सुखरूप सेजपर सूती हुती सो पिछले पहर सोलह स्वप्न देखे—गजराज १, वषभ २, सिह ३, लक्ष्मी स्नान करती ४, दोय पुष्पमाला ५, चन्द्रमा ६, सूय ७, मच्छ जलमें केलि करते ८, जलका भरा कलश, कमल समूहसे मु ह ढका ९, सरोवर कमल पूण १०, समुद्र ११, सिहासन रत्न जटित १२, स्वगलोक के विमान आकाशत आवते देखे १३, अर नागकुमारके विमान पातालत निकसते देखे १४, रत्ननिकी राशि १५, निधू म अग्नि १६ । तब राणी पदमावती सुबुद्धिवती जागकरि आश्चयरूप भया ह चित्त जाका, प्रभात क्रियाकर विनयरूप भरतारके निकट आई, पतिके सिहासनप आय विराजी । फूल रह्या ह मुखकमल जाका, महान्यायकी वेत्ता, पतिवता हाथ जोड नमस्कार कर पति सो स्वप्नोका फल पूछती भई । तब राजा सुमित्र स्वप्नोका फल यथाथ कहते भए । तदि ही रत्नोकी वर्षा आकाशत बरसती भई । साढे तीन कोटि रत्न एक सध्यामें बरसे, सो त्रिकाल सध्या वर्षा होती भई । पन्द्रह महीनो लग राजाके घरमें रत्नधारा वर्षी । अर जे षटकुमारिका ते समस्त परिवार सहित माताकी सेवा करती भइ । अर जन्म होते ही भगवानकू क्षीरसागरके जलकरि इन्द्र लोकपालनिसहित सुमेरु पवतपर स्नान करावते भए । अर इन्द्रने भक्तिथकी पूजा अर स्तुतिकर नमस्कार करी, फिर सुमेरुस ल्याय माताकी गोदविष

३१७

पधराए। जब से भगवान माताके गर्भमे आये तबहीत लोग अणुव्रतरूप महाव्रतकरि विशेष प्रवर्ते, अर माता व्रतरूप होती भई। तात पृथ्वीविष मुनिसुव्रत कहाए। अंजनगिरि समान है वर्ण जिनका, परन्तु शरीरके तेजसे सूर्यको जीतते भए, अर कांतिकरि चन्द्रमाकू जीतते भए। सब भोग सामग्री इन्द्रलोकत कुबेर लाव। अर जैसा आपको मनुष्यभवमें सुख है तैसा अहमिन्द्रनिको नाहीं। अर हाहा हूहू तुंबर नारद विश्वावसु इत्यादि गंधर्वनिकी जाति है सो सदा निकट गान करा ही कर। अर किन्नरी जातिकी देवांगना तथा स्वर्गकी अप्सरा नृत्य किया ही कर अर वीणा बांसुरी मृदंग आदि वादित्र नाना विधके देव बजाया ही कर, अर इन्द्र सदा सेवा कर। अर आप महासुन्दर यौवन अवस्था विष विवाह भी करते भए। सो जिनके राणी प्रदभुत आवती भई, अनेक गुणकला चातुर्यताकर पूर्ण—हावभाव विलास विभ्रमकी धरणहारी। सो कईएक वर्ष आप राज किया, मनवांछित भोग भोगे। एक दिवस शरदके मेघ विलय होते देख आप प्रतिबोधको प्राप्त भए। तब लौकांतिक देवनिने आय स्तुति करी। तब सुतव्रनामा पुत्रकू राज्य देय वैरागी भए। कैसे हैं भगवान? नहीं है काहू वस्तुकी वांछा जिनके। आप वीतराग भावधर दिव्य स्त्रीरूप जो कमलनिका वन तहात निकसे। कैसा है वह सुन्दर स्त्रीरूप कमलनिका वन? सुगंधकरि व्याप्त किया है दशो दिशा का समूह जाने, बहुरि महादिव्य जे सुगंधादिक तेई हैं मकरंद जामें और सुगंधताकर भ्रमै हैं भ्रमरोके समूह जाविष अर हरितमणिकी जे प्रभा, तिनके जो पुंज सोई हैं पत्रनिका समूह जाविष। अर दांतो की जो पंक्ति, तिनकी जो उज्ज्वल प्रभा, सोई हैं कमल तंतु जाविष। अर नानाप्रकार आभूषणनिके जे नाद तेई भये पक्षी उनके शब्दकरि पूरित है। अर स्तनरूप जे चकवे तिनकर शोभित है, अर उज्ज्वल कीर्तिरूप जे राजहंस तिनकरि मंडित है। सो ऐसे अद्भुत विलास तजकर वैराग्यके अर्थ देवोपुनीत पालकीविष चढकर विपुलनाम उद्यान विष गए। कैसे हैं भगवान मुनिसुव्रत? सब राजानिके मुकुटमणि हैं। सो वनम पालकीत उतरकर अनेक राजानि सहित जिनेश्वरी दीक्षा धरते भए। बेले पारणाकरना यह प्रतिज्ञा आदरी। राजगृहनगरमें वृषभदत्त

महाभक्तिकर श्रेष्ठ अन्न कर पारणा करावता भया। आप भगवान महाशक्तिकरि पूर्ण, कुछ क्षुधा नाहीं, परन्तु आचाराग सूत्रकी आज्ञा प्रमाण अतरायरहित भोजन करते भए। वृषभदत्त भगवानकू आहार देय कृतार्थ भया। भगवान कईएक महीना तपकर चम्पाके वृक्षके तले शुक्लध्यानके प्रतापते घातिया कर्मनिका नाशकर, केवलज्ञानकू प्राप्त भए। तब इन्द्रसहित देव आयकर प्रणाम कर स्तुति कर धर्मश्रवण करते भए। आपने यति श्रावकका धर्म विधिपूर्वक वर्णन किया। धर्म श्रवणकर कई मनुष्य मुनि भए, कई मनुष्य श्रावक भए, कई तिर्यच श्रावकके व्रत धारते भए। अर देवनिको व्रत नाहीं, सो कई देव सम्यक्त्वको प्राप्त होतें भए। श्रीमुनिसुव्रतनाथ धर्मतीर्थका प्रवर्तनकर सुर असुर मनुष्यनि करि स्तुति करने योग्य अनेक साधुवोसहित पृथ्वीपर विहार करते भए। सम्मेदशिखरपर्वतसे लोक-शिखरकू प्राप्त भए। यह श्रीमुनिसुव्रतनाथका चरित्र जे प्राणी भावधर सुनें तिनके समस्त पाप नाशकू प्राप्त होय, अर ज्ञानसहित तपसे परम स्थानकू पावें, जहात फेर आगमन न होय।

अथानन्तर मुनिसुव्रतनाथके पुत्र राजा सुव्रत बहुत काल राज्य कर, दक्ष पुत्रको राज्य देय, जिन-दीक्षा धर मोक्षको प्राप्त भए। अर दक्षके एलावर्धन पुत्र भया, ताके श्रीवृक्ष, ताके सजयत, ताके कुणिम, ताके महारथ, ताके पुलोमई इत्यादि अनेक राजा हरिवशकुलमें भए। तिनमें कईएक मुक्तिको गए, कईएक स्वर्गलोक गये। या भांति अनेक राजा भये। बहुरि याही कुलविषे एक राजा वासवकेतु भया, मिथिला नगरीका पति, ताके विपुला नामा पटराणी, सुन्दर हैं नेत्र जाके। सो वह रानी परम लक्ष्मीका स्वरूप ताके जनक नाम पुत्र होते भए। समस्त नयोमें प्रवीण वे राज्य पाय प्रजाको ऐसे पालते भए जैसें पिता पुत्रको पाले। गौतमस्वामी कहे है—हे श्रेणिक! यह जनककी उत्पत्ति कही, जनक हरिवंशी है। ३१९

अब ऋषभदेवके कुलमें राजा दशरथ भए तिनका वर्णन सुन—इक्ष्वाकुवशमें श्रीऋषभदेव निर्वाण पधारे। बहुरि तिनके पुत्र भरत भी निर्वाण पधारे। सो ऋषभदेवके समयसे लेकर मुनिसुव्रतनाथके

समय पयत बहुत काल बीत्या, ताम असख्य राजा भए । कईएक तो महादुद्धर तपकर निर्वाणको प्राप्त भये । कईएक अहमिद्र भये । कईएक इद्रादिक बडी ऋद्धिके धारी देव भये । कईएक पापके उदयकर नरकमें गये । हे श्रेणिक ! या ससारमें अज्ञानी जीव चक्रकी नाईं भ्रमण कर ह । कबहू स्वर्गादिक भोग पाव ह, तिनविष मग्न होय क्रीडा कर ह । कईएक पापी जीव नरक निगोदमें क्लेश भोग ह । ये प्राणी पुण्य पापके उदयत अनादिकाल भ्रमण कर ह । कबहू कष्ट, कबहू उत्सव । यदि विचार कर देखिये तो दु ख मेरु समान, सुखराई समान ह । कईएक द्रव्यरहित क्लेश भोगवै ह, कईएक बाल अवस्थामे मरण कर ह, कईएक शोक कर ह कईएक रुदन कर ह, कईएक विवाद करै ह, कईएक पढे ह, कईएक पराई रक्षा कर ह, कईएक पापी बाधा कर ह, कईएक गरज ह कईएक गान कर ह, कईएक पराई सेवा कर ह, कईएक भार बह ह कईएक शयन कर ह, कईएक पराई निन्दा कर ह, कईएक केलि कर ह, कईएक युद्धकरि शत्रुवोको जीत ह, कईएक शत्रुको छोड देय ह, कईएक कायर युद्धको देख भाग ह, कईएक शूरवीर पृथ्वीका राज्य कर ह, विलास कर ह, बहुरि राज्य तज वैराग्य धार ह । कईएक पापी हिसा कर ह, परद्रव्यकी वाछा कर ह, परद्रव्यकू हर ह, दौडे ह, कूट कपट कर ह ते नरकमें पडे ह । अर जे कईएक लज्जा धार ह, शील पाल ह, करुणाभाव धार ह, परद्रव्य तज ह, वीतरागताको भज ह, सतोष धार ह, प्राणियोको साता उपजाव ह ते स्वग पाय परपराय मोक्ष पाव ह । जे दान कर ह, तप कर ह अशुभ क्रियाका त्याग कर ह, जिनेंद्रकी अर्चा कर ह, जिनशास्त्रकी चर्चा कर ह, सब जीवनिसू मित्रता कर ह, विवेकियोका विनय कर ह ते उत्तम पद पाव ह । कईएक क्रोध कर ह, काम सेव ह, राग द्वेष मोहके वशीभूत ह, परजीवोको ठग ह ते भवसागरमें डूबे ह, नाना विध नाच ह, जगतमें राच ह खेद खिन्न ह, दीघ शोक कर ह, झगडा कर ह, सताप कर ह, असि मसि कृषि वाणिज्यादि व्यापार कर ह, ज्योतिष वद्यक यत्र मत्रादिक कर ह, श्रृंगारादि शास्त्र रचें ह वे वृथा पच पच कर मर ह । इत्यादि शुभाशुभकमकरि आतमधमको भूल रहे ह । ससारी जीव चतुर्गति

विष भ्रमण कर ह । या अवसर्पिणीकालविष आयु काय घटती जाय ह । श्रीमल्लिनाथके मुक्ति गये पीछे मुनिसुव्रतनाथके अतरालविष या क्षेत्रमें अयोध्या नगरीविष एक विजय नामा राजा भया । महा शूरवीर, प्रतापकरि सयुक्त, प्रजाके पालनविष प्रवीण, जीते ह समस्त शत्रु जान । ताके हेमचूलनी नामा पटराणी, ताके महागुणवान सुरेद्रमयु नामा पुत्र भया । ताके कीर्तिसमा नामा राणी, ताके दोय पुत्र भये—एक वज्रबाहु, दूजा पुरदर ! चद्रसूयसमान ह काति जाकी, महागुणवान, अथसयुक्त ह नाम जिनके, वे दोऊ भाई पथ्वीविष सुखसू रमते भये ।

अथानतर हस्तिनापुरमें एक राजा इद्रवाहन, ताके राणी चूडामणी, ताके पुत्री मनोदया अति सुदरी सो वज्रबाहुकुमारने परणी । सो कयाका भाई उदयसुदर बहिनक लेनेकू आया सो वज्रबाहुकुमार का स्त्रीसू अतिप्रेम था, स्त्री अति सुदरी सो कुमार स्त्रीके लार सासरे चाले । मागविष बसतका समय था और बसतगिरि पवतके समीप जाय निकसे । ज्यो ज्यो वह पहाड निकट आव त्यो त्यो उसकी परमशोभा देख कुमार अतिहषकू प्राप्त भए । पुष्पनिकी जो मकरदता उससे मिली सुगध पवन सो कुमारके शरीरसे स्पर्शी, ताकरि ऐसा सुख भया जसा बहुत दिनोके विछुरे मित्रसो मिले सुख होय । कोकिलावोके मिष्ट शब्दनिकरि अतिहर्षित भया जस जीतका शब्द सुन हष होय । पवनसे हाल ह वक्षोके अग्रभाग सो मानो पवत वज्रबाहुका सनमान ही कर ह, और भ्रमर गुजार कर है सो मानो वीणका नाद ही होय ह । वज्रबाहुका मन प्रसन्न भया । वज्रबाहु पहाडकी शोभा देख ह कि यह आम्रवृक्ष, यह कणकार जातिका वृक्ष, यह रौद्र जातिका वक्ष, फलनिकरि मडित यह प्रयालवक्ष, यह पलाशका वक्ष, अग्नि समान ददीप्यमान ह पुष्प जाक । वक्षनिकी शोभा देखते देखते राजकुमारकी दृष्टि मुनिराज पर पडी । देखकर विचारता भया—यह थभ ह अथवा पवतका शिखर ह अथवा मुनि राज हैं । कायोत्सग धर खडे जो मुनि तिनविष वज्रबाहुका ऐसा विचार भया । कसे ह मुनि? जिनको ठूठ जानकर जिनके शरीरसे मग खाज खुजाव ह । जब नप निकट गया तब निश्चय भया कि जो ये

महा योगीश्वर विदेह अवस्थाको धरे कायोत्सर्ग ध्यान धरें स्थिररूप खडे है, सूर्यकी किरणनिकरि स्पर्श्या है मुखकमल जिनका और महासर्पके फण समान देदीप्यमान भुजावोको लम्बाय ऊभे है। सुमेरु का जो तट उस समान सुन्दर है वक्षस्थल जिनका और दिग्गजोके बाधनेके थंभ तिन समान अचल है जंघा जिनकी, तपसे क्षीण शरीर है परन्तु कांतिसे पुष्ट दीख है, नासिकाके अग्रभागविषै लगाये है निश्चल सौम्य नेत्र जिन्होने, आत्माकू एकाग्र ध्याव है। ऐसे मुनिकू देखकर राजकुमार चिंतवता भया—अहो धन्य है ये महामुनि शांतिभावके धारक जो समस्त परिग्रहकू तजकर मोक्षाभिलाषी होय तप कर है। इनकू निर्वाण निकट है। निज कल्याणमें लगी है बुद्धि जिनकी, परजीवनकू पीडा देनेसे निवृत्त भया है आत्मा जिनका, अर मुनिपदकी क्रिया करि मंडित है। जिनके शत्रु मित्र समान है, तृण अर कंचन समान पाषाण अर रत्न समान, मान और मत्सरसे रहित है मन जिनका। वश करी है पांचो इन्द्रियें जिन्होने, निश्चल पर्वत समान वीतराग भाव है, जिनको देखे जीवनिका कल्याण होय। मनुष्यदेहका फल इन होने पाया। यह विषयकषायोसे न ठगाए। कैसे है विषय कषाय ? महा क्रूर है, अर मलिनताके कारण है। मैं पापी कर्म—पाशकरि निरंतर बंधा, जैसे चन्दनका वृक्ष सर्पोंसे वेष्टित होय है तैसे मैं पापी असावधानचित्त अचेत समान होय रहा। धिक्कार है मुझे। मैं भोगादिरूप जो महा पर्वत उसके शिखर पर निद्रा करूं हूं, सो नीचे ही पड़ूंगा। जो इस योगींद्रकी सी अवस्था धरूं तो मेरा जन्म कृतार्थ होय। ऐसा चिंतवन करते बज्रबाहुकी दृष्टि मुनिनाथमें अत्यन्त निश्चल भई, मानो थंभसे बांधी गई। तब उसका उदयसुन्दर साला इसको निश्चल देख मुलकता हुवा याहि हास्यके वचन कहता भया— मुनिकी ओर अत्यन्त निश्चल होय निरखो हो सो क्या दिगम्बरीदीक्षा धरोगे ? तब बज्रबाहु बोले—जो हमारा भाव था सो तुमने प्रकट किया, अब तुम इसही भावकी वार्ता कहो। तब वह इसको रागी जान हास्यरूप बोला कि तुम दीक्षा धरोगे तो मैं भी धरूंगा, परन्तु इस दीक्षासे तुम अत्यन्त उदास होवोगे। तब बज्रबाहु बोले यह तो ऐसे ही भई—यहकर विवाहके आभूषण उतार डारे और हाथीसे उतरे। तब

मृगनयनी स्त्री रोवने लगी। स्थूल मोती समान अश्रुपात डारती भई। तब उदयसुन्दर आसू डारता भया, हे देव! यह हास्यमें कहा विपरीत करो हो? तब वज्रबाहु अति मधुरवचनसू ताको शातता उपजावते हुए कहते भए–हे कल्याणरूप! तुम समान उपकारी कौन? म कूपमें पड़ू था सो तुमने राखा। तुम समान मेरा तीनलोकमें मित्र नाहीं। हे उदयसुन्दर! जो जन्म्या ह सो अवश्य मरेगा और जो मूआ ह सो अवश्य जन्मेगा। ये जन्म और मरण अरहटकी घडी समान हैं, तिनमें ससारी जीव निरतर भ्रम ह। यह जीतव्य बिजलीके चमत्कार समान ह तथा जलकी तरग समान, तथा दुष्ट-सपकी जिह्वा समान चचल ह। यह जगतके जीव दु खसागरविषै डूब रहे ह। यह ससारके भोग स्वप्नके भोग समान असार ह। जलके बुदबुदा समान काया ह, साझके रग समान यह जगतका स्नेह ह, और यह यौवन फूलसमान कुमलाय जाय ह। यह तुम्हारा हसना भी हमको अमृतसमान कल्याण-रूप भया। क्या हास्यसे जो औषधिको पीये तो रोगको न हर? अवश्य हरैही। अर तुम हमको मोक्षमार्गके उद्यमके सहाई भए, तुम समान हमारे और हितु नाहीं। म ससारके आचारविषै आसक्त होय रहा था सो वीतरागभावको प्राप्त भया। अब म जिनदीक्षा धरू हू। तुम्हारी जो इच्छा होय सो तुम करो। ऐसा कहकर सव परिवारसू क्षमा कराय वह गुणसागर नामा मुनि तपही ह धन जिनके, तिनके निकट जाय चरणारविंदको नमस्कार कर विनयवान होय कहता भया–हे स्वामी! तुम्हारे प्रसादसे मेरा मन पवित्र भया, अब म ससाररूप कीचसे निकस्या चाहू हू। तब इसके वचन सुन गुरु आज्ञा दई–तुमको भवसागरसे पार करणहारी यह भगवती दीक्षा ह। कसे हैं गुरु? सप्तम गुणस्थान से छठे गुणस्थान आये ह। यह गुरुकी आज्ञा उरमें धार वस्त्राभूषणका त्याग कर पल्लव समान जो अपने कर तिनमें केशोका लोंचकर पल्यकासन धरता भया। इस देहको विनश्वर जान देहसे स्नेह तजकर राजपुत्रीको और राग अवस्थाको तज मोक्षकी देनहारी जो जिन दीक्षा सो अगीकार करता भया। और उदयसुन्दरको आदि दे छबीस राजकुमार जिनदीक्षा धरते भये। कसे ह वे कुमार? कामदेव

समान है रूप जिनका, तजे हैं राग द्वेष मद मत्सर जिन्होंने, उपज्या है वैराग्यका अनुराग जिनके, परम उत्साहके भरे नग्न मुद्रा धरते भये। और यह वृत्तात देख वज्रबाहुकी स्त्री मनोदेवी पतिके और भाईके स्नेह-सो मोहित हुई, मोह तज आर्यिकाके व्रत धारती भई, सब वस्त्राभूषण तज कर एक सुफेद साडी धारती भई। महा तप व्रत आदरे। यह वज्रबाहुकी कथा इसका दादा जो राजा विजय उसने सुनी। सभाके मध्य बैठ्या था सो शोकसे पीडित होय ऐसे कहता भया—यह आश्चर्य देखो कि मेरा पोता नवयौवन में विषय विष समान जान विरक्त होय मुनि भया और मो सारिखा मूर्ख विषयोका लोलुपी वृद्ध अवस्थामेंभी भोगोको न तजता भया। कुमारने कैसे तजे? अथवा वह महाभाग्य जो भोगोको तृणवत तजकर मोक्षके निमित्त शातभावोमें तिष्ठ्या, मैं मदभाग्य जराकर पीडित हूं सो इन पापी विषयोंने मोहि चिरकाल ठग्या। कैसे है यह विषय? देखनेमें तो अति सुन्दर है परन्तु फल इनके अति कटुक है। मेरे इन्द्रनीलमणि समान श्याम जो केशोके समूह थे सो कफकी राशि समान श्वेत होयगए। जे यौवन अवस्थामें मेरे नेत्र श्यामता श्वेतता अरुणता लिये अतिमनोहर थे सो अब ऊडे पड गये, और मेरा जो शरीर अति ददीप्यमान शोभायमान महाबलवान स्वरूपवान था सो वृद्धअवस्थाविषै वर्षासे हता जो चित्राम ता समान होय गया। जे धर्म अर्थ काम तरुण अवस्थाविषै भलीभाति सधे हैं सो जराकर मंडित जे प्राणी तिनसे सधने विषम हैं। धिक्कार है मो पापी दुराचारी प्रमादीको जो मैं चेतन थका अचेतन दशा आदरी। यह झूठा घर, झूठी माया, झूठी काया, झूठे बांधव, झूठा परिवार तिनके स्नेहकरि भवसागरके भ्रमण में भ्रमा। ऐसा कहकर सब परिवारसो क्षमा कराय, छोटा पोता जो पुरन्दर उसे राज्य देय, अपने पुत्र सुरेन्द्रमन्यु सहित राजा विजयने वृद्ध अवस्थामें निर्वाणघोष स्वामीके समीप जिनदीक्षा आदरी। कैसा है राजा? महा उदार है मन जाका।

अथानन्तर पुरन्दर राज्य करै है। उसके पृथ्वीमती राणी, कीर्तिधर नामा पुत्र भया, सो गुणोका सागर पृथ्वीविषै विख्यात। वह विनयवान अनुक्रमकर यौवनको प्राप्त भया। सब कुटुम्बको आनन्द

३२४

बढावताहुवा अपनी सुंदर चेष्टासूं सबको प्रिय भया। तब राजा पुरंदरने अपने पुत्रको राजा कौशलकी पुत्री परणाई और इसको राज्य देय,राजा पुरदरने गुण ही हैं आभरण जाके, क्षेमकर मुनिके समीप मुनिव्रत धरे, कर्मनिजराका कारण महातप आरभा।

अथानंतर राजा कीर्तिधर कुलक्रमसे चला आया जो राज्य उसे पाय जीते हैं सब शत्रु जिसने, देवसमान उत्तम भोग भोगता हुवा रमता भया। एक दिवस राजा कीर्तिधर प्रजाका बंधु, जे प्रजाके बाधक शत्रु तिनको भयकर, सिंहासनविषै जैसे इन्द्र विराजे तैसें विराजै थे। सो सूर्यग्रहण देख चित्तमें चितवते भए कि देखो यह सूर्य जो ज्योतिका मंडल है सो राहुके विमानके योगसे श्याम होयगया। यह सूर्य, प्रतापका स्वामी, अंधकारको मेट प्रकाश करै है और जिसके प्रतापसे चन्द्रमाका बिंब कांतिरहित भासै है, और कमलनिके वनको प्रफुल्लित करै है सो राहुके विमानसे मंदकांति भासै है। उदय होता ही सूर्य ज्योति रहित होयगया, इसलिए संसारकी दशा अनित्य है। यह जगतके जीव विषयाभिलाषी, रंकसमान मोहपाशसे बंधे अवश्य कालके मुखमे पडेंगे। ऐसा विचारकर यह महाभाग्य संसारकी अवस्थाको क्षणभंगुर जान मंत्री पुरोहित सेनापति सामंतनिको कहता भया कि यह समुद्र पर्यंत पृथ्वीके राज्यकी तुम भलीभांति रक्षा करियो, मैं मुनिके व्रत धरूं हूं। तब सबही विनती करते भए—हे प्रभो! तुम विना यह पृथ्वी हमसे दबै नाहीं, तुम शत्रुवोंके जीतनहार हो, लोकोंके रक्षक हो, तुम्हारी वय भी नवयौवन है। इसलिए यह इन्द्रतुल्य राज्य कईएक दिन करो, इस राज्यके पति अद्वितीय तुमही हो, यह पृथ्वी तुमहीसे शोभायमान है। तब राजा बोले—यह संसार अटवी अति दीर्घ है। इसे देख मोहि अतिभय उपजै है। कैसी है? यह भवरूप वन, अनेक जे दुख, वेही हैं फल जिनके, ऐसे कर्मरूप वृक्षनिसे भरी है। अर जन्म जरा मरण रोग शोक रति अरति इष्टवियोग अनिष्टसंयोगरूप अग्निसे प्रज्वलित है। तब मंत्रीजनोंने राजाके परिणाम विरक्त जान बुझे अंगारोंके समूह लाय धरे और तिनके मध्य एक वैडूर्यमणि ज्योतिका पुंज अति अमोलक लाय धरया। सो मणिकें प्रतापसें कोयला प्रकाशरूप होयगए।

फिर वह मणि उठाय लई, तब वह कोइला नीके न लागे। तब मन्त्रियोने राजासे विनती करी हे देव! जसैं यह काष्ठके कोयला रत्नानिविना न शोभ ह तस तुम विना हम सब ही न शोभ। हे नाथ! तुम विना प्रजाके लोक अनाथ मारे जायगे और लूटे जायगे और प्रजाके नष्ट होते धमका अभाव होवेगा। इसलिए जैसा तुम्हारा पिता तुमको राज्य देय मुनि भया था तस तुम भी अपने पुत्रको राज देय जिनदीक्षा धरियो। या भाति प्रधान पुरुषोने विनती करी। तब राजाने यह नियम किया कि जो म पुत्रका जन्म सुनू उस ही दिन मुनिव्रत धरू। यह प्रतिज्ञाकर इन्द्र समान भोग भोगता भया, प्रजाको साता उपजाय राज्य किया। जिसके राज्यमें किसी भातिका भी प्रजाको भय न उपजा। कसा ह राजा? समाधान रूप ह चित्त जाका। एक समय राणी सहदेवी राजा सहित शयन करती थी सो उसको गभ रह्या। कसा पुत्र गभमे आया? सम्पूण गुणनिका पात्र और पथ्वीके प्रतिपालनको समथ। सो जब पुत्रका जन्म भया तब राणीने पतिक वरागी होनेके भयसे पुत्रका जन्म प्रकट न किया। कई एक दिवस वार्ता गोप राखी। जसे सूयके उदयको कोई छिपाय न सक तसें राजपुत्रका जन्म कसैं छिप? किसी मनुष्य दरिद्रीने द्रव्यके अथके लोभत राजासे प्रकट किया। तब राजाने मुकुट आदि सब आभूषण अगसे उतार उसको दिये और घोषशाखा नामा नगर, महा रमणीक, अतिधनकी उत्पत्तिका स्थानक, सौ गाव सहित दिया और पुत्र पन्द्रह दिनका माताकी गोदमें तिष्ठता था सो तिलककर उसको राजपद दिया जिससे अयोध्या अति रमणीक होती भई। और अयोध्याका नाम कौशल भी ह इसलिए उसका सुकौशल नाम प्रसिद्ध भया। कसा ह सुकौशल? सुन्दर ह चेष्टा जाकी, सुकौशलका राज्य देय राजा कीर्तिधर घररूपबदीगहत निकसकरि तपोवनको गए, मुनिव्रत आदरे। तपसे उपज्या जो तेज उससे जसैं मेघपटलने रहित सूय शोभ तसैं शोभतें भए।

इति श्रीरविषेणाचायविरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रन्थ ताकी भाषा वचनिकाविष इक्कीसवा कीर्तिधर महात्म्य वणन करनेवाला इक्कीसवा पव पूण भया ॥ २१ ॥

अथानन्तर कईएक वर्षमे कीर्तिधर मुनि पृथ्वीसमान है क्षमा जिनके, दूर भया है मान मत्सर जिनका, और उदार है चित्त जिनका, तपकरि शोखा है सव अंग जिन्होने, अर लोचन ही है सव आभूषण जिनके, प्रलम्बित है महाबाहु और जूडे प्रमाण धरती देख अधोदृष्टि गमन करै है। जैसें मत्त गजेन्द्र मन्द मन्द गमन करै तैसे जीवदयाके अर्थ धीरा धीरा गमन करै है। सव विकार रहित महा सावधानी ज्ञानी, महा विनयवान, लोभ रहित, पचआचारके पालनहारे, जीवदयासे विमल है चित्त जिनका, स्नेह-रूप कर्दमसे रहित, स्नानादि शरीरसस्कारसे रहित, मुनिपदकी शोभासे मंडित। सो आहारके निमित्त बहुत दिनोके उपवासे नगरमें प्रवेश करते भए। तिनको देखकर पापिनी सहदेवी उनकी स्त्री मनमें विचार करती भई कि कभी इनको देख मेरा पुत्र भी वैराग्यको प्राप्त न होय। तब महा क्रोधकर लाल होय गया है मुख जाका, दुष्ट चित्त द्वारपालनिसो कहती भई, यह यति नग्न महा मलिन घरका खोऊ है। इसे नगरसे बाहिर निकास देवो, फिर नगरमें न आवने पावै। मेरा पुत्र सुकुमार है, भोला है कोमल चित्त है सो उसे देखने न पावै। इसके सिवाय और भी यति हमारे द्वारे आवनें न पावै। रे द्वारपाल हो! इस बातमें चूक पडी तो मै तुम्हारा निग्रह करूंगी। जबसे यह दया रहित बालक पुत्रको तजकर मुनि भया तबसूं इसभेषका मेरे आदर नाहीं। यह राज्यलक्ष्मी निंदै है अर लोगोको वैराग्य प्राप्त करावै है, भोग छुडाय योग सिखावै है। जब राणीने ऐसे वचन कहे तब वे क्रूर द्वारपाल, बेतकी छडी है जिनके हाथमें, मुनिको मुखसे दुरवचन कहकर नगरसे निकास दिए। अर आहारको और भी साधु नगरमें आए थे वे भी निकास दिए। मत कदाचित मेरा पुत्र धर्म श्रवण करै या भांति कीर्तिधरका अविनय देख राजा सुकौशलकी धाय महाशोक कर रुदन करती भई। तब राजा सुकौशल धायको रोवती देख कहते भए—हे माता! तेरा अपमान करै ऐसा कौन? माता तो मेरी गर्भ धारण मात्र है और तेरे दुग्धकरि मेरा शरीर वृद्धिको प्राप्त भया, सो मेरे तू मातासे भी अधिक है। जो मृत्युके मुखमें प्रवेश किया चाहे सो तोहि दुखावै, जो मेरी माताने भी तेरा अनादर किया होय तो मै उसका अविनय करूं,

पद्म पुरा ३२८

औरोकी क्या बात ? तब बसतलता धाय कहती भई—हे राजन ! तेरे पिता तुझे बालअवस्थामें राज्य देय ससाररूप कष्टके पीजरेसे भयभीत होय तपोवनको गए । सो वह आज इस नगरमें आहारको आए थे सो तिहारी माताने द्वारपालनिसो आज्ञाकर नगरत कढाए । हे पुत्र ! वे हमारे सबके स्वामी सो उनका अविनय म दख न सकी । इसलिए रुदन करू हू और तिहारी कपाकर मेरा अपमान कौन कर ? और साधुवोको दखकर मेरा पत्र ज्ञानको प्राप्त होय ऐसा जान मुनिनका प्रवेश नगरसे निकारचा । सो तिहारे गोत्रविष यह धम परम्परायसे चला आया ह कि जो पुत्रको राज्य देय पिता वरागी होय ह, और तिहारे घरसे आहार विना कभी भी साधु पाछे न गए । यह वत्तात सुन राजा सुकौशल मुनिके दशनको महल से उतर चमरछत्र वाहन इत्यादि राजचिह्न तजकर कमलसे भी अतिकोमल जो चरण सो उबाणे ही मुनिके दशनको दौड और लोकनिको पूछते जाव—तुमन मुनि देखे, तुमने मुनि देखे । या भाति परम अभिलाषासयुक्त अपन पिता जो कीर्तिधर मुनि तिनके समीप गए । अर इनके पीछे छत्रचमर वारे सब दोड ही गए । महामुनि उद्यानविष शिलापर विराजे हुते सो राजा सुकौशल अश्रुपात कर पूण ह नेत्र जाके, शुभ ह भावना जाकी, हाथ जोडि नमस्कार करि बहुत विनयसो मुनिके आग खडे, द्वारपालनिने द्वारत निकाम थ सो ताकर अतिलज्जावत होय, महामुनिसो विनती करते भए—हे नाथ ! जस कोई पुरुष अग्नि प्रज्वलित घरविष सूता होवे ताहि कोई मेघके नादसमान ऊचा शब्द कर जगाव, तस ससाररूप महाज-म मत्युरूप अग्निकर प्रज्वलित, ताविष म मोहनिद्राकरियुक्त शयन करू था सो मोहि आप जगाया । अब कपा कर यह तिहारी दिगम्बरीदीक्षा मोहि देहु । यह कष्टका सागर ससार तासो मोहि उबारहु । जब ऐसे वचन मुनिसो राजा सुकौशलने कहे तब ही समस्त सामतलोक आए और राणी विचित्रमाला गभवती हुती सो हू अति कष्टकरि विषादसहित समस्त राजालोकसहित आई । इनको दीक्षाके लिए उद्यमी सुन सब ही अत पुरके अर प्रजाके शोक उपज्या । तब राजा सुकौशल कहते भए या राणी विचित्रमालाके गभविष पुत्र ह, ताहि म राज्य ३२८

दिया। ऐसा कहकरि निस्पृह भए। आशारूप फासीको छेदि, स्नेहरूप जो पींजरा ताहि तोड, स्त्रीरूप बधनसो छूट, जीण तणवत राज्यको जानि तज्या और वस्त्राभूषण सब ही तजि बाह्याभ्यतर परिग्रहका त्याग करके केशनिका लोच किया अर पद्मासन धार तिष्ठे। कीर्तिधर मुनींद्र इनके पिता, तिनके निकट जिनदीक्षा धरी। पच महाव्रत, पाच समिति, तीन गुप्ति अगीकार करि सुकौशल मुनिने गुरुके सग विहार किया। कमलसमान आरक्त जो चरण तिनकरि पृथ्वीको शोभायमान करते सते विहार करते भए। अर इनकी माता सहदेवी आर्तध्यानकरि मरक तियच योनिमे नाहरी भई। अर ए पिता पुत्र दोनो मुनि महाविरक्त जिनको एक स्थानक रहना, पिछले पहर बिनसू निर्जन प्रासुक स्थान देखि बैठि रहै। अर चातुर्मासिकमें साधुवोको विहार न करना। सो चातुर्मासिक जान एक स्थान बैठि रहे। दशो दिशाको श्याम करता सता चातुर्मासिक पृथ्वीविषै प्रवर्त्या। आकाश मेघमाला के समूहकरि ऐसा शोभे मानो काजलते लिप्या है। अर कहू एक बगुलानिकी पक्ति उडती ऐसी सोहै मानो कुमुद फूल रहे है। अर ठौर ठौर कमल फूल रहे है, जिनपर भ्रमर गुजार कर है। सो मानो वर्षाकालरूप राजाके यश ही गावै है। अजनगिरि समान महानील जो अधकार ताकरि जगत व्याप्त होय गया। मेघके गाजनेते मानो चाद सूर्य डरकर छिप गए। अखण्डजलकी धाराते पृथ्वी सजल होय गई और तृण ऊग उठे, सो मानो चाद पृथ्वी हर्षके अकूर धरै है। अर जलके प्रवाहकरि पृथ्वीविषै नीचा ऊचा स्थल नजर नाहीं आवै, अर पृथ्वीविषै जलके समूह गाजै है, अर आकाशविषै मेघ गाजै है सो मानो ज्येष्ठका समय जो वैरी ताहि जीतकर गाजरहे है। अर धरती निर्झरननि करि शोभित भई। भाति २ की वनस्पति पृथ्वीविषै ऊगी सो ता करि पृथ्वी ऐसी शोभै है मानो हरितमणिके समान बिछोना कर राखे है। पृथ्वीविषै सर्वत्र जल ही जल होय रहा है, मानो मेघ ही जलके भारते टूट पडे है। अर ठौर ठौर इन्द्रगोप अर्थात वीरबहूटी दीखै है सो मानो वैराग्यरूप वज्रते चूर्ण भए रागके खण्ड ही पृथ्वीविषै फैल रहे है। अर बिजलीका तेज सब दिशाविषै विचरै है सो मानो मेघ नेत्रकरि जलपूरित तथा अपूरित स्थानकको देखै है। अर नानाप्रकारके रगको धरै जो इन्द्रधनुष ताकरि मण्डित आकाश,

तो ऐसा शोभता भया मानो अति ऊचे तोरणो कर युक्त ह । अर दोऊ पालि ढाहती, महा भयानक भमणको धर, अतिवेगकरयुक्त कलषतासयुक्त नदी बह ह । सो मानो मर्यादारहित स्वछद स्त्रीके
पद्म स्वरूपको आचर ह । अर मेघके शब्दकर त्रासको प्राप्त भई जे मगनयनी विरहिणी ते स्तम्भनसू
पुराण स्पश कर ह, अर महा विह्वल ह, पतिके आवनेकी आशाविष लगाए ह नेत्र जिनने । ऐसे वर्षाकाल
३३ विषै जीवदयाके पालनहारे महाशात, अनेक निर्ग्रंथ मुनि प्रासुक स्थानकविष चौमासी उपवास लेय तिष्ठे । अर जे गहस्थो श्रावक साधु—सेवाविष तत्पर ते भी चार महीना गमनका त्याग कर नाना प्रकारके नियम धर तिष्ठे । ऐसे मेघकर व्याप्त वर्षाकालविष वे पिता पुत्र यथाथ आचारके आचरनहारे प्रेतवन कहिए श्मसान ताविष चार महीना उपवास धर वक्षके तल विराजे । कभी पदमासन, कभी कायोत्सग, कभी वीरासन आदि अनेक आसन धर चातुर्मास पूण किया । कसा ह वह प्रेतवन ? वक्षनिके अधकार करि महागहन ह, अर सिह व्याघ रोछ स्याल सप इत्यादि अनेक दुष्ट जीवनिकरि भरया ह । भयकर जीवनिको भी भयकारी महा विषम ह, गीध सियाल चील इत्यादि जीवनिकरपूण होय रहा ह । अधदग्ध मतकनिका स्थानक, महा भयानक विषमभूमि, मनुष्यनिके सिरके कपालके समूहकर जहा पथ्वी श्वेत होय रही ह और दुष्ट शब्द करते पिशाचनिक समूह विचर ह, अर जहा तणजाल कटक बहुत ह । सो ये पिता पुत्र दोनो मुनि धीरवीर पवित्र मन चारमहीना तहा पूण करते भए ।

अथानन्तर वर्षाऋतु गई, शरद ऋतु आई । सो मानो रात्रि पूण भई, प्रभात भया । कसा ह प्रभात? जगतके प्रकाश करनेमें प्रवीण ह । शरदके समय आकाशविष बादल श्वेत प्रकट भए अर सूय मेघपटल रहित कातिसो प्रकाशमान भया । जैस उत्सर्पिणीकालका जो दु खमाकाल ताके अन्तमें दुखमासुखमा के आदि श्रीजिनेन्द्रदेव प्रकट होय । अर चन्द्रमा रात्रिविष तारानिके समूह के मध्य शोभता भया । जैस सरोवरके मध्य तरुण राजहस शोभ । अर रात्रिमें चान्द्रमाकी चादनीकर पृथ्वी उज्ज्वल भई सो मानो क्षीरसागर ही पथ्वीविष विस्तर रह्या ह । अर नदी निमल भई, कुरचि सारस चाकवा आदि

पक्षी सुन्दर शब्द करने लगे, अर सरोवर मे कमल फूले जिन पर भ्रमर गु जार कर ह, अर उडे ह, सो मानो भव्यजीवनिने मिथ्यात्वपरिणाम तजे ह सो उडते फिर हं। (भावाथ) मिथ्यात्वका स्वरूप श्याम अर भमरका भी स्वरूप श्याम। अनेक प्रकार सुग धका ह प्रचार जहा ऐसे जे ऊचो महल, तिनके निवासविष रात्रिके समय लोक निज प्रियानिसहित क्रीडा कर ह। शरदऋतुविष मनुष्यनिके समूह महाउत्सवकर प्रवर्तं ह, स मान किया ह मित्र बाधवनिका जहा। अर जो स्त्री पीहर गई तिनका सासरे आगमन होय ह। कार्तिक सुदी पूणमासोके व्यतीत भए पीछे तपोधर जे मुनि ते जन तीर्थोंमें विहार करते भए। तदि ये पिता अर पुत्र कीर्तिधर सुकौशल मुनि समाप्त भया है नियम जिनका, शास्त्रोक्त ईर्य्यासमितिसहित पारणाके निमित्त नगरकी ओर विहार करते भए। अर वह सहदेवी सुकौशलकी माता मरकरि नाहरी भई हुती सो पापिनी महाक्रोधकी भरी, लोहूकर लाल ह केशोके समूह जाक, विकराल ह वदन जाका, तीक्ष्ण ह दात जाके, कषायरूप पीत ह नेत्र जाके, सिर पर धरी ह पूछ जाने, नखोकरि विदारे ह अनेक जीव जाने, अर किए ह भयकर शब्द जाने, मानों मरी ही शरीर धरि आई ह। लहलहाट करे ह लाल जीभका अग्रभाग जाका, मध्याह्नके सूय समान आतापकारी, सो पापिनी सुकौशल स्वामीको देखकरि महावेगत उछलकर आई। ताहि आवती देख वे दोनो मुनि सुन्दर ह चरित्र जिनके, सव आलब रहित कायोत्सग धर तिष्ठ। सो पापिनी सिहनी सुकौशल स्वामीका शरीर नखो करि विदारती भई। गौतमस्वामी राजा श्रेणिकत कह ह—हे राजन। देख ससारका चरित्र जहा माता पुत्रके शरीरके भक्षणका उद्यम कर ह। या उपरात और कष्ट कहा?
जन्मातरके स्नेही बाधव कमके उदयत बरी होय परिणम। तदि सुमेरुत भी अधिक स्थिर सुकौशल मुनि शुक्लध्यानके धरणहारे तिनको केवलज्ञान उपज्या, अन्त कतकेवली भए। तब इन्द्रादिक देवोने आय इनके देहकी कल्पवृक्षादिक पुष्पनिसो अर्चा करी, चतुरनिकायके सव ही देव आए। अर नाहरी को कीर्तिधर मुनि धर्मोपदेश वचनोसे सबोधते भए—हे पापिनी! तू सुकोशलकी माता सहदेवी हुती।

श्रर पुत्रसे तेरा अधिक स्नेह हुता ताका शरीर तने नखनित विदारचा। तब वह जातिस्मरण होय श्रावकके व्रतधर सन्यास धारणकर शरीर तजि स्वर्गलोकमें गई। बहुरि कीर्तिधर मुनिको भी केवल ज्ञान उपज्या तब इनके केवलज्ञानकी सुर असुर पूजाकर अपने अपने स्थानको गए। यह सुकौशल मुनिका माहात्म्य जो कोई पुरुष पढे सुन सो सब उपसर्ग रहित होय सुखसो चिरकाल जीवे।

अथानन्तर सुकौशलकी राणी विचित्रमाला ताके सम्पूर्ण समयपर सुन्दर लक्षणकरि मंडित पुत्र होता भया। जब पुत्र गर्भमें आया तबहीत माता सुवर्णकी कांतिको धरती भई। तातें पुत्रका नाम हिरण्यगर्भ पृथ्वीपर प्रसिद्ध भया। सो हिरण्यगर्भ ऐसा राजा भया मानो अपने गुणनिकर बहुरि ऋषभदेवका समय प्रकट किया। सो राजा हरिकी पुत्री अमृतवती महामनोहर ताहि तान परणी। राजा अपने मित्र बांधवनिकरि संयुक्त पूर्ण द्रव्यके स्वामी मानो स्वर्णके पर्वत ही हैं। सब शास्त्रके पारगामी देवनि समान उत्कृष्ट भोग भोगते भए। एक समय राजा उदार है चित्त जिनका, दर्पणमें मुख देखते हुते। सो भ्रमर समान श्याम केशनिके मध्य एक सुफेद केश देख्या। तब चित्तमें विचारते भए कि यह कालका दूत आया। बलात्कार यह जराशक्ति कांतिकी नाश करणहारी ताकरि मेरे अंगोपांग शिथिल होवेंगे। यह चंदनके वृक्षसमान मेरी काया अब जरारूप अग्निकरि जल्या अगार तुल्य होयगी। यह जरा छिद्र हेर ही है। सो समय पाय पिशाचनीकी नाईं मेरे शरीरमें प्रवेशकर बाधा करेगी। अर कालरूप सिंह चिरकालतें मेरे भक्षणका अभिलाषी हुता, सो अब मेरे देहको बला त्कारतें भखेगा। धन्य हैं वह पुरुष जो कर्मभूमिको पायकर तरुण अवस्थामें व्रतरूप जहाजविषै चढि कर भवसागरको तिरें। ऐसा चितवनकर राणी अमृतवतीका पुत्र जो नघोष ताहि राजविषै थाप करि विमलमुनिके निकट दिगम्बरी दीक्षा धरी। यह नघोष जावत माताके गर्भमें आया तबहीत कोई पापका वचन न कहे, तातें नघोष कहाए। पृथ्वीपर प्रसिद्ध हैं गुण जिनके, तिन गुणोंके पुंज, तिनके सिंहका नाम राणी। ताहि अयोध्याविषै राख उत्तर दिशाके सामंतोको जीतवे को चढे। तब राजाको

दूर गया जान दक्षिण दिशाके राजा बडी सेनाके स्वामी अयोध्या लेनेको आए। तब राणी सिंहका महाप्रतापिनी बडी फौज करि चढी। सो सब बरीनिको रणमें जीतकर अयोध्या दृढ थाना राखि आप अनेक सामंतनिको लेय दक्षिणदिशा जीतनेको गई। कसी है राणी? शस्त्रविद्याका किया है अभ्यास जान, प्रतापकरि दक्षिणदिशाके सामंतोको जीतकर जयशब्दकर पूरित पाछी अयोध्या आई। अर राजा नघोष उत्तर दिशाको जीतकर आए सो स्त्रीका पराक्रम सुन कोपको प्राप्त भए, मनमें विचारी जे कुलवती स्त्री अखंडित शीलकी पालनहारी हैं तिनमें एती धीठता न चाहिए। ऐसा निश्चयकर राणी सिंहिकासो उदासचित्त भए, यह पतिव्रता महाशीलवती पवित्र है चेष्टा जाकी, पटराणी के पदतैं दूर करी सो महादरिद्रताको प्राप्त भई।

अथानंतर राजाके महादाहज्वरका विकार उपज्या सो सब वैद्य यत्न कर पर तिनकी औषधि न लागै। तब राणी सिंहिका राजाको रोगग्रस्त जानकर व्याकुलचित्त भई, अर अपनी शुद्धताके अर्थि यह पतिव्रता पुरोहित मंत्री सामंत सबनिको बुलायकर पुरोहितके हाथ अपने हाथका जल दिया, अर कही कि यदि मैं मन वचन कायकरि पतिव्रता हूँ तो या जलकरि सींच्या राजा दाहज्वरकर रहित होवे। तब जल करि सींचते ही राजाका ज्वर मिट गया अर हिमविषै मग्न जैसा शीतल होय गया। मुखतै ऐसे मनोहर शब्द कहता भया जैसे वीणाके शब्द होवें। अर आकाशविषै यह शब्द होते भए कि यह राणी सिंहिका पतिव्रता महाशीलवती धन्य है धन्य है। अर आकाशतै पुष्प वर्षा भई। तब राजा ने राणीको महाशीलवती जान बहुरि पटराणीका पद दिया, अर बहुत दिन निष्कंटक राज किया।
बहुरि अपने बडोके चरित्र चित्तविषै धरि संसारकी मायातै निस्पृह होय सिंहिका राणीका पुत्र जो सौदास, ताहि राज देय आप धीर वीर मुनिव्रत धरे, जो कार्य परम्परा इनके बडे करते आए हैं सो किया। सौदास राज कर, सो पापी मांस आहारी भया। इनके वंशमें किसीने यह आहार न किया। यह दुराचारी अष्टाह्निकाके दिवसविषै भी अभक्ष्य आहार न तजता भया। एक दिन रसोईदारसो कहता भया कि—

पद्म
पुराण
३३४

मेरे मांसभक्षणका अभिलाष उपज्या है तब तान कही—हे महाराज ! अष्टाह्निकाके दिन हैं, सब लोक भगवानकी पूजा अर व्रत नियम विषै तत्पर हैं, पृथ्वीपर धर्मका उद्योत होय रह्या है, इन दिनोमें यह वस्तु अभक्ष्य है । तदि राजाने कही—या वस्तु बिना मेरा मन रहै नाहीं, तातै जा उपायकरि यह वस्तु मिलै सो कर । तदि रसोईदार यह राजाकी दशा देख नगरके बाहिर गया । एक मूवा हुवा बालक देख्या । ताहि दिन वह मूआ था । सो ताहि वस्त्रमें लपेट वह पापी लेय आया, स्वादु वस्तुनिकरि ताहि मिलाय पकाय राजाको भोजन दिया, सो राजा महादुराचारी अभक्ष्यका भक्षण कर प्रसन्न भया । अर रसोईदारत एकांतमें पूछता भया कि—हे भद्र ! यह मांस तू कहांतैं लाया, अब तक ऐसा मांस मैंने भक्षण नहीं किया हुता । तदि रसोईदार अभयदान मांग यथावत कहता भया । तब राजा कहता भया, ऐसे ही मांस सदा लाया कर । तदि रसोईदार बालकनिको लाडू बांटता भया, तीन लाडुओंके लालच-वशि बालक निरन्तर आवें । सो बालक लाडू लेयकर जावें तब जो पीछे रहै जाय ताहि यह रसोईदार मार राजाको भक्षण करावै । निरंतर नगरविषै बालक छीजने लगे, तदि यह वृत्तांत लोकनिने जान रसोईदारसहित राजाको देशतैं निकाल दिया, अर याकी राणी कनकप्रभा, ताका पुत्र सिंहरथ ताहि राज्य दिया । तदि यह पापी सर्वत्र निरादर हुआ महादुखी पृथ्वीपर भ्रमण किया करै । जे मृतक बालक मसानविषै लोक डार आवैं तिनको भखै जैसे सिंह मनुष्योंका भक्षण करै । तातैं याका नाम सिंहसौदास पृथ्वीविषै प्रसिद्ध भया । बहुरि यह दक्षिणदिशाको गया । तहां मुनिनिके दर्शन कर धर्म श्रवणकर श्रावकके व्रत धरता भया । बहुरि एक महापुर नामा नगर, तहांका राजा मूवा । ताके पुत्र नहीं था तब सबने यह विचार किया कि पाटबांध हस्ती जाय कांधे चढाय लावै सोई राजा होवै । तदि याहि कांधे चढाय हस्ती लेयगया तब याको राज्य दिया । यह न्यायसंयुक्त राज्य करै, अर पुत्रक निकट दूत भेज्या कि तू मेरी आज्ञा मान, तदि वान लिख्या जा तू महा निंद्य है, मैं तोहि नमस्कार न करूं । तब यह पुत्रपर चढकरि गया । याहि आवता सुन लोग भागने लगे कि यह मनुष्य- ३३४

निको खायगा । पुत्र अर याके महा युद्ध भया । सो पुत्रको युद्धमें जीत दोनो ठौरका राज्य पुत्रको देय कर आप महा वैराग्यको प्राप्त होय तपके अर्थि वन में गया ।

अथानन्तर याके पुत्र सिंहरथके ब्रह्मरथ पुत्र भया ताके चतुर्मुख, ताके हेमरथ, ताके सत्यरथ, ताके पृथुरथ, ताके पयोरथ, ताके दृढरथ, ताके सूर्यरथ, ताके मानधाता, ताके वीरसेन, ताके पृथ्वीमन्यु, ताके कमलबन्धु, दीप्तित मानो सूर्य ही है । समस्त मर्यादामें प्रवीण ताके रविमन्यु, ताके बसंततिलक, ताके कुबेरदत्त, ताके कुन्थुभक्त सो महा कीर्तिका धारी, ताके शतरथ, ताके द्विरदरथ, ताके सिंहदमन, ताके हिरण्यकशिपु, ताके पुञ्जस्थल, ताके ककुस्थल, ताके रघु,महापराक्रमी । यह इक्ष्वाकु वंश श्रीऋषभदेवतैं प्रवरत्या सो वंशकी महिमा हे श्रेणिक ! तोहि कही । ऋषभदेवके वंशमें श्रीराम पर्यंत अनेक बडे बडे राजा भये ते मुनिव्रत धार मोक्षगए । कईएक अहमिंद्र भये, कईएक स्वर्गमें प्राप्त भए । या वंशविषै पापी विरले भए ।

बहुरि अयोध्या नगरविषै राजा रघुके अरण्य पुत्र भया,जाके प्रतापकरि उद्यानमें वस्तु होती भई,ताके पृथ्वीमती राणी महा गुणवती महाकांतिकी धरणहारी, महारूपवती, महापतिव्रता, ताके दोय पुत्र होते भए । महा शुभलक्षण एक अनंतरथ दूसरा दशरथ । सो राजा सहस्ररश्मि माहिष्मती नगरीका पति ताकी अर राजा अरण्यकी परम मित्रता होती भई । मानो ये दोनो सौधर्म अर ईशानइन्द्र ही हैं । जब रावण ने युद्धमें सहस्ररश्मिको जीत्या, अर तान मुनिव्रत धरे सो सहस्ररश्मिके अर अरण्यके यह वचन हुता कि जो तुम वैराग्य धारो तब मोहि जतावना । अर मैं वैराग्य धारूंगा तो तुम्हें जताऊंगा । सो वाने जब वैराग्य धारया तदि अरण्यको जतावा दिया । तदि राजा अरण्यने सहस्ररश्मिको मुनि हुवा जानकरि दशरथ पुत्रको राज्य देय आप अनंतरथ पुत्रसहित अभयसेन मुनिके समीप जिनदीक्षा धारी । महातपकरि कर्मोंका नाशकर मोक्षको प्राप्त भए । अर अनंतरथ मुनि सर्व परिग्रहरहित पृथ्वीपर विहार करते भए । बाईस परीषहके सहनहारे किसीप्रकार उद्वेगको न प्राप्त भए । तदि इनका अनंतवीर्य नाम पृथ्वी

पर प्रसिद्ध भया। अर राजा दशरथ राज्य कर, सो महासुन्दर शरीर नवयौवनविषै अति शोभायमान होता भया। अनेकप्रकार पुष्पनिकरि शोभित मानो पर्वतका उतंग शिखर ही है।

अथानन्तर दर्भस्थल नगरका राजा कौशल प्रशंसायोग्य गुणोंका धरणहारा, ताके राणी अमृतप्रभाकी पुत्री कौशल्या, ताहि अपराजिता भी कहै हैं। काहेतै कि यह स्त्रीके गुणनिकरि शोभायमान, कामकी स्त्री रति समान महासुन्दर, किसीतै न जीती जाय, महारूपवती, सो राजा दशरथनै परणी। बहुरि एक कमलसंकुल नामा बडा नगर, तहांका राजा सुबंधुतिलक, ताके राणी मित्रा, ताके पुत्री सुमित्रा सर्वगुणनिकरि मंडित, महा रूपवती जाहि नेत्र रूप कमलनिकरि देख मन हर्षित होय। पृथ्वी पर प्रसिद्ध सो भी दशरथनै परणी। बहुरि एक और महाराजा नामा राजा ताकी पत्नी सुप्रभा, रूप लावण्यकी खानि, जाहि लख लक्ष्मी लज्जावान होय सोहू राजा दशरथनै परणी। अर राजा दशरथ सम्यग्दर्शनको प्राप्त होते भये अर राज्यका परम उदय पाय सो सम्यग्दर्शनको रत्नों समान जानते भए। अर राज्यको तृण समान मानते भए कि जो राज्य न तजै तौ यह जीव नरकमें प्राप्त होय, राज्य तजै तो स्वर्ग मुक्ति पावै। अर सम्यग्दर्शनके योगतै निसंदेह ऊर्ध्वगति ही है। सो ऐसा जानि राजाके सम्यग्दर्शनकी दृढता होती भई अर जे भगवानके चैत्यालय प्रशंसायोग्य आगै भरत चक्रवर्त्यादिकने कराए हुते तिनमें कईएक ठौर कईएक भंगभावको प्राप्त भए हुते सो राजा दशरथनै तिनकी मरम्मत कराय ऐसे किए मानो नवीन ही हैं। अर इन्द्रनिकरि नमस्कार करनेयोग्य महा रमणीक जे तीर्थंकरनिके कल्याणक स्थानक तिनकी रत्ननिके समूह करि यह राजा पूजा करता भया। गौतमस्वामी राजा श्रेणिक सों कहै हैं-हे भव्यजीव! दशरथ सारिखे जीव परभवमें महाधर्मको उपार्जनकर अति मनोज्ञ देवलोककी लक्ष्मी पायकर या लोकमें नरेंद्र भये हैं, महाराज ऋद्धिके भोक्ता सूर्य समान दशों दिशाविषै है प्रकाश जिनका।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रंथ, ताकी भाषा वचनिकाविषै राजा सुकौशलका माहात्म्य अर तिनके वंशविषै राजा दशरथकी उत्पत्तिका कथन वर्णन करनेवाला बाईसवां पर्व पूर्ण भया ॥ २२ ॥

अथानन्तर एक दिन राजा दशरथ महा तेज प्रतापकरि सयुक्त सभामें विराजते हुते। कसे हैं राजा? जिनेंद्रकी कथाविषै आसक्त है मन जिनका, और सुरेंद्र समान है विभव जिनका। ता समय अपने शरीरके तेजकरि आकाशविषै उद्योत करते नारद आए। तब दूरहीसो नारदको देखकर राजा उठकर सनमुख गए। बडे आदरसो नारदकू ल्याय सिंहासनपर विराजमान किए। राजाने नारदकी कुशल पूछी। नारदने कही जिनेंद्रदेवके प्रसाद करि कुशल है। बहुरि नारदने राजाकी कुशल पूछी, राजाने कही देव धर्म गुरुके प्रसादकरि कुशल है। बहुरि राजाने पूछी—हे प्रभो! आप कौन स्थानकतें आए, इन दिनोमें कहा कहा विहार किया, कहा देख्या? कहा सुन्या? तुमते अढाई द्वीपमें कोई स्थान अगोचर नाहीं। तदि नारद कहते भए। कसे है नारद? जिनेंद्रचंद्रके चरित्र देखकर उपज्या है परमहर्ष जिनको, हे राजन! मै महा विदेहक्षेत्रनिविषै गया हुता। कसा है वह क्षेत्र? उत्तम जीवनिकरि भर्या है, जहा ठौर ठौर श्रीजिनराजके मंदिर अर ठौर २ महामुनिराज विराजे है, जहा धर्मका बडा उपकार अतिशयकरि उद्योत है। श्रीतीर्थकरदेव चक्रवर्ती बलदेव वासुदेव प्रतिवासुदेवादि उपजै है। तहा श्रीसीमंधर स्वामीका मैने पुंडरीकनी नगरीमें तपकल्याणक देख्या। कसी है पुण्डरीकनी नगरी? नानाप्रकारके रत्ननिकरि जे महल तिनके तेजत प्रकाशरूप है। अर सीमंधरस्वामीके तपकल्याणकविषै नानाप्रकारके देवनिका आगमन भया। तिनके भांतिभांतिके विमान ध्वजा अर छत्रादि करि महाशोभित। अर नाना प्रकारके जे वाहन तिनकरि नगरी पूर्ण देखी। अर जसा श्रीमुनिसुव्रतनाथका सुमेरु विषै जन्माभिषेक का उत्सव हम सुनै है तसा श्रीसीमंधरस्वामीके जन्माभिषेकका उत्सव मैने सुन्या। अर तपकल्याणक तो मैने प्रत्यक्ष ही देखा। अर नानाप्रकारके रत्ननिकरि जडित जिनमन्दिर देखे, जहाँ महा मनोहर भगवानके बडे बडे बिंब विराजै है, अर विधिपूर्वक निरंतर पूजा होय है। अर महा विदेहतै मै सुमेरु पर्वत आया। सुमेरुकी प्रदक्षिणा कर सुमेरुके वन, तहा भगवानके जे अकृत्रिम चैत्यालय तिनका दर्शन किया। हे राजन! नन्दनवनके चैत्यालय नानाप्रकारके रत्ननिसू जडे अतिरमणीक मै देखे। जहा

स्वर्णसे पीत अति देदीप्यमान है सुन्दर है मोतियोंके हार अर तोरण जहाँ। जिनमंदिर देखते सूर्यका मंदिर कहा ? अर चैत्यालयनिकी वडूर्य मणिमई भीति देखी, तिनमें गज सिंहादिरूप अनेक चित्राम मंढे है, अर जहा देवदेवी संगीत शास्त्ररूप नृत्य कर रहे हैं। अर देवारण्यवनविषै चैत्यालय, तहा मैंने जिनप्रतिमाका दर्शन किया। अर कुलाचलनिके शिखरविषै जिनेंद्रके चैत्यालय मैं देखे, वंदे। या भांति नारद कही तब राजा दशरथ 'देवेभ्यो नमः' ऐसा शब्द कहकर हाथ जोड सिर नवाय नमस्कार करता भया।

बहुरि नारदने राजाकू सैन करी। तदि राजाने दरबारको कहकर सबको सीख दीनी, आप एकांत विराजे तब नारद कही—हे सुकौशल देशके अधिपति! चित्त लगाय सुन, तेरे कल्याणकी कहूं हूं। मैं भगवानका भक्त जहां जिनमन्दिर होय तहां वंदना करूं हूं। सो लंकामें गया हुता, तहां महामनोहर श्रीशांतिनाथका चैत्यालय वंद्या। सो एक वार्ता विभीषणादिके मुखसे सुनी कि रावणने बुद्धिसार निमित्तज्ञानीको पूछा कि मृत्यु कौन निमित्तत है। तदि निमित्तज्ञानी कही—दशरथका पुत्र अर जनक राजाकी पुत्री इनके निमित्तत तेरी मृत्यु है सुनकर रावण सचिंत भया। तब विभीषण कही—आप चिंता न करहु, दोऊनिके पुत्र पुत्री न होय ता पहिले दोऊनको मैं मारूंगा। सो तिहारे ठीक करनेको विभीषणने हलकारे पठाए हुते, सो वे तिहारा स्थान निरूपादि सब ठीक करगए हैं। अर मेरा विश्वास जान मुझे विभीषणने पूछी कि क्या तुम दशरथ और जनकका स्वरूप नीके जानो हो। तब मैं कही मोहि उनको देखे बहुत दिन भए हैं, अब उनको देख तुमको कहूंगा। सो उनका अभिप्राय खोटा देखकर तुमपै आया। सो जबतक वह विभीषण तिहारे मारनेका उपाय करै ता पहिले तुम आपा छिपाय कहीं बैठ रहो। जे सम्यक्दृष्टि जिनधर्मी देव गुरु धर्मके भक्त हैं। तिन सबनिसों मेरी प्रीति है, तुम सारिखोंसे विशेष है। तुम योग्य होय सो करहु, तिहारा कल्याण होहु। अब मैं राजा जनकसे यह वृत्तांत कहने जाऊं हूं। तब राजाने उठ नारदका सत्कार किया। नारद आकाश

के माग होय मिथिलापुरीकी ओर गए जनकको समस्त वत्तात कह्या । नारदको भव्यजीव जिनधर्मी प्राणनिहूत प्यारे ह । नारद तो वत्तात कह देशातरको गए, अर दोनो ही राजावोको मरणकी शका उपजी । राजा दशरथने अपने मत्री समुद्रहृदयको बुलाय एकातमें नारदका सकल वत्तात कह्या । तब राजाके मखत मत्री ये महाभयके समाचार सुन कर स्वामीकी भक्तिविष परायण, अर मत्रशक्तिविषै महा श्रेष्ठ, राजाकू कहता भया—हे नाथ ! जीतव्यके अर्थ सकल करिए ह । जो त्रिलोकीका राज्य आव अर जीव जाय तो कौन अर्थ ? तात जौ लग म तिहारे वरीनिका उपाय करू तब लग तुम अपना रूप छिपाय कर पथ्वीपर विहार करहु । ऐसा मत्रीने कह्या । तदि राजा देश, भण्डार, नगर याको सोपकर नगरत बाहिर निकसे । राजाके गए पीछे मत्रीने राजा दशरथके रूपका पुतला बनाया, एक चेतना नाही और सब राजाहीके चिह्न बनाए । लाखादि रसके योगकर उसविष रुधिर निरमाप्या । अर शरीरकी कोमलता जसी प्राणधारीके होय तसी ही बनाई । सो महिलके सातवें खणमें सिहासन-विष राजा विराजमान किया सो समस्त लोकनिको नीचेसे मुजरा होय, ऊपर कोई जाने न पाव । राजाके शरीर मे रोग ह पथ्वीपर ऐसा प्रसिद्ध । एक मत्री अर दूजा पूतला बनानेवाला यह भेद जानै । इनहू कू देखकर ऐसा भ्रम उपजै जो राजा ही ह । अर यही वत्तात राजा जनकके भया । जो कोई पडित ह तिनके बुद्धि एकसी होय ह । मत्रीनिकी बुद्धि सबके ऊपर होय विचर है । यह दोनो राजा लोकस्थितिके वेत्ता पथ्वीविष भागे फिर । आपदाकालविष जो रीति बताई ह ता भाति करै । जैस वर्षा-कालमें चाद सूय मेघके जोरसे छिपे रह तस जनक और दशरथ दोऊ छिप रहे ।

यह कथा गौतमस्वामी राजा श्रेणिकसू कह ह—हे मगधदेशके अधिपति ! वे दोऊ बडे राजा, महा सुन्दर ह राजमदिर जिनके, अर महामनोहर देवागना सारिखी स्त्री जिनके, महामनोहर भोगनिके भोक्ता, सो पायनपियादे दलिद्री लोकनिकी नाई, कोई नहीं सग जिनके, अकेले भ्रमते भए । धिक्कार ह ससारके स्वरूपको—ऐसा निश्चयकर जो प्राणी स्थावर जगम सब जीवनिकू अभयदान दे सो आप

भी भयसे कम्पायमान न हो । इस अभयदान समान कोऊ दान नाहीं । जाने अभयदान दिया तान सब ही दिया । अभयदानका दाता सत्पुरुषनिमें मुख्य है ।

अथानन्तर विभीषणने दशरथ जनकके मारवेकू सुभट बिदा किए । हलकारे जिनके संगमें ते सुभट, शस्त्र है हाथनिमें जिनके, महाक्रूर, छिपे छिपे रात दिन नगरीमें फिरे । राजाके महल अति ऊंचे सो प्रवेश न कर सके । इनकू दिन बहुत लगे । तब विभीषण स्वयमेव आय महिलमें गीत नाद सुन महलमें प्रवेश किया । राजा दशरथ अंत:पुरके मध्य शयन करता देख्या । विभीषण तो दूर ठाढे रहे अर एक विद्युविलसित नामा विद्याधर ताको पठाया कि याका मस्तक ले आवो । सो आय मस्तक काट विभीषणको दिखाया, अर समस्त राजलोक रोय उठे । विभीषण इनका और जनकका सिर समुद्रविषै डार आप रावणके निकट गया । रावणको हर्षित किया । इन दोनो राजानिकी राणी विलाप करें । फिर यह जानकर कि कृत्रिम पूतला था तब यह संतोषकर बैठ रहीं । अर विभीषण लंका जाय अशुभकर्मके शांतिके निमित्त दान पूजादि शुभक्रिया करता भया । अर विभीषणके चित्त में ऐसा पश्चाताप उपज्या जो देखो मेरे कौन कर्म उदय आया जो भाईके मोहसे वृथा भय मान बापरे रंक भूमिगोचरी मृत्युको प्राप्त किए । जो कदाचित आशीविष (आशीविष सर्प कहिए जिसे देख विष चढे) जातिका सर्प होय तो भी क्या गरुडको प्रहार कर सके ? कहा वह अल्प ऐश्वर्यके स्वामी भूमिगोचरी अर कहा इन्द्र समान शूर वीरताका धरणहारा रावण ? अर कहा मूसा, कहाँ केशरी सिंह, जाके अवलोकनतै माते गजराजनिका मद उतर जाय । कैसा है केशरी सिंह ? पवन समान है वेग जाका । अथवा
जा प्राणीको जा स्थानकमें जा कारणकरि जेता दु:ख अर सुख होना है सो ताको ताकर ता स्थानकविषै कर्मनिके वशकरि अवश्य होय है । अर यह निमित्तज्ञानी जो कोऊ यथार्थ जानै तो अपना कल्याण ही क्यों न करे, ताकरि मोक्षके अविनाशी सुख पाइए । निमित्तज्ञानी पराई मृत्युको निश्चय जाने तो अपनी मृत्युके निश्चयसे मृत्युके पहिले आत्मकल्याण क्यों न करै ? निमित्तज्ञानीके कहनेसे मैं मूर्ख

भया। खोटे मनुष्यनिकी शिक्षासे जे मन्दबुद्धि ह ते अकार्यविषं प्रवरत ह। यह लकापुरी पाताल ह तल जाका ऐसा जो समुद्र ताकें मध्य तिष्ठ। जो देवनहू को अगम्य, तहा विचारे भूमिगोचरियोके कहासे गम्य होय ? म यह अत्यन्त अयोग्य किया, बहुरि ऐसा काम कबहू न करू। ऐसी धारणा धार उत्तम दीप्तिसे युक्त जस सूय प्रकाश रूप विचर तस मनुष्यलोकमें रमते भए।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महा पद्मपुराण सस्कृत ग्रन्थ ताकी भाषा वचनिकाविष राजा दशरथ अर जनकको विभीषणकृत भय वणन करने वाला तेईसवा पव पूण भया॥ २३॥

अथानन्तर गौतम स्वामी कह ह—हे श्रेणिक! अरण्यके पुत्र दशरथने पृथ्वीपर भ्रमण करते केकई को परणा, सो कथा महा आश्चर्यका कारण तू सुन। उत्तर दिशाविष एक कौतुकमगल नामा नगर, ताके पवत समान ऊच कोट, तहा राजा शुभमति राज कर। सो वह शुभमति नाममात्र नाहीं, यथाथ शुभमति ही ह। ताकी राणी पृथुश्री गुण रूप आभरणनिकरि मडित, ताके केकई पुत्री, द्रोणमेघ पुत्र भए, जिनके गुण दशोदिशामें व्याप्त रहे। केकई अतिसुन्दर, सव अग मनोहर, अद्भुत लक्षणनिकी धरणहारी, सव कलाओंकी पारगामिनी अति शोभती भई। सम्यग्दशनकरि सयुक्त श्राविकाके व्रत पालनहारी, जिनशासनकी वेत्ता, महाश्रद्धावती तथा साख्य पातजल वशेषिक वेदात न्याय मीमासा चार्वाकादिक परशास्त्रनिके रहस्यकी ज्ञाता तथा लौकिकशास्त्र श्रृगारादिक तिनका रहस्य जान, नृत्यकला में अति निपुण, सव भेदोसे मडित जो सगीत सो भलीभाति जान। उर कठ सिर इन तीन स्थानकसे
स्वर निकसे ह अर स्वरोके सात भेद ह—षडज १, ऋषभ २, गाधार ३, मध्यम ४, पचम ५, धवत ६ निषाद ७ सो केकईको सवगम्य अर तीन प्रकारका लय शीघ्र १, मध्यम २, विलम्बित २, अर चार प्रकारका ताल स्थायी १ सचारी २ आरोहक ३ अवरोहक ४, अर तीन प्रकारकी भाषा सस्कृत १ प्राकृत २ शौरसेनी ३, स्थाईचालके भूषण चार प्रसगादि १, प्रसन्नान्त २, मध्यप्रसाद ३, प्रसन्नाद्यवसान ४

अर सचारीके छहभूषण निवत्त १, प्रस्थिल २, विदु ३, प्रखोलित ४, तमोमद ५, प्रसन्न, ६, आरोहणका एक प्रसन्नादि भूषण अर अवरोहणके दो भूषण प्रसन्नान्त १, कुहर २, ये तेरह अलकार अर चार प्रकार वादित्र ते ताररूप सो तात १ और चामके मढे ते आनद्ध २ अर वासुरी आदि फूकके बाजे वे सुषिर ३ अर कासीके बाजे वे घन ४ ये चार प्रकारके वादित्र जस ककई बजाव तस और न बजाव। गीत नत्य वादित्र ये तीन भेद ह सो नत्यमें तीनो आए। अर रसके भेद नव—श्रगार १ हास्य २ करुणा ३ वीर ४, अदभुत ५, भयानक ६, रौद्र ७, वीभत्स ८, शात ९। तिनके भेद जस केकई जान तस और कोऊ न जान। अक्षर मात्रा अर गणितशास्त्रमें निपुण, गद्यपद्य सवमें प्रवीण, व्याकरण, छद, अलकार नाममाला, लक्षणशास्त्र तक, इतिहास अर चित्रकलामे अतिप्रवीण, तथा रत्नपरीक्षा अश्व परीक्षा नरपरीक्षा शस्त्रपरीक्षा, गजपरीक्षा, वक्षपरीक्षा, वस्त्रपरीक्षा, सुगधपरीक्षा, सुगधादिक द्रव्यनिका निपजावना इत्यादि सव बातनि मे प्रवीण, ज्योतिष विद्यामें निपुण, बाल वद्ध तरुण मनुष्य तथा घोडे हाथी इत्यादि सबके इलाज जान, मत्र औषधादि सवमे तत्पर, वद्यविद्यानिधान, सव कलामें सावधान, महा शीलवती, महामनोहर युद्धकलामे अतिप्रवीण, श्रगारादि कलामे अति निपुण, विनय ही ह आभूषण जाके, कला, अर गुण अर रूपमे एसी कन्या और नाहीं। गौतम स्वामी कह ह—हे श्रेणिक! बहुत कहवेकर कहा? केकई के गणनिका वणन कहातक करिए। तब ताके पिताने विचारा कि ऐसी कन्या के योग्य वर कौन? स्वयवरमडप करिये, तहा यह आप ही वर। ताने हरिवाहन आदि अनेक राजा स्वयवरमडपमे बुलाए सो विभवकर सयुक्त आये। तहा भमते सते जनकसहित दशरथहू आए। सो यद्यपि इनके निकट राज्यका विभव नाही तथापि रूप अर गुणनिकर सव राजावोत अधिक है। सव राजा सिहासन पर बठ अर केकईका द्वारपाली सबनक नाम ग्राम गुण कह ह। सो वह विवेकिनी साधुरूपिणी मनुष्योक लक्षण जाननेवाली प्रथम तो दशरथकी ओर नेत्ररूप नीलकमलकी माला डारी। बहुरि वह सुन्दर बुद्धिकी धरनहारी जसे राजहसनी बगुलोके मध्य बठे जो राजहस उसकी ओर जाय

तसे अनेक राजावोके मध्य बैठा जो दशरथ ताकी ओर गई । सो भावमाला तो पहिले ही डारी हुती, अर द्रव्यरूप जो रत्नमाला सो भी लोकाचारके अर्थ दशरथके गलेमें डारी । तदि कईएक नृप जे न्यायवत बैठे हुते ते प्रसन्न भए । अर कहते भए कि जसी कन्या थी वसा ही योग्य वर पाया । अर कईएक विलखे होय अपने देश उठ गए । अर कईएक जे अति धीठ थे ते क्रोधायमान होय युद्धकू उद्यमी भये । अर कहते भए जे बडे बडे वंशके उपजे, अर महाऋद्धिके मंडित ऐसे नृप उनको तजकर यह कन्या, नहीं जानिये कुलशील जिसका ऐसा यह विदेशी, उसे कसे वर ? खोटा है अभिप्राय जाका ऐसी कन्या है, इसलिए एक विदेशीको यहासे काढकर कन्याके केश पकड बलात्कार हरलो । ऐसा कहकर वे दुष्ट कईएक युद्धको उद्यमी भये । तदि राजा शुभमति अति व्याकुल होय दशरथकू कहता भया—हे भव्य ! मैं इन दुष्टनिकू निवारू हू । तुम इस कन्याको रथमें चढाय अन्यत्र जावो । जैसा समय देखिये तसा करिए, सब राजनीतिमें यह बात मुख्य है । या भांति जब ससुरने कह्या तदि राजा दशरथ अत्यन्त धीर है बुद्धि जिनकी, हँसकर कहते भये—हे महाराज ! आप निश्चित रहो । देखो इनसबनिको दशो दिशाको भगाऊ । ऐसा कहकर आप रथविषै चढे और केकईको चढाय लीनी । कसा है रथ ? जाके महामनोहर अश्व जुडे है । कसे है दशरथ ? मानो रथपर चढे शरदऋतुके सूर्य ही हैं । अर ककई घोडोकी बाग संभारती भई । केकई कसी है ? महापुरुषार्थके स्वरूपकू धर युद्ध की मूर्ति ही है । पतिसू विनती करती भई—हे नाथ ! आपकी आज्ञा होय और जाकी मृत्यु उदय आई होय उसहीकी तरफ रथ चलाऊ । तदि राजा कहते भये—हे प्रिय ! गरीबनिके मारवेकर क्या ? जो इस सब सेनाका अधिपति हेमप्रभ है, जाके सिर पर चन्द्रमा सारिखा सफेद छत्र फिर है ताकी तरफ रथ चला । हे रण-पण्डिते ! आज मैं इस अधिपतिहीको मारू गा । जाब दशरथने ऐसा कह्या तदि वह पतिकी आज्ञा प्रमाण वाहीउर रथ चलावती भई । कसा है रथ ? ऊचा है सफेदछत्र जाके, अर तरगरूप है महा ध्वजा जाके । रथविषै ये दोनो दम्पती देवरूप विराजे हैं । इनका रथ अग्नि समान है, जे या रथकी

ओर आए वे हजारो पतगकी न्याई भस्म भए। दशरथके चलाए जे वाण तिनसे अनेक राजा बींधे गए। सो क्षणमात्रमे भागे। तब हेमप्रभ जो सबनिका अधिपति था। उसके प्रेरे, अर लज्जावान होय दशरथसू लडवेको हाथी घोडा रथ पयादोसे मण्डित आए, किया ह शूरपनेका महा शब्द जिनने, तोमर जातिके हथियार बाण चक्र कनक इत्यादि अनेक जातिके शस्त्र, अकेले दशरथ पर डारते भए। सो बडा आश्चय ह। दशरथ राजा एक रथका स्वामी था सो युद्ध समय मानो असख्यात रथ होयगए। अपने वाणनि करि समस्त वरियनिक बाण काट डाले। अर आप जे बाण चलाए वे काहूकी दष्टिमें न आए और शत्रुवोके लागे। सो राजा दशरथ ने हेमप्रभको क्षणमात्रमें जीत लिया, ताकी ध्वजा छेदी, छत्र उडाया और रथके अश्व घायल किए रथ तोड डाला, रथत नीचे डार दिया। तवि वह राजा हेमप्रभ और रथ पर चढकर भयकर कपायमान होय अपना यश काला कर शीघही भाग्या। दशरथने आपको बचाया स्त्रीकू बचाई, अपने अश्व बचाये, बरियोके शस्त्र छेदे अर बरियोको भगाया। एक दशरथ अनत रथ जस काम करता भया। एक दशरथ सिह समान उसको देख सव योधा सवदिशाको हिरण समान हो भागे। अहो धन्य शक्ति या पुरुषकी अर धन्य शक्ति याकी, ऐसा शब्द सुसुरकी सेनामें और शत्रुवोकी सेनामे सवत्र भया। अर बदीजन बिरद बखानते भए। राजा दशरथने महाप्रतापकू धर कौतुकमगल नगरविष केकईसू पाणिग्रहण किया। महामगलाचार भया। राजा केकईको परणकर अयोध्या आए और जनक भी मिथिलापुर गए। फिर इनका जन्मोत्सव और राज्याभिषेक विभूतिसे भया अर समस्त भय रहित इन्द्र समान रमते भए। ३४४

अथानन्तर सव राणियोके मध्य राजा दशरथ केकईसू कहते भए—हे चद्रवदनी। तेरे मनमें जो वस्तुकी अभिलाषा होय सो माग। जो तू माग सोई देऊ। हे प्राणप्यारी! तेरेसे अति प्रसन्न भया हू, जो तू अतिविज्ञानसे उस युद्धमे रथको न प्रेरती तो एकसाथ एते बरी आये थे तिनको म कसे जीतता? जब रात्रिको अन्धकार जगतमें व्याप रहचा ह जो अरुण सारिखा सारथी न होय तो उसे सूय कसे जीत ?या

भाति ककईके गुण वणन राजाने किये तदि वह पतिव्रता लज्जाके भार कर अधोमुख होयगई। राजाने बहुरि कही वर माग। तब केकईने बीनती करी, हे नाथ! मेरा वर आपके धरोहर रह, जा समय मेरी इच्छा होयगी ता समय लूगी। तब राजा प्रसन्न होय कहते भये—हे कमलवदनी मृगनयनी! श्वेतता श्यामता आरक्तता ये तीन वणको धरे अदभुत है नेत्र जाके, अदभुत बुद्धि तेरी ह, महा नरपतिकी पुत्री, अति नयकी वेत्ता, सवकलाकी पारगामिनी, सव भोगोपभोगकी निधि, तेरा वर म धरोहर राख्या, तू जब जो मागेगी सोही म दूगा। अर सबही राजलोक केकईको देख हषको प्राप्त भये और चित्तमें चितवते भये यह अदभुत बुद्धिनिधान ह सो कोई अपूव वस्तु मागेगी अल्पवस्तु कहा मागे।

अथानन्तर गौतमस्वामी श्रेणिकसे कहे ह—हे श्रेणिक! लोकका चरित्र म तुझे सक्षेपताकर कह्या। जो पापी दुराचारी ह वे नरक निगोदके परम दुख पाव ह। अर जे धर्मात्मा साधुजन ह वे स्वगमोक्ष में महा सुख पाव ह। भगवानकी आज्ञाके अनुसार बडे सतपुरुषनिके चरित्र तुझे कहे। अब श्रीरामचद्रजीकी उत्पत्ति सुन। कसे ह श्रीरामचद्रजी? महा उदार, प्रजाके दुखहरणहारे, महा यायवन्त, महाधमवत, महाविवेकी, महाशूरवीर, महाज्ञानी, इक्ष्वाकुवशका उद्योत करणहारे बडे सत्पुरुष है।

इति श्रीरविषेणाचायविरचित महा पद्मपुराण सस्कृत ग्रन्थ ताकी भाषा वचनिकाविष रानी केकईक राजा दशरथ का वरदान कथन वणन करने वाला चोवोसवा पव पूण भया॥ २४॥

अथानतर जाहि अपराजिता कह ह ऐसी जो कौशल्या सो रत्नजडित महलविष महासुन्दर सेज पर सूती थी सो रात्रिके पिछले पहिर अतिशयकरि अद्भुत स्वप्न देखती भई। उज्ज्वल हस्ती इन्द्रके ऐरावत हस्तीसमान १ और महाकेसरी सिंह २, अर सूय ३ तथा सवकला पूण चन्द्रमा ४ ये पुराण पुरुषोके गभमें आवनेके अदभुत स्वप्न देख आश्चयको प्राप्त भई। फिर प्रभातके वादित्र और मगल शब्द सुनकर सेजसे उठी। प्रभात क्रियासे हषकू प्राप्त भया ह मन जाका, महा विनयवती, सखीजन

मंडित भरतारके समीप जाय सिंहासन पर बैठी। कैसी है राणी? सिंहासनको शोभित करणहारी, हाथ जोड नमीभूत होय महामनोहर स्वप्ने जे देखे तिनका वृत्तांत स्वामीसूं कहती भई। तदि समस्त विज्ञानके पारगामी राजा स्वप्ननिका फल कहते भए—हे कांते! परम आश्चर्यकारी तेरे मोक्षगामी पुत्र, अन्तर वाह्य शत्रुवोंका जीतनहारा महापराक्रमी होयगा। रागद्वेष मोहादिक अंतरंगके शत्रु कहिये, अर प्रजाके बाधक दुष्ट भूपति बहिरंगशत्रु कहिये। या भांति राजा कही तदि राणी अति हर्षित होय अपने स्थानक गई, मंद मुलकन रूप जो केश उनसे संयुक्त है मुखकमल जाका। अर राणी केकई पति सहित श्रीजिनेन्द्रके जे चैत्यालय तिनमें भाव संयुक्त महापूजा करावती भई। सो भगवानकी पूजाके प्रभावस राजाका सब उद्वेग मिटा, चित्तमें महा शांति होती भई।

अथानन्तर राणी कौशल्याके श्रीरामका जन्म भया। राजा दशरथने महा उत्सव किया। छत्र चमर सिंहासन टार बहुत द्रव्य याचकनिको दिए। उगते सूर्यसमान है वर्ण रामका, कमल समान हैं नेत्र और लक्ष्मीसे आलिंगित है वक्षस्थल जाका, तात माता पिता सब कुटुम्बने इनका नाम पद्म धरा। फिर राणी सुमित्रा अति सुन्दर है रूप जाका, सो महा शुभस्वप्न अवलोकन कर आश्चर्यको प्राप्त होती भई। वे स्वप्न कैसे? सो सुनो—एक बडा केहरी सिंह देख्या, लक्ष्मी और कीर्ति बहुत आदरसे सुन्दर जलके भरे कलश, कमलसे ढके, उनसे स्नान करावै है। और आप सुमित्रा बडे पहाडके मस्तकपर बैठी है। अर समुद्र पर्यंत पृथ्वीको देखै है। अर देदीप्यमान हैं किरणनिके समूह जाके, ऐसा सूर्य देख्या, अर नाना प्रकारके रत्ननिकरि मंडित चक्र देख्या। ये स्वप्न देख प्रभातके मंगलीक शब्द भए तब सेजसे उठकर प्रात क्रियाकर, बहुत विनयसंयुक्त पतिके समीप जाय, मिष्टबानीकरि स्वप्ननिका वृत्तांत कहती भई। तदि राजा कही—हे वरानने कहिए सुन्दर है वदन जाका! तेरे पृथ्वीपर प्रसिद्ध पुत्र होयगा, शत्रुवोंके समूहका नाश करनहारा, महातेजस्वी, आश्चर्यकारी है चेष्टा जाकी। ऐसा पतिने कहा तदि वह पतिव्रता हर्षकरि भरया है चित्त जाका, अपने स्थानक गई। सब लोकनिको अपने सेवक जानती भई। फिर

याके परमज्योतिका धारी पुत्र होता भया । मानो रत्नोकी खानविषै रत्न ही उपज्या । सो जैसा श्रीराम के जन्मका उत्सव किया हुता तैसा ही उत्सव भया । जा दिन सुमित्राके पुत्रका जन्म भया, ताही दिन रावणके नगरविषै हजारो उत्पात होते भए । अर हितुवोंके नगरविषै शुभ शकुन भए । इन्दीवर कमल समान श्यामसुन्दर, अर कांतिरूप जलका प्रवाह, भले लक्षणनिका धरणहारा, तात माता पिताने लक्ष्मण नाम धरचा । राम लक्ष्मण ये दोऊ बालक महामनोहर रूप, मूंगा समान है लाल होठ जिनके, अर लाल कमल समान है कर अर चरण जिनके, माखनहूंतैं अतिकोमल है शरीरका स्पर्श जिनका, अर महासुगन्ध शरीर । ये दोऊ भाई बाललीला करते कौनके चित्तकूं न हरैं ? चन्दनकरि लिप्त है शरीर जिनका, केसरका तिलक किये कैसे सोहैं मानो विजयार्धगिरि अर अंजनगिरि ही, स्वर्णके रससे लिप्त है शरीर जिनका,अनेक जन्मका बढा जो स्नेह तातैं परम स्नेहरूप चन्द्र सूर्य समान ही हैं । महल माहीं जावें तब तो सब स्त्रीजनको अतिप्रिय लागैं । अर बाहिर आवैं, तब सब जननिको प्यारे लागैं । जब ये वचन बोलैं तब मानो जगतको अमृतकर सींचै हैं । अर नेत्रनिकर अवलोकन करै हैं, तब सबनिको हर्ष करि पूर्ण करै हैं । सबनिके दारिद्र हरणहारे, सबके हितु, सबके अंतःकरण पोषणहारे, मानो ये दोऊ हर्षकी अर शूरवीरताकी मूर्ति ही हैं, अयोध्यापुरीविषै सुखसूं रमते भए । कैसे हैं दोनों कुमार ? अनेक सुभट करैं हैं सेवा जिनकी, जैसे पहले बलभद्र विजय अर वासुदेव त्रिपृष्ट होते भये तिन समान हैं चेष्टा जिनकी । बहुरि केकई को दिव्यरूपका धरणहारा महाभाग्य पृथ्वीविषै प्रसिद्ध भरत नामा पुत्र भया । बहुरि सुप्रभाके सब लोकमें सुन्दर, शत्रुवोंका जीतनहारा शत्रुघ्न ऐसा नाम का पुत्र भया । ३४७
अर रामचन्द्रका नाम पद्म तथा बलदेव अर लक्ष्मणका नाम हरि अर वासुदेव अर अर्द्धचक्री भी कहै हैं । एक दशरथकी जो चार राणी सो मानो चार दिशा ही हैं, तिनके चार ही पुत्र समुद्र समान गम्भीर, पर्वत समान अचल, जगतके प्यारे । इन चारो ही कुमारनिको पिता विद्या पढावनके अर्थि योग्य पाठकको सौंपते भए ।

अथानन्तर कापिल्य नामा नगर अतिसुन्दर, तहा एक शिवी नामा ब्राह्मण, ताकी इषु नामा स्त्री, ताके अरि नामा पुत्र सो महा अविवेकी अविनयी, माता पिताने लडाया सो महा कुचेष्टाका धरणहारा, हजारो उलहनोका पात्र होता भया। यद्यपि द्रव्यका उपाजन, धमका सग्रह, विद्याका ग्रहण, वा नगरमें ये सब ही बाते सुलभ ह परन्तु याको विद्या सिद्ध न भई। तदि माता पिता विचारी विदेशमें याहि सिद्धि होय। यह विचार खेदखिन्न होय घरत निकास दिया, सो महा दुखी होय केवल वस्त्र याके पास सो यह राजगह नगरमें गया। तहा एक ववस्वत नामा धनुर्विद्याका पाठी महापडित, ताके हजारो शिष्य विद्याका अभ्यास कर। ताक निकट ये अरि यथाथ धनुषविद्याका अभ्यास करता भया। सो हजारो शिष्यनिविष यह महाप्रवीण होता भया। ता नगरका राजा कुशाग्र सो ताके पुत्र भी ववस्वतके निकट बाणविद्या पढे सो राजाने सुनी कि एक विदेशी ब्राह्मणका पुत्र आया ह जो राज्पुत्रनितहू अधिक बाणविद्याका अभ्यासी भया। सो राजा मनमे रोष किया। जब यह बात वव स्वतने सुनी तब अरिको समझाया, कि तू राजाके निकट मूख हो जा, विद्या मत प्रकाश। सो राजाने धनुषविद्याके गुरुको बुलाया। जो म तेरे सव शिष्यनिकी विद्या दखूगा। तब सब शिष्यनिको लेयकर गया। सव ही शिष्यनि यथायोग्य अपनी अपनी बाणविद्या दिखाई, निशाने बींधे, ब्राह्मणका जो पुत्र अरि, ताने ऐसे बाण चलाए सो विद्यारहित जाना गया। तब राजा जानी, याकी प्रशसा काहूने झूठी कही। तब ववस्वतको सव शिष्यनि सहित सीख दीनी। तब अपने घर आय ववस्वतने अपनी पुत्री अरि को परणाय विदा किया, सो रात्रि ही पयाणकर अयोध्या आया, राजा दशरथसो मिल्या, अपनी बाणविद्या दिखाई। तब राजा प्रसन्न होय अपने चारो पुत्र बाणविद्या सीखनेको याके निकट राखे। ते बाणविद्याविष अतिप्रवीण भए। जस निमल सरोवरमें चन्द्रमा की काति विस्तारको प्राप्त होय तस इनविष बाणविद्या विस्तारको प्राप्त भई। और भी अनेक विद्या गुरुसयोगत तिनको सिद्ध भई। जस काहू ठौर रत्न मिले होवे, अर ढकनेसे ढके होवें, सो ढकना उघाडे प्रकट होय, तसै सव

विद्या प्रकट भइ । तब राजा अपने पुत्रनिकू सव शास्त्रविष अति प्रवीणता देख, अर पुत्रोका विनय उद्दार चेष्टा अवलोकन कर अति प्रस न भया । इनके सव विद्याके गुरुवोकी बहुत सन्मानता करी । राजा दशरथ गुणोके समूहसे युक्त, महाज्ञानीने जो उनकी वाछा हुती तात अधिक सपदा दीनी, दान विष विख्यात ह कीर्ति जाकी । केतेक जीव शास्त्रज्ञानको पायकर परम उत्कष्टताको प्राप्त होय हैं, अर कईएक जसेके तसे ही रह ह, अर कईएक विषमकमके योगत मदकरि आधे होय ह । जस सूय की किरण स्फटिकगिरिके तटविष अति प्रकाशको धर ह, और स्थानकविष यथास्थित प्रकाशको धर ह अर उल्लुवोके समूहमे अतितिमिररूप होय परणव ।

इति श्रीरविषेण चार्यविरचित महापद्मपु ाण सस्कृत ग्रथ ताकी भाषावचनिकाविष चा र भाईनिक ज मका वणन करनेवाला प चोसवा पत्र पूण भया ॥२५॥

अथान तर गौतम स्वामी राजा श्रणिकत कह ह—हे श्रे णिक ! अब जनकका कथन सनहु । राजा जनककी स्त्री विदेहा, ताहि गभ रह्या । सो एक देवके यह अभिलाषा हुई कि जो याके बालक होय सो म ले जाऊ । तब श्रे णिकने पूछी हे नाथ ! वा देवके ऐसी अभिलाषा काहेत उपजी ? सो म सुना चाहू हू । तदि गौतम स्वामी कहते भए—हे राजन ! चक्रपुर नामा एक नगर ह । तहा चक्रध्वज नामा राजा, ताके राणी मनस्विनी, तिनके पुत्री चित्तोत्सवा, सो कुवारी चटशालामें पढे । अर राजाका पुरोहित धूमकेश, ताके स्वाहा नामा स्त्री, ताका पुत्र पिगल सो भी चटशालामें पढे । सो चित्तोत्सवा का अर पिगलका चित्त मिल गया । सो इनकू विद्याकी सिद्धि न भई । जिनका मन कामबाणकरि बेधा जाय तिनकू विद्या अर धमकी प्राप्ति न होय ह । प्रथम स्त्री पुरुषका ससग होय बहुरि प्रीति उपज, प्रीतितैं परस्पर अनुराग बढे, बहुरि विश्वास उपज, तातैंकरि विकार उपज । जस हिंसादिक पच पापनिकरि अशुभकम बध तस स्त्रीसागत काम उपज ह ।

अथानन्तर वह पापी पिंगल चित्तोत्सवाकू हर ले गया, जसे कीर्तिको अपयश हर ले जाय। जब दूर देशनिविष हर लेगया तदि सब कुटुम्बके लोकनि जानी, अपने प्रमादके दोषकरि ताने वह हरी ह। जस अज्ञान सगतिको हर तस वह पिंगल कन्याकू चोरीकरि हर ले गया। परन्तु धनरहित शोभै नाहीं। जस लोभी धमर्वजित तष्णा करि न सोह। सो यह विदग्ध नगरमें गया। तहा अन्य राजानिको गम्यता नाही। सो निधन नगरके बाहिर कुटी बनायकर रह्या। ता कुटीके किवाड नाहीं। अर यह ज्ञान विज्ञान रहित तण काष्ठादिकका सग्रहकर विक्रयकर उदर भर, दारिद्रके सागरमें मग्न सो स्त्रीका अर आपका उदर महा कठिनतासू भर। तहा राजा प्रकाशसिंह, अर राजी प्रवरावलीका पुत्र जो राजा कुण्डलमण्डित, सो याकी स्त्रीकू देख, शोषण—सतापक—उच्चाटन—वशीकरण—मोहन ये कामके पच बाण इनकरि बेध्या गया। ताने रात्रिको दूती पठाई सो चित्तोत्सवाको राजमदिरमें ले गई। जस राजा सुमुखके मदिर विष दूती वनमालाको लेगई हुती। सो कुण्डलमण्डित वामहित सुखसू रम।

अथानन्तर वह पिंगल काष्ठका भार लेकर घर आया। सो सुन्दरीकू न दखकर अतिकष्टके समुद्र में डूबा, विरहकरि महा दुखित भया काहू ठौर सुख न पाव। चक्रविष आरूढ समान याका चित्त व्याकुल भया। हरी गई ह भार्या जाकी ऐसा जो यह दीन ब्राह्मण सो राजाप गया और कहता भया—हे राजन! मेरी स्त्री तिहारे राजमें चोरी गई। जे दरिद्री आर्तिवत भयभीत स्त्री वा पुरुष उनका राजा ही शरण ह। तब राजा धूत, सो राजाने मत्रीको बुलाय झूठमूठ कहा- याकी स्त्री चारी गई ह ताहि पदा करो, ढील मत करो। तब एक सेवकने नेत्रोकी सन मार कर झूठ कहा। ह देव! म या ब्राह्मणकी स्त्री पोदनापुरके मागमे पथिकनिके साथ जाती देखी, सो आर्यिकानिक मध्य तप करवेको उद्यमी ह, तातं हे ब्राह्मण! तू ताहि लाया चाहे तो शीघ ही जा, ढील काहेको कर। ताका अवार दीक्षा धरनेका समय कहा? तरुण ह शरीर जाका, अर महा श्रेष्ठ स्त्रीके गुणनिसे पूण ह। ऐसा जब झूठ कहा तब ब्राह्मण गाढी कमर बाध शीघ वाको ओर दौडया, जसे तेज घोडा शीघ दौडे। सो पोदनापुरमें चैत्यालय तथा

उपवनादि वनमें सर्वत्र ढूंढी, काहू ठौर न देखी। तब पाछा विदग्धनगरमें आया। सो राजाकी आज्ञातैं क्रूर मनुष्योंने गलहटा देय लष्टमुष्टि प्रहार कर दूर किया। ब्राह्मण स्थानभ्रष्ट भया, क्लेश भोगा, अपमान लहा, मार खाई। एते दुःख भोग कर दूर देशांतर उठ गया। सो प्रिया विना याको किसी ठौर सुख नाहीं। जैसे अग्निमें पड़ा सर्प सूसै तैसे यह रात दिन सूसता भया। विस्तीर्ण कमलनिका वन याहि दावानल समान दीखै अर सरोवर अवगाह करता विरहरूप अग्निसे बलै। या भांति यह महा दुखी पृथ्वीविषै भ्रमण करै। एक दिन नगरसे दूर वनमें मुनि देखे। मुनिका नाम आर्यगुप्ति बड़े आचार्य, तिनके निकट जाय हाथ जोड़ नमस्कार कर धर्म श्रवण करता भया। धर्म श्रवण कर याको वैराग्य उपजा। महा शांतचित्त होय जिनेंद्रके मार्गकी प्रशंसा करता भया। मनमें विचारै है—अहो यह जिनराजका मार्ग परम उत्कृष्ट है। मैं अंधकारमें पड़ा हुता, सो यह जिनधर्मका उपदेश मेरे घटमें सूर्य समान प्रकाश करता भया। मैं अब पापोंका नाश करनहारा जो जिनशासन ताका शरण लेऊं। मेरा मन और तन विरहरूप अग्निमें जरै है सो भी शीतल करूं। तब गुरुकी आज्ञातैं वैराग्यको पाय, परिग्रहका त्यागकर दिगम्बरी दीक्षा धरता भया। पृथ्वीपर विहार करता, सर्व संगका परित्यागी नदी पर्वत समान वन उपवनोंमें निवास करता, तपकर शरीरका शोषण करता भया। जाके मनको वर्षाकालमें अति वर्षा भई तो भी खेद न उपज्या, और शीतकालमें शीत वायुकरि जाका शरीर न कांपा और ग्रीषम ऋतुमें सूर्यकी किरण कर व्याकुल न भया। याका मन विरहरूप अग्निकर जला हुता सो जिनवचनरूप जलकी तरंगकरि शीतल भया। तपकर शरीर अर्धदग्ध वृक्षके समान होय गया।

अब विदग्धपुरका राजा जो कुण्डलमंडित ताकी कथा सुनहु। राजा दशरथका पिता अरण्य अयोध्यामें राज्य करै। सो यह कुण्डलमंडित पापी गढ़के बलकर अरण्यके देशको विराधै। जैसे कुशील पुरुष मर्यादा लोप करै तैसे यह ताकी प्रजाको बाधा करै। राजा अरण्य बड़ा राजा ताके बहुत देश। सो याने कईएक देश उजाड़े, जैसे दुर्जन गुणोंको उजाड़ै, अर राजाके बहुत सामंत विराधे जैसे कषाई

जीवनिके परिणाम विराध, अर योगी कषायोका निग्रह कर, तस याने राजासे विरोध कर अपने नाशका उपाय किया। सो यद्यपि यह राजा अरण्यके आगे रक ह तथापि गढके बलसे पकडा न जाय। जस मूसा पहाडके नीचे जो बिल तामे बठ जाय तब नाहर क्या कर ? सो राजा अरण्यको या चिता से रात दिन चन न पडे, आहारादिक शरीरकी क्रिया अनादरसे कर। तब राजाका बालचन्द्र नामा सेनापति सो राजाको चितावान दख पूछता भया—हे नाथ ! आपको व्याकुलताका कारण कहा ? जब राजाने कुण्डलमडितका वत्तात कहा तब बालचन्द्रने राजासे कही आप निश्चित होवो, उस पापी कुडलमडितको बाधकर आपक निकट ले आऊ। तब राजाने प्रसन्न होय बालचन्द्रको विदा किया। चतुरग सेना ले बालचन्द्र सेनापति चढ्या सो कण्डलमडित मूख चित्तोत्सवास आसक्तचित्त सव राज्य चेष्टारहित महाप्रमादमें लीन था। नही जाना ह लोकका वत्तात जाने वह कुडलमडित, नष्ट भया ह उद्यम जाका। जो बालचन्द्रने जायकर क्रीडामात्रमें जस मगको बाधे तसे बाध लिया अर उसके सव राज्यमे राजा अरण्यका अधिकार किया, अर कुडलमडितको राजा अरण्यके समीप लाया। बालचन्द्र सेनापतिने राजा अरण्यका सव देश बाधा रहित किया। राजा सेनापतिसे बहुत हर्षित भया अर बहुत बधारा, अर पारितोषिक दिये, अर कुडलमडित अन्यायमागत राज्यसे भ्रष्ट भया, हाथी घोडे रथ पयादे सब गए, शरीरमात्र रह गया, पयादे फिरें सो महादुखी पथ्वीपर भ्रमण करता खेदखिन्न भया। मनमे बहुत पछताव जो म अन्यायमार्गीने बडोसे विरोधकर बुरा किया। एक दिन यह मुनियोके आश्रम जाय आचार्यको नमस्कारकर भावसहित धर्मका भेद पूछता भया। गौतम स्वामी राजा श्रेणिकत कह ह—हे राजन ! दुखी दरिद्री कुटुम्बरहित व्याधिकरि पीडित तिनमैं काहू एक भव्यजीवके धर्म बुद्धि उपज ह। ताने आचार्यसू पूछा—हे भगवन ! जाकी मुनि होनेकी शक्ति न होय सो गहस्थाश्रममे कसे धर्मका साधन कर ? आहार भय मैथुन परिग्रह यह चार सज्ञा, तिनमे तत्पर यह जीव कसे पापनिकरि छूट? सो मैं सुना चाहू हू, आप कपाकर कहो। तब गुरु कहते भये—धर्म जीवदयामई ह। ये सव प्राणी

अपनी निंदाकर अर गुरुनिके पास आलोचनाकर पापत छूट ह । तू अपना कल्याण चाह ह, अर शुद्ध कर्मकी अभिलाषा कर ह तो हिंसाका कारण महाघोरकर्म लहू अर वीयसे उपजा ऐसा जो मास ताका भक्षण सवथा तज । सव ही ससारी जीव मरणत डर ह । तिनके मासकर जे अपने शरीरको पोख हैं ते पापी नि सदेह नरकमें पडेंगे । जे मासका भक्षण कर ह अर नित्य स्नान कर ह तिनका स्नान वथा ह । अर मू ड मुडाय भेष लिया सो भेष भी वथा ह । अर अनेक प्रकारके दान उपवासादिक यह मासाहारीको नरकसे नाहीं बचा सक हं । या जगतमे ये सव ही जातिके जीव पूवजन्मने या जीवके बाधव भए हैं । तात जो पापी मासका भक्षण कर ह ताने तो सव बाधव भखे । जो दुष्ट निदई मच्छ मृग पक्षियोको हन है अर मिथ्यामागमें प्रवरत है सो मधु मासके भक्षणत महाकुगतिविष जाव ह । यह मास वक्षनितें नाहीं उपज ह, भूमित नाहीं उपज ह, अर कमलकी न्याइ जलसे नाहीं निपज ह, अथवा अनेक वस्तुनिके योगत जैस औषधि बन ह तस मासकी उत्पत्ति नाहीं होय ह । दुष्ट जीव, निदयी वा गरीब बडा वल्लभ ह जीतव्य जिनको, ऐसे पक्षी मग मत्स्यादिक तिनको हन कर माँस उपजाव ह । सो उत्तम जीव दयावान नाहीं भख है । अर जिनके दुग्धकरि शरीर वद्धिको प्राप्त होय ऐसी गाय भस छेरी तिनके मृतक शरीरको भख ह अथवा मार मारकर भख ह, तथा तिनके पुत्र पौत्रादिकको भख ह ते अधर्मी महानीच नरक निगोदके अधिकारी हैं । जो दुराचारी मास भख ह ते माता पिता पुत्र मित्र सहोदर सव ही भख । या पृथ्वीके तले भवनवासी अर व्यतर देवनिके निवास हैं, अर मध्यलोकमें भी हैं। ते दुष्ट कर्मके करनहारे नीच देव ह । जो जीव कषाय सहित तापस होय है ते नीच देवनिमें निपज हैं । पातालमें प्रथम ही रत्नप्रभा पृथ्वी, ताके छ भाग, अर पच भागमे तो भवनवासी अर व्यतर देवनिके निवास हैं, अर बहलभागमें पहिला नरक, ताके नीचे छह नरक और ह । ये सातो नरक छह राजूमें हैं । अर सातवें नरकके नीचे एक राजूमें निगोदादि स्थावर ही हैं, त्रस जीव नाहीं हैं अर निगोदसे तीन लोक भरे हैं ।

अथानन्तर नरकका व्याख्यान सुनहु—कसे ह नारकी जीव ? महाक्रूर, महाकुशब्द बोलनहारे, अति कठोर ह स्पश जाका, महा दुर्गंध अ धकाररूप नरकमें पडे ह, उपमारहित जो दु ख तिनका भोगनहारा ह शरीर जिनका । महा भयकर नरक ताहि कुम्भीपाक कहिए जहा वतरणी नदी ह, अर तीक्ष्ण कटक युक्त शाल्मलीवक्ष, जहा असिपत्रवन तोक्ष्ण खडगकी धारा समान ह पत्र जिनके, अर जहाँ देदीप्यमान अग्निसे तप्तायमान तीखे लोहेके कीले निरतर ह । उन नरकनिमे मधुमासके भक्षणहारे, अर जीवनिके मारणहारे निरतर दुख भाग ह । जहा एक आध अगुल मात्र भी क्षेत्र सुखका कारण नाहीं, अर एक पलको भी नारकियोका विश्राम नाही जो चाह कि कहू भाजकर छिप रहे तो जहाँ जाय तहाँ ही नारकी मार । अर असुरकुमार पापी देव बताय देय । महाप्रज्वलित अगार तल्य जो नरककी भूमि ताविष पडे ऐसे विलाप कर जस अग्निमे मत्स्य व्याकुल हुआ विलाप कर । अर भयसे व्याप्त काहू प्रकार निकस कर अ य ठौर गया चाह तो तिनको शीतलता निमित्त और नारकी वतरणी नदीके जलसे छाटे देय, तो वतरणो महादुगध क्षीरजलकी भरी ताकरि अधिक दाहको प्राप्त होय । बहुरि विश्रामके अथ असिपत्रवनमें जाय सो असिपत्र सिरपर पडे मानो चक्र खडग गदादिक ह, तिनकरि विदारे जावे छिद गए ह नासिका कण कधा जघा आदि शरीरके अग जिनके । नरकमें महा विकराल महा दुखदाई पवन ह, अर रुधिरके कण बरस ह । जहा घानीमें पेलिए ह, अर क्रूर शब्द होय ह तीक्ष्ण शूलोसे भेदिए ह, महा विलापके शब्द कर ह, अर शाल्मली वक्षनिसे घसीटिए ह, अर महा मुदगरोके घातसे कूटिए ह । अर जब तिसाए होय ह तब जलकी प्राथना कर ह तब उन्हें ताबा गलाकर प्याव ह ? तात देह महा दग्धमान होय ह, ताकर महादुखी होय ह, अर कह ह कि हमें तष्णा नाहीं । तो पुनि बलात्कार इनको पथ्वीपर पछाडकर, ऊपर पग देय, सडासियोसे मुख फाड, ताता ताबा प्यावै ह । तात कठ भी दग्ध होय ह अर हृदय भी दग्ध होय ह । नारकियोको नारकीनिका अनेक प्रकारका परस्पर दु ख, तथा भवनवासी देव जे असरकुमार तिनकरि करवाया दु ख, सो कौन वरणन कर सक?

नरकमें मद्यमासके भक्षणसे उपजा जो दु ख ताहि जानकर मद्य मासका भक्षण सवथा तजना । ऐसे मुनिके वचन सुन, नरकके दुखसे डरा ह मन जाका, ऐसा जो कुण्डलमडित सो बोला—हे नाथ ! पापी जीव तो नरकही के पात्र ह, अर जो विवेकी सम्यग्दष्टि श्रावकके वत पाल ह तिनको कहा गति ह ? तब मुनि कहते भए—जो वढवत सम्यकदष्टि श्रावकके व्रत पाल ह ते स्वग मोक्षके पात्र होय ह । औरहु जो जीव मद्य मास शहतका त्याग कर ह ते भी कुगतिसे बच ह । जे अभक्ष्यका त्याग कर ह सो शुभ गति पाव ह । जो उपवासादिक रहित ह, अर दानादिक भी नहीं बन ह, परन्तु मद्यमासके त्यागी ह तो भले ह । अर जो कोई शीलवत मडित ह, अर जिनशासनका सेवक ह, अर श्रावकके वत पाल ह ताका कहा पूछना ? सो तो सौधर्मादि स्वगमे उपजै ही ह । अहिसावत धर्मका मूल कहा ह । अहिसा मासादिकके त्यागीके अत्यत निर्मल होय ह । जे म्लेच्छ अर चाडाल ह, अर दयावान होवे ह ते मधु मासादिकका त्याग कर ह, सो भी पापनिसे छूट ह । पापनिकरि छूटा हुआ पुण्यको ग्रह ह, अर पुण्य के बधनसे देव अथवा मनुष्य होय ह । अर जो सम्यकदष्टि जीव ह सो अणुवतको धारण कर देवो का इ द्र होय, परम भोगोको भोग ह । बहुरि मनुष्य होय मुनिवत धर मोक्षपद पाव ह । ऐसे आचाय के वचन सुनकर यद्यपि कुण्डलमडित अणुवतके धारनेमे शक्तिरहित ह तो भी सीस नवाय गुरुनिकू सविनय नमस्कारकर मद्यमासका त्याग करता भया, अर समीचीन जो सम्यग्दशन ताका शरण ग्रहा । भगवानकी प्रतिमाको नमस्कार अर गुरुवोको नमस्कारकर देशातरको गया । मनमे ऐसी चिंता भई कि मेरा मामा महापराक्रमी ह सो निश्चय सेती मुझे खेदखिन्न जान मेरी सहायता करेगा । म बहुरि राजा होय शत्रुनिको जीतू गा । ऐसी आशा धर दक्षिण दिशा जायवेको उद्यमी भया । सो अति खेद-खिन्न दुखसे भरा, धीरा २ जाता हुता सो मागमें अत्यन्त व्याधि वेदनाकर सम्यक्त्वरहित होय मिथ्यात्व गुणठाने मरणको प्राप्त भया । कसा ह मरण ? नाहीं ह जगतमे उपाय जाका । सो जिस समय कु डलमडिनके प्राण छूटे सो राजा जनककी स्त्री विदेहाके गभमें आया । ताही समय वेदवतीका जीव

जो चित्तोत्सवा भई हुती, सो भी तपके प्रभावकरि सीता भई, सो हू विदेहाके गभमें आई। ये दोनो एक गभमें आए। अर वह पिगल ब्राह्मण जो मुनिव्रत धर भवनवासी देव भया हुता, सो अवधिकर अपने तपका फल जान, बहुरि विचारता भया कि वह चित्तोत्सवा कहा, अर वह पापी कु डलमडित कहा, जाकरि म पूवभवमें दुख अवस्थाको प्राप्त भया। अब वे दोनो राजा जनककी स्त्रीके गभमें आए ह। सो वह तो स्त्रीकी जाति पराधीन हुती, उस पापी कु डलमडितने अ यायमाग किया, सो यहा मेरा परमशत्रु ह। जो गभमे विराधना करू तो रानी मरणको प्राप्त होय, सो यास मेरा बर नाहीं। तात जब यह गभत बाहिर आव तब म याहि दुख दू। ऐसा चितवता हुता पूवकमक बरिकर क्रोधायमान जो देव, सो कु डलमडितके जीवपर हाथ मसले। ऐसा जानकर सव जीवनकू क्षमा करनी, काहूकू दु ख न देना। जो कोई काहूकू दु ख देय ह सो आपको ही दु खसागरमे डुबोव ह।

अथानन्तर समय पाय रानी बिदेहाके पुत्र अर पुत्रीका युगल ज म भया। तब वह देव पुत्रको हरता भया। सो प्रथम तो क्रोधके योगकरि ताने ऐसी विचारी कि म याहि शिलापर पटक मारू। बहुरि विचारी कि धिक्कार ह मोकू। मैं ऐसा अन त ससारका कारण पाप चितया। बालहत्या समान और कोई पाप नाहीं। पूवभवमें म मुनिव्रत धरे हुते सो तणमात्रका भी विराधन न किया, सव आरभ तजा, नाना प्रकार तप किए। श्रीगुरुके प्रसादसे निमल धम पाय ऐसी विभूति को प्राप्त भया। अब मैं ऐसा पाप कसे करू? अल्पमात्र भी पापकर महादु खकी प्राप्ति होय ह। पापकरि, यह जीव ससारवनविष बहुत काल दुखरूप अग्निम जल ह। अर जो दयावान, निर्दोष ह भावना जाकी, महा सावधानरूप ह सो ध य ह, सुगति नामा रत्न वाके हाथमें ह। वह दव ऐसा विचारकर दयावान होयकर बालकको आभूषण पहिराय काननविष महा ददीप्यमान कु डल घाले। परणलब्धी नामा विद्याकर आकाशत पृथ्वीविष सुखकी ठौर पधराय आप अपने धाम गया। सो रात्रिके समय चद्रगति नामा विद्याधरने या बालकको आभरणकी ज्योतिकर प्रकाशमान आकाशसे पडता देखा। तब विचारी कि यह नक्षत्रपात भया या

विद्युत्पात भया। यह विचारकर निकट आय देख तो बालक है। तब हर्षकर बालकको उठाय लिया, अर अपनी रानी पुष्पवती जो सेजमें सूती हुती ताकी जाघोंके मध्य धर दिया। अर राजा कहता भया—हे राणी! उठो उठो तिहारे बालक भया है, बालक महाशोभायमान है। तब रानी सुन्दर है मुख जाका, ऐसे बालकको देख प्रसन्न भई, जाकी ज्योतिके समूहकर निद्रा जाती रही। महा विस्मय को प्राप्त होय राजा को पूछती भई—हे नाथ! यह अद्भुत बालक कौन पुण्यवती स्त्रीने जाया। तब राजाने कही—हे प्यारी तैने जना, तो समान और पुण्यवती कौन है? धन्य है भाग्य तेरा, जाके ऐसा पुत्र भया। तब वह रानी कहती भई—हे देव! मैं तो बांझ हूं, मेरे पुत्र कहां? एक तो मुझे पूर्वोपार्जित कर्मने ठगी—बहुरि तुम कहा हास्य करो हो? तब राजाने कही—हे देवी! तुम शंका मत करहु, स्त्रियोंके प्रच्छन्न (गुप्त) भी गर्भ होय है। तब रानीने कही ऐसे ही होहु। परन्तु याके मनोहर कुंडल कहांते आए? ऐसे भू मंडलमें नाहीं। तब राजाने कही—हे रानी! ऐसे विचारकर कहा? यह बालक आकाशसे पडा, अर मैं झेला, तुझे दिया। यह बडे कुलका पुत्र है याके लक्षणनिकर जानिए है। यह मोटापुरुष है, अन्य स्त्री तो गर्भके भारकर खेदखिन्न भई है, परन्तु हे प्रिये! तैने याहि सुखसे पाया। अर अपनी कुक्षिमें उपजा भी बालक जो माता पिताका भक्त न होय, अर विवेकी न होय, शुभ काम न करै, तो ताकर कहा? कई एक पुत्र शत्रु समान परणवै है। तातै उदरके पुत्रका कहा विचार? तेरे यह पुत्र सुपुत्र होयगा। शोभनीक वस्तुमें सन्देह कहा? अब तुम या पुत्रको लेवो, अर प्रसूतिघर में प्रवेशकर अर लोकनिको यही जनावना जो राणीके गुप्त गर्भ हुता सो पुत्र भया। तब राणी पतिकी ३५७
आज्ञा प्रमाण प्रसन्न होय प्रसूतिगृहविषै गई। प्रभातविषै राजाने पुत्रके जन्मका उत्सव किया। रथनू पुरमें पुत्रके जन्मका ऐसा उत्सव भया जो सब कुटुम्ब अर नगरके लोग आश्चर्यको प्राप्त भए। रत्न निके कुंडलकी किरणोंकर मंडित जो यह पुत्र सो माता पिताने याका नाम प्रभामण्डल धरा। अर पोषनेके निमित्त धायको सौंपा। सब अंत पुरकी राणी आदि सकल स्त्री तिनके हाथरूप कमलनिका

भमर होता भया । भावार्थ—यह बालक सब लोकनिको बल्लभ बालक मुखसो तिष्ठ है । यह तो कथा यहा ही रही ।

अथानन्तर मिथिलापुरीविषै राजा जनककी रानी विदेहा पुत्रको हरा जान विलाप करती भई । अति ऊचे स्वरसू रुदन किया, सब कुटुम्बके लोक शोकसागरमें पडे । रानी ऐसे पुकारे मानो शस्त्रकर मारी है । हाय ! हाय पुत्र ! तुझ कौन लेगया, मोहि महादुखका करनहारा वह निर्दई कठोर चित्त के हाथ तेरे लेने पर कैसे पडे ? जैसे पश्चिम दिशाकी तरफ सूर्य आय अस्त होय जाय तैसे तू मेरे मंदभागिनीके आयकर अस्त होय गया । मैं हू परभवविषै काहूका बालक विछोहा हुता सो मैं फल पाया । तात कभी भी अशुभ कर्म न करना । जो अशुभकर्म है सो दुखका बीज है । जैसे बीज बिना वृक्ष नाहीं, तैसे अशुभकर्म विना दुख नाहीं । जा पापीने मेरा पुत्र हरचा सो मोकू ही क्यो न मार गया ? अधमुईकर दुःखके सागरमें काहेको डुबो गया ? या भांति रानी अति विलाप किया । तदि राजा जनक आय । आय धीर्य बधावते भये—हे प्रिये ! तू शोकको मत प्राप्त होउ, तेरा पुत्र जीव है, काहूने हरचा है सो तू निश्चय सेती देखेगी । वृथा काहेका रुदन करै है । पूर्व कर्मके प्रभावकर गई वस्तु कोई तो देखिए कोई न देखिए । तू थिरताको प्राप्त होउ । राजा दशरथ मेरा परम मित्र है सो वाको यह वार्ता लिखू हू । वह अर मैं तेरे पुत्रकू तलाशकर लावेंगे, भले २ प्रवीण मनुष्य तेरे पुत्रके ढूढिवेको पठावेंगे । या भांति कहकर राजा जनकने अपनी स्त्रीको संतोष उपजाय दशरथके पास लेख भेजा । सो दशरथ लेख बाच महाशोक वंत भए । राजा दशरथ अर जनक दोऊननें पृथ्वीमें बालकको तलाश किया परन्तु कहू देख्या नाहीं । तदि महाकष्टकर शोकको दाब बैठ रहे । ऐसा कोई पुरुष वा स्त्री नाहीं जो इस बालकके गए आंसुओंकर भरे नेत्र न भया होय, सब ही शोकके वश होय रुदन करते भए ।

अथानन्तर प्रभामण्डलके गएका शोक भुलावनेकू महामनोहर जानकी बाललीलाकर सब बंधु-लोककू आनन्द उपजावती भई । महा हर्षकू प्राप्त भई जो स्त्रीजन तिनकी गोदमें तिष्ठती, अपने शरीर

की कांतिकर दशोदिशाकू प्रकाशरूप करती वृद्धिकू प्राप्त भई । कैसी है जानकी ? कमल सारिखे हैं नेत्र जाके अर महासुकंठ, प्रसन्न वदन, मानो पदमद्रहके कमलके निवाससे साक्षात श्रीदेवी ही आई है। याके शरीररूप क्षेत्रविषे गुणरूप धान्य निपजते भए । ज्यो २ शरीर बडा त्यो त्यो गुण बढे । समस्त लोकनिकू सुखदाता, अत्यन्त मनोज्ञ सुन्दर लक्षणनिकर संयुक्त है अंग जाका । सीता कहिए भूमि-ता समान क्षमाकी धरणहारी तातै जगतविषै सीता कहाई । बदनकर जीत्या है चन्द्रमा जाने, पल्लव समान है कोमल आरक्त हस्ततल जाके महाश्याम, महासुन्दर, इन्द्रनीलमणि समान हैं केश निके समूह जाका, अर जीती है मदकी भरी हंसनीकी चाल जाने, अर सुन्दर भौंह जाकी, अर मोल श्रीके पुष्प समान मुखकी सुगन्ध, गुंजार करै हैं भ्रमर जापर, अति कोमल हैं पुष्पमाला समान भुजा जाकी, अर केहरी समान है कटि जाकी, अर महा श्रेष्ठ रसका भरा जो केलिका थंभ ता समान है जंघा जाकी, स्थलकमल समान महामनोहर हैं चरण जाके, अर अति सुन्दर हैं कुचयुग्म जाका, अति शोभायमान है रूप जाका । महाश्रेष्ठ मंदिरके आंगन विषे महारमणीक सातसै कन्याओंके समूहमें शास्त्रोक्त क्रीडा करै । जो कदाचित इन्द्रकी पटराणी शची वा चक्रवर्तीकी पटराणी सुभद्रा याके अंगकी शोभाकू किंचितमात्र भी धरै तो वे अति मनोज्ञरूप भासै । ऐसी यह सीता सर्वनित सुन्दर है । याकू रूप गुणयुक्त देख राजा जनक विचारया—जैसे रति कामदेव हीको योग्य है तैसे यह कन्या सव विज्ञानयुक्त दशरथके बडे पुत्र जो राम तिनहीकू योग्य है । सूर्यकी किरणके योगतें कमलनिकी शोभा प्रकट होय है । ३५९

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रंथ ताकी भाषावचनिकाविषै सीता प्रभामण्डलका जन्म कथन वर्णन करनेवाला छबीसवां पर्व पूर्ण भया । २६॥

अथानन्तर राजा श्रेणिक यह कथा सुनकर गौतमस्वामीको पूछता भया—हे प्रभो ! जनकने राम

का कहा महात्म्य देख्या जो अपनी पुत्री देनी विचारी। तब गणधर चित्तको आनन्दकारी वचन कहते भए—हे राजन! महा पुण्याधिकारी जो श्रीरामचन्द्र तिनका सुयश सुनि, जा कारणत जनक महा बुद्धिमानने रामकू अपनी कन्या देनी विचारी। वैताढ्यपर्वतके दक्षिणभागविषै अर कैलाश पर्वतके उत्तरभागविषै अनेक अंतर देश बसै है तिनमें एक अर्द्धबर्वर देश, असंयमी जीवनिका है मान्य जहां, महा मूढजन निर्दई म्लेच्छ लोकनिकरि भरचा। ता विषै एक मयूरमाल नामा नगर, कालके नगर समान महा भयानक, तहां अंतरगत नामा म्लेच्छ राज्य करै। सो महापापी दुष्टनिका नायक महा निर्दई, बडी सेनात नानाप्रकारके आयुधनिकर मंडित सकल म्लेच्छ संग लेय आप देश उजाडनेकू आए, सो अनेक देश उजाडे। कैसे है म्लेच्छ? करुणाभाव रहित प्रचण्ड है चित्त जिनके, अर अत्यन्त है दौड जिनकी। सो जनक राजाका देश उजाडनेकू उद्यमी भए। जैसे टिड्डीदल आवै तैसे म्लेच्छोंके दल आए, सबको उपद्रव करण लगे। तब राजा जनकने अयोध्याको शीघ्र ही मनुष्य पठाए। म्लेच्छके आवनेके सब समाचार राजा दशरथकू लिखे। सो जनकके जन शीघ्र ही जाय सकल वृत्तांत दशरथसू कहते भए—हे देव! जनक वीनती करी है, परचक्र भीलनिका आया, सो सब पृथ्वी उजाडे है। अनेक आर्यदेश विध्वंस किए। ते पापी प्रजाकू एक वर्ण किया चाहे है, सो प्रजा नष्ट भई। तब हमारे जीवेकर कहा? अब हमको कहा कर्त्तव्य है? उनसे लडाई करना अथवा कोई गढ पकड तिष्ठें, लोकनिकू गढमें राखें। कालिन्द्री भागा नदीकी तरफ विषमस्थल है वहां जावें, अथवा विपुलाचलकी तरफ जावें अथवा सब सेना सहित कुंजगिरिकी ओर जावें। परसेना महा भयानक आवै है। साधु श्रावक सबलोक अति विह्वल है। ते पापी गौ आदि सब जीवनिके भक्षक है। सो जो आप आज्ञा देहु सो करै। यह राज्य भी तिहारा और पृथ्वी भी तिहारी। यहांकी प्रतिपालना सब तुमकू कर्त्तव्य है। प्रजाकी रक्षा किए धर्मकी रक्षा होय है। श्रावक लोक भावसहित भगवानकी पूजा करै हैं, नानाप्रकारके व्रत धरै है, दान करै है, शील पालै है, सामायिक करै है पोशा परिक्रमणा करै है,

भगवानके बडे बडे चैत्यालय तिनविष महा उत्सव होय है, विधि पूर्वक अनेक प्रकार महा पूजा होय है, अभिषेक होय है, विवेकी लोक प्रभावना करै है। अर साधु दशलक्षणधर्म कर युक्त, आत्मध्यानमें आरूढ मोक्षका साधन तप करै है। सो प्रजाके नष्ट भए साधु अर श्रावकका धर्म लुप्त है। अर प्रजाके होते धर्म अर्थ काम मोक्ष सब सधै है। जो राजा परचक्रतै पृथ्वीकी प्रतिपालना करै सो प्रशंसाके योग्य है। राजाके प्रजाकी रक्षातै यालोक परलोकविषै कल्याणकी सिद्धि होय है। प्रजा बिना राजा नहीं, अर राजा बिना प्रजा नहीं। जीवदयामय धर्मका जो पालन करै सो यह लोक परलोकमें सुखी होय है। धर्म अर्थ काम मोक्ष की प्रवृत्ति लोकनिके राजाकी रक्षासे होय है, अन्यथा कैसे होय? राजाके भुजबलकी छाया पायकर प्रजा सुखसे रहै है। जाके देशमें धर्मात्मा धर्म सेवन करै है, दान तप शील पूजादिक करै है, सो प्रजाकी रक्षाके योगतै छठा अंश राजाको प्राप्त होय है। यह सब वृत्तांत राजा दशरथ सुनकर आप चलने को उद्यमी भए, अर श्रीरामको बुलाय राज्य देना विचारया। वादित्र निके शब्द होते भए, सब मंत्री आए, अर सब सेवक आए। हाथी घोडे रथ पयादे सब आय ठाढे भए। जलके भरे स्वर्णमयी कलश सेवक लोग स्नानके निमित्त भरलाए। अर शस्त्र बांधकरि बडे बडे सामंत लोक आए। अर नृत्यकारिणी नृत्य करती भई। अर राजलोककी स्त्री जन नानाप्रकारके वस्त्र आभूषण पटलनिमें ले आई। यह राज्याभिषेकका आडम्बर देखकर राम दशरथसू पूछते भये कि हे प्रभो! यह कहा है? तब दशरथ कही—हे भद्र! तुम या पृथ्वीकी प्रतिपालना करो, मैं प्रजाके हित निमित्त शत्रुनिके समूहतै लडने जाऊं हूं। वे शत्रु देवनिकरहू दुर्जय हैं। तब कमलसारिखे हैं नेत्र जिनके ऐसे श्रीराम कहते भए—हे तात! ऐसे रंकन पर एता परिश्रम कहा? ते आपके जायबे लायक नाहीं। वे पशुसमान दुरात्मा जिनसूं संभाषण करना उचित नाहीं, तिनके सन्मुख युद्धकी अभिलाषाकर आप कहा पधारे? उन्दरु (चूहा) के उपद्रव कर हस्ती कहा क्रोध करै? अर रुईके भस्म करवेक अर्थ अग्नि कहा परिश्रम करै? तिनपर जायवेकी हमकूं आज्ञा देहु यही उचित है। ये रामके वचन सुन

पद्म पुराण ३६१ ३६१

दशरथ अति हर्षित भए। तदि रामकू उरसू लगाय कहते भए। हे पद्म! कमल समान है नेत्र जाके ऐसे तुम बालक, सुकुमार अंग, कैसे उन दुष्टनिसू जीतोगे? यह बात मेरे मनमें न आवै। तब राम कहते भए—हे तात! कहा तत्कालका उपज्या अग्निकी कणका मात्र हू विस्तीर्ण वनको भस्म न करै? करै ही करै। छोटी बडी अवस्थासू कहा प्रयोजन? अर जैसे अकेला ऊगता ही बालसूर्य घोर अंधकारकू हरै ही है तैसे हम बालक तिन दुष्टनिकू जीतै ही जीतैं। ये वचन रामके सुन राजा दशरथ अति प्रसन्न भए, रोमांच होय आए अर बालपुत्रकू भेजनेका कछुएक विषाद भी न उपज्या, नेत्र सजल होय गए। राजा मनमें विचारै है जो महापराक्रमी त्यागादि व्रतके धारणहारे क्षत्री तिनकी यही रीति है—जो प्रजाकी रक्षाके निमित्त अपने प्राण भी तजनेका उद्यम करैं। अथवा आयुके क्षय विना मरण नाहीं, यद्यपि गहन रणमें जाय तौ हू न मरै। ऐसा चितवन करता जो राजा दशरथ ताके चरणकमलयुगसहू नमस्कारकरि राम लक्ष्मण बाहिर नीसरे। सब शास्त्र अर शस्त्र विद्याविषै प्रवीण, सब लक्षणनिकरि पूर्ण, सबकू प्रिय है दर्शन जिनका, चतुरंग सेनाकरि मंडित, विभूतिकरि पूर्ण, अपने तेजकर देदीप्यमान दोऊ भाई रामलक्ष्मण रथविषै आरूढ होय जनककी मदद चाले। सो इनके जायवे पहिले जनक अर कनक दोऊ भाई, परसेनाका दो योजन अंतर जान युद्ध करवेकू चढे हुते, सो जनक कनकके महारथी योधा शत्रुनिके शब्द न सहते संते म्लेच्छनिके समूहमें जैसे मेघकी घटामें सूर्यादिक ग्रह प्रवेश करैं तैसे यह थे, सो म्लेच्छोंके अर सामंतनिके महायुद्ध भया। जाके देख अर सुने रोमांच होय आवै। कैसा संग्राम भया? बडे शस्त्रनिकरि किया है प्रहार जहां, दोऊ सेनाके लोक व्याकुल भए, कनककू म्लेच्छनिका दबाव भया तदि जनक भाईकी मददके निमित्त अतिक्रोधायमान होय दुर्निवार हाथियोंकी घटा प्रेरता भया। सो वे बरबर देश के म्लेच्छ महा भयानक जनककू दबावते भये। ताही समय राम लक्ष्मण आय पहुँचे। अति अपार महागहन म्लेच्छनिकी सेना रामचन्द्र देखी। सो श्रीरामचन्द्रका उज्ज्वल छत्र देख कर शत्रुनिकी सेना कम्पायमान भई, जैसे पूर्णमासीके चंद्रमा

का उदय देखकर अंधकारका समूह चलायमान होय। म्लेच्छानके बाणनिकरि जनकका बखतर टूट गया हुता, अर जनक खेदखिन्न भया हुता, सो रामने धीय बधाया। जैसे संसारी जीव कर्मनिके उदय कर दुःखी होय सो धर्मके प्रभावते दुःखनिते छूटे, सुखी होय, तैसे जनक रामके प्रभावकर सुखी भया। चंचल तुरंगनि कर युक्त जो रथ, ताविषै आरूढ, जो राघव, महाउद्योतरूप है शरीर जिनका, बखतर पहिरे, हार अर कुंडल कर मंडित, धनुष चढाए और बाण हाथमें, सिंहके चिह्नकी है ध्वजा जिनके, अर जिनपर चमर ढुरे है, अर महामनोहर उज्ज्वल छत्र सिरपर फिरै है, पृथ्वीके रक्षक, धीर वीर है मन जिनका ऐसे श्रीराम लोकके वल्लभ, प्रजाके पालक, शत्रुनिकी विस्तीर्ण सेनाविषै प्रवेश करते भए। सुभटनिके समूह कर संयुक्त जैसे सूर्य किरणनिके समूह कर सोहै है तैसे शोभते भए। जैसे माता हाथी कदलीवनमें बैठ्या केलनिके समूहका विध्वंस करै तैसे शत्रुनिकी सेनाका भंग किया। जनक अर कनक दोऊ भाई बचाए। अर लक्ष्मण जैसे मेघ बरसै तैसे बाणनिकी वर्षा करता भया। तीक्ष्ण सामान्य चक्र अर शक्ति कनक त्रिशूल कुठार करौंत इत्यादि शस्त्रनिके समूह लक्ष्मणके भुजानिकर चले। तिनकर अनेक म्लेच्छ मुवे। जैसैं फरसानकर वृक्ष कटें तैसे भील पारधी महाम्लेच्छ लक्ष्मणके बाणनि कर विदारे गये है उरस्थल जिनके, कटगई है भुजा अर ग्रीवा जिनकी, हजारों पृथ्वीविषै पडे। तदि वे पृथ्वीके कंटक तिनकी सेना लक्ष्मण आगे भागी। लक्ष्मण सिंहसमान दुर्निवार, ताहि देखकर जे म्लेच्छमें शार्दूल समान हुते तेहू अति क्षोभकूं प्राप्त भए। महावादित्रके शब्द करते, अर मुखतै भयानक शब्द करते, अर धनुषबाण खडग चक्रादि अनेक शस्त्रनिकूं धरे, अर रक्त वस्त्र पहिरे, खंजर जिनके है हाथमें, नाना वर्णका अंग जिनका, कईएक काजल समान श्याम, कईएक कर्दम, कई एक ताम्रवर्ण, वृक्षनिके बक्कल पहिरे, अर नानाप्रकारके गेरुवादि रंग तिनकरि लिप्त है अंग जिनके, अर नानाप्रकारके वृक्षनिकी मंजरी तिनके है छोगा सिरपर जिनके, अर कौडी सारिखे है दांत जिनके, अर विस्तीर्ण है उदर जिनके, ऐसे भासैं मानो कुटजजातिके वृक्ष ही फूल है। अर कईएक निजहाथनि

विष आयुधनिकू धरे कठोर है जघा जिनकी, भारी भुजानिके धरणहारे, मानू असुरकुमार देवनि सारिखे उन्मत्त, महानिर्दई, पशुमासके भक्षक, महामूढ, जीवहिंसाविषै उद्यमी, जन्महीतैं लेकर पापनिके करणहारे, तत्काल खोटे आरम्भके करणहारे, अर सूकर भैंस व्याघ्र ल्याली इत्यादि जीवनिके चिह्न है जिनकी ध्वजानिमे, नानाप्रकारके जे वाहन तिनपर चढे, पत्रनिके है छत्र जिनके, नानाप्रकार युद्धके करणहारे, अति दौडके करणहारे, महा प्रचण्ड तुरग समान चचल, ते भील मेघमाला समान लक्ष्मणरूप पर्वतपर मेघमालासमान अपने स्वामीरूप पवनके प्रेरे बाणवृष्टि करते भए। तदि लक्ष्मण तिनके निपात करवेकू उद्यमी तिनपर दौडे, महाशीघ्र है बेग जिनका, जैसे महा गजेन्द्र वृक्षनिके समूहपर दौडे। सो लक्ष्मण के तेज प्रतापकरि वे पापी भागे सो परस्पर पगनि कर मसले गए। तदि तिनका अधिपति आतरगतम अपनी सेनाकू धीर्य बधाय सकल सेनासहित आप लक्ष्मणके सन्मुख आया। महाभयकर युद्ध किया, लक्ष्मणकू रथरहित किया। तदि श्रीरामचन्द्र अपना रथ चलाया, पवन समान है वेग जाका, लक्ष्मणके समीप आए। लक्ष्मणकू दूजे रथ पर चढाया अर जैसे अग्नि बनकू भस्म करै तैसे तिनकी अपार सेना बाणनिरूप अग्निकर भस्म करी। कईएक तो बाणनिकर मारे, अर कईएक कनक नामा शस्त्रनिकरि विध्वसे, कईएक तोमरनामा आयुधनिकरि हते, कईएक सामान्य चक्रनामा शस्त्रनि करि निपात किए। वह म्लेच्छनिकी सेना महाभयकर दश दिशाकू जाती रही। छत्र चमर ध्वजा धनुष आदि शस्त्र डार भाजे। महा पुण्याधिकारी जो राम तिनने एकनिमिषमें म्लेच्छनिका निराकरण किया। जैसे महामुनि क्षणमात्रमे सब कषायनिका निराकरण करै तैसें म्लेच्छनिका निपात किया। वह पापी आतरगतम अपार सेनारूप समुद्रकरि आया हुता, सो भयकरि युक्त दस घोडाके असवारनिसू भाग्या। तदि श्रीराम आज्ञा करी ये नपुसक युद्धतै पराङ्गमुख होय भागे, अब इनके मारवेकरि कहा? तब लक्ष्मण भाईसहित पाछे बाहुडे। वे म्लेच्छ भयकरि व्याकुल होय सह्याचल विंध्याचलके वननिमें छिप गए। श्रीरामचन्द्रके भयतै पशु हिंसादिक दुष्ट कर्मकू तजि वनके फलनिका आहार करै। जैसे

गरुडत सप डर तस श्रीरामसू डरते भए। लक्ष्मण सहित श्रीराम शात ह स्वरूप जिनका, राजा जनक कू बहुत प्रसन्न कर विदा किया। अर आप अपने पिताके समीप अयोध्याकू चाले। सब पथ्वीके लोक आश्चयकू प्राप्त भए। यह देख सबकू परम आनन्द उपज्या, परमहषकरि रोमाच होय आए। रामके प्रभाव सव पथ्वी शोभायमान भई–जैस चतुथकालके आदि ऋषभदेवके समय सम्पदासे शोभायमान भई हुती। धम अथ कामकरि युक्त जे पुरुष तिनसे जगत एसा भासता भया जस बफके अवरोध कर वर्जित जे नक्षत्र तिनसू आकाश शोभ। गौतमस्लामी कहे ह–हे राजा श्रेणिक! ऐसा रामका माहात्म्य देखकर जनक अपनी पुत्री सीता रामकू देनी विचारी। बहुत कहवेकरि कहा? जीवनिके सयोग तथा वियोगका कारण भाव एक कमका उदय ही ह। सो वह श्रीराम श्रेष्ठ पुरुष, महासौभाग्यवत, अतिप्रतापी, औरनमें न पाइए ऐसे गुणनिकरि पथ्वीविष प्रसिद्ध होता भया, जस किरणनिके समूहकर सूय महिमाकू प्राप्त होय।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण सस्कृत ग्रथ ताकी भाषावचनिकाविष म्ले छनिकी हार रामकी जीतका वथन वणन करनवालासत्ता सर्वा पव पूण भया ॥२७॥

अथानन्तर ऐसे पराक्रमकर पूण जो राम तिनकी कथा विना नारद एक क्षण भी न रहे, सदा राम कथा करवो ही कर। कसा ह नारद? रामके यश सुनकर उपज्या ह परम आश्चय जाको। बहुरि नारदने सुनी जो जनकने राम को जानकी देनी विचारी, कसी ह जानकी? सब पथ्वीविष प्रकट ह महिमा जाकी। नारद मनमें चितवता भया, एक वार सीताकू देखू जो कसी ह, कसे लक्षणनिकर शोभायमान ह जो जनकने रामको देनी करी ह। सो नारद शील सयुक्त ह हृदय जाका, सीताके देखवेकू सीताके घर आया। सो सीता दपणमें मुख देखती हुती। सो नारदकी जटा दपणमें भासी सो कन्या भयकर व्याकुल भई। मनमें चितवती भई हाय माता यह कौन ह? भयकर कम्पायमान

होय महलके भीतर गई। नारद भी लारही महलमें जाने लगे। तब द्वारपालने रोका सो नारदके अर द्वारपालके कलह हुवा। कलहके शब्द सुन खडगके अर धनुषके धारक सामंत दौडे ही गए कहते भए, पकड लो, पकडलो, यह कौन है। ऐसे तिन शस्त्रधारियोके शब्द सुनकर नारद डरा, आकाशविषै गमन कर कैलाश पर्वत गया, तहां तिष्ठकर चिंतवता भया।

जो मैं महाकष्टकू प्राप्त भया सो मुश्किलसे बचा, नवा जन्म पाया। जैसे पक्षी दावानलसे बाहिर निकसै तैसे मैं वहांसे निकस्या। सो धीरे धीरे नारदकी कांपनी मिटी। अर ललाटके पसेव पूंछ, केश बिखर गए हुते ते समारकर बांध, कांपे हैं हाथ जाके, ज्यों ज्यों वह बात याद आवै त्यों त्यों निश्वास नाखै। महाक्रोधायमान होय मस्तक हलाए ऐसे विचारता भया कि देखो कन्याकी दुष्टता। मैं अदुष्टचित्त सरलस्वभाव रामके अनुरागतै ताके देखवेकू गया हुता सो मृत्यु समान अवस्थाकू प्राप्त भया। यम समान दुष्ट मनुष्य मोहि पकडवेकू आए सो भली भई जो बचा पकडा न गया। अब वह पापिनी मो आगे कहां बचे? जहां जहां जाय तहां ही उसे कष्टमें नाखू। मैं विना बजाए वादित्र नाचूं, सो जब वादित्र बाजै तब कैसे टरूं? ऐसा विचारकर शीघ्र ही वैताड्यकी दक्षिणश्रेणीविषै जो रथनूपुर नगर वहां गया। महा सुन्दर जो सीताका रूप सो चित्रपटविषै लिख लेगया। कैसा है सीताका रूप? महा सुन्दर है ऐसा लिखा मानो प्रत्यक्ष ही है। सो उपवनविषै भामंडल, चन्द्रगतिका पुत्र अनेक कुमारनि सहित क्रीडा करनेकू आया हुता सो चित्रपट उसके समीप डार आप छिप रह्या। सो भामण्डलने यह तो न जान्या कि यह मेरी बहिनका चित्रपट है, चित्रपट देख मोहित चित्त भया। ३६६
लज्जा अर शास्त्रज्ञान अर विचार सब भूल गया। लम्बे २ निश्वास नाखै, होठ सूक गये, गात शिथिल हो गया, रात्रि अर दिवस निद्रा न आवै। अनेक मनोहर उपचार कराये तो भी इसे सुख नाहीं। सुगन्ध पुष्प अर सुन्दर आहार याहि विष समान लागे। शीतल जल छांटिये तौ भी संताप न जाय। कबहू मौन पकड रहे, कबहू हंसै, कबहू विकथा बकै, कबहू उठ खडा रहै, वृथा उठ चलै बहुरि

पाछा आव । ऐसी चेष्टा कर मानो याहि भूत लगा ह । तब बडे बड बुद्धिमान याहि कामातुर जान परस्पर बात करते भए । जो यह कन्याका रूप किसीने चित्रपटविष लिखकर याके ढिग आय डारया, सो यह विक्षिप्त होयगया । कदाचित यह चष्टा नारदन ही करी होय । तब नारदने अपने उपायकर कुमारकू व्याकुल जान लोगनकी बात सुन कुमारके बन्धूनिकू दशन दिया । तब तिनने बहुत आदर कर पूछा—हे देव ! कहो यह कौनकी कन्याका रूप ह ? तुमने कहा देखी ? यह कोऊ स्वगविष देवागना का रूप ह अथवा नागकुमारीका रूपह, या पथ्वीविष आई होवेगी सो तुमने देखी । तब नारद माथा हलायकर बोला कि मिथिला नामा नगरी ह । वहा महासुन्दर राजा इन्द्रकेतुका पुत्र जनक राज्य कर ह । ताके विदेहा राणी ह । सो राजाको अतिप्रिय ह । तिनकी पुत्री सीताका यह रूप ह । ऐसा कहकर फिर नारद भामण्डलस कहते भए—हे कुमार ! तू विषाद मतकर, तू विद्याधर राजाका पुत्र ह । तोहि यह कन्या दुलभ नाहीं, सुलभही ह । अर तू रूपमात्रसे ही क्या अनुरागी भया, याम बहुत गुण ह । याके हावभाव विलासादिक कौन वणन कर सक ? अर यही देखे तेरा चित्त वशीभूत हुआ सो क्या आश्चय ह । जिसे देख बडे पुरुषनिका भी चित्त मोहित होजाय । म तो आकारमात्र पटमें लिख्या ह । ताकी लावण्यता वाहीविष ह, लिखवेमें कहा आव ? नवयौवन रूप जलकर भरा जो कातिरूप समुद्र, ताकी लहरनिविष वह स्तनरूप कुम्भनिकर तिर ह । अर ऐसी स्त्री तोय टार और कौनको योग्य । तेरा अर वाका सगम योग्य ह । या भाति कहकर भामडलकू अति स्नेह उपजाया, अर आप नारद आकाशविष विहार किया । भामडल कामके बाणकर वेध्या अपने चित्तमें विचारता भया कि यदि वह स्त्रीरत्न शीघ्र ही मुझे न मिले तो मेरा जीवना नाहीं । देखो यह आश्चय ह, वह सुन्दरी परमकातिकी धरणहारी मेरी हृदयमें तिष्ठती हुई अग्निकी ज्वालासमान हृदयकू आताप कर है । सूय ह सो तो वाह्य शरीर को आताप कर ह अर काम ह सो अन्तर वाह्यदाह उपजाव ह । सूयके आताप निवारवेकू तो अनेक उपाय ह परन्तु कामके दाह निवारवेकू उपाय नाहीं । अब मुझे दो अवस्था आय बनी ह । कतो वाका

सयोग होय अथवा कामके बाणनिकर मेरा मरण होयगा। निरंतर ऐसा विचारकर भामंडल विह्वल होयगया। सो भोजन तथा शयन सब भूल गया। ना महलविषै ना उपवन विषै याहि काहू ठौर साता नाहीं। यह सब वृत्तांत कुमारके व्याकुलताका कारण नारदकृत कुमारकी माता जानकर कुमारके पितासू कहती भई—हे नाथ! अनर्थका मूल जो नारद तानै एक अत्यन्त रूपवती स्त्रीका चित्रपट लायकर कुमारकू दिखाया। सो कुमार चित्रपटकू देखकर अति विभ्रम चित्त होयगया, सो धीर्य नाहीं धरै है। लज्जारहित होयगया है। बारम्बार चित्रपटकू निरखै है अर सीता ऐसे शब्द उच्चारण करै है। अर नानाप्रकार की अज्ञान चेष्टा करै है मानू याहि वाय लगी है। तातै तुम शीघ्र ही साता उपजावनेका उपाय विचारो। वह भोजनादिकतै पराङमुख होय गया है। सो वाके प्राण न छूटैं ता पहिले ही यत्न करहु। तब यह वार्ता चन्द्रगति सुनकर अति व्याकुल भया। अपनी स्त्रीसहित आयकर पुत्रकू ऐसे कहता भया—हे पुत्र! तू स्थिरचित्त हो, अर भोजनादि सब क्रिया जैसे पूर्वै करै था तैसे कर। जो कन्या तेरे मनमें बसी है सो तुझे शीघ्र ही परणाऊंगा। या भांति कहकर पुत्रको शांतता उपजाय राजा चन्द्रगति एकांतविषै हर्ष विषाद अर आश्चर्यकू धरता संता अपनी स्त्रीसू कहता भया हे प्रिये! विद्याधरनिकी कन्या अतिरूपवन्ती अनुपम, उनकू तजकर भूमिगोचरिनका सम्बन्ध हमकू कहा उचित? अर भूमिगोचरिनके घर हम कैसे जावैंगे? अर जो कदाचित हम जाय प्रार्थना करैं अर वह न दे तो हमारे मुखकी प्रभा कहा रहेगी? तातै कोई उपायकर कन्याके पिताकू यहां शीघ्र ही ल्यावैं। अन्य उपाय नाहीं। तब भामंडलकी माता कहती भई—हे नाथ! युक्त अथवा अयुक्त तुम ही जानो। तथापि ये तिहारे वचन मुझे प्रिय लागे। तब एक चपलवेग नामा विद्याधर अपना सेवक, आदर सहित बुलायकर राजा सकल वृत्तांत वाके कानमें कहा, अर नीके समझाया। सो चपलवेग राजाकी आज्ञा पाय बहुत हर्षित होय शीघ्र ही मिथला नगरीको चाल्या। जैसे प्रसन्न भया तरुणहंस सुगंधकी भरी जो कमलिनी ताकी ओर जाय। यह शीघ्र ही मिथला नगरी जाय पहुंच्या। आकाशतै उतरकर

अश्वका भेष धर गौ महिषादि पशूनिकू त्रास उपजावता भया। राजाके मंडलमें उपद्रव किया। तब लोकनिकी पुकार आई सो राजा सुनकर नगरके बाहिर निकस्या। प्रमोद, उद्वेग अर कौतुकका भरया राजा अश्वकू देखता भया। कैसा है अश्व? नवयौवन है, अर उछलता सता अति तेजकू धरै, मन समान है वेग जाका, सुन्दर है लक्षण जाके, अर प्रदक्षिणारूप महा आवर्तकू धरै है, मनोहर है मुख जाका, अर महा बलवान खुरोंके अग्रभागकर मानो मृदंग ही बजावै है, जापर कोई चढ न सकै अर नासिकाका शब्द करता सता अतिशोभायमान है। ऐसे अश्वकू देखकर राजा हर्षित होय बारम्बार लोगनिसू कहता भया—यह काहूका अश्व बंधन तुडाय आया है। तब पंडितनिके समूह राजासू प्रियवचन कहते भए—हे राजन! या तुरंगके समान कोई तुरंग नाहीं, औरोंकी तो क्या बात ऐसा अश्व राजाके भी दुर्लभ। आपके भी देखनेमें ऐसा अश्व न आया होयगा। सूर्यके रथके तुरंगनिकी अधिक उपमा सुनिए है सो या समान तो ते भी न होयेंगे। कोई दैवके योगतै आपके निकट ऐसा अश्व आया है सो आप वाहि अंगीकार करहु। आप महापुण्याधिकारी हो। तब राजाने अश्वको अंगीकार किया। अश्वशालामें ल्याय सुन्दर डोरीतै बांधा अर भांतिभांतिकी योग्य सामग्रीकर याके यत्न किए। एक मास याकू यहां हुआ। एक दिन सेवकने आय राजाकू नमस्कार कर विनती कीनी—हे नाथ! एक वनका मतंग गज आया है सो उपद्रव करै है। तब राजा बडे गजपर असवार होय वा हाथी की ओर गए। वह सेवक जिसने हाथीका वृत्तांत आय कहा था, ताके कहे मार्गकर राजाने महावनमें प्रवेश किया। सो सरोवरके तट हाथी खडा देखा अर चाकरनिसू कहा जो एक तेज तुरंग ल्यावो। तब मायामई अश्वकू तत्काल लेगए। सुन्दर है शरीर जाका, राजा उसपर चढे। सो वह आकाशमें राजाकू ले उडा। तब सब परिजन पुरजन हाहाकार कर शोकवंत भए। आश्चर्यकर व्याप्त हुवा है मन जिनका तत्काल पाछे नगरमें गये।

अथानन्तर वह अश्वके रूपका धारक विद्याधर, मन समान है वेग जाका, अनेक नदी पहाड वन उपवन नगर ग्राम देश उलंघन कर राजाकू रथनूपुर लेगया। जब नगर निकट रह्या तब एक वृक्ष

के नीचे आय निकस्या। सो राजा जनक वृक्षकी डाली पकड लू ब रहा। वह तुरंग नगरविषै आया। राजा वृक्षतै उतर विश्रामकर आश्चर्य सहित आगे गया। तहां एक स्वर्णमई ऊंचा कोट देख्या, अर दरवाजा रत्नमई तोरणनि कर शोभायमान, अर महासुन्दर उपवन देख्या। ताविषै नाना जातिके वृक्ष अर बेल फल फूलनिकर सम्पूर्ण देखे, जिनपर नानाप्रकारके पक्षी शब्द करै है। अर जैसे सांझके बादले होवें तैसे नानारंगके अनेक महिल देखे, मानो ये महल जिनमंदिरकी सेवा ही करै है। तब राजा खडगको दाहिने हाथमें मेल सिंह समान अति निशंक, क्षत्रीव्रतमें प्रवीण दरवाजेमें गया। दरवाजेके भीतर नानाजातिके फूलनिकी बाडी अर रत्न स्वर्णके सिवाण जाके ऐसी वापिका, स्फटिक-मणि समान उज्ज्वल है जल जाका, अर महा सुगंध मनोग्य विस्तीर्ण कुंद जातिके फूलनिके मंडप देखे। चलायमान है पल्लवोंके समूह जिनके अर संगीत करै है भ्रमरोंके समूह जिनपर, अर माधवी लतानिके समूह फूलै देखे। महा सुन्दर अर आगे प्रसन्न नेत्रनिकर भगवानका मंदिर देख्या। कैसा है मंदिर? मोतिनिकी झालरिनिकर शोभित, रत्ननिके झरोखनिकर संयुक्त, स्वर्णमई हजारां महास्तम्भ तिनकर मनोहर, अर जहां नानाप्रकारके चित्राम, सुमेरुके शिखर समान ऊंचे शिखर, अर वज्रमणि जे हीरा तिनकर बेढ्या है पीठ (फरश) जाका, ऐसे जिनमन्दिरकू देखकर जनक विचारता भया कि यह इन्द्रका मंदिर है अथवा अहमिंद्रका मन्दिर है। ऊर्धलोकतें आया है अथवा नागेन्द्रका भवन पातालतें आया है, अथवा काहू कारणतें सूर्यकी किरणनिका समूह पृथ्वीविषै एकत्र भया है। अहो उस मित्र विद्याधरने मेरा बडा उपकार किया जो मोहि यहां ले आया ऐसा स्थानक अबतक देख्या नाहीं। भला मंदिर देख्या। ऐसा चिंतवनकर महामनोहर जो जिनमंदिर ताविषै बैठि फूलगया है मुखकमल जाका श्रीजिनराजका दर्शन किया। कैसे है श्रीजिनराज? स्वर्ण समान है वर्ण जिनका, अर पूर्णमासीके चन्द्रमा समान है सुन्दर मुख जिनका, अर पद्मासन विराजमान, अष्ट प्रातिहार्य संयुक्त, कनकमई कमलनिकर पूजित, अर नानाप्रकारके रत्ननिकर जडित जे छत्र ते है सिरपर जिनके, अर ऊंचे सिंहा-

सनपर तिष्ठ ह । तब जनक हाथ जोड सीस निवाय प्रणाम करता भया । हषकर रोमाच होय आए । भक्तिके अनुरागकर मूर्छाकू प्राप्त भया, क्षणएक सचेत होय भगवानकी स्तुति करने लाग्या । अति विश्रामकू पाय परम आश्चयकू धरता मता जनक चत्यालयविष तिष्ठ ह । वह चपलवेग विद्याधर जो अश्वका रूपकर इनको ले आया हुता सो अश्वका रूप दूर कर राजा च द्रगतिके पास गया, अर नमस्कार कर कहता भया । म जनककू ले आया, मनोग्य वनमें भगवानके चत्यालयविष तिष्ठ ह, तब राजा सुनकर बहुत हषकू प्राप्त भया । थोडेसें समीपी लोक लार लेय राजा च द्रगति, उज्ज्वल ह मन जाका, पूजाकी सामग्री लेय मनोरथ समान रथ पर आरूढ होय चत्यालयविष आया । सो राजा जनक च द्रगतिकी सेनाकू देख अर अनेक वादित्रनिका नाम सनकर कछुइक शकायमान भया । कई एक विद्याधर मायामई सिहोपर चढे ह, कईएक मायामई हाथिनि पर चढे है, कईएक घोडावो पर चढे, कईएक हसो पर चढे, तिनके बीच राजा च द्रगति ह । सो देखकर जनक विचारता भया जो विजयाध पवत पर विद्याधर बस ह ऐसी म सुनता सो ये विद्याधर ह । विद्याधरनिकी सेनाके मध्य यह विद्याधरो का अधिपति कोई परमदोप्ति कर शोभ ह । ऐसा चितवन जनक कर ह । ताही समय वह च द्रगति राजा इत्यजातिके विद्याधरनिका स्वामी चत्यालयविष आय प्राप्त भया । महाहषवत नमीभूत ह शरीर जाका । तब जनक ताकू देखकर कछुइक भयवान होय भगवानके सिहासनके नीचे बठ रह्या । अर वह राजा च द्रगति भक्ति कर भगवानके चत्यालयविष जाय प्रणाम कर, विधिपूवक महा उत्तम पूजा करी । अर परम स्तुति करता भया । बहुरि सु दर ह स्वर जाके, ऐसी बीणा हाथमें लेयकर
महाभावना सहित भगवानके गुण गावता भया । सो कस गाव ह सो सुनो । अहो भव्यजीव हो ! जिनेंद्र को आराधहु । कसे है जिने द्रदेव ? तीनलोकके जीवनिकू वरदाता, अर अविनाशी ह सुख जिनके, अर देवनिमें श्रेष्ठ जे इन्द्रादिक तिनकर नमस्कार करने योग्य ह । कस ह इन्द्रादिक ? महा उत्कृष्ट जो पूजाका विधान ताविष लगाया ह चित्त जिन्होने । अहो उत्तम जन हो ! श्रीऋषभदेवको मन वच

कायकर निरतर भजो । कसे है ऋषभदेव ? महाउत्कष्ट ह, अर शिवदायक ह । जिनके भजेते जन्म २ के पाप किये समस्त विलय होय ह । अहो प्राणी हो ! जिनवरको नमस्कार करहु । कसे ह जिनवर? महा अतिशय धारक ह, कमनिके नाशक ह, अर परमगति जो निर्वाण ताकू प्राप्त भए ह । अर सव सुरा-सुर नर विद्याधर, उन कर पूजित ह चरण कमल जिनके । क्रोधरूप महाबरीका भग करनहारे ह । म भक्तिरूप भया जिनेन्द्रकू नमस्कार करू हू । उत्तम लक्षणकर सयुक्त ह देह जिनका, अर विनय कर नमस्कार कर ह सव मुनियोके समूह जिनको ते भगवान नमस्कार मात्र ही से भक्तोके भय हरे ह । अहो भव्य जीव हो ! जिनवरको बारम्बार प्रणाम करहु । वे जिनवर अनुपम गुणको धर ह, अर अनुपम ह काया जिनकी, अर हते ह ससारमई सकल कुकम जिनने, अर रागादिक रूप जे मल तिनकर रहित महानिमल ह, अर ज्ञानावरणादिक रूप जो पट तिनके दूर करनहारे, पारकरबेकू अति प्रवीण ह अर अत्यन्त पावत्र ह । या भाति राजा चन्द्रगति बीण बजाय भगवानकी स्तुति करी । तब भग वानके सिंहासनके नीचत राजा जनक भय तज कर जिनराजकी स्तुति कर निकस्या, महाशोभायमान । तब चन्द्रगति जनककू देख हर्षित भया ह मन जाका सो पूछता भया—तुम कौन हो ? या निजन स्थानकविष भगवानके चत्यालयविष कहात आए हो ? तुम नागोके पति नगेन्द्र हो अथवा विद्याधरो के अधिपति हो । हे मित्र ! तुम्हारा नाम क्या ह सो कहो । तब जनक कहता भया—हे विद्याधरोके पति ! म मिथिला नगरी से आया हू, अर मेरा नाम जनक ह । मायामई तुरग मोहि ले आया ह । जब ये समाचार जनकने कहे तब दोऊ अति प्रीतिकर मिले । परस्पर कुशल पूछी । एक आसन पर बठ, फिर क्षरण एक तिष्ठकर दोउ आपसमें विश्वासको प्राप्त भए । तब चन्द्रगति और कथाकर जनककू कहते भए—हे महाराज ! म बडा पुण्यवान जो मोहि मिथिला नगरीके पतिका दशन भया । तिहारी पुत्री महा शुभलक्षणनिकर मण्डित ह, म बहुत लोगनिके मुखसे सुनी ह । सो मेरे पुत्र भामडलको देवो, तुमसे सम्बन्ध पाय म अपना परम उदय मानूगा । तब जनक कहते भए—हे

विद्याधराधिपति ! तुम जो कही सो सब योग्य है, परन्तु मैं मेरी पुत्री राजा दशरथके बडे पुत्र जो श्रीरामचन्द्र तिनकू देनी करी है। तब चन्द्रगति बोले काहेते उनको देनी करी है ? तब जनकने कही जो तुमको सुनिवेको कौतुक है तो सुनहु। मेरी मिथिलापुरी रत्नादिक धनकर अर गौ आदि पशुधन कर पूर्ण, सो अर्धबबर देशके म्लेच्छ महा भयंकर उन्होने आय मेरे देशको पीडा करी, धनके समूह लूटने लगे, अर देशमें श्रावक अर यतिका धर्म मिटने लगा। सो मेरे अर म्लेच्छोके महा युद्ध भया। ता समय राम आय मेरी अर मेरे भाई की सहायता करी। वे म्लेच्छ जो देवोसें भी दुर्जय, सो जीते। अर रामका छोटा भाई लक्ष्मण, इन्द्र समान पराक्रमका धरणहारा है, अर बडे भाईका सदा आज्ञाकारी, महा विनयकर संयुक्त है। वे दोनो भाई आयकर जो म्लेच्छनिकी सेनाको न जीतते तो समस्त पृथ्वी म्लेच्छमई होजाती। वे म्लेच्छ महा अविवेकी शुभक्रियारहित, लोककू पीडाकारी महा भयंकर विष समान दारुण उत्पातका स्वरूप ही है। सो रामके प्रसाद कर सब भाज गए। पृथ्वीका अमंगल मिटगया। वे दोनो राजा दशरथके पुत्र महादयालु लोकनिके हितकारी, तिनकू पायकर राजा दशरथ सुखसे सुरपति समान राज्य करै है। ता दशरथके राजविषै महासम्पदावान लोक बसै है। अर दशरथ महा शूरवीर है। जाके राज्यमें पवनहू काहूका कछु नाहीं हर सकै तो और कौन हरे ? राम लक्ष्मणने मेरा ऐसा उपकार किया तब मोहि ऐसी चिंता उपजी जो मैं इनका कहा प्रतिउपकार करूं। रात्रि दिवस मोहि निद्रा न आवती भई। जाने मेरे प्राण राखे, प्रजा राखी, ता राम समान मेरे कौन ? मोतें कबहु कछु उनकी सेवा न बनी, अर उनने बडा उपकार किया।

तब मैं विचारता भया—जो अपना उपकार करै अर उसकी सेवा कछु न बनै तो कहा जीतव्य ? कृतघ्नका जीतव्य तृण समान है। तब मैंने मेरी पुत्री सीता नवयौवन पूर्ण रामयोग्य जान रामको देनी विचारी। तब मेरा सोच कछु इक मिट्या। मैं चितारूप समुद्रमें डूबा हुता सो पुत्री नावरूप भई ? तातैं मैं सोचसमुद्रतै निकस्या। राम महा तेजस्वी है। यह वचन जनकके सुन चन्द्रगतिके

निकटवर्ती और विद्याधर मलिन मुख होय कहते भए—अहो ! तुम्हारी बुद्धि शोभायमान नाहीं । तुम भूमिगोचरी अपडित हो । कहा वे रक म्लेच्छ अर कहा उनके जीतवेकी बडाई ? यामें कहा रामका पराक्रम, जाको एती प्रशसा तुमने म्लेच्छनिके जीतवे कर करी । रामका जो ऐसा स्तोत्र किया सो इसमें उलटी निदा ह । अहो ! तुम्हारी बात सुन हासी आव ह, जस बालकको विषफल ही अमत भास ह, अर दरिद्रीकू बदरी (बेर) फल ही नीके लाग, अर काक सूके वक्षविष प्रीति कर, यह स्वभाव ही दुर्निवार ह । अब तुम भूमिगोचरियोका खोटा सम्बन्ध तजकर यह यह निद्याधरोका इन्द्र राजा चन्द्रगति तासू सबध करहु । कहा देवो समान सम्पदाके धरणहारे विद्याधर, अर कहा वे रक भूमिगोचरी ? सवथा अति दुखी । तब जनक बोले—क्षीरसागर अत्यन्त विस्तीण ह परन्तु तषा हरता नाहीं । अर वापिका थोडे ही मिष्ट जलसे भरी ह सो जीवनिकी तषा हर ह । अर अधकार अत्यन्त विस्तीण ह ताकर कहा ? अर दीपक अल्प भी ह परन्तु पथ्वीम प्रकाश कर ह पदाथनिको प्रकट कर है । अर अनेक माते हाथी जो पराक्रम न कर सक तो अकेला कसरी सिहका बालक कर ह । ऐस जब राजा जनक ने कहा तब वे सब विद्याधर कोपवत होय अति शब्दकर भूमिगोचरियोकी निदा करते भए । हो जनक ! वे भूमिगोचरी विद्याके प्रभावत रहित, सदा खेदखिन्न, शूरवीरतारहित, आपदावान, तुम कहा उनकी स्तुति करो हो ? पशुनिमे अर उनमें भेद कहा ? तममे विवेक नाहीं तात उनकी कीर्ति करो हो । तब जनक कहते भए—हाय ! हाय ! बडा कष्ट ह जो मने पापके उदयकरि बडे पुरुषनिकी निदा सुनी । तीन भवनमे विख्यात जे भगवान ऋषभदेव, इन्द्रादिक देवनिमे पूजनीक, तिनका इक्ष्वाकुवश लोकमें पवित्र, सो कहा तुम्हारे श्रवणमें न आया ? तीनलोकके पूज्य श्रीतीथकरदेव अर चक्रवर्ती बलभद्र नारायण सो भूमिमोचरियोमें उपजे तिनकू तुम कौन भाति निदो हो ? अहो विद्याधरो ! पचकल्याणककी प्राप्ति भूमिगोचरियोके ही होय ह, विद्याधरोमें कदाचित किसीके तुमने देखी ? इक्ष्वाकुवश में उपजे बडे बडे राजा, जो षट खड पथ्वीके जीतनहारे, तिनके चक्रादि महारत्न अर बडी ऋद्धिके

स्वामी, चक्रके धारी, इन्द्रादिककर गाई है जो उदार कीर्ति जिनकी, ऐसे गुणोके सागर, कृतकृत्य पुरुष ऋषभदेवके वशके बडे २ पृथ्वीपति या भूमिमे अनेक भए। ताही वशमें राजा अरण्य बडे राजा भए। तिनके राणी समगला, ताके दशरथ पुत्र भए। जे क्षत्री धममें तत्पर लोकनिकी रक्षा निमित्त अपना प्राण त्याग करते न शक, जिनकी आज्ञा समस्त लोक सिर पर धर। जिनकी चार पटराणी मानो चार दिशा ही है। सब शोभाकू धर, गुणनिकर उज्ज्वल पाच सौ और राणी। मुखकर जीता है

चन्द्रमा जिनने, जे नाना प्रकारके शुभ चरित्रनिकर पतिका मन हर है। अर राजा दशरथके राम बडे पुत्र, जिनकू पदम कहिए। लक्ष्मीकर मडित है शरीर जिनका, दीप्तिकर जीता है सूय अर कीर्तिकर जीता है चन्द्रमा, स्थिरताकर जीता है समेरु, शोभाकर जीता है इन्द्र, शूरवीरताकर जीते हैं सब सुभट जिनने, सुन्दर है चरित्र जिनके। जिनका छोटा भाई लक्ष्मण, जाके शरीरमें लक्ष्मीका निवास, जाके धनुषको देख शत्रु भयकर भाज जावे। अर तुम विद्याधरोको उनसे भी अधिक बतावो हो सो काक भी तो आकाशमें गमन कर है तिनमे कहा गुण है ? अर भूमिगोचरनिमें भगवान तीर्थंकर उपज है तिनको इन्द्रादिक देव भूमिमें मस्तक लगाय नमस्कार कर है, विद्याधरोकी कहा बात ? ऐसे वचन जब जनकने कहे तब वे विद्याधर एकातमे तिष्ठकर आपस में मत्र कर जनकक कहते भए—हे भूमि गोचरिनिके नाथ ! तुम राम लक्ष्मणका एता प्रभाव ही कहो हो, अर वृथा गरज गरज बातें करो हो सो हमारे उनके बल पराक्रमकी प्रतीति नाही। तातै हम कहै है सो सुनहु। एक वजावत दूजा साग रावत, ये दो धनुष, तिनकी देव सेवा कर है। सो ये धनुष वे दोनो भाई चढावें तो हम उनकी शक्ति
जानें। बहुत कहनेकर कहा जो बजावत धनुष राम चढावें तो तुम्हारी कन्या परणै, नातर हम बलात्कार कन्याकू यहा ले आवेंगे, तुम देखते ही रहोगे। तब जनकने कही यह बात प्रमाण है। तब उनने दोऊ धनुष दिखाए सो जनक उन धनुषनिकू अति विषम देखकर कछुएक आकुलताकू प्राप्त भया। बहुरि वे विद्याधर भाव थकी भगवानकी पूजा स्तुति कर गदा अर हलादि रत्नोकर सयुक्त

धनुषनिकू ले और जनककू ले मिथिलापुरी आए। अर चन्द्रगति उपवनसे रथनूपुर गया। जब राजा जनक मिथिलापुरी आये तब नगरीको महाशोभा भई, मंगलाचरण भए, अर सब जन सम्मुख आए। अर वे विद्याधर नगरके बाहिर एक आयुधशाला बनाय तहां धनुष धरे अर महागर्वको धरते संते तिष्ठे। जनक खेदसहित, किंचित भोजन खाय, चिंताकर व्याकुल, उत्साहरहित सेजपर पडे। तहाँ महा नमीभूत उत्तम स्त्री बहुत आदर सहित चन्द्रमाकी किरणसमान उज्ज्वल चमर ढारती भई। राजा अति दीर्घ निश्वास महा उष्ण अग्नि समान नाखे। तब राणी विदेहाने कहा—हे नाथ! तुमने कौन स्वर्गलोककी देवांगना देखी जिसके अनुरागकर ऐसी अवस्थाकू प्राप्त भए हो? सो हमारे जानने में वह कामिनी गुणरहित निर्दई है जो तुम्हारे आतापविषै करुणा नाहीं करै है। हे नाथ! वह स्थानक हम बतावो जहांते वाहि ले आवें। तुम्हारे दुखकर मोहि दुख अर सकल लोकनिकू दुख होय है। तुम ऐसे महासौभाग्यवंत ताहि कहा न रुचे। वह कोई पाषाणचित्त है। उठो, राजावोंको जे उचित कार्य होय सो करो। यह तिहारा शरीर है तो सब मनवांछित कार्य होंगे। या भांति राणी विदेहा जो प्राणहूते प्रिया हुती सो कहती भई। तब राजा बोले—हे प्रिये! हे शोभने! हे बल्लभे! मुझे खेद और ही है, तू वृथा ऐसी बात कहि काहेको अधिक खेद उपजावै है। तोहि या वृत्तांतकी गम्य नाहीं। तातैं ऐसे कहै है। वह मायामई तुरंग मोहि विजयार्धगिरिमें ले गया। तहां रथनूपुरके राजा चन्द्रगतिसे मेरा मिलाप भया। सो वाने कही तुम्हारी पुत्री मेरे पुत्रको देवो। तब मैंने कही मेरी पुत्री दशरथके पुत्र श्रीरामचन्द्रको देनी करी है। तब वाने कही जो रामचन्द्र वज्रावर्त धनुषकू चढावैं तो तिहारी पुत्री परणैं नातर मेरा पुत्र परणेगा। ३७६
सो मैं तो पराए वश जाय पड्या। तब उनके भय थकी अर अशुभकर्मके उदय थकी यह बात प्रमाण करी। सो वज्रावर्त अर सागरावर्त दोऊ धनुष ले विद्याधर यहां आये हैं। ते नगरके बाहिर तिष्ठै हैं। सो मैं ऐसी जानूं हूं ये धनुष इन्द्रहूतें चढाए न जांय। जिनकी ज्वाला दशोदिशामें फैल रही है, अर मायामई नाग फुंकारैं हैं, सो नेत्रनिसों तो देखा न जावैं। धनुष बिना चढाये ही स्वतः स्वभाव महाभयानक शब्द करैं

हैं। इनको चढायवेकी कहा बात ? जो कदाचित श्रीरामचन्द्र धनुषकू न चढावें तो यह विद्याधर मेरी पुत्रीकू जोरावरी लेंजावेंगे, जैसे स्यालके समीपत मासको डली खग कहिए पक्षी ले जाय। सो धनुषके चढायवेका बीस दिन बाकी ह। एही करार ह। जो न बना तो वह कन्याकू ले जायगे। फिर याका देखना दुलभ ह। हे श्रणिक ! जब राजा जनक या भाति कही तब राणी विदेहाके नेत्र अश्रुपातसू भर आये, अर पुत्रके हरनेका दु ख भूल गई हुती सो याद आया। एक तो प्राचीन दुख, बहुरि नवीन दुख, अर आगामी दुख, सो महाशोककर पीडित भई, महा शब्दकर पुकारने लगी। ऐसा रुदन किया जो सकल परिवारके मनुष्य विह्वल हो गए। राजासू राणी कह ह–हे देव ! म ऐसा कौनसा पाप किया जो पहिले तो पुत्र हरचा गया, अर अब पुत्री भी हरी जाय ह। मेरे तो स्नेहका अवलबन एक यह शुभ चेष्टित पुत्री ही ह। मेर तिहारे सब कुटुम्ब लोगनिके यह पुत्री ही आनन्दका कारण ह। सो पापिनिके एक दुख नाहीं मिट ह अर दूजा दुख आय प्राप्त होय ह। या भाति शोकके सागरमें पडी राणी रुदन करती, ताहि राजा धीय बधाय कहते भए–हे राणी ! रुदनकर कहा ? जो पूर्व या जीवने कम ऊपार्जे ह तिनके उदय अनुसार फल ह। ससाररूप नाटकका आचाय जो कम सो समस्त प्राणीनिकू नचाव ह। तेरा पुत्र गया सो अपने अशुभके उदयत गया। अब शुभ कमका उदय ह सो सकल मगल ही होहिं। ऐसे नानाप्रकारके सार वचननिकर राजा जनकने राणी विदेहाकू धीय बधाया। तब राणी शातिकू प्राप्त भई।

बहुरि राजा जनक नगर बाहिर जाय धनुषशालाके समीप स्वयवर मडप रच्या, अर सकल राजपुत्रनिके बुलायवेकू पत्र पठाये। सो पत्र बाच बाच सब राजपुत्र आये। अर अयोध्या नगरीको हू दूत भेजे सो माता पिता सयुक्त रामादिक चारो भाई आये। राजा जनक बहुत आदरकर पूजे। सीता परमसुन्दरी मातसौ क याओके मध्य महलके ऊपर तिष्ठ ह। बडे २ सामत याकी रक्षा करै। अर एक महा पडित खोजा जानै बहुत देखी, बहुत सुनी है, स्वणरूप वेतकी छडी जाके हाथमें, सो ऊचे शब्द

कर कहै ह, प्रत्येक राजकुमारको दिखाव ह। हे राजपुत्री ! यह श्रीरामचन्द्र कमललोचन राजा दशरथ के पुत्र ह, तू नीके देख। अर यह इनका छोटाभाई लक्ष्मीवान लक्ष्मण है, महा ज्योतिकू धर। अर यह इनका भाई महाबाहु भरत ह। अर यह यात छोटा शत्रुघन ह। यह चारो ही भाई गुणनिके सागर ह। इन पुत्रनिकर राजा दशरथ पथ्वीकी भलीभाति रक्षा कर ह, जाके राज्यमें भयका अकुर नाहीं। अर यह हरिबाहन महा बुद्धिमान कालो घटासमान ह प्रभा जाकी। अर यह चित्ररथ महा गुणवान, तेजस्वी, महा सुन्दर ह। अर यह हमु ख नामा कुमार अतिमनोहर महातेजस्वी ह। अर यह श्रीसजय, यह जय, यह भानु, यह सुप्रभ, यह मदिर, यह बुध, यह विशाल यह श्रीधर, यह वीर यह बधु, यह भद्रवल, यह मयूरकुमार इत्यादि अनेक राजकुमार महापराक्रमी महासौभाग्यवान निमल वशके उपजे, चन्द्रमा समान निमल ह काति जिनकी, महागुणवान, भूषणके धरणहारे, परम उत्साह रूप, महाविनयवत, महाज्ञानी, महाचतुर आय इकटठे भए ह। अर यह सकाशपुरका नाथ, याके हस्ती पवतसमान, अर तुरग महाश्रेष्ठ, अर रथ महामनोज्ञ अर योधा अद्भुत पराक्रमके धारी। अर यह सुरपुरका राजा, यह रथपुरका राजा, यह नन्दपुरका राजा यह कुदनपुरका अधिपति, यह मगध देशका राजेन्द्र, यह कपिल्य नगरका नरपति, इनमें कईएक इक्ष्वाकुवशी अर कईएक नागवशी, अर कईएक सोमवशी, अर कईएक उग्रवशी, अर कईएक हरिवशी, अर कईएक कुरुवशी। इत्यादि महागुणवत जो राजा सुनिए ह ते सब तेरे अथ आए ह। इनके मध्य जो पुरुष बजावत धनुषकू चढाव ताहि तू वर। जो पुरुषनिमें श्रेष्ठ होयगा ताहीसू यह काय होयगा। या भाति खोजा कही। अर राजा जनक सबनिकू एकत्रकर सब ही राजकुमार अनुक्रमत धनुषकी ओर पठाए सो गए। सुन्दर ह रूप जिनका सो सब ही धनुषकू देख कम्पायमान भए। धनुषत सब ओर अग्निकी ज्वाला बिजुली समान निकस। अर मायामई भयानक सप फुकार कर। तब कईएक तो कानोपर हाथ धर भागे। अर कईएक धनुषकू देख कर दूर ही कीलेसे ठाढे रहे, काप ह समस्त अग जिनके, अरमुद गए ह नत्र जिनके। अर कईएक

ज्वरकरि व्याकुल भए, अर कईएक धरतीविषै गिर पडे, अर कईएक ऐसे भए जो बोल न सकें। अर कईएक मूर्छाकू प्राप्त भये, अर कईएक धनुषके नागनिके स्वासकरि जैसे वृक्षका सूका पत्र पवनसे उडा उडा फिरै तैसे उडते फिरे, अर कईएक कहते भए जो अब जीवते घर जावें तो महादान करें, सकल जीवनिकू अभयदान देवें। अर कईएक ऐसे कहते भये, यह रूपवती कन्या है तो कहा? याके निमित्त प्राण तो न देने। अर कईएक कहते भये यह कोई मायामई विद्याधर आया है सो राजावोंके पुत्रनिकू बाधा उपजाई है। अर कई एक महाभाग ऐसे कहते भये अब हमारे स्त्रीतै प्रयोजन नाहीं, यह काम महा दुखदाई है। जैसे अनेक साधु अथवा उत्कृष्ट श्रावक शीलव्रत धारै हैं तैसे हमहू शीलव्रत धारेंगे, धर्म ध्यानकर काल व्यतीत करेंगे। या भांति सब पराङमुख भए। अर श्रीरामचन्द्र धनुष चढावनेकू उद्यमी उठकर महामाते हाथीकी नाईं मनोहर गतिसे चलते, जगतकू मोहते, धनुषके निकट गए। सो धनुष रामके प्रभावतैं ज्वाला रहित होय गया। जैसा सुन्दर देवोपुनीत रत्न है तैसा सौम्य होयगया। जैसे गुरुके निकट शिष्य सौम्य होयजाय। तब श्रीरामचन्द्र धनुषकू हाथमें लेयकरि चढायकर खैंचते भए सो महाप्रचंड शब्द भया, पृथ्वी कम्पायमान भई। कैसा है धनुष? विस्तीर्ण है प्रभा जाकी, जैसा मेघ गाजै तैसा धनुषका शब्द भया। मयूरनिके समूह मेघका आगमन जान नाचने लगे। जाके तेजके आगे सूर्य ऐसा भासने लग्या जैसा अग्निका कणा भासै। अर स्वर्णमई रजकर आकाशके प्रदेश व्याप्त होय गए। यह धनुष देवाधिष्ठित है सो आकाशविषै धन्यधन्य शब्द कहते भए, अर पुष्पनिकी वर्षा होती भई। देव नृत्य करते भए। तब राम महादयावंत धनुषके शब्दकरि लोकनिकू कम्पायमान देख धनु-
षकू उतारते भए। लोक ऐसे डरे मानो समुद्रके भ्रमरमें आय गये हैं, तब सीता अपने नेत्रनि करि श्रीरामकू निरखती भई। कैसे हैं नेत्र? पवनकरि चंचल, जैसे कमलोंका दल होय तातैं अधिक है कांति जिनकी, अर जैसा कामका बाण तीक्ष्ण होय तैसे तीक्ष्ण हैं। सीता रोमांचकर संयुक्त मनकी वृत्तिरूप माला जो प्रथम देखते ही इनकी ओर प्रेरी हुती बहुरि लोकाचार निमित्त हाथमें रत्नमाला

लेकर श्रीरामके गलेमें डारी। लज्जासे नमीभूत है मुख जाका तसे जिनधर्मके निकट जीवदया तिष्ठे, तसे रामके निकट सीता आय तिष्ठी। श्रीराम अतिसुन्दर हुते सो याके समीपते अत्यन्त सुन्दर भासते भए। इन दोऊनिके रूपका दृष्टांत देवेमें न आवे। अर लक्ष्मण दूजा धनुष सागरावर्त, क्षोभकू प्राप्त भया जो समुद्र समान है शब्द जाका, उसे चढाय खचते भए। सो पृथ्वी कम्पायमान भई। आकाश में देव जयजयकार शब्द करते भये, अर पुष्पवर्षा होती भई। लक्ष्मण धनुषकू चढाय खचकर जब बाणपर दृष्टि धरी तब सब डरे। लोकनिकू भयरूप देख आप धनुषकी पिणच उतार महाविनय संयुक्त रामके निकट आए। जैसे ज्ञानके निकट वैराग्य आवे। लक्ष्मणका ऐसा पराक्रम देख चंद्रगति का पठाया जो चंद्रवर्द्धन विद्याधर आया हुता, सो अतिप्रसन्न होय अष्टादश कन्या विद्याधरनिकी पुत्री लक्ष्मण कू दीनी। श्रीराम लक्ष्मण दोऊ धनुष लेय महाविनयवन्त पिताके पास आए–अर सीताहू आई। अर जेते विद्याधर आय हुते सो राम लक्ष्मणका प्रताप देख चन्द्रवर्द्धनकी लार रथनूपुर गये। जाय राजा चन्द्रगतिकू सब वृत्तांत कह्या। सो सुनकर चितावान होय तिष्ठ्या। अर स्वयम्बर मंडप में रामके भाई भरत हू आए हुते सो मनमें ऐसा विचारते भये कि मेरा अर राम लक्ष्मणका कुल एक, अर पिता एक परन्तु इनकासा अद्भुत पराक्रम मेरा नाहीं। यह पुण्याधिकारी है, इनकेसे पुण्य मने न उपार्जे। यह सीता साक्षात लक्ष्मी, कमलके भीतर दल समान है वर्ण जाका, राम सारिखा पुण्याधि-कारी हीकी स्त्री होय। तब केकई इनकी माता सब कलाविषै प्रवीण भरतके चित्तका अभिप्राय जान पतिके कानविषै कहती भई–हे नाथ! भरतका मन कछुइक बिलखा दीखे है, ऐसा करो जो यह विरक्त न होय। इस जनकके भाई कनकके राणी सुप्रभा, उसकी पुत्री लोकसुन्दरी है, सो स्वयंबर मंडपकी विधि बहुरि करावो अर वह कन्या भरतके कण्ठमें वरमाला डारे तो यह प्रसन्न होय। तब दशरथ याकी बात प्रमाणकर कनकके कान पहुँचाई। तब कनक दशरथकी आज्ञा प्रमाणकर जे राजा गए हुते सो पाछे बुलाये। यथायोग्य स्थानविषै तिष्ठे। सब जे भूपति तेई भये नक्षत्रनिके समूह तिन

विषै तिष्ठता जो भरतरूप चन्द्रमा ताहि कनककी पुत्री लोकसुन्दरीरूप शुक्लपक्षकी रात्रि सो महा अनुरागकरि वरती भई। मनकी अनुरागतारूप माला तो पहिले अवलोकन करते ही डारी हुती, बहुरि लोकाचारमात्र सुमन कहिये पुष्प तिनकी वरमाला भी कण्ठमें डारी। कैसी है कनककी पुत्री? कनक समान है प्रभा जाकी, जैसे सुभद्रा भरत चक्रवर्तीकू वरचा हुता तैसे यह दशरथके पुत्र भरतको वरती भई। गौतम स्वामी राजा श्रेणिकतें कहै है--हे श्रेणिक! कर्मनिकी विचित्रता देख, भरत जैसे विरक्त चित्त राजकन्या पर मोहित भए। अर सब राजा विलखे होय अपने अपने स्थानक गए। जान जैसा कर्म उपार्जा होय तैसा ही फल पावै है। किसीके द्रव्यको दूसरा चाहनेवाला न पावै।

अथानन्तर मिथिलापुरीमें सीता अर लोकसुन्दरीके विवाहका परम उत्साह भया। कैसी है मिथिलापुरी ध्वजा अर तोरणनिके समूहकरि मंडित है, अर महा सुगन्ध करि भरी है, शंख आदि वादित्रनिके समूहसे पूरित है। श्रीरामका अर भरतका विवाह महाउत्सव सहित भया। द्रव्यकरि भिक्षुक लोक पूर्ण भए। जे राजा विवाहका उत्सव देखवेकू रहे हुते ते दशरथ अर जनक कनक दोनो भाईसे अति सन्मान पाय अपने अपने स्थानक गये। राजा दशरथके पुत्र चारो, रामकी स्त्री सीता, भरतकी स्त्री लोकसुन्दरी महा उत्सवनिसू अयोध्याके निकट आये। कैसे है दशरथके पुत्र? सकल पृथ्वीविषै प्रसिद्ध है कीर्ति जिनकी, अर परमरूप परमगुण, सोई भया समुद्र, ताविषै मग्न है। अर परम रत्ननिके आभूषण तिनकर शोभित है शरीर जिनके, माता पिताकू उपजाया है महाहर्ष जिनने, नानाप्रकारके वाहन तिनकर पूर्ण जो सेना, सोई भया सागर, जहां अनेक प्रकारके वादित्र बाजे है, जैसे जलनिधि गाजै, ऐसी सेना सहित राजमार्ग होय महिल पधारे। मार्गमें जनक अर कनककी पुत्रीकू सब ही देखै हैं। सो देख देख अति हर्षित होय है, अर कहै है इनकी तुल्य और कोऊ नाहीं। यह उत्तम शरीरकू धरै है इनके देखवेकू नगरके नर नारी मार्गमें आय इकट्ठे भये, तिनकरि मार्ग अति संकीर्ण भया। नगरके दरवाजे सो ले राजमहिल परियंत मनुष्यनिका पार नाहीं। किया है समस्त जननिने आदर जिनका

ऐसे दशरथके पुत्र इनके श्रेष्ठ गुणनिकी ज्यो ज्यो लोक स्तुति कर त्यो त्यो ये नीचे हो रहे। महा सुखके भोगनहारे ये चारो ही भाई सुबुद्धि अपने अपने महिलनिमें आनन्दसो विराज। यह सब शुभ कमका फल विवेकी जन जानकर ऐसे सुकत करहु जाकरि सूयत अधिक प्रताप होय। जेते शोभायमान उत्कष्ट फल ह ते सब धमके प्रभावत ह। अर जो महानिद्य कटुक फल ह ते सब पापकमके उदयत। तात सुखके अथि पापक्रियाकू तजहु, अर शुभक्रिया करहु।

इति श्रीरविषेणाचायविरचित महापद्मपुराण सस्कृत ग्रथ ताकी भाषावचनिकाविष राम लक्ष्मणका धनुष चढावने आदि प्रताप वणन अर रामका सीतासो तथा भरत का लोकसु दरीसो विवाह वणन करनेवाला अठाईसवा पव पूण भया ॥ २८ ॥

अथान तर आषाढ शुक्ल अष्टमीत अष्टाह्निका का महा उत्सव भया। राजा दशरथ जिने द्रकी महा उत्कष्ट पूजा करनेकू उद्यमी भया। राजा धमविष अति सावधान ह। राजाकी सब राणी, पुत्र, बाधव तथा सकल कुटुम्ब जिनराजके प्रतिबिम्बनिकी महा पूजा करवेकू उद्यमी भए। केई बहुत आदर से पच वणके जे रत्न तिनके चूणका माडला माडे ह। अर कई नानाप्रकारके रत्ननिकी माला बनावे ह, भक्तिविष लाया ह अधिकार जिनने। अर कोऊ एला (इलायची) कपूरादि सुग ध द्रव्यनिकरि जलकू सुग ध कर ह, अर कोऊ सुग ध जलसे पथ्वीको छाटें ह, अर कोऊ नानाप्रकारके परम सुग ध पीसे ह, अर कोऊ जिनमदिरोके द्वारनिकी शोभा अति ददीप्यमान वस्त्रनिकरि कराव ह, अर कोऊ नाना प्रकारके धातुओके रगोकर चत्यालयनिकी भीतियोको मडवावे ह। या भाति अयोध्यापुरीके सब ही लोक वीतराग देवकी परम भक्तिको धरते सते अत्य त हषकरि पूण जिनपूजाके उत्साहसे उत्तम पुण्यकू उपाजते भए। राजा दशरथ भगवानका अति विभूतिकरि अभिषेक करावता भया। नाना-प्रकारके वादित्र बाजते भये। राजा अष्ट दिनोके उपवास किए, अर जिनेन्द्रकी अष्ट प्रकारके द्रव्य नित महा पूजा करी, अर नानाप्रकारके सहज पुष्प अर कत्रिम कहिए स्वण रत्नादिकके रचे पुष्प

तिनकरि अर्चा करी। जैसे नंदीश्वर द्वीपविषै देवनिकरि संयुक्त इन्द्र जिनेन्द्र की पूजा करै तैसे राजा दशरथने अयोध्यामें करी। अर राजा चारों ही पटरानियोंको गंधोदक पठाया सो तीनके निकट तो तरुण स्त्री ले गई, सो शीघ्र ही पहुँचा। वे उठकर समस्त पापोंका दूर करनहारा जो गंधोदक ताहि मस्तक अर नेत्रनित लगावती भइ। अर राणी सुप्रभाके निकट वृद्ध खोजा ले गया हुता सो शीघ्र नहीं पहुँचा। तातै राणी सुप्रभा परमकोप अर शोककूं प्राप्त भई। मनमें चितवती भई जो राजा उन तीन राणिनिको गंधोदक भेज्या अर मोहि न भेज्या सो राजाका कहा दोष है? मैं पूर्व जन्ममें पुण्य न उपजाया, वे पुण्यवती महा सौभाग्यवती प्रशंसा योग्य हैं जिनको भगवानका गंधोदक महा पवित्र राजाने पठाया। अपमानकर दग्ध जो मैं सो मेरे हृदयका ताप और भांति न मिटै, अब मुझे मरण ही शरण है। ऐसा विचार एक विशाखनामा भण्डारीकूं बुलाय कहती भई—हे भाई! यह बात तू काहूसे मत कहियो, मोहि विषतै प्रयोजन है। सो तू शीघ्र ले आ। तब प्रथम तो वाने शंकावान होय लायवेमें ढील करी, बहुरि विचारी कि औषधि निमित्त मंगाया होगा सो लेवेकूं गया। अर राणी शिथिलगात्र मलिन चित्त वस्त्र ओढ सेजपर पडी। राजा दशरथने अंतःपुरमें आयकर तीन राणी देखी, सुप्रभा न देखी। सुप्रभासूं राजाका बहुत स्नेह सो इसके महिलमें राजा आय खडे रहे। ता समय जो विष लेनेकूं पठाया हुता सो ले आया अर कहता भया—हे देवि! यह विष लेहु। यह शब्द राजा नें सुना तब उसके हाथसे उठाय लिया अर आप राणीकी सेजपर बैठ गए। तब राणी सेजसे उतर बैठी। तब राजा आग्रहकर सेजऊपर बैठाई। अर कहते भए—हे वल्लभे! ऐसा क्रोध काहेतै किया, जाकर प्राण तजा चाहे है। सब वस्तुनितै जीतव्य प्रिय है, अर सब दुःखोंसे मरणका बडा दुःख है। ऐसा तोहि कहा दुःख है जो विष मंगाया। तू मेरे हृदयका सर्वस्व है, जाने तुझे क्लेश उपजाया हो ताको मैं तत्काल तीव्र दंड दूं। हे सुन्दरमुखी! तू जिनेन्द्रका सिद्धांत जाने है। शुभ अशुभ गतिके कारण जानै है। जो विष तथा शस्त्र आदिसे अपघात कर मरै हैं ते दुर्गतिमें पडे हैं। ऐसी बुद्धि तोहि

क्रोधसे उपजी सो क्रोधको धिक्कार। यह क्रोध महा अंधकार है। अब तू प्रसन्न हो। जे पतिव्रता हैं तिनने जौलग प्रीतमके अनुरागके वचन न सुने तौलग ही क्रोधका आवेश है। तब सुप्रभा कहती भई हे नाथ! तुमपर कोप कहा? परन्तु मुझे ऐसा दुःख भया जो मरण विना शांत न होय। तब राजा कही-हे राणी! तोहि ऐसा कहा दुःख भया? तब राणी कही भगवानका गंधोदक और राणिनिकूं पठाया अर मोहि न पठाया, सो मोमें कौन कायकर हीनता जानी? अबलों तुम मेरा कभी भी अनादर न किया अब काहेत अनादर किया? यह बात राजासों राणी कहै है ता समय वृद्ध खोजा गंधोदक ले आया, अर कहता भया-हे देवी! यह भगवानका गंधोदक नरनाथ तुमको पठाया सो लेहु। अर ता समय तीनों राणी आइ अर कहती भइ-हे मुग्धे! पतिकी तोपर अति कृपा है, तू कोपको काहे प्राप्त भई? देख हमकूं तो गंधोदक दासी ले आई अर तेरे वृद्ध खोजा ले आया। पतिके तोसूं प्रेमकी न्यूनता नाहीं, जो पतिमें अपराध भी होय अर वह आय स्नेहकी बात करे तो उत्तम स्त्री प्रसन्न ही होय है। हे शोभने! पतिसूं क्रोध करना सुखके विघ्नका कारण है। सो कोप उचित नाहीं। सो तिनने जब या भांति संतोष उपजाया तब सुप्रभाने प्रसन्न होय गंधोदक शीशपर चढाया अर नेत्रनिकूं लगाया। राजा खोजासे कोपकर कहते भए। हे निकृष्ट! तैं एती ढील कहा लगाई? तब वह भयकर कंपायमान होय हाथ जोड सीस निवाय कहता भया-हे भक्तवत्सल! हे देव! हे विज्ञानभूषण! अत्यन्त वृद्ध अवस्था कर हीनशक्ति जो मैं, सो मेरा कहा अपराध? मोपर आप कोप करो, सो मैं क्रोधका पात्र नाहीं। प्रथम अवस्थाविषै मेरे भुज हाथीके सूंड समान हुते, उरस्थल प्रबल, अर जांघ गजबंधन तुल्य हुती, अर शरीर दृढ हुता। अब कर्मनिके उदयकरि शरीर शिथिल होय गया। पूर्वं ऊंची नीची धरती राजहंसकी न्याइं उलंघ जाता, मनवांछित स्थान जाय पहुंचता, अब अस्थानकतें उठा भी नहीं जाय है। तिहारे पिताके प्रसादकर मैं यह शरीर नानाप्रकार लडाया था सो अब कुमित्रकी न्याईं दुखका कारण होय गया। पूर्वं मुझे वैरीनिके विदारनेकी शक्ति हती सो अब तो लाठीके अवलंबनकर

पद्म पुराण ३८४ ३८४

महाकष्टसू फिरू ह । बलवान परुषनिकर खचा जो धनुष वा समान वक्र मेरी पीठ हो गई ह, अर मस्तकके केश अस्थिसमान श्वेत होय गए ह, अर मेरे दातहू गिर गए मानो शरीरका आताप दख न सक । हे राजन ! मेरा समस्त उत्साह विलय गया । ऐसे शरीरकर कोई दिन जीवू हू सो बडा आश्चय ह । जराकरि अत्यन्त जजरा मेरा शरीर, साझ सकारे विनश जायगा । मोहि मेरी कायाकी सुधि नाहीं तो और सुध कहासे होय ? पूर्वे मेरे नेत्रादिक इन्द्रिय विचक्षणताकू धरे हुते, अब नाम मात्र रहगए ह । पाय धरू किसी ठौर अर पर काहू ठौर । समस्त पथ्वीतल दष्टिकर श्याम भास ह । ऐसी अवस्था होय गई तो भी बहुत दिननित राजद्वारकी सेवा ह सो नाहीं तज सकू हू । पक्के फलसमान जो मेरा तन ताहि काल शीघ्र ही भक्षण करेगा । मोहि मत्युका ऐसा भय नाही जसा चाकरी चूकने का भय ह । अर मेरे आपका आज्ञा हीका अवलबन ह और अवलम्बन नाही । शरीरकी अशक्तिता कर विलब होय ताकू म कहा करू । हे नाथ ! मेरा शरीर जराके आधीन जान कोप मत करो कपा ही करो । ऐसे वचन खोजाके राजा दशरथ सुनकर वामा हाथ कपोलके लगाय चितावान होय विचारता भया, अहो यह जलके बुदबुदा समान असार शरीर, क्षणभगुर ह, अर यह यौवन बहुत विभ्रमकू हू धर सध्याके प्रकाश समान अनित्य ह, अर अज्ञानका कारण ह, बिजलीके चमत्कार समान शरीर अर सम्पदा तिनके अथ अत्यन्त दुखके साधन कम यह प्राणी कर ह । उन्मत्त स्त्रीके कटाक्षसमान, चचल सपके फण समान, विषके भरे, महातापके समूहके कारण ये भोग ही जीवनकू ठग है, तात महा ठग हैं । ये विषय विनाशीक, इनसे प्राप्त हुआ जो दुख सो मूढनिकू सुखरूप भास ह । ये मूढ जीव विषयनि- की अभिलाषा कर ह अर इनकू मनवाछित विषय दुष्प्राप्य ह, विषयोके सुख देखनेमात्र मनोज्ञ ह । अर इनके फल अति कटुक ह । ये विषय इन्द्रायणके फल समान ह, ससारी जीव इनकू चाह ह सो बडा आश्चय है । जे उत्तमजन विषयनिकू विषतुल्य जानकर तज ह अर तप कर ह । ते धन्य ह अनेक विवेकी जीव पुण्याधिकारी महा उत्साहके धरणहारे जिनशासनके प्रसादकरि प्रबोधकू प्राप्त भए ह । मै कब इन

विषयनिका त्यागकर स्नेहरूप कीचसे निकस निवृत्तिका कारण जिनेन्द्रका तप आचरूंगा। मैं पृथ्वी की बहुत सुखसे प्रतिपालना करी, अर भोग भी मनवांछित भोगे, अर पुत्र भी मेरे महापराक्रमी उपजे। अब भी मैं वैराग्य विषै विलम्ब करूं तो यह बडी विपरीत है। हमारे वंशकी यह रीति है कि पुत्रकूं राज्यलक्ष्मी देकर वैराग्यको धारण कर महाधोर तप करनेकूं वनमें प्रवेश करै। ऐसा चितवनकर राजा भोगनित उदासचित्त कई एक दिन घरमें रहे। हे श्रेणिक! जो वस्तु जा समय जा क्षेत्रमें जाकी जाको जेती प्राप्त होनी होय सो ता समय ता क्षेत्रमें तासे ताकूं तेती निश्चय सेती होय ही होय।

गौतम स्वामी कहै है—हे मगध देशके भूपति! कईएक दिनोमे सव प्राणीनिके हित सर्वभूपति नामा मुनि बडे आचार्य, मनःपर्ययज्ञानके धारक, पृथ्वीविषै विहार करते संघसहित सरयू नदीके तीर आए। कैसे हैं मुनि? पिता समान छह कायके जीवनिके पालक, दयाविषै लगाई है मन वचन कायकी क्रिया, जिन आचार्यकी आज्ञा पाय कईएक मुनि तो गहन वनमें विराजे, कईएक पर्वतनिकी गुफानिमें, कई एक वनके चैत्यालयनिमें, कईएक वृक्षनिके कोटरनिमें, इत्यादि ध्यान योग्य स्थाननिमें साधु तिष्ठे। अर आप आचार्य महेन्द्रोदय नामा वनमें एक शिलापर जहां विकलत्रय जीवनिका संचार नाहीं, अर स्त्री नपुंसक बालक ग्राम्यजन पशुनिका संसर्ग नाहीं, ऐसा जो निर्दोष स्थानक तहां नागवृक्षके नीचे निवास किया। महागम्भीर महाक्षमावान, जिनका दर्शन दुर्लभ, कर्म खिपावनके उद्यमी महा उदार है मन तिनका, महामुनि तिनके स्वामी, वर्षाकाल पूर्ण करवेकूं समाधि योग धर तिष्ठे। कैसा है वर्षाकाल? विदेश गमन किया तिनकूं भयानक है। वर्षती जो मेघमाला अर चमकती जो विजुरी अर गरजती कारीघटा तिनकी भयंकर जो ध्वनि, ताकरि मानो सूर्यको खिझावता संता पृथ्वीपर प्रकट भया है। सूर्य ग्रीष्म ऋतुविषै लोकनिकूं आतापकारी हुता सो अब स्थूल मेघकी धारा अंधकारत भय थकी भाज मेघमालामें छिप्या चाहै है। अर पृथ्वी तल हरे नाजके अंकुरनिरूप कंचुकिन

कर मंडित हैं । अर महानदियनिके प्रवाह वृद्धिकू प्राप्त भए हैं ढाहा पहाडत बहै हैं । इस ऋतुमें जे गमन करे है ते अति कम्पायमान होय हैं अर तिनके चित्तमें अनेक प्रकार की भ्राति उपजै है । ऐसी वर्षा ऋतुमें जैनी जन खडगकी धार समान कठिन व्रत निरंतर धारै हैं । चारण मुनि अर भूमिगोचरी मुनि चातुर्मासिकमें नानाप्रकारके नियम धरते भए । हे श्रेणिक ! ते मुनि तेरी रक्षा करहु रागादिक परणतितै तोहि निवृत्त करहु ।

अथानंतर प्रभात समय राजा दशरथ वादित्रनिके नादकरि जागत भया, जैसे सूर्य उदयकू प्राप्त होय । अर प्रात समय कूकडे बोलने लगे, सारिस चकवा, सरोवर तथा नदियनिके तटविषै शब्द करते भए । स्त्री पुरुष सेजनितै उठे । भगवानके चैत्यालय तिनविषै भेरी मृदंग बीणा वादित्रनिके नाद होते भए । लोक निद्राकू तज जिन पूजनादिक विषै प्रवरते । दीपक मंद ज्योति भए । चन्द्रमाकी प्रभा मंद भई । कमल फूले, कुमुद मुद्रित भए । अर जैसे जिन सिद्धातके ज्ञातनिके वचननिकरि मिथ्यावादी विलय जाय तैसे सूर्यकी किरणनिकरि ग्रह तारा नक्षत्र छिप गए । या भांति प्रभात समय अत्यन्त निर्मल प्रकट भया । तब राजा देहकृत्य क्रियाकर भगवानकी पूजाकर बारबार नमस्कार करता भया । अर भद्र जातिकी हथिनीपर चढ, देवनि सारिखे जे राजा तिनके समूहनिकर संयुक्त, ठौर २ मुनिनकू अर जिनमन्दिरनिकू नमस्कार करता महेन्द्रोदय वनमें पृथ्वीपति गया । जाकी विभूति पृथ्वीकू आनंद उपजावनहारी, वर्षोंपर्यंत व्याख्यान करिए तो भी न कह सकिये । जो गुणरूप रत्ननिका सागर जा समय याकी नगरीके समीप आवै ताही समय याकू खबर होय । जो मुनि आए हैं तब ही यह दर्शनकू जाय । सो सर्व भूत हित मुनिकू आए सुन, तिनके निकट केते समीपी लोकनि सहित आया । हथिनीसू उतर अति हर्षका भरया नमस्कारकर महाभक्ति संयुक्त सिद्धात सम्बन्धी कथा सुनता भया । चारो अनुयोगनिकी चर्चा धारी, अर अतीत अनागत वर्तमान कालके जे महापुरुष तिनके चरित्र सुने । लोकालोकका निरूपण, अर छह द्रव्यनिका स्वरूप, छह कायके जीवनिका वर्णन, छह

लेश्याका व्याख्यान, अर कुलकरनिकी उत्पत्ति, अर अनेक प्रकार क्षत्रियादिकनि के वश अर सप्त तत्त्व, नव पदार्थ, पचास्तिकायका वर्णन आचार्यके मुखतं श्रवणकर सब मुनियनिकूं बारम्बार नमस्कारकर राजा धर्मके अनुरागकरि पूर्ण नगरमें आए। जिनधर्मके गुणनिकी कथा निकटवर्ती राजानिसो अर मन्त्रियनिसूं कर अर सबनिकूं विदाकर महलमे प्रवेश करता भया। विस्तीर्ण है विभव जाके। अर राणी लक्ष्मीतुल्य परमकांतिकर सपूर्ण चन्द्रमा समान सम्पूर्ण सुन्दर वदनकी धरणहारी, नेत्र अर मनकी हरणहारी, हाव भाव विलास विभ्रमकर मंडित, महा निपुण, परम विनयकी करणहारी प्यारी तेई भई कमलनिकी पंक्ति, तिनकूं राजा सूर्य समान प्रफुल्लित करता भया।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महा पद्मपुराण संस्कृतग्रन्थ ताकीभाषा वचनिकाविषै अष्टाह्निका आगम अर राजा दशरथ का धर्मश्रवण वर्णन नाम वर्णन करने वाला उनतीसवा पर्व पूर्ण भया ॥ २९ ॥

अथानन्तर मेघके आडम्बरकर युक्त जो वर्षाकाल सो गया अर आकाश सभारे खडगकी प्रभा समान निर्मल भया। पद्म महोत्पल पुण्डरीक इन्दीवरादि अनेक जातिके कमल प्रफुल्लित भए। कैसे है कमलादिक पुष्प? विषयी जीवनिकूं उन्मादके कारण है। अर नदी सरोवरादिविषै जल निर्मल भया जैसा मुनिका चित्त निर्मल होय तैसा। अर इन्द्रधनुष जाते रहे। पृथ्वी कर्दम रहित होय गई। शरदऋतु मानूं कुमुदनिक प्रफुल्लित होनेसे हंसती हुई प्रकट भई। विजुरियोके चमत्कारकी सभावना ही गई। सूर्य तुलाराशिपर आया। शरदके श्वेत बादरे कहूं कहूं दृष्टि आवें सो क्षणमात्रमें विलाय जाय। निशारूप नवोढा स्त्री संध्याके प्रकाशरूप महा सुन्दर लाल अधरनिकूं धरे, चांदनीरूप निर्मल वस्त्रनिकूं पहिर, चन्द्रमारूप है चूडामणि जाके, सो अत्यन्त शोभती भई। अर वापिका निर्मल जल की भरी मनुष्यनिके मनकूं प्रमोद उपजाती भई। चकवा चकवीके युगल करै है केलि जहां, अर मदोन्मत्त जे सारिस ते करै हैं नाद जहां, कमलनिके वनमें भ्रमत जो राजहंस अत्यन्त शोभाकूं धर

है, सो सीताकी है चिन्ता जाके ऐसा जो भामण्डल ताहि यह ऋतु सुहावनी न लगी, अग्नि समान भासै है जगत जाकूं। एक दिन यह भामण्डल लज्जाकूं तजकर पिताके आगे वसन्तध्वज नामा जो परम मित्र ताहि कहता भया। कैसा है भामडल? अरतिसे पीडित है अंग जाका, मित्रसूं कहै है—हे मित्र! तू दीर्घशोची है, अर परकार्यविषै उद्यमी है। एते दिन होयगए तोहि मेरी चिंता नाहीं। व्याकुलता रूप भ्रमणकूं धरै जो आकाशरूप समुद्र ताविषै डूबा हूं, मोहि आलम्बन कहा न देवो? ऐसे आर्तिध्यानकर युक्त भामडलके वचन सुन राजसभाके सबलोक प्रभावरहित विषाद संयुक्त होयगए। तब तिनकूं महा शोककर तप्तायमान देख भामडल लज्जासे अधोमुख होय गया। तब एक वृहत्केतु नामा विद्याधर कहता भया—अब कहा छिपाव राखो, कुमारसूं सब वृत्तांत यथार्थ कहो जाकरि भ्रांति न रहै। तब वे सब वृत्तांत भामडलसूं कहते भए। हे कुमार! हम कन्याके पिताकूं यहां ले आए हुते, कन्याकी बात याचना करी सो वाने कही मैं कन्या रामकूं देनी करी है। हमारे अर वाके वार्ता बहुत भई वह न मानै। तब वज्रावर्त धनुषका करार भया जो धनुष राम चढावे तो कन्याकूं परणै, नातर हम यहां ले आवेंगे अर भामडल विवाहैगा। सो धनुष लेकर यहांसे विद्याधर मिथिलापुरी गए। सो राम महा पुण्याधिकारी धनुष चढाया ही। तब स्वयंवर मंडपमें जनककी पुत्री अति गुणवती, महा विवेकवती, पतिके हृदयकी हरणहारी, व्रत नियमकी धरनहारी, नवयौवन मंडित, दोषनिकरि अखंडित, सब कलापूर्ण, शरदऋतुकी पूर्णमासीके चन्द्रमा समान मुखकी कांतिकूं धरै, लक्ष्मी सारिखे शुभलक्षण, लावण्यताकरि युक्त, सीता महासती श्रीरामके कंठमें वरमाला डार वल्लभा होती भई।
हे कुमार! वे धनुष वर्तमान कालके नाहीं, गदा अर हल आदि देवोपुनीत रत्ननिकर युक्त, अनेक देव जिनकी सेवा करैं है, कोई जिनकूं देख न सकैं, सो वज्रावर्त सागरावर्त दोऊ धनुष राम लक्ष्मण दोऊ भाई चढावते भए। वह त्रिलोकसुन्दरी रामने परणी। अयोध्या ले गए। सो अब वह बलात्कार देवनिकरि भी न हरी जाय, हमारी कहा बात? अर कदाचित कहोगे रामको परणाये पहले ही क्यों

न हरी। जनकका मित्र रावणका जमाई मधु है सो हम कैसे हर सकैं। तात हे कुमार! अब संतोष आदरौ। निर्मलता भजहु। होनहार होय सो इन्द्रादिक भी और भांति न कर सकैं। तब धनुष चढा वनका वृत्तांत अर रामसे सीताका विवाह होगया सुन भामंडल अति लज्जावान होय विषादकरि पूर्ण भया। मनमें विचारै है जो मेरा यह विद्याधरका जन्म निरर्थक है जो मैं हीन पुरुषकी न्याईं ताहि न परण सक्या। ईर्षा अर क्रोधकर मंडित होय सभाके लोकनिकूं कहता भया, कहा तुम्हारा विद्याधरपना, तुम भूमिगोचरिनितेहू डरो हो। मैं आप जायकर भूमिगोचरिनिकूं जीत ताकूं ले आऊंगा। अर जे धनुषके अधिष्ठाता उनकूं धनुष दे आये तिनका निग्रह करूंगा। ऐसा कहकर शस्त्र सजि विमानविषै चढ आकाशके मार्ग गया। अनेक ग्राम नदी नगर वन उपवन सरोवर पर्वतादिक पूर्ण पृथ्वी मंडल देख्या। तब याकी दृष्टि जो अपने पूर्व भवका स्थानक विदग्धपुर पहाडनिके बीच हुता यहां पडी। चित्तमें चितई कि यह नगर मैंने देख्या है। जातिस्मरण होय मूर्छा आय गई। तब मंत्री व्याकुल होय पिताके निकट ले आए। चन्दनादि शीतल द्रव्यनिकरि छांट्या तब प्रबोधककूं प्राप्त भया। राजलोककी स्त्री याहि कहती भई—हे कुमार! तुमको यह उचित नाहीं जो माता पिताके निकट ऐसी लज्जारहित चेष्टा करहु। तुम तो विचक्षण हो, विद्याधरनिकी कन्या देवांगनाहूतैं अतिसुन्दर हैं, ते परणो। लोक हास कहा करावो हो? तब भामंडल लज्जा अर शोक करि मुख नीचा किया। अर कहता भया-धिक्कार है मोकूं, मैं महामोहकरि विरुद्धकार्य चितया। जो चांडालादि अत्यन्त नीचकुल हैं तिनहूके यह कर्म न होय। मैं अशुभ कर्मनिके उदयकरि अत्यन्त मलिन परणाम किए। मैं अर सीता एकही माताके उदरसे उपजे हैं। अब मेरे अशुभकर्म गया तब जथार्थ जानी। सो याके ऐसे वचन सुनकर अर शोककर पीडित देख याका पिता राजा चन्द्रगति गोदमें लेय मुख चूम पूछता भया—हे पुत्र! यह तू कौन भांति कही? तब कुमार कहता भया—हे तात! मेरा चरित्र सुनहु। पूर्वभवविषै मैं इस ही भरतक्षेत्रविषै विदग्धपुर नगर, तहां कुण्डलमंडित राजा हुता। परमंडलका लूटनहारा, सदा विग्रहका करणहारा, पृथ्वीविषै प्रसिद्ध निज

प्रजाका पालक, महाविभवकर सयुक्त । सो म पापी मायाचारकर एक विप्रकी स्त्री हरी । सो वह विप्र तो अतिदुखी होय कहीं चला गया अर म राजा अरण्यके देशमें बाधा करी । सो अरण्यका सेनापति बालचन्द्र मोहि पकड लेगया अर मेरी सवसम्पत्ति हर लीनी । मैं शरीरमात्र रह गया । कईएक दिनमे बदीगहत छूटचा सो महादुखित पथ्वीविषे भ्रमण करता मुनियोके दर्शनकू गया । महाव्रत अणुव्रत का व्याख्यान सुन्या । तीन लोकपूज्य जो सर्वत्र वीतरागदेव तिनका पवित्र जो मार्ग ताकी श्रद्धा करी । जगतके बाधव जे श्रीगुरु तिनकी आज्ञाकर मैंने मद्यमासका त्यागरूप व्रत आदरचा । मेरी शक्ति हीन हुती तातै ये विशेष व्रत न आदर सक्या । जिनशासनका अदभुत माहात्म्य जो मैं महापापी हुता सो एते ही व्रतसे मैं दुर्गतिमे न गया । जिनधर्मके शरणकरि जनककी राणी विदहाके गर्भमे उपज्या अर सीता भी उपजी । सो कन्या सहित मेरा जन्म भया । अर वह पूर्वभवका विरोधी विप्र जाकी मैं स्त्री हरी हुती सो देव भया । अर मोहि जन्मत ही जैसे गृद्ध पक्षी मासकी डलीकू ले जाय तैसे नक्षत्र नित ऊपर आकाशविषे ले गया । सो पहिलें तो तान विचार किया कि याकू मारू । बहुरि करुणा-करि कुण्डल पहराय लघुपरण विद्याकर मोहि यत्नसो डारचा सो रात्रिविषे पडता तुमने झेल्या । अर दयावान होय अपनी राणीकू सौंप्या, सो म तिहारे प्रसादत वृद्धिकू प्राप्त भया, अनेक विद्याका धारक भया । तुमने बहुत लडाया, अर माता मेरी बहुत प्रतिपालना करी । भामडल ऐसे कहके चुप हो रहया । राजा चन्द्रगति यह वृत्तात सुनकर परम प्रबोधकू प्राप्त भया अर इन्द्रियनिकी वासना तज महा वैराग्य अगीकार करवेकू उद्यमी भया । लोकधर्म कहिए स्त्रीसेवन सोई भया वृक्ष, ताहि सुखफलसू रहित जान्या । अर ससारका बधन जानकर अपना राज्य भामडलकू देय आप सर्व भूतहित स्वामीके समीप शीघ्र आया । वे सर्व भूतहित स्वामी पथ्वीविषे सूर्यसमान प्रसिद्ध, गुणरूप किरणनिके समूह कर भव्य जीवनिकू आनन्दके करनहारे, सो राजा चन्द्रगति विद्याधर महेन्द्रोदय उद्यानविषे आय मुनिकी अर्चना करी । बहुरि नमस्कार स्तुति कर सीस नवाय हाथ जोड या भाति कहता भया—हे भगवन ! तिहारे

प्रसादकर मै जिनदीक्षा लेय तप किया चाहू हू, मै गहवासत उदास भया। तब मुनि कहते भए—भव सागरसू पार करणहारी यह भगवती दीक्षा ह सो लेउ। राजा तो वराग्यकू प्राप्त भया अर भाम डलके राज्यका उत्सव होता भया, ऊचे स्वर नगारे बाजे, नारी गीत गावती भई, बासुरी आदि वादित्रनिके समूह बाजत भए। ताल मजीरा आदि बासुरीक वादित्र बाजे, 'शोभायमान जनक राजा का पुत्र जयवत होवे' ऐसा बदीजननिका शब्द होता भया। सो महेन्द्रोदय उद्यानविष ऐसा मनोहर शब्द रात्रिविष भया जात अयोध्याक समस्त जन निद्रारहित होयगए। बहुरि प्रात समय मुनिराजके मुखत महाश्रेष्ठ श-द सुनकर जनीजन अति हषकू प्राप्त भए। अर सीता जनक राजाका पुत्र जयवत होए, ऐसी वनि सुनकर मानो अमतसे सीची गई, रोमाचकर सयुक्त भया ह सब अग जाका, अर फरक ह बाई आख जाकी, मनमे चितवती भई।

जो यह बारम्बार ऊचा शब्द सुनिए कि जनक राजाका पुत्र जयवत होऊ सो मेरा ह पिता जनक ह। कनकका बडाभाई, अर मेरा भाई ज मताही हरचा गया था सो वही न होय। ऐसा विचारकर भाईक स्नेहरूप गया ह मन जाका, सो ऊच स्वरकर रुदन करती भई। तब राम अभिराम कहिए सु -र ह अग जावा, महामधुर वचनकर कहते भये—ह प्रिय! तू काहेकू रुदन कर ह, जो यह तेरा भाई ह तो अब खबर आव ह। अर जो और ह नो हे पडिते! तू कहा सोच कर ह? जा विचक्षण ह ते मुएका, हरेका, गएका, नष्ट हुएका, शोच न कर। हे वल्लभे! जे कायर ह अर मूख ह उनके विषाद होय ह। अर जे पडित ह, पराक्रमी ह तिनक विषाद नाहीं होय ह। या भांति रामक अर सीताके वचनालाप होव ह। ताही समय बधाईवारे मगल शब्द करते आए। तब राजा दशरथने महाहषत बहुत आदरत नानाप्रकार के दान कर अर पुत्र कलत्रादि सब कुटुम्बसहित वनमे गया। सो नगरके बाहिर चारो तरफ विद्याधरनिकी सेना सकडो सामतनिसे पूण दख आश्चयकू प्राप्त भया। विधाधरनिने इन्द्रके नगर तुल्य सेनाका स्थानक क्षणमात्रमे बनाय राखा ह। जाके ऊचा कोट, बडा दरवाजा, जे पताका तोरण

तिनत शोभायमान, रत्ननिकरि मंडित ऐसा निवास देख राजा दशरथ जहा वनमें साधु विराजे हुते तहा गया, नमस्कारकर स्तुतिकर राजा चन्द्रगतिका वैराग्य देख्या। विद्याधरनिसहित श्रीगुरुकी पूजा करी। राजा दशरथ सब बांधवसहित एक तरफ बैठ्या, अर भामंडल सब विद्याधरनिसहित एक तरफ बैठ्या। विद्याधर अर भूमिगोचरी मुनिके पास यति अर श्रावकका धर्म श्रवण करते भए। भामंडल पिताके वैराग्य होयवेकर कछुइक शोकवान बैठा। तब मुनि कहते भए जो यतिका धर्म है शूरवीरोंका है, जिनके गृहवास नाहीं, महा शांतदशा है, आनंदका कारण है, महा दुर्लभ है, त्रैलोक्यमें सार है, कायर जीवनिकूं भयानक भासै है। भव्यजीव मुनिपदकूं पाय कर अविनाशीधामकूं पावै है। अथवा इन्द्र अहमिंद्र पद लहै है। लोकके शिखर जो सिद्ध स्थानक है, सो मुनिपद विना नाहीं पाइये है। कैसे हैं मुनि? सम्यग्दर्शनकरि मंडित है, जिनमार्गसे निर्वाणके सुखकूं प्राप्त होय अर चतुर्गतिके दुखतैं छूटै सो ही मार्ग श्रेष्ठ है। सो सब भूतहित मुनिनैं मेघकी गर्जना समान है ध्वनि जिनकी, सब जीवनिके चित्तकूं आनंदकारी ऐसे वचन कहे। कैसा है मुनि? समस्त तत्त्वोंके ज्ञाता, सो मुनिके वचनरूप जल संदेहरूप तापकूं हरता प्राणी जीवनिनै कर्णरूप अंजुलीनिकरि पीये। कईएक मुनि भए, कईएक श्रावक भए, महा धर्मानुराग कर युक्त है चित्त जिनका। धर्मका व्याख्यान हो चुक्या तब दशरथ पूछता भया—हे नाथ! चन्द्रगति विद्याधरकूं कौनकारण वैराग्य उपज्या। अर सीता अपने भाई भामंडलका चरित्र सुनवेकी इच्छा करती भई। कैसी है सीता? महाविनयवती है। तब मुनि कहते भए—हे दशरथ! तुम सुनहु। इन जीवनिकी अपने अपने उपार्जे कर्मनिकर विचित्रगति है। यह भामंडल पूर्वे संसारमें अनन्त भ्रमणकर अति दुखित भया, कर्मरूपी पवनका प्रेरया या भवमें आकाशसूं पडता राजा चन्द्रगतिकूं प्राप्त भया, सो चन्द्रगति अपनी स्त्री पुण्यवतीकूं सौंप्या। सो नवयौवनमें सीताका चित्रपट देख मोहित भया। तब जनककूं एक विद्याधर कृत्रिम अश्व होय लेगया, यह करार ठहरया जो धनुष चढावै सो कन्या परणै। बहुरि जनककूं मिथिलापुरी लेय आए, अर धनुष श्रीरामने चढाया अर सीता परणी। तब भामंडल विद्या-

धरनिके मुखसे यह वार्ता सुन क्रोधकर विमानमें बैठ आवै था सो मार्गमें पूर्वभवका नगर देख्या, तब जातिस्मरण हुआ जो मैं कुण्डलमंडित नामा या विदग्धपुरका राजा अधर्मी हुता। पिंगल ब्राह्मणकी स्त्री हरी। बहुरि मोहि अरण्यके सेनापतिने पकड्या, देशतैं काढ दिया, सर्वस्व लूट लिया। सो महा पुरुषनिके आश्रय आय मधुमासका त्याग किया, शुभपरिणामनितैं मरणकर जनककी राणी विदेहाके गर्भतैं उपज्या। अर वह पिंगल ब्राह्मण जाकी स्त्री याने हरी सो वनसे काष्ठ लाय स्त्रीरहित शून्य-कुटी देख अति विलाप करता भया कि हे कमलनयनी! तेरी राणी प्रभावती सारिखी माता, अर चक्रध्वज सारिखे पिता तिनकूं, अर बडी विभूति अर बडा परिवार ताहि तज मोसूं प्रीतिकर विदेश आई, रूखे आहार अर फाटे वस्त्र तैं मेरे अर्थसे आदरे। सुन्दर है सर्व अंग जाके, अब तू मोहि तज कहां गई? या भांति वियोगरूप अग्नि कर दग्धायमान वह पिंगल विप्र पृथ्वीविषै महा दुखसहित भ्रमणकर मुनिराजके उपदेशतैं मुनि होय तप अंगीकार करता भया। तपके प्रभावतैं देव भया सो मनमें चिंतवता भया कि वह मेरी कांता सम्यक्त्वरहित हुती सो तिर्यंचगतिकूं गई। अथवा मायाचार रहित सरल परिणाम हुती सो मनुष्यणी भई, अथवा समाधिमरणकर जिनराजकूं उरमें धर देव गतिकूं प्राप्त भई। अर वह दुष्ट कुण्डलमंडित जाने आगै मेरी स्त्री हरी हुती सो कहां? तब अवधि करि जनककी स्त्रीके गर्भमें आया जान जन्म होते ही बालककूं हरया, सो चन्द्रगति झेल्या अर राणी पुष्पवतीको सौंप्या। सो भामंडल जातिस्मरण होय सर्व वृत्तांत चन्द्रगतिकूं कहा। जो सीता मेरी बहिन है अर राणी विदेहा मेरी माता है, अर पुष्पवती मेरी प्रतिपालक माता है। यह वार्ता सुन विद्याधरनिकी सर्व सभा आश्चर्यकूं प्राप्त भई। अर चन्द्रगति भामंडलकूं राज्य देय संसार, शरीर अर भोगनितैं उदास होय वैराग्य अंगीकार करना विचारया, अर भामंडलकूं कहता भया— हे पुत्र! तेरे जन्मदाता माता पिता तेरे शोककरि महादुखी तिष्ठै हैं सो अपना दर्शन देय तिनके नेत्र-निकूं आनन्द उपजाय। सो स्वामी सर्वभूतहित मुनिराज राजा दशरथसूं कहै हैं यह राजा चन्द्रगति

ससारका स्वरूप असार जान हमारे निकट आय जिनदीक्षा धरता भया। जो जन्म्या है सो निश्चय से मरेहीगा, अर जो मूवा है सो अवश्य नया जन्म धरेगा। यह ससारकी अवस्था जान चतुर्गति भवभ्रमणते डरचा। ये मुनिके वचन सुनकर भामडल पूछता भया—हे प्रभो! चन्द्रगतिका अर पुष्पवतीका मोपर अधिक स्नेह काहेते भया? तब मुनि बोले—ये पूर्वभवके तेरे माता पिता है सो सुन। एक दारूनामा ग्राम, वहा ब्राह्मण विमुचि, ताके स्त्री अनुकोशा, अर अतिभूत पुत्र, ताकी स्त्री सरसा। अर एक कयान नामा परदेशी ब्राह्मण सो अपनी माता ऊर्या सहित दारूग्राममें आया सो पापी अतिभूतकी स्त्री सरसाकू अर इनके घरके सारभूत धनकू ले भागा। सो अतिभूत महादुखी होय ताके ढूढवेकू पृथ्वीपर भटक्या। अर याका पिता कईएक दिन पहिले दक्षिणाके अर्थ देशातर गया हुता सो घर पुरुषनि विना सूना होयगया। जो घरमें थोडा बहुत धन रहा था सो भी जाता रहा। अर अतिभूत की माता अनुकोशा सो दरिद्रकरि महादुखी। यह सब वृत्तात विमुचिनें सुना कि घरका धन हू गया अर पुत्रकी बहू हू गई, अर पुत्र ढूढवेकू निकसा है सो न जानिये कौन तरफ गया। तब विमुचि घर आया अर अनुकोशाकू अति विह्वल देख धीर्य बधाया, अर कयानकी माता ऊर्या सो हू महादुखी, पुत्र अन्याय कार्य किया ताकरि अति लज्जायमान सो कहके दिलासा करी जो तेरा अपराध नाहीं, अर आप विमुचि पुत्रके ढूढवेकू गया। सो एक सर्वारिनाम नगर, ताके वनमें एक अवधिज्ञानी मुनि, सो लोकन के मुखते उनकी प्रशसा सुनी—जो अवधिज्ञानरूप किरणोकर जगतमें प्रकाश करे हैं। तब यह मुनिपै गया। धन अर पुत्रवधूके जानेसे महादुखी हुता ही सो मुनिराजकी तपोऋद्धि देखकर अर ससारकी झूठी माया जान तीव्र वैराग्य पाय विमुचि ब्राह्मण मुनि भया। अर विमुचिकी स्त्री अनुकोशा अर कयानकी माता ऊर्य्या ये दोनो ब्राह्मणी कमलकाता आर्यिकाके निकट आर्यिकाके व्रत धारती भई। सो विमुचि मुनि अर ये दोनो आर्यिका तीनो जीव महानिस्पृह धर्मध्यानके प्रसादतै स्वर्गलोक गए। कैसा है वह लोक? सदा प्रकाशरूप है। विमुचिका पुत्र अतिभूत हिंसामार्गका प्रशसक, अर सयमी

जीवोका निन्दक। सो आत रौद्रध्यानके योगत दुगति गया। अर यह कयान भी दुगति गया। अर वह सरसा अतिभूतकी स्त्री जो कयानकी लार निकसी हुती सो बलाहक पवतकी तलहटीमे मगी भई, सो व्याघके भयत मगोके यूथसे अकेली होय दावानलमे जलमुई। सो ज मातरमे चित्तोत्सवा भई, अर वह कयान भव भमण कर ऊँट भया। धूमकेशका पुत्र पिगल भया, अर वह अतिभूत सरसाका पति भव भमण करता राक्षस सरोवरक तोर हस भया। सो सिचानूने इसका सव अग घायल किया सो चत्यालयके समीप पडा तहा गुरु शिष्यको भगवानका स्तोत्र पढावता भया सो याने सुना। हसकी पर्याय छोड दसहजार वषकी आयुका धारी नगोत्तम नामा पवतविष किन्नर देव भया। तहाते चयकर विदग्धपुरका राजा कुण्डलमडित भया सो पिगलके पाससे चित्तोत्सवा हरी, सो ताका सकल वत्तात पूर्वे कहा ही ह। अर वह विमुचि ब्राह्मण जो स्वलोकक् गया हुता सो राजा च द्रगति भया, अनु कोशा ब्राह्मणी पुष्पवती अर वह कयान कई भव लेय पिगल होय मुनिवत धार देव भया सो वाने भामडलकू होतेही हरचा, अर वह ऊर्या ब्राह्मणी देवलोकत चयकर राणी विदेहा भई। यह सकल वत्तात राजा दशरथ सुनकर भामडलत मिल्या अर नेत्र अश्रुपातत भरलिये। अर सम्पूण सभा यह कथा सुनकर सजलनेत्र होय गई अर रोमाच होय आए। अर सीता अपने भाई भामडलसू देख स्नेह कर मिली अर रुदन करती भई, हे भाई! मै तोहि प्रथम ही देख्या, अर श्रीराम लक्ष्मण उठ कर भामडलत मिले। मुनिकू नमस्कार कर खेखर भूचर सब ही वनसे नगरकू गए। भामडलकू मन्त्र कर राजा दशरथने जनक राजाके पास विद्याधर पठाया अर जनककू आवनेके अथ विमान भेजे। राजा दशरथने भामडलका बहुत स मान किया, अर भामडलकू अतिरमणीक महिल रहिवेकू दीए, जहा सु दर वापी सरोवर उपवन ह। सो वहा भामडल सुखसू तिष्ठचा। अर राजा दशरथने भामडल के आवनेका बहुत उत्सव किया, याचकनिकू वाछासे भी अधिक दान दिया, सो दरिद्रतात रहित भए। अर राजा जनकके निकट पवनहूते अति शीघ विद्याधर गए, जायकर पुत्रके आगमनकी बधाई दी, ३९६

अर दशरथका अर भामंडलका पत्र दिया। सो बाचकर जनक अति आनंदकू प्राप्त भया, रोमांच होय आए। विद्याधरसू राजा पूछ है–हे भाई! यह स्वप्न है या प्रत्यक्ष है? तू आ हमसो मिल। ऐसा कहकर राजा मिले अर लोचन सजल होय आए। जसा हर्ष पुत्रके मिलने का होय तैसा पत्र लाने वालेत मिलनेका हर्ष भया। सम्पूर्ण वस्त्र आभूषण ताहि दिए। सब कुटुम्बके लोग भेले होय उत्सव किया। अर बारम्बार पुत्रका वृत्तांत ताहि पूछे है अर सुन सुन तृप्त न होय। विद्याधर सकल वृत्तांत विस्तारसू कह्या। ताही समय राजा जनक सव कुटुम्बसहित विमानमें बैठ अयोध्या चाले। सो एक निमिषमें जाय पहुँचे। कसी है अयोध्या? जहा वादित्रनिके नाद होय रहे है। जनक शीघ्र ही विमानत उतर पुत्रत मिल्या, सुखकर नेत्र मिल गए, क्षणएक मूर्छा आय गई। बहुरि सचेत होय अश्रुपातके भरे नेत्रनिसू पुत्रकू देखा अर हाथसे स्पर्शा। अर माता विदेहा हू पुत्रकू देख मूर्छित होय गई, बहुरि सचेत होय मिली, अर रुदन करती भई। जाके रुदनकू सुनकर तिर्यचनिकू भी दया उपजे। हाय पुत्र! तू जन्मत ही उत्कृष्ट वैरी त हरागया हुता। तेरे देखवेकू चितारूप अग्नि कर मेरा शरीर दग्ध भया हुता, सो तेरे दर्शनरूप जलकरि सींचा शीतल भया। अर धन्य है वह राणी पुष्पवती विद्याधरी जाने तेरी बाललीला देखी, अर क्रीडा कर धूसरा तेरा अंग उरसें लगाया, अर मुख चूमा, अर नव यौवन अवस्थाविषै चंदन कर लिप्त सुगंधनिकर युक्त तेरा शरीर देख्या। ऐसे शब्द माता विदेहाने कहे, अर नेत्रनित अश्रुपात झर, स्तननित दुग्ध झरा, अर विदेहाकू परम आनंद उपज्या। जसे जिन शासनकी सेवक देवी आनंदसहित तिष्ठै तसे पुत्रकू देख सुखसागरमे तिष्ठी। एकमास पर्यंत यह सब अयोध्यामें रहे। फिर भामंडल श्रीरामसू कहते भए–हे देव! या जानकीके तिहारो ही शरण है, धन्य है भाग्य जाके जो तुम सारिखे पति पाए। ऐसे कह बहिनकू छातीसे लगाया। अर माता विदेहा सीताकू उरसे लगाय कर कहती भई–हे पुत्री! सासू ससुरकी अधिक सेवा करियो, अर ऐसा करियो जो सव कुटुम्बमे तेरी प्रशंसा होय। सो भामंडलने सबकू बुलाया, जनकका छोटा भाई जो कनक

उसे मिथिलापुरीका राज्य सौंपकर जनक अर विदेहाकू अपने स्थानक लेगया। यह कथा गौतम स्वामी राजा श्रेणिकत कह ह कि–हे मगधदेशके अधिपति! तू धमका माहात्म्य देख जो धर्मके प्रसादत श्रीरामदेवके सीता सारिखी स्त्री भई, गुणरूपकर पूण जाका भामडलसा भाई विद्याधरनिका इन्द्र, अर देवाधिष्ठित वे धनुष सो रामने चढाए, अर जिनके लक्ष्मणसा भाई सेवक। यह श्रीरामका चरित्र भामडलके मिलापका वणन जो निमलचित्त होय सुन ताहि मनबाछित फलकी सिद्धि होय अर निरोग शरीर होय, सूय समान प्रभाकू पाव।

इति श्रीरविषेणाचायविरचित महापद्मपुराण सस्कृत ग्रथ ताकी भाषावचनिकाविष भामण्डलका मिलाप कथन वणन करनवाला तीसवाँ पव पूण भया ॥ ३ ॥

अथानन्तर राजा श्रेणिक गौतमस्वामीसू पूछते भए–हे प्रभो! वे राजा दशरथ, जगतके हितकारी, राजा अरण्यके पुत्र बहुरि कहा करते भए? अर श्रीराम लक्ष्मणका सकल वत्तात म सुना चाहू हू सो कपा करके कहो। तुम्हारा यश तीन लोकमें विस्तार रहा ह। तब मुनियोके स्वामी महातप तेज के धारनहारे गौतम गणधर कहते भए जसा यथाथ कथन श्री सवज्ञदेव वीतरागने भाख्या है तसा–हे भव्योत्तम! तू सुन।

जब राजा दशरथ बहुरि मुनियोके दशनोकू गए तो सवभूतहित स्वामीकू नमस्कारकर पूछते भए–ह स्वामी! म ससारमें अनन्त जन्म धरे सो कई भवकी वार्ता तिहारे प्रसादसे सुनकर ससारकू तजा चाहू हू। तब साधु दशरथकू भव सुननेका अभिलाषी जानकर कहते भए–हे राजन! सब ससारके जीव अनादिकालसे कर्मोंके सम्बन्धसे अनत जन्म मरण करते दुःख ही भोगते आए है। इस जगतमें जीवनिके कर्मोंकी स्थिति उत्कृष्ट मध्यम जघन्य तीन प्रकारकी ह। अर मोक्ष सवमें उत्तम है जाहि पचमगति कह ह। सो अनत जीवनिमे कोई एकके होय ह, सबनिको नाहीं। यह पचमगति

कल्याणरूपिणी है तहां तैं बहुरि आवागमन नाहीं। वह अनन्त सुखका स्थानक शुद्ध सिद्ध पद, इंद्रिय विषयरूप रोगनिकरि पीडित मोहकर अंध प्राणी ना पावै। जे तत्त्वार्थश्रद्धानकर रहित वैराग्यतैं बहिर्मुख हैं, अर हिंसादिकमें है प्रवृत्ति जिनकी तिनकूं निरंतर चतुर्गतिका भ्रमण ही है। अभव्यों को तो सर्वथा मुक्ति नाहीं, निरंतर भव भ्रमण ही है। अर भव्यनिक कोई एकको निवृत्ति है। जहां तक जीव पुद्गल धर्म अधर्म काल है सो लोकाकाश है, अर जहां अकेला आकाश ही है सो अलोकाकाश है। लोकके शिखर सिद्ध विराजै है। या लोकाकाशमें चेतना लक्षण जीव अनन्त हैं जिनका विनाश नाहीं। संसारी जीव निरंतर पृथ्वीकाय, जलकाय, अग्निकाय, वायुकाय, वनस्पतिकाय, त्रस काय ये छह काय तिनमें देह धार भ्रमण करै है। यह त्रैलोक्य अनादि अनंत है, यामें स्थावर जंगम जीव अपने अपने कर्मनिके समूहकरि बंधे नाना योनिविषै भ्रमण करै है। अर जिनराजके धर्मकर अनंत सिद्ध भए अर अनंत सिद्ध होयंगे, अर होय है। जिनमारग टारकर और मार्ग मोक्ष नाहीं। अर अनंतकाल व्यतीत भया, अनंत काल व्यतीत होयगा, कालका अंत नाहीं। जो जीव संदेहरूप कलंक कर कलंकी है। अर पापकर पूर्ण है, अर धर्मनिकूं नाहीं जानै तिनकै जैनका श्रद्धान कहांतै होय? अर जिनके श्रद्धान नाहीं, सम्यक्तरहित है तिनके धर्म कहांतै होय? अर धर्मरूप वृक्ष विना मोक्षफल कैसे पावै? अज्ञान अनंत दुःखका कारण है। जे मिथ्यादृष्टि अधर्मविषै अनुरागी है, अर अति उग्र पाप कर्मरूप कंचुकी (चोला) कर मंडित है, रागादि विषकै भरे है, तिनका कल्याण कैसे होय, दुख ही भोगवै है। एक हस्तिनापुरविषै उपास्तनामा पुरुष, ताकी दीपनी नामा स्त्री, सो मिथ्याभिमान कर पूर्ण, जाकै कछु नियम व्रत नाहीं, श्रद्धानरहित महाक्रोधवती, अदेखसकी, कषायरूप विषकी धारणहारी, महादुर्भाव, निरन्तर साधुनिकी निंदा करणहारी, कुशब्द बोलनहारी, महा कृपण, कुटिल, आप काहूकूं अन्न न देय, अर जो कोई दान करै ताकूं मने करै, धनकी धिरानी अर धर्म न जाने, इत्यादिक महादोषकी भरी मिथ्यामार्गकी सेवक सो पापकर्मके प्रभावकर भवसागरविषै अनंतकाल

भ्रमण करती भई। अर उपास्ति दानके अनुरागकर जद्रधुर नगरविषै भद्रनामा मनुष्य, ताके धारिणी स्त्री, ताके धारण नामा पुत्र भया। भाग्यवान, बहुत कुटुम्बी, ताक नयनसुन्दरी नामा स्त्री, सो धारण शुद्ध भावत मुनिनिको आहारदान देय, अंतकाल शरीर तजकर धातुकीखड द्वीपविषै उत्तरकुरु भोग भूमिमें तीन पल्य सुख भोग, देवपर्याय पाय, तहात चयकर पथुलावती नगरीविषै राजा नदिघोष, राणी बसुधा ताके नदिवधन नामा पुत्र भया। एक दिन राजा नदिघोष यशोधर नामा मुनिके निकट धर्म श्रवणकर नदिवधनकू राज्य देय आप मुनि भया। महातपकर स्वर्गलोक गया। अर नदिवधन श्रावक के व्रत धारे, पच णमोकारके स्मरणविषै तत्पर, कोटिपूर्व पर्यंत महाराजपदके सुख भोगकर अंतकाल समाधि मरणकर पचमे देवलोक गया। तहात चयकर पश्चिम विदेहविषै विजयार्ध पर्वत तहा शशि-पुर नामा नगर, तहा राजा रत्नमाली, ताके राणी विद्युल्लता, ताके सूर्यजय नामा पुत्र भया। एक दिन रत्नमाली महा बलवान सिंहपुरका राजा वज्रलोचन तासू युद्ध करवेकू गया। अनेक दिव्य रथ हाथी, घोडे, पियाद, महापराक्रमी सामत लार नानाप्रकार शस्त्रनिक धारक, राजा होठ डसता धनुष चढाय, वस्त्र पहिरे रथविषै आरूढ, भयानक आकृतिकू धर, आग्नेय विद्याधर, शत्रुके स्थानकक् दग्ध करवेकी इच्छा जाके, ता समय एक देव तत्काल आयकर कहता भया—हे रत्नमाली! त यह कहा आरम्भ्या? अब तू क्रोध तज म तरा पूर्व भवका वृत्तात कहू हू। सो सुन भरतक्षेत्रविषै गाधारी नगरी तहा राजा भूति ताके पुरोहित उपमन्यु सो राजा अर पुरोहित दोनो पापी मासभक्षी। एकदिन राजा केवलगर्भस्वामीके मुखत व्याख्यान सुन यह व्रत लिया, जो म पापका आचरण न करू। सो व्रत उप- ४
मन्यु पुरोहितने छुडाय दिया। एक समय राजापर परशत्रुओकी धाड आई। सो राजा अर पुरोहित दोनो मारे गए। पुरोहितका जीव हाथी भया सो हाथी युद्धमे घायल होय अंतकाल नमोकार मन्त्रका श्रवणकर तहा गाधारी नगरीविषै राजा भूतिकी राणी योजनगधा, ताक अरिसूदन नामा पुत्र भया। सीतान केवलगर्भ मुनिका दर्शनकर पूर्व जन्म स्मरण किया, तब महा वैराग्य उपजा।

सो मुनिपद आदरा, समाधिमरण कर ग्यारहवें स्वर्गविष देव भया। सो म उपमन्यु पुरोहितका जीव अर तू राजा भूति मरकर मदारण्यविष मय भया। दावानलमें जर मूवा, मरकर कालिजनामा नीच पुरुष भया सो महापापकर दूजे नरक गया। सो म स्नेहके योगकर नरकविष तुझे सबोधा। आयु पूणकर नरकसे निकस रत्नमाली विद्याधर भया, सो तू वे अब नरकके दुख भूल गया। यह वार्ता सुन रत्नमाली सूयजय पुत्रसहित परम वराग्यकू प्राप्त भया। दुगतिके दुखसे डरया, तिलकसुन्दर स्वामी का शरण लेय पिता पुत्र दोनो मुनि भए। सूयजय तपकर दशमे देवलोक देव भया। तहात चयकर राजा अरण्यका पुत्र दशरथ भया। सो सव भूतहित मुनि कह ह—अल्पमात्र भी सुकृतकर उपास्तिका जीव कईएक भव विष बडके बोजकी याइ वद्धिकू प्राप्त भया। तू राजा दशरथ उपास्तिका जीव ह अर नदिवधनके भवविष तेरा पिता राजा नदिघोष मुनि होय ग्रवेयक गया, सो तहात चयकर म सव-भूतहित भया। अर जो राजा भूतिका जीव रत्नमाली भया हुता। तू राजा दशरथ उपास्तिका अर उपमन्यु पुरोहितका जीव जाने रत्नमालीको सबोधा हुता सो जनकका भाई कनक भया। या ससारविष न कोई अपना ह, न कोई पर ह, शुभाशुभ कर्मोंकर यह जीव जन्म मरण कर ह। यह पूव भवका वणन सुन राजा दशरथ नि सदेह होय सयमको सम्मुख भया। गुरुके चरणनिको नमस्कारकर नगरमे प्रवेश किया। निर्मल ह अत करण जिनका, मनमें विचारता भया कि यह महा मडलेश्वर पदका राज्य महा सुबुद्धि जे राम तिनको देकर म मुनिवत अगीकार करू। राम धर्मात्मा है, अर महा धीर ह, धयको धरे ह। यह समुद्रात पृथ्वीका राज्य पालवे समथ ह। अर भाई भी इनके आज्ञाकारी ह, ऐसा राजा दशरथने चितवन किया। कसे ह राजा ? मोहत पराडमुख अर मुक्तिके उद्यमी। ता समय शरद ऋतु पूण भई, अर हिमऋतुका आगमन भया। कसी ह शरदऋतु ? कमल ही ह नेत्र जाके, अर चन्द्रमाकी चादनी सोही ह उज्ज्वल वस्त्र जाके, सो मानो हिमऋतुके भयकर भागगई।

अथानन्तर हिमऋतु प्रकट भई, शीत पडने लगा, वृक्ष दहे, अर ठडी पवनकर लोक व्याकुल भए।

जो ऋतुविषै धनरहित प्राणी जीर्ण कुटिमें दुखसे काल व्यतीत करै हैं। कैसे हैं दरिद्री ? फट गए हैं अधर अर चरण जिनके, अर बाज है दांत जिनके, अर रूखे हैं केश जिनके, अर निरंतर अग्निका है सेवन जाके, अर कभी भी उदरभर भोजन न मिले, कठोर है चर्म जिनका। अर घरमें कुभार्याके वचन रूप शस्त्रनिकर विदारा गया है चित्त जिनका। अर काष्ठादिकके भार लायवेको कांधे कुठारादिक को धरे वन वन भटके हैं, अर शाक बोरफलि आदि ऐसे आहारकर पेट भरै हैं। अर जे पुण्यके उदय करि राजादिक धनाढ्य पुरुष भए हैं ते बडे महलोंमें तिष्ठै हैं, अर शीतके निवारणहारे, अगरके धूप की सुगंधिताकरयुक्त सुंदर वस्त्र पहरे हैं। अर सुवर्ण अर रूपादिकके पात्रोंमें षटरससयुक्त सुगंधित स्निग्ध भोजन करै हैं। केसर अर सुगंधादिकर लिप्त है अंग जाके, अर जिनके निकट धूपदानमें धूप खेईये है। अर परिपूर्ण धनकर चिंतारहित हैं, झरोखोंमें बैठे लोकनिको देखै हैं। अर जिनके समीप गीत नृत्यादिक विनोद होयवो करै है। रत्नोंके आभूषण अर सुगंध मालादिककर मंडित सुंदर कथा में उद्यमी है। अर जिनके विनयवान अनेक कलाकी जाननहारी महारूपवान पतिव्रता स्त्री है। पुण्य के उदयकरि ये संसारी जीव देवगति मनुष्यगतिके सुख भोगै हैं, अर पापके उदयकरि नरक तिर्यंच तथा मनुष होय दुख दरिद्र भोगवै हैं। सब लोक अपने अपने उपार्जित कर्मके फल भोगवै हैं। ऐसे मुनि के वचन दशरथ पहिले सुने हुते सो संसारतें विरक्त भया। द्वारपालकूं कहता भया, कैसा है द्वारपाल ? भूमिविषै थाप्या है मस्तक अर जोडे हैं हाथ जाने। नृपति ताको आज्ञा करी।

हे भद्रे सामंत मंत्री पुरोहित सेनापति आदि सबको ल्यावो। तब वह द्वारपाल द्वारेपर आय दूजे मनुष्यको द्वारपर मेलि तिनको आज्ञा प्रमाण बुलावनको गया। तब वे आयकर राजाकूं प्रणामकरि यथायोग्य स्थानकविषै तिष्ठे, विनती करते भए—हे नाथ ! आज्ञा करहु, क्या कार्य है ? तब राजा कही—मैं संसारका त्यागकर निश्चय सेती संयम धारूंगा। तब मंत्री कहते भए—हे प्रभो ! तुमको कौन कारण वैराग्य उपज्या ? तब नृपति कही जो प्रत्यक्ष यह समस्त जगत सूके तृणकी न्याईं मृत्यु

रूप अग्निकर जरै है, अर जो अभव्यनिकू अलभ्य अर भव्यनिकू लेने योग्य ऐसा सम्यक्तसहित संयम सो भव तापका हरणहारा, अर शिवसुखका देनहारा है, सुर असुर नर विद्याधरनिकरि पूज्य प्रशंसा योग्य है। मैं आज मुनिके मुखसे जिनशासनका व्याख्यान सुन्या। कैसा है जिनशासन? सकलपापोंका वर्जन हारा है। तीनलोकविषै प्रकट महा सूक्ष्म है चर्चा जाविषै, अति निर्मल उपमारहित है। सब वस्तुनिमैं सम्यक्तपरम वस्तु है ता सम्यक्तका मूल जिनशासन है, श्रीगुरुओंके चरणारविंदके प्रसादकर मैं निवृत्तिमार्गमें प्रवर्त्या, मेरी भवभ्रांतिरूप नदीकी कथा आज मैं मुनिके मुखसे सुनी अर मोहि जातिस्मरण भया। सो मेरे अंग देखो त्रास कर कांपे है। कैसी है मेरी भवभ्रांति नदी? नानाप्रकारके जे जन्म वे ही हैं भ्रमर जामैं, अर मोहरूप कीच करि मलिन, कुतर्करूप ग्राहनिकरि पूर्ण, महादुःखरूप लहर उठै है निरन्तर जामैं, मिथ्यारूप जलकर भरी, मृत्यु रूप मगरमच्छनिका है भय जाविषै, रुदनके महाशब्दकूं धरै, अधर्म प्रवाह कर बहती, अज्ञानरूप पर्वतते निकसी, संसाररूप समुद्रमैं है प्रवेश जाका। सो अब मैं इस भववनद्वीपकूं उलंघकर शिवपुरी जायवेका उद्यमी भया हूं। तुम मोहके प्रेरे कछु वृथा मत कहो, संसार समुद्र तर निर्वाण द्वीप जाते अंतराय मत करहु। जैसे सूर्यके उदय होते अंधकार न रहै तैसे सम्यग्ज्ञानके होते संशय तिमिर कहां रहै? तातैं मेरे पुत्रकूं राज्य देहु अब ही पुत्रका अभिषेक करावहु, मैं तपोवनमैं प्रवेश करूं हूं। ए वचन सुन मन्त्री सामंत राजाकूं वैराग्यका निश्चय जान परमशोककूं प्राप्त भए। नीचे होय गए हैं मस्तक जिनके, अर अश्रुपात कर भर गए हैं नेत्र जिनके, अंगुरी कर भूमिकूं कुचरते क्षणमात्रमैं प्रभावरहित होय गए, मौनसे तिष्ठे। अर सकलही रणवास प्राणनाथका निर्ग्रंथ व्रतका निश्चय सुनि शोककूं प्राप्त भया। अनेक विनोद करते हुते सो तजकर आंसुओंसे लोचन भर लिए, अर महारुदन किया। भरत पिताका वैराग्य सुन आप भी प्रतिबोधकूं प्राप्त भए। चित्तमैं चिंतवते भए अहो यह स्नेहका बंध छेदना कठिन है। हमारा पिता ज्ञानकूं प्राप्त भया। जिनदीक्षा लेवेकूं इच्छै है, अब इनके राज्यकी चिंता कहां, मोहि तो न

किसीको कुछ पूछना न कछु करना, तपोवनमें प्रवेश करू गा, सयम धारू गा । कसा ह सयम ? ससार के दु खनिका क्षय करणहारा ह, अर मेरे या देह करहू कहा ? कसा ह यह देह व्याधिका घर ह, अर विनश्वर ह, सो यदि देहीसे मेरा सबध नाहीं तो बाधवनिसो कहा सबध ? यह सब अपने कम फल के भोक्ता है । यह प्राणी मोहकर अधा ह, दु खरूप वनविष अकेला ही भटक ह । कसा ह दु खरूप वन ? अनेक भवभयरूप वक्षनित भरचा ह ।

अथानन्तर केकई सकल कलाकी जाननहारी भरतकी यह चेष्टा जान अति शोककू धरती भई । मनमें चितव ह–भरतार अर पुत्र दोनो ही वराग्य धारचा चाह ह, कौन उपाय करि इनका निवारण करू । या भाति चिता कर व्याकुल भया ह मन जाका, तब राजाने जो वर दिया हुता सो याद आया । अर शीघ ही पतिप जाय आधे सिहासनपर बठी, अर विनती करती भई–हे नाथ ! सव ही स्त्रीनिके निकट तुम मोहि कपाकर कही हुती जो तू माग सो म देऊ, सो अब देवो । तुम सत्यवादी हो, अर दान करि निमलकीर्ति तिहारी जगतविष विस्तार रही ह । तब दशरथ कहते भए–हे प्रिये ! जो तेरी वाछा हाय सो ही लेहु । तब राणी केकई आसू डारती सती कहती भई–हे नाथ ! हमप ऐसी कहा चूक भई जो तुम कठोर चित्त किया ? हमकू तजा चाहो हो, हमारा जीव तो तिहारे आधीन ह । अर यह जिनदीक्षा अत्य त दुधर सो लेयनेको तुम्हारी बुद्धि काहेकू प्रवत्ति ह ? यह इन्द्र धनुष समान जे भोग तिनकर लडाया जो तिहारा शरीर सो कैसे मुनिपद धारोगे ? कसा ह मुनिपद ? अत्य त विषम ह । या भाति जब राणी केकईने कहचा तब आप कहते भए–हे काते ! समथनिकू कहा विषम ? म तो निसदेह मुनिव्रत धारू गा, तरी अभिलाषा होय सो माग लेहु । राणी चितावान होय नीचा मुखकर कहती भई हे नाथ ! मेरे पत्रकू राज्य देहु । तब दशरथ बोले यामे कहा सदेह ? त धरोहरि मेली हुती सो अब लेहु । त जो कहा जो हम प्रमाण किया । अव शोक तज, त मोहि ऋणसहित किया । तब राम लक्ष्मणकू बुलाय दशरथ कहते भए । कसे ह दोऊ भाई ? महा विनयवान ह, पिताके आज्ञाकारी है ।

राजा कहे है—हे वत्स ! यह केकई अनेक कलाकी पारगामिनी, याने पूर्व महा घोर संग्रामविषै मेरा सारथीपना किया, यह अति चतुर है। मेरी जीत भई तब मैं तुष्टायमान होय याहि वर दीया जो तेरी वांछा होय सो माग। तब याने वचन मेरे धरोहरि मेला। अब यह कहै है मेरे पुत्रकू राज्य देवो। सो जो याके पुत्रकू राज्य न देऊ तो याका पुत्र भरत संसारका त्याग करे, अर यह पुत्रके शोककरि प्राण तजै। अर मेरी वचन चूकवेकी अकीर्ति जगतमें विस्तरै। अर यह काम मर्यादात विपरीत है जो बडे पुत्रकू छोडकर छोटे पुत्रकू राज्य देना ! अर भरतकू सकल पृथ्वीका राज्य दीए तुम लक्ष्मण सहित कहा जावो ? तुम दोऊ भाई परमक्षत्रीय तेजके धरनहारे हो, तातै हे वत्स ! मैं कहा करू ? दोऊ ही कठिन बात आय बनी है। मैं अत्यंत दुःखरूप चिंताके सागरमें पड्या हूं। तब श्रीरामचन्द्र महा विनयकू धरते संते कहते भए, पिताके चरणारविंदकी ओर है नेत्र जिनके अर महा सज्जनभावकू धरै है, हे तात ! तुम अपना वचन पालहु, हमारी चिंता तजहु। जो तिहारे वचन चूकनेकी अपकीर्ति होय अर हमारे इन्द्रकी सम्पदा आवै तो कौन अर्थ ? जो सुपुत्र है सो ऐसा ही कार्य करे जाकर माता पिताकू रंचमात्र भी शोक न उपजै। पुत्रका यही पुत्रपना पंडित कहै है—जो पिताकू पवित्र करे, अर कष्टतै रक्षा करे। पवित्र करणा यह कहावै जो उनकू जिनधर्मके सन्मुख करे। दशरथके अर राम लक्ष्मणके यह बात होय है ताही समय भरत महिलतै उतरचा, मनमें विचारी मैं कर्मनिकू हनूं, मुनिव्रत धरू, सो लोकनिके मुखतै हाहाकार शब्द भया। तब पिताने विह्वल चित्त होय भरतकू वन जायवेतै राख्या, गोदमें ले बैठे, छातीसू लगाय लिया, मुख चूमा अर कहते भए—हे पुत्र ! तू प्रजाका पालनकर, मैं तपके अर्थि वनमें जाऊ हूं। भरत बोले—मैं राज्य न करू, जिनदीक्षा धरूंगा। तब राजा कहते भए—हे वत्स ! कईएक दिन राज्य करहु। तिहारी नवीन वय है, वृद्ध अवस्थामें तप करियो। भरत कही—हे तात ! जो मृत्यु है सो बाल वृद्ध तरुणकू नाहीं देखै है, सर्वभक्षी है। तुम मोहि वृथा काहेकू मोह उपजावो हो ? तब राजा कही—हे पुत्र ! गृहस्थाश्रमविषै भी धर्मका संग्रह होय है। कुमानुषनितै नाहीं

बन है। तब भरत कही—हे नाथ! इन्द्रियनिके वशतें काम क्रोधादिक भरे गृहस्थनिकूं मुक्ति कहां? तब भूपतिने कही—हे भरत! मुनिनहूमें सब ही तद्भव मुक्ति नाहीं होय है, कई एक होय हैं। तातैं तू कई दिन गृहस्थधर्म आराधि। तब भरत कही—हे देव! आप जो कही सो सत्य है, परन्तु गृहस्थनिका तो यह नियम ही है जो मुक्ति न होय। अर मुनिनिमैं कोई होय, कोई न होय। गृहस्थधर्मतैं परम्पराय मुक्ति होय है, साक्षात नाहीं। तातैं हीनशक्ति वारेनिका काम है। मोहि यह बात न रुचै, मैं महाव्रत धरणेका ही अभिलाषी हूं। गरुड कहा पतंगनिकी रीति आचरै? कुमानुष कामरूप अग्निकी ज्वालाकरि परम दाहकूं प्राप्त भए संते स्पर्शनइन्द्रिय अर जिह्वा इन्द्रियकरि अधमकायकूं करै है तिनकूं निवृत्ति कहां? पापी जीव धर्मतैं विमुख, विषयभोगनिकूं सेयकरि निश्चयसेती महा दुःखदाता जो दुर्गति ताहि प्राप्त होय है। ये भोग दुर्गतिके उपजावनहारे, अर राखे न रहैं, क्षणभंगुर है, तातैं त्याज्य ही है। ज्यों ज्यों कामरूप अग्निमें भोगरूप इंधन डारिए त्यों त्यों अत्यन्त तापकी करणहारी कामाग्नि प्रज्वलित होय है। तातैं हे तात! तुम मोहि आज्ञा देवो जो बनमें जाय विधिपूर्वक तप करूं। जिनभाषित तप परम निर्जराका कारण है। या संसारतैं मैं अतिभयकूं प्राप्त भया हूं। अर हे प्रभो! जो घर ही विषै कल्याण होय तो तुम काहेको घर तजि मुनि हुआ चाहो हो? तुम मेरे तात हो। सो तातका यही धर्म है—संसार समुद्रतैं तारै, तपकी अनुमोदना करै, यह बात विचक्षण पुरुष कहै हैं। शरीर स्त्री धन माता पिता भाई सकलकूं तजि यह जीव अकेला ही परलोककूं जाय है। चिरकाल देवलोकके सुख भोगे है, तौ हू यह तृप्त न भया। सो कैसे मनुष्यनिके भोगनिकरि तृप्त होय? पिता भरतके ये वचन सुनकर बहुत प्रसन्न भया, हर्षथकी रोमांच होय आए। अर कहता भया—हे पुत्र! तू धन्य है, भव्यनिविषै मुख्य है जिनशासनका रहस्य जानि प्रतिबोधकूं प्राप्त भया है। तू जो कहै है सो प्रमाण है, तथापि हे धीर! तैं अबतक कबहू मेरी आज्ञा भंग न करी, तू विनयवान पुरुषोंमें प्रधान है, मेरी वार्ता सुनि। तेरी माता केकईने युद्धविषै मेरा सारथीपना किया। वह युद्ध अति ४ ६

विषम हुता, जामें जीवनेकी आशा नाही। सो याके सारथीपनेकरि युद्धविषै विजय पाई। तब मैं तुष्टायमान होय याकूं कहा--जो तेरी वांछा होय सो मांग। तब याने कही यह वचन भंडार रहै, जादिन मोहि इच्छा होयगी तादिन मांग लूंगी। सो आज याने यह मांगी कि मेरे पुत्रकूं राज्य देहु सो मैं प्रमाण किया। अब हे गुणनिधे! तू इन्द्रके राज्य समान यह राज्य निकंटक करि। मेरी प्रतिज्ञा भंगकी अकीर्ति जगतविषै न होय, अर यह तेरी माता तेरे शोककरि तप्तायमान होय मरणको न पावै। कैसी है यह? निरन्तर सुखकर लडाया है शरीर जाने। अपत्य कहिए पुत्र, ताका यही पुत्रपना है कि माता पिताकूं शोकसमुद्रमें न डारे! यह बात बुद्धिमान कहे हैं। या भांति राजा कही।

अथानन्तर श्रीराम भरतका हाथ पकड महामधुर वचनकरि प्रेमकी भरी दृष्टिकरि देखते संते कहते भए, हे भ्रात! तातने जैसे वचन तोहि कहे ऐसे और कौन कहने समर्थ? जो समुद्रसे रत्नोंकी उत्पत्ति होय सो सरोवरसे कहां? अबार तेरी वय तपके योग्य नाहीं, कईएक दिन राज्य कर जासे पिताकी कीर्ति वचनके पालिवेकी चन्द्रमा समान निर्मल होय। अर तो सारिखे पुत्रके होते संते माता शोककर तप्तायमान मरणकूं प्राप्त होय यह योग्य नाहीं। अर मैं पर्वत अथवा वनविषै ऐसी जगह निवास करूंगा जो कोई न जाने। तू निश्चिन्त राज्य करि। मैं सकल राजऋद्धि तज देशतैं दूर रहूंगा। अर पृथ्वीको पीडा काहू प्रकार न होयगी। तात अब तू दीर्घ सांस मत डार, कईएक दिन पिताकी आज्ञा मान राज्य करि न्याय सहित पृथ्वीकी रक्षाकरि। हे निर्मल स्वभाव! यह इक्ष्वाकुवंशनिका कुल, ताहि तू अत्यन्त शोभायमान करि, जैसे चन्द्रमा ग्रह नक्षत्रादिकको शोभायमान करै है।
भाईका यही भाईपना पंडितनिने कहा है कि भाइनिकी रक्षा करै, संताप हरै। श्रीरामचन्द्र ऐसें वचन कहिकर पिताके चरणनिको भावसहित प्रणाम कर चल पडे। तब पिताकूं मूर्च्छा आय गई, काष्ठके स्तम्भ समान शरीर होय गया। राम तरकश बांध धनुष हाथमें लेय माताकूं नमस्कार कर कहते भए--हे माता! हम अन्य देशकूं जाय हैं, तुम चिंता न करनी। तब माताको भी मूर्छा आय

गई, बहुरि सचेत होय आसू डारती सती कहती भई हाय पुत्र ! तुम मोहि शोकके समुद्रमें डार कहा जावो हो ? तुम उत्तम चेष्टाके धरणहारे हो, माताका पुत्र ही अवलबन ह, जस शाखाके मूल आधार ह । माता रुदनकरि विलाप करती भई । तब श्रीराम माताकी भक्तिविष तत्पर ताहि प्रणामकर कहते भए—हे माता ! तुम विषाद मत करहु । म दक्षिणदिशाविष कोई स्थानक कर तुमकू निसदेह बुलाऊगा । हमारे पिताने माता ककईकू वर दिया हुता सो भरतकू राज्य दिया । अब म यहा रहू नाही, विध्याचलके वनविष अथवा मलयाचलके वनविष तथा समुद्रके समीप स्थानक करि तुमकू निसदेह बुलाऊगा । म सूय समान यहा रहू तो भरत चद्रमाकी आज्ञा ऐश्वयरूप काति न विस्तर । तब माता नमीभूत जो पुत्र ताहि उरसू लगाय रुदन करती सती कहती भई—हे पुत्र ! मोकू तिहारे लार ही चलना उचित ह, तुमकू देखे विना म प्राणनिकू राखिवे समथ नाहीं । जे कुलवती स्त्री ह तिनके पिता अथवा पति तथा पुत्र ये ही आश्रय ह । सो पिता तो कालवश भया, अर पति जिनदीक्षा लेयवेकू उद्यमी भया ह । अब तो पुत्रहीका अवलबन ह । सो तुमहू छाड चाले तो मेरी कहा गति भई ? तब राम बोल हे—माता ! मागमे पाषाण, अर कटक बहुत ह, तुम कस पायन चलोगी ? तात कोऊ सुख का स्थानककरि असवारी भेज तुमकू बुलाऊगा । मोहि तिहारे चरणनिकी सौगध ह, तिहारे लेनेकू म आऊगा तुम चिता मत करहु । ऐसे कह माताकू शातता उपजाय सीख दीनी । बहुरि पिताप गए । पिता मूर्छित होय गये हुते सो सचेत भए । पिताकू प्रणामकर और मातानिप गए । सुमित्रा, ककई सुप्रभा कौशिल्या सबनिकू प्रणाम कर सीख करी । कसे ह राम ? यायत्रिष प्रवीण, निराकुल ह चित्त जिनका, तथा भाई बध मत्री अनेक राजा उमराव परिवारके लोक सबनिकू शुभ वचन कह विदा भए । सबनिको बहुत दिलासाकर छातीसू लगाए, आसू पूछे । उनने घनी ही विनती करी जो यहा ही रहो, सो न मानी । सामत तथा हाथी, घोडे, रथ सबकी ओर कपादष्टिकर देख्या । बहुरि बडे बडे सामत हाथी, घोडे भेट लाए सो रामने न राखे । सीता अपने पतिकू विदेश गमनकू उद्यमी

देख ससुर अर सासूकू प्रणामकर नाथक सग चाली । जस शची इन्द्रके साथ चाल अर लक्ष्मण स्नेह कर पूण रामकू विदेशगमनकू उद्यमी दख चित्तमे क्रोधकर चितवता भया । जो हमारे पिताने स्त्री के कहेत यह कहा अन्याय काय विचारचा, जो रामको टार औरको राज्य दिया । धिक्कार ह स्त्री-निकू जो अनुचित काम करती शका न कर, स्वार्थविष आसक्त ह चित्त जिनका । अर यह बडा भाई महानुभाव पुरुषोत्तम ह सो ऐसे परिणाम मुनिनके होय ह । अर म ऐसा समथ हू जो समस्त दुराचारिनिका पराभवकर भरतकू राज्यलक्ष्मीत रहित करू, अर राज्यलक्ष्मी श्रीरामके चरणनिमें लाऊ । परन्तु यह बात उचित नाहीं, क्रोध महा दुखदाई ह, जीवनिकू अध कर ह । पिता तो जिनदीक्षाकू उद्यमी भया अर म क्रोध उपजाऊ, सो योग्य नाहीं । अर मोहि ऐसे विचारकर कहा ? योग्य अर अयोग्य पिता जान अथवा बडा भाई जान । जाम पिताकी कीर्ति उज्ज्वल होय सो कतव्य ह । मोहि काहूसू कछु न कहना, म मौन पकड बडे भाईके सग जाऊगा । कसा ह यह भाई ? साधु समान हैं भाव जाके । ऐसा विचारकर कोप तज धनुषबाण लेय समस्त गुरुजननिकू प्रणामकर महाविनय सपन्न रामके लार चाल्या । दोऊ भाई जस दवालयत देव निसर तस राजमन्दिरत नीसरे । अर माता पिता सकल परिवार अर भरत शत्रुघ्नसहित इनके वियोगत अश्रुपातकरि मानो वर्षाऋतु करते सते राखवेकू चाले । सो राम लक्ष्मण अति पिताभक्त, अर सबोधवेकू महापडित, विदश जायवेहीका ह निश्चय जिनके, सो माता पिताकी बहुत स्तुतिकर बारम्बार नमस्कारकर बहुत धीय बधाय पीठ पीछे हेरे, सो नगर में हाहाकार भया । लोक वार्ता कर ह । हे मात ! यह कहा भया, यह कौनने मता उपजाया ? या नगरीहीका अभाग्य ह अथवा सकल पथ्वीका अभाग्य ह । ह मात ! हम तो अब यहा न रहेंगे, इनके लार चालेंगे । ये महा समथ ह । अर देखो यह सीता नाथके सग चाली ह । अर रामकी सेवा करणहारा लक्ष्मण भाई ह । धन्य ह यह जानकी विनयरूप वस्त्र पहिरे भरतारके सग जाय ह । नगरकी नारी कह ह हम सबनिकू शिक्षा देनहारी यह सीता महापतिवता ह । या समान और नारी नाहीं,

जो महापतिव्रता होय सो याकी उपमा पावें। पतिव्रतानिक भरतार ही देव ह। अर देखो यह लक्ष्मण माताकू रोवती छोड बडे भाईके सग जाय ह। धन्य याकी भक्ति, धन्य याकी प्रीति, धन्य याकी शक्ति, धन्य याकी क्षमा, धन्य याकी विनयकी अधिकता। या समान और नाहीं। अर दशरथ भरतकू यह कहा आज्ञा करी जो तू राज्य लेहु? अर राम लक्ष्मणकू यह कहा बुद्धि उपजी जो अयोध्याकू छाड चाले। जा कालमें जो होनी होय सो होय ह, जाके जसा कम उदय होय तसी ही होय, जो भगवानके ज्ञानमें भासा ह सो होय। देवगति दुर्निवार ह। यह बात बहुत अनुचित होय ह। यहाके देवता कहा गए। ऐसे लोगनिके मुखध्वनि होती भई। सब लोक इनके लार चालवेकू उद्यमी भए। घरनित निकसे नगरीका उत्साह जाता रह्या, शोककर पूण जो लोक तिनके अश्रुपातनिकरि पथ्वी सजल होय गई। जस समुद्रकी लहर उठ ह तस लोक उठे। रामके सग चाले, मन किए हू लोक न रहे। रामकू भक्तिकर लोक पूज, सभाषण कर सो राम पड पडमें विघ्न मानें। इनका भाव चलवेका, लोक राख्या चाह ह, कईएक लार चल। रामका विदेश गमन मानो सूय देख न सक्या सो अस्त होने लग्या। अस्त समय सूयके प्रकाशने सब दिशा तजी, जस भरत चक्रवर्ती मुक्तिके निमित्त राज्यसम्पदा तजी हुती। सूयके अस्त होते परम रागको धरती सती सध्या सूयके पीछे ही चाली, तस सीता रामके पीछे चाली। अर समस्त विज्ञानका विध्वस करणहारा अधकार जगतमें व्याप्त भया, मानो रामके गमनकरि तिमिर विस्तरचा। लोग लार लागे सो रहें नाहीं। तब राम लोकनिके टारिवेकू श्रीअरनाथ तीथकरके चत्यालयविष निवास करना विचारचा। ससारके तारणहारे भगवान तिनका भवन सदा शोभायमान, महासुगध अष्ट मगल द्रव्यनिकर मडित, जाके तीन दरवाजे, ऊचा तोरण। सो राम लक्ष्मण सीता प्रदक्षिणा देय चत्यालय माहि पठ, समस्त विधिके वेत्ता। दोय दरवाजें तक तो लोक चले गए, तीसरे दरवाजे पर द्वारपालने लोकनिकू रोक्या जस मोहिनीकम मिथ्या दृष्टिनिकू शिवपुर जायवेत रोक। राम लक्ष्मण धनुष बाण अर बखतर बाहिर मेल भीतर दशनकू

गए, कमल समान है नेत्र जिनके। श्रीअरनाथका प्रतिबिंब रत्ननिके सिंहासनपर विराजमान, महाशोभायमान, महासौम्य, कायोत्सर्ग, श्रीवत्सलक्षणकर देदीप्यमान है उरस्थल जिनका, प्रकट हैं समस्त लक्षण जिनके, सम्पूर्ण चन्द्रमा समान वदन, फूले कमलसे नेत्र, कथनविषै अर चिंतवनविषै न आवै ऐसा है रूप जिनका, तिनका दर्शनकर भावसहित नमस्कारकर ये दोऊ भाई परम हर्षकूं प्राप्त भए। कैसे हैं दोऊ? बुद्धि पराक्रमरूप लज्जाके भरे जिनेन्द्रकी भक्तिविषै तत्पर। रात्रिकूं चैत्यालयके समीप रहे, तहां इनकूं बसे जान माता कौशल्यादिक पुत्रनिविषै है वात्सल्य जिनका आयकर आंसू डारती बारम्बार उरसूं लगावती भई। पुत्रनिके दर्शनविषै अतृप्त विकल्परूप हिंडोलविषै झूलै है चित्त जिनका। गौतम स्वामी राजा श्रेणिकतैं कहै है—

हे श्रेणिक! सर्व शुद्धतामें मनकी शुद्धता महा प्रशंसा योग्य है। स्त्री पुत्रकूं भी उरसे लगावै अर पतिकूं भी उरसे लगावै, परन्तु परिणामनिका अभिप्राय जुदा जुदा है। दशरथकी चारों ही राणी गुणरूप लावण्यताकर पूर्ण, महामिष्टवादिनी, पुत्रनिसूं मिल पतिपै गई, जायकर कहती भई। कैसा है पति? सुमेरुसमान निश्चल है भाव जाका। राणी कहै है—हे देव! कुलरूप जहाज शोकरूप समुद्रविषै डूबै है सो थांभो। राम लक्ष्मणकूं पीछा ल्यावौ तब राजा कहते भए यह जगत विकाररूप मेरे आधीन नाहीं। मेरी इच्छा तो यह ही है कि सब जीवनिकूं सुख होय, काहूकूं दुख न होय, जन्म जरा मरणरूप पारधीनकरि कोई जीव पीड्या न जाय। परन्तु ये जीव नानाप्रकारके कर्मनिकी स्थितिकूं धरै है, तातैं कौन विवेकी वृथा शोक करै। बांधवादिक इष्टपदार्थनिके दर्शनविषै प्राणिनिकूं तृप्ति नाहीं, तथा धन अर जीतव्य इनकरि तृप्ति नाहीं। इन्द्रियनिके सुख पूर्ण न होय सकै अर आयु पूर्ण होय तब जीव देहकूं तज और जन्म धरै, जैसे पक्षी वृक्षकूं तज चला जाय है। तुम पुत्रनिकी माता हो, पुत्रनिकूं ले आवो, पुत्रनिके राज्यका उदय देख विश्रामकूं भजो। मैं तो राज्यका अधिकार तज्या। पापक्रियातैं निवृत्त भया, भवभ्रमणतैं भयकूं प्राप्त भया। अब मैं मुनिव्रत धारूंगा या भांति राजा राणीनिसों कही।

निर्मोहताके निश्चयकू प्राप्त भया, सकल विषियाभिलाषरूप दोषनित रहित, सूय समान ह तज जाका सो पथ्वीम तप सयमका उद्योत करता भया।

इति श्रीरविषेणाचायविरचित महापद्मपुराण सस्कृत ग्रथ ताकी भाषावचनिकाविष दशरथका वराग्य वणन करनेवाला इकतीसवा पत्र पूण भया॥ ॥

अथानन्तर राम लक्ष्मण क्षणएक निद्रा कर अधरात्रिके समय जब मनुष्य सोय रह, लोकनिका शब्द मिट गया, अर अधकार फलगया ता समय भगवानकू नमस्कारकर बखतर पहिर, धनुष बाण लेय, सीताकू बीचमे लेकर चाले। घर घर दीपकनिका उद्योत होय रहा ह, कामीजन अनेक चेष्टा कर ह। ये दोऊ भाई महाप्रवीण नगरके द्वारकी खिडकीकी ओरसे निकसे, दक्षिण दिशाका पथ लिया। रात्रिके अतमें दौडकर सामत लोक आय मिले, राघवके सग चलनेकी ह अभिलाषा जिनके। दूरत राम लक्ष्मणकू देख महा विनयक भरे असवारी छोड प्यादे आए, चरणारविदको नमस्कारकरि निकट आय वचनालाप करते भए। बहुत सेना आई। अर जानकीकी बहुत प्रशसा करते भए जो याके प्रसादत हम राम लक्ष्मणको आय मिले, यह न होती तो ये धीरे धीरे न चलते तो हम कस पहुँचते। ये दोऊ भाई पवन समान शीघगामी ह अर यह सीता महासती हमारी माता ह। या समान प्रशसा योग्य पथ्वीविष और नाही। ये दोऊ भाई नरोत्तम सीताकी चाल प्रमाण मद मद दो कोस चाले। खेतनिविष नानाप्रकारके अन्न हरे होय रहे ह, अर सरोवरनिमे कमल फूल रहे ह, अर वक्ष महारमणीक दीख ह। अनेक ग्राम नगरादिमे ठौर ठौर लोक पूज ह, भोजनादि सामग्रीकरि, अर बडे बडे राजा बडी फौजसे आय मिले, जस वर्षाकालमे गगा जमुनाके प्रवाहविष अनेक नदियनिके प्रवाह आय मिल। कईएक सामत मागके खेदकरि इनका निश्चय जान आज्ञा पाय पीछे गए, अर कईएक लज्जाकर, कईएक भयकर कईएक भक्ति कर लार प्यादे चले जाय ह। सो राम लक्ष्मण क्रीडा करते

परियात्रा नामा अटवीविष पहुचे । कसी ह अटवी ? नाहर अर हाथीनिके समूहकरि भरी, महा भयानक, वक्षनिकर रात्रिसमान अधकारको भरी, जाके मध्य नदी ह, ताके तट आए जहा भीलनिका निवास ह, नानाप्रकारक मिष्टफल ह । आप तहा तिष्ठकर, कईएक राजनिकों विदा किया । अर कई एक पीछे न फिरे, रामने बहुत कहा तो भी सग ही चाले, सो सकल नदीको महा भयानक देखते भए। कसी ह नदी ? पवतनिसो निकसती महानील ह जल जाका, प्रचण्ड ह लहर जामें, महा शब्दायमान अनेक जे ग्राह मगर तिनकर भरी, दोऊ ढाहा विदारती कल्लोलनिके भयकर उडे ह तीरके पक्षी जहा, ऐसी नदी को देखकर सकल सामत त्रासकर कम्पायमान होय राम लक्ष्णकू कहते भए—हे नाथ ! कपाकर हमें भी पार उतारहु, हम सेवक भक्तिवत हमसे प्रसन्न होवो । हे माता जानकी ! लक्ष्मणसे कहो जो हमकू पार उतार । या भाति आसू डारते, अनेक नरपति नाना चेष्टाके करणहारे नदीविष पडने लगे । तब राम बोले अहो ! अब तुम पाछे फिरो । यह वन महा भयानक ह । हमारा तुमारा यहा लग ही सग हुता । पिताने भरतकू सबका स्वामी किया ह सो तुम भक्तिकर तिनकू सेवहु । तब वे कहते भए—हे नाथ ! हमारे स्वामी तुमही हो, महादयावान हो, हमपर प्रसन्न होवो, हमको मत छोडहु । तुम विना यह प्रजा निराश्रय भई, आकुलतारूप कहो कौनकी शरण जाय ? तुमसमान और कौन है ? व्याघ, सिह अर गजेन्द्र, सर्पादिकका भरा भयानक जो यह वन तामें तुम्हारे सग रहेंगे । तुम बिना हमार स्वगहु सखकारी नाहीं । तुम कही पाछे जावो सो चित्त फिर नाहीं, कसे जाहिं ? यह चित्त सबइन्द्रियनिका अधिपति याहीत कहिए ह जो अदभुत वस्तुमें अनुराग कर । हमारे भोगनिकर घरकर तथा स्त्री कुटुम्बादिकर कहा ? तुम नररत्न हो, तुमको छाड कहा जाहि ? हे प्रभो ! तुमने बालक्रीडाविष भी हमसो कबहू वचना न करी, अब अत्यन्त निठुरताकू धारौ हो । हमारा अपराध कहा ? तिहारे चरणरजकर परमवद्धिकू प्राप्त भए, तुम तो भत्यवत्सल हो । अहो माता जानकी ! अहो लक्ष्मण धीर ! हम सीस निवाय हाथ जोड विनती कर है, नाथकू हमपर प्रसन्न करहु । ये वचन

सबने कहे । तब सीता अर लक्ष्मण रामके चरणनिको ओर निरख रहे । राम बोले अब तुम पाछे जाहु । यही उत्तर है । सुखसों रहियो । ऐसा कहकर दोनो धीर नदीके विषै प्रवेश करते भए । श्रीराम सीताका कर गहि सुखसे नदीमें लेगए जस कमलीनिको दिग्गज लेजाय । वह असराल नदी राम लक्ष्मण के प्रभावकर नाभि प्रमाण बहने लगी । दोऊ भाई जलविहारविषै प्रवीण क्रीडा करते चले गए । सीता रामके हाथ गहें एसी शोभै मानो साक्षात लक्ष्मी ही कमलदलमें तिष्ठी है ।

राम लक्ष्मण क्षणमात्रविषै नदीपार भए, वृक्षनिके आश्रय आय गए । तब लोकनिकी दृष्टित अगोचर भए, तब कईएक तो विलाप करते आंसू डारते घरनिकूं गए, अर कईएक राम लक्ष्मणकी ओर धरी है दृष्टि जिनने सो काष्ठसे होय रहे । अर कईएक मूर्छा खाय धरतीपर पडे । अर कईएक ज्ञानको प्राप्त होय जिनदीक्षाको उद्यमी भए, परस्पर कहत भए जो धिक्कार है या असार संसारको, अर धिक्कार इन क्षणभंगुर भोगनिको, ये काले नागके फण समान भयानक हैं । ऐसे शूरवीरनिकी यह अवस्था, तो हमारी कहा बात ? या शरीरको धिक्कार, जो पानीके बुदबुदा समान निस्सार, जरा मरण इष्टवियोग अनिष्टसंयोग इत्यादि कष्टका भाजन । धन्य हैं वे महापुरुष, भाग्यवंत, उत्तम चेष्टाके धारक, जे मरकट (बंदर) की भौंह समान लक्ष्मीको चंचल जान तजिकर दीक्षा धरते भए । या भांति अनेक राजा विरक्त दीक्षाको सन्मुख भए । तिनने एक पहाडकी तलहटीमें सुन्दर वन देख्या । अनेक वृक्ष निकर मंडित, महासघन, नानाप्रकारके पुष्पनिकर शोभित, जहां सुगन्धके लोलुपी भ्रमर गुंजार कर हैं । तहां महापवित्र स्थानकमें तिष्ठते ध्यानाध्ययनविषै लीन महातपके धारक साधु देखे । तिनको ४१८
नमस्कारकर वे राजा जिननाथका जो चैत्यालय तहां गए । ता समय पहाडनिकी तलहटी तथा पहाड निके शिखरविषै, अथवा रमणीक वननिविषै, अथवा नदीनिके तटविषै, नगर ग्रामादिकविषै जिन मंदिर हुते तहां नमस्कारकरि एक समुद्र समान गम्भीर मुनिनके गुरु सत्यकेतु आचार्य तिनके निकट गए । नमस्कारकर महाशांतरसके भरे आचार्यसे वीनती करते भए—हे नाथ ! हमको संसार समुद्रत

पार उतारहु। तब मुनि कही तुमको भवपार उतारनहारी भगवती दीक्षा है सो अंगीकार करहु। यह मुनिकी आज्ञा पाय ये परम हर्षकूं प्राप्त भए। राजा विदग्धविजय मेरुक्रूर संग्रामलोलुप श्रीनाग दमन धीर शत्रुदमन अर विनोद कटक सत्यकठोर प्रियवधन इत्यादि निर्ग्रंथ होते भए। तिनका गज तुरग रथादि सकल साज सेवक लोकनिन जायकरि उनके पुत्रादिकनिकूं सौंप्या। तब वे बहुत चिंतावान भए। बहुरि समझकर नानाप्रकारके नियम धारते भए। कईएक सम्यग्दर्शनकूं अंगीकारकर संतोषकूं प्राप्त भये, कईएक निर्मल जिनेश्वरदेवका धर्म श्रवणकरि पापतैं पराङमुख भए। बहुत सामंत राम लक्ष्मणकी वार्ता सुन साधु भए। कईएक श्रावकके अणुव्रत धारते भए। बहुत राणी आर्यिका भईं, कईएक सुभट रामका सब वृत्तांत भरत दशरथपर जाकर कहते भए सो सुनकर दशरथ अर भरत कछु एक खेदकूं प्राप्त भए।

अथानन्तर राजा दशरथ भरतको राज्याभिषेक कर, कछुयक जो रामके वियोग कर व्याकुल भया हुता हृदय, सो समतामें लाय, विलाप करता जो अंतःपुर ताहि प्रतिबोधि, नगरतैं वनकूं गए। सर्वकूं भूतहित स्वामीको प्रणामकरि बहुत नृपनिसहित जिनदीक्षा आदरी। एकाकी विहारी जिनकल्पी भए। परम शुक्लध्यानकी है अभिलाषा जिनके तथापि पुत्रके शोककर कबहुक कछुएक कलुषता उपजै आवै सो एक दिन ये विचक्षण विचारते भए कि संसारके दुखका मूल यह जगतका स्नेह है। इसे धिक्कार हो, या करि कर्म बंधे हैं। मैं अनंत जन्म धरे, तिनविषैं गर्भ जन्म बहुत धरे, सो मेरे गर्भ जन्म के अनेक माता पिता भाई पुत्र कहां गये? अनेक बार मैं देवलोकके भोग भोगे, अर अनेक बार नरकके दुख भोगे, तिर्यंचगतिविषै मेरा शरीर अनेक बार इन जीवनिने भख्या, इनका मैं भख्या, नानारूप जे योनियें तिनविषैं मैं बहुत दुख भोगे, अर बहुत बार रुदन किया, अर रुदनके शब्द सुने, अर बहुत बार वीणाबांसुरी आदि वादित्रोंके नाद सुने, गीत सुने, नृत्य देखे, देवलोकविषै मनोहर अप्सरानिके भोग भोगे, अनेक बार मेरा शरीर नरकविषै कुल्हाडनि कर काटा गया, अर अनेक बार मनुष्यगतिविषै

महा सुगन्ध महावीर्यका करणहारा षटरस सयुक्त अन्न आहार किया, अर अनेकबार नरकविषै गला सीसा अर ताबा नारकियोने मार मार मुझे प्याया, अर अनेकवार सुर नर गतिविषै मनके हरणहारे सुन्दररूप देखे अर सुन्दररूप धारे, अर अनेकवार नरकविषै महाकुरूप धारे, अर नानाप्रकारके त्रास देखे, कईएक वार राजपद देवपदविषै नानाप्रकारके सुगन्ध सूंघे तिनपर भ्रमर गुंजार कर, अर कईएक वार नरककी महादुर्गंध सूंघी, अर अनेक वार मनुष्य तथा देवगतिविषै महालीलाकी धरणहारी वस्त्राभरण मंडित, मनकी चोरणहारी जे नारी तिनसो आलिंगन किया, अर बहुत वार नरकनिविषै कूटशाल्मलि वृक्ष तिनके तीक्ष्ण कंटक अर प्रज्वलित लोहकी पुतलीनिसे स्पर्श किया। या संसारविषै कर्मनिके संयोगतै मैं कहा कहा न देखा, कहा कहा न सूंघा, कहा कहा न सुना, कहा कहा न भखा ? अर पृथ्वीकाय, जलकाय, अग्निकाय, वायुकाय, वनस्पतिकाय, त्रसकायविषै ऐसा देह नाहीं जो मैं न धारा, तीनलोकविषै ऐसा जीव नाहीं जासूं मेरे अनेक नाते न भए। ये पुत्र मेरे कईवार पिता भए, माता भए, शत्रु भये, मित्र भये, ऐसा स्थानक नाहीं जहां मैं न उपजा न मुआ। ये देह भोगादिक अनित्य, या जगतविषै कोई शरण नाही, यह चतुर्गतिरूप संसार दुखका निवास है, मैं सदा अकेला हूं। ये षटद्रव्य परस्पर सबही भिन्न हैं यह काय अशुचि, मैं पवित्र। ये मिथ्यात्वादि अव्रतादि कर्म आस्रवके कारण हैं। सम्यक्त व्रत संयमादि संवरके कारण हैं। तपकर निर्जरा होय है। यह लोक नानारूप, मेरे स्वरूपतै भिन्न। या जगतविषै आत्मज्ञान दुर्लभ है। अर वस्तुका जो स्वभाव सोई धर्म तथा जीवदया धर्म सो मैं महाभाग्यतै पाया। धन्य ये मुनि जिनके उपदेशतै मोक्षमार्ग पाया। सो अब पुत्रनिकी कहा चिंता ? ऐसा विचारकर दशरथ मुनि निर्मोहदशाकूं प्राप्त भए। जिन देशोमें पहिलै हाथी चढे चमर ढुरते छत्र फिरते हुते अर महारण संग्रामविषै उद्धत वैरिनिकूं जीते तिन देशनिविषै निर्ग्रंथ दशा धरे, बाईस परीषह जीतते शांतिभाव संयुक्त विहार करते भए।

अर कौशल्या तथा सुमित्रा पतिके वैरागी भए अर पुत्रनिके विदेश गए महाशोकवती भई, निर-

तर अश्रुपात डारें। तिनके दुःखकूं देख, भरत राज्य विभूतिको विषसमान मानता भया। अर केकई तिनकूं दुखी देख उपजी है करुणा जाके पुत्रको कहती भई—हे पुत्र! तू राज्य पाया, बडे बडे राजा सेवा कर हैं परन्तु राम लक्ष्मण विना यह राज्य शोभै नाहीं। सो वे दोऊ भाई महाविनयवान उन विना कहा राज्य? अर कहा सुख, अर कहा देशकी शोभा, अर कहा तेरी धर्मज्ञता? वे दोऊ कुमार अर वह सीता राजपुत्री सदा सुखके भोगनहारे, पाषाणादिककर पूरित जे मार्ग तिनविषै वाहन विना कैसे जावेंगे? अर तिन गुणसमुद्रनिकी ये दोनो माता निरंतर रुदन कर हैं सो मरणकूं प्राप्त होयगी। तात तुम शीघ्रगामी तुरगपर चढ सिताबी जावो, उनको ले आवो, तिनसहित महासुखसो चिरकाल राज करियो। अर मैं भी तेरे पीछे ही उनके पास आऊं हूं। यह माताकी आज्ञा सुन बहुत प्रसन्न होय ताकी प्रशंसा कर अति आतुर भरत हजार अश्वसहित रामके निकट चला। अर जे रामके समीप वापिस आए हुते तिनकूं संग ले चला। आप तेज तुरगपर चढा उतावली चाल वनविषै आया। वह नदी असराल बहती हुती तो तामें वृक्षनिके लठे गेर बेडे बांध क्षणमात्रमें सेना सहित पार उतरे। मार्गविषै नरनारिनसो पूछते जाय जो तुम राम लक्ष्मण कहीं देखे? वे कहैं हैं यहांते निकट ही है सो भरत एकाग्रचित्त चले गए। सघन वनमें एक सरोवरके तटपर दोऊ भाई सीता सहित बैठे देखे, समीप हैं धनुष बाण जिनके। सीताके साथ ते दोऊ भाई घने दिवसविषै आए अर भरत छह दिनमें आया। रामकूं दूरते देख भरत तुरंगत उतर पायपियादा जाय रामके पायन पर मूर्छित होय गया। तब राम सचेत किया। भरत हाथ जोड सिर निवाय रामसूं वीनती करता भया—

जो हे नाथ! राज्य देयवेकर मेरी कहा विडम्बना करी? तुम सब न्यायमार्गके जाननहारे महा प्रवीण मेरे या राज्य करि कहा प्रयोजन? तुम विना जीवेकर कहा प्रयोजन? तुम महा उत्तम चेष्टाके धरणहारे मेरे प्राणनिके आधार हो। उठो अपने नगर चलें। हे प्रभो! मोपर कृपा करहु, राज्य तुम करहु, राज्य योग तुम ही हो, मोहि सुखकी अवस्था देहु। मैं तिहारे सिरपर छत्र फेरता खडा

रहू गा। अर शत्रुघन चमर ढारेगा, अर लक्ष्मण मन्त्रीपद धारेगा, मेरी माता पश्चातापरूप अग्निकर जर है। अर तिहारी माता अर लक्ष्मणकी माता महाशोक कर है। यह बात भरत कर है ताही समय शीघ्र रथपर चढी अनेक सामंतनिसहित महाशोककी भरी केकई आई, अर राम लक्ष्मणकूं उरसूं लगाय बहुत रुदन करती भई। रामने धीर्य बधाया, तब केकई कहती भई—हे पुत्र! उठो, अयोध्या चालो, राज्य करहु, तुम विन मेरे सकल पुर वन समान है अर तुम महा बुद्धिमान हो, भरतकूं सिखायलेहु। बहुरि हम स्त्रीजन नष्टबुद्धि हैं मेरा अपराध क्षमा करहु। तब राम कहते भये—हे मात! तुम तो बातनिविषै प्रवीण हो। तुम कहा न जानो हो, क्षत्रियनिका यही विरुद है जो वचन न चूकैं, जो कार्य विचारया ताहि और भांति न करैं। हमारे तातने जो वचन कह्या सो हमकूं, अर तुमकूं निवाहना, या बातविषै भरतकी अकीर्ति न होयगी। बहुरि भरतसूं कहा कि—हे भाई! तू चिंता मत कर, तू अनाचारतैं शंकै है सो पिताकी आज्ञा अर हमारी आज्ञा पालवेतैं अनाचार नाहीं। ऐसा कहकर वनविषै सब राजानिके समीप भरतका श्रीरामने राज्याभिषेक किया। अर केकईकूं प्रणामकर बहुत स्तुतिकर बारम्बार सभाषणकर, भरतकूं उरसूं लगाय, बहुत दिलासा करी, नीठि नीठि विदा किया। केकई अर भरत राम लक्ष्मण सीताके समीपतैं पाछे नगरकूं चाले। भरत रामकी आज्ञा प्रमाण प्रजाका पिता समान हुआ राज्य करै। जाके राज्यविषै सव प्रजाकूं सुख, कोई अनाचार नाहीं, ऐसा निःकंटक राज्य है तौहू भरतका क्षणमात्र राग नाहीं। तीनो काल श्रीअरनाथकी वंदना करै है। अर मुनिनके मुखतैं धर्मश्रवण करै। द्युति भट्टारक नामा जे मुनि, अनेक मुनि करै हैं सेवा जिनकी, तिनके निकट भरतने यह नियम लिया कि रामके दर्शनमात्रतैं ही मुनिव्रत धारूंगा।

तब मुनि कहते भये कि—हे भव्य! कमल सारिखे हैं नेत्र जिनके, ऐसे राम जो लग न आवैं तौ लग तुम गृहस्थके व्रत धारहु। जे महात्मा निर्ग्रंथ हैं तिनका आचरण अति विषम है। सो पहिले श्रावकके व्रत पालने, तासूं यतिका धर्म सुखसूं सधै। जब वृद्ध अवस्था आवैगी तब तप करेंगे, यह वार्ता कहते हुते।

अनेक जडबुद्धि मरणकू प्राप्त भए। महा अमोलक रत्नसमान यतिका धर्म जाकी महिमा कहनेविषै न आवै ताहि जे धारै हैं तिनकी उपमा कौनकी देहि। यतिके धर्मतै उतरता श्रावकका धर्म है, सो जे प्रमादरहित करै हैं ते धन्य हैं। यह अणुव्रत हू प्रबोधका दाता है। जैसे रत्नद्वीपविषै कोऊ मनुष्य गया अर वह जो रत्न लेय सोईदेशांतरविषै दुर्लभ है, तैसे जिनधर्म नियमरूप रत्ननिका द्वीप है, ताविषै जो नियम लेय सोई महाफलका दाता है। जो अहिंसारूप रत्नकू अंगीकारकर जिनवरकू भक्तिकर अरचै सो सुरनरके सुख भोग मोक्षकू प्राप्त होय। अर जो सत्यव्रतका धारक मिथ्यात्वका परिहारकर भावरूप पुष्पनिकी माला कर जिनेश्वरकू पूजै है ताकी कीर्ति पृथ्वीविषै विस्तरै है, अर आज्ञा कोई लोप न सकै। अर जो परधनका त्यागी जिनेंद्रकू उरविषै धारै, बारम्बार जिनेन्द्रकू नमस्कार करै सो नव निधि चौदह रत्नका स्वामी होय अक्षयनिधि पावै। अर जो जिनराजका मार्ग अंगीकार कर परनारीका त्याग करै सो सबके नेत्रनिकू आनन्दकारी मोक्षलक्ष्मीका वर होय। अर जो परिग्रहका प्रमाण कर संतोष धर जिनपतिका ध्यान करै सो लोकपूजित अनन्त महिमाकू पावै, अर आहारदानके पुण्यकर महा सुखी होय ताकी सब सेवा करैं। अर अभयदानकर निर्भयपद पावै, सर्व उपद्रवतै रहित होय। अर ज्ञानदानकर केवलज्ञानी होय सर्वज्ञपद पावै। अर औषधिदानके प्रभावकर रोगरहित निर्भयपद पावै। अर जो रात्रिकू आहारका त्याग करै सो एक वर्षविषै छह महीनाका उपवासका फल पावै। यद्यपि गृहस्थपदके आरम्भविषै प्रवृत्त हैं तो हू शुभगतिके सुख पावै। जो त्रिकाल जिनदेवकी वंदना करै ताके भाव निर्मल होय, सर्व पाप का नाश करैं। अर जो निर्मल भावरूप पहुपनिकरि जिननाथकू पूजै सो लोकविषै पूजनीक होय। ४१६ अर जो भोगी पुरुष कमलादि जलके पुष्प तथा केतकी मालती आदि पृथ्वीके सुगंध पुष्पनिकर भगवानकू अरचै सो पुष्पकविमानकू पाय यथेष्ट क्रीडा करै। अर जो जिनराजपर अगर चंदनादि धूप खेवै सो सुगन्ध शरीर का धारक होय। अर जो गृहस्थी जिनमंदिरविषै विवेकसहित दीपोद्योत करै सो देवलोकविषै प्रभाव संयुक्त शरीर पावै। अर जो जिनभवनविषै छत्र चमर झालरी पताका दर्पण

आदि मंगलद्रव्य चढावै अर जिनमंदिरकूं शोभित करै सो आश्चर्यकारी विभूति पावै। अर जो जल चंदनादित जिनपूजा करै—जो मनुष्य सुगंधि से दिशाओं को व्याप्त करने वाली गंध से जिनेन्द्र भगवान का लेपन करता है[1] वह देवनिका स्वामी होय महा निर्मल सुगंध शरीर जे देवांगना तिनका वल्लभ होय। अर जो नीरकर जिनेन्द्रका अभिषेक करै सो देवनिकर मनुष्यनिकर सेवनीक चक्रवर्ती होय, जाका राज्याभिषेक देव विद्याधर करै। अर जो दुग्धकरि अरहंतका अभिषेक करै सो क्षीरसागरके जलसमान उज्ज्वल विमानविषै परम कांति धारक देव होय, बहुरि मनुष्य होय मोक्ष पावै। अर जो दधिकर सर्वज्ञ वीतरागका अभिषेक करै सो दधि समान उज्ज्वल यशकूं पायकर भवोदधिकूं तरै। अर जो घृतकर जिननाथका अभिषेक करै सो स्वर्ग विमानमें महाबलवान देव होय परम्पराय अनंतवीर्यकूं धरै। अर जो ईखरसकर जिननाथका अभिषेक करै सो अमृतका आहारी सुरेश्वर होय नरेश्वर पद पाय मुनीश्वर होय अविनश्वर पद पावै। अभिषेकके प्रभावकर अनेक भव्यजीव देव अर इन्द्रनिकरि अभिषेक पावते भए, तिनकी कथा पुराणनिमें प्रसिद्ध है। जो भक्तिकर जिनमंदिर विषै मयूर पिच्छादिककर बुहारी देय सो पापरूप रजतै रहित होय परम विभूति आरोग्यता पावै। अर जो गीत नृत्य वादित्रादिकर जिनमंदिरविषै उत्सव करै ते स्वर्गविषै परम उत्साहकूं पावैं। अर जो जिनेश्वरके चैत्यालय करावै सो ताके पुण्यकी महिमा कौन कह सकै? सुरमंदिरके सुखभोग परंपराय अविनाशीधाम पावै। अर जो जिनेन्द्रकी प्रतिमा करावै सो सुरनरके सुख भोगि परमपद पावै। व्रत विधान तप दान इत्यादि शुभ चेष्टानिकरि प्राणी जे पुण्य उपारजे है सो समस्त कार्य जिनबिंब करावनेके तुल्य नाहीं। जो जिनबिंब करावै सो परंपराय पुरुषाकार सिद्धपद पावै। अर जो भव्य जिनमंदिरके शिखर चढावै सो इन्द्र धरणेंद्र चक्रवर्त्यादिक सुख भोग लोकके शिखर पहुँचै। अर जो जीर्ण जिनमंदिरनिकी मरम्मत करावै सो कर्मरूप अजीर्णकूं हरै निर्भय निरोगपद पावै। अर जो

---

१ समालभ्य जिनान् गंधैः सौरभ्य व्याप्तदिङ्मुखैः। सुरभिः प्रमदानन्दो जायते दयितः पुमान्॥ १६४॥ पद्मपुराण पर्व ३२ वाँ (ज्ञानपीठ काशी से प्रकाशित)।

४२०

नवीन चत्यालय कराय जिनबिंब पधराय प्रतिष्ठा कर सो तीन लोकविष प्रतिष्ठा पाव। अर जो सिद्धक्षेत्रादि तीथनिकी यात्रा कर सो मनुष्यजन्म सफल कर। अर जो जिनप्रतिमाके दशनका चितवन कर ताहि एक उपवासका फल होय। अर दशनको उद्यमका अभिलाषी होय सो बेलाका फल पाव। अर जो चत्यालय जायवेका आरम्भ कर ताहि तेलाका फल होय, अर गमन किए चौलाका फल होय। कछुएक आगे गए पच उपवासका फल होय, आधी दूर गए पक्षोपवासका फल होय, अर, चैत्यालयके दशनतें मासोपवासका फल होय, अर भाव भक्तिकर महास्तुति किए अनन्त फल प्राप्ति होय। जिनेन्द्रकी भक्ति समान और उत्तम नाहीं। अर जो जिनसूत्र लिखवाय ताका व्याख्यान कर, करावें, पढे पढावें, सुनें सुनावें, शास्त्रनिकी तथा पडितनिकी भक्ति कर वे सर्वागके पाठी होय केवल पद पावें। जो चतुर्विध सघकी सेवा कर सो चतुगतिके दुख हर पचमगति पाव। मुनि कह हैं—हे भरत! जिनेंद्रकी भक्तिकर कम क्षय होय। अर कम क्षय भए—अक्षयपद पाव। यें वचन मुनिके सुन राजा भरत प्रणामकर श्रावकका व्रत अगीकार किया। भरत बहुश्रुत, अतिधमज्ञ, महाविनयवान, श्रद्धावान, चतुर्विध सघकू भक्तिकर अर दुखित जीवनिकू दयाभावकर दान देता भया। सम्यग्दशन रतनकू उरविष धारता, अर महासुन्दर श्रावकके व्रतविषै तत्पर न्यायसहित राज्य करता भया।

भरत गुणनिका समुद्र ताका प्रताप अर अनुराग समस्त पृथ्वीविषै विस्तरता भया। ताके देवागना समान ड्योढ सौ राणी तिनविषै आसक्त न भया, जलमें कमलकी न्याई अलिप्त रहा, जाके चित्तमें निरन्तर यह चिंता वरते कि कब यतिके व्रत धरू, तप करू, निर्ग्रंथ हुवा पृथ्वीविषै विचरू। धन्य हैं वे पुरुष जे धीर सव परिग्रहका त्याग कर तपके बल कर समस्त कमनिकू भस्मकर सारभूत जो निर्वाणका सुख सो पावे ह। म पापी ससारविषै मग्न प्रत्यक्ष देखू हू जो यह समस्त ससारका चरित्र क्षणभगुर है, जो प्रभात देखिये सो मध्याह्नविषै नाहीं। मैं मूढ होय रहा हू। जे रक विषयाभिलाषी ससारमें राच है ते खोटी मृत्यु मरे है, सप, व्याघ्र, गज, जल, अग्नि शस्त्र विद्युत्पात शूलारोपण

असाध्य रोग इत्यादि कुरीतित शरीर तजेंगे। यह प्राणी अनेक सहसो सुख का भोगनहारा ससारविषै भ्रमण कर ह बडा आश्चय ह ! अल्प आयुमें प्रमादी होय रहया ह । जस कोई मदोन्मत्त क्षीरसमुद्रके तट सूता तरगोके समूहसे न डर तस म मोहकर उन्मत्त भव भ्रमणसे नाहीं डरू हू, निभय होय रहा हू। हाय हाय ! म हिसा आरम्भादि अनेक जे पाप तिनकरि तिप्त म राज्य कर कौनसे घोर नरक में जाऊगा। कसा ह नरक ? बाण खडग चक्रके आकार तीक्ष्ण पत्र ह जिनके, ऐसे शाल्मलीवक्ष जहाँ ह। अथवा अनेक प्रकार तियञ्चगति ताविष जावू गा। देखो ! जिनशास्त्र सारिखा महाज्ञान रूप शास्त्र ताहूको पाय करि मेरा मन पाप युक्त होय रहया ह। निस्पह होकर यतिका धम नाहीं धार ह सो न जानिए कौन गति जाना ह ? ऐसी कमनिकी नाशनहारी जो धमरूप चिता ताकू निरन्तर प्राप्त हुआ जो राजा भरत सो जनपुराणादि ग्रन्थनिके श्रवणविष आसक्त ह, सदव साधुनकी कथाविषै अनुरागी, रात्रि दिन धममें उद्यमी होता भया।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण सस्कृत ग्रथ ताकी भाषावचनिकाविष दशरथका वराग्य रामका विदेशगमन भरतका रा य वणन करनवाला वत्तीसवां पव पूण भया ॥ ३२ ॥

अथानन्तर श्री रामचन्द्र लक्ष्मण सीता जहा एक तापसीका आश्रम ह तहा गए। अनेक तापस जटिल नानाप्रकारके वक्षनिके वक्कल पहिरे, अनेकप्रकारका स्वादुफल तिनकर पूण है मठ जिनके, वन विषै वक्षसमान बहुत मठ देखे। विस्तीण पत्तोकर छाए ह मठ जिनके, अथवा घासके फूलनिकर आच्छादित ह निवास जिनके, बिना बोये सहज ही उगे जे धान्य ते उनके आगनमें सूके ह, अर मग भयरहित आगनमें बठे जुगाले ह, अर तिनके निवास विषै सूवा मना पढे ह, अर तिनके मठनिके समीप अनेक गुलक्यारी लगाय राखी ह, सो तापसनिकी कन्या मिष्ट जलकर पूण जे कलश ते थावलनिमे डार हे। श्रीरामचन्द्रकू आए जान तापस नानाप्रकारके मिष्टफल सुगन्ध पुष्प मिष्टजल इत्यादिक सामग्रीनि ४२२

कर बहुत आदरतें पाहुन गति करते भए। मिष्ट वचनका सभाषणकर रहनेको कुटी, मधुपल्लवनकी शय्या इत्यादि उपचार करते भए। ते तापस सहज ही सबनिका आदरै कर है, इनको महा रूपवान अदभुत पुरुष जान बहुत आदर किया। रात्रिकू वसकर ये प्रभात उठकर चाले। तब तापस इनकी लार चाले, इनके रूपकू देख अनुरागी होते हुए पाषाण हू पिघल तौ मनुष्यनिकी कहा बात ? ते तापस सूके पत्रनिके आहारी इनके रूपकू देख अनुरागी होते भए। जे वद्ध तापस है ते इनकू कहते भये—तुम यहा ही रहो तौ यह सखका स्थानक ह अर कदाचित न रहो तौ या अटवीविष सावधान रहियो। यद्यपि यह वनी जल फल पुष्पादिकर भरी ह तथापि विश्वास न करना। नदी वनी नारी ये विश्वास योग्य नाहीं। सो तुम तो सव बातनिमे सावधान ही हो। फिर राम लक्ष्मण सीता यहात आग चाले। अनेक तापसिनी इनके देखवेकी अभिलाषाकरि बहुत विह्वल भई सती दूरलग पत्र पुष्प फल इधनादिकके मिसकर साथ चली आई। कईएक तापसिनी मधुर वचनकर इनकू कहती भई जो तुम हमारे आश्रमविष क्यो न रहो, हम तिहारी सब सेवा कर। यहात तीन कोसपर ऐसी वनी ह जहा महासघन वक्ष ह, मनुष्यनिका नाम नाहीं। अनेक सिह व्याघ दुष्ट जीवनिकर भरी, जहा ईधन अर फल फूलके अथ तापसहू न आव। डाभकी तीक्ष्ण अणीनिकर जहा सचार नाहीं। वन महा भयानक ह। अर चित्रकूट पवत अति ऊचा दुलघ्य विस्तीण पड्या ह, तुम कहा नहीं सुन्या ह जो निशक चले जावो हो ? तब राम कहते भए अहो तापसिनी हो ! हम अवश्य आगे जावगे, तुम अपने स्थानक जाहु। कठिनतात तिनकू पाछे फेरी। ते परस्पर इनके गुण रूपका वणन करती अपने स्थानक आई। ये महा गहन वनविष प्रवेश करते भए। कसा ह वह वन ? पवतके पाषाणनिके समूहकरि महा ककश, अर बडे बडे जे वक्ष तिनपर आरूढ बेलनिके समूह जहा, अर क्षुधाकर अति क्रोधायमान जे शादूल तिनके नखनिकर विदारे गए ह वृक्ष जहा, अर सिंहनिकर हते गए जे गजराज तिनके रुधिरकर रक्त भए जे मोती सो ठौर २ विखर रहे ह। अर माते जे गजराज तिनकर

भग्न भये है तरुवर जहां, अर सिंहनीकी ध्वनि सुनकर भाग रहे हैं कुरंग जहां, अर सूते जे अजगर तिनके श्वासनिकी पवनकरि गूंज रही है गुफा जहाँ, सूकरनिके समूहकर कर्दमरूप होय रहे हैं तुच्छ सरोवर जहाँ, अर महा अरण्य भैंसे तिनके सींगनकर भग्न भए हैं वबइयनिके स्थल जहां, अर फणकूं ऊंचे किये फिरे हैं भयानक सर्प जहाँ अर कांटनिकर बींधा है पूंछका अग्रभाग जिनका—ऐसी जे सुरगाय सो खेदखिन्न भई हैं, अर फल रहे हैं कटेरी आदि अनेक प्रकारके कंटक जहां, अर विष पुष्पनिकी रजकी वासनाकर घूमे हैं अनेक प्राणी जहाँ, अर गडानिके नखनिकर विदारे गए हैं वृक्षनिके पींड जहां अर भ्रमते रोझनके समूह तिनकर भग्न भए हैं पल्लवनिके समूह जहां, अर नानाप्रकारके जे पक्षिनिके समूह तिनके जो क्रूर शब्द उनकर वन गूंज रह्या है, अर बंदरनिके समूह तिनके कूदनेकर कम्पायमान है वृक्षनिकी शाखा जहां, अर तीव्र वेगकूं धरें पर्वतमों उतरती जे नदी तिनकर पृथ्वीविषै पड गया है दाहना जहां अर वृक्षनिके पल्लवनिकर नाहीं दीखै है सूर्यकी किरण जहाँ, अर नानाप्रकारके फल फूल तिनकर भरा, अनेक प्रकारकी फल रही है सुगन्ध जहां, नानाप्रकारकी जे औषधि तिनकरि पूर्ण, अर वनके जे धान्य तिनकरि पूरित, कहूं एक नील कहूं एक रक्त, कहूं एक हरित नानाप्रकार वर्णकूं धरै जो वन तामैं दोऊ वीर प्रवेश करते भये। चित्रकूट पर्वतके महामनोहर जे नीझरने तिनविषै क्रीडा करते, वनकी अनेक सुन्दर वस्तु देखते, परस्पर दोऊ भाई बात करते, वनके मिष्टफल आस्वादन करते, किन्नर देवनिके हू मनकूं हरै ऐसा मनोहर गान करते, पुष्पनिके परस्पर आभूषण बनावते सुगन्धद्रव्य अंगविषै लगावते, फूल रहे हैं सुन्दर नेत्र जिनके, महा स्वछन्द अत्यन्त शोभाके धारणहारे, सुरनर नागनिके मनके हरणहारे, नेत्रनिकूं प्यारे, उपवनकी नाईं भीम वनमें रमते भए। अनेक प्रकारके सुन्दर जे लतामण्डप तिनविषै विश्राम करते, नानाप्रकारकी कथा करते, विनोद करते, रहस्यकी बात करते, जैसे नन्दनवनविषै देव भ्रमण करै तैसे अतिरमणीक लीलासूं वनविहार करते भये।

पद्म पुराण ४५

अथानन्तर साढे चार मासमें मालव देशविषै आए। सो देश अत्यन्त सुन्दर, नानाप्रकारके धान्यो कर शोभित, जहाँ ग्राम पट्टन घने, सो केतीक दूर आयकर देखे तो बस्ती नाहीं, तब एक बटकी छाया बैठ दोऊ भाई परस्पर बतलावते भये जो काहेते यह देश उजाड दीखै है? नानाप्रकारके खेत फल रहे है अर मनुष्य नाहीं, नानाप्रकारके वृक्ष फलफूलनिकर शोभित हैं, अर पौंडे साठेके बाड बहुत है, अर सरोवरनिमें कमल फूल रहे है। नानाप्रकारके पक्षी केलि कर रहे है। यह देश अति विस्तीर्ण मनुष्यनिके संचार विना शोभै नाहीं, जैसे जिनदीक्षाकू धर मुनि वीतराग भावरूप परम संयम बिना शोभै नाहीं। ऐसी सुन्दर वार्ता राम लक्ष्मणसू करै है। तहां अत्यन्त कोमल स्थानक देख रत्नकम्बल बिछाय श्रीराम बैठे, निकट धरया है धनुष जिनके, अर सीता प्रेमरूप जलकी सरोवरी श्रीरामकेविषै आसक्त है मन जाका, सो समीप बैठी। श्रीरामने लक्ष्मणकू आज्ञा करी तू बट ऊपर चढकर देख कछु बस्ती दीखै है। सो आज्ञा प्रमाण देखता भया अर कहता भया कि हे देव! विजयार्ध पर्वत समान ऊंचे जिनमंदिर दीखै है, जिनके शरदके बादल समान शिखर शोभै है, ध्वजा फरहरै है, अर ग्राम हू बहुत दीखै है, कूप वापी सरोवरनि करि मंडित है, अर विद्याधरनिके नगर समान दीखै है, खेत फल रहे है परन्तु मनुष्य कोई नाहीं दीखै है। न जानिये लोक परिवार सहित भाज गये है अथवा क्रूरकर्मके करणहारे म्लेच्छ बांधकर लेगये है। एक दरिद्री मनुष्य आवता दीखै है। मृगसमान शीघ्र आवै है। रूक्ष है केश जाके, अर मलकर मंडित है शरीर जाका, लम्बी दाढी कर आच्छादित है उरस्थल, अर फाटे वस्त्र पहिरे, फाटे है चरण जाके, ढरै है पसेव जाके, मानो पूर्व जन्मके पापकू प्रत्यक्ष दिखावै है। तब राम आज्ञा करी जो शीघ्र जाय याकू ले आव, तदि लक्ष्मण बटतें उतर दरिद्रीके पास गये। तब दरिद्री लक्ष्मणकू देख आश्चर्यकू प्राप्त भया। जो यह इन्द्र है, वरुण है अथवा नागेन्द्र है, तथा नर है, किन्नर है, चन्द्रमा है, सूर्य है, अग्नि-कुमार है कि कुबेर है। यह कोऊ महातेजका धारक है, ऐसा विचारता संता डरकर मूर्छा खाय भूमिविषै गिर पडया। तब लक्ष्मण कहते भए—हे भद्र! भय न

करहु, उठ उठ, ऐसा कहि उठाया, अर बहुत दिलासाकरि श्रीरामके निकट ले आया। सो दरिद्री पुरुष क्षुधा आदि अनेक दुखनिकर पीडित हुतो सो रामकू देख सब दुख भूल गया। राम महासुन्दर सौम्य ह मुख जिनका, कातिके समूहत विराजमान, नेत्रनिकू उत्साहके करणहारे, महाविनयवान, जिनके सीता समीप बठी ह। सो मनुष्य हाथ जोड सिर पथ्वीसू लगाय नमस्कार करता भया। तब आप दयाकर कहते भए—तू छायाविष आय बठ भय न करि। तब वह आज्ञा पाय दूर बठ्या। रघुपति अमतरूप वचनकर पूछते भए—तेरा नाम कहा, अर कहात आया, अर कौन ह ? तब वह हाथ जोडि विनती करता भया। हे नाथ! म कुटुम्बी (कुनवी) हू। मेरा नाम सीरगुप्ति ह दूरत आऊ हू। तब आप बोले यह देश उजाड काहेत ह ? तब वह कहता भया हे देव! उज्जयनी नाम नगरी, ताके पति राजा सिहोदर प्रसिद्ध, प्रतापकर नवाए ह बडे २ सामत जान, देर्वान समान ह विभव जाका। अर एक दशागपुरका पति वज्रकण सो सिहोदरका सेवक अत्यन्त प्यारा सुभट, जान स्वामीके बडे २ काय किये। सो निग्रथ मुनिकू नमस्कारकर धमश्रवणकर तान यह प्रतिज्ञा करी जो म देव गुरु शास्त्र टार औरनिकू नमस्कार न करू। साधुके प्रसादकर ताकू सम्यग्दशनकी प्राप्ति भई सो पृथ्वीविष प्रसिद्ध ह। आप कहा अब लो वाकी वार्ता न सुनी ? तब लक्ष्मण रामके अभिप्रायत पूछते भये जो वजकणपर कौन भाति सतनकी कृपा भई। तब पथी कहता भया—हे देवराज! एकदिन वजकण दसारण्य वनविष मग याकू गया हुता, जन्महीत पापी क्रूरकमका करणहारा, इन्द्रियनिका लोलुपी, महामूढ, शुभक्रियात पराङ्मुख महासूक्ष्म जिनधमकी चर्चा सो न जान, कामी क्रोधी लोभी अध, भोग सेवनकर उपजा जो गव सोई भया पिशाच, ताकर पीडित, सो वनविष भमण कर—सो ताने ग्रीष्म समयविष एक शिलापर तिष्ठता सता सत्पुरुषनिकर पूज्य ऐसा महामुनि देख्या। चार महीना सूयकी किरणका आताप सहन हारा महातपस्वी पक्षीसमान निराश्रय सिहसमान निभय सो तप्तायमान जो शिला ताकर तप्त शरीर ऐसे दुजय तीवतापका सहनहारा सज्जन। सो ऐसे तपोनिधि साधुकू देख वजकण तुरगपर चढ्या

बरछी हाथमें लिए, कालसमान महाक्रूर पूछता भया। कैसे हैं साधु? गुणरूप रत्ननिके सागर, परमार्थके वेत्ता, पापनिके घातक, सब जीवनिके दयालु, तपोविभूतिकर मंडित तिनसूं वज्रकर्ण कहता भया।

हे स्वामी! तुम या निर्जन वनविषै कहा करो हो? ऋषि बोले—आत्मकल्याण करै है जो पूर्वे अनन्त भवविषै न आचरया। तब वज्रकर्ण हंसकर कहता भया या अवस्थाकरि तुमकूं कहा सुख है? तुम तपकर रूपलावण्यरहित शरीर किया। तिहारे अर्थ काम नाहीं, वस्त्राभरण नाहीं, कोई सहाई नाहीं। स्नान सुगन्ध लेपनादि रहित हो, पराए घरनिके आहार कर जीविका पूरी करो हो, तुम सारिखे मनुष्य कहा आत्महित करैं? तब याकूं काम भोग कर अत्यन्त आर्तिवंत देख महादयावान संयमी बोले—कहा तूने महा घोर नरककी भूमि न सुनी है जो तू उद्यमी होय पापनिविषै प्रीति करै है? नरककी महाभयानक सात भूमि हैं ते महादुर्गधमई देखी न जाय, स्पर्शी न जाय, सुनी न जाय, महातीक्ष्ण लोहेके कांटेनिकर भरी। जहां नारकीनिकूं घानीमें पेलै है, अनेक वेदना त्रास होय है, छुरियो कर तिल तिल काटिए है, अर ताते लोह समान ऊपरले नरकनिका पृथ्वीतल अर महाशीतल नीचले नरकनिका पृथ्वीतल ताकर महा पीड़ा उपजै है। जहां महाअंधकार महाभयानक रौरवादि गर्त, असिपत्रवन, महा दुर्गंध वैतरणी नदी जे पापी माते हाथिनिकी न्याईं निरंकुश है ते नरकविषै हजारां भांतिके दुःख देखै हैं। हम तोहि पूछै है तो सारिखे पापारंभी विषयातुर कहा आत्महित करै है? ये इन्द्रायणके फलसमान इन्द्रियनिके सुख तू निरंतर सेय कर सुख मानै है सो इनमें हित नाहीं, ये दुर्गतिके कारण हैं। आत्माका हित वह करै है जो जीवनिकी दया पाले, मुनिके व्रत आदरै, निर्मल है चित्त जिनका। जे महाव्रत तथा अणुव्रत नाहीं आचरै हैं ते मिथ्यात्व अव्रतके योगतै समस्त दुःखके भाजन होय हैं। तैने पूर्वजन्मविषै कोई सुकृत किया हुता ताकर मनुष्य देह पाया। अब पाप करैगा तो दुर्गति जायगा। ये विचारे निर्बल निरपराध मृगादि पशु अनाथ, भूमि ही है शय्या जिनके, चंचल

नेत्र सदा भयरूप, वनके तृण अर जल कर जीवनहारे, पूर्व पापकर अनेक दुखनिकर दुखी, रात्रि हू निद्रा न कर, भयकर महा कायर, सो भले मनुष्य ऐसे दीननिकू कहा हनें ? तातैं जो तू अपना हित चाहै है तो मन वचन काय कर हिंसा तज, जीवदया अंगीकार करि। ऐसे मुनिके श्रेष्ठ वचन सुनि वज्रकर्ण प्रतिबोधकू प्राप्त भया। जैसे फला वृक्ष नय जाय तैसे साधुके चरणारविंदकू नय गया, अश्वतैं उतर साधुके निकट गया। हाथ जोड प्रणाम कर अत्यन्त विनयकी दृष्टि कर चित्तमें साधुकी प्रशंसा करता भया। धन्य है ये मुनि परिग्रहके त्यागी, जिनकू मुक्तिकी प्राप्ति होय है। अर या वनके पक्षी अर मृगादि पशु प्रशंसा योग्य हैं जे इस समाधिरूप साधुका दर्शन करें हैं। अर अति धन्य हू मैं जो मोहि आज साधुका दर्शन भया। ये तीन जगतकर वंदनीक हैं, अब मैं पापकर्मतैं निवृत्त भया। ये प्रभू ज्ञानस्वरूप नखनिकर बंधुस्नेहमई संसार रूप जो पींजरा, ताहि छेदकर सिंहकी न्याई निकसे। ते साधु देखो मनरूप वैरीकू वशकरि, नग्नमुद्रा धार शील पालै हैं। अतएव आत्मा पूर्ण वैराग्यकू प्राप्त नाहीं भया, तातैं श्रावकके अणुव्रत आचरू। ऐसा विचार कर साधुके समीप श्रावकके व्रत आदरे अर अपना मन शांतिरसरूप जलसे धोया, अर यह नियम लिया जो देवाधिदेव परमेश्वर परमात्मा जिनेन्द्रदेव, अर तिनके दास महाभाग्य निर्ग्रन्थ मुनि, अर जिनवाणी, इन विना औरनिकू नमस्कार न करू। प्रीतिवर्धन नामा जे मुनि तिनके निकट वज्रकर्ण अणुव्रत आदरे, अर उपवास धारे। मुनि याकू विस्तार कर धर्मका व्याख्यान कह्या, जाकी श्रद्धाकर भव्यजीव संसारपाशतैं छूटैं।
एक श्रावकका धर्म एक यतिका धर्म। इसमें श्रावकका धर्म गृहावलंबन संयुक्त, अर यति का धर्म निरालम्ब निरपेक्ष। दोऊ धर्मनिका मूल सम्यक्त्वकी निर्मलता। तप अर ज्ञानकर युक्त अत्यन्त श्रेष्ठ, जो प्रथमानुयोग, करणानुयोग, चरणानुयोग, द्रव्यानुयोगरूपविषै जिनशासन प्रसिद्ध है। यतिका धर्म अति कठिन जान अणुव्रतविषै बुद्धि ठहराई, अर महाव्रतकी महिमा हृदयमें धारी। जैसे दरिद्रीके हाथमें निधि आवै अर वह हर्षकू प्राप्त होय तैसे धर्मध्यानकू धरता संता आनन्दकू प्राप्त भया। यह अत्यन्त

क्रूरकर्मका करणहारा एक साथ ही शात दशाकू प्राप्त भया, या बातकर मुनि भी प्रसन्न भए। राजा तादिन तो उपवास किया, दूजे दिन पारणा कर दिगम्बरके चरणारविंदकू प्रणामकर अपने स्थानक गया। गुरुके चरणारविंदकू हृदयमें धारता सता सदेहरहित भया। अणुव्रत आराधे। चित्तमें यह चिंता उपजी जो उज्जैनीका राजा जो सिंहोदर ताका म सेवक सो ताका विनय किए विना म राज्य कैसे करू ? तब विचारकर एक मद्रिका बनाई। जामें श्रीमुनिसुव्रतनाथकी प्रतिमा पधराई, दक्षिण अगुष्ठमें पहरी। जब सिंहोदरके निकट जाय तब मुद्रिका विषै प्रतिमा ताहि बारम्बार नमस्कार कर। सो याका कोऊ बरी हुता तान यह छिद्र हेर सिंहोदरत कही जो यह तुमकू नमस्कार नाहीं कर ह, जिनप्रतिमाकू कर ह। तब सिंहोदर पापी क्रोधकू प्राप्त भया अर कपटकर वज्रकर्णकू दशाग नगरत बुलावता भया, सम्पदाकर उ मत्त याके मारवेकू उद्यमी भया। सो वज्रकर्ण सरलचित्त, सो तुरग पर चढ उज्जयिनी जावेकू उद्यमी भया। ता समय एकपुरुष जवान पुष्ट अर उदार ह शरीर जाका, दड जाके हाथ में, सो आयकर कहता भया। हे राजा ! जो तू शरीरत और राज्य भोगत रहित भया चाह ह तो उज्जयनी जाहु। सिंहोदर अति क्रोधकू प्राप्त भया ह, तू नमस्कार न करा तात तोहि मारया चाह ह। तू भले जान सो कर। यह वार्ता सुनकर वज्रकर्ण विचारी कि कोऊ शत्रु मोविषै अर नपविषै भेद किया चाह ह तान मत्रकर यह पठाया होय। बहुरि विचारी जो याका रहस्य तो लेना। तब एकांतविषै ताहि पूछता भया—तू कौन ह अर तेरा नाम कहा, अर कहात आया ह, अर यह गोप्य मत्र तून कैसे जान्या ? तब वह कहता भया कुन्दननगरविषै महा धनवत एक समुद्र सगम सेठ ह जाके यमुना स्त्री, ताके वर्षाकालमें विजुरीके चमत्कार समय मेरा जन्म भया, तातै मेरा विद्युदग नाम धरया। सो म अनुक्रमत नवयौवनकू प्राप्त भया। व्यापारके अर्थ उज्जयनी गया तहा कामलता वेश्याकू देख अनुरागकर व्याकुल भया। एक रात्रि तासू सगम किया सो वाने प्रीतिके बधनकर बाध लिया जस पारधी मृगकू पासित बाध। मेरे बापने बहुत वर्षनिमें जो धन उपार्ज्या

हुता सो म ऐसा कुपूत वेश्याके सग कर षटमासमें सब खोया। जस कमलविष भमर आसक्त होय तस ताविष आसक्त भया। एक दिन वह नगरनायिका अपनी सखीके समीप अपने कुण्डलनिकी निंदा करती हुती सो मै सनी। तब वास पूछी, तब तान कही– धन्य ह रानी श्रीधरा महासौभाग्यवती ताके काननिमें जस कुण्डल ह तस काहूके नाहीं। तब म मनमें चितई जो म राणीके कुण्डल हरकर याकी आशा पूण न करू तो मेरे जीने कर कहा? तब कुण्डल हरनेकू म अधेरी रात्रिविष राजमदिर गया सो राजा सिहोदर कोप हो रहा था, अर राणी श्रीधरा निकट बठी हुती। सो राणी पूछी–हे देव! आज निद्रा काहेत न आव ह? तब राजा कही हे राणी! मैं वज्रकणकू छोटेतै मोटा किया, अर मोहि सिर न नवाव, सो वाहि जबतक न मारू तब तक आकुलताके योगत निद्रा कहा आव? ऐते मनुष्यनित निद्रा दूर ही भाग–अपमानसे दग्ध, अर कुटुम्बी निधन, शत्रुने आय दबाया अरु जीतने समथ नाहीं, अर जाके चित्तमें शल्य तथा कायर अर ससारत विरक्त, इनत निद्रा दूर ही रह ह। यह वार्ता राजा रानीकू कही। सो म सुनकर ऐसा होयगया मानो काहूने मेरे हृदयमें वजकी दीनी। सो कुण्डल लेयवेकी बुद्धि तज यह रहस्य लय तेरे निकट आया, अब तुम वहा जावो मत। कसे हो तुम? जिनधममें उद्यमी हो। अर निरतर साधुनिके सेवक हो। अजनीगिरि पवतसे हाथी, जिनसे मद भरे, तिन पर चढे योधा, वक्तर पहिरे, अर महा तेजस्वी तुरगनिके असवार, कवच पहिरे महाक्रूर समत तेरे मारवेके अथ राजाकी आज्ञात माग रोके खडे ह। तात तू कपाकर अबार वहा मत जाय। म तरे पायन परू हू। मेरा वचन मान, अर तेरे मनमें प्रतीत नाहीं आव तो देख वह फौज आई, धूरके पटल उठे ह, महा शब्द होते आव ह। यह विद्युदगके वचन सुन वजकण परचक्रकू आवता देख याकू परम मित्र जान लार लेय अपने गढविष तिष्ठ्या। सिहोदरके सुभट दरवाजेमें आवने न दिये। तब सिहोदर सव सेना लार ल चढ आया। सो गढ गाढा जान अपने कटकके लोग इनके मारवेके डरत तत्काल गढ लेवेकी बुद्धि न करी। गढके समीप डेरे कर वजकणके समीप दूत भेज्या सो अत्यन्त कठोर

वचन कहता भया। तू जिनशासनके गर्वकरि मेरे ऐश्वर्यका कंटक भया। जे घरखोवा यति तिनने तोहि बहकाया, तू न्यायरहित भया, देश मेरा दिया खाय, माथा अरहंतकूं नवावै। तू महा मायाचारी है। तातैं शीघ्र ही मेरे समीप आयकर मोहि प्रणाम कर नातर मारा जायगा। यह वार्ता दूतने वज्रकर्णसूं कही तब वज्रकर्ण जो जवाब दिया सो दूत जाय सिंहोदरसूं कहै है, हे नाथ! वज्रकर्णकी यह वीनती है जो देश नगर भण्डार हाथी, घोडे सब तिहारे हैं सो लेहु, मोहि स्त्रीसहित धर्मद्वार देय काढ देहु, मेरा तुमतैं उजर नाहीं। परन्तु मैं यह प्रतिज्ञा करी है जो जिनेन्द्र, मुनि अर जिनवाणी इन विना और कूं नमस्कार न करूं सो मेरा प्राण जाय तोहू प्रतिज्ञा भंग न करूं। तुम मेरे द्रव्यके स्वामी हो, आत्माके स्वामी नाहीं। यह वार्ता सुन सिंहोदर अति क्रोधकूं प्राप्त भया, नगरकूं चारों तरफसे घेरया अर देश उजाड दिया। सो दरिद्री मनुष्य श्रीरामसूं कहै है—हे देव! देश उजाडनेका कारण मैं तुमसूं कह्या। अब मैं जाऊं हूं, यहांतैं नजदीक मेरा ग्राम है, सो ग्राम सिंहोदरके सेवकनिन बाल्या लोगनिके विमान तुल्य घर हुते सो भस्म भए। मेरी तृण काष्ठकर रची कुटी सो हू भस्म भई होयगी, मेरे घरमें एक छाज, एक माटीका घट, एक हांडी यह परिग्रह हुता सो लाऊं हूं। मेरे खोटी स्त्री तानैं क्रूर वचन कह मोहि पठाया है। अर वह बारम्बार ऐसे कहै है जो सूने गांवमें घरनिके उपकरण बहुत मिलेंगे सो जायकर ले आवहु। सो मैं जाऊं हूं मेरे बडे भाग्य जो आपका दर्शन भया, स्त्रीने मेरा उपकार किया जो मोहि पठाया। वह वचन सुन श्रीराम महा दयावान पथीकूं दुखी देख अमोलक रत्ननिका हार दिया सो पंथी प्रसन्न होय चरणारविंदकूं नमस्कार कर हार लेय अपने घर गया, द्रव्यकर राजनिके तुल्य भया। ४३१

अथानन्तर श्रीराम लक्ष्मणसूं कहते भए—हे भाई! यह ज्येष्ठका सूर्य अत्यन्त दुस्सह जब अधिक न चढे पहिले ही चलें या नगरके समीप निवास करें। सीता तृषाकर पीडित है सो याहि जल पिलावैं। अर आहारकी विधि भी शीघ्र ही करें। ऐसा कहि आगैं गमन किया। सो दशांगनगरके समीप जहां

श्री चन्द्रप्रभुका चैत्यालय महा उत्तम है तहाँ आए अर श्रीभगवानकूं प्रणामकर सुखसूं तिष्ठे। अर आहारकी सामग्री निमित्त लक्ष्मण गए, सिंहोदरके कटकमें प्रवेश करते भए। कटकके रक्षक मनुष्य नित मन किए तब लक्ष्मण विचारी ये दरिद्री अर नीच कुल इनते मैं कहा विवाद करूं। यह विचार नगरकी ओर आए सो नगरके दरवाजे अनेक योधा बैठे हुते अर दरवाजेके ऊपर वज्रकर्ण तिष्ठा हुता, महासावधान। सो लक्ष्मणकूं देख लोक कहते भए, तुम कौन हो, अर कहांते कौन अर्थ आए हो? तब लक्ष्मण कही दूरते आए हैं अर आहार निमित्त नगरमें आए हैं। तब वज्रकर्ण इनकूं अति सुन्दर देख आश्चर्यकूं प्राप्त भया अर कहता भया हे नरोत्तम! माहि प्रवेश करो। तब यह हर्षित होय गढमें गया, वज्रकर्ण बहुत आदरसूं मिल्या अर कहता भया जो भोजन तयार है सो आप कृपा कर यहां ही भोजन करहु। तब लक्ष्मण कही मेरे गुरुजन बडे भाई और भावज श्रीचन्द्रप्रभुके चैत्यालयविषै बैठे हैं तिनकूं पहिले भोजन कराय मैं भोजन करूंगा। तब वज्रकर्णने कही बहुत भली बात, वहां ले जाइये, उन योग्य सब सामग्री है ले जावो। अपने सेवकनि हाथ नाने भांति भांतिकी सामग्री पठाई सो लक्ष्मण लिवाय लाए। श्रीराम लक्ष्मण अर सीता भोजनकर बहुत प्रसन्न भए। श्रीराम कहते भए—हे लक्ष्मण! देखो वज्रकर्णकी बडाई जो ऐसा भोजन कोऊ अपने जमाईकों हू न जिमावै सो विना परचै अपने ताईं जिमाए। पीनेकी वस्तु महामनोहर, अर व्यंजन महामिष्ट यह अमृत तुल्य भोजन जाकरि मार्गका खेद मिट्या अर जेठके आतापकी तप्त मिटी। चांदनी समान उज्ज्वल दुग्ध महा सुगन्ध, जापरि भ्रमर गुंजार करैं हैं, अर सुन्दर घृत, सुन्दर दधि, मानो कामधेनुके स्तननिकरि उपजाया दुग्ध, ताकरि निरमापे हैं। ऐसे व्यंजन, ऐसे रस और ठौर दुर्लभ हैं। ता पथीनें पहिले अपने ताईं कहा हुता जो यह अणुव्रतका धारी श्रावक है, अर जिनेन्द्र मुनीन्द्र जिनसूत्र टार औरनिकूं नमस्कार नाहीं करै है। सो ऐसा धर्मात्मा, व्रत शीलका धारक आपने आगे शत्रुकरि पीडित रहै तो अपने पुरुषार्थ कर कहा? अपना यही धर्म है जो दुखीका दुख निवारैं, साधर्मीका तो अवश्य निवारैं। ४३२

यह अपराध रहित, साधुसेवाविषै सावधान, महाजिनधर्मी, जाके लोक जिनधर्मी, ऐसे जीवकू पीडा काहे उपजै ? यह सिंहोदर ऐसा बलवान है जो याके उपद्रवतै वज्रकर्णकू भरत भी न बचाय सकै। तातै हे लक्ष्मण ! तुम याकू शीघ्र ही सहाय करो, सिंहोदर पै जाओ अर वज्रकर्णका उपद्रव मिटै सो करहु। हम तुमकू कहा सिखावैं जो यू कहियो, तुम महाबुद्धिवान हो, जैसे महा मणि प्रभा सहित प्रकट होय है तैसे तुम महा बुद्धि पराक्रमकू धरै प्रकट भए हो। या भांति श्रीरामने भाईके गुण गाए, तब भाई लक्ष्मण लज्जाकर नीचे मुख होय गए। नमस्कारकर कहते भये—हे प्रभो ! जो आप आज्ञा करोगे सोई होयगा। महाविनयवान लक्ष्मण रामकी आज्ञा प्रमाण धनुषबाण लेय धरतीकू कम्पायमान करते संते शीघ्र ही सिंहोदर पै गए। सिंहोदरके कटकके रखवार पूछते भए तुम कौन हो ? लक्ष्मण कही मैं राजा भरतका दूत हू। तब कटकमें पैठने दिया, अनेक डेरे उलंघ राजद्वार गया। द्वारपाल राजासू मिलाया सो महा बलवान सिंहोदरकू तृणसमान गिनता संता कहता भया, हे सिंहोदर ! अयोध्याका अधिपति भरत तानै यह आज्ञा करी है जो वृथा विरोधकर कहा ? वज्रकर्णसू मित्रभाव करहु। तब सिंहोदर कहता भया—हे दूत ! राजा भरतसू या भांति कहियो जो अपना सेवक होय अर विनयमार्गसे रहित होय ताहि स्वामी समझाय सेवामें लावै, यामें विरोध कहा ? यह वज्रकर्ण दुरात्मा, मानी, मायाचारी, कृतघ्न, मित्रनिका निंदक, चाकरीचूक, आलसी, मूढ, विनयचार रहित, खोटी अभिलाषाका धारक, महाक्षुद्र, सज्जनता रहित है सो याके दोष तब मिटैं जब यह मरणको प्राप्त होय अथवा राज्य रहित करू। तातै तुम कछु मत कहो। मेरा सेवक है जो चाहूगा सो करू गा। तब लक्ष्मण बोले—
बहुत उत्तरनिकरि कहा ? यह परमहितु है, या सेवकका अपराध क्षमा करहु। ऐसा जब कह्या तब सिंहोदर क्रोध कर अपने बहुत सामंतनिकू देख गर्वकू धरता संता उच्च स्वरसू कहता भया।

यह वज्रकर्ण तो महामानी है ही अर तू याके कार्यकू आया सो तू भी महामानी है। तेरा तन अर मन मानो पाषाणतै निरमाप्या है। रंचमात्र हू नमता तोमैं नाहीं। तू भरतका मूढ सेवक है।

जानिए है जो भरतके देशमें तो सारिखे मनुष्य होवेंगे। जस सीझती भरी हांडी माहींसू एक चावल काढकर नम कठोरकी परीक्षा करिए है तस एक तेरे देखवेकरि सबनिकी बानिगी जानी जाय है। तब लक्ष्मण क्रोधकर कहते भए, म तेरी वाकी सधि करावेकू आया हू, तोहि नमस्कार करवेकू न आया, बहुत कहनेसू कहा ? थोडे हीमें समझहु। वजकणसू सधि कर लेहु, नातर मारा जायगा। ये वचन सुन सबही सभाके लोक क्रोधकू प्राप्त भए। नानाप्रकारके दुवचन कहते भए, अर नानाप्रकार क्रोध की चेष्टाकू प्राप्त भए। कईएक छुरी लेय, कईएक कटारी भाला तलवार लेयकरि याके मारवेकू उद्यमी भए। हुकार शब्द करते अनेक सामत लक्ष्मणकू बेढते भए। जस पवतकू मच्छर रोक तैसें रोकते भए। सो यह धीर वीर युद्धक्रियाविषे पडित, शीघ्र क्रियाके वेत्ता, चरणके घातकर तिनकू दूर उडाय दिए। कईएक गोडनित मारे, कईएक कुहनिनत पछाडे, कईएक मुष्टिप्रहार करि चूर्णकर डारे, कईएकनिके केश पकड पृथ्वीपर पाडि मारे, कईएकनिकू परस्पर सिर भिडाय मारे। या भांति अकेले महाबली लक्ष्मणने अनेक योधा विध्वस किये। तब और बहुत सामत हाथी घोडनिपर चढ बखतर पहिर लक्ष्मणकी चौगिरद फिर, नानाप्रकारके शस्त्रनिके धारक। तब लक्ष्मण जस सिह स्यालनिको भगाव तस तिनकू भगावता भया। तब सिंहोदर कारीघटा समान हाथी पर चढकर अनेक सुभटनिसहित लक्ष्मणत लडवेकू उद्यमी भया। अनेक योधा मेघ समान लक्ष्मण रूप चन्द्रमाकू बेढते भए। सो सव योधा ऐसे भगाए जस पवन आकके डोडनिके जे फफूदे तिनकू उडाव। ता समय महा योधानिकी कामिनी परस्पर वार्ता कर है, देखो यह एक महासुभट अनेक योधानिकरि बेढ्या है, परतु यह सबकू जीत है,कोऊ याहि जीतिवे समथ नाहीं। धन्य याहि,धन्य याके माता पिता इत्यादि अनेक वार्ता सुभटनिकी स्त्री कर है। अर लक्ष्मण सिंहोदरकू कटकसहित चढ्या देखकर गजका थम्भ उपाड्या अर कटकके सम्मुख गया। जैस अग्नि वनकू भस्म कर तस कटकके बहुत सुभट विध्वस किए। अर जो दशागनगरके योधा नगरके दरवाजे ऊपर बजकणके समीप बठे हुते, सो फूल गए हैं नेत्र जिनके, ४३४

स्वामीसू कहते भए—हे नाथ! देखो यह एक पुरुष सिंहोदरके कटकतै लडे है, ध्वजा रथ चक्र भग्न कर डारे, परम ज्योतिका धारी है, खडगसमान है कांति जाकी, समस्त कटककू व्याकुलतारूप भ्रमण में डारया है, सब तरफ सेना भागी जाय है जैसै सिंहतै मृगनिके समूह भागै। अर भागते थके सुभट परस्पर बतलावे हैं कि बक्तर उतार धरो, हाथी घोडे छोडो, गदा खाडेमें डार देहु, ऊंचे शब्द न करहु। ऊंचे शब्दको सुनकर शस्त्रके धारक देख यह भयानक पुरुष आय मारेगा। अरे भाई! यहांतै हाथी लेजावो, कहा थांभ राखा है, गैल देऊ। अरे दुष्ट सारथी! कहा रथकू थांभ राख्या है। अर घोडे आगे करहु। यह आया यह आया। या भांतिके वचनालाप करते महाकष्टकू प्राप्त भए, सुभट संग्राम तजि आगै भागे जाय हैं। नपुंसक समान होयगए। यह युद्धमें क्रीडाका करणहारा कोई देव है, तथा विद्याधर है, अथवा काल है, अर कै वायु है? यह महाप्रचण्ड सब सेनाकू जीतकर सिंहोदर कू हाथीसे उतार गलेमें वस्त्र डार बांध लिए जाय है, जैसे बलदको बांध धनी अपने घर ले जाय। यह वचन वज्रकर्णके योधा वज्रकर्णसू कहते भए। तब वह कहता भया—हे सुभट हो! बहुत चिंता कर कहा? धर्मके प्रसादतै सब शांति होयगी। अर दशांगनगरकी स्त्री महलनिके ऊपर बैठी परस्पर वार्ता करै है, हे सखी! देखो या सुभटकी अद्भुत चेष्टा, जो एक पुरुष अकेला नरेन्द्रकू बांध लिए जाय है। अहो धन्य याका रूप, धन्य याकी कांति, धन्य याकी शक्ति। यह कोई अतिशयका धारी पुरुषोत्तम है। धन्य है वे स्त्री, जिनका यह जगदीश्वर पति हुआ है, तथा होयगा। अर सिंहोदरकी पटराणी बाल तथा वृद्धनि सहित रोवती सती लक्ष्मणके पायनि पडी अर कहती भई—हे देव! याहि छोड देहु, हमैं भरतारकी भीख देहु। अब जो तिहारी आज्ञा होयगी सो यह करेगा। तब आप कहते भए यह आगै बडा वृक्ष है तासू याहि लटकाऊंगा। तब वाकी राणी हाथ जोड बहुत विनती करती भई—हे प्रभो! आप रोस भए हो तो हमें मारो याहि छाडो, कृपा करो, प्रीतमका दुख हमें मत दिखावो। जे तुम सारिखे पुरुषोत्तम हैं ते स्त्री अर बालक वृद्धनिपर करुणा ही करै हैं। तब आप दयाकर कहते भए—तुम

चिंता न करहु, आगे भगवानका चैत्यालय है तहां याहि छोडेंगे। ऐसा कहि आप चैत्यालयमें गए। जाय कर श्रीरामतैं कहते भए—हे देव ! यह सिंहोदर आया है, आप कहो सो करै। तब सिंहोदर हाथ जोड कांपता संता श्रीरामके पायन परया अर कहता भया—हे देव ! तुम महाकांतिके धारी, परम तेजस्वी हो, सुमेरु सारिखे अचल पुरुषोत्तम हो मैं आपका आज्ञाकारी, यह राज्य तिहारा, तुम चाहो ताहि देहु। मैं तिहारे चरणारविंदकी निरन्तर सेवा करूंगा। अर रानी नमस्कार कर पतिकी भीख मांगती भई अर सीता सतीके पायन परी अर कहती भई—हे देवी ! हे शोभने ! तुम स्त्रीनिकी शिरोमणि हो, हमारी करुणा करो। तब श्रीराम सिंहोदरकूं कहते भए मानो मेघ गाज्या।

अहो सिंहोदर ! तोहि जो वज्रकर्ण कहे सो कर। या बातकरि तेरा जीतव्य है और बातकर नाहीं। या भांति सिंहोदरकूं रामकी आज्ञा भई ताही समय जे वज्रकर्णके हितकारी हुते तिनकूं भेज वज्रकर्णकूं बुलाया, सो परिवार सहित चैत्यालय आया, तीन प्रदक्षिणा देय भगवानकूं नमस्कार करि चन्द्रप्रभु स्वामीकी अत्यन्त स्तुतिकर रोमांच होय आए। बहुरि वह विनयवान दोनों भाइनके पास आया, स्तुति कर शरीरकी आरोग्यता पूछता भया, अर सीताकी कुशल पूछी। तब श्रीराम अत्यन्त मधुर ध्वनिकर वज्रकर्णकूं कहते भए—हे भव्य ! तेरी कुशलकरि हमारे कुशल है। या भांति वज्रकर्णकी अर श्रीरामकी वार्ता होय है, तबही सुन्दर भेष धरे विद्युदंग आया, श्रीराम लक्ष्मणकी स्तुति कर वज्रकर्णके समीप आया। सब सभाविषै विद्युदंगकी प्रशंसा भई जो यह वज्रकर्णका परम मित्र है। बहुरि श्रीरामचन्द्र प्रसन्न होय वज्रकर्णसूं कहते भए तेरी श्रद्धा महा प्रशंसा योग्य है। कुबुद्धीनिके उत्पातकरि तेरी बुद्धि रंचमात्र भी न डिगी जैसे पवनके समूहकरि सुमेरुकी चूलिका न डिगै। मोहूकूं देखकर तेरा मस्तक न नया सो धन्य है तेरी सम्यक्तकी दृढता। जे शुद्ध तत्त्वके अनुभवी पुरुष हैं तिनकी यही रीति है जो जगत कर पूज्य जे जिनेन्द्र तिनकूं प्रणाम करैं। बहुरि मस्तक कौनको नवावैं ? मकरंद रसका आस्वाद करणहारा जो भ्रमर सो गर्दभ (गधा) की पूंछपर कैसे गुंजार करै ? तू बुद्धिमान है, धन्य है, निकटभव्य है,

चन्द्रमा हूते उज्ज्वल बलकीर्ति तरी पृथ्वीमें विस्तरी है। या भांति वज्रकर्णके साचे गुण श्रीरामचन्द्रने वर्णन कीये। तब वह लज्जावान होय नीचा मुख कर रह्या श्रीरघुनाथसूं कहता भया—हे नाथ! मोपर यह आपदा तो बहुत पडी हुती परन्तु तुम सरीखे सज्जन जगतके हितु मेरे सहाई भए। मेरे भाग्य करि तुम पुरुषोत्तम पधारे। या भांति वज्रकरण ने कही तब लक्ष्मण बोले तेरी वांछा जो होय सो कर। वजकरण ने कही तुम सारिखे उपकारी पुरुष पायकर मोहि या जगतविषै कछु दुर्लभ नाहीं। मेरी यही विनती है मैं जिनधर्मी हूं, मेरे तृणमात्रको भी पीडाकी अभिलाषा नाहीं, अर यह सिंहोदर तो मेरा स्वामी है तातैं याहि छोडो। ये वचन जब वज्रकरण कहे तब सबके मुखतैं धन्य धन्य यह ध्वनि होती भई। जो देखो यह ऐसा उत्तम पुरुष है द्वेष प्राप्ति भए भी पराया भला ही चाहै है। जे सज्जन पुरुष हैं ते दुर्जनहूका उपकार करैं। अर जे आपका उपकार करैं ताका तौ करैं ही करैं। लक्ष्मणने वज्रकर्णकूं कही जो तुम कहोगे सो ही होयगा। सिंहोदरको छोडा, अर वज्रकर्णका अर सिंहोदरका परस्पर हाथ पकडाया, परम मित्र किए, वज्रकर्णकूं सिंहोदरका आधा राज्य दिवाया। अर जो माल लूटा हुता सो हू दिवाया, अर देश धन सेनाका आधा आधा विभाग कर दिया। वजकर्णके प्रसाद करि विद्युदंग सेनापति भया अर वजकर्ण राम लक्ष्मणकी बहुत स्तुति करि अपनी आठ पुत्रीनिकी लक्ष्मणसो सगाई करी। कैसी हैं ते कन्या? महाविनयवती, सुन्दर भेष, सुन्दर आभूषणकौं धरैं। अर राजा सिंहोदरकूं आदि देय राजानिकी परम कन्या तीनसौं लक्ष्मणकूं दई। सिंहोदर अर वज्रकर्ण लक्ष्मणसूं कहत भए—ये कन्या आप अंगीकार करहु, तब लक्ष्मण बोले—विवाह तो तब करूंगा जब अपने भुजा कर राज्य स्थान जमाऊंगा। अर श्रीराम तिनसूं कहते भए—हमारे अबतक देश नाहीं है। तातैं राज भरतकूं दिया है। तातै चन्दनगिरीके समीप तथा दक्षिणसमुद्रके समीप स्थानक करैंगे तब हमारी दोऊ मातानिकूं लेनेकूं मैं आऊंगा अथवा लक्ष्मण आवेगा। ता समय तिहारी पुत्रीनिकूं परणकर लेआवेगा। अब तक हमारे स्थानक नाहीं, कैसे पाणिग्रहण करैं? जब या भांति कही, तब ४३७

वे सब राजकन्या ऐसी होय गई जैसा जाडे का मारया कमलनिका वन होय। तब मनमें विचारती भई—वह दिन कब होयगा जब हमकू प्रीतमके सगम रूप रसायनकी प्राप्ति होयगी ? अर जो कदाचित प्राणनाथका विरह भया तो हम प्राण त्याग करगी। इन सबका मन विरहरूप अग्निकर जलता भया। यह बिचारती भई एक ओर महा औंडागत अर एक ओर महाभयकर सिह, कहा कर ? कहा जाव ? विरहरूप व्याघकू पतिके सगमकी आशात बशीभूत कर प्राणनिकू राखेगी, यह चितवन करती सती अपने पिताकी लार अपने स्थानक गई। सिहोदर बज्रकर्ण आदि सब ही नरपति, रघुपतिकी आज्ञा लेय घर गए। ते राजकन्या उत्तम चेष्टाकी धरणहारी माता पितादि कुटुम्बकरि अत्यत न सन्मान जिनका अर पतिमे ह चित्त जिनका सो नाना विनोद करतीं पिताके घरमें तिष्ठती भई। अर विद्युदगने अपने माता पिताकू कुटुम्बसहित बहुत विभूतिसे बुलाया, तिनके मिलापका परम उत्सव किया अर वज्रकर्णक अर सिहोदरके परस्पर अतिप्रीति बढ़ी। अर श्रीरामचन्द्र लक्ष्मण अध रात्रिकू चत्यालयत चाले। धीर २ अपनी इच्छा प्रमाण गमन कर है। अर प्रभात समय जे लोक चत्यालयमें आए तो श्रीरामकू न देख शून्यहृदय होय अति पश्चाताप करते भए।

इति श्री रविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रंथ ताकी भाषावचनिकाविषै राम लक्ष्मण कृत वज्रकर्णका उपकार कथन वर्णन करनेवाला तेतीसवा पर्व पूर्ण भया ॥ ३३ ॥

अथानन्तर राम लक्ष्मण जानकीकू धीर धीरे चलावते, अर रमणीक वनमें विश्राम लेते, अर महामिष्ट स्वादुफलका रसपान करते, क्रीडा करते, रसभरी बात करते, सुन्दर चेष्टाके धरणहारे, चले २ नलकूवर नामा नगर आए। कैसा है नगर ? नानाप्रकारके रत्ननिके जे मदिर तिनके उत्तुग शिखरनिकरि मनोहर, अर सुन्दर उपवनोकरि मडित, जिनमदिरनिकरि शोभित, स्वर्गसमान निरतर उत्सवका भरया लक्ष्मीका निवास है। सो श्रीराम लक्ष्मण और सीता नलकूवर नामा नगरके परम

सुन्दर वनमें आय तिष्ठे। कसा ह वह वन ? फल पुष्पनिकर शोभित, जहा भमर गु जार कर ह अर कोयल बोले ह। सो निकट सरोवरी तहा लक्ष्मण जलके निमित्त गए, सो ताही सरोवरीपर क्रीडा के निमित्त कल्याणमाला नामा राजपुत्री राजकुमारका भेष किए आई हुती। कैसा ह राजकुमार ? महा रूपवान, नेत्रनिकू हरणहारा, सबकू प्रिय, महा विनयवान, कातिरूप निझरनिका पवत, श्रेष्ठ हाथीपर चढ्या, सुन्दर प्यादे लार, जो नगरका राज्य कर। सो सरोवरीके तीर लक्ष्मणकू देख मोहित भया। कसा ह लक्ष्मण ? नीलकमल समान श्याम सुन्दर लक्षणनिका धारक। राजकुमार एक मनुष्यकू आज्ञा करी जो इनकू ले आव। सो वह मनुष्य जायकर हाथ जोड नमस्कारकर कहता भया–ह धीर ! यह राजपुत्र आपसू मिल्या चाह ह सो पधारिए। तब लक्ष्मण राजकुमारके समीप गए। सो हाथीत उतरकर कमल तुल्य जे अपने कर तिनकर लक्ष्मणका हाथ पकड वस्त्रनिके डेरामें लेगया, एक आसनपर दोऊ बठे। राजकुमार पूछता भया आप कौन हो, कहा त आए हो ? तब लक्ष्मण कही मेरे बडे भाई मो बिना एक क्षण न रहै सो उनके निमित्त अन्न पान सामग्रीकर उनकी आज्ञा लेय तुमपर आऊगा, तब सब बात कहूगा। यह बात सुन राजकुमार कही–जो रसोई यहा ही तयार भई ह सो यहा ही तुम अर वे भोजन करोगे। तदि लक्ष्मणसे आज्ञा पाय सुन्दर भात दाल, नाना विधि व्यजन, नवीन घत कपूरादि सुग ध द्रव्यनिसहित दधि दुग्ध, अर नानाप्रकार पीनेकी वस्तु, मिश्री के स्वाद जामें ऐसे लाडू, अर पूरी साकली इत्यादि नानाप्रकार भोजनकी सामग्री, अर वस्त्र आभूषण माला इत्यादि अनेक सुग ध नाना प्रकार तयार किये। अर अपन निकटवर्ती जो द्वारपाल ताहि भेज्या। सो जायकर सीतासहित रामकू प्रणाम कर कहता भया–हे देव ! या वस्त्र भवनके विषै तिहारा भाई तिष्ठ ह, अर या नगरके नाथने बहुत आदरत विनती करी है,–वहा छाया शीतल है अर स्थान मनोहर, सो आप कृपाकर पधारो तो मागका खेद निवृत्त होय। तब राम सीतासहित पधारे जस चादनीसहित चाद उद्योत कर। कसे है राम ? माते हाथी समान ह चाल जिनकी। लक्ष्मण

सहित नगरका राजा दूर होत देख उठकर सामने आया। सीतासहित राम सिंहासनपर बिराजे, राजाने आरती उतार कर अर्घ दिए, अति सन्मान किया, आप प्रसन्न होय स्नानकर भोजन किया, सुगन्ध लगाई। बहुरि राजा सबनिकू सीखदेय विदा किये। ए चार ही रहे–एक राजा तीन ए। राजा सबनिकू कह्या–जो मेरे पिताके पासत इनके हाथ समाचार आए ह सो एकातकी वार्ता ह, कोई आवने न पाव। जो आवेगा ताही म मारू गा। बड २ सामत द्वारे रखे। एकातविष इनके आग लज्जा तज कन्या जो राजाका भेष धारे हुती सो तज अपना स्त्रीपदका रूप प्रकट दिखाया। कसी है कन्या? लज्जाकर नमीभूत ह मुख जाका, अर रूपकर मानो स्वगकी देवागना ह, अथवा नागकुमारी ह। ताकी कातिकरि समस्त मन्दिर प्रकाशरूप होयगया मानो चन्द्रमाका उदय भया। चद्रमा किरणोकरि मडित ह, याका मुख लज्जा अर मुलकनकर मडित ह। मानो यह राजकन्या साक्षात लक्ष्मी ही ह, कमलनिके वनतै आय तिष्ठी ह। अपनी लावण्यता रूप सागरविष मानो मन्दिरकू गक किया ह। जाकी द्युति आग रत्न अर कचन द्युतिरहित भास ह। जाके स्तन युगलस कातिरूप जलकी तरगनि समान त्रिबली शोभ ह। अर जस मेघपटलकू भेद निशाकर निकस तस वस्त्रकू भेद अगकी ज्योति फल रही है। अर अत्यन्त चिकने सुगन्ध कारे वाके पतले लम्बे केश, तिनकरि विराजित ह प्रभारूप वदन जाका, मानो कारी घटामें बिजरीके समान चमक ह। अर महासूक्ष्म स्निग्ध जो रोमनिकी पक्ति ताकर विराजित मानो नीलमणिकरि मडित सुवणकीमूर्ति ही ह। तत्काल नररूप तज, नारीका रूपकर, मनोहर नेत्रनिकी धरनहारी सीताके पायन लाग समीप जाय बठी, जस लक्ष्मी रतिके निकट जाय बठे। सो याका रूप
देख लक्ष्मण कामकर बींधा गया, और ही अवस्था होय गई, नेत्र चलायमान भए। तब श्रीरामचन्द्र कन्यातै पूछते भए, कौनकी पुत्री ह अर पुरुषका भेष कौन कारण किया ? तब वह महामिष्टवादिनी अपना अग वस्त्रत ढाक कहती भई–हे देव! मेरा वृत्तात सुनहु। या नगरका राजा बालखिल्य, महा सुबुद्धि, सदा आचारवान, श्रावकके व्रतधारक, महा दयालु, जिनधर्मियोपर वात्सल्य अगका धारणहारा।

राजा के पृथ्वी रानी, ताहि गर्भ रह्या, सो मै गर्भविषै आई। अर म्लेच्छनिका जो अधिपति तासूं संग्राम भया। मेरा पिता पकड्या गया। सो मेरा पिता सिंहोदरका सेवक सो सिंहोदरने यह आज्ञा करी जो बालखिल्यके पुत्र होय सो राज्य का कर्त्ता होय, सो मैं पापिनी पुत्री भई। तब हमारे मंत्री सुबुद्धि तानै मनसूबाकर राज्यके अर्थ मोहि पुत्र ठहराया। सिंहोदरकूं वीनती लिखी, कल्याणमाला मेरा नाम धरया अर बडा उत्सव किया। सो मेरी माता अर मंत्री ये तो जानै है जो यह कन्या है और सब कुमार ही जानै है। सो एते दिन मैं व्यतीत किए। अब पुण्यके प्रभावतै आपका दर्शन भया। मेरा पिता बहुत दुःखसूं तिष्ठै है म्लेच्छनिकी बंदीमें है। सिंहोदर ताहि छुडायवे समर्थ नाहीं। अर जो द्रव्य देशविषै उपजै है सो सब म्लेच्छके जाय है। मेरी माता वियोगरूप अग्निकर तप्तायमान जैसे दूजके चन्द्रमाकी मूर्ति क्षीण होय तैसी होय गई है। ऐसा कहकर दुखके भारकर पीडित है समस्त अंग जाका सो मूर्छा खाय गई अर रुदन करती भई। तब श्रीरामचन्द्रने अत्यन्त मधुर वचन कह कर धीर्य बंधाया, सीता गोदमें लेय बैठी, मुख धोया। अर लक्ष्मण कहते भए—हे सुन्दरी! सोच तज, अर पुरुषका भेषकरि राज्य करि, कईएक दिननिमें म्लेच्छनिकूं पकड कर अपने पिताकूं छूट्या ही जान। ऐसा कहकर परम हर्ष उपजाया सो इनके वचन सुनकर कन्या पिताकूं छूट्या ही जानती भई। श्रीराम लक्ष्मण देवनकी नाईं तीन दिन यहां बहुत आनन्द्त रहे। बहुरि रात्रिमें सीतासहित उपवनतैं निकसकर गोप चले गए। प्रभात समय कन्या जागी तिनकूं न देख व्याकुल भई, अर कहती भई—वे महापुरुष मेरा मन हर ले गए, मो पापिनीकूं नींद आगई सो गोप चले गए। या भांति विलाप ४४१
कर मनको थांभ हाथी पर चढ पुरुषके भेष नगरविषै गई। अर राम लक्ष्मण कल्याणमालाके विनयकर हरया गया है चित्त जिनका, अनुक्रमतैं मेकला नामा नदी पहुंचे। नदी उतर क्रीडा करते अनेक देश निकूं उल्लंघि विन्ध्याटवीकूं प्राप्त भए। पथमें जाते संते गुवालनिने मने किए कि यह अटवी भयानक है तिहारे जाने योग्य नाहीं। तब आप तिनकी बात न मानी, चले गए। कैसी है वनी? कहीं एक

लताकर मंडित जे शालवृक्षादिक तिनकरि शोभित है। अर नानाप्रकारके सुगंध वृक्षनिकर भरी महा सुगंधरूप है, अर कहीं एक दावानलकर जले वृक्ष, तिनकर शोभारहित है, जैसे कुपुत्र कलंकित गोत्र न शोभै।

अथानन्तर सीता कहती भई—कंटकवृक्षके ऊपर बाई ओर काग बैठ्या है सो यह तो कलहकी सूचना करै है। अर दूसरा एक काग क्षीरवृक्षपर बैठा है सो जीत दिखावै है। तातै एक मुहूर्त थिरता करहु। या मुहूर्तविषै चालें आगे कलहके अंत जीत है, मेरे चित्तमें ऐसा भासै है। तब क्षणएक दोऊ भाई थम्भे बहुरि चाले। आगे म्लेच्छनिकी सेना दृष्टि पडी। ते दोऊ भाई निर्भय धनुषबाण धारें म्लेच्छनिकी सेनापर पडे, सो सेना नाना दिशानिकूं भाग गई। तदि अपनी सेनाका भंग देखि और म्लेच्छनिकी सेना शस्त्र धरें, बहुत म्लेच्छ बक्तर पहिर आए। सो ते भी लीलामात्रमें जीते। तब वे सब म्लेच्छ धनुष बाण डार पुकार करते पतिप जाय सब वृत्तांत कहते भए। तब वे सब म्लेच्छ परम क्रोधकर धनुष बाण लीए महा निर्दई बडी सेनासूं आए। शस्त्रनिके समूहकरि संयुक्त वे काकोदन जातिके म्लेच्छ, पृथ्वीविषै प्रसिद्ध, सब मांसके भक्षी, राजानहूकरि दुर्जय, ते कारी घटासमान उमडि आए। तदि लक्ष्मणने क्रोधकर धनुष चढाया, तब वन कम्पायमान भया, वनके जीव कांपने लग लए। तब लक्ष्मणने धनुषके शर बांधा तब सब म्लेच्छ डर, वनमें दशों दिश आंधेकी याईं भटकते भए। तब महा भयंकर पूर्ण म्लेच्छनिका अधिपति रथसे उतर हाथ जोड प्रणामकर पायन पर्‌या अर अपना सब वृत्तांत दोऊ भाइनसूं कहता भया। हे प्रभो! कौशांबी नाम नगरी है। तहां एक विश्वानल नामा ब्राह्मण अग्निहोत्री, ताके प्रतिसंध्यानाम स्त्री, तिनके रौद्रभूतनामा पुत्र! सो द्यूत कलामें प्रवीण, बाल अवस्थाहीतें क्रूरकर्मका करणहारा। सो एक दिन चोरीतें पकड्या गया अर सूली देवेकूं उद्यमी भए। तदि एक दयावंत पुरुषने छुडाया सो मैं कांपता देश तज यहां आया। कर्मानुयोगकर काकोदन जातिके म्लेच्छनिका अधिपति भया। महाभ्रष्ट, पशुसमान व्रत क्रिया रहित तिष्ठूं हूं। अब तक महा

सेनाके अधिपति बडे बडे राजा मेरे सम्मुख युद्ध करवेकू समथ न भए, मेरी दष्टिगोचर न आए, सो म आपके दशनमात्रहीत वशीभूत भया। धन्य भाग्य मेरे जो मने तुम पुरुषोत्तम देखे। अब मोहि जो आज्ञा देहु सो करू। आपका किकर, आपके चरणारविदकी चाकरी सिरपर धरू हू। अर वह विध्याचल पर्वत अर या स्थानक निधिकर पूण ह। बहुत धनकर पूण युक्त ह। आप यहा राज्य करहु। म तिहारा दास। ऐसा कहकर म्लेचछ मूर्छा खायकर पायन परचा, जस वृक्ष निमू ल होय गिर पडे। ताहि विह्वल देख श्री रामचन्द्र दयारूप बलकर बेढे कल्पवक्ष समान कहते भए, उठ उठ, डरे मत। बालखिल्यकू छोड, तत्काल यहा मगाओ, अर ताका आज्ञाकारी मत्री होय कर रह। म्लेच्छनिकी क्रिया तज, पापकर्मत निवत्त हो, दशकी रक्षा कर। या भाति किये तेरी कुशल ह। तब याने कही—हे प्रभो! ऐसा हो करू गा। यह वीनती कर आप गया अर महारथका पुत्र जो बालखिल्य ताहि छोडचा। बहुत विनयसयुक्त ताके तलादि मदन कर, स्नान भोजन कराय, आभूषण पहिराय, रथविष चढाय, श्रीरामचन्द्रके समीप ले जानेकू उद्यमी किया। तदि बालखिल्य परम आश्चयकू प्राप्त होय विचारता भया—कहा यह म्लेच्छ महाशत्रु कुकर्मी, अत्यन्त निदयी? अर मेरा एता विनय कर ह सो जानिये ह जो आज मोहि काहूकी भेंट देगा। अब मेरा जीवन नाहीं, यह विचार सो बालखिल्य सचित चाल्या। आग राम लक्ष्मणको देख परम हर्षित भया। रथत उतर आय नमस्कार किया अर कहता भया, हे नाथ! मेरे पुण्यके योगत आप पधारे मोहि बधनत छुडाया। आप महासुन्दर इन्द्र तुल्य मनुष्य हो, पुरुषोत्तम पुरुष हो। तब राम ने आज्ञा करी तू अपने स्थानक जाहु, कुटुम्बत मिलहु। तब बालखिल्य रामकू प्रणामकरि रौद्रभूत सहित अपने नगर गया। श्रीराम बालखिल्यकू छुडाय रौद्रभूतकू दासकरि वहाते चाले। बालखिल्य कू आया सुनकर कल्याणमाला महा विभूति सहित सन्मुख आई। अर नगरमें महा उत्सव भया। राजा राजकुमारको उरसे लगाय अपनी असवारीमें चढाय नगरविष प्रवश किया। राणी पृथ्वीके हृषसे रोमाच होय आए। जसा आगे शरीर सुदर हुता तसा पतिके आए भया। सिहोदरकू आदि

देय बालखिल्यके हितकारी सब ही प्रसन्न भए। अर कल्याणमाला पुत्रीने एते दिवस पुरुषका भेष कर राज थाम्भ्या हूता सो या बातका सबक आश्चय भया। यह कथा राजा श्रेणिकसू गौतमस्वामी कह ह—हे नराधिप! वह रौद्रभूत परद्रव्यका हरणहारा, अनेक देशनिका कटक सो श्रीरामके प्रतापत बालखिल्यका आज्ञाकारी सेवक भया। जब रौद्रभूत वशीभूत भया अर म्लेच्छनिकी विगम भूमिमें बालखिल्यकी आज्ञा प्रवर्ती, तब सिंहोवर भी शका मानता भया। अर स्नेह सहित सन्मान करता भया। बालखिल्य रघुपतिके प्रसादत परम विभूति पाय जसा शरद ऋतुमें सूय प्रकाश कर तसा पथ्वी विष प्रकाश करता भया। अपनी राणी सहित देवनिको न्याई रमता भया।

इति श्रीरविषेणाचायविरचित महा पद्मपुराण सस्कृतग्रन्थ ताकीभाषा वचनिकाविष म्लेच्छनिके राजा रौद्रभतिका वणन करनेवाला चौतीसवा पव पूण भया॥ ४॥

अथानन्तर राम लक्ष्मण देवनि सारिखे मनोहर, नन्दनवन सारिखा वन, ताविष सुखसे विहार करते एक मनोग्य देशविष आय निकसे। जाके मध्य तापी नदी बह। नानाप्रकारके पक्षिनिके शब्द करि सुन्दर तहा एक निजन वनमें सीता तषाकर अत्यन्त खेदखिन्न भई। तब पतिकू कहती भई—हे नाथ! तषासे मेरा कठ सूख ह। जसे अनन्त भवके भमणकर खेदखिन्न हुआ भव्यजीव सम्यकदशनकू बाछे तैस म तषासे व्याकुल शीतल जलकू बाछू हू। ऐसा कहिकर एक वक्षके नीचे बठ गई। तब रामने कही—हे देवी! हे शुभे! तू विषादकू मत प्राप्त होउ, नजीक ही यह आगे ग्राम ह, तहा सुन्दर मदिर ह उठ, आगे चल। या ग्राममें तोहि शीतल जलकी प्राप्ति होयगी। ऐसा जब कह्या तब उठ कर सीता चली, मद मद गमन करती गजगामिनी। ता सहित दोऊ भाई अरुणनामा ग्राममें आए। महा धनवान किसान रह, जहाँ एक ब्राह्मण अग्निहोत्री कपिलनामा प्रसिद्ध, ताके धरमें आय उतरे। ताको अग्निहोत्रीकी शालामें क्षण एक बठ खेद निवारया। कपिलकी ब्राह्मणी जल लाई सो सीता

पिया। तहां विराजे। अर वनतं ब्राह्मण बोल तथा छीला वा खेजडा इत्यादि काष्ठका भार बांधे आया। दावानल समान प्रज्वलित जाका मन, महाक्रोधी, कालकूट विषसमान वचन बोलता भया। उल्लू समान है मुख जाका अर करमें कमण्डलु, चोटीमें गांठ दिए लांबो डाढी, यज्ञोपवीत पहिरे, उञ्छवृत्ति कहिए अन्नको काटकर ले गये पीछे खेतनतें अन्न कण बीन लावे। या भांति है आजीविका जाकी। सो इनकूं बैठा देख वक्र मुखकर ब्राह्मणीकूं दुर्वचन कहता भया—हे पापिनी! इनकूं घरमें काहे प्रवेश दिया, मैं आज तोहि गायनिके मठनमें बांधूंगा। देख! इन निलज्ज ढीठ पुरुष धूरकर धूसरोंने मेरा अग्निहोत्रका स्थान मलिन किया। यह वचन सुन सीता रामतें कहती भई, हे प्रभो! या क्रोधीके घरमें न रहना, वनमें चलिए, जहां नानाप्रकारके पुष्प फल तिनकर मंडित वृक्ष शोभै हैं। निर्मल जलके भरे सरोवर हैं, तिनमें कमल फूल रहे हैं, अर मृग अपनी इच्छासे क्रीडा करते हैं। यहां ऐसे दुष्ट पुरुषनिके कठोर वचन सुनिए है। यद्यपि यह देश धनसे पूर्ण है अर स्वर्ग सारिखा सुन्दर है, परन्तु लोग महाकठोर हैं, अर ग्रामीजन विशेष कठोर ही होय हैं। सो विप्रके रूखे वचन सुन ग्रामके सकल लोक आए, इन दोऊ भाइनिका देवनिसमान रूप देख मोहित भए। ब्राह्मणकूं एकांतमें ले जाय लोक समझावते भये। ये एक रात्रि यहां रहें हैं तेरा कहा उजाडे हैं? ये गुणवान, विनयवान, रूपवान, पुरुषोत्तम हैं। तब द्विज सबसे लडया, अर सबसे कह्या—तुम मेरे घर काहे आये, परे जाहु। अर मूर्ख इनपर क्रोधकर आया जैसे श्वान गजपर आवे। इनकूं कहता भया—रे अपवित्र हो—मेरे घरतें निकसो। इत्यादि कुवचन सुन लक्ष्मण कोप भए। ता दुर्जनके पांव ऊंचेकर नाडि नीचेकर भमाया, भूमिपर पछाडने लगा। तब श्रीराम परमदयालु ताहि मने किया, हे भाई! यह कहा? ऐसे दीनके मारवेकरि कहा? याहि छोड देहु, याके मारनेतें बडा अपयश है। जिनशासनमें शूरवीरकूं ऐसे न मारने—यति, ब्राह्मण, गाय, पशु, स्त्री, बालक, वृद्ध ये दोष संयुक्त होय तो भी हनने योग्य नाहीं। या भांति भाईकूं समझाया, विप्र छुडाया अर आप लक्ष्मणकूं आगेकरि सीतासहित कुटीतैं निकसे। आप जानकी

से कहहै—हे प्रिये ! धिक्कार है नीचकी संगतिकूं, जिसकर क्रूरवचन सुनियेसो मनमें विकारका कारण है, अत महापुरुषनिकरि त्याज्य है। महाविषम वनमें वृक्षनिके नीचे वास भला, न नीचनिके साथ। अर आहारादिक विना प्राण जावें तो भले, परन्तु दुर्जनके घर क्षण एक रहना योग्य नाहीं। नदिनिके तटविषै पर्वतनिकी कंदरानिविषै रहेंगे। बहुरि ऐसे दुष्टके घर न आवेंगे। या भांति दुष्टके संगकूं निंदते ग्राम से निकसे। राम वनकूं गये, वहां वर्षा समय आय प्राप्त भया। समस्त आकाशको श्याम करता हुवा अर अपनी गर्जना कर शब्दरूप करी है पर्वतकी गुफा जाने, ग्रह नक्षत्र तारानि समूहको ढांककर शब्दसहित बिजुरीके उद्योतकर मानो अम्बर हसे है। मेघ पटल ग्रीष्मके तापकूं निवारकर पथिनिको बिजुरीरूप अंगुरिनिकरि डरावता संता गाजे है। श्याम मेघ आकाशमें अंधकार करता संता जलकी धाराकर मानो सीताकूं स्नान करावे है। जैसे गज लक्ष्मीकूं स्नान करावें। ते दोऊ वीर वनमें एक बडा वटका वृक्ष, ताके डाहला घरके समान, तहां विराजे। सो एक इभकर्ण नामा यक्ष उस वटमें रहता हुता सो इनको महा तेजस्वी जानकर अपने स्वामीकूं नमस्कारकर कहता भया—हे नाथ ! कोई स्वर्गते आए हैं, मेरे स्थानकविषै तिष्ठे हैं। जिनने अपने तेजकर मोहि स्थानते दूर किया है, वहां मैं जाय न सकूं हूं। तब यक्षके वचन सुनकर यक्षाधिपति अपने देवनिसहित बटका वृक्ष जहां राम लक्ष्मण हुते तहां आया, महाविभवसंयुक्त वनक्रीडाविषै आसक्त, पूतन है नाम जाका। दूरहीतैं दोऊ भाइनिकूं महा रूपवान देख अवधिकरि जानता भया—जो ये बलभद्र नारायण हैं। तब वह इनके प्रभावकर अत्यन्त वात्सल्यरूप भया। क्षणमात्रमें महामनोग्य नगरी निरमापी तहां सुखसूं सोते हुए प्रभात सुन्दर गीतोंके शब्दनिकर जागे। रत्नजडित सेजपर आपकूं देख्या अर मंदिर महामनोहर, अद्भुत खणका, अति उज्ज्वल, अर सम्पूर्ण सामग्रीकर पूर्ण। अर सेवक सुन्दर बहुत आदरके करनहारे। नगरमें रमणीक शब्द, कोट दरवाजेनिकर शोभायमान, ते पुरुषोत्तम महानुभाव, तिनका चित्त ऐसे नगरकूं तत्काल देख आश्चर्यकूं न प्राप्त भया। वह क्षुद्र पुरुषनिकी चेष्टा है जो अपूर्व वस्तु देख आश्चर्यको

प्राप्त होय। समस्त वस्तु कर मंडित वह नगर, तहां वे सुन्दर चेष्टाके धारक निवास करते भए, मानों ये देव ही हैं। यक्षाधिपतिने रामके अर्थ नगरी रची। तातें पृथ्वीपर रामपुरी कहाई। ता नगरी विषै सुभट मंत्री द्वारपाल नगरके लोग अयोध्या समान होते भए। राजा श्रेणिक गौतमस्वामीको पूछै है—हे प्रभो! ये तो देवकृत नगरविषै विराजे अर ब्राह्मणकी कहा बात? सो कहो। तब गणधर बोले—वह ब्राह्मण अन्य दिन दांतला हाथमें लेय वनमें गया, लकडी ढूंढते अकस्मात ऊंचे नेत्र किये। निकट ही सुन्दर नगर देखकर आश्चर्यकूं प्राप्त भया। नानाप्रकारके रंगकी ध्वजा, उन कर शोभित शरदके मेघ समान सुन्दर महिल देखे। अर एक राजमहिल महाउज्ज्वल, मानो कैलाशका बालक है सो ऐसा देखकर मनमें विचारता भया—जो यह अटवी मृगनिते भरी जहां मैं लकडी लेने निरंतर आवता हुता, सो यहां रत्नाचल समान सुन्दर मंदिरनिते संयुक्त नगरी कहांसूं बसी? सरोवर जलके भरे कमलनिकरि शोभित दीखे हैं जो मैं अब तक कभी न देखे। उद्यान महामनोहर, जहां चतुर जन क्रीडा करते दीखे हैं, अर देवालय महाध्वजानिकर संयुक्त शोभै हैं, अर हाथी, घोडे, गाय, भैंस तिनके समूह दृष्टि आवै हैं। घंटादिकके शब्द होय रहे हैं। यह नगरी स्वर्गतैं आई है अथवा पातालतैं निसरी है, कोऊ महाभाग्यके निमित्त। यह स्वप्न है अक प्रत्यक्ष है, अक देवमाया है, अक गंधर्वनिका नगर है, अक मैं पित्तकर व्याकुल भया हूं, याके निकटवर्ती जो मैं सो मेरे मृत्युका चिह्न दीखै है। ऐसा विचार कर विप्र विषादकूं प्राप्त भया। सो एक स्त्री नानाप्रकारके आभरण पहरे देखी। ताके निकट जाय पूछता भया। हे भद्रे! यह कौनकी पुरी है? तब वह कहती भई यह रामकी पुरी है तूने कहा न सुनी? जहां राम राजा जाके लक्ष्मण भाई, सीता स्त्री। अर नगरके मध्य यह बडा मंदिर है शरद के मेघ समान उज्ज्वल, जहां वह पुरुषोत्तम विराजे है, कैसा है पुरुषोत्तम? लोकविषै दुर्लभ है दर्शन जाका। सो ताने मनवांछित द्रव्यके दानकरि सब दरिद्री लोक राजानि समान किये। तब ब्राह्मण बोला—हे सुन्दरी! कौन उपाय कर याहि देखूं सो तू कह। ऐसे काष्ठका भार डारकर हाथ जोड ताके

पायन परया। तब वह सुमाया नामा यक्षिनी कृपाकर कहती भई, हे विप्र! या नगरीके तीन द्वार हैं, जहा देव हू प्रवेश न कर सक, बडे-बडे योधा रक्षक बठे हैं, रात्रिम जाग ह, जिनके मुख सिंह
 गज, व्याघ तुल्य ह, तिनकरि भयकू मनुष्य प्राप्त होय ह। यह पूव द्वार है जाके निकट बडे बडे भग-
 वानके मंदिर ह, मणिके तोरणकरि मनोग्य। तिनमें इन्द्र कर वंदनीक अरहंतके बिंब विराजे हैं। अर
 जहा भव्यजीव सामायिक आदि स्तवन कर ह। अर जो नमोकारमंत्र भाव सहित पढे है सो माहि प्रवेश कर सक ह। जो पुरुष अणुव्रतका धारी गुणशीलकरि शोभित ह ताको राम परम प्रीतिकर वाछ ह। यह वचन यक्षिनीके अमत समान सुनकर ब्राह्मण परम हषकू प्राप्त भया। धन आगमन का उपाय पाय, यक्षनीकी बहुत स्तुति करी। रोमाच कर मडित भया ह सव अग जाका। सो चारित्र-शूर नामा मनिके निकट जाय हाथ जोड नमस्कार कर श्रावकको क्रियाका भेद पूछता भया। तवि मुनिने श्रावकका धम याहि सुनाया चारो अनुयोगका रहस्य बताया। सो ब्राह्मण धमका रहस्य जान मुनिकी स्तुति करता भया-हे नाथ! तिहारे उपदेशकरि मेरे ज्ञानदृष्टि भई, जैस तषावानकू शीतल जल, अर ग्रीष्मके तापकर तप्तायमान पथीकू छाया, अर क्षुधावानकू मिष्टान्न, अर रोगीकू औषधि मिल, तस कुमागमें प्रतिपन्न जो म सो मोहि तिहारा उपदेश रसायन मिल्या, जस समुद्रविष डूबतेकू जहाज मिल। म यह जनका माग सव दु खनिका दूर करणहारा तिहारे प्रसादकरि पाया, जो अविवेकीनिकू दुलभ ह। तीनलोकमें मेरे तुम समान कोऊ हित नाहीं जिनकर ऐसा जिनधम पाया।
ऐसा कहकर मुनिके चरणारविंदकू नमस्कार कर ब्राह्मण अपने घर गया। अति हर्षित, फूल रहे हैं
नेत्र जाके, स्त्रीसू कहता भया, हे प्रिये! मने आज गुरुके निकट अदभुत जिनधम सुन्या ह, जो तेरे बापने अथवा मेरे बापने अथवा पिताके पिताने भी न सुन्या। अर हे ब्राह्मणी! मने एक अदभुत वन देख्या तामें एक महामनोग्य नगरी देखी, जाहि दख अचरज उपज, परन्तु मेरे गुरुके उपदेशकरि अच-रज नहि उपज ह। तब ब्राह्मणी कही, हे विप्र! त कहा देख्या अर कहा २ सुन्या मो कहहु। तब

ब्राह्मण कही—हे प्रिये ! मैं हर्ष थकी कहने समर्थ नाहीं, तब बहुत आदर कर ब्राह्मणी बारम्बार पूछ्या। तब ब्राह्मण कही—हे प्रिये ! मैं काष्ठके अर्थ वनविषै गया हुता। सो वनविषै एक महा रमणीक रामपुरी देखी। ता नगरीके समीप उद्यानविषै एक नारी सुन्दर देखी। सो वह कोई देवता होयगी महा मिष्टवादिनी। मैंने पूछ्या या नगरी कौनकी है, तब वाने कही यह रामपुरी है, जहां राम श्रावकनिकूं मनवांछित धन देवै है। तब मैं मुनिपै जाय जिनवचन सुन सो मेरा आत्मा बहुत तृप्त भया, मिथ्यादृष्टि कर मेरा आत्मा आताप युक्त हुता सो आताप गया। जिनधर्मकूं पायकर मुनिराज मुक्तिके अभिलाषी सब परिग्रह तज महा तप करैं। सो वह अरहंतका धर्म त्रैलोक्यविषै एक महानिधि मैं पाया। ये बहिर्मुख जीव वृथा क्लेश करैं हैं। मुनि थकी जैसा जिनधर्मका स्वरूप सुन्या हुता तैसा ब्राह्मणीकूं कह्या। कैसा है जिनधर्मका स्वरूप ? उज्ज्वल है। अर कैसा है ब्राह्मण ? निर्मल है चित्त जाका। तब ब्राह्मणी सुनकर कहती भई मैं भी तिहारे प्रसादकरि जिनधर्मकी रुचि पाई। अर जैसे कोई विष फलका अर्थी महानिधि पावै, तैसे ही तुम काष्ठादिकके अर्थी धर्म इच्छाते रहित श्रीअरहंतका धर्म रसायन पाया, अबतक तुमने धर्म न जान्या। अपने आंगनविषै आए सत्पुरुष तिनका निरादर किया, उपवासादि करि खेदखिन्न दिगम्बर तिनकूं कबहु आहार न दिया, इन्द्रादिक कर वंदनीक जे अरहंत देव तिनकूं तजकर ज्योतिषी व्यंतरादिककूं प्रणाम किया, जीवदयारूप जिनधर्म अमृत तज अज्ञानके योगते पापरूप विषका सेवन किया। मनुष्य देहरूप रत्नदीप पाय, साधुनिकरि परखा धर्मरूप रत्न तज, विषयरूप काचका खंड अंगीकार किया। जे सर्वभक्षी दिवस रात्रि आहारी, अव्रती, कुशीली तिनकी सेवा करी। भोजनके समय अतिथि आवै अर जो निर्बुद्धि अपने विभवप्रमाण अन्नपानादि न दे ताके धर्म नाहीं। अतिथि पदका अर्थ—तिथि कहिये उत्सवके दिन तिनविषै उत्सव तज जाके तिथि कहिये विचार नाहीं, अर सर्वथा निस्पृह धनरहित साधु सो अतिथि कहिये, जिनके भाजन नाहीं, कर ही पात्र हैं वे निर्ग्रंथ आप तिरैं औरनिकूं तारैं अपने शरीरमें हू निस्पृह काहू वस्तुविषै जिनका लोभ नाहीं। ते निरपरिग्रही मुक्तिके कारण

जे दशलक्षण तिनकर शोभित है। या भांति ब्राह्मणने ब्राह्मणीकूं धर्मका स्वरूप कह्या। अर सुशर्मा नामा ब्राह्मणी मिथ्यात्वरहित होती भई। जैसे चन्द्रमाके रोहिणी शोभै, अर बुधके भरणी सोहै तैसे कपिलके सुशर्मा शोभती भई। ब्राह्मण ब्राह्मणीकूं वाही गुरुके निकट ले गया, जाके निकट आप व्रत लिये हुते। सो स्त्रीको हू श्रावकके व्रत दिवाये। कपिलकूं जिनधर्मविषै अनुरागी जान और हू अनेक ब्राह्मण समभाव धारते भए। मुनिसुव्रतनाथका मत पायकर अनेक सुबुद्धि श्रावक श्राविका भए। अर जे कर्मनिके भारकर संयुक्त, मानकर ऊंचा है मस्तक जिनका, वे प्रमादी जीव थोडे ही आयुविषै पापकर घोर नरकविषै जाय हैं। कईएक उत्तम ब्राह्मण सर्व संगका परित्यागकर मुनि भए। वैराग्यकर पूर्ण, मनविषै ऐसा विचार किया—यह जिनेन्द्रका मार्ग अबतक अन्य जन्ममें न पाया, महा निर्मल अब पाया, ध्यानरूप अग्निविषै कर्मरूप सामग्री भाव घृतसहित होम करेंगे। सो जिनके परम वैराग्य उदय भया ते मुनि ही भए। अर कपिल ब्राह्मण महा क्रियावान श्रावक भया। एक दिवस ब्राह्मणीकूं धर्मकी अभिलाषिनी जान कहता भया—हे प्रिये! श्रीरामके देखवेकूं रामपुरी क्यों न चालैं? कैसे हैं राम? महापराक्रमी, निर्मल है चेष्टा जिनकी, अर कमल सरीखे हैं नेत्र जिनके, सब जीवनिके दयालु, भव्य जीवनिपर है वात्सल्य जिनका। जे प्राणी आशामें तत्पर, नित्य, उपायविषै है मन जिनका, दलिद्रीरूप समुद्रमें मग्न, उदर पूर्णविषै असमर्थ, तिनकूं दरिद्ररूप समुद्रतें पार उतार परमसम्पदाकूं प्राप्त करै हैं। या भांति कीर्ति जिनकी पृथ्वीविषै फैल रही है, महाआनन्दकी करण-
हारी, तातैं हे प्रिय! उठ, भेंट लेकर चालैं। अर मैं सुकुमार बालककूं कांधे लूंगा। ऐसे ब्राह्मणीकूं कहि तैसे ही कर, दोऊ हर्षके भरे उज्ज्वल भेषकर शोभित रामपुरीकूं चाले। सो उनकूं मार्गविषै भयानक नागकुमार दृष्टि आए, बहुरि विंतर विकराल वदन हाडहडास करते दृष्टि आए। इत्यादि भयानक रूप देख ये दोऊ निकम्प हृदय होयकर या भांति भगवानकी स्तुति करते भए, श्रीजिनेश्वर ताईं निरन्तर मन वचन कायकर नमस्कार होहु। कैसे हैं जिनेश्वर? त्रैलोक्यकर वंदनीक हैं, संसार

कीचसे पार उतार है, परम कल्याणके देनहारे है। यह स्तुति पढते ये दोऊ चले जावै है। इनकू जिन भक्त जान यक्ष शात होय गए। ये दोऊ जिनालयमें गए, नमस्कार होहु—जिनमदिरकू ऐसा कह दोऊ हाथ जोड अर चत्यालयकी प्रदक्षिणा दई, अर माहीं जाय स्तोत्र पढते भए—हे नाथ! महाकुगतिका दाता मिथ्यामाग ताहि तजकर बहुत दिनमें तिहारा शरण गहा। चौबीस तीथकर अतीत कालके अर चौबीस वतमान कालके अर चौबीस अनागत कालके तिनकू म वदू हू। अर पचभरत, पच ऐरावत, पचविदेह ये पन्द्रह कमभूमि तिनविष जे तीर्थंकर भए, अर वर्तै है, अर अब होवेंगे, तिन सब निकू हमारा नमस्कार होहु। जो ससार समुद्रसू तिर अर औरनकू तार ऐसे श्रीमुनिसुव्रतनाथके ताईं नमस्कार होहु। तीन लोकम जिनका यश प्रकाश कर है। या भाति स्तुतिकर अष्टाग दण्डवतकरि ब्राह्मण स्त्रीसहित श्रीरामके अवलोकनकू गए। मागमें बडे बडे मन्दिर महाउद्योतरूप ब्राह्मणीकू दिखाए अर कहता भया—ये कुन्दके पुष्प समान उज्ज्वल सब कामना पूण नगरीके मध्य रामके मदिर है, जिनकरि यह नगरी स्वगसमान शोभ है। या भाति वार्ता करता ब्राह्मण राजमदिरविष गया। सो दूर हीत लक्ष्मणकू देख व्याकुलताकू प्राप्त भया। चित्तमें चितारे है—वह श्याम सुन्दर नीलकमल समान प्रभा जाकी, म अज्ञानी दुष्ट वचननि करि दुखाया सो मोहि त्रास दीनी। पापिनी जिह्वा, महादुष्टिनी काननकू कटुक वचन भाखे, अब कहा करू? कहा जाऊ? पथ्वीके छिद्रमें बठू, अब मोहि शरण कौन का? जो म यह जानता अक ये यहा ही नगरी बसाए रहे है तो मैं देश त्यागकर उत्तर दिशाकू चला जाता। या भाति विकलपरूप होय ब्राह्मणीकू तज ब्राह्मण भागा। सो लक्ष्मणने देख्या। तब हसकर रामकू कहा—वह ब्राह्मण आया है, अर मगकी नाईं व्याकुल होय मोहि देख भाग है। तब राम बोले याकू विश्वास उपजाय शीघ लावो। तब सेवकजन दौडे, दिलासा देय लाए डिगता अर कापता आया। निकट आय भय तज, दोऊ भाइनके आगे भेट मेल 'स्वस्ति' ऐसा शब्द कहता भया, अर अति स्तवन पढता भया। तब राम बोले—हे द्विज! त हमकू अपमानकर अपने घरत काढें हुते। अब

काहे पूज ह । तब विप्र बोला–हे देव ! तुम प्रच्छन्न महेश्वर हो, म, अज्ञानत न जाने, तात अनादर किया । जसै भस्मत वबो अग्नि जानी न जाय । हे जगन्नाथ ! या लोकको यही रीति है, धनवानकू पूजिये ह । सूय शीतऋतुमें ताप रहित होय ह सो तासे कोई नाहीं सक ह । अब मैं जाना तुम पुरुषो त्तम हो । हे पदमलोचन ! ये लोक द्रव्यकू पूज हैं, पुरुषको नाही पूज ह । जो अथकर युक्त होय ताहि लौकिकजन मान ह । अर परम सज्जन ह अर धनरहित ह तो ताहि निष्प्रयोजन जन जान न मान ह । तब राम बोले–हे विप्र ! जाके अथ ताके मित्र, जाके अथ ताके भाई, जाके अथ सोई पडित, अथ विना न मित्र न सहोदर, जो अथकर सयुक्त ह, ताके परजन हू निज होय जाय ह । अर धन वही जो धर्मकरयुक्त । अर धर्म वही जो दयाकरयुक्त । अर दया वही जहा मास भोजनका त्याग । जब सब जीवनिका मास तजा, तब अभक्ष्यका त्याग कहिए, ताके और त्याग सहज ही होय । मासके त्याग विना और त्याग शोभ नाहीं । ये वचन रामके सुन विप्र प्रसन्न भया अर कहता भया–हे देव ! जो तुम सारिखे पुरुषनिकू महापुरुष पूजिए ह तिनका भी मूढ लोक अनादर कर ह । आगे सनत्कुमार चक्रवर्ती भए । बडी ऋद्धिके धारी महारूपवान जिनका रूप देव देखने आए । सो मुनि होयकर आहार कू ग्रामादिकविष गए । महा आचार प्रवीण सो निरतराय भिक्षाकू न प्राप्त होते भए । एक दिवस विजयपुर नाम नगरविष एक निधन मनुष्यक आहार लिया, याके पच आश्चय भए । हे प्रभो ! मैं मदभाग्य तुम सारिखे पुरुषनिका आदर न किया सो अब मेरा मन पश्चातापरूप अग्नि कर तप ह । तुम महारूपवान, तुमकू दख महाक्रोधीका क्रोध जाता रह, अर आश्चयकू प्राप्त होय । ऐसा कह कर सोचकर गहस्थ कपिल रुदन करता भया । तदि श्रीरामने शुभवचनकरि सतोष्या अर सुशर्मा ब्राह्मणीकू जानकी सतोषती भई । बहुरि राघवकी आज्ञा पाय स्वणके कलशनिकरि सेवकनिने द्विजकू स्त्रीसहित स्नान कराया अर आदरसो भोजन कराया । नानाप्रकारके वस्त्र अर रत्ननिके आभूषण दिए, बहुत धन दिया । सो लेयकर अपने घर आया । मनुष्यनिकू विस्मयका करणहारा धन याके

भया। यद्यपि याके घरविषै सब उपकार सामग्री अपूर्व है तथापि या प्रवीणका परिणाम विरक्त, घर विषै आसक्त नाहीं। मनविषै विचारता भया—आगे काष्ठके भारका वहनहारा दरिद्री हुता, सो श्री रामदेवने तृप्त किया। याही ग्रामविषै मैं सोषित शरीर अभूषित हुता सो रामने कुबेर समान किया। चिंता दुखरहित किया। मेरा घर जीर्ण तृणका, जाके अनेक छिद्रकादि, अशुचि पक्षिनिकी बीटकर लिप्त, अब रामके प्रसादकरि अनेक स्वर्णके महिल भए। बहुत गोधन, बहुत धन, काहू वस्तुकी कमी नाहीं। हाय २ मैं दुर्बुद्धि कहा किया? वे दोऊ भाई, चन्द्रमा समान वदन जिनके, कमलनेत्र मेरे घर आए हुते, ग्रीष्मके आतापकरि तप्तायमान सीता सहित, सो मैंने घरते निकासे। या बातकी मेरे हृदयविषै महाशल्य है। जो लग घरविषै बसूं हूं तौ लग खेद मिटै नाहीं। तातैं गृहारम्भका परित्यागकर जिनदीक्षा आदरूं। जब यह विचारी, तब याकूं वैराग्यरूप जान समस्त कुटुम्बके लोक अर सुशर्मा ब्राह्मणी रुदन करते भए। तब कपिल सबकूं शोकसागरविषै मग्न देख निर्ममत्वबुद्धिकरि कहता भया। कैसा है कपिल? शिवसुखविषै है अभिलाषा जाकी, हो प्राणी हो! परिवारके स्नेहकरि अर नानाप्रकारके मनोरथनिकरि यह मूढ जीव भवातापकर जरै है, तुम कहा नाहीं जानौ हो? ऐसा कह महा विरक्त होय, दुखकर मूर्छित जो स्त्री ताहि तज, अर सब कुटुम्बकूं तज, अठारह हजार गाय, अर रत्ननिकर पूर्ण घर, अर घरके बालक स्त्रीकूं सौंप आप सर्वारम्भ तज दिगम्बर भया। स्वामी अनंतमतिका शिष्य भया—कैसे हैं अनंतमति? जगतविषै प्रसिद्ध तपोनिधि, गुण शीलके सागर। यह कपिल मुनि गुरुकी आज्ञा प्रमाण महातप करता भया। सुन्दर चरित्रका भार धर परमार्थविषै लीन है मन जाका, वैराग्य विभूतिकर अर साधुपदकी शोभाकर मंडित है शरीर जाका। सो जो विवेकी यह कपिलकी कथा पढै सुनै ताहि अनेक उपवासनिका फल होय, सूर्य समान ताकी प्रभा होय।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रंथ ताकी भाषावचनिकाविषै देवनिकर नगरका बसावन कपिल ब्राह्मणका वैराग्य वर्णन करनेवाला पैतीसवां पर्व पूर्ण भया ॥ ३५ ॥

अथानन्तर वर्षाऋतु पूर्ण भई । कसी है वर्षाऋतु ? श्याम घटाकरि महा अंधकाररूप, जहां मेघ जल असराल बरसै, अर बिजुरिनिके चमत्काररकर भयानक । वर्षाऋतु व्यतीत भई, शरदऋतु प्रकट भई, दशो दिशा उज्ज्वल भई तब वह यक्षाधिपति श्रीरामसू कहता भया—कसे हैं श्रीराम ? चलवेका है मन जिनका । यक्ष कहै है—हे देव ! हमारी सेवामे जो चूक होय सो क्षमा करो । तुम सारिखे पुरुषनिकी सेवा करवेकू कौन समर्थ है ? तब राम कहते भए—हे यक्षाधिपते ! तुम सब बातोंके योग्य हो, अर तुम पराधीन होय हमारी सेवा करी सो क्षमा करियो । तब इनके उत्तम भाव विलोक अति हर्षित भया, नमस्कारकर स्वयप्रभ नामा हार श्रीरामको भेट किया, महा अदभुत । अर लक्ष्मणकू मणिकुंडल चांद सूर्य सारिखे भेट किए । अर सीताकू सकल्याण नामा चूडामणि महा दैदीप्यमान दिया, अर महामनोहर मनवांछित नादकी करनहारी देवोपुनीत वीणा दई । ते अपनी इच्छातै चाले । तब यक्षराज पुरी सकोच लई अर इनके जायवेका बहुत शोक किया । अर श्रीरामचन्द्र यक्षकी सेवाकर अति प्रसन्न होय आगे चले । देवोंकी न्याई रमते, नानाप्रकारकी कथाविषै आसक्त, नानाप्रकारके फलनिके रसके भोक्ता पृथ्वीपर अपनी इच्छासू चलते भमते, मृगराज तथा गजराजनिकर भरचा जो महाभयानक वन ताहि उलंघकर विजयपुर नामा नगर आये । ता समय सूर्य अस्त भया । अंधकार फैल्या, आकाशविषै नक्षत्रनिके समूह प्रकट भए, नगरतै उत्तर दिशाकी तरफ न अति निकट न अतिदूर कायरलोगनिकू भयानक जो उद्यान वहां विराजे ।

अथानन्तर नगरका राजा पृथ्वीधर, जाके इन्द्राणी नामा राणी, स्त्रीके गुणनिकरि मंडित, ताके वनमाला नामा पुत्री महासुन्दर, सो बाल अवस्थाहीतै लक्ष्मणके गुण सुन अति आसक्त भई । बहुरि सुनी दशरथने दीक्षा धरी, अर केकईके वचनतै भरतकू राज्य दिया, राम लक्ष्मण परदेश निकसे हैं । ऐसा विचार याके पिताने कन्याको इन्द्र नगरका राजा ताका पुत्र जो बालमित्र महासुन्दर ताहि देनी विचारी । सो यह वृत्तांत वनमाला सुना । हृदयविषै विराजै है लक्ष्मण जाके । तब मनविषै विचारी

कठफासी लय मरण भला परन्तु अन्य पुरुषका सम्बन्ध शुभ नाही। यह विचार सूयसू सभाषण करती भई। हे भानो ! अस्त होय जावो, शीघ्र ही रात्रिकू पठावहु, अब दिनका एकक्षण मोहि वष समान बीत ह। सो मानो याक चितवनकर सूय अस्त भया। कन्याका उपवास ह, सध्या समय माता पिता की आज्ञा लेय श्रेष्ठरथविष चढ वनयात्राका बहानाकर रात्रिविष तहा आई जहा राम लक्ष्मण तिष्ठे हुते। सो यान आनकर ताही वनविष जागरण किया। जब सकललोक सोयगए तब यह मद मद पर धरती बनकी मगी समान डेरात निकस वनविष चाली। सो यह महासती पदमनी ताक शरीरकी सुगधताकरि वन सगधित होयगया। तब लक्ष्मण विचारता भया यह कोई राजकुमारी महा श्रेष्ठ मानो ज्योतिकी मूर्ति ही ह, सो महा शोकके भार कर पीडित ह मन जाका, यह अपघात कर मरण वाछ ह, सो म याकी चेष्टा छिपकर देखू। ऐसा विचारकर छिपकर वटके वक्ष तले बठ्या, मानो कौतुकयुक्त देव कल्पवक्षक नीचे बठे। ताही वटके तले हसनीकोसी ह चाल जाकी, अर चन्द्रमा समान ह वदन जाका, कोमल ह अग जाका, ऐसी वनमाला आई। जलसू आला वस्त्रकर फासी बनाई, अर मनोहर वाणीकर कहती भई— अहो या वक्षक निवासी देवता ! कपाकर मेरी बात सुनहु। कदाचित वनविष विचरता लक्ष्मण आव तो तुम ताहि ऐसे कहियो—जो तिहारे विरहकरि महादुखित वनमाला तुमविष चित्त लगाय, वटके वक्ष विष वस्त्रकी फासी लगाय, मरणकू प्राप्त भई, हम या देखी। अर तुमकू यह सदेशा कह्या ह जो या भवविष तिहारा सयोग मोहि न मिल्या, अब परभवविष तुमही पति हूजियो। यह वचन कह वक्ष की शाखासू फासी लगाय आप फासी लेने लगी। ताही समय लक्ष्मण कहता भया—हे मुग्धे ! मेरी
भुजाकर आलिगन योग्य तेरा कठ ताविष फासी काहेकू डार ह ? हे सुन्दरवदनी ! परमसुन्दरी ! म लक्ष्मण हू। जसा तेरे श्रवणविष आया ह तसा देख। अर प्रतीत न आव तो निश्चयकर लेहु। ऐसा कह ताके करसे फासी हर लीनी, जस कमलथकी भ्रमरोके समूहकू दूर कर। तब वह लज्जाकरयुक्त प्रेमकी दष्टिकर लक्ष्मणकू देख मोहित भई। कसा ह लक्ष्मण ? जगतके नेत्रनिका हरणहारा ह रूप

जाका। परम आश्चर्यकू प्राप्त भई चित्तविषे चितवे है यह कोई मोपर देवनि उपकार किया, मेरी अवस्था देख दयाकू प्राप्त भए। जैसा मैं सुन्या हुता तैसा देवयोगते यह नाथ पाया, जाने मेरे प्राण बचाए। ऐसा चितवन करती वनमाला लक्ष्मणके मिलापते अत्यन्त अनुरागकू प्राप्त भई।

अथानंतर महासुगंध कोमल साथरेपर श्रीरामचन्द्र पौढे हुते। सो जागकर लक्ष्मणकू न देख जानकीकू पूछते भए—हे देवी! यहां लक्ष्मण नाहीं दीखे है। रात्रिके समय मेरे सोवनेकू पुष्प पल्लवनिका कोमल साथरा बिछाय आप यहां ही तिष्ठता हुता सो अब नाहीं दीखे है। तब जानकी कही—हे नाथ! ऊंचा स्वरकर बुलाय लेहु। तब आप शब्द किया—हे भाई! हे लक्ष्मण! हे बालक! कहां गया? शीघ्र आवहु। तब भाई बोला—हे देव! आया। वनमालासहित बडे भाईके निकट आया। आधी रात्रि का समय चन्द्रमाका उदय भया कुमुद फूले शीतल मंद सुगंध पवन बाजने लागी। ता समय वनमाला कोपल समान कोमल कर जोड वस्त्रकर बेढ्या है सब अंग जाने लज्जाकर नमीभूत है मुख जाका, जाना है समस्त कर्तव्य जाने महाविनयकू धरती श्रीराम अर सीताके चरणारविंदकू वंदती भई। सीता लक्ष्मणकू कहती भई-हे कुमार! तैने चन्द्रमाकी तुल्यता करी। तब लक्ष्मण लज्जाकर नीचा होय गया। श्रीराम जानकीते कहते भए तुम कैसे जानी? तब कही—हे देव! जा समय चन्द्रमाका उद्योत भया ताही समय कन्यासहित लक्ष्मण आया। तब श्रीराम सीताके वचन सुन प्रसन्न भए।

अथानंतर वनमाला महाशुभ शील इनकू देख, आश्चर्यकी भरी, प्रसन्न है मुख चन्द्रमा जाका, फूल रहे है नेत्रकमल जाके, सीताके समीप बैठी, अर ये दोऊ भाई देवनि समान महासुन्दर निद्रारहित सुखते ४५६
कथा वार्ता करते तिष्ठे है। अर वनमालाकी सखी जागकर देखे तो सेज सूनी, कन्या नाहीं। तब भयकर खेदित भई अर महाव्याकुल होय रुदन करती भई। ताके शब्दकर योधा जागे, आयुध लगाय तुरंग चढ दशो दिशाको दौडे अर पयादे दौडे। बरछी अर धनुष है हाथमें जिनके, दशोदिशा ढूंढी। राजाका भय अर प्रीतिकर संयुक्त है मन जाका, ऐसे दौडे मानो पवनके बालक है। तब कईएक या तरफ दौडे

आए। वनमालाकू वनविषै रामलक्ष्मणके समीप बैठी देख बहुत हर्षित होय जायकर राजा पृथ्वीधरकू बधाई दई अर कहते भए—हे देव! जिनके पावनेका बहुत यत्न करिये तो भी न मिलें वे सहज ही आए है। हे प्रभो! तेरे नगरमें महानिधि आई, विना बादल आकाशतै वृष्टि भई, क्षेत्रविषै विना वाहे धान ऊगा। तिहारा जमाई लक्ष्मण नगरके निकट तिष्ठै है, जानैं वनमाला प्राण त्याग करती बचाई, अर राम तिहारे परमहितु सीतासहित विराजै है, जैसे शचीसहित इन्द्र विराजै। ये वचन राजा सेवकनिके सुनकर महाहर्षित होय क्षणएक मूर्छित होय गया। बहुरि परम आनन्दकू प्राप्त होय सेवकनिकू बहुत धन दिया अर मनविषै विचारता भया—मेरी पुत्रीका मनोरथ सिद्ध भया। जीवनिके धनकी प्राप्ति, अर इष्टका समागम और हू सुखके कारण पुण्यके योगकरि होय है। जो वस्तु सैकडो योजन दूर अर श्रवणमें न आवै सो हू पुण्याधिकारीके क्षणमात्रविषै प्राप्त होय है। अर जे प्राणी दुखके भोक्ता पुण्यहीन है तिनके हाथसे इष्टवस्तु विलाय जाय है। पर्वतके मस्तकपर तथा वनविषै सागरविषै पथविषै पुण्याधिकारिनके इष्ट वस्तुका समागम होय है। ऐसा मनविषै चितवनकर स्त्रीसू सब वृत्तांत कह्या। स्त्री बारम्बार पूछै है, यह जानै मानो स्वप्न ही है। बहुरि रामके अधर समान आरक्त सूर्यका उदय भया। तब राजा प्रेमका भरचा सब परिवारसहित हाथीपर चढकर परम कांतियुक्त रामसू मिलने चाल्या, अर वनमालाकी माता आठ पुत्रसहित पालकीपर चढकर चाली। सो राजा दूरहीतै श्रीरामका स्थानक देखकर फूल गए है नेत्रकमल जाके, हाथीतै उतर समीप आया। श्रीराम अर लक्ष्मणसू मिल्या। अर वाकी रानी सीताके पायन लागी अर कुशल पूछती भई, वीणा, बांसुरी, मृदंगादिक शब्द होते भए, वंदीजन बिरद बखानते भए, बडा उत्सव भया। राजाने लोकनिकू बहुत दान दिया। नृत्य होता भया, दशोदिशा नादकर शब्दायमान होती भई। श्रीराम लक्ष्मणकू स्नान भोजन कराया। बहुरि घोडे, हाथी, रथ तिनपर चढे अनेकसामंत अर हिरण समान कूदते प्यादे तिन सहित रामलक्ष्मणने हाथीपर चढे संते पुरविषै प्रवेश किया। राजाने नगर उछाया। महाचतुर मागध

पद्म पुराण ४५८

विरद बखान है, मंगल शब्द करे है। राम लक्ष्मणने अमोलिक वस्त्र पहरे, हारकर विराजे है वक्षस्थल जिनका, मलयागिरिके चंदनते लिप्त है अंग जिनका, नानाप्रकारके रत्ननिकी किरणनिकरि इन्द्रधनुष होय रह्या है। दोऊ भाई चांदसूर्य सारिखे, नाहीं वरणे जावें हैं गुण जिनके, सौधर्म ईशान सारिखे जानकीसहित लोकनिकू आश्चर्य उपजाते राजमन्दिर पधारे। श्रेष्ठ माला धरे, सुगन्धकर गुंजार करे है भ्रमर जापर, महा विनयवान चंद्रवदन इनकू देख लोक मोहित भए। कुबेर कासा किया जो वह सुन्दर नगर वहां अपनी इच्छाकरि परमभोग भोगते भए। या भांति सुकृतमें है चित्त जिनका, महा गहन वनविषै प्राप्त भए हू परम विलासकू अनुभवे है। सूर्य समान है कांति जिनकी, वे पापरूप तिमिरकू हरे है, निज पदार्थके लोभते आनन्दरूप है।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महा पद्मपुराण संस्कृतग्रन्थ ताकीभाषा वचनिकाविषैवनमालाका लाभ वर्णन करनेवाला छत्तीसवां पर्व पूर्ण भया ॥ ३६ ॥

— —

अथानन्तर एक दिन श्रीराम सुखसे विराजे हुते अर पृथ्वीधर भी समीप बैठा हुता, ता समय एक पुरुष दूरका चाल्या महा खेदखिन्न आयकर नमीभूत होय पत्र देता भया। सो राजा पृथ्वीधरने पत्र लेयकर लेखककू सौंप्या। लेखकने खोलकर राजाके निकट बाच्या। तामें या भांति लिख्या हुता कि इन्द्र समान है उत्कृष्ट प्रभाव जाका, महालक्ष्मीवान, नमें हैं अनेक राजा जाकू, श्रीनन्द्यावर्त नगरका स्वामी, महा प्रबल पराक्रमका धारी, सुमेरुपर्वतसा अचल, प्रसिद्ध शस्त्र शास्त्रविद्याविषै प्रवीण, सब राजानिका राजा महाराजाधिराज, प्रतापकर वश किए हैं शत्रु अर मोहित करी है सकल पृथ्वी जाने, उगते सूर्य समान महा बलवान, समस्त कर्तव्यविषै कुशल, महानीतिवान, गुणनिकर विराजमान, श्रीमान, पृथ्वीका नाथ महाराजेन्द्र अतिवीर्य, सो विजयनगरविषै पृथ्वीधरकू क्षेमपूर्वक आज्ञा करे है—कि जे कई पृथ्वीपर सामंत हैं, वे भण्डारसहित, अर सब सेनासहित मेरे निकट प्रवरते हैं। आर्य खंड ४५८

के अर म्लेच्छ खडके चतुरग सेनासहित नानाप्रकारके शस्त्रनिके धरणहारे मेरी आज्ञाकू शिरपर धारे है। अञ्जनिगिरि सारिखे आठसो हाथी, अर पवनके पुत्रसम तीनहजार तुरग, अनेक पयादे, तिनसहित महापराक्रमका धारी महातेजस्वी, मेरे गुणनिसे खीचा ह मन जाका, ऐसा राजा विजयशार्दूल आया है। अर अग देशके राजा मृगध्वज, रणोर्मि कलभकेशरी यह प्रत्येक पाच पाच हजार तुरग अर छह सौ छहसौ हाथी अर रथ पयादे तिनसहित आए ह, महा उत्साहके धारी, महा न्यायविषै प्रवीण ह बुद्धि जिनकी। अर पाचालदेशका राजा पौढ परम प्रतापकू धरता, न्यायशास्त्रविषै प्रवीण, अनेक प्रचड बलकू उत्साहरूप करता हजार हाथी अर सातहजार तुरगनित अर रथ पयादनिकरि युक्त हमारे आया ह। अर मगधदेशका राजा सुकेश बडी सेनासू आया ह। अनेक राजानिसहित जसै सकर्डनि नदीनिके प्रवाहकू लिए रेवाका प्रवाह समुद्रविषै आव, तस ताके सग कालीघटा समान आठ हजार हाथी, अनेक रथ अर तुरगनिके समूह ह, अर वजका आयुध धार ह। अर म्लेच्छनिके अधिपति समुद्र, मुनिभद्र, साधुभद्र, नन्दन इत्यादि राजा मेरे समीप आए ह। वजधर समान, अर नाहीं निवारया जाय पराक्रम जका, ऐसा राजा सिहवीय आया ह। अर राजा वग अर सिहरथ ये दोऊ हमारे मामा महा बलवान बडी सेनासू आए ह। अर वत्सदेशका स्वामी मारुदत्त अनेक पयादे, अनेक रथ, अनेक हाथी, अनेक घोडानिकर युक्त आया ह। अर राजा प्रौष्ठल सौवीर सुमेरु सारिखे अचल प्रबल सेनात आए ह। ये राजा महापराक्रमी पथ्वीपर प्रसिद्ध देवनि सारिखे दस अक्षोहिणी दल सहित आए ह। तिन राजानि सहित म बडे कटकत अयोध्याके राजा भरत पर चढा हू, सो तेरे आयवेकी बाट देखू हू।
तात आज्ञापत्र पहुँचते प्रमाण पयानकर शीघ्र आइयो, किसी कार्यकर विलम्ब न करियो। जस किसान वर्षाकू चाहै तस म तेरे आगमनकू चाहू हू। या भाति पत्रके समाचार लेखकने बाचे तब पृथ्वीधर ने कछू कहनेका उद्यम किया। तासू पहले लक्ष्मण बोले अरे दूत! भरतके अर अतिवीर्यके विरोध कौन कारणत भया? तब वह वायुगत नाम दूत कहता भया—म सब बातोका मरमी हू, सब चरित्र

जानू हू । तब लक्ष्मण बोले हमारे सुनवेकी इच्छा है । तातें कही आपको सुननेकी इच्छा है तो सुनो । एक श्रुतिके नामा दूत हमारे राजा अतिवीर्यने भरतपर भेज्या सो जायकर कहता भया । इन्द्र तुल्य राजा अतिवीर्यका मैं दूत हूं, प्रणाम करे हैं समस्त नरेन्द्र जाकूं न्यायके थापनेविषै महा बुद्धिमान, सो पुरुषनिविषै सिंह समान, जाके भयतैं अरिरूप मृग निद्रा नाहीं करे है । ताके यह पृथ्वी वनिता समान है । कैसी है पृथ्वी ? चार तरफके समुद्र सोई हैं कटिमेखला जाके, जैसें परणी स्त्री आज्ञाविषै होय तैसें समस्त पृथ्वी आज्ञाके वश है । सो पृथ्वीपति महा प्रबल मेरे मुख होय तमकूं आज्ञा करे है कि—हे भरत ! शीघ्र आयकर मेरी सेवा करहु अथवा अयोध्या तज समुद्रके पार जावो । ये वचन सुन शत्रुघन महा क्रोधरूप दावानल समान प्रज्वलित होय कहता भया । अरे दूत ! तोहि ऐसे वचन कहने उचित नाहीं । वह भरतकी सेवा करे अक भरत ताकी सेवा करे । अर भरत अयोध्याका भार मन्त्रिनिकूं सौंप पृथ्वीके वश करनेके निमित्त समुद्रके पार जाय अक और भांति जाय । अर तेरा स्वामी ऐसे गर्वके वचन कहे है सो गर्दभ मातें हाथीकी न्याई गाजे है, अथवा ताकी मृत्यु निकट है तातें ऐसे वचन कहे है, अथवा वायुके वश है । राजा दशरथकूं वैराग्यके योगतें तपोवनको गए जान वह दुष्ट ऐसी बात कहे है । सो यद्यपि तातकी क्रोधरूप अग्नि मुक्तिकी अभिलाषाकर शांत भई तथापि पिताकी अग्निसे हम स्फुलिंग समान निकसे हैं, सो अतिवीर्यरूपकाष्ठकूं भस्म करने समर्थ हैं । हाथीनिके रुधिररूप कीच कर लाल भए हैं केश जाके ऐसा जो सिंह सो शांत भया तो ताका बालक हाथिनिके निपात करने समर्थ है । ये वचन कहे शत्रुघन बलता जो बांसोंका वन ता समान तडतडात कर महाक्रोधायमान भया । अर सेवकनिकूं आज्ञा करी जो या दूतका अपमान कर काढ देवहु । तब आज्ञा प्रमाण सेवकनिनें अपराधीकूं स्वानकी न्याई तिरस्कारकर काढ दिया । सो पुकारता नगरीके बाहिर गया । धूलकरि धूसरा है अंग जाका दुर्वचनकरि दग्ध, अपने धनी पै जाय पुकारचा, अर राजा भरत समुद्र समान गम्भीर परमार्थका जाननहारा अपूर्व दुर्वचन सुन कछूएक कोपकूं प्राप्त भया । भरत शत्रुघन दोऊ भाई नगरतें सेनासहित शत्रु

पर निकसे। अर मिथिला नगरीका धनी राजा जनक अपने भाई कनक सहित बडी सेनासू आय भेला भया। अर सिहोदरकू आदि दे अनेक राजा भरतसू आय मिले। भरत बडी सेना सहित नन्द्यावर्त पुरके धनी अतिवीर्यपर चढ्या। पिता समान प्रजाकी रक्षा करता सता, कैसा है भरत ? न्याय विषै प्रवीण है। अर राजा अतिवीर्य भी दूतके वचन सुन परम क्रोधकू प्राप्त भया। क्षोभकू प्राप्त भया जो समुद्र ता समान भयानक सब सामंतनिकरि मंडित भरतके ऊपर जाइवेकू उद्यमी भया है।

यह समाचार सुन श्रीरामचन्द्र अपना ललाट दूजके चन्द्रमा समान वक्रकर पृथ्वीधरसू कहते भए। जो अतिवीर्यकू भरतसे ऐसा करना उचित ही है क्योंकि जाने पिता समान बडे भाईका अनादर किया। तदि राजा पृथ्वीधरने रामसू कही, वह दुष्ट है हम प्रबल जान सेवा करै है। तब मंत्रकर अतिवीर्यकू जुवाब लिख्या कि मै कागदके पीछे ही आऊ हू अर दूतकू विदा किया। बहुरि श्रीरामसू कहता भया अतिवीर्य महाप्रचण्ड है तात मै जाऊ हू। तब श्रीरामने कही तुम तो यहां ही रहो अर मै तिहारे पुत्रकू अर तिहारे जवाई लक्ष्मणकू ले अतिवीर्यके समीप जावूंगा। ऐसा कहकर रथपर चढ बडी सेना सहित पृथ्वीधरके पुत्रकू लार लेय सीता अर लक्ष्मण सहित नन्द्यावर्त नगरीकू चाले। सो शीघ्र गमनकर नगरके निकट जाय पहुँचे। वहा पृथ्वीधरके पुत्रसहित स्नान भोजनकर राम लक्ष्मण सीता ये तीनो मंत्र करते भए। जानकी श्रीरामसू कहती भई–हे नाथ ! यद्यपि मेरे कहिवेका अधिकार नाहीं, जैसे सूर्यके प्रकाश होते नक्षत्रनका उद्योत नाहीं, तथापि हे देव ! हितकी वांछाकर मैं कछूएक कहू हू। जैसे बासनितै मोती लेना तैसे हम सारिखनितै हितकी बात लेनी, काहू एक बांसके बीडविषै मोती निपजै है–हे नाथ ! यह अतिवीर्य महासेनाका स्वामी, क्रूरकर्मी भरतकर कैसे जीत्या जाय। तातै याके जीतवेका उपाय करहु। तुमसे अर लक्ष्मणतै कोई कार्य असाध्य नाहीं, तब लक्ष्मण बोले–हे देवी ! यह कहा कहो हो ? आज अथवा प्रभात या अतिवीर्यकू मेरे कर हता ही जानहु। श्रीरामके चरणारविंदकी जो रजकर पवित्र है सिर मेरा, मेरे आगे देव भी टिक नाहीं सकै, मनुष्य क्षुद्र अति

वीयकी तो कहा बात ? जबतक सूर्य अस्त न होय तात पहिले ही या क्षुद्रवीयकूं मूवा ही देखियो। यह लक्ष्मणके वचन सुन पृथ्वीधरका पुत्र गर्जना कर ऐसे कहता भया। तब श्रीराम भौंह फेर ताहि मनकर लक्ष्मणसे कहते भए। महा धीरवीर है मन जाका–हे भाई! जानकी कही सो युक्त है। यह अतिवीय बलकर उद्धत है, रणविषै भरतके वश करनेका पात्र नाहीं, भरत याके दसवें भाग भी नाहीं। यह दावानल समान, याका वह मतंग गज कहा करै ? यह हाथिनिकर पूर्ण, रथ पयादनिकर पूर्ण, यासूं जीतवे समर्थ भरत नाहीं। जैसे केशरीसिंह महाप्रबल है परन्तु विंध्याचल पर्वतके ढाहिवे समर्थ नाहीं, तैसे भरत याकूं जीत नाही, सेनाका प्रलय होवेगा। जहां निःकारण संग्राम होय वहां दोनों पक्षनिके मनुष्यनिका क्षय होय। अर यदि इस दुरात्मा अतिवीयने भरतकूं वश किया, तब रघुवंशिन के कष्टका कहा कहना ? अर इनविषै संधि भी सूझै नाहीं। शत्रुघन अति मानी बालक सो उद्धत वैरीसूं दोष किया, यह न्यायविषै उचित नाही। अंधेरी रात्रिविषै रौद्रभूत सहित शत्रुघनने दूरके दौरा जाय अतिवीयके कटकविषै धाडा दिया। अनेक योधा मारे, बहुत हाथी घोडे काम आए। अर पवन सारिखे तेजस्वी हजारों तुरंग अर सातसै अंजनगिरि समान हाथी लेगया। सो तूने कहा लोग निके मुखतैं न सुनी ? यह समाचार प्रतिवीय सुन महाक्रोधकूं प्राप्त थया। अर अब महा सावधान है रणका अभिलाषी है। अर भरत महामानी है सो यासूं युद्ध छोड संधि न करै। तात तू अति वीयकूं वशकर, तरी शक्ति सूर्यकूं तिरस्कार करवे समर्थ है। अर यहांतै भरतहू निकट है सो हमकूं आपा न प्रकाशना। जे मित्रकूं न जनावैं अर उपकार करैं ते पुरुष अद्भुत प्रशंसा करने योग्य हैं, जैसे रात्रिका मेघ। या भांति मंत्रकरि रामकूं अतिवीयके पकडवेकी बुद्धि उपजी। ४६२

रात्रितो प्रमाद रहित होय समीचीन लोगनितें कथाकर पूर्ण करी, सुखसों निशा व्यतीत भई। प्रात समय दोऊ वीर उठकर प्रात-क्रियाकर एक जिनमंदिर देख्या सो ताविषै प्रवेशकर जिनेन्द्रका दर्शन किया। तहां आर्यिकानिका समूह विराजता हुता तिनकी वंदना करी। अर आर्यिकानिकी जो गुरानी

वरधर्मा महा शास्त्रकी वेत्ता सीताकू याके समीप राखी, आप भगवानकी पूजाकर लक्ष्मण सहित नृत्यकारिणी स्त्रीका भेष कर लीलासहित राजमन्दिरकी तरफ चाले। इन्द्रकी अप्सरा तुल्य नृत्यकारिणीकू देख नगरके लोग आश्चर्यकू प्राप्त भए, लार लागे। ये महा आभूषण पहिरे सब लोकके मन अर नेत्र हरते राजद्वार गए। चौबीसौं तीर्थकरनिके गुण गाए, पुराणोके रहस्य बताए। प्रफुल्लित है नेत्र जिनके, इनकी ध्वनि राजा सुन इनके गुणनिका खचा समीप आया जैसे रस्सीका खचा जलकेविषै काष्ठका भार आवै। नृत्यकारिणीने नृपके समीप नृत्य किया। रेचक कहिए भ्रमण, अंग मोडना, मुलकना, अवलोकना, भौंहनिका फेरना, मंद मंद हँसना, जंघा बहुरि करपल्लव तिनका हलावना, पृथ्वीकू स्पर्शि शीघ्र ही पगनिका उठावना, रागका बंध करना, केशरूप फासका प्रवर्तना, इत्यादि चेष्टारूप कामबाणनिकर सकललोकनिकू बींधे। स्वरनिके ग्राम यथास्थान जोडवेकरि अर वीणाके बजायवेकर सबनिकू मोहित किए। जहां नृत्यकी खडी रहै वहां सकल भावके नेत्र चले जाय, रूपकर सबनिके नेत्र, स्वरकर सबनिके श्रवण, गुणकर सबनिके मन बांध लिए। गौतम स्वामी कहै है—हे श्रेणिक! जहां श्रीराम लक्ष्मण नृत्य कर, अर गावै बजावै तहां देवनिके मन हरे जाय तो मनुष्यनिकी कहा बात? श्रीऋषभादि चतुर्विंशति तीर्थंकरनिके यश गाय सकल सभा वश करी, राजाकू संगीतकरि मोहित देख शृंगाररससे वीररसमें आए। आंख फेर भौंहें फेर महा प्रबल तेजरूप होय अतिवीर्यकू कहते भए—हे अतिवीर्य! तैं यह कहा दुष्टता आरम्भी? तोहि यह मंत्र कौनने दिया, तैं अपने नाशके निमित्त भरतसो विरोध उपजाया। जिया चाहै तो महाविनयकर तिनकू प्रसन्नकर, दास होय तिनके निकट जावहु। तेरी राणी बडे वंशकी उपजी, कामक्रीडाकी भूमि विधवा न होय, तोहि मृत्युकू प्राप्त भए सब आभूषण डार शोभा रहित होयगी। जैसे चन्द्रमा बिना रात्रि शोभारहित होय। तेरा चित्त अशुभविषै आया है सो चित्तकू फेर भरतकू नमस्कार कर। हे नीच! या भांति न करेगा तो अबार ही मारा जायगा। राजा अरण्यके पोता अर दशरथके पुत्र तिनके जीवते तू कैसे अयोध्याका राज्य चाहै है। जैसे सूर्यके प्रकाश होते

च द्रमाका प्रकाश कैस होय ? जसे पतग दीपविषै पड मूवा चाह है तस तू मरण चाह ह । राजा भरत गरुड समान महाबली तिनके तू सपसमान निबल बराबरी कर ह । यह वचन भरतकी प्रशसाके अर अपनी निदाके नत्यकारणीके मुखत सुन सकल सभा सहित अतिवीय क्रोधकू प्राप्त भया, लाल नेत्र किए । जस समुद्रकी लहर उठ ह तस सामत उठे अर राजाने खडग हाथमे लिया । ता समय नत्यकारणीने उछल हाथसो खडग खोस लिया अर सिरक कश पकड बाध लिया । अर नत्यकारणी अतिवीयके पक्षी राजा तिनसो कहती भई—जीवनेकी बाछा राखो तो अतिवीयका पक्ष छोड भरतप जाहु भरत की सेवा करहु । तब लोकनिके मुखत ऐसी ध्वनि निकसी—महा शोभायमान गुणवान भरत भूप जय वत होऊ । सूय समान ह तेज जाका यायरूप किरणनिक मडलकर शोभित, दशरथके वशरूप आकाश विष च द्रमा समान लोकक् आन दकारी जाका उदय थकी लक्ष्मीरूपी कुमुदनी विकासकू प्राप्त होय । शत्रुनिके आतापत रहित परम आश्चयकू धरती सती अहो यह बडा आश्चय जाकी नत्यकारणीकी यह चष्टा जो एस नपतिकू पकड लय तो भरतकी शक्तिका कहा कहना ? इ द्रहुकू जीत । हम या अतिवीयसो आय मिले, सो भरत महाराज कोप भए होयगे न जानिये कहा करगे । अथवा वे दयावत पुरुष ह जाय मिले पायन परे, कृपा ही करगे । एसा विचारि अतिवीयके मित्र राजा कहते भए । अर श्रीराम अतिवीयकू पकड हाथीपर चढि जिनमदिर गए । हाथीसू उतर जिनमदिरविष जाय भगवानकी पूजा करी, अर बरधर्मा आर्यिकाकी बदना करी, बहुत स्तुति करी ।

रामने अतिवीय लक्ष्मणकू सौंप्या लक्ष्मणने केश गह दढ बाध्या । तब सीता कही याहि ढीला
करहु, पीडा मत देवहु शातता भजहु । कमके उदयकरि मनुष्य मतिहीन होय जाय ह । आपदा मनुष्यनिमेंही होय, बडे पुरुषनिकू सवथा परकी रक्षा ही करना, सत्पुरुषनिकू सामा य पुरुषका हू अनादर न करना, यह तो सहसराजानिका शिरोमणि ह । तात याहि छोड देवहु । तुम यह वश किया, अब कृपा ही करना योग्य ह । राजानिका यही धम ह जो प्रबल शत्रुनिकू पकड छोड दे । यह अनादि कालकी मर्यादा ह । जब

या भांति सीता कही तब लक्ष्मण हाथ जोड प्रणामकर कहता भया—हे देवी ! तिहारी आज्ञासे छोडवेकी कहा बात ? ऐसा करू जो देव याकी सेवा करे। लक्ष्मणका क्रोध शांत भया। तब अतिवीर्य प्रतिबोधकू पाय श्रीरामसू कहता भया—हे देव ! तुम बहुत भला किया। ऐसी निर्मल बुद्धि मेरी अबतक कबहू न भई हुती सो तिहारे प्रतापत भई। तब श्रीराम ताहि हार मुकुटादिरहित देख विश्रामके वचन कहते भए। कैसे हैं रघुवीर ? सौम्य है आकार जिनका, हे मित्र ! दीनता तज, जैसा प्राचीन अवस्था में धैर्य हुता तैसा ही धर, बडे पुरुषनिके ही सम्पदा अर आपदा दोऊ होय है। अब तोहि कुछ आपदा नाहीं। नन्द्यावर्तपुरका राज्य भरतका आज्ञाकारी होयकर रहवो कर। तब अतिवीर्य कही मेरे अब राज्यकी बांछा नाहीं, मैं राज्यका फल पाया, अब मैं और ही अवस्था धारू गा। समुद्र पर्यन्त पृथ्वीका वश करणहारा महामानका धारी जो मैं सो कैसा पराया सेवक हो राज्य करू ? याविषै पुरुषार्थ कहा ? अर यह राज्य कहा पदार्थ ? जिन पुरुषनि षट खंडका राज्य किया तें तृप्त न भए तो मैं पांचग्रामोंका स्वामी कहा अल्प विभूतिकर तृप्त होऊंगा ? जन्मांतरविषै किया जो कर्म ताका प्रभाव देखहु, जो मोहि कांतिरहित किया जैसे राहु चन्द्रमाकू कांतिरहित करै। यह मनुष्यदेह सारभूत, देवनहूतै अधिक मैं वृथा खोई, नवा जन्म धरनकू कायर, सो तुमने प्रतिबोध्या, अब मैं ऐसी चेष्टा करू जाकर मुक्ति प्राप्त होय। या भांति कहकर श्रीराम लक्ष्मणकू क्षमा कराय, वह राजा अतिवीर्य, केसरीसिंह जैसा है पराक्रम जाका, श्रुतधरनामा मुनीश्वरके समीप हाथ जोड नमस्कारकर कहता भया—हे नाथ ! मैं दिगम्बरी दीक्षा वांछू हूं। तब आचार्य कही यही बात योग्य है। या दीक्षाकर अनन्त सिद्ध भए, अर होवेंगे। तब अतिवीर्य वस्त्र तज केशनिकू लुंचकर महाव्रतका धारी भया। आत्माके अर्थविषै मग्न, रागादि परिग्रहका त्यागी, विधिपूर्वक तप करता पृथ्वी पर विहार करता भया। जहां मनुष्यनिका संचार नाहीं वहां रहै। सिंहादि क्रूरजीवनिकर युक्त जो महागहन वन अथवा गिरिशिखर गुफादि तिनविषै निर्भय निवास करै। ऐसे अतिवीर्य स्वामीकू नमस्कार होहु, तजी है समस्त परिग्रहकी

आशा जाने, अर अंगीकार किया है चारित्रका भार जान, महाशीलके धारक, नानाप्रकार तपकर शरीरका शोषणहारा, प्रशसा योग्य महामुनि, सम्यकदर्शन ज्ञान चारित्र रूप सुन्दर है आभूषण अर दशोदिशा ही वस्त्र जिनके, साधुनिके जे मूलगुण उत्तरगुण वे ही सम्पदा, कर्म हरिबेकू उद्यमी, सजमी, मुक्तिके वर योगीन्द्र तिनकू नमस्कार होहु। यह अतिवीर्य मुनिका चारित्र जो सुबुद्धि पढै सुने सो गुणनिकी वृद्धिकू प्राप्त होय, भानु समान तेजस्वी होय और ससारके कष्टतै निवृत्त होय।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण सस्कृत ग्रंथ ताकी भाषावचनिकाविषै अतिवीर्यका वैराग्य वर्णन करनेवाला सैतीसवाँ पर्व पूर्ण भया ॥ ३७ ॥

अथानन्तर श्रीरामचन्द्र महान्यायके वेत्ताने अतिवीर्यका पुत्र जो विजयरथ ताहि अभिषेक कराय पिताके पदविषै थाप्या। ताने अपना समस्त वित्त दिखाया सो ताका ताकू दिया अर तानै अपनी बहिन रत्नमाला लक्ष्मणकू देनी करी सो तिननै प्रमाण करी। ताके रूपकू देख लक्ष्मण हर्षित भए मानो साक्षात लक्ष्मी ही है। बहुरि श्रीराम लक्ष्मण जिनेन्द्रकी पूजाकरि पृथ्वीधरके विजयपुर नगर विषै वापिस गए। अर भरतने सुनी जो अतिवीर्यकू नृत्यकारिणीने पकड्या सो विरक्त होय दीक्षा धरी तब शत्रुघन हास्य करने लाग्या। तब ताहि मनेकर भरत कहते भये—अहो भाई! राजा अतिवीर्य महा धन्य है जे महादुखरूप विषयनिकू तज शांतिभावकू प्राप्त भए। वे महा स्तुति योग्य हैं तिनकी हासी कहा? तपका प्रभाव देखहु जो रिपु हू प्रणाम योग्य गुरु होय है। यह तप देवनिकू दुर्लभ है। या भांति भरत अतिवीर्यकी स्तुति कर है। ताही समय अतिवीर्यका पुत्र विजयरथ आया, अनेक सामंतनिसहित सो भरतकू नमस्कारकर तिष्ठ्या। क्षणिक और कथाकर जो रत्नमाला लक्ष्मणकू दई ताकी बडी बहिन विजयसुन्दर नानाप्रकार आभूषण की धरणहारी भरतकू परणाई अर बहुत द्रव्य दिया। सो भरत ताकी बहिन परणकरि प्रसन्न भए। विजयरथसू बहुत स्नेह किया। यही

बडेनिकी रीति है। अर भरत महा हर्षथकी पूर्ण है मन जाका तेज तुरगपर चढ्या अतिवीर्य मुनिके दर्शनकूं चाल्या। सो जा गिरिपर मुनि विराजे हुते तहां पहिले मनुष्य देख गए हुते, सो लार हैं। तिनकूं पूछते जाय हैं—कहां महामुनि हैं, कहां महामुनि हैं? वे कहैं हैं आगे विराजे हैं। सो जा गिरिपर मुनि हुते वहां जाय पहुंचे, कैसा है गिरि? विषम पाषाणनिके समूहकरि महा अगम्य, अर नानाप्रकार के वृक्षनिकरि पूर्ण, पुष्पनिकी सुगंधकर महासुगंधित, अर सिंहादिक क्रूर जीवनिकरि भरया। सो राजा भरत अश्वतैं उतर महा विनयवान मुनिके निकट गए। कैसे हैं मुनि? रागद्वेषरहित हैं, शांत भई हैं इन्द्रियां जिनकी, शिलापर विराजमान, निर्भय, अकेले जिनकल्पी, अतिवीर्य मुनीन्द्र महातपस्वी ध्यानी, मुनिपद की शोभाकर संयुक्त, तिनकूं देख भरत आश्चर्यकूं प्राप्त भया। फूल गए हैं नेत्र कमल जाके, रोमांच होय आए। हाथ जोड नमस्कारकर साधुके चरणारविंदकी पूजाकर महा नमीभूत होय मुनिभक्तिविषै है प्रेम जाका, सो स्तुति करता भया—हे नाथ! परमतत्त्वके वेत्ता तुम ही या जगतविषै शूरवीर हो, जिनने यह जैनेन्द्री दीक्षा महा दुद्धर धारी। जे महंत पुरुष विशुद्ध कुलविषै उत्पन्न भए हैं तिनकी यही चेष्टा है। या मनुष्य लोककूं पाय जो फल बडे पुरुष वांछैं हैं सो आपने पाया। अर हम या जगतकी मायाकरि अत्यन्त दुखी हैं। हे प्रभो! हमारा अपराध क्षमा करहु, तुम कृतार्थ हो पूज्यपदकूं प्राप्त भए, तुमको बारम्बार नमस्कार होहु। ऐसा कहकर तीन प्रदक्षिणा देय हाथ जोड नमस्कारकर मुनिसम्बंधी कथा करता करता गिरतैं उतर तुरगपर चढ हजारों सुभटनिकर संयुक्त अयोध्या आया। समस्त राजानिके निकट सभाविषै कहा कि वे नृत्यकारिणी, समस्त लोकनिके मनकूं मोहित करनी, अपने जीवितविषै हू निर्लोभ प्रबल नृपनकूं जीतनहारी कहां गई? देखो आश्चर्यकी बात। अतिवीर्यके निकट मेरी स्तुति करे, अर ताहि पकडे। स्त्री वर्गविषै ऐसी शक्ति कहां होय? जानिए है जिनशासनकी देविनिने यह चेष्टा करी। ऐसा चिंतवन करता संता प्रसन्नचित्त भया। अर शत्रुघन नानाप्रकारके धान्यकर मंडित जो धरा ताके देखवेकूं गया। जगतविषै व्याप्त है

कीर्ति जाकी, बहुरि अयोध्या आया, परम प्रतापकू धर । अर राजा भरत अतिवीर्यकी पुत्री विजय सुन्दरीसहित सुख भोगता सुखसू तिष्ठ, जस सुलोचना सहित मेघेश्वर तिष्ठ्या । यह तो कथा यहा ही रही, आग श्रीराम लक्ष्मणका वणन कर ह ।

अथानन्तर राम लक्ष्मण सवलोकक् आनन्दके कारण कईएक दिन पृथ्वीधरके पुरविष रहे । फिर जानकीसहित मत्र कर आग चलवेकू उद्यमी भए । तदि सुन्दर लक्षणकी धरणहारी वनमाला लक्ष्मण सू कहती भई, नेत्र सजल होय आए, हे नाथ ! म मदभागिनी, मोहि आप तज जावो हो तो पहिले मरणत क्यो बचाई, तब लक्ष्मण बोले—हे प्रिये ! तू विषाद मत कर, थोडे दिनमें तेरे लेवेकू आव ह । हे सुन्दरवदनी ! जो तेरे लेयवेको शीघ ही न आव तो हमको वह गति हूजौ जो सम्यग्दशनरहित मिथ्यादृष्टिकी होय ह । हे बल्लभे ! जो शीघ ही तेरे निकट न आव तो हमको वह पाप होय जो महा मानकर दग्ध साधुनिके निदकनिके होय ह । हे गजगामिनी ! हम पिताके वचन पालिवे निमित्त दक्षिण के समुद्रके तीर निसदेह जाय ह । मलयाचलके निकट कोई परम स्थानकर तोहि लवे आवेंगे । हे शुभ मते ! तू धीय राख । या भाति कहकर अनक सौगन्धकर अति दिलासा देय आप सुमित्रा के नन्दन लक्ष्मण श्रीरामके सग चलबेकू उद्यमी भए । लोकनिकू सूते जान रात्रिकू सीतासहित गोप्य निकसे । प्रभातविष इनकू न देखकर नगरके लोक परमशोकक् प्राप्त भए । राजाकू अतिशोक उपज्या, वन माला लक्ष्मण विना घर सूना जानती भई, अपना चित्त जिनशासनविष लगाय धर्मानुरागरूप तिष्ठी । राम लक्ष्मण पृथ्वीविष विहार करते नरनारिनिकू मोहत, पराक्रमी, पृथ्वीकू आश्चयके कारण, धीरे धीरे लीलात विचर ह । जगतके मन अर नेत्रनिकू अनुराग उपजावते रम ह । इनकू देख लोग विचार ह जो यह पुरुषोतम कौन पवित्र गोत्रविष उपजे है । धन्य है वह मात जाकी कुक्षिविष ये उपजे, अर धन्य ह वे नारी जिनकू ये परणे ऐसा रूप देवनिकू दुलभ, ये सुन्दर कहात आए अर कहा जाय ह इनके कहा वाछा ह ? परस्पर स्त्रीजन ऐसी वार्ता कर ह । हे सखी ! देखो दोऊ कमल

नेत्र, चन्द्रमा सारिखे अद्भुत वदन जिनके अर एक नारी नागकुमारी समान अद्भुत देखी। न जानिये वे सुर हुते वा नर हुते। हे मुग्धे! महापुण्य विना उनका दर्शन नाहीं। अब तो वे दूर गए, पाछे फिरो, वे नेत्र अर मनके चोर जगतका मन हरते फिर है। इत्यादि नर नारिनिके आलाप सुनते सब कू मोहित करते वे स्वेच्छाविहारी शुद्ध है चित्त जिनके, नाना देशनिविषै विहार करते क्षेमाजलि नामा नगरविषै आए। ताके निकट कारीघटा समान सघन वनविषै सुखसू तिष्ठे, जैसे सौमनसवनमें देव तिष्ठे। तहा लक्ष्मण महा सुन्दर अन्न अर अनेक व्यजन तयार किए, दाखनिका रस, सो श्रीराम सीतासू लक्ष्मण सहित भोजन किया।

अथानन्तर लक्ष्मण श्रीरामकी आज्ञा लेय क्षेमाजलि नाम पुरके देखवेकू चाले। महासुन्दर माला पहिरे, अर पीताम्बर धारे, सुन्दर है रूप जिनका, नानाप्रकारकी बेल वृक्ष तिनकरि युक्त वन, अर निर्मल जलकी भरी नदी, अर नानाप्रकारके क्रीडागिरि अनेक धातुके भरे, अर ऊचे २ जिनमन्दिर, अर मनोहर जलके निर्वाण अर नानाप्रकारके लोक तिनकू देख नगरविषै प्रवेश किया। कैसा है नगर? नानाप्रकारके व्यापारकर पूर्ण। सो नगरके लोक इनका अद्भुत रूप देख परस्पर वार्ता करते भए, तिनके शब्द इनने सुने—जो या नगरके जितपद्मानामा पुत्री है ताहि वह परणे जो राजाके हाथकी शक्तिकी चोट खाय जीवता बचे। सो कन्याकी कहा बात, स्वर्गका राज्य देय तौ भी यह बात कोई न करै। शक्तिकी चोटतै प्राण हो जाय तब कन्या कौन अर्थ? जगतविषै जीतव्य सब वस्तुतै प्रिय है, तातै कन्याके अर्थ प्राण कौन देय? यह वचन सुनकर महाकौतुकी लक्ष्मण काहूकू पूछते भए— हे भद्र! यह जितपद्मा कौन है? तब वह कहता भया—यह कालकन्या पडित माननीय सब लोक प्रसिद्ध तुम कहा न सुनी? या नगरका राजा शत्रुदमन, ताके राणी अनकप्रभा, ताके जितपद्मा पुत्री रूपवती गुणवती, जाके वदनकी कातिकरि कमल जीत्या है, अर गात्रकी शोभाकर कमलिनी जीती, सो तातै जितपद्मा कहावै है। नवयौवन मडित, सब कलापूर्ण, अद्भुत आभूषणकी धरणहारी ताहि

पुरुषका नाम रुच नाहीं देवनिका दर्शन हू अप्रिय, मनुष्यनिकी तो कहा बात ? जाके निकट कोई पुल्लिग शब्दका उच्चारण हू न कर सके, यह कैलाशके शिखर समान जो उज्ज्वल मंदिर ताविषै कन्या तिष्ठै है। सैकडनि सहेली जाकी सेवा करै है। जो कोई कन्याके पिताके हाथकी शक्तिकी चोटतै बचे ताहि यह कन्या वरै। लक्ष्मण यह वार्ता सुन आश्चर्यकू प्राप्त भया, अर कोप हू उपज्या। मनमे विचारी महागर्वित दुष्ट चेष्टासयुक्त यह कन्या ताहि देखू। यह चितवन कर राज मार्ग होय विमान समान सुन्दर घर देखता अर मदोन्मत्त हाथी कारी घटा समान, अर तुरंग चंचल अवलोकता अर नृत्यशाला निरखता राजमंदिरविषै गया। कैसा है राजमंदिर ? अनेक प्रकारके झरोखानिकर ध्वजानिकर मंडित शरदके बादर समान उज्ज्वल मंदिर जहा कन्या तिष्ठै है, महामनोहर रचनाकर सयुक्त ऊंचे कोटकर वेष्टित सो लक्ष्मण जाय द्वारपर ठाढा भया। इन्द्रके धनुष समान अनेक वर्णका है तोरण जहा सुभटनिके समूह अनेक देशनिके नानाप्रकार भेट लेयकर आए है। कोई निकसे है कोई जाय है। सामंतनिकी भीड होय रही है। लक्ष्मणकू द्वारमें प्रवेश करता देख द्वारपाल सौम्य वाणीसू कहता भया—तुम कौन हो, अर कौनकी आज्ञातै आए हो, कौन प्रयोजन राजमंदिरमै प्रवेश करो हो ? तब कुमारने कही राजाकू देखा चाहै है, तू जाय राजासो पूछ। तब वह द्वारपाल अपनी ठौर दूजेको राख आप राजापै जाय विनती करता भया—हे महाराज ! आपके दर्शनकू एक महारूपवान पुरुष आया है, द्वार तिष्ठै है, नील कमल समान है वर्ण जाका, अर कमललोचन, महा शोभायमान, सौम्य शुभ मूर्ति है। तब राजाने प्रधानकी ओर निरख आज्ञा करी—आवै। तदि द्वारपाल लक्ष्मणकू राजाके समीप लेय गया सो समस्त सभा याकू अति सुन्दर देख हर्षकी वृद्धिकू प्राप्त भई, जैसे चन्द्रमाकू देख समुद्रकी शोभा वृद्धिकू प्राप्त होय। राजा याकू प्रणामरहित देदीप्यमान विकट स्वरूप देख कछुइक विकारकू प्राप्त हो पूछता भया। तुम कौन हो, कौन अर्थ कहातै यहा आए हो ? तदि लक्ष्मण वर्षाकालके मेघ समान शब्द करते भए—मै राजा भरतका सेवक हू, पृथ्वीके देखबेको

अभिलाषाकरि विचरू हूँ। तेरी पुत्रीका वृत्तात सुन यहा आया हू। यह तेरी पुत्री महादुष्ट मरकनी गाय है, नहीं भग्न भए ह मानरूवी सींग जाके। यह सब लोकनिकू दु खदायिनी वर्ते ह। तब राजा शत्रु-दमनने कही मेरी शक्तिकू जो सहार सक, सो जितपद्माकू वर। तब लक्ष्मण कहता भया तेरी एक शक्तिकरि मेरे कहा होय। तू अपना समस्त शक्तिकरि मेरे पच शक्ति लगाय। या भाति राजा के अर लक्ष्मणके विवाद भया। ता समय झरोखाते जितपद्मा लक्ष्मणकू देख मोहित भई, अर हाथ जोड इशारा कर मन करती भई, जो शक्तिको चोट मत खावो। तब आप सन करते भए तू डरें मत। या भाति समस्याविष ही धीय बधाया। अर राजासू कही—काहे कायर होय रह्या है, शक्ति चलाय, अपनी शक्ति हमकू दिखा। तब राजा कही तू मूवा चाह ह, तो झेल। महाकोपकर प्रज्वलित अग्नि समान एक शक्ति चलाई, सो लक्ष्मणने दाहिने करत ग्रही, जस गरुड सपकू ग्रह, अर दूसरी शक्ति दूसरे हाथत गही, अर तीजी, चौथी दोनो काखविष गही। सो चारो शक्तिनिकू गह लक्ष्मण ऐसे शोभ ह मानो चोदता हस्ती ह। तब राजा पाचवीं शक्ति चलाई सो दातनित गही, जसे मगराज मगीका गह। तब देवनिके समूह हर्षित होय पुष्पवष्टि करते भए अर दुदुभी बाजे बजाते भए। लक्ष्मण राजासू कहते भए और ह तो और भी चला। तब सकल लोक भयकर कम्पायमान भए। राजा लक्ष्मणका अखण्डबल देख आश्चयकू प्राप्त भया। लज्जाकर नीचा होय गया अर जितपद्मा लक्ष्मण के रूप अर चरित्र कर खची थकी आय ठाढी भई। वह कन्या सुन्दरवदनी मगनयनी लक्ष्मणके समीप ऐसी शोभती भई, जस इन्द्रके समीप शची होय। जितपद्माकू देख लक्ष्मणका हृदय प्रसन्न भया। महा सग्रामविष जाका चित्त कपित न होय, सो याक स्नेहकरि वशीभूत भया। लक्ष्मण तत्काल विनयकर नमीभूत होय राजाकू कहता भया—हे माम! हम तुम्हारे बालक ह। हमारा अपराध क्षमा करहु, जे तुम सारिखे गम्भीर नर ह ते बालकनिकी अज्ञान चेष्टा कर अर कुवचन कर विकारकू नाहीं प्राप्त होय हैं। तब शत्रुदमन अति हर्षित होय हाथीकी सूण्ड समान अपनी भुजानिकर कमार

सू मिल्या, अर कहता भया—हे धीर ! मैं महायुद्धविषै माते हाथिनिकूं क्षणमात्रविषै जीतनहारा, सो तूने जीत्या। अर वनके हस्ती पर्वत समान तिनकूं मद रहित करनहारा जो मैं, सो तुम मोहि गर्वरहित किया। धन्य तिहारा पराक्रम, धन्य तिहारा रूप, धन्य तिहारी निर्ममता, महा विनयवान अद्भुत चरित्रके धरणहारे ! तुमसे तुमही हो। या भांति राजाने लक्ष्मणके गुण सभाविषै वर्णन किये। तब लक्ष्मण लज्जाकर नीचा होयगया। अर राजाकी आज्ञाकर मेघकी ध्वनि समान वादित्रनिके शब्द सेवक करते भए अर याचकनिकूं अतिदान देय उनकी इच्छा पूर्ण करते भए। नगर के विषै आनन्द वार्ता, राजानें लक्ष्मणसूं कहा—हे पुरुषोत्तम ! मेरी पुत्रीका तुम पाणिग्रहण किया चाहो हो तो करो। लक्ष्मणने कही मेरे बड़े भाई अर भावज नगरके निकट तिष्ठै हैं तिनकूं पूछो। तिनकी आज्ञा होय सो तुमको हमको करनी उचित है। वे सब नीके जानें हैं। तब राजा पुत्रीकूं अर लक्ष्मणकूं रथमें चढाय सब कुटुम्ब सहित रघुवीर पै चाल्या। सो क्षोभकूं प्राप्त हुआ जो समुद्र ताकी गर्जना समान थाकी सेनाका शब्द सुनकर अर धूलके पटल उठते देखकर सीता भयभीत होय कहती भई—हे नाथ ! लक्ष्मण ने कुछ उद्धत चेष्टा करी, या दिशाविषैं उपद्रव दृष्टि आवै है। तात सावधान होय जो कुछ करना होय सो करहु। तब आप जानकीकूं उरसूं लगाय कहते भए—हे देवी ! भय मत करहु। ऐसा कहकर उठे, धनुष ऊपर दृष्टि धरी। तब ही मनुष्यनिके समूहके आगे स्त्रीजन सुन्दर गान करती देखीं, बहुरि निकट ही आइ, सुन्दर हैं अंग जिनके, स्त्रीनिकूं गावती अर नृत्य करती देख श्रीरामकूं विश्वास उपज्या। सीता सहित सुखसूं विराजे। स्त्रीजन सब आभूषण मंडित अति मनोहर मंगलद्रव्य हाथमें लिये हर्षके भरे हैं नेत्र जिनके, रथसूं उतर कर आई, अर राजा शत्रुदमन भी बहुत कुटुम्ब सहित श्रीराम के चरणारविंदकूं नमस्कार कर बहुत विनयसूं बैठ्या। लक्ष्मण अर जितपद्मा एक साथ रथविषै बैठे आए हुते, सो उतर कर लक्ष्मण श्रीरामचन्द्रकूं अर जानकीकूं सीस निवाय प्रणामकर महा विनयवान दूर बैठ्या। सो श्रीराम राजा शत्रुदमनसे कुशल प्रश्न वार्ता करि सुखसूं विराजे। राम

के आगमनकरि राजाने हर्षित होय नृत्य किया, महा भक्तिकरि नगरमें चलवेकी विनती करी। श्रीराम अर सीता अर लक्ष्मण एक रथविषै विराजे। परम उत्साहसू राजाके महल पधारे। मानो वह राजमन्दिर सरोवर ही है। स्त्री रूप कमलनित भरचा, लावण्यरूप जल है जाविषै, शब्द करते जे आभूषण तेही हैं सुन्दर पक्षी जहां। यह दोऊ वीर नवयौवन, महाशोभाकरि पूर्ण, कईएक दिन सुखसू विराजे, राजा शत्रुदमन करै है सेवा जिनकी।

अथानन्तर सबलोकके चित्तकू आनन्दके करणहारे राम लक्ष्मण महाधीर वीर सीतासहित अर्धरात्रिकू उठ चले। लक्ष्मणने प्रिय वचनकर जैसे वनमालाकू धीर्य बधाया हुता, तैसे जितपद्माको धीर्य बधाया, बहुत दिलासाकर आप श्रीरामके लार भए। नगरके सब लोक अर नृपको इनके चलेजानेकी अति चिंता भई, धीर्य न रह्या। यह कथा गौतम स्वामी राजा श्रेणिकसू कहै है हे मगधाधिपति! ते दोऊ भाई जन्मांतरके उपार्जे जे पुण्य तिनकरि सब जीवनिके वल्लभ, जहां जहां गमन करै तहां तहां राजा प्रजा सब लोक सेवा करें, अर यह चाहै कि न जावें तो भला। सब इन्द्रियनिके सुख अर महा मिष्ट अन्नपानादि विना ही यत्न इनकू सर्वत्र सुलभ, जे पृथ्वीविषै दुर्लभ वस्तु है ते सब इनकू प्राप्त होय। महा भाग्य भव्य जीव सदा भोगनित उदास है। ज्ञानके अर विषयनिके वैर है। ज्ञानी ऐसा चितवन करै है—इन भोगनिकर प्रयोजन नाहीं, ये दुष्ट नाशकू प्राप्त होय। या भांति यद्यपि भोगनिकी सदा निन्दा ही करै है, भोगनित विरक्त ही है, दीप्तिकरि जीत्या है सूर्य जिनने, तथापि पूर्वोपार्जित पुण्यके प्रभावतै पहाडके शिखरविषै निवास करै है तहां हू नानाप्रकार सामग्रीका संयोग होय है, जबलग मुनिपदका उदय नाहीं तबलग देवो समान सुख भोगवै है।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महा पद्मपुराण संस्कृतग्रन्थ ताकी भाषा वचनिकाविषै जितपद्माका व्याख्यान वर्णन करनेवाला अडतीसवां पर्व पूर्ण भया ॥ ३८ ॥

अथानन्तर ये दोय वीर महाधीर सीता सहित वनविष आए। कसा ह वन ? नानाप्रकारक वृक्षनिकर शोभित, अनेक भातिके पुष्पनिकी सुगंधिताकर महासुगंध, लतानिके मडपनिकरि युक्त, तहा राम लक्ष्मण रमते रमते आए। कसे ह दोनो ? समस्त देवोपुनीत सामग्रीकर शरीरका ह आधार जिनके। कहू इक मृगोके रग समान महा सुन्दर वृक्षनिका कूपललेय श्रीराम जानकीके कर्णाभरण कर ह, कहूइक छोटा वृक्षविष लग रही जो बेल ताकर हिडोला बनाय दोऊ भाई झोटा देय देय जानकीकू झुलाव हैं, अर आनन्दकी कथा कर सीताकू विनोद उपजाव ह। कभी सीता रामसो कह ह-हे देव! यह बेलि, यह वृक्ष महामनोज्ञ दीख ह। अर सीताके शरीरका सुगंधताकर भमर आय लगे है, सो दोऊ उडाव ह। या भाति नानाप्रकारके वननिविष धीरे धीरे विहार करते दोऊ धीर, मनोग्य ह चारित्र जिनके, जस स्वगके वनविष देव रमें तस रमते भए। अनेक देशनिकू देखते अनुक्रमकर वंशस्थल नगर आए। ते दोऊ पुण्याधिकारी तिनकू सीताके कारण थोडी दूर ही आवनेविष बहुत दिन लागे, सो दीर्घकालहु दुःख क्लेशका देनहारा न भया, सदा सुखरूप ही रहे। नगरके निकट एक वंशधर नामा पर्वत देख्या, मानू पृथ्वीकू भेदकर निकस्या। जहा बासनिके अति समूह तिनकरि मार्ग विषम ह, ऊचे शिखरनिकी छायाकरि मानो सदा सन्ध्याकू धार ह, अर निझरनोकर मानो हस ह। सो नगरत राजा प्रजाकू निकसती देख श्रीरामचन्द्र पूछते भए। अहो! कहा भयकर नगर तजो हो ? कोई कहता भया आज तीसरा दिन ह। रात्रिके समय या पहाडके शिखरविष ऐसी ध्वनि होय ह जो अब तक कबहु नाहीं सुनी, पृथ्वी कम्पायमान होय ह, अर दशो दिशा शब्दायमान होय ह। वृक्षनिकी जड उपड जाय ह। सरोवरनिका जल चलायमान होय ह। ता भयानक शब्दकर सबलोकनिके कान पीडित होय मानो लोहेके मुदगरनि कर मारे। कोई एक दुष्ट देव जगतका कटक हमारे मारवेके अर्थ उद्यमी होय ह, या गिरिपर पीडा कर ह। ताके भयकर सन्ध्या समय लोक भाग ह, प्रभातविष बहुरि आव ह, पाच कोस परे जाय रह ह, जहा वाकी ध्वनि न सुनिये। यह वार्ता सुनि सीता राम लक्ष्मणसो

कहती भई—जहा यह सव लोक जाय ह वहा अपनहु चालें। जे नीतिशास्त्रके वेत्ता हैं वे देश कालकू जानकर पुरुषाथ कर ह, ते कदाचित आपदाकू नाहीं प्राप्त होय ह। तब दोऊ धीर हसकर कहते भये तू भयकर बहुत कायर ह, सो यह लोक जहा जाय ह तहा तू भी जाहु, प्रभात सब आवें तब तू आइयो। हम तो आज या गिरिपर रहेंगे। यह अत्यन्त भयानक कौनकी ध्वनि होय ह सो देखेंगे, यह निश्चय ह। यह लोक रक ह, भयकर पशु बालकनिकू लेय भाग ह, हमकू काहूका भय नाहीं। तब सीता कहनी भई—तिहारे हठको कौन हरिवे समथ, तिहारा आग्रह दुर्निवार ह। ऐसा कहकर वह पतिके पीछे चाली। खिन्न भए ह चरण जाके, पहाडके शिखरपर ऐसी शोभ मानो निमल चन्द्रकाति ही ह। श्रीरामके पीछे अर लक्ष्मणके आगे सीता कसी सोह मानो चन्द्रकाति अर इन्द्रनीलमणिके मध्य पुष्प-राग मणि ही ह, ता पवतका आभूषण होती भई। राम लक्ष्मणकू यह डर ह जो यह कहीं गिरिसे गिर न पडे। तात याका हाथ पकड लिए जाय ह। वे निभय पुरुषोत्तम, विषम है पाषाण जाके ऐसे पवतकू उलघ कर सीतासहित शिखरपर जाय पहुँचे। तहा देशभूषण अर कुलभूषण नामा दोय मुनि महाध्यानारूढ दोऊ भुज लु बाए कायोत्सग आसन धर खडे, परम तेजकर युक्त समुद्रसारिखे गम्भीर गिरि सारिखे स्थिर, शरीर अर आत्माकू भिन्न भिन्न जाननहारे, मोह रहित, नग्न स्वरूप यथाजातरूप धरन हारे, कातिके सागर, नवयौवन, परम सुन्दर, महासयमी, श्रेष्ठ ह आकार जिनके, जिनभाषित धमके आरा-धनहारे, तिनकू श्रीराम लक्ष्मण देखकर हाथ जोड नमस्कार करते भए। अर बहुत आश्चयकू प्राप्त भए। चित्तविष चितवते भए जो ससारके सव काय असार ह दु खके कारण ह। मित्र द्रव्य स्त्री सव कुटुम्ब अर इन्द्रियजनित सुख यह सब दु ख ही ह, एक धम ही सुखका कारण ह।

महा भक्तिके भरे दोऊ भाई परम हषकू धरते विनयकरि नमीभूत है शरीर जिनके, मुनिनिक समीप बठे। ताही समय असुरके आगमनत महा भयानक शब्द भया। मायामई सप अर बिच्छू तिनकर दोनो मुनिनिका शरीर वेष्टित होय गया। सप अति भयानक, महा शब्दके करणहारे, काजल समान कारे,

चलायमान है जिह्वा जिनकी। अर अनेक वर्णके अति स्थूल बिच्छू तिनकरि मुनिनके अंग बेढे देख, राम लक्ष्मण असुरपर कोपकू प्राप्त भए। सीता भयकी भरी भरतारके अगसू लिपट गई। तब आप कहते भए—तू भय मत कर। याकू धीर्य बधाय, दोऊ सुभट निकट जाय साप बिच्छू मुनिनके अगतै दूर किए, चरणारविंदकी पूजा करी। भक्ति से भरी सीताने निर्झर के जल से देर तक उन मुनियो के पर धोकर मनोहर गध से लिप्त किये[1]। तथा जो वनको सुगधित कर रहे थे एव लक्ष्मणने तोड कर दिये थे, ऐसे निकटवर्ती लताओ के फूलो से उनकी पूजा की। अर योगीश्वरनिकी भक्ति वदना करते भए। श्रीराम वीण लेय बजावते भए अर मधुर स्वरसू गावते भए—अर लक्ष्मण गान करते भए। गानविषे ये शब्द गाए—महा योगीश्वर धीर वीर मन वचन कायकर वदनीक है, मनोग्य है चेष्टा जिनकी, देव निहूविषै पूज्य, महाभाग्यवत जिनने अरहतका धर्म पाया जो उपमारहित अखड महाउत्तम तीन भवनविषे प्रसिद्ध जे महामुनि, जिनधर्मके धुरधर, ध्यानरूप वज्रदडकरि महामोहरूप शिलाकू चूर्ण कर डारे, अर जे धर्मरहित प्राणिनिकू अविवेकी जान दयाकर विवेकके मार्ग ल्यावें। परम दयालु,आप तिरे औरनिकू तार। या भाति स्तुति करि दोऊ भाई ऐसे गावें, जो वनके तिर्यंचनिहूके मन मोहित भए अर भक्तिकी प्रेरी सीता ऐसा नृत्य करती भई, जैसा सुमेरुके विषै शची नृत्य करै। जाना है समस्त सगीत शास्त्र जान, सुन्दर लक्षणकू धरे, अमोलक हार मालादि पहिरे, परम लीलाकरि युक्त दिखाई है प्रकटपणे अदभुत नृत्यकी कला जान, सुन्दर है बाहुलता जाकी, हावभावादिविषै प्रवीण, मद मद चरणनिकू धरती, महा लयकू लिए गीत अनुसार भावकू बतावती, अदभुत नृत्य करती महा ४७६

[1] अथोद्धृत्य चिर पादौ तयोर्निर्झर–वारिणा। न येन सीतया लिप्तौ चारुणा पुरु–भावया ॥५४॥

प्रासन्नाना च व[illegible]लीना कुसुमैर्वन–सौरभ लक्ष्मीधरार्पित शुक्ल पूरितान्तरमर्चितौ ॥५४॥

पद्मपुराण भाग दूसरा पर्व ३९ वाँ (भारतीय ज्ञानपीठ काशी से प्रकाशित)

शोभायमान भासती भई। अर असुरकृत उपद्रवकू मानू सूर्य देख न सक्या सो अस्त भया। अर सन्ध्या हू प्रकट होय जाती रही, आकाशविषै नक्षत्रनिका प्रकाश भया। दशोदिशाविषै अंधकार फैल गया। ता समय असुरकी मायाकरि महारौद्र भूतनिकेगण हडहड हसते भए, महा भयकर है मुख जिनके, अर राक्षस खोटे शब्द करते भए अर मायामई स्यालिनी मुखतै भयानक अग्निकी ज्वाला काढती शब्द बोलती भई, अर सकडो कलेवर भयकारी नृत्य करते भए, मस्तक भुजा जघादि की तथा अगनिकी वृष्टि होती भई। अर दुर्गंधसहित स्थूल बूद लोहूकी बरसती भई। अर डाकिनी नग्न स्वरूप लावै हाडो के आभरण पहिरे, क्रूर है शरीर जिनके, हाल है स्तन जिनके, खडग है हाथमें जिनके, वे दृष्टिविषै आवती भई, अर सिंह व्याघादिककेसे मुख, तप्तलोह समान लोचन, हस्तविषै त्रिशूल धारे, होठ डसते, कुटिल है भौंह जिनकी, कठोर है शब्द जिनके, ऐसे अनेक पिशाच नृत्य करते भए। पर्वतकी शिला कम्पायमान भई, अर भूकम्प भया। इत्यादि चेष्टा असुरने करी, सो मुनि शुक्लध्यानविषै मग्न किछु न जानते भए। ये चेष्टा देख जानकी भयकू प्राप्त भई, पतिके अगसे लग गई, तब श्रीराम कहते भए—हे देवी! भय मत करहु, सव विघ्नके हरणहारे जे मुनिके चरण तिनका शरण गहहु। ऐसा कह कर सीताकू मुनिके पायन मेल आप लक्ष्मणसहित धनुष हाथविषै लिए महाबली मेघसमान गरजे, धनुषके चढायवेका ऐसा शब्द भया जसा वज्रपातका शब्द होय। तब वह अग्निप्रभ नामा असुर इन दोऊ वीरनिकू बलभद्र नारायण जान भाग गया, वाकी सब चेष्टा विलाय गई। श्रीराम लक्ष्मणने मुनिका उपसर्ग दूर किया, तत्काल देशभूषण मुनिनिको केवलज्ञान उपज्या। चतुरनिकायके देव दर्शनकू आए। विधिपूर्वक नमस्कारकर यथायोग्य बैठे। केवलज्ञानके प्रतापतै केवलीके निकट रात दिनका भेद न रहै। भूमिगोचरी अर विद्याधर केवलीकी पूजाकर यथायोग्य बैठे, सुर नर विद्याधर सब ही धर्मोपदेश श्रवण करते भए। राम लक्ष्मण हर्षितचित्त सीतासहित केवलीकी पूजाकर हाथ जोड नमस्कारकर पूछते भए। ४७

हे भगवन ! असुरने आपकू कौन कारण उपसर्ग किया। अर तुम दोऊविषै परस्पर अति स्नेह काहेत भया ? तब केवलीकी दिव्यध्वनि होती भई—पद्मिनीनामा नगरीविषै राजा विजयपर्वत गुण धान्यके उपजिवेका उत्तमक्षेत्र, जाके धारणीनामा स्त्री, अर अमृतसुर नामा दूत, सब शास्त्रविषै प्रवीण राजकाजविषै निपुण लोकरीतिको जान, अर जाकू गुण ही प्रिय जाके उपभोग नामा स्त्री ताकी कुक्षि विषै उपजे उदित मुदित नामा दोय पुत्र व्यवहारमें प्रवीण। सो अमृतसुरनामा दूतकू राजाने कार्यनिमित्त बाहिर भेज्या। सो वह स्वामीभक्त वसुभूति मित्र सहित चला, वसुभूति पापी याकी स्त्रीसू आसक्त दुष्टचित्त सो रात्रिविषै अमृतसुरको खड्गसे मार नगरीमें वापिस आया। लोगनित कही—मोहि वापिस भेज दिया है। अर ताकी स्त्री उपभोगसे यथार्थ वृत्तांत कहा। तब वह कहती भई—दोऊ पुत्रनिको भी मारि जो हम दोऊ निश्चित तिष्ठे। सो यह वार्ता उदितकी बहूने सुनी अर सब वृत्तांत उदितसू कहा। यह बहू सासके चरित्रकू पहिले भी जानती हुती। याको वसुभूतिकी बहूने समाचार कहे हुते जो परदाराके सेवनते पतिसे विरक्त हुती। सो उदितने सब बातोंसे सावधान होय मुदितको भी सावधान किया। अर वसुभूतिका खड्ग देख पिताके मरणका निश्चयकर उदितने वसुभूति को मारा, सो पापी मरकर म्लेच्छकी योनिकू प्राप्त भया। ब्राह्मण हुता सो कुशीलके अर हिंसाके दोषते चांडालका जन्म पाया। एक समय मतिवर्धननामा आचार्य, मुनिनिविषै महातेजस्वी पद्मनी नगरी आए सो बसततिलकनामा उद्यानमें संघसहित विराजे, अर आर्यिकानिकी गुरानी अनुधरा धर्मध्यानविषै तत्पर सोहू आर्यिकादिनिके संघसहित आई, सो नगरके समीप उपवनविषै तिष्ठी। अर जा वनमें मुनि विराजे हुते ता वनके अधिकारी आय राजासू हाथ जोड बिनती करते भए—हे देव ! आगेको या पीछेको कहो संघ कौन तरफ जावे ? तब राजा कही जो कहा बात है ? ते कहते भए—उद्यानविषै मुनि आए हैं। जो मने करें तो डरें, जो नहीं मने करें तो तुम कोप करो। यह हमको बडा संकट है। स्वर्गके उद्यान समान यह वन है अब तक काहूको याविषै आने न दिया। परन्तु मुनिनिका कहा करें ? ते दिग

श्वर देवनिकर न निवारे जाव, हम सारखे कसे निवार ? तब राजा कही तुम मत मन करो, जहा साधु विराजे सो स्थानक पवित्र होय ह । सो राजा बडी विभूतिसू मुनिनिके दर्शनको गया । ते महाभाग्य उद्यानमें विराजे हुते । वनकी रजकरि धूसर हैं अग जिनके, मुक्ति योग्य जो क्रिया ताकरि युक्त, प्रशात है हृदय जिनके, कईएक कायोत्सग धरे दोनो भुजा लु बाय खडे ह, कईएक पद्मासन धरे विराजे ह, बेला तेला चौला, पच उपवास, दस उपवास, पक्षमासादि अनेक उपवासनिकरि शोषा ह अग जिनने, पठन पाठनविषै सावधान, भ्रमर समान मधुर ह शब्द जिनके, शुद्ध स्वरूपविषै लगाया ह चित्त जिनने, सो राजा ऐसे मुनिनिकू दूरसे देख गर्वरहित होय गजत उतर सावधान होय सब मुनिनिको नमस्कार कर आचार्यके निकट जाय तीन प्रदक्षिणा देय प्रणामकर पूछता भया । हे नाथ ! जसी तिहारे शरीर में दीप्ति ह तसे भोग नाहीं । तब आचार्य कहते भए—यह कहा बुद्धि तेरी तू शूरवीरकू स्थिर जान ह, यह बुद्धि ससारकी बढावनहारी ह । जसे हाथीके कान चपल तसा जीतव्य चपल ह । यह देह कदली के थम्भसमान असार ह अर ऐश्वय स्वप्न तुल्य ह अर कुटम्ब पुत्र कलत्र बाधव सब असार ह । ऐसा जानकर या ससारकी मायाविषै कहा प्रीति ? यह ससार दु खदायक ह । यह प्राणी अनेक बार गभ वासक सकट भोगवे ह । गभवास नरक तुल्य महा भयानक, दुर्गंध कृमिजाल कर पूर्ण, रक्त श्लेषमा दिकका सरोवर, महा अशुचि कदमका भरा ह । यह प्राणी मोहरूप अधकार करि अधा भया गभवास सू नाहीं डर ह । धिक्कार ह या अत्यन्त अपवित्र देहकू, सब अशुभका स्थानक, क्षणभगुर, जाका कोई रक्षक नाहीं । जीव देहकू पोषै वह याहि दु ख देय सो महा कृतघ्न, नसाजालकर बेढा, चमकरि ढका अनेक रोगनिका पु ज, जाके आगमनकरि ग्लानिरूप । ऐसे देहमे जे प्राणी स्नेह कर ह, ते ज्ञानरहित अविवेकी ह । तिनके कल्याण कहाते होय ह ? अर या शरीरविषै इन्द्रिय चोर बस ह ते बलात्कार धमरूप धनकू हरै ह । यह जीवरूप राजा कुबुद्धिरूप स्त्रीसू रम ह, अर मृत्यु याकू अचानक ग्रसा चाह ह । मनरूप माता हाथी विषयरूप वनविषै क्रीडा कर ह । ज्ञानरूप अकुशत याहि वशकर वैराग्यरूप थभ

सू विवेकी बाध है। यह इन्द्रियरूप तुरग मोहरूप पताकाकू धर, परस्त्रीरूप हरित तृणनिविष महा लोभकू धरते शरीररूप रथकू कुमार्गमें पाडे है। चित्तके प्रेरे चचलता धरे है तातें चित्तको वश करना योग्य है। तुम ससार शरीर भोगनित विरक्त होय भक्तिकर जिनराजकू नमस्कार करहु, निरतर सुमरहु। जाकरि निश्चयत ससार समुद्रकू तिरहु। तप सयमरूप बाणनिकरि मोहरूप शत्रुको हनि, लोकक शिखर अविनाशीपुरका अखड राज्य करहु, निर्भय निजपुरविषै निवास करहु। यह मुनिके मुखत वचन सुनकर राजा विजयपर्वत सुबुद्धि राज्य तज मुनि भया। अर वे दूतके पुत्र दोऊ भाई उदित मुदित जिनवाणी सुन, मुनि होय, महीविषै विहार करते भए। सम्मेदशिखरकी यात्राकू जाते हुते, सो काहू प्रकार मार्ग भूल वनविषै जाय पडे। वह वसुभूति विप्रका जीव महारौद्र भील भया, तान देखे, अति क्रोधायमान होय कुठार समान कुवचन बोले, इनकू खडे राखे अर मारवेकू उद्यमी भया। तब बडा भाई उदित मुदितसे कहता भया।

हे भ्रात ! भय मत करहु। क्षमा ढालको अगीकार करहु। यह मारवेको उद्यमी भया है सो हमने बहुत दिन तपसू क्षमाका अभ्यास किया है सो अब दृढता राखनी। यह वचन सुन मुदित बोला, हम जिनमार्गके सरधानी हमकू कहा भय ? देह तो विनश्वर ही है अर यह वसुभूतिका जीव है जो पिताके बरत मारा हुता। परस्पर दोऊ मुनि ए वार्ता कर शरीरका ममत्व तज कायोत्सर्ग धार तिष्ठे। वह मारवेको आया सो म्लेच्छ कहिए भील ताके पतिने मने किया, दोऊ मुनि बचाए। यह कथा सुनि रामने केवलीसू प्रश्न किया—हे देव ! वाने बचाए सो वासू प्रीतिका कारण कहा ? तब केवलीकी दिव्य-ध्वनिविषै आज्ञा भई। एक यक्षस्थान नाम ग्राम तहा सुरप, अर कर्षक दोऊ भाई हुते। एक पक्षीकू पारधी जीवता पकड ग्राममें लाया सो इन दोऊ भाईने द्रव्य देय छुडाया। सो पक्षी मरकर म्लेच्छपति भया, अर वे सुरप कर्षक दोऊ वीर उदित मुदित भए। ता परोपकारकरि वाने इनको बचाए। जो कोई जेती नेकी कर है सो वह भी तासू नेकी कर है, अर जो काहूसू बुरी कर है वाहूसू वह हू बुरी

करै है। यह संसारी जीवनिकी रीति है। तातै सबनिका उपकार ही करहु। काहू प्राणीसूं वैर न करना। एक जीवदया ही मोक्षका मार्ग है, दया विना ग्रंथनिके पढवेकरि कहा? एक सुकृत ही सुख का कारण सो करना। वे उदित मुदित मुनि उपसर्गतै छूटि सम्मेदशिखरकी यात्राकूं गए। अर अन्य हू अनेक तीर्थनिकी यात्रा करी। रत्नत्रयका आराधनकरि समाधितैं प्राण तज स्वर्गलोक गए। अर वह वसुभूतिका जीव जो म्लेच्छ भया हुता सो अनेक कुयोनिविषै भ्रमणकर मनुष्य देह पाय तापस-व्रत धर, अज्ञान तपकर मर ज्योतिषी देवनिकेविषै अग्निकेतु नामा क्रूर देव भया। अर भरतक्षेत्रके विषै अरिष्टपुर नगर, जहां राजा प्रियव्रत महा भोगी ताके दो राणी महा गुणवती, एक कनकप्रभा दूजी पद्मावती। सो वे उदित मुदितके जीव स्वर्गसूं चयकर पद्मावती राणीके रत्नरथ विचित्ररथ नामा पुत्र भए, अर कनकप्रभाके वह ज्योतिषी देव चयकर अनुधर नामा पुत्र भया। राजा प्रियव्रत पुत्रकूं राज्य देय भगवानके चैत्यालयविषै छह दिनका अनशन धार देह त्याग स्वर्गलोक गया।

अथानन्तर एक राजाकी पुत्री श्रीप्रभा लक्ष्मीसमान, सो रत्नरथने परणी। ताकी अभिलाषा अनुधरके हुती। सो रत्नरथतैं अनुधरका पूर्व जन्मका तो वैर हुता ही, बहुरि नया वैर उपजा। सो अनु-धर रत्नरथकी पृथ्वी उजाडने लगा। तब रत्नरथ अर विचित्ररथ दोऊ भाइनि अनुधरकूं युद्धमें जीत देशतैं निकाल दिया। सो देशतैं निकासनेतैं अर पूर्व वैरतैं महा क्रोधकूं प्राप्त होय जटा अर वक्कलका धारी तापसी भया, विषवृक्ष समान कषाय विषका भरचा। अर रत्नरथ विचित्ररथ महातेजस्वी चिरकाल राज्य कर मुनि होय तपकर स्वर्गविषै देव भए, महासुख भोग तहांतैं चयकर सिद्धार्थ नगरकेविषै राजा क्षेमंकर राणी विमला, तिनके महासुन्दर देशभूषण कुलभूषण नामा पुत्र होते भए। सो विद्या पढनेके अर्थ घरमें उचित क्रीडा करते तिष्ठे। ता समय एक सागरघोष नामा पंडित अनेक देशनिमें भ्रमण करता आया। सो राजा पंडितकूं बहुत आदरसूं राखा। अर ये दोऊ पुत्र पढनेकूं सौंपे। सो महा विनयकर संयुक्त सबकला सीखीं। केवल एक विद्या गुरुको जाने या विद्याको जाने और कुटुम्बमें काहूको न जाने। ४८१

तिनके एक विद्याभ्यासहीका काय। विद्यागुरुत अनेक विद्या पढी। सब कलाके पारगामी होय पिताप आए। सो पिता इनकू महाविद्वान सब कला निपुण देखकर प्रसन्न भया। पंडितको मनवांछित दान दिया। यह कथा केवली रामसू कह ह, वे देशभूषण कुलभूषण हम ह। सो कुमार अवस्थामें हमने सुनी जो पिताने तिहारे विवाहके अर्थ राजकन्या मगाई ह। यह वार्ता सुनकर परमविभूति धरे, तिनकी शोभा देखवेको नगर बाहिर जायवेको उद्यमी भए। सो हमारी बहिन कमलोत्सवा कन्या झरोखेमें बठी नगरी की शोभा देखती हुती। सो हम तो विद्याके अभ्यासी, कबहू काहूको न देखा, न जाना। हम न जाने यह हमारी बहिन ह। अपनी माग जान विकाररूप चित्त किया। दोऊ भाइनिके चित्त चले, दोऊ परस्पर मनविष विचारते भए—याहि म परणू, दूजा भाई परणा चाह तो ताहि मारू। सो दोऊके चित्तविष विकारभाव अर निर्दईभाव भया। ताही समय बन्दीजनके मुख ऐसा शब्द निकसा कि राजा क्षेमकर विमला राणी सहित जयवन्त होवे। जाके दोनो पुत्र देवन समान, अर यह झरोखविष बठी कमलोत्सवा इनकी बहिन सरस्वती समान। दोऊ वीर महागुणवान, अर बहिन महागुणवती। ऐसी सतान पुण्याधिकारिनिके ही होय ह। जब यह वार्ता हमने सुनी तब मनविष विचारी अहो! देखो मोह कमकी दुष्टता, जो हमारे बहिनकी अभिलाषा उपजी। यह ससार असार महादु खका भरा, हाय! जहा ऐसा भाव उपजें, पापके योग करि प्राणी नरक जाय, वहा महादु ख भोगे। यह विचारकर हमारे ज्ञान उपजा सो वराग्यको उद्यमी भए। तब माता पिता स्नेहसू व्याकुल भए। हमने सबसू ममत्व तज दिगम्बरी दीक्षा आदरी। आकाशगामिनी रिद्धि सिद्धभई। नानाप्रकारके जिन तीर्थादिविषै विहार किया। तप ही ह धन जिनके। अर माता पिता राजा क्षेमकर अगले भो भवका पिता सो हमारे शोकरूप अग्निकर तप्तायमान हुवा। सब आहार तज मरणको प्राप्त भया सो गरुडेंद्र भया। भवनवासी देवनिविषै गरुडकुमार जातिके देव, तिनका अधिपति, महा सुन्दर, महा पराक्रमी, महालोचन नाम, सो आयकर यह देवनिकी सभाविषै बठा ह। अर वह अनुधर तापसी विहार करता कौमुदी नगरी गया।

अपने शिष्यनिके समूह करि बेढा। तहा राजा सुमुख ताके राणी रतिवती परम सुन्दरी, सैकडा राणिनिविष प्रधान, अर ताके एक नत्यकारणी मानो मदकी पताका ही है, अति सुन्दर रूप अदभुत चेष्टा की धरणहारी। ताने साधुदत्त मुनिके समीप सम्यक्दशन ग्रहचा, तबते कुदेव कुधमकू तृणवत जाने। ताके निकट एक दिन राजा कही यह अनुधर तापसी महातपका निवास ह। तब मदनाने कही हे नाथ! अज्ञानीका कहा तप? लोकविष पाखण्ड रूप ह। यह सुनकर राजाने क्रोध किया। तू तपस्वी की निंदा कर ह। तब वाने कही आप कोप मत करहु, थोड ही दिनविष याकी चेष्टा दृष्टि पडेगी। ऐसा कहकर घर जाय, अपनी नागदत्ता नामा पुत्रीको सिखाय तापसीको आश्रम पठाई। सो वह देवागना समान परम चेष्टाकी धरणहारी महा विभ्रमरूप तापसीको अपना शरीर दिखावती भई। सो याके अग उपग महा सुन्दर निरखकर अज्ञानी तापसीका मन मोहित भया, अर लोचन चलायमान भए। जो अगपर नेत्र गए वहा ही बध गया। कामबाणनिकरि तापसी पीडित भया। व्याकुल होय देवागना समान जो यह कन्या ताके समीप आय पूछता भया, तू कौन ह अर यहाँ कहाँ आई ह? सध्याकालविष सब ही लघु वद्ध अपने स्थानकविष तिष्ठ ह। तू महासुकमार अकेली वनमें क्यो विचर ह? तब वह कन्या मधुर शब्दकर याका मन हरती सती दीनताको लिये बोली, चचल नीलकमल समान ह लोचन जाके, हे नाथ! दयावान! शरणागत–प्रतिपाल! आज मेरी माताने मोहि घरते निकास दई, सो अब म तिहारे भेषकर तिहारे स्थानक रहना चाहू हू। तुम मोसो कृपा करहु, रात दिन तिहारी सेवाकर मेरा यह लोक परलोक सुधरेगा। धम अथ काम इनविष कौनसा पदाथ ह जो तुम विष न पाइए। परम निधान हो, म पुण्यके योगत तुम पाये। या भाति कन्याने कही तब याका मन अनुरागी जान विकल तापसी कामकर प्रज्वलित बोला–हे भद्र! म कहा कपा करू, तू कृपाकर प्रसन्न होहु, म जन्मपयत तेरी सेवा करूगा। ऐसा कहकर हाथ चलावनेका उद्यम किया, तब कन्या अपने हाथसू मन कर आदरसहित कहती भई–हे नाथ! म कुमारी कन्या, ऐसा करना उचित नाहीं। मेरी

माताके घर जायकर पूछो, घर भी निकट ही है। जसी मोपर तिहारी करुणा भई है, तसे मेरी माको प्रसन्न करहु, वह तुमको देवेगी, तब जो इच्छा होय सो करियो। यह कन्याके वचन सुन मूढ तापसी व्याकुल होय तत्काल कन्याकी लार रात्रिको ताकी माताके पास आया। कामकर व्याकुल है सब इन्द्रिय जाकी। जसे माता हाथी जलके सरोवरविषै पैठे तसे नृत्यकारिणी के घरविषै प्रवेश किया। गौतमस्वामी राजा श्रेणिकसे कहै है-

हे राजन्! कामकर ग्रसाहुवा प्राणी न स्पर्शे, न स्वादे, न सूंघे, न देखे, न सुने, न जाने, न डरे अर न लज्जा करे। महा मोहसे निरंतर कष्टकू प्राप्त होय है। जसे अंधा प्राणी सर्पनिके भरे कूपमें पडे। तसे कामांध जीव स्त्रीके विषयरूप विषमकूपमें पडे। सो वह तापसी नृत्यकारिणीके चरणमें लोट अति अधीन होय कन्याकू याचता भया। ताने तापसीको बांध राखा, राजाको समस्या हुती। सो राजाने आय कर रात्रिको तापसी बंधा देखा। प्रभात तिरस्कारकरि निकास दिया। सो अपमान कर लज्जायमान महादुःखको धरता संता पृथ्वीविषै भ्रमणकर मूवा। अनेक कुयोनिविषै जन्म मरण किए। बहुरि कर्मानुयोगकर दरिद्रीके घर उपजा। जब यह गर्भमें आया तब ही याकी माताने याके पिताको क्रूर वचन कहकर कलह किया। सो उदास होय विदेश गया, अर याका जन्म भया। बालक अवस्था हुती तब भीलनि देशके मनुष्य बन्द किये, सो याकी माताभी बन्दीमें गई। सब कुटुम्ब रहित यह परम दुखी भया। कईएक दिन पीछे तापसी होय अज्ञान तप कर ज्योतिषी देवनिविषै अग्निप्रभ नामा देव भया। अर एक समय अनन्तवीर्य केवलीकू धर्मविषै निपुण जो शिष्य, तिनने पूछ्या, कसे है केवली? चतुरनिकायके देव अर विद्याधर तथा भूमिगोचरी तिनकरि सेवित, हे नाथ! मुनिसुव्रतनाथ के मुक्ति गये पीछे तुम केवली भए, तुम समान संसारका तारक कौन होयगा। तब तिनने कही देशभूषण कुलभूषण होवेंगे। केवलज्ञान अर केवलदर्शनके धरणहारे, जगतविषै सार, जिनका उपदेश पायकर लोक संसार समुद्रकू तिरेंगे। ये वचन अग्निप्रभने सुने सो सुनकर अपने स्थानक गया। इन दिननिमें कुअवधि कर हमकू या

पर्वतविषै तिष्ठे जान 'अनन्तवीर्य केवलीका वचन मिथ्या करूं' ऐसा गर्वधर पूर्व वैरकर उपद्रव करनेकूं आया। सो तुमकूं बलभद्र नारायण जान भयकर भाज गया। हे राम! तुम चरम शरीरी, तद्भव मोक्षगामी बलभद्र हो। अर लक्ष्मण नारायण है। ता सहित तुमने सेवा करी अर हमारे घातिया कर्मके क्षयसे केवलज्ञान उपज्या। या प्रकार प्राणीनिके बैरका कारण सब बैरानुबंध है, ऐसा जानकर जीवनिके पूर्वभव श्रवणकर, हे प्राणी हो! रागद्वेष तज, निश्चल होवो। ऐसे महापवित्र केवलीके वचन सुन सुर नर असुर बारम्बार नमस्कार करते भये, अर भवदुःखत डरे। अर गरुडेन्द्र परम हर्षित होय केवलीके चरणारविंदकूं नमस्कार कर महा स्नेहकी दृष्टि विस्तारता, लहलहाट करै हैं मणि कुण्डल जाके, रघुवंशमें उद्योत करणहारे जे राम तिनसों कहता भया-हे भव्योत्तम! तुम मुनिनिकी भक्ति करी सो मैं अति प्रसन्न भया। ये मेरे पूर्व भवके पुत्र हैं जो तुम मांगो सो मैं देहुं। तब श्रीरघुनाथ क्षणएक विचार कर बोले तुम देवनिके स्वामी हो, कभी हमपै आपदा परै तो चितारियो। साधुनिकूं सेवाके प्रसादसे यह फल भया जो तुम सारिखोंसे मिलाप भया। तब गरुडेन्द्रने कही तुम्हारा वचन मैं प्रमाण किया। जब तुमकूं कार्य पडेगा तब मैं तिहारे निकट हो हूं। ऐसा कहा तब अनेक देव मेघकी ध्वनि समान वादित्रनिके नाद करते भये। साधुनिके पूर्वभव सुन कईएक उत्तम मनुष्य मुनि भये, कईएक श्रावकके व्रत धारते भए। वे देशभूषण कुलभूषण केवली, जगत पूज्य, सब संसारके दुःखसे रहित, नगर ग्राम पर्वतादि सब स्थानविषै विहार कर, धर्मका उपदेश देते भये। यह दोऊ केवलिनिके पूर्वभवका चरित्र जे निर्मल स्वभावके धारक भव्यजीव श्रवण करैं वे सूर्य समान तेजस्वी पापरूप तिमिरकूं शीघ्र ही हरैं।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महा पद्मपुराण संस्कृतग्रन्थ ताकीभाषा वचनिकाविषै देशभूषण कुलभूषण केवलीका व्याख्यान वर्णन करनेवाला उनतालीसवां पर्व पूर्ण भया॥ ३९॥

४८५

अथानन्तर केवलीके मुखत रामचन्द्रको चरम शरीरी कहिये तदभव मोक्षगामी सुनकर सकल राजा जय जय शब्द कहकर प्रणाम करते भये। अर वशस्थलपुरका राजा सुरप्रभ महा निर्मलचित्त राम लक्ष्मण सीताकी भक्ति करता भया। महिलनिके शिखरकी कांतिकरि उज्ज्वल भया ह आकाश जहा, ऐसा जो नगर वहा चलनेकी राजा प्राथना करी, परन्तु रामने न मानी। वशगिरिके शिखर हिमाचलके शिखर समान सुन्दर, जहा नलिनी वनविष महारमणीक विस्तीण शिला, तहा आय हस समान विराजे। कसा ह वन ? नानाप्रकारके वक्ष अर लतानि करि पूण, अर नानाप्रकारके पक्षी कर ह नाद जहा, सुगन्ध पवन चाल ह, भाति भातिके फल पुष्प तिनकरि शोभित, अर सरोवरनिमें कमल फूल रहे ह, स्थानक अति सुन्दर सव ऋतुकी शोभा जहा बन रही ह, शुद्ध आरसीके तल समान मनोग्य भूमि, पाच वणके रत्ननिकरि शोभित, जहा कुन्द मौलसिरी मालती स्थलकमल, जहा अशोक वक्ष नागवक्ष इत्यादि अनेक प्रकारके सुगन्ध वक्ष फूल रहे ह, तिनके मनोहर पल्लव लहलहाट कर ह। तहा राजाकी आज्ञाकर महा भक्तिवन्त जे पुरुष तिनने श्रीरामकू विराजनेके निमित्त वस्त्रनिके महा मनोहर मण्डप बनाय, सवक जन महा चतुर सदा सावधान अति आनन्दक करणहारे, मगलरूप वाणीके बोलनहारे, स्वामीकी भक्तिविष तत्पर, तिनने बहुत तरहके चौडे ऊचे वस्त्रनिके मण्डप बनाये। नानाप्रकारके चित्राम ह जिनमें, अर जिन पर ध्वजा फरहर ह, मोतिनकी माला जिनके लटके ह, क्षुद्र घटिकानिके समूह कर युक्त, अर जहा मणिनिकी झालर लूम्ब रही ह, महा ददीप्यमान सूयकीसी किरण धर, अर पथ्वी पर पूण कलश थापे ह, अर छत्र चमर सिंहासनादि राज चिह्न तथा सब सामग्री धर ह, अनेक मगलद्रव्य ह। ऐसे सुन्दर स्थलविष सुखसो तिष्ठ ह। जहा जहा रघुनाथ पाव धरें तहा तहा पथ्वी पर राजा अनेक सेवा कर। शय्या आसन, मणि सुवणके नानाप्रकारके उपकरण, अर इलायची, लवग, ताम्बूल, मेवा, मिष्टान्न तथा श्रेष्ठ वस्त्र, अदभुत आभूषण, अर महा सुगन्ध, नानाप्रकारके भोजन दधि, दुग्ध, घत, भाति भाति अन्न इत्यादि अनुपम वस्तु लावें। या भाति

सब ठौर सब जन श्रीरामकू पूजे। वशगिरि पर श्रीराम लक्ष्मण सीताके रहिवेको मण्डप रचे। तिनमें किसी ठौर गीत, कहीं नत्य, कहीं वादित्र बाज हैं। कहू सुकतकी कथा होय है अर नत्यकारिणी ऐसा नत्य कर मानो देवागनाही ह। कहीं दान बट ह। ऐसे मदिर बनाए जिनका कौन वणन करसक, जहा सब सामग्री पूण, जो याचक आव सो विमुख न जाय। दोनो भाई सब आभरणनिकरि युक्त, सुन्दर वस्त्र धरें मनवाछित दानके करणहारे, महा यशकर मण्डित, अर सीता परम सौभाग्यकी धरणहारी, पापके प्रसगसू रहित, शास्त्रोक्त रीतिकर रहे। ताकी महिमा कहातक कहिए। अर वशगिरिविष श्रीरामचन्द्रने जिनेश्वर देवके हजारो अदभुत चत्यालय बनवाये। महादृढ है स्तभ जिनके, योग्य ह लम्बाई चौडाई ऊचाई जिनकी, अर सुन्दर झरोखनिकरि शोभित, तोरण सहित है द्वार जिनके, कोट अर खाई कर मडित, सुन्दर ध्वजानिकरि शोभित, बदनाके करणहारे भव्यजीव तिनके मनोहर शब्द सयुक्त, मदग, वीणा, बासुरी, जालरी, झाझ, मजीरा, शख, भेरी इत्यादि वादित्रनिके शब्दकर शोभायमान, निरतर आरम्भए ह महा उत्सव जहा। ऐसे रामके रचे रमणीक जिनमदिर, तिनकी पक्ति शोभती भई। तहा पच वणके प्रतिबिब जिनेन्द्र सव लक्षणनि कर सयुक्त, सब लोकनिकरि पूज्य विराजते भए। एक दिन श्रीराम कमललोचन लक्ष्मणसू कहते भए—हे भाई! यहा अपने ताई दिन बहुत बीते, अर सुखसू या गिरि पर रहे, श्रीजिनेश्वरके चत्यालय बनायवेकर पथ्वी में निमल कीर्ति भई, अर या वशस्थलपुरके राजाने अपनी बहुत सेवा करी, अपने मन बहुत प्रसन्न किए। अब यहा ही रहें तो कायकी सिद्धि नाहीं, अर इन भोगनिकर मेरा मन प्रसन्न नाहीं। ये भोग रोगके समान ह—ऐसा ही जानता हू, तथापि ये भोगनिके समूह मोहि क्षणमात्र नाहीं छोडे ह। सो जबतक सयमका उदय नाहीं तबतक ये विना यत्न आय प्राप्त होय ह। या भवविष जो कम यह प्राणी करै ह ताका फल परभवमें भोगव ह। अर पूव उपार्जे के कम तिनका फल वतमान कालविष भोग ह। या स्थलमें निवास करते अपने सुख सम्पदा ह, परन्तु जे दिन जाय ह वे फेर न आव। नदीका

वेग, अर आयुके दिन अर यौवन गए वे फेर न आवे। ता कणरवा नाम नदीके समीप दडक बन सुनिये ह। वहा भूमिगोचरनिकी गम्यता नाहीं, अर वहा भरतकी आज्ञाकाहू प्रवेश नाहीं। वहा समुद्र के तट एक स्थान बनाय निवास करेंगे। यह रामकी आज्ञा सुन लक्ष्मणने विनती करी—हे नाथ! आप जो आज्ञा करोगे सोई होयगा। ऐसा विचार दोऊ वीर महाधीर इन्द्रसारिखे भोग भोगि वश गिरित सीता सहित चाले। राजा सरप्रभ वशस्थलपुरका पति लार चाल्या सो दूर तक गया। आप विदा किया सो मुश्किलसे पीछे बाहुड, महा शोकवत अपने नगरमें आया। श्रीरामका विरह कौन कोनको शोकवत न कर? गौतमस्वामी राजा श्रेणिकसू कह ह—हे राजन! वह वशगिरि बडा पवत, जहा अनेक धातु सो रामचन्द्रने जिनमदिरकी पक्ति कर महा शोभायमान किया। कसे ह जिनमन्दिर? दिशानिके समूहकू अपनी काति करि प्रकाशरूप कर ह। ता गिरिपर श्रीरामने परम सुन्दर जिन-मन्दिर बनाए, सो वशगिरि रामगिरि कहाया, या भाति पृथ्वीपर प्रसिद्ध भया। रवि समान ह प्रभा जाकी।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण सस्कृत ग्रथ ताकी भाषावचनिकाविष रामगिरिका वणन करनेवाला चालीसवा पव पूण भया॥ ॥

अथानन्तर राजा अरण्यके पोता दशरथके पुत्र राम लक्ष्मण सीतासहित दक्षिण दिशाके समुद्रकू चाले। कसे ह दोऊ भाई? महा सुखके भोक्ता, नगर ग्राम तिनकरि भरे जे अनेक देश तिनको उलघ कर महा वनविष प्रवेश करते भए। जहा अनेक मगनिके समूह ह, अर माग सूझ नाहीं, अर उत्तम पुरुषनिकी बस्ती नाहीं। जहा विषम स्थानक सो भील भी विचर न सक, नानाप्रकार के वृक्ष अर बेल तिनकर भरचा, महा विषम अति अधकाररूप, जहा पवतनिकी गुफा, गम्भीर निझरने झर है, ता वन विष जानकी प्रसगत धीरे धीरे एक एक कोस रोज चाले। दोऊ भाई निभय अनेक क्रीडाके करणहारे

नरमदा नदी पहुंचे। जाके तट महारमणीक प्रचुर तणनिके समूह अर समानता धरे, महाछायाकारी अनेक वक्ष फल पुष्पादिकरि शोभित। अर जाके समीप पवत, एसे स्थानकू देख बोऊ भाई वार्ता करते भए। यह वन अति सुन्दर अर नदी सुन्दर ऐसा कहकर रमणीक वृक्षकी छायाविष सीतासहित तिष्ठे। क्षणएक तिष्ठकर तहाके रमणीक स्थानक निरखकर जलक्रीडा करते भए। बहुरि महामिष्ट आरोग्य पक्व फल फूलनि के आहार बनाये, सुखकी ह कथा जिनके, तहा रसोईके उपकरण अर बासण माटीके अर बासनिके नानाप्रकार तत्काल बनाय, महास्वादिष्ट सुन्दर सुगन्ध आहार, वनके धान सीताने तयार किए। भोजनके समय बोऊ वीर मुनिके आयवेके अभिलाषी द्वारापेक्षणको खडे। ता समय बो चारण मुनि आए—सुगुप्ति अर गुप्ति है नाम जिनके, ज्योतिपटलकर सयुक्त हैं शरीर जिनका, अर सुन्दर ह दशन जिनका, मति श्रुति अवधि तीन ज्ञान विराजमान, महाव्रतके धारक, परम तपस्वी, सकल वस्तु की अभिलाषारहित, निमल ह चित्त जिनके, मासोपवासो, महाधीर वीर, शुभचेष्टाके धरणहारे, नेत्रनिकू आनन्दके करता, शास्त्रोक्त आचारकर सयुक्त ह शरीर जिनका, सो आहारकू आए। सो दूरत सीताने देखे। तब महाहषके भरे ह नेत्र जाके, अर रोमाचकर सयुक्त ह शरीर जाका, पतिसो कहती भई, हे नाथ! हे नर श्रेष्ठ! देखहु! देखहु! तपकर दुबल शरीर दिगम्बर कल्याणरूप चारण युगल आए। तब राम कही—हे प्रिये! हे पडिते! सुन्दर मूर्ति! वे साधु कहा ह? हे रूप आभरण की धरणहारी? धन्य ह भाग्य तेरे, तूने निर्ग्रंथ युगल देखे, जिनके दशनत जन्म जन्मके पाप जाये भक्तिवत प्राणीके परम कल्याण होय। जब या भाति रामने कही तब सीता कहती भई—ये आए, ये आए। तब ही दोनो मुनि रामके दष्टि पडे। जीवदयाके पालक, ईर्यासमिति सहित, समाधानरूप है मन जिनके। तब श्रीरामने सीता सहित सन्मुख जाय नमस्कारकर महाभक्तियुक्त श्रद्धा सहित मुनिनिकू आहार दिया। आरणी भैसोका अर वनकी गायोका दुग्ध, अर छुहारे गिरी दाख नानाप्रकार के वनके धान्य, सुन्दर घो, मिष्टान्न, इत्यादि मनोहर वस्तु विधिपूवक तिनकरि मुनिनकू पारणा करा

वते भए। तें मुनि भोजनके स्वादके लोलुपतासूं रहित, निरन्तराय आहार करते भए। जब रामने अपनी स्त्री सहित भक्तिकर आहार दिया, तब पचाश्चय भए, रत्ननिकी वर्षा, पुष्पवृष्टि, शीतल मंद सुगंध पवन, अर दुंदुभी बाजे, जयजयकार शब्द। सो जा समय रामके मुनिनिका आहार भया ता समय वनविषै एक गृध्र पक्षी अपनी इच्छाकर वृक्षपर तिष्ठ था। सो अतिशयकर संयुक्त मुनिनकूं देख अपने पूर्वभव जानता भया कि कोई एकभव पहिले मैं मनुष्य हुता, प्रमादी अविवेककर जन्म निष्फल खोया, तप संयम न किया, धिक्कार मो मूढबुद्धिकूं। अब मैं पापके उदयकरि खोटी योनिविषै आय पड्या, कहा उपाय करूं? मोहि मनुष्य भवविषै पापी जीवनि भरमाया। वे कहिवेके मित्र अर महाशत्रु, सो उनके संगमें धर्मरत्न तज्या, अर गुरुनिके वचन उलंघ महापाप आचरया। मैं मोहकर अंध, अज्ञान तिमिरकर धर्म न पहिचान्या। अब अपने कर्म चितार उरविषै जलूं हूं। बहुत चितवन कर कहा? दुखके निवारनेके अर्थ इन साधुनिका शरण गहूं, ये सवसुखके दाता, इनसूं मेरे परम अर्थकी प्राप्ति निश्चय सेती होयगी। या भांति पूर्वभवके चितारनेत प्रथम तो परम शोककूं प्राप्त भया हुता। बहुरि साधुनिके दर्शनतें तत्काल परम हर्षित होय, अपनी दोऊ पांख हलाय, आंसुनिकर भरे हैं नेत्र जाके, महा विनयकर मंडित पक्षी वृक्षके अग्रभागतें भूमिविषै पड्या। सो महामोटा पक्षी ताके पड़नेके शब्दकरि हाथी अर सिंहादि वनके जीव भयकर भाग गए, अर सीता भी आकुलचित्त भई। देखो यह ढीठ पक्षी मुनिनिके चरणनिके कहांसूं आय पड्या? कठोर शब्दकर घना ही निवारया, परन्तु वह पक्षी मुनिनिके चरणविषै धोवनविषै आय पड्या। चरणोदकके प्रभाव कर क्षण- ४६०
मात्रविषै ताका शरीर रत्नोंकी राशि समान नानाप्रकारके तेजकर मण्डित होय गया, पांख तो स्वर्णकी प्रभाको धरते भए, दोऊ पांव वैडूर्यमणिसमान होय गए, अर देह नानाप्रकारके तेजकर रत्ननिकी छविको धरता भया, अर चूंच मूंगासमान आरक्त भई। तब यह पक्षी आपकूं अर रूपकूं देख परम हर्षकूं प्राप्त भया, मधुरनादकर नृत्य करवेकूं उद्यमी भया। देवनिके दुन्दुभी समान है नाद जाका,

नेत्रनितैं आनन्दके अश्रुपात डारता शोभता भया। जैसा मोर मेहके आगमनविषै नृत्य करै तैसा मुनि के आगे नृत्य करता भया। महा मुनि विधिपूर्वक पारणाकर वैडूर्य मणिसमान शिलापर विराजे। पद्मराग मणिसमान है नेत्र जाके, ऐसा पक्षी पांख संकोच मुनिनिके पांवोंको प्रणामकर आगे तिष्ठा। तब श्रीराम फूले कमल समान हैं नेत्र जिनके, पक्षीकूं प्रकाशरूप देख आप परम आश्चर्यकूं प्राप्त भए। साधुनिके चरणारविंदको नमस्कारकर पूछते भए। कैसे हैं साधु? अठाईस मूलगुण, चौरासी लाख उत्तरगुण, वेही हैं आभूषण जिनके। बारम्बार पक्षीकी ओर निरख राम मुनिसूं पूछतें भए–हे भगवन! यह पक्षी प्रथम अवस्थाविषै महाविरूप अंग हुता सो क्षणमात्रविषै सुवर्ण अर रत्ननिके समूहकी छवि धरता भया। यह अशुचि सर्व मांसका आहारी दुष्ट गृधपक्षी आपके चरणनिके निकट तिष्ठकर महाशांत भया सो कौन कारण? तब सुगुप्ति नामा मुनि कहते भए–हे राजन! पूर्वे या स्थल विषै दंडकनामा देश हुता, जहां अनेक ग्राम नगर पट्टण संवाहण मटंब घोष खेट करवट द्रोणमुख हुते। बाडिकरयुक्त सो ग्राम, कोट खाई दरवाजेनिकर मंडित सो नगर, अर जहां रत्ननिकी खान सो पट्टण, पर्वतके ऊपर सो संवाहन, अर जाहि पांचसौ ग्राम लागे सो मटंब, अर गायनिके निवास गुवालनिके आवास सो घोष, अर जाके आगे नदी सो खेट, अर जाके पीछे पर्वत सो करवट, अर समुद्रके समीप सो द्रोणमुख, इत्यादि अनेक रचनाकार शोभित। तहां कर्णकुण्डल नामा नगर महामनोहर, ताविषै या पक्षी का जीव दंडकनामा राजा हुता, महाप्रतापी उदय धरे, प्रचंड पराक्रम संयुक्त, भग्न किये हैं शत्रुरूप कटक जाने, महामानी, बडी सेनाका स्वामी। सो या मूढने अधर्मकी श्रद्धाकर पापरूप मिथ्या शास्त्र सेया, जैसे कोई घृतका अर्थी जलकूं मथे। याकी स्त्री दंडिनिकी सेवक हुती तिनसो अति अनुरागिणी। सो वाके संगकर यह भी ताके मार्गकूं धरता भया। स्त्रिनिको वश हुवा पुरुष कहा २ न करै? एक दिवस यह नगरके बाहिर निकस्या सो वनविषै कायोत्सर्ग धरे ध्यानारूढ मुनि देखे। तब या निर्दईने मुनिके कंठविषै मूवा सर्प डारया। कैसा हुता यह? पाषाण समान कठोर हुता चित्त जाका। सो

मुनि ध्यान धरे मौनसू तिष्ठे, अर यह प्रतिज्ञा करी, जो लग मर कठत दूर न कर तौलग मैं हलन चलन नाहीं करू, योगरूप ही रहू। सो काहूने सप दूर न किया, मुनि खडे ही रहे। बहुरि कईएक दिननिविष राजा ताही माग गया। ताही समय काहू भले मनुष्यने साप काढ्या, अर मुनिके पास बठ्या हुता सो राजा वा मनुष्यसू पूछा जो मुनिके कठत साप कौन काढ्या, अर कब काढ्या ? तब वाने कही–हे नरेन्द्र ! किसी नरकगामीने ध्यानारूढ मुनिके कठविष मूवा सप डार्या हुता सो सपके सयोगसे साधुका शरीर अतिखेद खिन्न भया। इनके तो कोई उपाय नहीं, आज सव मने काढ्या ह। तब राजा मुनिको शातस्वरूप कषायरहित जान प्रणामकर अपने स्थानक गया। उन दिनसे मुनियो की भक्तिविष अनुरागी भया और किसीकू उपद्रव न करे। तब यह वत्तात राणीने दडियोके मुखसे सुना कि राजा जिनधमका अनुरागी भया। तब या पापिनीने क्रोधकर मुनियोके मारनेका उपाय किया। जे दुष्टजीव ह वे अपने जीनेका भी यत्न तज पराया अहित करें। सो पापिनीने अपने गुरुको कहा–तुम निग्रथ मुनिका रूपकर मेरे महलमे आवो और विकार चेष्टा करहु। तब याने याही भाति करी। सो राजा यह वत्तात जानकर मुनियोसे कोप भया और मत्री आदि दुष्ट मिथ्यादष्टि सदा मुनियोकी निन्दा ही करते। अन्य भी और जे क्रूरकर्मी मुनियोके अहितु थे तिन्होने राजाकू भरमाया। सो पापी राजा मुनियोको घानीविष पेलिवे की आज्ञा करता भया। आश्चयसहित सव मुनि घानीमे पेले। एक साधु बहिर्भूमि गया पीछे आवता था सो किसी दयावानने कही–अनेक मुनि पापी राजाने यत्रमें पेले ह, तुम भाग जावो। तुम्हारा शरीर धर्मका साधन ह सो अपने शरीरकी रक्षा करहु। तब यह समाचार सुन सघके मरणके शोककर चुभी ह दु खरूप शिला जाके, क्षणएक बजके स्तम्भसमान निश्चल होय रहा, बहुरि न सहा जाय ऐसा क्लेश रूप भया, सो मुनिरूप जो पवत उसकी समभावरूप गुफासे क्रोधरूप केसरी सिंह निकस्या। जस आरक्त अशोकवक्ष होय तैस मुनिके आरक्त नेत्र भए। तेजकर आकाश सध्याके रगसमान होय गया। कोप कर तप्तायमान जो मुनि ताके सव शरीरविष पसेवकी

बूद प्रकट भई । फिर कालाग्नि समान प्रज्वलित अग्निपूतला निकस्या, सो धरती आकाश अग्निरूप होय गए, लोक हाहाकार करते मरणकूं प्राप्त भए । जस बासोका बन बलै तस देश भस्महोय गया, न राजा, न अंतपुर, न पुर, न ग्राम, न पर्वत न नदी, न बन, न कोई प्राणी, कुछ भी देशमें न बच्या । महा ज्ञान वैराग्यके योगकर बहुत दिनोमें मुनिने समभावरूप जो धन उपार्ज्या हुता सो तत्काल क्रोधरूप रिपुने हरा । दंडक देशका दंडक राजा पापके प्रभावकर प्रलय भया और देश प्रलय भया, सो अब यह दंडक बन कहावे है । कईएक दिन तो यहां तणभी न उपज्या । फिर घने काल-विषै मुनियोका बिहार भया, तिनके प्रभावकरि वृक्षादिक भए । यह वन देवोको भी भयकर है, विद्या-धरोकी क्या बात ? सिंह व्याघ्र अष्टापदादि अनेक जीवोसे भरया और नानाप्रकारके पक्षियोकर शब्दरूप है, और अनेक प्रकारके धान्यसे पूर्ण है । वह राजा दंडक महा प्रबल शक्तिका धारक हुता सो अपराधकर नरक तिर्यचगतिविषै बहुत काल भ्रमणकर यह गृध पक्षी भया । अब इसके पापकर्मकी निवृत्तिभई, हमकूं देख पूर्वभव स्मरण भया । ऐसा जान जिनआज्ञा मान संसार शरीर भोगतै विरक्त होय, धर्मविषै सावधान होना । परजीवोका जो दृष्टांत है सो अपनी शांतभावकी उत्पत्तिका कारण है । या पक्षीकूं अपनी विपरीत चेष्टा पूर्वभवकी याद आई है सो कम्पायमान है । पक्षीपर दयालु होय । मुनि कहते भए—हे भव्य ! अब तू भय मत कर, जा समय जसी होनी होय, सो होय रुदन काहेको करै है, होनहारके मेटवे समर्थ कोऊ नाहीं । अब तू विश्रामकूं पाय सुखी होय, पश्चात्ताप तज । देख कहां यह वन और कहां सीतासहित श्रीरामका आवना और कहां हमारा वनचर्याका अवग्रह जो वनमें श्रावकके आहार मिलेगा तो लेवेंगे, और कहां तेरा हमको देख प्रतिबोध होना ? कर्मोंकी गति विचित्र है, कर्मोंकी विचित्रतासे जगतकी विचित्रता है । हमने जो अनुभया और सुना देखा है सो कहे हैं—पक्षीके प्रतिबोधवेके अर्थ रामका अभिप्राय जान सुगुप्ति मुनि अपना और गुप्ति मुनि दूजा दोनोका वैराग्यका कारण कहते भए । एक वाराणसी नगरी वहां अचल नामा राजा विख्यात उसके राणी गिरदेवी

गुणरूप रत्नोकर शोभित। उसके एक दिन त्रिगुप्तिनामा मुनि शुभ चेष्टाके धरणहारे आहारके अर्थ आए। सो राणीने परमश्रद्धाकर तिनकू विधिपूर्वक आहार दिया। जब निरंतराय आहार हो चुका तब राणीने मुनिकू पूछी—हे नाथ! यह मेरा गृहवास सफल होयगा या नहीं। भावार्थ—मेरे पुत्र होगा या नहीं। तब मुनि वचनगुप्तिभेद (तोडकर) इसके संदेह निवारणके अर्थ आज्ञा करी। तेरे दोय पुत्र विवेकी होयगे। सो हम दोय पुत्र त्रिगुप्ति मुनिकी आज्ञा भए पीछे भए, इसलिए सुगुप्ति और गुप्ति हमारे नाम माता पिताने राखे सो हम दोनो राजकुमार लक्ष्मीकर मंडित सवकलाके पारगामी लोकोके प्यारे नाना प्रकारकी क्रीडा कर रमते घरमें तिष्ठे।

अथानन्तर एक और वृत्तांत भया। गन्धवती नामा नगरी, वहाके राजाका पुरोहित सोम, उसके दोय पुत्र एक सुकेतु दूजा अग्निकेतु, तिनविषै अतिप्रीतिसो सुकेतुका विवाह भया। विवाहकर यह चिन्ता भई कि कभी इस स्त्रीके योगकर हम दोनो भाइयोमें जुदायगी न होय। फिर शुभकर्मके योगसे सुकेतु प्रतिबोध होय अनन्तवीर्य स्वामीके समीप मुनि भया और लहुरा भाई अग्निकेतु भाईके वियोगकर अत्यन्त दुखी होय बाराणसीविषै उग्रतापस भया। तब बडाभाई सुकेतु जो मुनि भया हुता, सो छोटे भाईकू तापस भया जान संबोधिवेके अर्थ आयवेका उद्यमी भया, गुरुपै आज्ञा मागी। तब गुरुने कहा तू भाई को संबोधा चाहै है तो यह वृत्तांत सुन। तब इसने कहा—हे नाथ! वृत्तांत क्या? तब गुरुने कही—वह तुमसो मत पक्षका वाद करेगा। और तुम्हारे वादके समय एक कन्या गगाके तीर तीन स्त्रियो सहित आवेगी। गौर है वर्ण जाका, नानाप्रकारके वस्त्र पहिरें। दिनके पिछले पहिर आवेगी। तो इन चिह्नो कर जान तू भाईसे कहियो—इस कन्याका कहा शुभ अशुभ होनहार है सो कहो, तब वह विलखा होय तोहू कहेगा, मैं तो न जानू तुम जानो हो तो कहो। तब तू कहियो इस पुरविषै एक प्रवर नामा श्रेष्ठी धनवंत उसकी यह रुचिरा नामा पुत्री है। सो आजतै तीसरे दिन मरणकर कवर ग्रामविषै विलास नामा कन्याके पिताका मामा उसके छेली होयगी, ताहि ल्याली मारेगा, सो मरकर गाडर होयगी, फिर ४९४

भस, भससे उसी विलासके विधुरा नामा पुत्री होयगी। यह वार्ता गुरु कही, तब सुकेतु सुनकर गुरु कू प्रणामकर तापसीनिके आश्रम आया। जा भाति गुरु कही हुती ताही भाति तापससो कही और ताही भाति भई। वह विधुरा नामा विलासकी पुत्रीकू प्रवर नामा श्रेष्ठी परणे लाग्या, तब अग्नि-केतु कही यह तेरी रुचिरा नामा पुत्री सो मरकर अजा गाडर भस होय तेरे मामाके पुत्री भई, अब तू याहि परन सो उचित नाहीं और विलासकू भी सब वृत्तांत कहा, कन्याके पूर्वभव कहे, सो सुनकर कन्याकू जातिस्मरण भया, कुटुम्बसे मोह तज सब सभाकू कहती भई—यह प्रवर मेरा पूर्वभवका पिता है सो ऐसा कह आर्यिका भई और अग्निकेत तापस मुनि भया। यह वृत्तांत सुनकर हम दोनो भाइयो ने महा वैराग्यरूप होय अनन्तवीर्यस्वामीके निकट जनेन्द्रव्रत अगीकार किये। मोहके उदयकर प्राणियो के भव वनके भटकावनहारे अनेक अनाचार होय है। सब गुरुके प्रभावकर अनाचारका परिहार होय है। ससार असार है, मातापिता बाधव मित्र स्त्री सतानादिक तथा सुख दुख ही विनश्वर है। ऐसा सुन कर पक्षी भवदुखसे भयभीत भया धर्मग्रहणकी वाच्छा कर वारम्बार शब्द करता भया। तब गुरु कही हे भद्रे! तू भय मत कर श्रावकके व्रत लवो, जाकरि फिर दुखकी परम्परा न पाव, अब तू शातभाव धर काहू प्राणीकू पीडा मत कर। अहिसा व्रत धर, मृषा वाणी तज, सत्यव्रत आदरो परवस्तुका ग्रहण तज, परदारा तज तथा सर्वथा ब्रह्मचर्य भज। तृष्णा तज सन्तोष भज। रात्रि भोजनका परिहार कर अभक्ष आहारका परित्याग कर। उत्तमचेष्टाका धारक होहु और त्रिकाल सध्याविषै जिनेन्द्रका ध्यान धरहु। हे सुबुद्धि! उपवासादि तपकर नानाप्रकारके नियम अगीकार कर। प्रमाद रहित होय इन्द्रिय जीत साधुवोकी भक्तिकर, देव अरहत गुरु निग्रंथ, दयामयी धर्म निश्चयकर। या भाति मुनिने आज्ञा करी तब पक्षी बारम्बार नमस्कारकर मुनिके निकट श्रावकके व्रत धरता भया। सीताने जानी यह उत्तम श्रावक भया तब हर्षित होय अपने हाथसे बहुत लडाया। ताहि विश्वास उपजाय दोऊ मुनि कहते भये—यह पक्षी तपस्वी शात चित्त भया कहा जायगा? गहन वनविषै अनेक

क्रूर जीव ह या सम्यग्दष्टि पक्षीकी तुम्हे सदा काल रक्षा करनी । यह गुरुके वचन सुन, सीता पक्षी के पालिवेरूप ह चित्त जाका, अनुग्रहकर राख्या । राजा जनककी पुत्री करकमलकर विश्वासती सती कसी क्षोभती भई ? जस गरुडकी माता गरुडकू पालती शोभ । अर श्रीराम लक्ष्मण पक्षीको जिन धर्मी जान अतिधर्मानराग करते भये । अर मुनिनिकी स्तुतिकर नमस्कार करते भये । दोनो चारण मुनि आकाशके माग गए, सो जाते कसे शोभते भये ? मानो धमरूप समुद्रकी कल्लोल ही ह । अर एक वनका हाथी मदो मत्त वनमें उपद्रव करता भया । ताकू लक्ष्मण वशकर तापर चढ रामप आए । सो गजराज गिरिराज सारिखा ताहि देख राम प्रसन्न भए । अर वह ज्ञानी पक्षी मुनिकी आज्ञा प्रमाण यथाविधि अणुव्रत पालता भया । महा भाग्यके योगत राम लक्ष्मण सीताका ताने समीप पाया । इनके लार पथ्वीविष बिहार कर । यह कथा गौतम स्वामी राजा श्रेणिकसू कह ह । हे राजन ! धमका माहात्म्य देखो, याही ज मविष वह विरूप पक्षी अदभुत रूप होय गया प्रथम अवस्थाविष अनेक माम का आहारी, दुग ध निद्यपक्षी, सुग धके भरे कचन कलश समान, महासुग ध सु दर शरीर होय गया। कहू इक अग्निकी शिखासमान प्रकाशमान, अर कहूइक वडूयमणि समान, कहूइक स्वण समान, कहूइक हरित्मणिकी प्रभाकू धरे शोभता भया । राम लक्ष्मणके समीप वह सु दर पक्षी श्रावकके व्रत धार महास्वाद सयुक्त भोजन करता भया । महाभाग्य पक्षीके जो श्रीरामकी सगति पाई । रामके अनुग्रहत अनेक चर्चाधार दढवती महाश्रद्धानी भया । श्रीराम ताहि प्रति लडावें, च दनकर चर्चित ह अग जाका, स्वणकी किंकिणी कर मण्डित रत्नकी किरणनिकर शोभित ह शरीर जाका, ताके शरीरविष रत्न हेमकर उपजी किरणनिकी जटा, तात याका नामा श्रीरामने जटायू धरया । राम लक्ष्मण सीताकू यह अति प्रिय, जीती ह हसकी चाल जाने, महा सु दर मनोहर चेष्टाकू धर, राम का मन मोहता भया । ता वनके और जे पक्षी वे देखकर आश्चयकू प्राप्त भए । यह व्रती तीनो सध्याविष सीताके साथ भक्तिकर नमीभूत हुआ अरह त सिद्ध साधुनिकी बन्दना कर । महा दयावान

जानकी जटायु पक्षी पर अतिकृपाकर सावधान भई, सदा याकी रक्षाकर। कसी ह जानकी ? जिन धमत ह अनुराग जाका। वह पक्षी महा शुद्ध अमत समान फल, अर महा पवित्र, सोधा अन्न, निमल छाना जल इत्यादि शुभ वस्तुका आहार करता भया। जनकको पुत्री सीता ताल बजावे अर राम लक्ष्मण दोऊ भाई तालके अनुसार तान लावे तब यह जटायु पक्षी रविसमान ह काति जाकी परम हर्षित भया ताल अर तानके अनुसार नत्य कर।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण सस्कृत ग्रथ ताकी भाषावचनिकाविष जटायुका व्याख्यान वणन करनेवाला इकतालीसवाँ पव पूण भया ॥ १ ॥

अथानन्तर पात्र दानके प्रभावकर राम लक्ष्मण सीता या लोकमें रत्नहेमादि सम्पदाकर युक्त भए। एक सुवणमई रत्नजडित, अनेक रचनाकर सुन्दर ताके मनोहर स्तम्भ, रमणीक वाड, बीच विराजवेका सुन्दर स्थानक, अर जाके मोतिनकी माला लूम्बे, सुन्दर झालरी, सुगन्ध चदन कपूरादि कर मडित, जामें सेज आसन वादित्र सव सुगन्ध कर पूरित ऐसा एक एक विमान समान अदभुत रथ बनाया, जाके चार हाथी जुत, ताविष बठे राम लक्ष्मण सीता जटायु सहित रमणीक वनविष विचरें, जिनको काहूका भय नाहीं, काहूको घात नाहीं। काहू ठौर एक दिन, काहू ठौर पन्द्रह दिन, काहू ठौर एक मास, मनवाछित क्रीडा कर। यहा निवास कर अक यहा निवास कर, ऐसी ह अभिलाषा जिनके। नवीन शिष्यकी इच्छाकी न्याई इनकी इच्छा अनेक ठौर विचरती भई। महा निमल जे नीझरने तिनकू निरखते, ऊची नीची जायगा टार समभूमि निरखते, ऊचे वृक्षनिकू उलघकर धीरे धीरे आगे गए। अपनी स्वेच्छाकर भ्रमण करते ये धीर वीर सिंह समान निभय दडकवनके मध्य जाय प्राप्त भए। कसा है स्थानक ? कायरनकू भयकर, जहा पवत विचित्र शिखरके धारक, जहा रमणीक नीझरने झरें। जहाते नदी निकस जिनका मोतिनके हारसमान उज्ज्वल जल। जहा अनेक वृक्ष बड,

पीपल, बहेडा, पीलू, सरसी, बडे बडे सरल वक्ष, धवल वक्ष, कदब, तिलक जातिके वक्ष, लोद वक्ष, अशोक, जम्बूवक्ष, पाटल, आम, आवला,अमिली, चम्पा, कण्डीरशालि वक्ष, ताड वक्ष, प्रियगू, सप्तच्छव तमाल, नागवक्ष, नन्दीवक्ष, अर्जुन जातिके वक्ष, पलाशवृक्ष,मलयगिरि चन्दन, केसरि, भोजवक्ष, हिंगोट वक्ष, काला अगर अर सुफेद अगर, कुन्द वक्ष, पदमाक वक्ष, कुरज वक्ष, पारिजात वक्ष, मिजन्या,केतकी, केवडा, महुवा, केवली, खर मदनवक्ष, नीम्बू, खजूर, छुहारे, चारोली, नारगी, बिजोरा, दाडिम, नारियल, हरडे, कथ, किरमाला, विदारीकद अगथिया, करज, कटालोकूट, अजमोद कौंच, ककोल, मिच, लवग, इलायची, जायफल, जावित्री, चव्य, चित्रक, सुपारी। ताबूलोकी बेलि रक्तचन्दन, बेत, श्याम लता, मीठासींगी, हरिद्रा अरलू, सहिजडा, कुडा वक्ष, पदमाख पिस्ता, मौलश्री, बीलवक्ष, द्राक्षा, बिदाम, शालमलि इत्यादि अनेक जातिके वक्ष, तिनकर शोभित ह, अर स्वयमेव उपजे नानाप्रकारके धान्य, अर महारसके भरे फल अर पौंडे (साठे) इत्यादि अनेक वस्तुनिकर वह वन पूण नानाप्रकार के वक्ष, नानाप्रकारकी बेल, नानाप्रकारके फल फूल तिनकर वन अति सन्दर, मानो दूजा नन्दनवन ही ह। सो शीतल मन्द सुगन्ध पवन कर कोमल कपोल हालें। सो ऐसा सोह मानो वह वन रामके आइवे कर हष कर नत्य कर ह। अर सुगन्ध पवन कर उठी जो पुष्पकी रज सो इनके अग सू आय लाग, सो मानो अटवी आलिगन ही कर ह। अर भमर गुजार कर ह सो मानो श्रीरामके पधारने कर प्रसन्न भया वन गान ही कर ह। अर महा मनोज्ञ गिरिनके नीझरनिके छाटेनिके उछरिवे के शब्द कर मानो हस ही ह, अर भरुण्ड जातिके पक्षी तथा हस, सारिस, कोयल मयूर, सिचाड, कुरुचि, सूवा, मना, कपोत, भारद्वाज इत्यादि अनेक पक्षिनके ऊंचे शब्द होय रहे ह। सो मानो श्रीराम लक्ष्मण सीताके आइवेका आदर ही कर ह। अर मानो वे पक्षी कोमल वाणीकर ऐसा वचन कह हैं कि महाराज भले ही यहा आवो। अर सरोवरनि विषै सफेद श्याम अरुण कमल फूल रहे ह, सो मानो श्रीरामके देखवेकू कौतूहलत कमलरूप नेत्रनिकर देखणेकू प्रवर्त्तै ह। अर फलनिके भारकर

नम्रीभूत जो वृक्ष सो मानो रामकूं नमैं है। अर सुगन्ध पवन चालै है सो मानो वह रामके आयवेसूं आनन्दके स्वास लेय है। सो श्रीराम सुमेरुके सौमनसवन समान वनकूं देखकर जानकीसूं कहते भए-कैसी है जानकी ? फूले कमल समान है नेत्र जाके। पति कहै है–हे प्रिये ! देखो यह वृक्ष बेलनिसूं लिपटे पुष्पनिके गुच्छनिकर मण्डित मानो गृहस्थ समान ही भासै है। अर प्रियंगुकी बेल मौलसरीके वृक्षसूं लगी कैसी शोभै है जैसी जीवदया जिनधर्मसूं एकताकूं धरै सोहै। अर यह माधवीलता पवनकर चलायमान जे पल्लव तिनकर समीपके वृक्षनिको स्पर्शै है। अर हे पतिव्रते ! यह वनका हाथी मदकर आलसरूप है नेत्र जाके, सो हथिनीके अनुरागका प्रेर्या कमलनिके वनमें प्रवेश करै हैं, जैसे अविद्या कहिए मिथ्यापरणति ताका प्रेरा अज्ञानी जीव, विषयवासनाविषै प्रवेश करै। कैसा है कमलनिका वन ? विकसि रहे जे कमलदल तिनपर भ्रमर गुंजार करै है। अर दृढव्रते ! यह इन्द्रनीलमणि समान श्यामवर्ण सर्प बिलतें निकसकर मयूरकूं देख भागकर पीछे बिलमें धसै है, जैसे विवेकतैं काम भाग भववनमें छिपै। अर देखो सिंह केशरी महा सिंह साहसरूप चरित्र इस पर्वतकी गुफामें तिष्ठा हुता सो अपने रथका नाद सुन निद्रा तज गुफाके द्वार आय निर्भय तिष्ठै है। अर वह बघेरा क्रूर है मुख जाका, गर्वका भर्या, मांजरे नेत्रनिका धारक, मस्तक पर धरी है पूंछ जाने, नखनिकर वृक्षकी जडकूं कुचरै। अर मृगनिके समूह दूबके अंकुर तिनके चरिवेकूं चतुर, अपने बालकनिकूं बीचकर मृगीनि सहित गमन करै है। सो नेत्रनिकर दूरहीसो अवलोकन करते अपने ताईं दयागत जान निर्भय भए विचरै है। यह मृग मरणसूं कायर सो पापी जीवनिके भयतैं सावधान है, तुमकूं देख अति प्रीतिकूं प्राप्त भए विस्तीर्ण नेत्र कर बारम्बार देखै है। तुम्हारेसे नेत्र इनके नाहीं। तातैं आश्चर्यकूं प्राप्त भए है। अर यह वनका शूकर अपनी दाढतैं कर भूमिकूं विदारता, गर्वका भर्या चलाजाय है, लग रह्या है कर्दम जाके। अर हे गजगामिनी ! या वनविषै अनेक जातिके गजनिकी घटा विचरै है सो तुम्हारीसी चाल तिनकी नाहीं। तातैं तिहारी चाल देख अनुरागी भए हैं। अर ये चीते विचित्र अंग अनेक वर्णकर

शोभ ह, जसे इन्द्रधनुष अनेकवणकर सोह ह । हे कलानिधे ! यह वन अनेक अष्टापदादि क्रूर जीवनि कर भरचा ह, अर अति सघन वक्षनिकर भरचा ह, अर नानाप्रकारके तणनिकर पूण ह । कहीं इक महासुन्दर ह जहा भयरहित मगनिके समूह विचर हैं । कहू इक महा भयकर अतिगहन ह, जसे महा राजनिका राज्य अति सुन्दर ह तथापि दुष्टनिकू भयकर ह । अर कहीं इक महामदोन्मत्त गजराज वक्षनिकू उखाडे ह, जस मानी पुरुष धमरूप वक्षकू उखाडे ह । कहूइक नवीन वक्षनिके महासुगन्ध समूहपर भमर गु जार कर ह जस दातानिके निकट याचक आव । काहू ठौर वन लाल होय रहा है, काहू ठौर श्वेत, काहू ठौर पीत, काहू ठौर हरित, काहू ठौर श्याम, काहू ठौर चचल, काहू ठौर निश्चल, काहू ठौर शब्द सहित, काहू ठौर शब्दरहित, काहू ठौर गहन, काहू ठौर विरले वक्ष, काहू ठौर सुभग, काहू ठौर दुभग, काहू ठौर विरस, काहू ठौर सम, काहू ठौर सरस, काहू ठौर विषम वक्ष, काहू ठौर तरुण, काहू ठौर वक्षवद्धि या भाति नाना विधि भास ह ।

यह दडकवन विचित्र गति लिये ह, जस कामनिका प्रपच विचित्र गति लिये ह । हे जनकसुते ! जे जिनधमकू प्राप्त भए ह ते ही या कमप्रपचत निवत्त होय निर्वाणकू प्राप्त होय ह । जीवदयासमान कोऊ धम नाहीं । जो आप समान परजीवनिकू जान सर्व जीवनिका दया कर, तेई भवसागरसू तिर । यह दण्डक नामा पर्वत, जाके शिखर आकाशसो लग रहे ह ताका नाम यह दण्डक वन कहिए ह । या गिरिके ऊचेशिखर ह अर अनेक धातुकर भरचा ह, जहा अनेक रगनिकर आकाश नानारग होय रह्या ह । पर्वतमें नानाप्रकारकी औषधी ह । कईएक ऐसी जडी ह जे दीपक समान प्रकाशरूप अधकारकू हर, तिनकू पवनका भय नाहीं, पवनमें प्रज्वलित । और या गिरित नीझरने झर ह जिनका सुन्दर शब्द होय ह जिनके छाटोकी बू द मोतिनकी प्रभा कर ह । या गिरिके स्थानक कईएक उज्ज्वल, कईएक नील, कईएक आरक्त दीख ह, अर अत्यन्त सुन्दर ह । सूयकी किरण गिरिके वक्षनिके अग्रभागविष आय पडे ह अर पत्र पवनकरि चचल ह सो अत्यन्त सोह ह । हे सुबुद्धिरूपिणी ! या वनविषै कहूइक

वृक्ष फूलनिके भारकर नमीभूत होय रहे हैं, अर कहुइक नानारगके जे पुष्प तेई भए पट तिनकर शोभित है, अर कहुइक मधुरशब्द बोलनहारे पक्षी तिनकरि शोभित है। हे प्रिये! या पर्वतते यह क्रौंचरवा नदी जगत प्रसिद्ध निकसी है जैसे जिनराजके मुखते जिनवाणी निकसै। या नदीका जल ऐसा मिष्ट है जैसी तेरी चेष्टा मिष्ट है। हे सुकेशी! या नदी पवनकरि उठे है लहर, अर किनारेके वृक्षनिके पुष्प जलमें पडे हैं, सो अति शोभित है। कैसी है नदी? हंसनिके समूह अर झागनिके पटलनि करि अति उज्ज्वल है, अर ऊंचे शब्दकर युक्त है जल जाका, कहूं एक महाविकट पाषाणनिके समूह तिनकर विषम है, अर हजारा ग्राह मगर तिनकरि अति भयकर है, अर कहुइक अति वेगकर चला आवै है जलका जो प्रवाह ताकर दुर्निवार है, जैसे महा मुनिनके तपकी चेष्टा दुर्निवार है। कहु इक शीतल बहै है, कहूं इक वेगरूप बहै है, कहुइक काली शिला, कहुइक श्वेतशिला, तिनकी कांतिकर जल नील श्वेत दुरग होय रहा है, मानो हलधर हरिका स्वरूप ही है। कहुइक रक्तशिलानिके किरणकी समूहकर नदी आरक्त होय रही है जैसे सूर्यके उदयकरि पूर्व दिशा आरक्त होय, अर कहुइक हरित पाषाणके समूहकर जलविषै हरितता भासै है, सो सिवालकी शंका कर पक्षी पीछे होय जा रहे हैं। हे कांते! यहां कमलनिके समूहविषै मकरंदके लोभी भ्रमर निरंतर भ्रमण करै हैं, अर मकरंदकी सुगंधताकर जल सुगंधमय होय रहा है, अर मकरंदके रंगनिकर जल सुरंग होय रहा है, परन्तु तिहारे शरीरकी सुगंधता समान मकरंदकी सुगंधि नाहीं, अर तिहारे रंग समान मकरंदका रंग नाहीं, मानो तुम कमलवदनी कहावो हो। सो तिहारे मुखकी सुगंधताही से कमल सुगंधित हैं। अर ये भ्रमर कमलनिकूं तज
तिहारे मुखकमलपर गुञ्जार कर रहे हैं। अर नदीका जल काहू ठौर पाताल समान गम्भीर है मानो तिहारे मनकीसी गम्भीरताकूं धरै है। अर कहू इक नीलकमलनिकर तिहारे नेत्रनिकी छायाकूं धरै है अर यहां अनेक प्रकारके पक्षिनिके समूह नानाप्रकार क्रीडा करै हैं जैसे राजपुत्र अनेक प्रकारकी क्रीडा करैं। हे प्राणप्रिये! या नदीके पुलिनकी बालू रेत अति सुन्दर शोभित है, जहां स्त्री सहित

सुर कहिए विद्याधर अथवा खग कहिए पक्षी आनन्दकरि विचर ह । हे अखडव्रते ! यह नदी अनेक विलासनिकू धर समुद्रकी ओर चली जाय ह, जस उत्तम शीलकी धरणहारी राजानिकी कन्या भर तारके परणवेकू जाय । कसे ह भरतार ? महामनोहर प्रसिद्ध गुणके समूहकू धर शुभ चेष्टा कर युक्त जगतविष विख्यात ह । हे दयारूपिनी ! इस नदीके किनारेके वक्ष फल फूलनिकर युक्त नाना प्रकार पक्षिनिकर मडित जलकी भरी कारीघटा समान सघन शोभाकू धर ह । या भाति श्रीराम च द्रजी अति स्नेहके भरे वचन जनकसुतासू कहते भए, परम विचित्र अथकू धर, तब वह पतिव्रता अति हषके समूह करि भरी पतिसू प्रसन्न भई परम आदरसू कहती भई ।

हे करुणानिधे ! यह नदी निमल जल जाका, रमणीक ह तरग जाविष, हसादिक पक्षिनिके समूह कर सु दर ह पर तु जसा तिहारा चित्त निमल ह तसा नदीका जल निमल नाहीं । अर जस तम सघन अर सुग ध हो तसा वन नाही अर जस तुम उच्च अर स्थिर हो तस गिर नाहीं, अर जिनका मन तुममे अनुरागी भया ह तिनका मन और ठौर जाय नाहीं । या भाति राजसुताके अनेक शुभ वचन श्रीराम भाई सहित सुनकर अतिप्रसन्न होय याकी प्रशसा करते भए । कसे ह राम ? रघुवश रूप आकाशविष च द्रमा समान उद्योतकारी ह, नदीके तटपर मनोहर स्थल देख हाथिनिके रथसे उतर लक्ष्मण प्रथम ही नानास्वादकू धर सु दर मिष्टफल लाया, अर सुग ध पुष्प लाया, बहुरि राम सहित जल क्रीडाका अनुरागी भया । कसा ह लक्ष्मण ? गुणनिकी खान ह मन जाका । जसी जलक्रीडा इ द्र नागे द्र चक्रवर्ती कर तसी राम लक्ष्मणने करी । मानो वह नदी श्रीरामरूप कामदेवकू देख रति-
समान मनोहर रूप धारती भई । कसी ह नदी ? लहलहाट करती जे लहर तिनकी माला कहिए पक्ति, ताकरि मर्दित किये ह श्वेत श्याम कमलनिके पत्र जाने, अर उठे ह झाग जामें, भ्रमररूप ह चूडा जाके, पक्षिनिके जे शब्द तिनकर मानो मिष्ट शब्द कर ह, वचनालाप कर ह । राम जलक्रीडाकर कमल निके वनविष छिप रहे बहुरि शीघ ही आए । जनकसुतासू जलकेलि करते भए । इनकी चष्टा देख

वनके तिर्यंच हू और तरफसे मन रोक एकाग्र चित्त होय इनकी ओर निरखते भए। कसे हू दोऊ वीर ? कठोरतासे रहित ह मन जिनका, अर मनोहर ह चेष्टा जिनकी, सीता गान करती भई। सो गानके अनुसार रामचन्द्र ताल देते भए। मदगनिकरि अति सुन्दर राम जलक्रीडाविष आसक्त अर लक्ष्मण चौगिरदा फिर। कसा ह लक्ष्मण ? भाईके गुणनिविष आसक्त ह बुद्धि जाकी। राम अपनी इच्छा प्रमाण जलक्रीडाकर समीपके मर्गनिकू आनन्द उपजाय, जलक्रीडात निवत्त भए। महा प्रसन्न जे वन के मिष्ट फल तिनकर क्षुधा निवारणकर लतामडपविष तिष्ठे। जहा सूयका आताप नाहीं। ये देवनि सारिखे सुन्दर नानाप्रकारकी सुन्दर कथा करते भए। सीतासहित अति आनन्दसू तिष्ठे। कसो ह सीता ? जटायु के मस्तकपर हाथ ह ज्याका। तहा राम लक्ष्मणसू कह ह-हे भात ! यह नानाप्रकारके वक्ष स्वादुफल कर सयुक्त, अर नदी निमल जलकी भरी, अर जहा लतानिके मडप, अर यह दडकनामागिरि अनेक रत्ननिकर पूण, यहा अनेक स्थानक क्रीडा करनेके ह। तात या गिरिके निकट एक सुन्दर नगर बसावें। अर यह वन अत्यन्त मनोहर औरनित अगोचर, यहा निवास हषका कारण ह। यहा स्थानककर हे भाई ! तू दोऊ मातानिके लायवेकू जाहु, वे अत्यन्त शोकवती ह सो शीघ ही लावहु, अथवा तू यहा रह अर सीता तटा जटायु भी यहा रह, म मातानिके ल्यायवेकू जाऊगा। तब लक्ष्मण हाथ जोड नमस्कारकर कहता भया जो आपकी आज्ञा होयगी सो होयगा। तब राम कहते भए-अब तो वर्षा ऋतु आई, अर ग्रीष्म ऋतु गई, यह वर्षाऋतु अति भयकर ह, जाविष समुद्र समान गाजते मेघघटा निके समूह विचर ह, चालते अजनगिरि समान दशोदिशाविष श्यामता होय रही ह। विजुरी चमक ह, बगुलानिकी पक्ति विचर ह अर निरन्तर बादलनिके जल वरस ह जस भगवानके जन्मकल्याणक विष देव रत्नधारा बरसाव। अर देख ! हे भ्रात ! यह श्यामघटा तेरे रगसमान सुन्दर जलकी बूद बरसावै ह, जस तू दानकी धारा बरसावै। ये बादल आकाशविष विचरते विजुरीके चमत्कारकरि युक्त बडे बडे गिरिनिकू अपनी धाराकर आछादते, ध्वनि करते सते कसे सोह ह, जस तुम पीत वस्त्र पहिरे ५०३

अनेक राजानिकू आज्ञा करते पृथ्वीकू कृपावृष्टिरूप अमृतकी वृष्टिकर सींचते सोहो। हे वीर! ये कई एक बादल पवनके वेगसे आकाशविषै भ्रमै है, जैसे यौवन अवस्थाविषै असंयमियोका मन विषय वासना-

विषै भ्रमै। अर यह मेघ नाजके खेत छोड वृथा पर्वतकेविषै बरसै है, जैसे कोई द्रव्यवान पात्रदान अर करुणादान तज वेश्यादिक कुमार्गविषै धन खोवै। हे लक्ष्मण! या वर्षाऋतुविषै अतिवेगसू नदी बहै है, अर धरती कीचसू भर रही है अर प्रचंड पवन बाजै है, भूमिविषै हरितकाय फैल रही है, अर त्रसजीव विशेषतासे है, या समयविषै विवेकिनिका विहार नाहीं। ऐसे वचन श्रीरामचन्द्रके सुनकर सुमित्राका नन्दन लक्ष्मण बोला—हे नाथ! जो आप आज्ञा करोगे सो ही मैं करूंगा। ऐसी सुन्दर कथा करते दोऊ वीर महाधीर सुन्दर स्थानकविषै सुखसू वर्षाकाल पूर्ण करते भए। कैसा है वर्षाकाल? जा समय सूर्य नाही दीखै है।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महा पद्मपुराण संस्कृतग्रंथ ताकीभाषा वचनिकाविषै दंडकवनविषै निवास वर्णन करनेवाला बियालीसवां पर्व पूर्ण भया॥ ४२॥

——

अथानन्तर वर्षाऋतु व्यतीत भई। शरदऋतुका आगमन भया। मानो यह शरदऋतु चन्द्रमाकी किरणरूप बाणनिकरि वर्षारूप बैरीकू जीत पृथ्वीविषै अपना प्रताप विस्तारती भई। दिशारूप जे स्त्री सो, फूल रहे है फूल जिनके ऐसे वृक्षनिकी सुगंधताकर सुगन्धित भई है। अर वर्षा समयविषै कारीघटानिकर जो आकाश श्याम हुता सो अब चन्द्रकांतिकर उज्ज्वल शोभता भया, मानो क्षीर सागरके जलकरि धोया है। अर विजलीरूप स्वर्ण सांकलकर युक्त, वर्षाकालरूपी गज, पृथ्वीरूप लक्ष्मीकू स्नान कराय कहा जाता रहा? अर शरदके योगते कमल फूले तिनपर भ्रमर गुंजार करते भए, हंस क्रीडा करते भए, नदीनके जल निर्मल होय गए, दोऊ किनारे महासुन्दर भासते भए, मानो शरदकालरूप नायिककू पाय सरितारूप कामिनी कांतिकू प्राप्त भई है। अर वन वर्षा अर पवनकर

छूटे कसे शोभते भए मानो निद्राकरि रहित जाग्रत दशाकू प्राप्त भए ह। सरोवरनिविषै सरोजनि पर भमर गु जार कर ह, अर वनविष वक्षनिविष पक्षी नाद कर हैं सो मानो परस्पर वार्ता ही करै ह। अर रजनीरूप नायिका नानाप्रकारके पुष्पनिकी सुग धता कर सुग धित निमल आकाशरूप वस्त्र पहिरे च द्रमारूप तिलक धरे मानो शरदकालरूप नायकप जाय ह। अर कामीजननिकू काम उपजावती केतकीके पुष्पनिकी रज कर सुग ध पवन चल ह। या भाति शरदऋतु प्रवरती। सो लक्ष्मण बडे भाईकी आज्ञा माग सिंह समान महा पराक्रमी वन देखवेकू अकेला निकस्या। सो आग गए एक सुग ध पवन आई। तब लक्ष्मण विचारते भए यह सुग ध काहेकी ह ? ऐसी अदभुत सुगन्ध वक्षनिकी न होय, अथवा मेरे शरीरकी ह ऐसी सुग ध नाहीं। यह सीताजीकें अगकी सुग ध होय तथा रामजी के अगकी सुग ध होय, तथा कोऊ देव आया होय। ऐसा सदेह लक्ष्मणकू उपजा। सो यह कथा राजा श्रेणिक सुन गौतम स्वामीसू पूछता भया—हे प्रभो! जो सुग धकर वासुदेवकू आश्चय उपजा सो वह सुग ध काहेकी ? तब गौतम गणधर कहते भए। कसे ह गौतम ? सदेहरूप तिमिर दूर करवेकू सूय ह सवलोककी चेष्टाकू जाने ह, पापरूप रजके उडावनेको पवन ह। गौतमस्वामी कह ह-हे श्रेणिक! द्वितीय तीथकर श्रीअजितनाथ तिनके समोसरणमें मेघवाहन विद्याधर रावणका बडा, शरणे आया। ताहि राक्षसनिके इ द्र महाभीमने त्रिकूटाचल पवतके समीप राक्षसद्वीप, तहा लका नामा नगरी, सो कृपाकर दई। अर यह रहस्यकी बात कही, हे विद्याधर! सुनहु! भरत क्षेत्रके दक्षिण दिशाकी तरफ लवणसमुद्रके उत्तरकी ओर पथ्वीके उदर विष एक अलकारोदय नामा नगर ह, सो अदभुत स्थानक ह। अर नानाप्रकार रत्ननिकी किरणनिकरि मडित ह। देवनिकू भी आश्चय उपजाव तो मनुष्यनिकी कहा बात ? भूमिगोचरीनिकू तो अगम्य ह, अर विद्याधरकू भी अतिविषम ह, चितवनविष न आवै, सव गुणनिकरि पूण ह। जहा मणिनिके मदिर ह, परचक्रत अगोचर ह। सो कदाचित तुमकू अथवा तेरे सन्तानके राजानिकू लकाविष परचक्रका भय उपजै तो अलकारोदयपुरविष निभय भए तिष्ठियो।

पद्म पुराण ५०६ याहि पाताललका कह ह। ऐसा कहकर महाभीम बुद्धिमान राक्षसनिके इन्द्रने अनुग्रहकर रावणके बडेनिकू लका अर पाताललका वई, अर राक्षसद्वीप विया। सो यहा इनके वशमें अनेक राजा भए। बडे २ विवेकी व्रतधारी भए। सो रावणके बडे विद्याधर कुलविष उपजे ह, देव नाहीं। विद्याधर अर देवनिविष भेद ह, जसा तिलक अर पवत, कदम अर चन्दन, पाषाण अर रत्नविष बडा भेद। देवनिकी शक्ति बडी, काति बडी। अर विद्याधर तो मनुष्य ह, क्षत्री, वश्य, शूद्र यह तीन कुल ह। गभवासके खेद भुगत ह। विद्याधर साधनकर आकाशविष विचर ह। सो अढाई द्वीप पयत गमन कर ह। अर देव गभवाससे उपज नाहीं, महासुन्दर स्वरूप, पवित्र, धातु उपधातुकर रहित, आखनिकी पलक लगे नाहीं, सदा जाग्रत, जरारोग रहित, नवयोवन, तेजस्वी, उदार, सौभाग्यवत, महासुखी, स्वभावहीत विद्यावत, अवधिनेत्र, चाहें जसा रूप कर, स्वेछाचारी। देव विद्याधरनिका कहा सम्बन्ध? हे श्रेणिक! ये लकाके विद्याधर राक्षस द्वीपविष बस, तात राक्षस कहाए। ये मनुष्य क्षत्रीवश विद्याधर ह, देव हू नाहीं, राक्षस हू नाहीं। इनके वशविष लकाविष अजितनाथके समयत लेकर मुनिसुव्रतनाथके समय पयत अनेक सहस राजा प्रशसा करने योग्य भए। कई सिद्ध भए, कई सर्वार्थसिद्ध गए कई स्वगविष देव भए, कईएक पापी नरक गए। अब ता वशविष तीन खण्डका अधिपति जो रावण सो राज्य कर ह। ताकी बहिन चन्द्रनखा रूपकरि अनूपम, सो महा पराक्रमवत खरदूषणने परणी, वह चौवह हजार राजानिका शिरोमणी, रावणकी सेनाविषै मुख्य, सो दिग्पाल समान अलकारपुर जो पाताललका वहा थाने रहे ह। ताके सम्बूक अर सुन्दर ये दो पुत्र, रावणके भानजे पृथ्वीविषै अतिमान्य भए। सो गौतमस्वामी कह ह--ह श्रेणिक! माता पिताने सम्बूकक बहुत मने किया। तथापि कालका प्रेरचा सूयहास खडग साधिवे के अथ महाभयानक वनविषै प्रवश करता भया। शास्त्रोक्त आचारकू आचारता साता सूयहास खडगके साधिवेकू उद्यमी भया। एक ही अन्नका आहारी, ब्रह्मचारी, जितेन्द्रिय, विद्या साधिवेकू बासके बीडेमें यह कहकर बठा कि जब मेरा पूण साधन होयगा, तब ही म बाहिर

आऊगा, ता पहिली कोई बीडेमें आवेगा अर मेरी दृष्टि पडेगा तो ताहि म मारू गा। ऐसा कह कर एकात बठा। सो कहा बठा ? दडकवनमें क्रोचवा नदीके उत्तर तीर बासके बीडेमें बठा। बारहवष साधन किया, खडग प्रकट भया। सो सातदिनविष यह न लेय तो खडग परके हाथ जाय, अर वह मारा जाय। सो चन्द्रनखा निरन्तर पुत्रके निकट भोजन लेय आवती सो खडग देख प्रसन्न भई, अर पतिसू जाय कही कि सम्बूकको सूयहास खडग सिद्ध भया। अब मेरा पुत्र मेरुकी तीन प्रदक्षिणा कर आवेगा। सो यह तो ऐसे मनोरथ कर, अर ता वनविष भमता लक्ष्मण आया। हजारा देवनिकरि रक्षायोग्य खडग, स्वभाव सुगध, अदभुत रत्न। सो गोतम कह ह—हे श्रेणिक ! वह देवोपुनीत खडग महासुगध दिव्य गधादिकर लिप्त, कल्पवक्षनिके पुष्पनिकी माला तिनकरि युक्त, सो सूयहास खडग की सुगध लक्ष्मणकू आई। लक्ष्मण आश्चयकू प्राप्त भया और काय तज सीधा शीघ्र हो बासकी ओर आया, सिह समान निभय देखता भया। वक्षनिकरि आच्छादित महाविषम स्थल, जहा बेलनिके समूह अनेक जाल, ऊचे पाषाण, तहा मध्यविषै समभूमि, सुन्दर क्षेत्र, श्रीविचित्ररथ मुनिका निर्वाणक्षेत्र सुवणके कमलनिकरि पूरित, ताके मध्य एक बासनिका बीडा, ताके ऊपर खडग आय रहा ह। सो ताकी किरणके समूहकरि बासनिका बीडा प्रकाशरूप होय रहा ह। सो लक्ष्मणने आश्चयकू पाय निशक होय खडग लिया। अर ताकी तीक्ष्णता जाननेके अथ बासके बीडापर वाह्या, सो सम्बूक सहित बासका बीडा कट गया। अर खडगके रक्षक सहसो देव लक्ष्मणके हाथविषै खडग आया जान कहते भए तुम हमारे स्वामी हो। ऐसा कह नमस्कार कर पूजते भए।

अथानन्तर लक्ष्मणकू बहुत बेर लगी जान, रामचन्द्र सीतासू कहते भए—लक्ष्मण कहा गया, हे भद्र जटायू ! तू उडकर देख लक्ष्मण आव ह। तब सीता बोली हे नाथ ! वह लक्ष्मण आया, केसर कर चरचा ह अग जाका, नानाप्रकारकी माला अर सुन्दर वस्त्र पहिरे, अर एक खडग अदभुत लिए आव है। क्षो खडगसू ऐसा सोह जसा केसरी सिहसू पवत शोभ। तब राम आश्चयकू प्राप्त भया

ह मन जिनका, अति हर्षित होय लक्ष्मणकू उठकर उरसे लगाय लिया, सकल वत्तात पूछ्या। तब लक्ष्मण सब बात कही, आप भाई सहित सुखसे विराजे। नानाप्रकारको कथा कर, अर सम्बुकको माता चन्द्रनखा प्रतिदिन एकही अन्न भोजन लावती हुती। सो आगे आय कर देखे तो बासका बीडा कटा पडा ह। तब विचारती भई जो मेरे पुत्रनें भला न किया, जहा इतने दिन रहा अर विद्या सिद्ध भई ताही बीडेको काटा सो योग्य नाहीं। अब अटवी छोड कहा गया? इत उत देखे तो अस्त होता जो सूय ताके मडल समान कुण्डल सहित सिर पडा ह। देखकर ताहि मूर्छा आय गई। सो मूर्छा याका परम उपकार किया, नातर पुत्रके मरण करि यह कहा जीव। बहुरि केतीक बेरमें याहि चेत भया तब हाहाकार कर उठी। पत्रका कटा मस्तक देख शोककर अतिविलाप किया। नेत्र आसूनिसू भर गए, अकेली बनमें कुरचोकी ज्याई पुकारती भई–हा पुत्र! बारह वष अर चार दिन यहा व्यतीत भए, तस तीन दिन और हू क्यो न निकसि गए? तोहि मरण कहाते आया? हाय पापी काल म तेरा कहा बिगाड्या जो नेत्रनिका निधि पुत्र मेरा तत्काल विनास्या। म पापिनी परभवमें काहूके बालक हता सो मेरा बालक हता गया। हे पुत्र! आतिका मेटनहारा एक वचन तो मुखसू कह। हे वत्स! आ अपना मनोहर रूप मोहि दिखा। ऐसा माया रूप अमगल क्रीडा करना तोहि उचित नाहीं। अब तक त माताकी आज्ञा कबहु न लोपी। अब नि कारण यह विनयलोप काय करना तोहि योग्य नाहीं। इत्यादिक विकलपकर विचारती भई–नि सदेह मेरा पुत्र परलोककू प्राप्त भया। विचारा कुछ और ही हुता अर भया कुछ और ही, यह बात विचारमें न हुती सो भई। हे पुत्र! जो तू जीवता अर सूय- ५८
हास खडग सिद्ध होता तो जसे चन्द्रहासके धारक रावणके सन्मुख कोऊ नाहीं आय सक ह तस तेरे सन्मुख कोऊ न आय सकता। मानो चन्द्रहास मेरे भाईके हाथमें स्थानक किया सो अपना विरोधी सूयहास ताहि तेरे हाथमें न देख सक्या। अर भयानक वनमें अकेला निर्दोष नियमका धारी ताहि मार- वेकू जाके हाथ चले, सो ऐसा पापी खोटा वरी कौन ह? जा दुष्टने तोहि हत्या। अब वह कहा जीवता

जायगा । या भांति विलाप करती पुत्रका मस्तक गोदमें लेय चूमती भई । मू गासमान आरक्त हैं नेत्र जाके । बहुरि शोक तज, क्रोधरूप होय, शत्रुके मारवेकू दौडी । सो चली चली तहा आई, जहा दोऊ भाई विराजे हुते । दोऊ महा रूपवान, मन मोहिबेके कारण । तिनकू देख याका प्रबल क्रोध तत्काल जाता रहा । तत्काल राग उपजा, मनविष चितवती भई, इन दोऊनिमें जो मोहि इच्छ ताहि म सेवू । यह विचार तत्काल कामातुर भई । जस कमलनिके वनविष हसनी मोहित होय, अर महा ह्रदविष भस अनुरागिनी होय, अर हरे धानके खेतविष हरिणी अभिलाषिणी होय तस इनविष यह आसक्त भई । सो एक पुन्नागवक्षके नीचे बठी रुदन कर, अतिदीन शब्द उचार, वनकी रज कर धूसरा होय रहा ह अग जाका । ताहि देखकर रामकी रमणी सीता अति दयालुचित्त उठकर ताके समीप आय कहती भई । तू शोक मत कर । हाथ पकड ताहि शुभ वचन कह धीय बधाय रामके निकट लाई । तब वह राम ताहि कहते भए । तू कौन ह ? यह दुष्ट जीवनिका भरा वन ताविष अकेली क्यो विचर ह ? तब वह कमल सरीखें ह नेत्र जाके, अर भमरकी गु जार समान ह वचन जाके, सो कहती भई–हे पुरुषोत्तम ! मेरी माता तो मरणकू प्राप्त भई सो मोकू गम्य नाहीं, म बालक हुती । बहुरि ताके शोककरि पिता भी परलोक गया । सो म पूवले पापत कुटुम्बरहित दडक वनविष आई, मेरे मरणकी अभिलाषा सो या भयानक वनमें काहू दुष्ट जीवने न भखी, बहुत दिननत या वनविष भटक रही हू । आज मेरे कोऊ पाप कमका नाश भया सो आपका दशन भया । अब मेरे प्राण न छूटे ता पहिले मोहि कपाकर इच्छहु । जो कन्या कुलवती शीलवती होय ताहि कौन न इच्छ ? सब ही इच्छ । यह याके लज्जारहित वचन सुनकर दोऊ भाई नरोत्तम परस्पर अवलोकनकर मौनसू तिष्ठे । कसे ह दाऊ भाई ? सवशास्त्रनिके अथका जो ज्ञान सोई भया जल, ताकरि धोया ह मन जिनका, कृत्य अकृत्यके विवेकविष प्रवीण । तब वह इनका चित्त निष्काम जान निश्वास नाख कहती भई–म जाऊ ? तब राम लक्ष्मण बोले जो तेरी इच्छा होय सो कर । तब वह चली गई । ताके गए पीछे राम लक्ष्मण सीता आश्चयकू प्राप्त भए । अर

यह क्रोधायमान होय शीघ्र पतिके समीप गई। अर लक्ष्मण मनमें विचारता भया जो यह कौनकी पुत्री, कौन देशविषे उपजी, समूहसे बिछुरी मृगी समान यहां कहांसूं आई। हे श्रेणिक! यह कार्य कर्तव्य, यह न कर्तव्य, याका परिपाक शुभ वा अशुभ, ऐसा विचार अविवेकी न जानें, अज्ञानरूप तिमिर करि आच्छादित है बुद्धि जिनकी। अर प्रवीण बुद्धि महाविवेकी, अविवेकता रहित हैं, सो या लोकविषै ज्ञानरूप सूर्यके प्रकाशकर योग्य अयोग्यकूं जान अयोग्यके त्यागी होय योग्यक्रियाविषै प्रवर्त्ते हैं।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रंथ ताकी भाषावचनिकाविषै शम्बूकका वध वर्णन करनेवाला तेतालीसवां पर्व पूर्ण भया ॥ ४३ ॥

अथानंतर जैसे हृदयका तट फूटजाय अर जलका प्रवाह विस्तारकूं प्राप्त होय तैसे खरदूषणकी स्त्रीका राम लक्ष्मणसे राग उपजा हुता सो उनकी अबाछातें विध्वंस भया। तब शोकका प्रवाह प्रकट भया, अतिव्याकुल होय नानाप्रकार विलाप करती भई, अरतिरूप अग्निकर तप्तायमान है अंग जाका। जैसे बछडे विना गाय विलाप करै, तैसें शोक करती भई। झरै हैं नेत्रनिके आंसू जाके सो विलाप करती पति देखी। नष्ट भया है धीर्य जाका अर धूरकर धूसरा है अंग जाका, बिखर रहे हैं केशनिके समूह जाके, अर शिथिल होय रही है कटिमेखला जाकी। अर नखनिकर विदारे गए हैं वक्षस्थल, कुक्ष, अर जंघा जाकी, सो रुधिरकरि आरक्त है। अर आवरण रहित लावण्यता रहित, अर फट गई है चोली जाकी। जैसे माते हाथीनें कमलनीकूं दलमली होय तैसी याहि देख, पति धीर्य बंधाय पूछता भया-हे कांते! कौन दुष्टने तोहि ऐसी अवस्थाकूं प्राप्त करी। सो कहो, वह कौन है जाहि आज आठवां चन्द्रमा है। अथवा मरण ताके निकट आया है। वह मूढ पहाडके शिखरपर चढ सोवै है, सूर्यसे क्रीडाकर अंधकूपमें पडे है। दैव तासूं रूसा है, मेरी क्रोधरूप अग्नि विषै पतंगकी नांई पडेगा। धिक्कार ता पापी अविवेकीको, वह पशु समान अपवित्र, अनीति, यह लोक परलोक भ्रष्ट, जान तोहि दुखाई। तू

बडवानलकी शिखा समान ह, रुदन मत कर, और स्त्रीनि सारिखी तू नाहीं । बडे वशकी पुत्री बडे घर परणी आई ह । अबही ता दुराचारीकू हस्त तलते हण परलोककू प्राप्त कराऊगा, जैस सिंह उन्मत्त हाथीकू हण । या भाति जब पतिने कही तब चन्द्रनखा महा कष्ट थकी रुदन तज, गदगद वाणीसू कहती भई । अलकनिकर आछादित ह कपोल जाके, हे नाथ ! म पुत्रके देखवेकू वनविष नित्य जाती हुती, सो आज पुत्रका मस्तक कटा भूमिमें परघा देख्या । अर रुधिरकी धाराकर बासोका बीडा आरक्त देख्या, काहू पापीने मेरे पुत्रकू मार खडगरत्न लिया । कसा ह खडग ? देवनिकर सेवने योग्य । सो मैं अनेक दु खनिका भाजन भाग्य रहित पुत्रका मस्तक गोदमें लेय विलाप करती भई सो जा पापीने शम्बूककू मारघा हुता ताने मोहि अनीति विचारी, भुजाकर पकडी, म कही मोहि छाड सो पापी नीचकुली छाडे नाहीं, नखनिकरि दातननिकरि विदारी । निजन वनविष म अकेली वह बलवान पुरुष, म अबला तथापि पूव पुण्यसे शील बचाय महाकष्टत म यहा आई । सव विद्याधरनिका स्वामी, तीन खण्ड अधिपति, तीनलोकविष प्रसिद्ध रावण काहूसे न जीत्या जाय सो मेरा भाई, अर तुम खर दूषण नामा महाराज, दत्यजातिके जे विद्याधर तिनके अधिपति, मेरे भरतार तथापि म दवयोगत या अवस्थाकू प्राप्त भई । ऐसे चन्द्रनखाके वचन सुन महा क्रोधकर तत्काल जहा पुत्रका शरीर मतक पडधा हुता, तहा गया सो मूवा देखकर अति खेदखिन्न भया । पूव अवस्थाविष पुत्र पूणमासीके चद्रमा समान हुता, सो महा भयानक भासता भया । खरदूषणने अपने घर आय अपने कुटुम्ब से मन्त्र किया । ५११
तब कईएक मत्री ककशचित्त हुते वे कहते भए—हे देव ! जाने खडग रत्न लिया अर पुत्र हता ताहि जो ढीला छोडोगे तो न जानिए कहा कर ? सो ताका शीघ्र यत्न करहु । अर कईएक विवेकी कहते भए हे नाथ ! यह लघु काय नाहीं, सव सामन्त एकत्र करहु, अर रावणप हू पत्र पठावहु । जिनके हाथ सूय हास खड्ग आया त सामान्य पुरुष नाहीं । तात सव सामत एकत्रकर जो विचार करना होय सो करहु शीघ्रता न करहु । तदि रावणके निकट तो तत्काल दूत पठाया, दूत शीघ्रगामी अर तरुण । सो तत्काल

रावण प गया । रावणका उत्तर पीछा आव ताके पहिले खरदूषण अपने पुत्रके मरणकर महा द्वेषका भरचा साम`तनिमू कहता भया—वे रक विद्यावल रहित भूमिगोचरी हमारी विद्याधरनिकी सेनारूप समुद्रके तिरवेकू समथ नाहीं। धिक्कार हमारे सूरापनकू जो औरका सहारा चाह ह । हमारी भुजा ह वही सहाई ह, अर दूजा कौन ? एसा कहकर महा अभिमानकू धर शीघही मदिरसू निकस्या, आकाश माग गमन किया तजरूप ह मख जाका । सो ताहि सवथा युद्धकू स`मुख जान चौवह हजार राजा सग चाले, सो दण्डक वनमे आए तिनकी सेनाके वादित्रनिके शब्द समुद्रके शब्द समान सीता सनकर भयकू प्राप्त भई । हे नाथ ! कहा ह ? ऐसे शब्द कह पतिके अगसू लगी, जस कल्पबेल कल्पवक्षसू लग । तब राम कहत भए—ह प्रिये ! भय मतकर । याहि धीय बधाय विचारते भए—यह दुधर शब्द सिहका ह, अक मेघ का ह, अक समुद्रका ह, अक दुष्ट पक्षिनका ह, अक आकाश पूरगया ह ? तब सीतासू कहते भए—हे प्रिये ! ये दुष्टपक्षी ह ज मनुष्य अर पशुनिकू लेजाए ह, धनुषके टकारत इ`हे भगाऊ हू । इतनेही में शत्रु की सेना निकट आई । नानाप्रकारके आयुधनिकर युक्त सुभट दष्टिपर, जसे पवनके प्रेरे मेघघटानिके समूह विचर तस विद्याधर विचरते भए । तब श्रीराम विचारी ये न दीश्वर द्वीपकू भगवानकी पूजाके अथ देव जाय ह, अथवा बासनिके बीडेमे काहू मनुष्यकू हतकर लक्ष्मण खडग रत्न लाया, अर वह क`या बन आई हुती सो कुशील स्त्री हुती, तान ये अपने कुटुम्बके सामत प्रेरे ह । तात अब परसेना समीप आए निश्चित रहना उचित नाही । धनुषको ओर दष्टि धरी अर बक्तर पहिरनेकी तयारी करी । तब लक्ष्मण हाथ जोड सिर नवाय विनती करता भया । हे देव ! मोहि तिष्ठते आपकू एता परिश्रम ५१२ करना उचित नाहीं । आप राजपुत्रीकी रक्षा करहु, म शत्रुनिके स`मुख जाऊ हू । सो जो कदाचित भीड पडेगी तो म सिहनाद करू गा, तब आप मेरी सहाय करियो । ऐसा कहिकर बक्तर पहर, शस्त्र धार, लक्ष्मण शत्रुनिके स`मुख युद्धकू चाल्या । सो वे विद्याधर लक्ष्मणकू उत्तम आकारका धरन हारा वीराधिवीर श्र`ष्ठ पुरुष देख जस मेघ पवतकू बेढे तस बेढते भए । शक्ति, मुदगर, सामान्य

चक्र, बरछी, बाण इत्यादि शस्त्रनिकी वर्षा करते भए। सो अकेला लक्ष्मण सब विद्याधरनिके चलाए बाण अपने शस्त्रनिकरि निवारता भया, अर आप विद्याधरनिकी ओर आकाशमें वजवड बाण चलावता भया। यह कथा गौतम स्वामी राजा श्रेणिकसू कहे हैं। हे राजन! अकेला लक्ष्मण विद्याधरनिकी सेनाकू बाणनिकरि ऐसा रोकता भया जैसे संयमी साधु आत्मज्ञानकर विषयवासनाकू रोकें। लक्ष्मणके शस्त्रनिकरि विद्याधरनिके सिर रत्ननिके आभरणकर मंडित, कुण्डलनिकरि शोभित आकाशसे धरतीपर परे, मानो अम्बररूप सरोवरके कमल ही हैं। योधानिसहित पर्वत समान हाथी पड़े, अर अश्वनिसहित सामंत पड़े। भयानक शब्द करते होंठ डसते ऊर्ध्वगामी बाणनिकर वासुदेव बाहनसहित योधानिकू पीटता भया। ताही समय पुष्पकविमानविषै बैठ्या रावण आया। सम्बूकके मारणहारे पुरुषनिपर उपज्या है महाक्रोध जाकू सो मार्गमें रामके समीप सीता महा सतीकू तिष्ठती देखता भया। सो देखकर महा मोहकू प्राप्त भया। कैसी है सीता? जाहि लखि रतिका रूपभी या समान न भासै, मानो साक्षात लक्ष्मीही है। चन्द्रमा समान सुन्दर वदन, निर्झ्याके फूलसमान अधर, केसरीकी कटिके समान कटि लहलहात करते चंचल कमलपत्र समान लोचन, अर महा गजराजके कुम्भस्थलके शिखर समान कुच, नवयौवन, सब गुणनिकर पूर्ण कांतिके समूहकरि संयुक्त है शरीर जाका, मानो कामके धनुषकी पिणच ही है, अर नेत्र जाके कामके बाण ही हैं, मानो नामकर्मरूप चतेरेने अपनी चपलता निवाहनेके निमित्त स्थिरताकर सखसू जैसी चाहिए तैसी बनाई है। जाहि लखे रावणकी बुद्धि हरगई। महारूपके अतिशयकू धरे जो सीता ताके अवलोकनसे सम्बूकके मारवेवारेपर जो क्रोध हुता सो जाता रह्या। अर सीता पर रागभाव उपज्या। चित्तकी विचित्रगति है। मनमें चितवता भया या विना मेरा जीतव्य कहा? अर जो विभूति मेरे घरमें है ताकरि कहा? यह अद्भुतरूप, अनुपम महासुन्दर नवयौवन। मोहि खरदूषणकी सेना में आया कोई न जाने। ता पहिले याहि हरकर घर लेजाऊं। मेरी कीर्ति चन्द्रमा समान निर्मल सकल लोकमें विस्तर रही है सो छिपकर लेजानेमें मलिन न होय। हे श्रेणिक!

अर्थी दोषकू न गिन, तात गोप्य लेजाइवेका यत्न किया । या लोकमें लोभ समान और अनथ नाहीं, अर लोभमें परस्त्रीके लोभसमान महा अनथ नाहीं । रावणने अवलोकनी विद्यासू वत्तान्त पूछ्या सो वाके कहेसे याके नाम कुल सब जाने—लक्ष्मण अनेकनिसू लडनहारा एक युद्धमें गया, अर यह राम ह । यह इनकी स्त्री सीता ह, अर जब लक्ष्मण गया तब रामसू ऐसा कह गया—जो मोप भीड पडेगी तब सिहनाद करू गा, तब तुम मेरी सहाय करियो । सो वह सिहनाद म करू तब यह राम धनुषवाण लेय भाईप जावगे अर म सीताकू लेजाऊ गा, जस पक्षी मासकी डलीकू लेजाय । अर खरदूषण का पुत्र तो इनने माराही हुता अर ताकी स्त्री का अपमान किया । सो वह शक्ति आदि शस्त्रनिकर दोऊ भाइनिकू मारेहोगा, जस महाप्रबल नदीका प्रवाह दोऊ ढाहे पाडे । नदीके प्रवाहकी शक्ति छिपी नाहीं ह तस खरदूषणकी शक्ति काहूत छिपी नाहीं, सब कोऊ जान ह । ऐसा विचारकर मूढमति कामकर पीडित रावण मरणके अथ सीताके हरणका उपाय करता भया। जस दुरबुद्धि बालक विषके लेने का उपाय कर ।

अथानन्तर लक्ष्मण अर कटकसहित खरदूषण दोऊमे महायुद्ध होय रहा ह, शस्त्रनिका प्रहार होय रहा ह । अर इधर कपटकर रावणने सिहनाद किया, ताम बारम्बार रामराम यह शब्द किया । तब राम जानी कि यह सिहनाद लक्ष्मण किया । सुनकर व्याकुल चित्त भए । जानी भाईप भीड पडी । तब रामने जानकीकू कह्या—हे प्रिये ! भय मत करहु, क्षण एक तिष्ठ, ऐसा कह निमल पुष्पविष ताही छिपाई अर जटायूकू कहा—हे मित्र ! यह स्त्री अबला जाति ह, याकी रक्षा करियो । तुम हमारे मित्र हो, सहधर्मी हो । ऐसा कहकर आप धनुषबाण लेय चाले, सो अपशकुन भए, सो न गिने, महासतीकू अकेली वनविष छोड शीघ्र ही भाइप गए । महारणमें भाईके आग जाय ठाढे रहे, ता समय रावण सीताकू उठायबेकू आया, जसा माता हाथी कमलिनीकू लेब आव । कामरूप दाहकर प्रज्वलित है मन जाका, भूल गई ह समस्त धमकी बुद्धि जाकी, सीताकू उठाय पुष्पक विमान पर धरने लाग्या ।

पद्म पुराण ५१५

तब जटायुपक्षी स्वामीकी स्त्रीकू हरता देख क्रोधरूप अग्निकर प्रज्ज्वलित भया। उठकर अतिवेगत रावणपर पड्या, तीक्ष्ण नखनिकी अणी अर चूचस रावणका उरस्थल रुधिरसयुक्त किया, अर अपनी कठोर पाखनिकर रावणके वस्त्र फाड डाले। रावणका सव शरीर खेदखिन्न भया, तब रावण ने जानी यह सीताकू छुडावेगा, झझट करेगा, तेत याका धनो आन पहुँचेगा। सो याहि मनोहर वस्तु का अवरोधक जान महाक्रोधकर हाथकी चपेटसे मारया सो अति कठोर हाथकी घातसे पक्षी विह्वल होय पुकारता सता पथ्वीमें पडा मूर्छाकू प्राप्त भया। तब रावण जनकसुताकू पुष्पक विमानमें धर अपने स्थान ले चाल्या। श्रेणिक! यद्यपि रावण जान ह यह काय योग्य नाहीं। तथापि कामके वशीभूत हुवा सव विचार भूल गया। सीता महासती आपकू परपुरुषकर हरी जान, रामके अनुराग से भीज रहा ह चित्त जाका, महा शोकवती होय, आर्रति रूप विलाप करती भई। तब रावण याहि निज भरतारविष अनुरक्त जान, रुदन करती देख कछुइक उदास होय विचारता भया—जो यह निरतर रोव ह, अर विरहकर व्याकुल ह। अपने भरतारके गुण गाव ह, अन्य पुरुषके सयोगकी अभिलाषा नाहीं। सो स्त्री अवध्य ह, तात म मार न सकू, अर कोऊ मेरी आज्ञा उलघ तो ताहि मारू। अर म साधुनिके निकट व्रत लिया हुता जो परस्त्री मोहि न इच्छ ताहि म न सेऊ। सो मोहि व्रत दृढ राखना, याहि कोऊ उपायकर प्रसन्न करू। उपाय किए प्रसन्न होयगी। जस क्रोधवत राजा शीघ्र ही प्रसन्न न किया जाय तस हठवती स्त्री भी वश न करी जाय। जो कुछ वस्तु ह सो यत्नत सिद्ध होय ह। मनवाछितविद्या, परलोककी क्रिया, अर मनभावती स्त्री ये यत्नसे सिद्ध होय। यह विचारकर रावण सीताके प्रसन्न होयवेका समय हेर। कसा ह रावण? मरण आया ह निकट जाके। ५१५

अथानन्तर श्रीरामने वाणरूप जलकी धाराकर पूर्ण जो रणमडल तामें प्रवेश किया। सो लक्ष्मण देखकर कहता भया। हाय! हाय! एते दूर आप क्यों आए—हे देव! जानकीकू अकेली वनविषै मेल आए। यह वन अनेक विग्रहका भरया ह। तब राम कह्या मै तेरा सिहनाद सुन शीघ्र ही आया। तब लक्ष्मण कहा आप भली न करी, अब शीघ्र जहा जानकी ह वहा जाहु। तब राम जानी वीर तो

पद्म पुराण ५१६

महाधीर ह, याहि शत्रु का भय नाहीं। तब याकू कही—तू परम उत्साह रूप ह, बलवान बरीकू जीत, ऐसा कहकर आप, सीताकी उपजी ह शका जिनको सो चचल चित्त होय जानकीकी दिशि चाले। क्षण मात्रमें आय देखे तो जानकी नाहीं! तदि प्रथम तो विचारी कदाचित सुरतिभग भया ह। बहुरि निर्धारण देखो तो सीता नाहीं। तब आप हाय सीता! ऐसा कह मूर्छा खाय धरती पर पडे। सो धरती रामके विलापसे ऐसी सोहती भई जस भरतारके मिलापसे भार्या सोह। बहुरि सचेत होय वक्षनिकी ओर दृष्टि धर प्रेमके भरे अत्यन्त आकुल होय कहते भए—हे देवी! तू कहा गई? क्यो न बोलहु? बहुत हास्यकरि कहा? वक्षनिके आश्रय बठी होय तो शीघ्र ही आवहु! कोपकर कहा? म तो शीघ्र हो तिहारे निकट आया। हे प्राणबल्लभे! यह तिहारा कोप हमे सुखका कारण नाही। या भाति विलाप करते फिर है। सो एक नीची भूमिमे जटायुकू कठगत प्राण देख्या। तब आप पक्षीकू देख अत्यन्त खेदखिन्न होय याके समीप बठ नमोकार मन्त्र दिया। अर दर्शन ज्ञान चारित्र तप ये चार आराधना सुनाई, अरहत सिद्ध साधु केवली प्रणीत धर्मका शरण लिवाया। पक्षी श्रावकके व्रतका धरणहारा श्रीरामके अनुग्रह करि समाधिमरण कर स्वर्गविषे देव भया परम्पराय मोक्ष जायगा। पक्षीके मरणके पीछे आप यद्यपि ज्ञानरूप ह तथापि चारित्रमोहके वश होय महाशोकवन्त अकेले वनविषे प्रियाके वियोगके दाहकर मूर्छा खाय पडे। बहुरि सचेत होय महाव्याकुल महासती सीताकू ढूढते फिर। निराश भए दीन वचन कह, जसे भूतके आवेशकर युक्त पुरुष वथा अलाप कर। छिद्र पाय महाभीम वनमें काहू पापीने जानकी हरी सो बहुत विपरीत करी, मोहि मारचा, अब जो कोई मोहि प्रिया मिलाव, अर मेरा शोक हर, ता समान मेरा परम बाधव नाहीं। हो वनके वक्ष हो! तुम जनकसुता देखी? चम्पाके पुष्प समान रग, कमलदल लोचन, सुकुमार चरण, निर्मल स्वभाव, उत्तम चाल, चित्तको उत्सव करणहारी, कमलके मकरद समान सुगन्ध मुखका स्वास, स्त्रीनिके मध्य श्रेष्ठ, तुमने पूर्व देखी होय तो कहो। या भाति वनके वक्षनिसू पूछ ह, सो वे एकेन्द्री वक्ष कहा उत्तर देवे। तब राम सीताके गुणनिकरि हरचा ५१६

है मन जाका, बहुरि मूर्छा खाय धरतीपर पड़े। बहुरि सचेत होय महा क्रोधायमान वजावर्त धनुष हाथमें लिया, पिणच चढाई, टंकोर किया सो दशो दिशा शब्दायमान भई। सिंहनिकू भयका उपजावनहारा नरसिंहने धनुषका नाद किया। सो सिंह भाग गए, गजनिके मद उतर गए। तब धनुष उतार अत्यन्त विषादकू प्राप्त होय बैठकर अपनी भूलका सोच करते भए। हाय हाय मैं मिथ्या सिंहनाद के श्रवणकर विश्वास मान, वृथा जाय प्रिया खोई। जैसे मूढ जीव कुश्रुतका श्रवण सुन विश्वास मान, अविवेकी होय शुभगतिकू खोवै। सो मूढके खोयवेका आश्चर्य नाहीं, परन्तु मैं धर्मबुद्धि, वीतरागके मार्गका श्रद्धानी, असमझ होय असुरकी मायामें मोहित हुवा यह आश्चर्यकी बात है। जैसे या भव वनविषै अत्यन्त दुर्लभ मनुष्यकी देह महापुण्य कर्मकर पाई, ताहि वृथा खोवै, सो बहुरि कब पावै? अर त्रैलोक्यविषै दुर्लभ महारत्न ताहि समुद्रमें डारे, बहुरि कहां पावै? तैसे वनितारूप अमृत मेरे हाथसू गया? बहुरि कौन उपायकरि पाइये। या निर्जन वनविषै कौनकू दोष दू। मैं ताहि तजकर भाईपै गया सो कदाचित कोपकर आर्या भई होय। अरण्य वनविषै मनुष्य नाहीं कौनकू जाय पूछें, जो हमकू स्त्रीकी वार्ता कहे। ऐसा कोई या लोकविषै दयावान श्रेष्ठ पुरुष है? जो मोहि सीता दिखावै। वह महासती शीलवन्ती, सर्व पापरहित, मेरे हृदयकू वल्लभ, मेरा मनरूप मंदिर ताके विरहरूप अग्निकर जरै है सो ताकी वार्तारूप जलके दानकर कौन बुझावै? ऐसा कहकर परम उदास, धरती की ओर है दृष्टि जाकी, बारम्बार कछुइक विचार कर निश्चल होय तिष्ठे। एक चकवीका शब्द निकट ही सुन्या सो सुनकर ताकी ओर निरखा। बहुरि विचारी या गिरिका तट अत्यन्त सुगन्धहोय रहा है सो याही ओर गई होय अथवा यह कमलनिका वन है यहां कौतूहलके अर्थ गई होय? आगे याने यह वन देखा हुता सो स्थानक मनोहर है, नानाप्रकार पुष्पनिकर पूर्ण है, कदाचित तहां क्षणमात्र गई होय? सो यह विचार आप वहां गए। वहां हू सीताकू न देख्या, चकवी देखी। तब विचारी वह पतिव्रता मेरे बिना अकेली कहां जाय। बहुरि व्याकुलताकू प्राप्त होय, जायकर पर्वतसू पूछते भए—हे

गिरिराज ! तू अनेक धातुनिकरि भरया है, मैं राजा दशरथका पुत्र रामचन्द्र तोहि पूछूं हूं, कमल सारिखे नेत्र हैं जाके, सो सीता मेरे मनकी प्यारी, हंसगामिनी, सुन्दर स्तनके भारकरि नमीभूत है

अंग जाका, किंदूरा समान अधर, सुन्दर नितम्ब, सो तुम कहूं देखी ? वह कहां है ? तब पहाड कहा जवाब देय, इनके शब्दसे गूंजा । तब आप जानी कछु याने स्पष्ट न कही, जानिए है याने न देखी, वह महासती काल प्राप्त भई । यह नदी प्रचंड तरंगनिकी धरनहारी अत्यन्त वेगकूं धरे बहै है, अवि वेकवती, ताने मेरी कान्ता हरी, जस पापकी इच्छा विद्याकूं हरै । अथवा कोई क्रूर सिंह क्षुधातुर भख गया होय, वह धर्मात्मा साधुवर्गनिकी सेवक सिंहादिकके देखते ही नखादिक स्पर्श बिना ही प्राण देय । मेरा भाई भयानक रणविषै संग्राममें है सो जीवनेका संशय ही है । यह संसार असार है । अर सब जीवराशि संशय रूप ही है । अहो ! यह बडा आश्चर्य है ! जो मैं संसारका स्वरूप जानूं हूं अर दुखतैं शून्य होय रहा हूं । एक दुख पूरा नहीं परै है अर दूजा और आवै है । तातैं जानिए है यह संसार दुखका सागर ही है—जैसे खोडे पगकूं खंडित करना, अर दाहमारेको भस्म करना, अर डिगेकूं गर्तमें डारना । रामचन्द्रजीने वनविषै भ्रमणकर मृग सिंहादिक अनेक जन्तु देखे परन्तु सीता न देखी । तब अपने आश्रम आय अत्यन्त दीन वदन, धनुष उतार पृथ्वीमें तिष्ठे । बारम्बार अनेक विकल्प करते क्षणएक निश्चल होय मुखसे पुकारते भए । हे श्रेणिक ! ऐसे महापुरुषनिकूं भी पूर्वोपार्जित अशुभके उदयसूं दुख होय है । ऐसा जानकर अहो भव्यजीव हो ! सदा जिनवरके धर्ममें बुद्धि लगावो, संसारतैं ममता तजो । जे पुरुष संसारके विकारसूं पराङमुख होय अर जिनवचनकूं नाहीं आराधे, वे संसारके विषै शरण रहित पापरूप वृक्षके कटुक फल भोगवै है, कर्मरूप शत्रुके आतापसे खेदखिन्न है ।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रंथ ताकी भाषावचनिकाविषै सीताहरण वर्णन करनेवाला चवालीसवां पर्व पूर्ण भया ॥ ४४ ॥

अथानन्तर लक्ष्मणके समीप युद्धविषे खरदूषणका शत्रु विराधितनामा विद्याधर अपने मन्त्री अर शूरवीरनिसहित शस्त्रनिकर पूर्ण आया, सो लक्ष्मणकूं अकेला युद्ध करता देख महा नरोत्तम जान, अपने स्वार्थकी सिद्धि इनसे जान प्रसन्न भया। महा तेजकर दैदीप्यमान शोभता भया। वाहनतै उतर, गोडे धरती लगाय, हाथ जोड, सीस निवाय, अति नमीभूत होय परम विनयसूं कहता भया। हे नाथ! मैं आपका भक्त हूं, कछुइक मेरी विनती सुनो। तुम सारिखेनिका संसर्ग हम सारिखेनिके दुखका क्षय करनहारा है। वाने आधी कही आप सारी समझ गए। ताके मस्तकपर हाथ धर कहते भए तू डरे मत, हमारे पीछे खडा रह। तब वह नमस्कारकर अति आश्चर्यकूं प्राप्त होय कहता भया—हे प्रभो! यह खरदूषण शत्रु महाशक्तिकूं धरै है, याहि आप निवारहु, अर सेनाके योधानिकरि मैं लडूंगा। ऐसा कह खरदूषणके योद्धानिसूं विराधित लडने लाग्या। दौडकर तिनके कटकपर पर्या, अपनी सेनासहित झलझलाट करै है आयुधनिके समूह ताके। विराधित तिनकूं प्रकट कहता भया—मैं राजा चन्द्रोदयका पुत्र विराधित, घने दिननिविषे पिताका वैर लेवे आया हूं, युद्धका अभिलाषी अब तुम कहां जावो हो? जो युद्धमें प्रवीण हो तो खडे रहो। मैं ऐसा भयंकर फल दूंगा जैसा यम देय। ऐसा कहा तब तिन योद्धानिके अर इनके महा संग्राम भया। अनेक सुभट दोऊ सेनानिके मारे गए। पियादे प्यादेनिसूं, घोडनिके असवार घोडनिके असवारनिसूं, हाथिनिके असवार हाथिनिके असवारनिसूं, रथी रथीनिसूं परस्पर हर्षित होय युद्ध करते भए। वह वाहि बुलावे, वह वाहि बुलावे या भांति परस्पर युद्ध कर दशों दिशानिकूं बाणनिकरि आच्छादित करते भए।

अथानन्तर लक्ष्मण अर खरदूषणका महायुद्ध भया, जैसे इन्द्र असुरेन्द्रके युद्ध होय। ता समय खरदूषण क्रोधकर मंडित लक्ष्मणसूं लाल नेत्रकर कहता भया—मेरा पुत्र निर्वैर सो तूने हत्या, अर हे चपल! तूने मेरी कांताके कुच मर्दन किए, सो पापी अब मेरी दृष्टिसूं कहां जायगा। आज तीक्ष्ण बाणनिकरि तेरे प्राण हरूंगा, तैं जैसे कर्म किए हैं तैसा फल भोगवेगा। हे क्षुद्र, निर्लज्ज, परस्त्रीसंग

लोलुपी ! मेरे सन्मुख आयकर परलोक जाहु। तब ताके कठोर वचननिकर प्रज्वलित भया है मन जाका सो लक्ष्मण, वचनकर सकल आकाशकूं पूरता संता कहता भया—अरे क्षुद्र ! वृथा काहे गाजै है ? जहां तेरा पुत्र गया वहां तोहि पठाऊंगा। ऐसा कहकर आकाशके विषै तिष्ठता जो खरदूषण ताहि लक्ष्मणने रथरहित किया, अर ताका धनुष तोड्या, अर ध्वजा उडाय दई, अर प्रभारहित किया। तब वह क्रोधकर भर्या पृथ्वीके विषै पड्या, जैसे क्षीणपुण्य भया देव स्वर्गतै पडै। बहुरि महा सुभट खडग लेय लक्ष्मण पर आया। तब लक्ष्मण सूर्यहास खडग लेय ताके सन्मुख भया। इन दोऊनिमें नानाप्रकार महायुद्ध भया। देव पुष्पवृष्टि करते भए, अर धन्य धन्य शब्द कहते भए। बहुरि महा युद्ध के विषै सूर्यहास खडगकर लक्ष्मणने खरदूषणका सिर काट्या सो निर्जीव होय खरदूषण पृथ्वीविषै पर्या, मानो स्वर्गसूं देव पर्या, सूर्यसमान है तेज जाका मानो रत्न पर्वतका शिखर दिग्गजने ढाह्या।

अथानंतर खरदूषण का सेनापति दूषण विराधितकूं रथ रहित करवेकूं आरम्भता भया। तदि लक्ष्मण बाणकरि मर्मस्थलविषै घायल किया सो घूमता भूमिमें पर्या। अर लक्ष्मणने खरदूषणका समुदाय, अर कटक, अर पाताल लंकापुरी विराधितकूं दीनी। अर लक्ष्मण अतिस्नेहका भर्या जहां राम तिष्ठे हैं तहां आया। आकर देखै तो आप भूमिमें पडे हैं, अर स्थानकमें सीता नाहीं। तब लक्ष्मण ने कही—हे नाथ ! कहां सोवो हो ? जानकी कहां गई ? तब राम उठकर लक्ष्मणकूं घावरहित देख कछु इक हर्षकूं प्राप्त भए। लक्ष्मणकूं उरसे लगाया अर कहते भए—हे भाई ! मैं न जानूं जानकी कहां गई ? कोई हर लेगया अथवा सिंह भखगया। बहुत हेरी सो न पाई। अतिसुकुमार शरीर उद्वेग कर विलय गई। तब लक्ष्मण विषादरूप होय क्रोधकर कहता भया। हे देव ! सोचके प्रबन्धकर कहा ? यह निश्चय करो, कोई दुष्ट दैत्य हर लेगया है। जहां तिष्ठे है सो लावेंगे, आप संदेह न करो। नानाप्रकारके प्रिय वचननिकरि रामकूं धीर्य बंधाया, अर निर्मल जलकरि सुबुद्धिने रामका मुख धुवाया। ताही समय विशेष शब्द सुन राम पूछी यह शब्द काहेका है ? तब लक्ष्मणने कहा—हे नाथ ! यह चन्द्रोदय विद्याधर

का पुत्र विराधित, याने रणमें मेरा बहुत उपकार किया, सो आपके निकट आया है। याकी सेनाका शब्द है। भांति दोऊ वीर वार्त्ता करें हैं अर वह बडी सेना सहित हाथ जोड नमस्कारकर जय जय शब्द कहै अपने मन्त्रीनि सहित विनती करता भया। आप हमारे स्वामी हो, हम सेवक हैं। जो कार्य होय ताकी आज्ञा देहु। तदि लक्ष्मण कहता भया, हे मित्र! काहू दुराचारीने ये मेरे प्रभु तिनकी स्त्री हरी है। ता बिना रामचन्द्र जो शोकके वशी होय कदाचित प्राणकूं तजे तो मैं भी अग्निमें प्रवेश करूंगा। इनके प्राणनिके आधार मेरे प्राण हैं, यह तू निश्चय जान। तातें यह कार्य कर्तव्य है, भले जाने सो कर। तब यह बात सुन वह अति दुःखित होय नीचा मुख कर रहा। अर मनमें विचारता भया—एते दिन मोहि स्थानक भ्रष्ट हुए भए, नानाप्रकार बन विहार किया। अर इनने मेरा शत्रु हना, स्थानक दिया, तिनकी यह दशा है। मैं जो २ विकल्प करूं हूं सो योंही वृथा जाय है। यह समस्त जगत कर्माधीन है तथापि मैं कछु उद्यम कर इनका कार्य सिद्ध करूं। ऐसा विचार अपने मन्त्रीनसूं कहा—पुरुषोत्तमकी स्त्रीरत्न पृथ्वीविषै जहां होय तहां जल स्थल आकाश पुर बन गिरि ग्रामादिकमें यत्नकर हेरहु। यह कार्य भए मनवांछित फल पावोगे। ऐसी राजा विराधितकी आज्ञा सुन यशके अर्थी सब दिशाकूं विद्याधर दौडे।

अथानन्तर एक अर्कजटीका पुत्र रत्नजटी, सो आकाशमार्गमें जाता हुता। ताने सीताके रुदन की 'हाय राम हाय लक्ष्मण' यह ध्वनि समुद्रके ऊपर आकाशमें सुनी। तब रत्नजटी वहां आय देखे तो रावणके विमानमें सीता बैठी विलाप करै है। तब सीताको विलाप करती देख रत्नजटी क्रोधका भर्‍या रावणसो कहता भया—हे पापी दुष्ट विद्याधर! ऐसा अपराध कर कहां जायगा? यह भामंडल की बहन है, रामदेवकी राणी है। मैं भामण्डलका सेवक हूं, हे दुर्बुद्धे! जिया चाहै तो याहि छोड। तब रावण अति क्रोधकर युद्धकूं उद्यमी भया। बहुरि विचारी कदाचित युद्धके होते अति विह्वल जो सीता सो मरजावै तो भला नाहीं। तातैं यद्यपि यह विद्याधर रंक है तथापि उपाय करि मारना। ऐसा विचार रावण महाबलीने रत्नजटीकी विद्या हर लीनी, अर आकाशतैं पृथ्वीविषै पर्‍या। मन्त्र

के प्रभावकरि धीरा धीरा स्फुलिंग की न्याई समुद्रके मध्य कम्पद्वीपमें आय पर्‍या। आयु कर्मके योग त जीवता बचा। जस बणिकका जहाज फटजाय अर जीवता बच। सो रत्नजटी विद्या खोय जीवता बच्या। सो विद्या तो जाती रही जाकरि विमान विषै बैठ घर पहुँचे। सो अत्यन्त स्वास लेता कम्पूपर्वतपर चढ दिशाका अवलोकन करता भया। समुद्रकी शीतल पवनकरि खेद मिट्या सो वनफल खाय कम्पूपर्वत पर रहे। अर जे विराधितके सेवक विद्याधर सब दिशा नाना भेषकर दौडे हुते ते सीताकू न देख पाछे आए। सो उनका मलिनमुख देख रामने जानी सीता इनकी दृष्टि न आई, तब राम दीर्घ स्वास नाख कहते भए—

हे भले विद्याधर हो! तुमने हमारे कार्यके अर्थ अपनी शक्ति प्रमाण अति यत्न किया, परन्तु हमारे अशुभका उदय, तातै अब तुम सुखसूं अपनें स्थानक जाहु। हाथतै बडवानलमें गया रत्न बहुरि कहा दीखै? कर्मका फल है सो अवश्य भोगना, हमारा तिहारा निवार्‍या न निवरै। हम कुटुम्बतै छूटे, बनमें पठें, तो हू कर्मशत्रुकूं दया न उपजी। तातै हम जानी हमारे असाताका उदय है। सीता हू गई या समान और दुख कहा होयगा? या भांति कहकर राम रोवने लागे, महाधीर नरनिके अधिपति। तब विराधित धीर्य बंधायवे विषै पंडित, नमस्कारकर हाथजोड कहता भया—हे देव! आप एता विषाद काहे करो, थोडे ही दिनमें आप जनकसुताकूं देखोगे। कैसी है जनकसुता? निःपाप है देह जाकी। हे प्रभो! यह शोक महाशत्रु है, शरीर का नाशकर और वस्तुकी कहा बात? तातै आप धीर अंगीकार करहु। यह धीर्य ही महापुरुषनिका सर्वस्व है। आप सरिखे पुरुष विवेकके निवास हैं। धीर्यवन्त प्राणी अनेक कल्याण देखै। अर आतुर अत्यन्त कष्ट करै तो हू इष्ट वस्तुकूं न देखै। अर यह समय विषादका नाहीं, आप मन लगाय सुनहु। विद्याधरनिका महाराजा खरदूषण मार्‍या सो अब याका परिपाक महाविषम है। सुग्रीव किहकंधापुरका धनी, अर इन्द्रजीत, कुम्भकर्ण, त्रिशिर, अक्षोभ, भीम, क्रूरकर्मा, महोदर, इनकूं आदि दे अनेक विद्याधर महा योधा बलवन्त याके परम मित्र

ह । सो याके मरणके दु:खत क्रोधकू प्राप्त भए होंगे । ये समस्त नाना प्रकार युद्धमें प्रवीण हैं, हजारा ठौर रणविष कीर्ति पाय चुके ह । अर वताड पवतके अनेक विद्याधर खरदूषणके मित्र हैं । अर पव-
 नञ्जयका पुत्र हनुमान, जाहि लखे सुभट दूरहीत डर, ताके सन्मुख देव हू न आवे, सो खरदूषणका
 जमाई ह, तात वह हू याके मरणका रोष करगा । तात यपा वनविष न रहना । अलकारोदय नगर
 जो पाताललका ताविष विराजिये । अर भामडलकू सीताके समाचार पठाइये वह नगर महादुगम ह । तहा निश्चल होय कायका उपाय सवथा करेंगे । या भाति विराधित विनती करी, तब दोऊ भाई चार घोडनिका रथ तापर चढकर पाताललकाकू चाले । सो दाऊ पुरुष सीता विना न शोभते भए, जस सम्यकदष्टि विना ज्ञानचारित्र न सोह । चतुरग सेनारूप सागरकरि मडित दडकवनतै चाले । विराधित अगाऊ गया, तहा चन्द्रनखाका पुत्र सुन्दर सो लडवेकू नगरके बाहिर निकस्या । तान युद्ध किया, सो ताकू जीत नगरमें प्रवेश किया । देवनिके नगर समान वह नगर रत्नमई । तहा खरदूषण के मदिरविष विराजे । सो महामनोहर सुरमदिर समान वह मदिर । तहा सीता विना रचमात्र हू विश्रामकू न पावते भए । सीतामें ह मन रामका, सो रामकू प्रियाके समीपकर वनहू मनोग्य भासता हुवा अब कातांके वियोगकर दग्ध जो राम तिनकू नगर मदिर विन्ध्याचलके वन समान भास ।

अथानन्तर खरदूषणके मन्दिरमें जिनमन्दिर देखकर रघुनाथ प्रवेश किया । वहा अरहतकी प्रतिमा देखकर रत्नमई पुष्पनिकर अर्चा करी । क्षण एक सीताका सताप भूल गए । जहा जहा भगवानके चत्यालय हुते तहा तहा दशन किया । प्रशात भई ह दु:खकी लहर जिनके, रामचन्द्र खरदूषणक महल
विष तिष्ठे ह । अर सुन्दर, अपनो माता चन्द्रनखा सहित पिता अर भाईके शोक कर महाशोक सहित लका गया । यह परिग्रह विनाशीक ह अर महा दु:खका कारण ह, विघ्न कर युक्त ह । तातै हे भव्य जीव हो ! तिनविष इच्छा निवारहु । यद्यपि जीवनिके पूव कमके सम्बन्धसू परिग्रहकी अभिलाषा होय ह तथापि साधुवगके उपदेशकरि यह तष्णा निवत्त होय ह, जस सूयके उदयत रात्रि निवृत्त होय ह ।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रंथ ताकी भाषावचनिकाविषै रामको सीताका वियोग पाताल लंकाविषै निवास वर्णन करनेवाला पतालीसवां पर्व पूर्ण भया ॥ ४५ ॥



अथानन्तर रावण सीताकूं लेय ऊंचे विमानके शिखर पर तिष्ठा धीरे धीरे चालता भया, जैसे आकाश विषै सूर्य चाले। शोक कर तप्तायमान जो सीता, ताका मुखकमल कुमलाय गया देख, रतिके रागकर मूढ भया है मन जाका। ऐसा जो रावण सो सीताके चौगिर्द फिरै, अर दीन वचन कहै—हे देवी! कामके बाण कर मैं हता जाऊं हूं, सो तोहि मनुष्यकी हत्या होगी। हे सुन्दरी! यह तेरा मुखरूप कमल सर्वथा कोप संयुक्त है तो हू मनोग्यते अधिक मनोग्य भासै है। प्रसन्न हो एक बेर मेरी ओर दृष्टि धर। देख, नेत्रानकी कांतिरूप जलकर मोहि स्नान कराय, अर जो कृपादृष्टि कर नाहीं निहारै, तो अपने चरण कमलकरि मेरा मस्तक तोड। हाय हाय! तेरी क्रीडाके वनविषै मैं अशोक वृक्ष ही क्यों न भया जो तेरे चरणकमलकी पगतलीकी घात, अत्यंत प्रशंसा योग्य, सो मोहि सुलभ होती। भावार्थ—अशोक वृक्ष स्त्रीके पगतलीके घातसे फूलै। हे कृशोदरी! विमानके शिखर पर तिष्ठी सर्व दिशा देख, मैं सूर्यके ऊपर आकाशविषै आया हूं। मेरु कुलाचल अर समुद्र सहित पृथ्वी देख, मानो काहू सिलावटने रची है। ऐसे वचन रावणने कहे तब वह महा सती, शीलका सुमेरु, पटके अंतर अरुचिके अक्षर कहती भई। हे अधम! दूर रह, मेरे अंगका स्पर्श मत कर, अर ऐसे निंद्य वचन कभी मत कहै। रे पापी! अल्प आयु! कुगतिगामी! अपयशी! तेरे यह दुराचार तोहिकूं भयकारी है। परदाराकी अभिलाषा करता तू महादुःख पावेगा। जैसे कोई भस्म कर दबी अग्निपर पांव धरै तो जरै तैसे तू इन कर्मनिकर बहुत पछतावेगा। तू मोहरूप कीचकरि मलिन चित्त है। तोहि धर्मका उपदेश देना वृथा है, जैसे अंधके निकट नृत्य करे। हे क्षुद्र! जे पर स्त्रीकी अभिलाषा करै हैं वे इच्छा मात्र ही पापको बांधकर नरकविषै महाकष्टकूं भोगै हैं। इत्यादि रूक्ष वचन सीता रावणसूं कहे। तथापि

कामकर हता है चित्त जाका सो अविवेकसूं पाछा न भया। अर खरदूषणकी जे मदद गए हुते परम हितु शुक हस्त प्रहस्तादिक वे खरदूषणके मुवे पीछे उदास होय लंका आए। सो रावण काहूकी ओर देखे नाहीं, जानकीकूं नानाप्रकारके वचनकर प्रसन्न करै, सो कहा प्रसन्न होय? जैसे अग्निकी ज्वालाकूं कोई पाय न सकै अर नागके माथेकी मणिको न लेय सकै, तैसे सीताकूं कोऊ मोह न उपजाय सकै। बहुरि रावण हाथ जोड सीस निवाय नमस्कार कर नानाप्रकारके दीनताके वचन कहे, सो सीता याके वचन कछू न सुनै। अर मंत्री आदि सन्मुख आए सब दिशानित सामंत आए। राक्षसनिके पति जो रावण सो अनेक लोकनिकर मंडित होता भया, लोक जय जयकार शब्द करते भए। मनोहर गीत नृत्य वादित्र होते भए। रावण इन्द्रकी न्याईं लंकाविषै प्रवेश किया। सीता चित्तमें चितवती भई, ऐसा राजा अमर्यादाकी रीति करै, तब पृथ्वी कौनके शरण रहै? जबलग रामचन्द्रकी कुशल क्षेमकी वार्ता मैं न सुनूं तब लग खान पानका मेरे त्याग है। रावण देवारण्य नामा उपवन, स्वर्गसमान परम सुन्दर, जहां कल्पवृक्ष वहां सीताको मेलकर अपने मन्दिर गया। ताही समय खरदूषणके मरणके समाचार आए सो महाशोककर रावणकी अठारा हजार राणी ऊंचे स्वरकर विलाप करती भई। अर चन्द्रनखा रावणकी गोदविषै लोटकर अति रुदन करती भई। हाय मैं अभागिनी हती गई, मेरा धनी मारा गया। मेहके झरने समान रुदन किया, अश्रुपातका प्रवाह बहा, पति अर पुत्र दोऊके मरण शोकरूप अग्निकर दग्धायमान है हृदय जाका। सो याहि विलाप करती देख याका भाई रावण कहता भया—हे वत्स! रोयवेकर कहा? या जगतके प्रसिद्ध चरित्रको कहा जाने है? विना काल कोऊ वज्रसे भी हता न मरे, अर जब मृत्युकाल आवे तब सहजही मरजाय। कहां वे भूमिगोचरी राम, अर कहां तेरा भरतार, विद्याधर दैत्यनिका अधिपति खरदूषण? ताहि वे मारें यह कालहीका कारण है। जाने तेरा पति मारा ताको मैं मारूंगा। या भांति बहिनकूं धीर बंधाय कहता भया—अब तू भगवानका अर्चनकर, श्राविकाके व्रत धार। चन्द्रनखाकूं ऐसा कहकर रावण महलविषै गया। सर्पकी न्याईं निश्वास नाखता

सेजपर पडा। वहां पटराणी मन्दोदरी आयकर भरतारकू व्याकुल देख कहती भई—हे नाथ! खरदूषणके मरणकर अति व्याकुल भए हो सो तिहारे सुभट कुलविषै यह बात उचित नाहीं। जे शूरवीर हैं तिनके मोटी आपदा विषैय हू विषाद नाहीं। तुम वीराधिवीर क्षत्री हो। तिहारे कुलमें तिहारे पुरुष अर तिहारे मित्र रण संग्रामविषै अनेक क्षय भये, सो कौन कौनका शोक करोगे? तुम कबहू काहूका शोक न किया, अब खरदूषणका एता सोच क्यों करो हो? पूर्वे इन्द्रके संग्रामविषै तिहारा काका श्रीमाली मरणकू प्राप्त भया, अर अनेक बांधव रणमें हते गए, तुम काहूका कभी शोक न किया। आज ऐसा सोच दृष्टि क्यों पडा है जैसा पूर्वे कबहू हमारी दृष्टि न पडा? तब रावण निश्वास नाख बोला है सुन्दरी! सुन, मेरे अन्तःकरणका रहस्य तोहि कहूं हूं। तू मेरे प्राणनिकी स्वामिनी है अर सदा मेरी वांछा पूर्ण करै है। जो तू मेरा जीतव्य चाहै है तो कोप मतकर, मैं कहूं सो कर। सब वस्तु का मूल प्राण है। तब मन्दोदरी कही—जो आप कहो सो मैं करूं। रावण याकी सलाह लेय विलखा होय कहता भया—हे प्रिये! एक सीता नामा स्त्री, स्त्रीनिकी सृष्टिविषै ऐसी और नाहीं, सो वह मोहि न इच्छै तो मेरा जीवन नाहीं। मेरी लावण्यता, रूप, माधुर्यता, सुन्दरता ता सुन्दरीकू पायकर सफल होय तब मन्दोदरी याकी दशा कष्टरूप जान हंसकर दांतनिकी कांतिरूपी चांदनीकू प्रकाशतीसती कहती भई—हे नाथ! यह बडा आश्चर्य है? तुम सारिखे प्रार्थना करैं अर वह तुमको न इच्छै सो मंदभागिनी है। या संसारमें ऐसी कौन परम सुन्दरी है जाका मन तिहारे देखे खंडित न होय अर मन मोहित न होय? अथवा वह सीता कोई परम उदयरूप अद्भुत त्रैलोक्य सुन्दरी है जाको तुम इच्छो हो अर वह तुमको नाहीं इच्छै है! ये तिहारे कर हस्तीकी सूंडसमान, रत्नजडित बाजूनिकरि युक्त तिन करि उरसे लगाय बलात्कार क्यों न सेवहु? तब रावण कही कि—या सर्वांगसुन्दरीकू मैं बलात्कार नाहीं गहूं। ताका कारण सुन—अनन्तवीर्य केवलीके निकट मैं एक व्रत लिया है। वे भगवान देव इन्द्रादिक कर बंदनीक ऐसा व्याख्यान करते भए—या संसारविषै भ्रमण करते जे जीव दुखी तिनको पापनि

की निवत्ति निर्वाणका कारण ह । एक भी नियम महा फलकू देय ह । अर जिनके एक भी व्रत नाहीं वे नर जजर कलशसमान निगु ण है । जिनके मोक्षका कारण कोई नियम नाहीं तिन मनुष्यनिमें अर पशुनिमें कछू अतर नाहीं । तात अपनी शक्तिप्रमाण पापनिको तजहु, सुकतरूप धनको अगीकार करहु जात जन्मके आधेकी न्याई ससाररूप अधकूपमें न परो । या भाति भगवानके मुखरूप कमलत निकसे वचनरूप अमत पीकर कईएक मनुष्य तो मुनि भए कईएक अल्पशक्ति अणुव्रतकू धारणकर श्रावक भए । कमके सम्ब धत सबकी एक तुल्य शक्ति नाहीं । वहा भगवान केवलीके समीप एक साधु मोसे कृपा कर कहता भया—हे दशानन ! कछू नियम तुमहू लेहू, तू दया धमरूप रत्नद्वीप विष आया ह । सो गुणरूप रत्ननिके सग्रह विना खाली मति जाहु । ऐसा कही तब म प्रणामकर देव असुर विद्याधर मुनि सबकी साक्षी व्रत लिया कि जो परनारी मोहि न इच्छ ताहि म बलात्कार न सेऊ । हे प्राण प्रिये ! मै विचारी जो मोसे रूपवान नरको देख ऐसी कौन नारी ह जो मान कर ? तात म बलात्कार न सेऊ। राजानिकी यही रीति ह जो वचन कहे सो निवाह, अन्यथा महादोष लाग । तात म प्राण तजू , ता पहिले सीताको प्रसन्न कर । घरके भस्म भए पीछे कुवा खोदना वथा ह । तब मन्दोदरी रावणकू विह्वल जान कहती भई—हे नाथ ! तिहारी आज्ञाप्रमाण ही होयगा। ऐसा कह वह देवारण्यनामा उद्यान विष गई । अर ताकी आज्ञा पाय रावणकी अठारह हजार राणी गई । मदोदरी जायकर सीताकू या भाति कहती भई—हे सुन्दरी ! हषके स्थानकविष कहा विषाद कर रही ह ? जा स्त्रीके रावण पति सो जगतविष धन्य । सब विद्याधरनिका अधिपति, सुरपतिका जीतनहारा, तीनलोकविष सुन्दर, ताहि क्यो न इच्छ ? निजन बनक निवासी, निधन, शक्तिहीन भूमिगोचरी तिनके अथ कहा दु ख कर ह ? सब लोक विष श्रेष्ठ ताहि अगींकार करि क्यो न सुख करै ? अपने सुखका साधनकर या विष दोष कहा ? जो कछु करिए ह सो अपने सुखके निमित्त करिए ह। अर मेरा कहा जो न करेगी तो कुछ तेरा होनहार है सो होगा । रावण महा बलवान है, कदाचित प्राथना भगत कोपकर तो तेरा या बातमें अकारज ही है ।

अर राम लक्ष्मण तेरे सहाई हैं सो रावणके कोप किए उनका भी जीवना नाहीं। तात शीघ्र ही विद्याधरनिका जो ईश्वर ताहि अंगीकार कर। जाके प्रसादत परम ऐश्वर्यको पायकर देवनकेसे सुख भोगव। जब ऐसा कहा तब जानकी अश्रुपातकर पूर्ण हैं नेत्र जाके, गदगद वाणीकर कहती भई—

हे नारी! यह वचन तूने सबही विरुद्ध कहे। तू पतिव्रता कहावे ह। पतिव्रतानिके मुखत ऐसे वचन कस निकस? यह शरीर मेरा छिद जावे, भिदजावे हत जावे परन्तु अन्य पुरुषकू म न इच्छू। रूपकर सनत्कुमार समान होव अथवा इन्द्र समान होवे तो मेरे कौन अर्थ? म सर्वथा अन्य पुरुषकू न इच्छू। तुम सब अठारह हजार राणी भेली होयकर आई हो सो तिहारा कहा म न करू। तिहारी इच्छा होय सो करो। ताही समय रावण आया, मदनके आतापकरि पीडित। जस तृषातुर माता हाथी गंगाके तीर आवे तस सीताके समीप आय मधुर वाणीकर आदरसू कहता भया—हे देवी! तू भय मत कर। म तेरा भक्त हू! हे सुन्दरी। चित्त लगाय एक विनती सुन। म तीन लोकमें कौन वस्तुकर हीन जो तू मोहि न इच्छ। ऐसा कहकर स्पर्शकी इच्छा चाहता भया। तब सीता क्रोधकर कहती भई—पापी! परे जा, मेरा अंग मत स्पर्शे। तदि रावण कहता भया—कोप अर अभिमान तज, प्रसन्न हो, शची इन्द्राणी समान दिव्य भोगनिकी स्वामिनी होहू। तब सीता बोली—कुशीले पुरुषका विभव मलसमान ह। अर शीलवत ह तिनके दरिद्र ही आभूषण ह। जे उत्तम वंशविष उपजे हैं तिनके शीलकी हानिकरि दोऊ लोक बिगरै ह। तात मेरे तो मरण ही शरण ह। तू परस्त्रीकी अभिलाषा राख ह सो तेरा जीतव्य वृथा ह। जो शील पालता जीव ह ताहीका जीतव्य सफल ह। या भांति जब सीता तिरस्कार किया तब रावण क्रोध कर मायाकी प्रवृत्ति करता भया। राणी अठारह हजार सब जाती रहीं, अर रावणकी मायाके भयत सूर्य अस्त होयगया। मद झरती मायामई हाथिनिकी घटा आई। यद्यपि सीता भयभीत भई तथापि रावणके शरण न गई। बहुरि अग्निके स्फुलिंगे बरसते भए, अर लबलबाट कर ह जीभ जिनकी ऐसे सर्प आए, तथापि सीता रावणके शरण न गई। बहुरि महा क्रूर वानर फारे ह मुख जिन्होने उछल उछल

आए, अतिभयानक शब्द करते भए तथापि सीता रावणके शरण न गई। अर अग्निके ज्वाला समान चपल है जिह्वा जिनकी, ऐसे मायामई अजगर तिनने भय उपजाया तथापि सीता रावणके शरण न गई। बहुरि अंधकार समान श्याम ऊंचे व्यंतर हुंकार शब्द करते आए, भय उपजावते भए तथापि सीता रावणके शरण न गई। या भांति नानाप्रकारकी चेष्टाकर रावणने उपसर्ग किए तथापि सीता न डरी। रात्रि पूर्ण भई जिनमंदिरनि विषै वादित्रनिके शब्द होते भए, द्वारनिके कपाट उघरे, मानो लोकनिके लोचन ही उघरे। प्रातसंध्याकर पूर्वदिशा आरक्त भई, मानो कुंकुमके रंगकरि रंगी ही है। निशाका अंधकार सब दूरकर चन्द्रमाको प्रभारहित कर सूर्यका उदय भया। कमल फूले, पक्षी विचरने लगे, प्रभात भया। तब प्रातक्रिया कर विभीषणादि रावणके भाई खरदूषणके शोककर रावणपै आए। सो नीचा मुख किए आंसू डारते भूमिविषै तिष्ठे। ता समय पटके अंतर शोककी भरी जो सीता ताके रुदनके शब्द विभीषणने सुने। अर सुनकर कहता भया यह कौन स्त्री रुदन करै है? अपने स्वामीतैं बिछुरी है याका शोकसंयुक्त शब्द दुखको प्रकट दिखावै है। ये विभीषणके शब्द सुन सीता अधिक रोवने लगी, सज्जनको देख शोक बढै ही है। विभीषण पूछता भया—हे बहिन! तू कौन है? तब सीता कहती भई—मैं राजा जनककी पुत्री, भामंडलकी बहिन, रामकी राणी, दशरथ मेरा सुसरा, लक्ष्मण मेरा देवर, सो खरदूषणतैं लडने गया। ताके पीछे मेरा स्वामी भाईकी मदद गया। मैं वनविषै अकेली रही सो छिद्र देख या दुष्टचित्तने हरी। सो मेरा भरतार मो विना प्राण तजेगा। तात हे भाई! मोहि मेरे भरतारपै शीघ्र ही पठाय देहु। ये वचन सीताके सुन विभीषण रावणसे विनय कर कहता भया— ५२६
हे देव! यह परनारी अग्निकी ज्वाला है, आशीविष सर्पके फण समान भयंकर है, आप काहेकू लाए? अब शीघ्रही पठाय देहु। हे स्वामी! मैं बालबुद्धि हूं, परन्तु मेरी विनती सुनो। मोहि आपने आज्ञा करी हुती जो तू उचित वार्ता हमसो कहिवो कर। तातैं आपकी आज्ञातैं मैं कहू हूं। तिहारी कीर्तिरूप बेलिके समूह कर सब दिशा व्याप्त होय रही है। ऐसा न होय जो अपयशरूप अग्निकर यह कीर्तिलता

भस्म होय । यह परदाराका अभिलाष अयुक्त, अति भयकर, महानिंद्य, दोऊ लोकका नाश करणहारा जाकर जगतविषै लज्जा उपजे, उत्तम जननिकरि धिक्कार शब्द पाइए ह । जे उत्तम जन ह तिनके हृदयकू अप्रिय। ऐसा अनीतिकाय कदाचित न कतव्य । आप सकल वार्ता जानो हो, सब मर्यादा आपही त रहे, आप विद्याधरनिके महेश्वर, यह बलता अगारा काहेकू हृदयमें लगावो ? जो पापबुद्धि पर दारा सेव ह सो नरकविष प्रवेश कर ह । जस लोहेका ताता गोला जलमें प्रवेश कर तस पापी नरकमें पडे ह । ये वचन विभीषणके सुनकर रावण बोला हे भाई ! पथ्वीपर जो सु दरवस्तु ह ताका म स्वामी हू, सब मेरीही वस्तु ह, परवस्तु कहासे आई? ऐसा कहकर और बात करने लगा । बहुरि महानीतिकाधारी मारीच मत्री क्षणएक पीछे कहता भया—देखो ! यह मोहकमकी चेष्टा, रावणसारिखे विवेकी, सबरीतिको जान ऐस कम करे ! सवथा जे सुबुद्धि पुरुष ह तिनकू प्रभातही उठकर अपना कुशल अकुशल चितवनी, विवेक से न चूकना । या भाति निरपेक्ष भया महाबुद्धिमान मारीच कहता भया । तब रावणने कछू पाछा जवाब न दिया, उठकर खडा हो गया । त्रलोक्य मडन हाथीपर चढि सब सामतनिसहित उपवनत नगरकू चाल्या । वरछी, खडग, तोमर, चमर, छत्र, ध्वजा आदि अनेक वस्तु ह हाथनिम जिनके, ऐसे पुरुष आगे चले जाय ह । अनेक प्रकार शब्द होय ह । चचल ह ग्रीवा जिनकी, ऐसे हजारा तुरगनिपर चढे सुभट चले जाय ह । अर कारीघटासमान मद झरते गाजते गजराज चले जाय ह । अर नानाप्रकारकी चेष्टा करते उछलते पयादे चले जाय ह । हजारा वादित्र बाजे । या भाति रावणने लकामें प्रवेश किया । रावणके चक्रवर्ती सम्पदा, तथापि सीता तणसे हू जघन्य जाने । सीताका मन निष्कलक, यह लुभायवेकू समथ न भया । जसे जलविष कमल अलिप्त रह, तस सीता अलिप्त रह । सव ऋतुके पुष्पनिकरि शोभित, नानाप्रकारके वक्ष अर लतानिकरि पूण, ऐसा प्रमद नामा बन, तहा सीताकू राखी । वह वन नन्दन समान सु दर, जाहि लखे नेत्र प्रसन्न होय, फुल्लगिरिके ऊपर यह बन सो देखे पीछे और ठौर दष्टि न लगे । जाहि लख देवनिका मन उन्मादकू प्राप्त होय मनुष्यनिकी कहा बात ?

वह फुल्लगिरि सप्तवनकरिवेष्टित सौहे, जसे भद्रशालादि बनकर सुमेरु सौहै है।

हे श्रेणिक! सात ही वन अदभुत है उनके नाम सुन—प्रकीणक, जनानन्द, सुखसेव्य, समुच्चय, चारणप्रिय, निबोध, प्रमद। तिनमें प्रकीणक पृथ्वीविषै, ताके ऊपर जनानन्द, तहा चतुर जन क्रीडा करै। अर तीजा सुखसेव्य अति मनोग्य, सुन्दर वृक्ष, अर वेल, कारीघटा समान सघन सरोवर, सरिता वापिका, अतिमनोहर। अर समुच्चयविषै सूर्यका आताप नाहीं, वृक्ष ऊचे, कहू ठौर स्त्री क्रीडा करै, कहु ठौर पुरुष। अर चारणप्रिय वनविषै चारण मुनि ध्यान करै। अर निबोध ज्ञानका निवास। सबनिके ऊपर अति सुन्दर प्रमद नामा वन ताके ऊपर जहा ताबूलका बेल, केतकीनिके बीडे, जहा स्नानक्रीडा करवेको उचित रमणीक वापिका कमलनिकर शोभित हैं, अर अनेक खणके महल, अर जहा नारगी, विजोरा, नारियल, छुहारे, ताडवृक्ष इत्यादि अनेक जातिके वृक्ष सब ही पुष्पनिके गुच्छनिकर शोभै है, जिनपर भ्रमर गुजार करै है, अर जहा वेलिनके पल्लव मन्द पवन कर हालै है, जा वनविषै सघन वृक्ष समस्त ऋतुनिके फल फूलनिकर कारीघटा समान सघन है, मोरनके युगलकर शोभित है। ता वनकी विभूति मनोहर वापी, सहसदल कमल है मुख जिनके, सो नीलकमल नेत्रनिकर निरखे है, अर सरोवरविषै मन्द मन्द पवनकर कल्लोल उठै है। सो मानो सरोवरी नृत्य ही करै है। अर कोयल बोलै है सो मानो वचनालाप ही करै है। अर राजहसनीके समूहकर मानो सरोवरी हसेही है। बहुत कहिवे कर कहा? वह प्रमदनामा उद्यान सब उत्सवका मूल, भोगिनिका निवास, नन्दन बनहूत अधिक। ता वनमें एक अशोकमालिनी नामा वापी कमलादि कर शोभित, जाके मणि स्वर्णके सिवाण, विचित्र आकारकू धरै है द्वार जाके, जहा मनोहर महल, जाके सुन्दर झरोखे, तिनकर शोभित जहा नीझरने झरै है। वहा अशोक वृक्षके तले सीता राखी। कसी है सीता? श्रीरामजीके वियोगकर महा शोककू धरै है, जसे इन्द्रते विछुरी इन्द्राणी। रावणकी आज्ञाते अनेक स्त्री विद्याधरी खडी ही रहैं। नाना प्रकारके वस्त्र सुगन्ध आभूषण जिनके हाथमें, भाति भातिकी चेष्टाकर सीताकू प्रसन्न

किया चाहें। दिव्यगीत दिव्यनृत्य, दिव्यवादित्र, अमृत सारिखे दिव्यवचन तिनकर सीताकूं हर्षित किया चाहें, परन्तु यह कहा हर्षित होय ? जैसे मोक्ष संपदाकूं अभव्य जीव सिद्ध न कर सकें तैसे रावण की दूती सीताकूं प्रसन्न न कर सकीं। ऊपरा ऊपरि रावण दूती भेजे, कामरूप दावानलकी प्रज्ज्वलित ज्वाला, ताकर व्याकुल, महाउन्मत्त, भांति भांतिके अनुरागके वचन सीताकूं कह पठावे। यह कुछ जवाब नहीं देय। दूती जाय रावणसो कहे—हे देव! वह तो आहार पानी तज बैठी है, तुमको कैसे इच्छै ? वह काहूसो बात न करे। निश्चल अंगकर तिष्ठै है। हमारी ओर दृष्टिही नाहीं धरे। अमृत हूते अति स्वादु दुग्धादि कर मिश्रित बहुत भांति नानाप्रकारके व्यंजन ताके मुख आगे धरे हैं, सो स्पर्शै नाहीं। यह दूतीनिकी बात सुन रावण खेदखिन्न होय, मदनाग्निकी ज्वाला कर व्याप्त अंग जाका महा आरतरूप चिन्ताके सागरमें डूबा। कबहूं निश्वास नाखे, कबहूं सोच करे। सूख गया है मुख जाका, कबहूं कछूइक गावे। कामरूप अग्निकर दग्ध भया हृदय जाका, कछुइक विचार२निश्चल होय है। अपना अंग भूमिमें डार देय फिर उठे, सूनासा होय रहे, विना समझे उठिचले, बहुरि पीछा आवे। जैसे हस्ती सूंड पटके तैसे भूमिमें हाथ पटके। सीताको बराबर चितारता आखनितै आसू डारे, कबहु शब्द कर बलावे, कबहु हुंकार शब्द करे, कबहु चुप होय रहे, कबहु वृथा बकवाद करे, कबहु सीता २ बार २ बके, कबहु नीचा मुख कर नखनिकरि धरती कुचरै कबहु हाथ अपने हिये लगावे, कबहु बाहू ऊंचा करे, कबहु सेजपर पड़े, कबहु उठ बैठे, कबहु कमल हिये लगावे, कबहु दूर डार देय, कबहु शृंगारका काव्य पढ़े, कबहु आकाशकी ओर देखे कबहु हाथसे हाथ मसले, कबहु पगसे पृथ्वी हणै। निश्वास रूप अग्निकर अधर श्याम होय गए। कबहु कहै २ शब्द करे, कबहु अपने केश बखेरे, कबहु बांधे, कबहु जंभाई लेय, कबहु मुखपर अंचल डारे, कबहु वस्त्र सब पहिर लेय, सीताके चित्राम बनावे, कबहु अश्रुपात कर आर्द्रा करे, दीनभया हाहाकार शब्द करे, मदन ग्रहकर पीडित अनेक चेष्टाकर आशा रूप ईंधन कर प्रज्ज्वलित जो कामरूप अग्नि उसकर उसका हृदय जरे और शरीर जले। कभी मनमें चितवे

कि म कौन अवस्थाकू प्राप्त भया जिसकर अपना शरीर भी नहीं धार सकू हू । म अनेक गढ और सागरके मध्य तिष्ठे बडे बडे विद्याधर युद्धविष हजारा जोते, और लोकविष प्रसिद्ध जो इन्द्र नामा विद्याधर सो बदीगह विष डारा, अनेक युद्धविष जीते राजाओके समूह । अब मोहकर उन्मत्त भया मै प्रमादके वश प्रवर्ता हू । गौतम स्वामी राजा श्रेणिकसे कह हं—हे राजन ! रावण तो कामके वश भया और विभीषण महाबुद्धिमान मन्त्रविष निपुण ने सबमन्त्रियोको इकट्ठाकर मन्त्र विचारचा । कसा ह विभीषण ? रावणके राज्यका भार जिसके शिरपर पडचा ह, समस्त शास्त्रवोके ज्ञानरूप जलकर धोया ह मन रूप मल जिसने, रावणके उस समान और हितू नहीं । विभीषणको सवथा रावणके हित हीका चितवन ह । सो मन्त्रियो से कहता भया अहो वद्ध हो ! राजाकी तो यह दशा, अब अपने ताईं क्या कत्तव्य ? सो कहो । तब विभीषणके वचन सुन सभिन्नमति मन्त्री कहता भया—हम क्या कहें ? सवकाय बिगडा । रावणकी दाहिनी भुजा खरदूषण था सो मुवा । और विराधित क्या पदाथ ? सो स्यालसे सिह भया, लक्ष्मणके युद्धविष सहाई भया और बानरवशी जोरस बस रहे है । इनका आकार तो कुछ औरही और इनके चित्तमें कछु और ही । जस सप ऊपर तो नरम, माहीं विष । और पवन का पुत्र जो हनुमान सो खरदूषणकी पुत्री अनगकुसमाका पति सो सुग्रीवकी पुत्री परणा हैं । सुग्रीव की पक्ष विशेष ह । यह वचन सभिन्नमतिके सुन पचमुख मन्त्री मुसकाय बोल्या—तुम खरदूषणके मरण कर सोच किया । सो शूरवीरनिकी यही रीति ह सग्रामविष शरीर तज । अर एक खरदूषणके मरण कर रावणका क्या घट गया ? जस पवनके योगसे समुद्रसे एक जलकी कणिका गई तो समुद्रका क्या न्यून भया ? और तुम औरोकी प्रशसा करो हो सो मेरे चित्तमें लज्जा उपज ह । कहा रावण जगत का स्वामी और कहा वे बनवासी भूमिगोचरी ? लक्ष्मणके साथ सूयहास खडग आया तो क्या और विराधित आय मिला तो क्या ? जस पहाड विषम ह और सिहकर सयुक्त ह तो भी क्या दावानल न दह ? सवथा दह । तब सहसमति मन्त्री माथा हलाय कहता भया—कहा ये अथहीन बात कहो हो ? ५३३

जिसमें स्वामीका हित हो सो करना। दूसरा स्वल्प है और हम बडे हैं—यह विचार बुद्धिमानका नाहीं। समय पाय एक अग्निका किणका सकलमंडलको दहै। अर अश्वग्रीवके महासेना थी और सब पृथ्वी विषै प्रसिद्ध हुवा था सो छोटे से त्रिपृष्ठने रणमें मार लिया। इसलिए और यत्न तज लंकाकी रक्षाका यत्न करो। नगरी परम दुर्गम करो, कोई प्रवेश न कर सकै, महाभयानक मायामई यंत्र सब दिशामें विस्तारो, और नगरमे परचक्रका मनुष्य न आवने पावै। अर लोकको धीर बधाओ अर सब उपायकर रक्षा करो जिसकर रावण सुखकूं प्राप्त होय, और मधुर बचनकर नाना वस्तुओंकी भेंट कर सीताकूं प्रसन्न करो। जैसे दुग्ध पायवेसे नागनी प्रसन्न करिए। और वानर बंशी योधाओंको नगरके बाहिर चौकी राखो। ऐसे किए कोऊ परचक्रका धनी न आय सकै और यहांकी बात परचक्रमें न जाय। या भांति गढका यत्न कीये, तब कौन जाने सीता कौननें हरी और कहां है? सीता बिना राम निश्चय सेती प्राण तजेगा। जिसकी स्त्री जाय सो कैसे जीवै? अर राम मूवा तब अकेला लक्ष्मण क्या करेगा? अथवा रामके शोककर लक्ष्मण अवश्य मरै, न जीवै, जैसे दीपकके गए प्रकाश न रहै। अर यह दोनों भाई मूए तब अपराधरूप समुद्रमें डूबा जो विराधित सो क्या करेगा? और सुग्रीवका रूपकर विद्याधर उसके घरमें आया सो रावण टार सुग्रीवका दुख कौन हरै? मायामई यंत्रकी रखवारी सुग्रीवको सौंपी जिससे वह प्रसन्न होय। रावण इसके शत्रुका नाश करै। लंकाकी रक्षाका उपाय मायामई यंत्र कर करना। यह मंत्रकर हर्षित होय सब अपने अपने घर गए। विभीषिणने मायामई यंत्रकर लंकाका यत्न किया। अर अध ऊर्ध तिर्यकसे कोऊ न आय सकै, नानाप्रकारकी विद्याकरि लंका अगम्य करी गौतम गणधर कहै है—हे श्रेणिक! संसारी जीव सब ही लौकिककार्यमें प्रवर्त्ते हैं व्याकुलचित्त हैं, अर जे व्याकुलतारहित निर्मलचित्त हैं तिनकूं जिनवचनके अभ्यास टाल और कर्तव्य नाहीं। अर जो जिनेश्वरने भाषा है सो पुरुषार्थ बिना सिद्ध नाहीं। अर भले भवितव्यके बिना पुरुषार्थकी सिद्धि नाहीं। इसलिए जे भव्यजीव हैं वे सर्वथा संसारमें विरक्त होय मोक्षका यत्नकरो। नर

नारक देव तियच ये चार ही गति दु खरूप ह । अनादिकालसे ये प्राणी कमके उदयकर युक्त रागादि में प्रवर्त्ते ह इसलिए इनके चित्तमें कल्यानरूप वचन न आव । अशुभका उदय मेट शुभकी प्रवृत्ति कर तब शोकरूप अग्निकर तप्तायमान न होय ।

इति श्रीरविषेण चायविरचित मह पद्मपु ाण मस्कृत ग्रथ ताकी भाषावचानकाविष नताके मायाम को रा वणन करनेवाला छियालीसवां पत्र पूण भया ॥ ४६ ॥

अथान तर किहकधापुरका स्वामी जो सुग्रीव, सो उसका रूप बनाय विद्याधर इसके पुरमें आया । और सुग्रीव कताके विरहकर दुखी भमता सता वहा आया जहा खरदूषणकी सेनाके सामत मुए पडे थे । बिखरे रथ, मूए हाथी, मूए घोडे, छिन्न भिन्न होय रहे ह शरीर जिनके, कईएक राजावो का दाह होय ह, कईएक एसके ह, कईएकनिकी भुजा कटगई है कईएकनिकी जघा कटगई ह, कईयोकी आत गिरपडी ह, कईओके मस्तक पडे ह । कइयोको स्याल भख ह, कईयोको पक्षी चूथे ह, कईयोके परिवार रोव ह, कईयकोको टागि राखे ह । यह रणखेत का वत्तात देख सुग्रीव किसीकू पूछता भया । तब उसने कही खरदूषण मारा गया । तब सुग्रीवने खरदूषणका मरण सुन अति दु ख किया । मनमें चितवे ह बडा अनथ भया । वह महाबलवान था जिससे मेरा सवदु ख निवत्त होता सो कालरूप दिग्गजने मेरा आशारूप वक्ष तोडा । म हीन पुण्य, अब मेरा दु ख कसे शात होय ? यद्यपि बिन उद्यम जीवकू सुख नाहीं तात दु ख दूर करवेका उद्यम अगीकार करू । तब हनुमानप गया । हनुमान दोनो का समानरूप देख पीछे गया । तब सुग्रीवने विचारी कौन उपायकरू जिससे चित्तकी प्रसन्नता होय, जसे नवा चाद निरखे हष होय । जो रावणके शरणे जाऊ तो रावण मेरा और शत्रुका एकरूप जान शायद मुझे ही मारे, अथवा दोनोको मार स्त्री हर लेय । वह कामाध ह । कामाधका विश्वास नाहीं । मत्र, दोष, अपमान, दान–पुण्य, वित्त, शूरवीरता, कुशील, मनका दाह, यह सब कुमित्रकू न कहिए, जो कहे ५३५

खता पाव । तात सग्राममे खरदूषणकू मारचा ताहीके शरणे जाऊ, वह मेरा दु ख हर । और जिसपै दु ख पडा होय सो दुखीके दु खको जान । जिनकी तुल्य अवस्था होय तिनही विष स्नेह होय । सीताके वियोगका सीतापतिहीको दु ख उपजा ह । ऐसा विचारकर विराधितके निकट अति प्रीतिकर दूत पठाया । सो दूत जाय सुग्रीवके आगमका वत्तात विराधितसू कहता भया । सो विराधित सुनकर मनमें हर्षित भया । विचारी बडा आश्चय ह सुग्रीव जसे महाराज मुझसू प्रीति करवकी इच्छा कर । सो बडोके आश्रयसे क्या न होय ? म श्रीराम लक्ष्मणका आश्रय किया । इसलिए सुग्रीवसे पुरुष मोसे दभ किया चाह ह, सुग्रीव आया । मेघकी गाज समान वादित्रनिके शब्द होते आए । सो पाताललकाके लोग सनकर व्याकुल भए । तब लक्ष्मणने विराधितसू पूछा—वादित्रनिका शब्द कौनका सुनिए ह ? तब अनुराधाका पुत्र विराधित कहता भया—ह नाथ ! यह बानरवशियोका अधिपति प्रेमका भरा तिहारे निकट आया ह । किहकधापुरके राजा सूयरजके पुत्र पथ्वी पर प्रसिद्ध बडा बाली, छोटा सुग्रीव । सो बालीने तो रावणकू सिर न नवाया, सुग्रीवकू राज्य देय वरागी भया । सब परिग्रह तज सुग्रीव निहकटक राज्य कर । ताके सुतारा स्त्री । जसे शची सयुक्त इन्द्र रम तसें सुग्रीव सुतारा सहित रम । जिनके अगद नामा पुत्र गुण रत्नो कर शोभायमान, जिसकी पथ्वी पर कीर्ति फलरही ह । यह बात विराधित कह ह । अर सुग्रीव आया ही, राम और सग्रीव मिलें । रामकू देख फूलगया ह मुखकमल जाका, सुवर्णके आगन में बठे, अमत समान वाणी कर योग्य सभाषण करत भए । सुग्रीवके सग जे वद्ध विद्याधर ह व रामसू कहते भए—ह दव ! यह राजा सुग्रीव किहकधापुरका पति, महाबली, गुणवान पुरुषनिकू प्रिय सो कोई एक दुष्ट विद्याधर माया कर इनका रूप बनाय इनकी स्त्री सुतारा और राज्य लेयवेका उद्यमी भया ह । ये बचन सुन राम मनमे चितवते भए—यह कोई मुझसे अधिक दुखिया ह, इसके बठे ही दूजा पुरुष इसके घरमें आय धसा ह । इसके राज्य विभव ह, परन्तु कोई शत्रुको निवारिवे समथ नाहीं । लक्ष्मणने समस्त कारण सुग्रीवके मन्त्री जामवतको पूछया । जामवत सुग्रीवके मन तुल्य ह । तब वह मुख्य मत्री महा

विनय संयुक्त कहता भया—हे नाथ ! कामकी फासी कर बैठ्या वह पापी सुताराके रूपपर मोहित भया । मायामई सुग्रीवका रूप बनाय राजमंदिर आया, सो सुताराके महिल में गया । सुतारा महा सती अपने सेवकनिसू कहती भई—यह कोई दुष्ट विद्याधर विद्यासे मेरे पतिका रूप बनाय आव है, पाप कर पूर्ण, सो इसका आदर सत्कार कोई मत करो । वह पापी शंकारहित जायकर सुग्रीवके सिंहासनपर बैठ्या और ताही समय सुग्रीव भी आया । अर अपने लोकनिकू चिंतावान देख तब विचारी मेरे घरमें काहेका विषाद है ? लोक मलिन वदन, ठौर ठौर भेले होय रहे हैं । कदाचित अंगद मेरुके चैत्यालयों की वन्दनाके अर्थ सुमेरु गया न आया होय, अथवा रानीने काहू पर रोष किया होय, अथवा जन्म जरा मरण कर भयभीत विभीषण वैराग्यकू प्राप्त भया होय, उसका सोच होय । ऐसा विचारकर द्वारे आया । रत्नमई द्वार गीत गान रहित देख्या लोक सचिंत देखे । मनमें विचारी यह मनुष्य और ही होगये । मन्दिरके भीतर स्त्री जनोंके मध्य अपनासा रूप किए दुष्ट विद्याधर बैठ्या देखा । दिव्य हार पहिरे, सुन्दर वस्त्र, मुकुटकी कांतिमें प्रकाशरूप । तब सुग्रीव क्रोधकर गाजा जैसे वर्षा कालका मेघ गाजै, और नेत्रनिकी आरक्ततासू दशोदिशा आरक्त होय गई जैसे सांझफूल । तब वह पापी कत्रिम सुग्रीव भी गाजा । जैसे माता हाथी मदकर विह्वल होय तैसा काम कर विह्वल सुग्रीवसू लडवेकू उठ्या । दोऊ होंठ डसते भृकुटी चढाय युद्धकू उद्यमी भए । तब श्रीरामचन्द्रादि मन्त्रियोंने मनकिए और सुतारा पटराणी प्रकट कहती भई—यह कोई दुष्ट विद्याधर मेरे पतिका रूप बनाय आया है, देह और बल और वचनोंकी कांति से तुल्य भया है, परन्तु मेरे भरतारमें महापुरुषोंके लक्षण हैं सो इसमें नाहीं । जैसे तुरंग और खरकी तुल्यता नाहीं तैसे मेरे पतिकी और इसकी तुल्यता नाहीं । या भांति राणी सुताराके वचन सुनकर भी कईएक मंत्रीने न मानी, जैसे निधनका वचन धनवान न माने । सादृश्य-रूप देखकर हरागया है चित्त जिनका । सो सब मन्त्रियोंने भेले होय मन्त्रकिया—पंडितनिकू इतनोंके वचनोंका विश्वास न करना—बालक, अतिवृद्ध, स्त्री, मद्यपायी, वेश्यासक्त इनके वचन प्रमाण नाहीं ।

और स्त्रीनिकू शीलकी शुद्धि राखनी। शीलकी शुद्धि बिना गोत्रकी शुद्धि नाहीं। स्त्रियोको शील ही प्रयोजन है इसलिए राजलोकमें दोनो ही न जाने पावें, बाहिर रहें। तब इनका पुत्र अंगद तो माता के बचनसे इनकी पक्ष आया और जाबूनद कहै है—हम भी इन्होंके संग रहें। अर इनका पुत्र, सो शत्रुमई। सुग्रीवकी पक्ष अंगद है और सात अक्षोहणी दल इनके हैं और सात उसपै हैं। नगरकी दक्षिणके ओर वह राखा, उत्तरकी ओर यह राखे। अर बालीकापुत्र चंद्ररश्मि उसने यह प्रतिज्ञाकरी जो सुताराके महिल आवेगा उसे खडग कर मारूंगा। तब यह साचा सुग्रीव स्त्रीके विरह कर व्याकुल शोकके निवारवे निमित्त खरदूषण पै गया। सो खरदूषण तो लक्ष्मणके खडगकर हता गया। फिर यह हनुमानपै गया, जाय प्रार्थना करी, मैं दुःख कर पीडित हूं मेरी सहाय करो। मेरा रूपकर कोई पापी मेरे घरमें बैठ्या है, सो मोहि महा बाधा है, जायकर उसे मारो। तब सुग्रीवके वचन सुन हनुमान बडवानल समान क्रोधकर प्रज्ज्वलित होय अपने मंत्रियन सहित अप्रतीघात नामा विमानमें बैठ किहकधापुर आया। सो हनुमानकू आया सुन वह मायामई सुग्रीव हाथी चढ लडिवेकू आया। सो हनुमान दोनोका सादृश्य रूप देख आश्चर्यकू प्राप्त भया। मनमें चितवता भया ये दोनो समानरूप सुग्रीव ही हैं। इनमेंसे कौनको मारूं, कछु विशेष जाना न पडे। बिना जाने सुग्रीव ही को मारूं तो बडा अनर्थ होय। एक मुहूर्त अपने मंत्रिनिसू विचारकर उदासीन होय हनुमान पीछा निजपुर गया। सो हनुमानकू गए सुन सुग्रीव बहुत व्याकुल भया। मनमें विचारता भया—हजारां विद्या अर माया, तिनसे मंडित, महाबली महाप्रताप रूप वायु पुत्र, सो भी सन्देहकू प्राप्त भया सो बडा कष्ट। अब कौन सहाय करै? अतिव्याकुल होय, दुःख निवारवे अर्थ, स्त्रीके वियोगरूप दावानलकर तप्तायमान, आपके शरण आया है। आप शरणागत प्रतिपालक हो। यह सुग्रीव अनेक गुणनिकर शोभित है। हे रघुनाथ! प्रसन्न होहु, याहि अपना करहु। तुमसारिखे पुरुषनिका शरीर परदुःखका नाशक है। ऐसो जाबूनदके वचन सुन राम, लक्ष्मण और विराधित कहते भए—धिक्कार होवे परदारा-रत पापी जीवनिकू। रामने विचारी—मेरा और इसका

दु खसमान है। सो यह मेरा मित्र होयगा। म इसका उपकार करू अर यह पाछा मेरा उपकार करेगा। नहीं तो म निग्रथ मुनि होय मोक्षका साधन करू गा। ऐसा विचारकर राम सुग्रीवसू कहते भए, हे सुग्रीव ! म सवथा तुझे मित्र किया, जो तेरा स्वरूप बनाय आया ह उसे जीत तेरा राज्य तुझे निह कटक कराय दू गा, और तेरी स्त्री तोहि मिलाय दू गा। अर तेरा काम होय पीछे तू सीता की सुध हमें आन देना कि कहा ह। तब सुग्रीव कहता भया–हे प्रभो ! मेरा काय भए पीछे जो सात दिनमें सीताकी सुध न लाऊ तो अग्निमें प्रवेश करू यह बात सुन राम प्रसन्न भए, जसे चन्द्रमाकी किरण करि कुमुद प्रफुल्लित होय। रामका मुखरूप कमल फूलगया। सुग्रीवके अमतरूप वचन सुनिकर रोमाच खडे होय आए। जिनराजके चत्यालयमें दोनो धममित्र भए। यह वचन किया परस्पर कोई द्रोह न करे। बहुरि राम लक्ष्मण रथ चढ अनेक सामन्तनि सहित सुग्रीवके साथ किहकधापुर आए। नगरके समीप डेराकर सुग्रीवने मायामयी सुग्रीवप दूत भेज्या। सो दूतकू ताने खेद दिया, अर मायामई सुग्रीव रथमें बठ बडी सेना सहित युद्धके निमित्त निकस्या। सो दोऊ सुग्रीव परस्पर लडे। मायामई सुग्रीव और साचे सुग्रीवके नानाप्रकारका युद्ध भया, अधकार होय गया, दोऊ ही खेदकू प्राप्तभए। घनी देरमें मायामई सुग्रीवने साचे सुग्रीवके गदाकी दोनी सो गिरपड्या। तव वह मायामई सुग्रीव इसकू मूवा जान हर्षित होय नगरमें गया। अर साचा सुग्रीव मूर्छित होय पर्या सो परिवारके लोक डेरामें लाये। तब सचेत होय रामसू कहता भया, हे प्रभो ! मेरा चोर हाथमें आया हुता सो नगरमें क्यो जाने दिया ? जो रामचन्द्रकू पायकर मेरा दु ख नाहीं मिट तो या समान दु ख कहा ? तब राम कही तेरा और उसका रूप देखकर हम भेद न जान्या। तात तेरा शत्रु न हन्या। कदाचित विना जाने तेरा ही अगर नाश होय तो योग्य नाहीं। तू हमारा परम मित्र ह। तेरे और हमारे जिनमन्दिरमें बचन हुवा ह।

अथानन्तर रामने मायामई सुग्रीवकू बहुरि युद्धके निमित्त बुलाया। सो वह बलवान क्रोधरूप अग्नि कर जलता आया। राम सन्मुख भए। वह समुद्रतुल्य अनेक शस्त्रोंके धारक सुभट, तेई भए

ग्राह, उनकर पूर्ण। ता समय लक्ष्मणने साचा सुग्रीव पकड राख्या कि कभी स्त्रीके बैरसे शत्रुके सन्मुख न जाय। अर श्रीरामकू देखकर मायामई सुग्रीवके शरीरमें जो वताली विद्या हुती सो ताकू पूछ कर ताके शरीरतै निकसी। तब सुग्रीवका आकार मिट वह साहसगति विद्याधर इन्द्रनीलके पर्वत समान भासता भया। जैसे सापकी काचली दूर होय तैसे सुग्रीवका रूप दूर होगया। तब जो आधी सेना बानरवंशीनिकी यामें भेली भई थी, यातै जुदा होय, युद्धकू उद्यमी भई। सब बानरवंशी एक होय नानाप्रकारके आयुधनिकरि साहसगतिसू युद्ध करते भए। सो साहसगति महा तेजस्वी, प्रबल शक्तिका स्वामी सब बानरवंशीनिकू दशोदिशाकू भजाये, जैसे पवन धूलकू उडावै। बहुरि साहस-गति धनुष बाण लेय रामपै आया। सो मेघमंडल समान बाणनिकी वर्षा करता भया। उद्धत है पराक्रम जाका। साहसगतिके और श्रीरामके महा युद्ध भया। प्रबल है पराक्रम जिनका ऐसे राम रणक्रीडामें प्रवीण, क्षुद्रबाणनिकरि साहसगतिका वक्तर छेद्या और तीक्ष्ण बाणनिकरि साहसगतिका शरीर चालिनी समान कर डारया। सो प्राणरहित होय भूमिमें परया। सबनि निरख निश्चय किया जो यह प्राणरहित है। तब सुग्रीव राम लक्ष्मणकी महास्तुति कर इनकू नगरमें लाया, नगरकी शोभा करी सुग्रीवको सुताराका संयोग भया सो भोगसागरमें मग्न होय गया। रात दिनकी सुध नाहीं, सुतारा बहुत दिननिमें देखी सो मोहित होय गया। अर नन्दनवनकी शोभाकू ऊलघे है ऐसा आनन्दनामा वन वहां श्रीरामकू राखे। ता वनकी रमणीकताका वर्णन कौन कर सकै? जहां महा मनोग्य श्रीचन्द्रप्रभका चैत्यालय, वहां राम लक्ष्मण पूजा करी। अर विराधितकू आदिदे सब कटक का डेरा वनमें गया, खेदरहित तिष्ठै। सुग्रीवकी तेरह पुत्री रामचन्द्रके गुण श्रवण कर? अति अनु राग भरी वरिवेकी बुद्धि करती भई। चन्द्रमा समान मुख जिनका तिनके नाम सुनो—चन्द्राभा, हृदयावली हृदयधर्म्मा, अनुधरी, श्रीकाता, सुन्दरी, सुरवती, देवागना समान है विभ्रम जाका, मनो-वाहिनी मनमें बसनहारी, चारुश्री, मदनोत्सवा, गुणवती अनेक गुणनिकरि शोभित, अर पद्मावती

फूले कमल समान है मुख जाका, तथा जिनपती सदा जिनपूजामें तत्पर। ये त्रयोदश कन्या लेकर सुग्रीव राम पै आया। नमस्कारकर कहता भया–हे नाथ! ये इच्छाकरि आपकू वर है, हे लोकेश! इन कन्यानिके पति होवो। इनका चित्त जन्महीत यह भया जो हम विद्याधरनिकू न वरें। आपके गुण श्रवणकर अनुरागरूप भई है। यह कहकर रामको परणाई। ये कन्या अति लज्जाकी भरी नमीभूत हैं मुख जिनके, रामका आश्रय करती भई। महासुन्दर नवयौवन, जिनके गुण वर्णनमें न आवै, विजुरी समान, सुवर्णसमान कमल के गर्भ समान शरीरकी कांति जिनकी, ताकर आकाशविषै उद्योत भया। वे विनयरूप लावण्यताकर मंडित रामके समीप तिष्ठीं। सुन्दर है चेष्टा जिनकी। यह कथा गौतम स्वामी राजा श्रेणिकसूं कहै है–हे मगधाधिपति पुरुषनिमें सूर्यसमान श्रीराम सारिखे पुरुष तिनका चित्त विषयवासनातैं विरक्त है, परन्तु पूर्व जन्मके सम्बन्धसूं कईएक दिन विरक्तरूप गृहमें रहैं बहुरि त्याग करेंगे।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रंथ ताकी भाषावचनिकाविषै सुग्रीवका व्याख्यान वर्णन करनेवाला सैंतालीसवां पर्व पूर्ण भया ॥ ४७ ॥

अथानन्तर ते सुग्रीवकी कन्या रामके मनमोहिवेके अर्थ अनेक प्रकारकी चेष्टा करती भई, मानो देवलोकहीतैं उतरी है। वीणादिकका बजावना, मनोहर गीतका गावना इत्यादि अनेक सुन्दर लीला करती भई तथापि रामचन्द्रका मन न मोहा। सर्व प्रकारके विस्तीर्ण विभव प्राप्त भए परन्तु रामने भोगनिविषै मन न किया। सीताविषै अत्यन्त दत्तचित्त, समस्त चेष्टारहित, महाआदरकरि सीताकू ध्यावते तिष्ठे, जैसे मुनिराज मुक्तिको ध्यावैं। वे विद्याधरकी पुत्री गान करैं, सो उनकी ध्वनि न सुनैं, अर देवांगना समान तिनका रूप सो न देखें। रामकू सर्व दिशा जानकी मई भासे, अर कछू भासै नाहीं। और कथा न करैं। ए सुग्रीवकी पुत्री परणी, सो पास बैठीं। तिनकू हे जनकसुते! ऐसा कहि बतलावैं। ५४१

काकसे प्रीतिकर पूछें—अरे काक ! तू देश २ भ्रमण कर है तने जानकी हू देखी ? अर सरोवरविषै कमल फूल रहे है, तिनकी मकरन्द कर जल सुगन्ध होय रहा है, तहा चकवा चकवीके युगल कलोल करते देख चितारे। सीता विन रामकू सव शोभा फीकी लागे। सीताके शरीरके सयोगकी शकाकरि पवनसू आलिगन करे, कदाचित पवन सीताजीके निकटते आई होय, जा भूमिमें सीताजी तिष्ठे है ता भूमिकू धन्य गिने। अर सीता बिना चन्द्रमाकी चादनीकू अग्नि समान जाने। मनमे चितवे कदाचित सीता मरे वियोगरूप अग्निकर भस्म भई होय। अर मद मद पवनकर लतानिकू हालती देख जाने है यह जानकी ही है। अर वेलपत्र हालते देख जाने जानकीके वस्त्र फरहरे है। अर भ्रमरसयुक्त फूल देख जाने ये जानकीके लोचन ही है। अर कोपल देख जाने ये जानकीके करपल्लव ही है। अर श्वेत श्याम आरक्त तीनो जातिके कमल देख जाने सीताके नेत्र तीनरगकू धरैं है। अर पुष्पनिके गुच्छे देख जाने जानकीके शोभायमान स्तन ही है। अर कदलीके स्तभविषै जघानिकी शोभा जाने, अर लाल कमलनिविषै चरणनिकी शोभा जाने सम्पूर्ण शोभा जानकीरूप ही जाने।

अथानन्तर सुग्रीव सुताराके महिलविषै ही रहा, रामपै आए बहुत दिन भए। तब रामने विचारी, ताने सीता न देखी। मेरे वियोगकर तप्तायमान भई वह शीलवती मर गई। तातै सुग्रीव मेरे पास नाहीं आवै ? अथवा वह अपना राज्य पाय निश्चिन्त भया, हमारा दुख भूल गया। यह चितवनकरि रामकी आखनितै आसू पडे। तब लक्ष्मण रामकू सचित देख कोपकर लाल भए है नेत्र जाके, आकुलित है मन जाका, नागी तलवार हाथमें लेय सुग्रीव ऊपर चाल्या सो नगर कम्पायमान भया। सम्पूर्ण राज्यका अधिकारी तिनकू उलघ सुग्रीवके महलमे जाय ताकू कहा रे पापी ! अपने परमेश्वर राम तो स्त्रीके दुखकर दुखी अर तू दुर्बुद्धि स्त्रीसहित सुखसो राज्य करै ? रे विद्याधरवायस विषयलुब्ध दुष्ट ! जहा रघुनाथने तेरा शत्रु पठाया है तहा मै तोहि पठाऊगा। या भाति अनेक क्रोधके उग्रवचन लक्ष्मण कहे तब वह हाथ जोड नमस्कारकर लक्ष्मणका क्रोध शात करता भया। सुग्रीव कहै है- हे देव ! मेरी भूल

माफ करहु, म करार भूल गया। हम सारिखे क्षुद्र मनुष्यनिके खोटी चेष्टा होय ह। अर सुग्रीवकी सम्पूण स्त्री कापती हुई लक्ष्मणकू अघदेय आरती करती भई। हाथ जोड नमस्कारकर पतिकी भिक्षा मागती भई। तब आप उत्तमपुरुष तिनकू दीन जान कपा करते भए। यह महन्तपुरुष प्रणाम मात्र ही करि प्रसन्न होय, अर दुजन महादान लेकर हू प्रसन्न न होय। लक्ष्मणने सुग्रीवकू प्रतिज्ञा चिताय उपकार किया, जसैं यक्षदत्तकू माताका स्मरण कराय मुनि उपकार करते भए।

यह वार्ता सुन राजा श्रेणिक गौतम स्वामीसू पूछे ह—ह नाथ! यक्षदत्तका वत्तात म नीका जानना चाहू हू। तब गौतम स्वामी कहते भए—हे श्रेणिक! एक कौंचपुर नगर तहा राजा यक्ष, राणी राजिलता, ताके पुत्र यक्षदत्त, सो एक दिन एक स्त्रीकू नगरके बाहर कुटीमें तिष्ठती देख कामबाण कर पीडित भया। ताकी ओर चाल्या रात्रिविष, तब ऐननामा मुनि याकू मना करते भए। यह यक्षदत्त, खडग ह जाके हाथमें सो विजुरीके उद्योतकरि मुनिकू देखकर तिनके निकट जाय विनय सयुक्त पूछता भया—हे भगवन! काहेको मोहि मने किया? तब मुनि कहा—जाको देख तू कामवश भया ह सो स्त्री तेरी माता ह। तात यद्यपि सूत्रमें रात्रिको बोलना उचित नाहीं तथापि करुणाकर अशुभ कायत मन किया। तब यक्षदत्तने पूछा हे स्वामी! मेरी माता कसे ह? तब मुनि कही सुन—एक मत्यकावती नगरी तहा कणिक नामा वणिक, ताके धू नामा स्त्री, ताके बधुदत्त नामा पुत्र, ताकी स्त्री मित्रवती लतादत्तकी पुत्री, सो स्त्रीकू छाने गभ, राखि बधुदत्त जहाज बठि देशातर गया। ताकू गए पीछे याकी स्त्रीके गभ जान सासू ससरने दुराचारणी जान घरसे निकाल दई। सो उत्पलका दासीको लार लेय बडे सारथीकी लार पिताके घर चाली। सो उत्पलकाको सपने डसी, वनमें मुई। अर यह मित्रवती शीलमात्र ही ह सहाय जाके सो कोचपुरविष आई। अर महाशोककी भरी—ताके उपवन विष पुत्रका जन्म भया। तब यह तो सरोवरविष वस्त्र धोयवे गई अर पुत्ररत्न कबलमें बेढा सो कबल सयुक्त पुत्रकू स्वान लेय गया। सो काहूने छुडाया, राजा यक्षकू दिया, ताके राणी राजिलता अपुत्र

वती, सो राजाने पुत्र राणीको सौंप्या। ताका यक्षदत्त नाम धरचा सो तू। अर वह तेरी माता वस्त्र धोय आई, सो ताहि न देखि विलाप करती भई। एक देवपुजारीने ताहि दया कर धय बधाया। तू मेरी
 बहिन है ऐसा कह राखी। सो यह मित्रवती सहायरहित लज्जाकर अकीर्तिके भय थकी बापके घर
 न गई। अत्यन्त शीलकी भरी जिनधर्मविषै तत्पर, दरिद्रीकी कुटीविषै रहै। सो तै भ्रमण करता देख
 कुभाव किया। अर याका पति बंधुदत्त रत्नकंबल दे गया हुता, ताविषै ताहि लपेट सो सरोवर गई हुती, सो रत्नकंबल राजाके घरमें है अर वस बालक तू है। या भांति मुनि कही तब यह नमस्कार कर खडग हाथमें लेय राजा यक्षपै गया। अर कहता भया या खडग कर तेरा सिर काटूंगा। नातर मेरे जन्मका वृत्तांत कहो। तब राजा यक्ष यथावत वृत्तांत कहा। अर वह रत्नकम्बल दिखाया, सो लेय कर यक्षदत्त अपनी माता कुटीमें तिष्ठे थी तासूं मिला। अर अपना बंधुदत्त पिता ताकूं बुलाया, महाउत्सव अर महा विभवकर मंडित माता पितासूं मिला, यह यक्षदत्तकी कथा गौतमस्वामी राजा श्रेणिकसूं कही—जैसे यक्षदत्तको मुनिने माताका वृत्तांत जनाया तैसे लक्ष्मणने सुग्रीवको प्रतिज्ञा विस्मरण होय गया हुता सो जनाया। सुग्रीव लक्ष्मणके संग शीघ्र ही रामचन्द्रपै आया, नमस्कार किया, अर अपने सब विद्याधर सेवक महाकुलके उपजे बुलाए। वे या वृत्तांतको जानते हुते, अर स्वामी कार्य विषै तत्पर तिनकूं समझायकर कहा सो सब ही सुनो, रामने मेरा बडा उपकार किया। अब सीताके खबर इनकूं लायदो। तात तुम दिशानिकूं जाओ। अर सीता कहां है यह खबर लावो, समस्त पृथ्वी पर जल स्थल आकाशविषै हेरो। जम्बूद्वीप, लवण समुद्र, धातकीखण्ड, कुलाचल, वन, सुमेरु, नाना-
प्रकारके विद्याधरनिके नगर समस्त अस्थानक, सर्वदिशा ढूंढो।

अथानन्तर ये सब विद्याधर सुग्रीवकी आज्ञा सिर पर धारकर हर्षित भए, सब ही दिशानिकूं शीघ्र ही दौडे। सब ही विचारें—हम पहिली सुध लावें तासो राजा अति प्रसन्न होय। अर भामण्डलकूं हू खबर पठाई जो सीता हरी गई ताकी सुध लेवो। तब भामण्डल बहिनके दुःखकर अतिही दुःखी भया।

हेरनेका उद्यम किया। अर सुग्रीव आपभी ढूंढनेकू निकसा। सो ज्योतिषचक्रके ऊपर होय विमानमें बैठ्या देखता भया। दुष्ट विद्याधरनिके नगर सब देखे, सो समुद्रके मध्य जम्बूद्वीप देखा। वहां महेन्द्र पर्वतपर आकाशसे सुग्रीव उतरा। तहां रत्नजटी तिष्ठे था सो डरा, जैसे गरुडते सर्प डरे। बहुरि विमान नजीक आया तब रत्नजटी जाना कि यह सुग्रीव है, लंकापतिने क्रोधकर मोपर भेजा सो मोहि मारेगा। हाय मैं समुद्रमें क्यों न डूब मूया?? अंतर द्वीपविषै मारा जाऊंगा। विद्या तो रावण मेरी हर लेय गया अब प्राण हरने याहि पठाया। मेरी वांछा हुती जैसे तैसे भामण्डल पर पहुंचूं तो सब कार्य होय, सो न पहुंच सक्या। यह चितवन करै है इतनेमें ही सुग्रीव आया, मानो दूसरा सूर्य ही है, द्वीपका उद्योत करता आया। सो याको बनकी रजकर धूसरा देख दया कर पूछता भया, हे रत्नजटी! पहिले तू विद्या कर संयुक्त हुता। अब हे भाई! तेरी कहा अवस्था भई? या भांति सुग्रीव दया कर पूछा सो रत्नजटी अत्यन्त कम्पायमान कछु कह न सकै। तब सुग्रीव कही—भय मत कर, अपना वृत्तांत कह। बार-बार धैर्य बंधाया। तब रत्नजटी नमस्कार कर कहता भया—रावण दुष्ट सीताकूं हरण कर ले जाता हुता, सो ताके अर मेरे परस्पर विरोध भया। मेरी विद्या छेद डारी। अब विद्यारहित जीवित विषै संदेह चिंतावान तिष्ठे था सो हे कपिवंशके तिलक! मेरे भागते तुम आए। ये वचन रत्नजटीके सुन सुग्रीव हर्षित होय ताहि संग लेय अपने नगरमें श्रीराम पै लाया। सो रत्नजटी रामलक्ष्मणसो सबके समीप हाथ जोड नमस्कार कर कहता भया। हे देव! सीता महासती है, ताकूं दुष्ट निर्दई लंकापति रावण हर ले गया। सो रुदन करती विलाप करती विमानमें बैठी मृगी समान व्याकुल मैं देखी। वह बलवान बलात्कार लिए जाता हुता। सो मैंने क्रोधकर कहा—यह महासती मेरे स्वामी भामण्डलकी बहिन है, तू छोड दे। सो वाने कोपकर मेरी विद्या छेदी। वह महा प्रबल, जाने युद्धमें इन्द्रकूं जीता पकड लिया अर कैलाश उठाया, तीन खण्डका स्वामी, सागरांत पृथ्वी जाकी दासी, जो देवनिहू करि न जीती जाय सो ताहि मैं कैसे जीतूं? ताने मोहि विद्यारहित किया। यह सकल वृत्तांत राम देवने

सुनकर ताकू उरसे लगाया अर बारम्बार ताहि पूछते भए। बहुरि राम पूछते भए—हे विद्याधरो! कहो लंका कितनी दूर है? तब वे विद्याधर निश्चल होय रहे, नीचा मुख किया, मुख की छाया और ही होयगई, कछु जुवाब न दिया। तब रामने उनका अभिप्राय जाना—जो यह हृदयविषै रावणतै भय रूप है। मन्ददृष्टिकर तिनकी ओर निहारे। तब वे जानते भए हमकू आप कायर जानो हो। लज्जा वान होय हाथ जोड सिर निवाय कहते भये—हे देव! जाके नाम सुन हमकू भय उपजै है ताकी बात हम कैसे कहें? कहा हम अल्प शक्तिके धनी अर कहा वह लंकाका ईश्वर? तातै तुम यह हठ छोडो। अर वस्तु गई जानो। अथवा तुम सुनो हो तो हम सब वृत्तान्त कहे सो नीके उरमें धारो। लवणसमुद्र विषै राक्षसद्वीप प्रसिद्ध है, अदभुत सम्पदाका भरा। सो सातसौ योजन चौडा है, अर प्रदक्षिणाकर किंचित अधिक इक्कीस सौ योजन वाकी परिधि है। ताके मध्य सुमेरु तुल्य त्रिकूटाचल पर्वत है। सो नवयौवन ऊंचा, पचास योजनके विस्ताररूप, नानाप्रकारके मणि अर सुवर्ण कर मण्डित। आगै मेघ बाहनको राक्षसनिके इन्द्रने दिया हुता, ता त्रिकुटाचलके शिखरपर लंका नाम नगरी, शोभायमान, रत्नमई, जहां विमान समान घर, अर अनेक क्रीडा करनेके निवास, तीस योजन विस्तार लंकापुरी महाकोट खाईकर मण्डित, मानो दूजी वसुधरा ही है। अर लंकाके चौगिरद बडे बडे रमणीक स्थानक है। अति मनोहर मणि सुवर्णमई जहां राक्षसनिके स्थानक है, तिनविषै रावणके बंधुजन बसै है। संध्या-कार सुवेल कांचन ल्हादन पोधन हंस हर सागर घोष अर्धस्वर्ग इत्यादि मनोहर स्थानक वन उपवन आदिकरि शोभित देवलोक समान है। जिनविषै भ्रात, पुत्र, मित्र, स्त्री, बांधव, सेवकजन सहित लंका-पति रमै है। सो विद्याधरनि सहित क्रीडा करता देख लोकनिकू ऐसी शंका उपजै है मानो देवनि सहित इन्द्र ही रमै है। जाका महाबली विभीषणसा भाई, औरनिकरि युद्धमें न जीता जाय, ता समान बुद्धि देवनिमें नाहीं, अर ता समान मनुष्य नाहीं। ताहिकरि रावणका राज्य पूर्ण है। अर रावणका भाई कुम्भकर्ण त्रिशूलका धारक, जाकी युद्धमें टेढी भौंह देव भी देख सकें नाहीं तो मनुष्यनिकी कहा बात

अर रावणका पुत्र इन्द्रजीत पृथ्वीविषै प्रसिद्ध है। अर जाके बडे २ सामन्त सेवक हैं। नानाप्रकार विद्याके धारक, शत्रुनिके जीतनहारे, अर जाका छत्र पूर्ण चन्द्रमा समान, जाहि देखकर वैरी गर्वकूं तजै हैं। तानैं सदा रण संग्राममें जीतिही जीति सुभटपनेका विरद प्रकट किया है। सो रावणके छत्रकूं देख तिनका सब गर्व जाता रहै। अर रावणका चित्रपट देखे अथवा नाम सुने शत्रु भयकूं प्राप्त होय, जो ऐसा रावण तासो युद्ध कौन कर सकै? तातै यह कथा ही न करना और बात करो। यह बात विद्याधरनिके मुखतै सुनकर लक्ष्मण बोला, मानो मेघ गाजा—तुम एती प्रशंसा करो हो सो सब मिथ्या है। जो वह बलवान हुता तो अपना नाम छिपाय स्त्रीकूं चुराकर काहे लेगया? वह पाखण्डी, अतिकायर, अज्ञानी, पापी नीच, राक्षस। ताके रंच मात्र भी शूरवीरता नाहीं। अर राम कहते भए—बहुत कहने करि कहा? सीताकी सुध ही कठिन हुती। अब सुध आई तब सीता आय चुकी। अर तुम कही और बात करो और चिन्तवन करो सो हमारे और कछु बात नाहीं, और कछु चितवन नाहीं। सीताकूं लावना यही उपाय है। रामके वचन सुनकर वृद्ध विद्याधर क्षण एक विचारकर बोले, हे देव! शोक तजो, हमारे स्वामी होवो, अर अनेक विद्याधरनिकी पुत्री, गुणनिकरि देवांगना समान, तिनके भरतार होवो। अर समस्त दुःखकी बुद्धि छोडो। तब राम कहते भए—हमारे और स्त्रीनिका प्रयोजन नाहीं। जो शची समान स्त्री होय तो भी हमारे अभिलाषा नाहीं। जो तिहारी हममें प्रीति है तो सीता हमें शीघ्र ही दिखावो। जाम्बूनद कहता भया, हे प्रभो! या हठको तजो। एक क्षुद्र पुरुषने कृत्रिम मयूरका हठ किया ताकी न्याईं स्त्रीका हठकर दुखी मत होवो। यह कथा सुनो—

एक वेणातटग्राम, तहां सर्वरुचि नामा गृहस्थी, ताके विनयदत्त नामा पुत्र, ताकी माता गुणपूर्णा। अर विनयदत्तका मित्र विशालभूत, सो पापी विनयदत्तकी स्त्रीसो आसक्त भया। स्त्रीके वचनकरि विनयदत्तकूं कपटकरि वनविषै लेगया, सो एक वृक्षके ऊपर बांध वह दुष्ट घर उठि आया। कोई विनयदत्तके समाचार पूछे तो ताहि कछु मिथ्या उत्तर देय सांचा होय रहै। जहां विनयदत्त

बाधा हुता तहा एक क्षुद्र नामा पुरुष आया, वक्षके तले बठा, वक्ष महा सघन। विनयदत्त कुरलावता हुता, सो क्षुद्र देखे तो दृढबधनकर मनुष्य वक्षकी शाखाके अग्रभाग बधा ह। तब क्षुद्र दयाकर ऊपर चढा, विनयदत्ताको बधनत निवत किया। विनयदत्त द्रव्यवान, सो क्षुद्रकू उपकारी जान अपने घर लेगया। भाईत हू अधिक हित राखे, विनयदत्ताके घर उत्साह भया, अर वह विशालभूत कुमित्र दूर भाग गया। क्षुद्र विनयदत्तका परम मित्र भया। सो क्षुद्रका एक रमने (खेलने) का पत्रमयी मयूर, सो पवनकर उडघा, राजपुत्रके घर जाय पडघा। सो ताने राख मेल्या, ताके निमित्त क्षद्र महा शोककर मित्रकू कहता भया—मोहि जीवता इच्छ ह तो मेरा वही मयूर लाव। विनयदत्त कहा—म तोहि रत्नमई मयूर कराय दू, अर साचे मोर मगाय दू, वह पत्रमई मयूर पवनत उडगया सो राजपुत्रने राखा, म कसे लाऊ ? तब क्षुद्र कही म वही—लेऊ, रत्ननिक न लू, न साचे लू। विनयदत्त कहे—जो चाहो सो लेहु, वह मेरे हाथ नाहीं। क्षुद्र बारम्बार वही मागे। सो वह तो मूढ हुता, तुम पुरुषोत्तम होय ऐसे क्यो भूलो हो ? वह पत्रनिका मयूर राजपुत्रके हाथ गया विनयदत्त कसे लाव ? तात अनेक विद्याधरनिकी पुत्री, सुवण समान वण जिनका, श्वेत श्याम आरक्त तीन वणकू धार ह नेत्र कमल जिनके, सुदर पीवर ह स्तन जिनके, कदली समान जघा जिनकी, अर मुखकी कातिकर शरदकी पूणमासीके चद्रमाकू जीते, मनोहर गुणनिकी धरणहारी, तिनके पति होऊ। हे रघुनाथ! महाभाग्य! हमपर कपा करहु। यह दुखका बढावनहारा शोक सताप छोडहु। तदि लक्ष्मण बोले—हे जाम्बूनद! त यह दष्टात यथाथ न दिया। हम कह ह सो सुनहु—एक कुसुमपुर नामा नगर, तहा एक प्रभव नामा गहस्थ, जाके यमुना नामा स्त्री, ताके धनपाल, बधुपाल, गहपाल, पशुपाल, क्षेत्रपाल ये पाच पुत्र। सो यह पाचो ही पुत्र यथाथ गुणनिके धारक, धनके कमाऊ, कुटुम्बके पालिवेविष उद्यमी। सदा लौकिक धधे कर। क्षणमात्र आलस नाही। अर इन सबनित छोटा आत्मश्रेय नामा कुमार सो पुण्यके योग करि देवनि कसे भोग भोगव। सो याको माता पिता अर बडे भाई कटुक वचन कहें। एक दिन यह

मानो नगर बाहिर भम था सो कोमल शरार खदकू प्राप्त भया। उद्यम करवेकू असमथ, सो आपका मरण बाछता हुता। ता समय याके पूव पुण्यकमके उदयकरि एक राजपुत्र याहि कहता भया—हे मनुष्य! म पथुस्थान नगरके राजाका पुत्र भानुकुमार हू, सो देशातर भमणकू गया हुता, सो अनेक देश देखे, पथ्वीविष भमण करता दवयोगत कमपुर गया, सो एक निमित्तज्ञानी पुरुषकी सगतिविष रहा। ताने मोहि दुखी जान करुणाकर यह मत्रमई लोहका कडा दिया अर कही—यह सब रोगका नाशक ह, बुद्धिवद्धक ह। ग्रह सप पिशाचादिकका वश करणहारा ह, इत्यादि अनेक गुण ह। सो तू राख, ऐसे कह मोहि दिया, अर अब मेरे राज्यका उदय आया। म राज्य करवेकू अपने नगर जाऊ हू, यह कडा म तोहि दू हू तू मरे मत। जो वस्तु आपप आई, अपना काय कर काहूकू दे डारो तो यह महाफल ह। सो लोकविषै ऐसे पुरुषनिकू मनुष्य पूज ह। आत्मश्रेयको एसा कह राजकुमार अपना कडा देय, अपने नगर गया। अर यह कडा लेय अपने घर आया। ताही दिन ता नगरके राजाकी राणीकू सपने डसी हुती सो चेष्टा रहित होय गई। ताहि मतक जान जरायवेकू लाए हुते, सो आत्मश्रेयने मगलमई लोहेके कडेक प्रसादकरि विषरहित करी। तब राजा अति दान देय बहुत सत्कार किया, आत्मश्रेयके कडक प्रसादकरि महाभोग सामग्री भई। सब भाइनविष यह मुख्य ठहरा। पुण्यकमके प्रभाव करि पृथ्वीविष प्रसिद्ध भया। एक दिन कडेकू वस्त्रविष बाध सरोवर गया। सो गोह आय कडेकू लेय, महावक्षके तले ऊडा बिल ह ताविष पठ गई। बिल शिलानिकरि आच्छादित। सो गोह बिल विष बठी भयानक शब्द कर। आत्मश्रेयने जाना कडेकू गोह बिलविष लेगई, गजना कर ह। तब आत्मश्रेय वृक्ष जडते उखाड, शिला दूर कर, गोहका बिल चूर कर डारा, अर बहुत धन लिया। सो राम तो आत्मश्रेय ह, अर सीता कड समान ह, लका बिल समान ह, रावण गोह समान ह। तात हो विद्याधरो! तुम निभय होवो। ये लक्ष्मणके वचन जाबूनदके वचननिकू खडन करनहारे सुनकर विद्याधर आश्चयकू प्राप्त भए।

अथानन्तर जाबूनद आदि सब रामसू कहते भए—हे देव ! अनन्तवीर्य योगींद्रकू रावणने नमस्कार कर अपने मृत्युका कारण पूछ्या । तब अनन्तवीर्यकी आज्ञा भई जो कोटिशिलाकू उठावेगा ताकरि तेरी मृत्यु है । तब ये सर्वज्ञके वचन सुन रावणने विचारी ऐसा कौन पुरुष है जो कोटिशिलाकू उठावै । ये वचन विद्याधरनिके सुन लक्ष्मण बोले मैं अबही यात्राकू वहां चालूंगा, तब सबही प्रमाद तज इनके लार भए । जाबूनद, महाबुद्धि, सुग्रीव, विराधित, अर्कमाली नल, नील इत्यादि नामी पुरुष विमान विषै राम लक्ष्मणकू चढाय कोटिशिलाकी ओर चाले । अंधेरी रात्रिविषै शीघ्र ही जाय पहुंचे, शिलाके समीप उतरे । शिला महा मनोहर, सुर नर असुरनिकरि नमस्कार करने योग्य, ये सब दिशाविषै सामंतनिकू रखवारे राख, शिलाकी यात्राकू गए । हाथ जोड सीस निवाय नमस्कार किया । सुगंध कमलनिकरि तथा अन्य पुष्पनिकरि शिलाकी अर्चा करी । चन्दनकर चरची, सो शिला कैसी शोभती भई मानो साक्षात शची ही है । ताविषै जे सिद्ध भए तिनकू नमस्कारकर, हाथ जोड, भक्तिकर शिलाकी तीन प्रदक्षिणा दई । सब विधिविषै प्रवीण लक्ष्मण कमर बांध, महा विनयकू धरता संता, नमोकारमंत्रमें तत्पर, महा भक्तिकरि स्तुति करवेकू उद्यमी भया । अर सुग्रीवादि वानरवंशी सबही जय जयकार शब्द कर महा स्तोत्र पढते भए । एकाग्रचित्तकर सिद्धनिकी स्तुति करै है, जो भगवान सिद्ध त्रैलोक्यके शिखर महादेदीप्यमान है । अर वे सिद्ध स्वरूप मात्र सत्ताकर अविनश्वर है । तिनका बहुरि जन्म नाहीं । अनन्तवीर्यकर संयुक्त, अपने स्वभावमें लीन, महा समीचीनता युक्त, समस्त कर्मरहित, संसार समुद्रके पारगामी कल्याणमूर्ति, आनन्द–पिंड, केवलज्ञान–केवलदर्शनके आधार, पुरुषाकार, परमसूक्ष्म अमूर्ति, अगुरुलघु, असंख्यात–प्रदेशी, अनन्तगुणरूप, सबकू एकसमयमें जानैं, सब सिद्ध समान, कृतकृत्य, जिनके कोई कार्य करना रहा नाही । सर्वथा शुद्धभाव, सर्वद्रव्य, सर्वक्षेत्र, सर्वकाल, सर्वभावके ज्ञाता, निरंजन, आत्मज्ञानरूप, शुक्लध्यान अग्निकर अष्टकर्म वनके भस्म करणहारे, अर महाप्रकाशरूप प्रतापके पुंज, जिनकू इन्द्र धरणेंद्र चक्रवर्त्यादि पृथ्वीके नाथ सब ही सेवैं, महास्तुति

पद्म पुराण ५५१ कर, ते भगवान ससारके प्रपचत रहित, अपने ज्ञान दस्वभाव तिनमई, अनन्त सिद्ध भए अर अनत होहिंगे। अढाईद्वीपके विष मोक्षका माग प्रवत्त ह। एकसौ साठ महाविदेह, अर पाच भरत, पाच ऐरावत, एकसौ सत्तर क्षेत्र, तिनके आयखडविष जे सिद्ध भए, अर होहिगे, तिन सबनिकू हमारा नमस्कार होहु। भरतक्षेत्रविष यह कोटिशिला, यहात सिद्धशिलाकू प्राप्त भए ते हमकू कल्याण के कर्त्ता होहु। जीवनिकू महामगलरूप। या भाति चिरकाल स्तुतिकर चित्तविष सिद्धनिका ध्यान कर सब ही लक्ष्मणकू आशीर्वाद देते भए।

या कोटिशिलात जे सिद्ध भए वे सव तिहारा विघ्न हर। अरहन्त, सिद्ध, साधु, जिनशासन, ये सव तुमकू मगलके करता होहु। या भाति शब्द करते भए। अर लक्ष्मण सिद्धनिका ध्यान कर शिलाकू गोडे प्रमाण उठावता भया। अनेक आभूषण पहिरे, भुज बधन कर शोभायमान ह भुजा जाकी, सो भुजानि करि कोटिशिला उठाई। तब आकाशविष देव जय जय शब्द करते भए। सुग्रीवादिक आश्चयकू प्राप्त भए। कोटिशिलाकी यात्राकर बहुरि सम्मेदशिखर गए। अर कलाशकी यात्रा कर भरतक्षेत्रके सव तीथ वदे, प्रदक्षिणा करी। साझ समय विमान बठ जयजयकार करते सते राम लक्ष्मणके लार किह कधापुर आए। आप अपने अपने स्थानक सुखत शयन किया। बहुरि प्रभात भया। सब एकत्र होय परस्पर वार्ता करते भए। देखो अब थोडेही दिनमे इन दोऊ भाईनिका निष्कटकराज्य होयगा, ये परम शक्तिकू घर है। वह निर्वाणशिला इनने उठाई सो यह सामान्य मनुष्य नाहीं। यह लक्ष्मण रावणकू नि सदेह मारेगा। तब कईएक कहते भए रावणने कलाश उठाया सो बाहुका पराक्रम घाट नाही। तब ५५१ और कहते भए ताने कलाश विद्याके बलत उठाया सो आश्चय नाहीं। तब कईएक कहते भए—काहेकू विवाद करौ, जगतके कल्याण अर्थ इनका उनकाहित कराय देवो। या समान और नाही। रावणत प्राथना कर सीता लाय रामकू सौंपो। युद्धत कहा प्रयोजन ह? आगे तारक, मेरुक बलवान भए सो सग्राम विष मारे गए। वे तीनखडके अधिपति, महाभाग्य, महापराक्रमी हुते, अर और हू अनेक राजा रण

विष हते गए । तातै साम कहिए परस्पर मित्रता श्रेष्ठ ह । तब ये विद्याकी विधिमें प्रवीण परस्पर मत्रकर श्रीरामप श्राए । श्रति भक्तित रामके समीप नमस्कारकर बैठे । कसे शोभते भए ? जस इन्द्र के समीप देव सोह । कसे ह राम ? नेत्रनिकू श्रानदके कारण, सो कहते भए—श्रब तुम काहे ढील करो हो, मो बिना जानकी लकाविष महादुखकरि तिष्ठ ह । तात दीघ सोच छाडि श्रवार ही लकाकी तरफ गमनका उद्यम करहु । तब जे सुग्रीवके जाबूनदादि मत्री राजनीतिम प्रवीन ह ते रामसू विनती करते भए—हे देव ! हमारे ढील नाहीं, परतु यह निश्चय कहो सीताके लायवे हीका प्रयोजन ह, श्रक राक्षसनित युद्ध करना ह ? यह सामाय युद्ध नाहीं विजय पावना श्रति कठिन ह । वह भरत क्षेत्रके तीन खडका निष्कटक राज कर ह । द्वीप समद्रनिकेविष रावण प्रसिद्ध ह, जासू धातुकीखड द्वीपके शका माने । जम्बूद्वीपविष जाकी श्रधिक महिमा, श्रदभुतकायका करणहारा, सबके उरका शल्य ह, सो युद्ध योग्य नाहीं । तात रणकी बुद्धि छाडि हम जो कह सो करहु । हे दव ! ताहि युद्ध सन्मुख करिवेमे जगतकू महाक्लेश उपज ह । प्राणीनिके समूहका विध्वस होय ह । समस्त उत्तमक्रिया जगतत जाय ह । तात विभीषण रावणका भाई, सौ पापकम रहित श्रावकव्रतका धारक ह, रावण ताके वचनकू उलघ नाही । तिन दोऊ भाईनिमे श्रतरायरहित परमप्रीति ह । सो विभीषण चातुयतात समझावेगा श्रर रावणहू श्रपयशत शकेगा । लज्जाकरि सीताकू पठाय देगा । तात विचारकर रावणप ऐसा पुरष भेजना जो बातें करनेमें प्रवीण होय, श्रर राजनीतिमें कुशल होय, श्रनेक नय जाने, श्रर रावणका कपापात्र हो ऐसा हेरहु । तब महोदधि नामा विद्याधर कहता भया—तुम कछु सुनी ह ? लकाकी चौगिरद मायामई यत्र रचा ह, सो श्राकाशके मागत कोऊ जाय सक नाहीं पथ्वीके मागत जाय सक नाहीं । लका श्रगम्य ह, महाभयानक देख्या न जाय ऐसा मायामई यत्र बनाया ह । सो इतने बठे ह तिनमें तो ऐसा कोऊ नाही जो लकाविष प्रवेश कर । तात पवनजयका पुत्र श्रीशल जाहि हनुमान कह ह सो महा विद्याबलवान पराक्रमी प्रतापरूप ह ताहि जाचो । वह रावणका परममित्र ह, श्रर पुरुषोत्तम ह,

सो रावणकू समझाय विघ्न टारेगा। तब यह बात सबने प्रमाण करी। हनुमानके निकट श्रीभूत नामा दूत शीघ पठाया। गौतमस्वामी राजा श्रेणिकत कह है-हे राजन! महा बुद्धिमान होय, अर महाशक्तिकू धरे होय, अर उपाय कर, तो भी होनहार होय सो ही होय। जस उदयकालमें सूयका उदय होय ही तस जो होनहार सो होय ही।

इति श्रीरविषेण चायविरचित महापद्मपुराण सस्कृत ग्रथ ताकी भाषावचनिकाविष कोटिशिला उठावनेका व्याख्यान वणन करनवाला अडतालीसवा पत्र पूण भया ॥ ४८ ॥

अथानन्तर श्रीभूतनामा दूत, पवनके वेगत शीघही आकाशसे मागसो लक्ष्मीका निवास जो श्रीपुर नगर अनेक जिन भवन तिनकरि शोभित, तहा गया। जहा मन्दिर सुवण रत्नमई, सो तिनकी माला करि मण्डित कुन्दके पुष्प समान उज्ज्वल सुन्दर झरोखानिकरि शोभित, मनोहर उपवनकर रमणीक। सो दूत नगरकी शोभा अर नगरके अपूव लोग देख आश्चयकू प्राप्त भया। बहुरि इन्द्रके महल समान राजमन्दिर, तहाकी अदभुत रचना देख थकित होय रहा हनुमान खरदूषणकी बटी अनगकुसुमा, रावणकी भानजी, ताके खरदूषणका शोक। कमके उदयकरि शुभ अशुभ फल पाव, ताहि काई निवारिवे शक्त नाहीं। मनुष्यनिकी कहा शक्ति देवनहूकरि अन्यथा न होय। दूतने द्वारे आय अपने आगमनका वत्तात कहा। सो अनगकुसुमाकी मर्यादा नामा द्वारपाली दूतकू भीतर लेयगई। अनगकुसुमा ने सकल वत्तात पूछया सो श्रीभूतने नमस्कारकर विस्तारसू कहा। दडकवनमें श्रीराम लक्ष्मणका आवना, सम्बूकका बध, खरदूषणत युद्ध, बहुरि भले भले सुभटनिसहित खरदूषणका मरण। यह वार्ता सुन अनगकुसुमा मूर्छाकू प्राप्त भई। तब चन्दनके जलकरि सींच सचेत करी। अनगकुसुमा अश्रुपात डारती विलाप करती भई-हाय पिता हाय भाई! तुम कहा गए? एकबार मोहि दशन देवो। वचनालाप कर-महा भयानक वनमें भूमिगोचरीनि तुमकू कसे हते? या भाति पिता अर भाईके दुखकरि

चन्द्रनखाकी पुत्री दुखी भई। सो महा कष्टकरि सखिनिने शातिताकू प्राप्तकरी। अर जे प्रवीण उत्तम जन हुते तिन बहुत सबोधी। तब यह जिनमार्गविषै प्रवीण, समस्त ससारके स्वरूपकू जान, लोकाचारकी रीति प्रमाण पिताके मरणकी क्रिया करती भई। बहुरि दूतकू हनुमान महाशोकके भरे सकल वृत्तात पूछते भए। तब इनकू सकल वृत्तात कहा सो हनुमान खरदूषणके मरणकरि अति क्रोधकू प्राप्त भया। भौंह टेढी होय गई, मुख अर नेत्र आरक्त भए, तब दूतने कोप निवारिवेके निमित्त मधुर स्वरनिकरि विनती करी। हे देव! किहकधापुरके स्वामी सुग्रीव तिनकू दुख उपजा, सोतो आप जानो ही हो। साहसगति विद्याधर सुग्रीवका रूप बनाय आया। तात पीडित भया सुग्रीव श्रीरामके शरणे गया। सो राम सुग्रीवका दुख दूर करवे निमित्त किहकधापुर आए। प्रथम तो सुग्रीव अर वाके युद्ध भया। सो सुग्रीवकरि वह जीता न गया। बहुरि श्रीरामके अर वाके युद्ध भया सो रामकू देख बेताली विद्या भाग गई। तब वह साहसगति सुग्रीवके रूपरहित जसा हुता तसा होय गया। महायुद्धविषै राम ने ताहि मारचा, सुग्रीवका दु ख दूर किया। यह बात सुन हनुमानका क्रोध दूर भया। मुखकमल फूला, हर्षित होय कहते भए—

अहो श्रीरामने हमारा बडा उपकार किया। सुग्रीवका कुल अकीर्तिरूप सागरमें डूबे था सो शीघ्र ही उधारा। सुवर्णकलश समान सुग्रीवका गोत्र सो अपयशरूप ऊड कूपमें डूबता हुता। श्रीराम सन्मति के धारकनें गुणरूप हस्तकरि काढचा। या भाति हनुमान बहुत प्रशसा करी अर सुख—सागरविषै मग्न भए। हनुमानकी दूजी स्त्री सुग्रीवकी पुत्री पद्मरागा पिताके शोकका अभावसुन हर्षित भई। ताके बडा उत्साह भया। दान पूजा आदि अनेक शुभ काय किए। हनुमानके घरविषै अनगकुसुमाके घर खरदूषणका शोक भया अर पद्मरागाके सुग्रीवका हर्ष भया। या भाति विषमताकू प्राप्त भए घरके लोग तिनको समाधानकर हनुमान किहकधापुरकू सन्मुख भए। महा ऋद्धिकर युक्त बडी सेना सू हनुमान चाल्या। आकाशविषै अधिक शोभा भई। महारत्नमई हनुमानका विमान ताकी किरणनि

निकरि सूर्यकी प्रभा मंद होय गई हनुमानकूं चालता सुन अनेक राजा लार भए। जैसे इन्द्र की लार बडे बडे देव गमन करें। आगे पीछे दाहिनो बाईं ओर अनेक राजा चाले जाय हैं। विद्याधरनिके शब्द करि आकाश शब्दमई होयगया। आकाशगामी अश्व, अर गज, तिनके समूहकरि आकाश चित्रामरूप होय गया। महातुरगनिकरि संयुक्त, ध्वजानि कर शोभित सुन्दर रथ, तिनकर आकाश शोभायमान भासता भया। अर उज्ज्वल छत्रनिके समूहकर शोभित आकाश ऐसा भासै मानो कुमुदनिका वन ही है। अर गम्भीर दुंदुभिनिके शब्दनिकरि दशोदिशा ध्वनि रूप (प्रतिध्वनिरूप) होय गईं, मानो, मेघ गाजै है। अर अनेकवर्णके आभूषण तिनकी ज्योतिके समूहकरि आकाश नाना रंगरूप होय गया, मानो काहू चतुर रंगरेजाका रंगावस्त्र है। हनुमानके वादित्रनिका नाद सुन कपिवंशी हर्षित भए, जैसे मेघ की ध्वनि सुन मोर हर्षित होय। सुग्रीवने सब नगरकी शोभा कराई, हाट बाजार उजाले, मन्दिरनिपर ध्वजा चढाई, रत्ननिके तोरणनिकर द्वार शोभित किए, हनुमानके सब सन्मुख गए। सबका पूज्य देवनिकी न्याई नगरविषै प्रवेश किया। सुग्रीवके मन्दिर आए। सुग्रीवने बहुत आदर किया, अर श्रीराम का समस्त वृत्तांत कहा। तब ही सुग्रीवादिक हनुमान सहित परम हर्षकूं धरते श्रीरामके निकट आए। सो हनुमान रामकूं देखता भया—महासुन्दर, सूक्ष्म, स्निग्धश्याम, सुगन्ध, वक्र, लम्बे महामनोहर हैं केश जिनके सो लक्ष्मीरूप बेल इनकर मंडित महासुकुमार है अंग जिनका, सूर्य समान प्रतापी, चन्द्र-समान कांतिकारी, अपनी कांतिकर प्रकाशके करणहारे, नेत्रनिको आनन्दके कारण, महा मनोहर, अतिप्रवीण आश्चर्यके करणहारे, मानो स्वर्गलोकतें देवही आए हैं। देदीप्यमान निर्मल स्वर्णके कमल के गर्भ समान है प्रभा जिनकी, सुन्दर श्रवण, सुन्दर नासिका, सर्वांग सुन्दर, मानो साक्षात कामदेव ही है। कमलनयन, नवयौवन, चढे धनुष समान भौंह जिनकी, पूर्णमासीके चन्द्रमा समान वदन, महा मनोहर मूंगा समान लाल होंठ, कुन्दके पुष्प समान उज्ज्वल दन्त, शंख समान कंठ, मृगेन्द्र समान साहस, सुन्दरकटि, सुन्दर वक्षस्थल, महाबाहु, श्रीवत्सलक्षण दक्षिणावर्त गम्भीरनाभि, आरक्त कमल

समान कर चरण, महा कोमल गोल पुष्ट दोऊ जघा, अर कछुवेकी पीठ समान चरणके अग्रभाग,
महा कातिकू धर अरुण नख, अतुल बल, महायोधा, महागम्भीर, महाउदार, समचतुरससस्थान
 बज्रवृषभनाराच सहनन, मानो सब जगत्रयकी सुन्दरता एकत्रकर बनाये हैं। महाप्रभाव सयुक्त, परतु
 सीताके वियोगकरि व्याकुल चित्त, मानो शचीरहित इन्द्र विराजे है, अथवा रोहिणी रहित चन्द्रमा
 तिष्ठ है। रूप सौभाग्य कर मडित, सब शास्त्रनिके वक्ता, महाशूरवीर, जिनकी सर्वत्र कीर्ति फल
रही है, महा बुद्धिमान, गुणवान ऐसे श्रीराम तिनकू देखकर हनुमान आश्चर्यकू प्राप्त भया। तिनके
शरीरकी काति हनुमान पर जा पडी, प्रभाव देखकर वशीभूत भया। पवनका पुत्र मनमें विचारता
भया—ये श्रीराम दशरथके पुत्र, भाई लक्ष्मण लोक श्रेष्ठ, याका आज्ञाकारी, सग्रामविषै जाके चन्द्रमा
समान उज्ज्वल छत्र देख साहसगतिकी विद्या वसाली ताके शरीरत निकस गई। अर इन्द्रहूकू म
देख्या है परन्तु इनकू देखकर परम आनन्दसयुक्त हृदय मेरा नमीभूत भया। या भाति आश्चर्यकू
प्राप्त भया। अजनीका पुत्र, श्रीराम कमललोचन ताके दर्शनकू आगे आया। अर लक्ष्मणने पहिले ही
रामते कह राखी हुती सो हनुमानकू दूरहीत देख उठे, उरसे लगाय मिले, परस्पर अतिस्नेह भया। हनु
मान अति विनयकर बैठा, आप श्रीराम सिंहासन पर विराजे, भुज बधनकरि शोभित है भुजा जिनकी,
महा निर्मल नीलाम्बर मडित, राजनिके चूडामणि, महा सुन्दर हार पहिरे, ऐसे सोहै मानो नक्षत्रनि
सहित चन्द्रमा ही है। अर दिव्य पीताम्बर धारे हार कुण्डल कपूरादि सयुक्त सुमित्राके पुत्र श्रीलक्ष्मण
कैसे सोहै है ? मानो बिजुरी सहित मेघ ही है। अर बानरवशिनिका मुकुट, देवनिसमान पराक्रम जाका,
राजा सुग्रीव कैसा सोहै ? मानो लोकपाल ही है। अर लक्ष्मणके पीछे बैठा विराधित विद्याधर कैसा
सोहै ? मानो लक्ष्मण नरसिंहका चक्ररत्न ही है। रामके समीप हनुमान कैसा शोभता भया ? जैसे पूर्ण
चन्द्रके समीप बुध सोहै है। अर सुग्रीवके दोय पुत्र एक अगज दूजा अगद, सो सुगध माला अर वस्त्र आभू-
षणादिकर मडित ऐसे सोहै मानो यह कुवेर ही है। अर नल नील अर सकडो राजा श्रीरामकी सभाविषै

ऐसे सोहैं जैसे इन्द्रकी सभाविषै देव सोहैं। अनेक प्रकार की सुगन्ध अर आभूषणनिका उद्योत ताकरि सभा ऐसी सोहै मानो इन्द्रकी सभा है। तब हनुमान आश्चर्यकू पाय अतिप्रीतिकू प्राप्त भया, श्रीराम को कहता भया—

हे देव! शास्त्रमें ऐसा कहा है प्रशंसा परोक्ष करिए, प्रत्यक्ष न करिए। परन्तु आपके गुणनिकरि यह मन वशीभूत भया प्रत्यक्ष स्तुतिकरै है। अर यह रीति है कि आप जिनके आश्रय होय तिनके गुण वर्णन करै, सो जैसी महिमा आपकी हमने सुनी हुती तैसी प्रत्यक्ष देखी। आप जीवनिके दयालु, महा पराक्रमी, परम हितू, गुणनिके समूह, जिनके निर्मल यशकर जगत शोभायमान है। हे नाथ! सीताके स्वयम्बर विधानविषै हजारों देव जाकी रक्षा करें ऐसा वज्रावर्त धनुष आपने चढाया। सो वह हम सब पराक्रम सुने। जिनका पिता दशरथ, माता कौशल्या, भाई लक्ष्मण–भरत–शत्रुघ्न, स्त्रीका भाई भामंडल, सो राम जगत्पति तुम धन्य हो! तिहारी शक्ति धन्य। तिहारा रूप धन्य, सागरावर्त धनुषका धारक लक्ष्मण सो सदा आज्ञाकारी धन्य यह धीर्य, धन्य यह त्याग, जो पिताके वचन पालिवे अर्थ राज्यका त्यागकर महा भयानक दंडकवनमें प्रवेश किया। अर आप हमारा जैसा उपकार किया तैसा इन्द्र हू न करै। सुग्रीवका रूपकर साहसगति आया हुता सुग्रीवके घरमें, सो आप कपिवंशका कलंक दूर किया। आपके दर्शनकर वैताली विद्या साहसगतिके शरीरतैं निकस गई। आप युद्धविषै ताहि हत्या सो आपने तो हमारा बडा उपकार किया। अब हम कहा सेवा करैं? शास्त्रकी यह आज्ञा है जो आपसों उपकार करै अर ताकी सेवा न करै ताके भावशुद्धता नाहीं। अर जो कृतघ्न उपकार भूलै सो न्यायधर्मतैं बहिर्मुख है, पापीनिविषै महापापी है, अर पराधीनमें पारधी है, निर्दई है, सो वात सत्पुरुष संभाषण न करैं। तातैं हम अपना शरीरहू तजकर तिहारे कामकू उद्यमी हैं। मैं जाय लंकापतिकू समझाय तिहारी स्त्री तिहारे लाऊंगा। हे राघव! महाबाहु! सीताका मुखरूप कमल पूर्णमासीके चन्द्रमा समान कांतिका पुंज, आप निस्संदेह शीघ्र ही सीता देखोगे। तब जाम्बूनद मंत्री हनुमानकू परम हित

के वचन कहता भया। हे वत्स वायुपुत्र! हमारे सबनके एक तूही आश्रय है, सावधान लंकाकूं जाना अर काहूसों कदाचित विरोध न करना। तब हनुमान कही आपकी आज्ञा प्रमाण ही होयगा।

अथानन्तर हनुमान लंका चलिबेकूं उद्यमी भया। तब राम अति प्रीतिकूं प्राप्त भए। एकांतमें कहते भए—हे वायुपुत्र! सीताकूं ऐसे कहियो कि हे महासती! तिहारे वियोगकरि रामका मन एक क्षण भी सातारूप नाहीं। अर रामने यों कही—ज्यों लग तुम पराए वश हो त्यों लग हम अपना पुरुषार्थ नाहीं जाने हैं। अर तुम महानिर्मल शील करि पूर्ण हो, अर हमारे वियोगकरि प्राण तजा चाहो हौ, सो प्राण तजो मति। अपना चित्त समाधान रूप राखहु। विवेकी जीवनिकूं आर्त्त रौद्रत प्राण न तजने। मनुष्यदेह अति दुर्लभ है। ताविषै जिनेंद्रका धर्म दुर्लभ है। ताविषै समाधिमरण दुर्लभ है। जो समाधिमरण न होय तो यह मनुष्य देह तुषवत असार है। अर यह मेरे हाथकी मुद्रिका जाकर ताहि विश्वास उपजै सो लेजावहु। अर उनका चूडामणि महा प्रभावरूप हमपै ले आइयो। तब हनुमान कही जो आप आज्ञा करोगे सो ही होयगा। ऐसा कहकर हाथ जोड नमस्कार कर, बहुरि लक्ष्मणतें नमीभूत होय बाहिर निकस्या। विभूतिकर परिपूर्ण, अपने तेजकरि सर्वदिशाकूं उद्योत करता सुग्रीवके मंदिर आया। अर सुग्रीवसों कही—जौलग मेरा आवना न होय तौलग तुम बहुत सावधान यहां ही रहियो। या भांति कहकर सुंदर है शिखर जाके ऐसा जो विमान तापर चढ्या। ऐसा शोभता भया जैसा सुमेरुके ऊपर जिनमंदिर शोभै। परमज्योति करि मंडित, उज्ज्वल छत्रकर शोभित, हंससमान उज्ज्वल चमर जापर ढुरे हैं, अर पवनसमान अश्व चालते, पर्वतसमान गज, अर देवनिकी सेना समान सेना ताकरि संयुक्त। या भांति महा विभूतिकरि युक्त आकाशविषै गमन करता रामादिक सबने देख्या। गौतमस्वामी राजा श्रेणिकतें कहै हैं—हे राजन! यह जगत नानाप्रकारके जीवनिकरि भर्‍या है, तिनमें जो कोई परमार्थके निमित्त उद्यम करै है सो प्रशंसायोग्य है, अर स्वार्थतें जगतही भरा है। जे पराया उपकार करें ते कृतज्ञ है, प्रशंसायोग्य है। अर जे निःकारण उपकार करै हैं उनके

तुल्य इन्द्रचन्द्र कुवेर भी नाहीं। अर जे पापी कृतघ्नी पराया उपकार लोपे हैं वे नरक निगोदके पात्र हैं अर लोक निंद्य हैं।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रंथ ताकी भाषावचनिकाविषै हनुमानका लंकाकी दिशा गमन वर्णन करनेवाला उनचालीसवां पर्व पूर्ण भया ॥ ४९ ॥

अथानन्तर अंजनीका पुत्र आकाशविषै गमन करता परम उदयकूं धरे कैसा शोभता भया? मानो बहिन समान जानकी, ताहि लायवेकूं भाई भामंडल जाय है। कैसे हैं हनुमान? श्रीरामकी आज्ञाविषै प्रवर्तै हैं, महा विनयरूप, ज्ञानवंत शुद्धभाव, रामके कामका चित्तमें उत्साह। सो दिशा मंडल अवलोकते, लंकाके मार्गविषै राजा महेन्द्रका नगर देखते भये, मानो इन्द्रका नगर है। पर्वतके शिखरपर नगर बसै है। जहां चन्द्रमा समान उज्ज्वल मंदिर हैं। सो नगर दूरहीतैं नजर आया। तब हनुमानने देखकरि मनमें चितया यह दुर्बुद्धि महेन्द्रका नगर है, वह यहां तिष्ठै है, मेरा काहेका नाना? मेरी माताको जानें संताप उपजाया था। पिता होयकर पुत्रीका ऐसा अपमान करै, जो जाने नगरमें न राखी। तब माता बनमें गई जहां अनंतगति मुनि तिष्ठै हुते। तिनने अमृतरूप वचन कहकर समाधान करी, सो मेरा उद्यानविषै जन्म भया, जहां कोई बन्धु नाहीं। मेरी माता शरणे आवे अर यह न राखें, यह क्षत्रीका धर्म नाहीं। तातैं याका गर्व हरूं। तब क्रोधकर रणके नगारे बजाए अर ढोल बजाते भए, शंखनिकी ध्वनि भई, योधानिके आयुध झलकने लगे। राजा महेन्द्र परचक्र आया सुनकर सब सेना सहित बाहर निकस्या। दोऊ सेनाविषै महायुद्ध भया। महेन्द्र रथमें चढा। माथे छत्र फिरता धनुष चढाय हनुमानपर आया। सो हनुमानने तीन बाणनिकरि ताका धनुष छेद्या, जैसे योगीश्वर तीन गुप्ति कर मानकूं छेदैं। बहुरि महेन्द्रने दूजा धनुष लेवेका उद्यम किया ताके पहिलेही बाणनिकरि ताके घोड़े छुटाय दिए सो रथके समीप भ्रमै, जैसे मनके प्रेरे इन्द्रिय विषयनिमें भ्रमैं। बहुरि

महेन्द्रका पुत्र विमानमें बैठ हनुमानपर आया। सो हनुमानके अर वाके बाण, चक्र, कनक इत्यादि अनेक आयुधनिकरि परस्पर महा युद्ध भया। हनुमानने अपनी विद्याकरि वाके शस्त्र निवारे, जैसे योगीश्वर आत्मचिन्तवनकर परीषहके समूहकू निवारे। ताने अनेक शस्त्र चलाये सो हनुमानके एकहू न लाग्या, जैसे मुनिको कामका एक भी बाण न लागे। जैसे तृणनिके समूह अग्निमें भस्म होय तैसे महेन्द्रके पुत्रके सब शस्त्र हनुमानपर विफल गए। अर हनुमानने ताहि पकडा, जैसे सर्पको गरुड पकडे। तब राजा महेन्द्र महारथी पुत्रकू पकडा देख महा क्रोधायमान भया, हनुमानपर आया, जैसे साहसगति रामपर आया हुता। हनुमानहू महा धनुषधारी, सूर्यके रथ समान रथपर चढा, मनोहर है उरविषै हार जाके, शूरवीरनिमें महाशूरवीर, नानाके सन्मुख भया। सो दोऊनिमें करोत कुठार खडग बाण आदि अनेक शस्त्रनिकरि पवन अर मेघकी न्याई महा युद्ध भया। दोऊ सिंह समान महा उद्धत, महा कोपके भरे, बलवंत, अग्निके कणसमान रक्तनेत्र, दोऊ अजगर समान भयानक शब्द करते परस्पर शस्त्र चलावत, गर्वहास संयुक्त प्रकट है शब्द जिनके, परस्पर ऐसे शब्द करै है धिक्कार तेरे शूरपने को, तू कहा युद्ध करै जाने? इत्यादि वचन परस्पर कहते भए। दोऊ विद्याबलकरि युक्त, परम युद्ध करते बारम्बार अपने लोगनिकरि हाकार जय जयकारादिक शब्द करावते भए। राजा महेन्द्र महा विक्रिया शक्तिका धारक, क्रोधकर प्रज्ज्वलित है शरीर जाका, सो हनुमानपर आयुधनिके समूह डारता भया। भुषुण्डी, फरसा, बाण, शतघ्नी, मुद्गर, गदा, पर्वतनिके शिखर, शालवृक्ष बटवृक्ष इत्यादि अनेक आयुध हनुमानपर महेन्द्र चलाए, सो हनुमान व्याकुलताकू प्राप्त न भया, जैसे गिरिराज महा मेघके समूह करि कम्पायमान न होय। जेते महेन्द्रने बाण चलाए सो हनुमानने उनको विद्याके प्रभावकरि सब चूर डारे। बहुरि अपने रथतै उछल महेन्द्रके रथमें जाय पडे। दिग्गजकी सूंड समान अपने जे हाथ तिनकरि महेन्द्रकू पकड लिया अर अपने रथमें आए। शूरवीरनिकरि पाया है जीतका शब्द जाने, सबही लोक प्रशंसा करते भए। राजा महेन्द्र हनुमानकू महाबलवान परम उदयरूप देख महा सौम्य

वाणीकर प्रशसा करता भया–रे पुत्र ! तेरी महिमा जो हमने सुनी हुती सो प्रत्यक्ष देखी। मेरा पुत्र प्रसन्नकीर्ति जो अब तक काहूने न जीता, रथनूपुरका स्वामी राजा इन्द्र ताकरि न जीता गया, विजियार्ध-
गिरिके निवासी विद्याधर तिनमे महाप्रभाव सयक्त, सदा महिमाकू धर मेरा पुत्र सो तने जीता, अर पकडा। धन्य पराक्रम तेरा। महा धीर्यको धरे तेरे समान और पुरुष नाहीं। अर अनुपमरूप तेरा अर सग्राम विषै अदभुत पराक्रम। हे पुत्र हनुमान ! तूने हमारे सब कुल उद्योत किये। तू चरमशरीरी अवश्य योगीश्वर होयगा। विनय आदि गुणनिकरि युक्त, परम तेजकी राशि, कल्याणमूर्ति कल्पवृक्ष प्रकट भया है। तू जगतविषै गुरुकुलका आश्रय, अर दु खरूप सूर्यकर जे तप्तायमान हैं तिनकू मेघ समान। या भांति नाना महेन्द्रने अति प्रशसा करी, अर आख भर आई, अर रोमाच होय आए, मस्तक चूमा, छातीसे लगाया। तब हनुमान नमस्कार कर हाथ जोड अति विनयकर क्षमा करावते भए। एकक्षणमे और ही होय गए। हनुमान कहे है–हे नाथ ! मै बाल बुद्धिकर जो तिहारा अविनय किया सो क्षमा करहु। अर श्रीरामका किहकधापुर आवनेका सकल वृत्तात कहा। आप लकाकी ओर जावनेका वृत्तात कहा। अर कही मैं लका होय कार्यकर आऊ हू। तुम किहकधापुर जावो, रामकी सेवा करो। ऐसा कहिकर हनुमान आकाशके मार्ग लकाकू चाले, जैसे स्वर्गलोकको देव जाय। अर राजा महेन्द्र राणी सहित तथा अपने प्रसन्नकीर्ति पुत्र सहित अजनी पुत्रीके गया, अजनीको माता पिता अर भाईका मिलाप भया सो अति हर्षित भई। बहुरि महेन्द्र किहकधापुर आए सो राजा सुग्रीव विराधित आदि सन्मुख गए, श्रीरामके निकट लाए। राम बहुत आदरसे मिले। जे राम सारिखे महत पुरुष महातेज प्रतापरूप निर्मलचित्त हैं, अर जिनके पूर्वजन्म विषै दान व्रत तप आदि पुण्य उपार्जे हैं, तिनकी देव विद्याधर भूमिगोचरी सब ही सेवा करै। जे महा गर्ववत बलवत पुरुष हैं, ते सब तिनके वश होवे तातै सब प्रकार अपने मनको जीत सत्कर्ममे यत्नकर। हे भव्यजीव हो ! ता सत्कर्मके फल कर सूर्य समान दीप्तिकू प्राप्त होहु।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रंथ ताकी भाषावचनिका विषै म द्रका अर अंजनीका मिलाप बहुरि श्रीरामके निकट आवनेका यारूयानवर्णन करनेवाला पचासवां पर्व पर्ण भया ॥५ ॥

अथानन्तर हनुमान आकाशविषै विमानमें बैठ जाय है, अर मार्गमें दधिमुख नामा द्वीप आया। तामें दधिमुख नामा नगर, जहां दधि समान उज्ज्वल मन्दिर, सुन्दर सुवरणके तोरण, कालो घटा समान सघन उद्यान, पुष्पनि करि युक्त स्फटिक मणि समान उज्ज्वल जलकी भरी वापिका, सोपाननि कर शोभित, कमलादिक कर भरी। गौतमस्वामी राजा श्रेणिकसूं कहे है—हे राजन! या नगरतें दूर वन, तहां तृण बेल वृक्ष काटनिके समूह, सूखे वृक्ष दुष्ट सिंहादिक जीवनिके नाद, महाभयानक प्रचण्ड पवन, जाकरि वृक्ष गिरपडे, सूख गये है सरोवर जहां, अर गृद्ध उल्लूक आदि दुष्ट पक्षी विचरै, ता वनविषै दोय चारणमुनि अष्टदिनका कायोत्सर्ग धरे खडे थे। अर तहांतें चारकोस तीन कन्या महामनोग्य नेत्र जिनके जटा धरें, सफेद वस्त्र पहरे, विधिपूर्वक महा तपकर निर्मल चित्त जिनका। मानो कन्या तीन लोककी आभूषण ही है।

अथानन्तर बनमें अग्नि लागी। सो दोऊ मुनि धीर वीर वृक्षकी न्याई खडे। समस्त वन दावानल करि जरे। ते दोऊ निर्ग्रंथ योगयुक्त, मोक्षाभिलाषी, रागादिकके त्यागी, प्रशांतवदन, शांतचित्त, निष्पाप, अवांछक, नासादृष्टि, लम्बी है भुजा जिनकी, कायोत्सर्ग धरे। जिनके जीवना मरना तुल्य, शत्रु मित्र समान, कांचन पाषाण समान। सो दोऊ मुनि जरते देख हनुमान कम्पायमान भया। वात्सल्य गुणकरि मंडित, महाभक्ति संयुक्त, वैयावृत करिवेको उद्यमी भया। समुद्रका जल लेयकर मूसलाधार मेह बरसाया। सो क्षणमात्रविषै पृथ्वी जलरूप होय गई। वह अग्नि ता जलकरि हनुमानने ऐसे बुझाई जैसे मुनि क्षमाभाव रूप जलकरि क्रोधरूप अग्निकूं बुझावै। मुनिनका उपसर्ग दूर कर तिनकी पूजा करता भया। अर वे तीनों कन्या विद्या साधतीं हुतीं, सो दावानलके दाहकर व्याकुलताका कारण

भया हुता सो हनुमानके मेघकर वनका उपद्रव मिटा, सो विद्या सिद्धि भई। सुमेरुकी तीन प्रदक्षिणा करि मुनिनके निकट आयकर नमस्कार करती भई। अर हनुमानकी स्तुति करती भई—अहो तात! धन्य तिहारी जिनेश्वरविषे भक्ति! तुम काहू तरफ जाते हुते सो साधुनिकी रक्षा करी। हमारे कारण करि वनमे उपद्रव भया सो मुनि ध्यानारूढ ध्यानत न डिगे। तब हनुमानने पूछी तुम कौन अर निर्जन स्थानकमे कौन कारण रहो हो? तब सबनिमे बडी बहिन कहती भई—यह दधिमुख नामा नगर, जहां राजा गन्धर्व, ताको हम तीन पुत्री—बडी चन्द्ररेखा, दूजी विद्युतप्रभा, तीजी तरंगमाला, सबगोत्रकू वल्लभ। सो जेते विजयार्ध विद्याधर राजकुमार हैं वे सब हमारे विवाहके अर्थ हमारे पितासू याचना करते भए। अर एक दुष्ट अंगारक सो अति अभिलाषी निरंतर कामके दाहकर आतापरूप तिष्ठै। एक दिन हमारे पिताने अष्टांग निमित्तके वेत्ता जे मुनि तिनकू पूछी—हे भगवान! मेरी पुत्रिनिका वर कौन होयगा? तब मुनि कही जो रणसंग्रामविषै साहसगतिकू मारेगा, सो तेरी पुत्रिनिका वर होयगा। तब मुनिके अमोघ वचन सुनकर हमारे पिताने विचारी, विजयार्धकी उत्तर श्रेणीविषै जो साहसगति ताहि कौन मार सकै। जो ताहि मारै सो मनुष्य या लोकविषै इन्द्रके समान है। अर मुनिके वचन अन्यथा नाहीं। सो हमारे माता पिता अर सकल कुटुम्ब मुनिके वचनपर दृढ भए। अर अंगारक निरंतर हमारे पितासू याचना करै सो पिता हमकू न देय। तब वह अति चिंतावान दुःखरूप वरकै प्राप्त भया। अर हमारे यही मनोरथ उपजा जो वह दिन कब होय हम साहसगतिके हनिवे वारेकू देखे। सो मनोनुगामिनी नाम विद्या साधिवेकू या भयानक वनविषै आई। सो मनोनुगामिनी
नामा विद्या साधते हमकू बारवां दिन है, अर मुनिनिको आठमा दिन है। आज अंगारकने हमको देख क्रोधकर वनविषै अग्नि लगाई। जो छहवर्ष कछु इक अधिक दिननिविषै विद्या सिद्ध होय। हमको उपसर्गत भय न करवेकर बारह ही दिनविषै विद्या सिद्ध भई। या आपदाविषै हे महाभाग! जो तुम सहाय न करते तो हमारा अग्निकर नाश होता, अर मुनि भस्म होते। तात तुम धन्य हो। तब हनु-

मान कहते भए तिहारा उद्यम सफल भया । जिनके निश्चय होय तिनकू सिद्ध होय ही । धन्य निर्मल बुद्धि, तिहारी बडे स्थानकविषै मनोरथ, धन्य तिहारा भाग्य । ऐसा कहकर श्रीरामके किहकधापुर आवनेका सकल वृत्तांत कहा अर आपने रामकी आज्ञा प्रमाण लंका जायवेका वृत्तांत कहा । ताही समय वनके दाह शांति होयवेका अर मुनि उपसर्ग दूर होनेका वृत्तांत राजा गन्धर्व सुन हनुमानपै आया । विद्याधरनिके योगकरि वह वन नन्दनवन जैसा शोभता भया । अर राजा गन्धर्व हनुमानके मुखकरि श्रीरामका किहकधापुर विराजनेका हाल सुन अपनी पुत्रीनिसहित श्रीरामके निकट आया । पुत्री महा विभूतिकर रामकू परणाई । राम महा विवेकी, ये विद्याधरनिकी पुत्री, अर महाराज विभूति कर युक्त है तोहू सीता बिना दशो दिशा शून्य देखते भए । समस्त पृथ्वी गुणवान जीवनितैं शोभित होय है । अर गुणवंतनि बिना नगर गहन वन तुल्य भासै है । कैसे है गुणवान जीव ? महा मनोहर है चेष्टा जिनकी । अर अति सुन्दर है भाव जिनके । ये प्राणी पूर्वोपार्जित कर्मके फलकरि सुख दुख भोगवे है । तातै जो सुखके अर्थी है वे जिनरूप सूर्यकरि प्रकाशित जो पवित्र जिनमार्ग ताविषै प्रवर्त्तै है ।

इति श्री रविषेणाचार्यविरचित महा पद्मपुराण संस्कृतग्रन्थ ताकी भाषावचनिकाविषै रामको राजा गंधर्वकी कन्यानिका लाभ वर्णन करनेवाला इक्यावनवां पर्व पूर्ण भया ॥ ५१ ॥

अथानन्तर महा प्रतापकर पूर्ण महाबली हनुमान जैसे सुमेरुको सौधर्म जाय तैसे त्रिकूटाचलको चला । सो आकाशविषै जाती जो हनुमानकी सेना ताका महाधनुषके आकार मायामई यंत्रकर निरोध भया ।
तब हनुमान अपने समीपी लोकनितै पूछी जो मेरी सेना कौन कारण आगे चल न सके । यहां गर्वका पर्वत असुरनिका नाथ चमरेन्द्र है अथवा इन्द्र है । तथा या पर्वतके शिखिरविषै जिनमंदिर है अथवा चरमशरीरी मुनि है । तब हनुमानके ये वचन सुनकर पृथुमति मंत्री कहता भया—हे देव ! यह क्रूरतासंयुक्त मायामई यंत्र है । तब आप दृष्टिधर देखा कोटविषै प्रवेश कठिन जाना । मानो यह कोट विरक्त

स्त्रीके मन समान दु प्रवेश ह । अनक आकारकू धरे, वक्रताकरि पूण, महा भयानक, सवभक्षी, पूतली, जहा देव भी प्रवेश न कर सक । जाज्वल्यमान तीक्ष्ण ह अग्रभाग जिनके ऐसे करोतनिके समूहकर मण्डित, जिह्वाके अग्रभाग करि रुधिरकू उगलते ऐसे हजारा सप तिनकरि भयानक फण, ते विक राल शब्द कर ह अर विषरूप अग्निके कण बरसे ह, विषरूप धूमकरि अधकार होय रहा है। जो कोई मूख साम तपणाके मानकरि उद्धत भया प्रवश कर ताहि मायामई सप ऐसे निगल जसे सप मेंढकको निगलें । लकाके कोटका मडल जोतिष चक्रत हू ऊचा, सव दिशानिविष दुलघ, अर देखा न जाय । प्रलयकालके मेघ समान भयानक शब्द कर सयुक्त, अर हिंसारूप ग्र थनिकी याई अत्यन्त पाप कमनिकरि निरमापा । ताहि देख कर हनुमान विचारता भया—यह मायामई कोट राक्षसनिके नाथने रचा ह सो अपनी विद्याकी चातयता दिखाई ह । अर अब मैं विद्याबलकरि याहि उपाडता सता राक्षस निका मद हरू, जसे आत्मध्यानी मुनि मोह मदकू हरे । तब हनुमान युद्धविष मन कर समुद्र समान जो अपनी सेना सो आकाशविष राखी । अर आप विद्यामई वक्तर पहिन हाथविष गदा लेकर माया मई पूतलीके मुखविष प्रवेश किया । जसे राहुके मुखविष सूय प्रवेश कर । अर वा मायामई पूतलीकी कक्षि सोई भई पवतकी गुफा, अधकारकर भरी, सो आप नरसिहरूप तीक्ष्ण नखनिकर बिदारी अर गदाक घातकरि कोट चूरण किया, जस शक्लध्यानी मुनि निर्मल भावनिकरि घातिया कमकी स्थिति चूरण कर ।

अथानन्तर यह विद्या महा भयकर भगकू प्राप्त भई । तब मेघकी ध्वनि समान भई, विद्या भाग गई, कोट विघट गया, जसे जिनेन्द्रके स्तोत्रकरि पापकम विघट जाय । तब प्रलयकालके मेघ समान भयकर शब्द भया । मायामई कोट बिखरा देख कोटका अधिकारी वज्रमुख महा क्रोधायमान होय शीघ्र ही रथपर चढ हनुमान पर विना विचारे मारवेकू दौड्या । जस सिह अग्निकी ओर दौडे । जब वाहि आया देख पवनका पुत्र महा योधा युद्ध करिवेकू उद्यमी भया । तब दोऊ सेनाके योधा प्रचण्ड नाना

प्रकारके वाहननिपर चढे, अनेक प्रकारके आयुध धरे परस्पर लडने लगे। बहुत कहने करि कहा ? स्वामी के काय ऐसा युद्ध भया जसा मानके अर मादवके युद्ध होय। अपने २ स्वामीकी दृष्टिविष योधा गाज गाज युद्ध करत भए जीवनविष नाहीं है स्नेह जिनके। फिर हनुमानक सुभटनि कर वजमुखके योधा क्षणमात्रविष दशोदिशाकू भाजे। अर हनुमानने सूर्यहूते अधिक है ज्योति जाकी, ऐसे चक्र शस्त्रकरि वजमखका सिर पृथ्वीपर डारा। यह सामान्य चक्र है। सकी अर्धचक्रिनिके सुदर्शनचक्र होय है। युद्ध विष पिताका मरण देख लकासु दरी, वजमुखकी पुत्री पिताका जो शोक उपजा हुता ताहि कष्टत निवार, क्रोधरूप विषकी भरी तेज तुरग जुते है जाके, ऐसे रथपर चढी। कुण्डलनिके उद्योतकरि प्रकाशरूप है मुख जाका वक्र है भौंह जाकी, उल्कापातका स्वरूप, सूर्य मडल समान तेजधारी, क्रोध के वश कर लाल है नत्र जाके, क्रूरताकर डसे है किदूरी समान होठ जान, मानो क्रोधायमान शची ही है। सो हनमानपर दौडी, अर कहती भई—रे दुष्ट ! म तोहि देखा, जो तोम शक्ति है तो मोत युद्धकर। जो क्रोधायमान भया रावण न कर सो म करूगी। हे पापी ! तोहि यममन्दिर पठाऊगी। तू दिशाकू भूल अर अनिष्ट स्थानकू प्राप्त भया। ऐसे शब्द कहती वह शीघ्रही आई। सो आवतीका हनुमानने छत्र उडाय दिया तब वान बाणनिकर इनका धनुष तोड डारा। अर वह शक्तिलेय चलाव ता पहिले हनुमान बीच ही शक्तिकू तोड डारी। तब वह विद्याबल कर गम्भीर, बजदडसमान बाण अर फरसी, बरछी चक्र शतघ्नी मूसल शिला इत्यादि वायुपुत्रके रथपर बरसावती भई जसे मेघमाला पवतपर जलकी धारा बरसाव। नानाप्रकारके आयुधनिक समूहकरि वान हनुमानकू बेढा
जसे मेघपटल सूर्यकू आ च्छाद। तब हनुमान विद्याकी सब विधिविष प्रवीण महापराक्रमी, ताने शत्रुनिके समूह अपने शस्त्रनिकर आप तक न आवने दिये। तोमरादिके बाणनिकरि तोमरादिक बाण निवारे अर शक्तित शक्ति निवारी। या भाति परस्पर अतियुद्ध भया। याके बाण वाने निवारे, वाके बाण याने निवारे। बहुत देरतक युद्ध भया, कोई नाहीं हार। सो गोतम स्वामी राजा श्रेणिकसू कहे है—

हे राजन ! हनुमानको लकासुन्दरी बाणशक्ति इत्यादि अनेक आयुधनिकरि जीतती भई, अर कामके बाणनिकरि पीडित भई। कसे ह कामके बाण ? ममके विदारण हारे। कसी ह लकासुन्दरी ? साक्षात लक्ष्मीसमान रूपवती, कमलोचन, सौभाग्य गुणनिकरि गर्वित, सो हनुमानके हृदयविष प्रवेश करती भई। जाके कर्ण पर्यंत बाणरूप तीक्ष्ण कटाक्ष नेत्ररूप धनुष त चढे, ज्ञान धीर्यके हरणहारे, महा सुन्दर, दुद्धर मनके भेदनहारे, प्रवीण, अपनी लावण्यताकरि हरी ह सुन्दरताई जिनने। तब हनुमान मोहित होय मनमे चितवता भया—जो यह मनोहर आकार, महाललित, बाहिर तो विद्याबाण अर सामान्य बाणतिनकरि मोहि भेद ह, और आभ्यतर मरे मनकू कामके बाणकरि बींध ह। यह मोहि बाह्याभ्यतर हण ह, तन मनको पीडे ह। या युद्धविष याके बाणनिकरि मत्यु होय तो भली परन्तु याके बिना स्वर्गविष जीवना भला नाहीं। या भाति पवनपुत्र मोहित भया, अर वह लकासुन्दरी याके रूपकू देख मोहित भई। क्रूरतारहित करुणाविष आया ह चित्त जाका, तब जो हनुमानके मारिवेकू शक्ति हाथमे लीनी हुती सो शीघ्रही हाथत भूमिमे डार दई, हनुमानपर न चलाई। कसे ह हनुमान ? प्रफुल्लित ह तन अर मन जिनका, अर कमलदलसमान ह नेत्र जिनके, अर पूर्णमासीके चन्द्रमा समान ह मुख जिनका, नवयौवन, मुकुटविष वानर का चिह्न, साक्षात कामदेव ह। लकासुन्दरी मनमे चितवती भई—याने मेरा पिता मारचा, सो बडा अपराध किया। यद्यपि द्वेषी ह तथापि अनुपम रूपकर मेरे मनकू हर ह। जो या सहित कामभोग न सेऊ तो मेरा जन्म निष्फल ह तब विह्वल होय एक पत्र तामे अपना नाम सो बाणकू लगाय चलाया, ताम ये समाचार हुते—हे नाथ ! देवनिके समूहकरि न जीती जाऊ ऐसी म, सो तुमने कामके बाणनिकरि जीती। यह पत्र बाच हनुमान प्रसन्न होय। रथत उतर जायकर तासू मिले, जस काम रतिसे मिल। वह प्रशातवर भई सती आसू डारती तातके मरणकर शोकरत। तब हनुमान कहते भए—हे चन्द्रवदनी ! रुदन मत कर, तेरे शोककी निवृत्ति होहु। तेरे पिता परम क्षत्री, महा शूरवीर तिनकी यही रीति, जो स्वामीकार्यके अर्थ युद्धमे प्राण तज।

अर तुम शास्त्रविष प्रवीण हो सो सब नीके जान हो। या राज्यविष यह प्राणी कर्मनिके उदयकर पिता पुत्र बाधवादिक सबको हणे ह। तात तुम आर्तध्यान तजो। ये सकल प्राणी अपना उपार्जा कर्म
 भोगव ह। निश्चय मरणका कारण आयुका अ त ह अर परजीवनिमित्त मात्र ह। इन वचननिकरि
 लकासु दरी शोकरहित भई। या भाति या सहित कसी सोहती भई? जस पूर्णच द्रसे निशा सोह। प्रेमके
 समूहकर पूर्ण दोऊ मिलकर सग्रामका खेद विस्मरण होय गए, दोऊनिका चित्त परस्पर प्रीतिरूप होय गया। तब आकाशविष स्तम्भिनी विद्याकर कटक थाभा। अर सुन्दर मायामई नगर बसाया, जसी साझकी आरक्तता होय ता समान लाल, देवनके नगरसमान मनोहर, जामे राजमहल अत्यन्त सुन्दर, सो हाथी घोडे विमान रथोपर चढे बडे बडे राजा नगरमे प्रवेश करते भए। नगर ध्वजानिकी पक्ति कर शोभित, सो यथायोग्य नगरमें तिष्ठ। महाउत्साहस सयुक्त रात्रिमें शूरवीरनिके युद्धका वर्णन जसा भया तसा सामत करते भए। हनुमान लकासु दरीके सग रमता भया।

अथानन्तर प्रभात ही हनुमान चलवेकू उद्यमी भए। तब लकासु दरी महाप्रेमकी भरी ऐसें कहती भई—हे कत! तुम्हारे पराक्रम न सहे जाय ऐसे अनेक मनुष्योके मुख रावणने सुने होवेंगे। सो सुनकर अतिखेदखिन्न भया होयगा। तात तुम लका काहेको जावो। तब हनुमानने इसे सकल वृत्तात कहा। जो रामने वानरवशियोका उपकार किया सो सबोका प्रेरा रामके प्रति उपकार निमित्त जाऊ हू। हे प्रिये! रामका सीतासे मिलाप कराऊ, राक्षसनिका इन्द्र अन्याय मार्गसे हर ले गया ह, सो सर्वथा म लाऊगा। तब ताने कहा—तुम्हारा और रावणका वह स्नेह नाहीं, स्नेह नष्ट भया। सो जस स्नेह कहिए तल ताके नष्ट होयवेकरि दीपककी शिखा नाहीं रहे ह तस स्नेहके नष्ट होयवेकरि सम्बन्ध का व्यवहार नाही रहे ह। अब तक तुम्हारा यह व्यवहार था—तुम जब लका आवते तब नगर उछा वत गली गलीमें हर्ष होता, मन्दिर ध्वजानिकी पक्तिसे शोभित होते, जस स्वर्गमें देव प्रवेश कर तस तुम प्रवेश करते। अब रावण प्रचड दशानन तुमविष द्वेषरूप ह सो नि सदेह तुमकू पकडेगा। तात

जब तिहारे उनके सधि होय तब मिलना योग्य ह। तब हनुमान बोले हे विचक्षणे! जायकर ताका अभिप्राय जानना चाहू हू। और वह सीता सती जगतमे प्रसिद्ध ह, अर रूपकर अद्वितीय ह। जाहि देखकर रावणका सुमेरुसमान अचल मन चला ह। वह महा पतिवता हमारे नाथकी स्त्री, हमारी माता समान ताका दर्शन किया चाहू हू। या भाति हनुमानने कही और सब सेना लकासुन्दरीके समीप राखी और आप तो विवकिनीसे विदा होयकर लकाको सन्मुख भए। यह कथा गौतम स्वामी राजा श्रेणिकत कह ह—हे राजन! या लोकविष यह बडा आश्चय ह जो यह प्राणी क्षणमात्रमें एक रसको छोडकर दूजे रसमे आ जाय। कभी विरसको छोडकर रसमे आ जाय, कबहू रसको छोडकर विरसमें आ जाय। या जगतविष इन कमनिकी अदभुत चष्टा ह। ससारी सव जीव कर्मोके अधीन ह। जस सूय दक्षणायनसे उत्तरायण आवे तैसे प्राणी एक अवस्थासे दूजी अवस्थामे प्राव।

इति आरविषेणाचायविरचित महापद्मपुराण सस्कृत ग्रथ ताका भाषावचनिकाविष हनुमान लकाम रीका लाभ वणन करनवाला अन्तानासवा पव पूण भया ॥ ५२ ॥

अथानन्तर गौतमस्वामी राजा श्रेणिकत कह ह—हे श्रेणिक! यह पवनका पुत्र महाप्रभावके उदय कर सयुक्त, थोडे ही सवकनि सहित नि शक लकाविष प्रवेश करता भया। बहुरि प्रथमही विभीषण के मदिरमे गया। विभीषणने बहुत स मान किया। फिर क्षणएक तिष्ठकर परस्पर वार्ता कर हनुमान कहता भया—जो रावण आधे भरतक्षेत्रका पति, सवका स्वामी, ताहि यह कहा उचित जो दरिद्र मनुष्य की न्याई चोरी कर परस्त्री लावे। जे राजा ह सो मर्यादाके मूल ह, जस नदीका मूल पवत। राजा ही अनाचारी होय तो सवलोकमे अन्यायकी प्रवत्ति होई। ऐसे चरित्र किए राजाकी सवलोकमें निदा होय। तात जगतके कल्याण निमित्त रावणकू शीघही कहो—न्यायको न उलघे। यह कहो हे नाथ! जगतमे अपयशका कारण यह कम ह। जिससे लोक नष्ट होय सो न करना। तुम्हारे कुल

का निमलचरित्र केवल पथ्वीपर ही प्रशसा योग्य नाहीं, स्वगमे भी देव हाथ जोड नमस्कारकर तिहारे बडोकी प्रशसा कर ह । तिहारा यश सवत्र प्रसिद्ध ह । तब विभीषण कहता भया–मैं बहुत बार भाईकू समभ्भाया, पर तु मान नाहीं । अर जिस दिनसे सीता ले आया उस दिनसे हमस बात भी न कर । तथापि तिहारे वचनसे मैं बहुरि दबाय कर कहूगा । परन्तु यह हठ उससे छूटना कठिन ह । अर आज ग्यारवा दिन ह, सीता निराहार ह जलहू नाहीं लेय ह, तो भी रावणकू दया नाहीं उपजी, या कामत विरक्त नाही होय ह । ए बात सुन कर हनुमानकू अति दया उपजी । प्रमद नामा उद्यान जहा सीता विराज ह, तहा हनुमान गया । ता वनकी सु दरता देखता भया नवीन जे बेलनिक समूह तिनकरि पूण, अर तिनके लाल पल्लव सोह, मानो सु दर स्त्रीके करपल्लव ही ह । अर पुष्पनिके गुच्छो पर भमर ग जार कर ह । और फलनिकरि शाखा नमीभूत होय रही ह, अर पवनसे हाल ह । कमलोकर जहा सरोवर शोभित ह, और ददीप्यमान बेलनिकरि वक्ष वेष्टित ह । मानो वह वन देववन समान ह अथवा भोगभूमि समान ह । पुष्पनिकी मकर दसे मडित मानो साक्षात न दनवन ह । अनेक अदभुतता करि पूण हनुमान कमललोचन वनकी लीला दखता सता सीताके दशन निमित्त आगे गया । चारो तरफ वनमे अवलोकन किया सो दूर हीत सीताकू देखा । सम्यक दशन सहित महासती, ताहि देखकर हनुमान मनमे चितवता भया–यह रामदेवकी परम सु दरी महासती निधूम अग्नि समान असुवनसे भर रहे ह नेत्र जाके, सोच सहित बठी मुखसे हाथ लगाय, सिरके केश बिखर रहे हैं, कश ह शरीर जिसका । सो देखकर हनुमान विचारता भया । ध य रूप या माताका लोकविष, जीते ह सवलोक जिसन, मानो यह कमलसे निकसी लक्ष्मी ही विराज ह । दुखके समुद्रमे डूब रही ह तोहू या समान और कोई नारी नाहीं । मै जसे होय तसे इसे श्रीरामसे मिलाऊ । इसके और रामके काज अपना तन दू, याका और रामका विरह न देखू । यह चितवनकर अपना रूप फेर, मद मद पाव धरता हनुमान आगे जाय श्रीरामकी मुद्रिका सीताके पास डारी । सो शीघही उसे देख रोमाच होय आए

और कछूइक मुख हर्षित भया । सो समीप बैठी थी जो नारिया वे इसकी प्रसन्नताके समाचार जायकर रावणकू कहती भई । सो वह तुष्टायमान होय इनकू वस्त्र रत्नादिक देता भया । और सीताकू प्रसन्नवदन जान कार्यकी सिद्धि चितता भया । सो मदोदरीकू सब अंत पुरसहित सीताप पठाई । सो अपने नाथके वचनसे सब अन्त पुर सहित सीताप आई । सो सीताकू मन्दोदरी कहती भई—

हे बाले! आज तू प्रसन्न भई सुनी सो तने हमपर बडी कृपा करी । अब लोकका स्वामी रावण उसे अंगीकार कर, जसे देवलोककी लक्ष्मी इन्द्रकू भज । ये वचन सुन सीता कोपकर मन्दोदरीसे कहती भई-हे खेचरी! आज मेरे पतिकी वार्ता आई है । मेरे पति आनन्दसे है इसलिये मोहि हर्ष उपजा है । तब मन्दोदरीने जानी इसे अन्न जल किये ग्यारह दिन भए सो वायसे बके है । तब सीता मुद्रिका ल्यावनहारासू कहती भई, हे भाई! मै इस समुद्रके अंतर्द्वीपविषै भयानक वनमें पडी हू सो कोऊ उत्तम जीव मेरा भाई समान अतिवात्सल्य धारणहारा मेरे पतिकी मुद्रिका लेय आया है सो प्रकट दर्शन देहु । तब हनुमान महा भव्य जीव सीताका अभिप्राय जान मनमे विचारता भया जो पहिले पराया उपकार विचारे, बहुरि अतिकायर होय छिप रहे सो अधम पुरुष है । अर जे परजीवको आपदाविषै खेद खिन्न देख पराई सहाय करै तिन दयावन्तोका जन्म सफल है । तब समस्त रावणकी स्त्री मन्दोदरी आदि देखै है । अर दूरहीसे सीताकू देख हाथ जोड सीस निवाय नमस्कार करता भया । कैसा है हनुमान ? महा निशक, कांतिकर चन्द्रमासमान, दीप्तिकर सूर्यसमान, वस्त्र आभूषणकर मंडित, रूपकर अतुल्य, मुकुटमे बानरका चिह्न, चन्दनकर चर्चित है सब अंग जाका, महा बलवान, बज्रवृषभनाराच संहनन, सुन्दर केश, रक्त होठ, कुण्डलके उद्योतकरि महा प्रकाशरूप मनोहर मुख, गुणवान, महाप्रताप संयुक्त सीताके निकट आवता कैसा सोभता भया ? मानो भामंडल भाई लेयवेकू आया है । प्रथम ही अपना कुल गोत्र माता पिताका नाम सुनायकर बहुरि अपना नाम कहा । बहुरि श्रीरामने जो कहा हुता सो सब कहा । अर हाथ जोड विनती करी—हे साध्वी! स्वर्गविमानसमान महलोमें श्रीराम विराजे है ।

परन्तु तिहारे विरहरूप समुद्रमे मग्न काहू ठोर रतिकू नाही पाव ह । समस्त भोगोपभोग तजे मौन धरे तिहारा ध्यान कर ह जस मुनि शुद्धताकू ध्यावे, एकाग्रचित्त तिष्ठ ह । वे वीणाका नाद अर सुन्दर स्त्रियोके गीत कदापि नाही सुन ह । अर सदा तिहारी ही कथा कर ह । तिहारे देखवेके अर्थ कवल प्राणो को धर ह । यह वचन हनुमानके सुन सीता आनदकू प्राप्त भई । बहुरि सजल नेत्र होय कहती भई (सीताके निकट हनुमान महा विनयवान हाथ जोड खडा ह) जानकी बोली—

हे भाई ! दु खक सागरविषे पडी हू अशुभके उदयकरि । पतिके समाचार सुन तुष्टायमान भई । तोहि कहा दू ? तब हनुमान प्रणामकर कहता भया, हे जगतपूज्य ! तिहारे दशन ही से मोहि महा लाभ भया । तब सीता मोती समान आसुनिकी बूद नाखती हनुमानसे पूछती भई—हे भाई ! यह नगर ग्राह आदि अनेक जलचरोकर भरा महा भयानक समुद्र ताहि उलघकर तू कसे आया ? अर साचे कहो मेरा प्राणनाथ तने कहा देख्या ? अर लक्ष्मण युद्धविषे गया हुता सो कुशल क्षेमसू ह । अर मेरा नाथ कदाचित तोहि यह सदेशा कहकर परलोक प्राप्त हुवा होय अथवा जिन मागविषे महा प्रवीण सकल परिग्रहका त्यागकर तप करता होय अथवा मेरे वियोगत शरीर शिथिल होय गया, अर अगरीत मुद्रिका गिर पडी होय यह मेरे विकल्प ह । अब तक मेरे प्रभुका तोसो परिचय न हुता सो कौन भाति मित्रता भई । सो सब मोसू विशेषता कर कहो । तब हनुमान हाथ जोड सिर निवाय कहता भया—हे देवि ! सूयहास खडग लक्ष्मणकू सिद्ध भया अर चन्द्रनखाने धनीप जाय धनीकू क्रोध उपजाया । सो खरदूषण दडकवनविषे युद्ध करवेकू आया । अर लक्ष्मण उसस युद्ध करवेकू गये । सो तो सब वत्तात तुम जानो हो ? बहुरि रावण आया अर आप श्रीरामके पास विराजती हुती । सो रावण यद्यपि सव शास्त्रका वेत्ता हुता, अर धम अधमका स्वरूप जाने हुता, परन्तु आपकू देखकर अविवेकी होय गया । समस्त नीति भूल गया, बुद्धि जाती रही, तिहारे हरिवेके कारण कपटकर सिहनाद किया सो सुनकर राम लक्ष्मणप गये । अर यह पापी तुमकू हर ले आया । बहुरि लक्ष्मण रामसो कही—तुम क्यो आये,

शीघ्र जानकीप जावहु । तब आप स्थानक आए । तुमकू न देखकर महा खेदखिन्न भए । तिहारे हू ढनेके
कारण वनविष बहुत भमे । बहुरि जटायुको मरता देखा तब ताहि णमोकार मन्त्र दिया । अर चार
पद्म पुराण आराधना सुनाय सन्यास देय पक्षीका परलोक सुधारा । बहुरि तिहारे विरहकर महादुखी सोचमें
पडे । अर लक्ष्मण खरदूषणकू हन रामप आया, धीय बधाया, अर चन्द्रोदयका पुत्र विराधित लक्ष्मण
५ ३ से युद्ध ही विष आय मिला हुता । बहुरि सुग्रीव रामप आया । अर साहसगति विद्याधर जो सुग्रीव
का रूपकर सुग्रीवकी स्त्रीका अर्थी भया हुता सो रामकू देख साहसगतिकी विद्या जाती रही । सुग्रीव
का रूप मिट गया । अर साहसगति रामसू लडा सो साहसगतिकू रामने मारा । सुग्रीवका उपकार
किया । तब सबने मोहि बुलाय रामसू मिलाया । अब म श्रीरामका पठाया तिहारे छुडाइवे अर्थ यहाँ आया
हू । परस्पर युद्ध करना नि प्रयोजन ह । कार्यकी सिद्धि सर्वथा नयकर करना । अर लकापुरीका नाथ
दयावान ह, विनयवान ह, धर्म अर्थ कामका वेत्ता ह, कोमल हृदय ह, सौम्य ह, वक्रतारहित ह,सत्यवादी
महाधीरवीर ह, सो मेरा वचन मानेगा । तोहि रामप पठावेगा । याकी कीर्ति महा निर्मल पृथ्वीविष प्रसिद्ध
ह, अर यह लोकापवादत डर ह । तब सीता हर्षित होय हनुमानसे कहती भई—हे कपिध्वज ! तो सरीखे
पराक्रमी धीरवीर विनयवान मेरे पतिके निकट केतेके ह ? तब मन्दोदरी कहती भई—हे जानकी ! तै यह
कहा समझ कर कही । तू याहि न जाने ह तातै ऐसा पूछ ह । या सरीखा भरतक्षेत्रमें कौनह ? या क्षेत्र
में यह एक ही ह । यह महा सुभट युद्धमें कई बार रावणका सहाई भया है । यह पवनका पुत्र अजनी
का सुत रावणका भानजा जमाई ह । चन्द्रनखाकी पुत्री अनगकुसुमा परणी है या एकने अनेक जीते ५७३
ह । सदा लोक याके दर्शनकू बाछ ह । चन्द्रमाकी किरणवत याकी कीर्ति जगतमे फल रही ह । लका
का धनी याहि भाईनित भी अधिक गिन ह । यह हनुमान पृथ्वीविष प्रसिद्ध गुणनिकर पूर्ण ह । परतु
यह बडा आश्चर्य ह कि भूमिगोचरियोका दूत होय आया ह । तब हनुमान कही तुम राजा मयकी पुत्री अर
रावणकी पटराणी दूती होयकर आई हो । जापतिके प्रसादत देवनिकेसे सुख भोगे, ताहि अकार्यविष प्रवर्तते

मन नाहीं करो हो ? और ऐसे कायकी अनुमोदना करो हो ! अपना वल्लभ विषका भरा भोजन कर ताहि नाहीं निवारो हो। जो अपना भला बुरा न जाने ताका जीतव्य पशु समान है। अर तिहारा सौभाग्यरूप सबतै अधिक, अर पति परस्त्रीरत भया ताका दूतीपना करौ हो ! तुम सब बातनिविषै प्रवीण, परमबुद्धिमती हुती सो प्राकृत जीवनिसमान अविधि कार्य करो हो। तुम अर्धचक्रीकी महिषी कहिए पटराणी हो, सो अब मैं महिषी कहिए भैंस समान जानू हूं। यह वचन हनुमानके मुखतै सुन मंदोदरी क्रोधरूप होय बोली—अहो ! तू दोषरूप है, तेरा वाचालपना निरर्थक है। जो कदाचित रावण यह बात जानै कि यह रामका दूत होय सीतापै आया है, तो जो काहूसे न करै ऐसी तोसो करै। अर जाने रावणका बहनेऊ चन्द्रनखाका पति मारा ताके सुग्रीवादिक सेवक भए, रावणको सेवा छाडी सो वे मंदबुद्धि हैं रंक कहा करेंगे ? इनको मृत्यु निकट आई है, तातै भूमिगोचरीके सेवक भए हैं। ते अतिमूढ, निर्लज्ज, तुच्छवृत्ति, कृतघ्नी, वृथा गर्वरूप होय मृत्युके समीप तिष्ठै हैं।

ये वचन मंदोदरीके सुनकर सीता क्रोधरूप होय कहती भई—हे मंदोदरी ! तू मंदबुद्धि है जो वृथा ऐसे कहै है। तैं मेरा पति अद्भुत पराक्रमका धनी कहा नाहीं सुना है ? शूरवीर अर पंडितनिकी गोष्ठीविषै मेरा पति मुख्य गाइए है। जाके वजावत धनुषका शब्द रण संग्रामविषै सुनकर महा रण धीर योधा धीर्य नाहीं धारे हैं भयसे कम्पायमान होयकर दूर भागै हैं। अर जाका लक्ष्मण छोटा भाई लक्ष्मीका निवास, शत्रुपक्षके क्षय करवेकू समर्थ, जाके देखते ही शत्रु दूर भाग जावै। बहुत कहिवे करि कहा ? मेरा पति राम लक्ष्मणसहित समुद्र तरकर शीघ्र ही आवै है। सो युद्ध विषै थोडे ही दिननिविषै तू अपने पतिकू मूवा देखेगी। मेरा पति प्रबल पराक्रमका धारी है। तू पापी भरतारकी आज्ञारूप दूती होय आई है सो शिताब ही विधवा होयगी, अर बहुत रुदन करेगी। ५७४

ये वचन सीताके मुखतै सुनकर मंदोदरी राजा मयकी पुत्री अतिक्रोधकू प्राप्त भई। अठारा हजार राणी हाथाकर सीताके मारवेकू उद्यमी भई और अति क्रूरवचन कहती सीता पर आई। तब

हनुमान बीच आनकर तिनकू थामी जस पहाड नदीके प्रवाहकू थाभ। ते सब सीताको दुखका कारण वेदनारूप होय हनिवेकू उद्यमी भई थी सो हनुमानने वज्ररूप होय निवारा। तब ये सब मन्दोदरी आदि रावणकी राणी मानभग होय रावणप गई। क्रूर है चित्त जिनके। तिनकू गए पीछे हनुमान सीतासू नमस्कार करि आहारके निमित्त विनती करता भया—हे देवि! यह सागरात पथ्वी श्रीरामचन्द्रकी ह तात यहाका अन्न उनहीका ह, वरिनिका न जानो। या भाति हनुमानने सम्बोधी अर प्रतिज्ञा भी यही हुती कि जो पतिके समाचार सुनू तब भोजन करू। सो समाचार आए ही। तब सीता सब आचारमें विचक्षण, महा साध्वी, शीलवती दयावती, देशकालकी जाननेवारी, आहार लेना अगीकार करती भई। तब हनुमानने एक ईरा नामकी स्त्री कुलपालिकाकू आज्ञा करी जो शीघ्र ही श्रेष्ठ अन्न लावो। अर हनुमान विभीषणके पास गया, ताहीके भोजन किया, अर तासू कही सीताको भोजनकी तयारी कराय आया हू। अर ईरा जहा डेरे हुते वहा गई। सो चार महूतमें सब सामग्री लेकर आई। दपण समान पथ्वीकू चन्दनसू लीपा और महा सुगध विस्तीण निमल सामग्री और सुवर्णादिकके भाजन में भोजन धराय लाई। कईएक पात्र घतके भरे है, कईएक चावलनिकरि भरे ह, चावल कुन्दके पुष्प समान उज्ज्वल, और कईएक पात्र दालसो भरे ह। और अनेक रस नाना प्रकारके व्यजन दूध दही महा स्वादरूप भाति भातिका आहार। सो सीता बहुत क्रिया सयुक्त रसोई कर, ईरा आदि समीप वर्तियोको यहा ही योते। हनुमानसे भाईका भाव कर अति वात्सल्य किया। महा श्रद्धासयुक्त ह अतःकरण जाका ऐसी सीता महा पतिव्रता भगवानकू नमस्कारकर अपना नियम समाप्तकर, त्रिविध पात्रनिकू भोजन करावनेका अभिलाषकर महा सुन्दर श्रीराम तिनकू हृदयविषे धार, पवित्र ह अग जाका, दिनविषे शुद्ध आहार करती भई। सूयका उद्योत होय तबही पवित्र मनोहर पुण्यका बढावन हारा आहार योग्य ह। रात्रिकू योग्य नाहीं? सीता भोजन कर चुकी अर कछु इक विश्रामकू प्राप्त भई, तब हनुमानने नमस्कारकर विनती करी—हे पतिव्रते! हे पवित्रे! हे गुणभूषणे! मेरे कांधे चढहु ५७५

अर समुद्र उलघ क्षण मात्रमें रामके निकट लें जाऊं। तिहारे ध्यानमें तत्पर महाविभवसयुक्त जे राम तिनकू शीघ ही देखहु। तिहारे मिलापकर सबहोकू आनन्द होई। तब सीता रुदन करती कहती भई—हे भाई ! पतिकी आज्ञा विना मेरा गमन योग्य नाहीं। जो पूछी कि तू बिना बुलाए क्यो आई तो म कहा उत्तर दूगी। तात रावणने उपद्रव तो सुना होयगा सो अब तुम जावो, तोहि यहा विलम्ब उचित नाही। मर प्राणनाथक समीप जाय मेरी तरफसे हाथ जोड नमस्कारकर मेरे मुखके वचन या भाति कहियो—हे देव ! एक दिन मो सहित आपने चारण मुनिकी बन्दना करी, महा स्तुति करी, अर निमलजलकी भरी सरोवरी कमलनिकर शोभित जहा जलक्रीडा करी। ता समय महा भयकर एक वनका हाथी आया सो वह हाथी महाप्रबल आपने क्षण मात्रमे वशकर सुन्दर क्रीडा करी। हाथी गवरहित निश्चल किया। अर एक दिन नन्दन वन समान वनविष म वक्षकी शाखाकू नवाती क्रीडा करती हुती सो भमर मेरे शरीरकू आय लगे। सो आपने अति शीघताकर मुझे भुजासे उठाय लई, अर आकुलता रहित करी। अर एक दिन सूय उद्योत समय आपक समीप सरोवरके तट तिष्ठती थी तब आप शिक्षा देयवेके काज कछू इक मिसकर कोमल कमल नालकी मेरे मधुरसी दीनी। अर एक दिन पवतपर अनक जातिके वक्ष देखे। म आपकू पूछो—हे प्रभो ! यह कौन जातिके वक्ष है, महा मनोहर ? तब आप प्रसन्न मुखकर कही—हे देवी ! ये नन्दनी वक्ष ह। अर एक दिन करणकुण्डल नामा नदीके तीर आप विराजे हुते, अर मेहू हुता, ता समय मध्याह्न समय चारण मुनि आए सो तुम उठ कर महा भक्तिकर मुनिकू आहार दिया। तहा पचाश्चय भए, रत्नवर्षा, कल्प वक्षोके पुष्पनिकी वर्षा, सुगन्धजलकी वर्षा, शीतल मन्द सगन्ध पवन, दुन्दुभी बाजे, अर आकाशविष देवनिने यह ध्वनि करी—धन्य य पात्र, धन्य ये दाता, धन्य य दान। ये सब रहस्यकी बातें कही अर चूडामणि सिरत उतार दिया जो याके दिखानेस उनकू विश्वास आवेगा। अर यह कहियो—म जानू हू आपकी कपा मोप अत्यन्त है तथापि तुम अपने प्राण यत्नसू राखियो। तिहारेसे मरा वियोग भया। अब तिहार यत्न

से मिलाप होयगा। ऐसा कह सीता रुदन करती भई। तब हनुमानने धीय बधाया अर कही—हे माता! जो तुम आज्ञा करोगी सो ही होयगा और शीघ्र ही स्वामीसो मिलाप होयगा। यह कह हनुमान सीतासे

विदा भया। अर सीताने पतिकी मुद्रिका अगुरीमें पहिर ऐसा सुख माना मानो पतिका समागम भया।

अथानन्तर वनकी नारी हनुमानकू देखकर आश्चयकू प्राप्त भई। अर परस्पर ऐसी बात करती भई—यह कोई साक्षात कामदेव ह अथवा देव ह सो वनकी शोभा देखवेकू आया ह? तिनमें कोई एक काम कर व्याकुल होय बीन बजावती भई किन्नरी देवियोकेस ह स्वर जिनके, कोई इक चन्द्र वदनी बामे हस्तविष दपण राख अर याका प्रतिबिम्ब दपणमें देखती भई। देखकर आसक्त मन भई। या भाति समस्त स्त्रियोको सभम उपजाया, हार माला सुन्दर वस्त्र धर, देदीप्यमान अग्निकुमार देववत सोहता भया।

इनके वनविष अनेक वार्ता रावणने सुनी। तब क्रोधरूप होय रावण महानिदयी किंकर युद्धविष जे प्रवीण हुते, ते पठाए। अर तिनकू यह आज्ञा करी कि मेरी क्रीडाका जो पुष्पोद्यान तहा मेरा कोई एक द्रोही आया ह सो अवश्य मार डारियो। तब ये जायकर वनके रक्षकनिकू कहते भए—हो वनके रक्षक हो! तुम कहा प्रमादरूप होय रहे हो? कोउ उद्यानविष दुष्ट विद्याधर आया है सो शीघ्र ही मारना अथवा पकडना। वह महा अविनयी ह। वह कौन ह, कहा ह? ऐसे किंकरनिके मुखत ध्वनि निकसी सो हनुमानने सुनी। अर धनुषके धरणहारे, शक्तिके धरणहारे, गदाके धरणहारे, खडगके बरछीके धरणहारे अनेक लोग आवते हनुमानने देखे। तब पवनका पूत सिहहूत अधिक ह पराक्रम
जाका मुकुटविष रत्नजडित बानरका चिह्न, ताकर प्रकाश किया ह आकाश जाने, आप उनकू अपनारूप दिखाया, उगते सूय समान क्रोध होठ डसता लाल नेत्र। तब याके भयकरि सब किंकर भागे, तब और क्रूर सुभट आए। शक्ति तोमर खडग चक्र गदा धनुष इत्यादि आयुध करविष धर अर अनेक शस्त्र चलावते आए। तब अजनीका पुत्र शस्त्ररहित हुता सो वनके जे वक्ष ऊचे ऊचे थे उनके समूह

उपाडे अर पर्वतनिकी शिला उपाडी सो रावणके सुभटनिपर अपनी भुजानिकर वृक्ष अर शिला चलाई, मानो काल ही है, सो बहुत सामंत मारे। कैसी है हनुमानकी भुजा ? महा भयंकर जो सर्प
१५ ताके फण समान है आकार जिनका। शाल वृक्ष, पीपल, बड, चम्पा, नींब, अशोक, कदम्ब, कुंद, नाग
पुरा। अर्जुन, धव, आम, लोध, कटहल बडे२ वृक्ष उपार२ अनेक योधा मारे। कईएक शिलावोंसे मारे, कई
५७८ एक मुक्को अर लातोंसे पीस डारे। समुद्रसमान रावणके सुभटोंकी सेना क्षणमात्रविषै बखेर डारी।
कईएक मारे, कईएक भागे। हे श्रेणिक ! मृगनिके जीतवेकूं मृगराजका कौन सहाई होय अर शरीर बलहीन होय तो घनोंकी सहायकर कहा ? ता वनके सबही भवन अर वापिका अर विमान सारिखे उत्तम मंदिर सब चूर डारे। केवल भूमि रही गई। वनके मंदिर अर वृक्ष विध्वंस किए, सो मार्ग होय गया जैसे समुद्र सूख जाय अर मार्ग होय जाय। फोरि डारी हैं हाटोंकी पंक्ति, अर मारे हैं अनेक किंकर, सो बाजार ऐसा होय गया मानो संग्राम की भूमि है। उत्तुंग जे तोरण सो पडे, अर ध्वजावोंकी पंक्ति पडी, सो आकाशसे मानो इंद्रधनुष पडा है। अर अपनी जंघात अनेक वर्णके रत्ननिके महिल ढाहे सो अनेक वर्णके रत्ननिकी रजकर मानो आकाशविषै हजारों इंद्रधनुष चढे हैं। अर पायनिकी लातनकरि पर्वतसमान ऊंचे घर फोर डारे। तिनका भयानक शब्द होता भया। अर कईएक तो हाथनिसे मारे, अर पगोंसे मारे, अर छातीसे अर कांधेसे। या भांति रावणके हजारों सुभट मारे। सो नगरविषै हाहाकार भया। अर रत्नोंके महिल गिर पडे, तिनका शब्द भया। अर हाथि- ५७८
निके थम्भ उपार डारे, अर घोडे पवन मंडल, पानोकी न्याई उडे २ फिरे हैं। अर वापी फोर डारीं। सो कीचड रह गया। समस्त लंका व्याकुल भई मानो चाक चढाई है। लंकारूप सरोवर राक्षसरूप मीनोंसे भरा, सो हनुमानरूप हाथीने गाह डारा। तब मेघवाहन बक्तर पहिर बडी फौज लेय आया अर ताके पीछे ही इंद्रजीत आया सो हनुमान उनसे युद्ध करने लगा। लंकाकी बाह्यभूमिविषै महायुद्ध भया, जैसा खरदूषणके अर लक्ष्मणके युद्ध भया हुता। अर हनुमान चार घोडोंके रथपर चढ धनुषबाण

लेय राक्षसनिकी सेना पर दौडा।

तब इन्द्रजीतने बहुत बेर तक युद्धकर हनुमानकू नागफाससे पकडया अर नगरमें ले आया। सो याके आयबे पहिलही रावणके निकट हनुमानकी पुकार होरही थी। अनेक लोग नानाप्रकारकरि पुकार कर रहे हुते कि सुग्रीव का बुलाया यह अपने नगरत किहकधापुर आया, रामसो मिला अर तहाते या ओर आया सो महेद्रकू जीता अर साधवोके उपसग निवारे, दधिमुखकी कन्या रामप पठाई, अर वजमई कोट विध्वसा, बजमुखकू मारा, अर ताकी पुत्री लकासुन्दरी अभिलाषवती भई सो परनी, अर ता सग रमा, अर पुष्पनामा वन विध्वसा, वनपालक विह्वल करे, अर बहुत सुभट मारे, अर घटरूप जे स्तन तिनकर सींच २ मालियोकी स्त्रियोने पुत्रोकी नाई जे वृक्ष बढाए हुते ते उपार डारे, अर वक्षोसे बेल दूरकरी, सो विधवा स्त्रियोकी न्याई भूमि विष पडी, तिनके पल्लव सूख गए, अर फल फूलोसे नम्रीभूत नानाप्रकारके वक्ष मसानकसे वक्ष करडारे। सो यह अपराध सुन रावणकू अतिकोप भया हुता इतनेमे इन्द्रजीत हनुमानकू लेकर आया। सो रावणने याकू लोहकी साकलनिकर बधाया अर कहता भया—यह पापी निलज्ज दुराचारी ह। अब याके देखवेकर कहा? यह नाना अपराधका करणहारा। ऐसे दुष्टको क्यो न मारिये? तब सभाके लोक सबही माथा धुनकर कहते भए—हे हनुमान! जाके प्रसाद त पथ्वीविष तू प्रभुताकू प्राप्त भया, ऐसे स्वामीके प्रतिकूल होय भूमिगोचरीका दूत भया। रावण की ऐती कृपा पीठ पीछे डार दई। एसे स्वामीकू तज, जे भिखारी निधन पथ्वीमें भ्रमते फिरते दोनो वीर तिनका तू सवक भया। अर रावणने कहा कि तू पवनका पुत्र नाहीं काहू औरकर उपजा है। ५७९
तेरी चेष्टा अकुलीनकी प्रत्यक्ष दीख ह। जे जार जात ह तिनके चिह्न अगमें नाहीं दीखै हैं, जब अनाचारको आचर तब जानिए। यह जारजात ह। कहा केशरी सिहका बालक स्यालका आश्रय करे? नीचका आश्रयकर कुलवत पुरुष न जीवें। अब तू राजद्वारका द्रोही ह, निग्रह करवे योग्य ह। तब हनुमान यह वचन सुन हसा अर कहता भया—न जानिए कौनका निग्रह होय। या दुर्बुद्धिकर तेरी

मत्यु नजीक आई, कईएक दिनविषै दृष्टि परगी । लक्ष्मणसहित श्रीराम बडी सेनासे आवै है सो किसी से रोके न जाय जैसे पर्वतनित मेघ न रुकै । अर जैसे कोऊ नानाप्रकारके अमृत समान आहार कर तृप्त न भया अर विषकी एक बूंद भखे नाशकूं प्राप्त होय तैसे हजारां स्त्रीनिकर तू तृप्तायमान न होय अर परस्त्रीकी तृष्णाकर नाशकूं प्राप्त होयगा । जो शुभ अर अशुभकर प्रेरी बुद्धि होनहार माफिक होय है सो इन्द्रादिककर भी अन्यथा न होय । दुर्बुद्धि विषै सैकडा प्रियवचनकर उपदेश दीजिये तौहु न लगै, जैसा भवितव्य होय सोही होय । विनाशकाल आवै तब बुद्धिका नाश होय । जैसे कोऊ प्रमादी विष का भरा सुगंध मधुरजल पीवै तो मरणकूं पावै तैसे हे रावण ! तू परस्त्रीका लोलुपी नाशकूं प्राप्त होयगा । तू गुरु परिजन वृद्ध मित्र प्रिय बांधव मंत्री सबनिके वचन उलंघकर पापकर्मविषै प्रवृत्ते है, सो दुराचाररूप समुद्रविषै कामरूप भ्रमरके मध्य आय नरकके दुख भोगेगा । हे रावण ! तू रत्नश्रवा राजाके कुलक्षय नीचपुत्र भया । तोकर राक्षसवंशिनिका क्षय होयगा । आगे तेरे वंशमें बडे बडे मर्यादा के पालनहारे, पृथ्वीविषै पूज्य, मुक्तिके गमन करणहारे भए अर तू उनके कुलविषै पुलाक कहिए न्यून पुरुष भया । दुर्बुद्धि मित्रकूं कहता निरर्थक है । जब हनुमानने यह वचन कहे तब रावण क्रोधकर आरक्त होय दुर्वचन कहता भया—यह पापी मृत्युसे नाहीं डरै है, वाचाल है । तातै शीघ्र ही याके हाथ पांव ग्रीवा सांकलनिसूं बांधकर अर कुवचन कहते ग्रामविषै फेरो । क्रूर किंकर लार घर घर यह वचन कहो—भूमिगोचरियोंका दूत आया है याहि देखहु, अर श्वान बालक लार सो नगरकी लुगाई धिक्कार देवें । अर बालक धूर उडावें, अर स्वान भौंकें । सब नगरी विषै या भांति इसे फेरो, दुख देवो । तब वे रावणकी आज्ञाप्रमाण कुवचन बोलते ले निकसे । सो यह बंधन तुडाय ऊंचा चल्या जैसे यति मोहफांस तोड मोक्षपुरीकूं जाय । आकाशतैं उछल अपने पगोंकी लातोंकर लंकाका बडा द्वार ढाया तथा और एक छोटे दरवाजे ढाहे । इन्द्रके महिलके तुल्य रावणके महिल हनुमानके चरणनिके घातसे बिखर गए जिनके बडे बडे स्तम्भ हते । अर महलके आस पास रत्न सुवर्णका कोट हुता सो चूर ५८

डारा। जस वज्रपातके मारे पवत चूण होजाय तस रावणके घर हनुमानरूप वज्रके मारे चूण होय गए। यह हनुमानके पराक्रम सुन सीताने प्रमोद किया अर हनुमानकू बधा सुन विषाद कियो हुता तब वज्रोदरी पास बठी हुती ताने कहा—हे देवी! वथा काहेकू रुदन कर? यह साकल तुडाय आकाश में चला जाय ह सो देख। तब सीता अति प्रसन्न भई। अर चित्तमें चितवती भई यह हनुमान मेरे समाचार पतिप जाय कहेगा सो आसीस देती भई, अर पुष्पाजलि नाखती भई कि तू कल्याणसे पहुँचियो, समस्त ग्रह तुझे सुखदाई होय, तेरे विघ्न सकल नाशकू प्राप्त होय, तू चिरजीव हो। या भाति परोक्ष असीस देती भई। जे पुण्याधिकारी हनुमान सारिखे पुरुष ह वे अदभुत आश्चयकू उपजाव ह। कसे ह वे परुष? जिन्होने पूवजन्ममें उत्कष्ट तपवत आचरे ह, अर सकलभवमें विस्तर ह ऐसी कीर्तिके धारक ह, अर जो काम किसीसे न बन सो करवे समथ ह, अर चितवनमें न आव ऐसा जो आश्चय उसे उपजाव ह। इसलिए सव तजकर जे पडितजन ह वे धमकू भजो। अर जे नीचकम ह वे खोटेफलके दाता है, इसलिए अशुभकम तजो। अर परमसुखका आस्वाद तामें आसक्त जे प्राणी, सुन्दर लीलाके धारक वे सूयके तेजकू जीत ऐस होय ह।

इति श्रीरविषेणाचायविरचित महापद्मपुराण सस्कृत ग्रथ ताकी भाषावचनिकाविष हनुमानका लकासे पाछा आवनेका वणन करनेवाला तिरपनवा पव पूण भया ॥ ५ ॥

अथानन्तर हनुमान अपने कटकमें आय, किहकधापुरकू आया, लकापुरीमें विघ्नकर आया, ध्वजा ५८१
छत्रादि नगरीकी मनोग्यता हर आया। किहकधापुरके लोग हनुमानकू आया जान बाहिर निकसे। नगरमे उत्साह भया, यह धीर उदार ह पराक्रम जाका, नगरमें प्रवेश करता भया। सो नगरके नर नारियोको याके देखवेका अतिसभ्रम भया। अपना जहा निवास तहा जाय सेनाके यथायोग्य डेरे कराए। राजा सुग्रीवने सब वत्तात पूछा, सो ताहि कहा। बहुरि रामके समीप गए। राम यह चितवन

कर रहे है कि हनुमान आया है सो यह कहेगा कि तिहारी प्रिया सुखसू जीवै है। हनुमानने ताही समय आय रामकू देखा–महाक्षीण, वियोगरूप अग्निसे तप्तायमान, जैसे हाथी दावानल कर व्याकुल होय महाशोकरूप गर्तविषै पडे। तिनकू नमस्कारकर हाथ जोड हर्षित वदन होय सीताकी वार्ता कहता भया। जेते रहस्यके समाचार कहे हुते ते सब वरणन किये, अर सिरका चूडामणि सौंप निश्चित भया। चिंता कर बदनकी और ही छाया होय रही है, आंसू पडै है। सो राम याहि देखकर रुदन करने लग गए अर उठकर मिले। श्रीराम यों पूछे है–हे हनुमान! सत्य कहो, मेरी स्त्री जीवै है? तब हनुमान नमस्कार कर कहता भया। हे नाथ! जीवै है, आपका ध्यान करै है। हे पृथ्वीपते! आप सुखी होवो, आपके विरह कर वह सत्यवती निरंतर रुदन करै है, नेत्रनिके जलकर चतुरमास कर राखा है। गुणके समूहकी नदी सीता, ताके केश विखर रहे है, अत्यन्त दुखी है, अर बारम्बार निश्वास नाखती चिंताके सागरमें डूब रही है। स्वभावहीकरि दुबल शरीर है, अर विशेष दुबल होय गई है। रावणकी स्त्री आराधै है परन्तु उनसे संभाषण करै नाही। निरंतर तिहारा ही ध्यान करै है। शरीरका संस्कार सब तज बैठी है। हे देव! तिहारी राणी बहुत दुःखसे जीवै है। अब तुमकू जो करना होय सो करो। ये हनुमानके वचन सुन श्रीराम चिंतावान भए। मुखकमल कुमलाय गया। दीर्घ निश्वास नाखत भए। अर अपने जीतव्यकू अनेक प्रकार निंदते भए। तब लक्ष्मणने धीर्य बंधाया। हे महाबुद्धि! कहा सोच करो हो? कर्तव्यविषै मन धरो। अर लक्ष्मण सुग्रीवसू कहता भया–हे किहकंधाधिपते! तू दीर्घसूत्री है। अब सीताके भाई भामंडलकू शीघ्र ही बुलावहु। रावणकी नगरी हमकू अवश्य ही जाना है। कै तो जहाजनिकरि समुद्र तिरैं अथवा भुजानितैं। ये बात सुन सिंहनाद नामा विद्याधर बोला–आप चतुर महाप्रवीण होयकर ऐसी बात मत कहो। अर हम तो आपके संग है परन्तु ऐसा करना जाविषै सबका हित होय। हनुमानने जाय लंकाके वन विध्वंसे, अर लंकाविषै उपद्रव किया सो रावणकू क्रोध भया है, सो हमारी तो मृत्यु आई है। तब जामवंत बोला तू

नाहर होयकर मृगकी न्याई कहा कायर होय है ? अब रावण हू भयरूप है अर वह अन्यायमार्गी है। वाकी मृत्यु निकट आई है। अर अपनी सेनामे भी बडे बडे योधा महारथी है, विद्या विभवकर पूर्ण है, हजारा आश्चर्यके कार्य जिन्होने किये है, तिनके नाम धनगति, एकभूत, गजस्वन, क्रूरकेलि, किलभीम, कुण्ड, गोरवि, अंगद, नल, नील, तडिदवक्र, मन्दर, अशनी, अर्णव, चन्द्रज्योति, मृगेन्द्र, वज्रदृष्टि, दिवाकर, अर इल्काविद्या, लांगूलविद्या, दिव्यशस्त्र विषै प्रवीण, जिनके पुरुषार्थमें विघ्न नाहीं ऐसे हनुमान महाविद्यावान, अर भामंडल विद्याधरोका ईश्वर, महेन्द्रकेतु अति उग्र है पराक्रम जाका, प्रसन्नकीर्ति उपवति, अर ताके पुत्र महा बलवान, तथा राजा सुग्रीवके अनेक सामंत महा बलवान है, परम तेजके धारक वरत है, अनेक कार्यके करणहारे, आज्ञाके पालनहारे। ये वचन सुनकर विद्याधर लक्ष्मणकी ओर देखते भए। अर श्रीरामकू देखा सो सौम्यतारहित महाविकरालरूप देखा अर भृकुटी चढी महा भयंकर मानो कालके धनुष ही है। श्रीराम लक्ष्मण लंकाकी दिशा, क्रोधके भरे लाल नेत्रकर चौंके मानो राक्षसनिके क्षय करनेके कारण ही है। बहुरि वही दृष्टि धनुषकी ओर धरी। अर दोनो भाईयोका मुख महा क्रोधरूप हो गया। कोप कर मंडित भये, सिरके केश ढीले होय गये मानो कमलके स्वरूप ही है, जगतकू तामसरूप तमकर व्याप्त किया चाहे है—ऐसा दोऊनिका मुख ज्योतिके मंडल मध्य देख सब विद्याधर गमनकू उद्यमी भए। संभ्रमरूप है चित्त जिनका, राघवका अभिप्राय जानकर सुग्रीव हनुमानादि सब नानाप्रकारके आयुध अर सम्पदा कर मंडित चलवेकू उद्यमी भए। राम लक्ष्मण दोनो भाईनिके प्रयाण होनेके वादित्रनिसे समूहके नादकर पूरित है दशोदिशा, सो मागसिर वदी पंचमीके दिन सूर्य उदयके समय महा उत्साह सहित भले २ शकुन भए। ता समय प्रयाण करते भए। कहा कहा शकुन भए कहिए है—निर्धूम अग्निकी ज्वाला दक्षिणावर्त देखी, अर मनोहर शब्द करते मोर, अर वस्त्राभूषण संयुक्त सौभाग्यवती नारी, सुगंध पवन, निर्ग्रंथ मुनि, छत्र, तुरंगोका गम्भीर हींसना, घंटाका शब्द, दहीका भरा कलश, काग पांख फैलाए मधुर शब्द करता, भेरी अर शंख

का शब्द, अर तिहारी जय होवे, सिद्धि होवे, नन्दो बधो ऐसे वचन इत्यादि शुभ शकुन भए। राजा सुग्रीव श्रीरामके संग चलवेकू उद्यमी भए। सुग्रीवके ठौर २ सुविद्याधरोके समूह आए। कैसा है सुग्रीव ? शुक्ल पक्षके चन्द्रमा समान है प्रकाश जाका। नानाप्रकारके विमान नानाप्रकारकी ध्वजा, नानाप्रकारके वाहन, नानाप्रकारके आयुध उन सहित बड़े २ विद्याधर आकाशविषै जाते शोभते भए। राजा सुग्रीव, हनुमान शल्य, दुर्मषण, नल, नील, काल सुषेण, कुमुद इत्यादि अनेक राजा श्रीरामके लार भए। तिनके ध्वजावो पर देदीप्यमान रत्नमई बानरोके चिह्न मानो आकाशके ग्रसवेकू प्रवरते हैं। अर विराधितकी ध्वजापर नाहरका चिह्न नीझरनो समान ददीप्यमान, अर जाबूकी ध्वजापर वृक्ष, अर सिंहरवकी ध्वजामे व्याघ्र अर मेघकातकी ध्वजामे हाथीका चिह्न इत्यादि राजानिकी ध्वजामें नानाप्रकारके चिह्न। इनमे भूतनाद महातेजस्वी लोकपाल समान सो फौजका अग्रसर भया। लोकपाल समान हनुमान भूतनादक पीछे सामतनिक चक्र सहित परम तेजकू धरे लंकापर चढे। सो अति हर्षके भरे शोभते भए। जैसे पूर्व रावणके बड़े सुकेशीके पुत्र माली लंकापर चढे हुते, अर अमल किया हुता तैसे। श्रीरामके सन्मुख विराधित बैठा अर पीछे जामवंत बैठा, बाई भुजा सुषेण बैठा, दाहिनी भुजा सुग्रीव बैठा, सो एक निमिषमे बेलधरपुर पहुँचे। तहाका समुद्रनामा राजा सो उसके अर नलके परम युद्ध भया। सो समुद्रके बहुत लोक मारे गए। अर नलने समुद्रको बाधा बहुरि श्रीरामसे मिलाया। अर तहाही डेरा भए। श्रीरामने समुद्रपर कृपा करी, ताका राज्य ताको दिया। सो राजाने अति हर्षित होय अपनी कन्या सत्यश्री, कमला, गुणमाला, रत्नचूडा, स्त्रियोके गुणकर मंडित देवागना समान सो लक्ष्मणस परणाई। तहा एकरात्रि रहे। बहुरि यहासे प्रयाणकर सुवेल पर्वतपर सुवेल नगर गए। वहा राजा सुवेल नाम विद्याधर, ताकू संग्राममे जीत रामके अनुचर विद्याधर क्रीडा करते भए, जैसे नन्दनवनविषै देव क्रीडा करें। तहा अक्षय नाम वनमे आनन्दसे रात्रि पूर्ण करी। बहुरि प्रयाणकर लंका जायवेकू उद्यमी भए। कैसी है लंका ? ऊंचे कोटसे युक्त, सुवर्णके मन्दिरनिकर पूर्ण, कैलाशके

शिखर समान ह आकार जिनके, अर नानाप्रकारके रत्ननिके उद्योतकर प्रकाशरूप, अर कमलनिके जे वन तिनसे युक्त, वापी कूप सरोवरादिक कर शोभित, नानाप्रकार रत्नोके ऊचे जे चत्यालय तिनकर मण्डित महापवित्र इन्द्रको नगरीसमान। ऐसी लकाकू दूरत देखकर समस्त विद्याधर रामके अनुचर आश्चर्यकू प्राप्त भए, अर हसद्वीपविष डेरे किये। तहा हसपुर नगर, राजा हसरथ, ताहि युद्धविषै जीत, हसपुरमें क्रीडा करते भए। तहात भामण्डलपर बहुरि दूत भेजा, अर भामडलके आयवेकी वाछा कर तहा निवास किया। जा जा देशमें पुण्याधिकारी गमन कर तहा तहा शत्रुनिको जीत, महाभोग उपभोगको भजें। इन पुण्याधिकारी उद्यमवतोसे कोई परे नाहीं ह। सब आज्ञाकारी ह। जो जो उनके मनमें अभिलाषा होय सो सब इनकी मूठीमें है। तात सव उपायकर त्रलोक्यमें सार ऐसा जो जिन-राजाका धम सो प्रशसा योग्य ह। जो कोई जगजीत भया चाह वह जिनधमकू आराधो। ये भोग क्षणभगुर ह। इनकी कहा बात ? यह वीतरागका धम निर्वाण देनेहारा ह। अर कोई जन्म लेय तो इन्द्र चक्रवर्त्यादिक पदका देनहारा ह। ता धमके प्रभावत ये भव्य जीव सूयसे अधिक प्रकाशको धरे ह।

इति श्रीरविषणाचार्यविरचित महापद्मपुराण सस्कत ग्रथ ताकी भाषावचनिकाविष राम लक्ष्मणका लकागमन वर्णन करनेवाला चौवनवा पर्व पर्ण भया ॥५४॥

अथानन्तर रामका कटक समीप आया जान प्रलयकालके तरग समान लका क्षोभकू प्राप्त भई। अर रावण कोपरूप भया, अर सामन्त लोक रणकथा करते भए। जसा समुद्रका शब्द होय तसै वादित्रनिके नाद भए। सव दिशा शब्दायमान भई। अर रणभेरी के नादतें सुभट महाहषकू प्राप्त भए। सब साजबाज सज स्वामीके हित स्वामीके निकट आए। तिनके नाम मारीच अमलचन्द, भास्कर, सिहप्रभ(स्यन्दनविभु), हस्त, प्रहस्त इत्यादि अनेक योधानिकरि पूण स्वामीके समीप आए। अथानन्तर लकापति महायोधा सग्रामके निमित्त उद्यमी भया। तब विभीषण रावणप आए।

प्रणामकर शास्त्रमार्गके अनुसार अति प्रशंसायोग्य, सबकूं सुखदाई, आगामी कालमें कल्याणरूप, वर्तमान कल्याणरूप, ऐसे वचन विभीषण रावण से कहता भया। कैसा है विभीषण ? शास्त्रविषै प्रवीण, महा चतुर, नय प्रमाणका वेत्ता, भाईको शान्त वचन कहता भया—हे प्रभो ! तिहारी कीर्ति कुन्दके पुष्प समान उज्ज्वल, महाविस्तीर्ण, महाश्रेष्ठ, इन्द्र समान पृथ्वीपर विस्तार रही है, सो परस्त्रीके निमित्त यह कीर्ति क्षणमात्र में क्षय होयगी, जैसे सांझके बादलकी रेखा। तात हे स्वामी ! हे परमेश्वर ! हम पर प्रसन्न होवो। शीघ्र ही सीताकूं रामके समीप पठावो। यामें दोष नाहीं, केवल गुण ही है। सुखरूप समुद्रमें आप निश्चय तिष्ठो। हे विचक्षण ! जे न्यायरूप ! महाभोग हैं वे सब तुम्हारे स्वाधीन हैं। अर श्रीराम यहां आए हैं सो बड़े पुरुष हैं, तिहारे तुल्य हैं, सो जानकी तिनकूं पठाय देवहु। सब प्रकार अपनी वस्तु ही प्रशंसा योग्य है। परवस्तु प्रशंसा योग्य नाहीं। यह वचन विभीषणके सुन इन्द्रजीत रावणका पुत्र पिताके चित्तकी वृत्ति जान विभीषणकूं कहता भया। अत्यन्त मानका भरा, अर जिनशासनसे विमुख है। साधो ! तुमकूं कौनने पूछा, अर कौनने अधिकार दिया जाकरि या भांति उन्मत्तकी नाईं वचन कहो हो ? तुम अत्यन्त कायर हो, अर दीन लोकनिकी नाईं युद्धसे डरो हो, अपने घरके विवरमें बैठो ? कहा ऐसी बातनिकर, ऐसा दुर्लभ स्त्रीरत्न पायकर मूढोंकी न्याईं कौन तजै ? तुम काहेकूं वृथा वचन कहो ? जा स्त्रीके अर्थ सुभट पुरुष संग्रामविषै तीक्ष्ण खड्गकी धारा करि महाशत्रुनिकूं जीत कर वीर लक्ष्मी भुजानिकरि उपार्जे हैं तिनके कायरता कहां ? कैसा है संग्राम ? मानो हाथिनिके समूहसे जहां अंधकार होय रहा है। अर नानाप्रकारके शस्त्रनिके समूह चलैं हैं, जहां अति भयानक है। यह वचन इन्द्रजीतके सुनकर इन्द्रजीतकूं तिरस्कार करता संता विभीषण बोला—रे पापी ! अन्यायमार्गी कहा तू पुत्रनामा शत्रु है ? तोकूं शीत वायु उपजी है, अपना हित नाहीं जाने है, शीतवायुकी पीडा अर उपाय छांड शीतल जलविषै प्रवेश करै तो अपने प्राण खोवै। अर घरविषै आग लागै अर ता अग्निविषै सूखे ईंधन डारे तो कुशल कहांसे होय ? अहो ! मोहरूप

ग्राहकर तू पीडित है। तेरी चेष्टा विपरीत है। यह स्वर्णमई लंका जहां देवविमानसे घर, लक्ष्मणके तीक्ष्ण बाणोंसे चूर्ण न होहि जाई, तापहिले जनकसुता पतिव्रताकूं रामपै पठाय देहु। सबलोकके कल्याणके अर्थ शीघ्र ही सीताको पठाना योग्य है। तेरे बाप कुबुद्धिने यह सीता नाहीं आनी है, राक्षसरूप सर्पोंका बिल जो यह लंका ताविषै विषनाशक जडी आनी है। सुमित्राका पुत्र लक्ष्मण सोई भया क्रोधायमान सिंह, ताहि तुम गज समान निवारवे समर्थ नाहीं। जाके हाथ सागरावर्त धनुष अर आदित्यमुख अमोघ बाण अर जिनके भामंडलसा सहाई सो लोकोंसे कैसे जीता जाय? अर बडे बडे विद्याधरनिके अधिपति जिनसे जाय मिले, महेन्द्रमलय हनुमान, सुग्रीव, त्रिपुर इत्यादि अनेक राजा और रत्नद्वीप का पति, वेलंधरका पति, संध्या हर द्वीप, हहयद्वीप, आकाशतिलक, केलोकिल, दधिवक्त्र अर महाबलवान विद्याके विभवकरि पूर्ण अनेक विद्याधर आय मिले। या भांतिके कठोर वचन कहता जो विभीषण तापर महाक्रोधायमान होय खडग काढ रावण मारवेकूं उद्यमी भया। तब विभीषण भी महाक्रोधके वश होय रावणसूं युद्ध करवेकूं वज्रमई स्तम्भ उपारचा। ये दोनो भाई उग्रतेजके धारक युद्धकूं उद्यमी भए, सो मन्त्रियोंने समझाय मने किए। विभीषण अपने घर गया, रावण महिल गया।

बहुरि रावणने कुम्भकरण इन्द्रजीतको कठोरचित्त होय कहा जो यह विभीषण मेरे अहितमें तत्पर है, अर दुरात्मा है, वाहि मेरी नगरीसे निकासो। या अनर्थीके रहिवेकरि क्या? मेरा अंग ही मोसे प्रतिकूल होय तो मोहि न रुचै। जो यह लंकाविषै रहै अर मैं याहि न मारूं तो मेरा जीवना नाहीं। ऐसी वार्ता विभीशण सुनकर कही—मैं हूं कहा रत्नश्रवाका पुत्र नाहीं? ऐसा कह लंकातै निकसा। महासामंतनि सहित तीस अक्षौहिणी दल लेयकर रामपै चाल्या। (तीस अक्षौहिणी केतेक भए ताका वर्णन) छहलाख छप्पनहजार एकसौ हाथी, अर एते ही रथ, अर उगणीसलाख अडसठ हजार तीनसौ तुरंग, अर बत्तीसलाख अस्सीहजार पांचसौ पयादा। विद्युतघन, इन्द्रबज, इन्द्रप्रचंड, चपल, उद्धत, एक अशनि, सम्पातकाल महाकाल ये विभीषण सम्बन्धी परम सामंत अपने कुटुम्ब अर सब समुदाय सहित,

नानाप्रकार शस्त्रनिकरि मंडित, रामकी सेनाकी तरफ चाले। नानाप्रकारके बाहननिकर युक्त आकाशकू आच्छादित कर सब परिवारसहित विभीषण हंसद्वीप आया। सो उस द्वीपके समीप मनोग्यस्थल देख जलके तीर सेनासहित तिष्ठा, जैसे नन्दीश्वर द्वीपकेविषै देव तिष्ठै। विभीषणकू आया सुन बानरवंशिनिकी सेना कम्पायमान भई जैसे शीतकालविषै दलिद्री कांपै। लक्ष्मणने सागरावर्त धनुष अर सूर्यहास खड्गकी तरफ दृष्टि धरी। अर रामने वज्रावर्त धनुष हाथ लिया। अर सब मंत्री भेले होय मंत्र करते भए। जैसे सिंहसे गज डरे तैसे विभीषणसे बानरवंशी डरे। ताही समय विभीषणने श्रीराम के निकट विचक्षण द्वारपाल भेजा। सो रामपै आय नमस्कार कर मधुर वचन कहता भया–हे देव! इन दोनो भाईनिविषै जबतै रावण सीता लाया तबहीसे विरोध पडा, अर आज सर्वथा बिगड गई। तात आपके पायन आया है, आपके चरणारविंदकू नमस्कार पूर्वक बिनती करै है। कैसा है विभीषण? धर्मकार्यविषै उद्यमी है। यह प्रार्थना करी है कि आप शरणागत प्रतिपाल हो, मैं तिहारा भक्त शरणे आया हूं, जो आज्ञा होय सोही करूं। आप कृपा करनेयोग्य हैं। यह द्वारपालके वचन सुन रामने मंत्रीनिसूं मंत्र किया। तब रामसे सुमतिकांत मंत्री कहता भया कदाचित रावणने कपटकर भेजा होय तो याका विश्वास कहा? राजानिकी अनेक चेष्टा है। अर कदाचित कोई बातकर आपसमें कलुष होय बहुरि मिलि जाय। कुल अर जल इनके मिलनेका अचरज नाहीं। तब महाबुद्धिवान मतिसमुद्र बोला–इनमें विरोध तो भया, यह बात सबसे सुनिए है। अर विभीषण महा धर्मात्मा नीतिवान है, शास्त्ररूप जलकर धोया है चित्त जाका, महा दयावान है, दीन लोकनि पर अनुग्रह करै है, अर मित्र निमें दृढ है। अर भाईपनेकी बात कहो सो भाईपनेका कारण नाहीं, कर्मका उदय जीवनिके जुदा जुदा होय है। इन कर्मनिके प्रभावकर या जगतविषै जीवनिकी विचित्रता है। या प्रस्तावविषै एक कथा है सो सुनहु–एक गिरि एक गोभूत ये दोऊ भाई ब्राह्मण हुते। सो एक राजा सूर्यमेघ हुता। ताके राणी मतिक्रिया, ताने दोनोकूं पुण्यकी वांछाकर भातमें छिपाय सुवर्ण दिया। सो गिरिकपटीने भात- ५८८

विष स्वण जान गोभूतकू छलकर मारचा दोनोका स्वण हर लिया। सो लोभसे प्रीतिभग होय ह। और भी कथा सुनो—कौशाबी नगरीविष एक वहद्धन नामा गहस्थी, ताके पुरविदा नामा स्त्री, ताके पुत्र अहिदेव महीदेव। सो इनका पिता मूवा तब ये दोऊ भाई धनके उपारजने निमित्त समुद्रमें जहाज में बठ गए। सो सवद्रव्य देय एक रत्न मोल लिया। सो वह रत्नकू जो भाई हाथमें लेय ताके भाव होय कि म दूजे भाईकू मारू। सो परस्पर दोऊ भाईनिके खोटे भाव भए। तब घर आये, वह रत्न माताकू सौंपा। सो माताके ये भाव भए कि दोऊ पुत्रनिकू विष देय मारू। तब माता अर दोनो भाइयो ने वा रत्नसे विरक्त होय कालिन्द्री नदीमें डारा। सो रत्नकू मछली निगल गई। सो मछलीकू धीवरने पकरी, अर अहिदेव महीदेवहीके बेची। सो अहिदेव महीदेवकी बहिन मछलीकू विदारती हुती सो रत्न निकस्या। याहूके भाव भए कि माताकू और दोऊ भाइनिकू मारू। तब याने सकल वत्तात कह्या कि या रत्नके योगसे मेरे ऐसे भाव होय ह जो तुमकू मारू। तब रत्नकू चूर डारचा। माता बहिन अर दोऊ भाई ससारके भावसे विरक्त होय जिनदीक्षा धरते भए। तात द्रव्यके लोभकर भाइनिमें वर होय ह, अर ज्ञानके उदयकर वर मिट ह। अर गिरिने तो लोभके उदयसे गोभूतकू मारचा। अर अहिदेवके महीदेवके वर मिट गया। सो महाबुद्धि विभीषणका द्वारपाल आया ह ताकू मधुर वचनकर विभीषणकू बुलाओ। तब द्वारपालसो स्नेह जताया अर विभीषणकू अति आदरसू बुलाया। विभीषण रामके समीप आया। सो राम विभीषणका अति आदरकर मिले। विभीषण बिनती करता भया—

हे देव! हे प्रभो! निश्चयकर मेरे इस जन्मविष तुम ही प्रभु हो। श्रीजिननाथ तो या भव पर-भवके स्वामी, अर रघुनाथ या लोकके स्वामी। या भाति प्रतिज्ञा करी। तब श्रीराम कहते भये तुझे नि सदेह लकाका धनी करू गा। सेनामें विभीषणके आवनेका उत्साह भया। अर ताही समय भामडल भी आया। कसा ह भामण्डल? अनेक विद्या सिद्ध भई है जाकू। सब विजियाधका अधिपति जब भामण्डल आया तब राम लक्ष्मण आदि सकल हर्षित भए। भामण्डलका अति सन्मान किया। आठ

बिन हसद्वीपविष रहे। बहुरि लकाकू सन्मुख भए। नानाप्रकारके अनेक रथ, अर पवनसे भी अधिक तेजकू धरे बहुत तुरग, अर मेघमालासे गयदोके समूह, अर अनेक सुभटनि सहित श्रीरामने लकाकू पयान किया। समस्त विद्याधर सामत आकाशकू आच्छादते हुते रामके सग चाले। सबमें अग्रेसर वानरवशी भए। जहा रणक्षेत्र थापा ह तहा गए। सग्रामभूमि बीस योजन चौडी ह, अर लम्बाईका विस्तार विशेष ह। वह युद्धभूमि मानो मत्युकी भूमि ह। या सेनाके हाथी गाजे अर अश्व हींसे। अर विद्याधरनिके वाहन सिह ह तिनके शब्द हुए, अर वादित्र बाजे। तब सुनकर रावण अति हषकू प्राप्त भया। मनविष विचारी बहुत दिननिमें मेरे रणका उत्साह भया, समस्त सामन्तनिकू आज्ञा दई जो युद्ध के उद्यमी होवो। सो समस्त ही सामत आज्ञा प्रमाण आनन्दकर युद्धकू उद्यमी भए। कसा ह रावण ? युद्धविष ह हष जाकू, जाने कबहु सामतनिकू अप्रसन्न न किया, सदा प्रसन्न हो राखे। सो अब युद्ध के समय सबही एकचित्त भए। भास्कर नामा पुर तथा पयोरपुर, काचनपुर, व्योम, वल्लभपुर, गधव गीतपुर शिवमदिर, कपतपुर, सूर्योदयपुर, अमतपुर, शोभासिहपुर, सत्यगीतपुर, लक्ष्मीगतिपुर, किन्नर-पुर, बहुनागपुर, महाशलपुर, चक्रपुर, स्वणपुर, सीमतपुर, मलयानन्दपुर, श्रीगहपुर, श्रीमनोहरपुर, रिपु जयपुर, शशिस्थानपुर, मातडप्रभपुर, विशालपुर, ज्योतिदडपुर, परिष्योधपुर, अश्वपुर, रत्नपुर इत्यादि अनेक नगरोके स्वामी बडे २ विद्याधर मन्त्रिनिसहित महा प्रीतिके भरे रावणप आए। सो रावण राजावोका सम्मान करता भया, जसे इन्द्र देवनिका कर ह। शस्त्र वाहन वक्तर आदि युद्धकी सामग्री सब राजावोकू देता भया। चारहजार अक्षौहणी रावणके होती भई अर दो हजार अक्षौहणी रामके होती भई, सो कौन भाति ? हजार अक्षौहणीदल तो भामडलका अर हजार सुग्रीवाबि-का। या भाति सुग्रीव अर भामडलका ये दोऊ मुख्य अपने मन्त्रीनि सहित तिनसो मन्त्रकर राम लक्ष्मण युद्धकू उद्यमी भए। अनेक वशके उपजे, अनेक आचरणके धरणहारे, नाना जातिनिसे युक्त, नाना प्रकार गुण क्रियासू प्रसिद्ध, नाना प्रकार भाषाके बोलनहारे विद्याधर श्रीराम रावणप भेले भए।

गौतमस्वामी राजा श्रेणिकसू कह ह–हे राजन ! पुण्यके प्रभावकरि मोटे पुरुषनिके बरी भी अपने मित्र होय ह, अर पुण्यहीनोके चिरकालके सेवक अर अतिविश्वासके भाजन ते भी विनाशकालमें शत्रुरूप होय परणव ह । या असार ससारविष जीवनिकी विचित्रगति जानकर यह चितवन करना ह कि मेरे भाई सदा सुखदाई नाहीं, तथा मित्र बाधव सबही सुखदाई नाहीं । कबहु मित्र शत्रु होजाय, कबहु शत्रु मित्र हो जाय । ऐसे विवेकरूप सूयके उदयसे उरविष प्रकाशकर बुद्धिवतोको सदा धमही चितवना ।

इति श्रारविषणाचायविरचित महा पद्मपुराण सस्कृतग्र थ ताकी भाषावचनिकाविष विभीषणका रामसू मिलाप अर भामण्डलका आगमन वणन करनेवाला पचपनवा पव पूण भया ।। ५५ ।।

— —

अथानन्तर राजा श्रेणिक गौतम स्वामीकू पूछता भया–हे प्रभो ! अक्षौहिणीका परिमाण आप कहो । तब गौतमका दूजा नाम इन्द्रभूत ह सो इन्द्रभूत कहते भए–हे मगधाधिपति । अक्षौहिणीका प्रमाण तोहि सक्षेपसे कह ह सुन । आगमविष आठ भेद कहे ह ते सुन । प्रथम भेद पत्ति, दूजा भेद सेना, तीजा भेद सेनामुख, चौथा गुल्म, पाचवा वाहिनी, छटा पतना, सातवा चमू, आठवा अनीकिनी । सो अब इनके यथाथ भेद सुन । एक रथ, एक गज, पाच पयादे, तीन तुरग, इसका नाम पत्ति ह । अर तीन रथ, तीन गज, पन्द्रह पयादे, नव तुरग याकू सेना कहिए । अर नव रथ, नव गज, पतालीस पयादा, सत्ताइस तुरग, याहि सेना मुख कहिए । अर सत्ताइस रथ, सत्ताइस गज, एकसौ पतिस पयादा, इक्कासी अश्व इसे गुल्म कहिए । अर इक्यासी रथ, इक्यासी गज, चारस पाच पयादे, दोसौ ततालिस अश्व, इसे वाहिनी कहिए । अह दोयस तियालिस रथ, दोयसौ तियालिस गज, बारासौ पन्द्रह पयादे, सात सौ उनतीस घोडे, याहि पतना कहिए । अर सातसो गुणतीस रथ, सातस गुणतीस गज, छत्तीसस पतालिस पयादे, इक्कीससौ सतासी तुरग इसे चमू कहिए । अर इक्कीसस सतासी रथ, इक्कीसस सत्तासी गज, दशहजार नौसै पैंतीस पयादे अर पसठसौ इकसठ तुरग, इसे अनीकिनी कहिए । सो

पत्तिसे लेय अनीकिनी तक आठ भेद भए। सो यहांलो तो तिगुने २ बढे। अर दश अनीकिनीकी एक अक्षौहिणी होय है, ताका वर्णन—रथ इक्कीसहजार आठसै सत्तर, अर गज इक्कीसहजार आठसै सत्तर, पयादे एक लाख नौ हजार तीनसै पचास, अर घोडे पैंसठ हजार छहसौ दश, यह एक अक्षौहिणीका प्रमाण भया। ऐसी चार हजार अक्षौहिणी कर युक्त जो रावण, ताहि अति बलवान जानकर भी किहकंधापुरके स्वामी सुग्रीवकी सेना श्रीरामके प्रसादसूं निर्भय रावणके सन्मुख होती भई। श्रीरामकी सेनाकूं अतिनिकट आए हुए, नानापक्षकूं धरैं जो लोक सो परस्पर या भांति वार्ता करते भए—देखो रावणरूप चन्द्रमा विमानरूप जे नक्षत्र तिनके समूहका स्वामी, अर शास्त्रमें प्रवीण, सो परस्त्रीकी इच्छा रूप जे बादल तिनसूं आच्छादित भया है। जिसके महाकांतिकी धरणहारी अठारह हजार राणी, तिनसे तो तृप्त न भया अर देखहु एक सीताके अर्थ शोककरि व्याप्त भया है। अब देखिये राक्षसवंशी अर वानरवंशी इनमें कौनका क्षय होय। रामकी सेनामें पवनका पुत्र हनुमान, महा भयंकर देदीप्यमान जो शूरता सोई भई उष्णकिरण उनसे सूर्य तुल्य है। या भांति कईएक तो रामके पक्षके योधावोंके यश वर्णन करते भए। अर कईएक समुद्रसे भी अतिगम्भीर जो रावणकी सेना ताका वर्णन करत भये। अर कईएक जो दण्डकवनमें खरदूषणका अर लक्ष्मणका युद्ध भया था उसका वर्णन करते भये, अर कहते भए—चन्द्रोदयका पुत्र विराधित सो है शरीर तुल्य जिनके, ऐसे लक्ष्मण तिनने खरदूषण हत्या, अतिबलके स्वामी लक्ष्मण तिनका बल क्या तुमने न जान्या? कईएक ऐसे कहते भए। अर कईएक कहते भए कि राम लक्ष्मणकी क्या बात? वे तो बडे पुरुष हैं। एक हनुमानने केते काम किए, मन्दोदरीका तिरस्कार कर सीताकूं धीर्य बधाया, अर रावणकी सेना जीत लंकामें विघ्न किया, कोट दरवाजे ढाहे। या भांति नानाप्रकारके वचन कहते भए। तब एक सुवक्रनामा विद्याधर हँसकर कहता भया कि कहां समुद्र समान रावणकी सेना और कहां गायके खोज समान वानरवंशियोंका बल? जो रावण इन्द्रकूं पकड लाया और सबोंका जीतनहारा सो बानरवंशियों से कैसे जीता

जाय ? सव तेजस्वियोके सिरपर तिष्ठे ह, मनुष्यनिमें चक्रवर्तीके नामकू सुन कौन धीय धरै ? अर जिसके भाई कुम्भकरण महाबलवान त्रिशूलका धारक युद्धमें प्रलयकालकी अग्नि समान भास ह सो जगतमे प्रबल पराक्रमका धारक कौनकरि जीता जाय ? चन्द्रमासमान जाके छत्रकू देखकर शत्रुओ का सेनारूप अधकार नाशकू प्राप्त होय ह—सो उदार तेजका धनी उसके आगे कौन ठहर सक । जो जीतव्यकी बाछा तज सो ही उसके सन्मुख होय । या भाति अनेक प्रकारके रागद्वेषरूप वचन सेनाके लोग परस्पर कहते भए । दोनो सेनामें नानाप्रकारकी वार्ता लोकनिके मुख होती भई । जीवनिके भाव नानाप्रकारके है, रागद्वेषके प्रभावसे जीव निजकम उपार्जे ह । सो जसा उदय होय ह तसे ही काय में प्रवत्ते ह । जस सूयका उदय उद्यमी जीवोको नाना कायमें प्रवताव ह तसे कमका उदय जीवनिके नानाप्रकारके भाव उपजावे ह ।

इति श्रीरविषेणाचायविरचित मह ‾पद्मपुराण सस्कृत ग्रथ ताकी भाषावचनिकाविष द ऊ कटक क सख्याका प्रमाण वणन करनवाला छप्पपनवाँ पव पूण भया ॥ ५६ ॥

अथान नर हर सेनाके समीपकू न सह सक ऐसे मनुष्य, वे शूरापनेके प्रकट होनेकरि अति प्रसन्न होय, लडवेकू उद्यमी भए । योधा अपने घरोसें विदा होय सिह सारिखे लकासे निकसे । कोईएक सुभटकी नारी रणसग्रामका वत्तात जान अपने भरतारके उरसे लग ऐसे कहती भई—हे नाथ ! तिहारे कुलकी यही रीति ह जो रणसग्रामसे पीछे न होय । अर जो कदाचित तुम युद्धत पीछे होवोगे तो मैं सुनते ही प्राणत्याग करूगी । योधाओके किकरोकी स्त्रियें कायरोकी स्त्रियोको धिक्कार शब्द कहें—या समान और कष्ट कया । जो तुम छाती घाव खाय भले दिखाय पीछे आवोगे तो घाव ही आभूषण है । अर टूट गया ह बक्तर, अर कर ह अनेक योधास्तुति, या भाति तुमकू म देखूगी तो अपना जन्म धन्य गिनूगी । अर सुवणके कमलनिसो जिनेश्वरकी पूजा कराऊगी । जे महायोधा रणमें सन्मुख

होय मरणकू प्राप्त होय तिनका ही मरण धन्य ह । अर जे युद्धमें पराङमुख होय, धिक्कार शब्दसे मलिन भये जीव ह, तिनके जीवनेसे क्या ? अर कोईयक सुभटानी पतिसे लिपट या भाति कहती भई जो तुम भले दिखाय कर आवोगे तो हमारे पति हो, अर भागकर आवोगे तो हमारे तुम्हारे सम्बन्ध नाहीं । अर कोईइक स्त्री पतिसू कहती भई–हे प्रभो ! तिहारे पुराने घाव अब विघट गए, इसलिए नवे घाव लगें शरीर अति शोभै । वह दिन होय जो तुम वीरलक्ष्मीको वर प्रफुल्लित वदन हमारे आवो, अर हम तुमकू हर्षसयुक्त देख । तुम्हारी हार हम क्रीडामें भी न देख सकें तो युद्धमें हार कसे देख सकें ? अर कोईयक कहती भई कि हे देव ! जस हम प्रेमकर तिहारा वदन कमल स्पश कर है तस वक्षस्थलमें लगे घाव हम देखें तब अति हर्ष पाव ! और कईएक रोताणी अति नवोढा ह परन्तु सग्राममें पतिकू उद्यमी देख प्रौढाके भावकू प्राप्त भई । अर कोईयक मानवती घने दिननिसू मान कर रही थीं सो पतिकू रणमें उद्यमी जान मान तज पतिके गले लागी, अर अति स्नेह जनाया, रण योग्य शिक्षा देती भई । और कोईयक कमलनयनी भरतारके वदनकू ऊचाकर स्नेहकी दष्टिकर देखती भई, अर युद्धमे दढ करती भई । अर कईएक सामतनी पतिके वक्षस्थलमे अपने नखका चिह्नकर होनहार शस्त्रोके घावकू मानो स्थानक करती भई । या भाति उपजी ह चेष्टा जिनके, ऐसे राणी रौताणी अपने प्रीतमोसे नानाप्रकारके स्नेह कर वीररसमें दढ करती भई । तब महासग्रामके करण-हारे योधा तिनसू कहते भए–हे प्राणवल्लभे ! नर वेई ह जे रणमे प्रशसा पाव तथा युद्धके सन्मुख जीव तज तिनकी शत्रु कीर्ति करे । हाथिनिके दातनिमें पग देय शत्रुवोके घावकर तिनकी शत्रु कीर्ति कर । पुण्यके उदयविना ऐसा सुभटपना नाही । हाथियोके कुम्भस्थल विदारणहारे नरसिंह तिनकू जो हर्ष होय ह सो कहिवेकू कौन समर्थ ह ? हे प्राणप्रिये क्षत्रीका यही धर्म ह जो कायरनिकू न मारे, शरणागतकू न मार, न मारिवे देय, जो पीठ देय उसपर चोट न कर, जिसप आयुध न होय वासो युद्ध न कर । सो बाल वद्ध दीनकू तज हम योधाओके मस्तकपर पडेंगे । तुम हर्षित रहियो । हम

युद्धमे विजयकर तुमसे आय मिलेंगे। या भांति अनेक वचन कर अपनी अपनी रौतणियोंको धीय बधाय योधा संग्रामके उद्यमी घरस रणभूमिकू निकसे। कोई एक सभटानी चलते पतिके कठमे दोनो भुजासे लिपट गई अर हींदती भई, जसे गज द्रके कठमे कमलनी लटके। अर कोईयक रौताणी वक्तर पहिरे पतिक अगसे लग, अगका स्पश न पाया सो खेद खिन्न होती भई। अर कोईयक अद्ध बाहुलिका कहिए पेटी, सो बल्लभके अगसे लगी देख ईर्षाके रससे स्पश करती भई कि हम टार बूजी इनके उरसे कौन लगे। यह जान लोचन सकोचे। तब पति प्रियाकू अप्रसन्न जान कहते भए–हे प्रिये! यह आधा वक्तर है स्त्री वाची शब्द नाहीं, तब पुरुषका शब्द सुन हषकू प्राप्त भई। कोईयक अपने पतिकू ताम्बूल चबावती भई, अर आप ताम्बूल चाबती भई। कोइयक पतिने रुखसत करी तो भी केतीक दूर पतिके पीछे पीछे जाती भई। पतिके रणकी अभिलाषा सो इनकी ओर निहारे नाहीं, अर रण की भेरी बाजी सो योधावोका चित्त रणभूमिमे, अर स्त्रीनिसे विदा होना, सो दोनो कारण पाय योधावोका चित्त मानो हिंडोले हींदता भया। रौतानियोकी तज रावत चले तिन रौतानियोने आसू न डारे। आसू अमगल है। अर कईयक योधा युद्धमे जायवेकी शीघताकर वक्तरभी न पहिर सके। जो हथियार हाथ आया सो ही लेकर गवके भरे निकसे। रणभेरी सुन उपजा है हष जिनकू, शरीर पुष्ट होय गया सो वक्तर अग में न आवे। अर कईयक योधावोके रणभेरीका शब्द सुन हष उपजा सो पुराने घाव फटगए तिनमे सू रुधिर निकसता भया। अर किसीने नवा वक्तर बनाय पहिरा सो हषके होते सो टूट गया सो मानो नया वक्तर पुराने वक्तरके भावकू प्राप्त भया। अर काहूके सिर का टोप ढीला होय गया सो प्राणवल्लभा दृढ कर देती भई। अर कोईयक सुभट सग्रामका लालसी उसके स्त्री सुग ध लगायबेको अभिलाषा करती भई सो सुगधमे चित्त न दिया, युद्धकू निकसा। अर वे स्त्रिया व्याकुलतारूप अपनी अपनी सेजपर पड रहीं। प्रथमही लकासे हस्त प्रहस्त राजा युद्धकू निकसे। कसे है दोनो? सवमें मुख्य जो कीर्ति, सोइ भया अमृत, उसके आस्वादमें लालसी और

हाथियोके रथ पर चढे, नहीं सह सके है वैरियो का शब्द, अर महाप्रतापके धारक, शूरवीर सो रावणकू विना पूछे ही निकसे। यद्यपि स्वामीकी आज्ञाकरी बिना काय करना दोष है तथापि धनीके कायकू विना आज्ञा जाय तो दोष नाहीं, गुणके भावकू भज है। मारीच, सिंह जघन्य, स्वयभू, शम्भू, प्रथम विस्तीर्ण बलसे मंडित शुक, अर सारस, चाद सूयसारिखे गज, अर वीभत्स तथा वज्राक्ष वज्रभूति गम्भीरनाद नक्र मकर वज्रघोष उग्रनाद सुन्द निकुम्भ कुम्भ सध्याक्ष विभ्रमक्रूर माल्यवान खर निश्चर जम्बूस्वामी शिखीवीर उद्धक महाबल यह सामन्त नाहरनिके रथ चढे निकसे। अर वज्रोदर शक्रप्रभ, कृतात, विघटोधर, महामणि, असणिघोष, चन्द्र, चन्द्रनख, मत्युभीषण, वज्रोदर, धूम्राक्ष, मुदित, विद्युजिह्व, महामारीच कनक, क्रोधन क्षोभणद्ध्वध, उद्दाम, डिंडी डिंडम, डिभव, प्रचण्ड डमर, चण्ड कुण्ड हलाहल इत्यादि अनेक राजा व्याघ्रोके रथ चढे निकसे। वह कहे मै आगे रहू, वह कहे मै आगे रहू, शत्रुके विध्वंस करनेकू है प्रवत्त बुद्धि जिनकी। विद्या कौशिक, विद्याविख्यात, सपवाहु, महाद्युति, शख, प्रशख, राजभिन्न, अंजनप्रभ पुष्पक्रूर, महारक्त घटाश्र पुष्पखेचर अनगकुसुम, कामवक्त, स्मरायण, कामाग्नि, कामराशि, कनकप्रभ, शशिमुख, सौम्यवक्र, महाकाम, हेमगौर, यह पवन सारिखे तेज तुरगनिके रथ चढे निकसे। अर कदम्ब विटप भीमनाद भयानाद भयानक शार्दूल सिंह वलाग विद्युदग ल्हादन चपल चाल चचल इत्यादि हाथीनिके रथ चढ निकसे। गौतमस्वामी राजा श्रेणिकसू कहे है—हे मगधाधिपति! कहा लग सामतोके नाम कहें? सबमें अग्रेसर अढाई कोडि निर्मलवंशके उपजे राक्षसनिके कुमार देवकुमार तुल्य पराक्रमी, प्रसिद्ध है यश जिनके, सकल गुणनिके मंडन, युद्धकू निकसे। महा बलवान मेघवाहन कुमार इन्द्रके समान रावणका पुत्र अतिप्रिय इन्द्रजीत सो भी निकसा। जयंतसमान धीरबुद्धि कुम्भकर्ण सूर्यके विमान तुल्य ज्योतिप्रभव नामा विमान उसमें आरूढ त्रिशूलका आयुध धरे निकसा। अर रावण भी सुमेरुके शिखर तुल्य पुष्पकनाम अपने विमानपर चढे इन्द्रतुल्य पराक्रम जिसका, सेनाकर आकाश भूमिकू आच्छादित करता हुवा, दैदीप्यमान आयुधनिकू धरे, सूर्यसमान

ज्योति जिसकी, सो भी अनेक सामंतनि सहित लंकासे बाहिर निकसा। वे सामंत शीघ्रगामी बहुरूप के धरणहारे वाहनोंपर चढे, कईएकनिके रथ, कईएकनिके तुरग, कईएकनिके हाथी, कईएकनिके सिंह, तथा शूर साभर बलध, भैंसा, उष्ट्र, मीढा, मृग, अष्टापद इत्यादि स्थलके जीव, अर मगरमच्छ आदि अनेक जलके जीव, अर नानाप्रकारके पक्षी तिनका रूप धरे देवरूपी वाहन तिनपर चढे अनेक योधा रावणके साथी निकसे। भामंडल अर सुग्रीवपर रावणका अतिक्रोध सो राक्षसवंशी इससे युद्धकूं उद्यमी भए। रावणकूं पयान करते अनेक अपशकुन भए तिनका वर्णन सुनो। दाहिनी तरफ शल्यकी कहिए सेह मंडलकूं बांधे भयानक शब्द करते प्रयाणका निवारण करै हैं। अर गृद्ध पक्षी भयंकर अपशब्द करते आकाशमें भ्रमते मानो रावणका क्षय ही कहै हैं। और अन्य भी अनेक अपशकुन भए। स्थलके जीव आकाशके जीव अति व्याकुल भए। क्रूरशब्द करते भए, रुदन करते भए। सो यद्यपि राक्षसनिके समूह में सबही पंडित हैं, शास्त्रका विचार जानै हैं तथापि शूरवीरताके गर्वसे मूढ भए, महा सेनासहित संग्रामके अर्थी निकसे। कर्मके उदयसे जीवनिका जब काल आवै है तब अवश्य ऐसाही कारण होय है। कालको इन्द्रके भी निवारिवे शक्ति नाहीं औरनिकी क्या बात? वे राक्षसवंशी योधा, बडे बडे बलवान युद्धमें दिया है चित्त जिन्होंने, अनेक वाहनोंपर चढे, नानाप्रकारके आयुध धरें, अनेक अपशकुन भए तो भी न गिने, निर्भय भए रामकी सेनाके सन्मुख आए।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रंथ ताकी भाषावचनिकाविषै रावणकी सेना लंकातें निकसि युद्धके अर्थ आवनेका व्याख्यान करनेवाला सत्तावनवां पर्व पूर्ण भया ॥ ५७ ॥ ५९७

अथानंतर समुद्रसमान रावणकी सेनाकूं देख नल नील हनुमान जाम्बवन्त आदि अनेक विद्याधर रामके हित, रामके कार्यकूं तत्पर, महा उदार, शूरवीर अनेक प्रकार हाथियोंके रथ चढे कटकसे निकसे। जामभित्र, चन्द्रप्रभ, रतिवर्द्धन, कुमुदावर्त, महेन्द्र, भानुमण्डल, अनुधर, दृढरथ, प्रीतिकंठ, महा

बल, समुन्नतबल, सवज्याति सवप्रिय, बल, सवसार, सव शरभभग, आभष्टि, निर्विष्ठ, सत्रास, विघ्न सूवन, नाव, बरबरक, कलोट पाटन–मडल, सग्राम–चपल, इत्यादि विद्याधर नाहरोके रथ चढे निकसे। विस्तीण ह तेज जिनका, नानाप्रकारके आयुध धरे अर महासामतपनाका स्वरूप लिए, प्रस्तार, हिम वान, गगप्रिय, लव इत्यादि सुभट हाथियोके रथ चढे निकसे। दुप्रष्ट, पूणचन्द्र, विधिसागर, घोष, प्रिय विगह स्कध चदन पादा चन्द्रकिरण, अरप्रतिघात महाभैरव, कीतन, दुष्ट सिहकटि, कुष्ट, समाधि, बहुल, हल, इन्द्रायुध गतत्रास सकट–प्रहार ये नाहरनिके रथ चढे निकसे। विद्युतकण बलशील सुपक्षरचन, घन, सम्मेद विचल साल काल, क्षत्रवर, अगज विकाल, लोलक, कालि, भग, भार्गोर्मि उरचित उतरग, तिलक कोल सुखेण चरल करत बलि भीमरव, धम, मनोहर मुख, सुख, प्रमत, मदक मत्त सार रत्नजटी, शिवभूषण दूषण कौल, विघट, विराधित, मनू, रणखनि, शेम वेला, आक्षपी महाधर नक्षत्र लब्ध, सग्राम–विजय जय, नक्षत्रमाल क्षोद, अतिविजय इत्यादि घोडोके रथ चढे निकसे। कसे ह रथ ? मनाहर समान शीघवेगकू धर। अर विद्युतवाह मरूद्वाह स्थाणु, मेघवाहन रथियाण प्रचन्डालि इत्यादि नानाप्रकारके वाहनोपर चढे युद्धकी श्रद्धाकू धर हनुमानके सग निकसे। अर विभीषण रावणका भाई रत्नप्रभ नामा विमानपर चढा, श्रीरामका पक्षी अति शोभता भया। अर युधावत, वमत, कान्त, कोमुदिनन्दन भूरि, कोलाहल, हेड, भावित, साधुवत्सल, अधचन्द्र, जिनप्रेमा, सागर, सागरोपम, मनोज, जिन, जिनपति इत्यादि योधा नानावणके विमानोपर चढे महाप्रबल सन्नाह कहिए बखतर पहिरे युद्धको निकसे। राम लक्ष्मण सुग्रीव हनुमान ये हस विमान चढे, और आकाशविष शोभत भए। रामके सुभट महामेघमाला सारिखे नानाप्रकारके वाहनचढे लकाके सुभटनिसू लडवकू उद्यमी भए। प्रलयकालके मेघसमान भयकर शब्द, शख आदि वादित्रनिके शब्द होते भए। झझा, भेरी, मदग, कम्पाल, धुन्धु मडुक, आमलातक हक्कार दुदु कान, उरवर, हेमगुज, काहल वीणा, इत्यादि अनेक बाजे बाजते भए। अर सिहके तथा हाथियो, घोडोके, भैसोके, रथोके, ऊटो,

मगो पक्षियोके शब्द होते भए। तिनसे दशोदिशा व्याप्त भई। जब राम रावणकी सेनाका संघट्ट भया तब लोक समस्त जीवनके सवेहकू प्राप्त भए। पृथ्वी कम्पायमान भई, पहाड कापे, योधा गव के भरे निगवसे निकसे। दोनो कटक अति प्रबल, लखिवे न आव। इन दोनो सेनामें युद्ध होने लगा। सामान्यचक्र, करोत कुठार, सेल खडग गदा शक्ति, बाण, भिडिमाल इत्यादि अनेक आयुधनिकरि परस्पर युद्ध होता भया। योधा हेलाकर योधाओको बुलावते भए। कसे है योधा ? शस्त्रोसे शोभित है भुजा जिनकी, अर युद्धका है सवसाज जिनके, ऐसे योधावोपर पडते भए। अतिवेगसे दौडे, परसेना में प्रवेश करते भए। परस्पर अतियुद्ध भया। लकाके योधावोने वानरवशी योधा दबाए जस सिंह गजोको दबावै। फिर बानरवशियोके प्रबल योधा अपने योधावोका भग देखकर राक्षसोके योधावो को हणते भए अर अपने योधावोको धीय बधाया। बानर वशियोके आग लकाके लोकोको चिगते देख बडे २ स्वामीभक्त, रावणके अनुरागी, महाबलसे मडित हाथियोके चिह्नकी ह ध्वजा जिनके, हाथियोके रथ चढे, महायोधा हस्त प्रहस्त वानरवशियो पर दौडे, अर अपने लोगोको धीय बधाया–हो सामत हो ! भय मत करो। हस्त प्रहस्त दोनो महा तेजस्वी वानरवशियोके योधाओको भगावते भए तब वानरवशियोके नायक महा प्रतापी हाथियोके रथ चढे, महा शूरवीर, परम तेजके धारक सुग्रीवके काकाके पुत्र, नल नील महा भयकर क्रोधायमान होय नानाप्रकार शस्त्रनिके युद्ध करवेकू उद्यमी भए। अनेक प्रकारके शस्त्रनिसे घनी वर युद्ध भया। दोनो तरफके अनेक योधा मुवे। नलने उछलकर हस्तको हता अर नीलने प्रहस्तकू हता। जब यह दोनो पडे तब राक्षनिकी सेना पराङग-मुख भई। गौतम स्वामी राजा श्रेणिकसू कहे ह–हे मगधाधिपति ! सेनाके लोक सेनापतिकू जबलग देखें तबलग ही ठहरें, अर सेनापति नाश भए सेना बिखर जाय, जस मालके टूटे अरहटकी घडी बिखर जाय, अर सिर विना शरीर भी न रह। यद्यपि पुण्याधिकारी बडे राजा सब बातमें पूर्ण ह तथापि विना प्रधान कार्यकी सिद्धि नाही। प्रधान पुरुषनिका सम्बधकर मनवाछित कार्यकी सिद्धि होय ह।

अर प्रधान पुरुषनिके सम्बन्ध बिना मन्दताको भजे है जैसे राहुके योगसे सूर्यको आच्छादित भए किरणो का समूह मन्द होय है।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महा पद्मपुराण संस्कृतग्रन्थ ताकी भाषावचनिकाविषै हस्त प्रहस्तका मरण वर्णन करनेवाला अठावनवां पर्व पूर्ण भया ॥ ५८ ॥

अथानन्तर राजा श्रेणिक गौतम स्वामीसू पूछता भया—हे प्रभो! हस्त प्रहस्त जैसे सामंत महा विद्यामें प्रवीण हुते, बडा आश्चर्य है नल नीलने कैसे मारे? इनके पूर्वभवका विरोध है कै याही भवका? तब गणधर देव कहते भए हे राजन! कर्मनिकर बंधे जीव तिनकी नानागति है। पूर्वकर्म के प्रभावकर जीवनिकी यही रीति है। जाने जाकू मारा सो वहहू ताकू मारनहारा है, अर जाने जाकू छुडाया सो ताका छुडावनहारा है। या लोकमें यही मर्यादा है। एक कुशस्थलनामा नगर वहा दोय भाई निर्धन एक माताके पुत्र, इन्धक अर पल्लव ब्राह्मण खेतीका कर्म करें, पुत्र स्त्री आदि जिनके कुटुम्ब बहुत, स्वभावहीसे दयावान, साधुनिकी निंदाते पराङमुख। सो एक जैनी मित्रके प्रसंगते दानादि धर्मके धारक भए। अर एक दूजा निर्धन युगल सो महा निर्दई मिथ्यामार्गी हुते राजाने दान बांटा सो विप्रनिमें परस्पर कलह भया, सो इंधक पल्लवको इन दुष्टोने मारा। सो दानके प्रसादते भोगभूमिमें उपजे, दोय पल्यकी आयु पाय मूए सो देव भए। अर वे क्रूर इनके मरणहारे अधर्म परणामनिकर मूवे सो कालिंजर नामा वनमें सूस्या भए। मिथ्यादृष्टि साधुनिके निंदक पापी कपटी तिनकी यही गति है। बहुरि तिर्यंचगतिमें चिरकाल भ्रमण कर मनुष्य भए सो तापसी भए। बढी है जटा जिनके, फल पत्रादिके आहारी, तीव्रतप कर शरीर कृश किया, कुज्ञानके अधिकारी, दोनो मूए सो विजयार्धकी दक्षिणश्रेणीमें अरिंजयपुर तहाका राजा अग्निकुमार, राणी अश्विनी, ताके ये दोय पुत्र, जगत प्रसिद्ध रावणके सेनापति भए। अर ते दोऊ भाई इन्धक अर पल्लव देवलोकते चयकर

मनुष्य भए । बहुरि श्रावकके व्रतपाल स्वर्गमें उत्तम देव भए । अर स्वर्गतैं चयकर किहकंधापुरविषै नल नील दोनो भाई भए । पहिले हस्त प्रहस्तके जीवने नल नीलके जीव मारे हुते सो नल नीलने हस्त प्रहस्त मारे । जो पूर्वभवमें काहूकूं मारे है सो ताकर मारा जाय है अर जो काहूकूं पालै है सो ताकर पालिए है । अर जो जासूं उदासीन रहे है सो भी तासूं उदासीन रहै । जाहि देख निःकारण क्रोध उपजे सो जानिए परभवका शत्रु है, अर जाहि देख चित्त हर्षित होय सो निःसंदेह परभवका मित्र है । जो जलविषै जहाज फट जाय है अर मगर मच्छादि बाधा करै है, अर थलविषै म्लेच्छ बाधा करै है सो सब पापका फल है । पहाड समान माते हाथी अर नानाप्रकारके आयुध धरे अनेक योधा, अर महा तेजकूं धरे अनेक तुरंग, अर बक्तर पहिरे बडे बडे सामंत इत्यादि जो अपार सेनासूं युक्त जो राजा अर निःप्रमाद तो भी पुण्यके उदयविना युद्धमें शरीरकी रक्षा न होय सकै । अर जहां तहां तिष्ठता, अर जाके कोऊ सहाई नाहीं, ताकी तप अर दान रक्षा करे । न देव सहाई, न बांधव सहाई । अर प्रत्यक्ष देखिए है, धनवान शूरवीर कुटुम्बका धनी सब कुटुम्बके मध्य मरण करै है कोऊ रक्षा करने समर्थ नाहीं । पात्रदानसे व्रत अर शील अर सम्यक्त्व अर जीवनिकी रक्षा होय है । दयादानसे जाने धर्म न उपार्जा अर बहुत काल जीया चाहे सो कैसे बनै ? इन जीवनिके कर्म तप बिना न विनशैं । ऐसा जानकर जो पंडित है तिनकूं वैरियो पर भी क्षमा करनी । क्षमा समान और तप नाहीं । जे विचक्षण पुरुष हैं वे ऐसी बुद्धि न करें कि यह दुष्ट बिगाड करै है । या जीवका उपकार अर बिगाड केवल कर्माधीन है, कर्म ही सुख दुःखका कारण है । ऐसा जानकर जे विचक्षण पुरुष हैं ते बाह्य सुख दुःखके निमित्त कारण अन्य पुरुषनि पर रागद्वेषभाव न धरैं । अंधकारसे आच्छादित जो पंथ तामें नेत्रवान पृथ्वीपर पडे सर्प पर पग धरै अर सूर्यके प्रकाशसे मार्ग प्रकट होय तब नेत्रवान सुखसे गमन करै । तैसे जौलग मिथ्यारूप अन्धकारसे मार्ग नाहीं अवलोकै तौलक नरकादि विवरमें पडे, अर जब ज्ञान सूर्यका उद्योत होय तब सुखसे अविनाशपुर जाय पहुंचे ।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रंथ ताकी भाषावचनिकाविषै हस्त प्रहस्त नल नीलके पूर्वभवका वर्णन करनेवाला उनसठवां पर्व पूर्ण भया ॥५९॥

अथानन्तर हस्त प्रहस्त, नल नीलने हते सुन बहुत योधा क्रोधकर युद्धकू उद्यमी भए। मारीच सिंह–जघन शम्भु स्वयम्भू, ऊर्जित शुक सारण चन्द्र अर्क जगतवीभत्स निस्वन ज्वर उग्र क्रमकर वज्राक्ष उद्दाम निष्ठुर गम्भीरनाद सनद सवद्ध बाहू अनुसिदन इत्यादि राक्षस पक्षके योधा वानरवंशियोकी सेनाकू क्षोभ उपजावते भए। तिनकू प्रबल जान वानरवंशियोके योधा युद्धकू उद्यमी भए। मदन मदनांकुर संताप प्रक्षित आक्रोश नन्दन दुरित अनघ पुष्पास्त्र विघ्न प्रियकर इत्यादि अनेक वानरवंशी योधा राक्षसनिसे लडते भए। याने वाकू ऊचे स्वर से बुलाया, वाने याकू बुलाया। इनके परस्पर संग्राम भया। नाना प्रकारके शस्त्रनिकरि आकाश व्याप्त होय गया। संताप तो मारीचसे लडता भया, अर अप्रथित सिंहजघनसे, अर विघ्न उद्यामसे, अर आक्रोश सारणसे, ज्वर नन्दनसे। इन समान योधावोमें अद्भुत युद्ध भया। तब मारीचने संतापका निपात किया, अर नन्दनने ज्वरके वक्षस्थलमे बरछी दई, अर सिंहकटिने प्रथितके, अर उद्दामकीर्तिने विघ्नकू हणा। ता समय सूर्य अस्त भया। अपने २ पतिकू प्राणरहित भए सुन इनकी स्त्री शोकके सागरमें मग्न भई, सो उनका रात्रि दीर्घ होती भई।

दूजे दिन महा क्रोधके भरे सामन्त युद्धकू उद्यमी भए। वज्राक्ष अर क्षुभितार, मृगेन्द्रदमन अर विधि, शम्भू स्वयम्भू, चन्द्राक अर वज्रोदर इत्यादि राक्षस पक्षके बडे २ सामंत अर वानरवंशियोके सामंत परस्पर जन्मातरके उपार्जित वैर तिनसे महा क्रोधरूप होय युद्ध करते भए। अपने जीवनमें निस्पृह सक्रोधने महाक्रोधकर खिपितारिको महा ऊचा स्वरकर बुलाया। अर बाहुबलीने मृगारिदमनकू बुलाया। अर वितापीके विधिकू बुलाया, इत्यादि अनेक योधा परस्पर युद्ध करते भए। अर योधा अनेक मूए। शार्दूलने वज्रोदरकू घायल किया, अर खिपितारि सक्रोधको मारता भया,

अर शम्भूने विशालद्युति मारा, अर स्वयम्भूने विजयकू लोहयष्टिसे मारा, अर विधिने वितापीकू गदासे मारचा, बहुत कष्टसे। या भांति योधावोने युद्धमें अनेक योधा हते सो बहुत बेर तक युद्ध भया।

राजा सुग्रीव अपनी सेनाकू राक्षसनिकी सेनासे खेदखिन्न देख आप महा क्रोधका भरा युद्ध करवेकू उद्यमी भया। तब अजनीका पुत्र हनुमान हाथिनिके रथपर चढा राक्षसनिसू युद्ध करता भया। सो राक्षसनिके सामंतनिके समूह पवनपुत्रकू देखकर जैसे नाहरकू देख गाय डरें तैसे डरते भए। अर राक्षस परस्पर बात करते भए कि यह हनुमान बानरध्वज आज घनोंकी स्त्रीनिकू विधवा करेगा। तब याके सन्मुख माली आया। ताहि आया देख हनुमान धनुषविषै बाण तान सन्मुख भए। तिनमें महायुद्ध भया। मंत्री मंत्रीनिसे लडने लगे, रथी रथीनिसू लगे, घोडानिके असवार घोडानिके असवारनिसू लडते भए, हाथिनिके असवार हाथिनिके असवारनिसू लडते भए। सो हनुमानकी शक्ति करि माली पराङमुख भया तब वज्रोदर महा पराक्रमी हनुमानपर दौडा, युद्ध करता भया। चिरकाल युद्ध भया सो हनुमानने वज्रोदरकू रथरहित किया। तब वह और दूजे रथपर चढ हनुमान पर दौडा। तब हनुमानने बहुरि ताकू रथरहित किया। तब बहुरि पवनसे हू अधिक वेग है जाका ऐसे रथपर चढ हनुमानपर दौडा तब हनुमानने ताहि हता सो प्राणरहित भया। तब हनुमानके सन्मुख महाबलवान रावणका पुत्र जम्बूमाली आया। सो आवते ही हनुमानकी ध्वजा छेद करता भया। तब हनुमानने क्रोधसे जम्बूमालीका बक्तर भेद्या, धनुष तोड डारचा, जैसे तृणको तोडे। तब मंदोदरीका पुत्र नवा बक्तर पहिर हनुमानके वक्षस्थलविषै तीक्ष्ण बाणनिसे घाव करता भया, सो हनुमानने ऐसा जाना मानो नवीनकमलकी नालिकाका स्पर्श भया। कैसा है हनुमान? पर्वत समान निश्चल है बुद्धि जाकी, बहुरि हनुमानने चन्द्रवक्र नामा बाण चलाया सो जम्बूमालीके रथके अनेक सिंह जुते सो छूट गए, तिनहीके कटकविषै पडे। तिनकी विकराल दाढ, विकराल बदन, भयंकर नेत्र, तिनकरि सकल सेना विह्वल भई। मानो सेनारूप समुद्रविषै ते सिंह कल्लोलरूप भए उछलते फिरै है, अथवा दुष्ट जलचर जीवनिसमान विचरैं

ह । अथवा सेनारूप मेघविषै बिजलीसमान चमक है, अथवा संग्रामही भया संसारचक्र ताविषै सेनाके लोक, तेई भए जीव, तिनकूं ये रथके छुटे सिंह कर्मरूपहोय महादुखी करै है। इनसे सबसेना दुःखरूप भई। तुरंग गजरथ पियादे सब ही विह्वल भए, रणका उद्यम तज दशोदिशाकूं भाजे। तब पवनका पुत्र सबो को पेल रावण तक जाय पहुँचा, दूरसे रावणको देखा। सिंहके रथपर चढा हनुमान धनुषबाण लेय रावणपर गया। रावण सिंहोंसे सेनाकूं भयरूप देख अर हनुमानकूं काल समान महायुद्ध र जान आप युद्ध करवेकूं उद्यमी भया। तब महोदर रावणकूं प्रणामकर हनुमानपर महाक्रोधसे लडवेकूं आया। सो याके अर हनुमानके महायुद्ध भया। ता समयविषै वे सिंह योधावोंने वश किए, सो सिंहो को वशीभूत भए देख महाक्रोधकर समस्त राक्षस हनुमानपर पडे। तब अंजनीका पुत्र महाभट पुण्याधिकारी तिन सबकूं अनेक बाणनिसे थाभता भया। अर अनेक राक्षसनिनें अनेक बाण हनुमानपर चलाए, परन्तु हनुमानको चलायमान न करते भए। जैसे दुर्जन अनेक कुवचनरूप बाण संयमी के लगावें, परन्तु तिनके एक न लागे, तैसे हनुमानके राक्षसनिका एक बाण भी न लाग्या। अनेक राक्षस निकरि अकेला हनुमानकूं बेढा देख वानरवंशी विद्याधर युद्धके निमित्त उद्यमी भए। सुषेण नल नील प्रीतिकर विराधित सन्त्रासित हरिकट सूर्यज्योति महाबल जाम्बूनदके पुत्र, कई नाहरनिके रथ, कई गजनिके रथ, कई तुरंगनिके रथ चढे रावणकी सेनापर दौडे, सो वानरवंशियोंने रावणकी सेना सब दिशाविषै विध्वंस करी, जैसे क्षुधादि परीषह तुच्छ व्रतियोंके व्रतोंको भंग करैं। तब रावण अपनी सेना कूं व्याकुल देख आप युद्ध करवेकूं उद्यमी भया। तब कुम्भकरण रावणकूं नमस्कारकर आप युद्धकूं चला। तब याहि महाप्रबल योधा रणमें अग्रगामी जान सुषेण आदि सबही वानरवंशी व्याकुल भए। जब वे चन्द्ररश्मि जयस्कन्ध चन्द्राहु रतिवर्धन अंग अंगद, सम्मेद, कुमुद, कशमंडल, बलि, चण्ड तरंग सार रत्नजटी जय वेलक्षिपी वसन्त कोलाहल इत्यादि अनेक योधा रामके पक्षी कुम्भकरणसे युद्ध करने लगे तो कुम्भकरणने सबको निद्रा नामा विद्यासे निद्राके वश किए। जैसे दर्शनावरणीय कर्म

दशनके प्रकाशकू रोक तस कुम्भकरणकी विद्या वानरवंशिनिके नेत्रनिके प्रकाशकू रोकती भई। सब ही कपिध्वज निद्रासे घूमने लगे अर तिनके हाथनिसे हथियार गिर पडे। तब इन सबोको निद्रावश अचेतन समान देख सुग्रीवने प्रतिबोधिनी विद्या प्रकाशी। सो सब वानरवशी प्रतिबोध भए, अर हनुमानादि युद्धकू प्रवर्ते। वानरवशीनिके बलमें उत्साह भया अर युद्धमें उद्यमी भए, अर राक्षसनिकी सेना दबी। तब रावण आप युद्धकू उद्यमी भए, तब बडा बेटा इन्द्रजीत हाथ जोड शिर निवाय विनती करता भया—हे तात! हे नाथ! यदि मेरे होते आप युद्धकू प्रवर्त्ते तो हमारा जनम निष्फल है, जो तण नखहीसे उपड आवे उसपर फरसी उठावना कहा? तात आप निश्चित होवे, मै आपकी आज्ञाप्रमाण करूंगा। ऐसा कहकर महाहर्षित भया पर्वतसमान त्रलोक्यकटक नामा गजेन्द्रपर चढ युद्धकू उद्यमी भया। कैसा है गजेन्द्र? इन्द्रके गज समान अर इन्द्रजीतकू अतिप्रिय, अपना सब साज लेय मंत्रीनिसहित ऋद्धिसे इन्द्र समान रावणका पुत्र कपिनपर क्रूर भया। सो महाबलका स्वामी मानी आवत प्रमाण ही वानर वंशीनिका बल अनेक प्रकारके आयुधनिकरि जो पूर्ण हुता सब विह्वल किया। सुग्रीवकी सेनामें ऐसा सुभट कोई न रहा जो इन्द्रजीतके बाणनिकरि घायल न भया। लोक जानते भए जो यह इन्द्रजीत कुमार नाही, अग्निकुमारोका इन्द्र है अथवा सूर्य है। सुग्रीव अर भामंडल ये दोऊ अपनी सेनाकू इन्द्रजीत कर दबी देख युद्धकू उद्यमी भए। इनके योधा इन्द्रजीतके योधानिसे अर ये दोनो इन्द्रजीतसे युद्ध करने लगे सो परस्पर योधा योधावोको हकार हकार बुलावते भए। शस्त्रोसे आकाशमे अंधकार होय गया, योधानिके जीवनेकी आशा नाही। गजसे गज, रथसे रथ, तुरगसे तुरग, सामंतोसे सामंत उत्साहकर युद्ध करते भए। अपने अपने नाथके अनुरागविषै योधा परस्पर अनेक आयुधनिकर प्रहार करते भए। ताही समय इन्द्रजीत सुग्रीवकू समीप आया देख ऊँचे स्वरकर अपूर्व शस्त्ररूप दुर्वचननिकर छेदता भया अरे वानरवंशी, पापी स्वामीद्रोही! रावण स्वामीको तज स्वामीके शत्रुका किंकर भया। अब मुझसे कहा जायगा तेरे शिरको तीक्ष्ण बाणनिकरि

तत्काल छेदूंगा। वे दोनो भाई भूमिगोचरी तेरे रक्षा करें। तब सुग्रीव कहता भया ऐसे वृथा गर्वके वचन कर कहा तू मानशिखर पर चढा है? सो अबारही तेरा मानभंग करूंगा। जब ऐसा कहा तब इन्द्रजीतने कोपकर धनुष चढाय बाण चलाया, अर सुग्रीवने इन्द्रजीत पर चलाया। दोनो महा योधा परस्पर बाणनिकर लडते भए। आकाश बाणनिसे आच्छादित होय गया। मेघवाहनने भामण्डलको हकारा सो दोनो भिडे। अर विराधित अर वज्रनक्र युद्ध करते भए। सो विराधितने वज्रनक्रके उरस्थलमें चक्रनामा शस्त्रकी दई अर वज्रनक्रने विराधितके दई। शूरवीर घात पाय शत्रुके घाव न करै तो लज्जा है, चक्रनिकरि बक्तर पीसे गए तिनके अग्निकी कणका उछली सो मानो आकाशसे उलकाओंके समूह पडे हैं। लंकानाथके पुत्रने सुग्रीवपर अनेक शस्त्र चलाए। लंकेश्वरके पुत्र संग्राममें अटल हैं जा समान दूजा योधा नाहीं। तब सुग्रीवने वज्रदंडसे इन्द्रजीतके शस्त्र निराकरण किए जिनके पुण्यका उदय है तिनका घात न होय। फिर क्रोधकर इन्द्रजीत हाथीसे उतर सिंहके रथ चढा। समाधानरूप है बुद्धि जाकी, नानाप्रकारके दिव्य शस्त्र अर सामान्य शस्त्र इनमें प्रवीण। सुग्रीव पर मेघबाण चलाया, सो सम्पूर्ण दिशा जलरूप होय गई। तब सुग्रीवने पवनबाण चलाया, सो मेघबाण बिलाय गया। अर इन्द्रजीतका छत्र उडाया, अर ध्वजा उडाई। अर मेघवाहनने भामंडल पर अग्निबाण चलाया, सो भामंडलका धनुष भस्म होय गया अर सेनामें अग्नि प्रज्वलित भई। तब भामण्डलने मेघवाहनपर मेघबाण चलाया सो अग्निबाण बिलाय गया अर अपनी सेनाकी बहुरि रक्षा करी। मेघवाहनने भामण्डलकू रथ रहित किया तब भामण्डल दूजे रथ चढ युद्ध करवे लगा। मेघवाहनने तामसबाण चलाया सो भामण्डलकी सेनामें अंधकार होय गया, अपना पराया कुछ सूझै नाहीं, मानो मूर्छाकूं प्राप्त भए। तब मेघवाहनने भामण्डलकू नागपाससे पकडा, मायामई सर्प सब अंगमें लिपट गए, जैसे चन्दनके वृक्षके नाग लिपट जावें। कैसे हैं नाग? भयंकर जे फण तिनकर महा विकराल। भामण्डल पृथ्वीपर पडा अर याही भांति इन्द्रजीतने सुग्रीवको नागपाशकर पकडा सो धरतीपर पडा। तब बिभीषण जो विद्या

बलमें महाप्रवीण श्रीराम लक्ष्मणसू दोऊ हाथ जोड सीस निवाय कहता भया–हे राम महाबाहु! हे लक्ष्मण महावीर! इन्द्रजीतके बाणनिसे व्याप्तभई सब दिशा देखहु। धरती अर आकाश बाणनिकर आच्छादित है। उल्कापातके स्वरूप नागबाण तिनकरि सुग्रीव अर भामण्डल दोऊ भूमिविषै बधे पडे है। मन्दोदरीके दोनो पुत्रोने अपने दोनो महाभट पकडे, अपनी सेनाके जे दोनो मूल थे वे पकडे गए। तब हमारे जीवनकरि कहा? इन विना सेना शिथिल होय गई है। देखो दशो दिशाकू लोक भागे हैं, अर कुम्भकरणने महायुद्धविषै हनुमानकू पकडा है। कुम्भकरणके बाणनिकरि हनुमान जरजरे भए, छत्र उड गये, ध्वजा उडगई, धनुष टूटा, बक्तर टूटा। रावणके पुत्र इन्द्रजीत अर मेघवाहन युद्ध विषै लग रहे है। अब वे आयकर सुग्रीव भामडलकू ले जायगे, सौ वे न ले जावें तो पहिले ही आप उनकू ले आवें। वे दोनो चेष्टारहित है सो मै उनके लेवेकू जाऊ हू। अर आप भामण्डल सुग्रीवकी सेना निर्नाथ होय सो उसे थाभहु। या भाति विभीषण राम लक्ष्मणसे कहे है ताही समय सुग्रीवका पुत्र अगद छानेछाने कम्भकरण पर गया, अर उसका उत्तरासनवस्त्र परे किया, सो लज्जाके भारकर व्याकुल भया। वस्त्रको थाभे तो लग, हनुमान इसकी भुजाफाससे निकस गया। जसे नवा पकडा पक्षी पिजरे से निकस जाय। हनुमान नवीन ज्योतिकू धरे अर अगद दोनो एक विमान बठे ऐसे शोभते भए मानो देव ही है। अर अगदका भाई अग अर चद्रोदयका पुत्र विराधित इन सहित लक्ष्मण सुग्रीवकी अर भामडलकी सेनाकू धय बधाय थाभते भए। अर विभीषण इन्द्रजीत मेघवाहनपर गया सो विभीषणकू आवता देख इन्द्रजीत मनमें विचारता भया–जो न्याय विचारिए तो हमारे पितामें अर यामें कहा भेद है? तात याके सन्मुख लडना उचित नाहीं। सो याके सन्मुख खडा न रहना यही योग्य है। अर ये दोनो भामडल सुग्रीव नागपाशमें बधे सो निःसन्देह मृत्युकू प्राप्त भए। अर काकात भाजिए तो दोष नाहीं। ऐसा विचार दोनो भाई महा अभिमानी, न्यायके वेत्ता विभीषणसे टरि गए। अर विभीषण त्रिशूलका है आयुध जाके, रथसे उतर सुग्रीव भामडलके समीप गया। सो दोनोको नागपाशसे मूर्छित देख खेद खिन्न

होता भया। तब लक्ष्मण रामसू कही हे नाथ ! ये दोनो विद्याधरनिके अधिपति, महासेनाके स्वामी, महा शक्तिके धनी, भामण्डल सुग्रीव रावणके पुत्रनि शस्त्र रहित कीए, मूर्छित होय पडे ह। सो इन बगर आप रावणकू कस जीतेंगे। तब रामकू पुण्यके उदयसे गरुडेन्द्रने वर दिया था सो चितार लक्ष्मणसे राम कहते भए-हे भाई ! वशस्थल गिरिपर देशभूषण कुलभूषण मुनिका उपसग निवारा उस समय गरुडेन्द्रने वर दिया था-ऐसा कह महा लोचन रामने गरुडेन्द्रको चितारा, सो सुख अवस्था मे तिष्ठ था। सिहासन कम्पायमान भया। तब अवधि कर राम लक्ष्मणका काम जान चितावग नामा देवकू दोय विद्या देय पठाया, सो आयकर बहुत आदरसू राम लक्ष्मणसे मिल्या। अर दोऊ विद्या तिनक दई। श्रीरामको सिहवाहिनी विद्या दई, अर लक्ष्मणकू गरुडवाहिनी विद्या दई। तब यह दोनो धीर विद्या लेय चिन्तावेगको बहुत सन्मान कर जिनेन्द्रकी पूजा करते भए अर गरुडेन्द्रकी बहुत प्रशसा करी। वह देव इनको जलबाण, अग्निबाण, पवनबाण इत्यादि अनेक दिव्य शस्त्र देता भया। अर चाद सूय सारिखे दोनो भाइयोको छत्र दिए, अर चमर दिए, नानाप्रकारके रत्न दिए, कातिके समूह अर विद्युद्वक्र नाम गदा लक्ष्मणको दई, अर हल मूसल दुष्टोको भयके कारण रामकू दिए। या भाति वह देव इनको देवोपनीत शस्त्र देय अर सकडो आशिष देय अपने स्थानक गया। यह सब धमका फल जानो जो समयमें योग्य वस्तुकी प्राप्ति होय, विधि पूवक निर्दोष धम आराधा होय, उसके ये अनुपम फल ह। जिनकू पाय करि दु खकी निवत्ति होय, महावीयके धनी आप कुशलरूप, अर औरनिकू कुशल कर। मनुष्यलोककी सम्पदाकी कहा बात, पुण्याधिकारियोकू देवलोककी वस्तु भी सुलभ होय ह। तात निरतर पुण्य करहु। अहो प्राणि हो ! जो सुख चाहो तो प्राणियोको सुख देवो। जिस धमके प्रसादसे सूय समान तेजके धारक होवो अर आश्चयकारी वस्तुनिका सयोग होय। ६८

इति श्रीरविषेणाचायविरचित महापद्मपुराण सस्कृत ग्रथ ताकी भाषावचनिकाविष राम लक्ष्मणक अनेक विद्याका लाभ वणन करनेवाला साठवा पव पूण भया ॥ ६० ॥

———

अथानन्तर राम लक्ष्मण दोऊ वीर तेजके मंडलमें मध्यवर्ती, लक्ष्मीके निवास, श्रीवत्स लक्षण कू धरे, महामनोज्ञ कवच पहिरे, सिंहवाहन गरुडवाहन पर चढे, महासुन्दर सेना सागरके मध्य, सिंह की अर गरुडकी ध्वजा धरें, परपक्षके क्षय करवेकू उद्यमी, महासमर्थ सुभटोंके ईश्वर, संग्राम भूमि के मध्य प्रवेश करते भए। आगे आगे लक्ष्मण चला जाय है। दिव्य शस्त्रनिके तेजसे सूर्यके तेजकू आच्छादित करता हुआ हनुमान आदि बडे बडे योधा बानरवंशी तिनकर मंडित। वर्णन में न आवे ऐसा देवोंका सा रूप धरे, बारह सूर्यकीसी ज्योतिलिये, लक्ष्मणको विभीषणने देखा। सो जगतकू आश्चर्य उपजावे ऐसे तेजकर मंडित, सो गरुडवाहनके प्रतापकर नागपासका बंधन भामण्डल सुग्रीवका दूर भया। गरुड के पक्षोंकी पवन क्षीरसागरके जलकू क्षोभ रूप करे, उससे वे सर्प विलाय गये जैसे साधुवोंके प्रतापसे कुभाव मिट जाय। पक्षनकी कांतिकर लोक ऐसे होय गए मानो सुवर्णके रस कर निरमापे हैं। तब भामण्डल सुग्रीव नागपाससे छूट विश्रामकू प्राप्त भए, मानो सुख निद्रा लेय जाग अधिक शोभते भए। तब इनकू देख श्रीवक्ष प्रथादिक सब विद्याधर विस्मयकू प्राप्त भए अर तब ही श्रीराम लक्ष्मणकी पूजाकर वीनती करते भए—हे नाथ! आजकीसी विभूति हम अब तक कभी न देखी—वाहन, वस्त्र, सम्पदा, छत्र ध्वजामें अद्भुत शोभा दीखे है। तब श्रीरामने जबसे अयोध्यासे चले तबसे लेय सब वृत्तांत कहा, कुलभूषण, देशभूषणका उपसर्ग दूर किया सो सब वृत्तांत कहा। तिन्होंको केवल उपजा अर कही—हमसे गरुडेन्द्र तुष्टायमान भया। सो अबार उसका चिन्तवन किया उससे यह विद्याकी प्राप्ति भई। तब वे यह कथा सुन परम हर्षकू प्राप्त भए, अर कहते भए इस ही भव में साधु सेवासे परम यश पाइए है, अर अति उदार चेष्टा होय है, अर पुण्यकी विधि प्राप्ति होय है। अर जैसा साधु सेवा से कल्याण होय है वैसा न माता पिता, न मित्र, न भाई, कोई जीवोंको न करे। साधु या प्राणी सेवाकी प्रशंसामें लगाया है चित्त जिन्होंने, जिनेन्द्रके मार्गकी उन्नतिमें उपजी है श्रद्धा जिनके, वे राजा बलभद्र नारायणका आश्रयसे महा विभूतिसे शोभते भए। भव्यजीवरूप कमल तिनकू प्रफुल्लित करन- ६०१

...के समुद्रमें मग्न भए। अर श्रीराम लक्ष्मणकी सेवामें ...र्छा रूप निद्रासे रहित भए हैं नेत्र कमल जिनके श्री ...वो सारिखे सवथा प्रकार धममें श्रद्धा करते भए। जो ...नके योगकू प्राप्त होय है। यह प्राणी अपने स्वाथसे ...महिमा होय है। जसा सूय पर पदाथको प्रकाश वसे

...महापद्मपुराण संस्कृत ग्रंथ ताकी भाषावचनिकाविषै सुग्रीव भामंडलका नाग पासतै छूटना अर हनुमानकी ... ...कूला राम लक्ष्मणकू सिंहविमान गरुडविमानकी प्राप्ति निरूपण वणनक नेवाला इकसठवां पव पूण भया।६१।

अथानन्तर श्रीरामके पक्षके योधा महा पराक्रमी, रणरीतिके वेत्ता शूरवीर, युद्धकू उद्यमी भए। वानरवंशियो की सेनासे आकाश व्याप्त भया, अर शंख आदि वादित्रनिके शब्द अर गजोंकी गजना अर तुरगनिके हींसिवेका शब्द सुनकर कैलाशका उठावनहारा जो रावण, अति प्रचंड है बुद्धि जाकी, महामानी, देवन सारिखी है विभूति जाके, महा प्रतापी, बलवान, सेनारूप समुद्रकर संयुक्त, शस्त्रनिके तेजकर पृथ्वीमें प्रकाश करता, पुत्र भ्रातादिक सहित लंकासे निकसा, युद्धकू उद्यमी भया। दोनो सेनाके योधा बखतर पहिर संग्रामके अभिलाषी नानाप्रकार वाहननिविषै आरूढ, अनेक आयुधनिके धरणहारे पूर्वोपार्जित कमसे महाक्रोधरूप परस्पर युद्ध करते भए। चक्र, करोत, कुठार, धनुष बाण, खडग, लोहयष्टि, वज, मुदगर, कनक, परिध इत्यादि अनेक आयुधनि से परस्पर युद्ध भया। घोडेके असवार घोडेके असवारोंसे लडने लगे, हाथियोके असवार हाथियोके असवारोसे, रथोके रथियोसे महाधीर लडने लगे। सिंहोंके असवार सिंहोंके असवारोसे, पयादे पयादोंसे भिडते भए। बहुत देरमें कपिध्वजोंकी ... योधावोंसे दबी। तब नल नील संग्राम करने लगे। सो इनके युद्धसे राक्षसों... श्वरके योधा समुद्रकी कल्लोल सारिखे चंचल, अपनी सेनाकू कम्पायमा...

६१०

चन्द्राक, सुखसारण, कतातमृत्यु, भूतनाव, राक्षोधन इत्यादि महा
कपिध्वजोकी सेनाकू दबावते भए। तब मर्कटवशी योद्धा
उठे। सो उठते ही नानाप्रकारके आयुधनिकरि ... अति उदार
जिनकी। तब रावण अपनी सेनारूप समुद्रकू ... अग्निसे सूखता देख आप
क्रोधकर युद्ध करवेकू उद्यमी भया। सो रा... वानरवशी सूखे पात उडने
... करवेकू आप रावणसे युद्ध
...रादर वचन कहता भया, रे
...। मैं तुझे देखे प्रसन्न नाहीं।
... मोस कहां जायगा। तब रावण
...दुचेष्टि नरकाधिकार! तोकू तो
...र तो सारिखा मूर्ख और कौन जो
...से कोई दुर्बुद्धि पाप कर्मके उदयसे
... रावण! बहुत कहनेकरि कहा? तेरे
... बिगडा नाहीं। जो तू अपना कल्याण
...मान तज रामकू प्रसन्न कर। स्त्रीके निमित्त
... नहीं मान है सो जानिए है तेरी मृत्यु नजीक ६११
...मान है। तू मोहसे उन्मत्त भया है। ये वचन भाईके सुन
... तीक्ष्णबाण लेय विभीषणपर दौड्या। और भी रथ घोडे हाथिनके
...र महायुद्ध करते भए। विभीषणने भी रावणकू आवता देख अर्धचन्द्र
...जा उडाई, अर रावणने क्रोधकर बाण चलाया सो विभीषणका धनुष तोड्या,

हारी यह पवित्र कथा, उसे सुनकर वे सब ही हर्षके समुद्रमें मग्न भए। अर श्रीराम लक्ष्मणकी सेवामें अति प्रीति करते भए। अर भामण्डल सुग्रीव, मूर्छा रूप निद्रासे रहित भए हैं नेत्र कमल जिनके श्री भगवानकी पूजा करते भए। वे विद्याधर श्रेष्ठ देवो सारिखे सवथा प्रकार धममें श्रद्धा करते भए। जो पुण्याधिकारी जीव ह सो इस लोकमें परम उत्सवके योगकू प्राप्त होय ह। यह प्राणी अपने स्वाथसे ससारमें महिमा नाहीं पाव है, केवल परमाथसे महिमा होय ह। जसा सूय पर पदाथको प्रकाश वसे शोभा पाव ह।

इति श्रीरविषेणाचायविरचित महापद्मपुराण सस्कृत ग्रथ ताकी भाषावचनिकाविष सुग्रीव भामडलका नाग पासतें छूटना अर हनुमानको कुम्भकरणकी भुजापासित छूटना राम लक्ष्मणक सिहविमान गरुडविमानका प्राप्ति निरूपण वणनकरनेवाला इकसठवां पव पूण भया।६१।

अथानन्तर श्रीरामके पक्षके योधा महा पराक्रमी, रणरीतिके वेत्ता, शूरवीर, युद्धकू उद्यमी भए। बानरवशियो की सेनासे आकाश व्याप्त भया, अर शख आदि वादित्रनिके शब्द अर गजोकी गजना अर तुरगनिके हींसिवेका शब्द सुनकर कलाशका उठावनहारा जो रावण, अति प्रचड ह बुद्धि जाकी, महामानी, देवन सारिखो ह विभूति जाके, महा प्रतापी, बलवान, सेनारूप समुद्रकर सयुक्त, शस्त्रनिके तेजकर पृथ्वीमें प्रकाश करता, पुत्र भ्राताविक सहित लकासे निकसा, युद्धकू उद्यमी भया। दोनो सेनाके योधा बखतर पहिर सग्रामके अभिलाषी नानाप्रकार वाहननिविष आरूढ, अनेक आयुधनिके धरणहारे पूर्वोपार्जित कमसे महाक्रोधरूप परस्पर युद्ध करते भए। चक्र, करोत, कुठार, धनुष बाण, खडग, लोहयष्टि, वज्र, मुदगर, कनक, परिध इत्यादि अनेक आयुधनि से परस्पर युद्ध भया। घोडेके असवार घोडेके असवारो से लडने लगे, हाथियोके असवार हाथियोके असवारोसे, रथोके रथियोसे महाधीर लडने लगे। सिहो के असवार सिहोक असवारोसे, पयादे पयादोंसे भिडते भए। बहुत देरमें कपिध्वजोकी सेना राक्षसोके योधावोसे दबी। तब नल नील सग्राम करने लगे। सो इनके युद्धसे राक्षसोकी सेना चिगी। तब लकेश्वरके योधा समुद्रकी कल्लोल सारिखे चचल, अपनी सेनाकू कम्पायमान देख, विद्युद्वचन मारीच,

चन्द्राक, सुखसारण, कृतातमृत्यु, भूतनाद, सक्रोधन इत्यादि महा सामन्त अपनी सेनाकू धीर्य बधायकर कपिध्वजोकी सेनाकू दबावते भए। तब मकटवंशी योद्धा अपनी सेनाकू चिगा जान हजारो युद्धको उठे। सो उठते ही नानाप्रकारके आयुधनिकरि राक्षसनिकी सेनाकू हणते भए, अति उदार है चेष्टा जिनकी। तब रावण अपनी सेनारूप समुद्रकू कपिध्वज रूप प्रलय कालकी अग्निसे सूखता देख आप कोपकर युद्ध करवेकू उद्यमी भया। सो रावणरूप प्रलयकालकी पवनसे बानरवंशी सूखे पात उडने लगे। तब विभीषण महायोधा बानर वंशियोकू धीर्य बधाय तिनकी रक्षा करवेकू आप रावणसे युद्धकू सन्मुख भया। तब रावण लहुरे भाईकू युद्धमे उद्यमी देख क्रोधकर निरादर वचन कहता भया, रे बालक! तू लघुभ्राता है, सो मारवे योग्य नाहीं। मेरे सन्मुखसे दूर हो। मै तुझे देखे प्रसन्न नाहीं। तब विभीषणने रावणसे कही—कालके योगसे तू मेरी दृष्टि पडा। अब मोसे कहाँ जायगा। तब रावण अति क्रोधमें कहता भया—रे पुरुषत्वरहित क्लिष्ट धृष्ट पापिष्ट कुचेष्टि नरकाधिकार! तोकू तो सारिखे दीनकू मारे मुझे हर्ष नाहीं। तू निबल रंक अवध्य है। अर तो सारिखा मूर्ख और कौन जो विद्याधरोकी सन्तानोमें होयकर भूमिगोचरियोका आश्रय करै, जैसे कोई दुर्बुद्धि पाप कर्मके उदयसे जिनधर्मको तज मिथ्यात्वका सेवन करै। तब विभीषण बोला हे रावण! बहुत कहनेकरि कहा? तेरे कल्याणकी बात तुझे कहू हूँ सो सुन। एती भई तो भी कुछ बिगडा नाहीं। जो तू अपना कल्याण चाहै है तो रामसू प्रीतिकर, सीता रामकू सौंप, अर अभिमान तज रामकू प्रसन्न कर। स्त्रीके निमित्त अपने कुलको कलंक मत लगाव। अथवा तू मेरे वचन नहीं मानै है सो जानिए है तेरी मृत्यु नजीक ६११
आई है। समस्त बलवंतनिमें मोह महा बलवान है। तू मोहसे उन्मत्त भया है। ये वचन भाईके सुनकर रावण अति क्रोधरूप भया। तीक्ष्णबाण लेय विभीषणपर दौड्या। और भी रथ घोडे हाथिनके असवार स्वामी भक्तिमें तत्पर महायुद्ध करते भए। विभीषणने भी रावणकू आवता देख अर्धचन्द्र बाणसे रावणकी ध्वजा उडाई, अर रावणने क्रोधकर बाण चलाया सो विभीषणका धनुष तोड्या,

अर हाथसू बाण गिरा । तब विभीषणने दूजा धनुष लेय बाण चलाया सो रावणका धनुष तोड्या । या भांति दोनो भाई महायोधा परस्पर जोरसू युद्ध करते भए, अर अनेक सामतनिका क्षय भया । तवि इन्द्रजीत महायोधा पिताभक्त पिताकी पक्ष विभीषणपर आया । तब ताहि लक्ष्मणने रोक्या जैसे पर्वत सागरकूं रोकै । अर श्रीरामने कुम्भकरणकूं घेरया, अर सिंहकटिसे नील, अर शम्भूसे नल अर स्वयम्भूसे दुर्मती, अर घटोदरसे दुर्मुख, शक्रासनसे दुष्ट, चन्द्रनखसे काली, भिन्नाञ्जनसे स्कंध, विघ्नसे विराधित, अर मयसे अगद, अर कुम्भकरणका पुत्र जो कुम्भ उससे हनुमानका पुत्र, अर सुमालीसे सुग्रीव, अर केतुसे भामण्डल, कामसे दृढरथ, क्षोभसे बुध इत्यादि बडे बडे राजा परस्पर युद्ध करते भए । अर समस्त ही योधा परस्पर रण रचते भए । वह वाहि बुलावै । बराबरके सुभट कोई कहै है—मेरा शस्त्र आवै है उसे झेलै । कोई कहै है तू हमसे युद्ध योग्य नाहीं, बालक है वृद्ध है रोगी है, निबल है, तू जा । फलाने सुभट युद्ध योग्य है सो आवो । या भांतिके वचनालाप होय रहे हैं । कोई कहै है याही छेदो । कोई कहे है बाण चलाओ कोई कहै है मार लेवो, पकड लेवो, बाध लेवो, ग्रहण करो, छोडो, चूर्ण करो, घाव लगै तो ताहि सहो, घाव देहु, आगे होवो, मूर्छित मत होवो सावधान होवो, तू कहा डरै है? मैं तुझे न मारूं, कायरनिकूं न मारना, भागोको न मारना, पडेको न मारना, आयुधरहितपर चोट न करनी, तथा रोगसे ग्रसा मूर्छित दीन बाल वृद्ध यति व्रती स्त्री शरणागत तपस्वी पागल पशु पक्षी इत्यादिकू सुभट न मारै । यह सामन्तनिकी वृत्ति है । कोई अपने वशियोको भागते देख धिक्कार शब्द कहै है और कहै है—तू कायर है, नष्ट है मति, कांपै कहा जाय है, धीरा रहो, अपने समूहमें खडा रहु, तोसू क्या होय है, तोसू कौन डरै, तू काहेका क्षत्री? शूर और कायरनिके परखनेका यह समय है । मीठा मीठा अन्न तो बहुत खाते यथेष्ट भोजन करते अब युद्धमें पीछे क्यो होवो? या भांति धीरोकी गर्जना और वादित्रनिका बाजना तिनसू दशो दिशा शब्दरूप भई । और तुरगनिके खुरकी रजसे अंधकार होय गया । चक्र शक्ति गदा लोहयष्टि कनक इत्यादि शस्त्रनिसे युद्ध भया, ६१२

मानो ये शस्त्र कालकी डाढही ह । लोग घायल भए । दोनो सेना ऐसी दीख मानो लाल अशोकका वन ह, अथवा केसूका वन ह, अर अथवा पारिभद्रजातिके वक्षोका वन ह । कोई योधा अपने बखतर

को टूटा देख दूजा बखतर पहरता भया, जसै साधु व्रतमें दूषण उपजा देख फिर पीछे वोष स्थापना करै । और कोई दातोसे तरवार थाम्भ कमर गाढी कर फिर यूद्धकू प्रवत्ता । कोई यक सामन्त माते हाथियोके दातोके अग्रभागसे बिदारा गया ह वक्षस्थल जाका, सो हाथीके चालते जे कान, वेई भए बीजना, उससे मानो हवासे सुख रूप कर रहे ह । और कोईइक सुभट निराकुल बुद्धि हुआ, हाथीके दातनिपर दोनो भुजा पसार सोव ह, मानो स्वामी कायरूप समुद्रसे उतरा । अर कईएक योधा युद्धसे रुधिरका नाला बहावते भए जस पवतमें गेरुकी खानसे लाल नीझरने बह । अर कईएक योधा पथ्वीमें साम्हने मुहसे पडे होठ डसते, शस्त्र जिनके करमें, टेढी भौंह, विकराल वदन, इसरीतिसे प्राण तजे हैं । अर कईएक भव्यजीव महा सग्रामसू अत्यत घायल होय, कषायका त्याग कर, सन्यास धर, अविनाशी पदका ध्यान करते देहकू तज उत्तम लोककू पाव ह । कईएक धीरवीर हाथिनिके दात निकू हाथसे पकडकर ही वेह रुधिर की छटा शरीरसे पडे ह, शस्त्र ह हाथनिमें जिनके, अर कईएक काम आय गए तिनके मस्तक गिर पडे, अर सकडो धड नाचे हैं । कईएक शस्त्ररहित भए अर घावोसे जरजरे भये तृषातुर होय जल पीवनेको बठे ह, जीवनकी आशा नाहीं । ऐसे भयकर सग्रामके होते परस्पर अनेक योधावोका क्षय भया । इन्द्रजीत तीक्ष्ण बाणनिसे लक्ष्मणकू आच्छादने लगा, अर लक्ष्मण उसको । सो इन्द्रजीतने लक्ष्मण पर तामस बाण चलाया सो अधकार होय गया । तब लक्ष्मण ६११
ने सूयबाण चलाया उससे अधकार दूर भया । फिर इन्द्रजीतने आशीविष जातिके नागबाण चलाये सो लक्ष्मण अर लक्ष्मणका रथ नागोसे वेष्टित होने लगा । तब लक्ष्मणने गरुडबाणके योगसे नागबाण का निराकरण किया, जसे योगी महातपसे पूर्वोपार्जित पापोके समूहकू निराकरण कर । अर लक्ष्मण ने इन्द्रजीतकू रथरहित किया । कसा ह इन्द्रजीत ? मन्त्रियोके मध्य तिष्ठ ह, अर हाथियोकी घटावो-

से वष्टित है। सो इन्द्रजीत दूजे रथ चढि अपनी सेनाकू वचनकरि, क्रियाकरि रक्षा करता संता लक्ष्मण पर तप्त बाण चलावता भया। उसे लक्ष्मणने अपने विद्यासे निवार इन्द्रजीतपर आशीविष जातिका नागबाण चलाया, सो इन्द्रजीत नागवाणसे अचेत होय भूमिमें पडा, जैसे भामण्डल पडा था। और रामने कुम्भकरणकू रथरहित किया। बहुरि कुम्भकरणने सूर्यवाण रामपर चलाया सो रामने ताका बाण निराकरणकर नागवाणकर ताहि बेढा सो कुम्भकरण भी नागोका बेढा थका धरती पर पडा।

यह कथा गौतमगणधर राजा श्रेणिकत कहे है—हे श्रेणिक! बडा आश्चर्य है ते नागबाण धनुषके लगे उल्कापातस्वरूप होय जाय है, अर शत्रुओके शरीरके लगे नागरूप होय उसको बेढे है। यह दिव्य शस्त्र देवोपनीत है, मनवांछित रूप करे है, एक क्षणमे बाण एक क्षणमे दंड, क्षण एकमें पाश रूप होय परणवे है। जैसे कर्म—पाशकर जीव बंधे तैसे नागपाश कर कुम्भकरण बंधा? सो रामकी आज्ञा पाय भामण्डलने अपने रथ मे राखा। कुम्भकरणकू रामने भामंडलके हवाले किया अर इन्द्रजीतको लक्ष्मणने पकडा सो विराधितके हवाले किया। सो विराधितने अपने रथ में राखा, खेदखिन्न है शरीर जाका। ता समय युद्धमे रावण विभीषणको कहता भया जो यदि तू आपको योधा माने है तो एक मेरा घाव सहे, जाकरि रणकी खाज बुझे। यह रावणने कही। कैसा है विभीषण? क्रोधकर रावणके सन्मुख है, अर विकराल करी है रणक्रीडा जाने। रावणने कोपकर विभीषणपर त्रिशूल चलाया, कैसा है त्रिशूल? प्रज्ज्वलित अग्निके स्फुलिगोकर प्रकाश किया है आकाशमे जाने, सो त्रिशूल लक्ष्मणने विभीषणतक आवने न दिया, अपने वाणकर बीचही भस्म किया। तब रावण अपने त्रिशूलको भस्म किया देख अति क्रोधायमान भया अर नागेंद्रकी दई शक्ति महादारुण सो ग्रही। अर आगे देखे तो इन्दीवर कहिए नीलकमल ता समान श्याम सुंदर, महा देदीप्यमान पुरुषोत्तम, गरुडध्वज लक्ष्मण खडे है। तब काली घटासमान गम्भीर उदार है शब्द जाका ऐसा दशमुख सो लक्ष्मणकू ऊंचे स्वरकर कहता भया—मानो ताडना ही करे है, तेरा बल कहा? जो मृत्युके कारण मेरे शस्त्र तू झेले। तू औरनिकी

तरह मोहि मत जाने । हे दुर्बुद्धि लक्ष्मण ! जो तू मूवा चाहे है तो मेरा यह शस्त्र झेल। तब लक्ष्मण यद्यपि चिरकाल संग्रामकर अति खेदखिन्न भया है तथापि विभीषणको पीछेकर आप आगे होय रावण की तरफ दौडे। तब रावणने महाक्रोध करि लक्ष्मणपर शक्ति चलाई। कैसी है शक्ति ? निकसे हैं तारावोंके आकार स्फुलिंगनिके समूह जाविषै । सो लक्ष्मणका वक्षस्थल महा पर्वतके तट समान ता शक्तिका विदारा गया। कैसी है शक्ति ? महा दिव्य, अति देदीप्यमान, अमोघक्षेपा कहिए वृथा नाहीं है लगना जाका। सो शक्ति लक्ष्मणके अंगसो लगी। कैसी सोहती भई ? मानो प्रेमकी भरी वधू ही है। सो लक्ष्मण शक्तिके प्रहारकर पराधीन भया है शरीर जाका सो भूमिपर पडा, जैसें वज्रका मारा पहाड पडे। सो ताहि भूमिपर पडा देख श्रीराम कमललोचन शोकको दबाय शत्रुके घात करिवेनिमित्त उद्यमी भए। सिंहोंके रथ चढे क्रोधके भरे शत्रुको तत्काल ही रथरहित किया। तब रावण और रथ चढा। तब रामने रावणका धनुष तोडा। बहुरि रावण और धनुष लिया तितने रामने रावणका दूजा रथ भी तोडा। सो रामके बाणनिकर विह्वल रावण धनुषबाण लेयवे असमर्थ भया। तीव्र बाणनिकर राम रावणका रथ तोड डारे, वह बहुरि रथ चढे, सो अत्यन्त खेदखिन्न भया, छेदा है बक्तर जाका। सो छह बार रामने रथरहित किया तथापि रावण अद्भुतपराक्रमका धारी रामकर हता न गया। तब राम आश्चर्य पाय रावणसे कहते भए—तू अल्प आयु नाहीं, कोईयक दिन आयु बाकी है। तातै मेरे बाणनिकर न मूवा। मेरी भुजाकर चलाए बाण महा तीक्ष्ण तिनकर पहाड भी भिद जाय, मनुष्यकी तो कहा बात ? तथापि आयुकर्मने तोकूं बचाया। अब मैं तोहि कहूं सो सुन—हे विद्याधरोंके अधिपति ! मेरा भाई संग्राममें शक्तिकर तैंने हना, सो याकी मृत्युक्रिया कर मैं तौसो प्रभात ही युद्ध करूंगा। तब रावणने कही ऐसे ही करो। यह कह रावण इन्द्रतुल्य पराक्रमी लंकामें गया। कैसा है रावण ? प्रार्थनाभंग करिवेकूं असमर्थ है। रावण मनमें विचारै है इन दोनों भाइयोंमें एक यह मेरा शत्रु अति प्रबल था। सो तो मैं हत्या। यह विचार कछुइक हर्षित होय महलविषै गया। कई एक जो योधा युद्ध

से जीवते आए तिनकू देख हर्षित भया। कसा ह रावण ? योद्धाओ में ह वात्सल्य जाके। बहुरि सुनी इन्द्रजीत मेघनाद पकडे गए अर भाई कुम्भकरण पकडा गया सो या वत्तातकर रावण अति खेदखिन्न भया। तिनके जीवनेकी आशा नाहीं। यह कथा गौतमस्वामी राजा श्रेणिकसू कह ह—हे भव्योत्तम ! अनेकरूप अपने उपार्जे कर्मोके कारणसे जीवनिके नानाप्रकारकी साता असाता होय ह। देख ! या जगत विष नानाप्रकारके कम तिनके उदयकर जीवनिके नानाप्रकारके शुभाशुभ होय ह, अर नानाप्रकारके फल होय ह। कईएक तो कमके उदयकर रणविष नाशकू प्राप्त होय ह, अर कइ एक बरियोको जीत अपने स्थानककू प्राप्त होय ह। अर काहूकी विस्तीण शक्ति विफल होय जाय ह, अर बन्धनकू पाव ह। सो जस सूय पदार्थोके प्रकाशनमे प्रवीण ह तस कम जीवनिको नानाप्रकारके फल देनेमे प्रवीण है।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महा पद्मपुराण सस्कृतग्रन्थ ताकी भाषावचनिकाविष लक्ष्मणक रावण के हाथकी शक्तिका लगना और भूमिविष अचेत होय पडना वणन करनेवाला बासठवा पव पूण भया ॥ ६ ॥

— —

अथानन्तर श्रीराम लक्ष्मणके शोककरि व्याकुल भए। जहा लक्ष्मण पडा हुता तहा आय पृथ्वी मण्डलका मडन जो भाई ताहि चेष्टारहित शक्तिसे आलिगित देख मूर्छित होय पडे। बहुरि घनी बेर मे सचेत होयकर महाशोकसे सयुक्त, दुखरूप अग्निसे प्रज्ज्वलित, अत्यन्त विलाप करते भए—हा वत्स ! कमके योग कर तेरी यह दारुण अवस्था भई। आप दुलघ्य समुद्र तर यहा आए, तू मेरी भक्तिमें सदा सावधान, मेरे काय निमित्त सदा उद्यमी, शीघ्र ही मेरेसे वचनालाप कर। कहा मौन धरे तिष्ठ ह ? तू न जाने म तेरे वियोगकू एक क्षणमात्र भी सहिवे सक्त नाहीं, उठ, मेरे उरसे लग। तेरा विनय कहा गया ? तेरे भुज गजके सूड समान दीघ भुजबन्धननिकर शोभित सो ये क्रियारहित प्रयोजनरहित होय गए, भावमात्र ही रह गए। अर तू माता पिताने मोहि धरोहर सौंपा हुता सो अब म महानिलज्ज तिनकू कहा उत्तर दूगा ? अत्यन्त प्रेमक भरे अति अभिलाषी राम—हा लक्ष्मण ! हा

६१६

लक्ष्मण ! ऐसा जगतमे हितु तो समान नाहीं, या भातिके वचन कहते भए। लोक समस्त देख ह। अर महादीन भए भाईसू कह ह, तू सुभटनिमें रत्न ह, तो विना म कसे जीऊगा ? म अपना जीतव्य पुरुषाथ तेरे विना विफल मानू हू। पापोके उदयका चरित्र मने प्रत्यक्ष देखा। मोहि तेरे बिना सीता कर कहा ? अर अन्य पदाथनिकर कहा ? जा सीताके निमित्त तेरे सारिखे भाईकू निदय शक्तिकर पथ्वीपर पडा देखू हू, सो तो समान भाई कहा ? काम अथ पुरुषोको सब सुलभ ह, अर और और सम्बधी पथ्वीपर जहा जाइये वहा सब मिलें। परन्तु माता, पिता अर भाई न मिलें। हे सुग्रीव ! तने अपना मित्रपणा मुझे प्रति दिखाया। अब तुम अपने स्थानक जावो। अर हे भामण्डल ! तुम भी जावो। अब म सीताकी भी आशा तजी, अर जीवनेकी भी आशा तजी। अब म भाईके साथ निसवेह अग्निमें प्रवेश करूगा। हे विभीषण ! मोहि सीताका भी सोच नाहीं, अर भाईका सोच नाहीं, परन्तु तिहारा उपकार हमसे कछु न बना सो यह मेरे मनमें महा बाधा ह। जे उत्तम पुरुष ह ते पहिले ही उपकार करें। अर जे मध्यम पुरुष ह ते उपकार पीछे उपकार करें। अर जो पीछे भी न करें वे अधम पुरुष ह। सो तुम उत्तम पुरुष हो, हमारा प्रथम उपकार किया। ऐसे भाईसे विरोध कर हमप आये। अर हमसे तिहारा कछु उपकार न बना। तात म अति आतापरूप हू। हो भामडल सुग्रीव चिता रचो, म भाईके साथ अग्निमें प्रवेश करूगा। तुम जो योग्य हो सो करियो। यह कहकर लक्ष्मणकू राम स्पशने लगे तब जाबूनद महा बुद्धिमान मना करता भया—हे देव ! यह दिव्यास्त्रसे मूर्छित भया ह तिहारा भाई, सो स्पश मत करो। यह अच्छा हो जायगा। ऐसे होय ह। तुम धीरताकू धरो, कायरता तजो आपदामें उपाय ही कायकारी ह। यह विलाप उपाय नाहीं, सुभट जन हो, तुमको विलाप उचित नाहीं। यह विलाप करना क्षुद्र लोगोका काम ह। तात अपना चित्त धीर करो, कोई यक उपाय अब ही बन ह। यह तिहारा भाइ नारायण ह सो अवश्य जीवेगा। अबार याकी मृत्यु नाहीं। यह कह सब विद्याधर विषादी भए, अर लक्ष्मणके अगसे शक्ति निकसनेका उपाय अपने मन

में सब ही चितवते भए । यह दिव्य शक्ति है याहि औषधकर कोऊ निवारवे समर्थ नाहीं । अर कदापि सूर्य उगा तो लक्ष्मणका जीवना कठिन है । यह विद्याधर बारम्बार विचारते हुए उपजी है चिन्ता जिनके, कमरबंध आदि सब दूर कर, आध निमिषमें धरती शुद्धकर कपडके डेरे खडे किए । अर कटक की सात चौकी मेली । सो बडे २ योधा बक्तर पहिरे, धनुष बाण धारे, बहुत सावधानीसे चौकी बैठे । प्रथम चौकी नील बैठे, धनुषबाण हाथमें धरे हैं । अर दूजी चौकी नल बैठे गदा करमें लिए । अर तीजी चौकी विभीषण बैठे महा उदार मन, त्रिशूल थांभे, अर कल्पवृक्षोंकी माला रत्ननिके आभूषण पहिरे ईशान इन्द्र समान । अर चौथी चौकी तरकश बांधे कुमुद बैठे, महा साहस धरे । पांचवीं चौकी बरछी संभारे सुषेण बैठे, महा प्रतापी । अर छठी चौकी महा दृढभुज आप सुग्रीव इन्द्र सारिखा शोभायमान भिंडिमाल लिए बैठे । सातवीं चौकी महा शस्त्रका निकंदक तलवार सम्हाले आप भामंडल बैठा । पूर्वके द्वार अष्टापदकी है ध्वजा जाके सो शरभ ऐसा सोहता भया मानो महाबली अष्टापद ही है । अर पश्चिमके द्वार जाम्बुकुमार विराजता भया । अर उत्तरके द्वार मंत्रियोंके समूह सहित बालीका पुत्र महा बलवान चन्द्र मरीच बैठा । या भांति विद्याधर चौकी बैठे । सो कैसे सोहते भए ? जैसे आकाशमें नक्षत्रमण्डल भासे । अर वानरवंशी महाभट वे सब दक्षिण दिशाकी तरफ चौकी बैठे । या भांति चौकीका यत्नकर विद्याधर तिष्ठे । लक्ष्मणके जीनेमें है संदेह जिनके, प्रबल है शोक जिनका । जीवनिके कर्मरूप सूर्यके उदयकर फल का प्रकाश होय है ताहि न मनुष्य, न देव, न नाग, न असुर, कोई भी निवारवे समर्थ नाहीं । यह जीव अपना उपार्जा कर्म आपही भोगवे है ।

इति श्रीरविषेणाचार्य विरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रंथ ताकी भाषावचनिकाविषै लक्ष्मणके शक्ति लगना अर रामका विलाप वर्णन करनेवाला त्रेसठवां पर्व पूर्ण भया ।। ६३ ।।

अथानंतर रावण लक्ष्मणका निश्चयसे मरण जान अर अपने भाई दोऊ पुत्रनिको बुद्धिमें मरण रूप ही जान अत्यन्त दुःखी भया । रावण विलाप करे है—हाय भाई कुम्भकरण ! परम उदार अत्यंत

हितु ! कहा ऐसी ब धन अवस्थाकूं प्राप्त भया ? हाय इन्द्रजीत, मेघनाद महा पराक्रमके धारी हो ! मेरी भुजा समान ! दृढकमके योगकर ब धको प्राप्त भए । ऐसी अवस्था अबतक न भई । मैं शत्रुका भाई हना ह सो न जानिए शत्रु व्याकुल भया कहा कर ? तुम सारिखे उत्तम पुरुष मेरे प्राणवल्लभ दु ख अवस्थाकूं प्राप्त भए । या समान मोको अति कष्ट कहा ? ऐसे रावण गोप्य भाई अर पुत्रनिका शोक करता भया । अर जानकी लक्ष्मणके शक्ति लगी सुन अति रुदन करती भई—हाय लक्ष्मण ! विनयवान गुणभूषण ! तू मो मदभागिनीके निमित्त ऐसी अवस्थाकूं प्राप्त भया । म तोहि ऐसी अवस्थाविष हू दखा चाहू ह, सो वियोगसे देखने नाहीं पाऊ हू । तो सारिखे योधाको पापी शत्रुने हना सो कहा मेर मरणका सदेह न किया ? तो समान पुरुष या ससारमें और नाहीं, जो बडे भाईकी सेवामे आसक्त ह चित्त जाका, समस्त कुटुम्बकू तज, भाईके साथ निकसा । अर समुद्र तिर यहा आया । ऐसी अवस्थाकू प्राप्त भया तोहि म कब देखू ? कसा ह तू ? बालक्रीडामें प्रवीण अर महा विनयवान, महा मिष्टवाक्य, वा अदभुत कायका करणहारा । एसा दिन कब होयगा जो तुझे मैं देखू ? सव देव सवथा प्रकार तेरी सहाय करहु । हे सवलोकके मनके हरणहारे ! तू शक्तिकी शल्यसे रहित होय । या भाति महा कष्टत शोकरूप जानकी विलाप कर । ताहि भावनिकरि अति प्रीतिरूप जो विद्याधरी तिनने धीय बधाय शातचित्त करी—हे देवि ! तेरे देवरके अबतक मरवेका निश्चय नाहीं, तात तू रुदन मत कर । अर महा धीर सामन्तोकी यही गति ह । अर या पथ्वीविष उपाय भी नाना प्रकारके ह । ऐसे विद्याधरियोके वचन सुन सीता किंचित निराकुल भई । अब गौतमस्वामी राजा ६१६
श्रेणिकत कह ह—हे राजन ! अब जो लक्ष्मणका वत्तात भया सो सुन । एक योधा सुन्दर ह मूर्ति जाकी, सो डेरोके द्वारपर प्रवेश करता भामण्डलने देख्या, अर पूछा कि तू कौन, अर कहासे आया, अर कौन अथ यहा प्रवेश कर है ? यहा ही रह, आगे मत जावो । तव वह कहता भया मोहि महीने ऊपर कई दिन गए ह, मेरे अभिलाषा रामके दशनकी ह, सो रामका दशन करू गा । अर जो तुम

लक्ष्मणके जीवनेकी बाछा करो हो तो म जीवनेका उपाय कहूगा । जब वाने ऐसा कहा तब भामडल अति प्रसन्न होय, द्वार आप समान अन्य सुभट मेल, ताहि लार लेय, श्रीरामप आया । सो विद्याधर श्रीरामसे नमस्कार कर कहता भया—हे देव ! तुम खेद मत करो, लक्ष्मणकुमार निश्चयसेती जीवेगा । देवगतिनामा नगर, तहा राजा शशिमडल, राणी सुप्रभा, तिनका पुत्र म चन्द्रप्रीतम । सो एक दिन आकाशविष विचरता हुता । सो राजा वेलाध्यक्षका पुत्र सहसविजय, सो वास मेरा यह वर कि म वाकी माग परणी । सो वह मेरा शत्रु, ताके अर मेरे महा युद्ध भया । सो तान चण्डरवा नाम शक्ति मेरे लगाई । सो म आकाशसे अयोध्याके महेन्द्रनामा उद्यानमे पडा । सो मोहि पडता देख अयोध्याके धनी राजा भरत आय ठाढे भए । शक्तिसे विदारा मेरा वक्षस्थल देख, वे महा दयावान उत्तम पुरुष, जीवदाता मुझे चन्दनके जलकर छाटा । सो शक्ति निकल गई । मेरा जसा रूप हुता वसा होय गया । अर कुछ अधिक भया । वा नरेन्द्र भरतनें मोहि नवा जन्म दिया जा कर तिहारा दशन भया ।

यह वचन सुन श्रीरामचन्द्र पूछते भए कि वा गन्धोदककी उत्पत्ति तू जान ह । तब ताने कहा—हे देव ! जानू हू, तुम सुनो । म राजा भरतको पूछी अर ताने मोहि कही—जो यह हमारा समस्त देश रोगनिकर पीडित भया । सो काहू इलाजसे अच्छा न होय । पृथ्वीविष कौन कौन रोग उपजे सो सुनो—उरोघात महादाहज्वर, लालपरिश्राव सवशूल, अर छर्दि, सोई, फोडे इत्यादि अनेक रोग सवदेशके प्राणियोको भए, मानो क्रोधकर रोगनिकी धाड ही देशविष आई । अर राजा द्रोणमेघ प्रजासहित नीरोग । तब म ताको बुलाया अर कही—हे माम ! तुम जस नीरोग हो तसा शीघ मोहि अर मेरी प्रजाको करो । तब राजा द्रोणमेघने जाकी सुगन्धतासे दशोदिशा सुगन्ध होय ता जलकर मोहि सींचा सो म चगा भया । अर ता जलकर मेरा राजलोक भी चगा अर नगर तथा देश चगा भया, सब रोग-निवत्त भए । सो हजारो रोगोकी करणहारी, अत्यन्त दुस्सह वायु, ममकी भेदनहारी ता जलसे जाती रही । तब मने द्रोणमेघको पूछा—यह जल कहाका ह ? जाकर सवरोगका विनाश होय । तब द्रोण-

मेघने कही—हे राजन ! मेरे विशिल्यानामा पुत्री सर्वविद्याविषै प्रवीण, महागुणवती। सो जब गर्भ विषै आई तब मेरे देशविषै अनेक व्याधि हुती, सो पुत्रीके गर्भविषै आवते ही सब रोग गए। पुत्री जिनशासनविषै प्रवीण है, भगवानकी पूजाविषै तत्पर है, सब कुटुम्बकी पूजनीक है। ताके स्नानका यह जल है। ताके शरीरकी सुगन्धतासे जल महा सुगन्ध है, क्षणमात्रविषै सब रोगका विनाश कर है। ये वचन द्रोणमेघके सुनकर मैं अचिरजको प्राप्त भया। ताके नगरविषै जाय ताकी पुत्रीकी स्तुति करी। अर नगरीसे निकस सत्वरहित नामा मुनिको प्रणामकर पूछा—हे प्रभो ! द्रोणमेघकी पुत्री विशल्याका चरित्र कहो। तब चार ज्ञानके धारक मुनि महावात्सल्यके धरणहारे कहते भए—हे भरत ! महाविदेहक्षेत्रविषै स्वर्गसमान पुण्डरीक देश, तहां त्रिभुवनानन्द नामा नगर, तहां चक्रधर नामा चक्रवर्ती राजा राज्य करै। ताके पुत्री अनंगशरा, गुण ही हैं आभूषण जाके, स्त्रीनिविषै ता समान अद्भुत रूप औरका नाहीं। सो एक प्रतिष्ठितपुरका धनी राजा पुनर्वसु विद्याधर चक्रवर्तीका सामन्त, सो कन्याकूं देख कामबाणकर पीडित होय, विमानमें बैठाय लेय गया। सो चक्रवर्तीने क्रोधायमान होय किंकर भेजे सो तासूं युद्ध करते भए। ताका विमान चूर डारा। तब ताने व्याकुल होय कन्या आकाशतें डारी सो शरदके चन्द्रमाकी ज्योति समान पुनर्वसुकी पर्ण लघुविद्याकर अटवीविषै आय पडी। सो अटवी दुष्ट जीवनिकर महा भयानक, जाका नाम श्वापद रौरव, जहां विद्याधरोंका भी प्रवेश नाहीं, वृक्षनिके समूहकर महा अंधकाररूप, नाना प्रकारकी बेलनिकर बेढे नानाप्रकारके ऊंचे वृक्षनिकी सघनतासे जहां सूर्यकी किरणका भी प्रवेश नाहीं, अर चीता, व्याघ्र, सिंह, अष्टापद, गैंडा, रीछ इत्यादि अनेक वनचर विचरै। अर नीची ऊंची विषम भूमि, जहां बडे बडे गर्त (गढे), सो यह चक्रवर्तीकी कन्या अनंगशरा बालिका अकेली ता बनमें महा भयकर युक्त अति खेदखिन्न होती भई। नदीके तीर जाय दिशा अवलोकनकर माता पिताकूं चितार रुदन करती भई—हाय ! मैं चक्रवर्तीकी पुत्री, मेरा पिता इन्द्रसमान, ताके मैं अति लाडली, दैवयोगकर या अवस्थाकूं प्राप्त भई। अब कहा करूं ? ६२१

या बनका छोर नाहीं, यह वन देख दु ख उपजे। हाय पिता! महा पराक्रमी! सकल लोक प्रसिद्ध! मै या वनमें असहाय पडी। मेरी दया कौन करै? हाय माता! ऐसे महादु खकर मोहि गभमें राखी, अब काहेसे मेरी दया न करो। हाय परिवारके उत्तम मनुष्य हो! एक क्षणमात्र मोहि न छोडते सो अब क्यो तज दीनी। अर म होती ही क्यो न मर गई, काहेसे दु खकी भूमिका भई। चाही मत्यु भी न मिल, कहा करू? कहा जाऊ? म पापिनी कस तिष्ठू? यह स्वप्न ह कि साक्षात ह। या भाति चिरकाल विलाप कर महा विह्वल भई। ऐस विलाप किए जिनकू सुन महादुष्ट पशुका चित्त कोमल होय। यह दीनचित्त, क्षुधा तषासे दग्ध शाकके सागरमें मग्न, फल पत्रादिकसे कोनी ह आजीविका जाने, कमके योग ता वनमें कई शीतकाल पूण किए। कस ह शीतकाल? कमलनिके वनकी शोभा का जो सवस्व ताक हरणहारे, अर जिनने अनक ग्रीष्मके आताप सहे। कसे ह ग्रीष्म आताप? सूखे ह जलोके समूह, अर जले ह दावानलोसे अनेक वनवक्ष अर जर ह मरे ह अनक ज त जहा, अर जाने ता वनमे वर्षाकाल भी बहुत व्यतीत किए। ता समय जलधाराके अ धकारकर दब गई ह सयकी ज्योति, अर ताका शरीर वर्षाका धोया चित्रामके समान होय गया। कातिरहित दुबल, बिखरे केश, मलयक्त शरीर, लावण्यरहित ऐसा होय गया जसे सूयक प्रकाशकर च द्रमाकी कलाका प्रकाश क्षीण होय जाय। कथका वन फलनिकर नमीभूत वहा बठी पिताको चितार या भातिके वचन कहकर रुदन कर कि म जो चक्रवर्तीके तो ज म पाया अर पूव ज मक पापकर बनविष एसी दु ख अवस्थाको प्राप्त भई। या भाति आसुओकी वर्षा कर चातुर्मासिक किया। अर जे वक्षोसे टट फल सूख जाय तिनका भक्षण कर अर बेला तेला आदि अनेक उपवासनिकर क्षीण होय गया ह शरीर जाका। सो केवल फल अर जल कर पारणा करती भई। अर एक ही बार जल ताही समय फल। वह चक्रवर्तीकी पत्री पष्पनिकी सेजपर सोवती अर अपने केश भी जाको चुभते सो विषम भूमिपर खेदसहित शयन करती भई। अर पिताके अनेक गुणीजन राग करते, तिनके शब्द सुन प्रबोधकू पावती, सो अब स्याल आदि अनेक वनचरोके भयानक शब्दनिकरि रात्रि व्यतीत करती

भई। या भांति तीन हजार वर्ष तप किया। सूखे फल तथा सूखे पत्र अर पवित्र जल आहार किए अर महा वैराग्यको प्राप्त होय खान पानका त्यागकर धीरता धर सलेखणा मरण आरम्भा। एक सौ हाथ भूमि पावोसे पर न जाऊ–यह नियम धारे तिष्ठी। आयुमें छह दिन बाकी हुते। अर एक अरहदास नामा विद्याधर सुमेरु की वन्दना करके जावे था सो आय निकसा। सो चक्रवर्तीकी पुत्री को देख पिताके स्थानक ले जाना विचारा, सलेखणाके योगकर कन्याने मने किया।

तब अरहदास शीघ्र ही चक्रवर्तीपर जाय चक्रवर्तीको लेय कन्याप आया। सो जा समय चक्रवर्ती आया ता समय एक सर्प कन्याको भखे था। सो कन्याने पिताको देख अजगरको अभयदान दिवाया। अर आप समाधि धारणकर शरीर तज तीजे स्वर्ग गई। पिता पुत्रीकी यह अवस्था देखकर बाईस हजार पुत्रनिसहित वैराग्यको प्राप्त होय मुनि भया। कन्याने अजगरसे क्षमा कर अजगरको पीडा न होने दई सो ऐसी दृढता ताहीसू बन। अर वह पुनर्वसु विद्याधर अनगशराको देखता भया सो न पाई। तब खेद खिन्न होय द्रुमसेन मुनिके निकट मुनि होय महातप किया। सो स्वर्गमे देव होय महासुन्दर लक्ष्मण भया। अर वह अनगशरा चक्रवर्तीकी पुत्री स्वर्गलोकते चयकर द्रोणमेघके विशल्या भई। अर पुनर्वसुने ताके निमित्त निदान किया हुता सो अब लक्ष्मण याहि वरेगा। यह विशल्या या नगरविषै, या देशविषै तथा भरतक्षेत्रमें महागुणवती है। पूर्वभवके तपके प्रभावकर महा पवित्र है। ताके स्नानका यह जल है सो सकल विकारको हर है। याने उपसर्ग सहा, महा तप किया ताका फल है। याके स्नानके जलकर जो तेरे देशमें वायु विषम विकार उपजा हुता सो नाश भया। ये मुनिके वचन सुन भरतने मुनिसें पूछी–हे प्रभो! मेरे देशमें सब लोकोको रोगविकार कौन कारणसे उपजा। तब मुनिने कहा–गजपुर नगरते एक व्यापारी, महा धनवन्त विन्ध्य नामा, सो रासभ (गधा) ऊट, भैसा लादे अयोध्यामें आया। अर ग्यारह महीना अयोध्यामें रहा। ताके एक भैसा सो बहुत बोझके लगनेसे घायल हुआ, तीव्र रोगके भारसे पीडित या नगरमें मूवा। सो अकामनिजराके योगकर अश्वकेतुनामा वायुकुमार देव भया।

जाका विद्यावत नाम । सो अवधिज्ञानसे पूवभवको चितारा कि पूवभवविषे म भसा था, पीठ कट रही हुतौ, अर महा रोगोकर पीडित मागविष कीचमे पडा हुता सो लोक मेरे सिरपर पाव देय देय गए । यह लोक महा निदई । अब म देव भया सो म इनका निग्रह न करू तो म देव काहेका ? ऐसा विचार अयोध्या नगरविष अर सुकौशल देशमे वायु रोग विस्तारा । सो समस्त रोग विशल्याके चरणोदकके प्रभावसे विलय गया । बलवानसे अधिक बलवान ह । सो यह पूण कथा मुनिने भरतसे कही, अर भरतने मोस कही ? सो म समस्त तुमको कही । विशल्याका स्नानजल शीघ ही मगावो, लक्ष्मणके जीवनेका अन्य यत्न नाहीं । या भाति विद्याधरने श्रीरामसे कह्या सो सुनके प्रसन्न भये । गौतम स्वामी कह ह कि हे श्रेणिक ! जो पुण्याधिकारी ह तिनको पुण्यके उदय करि अनेक उपाय मिल ह । अहो महतजन हो ! तिन्ह आपदाविष अनेक उपाय सिद्ध होय ह ।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रंथ ताकी भाषावचनिकाविषै विशल्याका पूवभव वणनकरनेवाला चौसठवा पव पूण भया ॥ ६४॥

———

अथानन्तर ये विद्याधरके वचन सुनकर रामने समस्त विद्याधरनिसहित ताकी अति प्रशसा करी। अर हनुमान भामण्डल तथा अगद इनकू मत्रकर अयोध्याकी तरफ विदा किए । ये क्षणमात्रमे गए जहा महाप्रतापी भरत विराज ह । सो भरत शयन करते हुते, तिनकू रागकर जगावनेका उद्यम किया सो भरत जागते भए । तब ये मिले । सीताका हरण, रावणसे युद्ध, अर लक्ष्मणके शक्तिका लगना ये समाचार सुन भरतको शोक अर क्रोध उपजा । अर ताहीं समय युद्ध भेरी दिवाई सो सम्पूर्ण अयोध्याके लोक व्याकुल भए । अर विचार करते भए यह राजमदिरमे कहा कलकलाट शब्द है ? आधीरातके समय कहा अतिवीयका पुत्र आय पडया ? कोईयक सुभट अपनी स्त्रीसहित सोता हुता, ताहि तजकर अपनो बक्तर पहिरे, अर खडग हाथमें सम्हारा । अर कोईएक मगननी भोरे बालकको

गोद लेय अर कुचोपर हाथ धर दिशावलोकन करती भई। अर कोईएक स्त्री निद्रारहित भई सोते कतको जगावती भई। अर कोईएक भरतजीका सेवक जानकर अपनी स्त्रीको कहता भया–हे प्रिया! कहा सोव ह? आज अयोध्यामे कछु भला नाहीं, राजमदिरमें प्रकाश होय रह्या ह। अर रथ, हाथी घोडे, प्यादे, राजद्वारकी तरफ जाय ह। जो सयाने मनुष्य हुते ते सब सावधान होय उठ खड हुए। अर कईएक पुरुष स्त्रीसे कहते भए–ये सुवणकलश अर मणि रत्नोके पिटारे तहखानोमें, अर सुन्दर वस्त्रोकी पेटी भूमिगहमें धरो और भी द्रव्य ठिकाने धरो। अर शत्रुघन भाई निद्रा तज, हाथी चढ मन्त्रियो सहित शस्त्रधारक योधावोको लेय राजद्वार आया। और भी अनेक राजा राजद्वार आए। सो भरत सबकू युद्धका आदेश देय उद्यमी भया। तब भामण्डल हनुमान अगद भरतकू नमस्कार कर कहते भए–हे देव! लकापुरी यहासे दूर ह, अर बीच समुद्र ह। तब भरतने कही कहा करना? तब उन्होने विशल्याका वत्तात कहा–हे प्रभो! राजा द्रोणमेघकी पुत्री विशल्या ताके स्नानका उदक देवहु, शीघ ही कपा करहु, जो हम ले जाय। सूयका उदय भए लक्ष्मणका जीवना कठिन ह। तब भरतने कही ताके स्नानका जल क्या, वाही ले जावो। मोहि मुनिने कही हुती यह विशल्या लक्ष्मणकी स्त्री होयगी। तब द्रोणमेघके निकट एक निज मनुष्य ताही समय पठाया। सो द्रोणमेघने लक्ष्मणके शक्ति लगी सुन अति कोप किया अर युद्धकू उद्यमी भया। अर ताके पुत्र मन्त्रिनि सहित युद्धकू उद्यमी भए। तब भरत अर माता केकईने आप द्रोणमेघको जायकर ताको समभाय विशल्याको पठावना ठहराया। तब भामण्डल, हनुमान, अगद विशल्याकू विमानमें बठाय, एक हजार अधिक राजाकी कन्या साथ लेय रामकटकमें आए। एक क्षणमात्रमें सग्रामभूमि आय पहुँचे। विमानसे कन्या उतरी। ऊपर चमर ढुर ह। कन्याके कमल सारिखे नेत्र। सो हाथी, घोडे बडे बडे योधानिको देखती भई। ज्यो ज्यो विशल्या कटकमें प्रवेश कर त्यो त्यो लक्ष्मणके शरीरमें साता होती भई। वह शक्ति देवरूपिणी लक्ष्मणके अग से निकसी, ज्योतिके समूहसे युक्त, मानो दुष्ट स्त्री घरसे निकसी। दवीप्यमान अग्निके स्फुलिगो

के समूह आकाशमें उछलते । सो वह शक्ति हनुमानने पकडी । दिव्य स्त्रीका रूपधर तब हनुमानको हाथ जोड कहती भई—हे नाथ ! प्रसन्न होवो, मोहि छाडो । मेरा अपराध नाहीं । हमारी यही रीति ह कि हमको जो साधे हम ताके वशीभूत ह । म अमोघविजिया नामा शक्ति विद्या तीन लोकविष प्रसिद्ध हू । सो कलाशपवतविष बालमुनि प्रतिमा जोग धरि तिष्ठ हुते । अर रावणने भगवानके चत्यालयमें गान किया । अर अपने हाथनिकी नस बजाई, अर जिनेन्द्रके चरित्र गाए । तब धरणेंद्रका आसन कम्पायमान भया । सो धरणेन्द्र परमहष धर आए । रावणसू अति प्रसन्न होय मोहि सौंपी । रावण याचनाविष कायर मोहि न इच्छ । तब धरणेन्द्रने हठकर दई । सो म महाविकरालस्वरूप जाके लागू ताके प्राण हरू, कोई मोहि निवारवे समथ नाही । एक या विशल्या सुन्दरीको टार, म देवोकी जीतन हारी, सो म याके दशनहीत भाग जाऊ । याके प्रभावकर म शक्तिरहित भई । तपका ऐसा प्रभाव ह जो चाहे तो सूयको शीतल कर, अर चन्द्रमाको उष्ण कर । याने पूव जन्मविष अति उग्र तप किए । मिश्नाके फूल समान याका सुकुमार शरीर सो याने तपविष लगाया । ऐसा उग्र तप किया जो मुनि-हूत न बन । मेरे मनमे ससारविष यही भास ह—जो ऐसे तप प्राणी कर । वर्षा, शीतल, आताप, अर महा दुस्सह पवन, तिनसे यह सुमेरुकी चूलिका समान न कापी । धन्य रूप याका, धन्य याका साहस, धन्य याका धर्मविष दढ मन । याकासा तप और स्त्रीजन करने समथ नाहीं । सवथा जिनेन्द्रचन्द्रके मतके अनुसार जे तपको धारण कर ह ते तीनलोकको जीत ह । अथवा या बातका कहा आश्चय ? जो तप कर मोक्ष पाइए ताकर और कहा कठिन ? म पराए आधीन जो मोहि चलाव ताके शत्रुका मैं नाश करू । सो याने मोहि जीती । अब मैं अपने स्थानक जाऊ हूँ । सो तुम तो मेरा अपराध क्षमा करहु ।

या भाति शक्ति देवीने कहा तब तत्वका जाननहारा हनुमान ताहि विदाकर अपनी सेनामें आया । अर द्रोणमेघकी पुत्री विशल्या अति लज्जाकी भरी, रामके चरणारविंदकू नमस्कारकर हाथ जोड ठाढी भई । विद्याधर लोक प्रशसा करते भए, अर नमस्कार करते भए, अर आशीर्वाद देते भए । जसे

इन्द्रके समीप शची जाय तिष्ठ तस वह विशल्या सुलक्षणा, महा भाग्यवती, सखियोके वचनसे लक्ष्मण के समीप तिष्ठी। वह नव यौवन, जाके मगीकेसे नेत्र, पूणमासोके चन्द्रमा समान मुख जाका, अर महा अनुरागकी भरी, उदार मन। पथ्वीविष सुखसे सूते जो लक्ष्मण जिनको एकातविष स्पश कर अर अपने सुकमार करकमल सुन्दर तिनकर पतिके पाव पलोटने लगी। अर मलयागिरि चन्दनसे पतिका सव अग लिप्त किया। अर याकी लार हजार कन्या आई थीं—तिनने याके करसे चन्दन लेय विद्याधरनिके शरीर छाटे। सो सब घायल आछे भए। अर इन्द्रजीत कुम्भकरण मेघनाद घायल भए हुते सो उनको हू चन्दनके लेपसे नीके किये। सो परम आनन्दको प्राप्त भए। जसे कमरोगरहित सिद्धपरमेष्ठी परम आनन्दको पाव। और भी जे योधा घायल भए हुते, हाथी, घोडे, पियादे सो सब नीके भए, घावो की शल्य जाती रही। सब कटक अच्छा भया। अर लक्ष्मण जसे सूता जाग तसे वीणके नाद सुन अति प्रसन्न भए। अर लक्ष्मण मोहशय्या छोडते भए। स्वास लिए, आख उघडी। उठकर क्रोधके भरे दशो दिशा निरखि ऐसे वचन कहते भए—कहा गया रावण, कहा गया वो रावण ? ये वचन सुन राम अति हर्षित भए। फूल गए ह नत्र कमल तिनके, महा आनन्दके भर बडे भाई, रोमाच होय गया ह शरीरमें जिनके, अर अपनी भुजानिकर भाईसे मिलते भए, अर कहते भए—हे भाई! वह पापी तोहि शक्ति से अचेत कर आपको कताथ मान घर गया। अर या राजकन्याके प्रसादत तू नीका भया। अर जामवत को आदि देय सब विद्याधरनिने शक्तिके लागवे, ताहि निकसवे पर्यंत सव वृत्तात कहा। अर लक्ष्मणने विशल्या अनुरागकी दष्टिकरि देखी। कसी ह विशल्या ? श्वेत श्याम आरक्त तीन वर्ण कमल तिन समान नेत्र जाके, अर शरदकी पूर्णिमाके चन्द्रसमान ह मुख जाका, अर कोमल शरीर, क्षीण कटि, दिग्गजके कुम्भस्थल समान स्तन ह जाके, नव यौवन, मानो साक्षात मूर्तिवन्ती कामकी क्रीडा ही ह, मानो तीन लोककी शोभा एकत्रकर नामकमने याहि रचा ह। ताहि लक्ष्मण देख आश्चयको प्राप्त होय मनमे विचारता भया, यह लक्ष्मी ह, अक इन्द्रकी इन्द्राणी ह, अथवा चन्द्रकी काति ह। यह

विचार कर ह । अर विशल्याकी लारकी स्त्री कहती भई–हे स्वामी ! तिहारा यासू विवाहका उत्सव हम चाह ह । तब लक्ष्मण मुलके, अर विशल्याका पाणिग्रहण किया, अर विशल्याकी सव जगतमे कीर्ति विस्तरी । या भाति जे उत्तम पुरुष ह अर पूवजन्ममे महा शुभ चेष्टा करी ह तिनको मनोग्य वस्तुका सबध होय ह । अर चाद सूयकीसो उनकी काति होय ह ।

इति श्रीरविषेणाचायविरचित महापद्मपुराण सस्कृत ग्रन्थ ताकी भाषावचनिकाविष विशल्याका समागम वणन करनेवाला पसठवा पव पूण भया ॥ ६५ ॥

अथानन्तर लक्ष्मणका विशल्यासू विवाह, अर शक्तिका निकासना, यह सब समाचार रावणने हलकारनिके मुख सुने । अर सुनकर मुलकि कर मदबुद्धि कर कहता भया–शक्ति निकसी तो कहा ? अर विशल्या व्याहा तो कहा ? तब मारीच आदि मन्त्री मन्त्रमे प्रवीण कहते भए–हे देव ! तिहारे कल्याण की बात यथाथ कहेंगे। तुम कोप करो अथवा प्रसन्न होवो । सिंहवाहनी, गरुडवाहनी विद्या राम लक्ष्मणको यत्न विना सिद्ध भई , सो तुम देखी। अर तिहारे दोऊ पुत्र अर भाई कुम्भकरणको जिन्होने बाध लिए सो तुम देख । अर तिहारी दिव्य शक्ति सो निरथक भई । तिहारे शत्रु महाप्रबल ह । उन कर जो कदाचित तुम जीते भी तो भ्राता पुत्रोका निश्चय नाश ह । तात ऐसा जानकर हम पर कपा करो । हमारी विनती अब तक आपने कदापि भग न करी । तात सीताको तजो, अर जो तिहारे धम बुद्धि सदा रही ह सो राखहु । सव लोककू कुशल होय । राघवसे सधि करो । यह बात करनेमे दोष नाहीं । महागुण ह । तुम ही कर सव लोकविष मर्यादा चल ह । धर्मकी उत्पत्ति तुमसे ह, जसे समुद्र त रत्ननिकी उत्पत्ति होय । ऐसा कहकर बडे मन्त्री हाथ जोड नमस्कार करते भए, अर हाथ जोड विनती करते भए । सबसे यह मन्त्र किया जो एक सामत दूतविद्याविष प्रवीण, सधिके अर्थि रामप पठाइये । सो एकबुद्धिसे शुक्रसमान महा तेजस्वी, प्रतापवान, मिष्टवादी ताहि बुलाया । सो मन्त्रिनिने

महासुन्दर महा अमृत औषधि समान वचन कहे। परन्तु रावणने नेत्रकी समस्या कर मन्त्रिनिका अर्थ दूषित कर डाला। जैसे कोई विषसे महा औषधिको विषरूप कर डारे। तैसे रावण संधिकी बात विग्रह रूप जताई। सो दूत स्वामीको नमस्कारकर जायवेकूं उद्यमी भया। कैसा है दूत? बुद्धिके गर्वकर लोकको गोपद समान निरखै है। आकाशके मार्ग जाता रामके कटकको भयानक देख दूतको भय न उपजा। याके वादित्र सुन बानरवंशियोकी सेना क्षोभको प्राप्त भई। रावणके आगमकी शंका करी। जब नजीक आया तब जानी यह रावण नाहीं कोई और पुरुष है। तब बानरवंशियोकी सेनाको विश्वास उपजा। दूत द्वारे आय पहुँचा। तब द्वारपालने भामण्डलसो कही। भामण्डलने रामसे बिनती कर कहा। केतेक लोकनि सहित निकट बुलाया अर ताकी सेना कटकमें उतरी।

रामसे नमस्कार कर दूत वचन कहता भया—हे रघुचन्द्र! मेरे वचननिकर मेरे स्वामीने तुमको कुछ कहा है सो चित्त लगाय सुनहु—युद्धकर कछु प्रयोजन नाहीं। आगे युद्धके अभिमानी बहुत नाशको प्राप्त भए। तातैं प्रीति ही योग्य है। युद्धकर लोकनिका क्षय होय है। अर महा दोष उपजै है, अपवाद होय है। आगे संग्रामकी रुचिकर राजा दुर्वतक, शंख, धवलांग, असुर, सम्वरादि अनेक राजा नाशको प्राप्त भए। तातैं मेरे सहित तुमको प्रीति ही योग्य है। और जैसे सिंह महा पर्वतकी गुफाको पायकर सुखी होय है तैसे अपने मिलापकर सुख होय है। मैं रावण जगत प्रसिद्ध कहा तुमने न सुना। जाने इन्द्रसे राजा बन्दीगृहविषै किए। जैसे कोई स्त्रीनिको अर सामान्य लोकोंको पकडे तैसे इन्द्र पकडा। अर जाकी आज्ञा सुर असुरनिकर न रोकी जाय। न पातालविषै, न जलविषै, न आकाशविषै, आज्ञाको कोई न रोक सके। नाना प्रकारके अनेक युद्धोंका जीतनहारा, वीर लक्ष्मी जाको धरै, ऐसा मैं सो तुमको सागरांत पृथ्वी विद्याधरोंसे मंडित दूं हूं। अर लंकाके दोय भागकर बांट दूं हूं। भावार्थ समस्त राज्य अर आधी लंका दूं हूं। तुम मेरा भाई, अर दोनों पुत्र मोपै पठावो, अर सीता मोहि देवो जाकर सब कुशल होय। अर जो तुम यों न करोगे तो जो मेरे पुत्र भाई बंधनमें हैं तिनको तो

बलात्कार छटाय लूगा अर तुमको कुशल नाही। तब राम बोले मोहि राज्यसे प्रयोजन नाहीं, अर और स्त्रियोसे प्रयोजन नाहीं। सीता हमारे पठावो, हम तिहारे दोऊ पुत्र अर भाईको पठावें। अर तिहारी लका तिहारे ही रहो। अर समस्त राज्य तुम ही करो। मै सीतासहित दुष्ट जीवनि सयुक्त जो वन ताविष सुखसू विचरू गा। हे दूत! तू लकाक धनीसे जाय कह–याही बातमे तिहारा कल्याण ह, और भाति नाही। ऐसे श्रीरामके सव पूज्य वचन, सुख साताकर सयुक्त, तिनको सुनकर दूत कहता भया–हे नपति! तुम राज काज विष समझते नाहीं, म तुमकू बहुरि कल्याणको बात कहू हू। निभय होय समद्र उलघ आए हो सो नीक न करी। अर यह जानकीकी आशा तुमको भली नाही। यदि लकेश्वर कोप भया तब जानकीकी कहा बात? तिहारा जीवना भी कठिन ह। अर राजनीति-विष ऐसा कहा ह जे बुद्धिवान ह तिनको निरन्तर अपने शरीरकी रक्षा करनी, स्त्री अर धन इनपर दष्टि न धरनी। अर जो गरुडेन्द्रने सिहबाहन, गरुडवाहन तुमप भेजे तो कहा? अर तुम छल छिद्र कर मेरे पुत्र अर सहोदर बाधे तो कहा? जोलग मै जीवू हू तोलग इन बातोका गव तुमको वथा ह। जो तुम युद्ध करोग तो न जानकीका न तिहारा जीवन। तात दोऊ मत खोबहु, सीताका हठ छाडहू। अर रावण यह कही ह जे बड बड राजा विद्याधर इन्द्रतुल्य पराक्रम तिनके, सो समस्त शास्त्रविष प्रवीण, अनक युद्धनिके जीतनहार, ते मै नाशको प्राप्त किए ह। तिनके कलाशपवतके शिखर हाडनके समूह देखो। जब ऐसा दूतन कहा–तब भामण्डल क्रोधायमान भया, ज्वाला समान महा विकराल मुख, ताकी ज्योतिसे प्रकाश किया ह आकाशविष जान। भामण्डलने कही–रे पापी दूत! स्याल! चातुयता रहित। दुबुद्धि! वथा शकारहित कहा भाष ह? सीताकी कहा वार्ता? सीता तो राम लेहैंगे। यदि श्रीराम कोपे तब रावण राक्षस कुचेष्टि पश कहा? ऐसा कह ताके मारवेकू खडग सम्हारचा। तब लक्ष्मणने हाथ पकड अर मने किया। कसे ह लक्ष्मण? नीति ही ह नेत्र जिनके, भामण्डलके क्रोधकर रक्त नेत्र होय गए, वक्र होय गये, जसी साझकी लालकी होय तसा लाल वदन होय गया। तब

मन्त्रिनिने योग्य उपदेश कहे, समताकू प्राप्त किया। जैसे विषका भरा सर्प मन्त्रसे वश कीजिए है। हे नरेन्द्र! क्रोध तजो, यह दीन तिहारे योग्य नाही। यह तो पराया किंकर है जो वह कहावै सो कहै। याके मारवेकर कहा? स्त्री, बालक, दूत, पशु, पक्षी, वृद्ध, रोगी, सोता, आयुधरहित, शरणागत, तपस्वी, गाय ये सर्वथा अवध्य हैं। जैसे सिंह कारी घटा समान गाजते जे गज तिनका मर्दन करनहारा सो मींडकनिपर कोप न करै तैसे तुमसे नरपति दूतपर कोप न करें। यह तो वाके शब्दानुसार है। जैसे छायापुरुष है (छायापुरुषकी अनुगामिनी है) अर सूवाको ज्यों पढावै तैसे पढै, अर यन्त्रको ज्यों बजावै त्यों बजै, तैसे यह दीन वह बकावै त्यों बकै। ऐसे शब्द लक्ष्मणने कहे तब सीताका भाई भामण्डल शांतचित्त भया।

श्रीराम दूतको प्रकट कहते भए—रे मूढ दूत! तू शीघ्र ही जा अर रावणको ऐसे कहियो—तू ऐसे मूढ मन्त्रियोंका बहकाया, खोटे उपायकर आपा ठगावेगा। तू अपनी बुद्धि कर विचार, किसी कुबुद्धिको पूछ मत, सीताका प्रसंग तज, सर्व पृथ्वीका इन्द्र हो पुष्पक विमानमें बैठा जैसे भ्रमै था तैसे विभव सहित भ्रमै। यह मिथ्या हठ छोड दे, क्षुद्रनिकी बात मत सुनहु, करने योग्य कार्य विषै चित्त धर जो सुखकी प्राप्ति होय। ये वचन कह श्रीराम तो चुप होय रहे अर और पुरुषनिने दूतको बहुरि बात न करने दई निकाल दिया। दूत रामके अनुचरनिने तीक्ष्ण बाणरूप वचननिकर बींधा अर अति निरादर किया। तब रावणके निकट गया, मनविषै पीडा थका। सो जायकर रावणसू कहता भया—हे नाथ! मैं तिहारे आदेश प्रमाण रामसो कही—जो या पृथ्वी नाना देशनिकर पूर्ण, समुद्रांत महा रत्ननिकी भरी, विद्याधरोंके समस्त पट्टनसहित मैं तुमको दूं हूं, अर बडे बडे हाथी रथ तुरंग दूं हूं, अर यह पुष्पक विमान लेवहु जो देवोंसे न निवारा जाय याविषै बैठ विचरो। अर तीन हजार कन्या ये अपने परवारकी तुमको परणाय दूं। अर सिंहासन सूर्य समान अर चन्द्रमा समान छत्र वे लेहु, अर निःकंटक राजकरो, एती बात मुझे प्रमाण है जो तिहारी आज्ञाकर सीता मोहि इच्छे। यह धन अर धरा लेवो, अर मैं अल्प

विभूति राखि बतहोके सिंहासन पर रहूगा। विचक्षण हो तो एक वचन मेरा मानहु—सीता मोहि देवहु। ए वचन म बार बार कहे सो रघुनन्दन सीताका हठ न छोडे। केवल वाके सीताका अनुराग ह और वस्तुको इच्छा नाही। हे देव! जस मुनि महा शातचित्त अठाईस मूलगुणोकी क्रिया न तजे, वह क्रिया मुनिवतका मूल ह तस राम सीताकू न तज। सीता ही रामके सवस्व ह। कसी ह सीता? त्रलोक्यविष ऐसी सुन्दरी नाहीं। अर रामने तुमसू यह कही ह कि–हे दशानन! ऐसे सवलोकनिद्य वचन तमसे पुरुषनिकू कहना योग्य नाहीं। ऐसे वचन पापी कह ह। उनकी जीभके सौ टूक क्यो न होय? मेरे या सीता विना इन्द्रके भोगनिकर काय नाहीं। यह सव पथ्वी तू भाग, म बनवास ही करूगा। अर तू परदारा हरकर मरवेको उद्यमी भया ह तो म अपनी स्त्रीके अथ क्यो न मारूगा? अर मुझे तीन हजार कन्या देह, सो मेरे अथ नाहीं। म वनके फल अर पत्रादिक ही भोजन करूगा, अर सीता सहित वनमे विहार करूगा। अर कपिध्वजोका स्वामी सग्रीव ताने हसकर मोहि कही—जो कहा तेरा स्वामी आग्रहरूप ग्रहके वश भया ह? कोऊ वायुका विकार उपजा ह जो ऐसी विपरीति वार्त्ता रक हूवा बक ह। अर कहा लकामे काऊ वद्य नाहीं, अक मत्रवादी नाहीं, वायके तलादिककर यत्न क्यो न कर? नातर सग्रामविष लक्ष्मण सवरोग निवारेगा। भावाथ—मारेगा।

तब यह वचन सुन म क्रोधरूप अग्निकर प्रज्ज्वलित भया अर सुग्रीवसू कही—रे वानरध्वज! तू ऐस बक ह जसे गजके लार स्वान बक। तू रामके गवकर मूवा चाह ह जो चक्रवर्तीकू निन्दाके वचन कह है। सो मेरे अर सुग्रीवके बहुत बात भई। अर रामसो कहा—हे राम! तुम महारणविष रावणका पराक्रम न देखा। कोऊ तिहारे पुण्यक योग कर वह वीर विकराल क्षमामें आया ह। वह कलाशका उठावनहारा, तीन जगतमे प्रसिद्ध प्रतापो तुमसे हित किया चाह ह, अर राज्य देय ह, ता समान और कहा? तुम अपनो भुजानिकर दशमुखरूपसमुद्रकू कस तरौगे? कसा ह दशमुखरूपसमुद्र? प्रचण्ड सेना, सोई भई तरगनिकी माला, तिनकर पूण ह, अर शस्त्ररूप जलचरनिके समूहकर भरा ह। ह राम! तुम कसे रावणरूप भयकर

वनविषै प्रवेश करोगे ? कैसा है रावणरूप वन ? दुर्गम कहिए जाविषै प्रवेश करना कठिन है। अर व्याल कहिए दुष्ट गज, तेई भए नाग तिनकर पूर्ण है। अर सेनारूप वृक्षनिके समूह कर महा विषम है। हे राम ! जैसे कमलपत्रकी पवनकर सुमेरु न डिगै, अर सूर्यकी किरण कर समुद्र न सूकै, अर बलदके सींगोसे धरती न उठाई जाय, तैसे तुम सारिखे नरनिकर नरपति दशानन जीता न जाय। ऐसे प्रचंड वचन मैं कहे तब भामण्डलने महाक्रोधरूप होय मोहि मारिवेकूं खड्ग काढ्या। तब लक्ष्मणने मनै किया जो दूतकूं मारना न्यायमें नहीं कहा। स्यालपर सिंह कोप न करै, जो सिंह गजेन्द्रके कुम्भस्थल अपने नखनिसे विदारै। तात हे भामण्डल ! प्रसन्न होहु, क्रोध तजहु। जे शूरवीर नृपति हैं, महा तेजस्वी, ते दीननिपर प्रहार न करै। जो भयकर कम्पायमान होय ताहि न हनै, श्रमण कहिए मुनि, अर ब्राह्मण कहिए व्रतधारी गृहस्थी, अर शून्य कहिए सूना, अर स्त्री, बालक, वृद्ध, पशु, पक्षी, दूत ये अबध्य है। इनको शूरवीर सर्वथा न हनै। इत्यादि वचननिके समूहकर लक्ष्मण महापंडित ताने समझाय भामण्डलकूं प्रसन्न किया। अर कपिध्वजनिके कुमार महाक्रूर तिन वज्र समान वचननिकर मोहि बींधा। तब मैं उनके असार वचन सुन, आकाशमें गमनकर, आयु कर्मके योगसे आपके निकट आया हूं। हे देव ! जो लक्ष्मण न होय तो आज मेरा मरण ही होता। जो शत्रुनिके अर मेरे विवाद भया सो मैं सब आपसूं कहा, मैं कछु शंका न राखी ! अब आपके मनमें जो होय सो करो, हम सारिखे किंकर तो वचन कर हैं जो कहो सो करें। या भांति दूत दशमुखसे कहता भया। यह कथा गौतम गणधर श्रेणिकसे कहैं हैं—हे श्रेणिक ! जो अनेक शास्त्रनिके समूह जाने, अर अनेक नयविषै प्रवीण होय, अर जाके मंत्री भी निपुण होय, अर सूर्य सारिखा तेजस्वी होय तथापि मोहरूप मेघपटलकर आच्छादित भया प्रकाश रहित होय है। यह मोह महा अज्ञानका मूल विवेकियोंको तजना योग्य है।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महा पद्मपुराण संस्कृतग्रंथ ताकी भाषावचनिकाविषै रावण के दूतका आगमन बहुरि पाछा रावण पास गमन वर्णन करनेवाला छ्यासठवां पर्व पूर्ण भया ॥ ६६ ॥

अथानन्तर लंकेश्वर अपने दूतके वचन सुन, क्षण एक मन्त्रके ज्ञाता मन्त्रियोसे मन्त्रकर कपोलपर हाथ धर, अधोमुख होय कछुएक चिंतारूप तिष्ठा। अपने मनमें विचार है जो शत्रुकू युद्धविषै जीतू हू तो भ्राता पुत्रनिकी अकुशल दीखै है। अर जो कदाचित वैरिनिके कटकमें मैं रतिहावकर कुमारनिकू ले आऊ तो या शूरतामें न्यूनता है। रतिहाव क्षत्रियोके योग्य नाहीं। कहा करू ? कैसे मोहि सुख होय ? यह विचार करते रावणकू यह बुद्धि उपजी जो मैं बहुरूपिणी विद्या साधू। कैसी है बहुरूपिणी ? जो कदाचित देव युद्ध करै तो भी न जीती जाय। ऐसा विचारकर सब सेवकनिकू आज्ञा करी—श्रीशांतिनाथके मन्दिरमें समीचीन तोरणादिकनिकर अति शोभा करहु। सो सब चैत्यालयनिमें विशेष पूजा करहु। सब भार पूजा प्रभावनाका मंदोदरीके सिरपर धरया। गौतम गणधर कहे है—हे श्रेणिक ! वह श्रीमुनिसुव्रतनाथ बीसमा तीर्थंकरका समय, ता समय या भरतक्षेत्रविषै सब ठौर जिनमन्दिर हुते। यह पृथ्वी जिनमंदिरनिकर मंडित हुती। चतुरविध संघकी विशेष प्रवृत्ति, राजा, श्रेष्ठि, ग्रामपति अर प्रजाकेलोग सकल जैनी हुते। सो महारमणीक जिनमन्दिर रचते। जिनमन्दिर जिनशासनके भक्त जो देव तिनसे शोभायमान। वे देव धर्मकी रक्षामें प्रवीण, शुभकार्यके करणहारे। ता समय पृथ्वी भव्य जीवनिकरि भरी ऐसी सोहती मानो स्वर्गविमान ही है। ठौर २ पूजा, ठौर २ प्रभावना, ठौर २ दान। हे मगधाधिपति ! पर्वत पर्वतविषै, गाव गावविषै, नगर नगरविषै, वन २ विषै, मन्दिर २ विषै, जिनमंदिर हुते। महा शोभाकर संयुक्त, शरदके पूनोकी चन्द्रमासमान उज्ज्वल, गीतोकी ध्वनिकर मनोहर, नानाप्रकारके वादित्रनिके शब्दकर मानो समुद्र गाजै है। अर तीनो सध्या वंदनाकू लोग आवै। सो साधुवोके संगसे पूर्ण, नानाप्रकारके आश्चर्यकर संयुक्त, नानाप्रकारके चित्रामको धरें, अगर चंदनका धूप अर पुष्पनिकी सुगन्धताकर महा सुगन्धमई महा विभूतिकरि युक्त, नानाप्रकारकर शोभित, महा विस्तीर्ण, महा उतंग, महा ध्वजानिकर विराजित, तिनमें रत्नमई तथा स्वर्णमई पंचवर्णकी प्रतिमा विराजै। विद्याधरनिके स्थानविषै अति सुन्दर जिनमंदिरनिके शिखर तिनकर अति शोभा होय रही

६३४

है। ता समय नाना प्रकारके रत्नमई उपवनादिसे शोभित जे जिनभवन तिनकर यह जगत व्याप्त। अर इन्द्रके नगर समान लंकाका अंतर बाहिर जिनेन्द्रके मंदिरनिकर मनोग्य था। सो रावणने विशेष शोभा कराई। अर आप रावण, अठारह हजार राणी, वेई भई कमलनिके वन, तिनको प्रफुल्लित कर्ता वर्षाके मेघ समान है स्वरूप जाका, सो महा नागसमान है भुजा जाकी, पूणमासीके चन्द्रमा समान बदन, सुन्दर केतकीके फूल समान लाल होठ, विस्तीर्ण नेत्र, स्त्रीनिका मन हरणहारा लक्ष्मण समान श्याम सुन्दर, दिव्यरूपका धरणहारा, सो अपने मंदिरनिविषै तथा सब क्षेत्रविषै जिनमंदिरनिकीशोभा करावता भया। कैसा है रावणका घर? लग रहे हैं लोगनिके नेत्र जहां, अर जिनमंदिरनिकी पंक्तिकर मंडित, नानाप्रकारके रत्नमई मंदिरके मध्य उतंग श्रीशांतिनाथका चैत्यालय, जहां भगवान शांतिनाथजिन की प्रतिमा विराजै। जे भव्य जीव हैं तें सकल लोकचरित्रको असार अशास्वता जानकर धर्मविषै बुद्धि धरैं, जिनमंदिरनिकी महिमा करैं। कैसे हैं जिनमंदिर? जगतकर वंदनीक हैं, अर इन्द्रके मुकुटके शिखरविषै लगे जे रत्न तिनकी ज्योतिको अपने चरणनिके नखोंकी ज्योतिकर बढावनहारे हैं। धन पावनेका यही फल जो धर्म करिए सो गृहस्थका धर्म दान पूजारूप, अर यतिका धर्म शांतभावरूप। या जगतविषै यह जिनधर्म मनवांछित फलका देनहार है। जैसे सूर्यके प्रकाशकर नेत्रनिके धारक पदार्थनिका अवलोकन करैं हैं तैसे जिनधर्मके प्रकाशकर भव्यजीव निज भावका अवलोकन करैं हैं।

इति श्रीरविषेणाचार्य विरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रंथ ताकी भाषावचनिकाविषै श्रीशांतिनाथके चैत्यालयका वर्णन करनेवाला सरसठवां पर्व पूर्ण भया।। ६७।।

अथानन्तर फाल्गुण सुदी अष्टमीसूं लेय पूणमासी पर्यंत सिद्धचक्रका व्रत है, जाहि अष्टाह्निका कहै हैं। सो इन आठ दिननिमें लंकाके लोग अर लशकरके लोग नियम ग्रहणको उद्यमी भए। सब सेनाके

उत्तम लोक मनमें यह धारणा करते भए जो यह आठ दिन धर्मके हैं सो इन दिननिमें न युद्ध करें, न और आरम्भ करें, यथाशक्ति कल्याणके अर्थ भगवानकी पूजा करेंगे, अर उपवासादि नियम करेंगे। इन दिननिविषै देव भी पूजा प्रभावनाविषै तत्पर होय हैं। क्षीरसागरके जे सुवर्णके कलश जलकर भरे तिनकर देव भगवानका अभिषेक करै हैं। कैसा है जल? सत्पुरुषनिके यशसमान उज्ज्वल। अरु और भी जे मनुष्यादिक हैं तिनकूं भी अपनी शक्तिप्रमाण पूजा अभिषेक करना। इन्द्रादिक देव नन्दीश्वर द्वीप जायकर जिनेश्वरका अर्चन करै हैं, तो कहा ये मनुष्य अपनी शक्तिप्रमाण यहांके चैत्यालयनिका पूजन न करैं? करैं हीं करैं। देव स्वर्णरत्ननिके कलशनिकरि अभिषेक करैं हैं अर मनुष्य अपनी सम्पदा प्रमाण करैं। महा निर्धन मनुष्य होय तो पलाशपत्रनिके पुटहीसे अभिषेक करैं। देव रत्न स्वर्णके कमलनिसे पूजा करै हैं, निर्धन मनुष्य चित्तही रूप कमलनिसे पूजा करै हैं। लंकाके लोक यह विचार कर भगवानके चैत्यालयनिकूं उत्साहसहित ध्वजा पताकादिकर शोभित करते भए। वस्त्र स्वर्ण रत्नादि कर अति शोभा करी। रत्ननिकी रज अर कनकरज तिनके मंडल मांडे, अर देवालयनिके द्वार अति सिंगारें, अर मणि सुवर्णके कलश कमलनिसे ढके दधि दुग्ध घृतादिसे पूर्ण, मोतियोंकी माला हैं कंठमें जिनके, रत्ननिकी कांतिकर शोभित जिनबिंबोंके अभिषेकके अर्थ भक्तिवंत लोक लाये। जहां भोगी पुरुषोंके घरमें सैकडों हजारों मणिसुवर्णोंके कलश हैं, नन्दनवनके पुष्प, अर लंकाके वननिके नानाप्रकारके पुष्प कर्णिकार अतिमुक्त कदम्ब सहकार चम्पक पारिजात मन्दार जिनकी सुगन्धताकर भ्रमरनिके समूह गुंजार करै हैं, अर मणि सुवर्णादिकके कमल तिनकर पूजा करते भए। अर ढोल, मृदंग, ताल, शंख इत्यादि अनेक वादित्रनिके नाद होत भए। लंकापुरके निवासी वैर तज आनन्दरूप होय आठ दिनमें भगवानकी अति महिमाकर पूजा करते भए। जैसैं नंदीश्वर द्वीपविषै देव पूजाके उद्यमी होय तैसे लंका के लोक लंकाविषै पूजाके उद्यमी भए। अर रावण विस्तीर्ण प्रतापका धारक श्रीशांतिनाथके मन्दिरविषै जाय पवित्र होय भक्तिकर महा मनोहर पूजा करता भया, जैसे पहिले प्रतिवासुदेव करैं। गौतमगण

घर कह ह—हे श्रेणिक ! जे महा विभवकर युक्त भगवानके भक्त महाविभूतिवत अति महिमाकर प्रभु का पूजन कर ह तिनिके पुण्यके समूहका व्याख्यान कौन कर सक ? वे उत्तम पुरुष देवगतिक सुख भाग, बहुरि चक्रवर्तियोके भोग पाव बहुरि राज्य तज जनमतके व्रत धार महा तपकर परम मुक्ति पाव । कसा ह तप ? सूयहूत अधिक ह तेज जाका ।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रंथ ताकी भाषावचनिकाविषै श्री शातिनाथके चत्यालयविष अष्टाह्निकाका उत्सव वणन करने वाला अरसठवा पव पूण भया ॥ ॥

अथानन्तर महाशातिका कारण श्रीशातिनाथका मन्दिर, कलाशके शिखर अर शरदके मेघ समान उज्ज्वल महा देदीप्यमान मन्दिरोकी पक्तिकर मडित जस जम्बूद्वीपके मध्य महा उतग सुमेरु पवत सोह तस रावणके मदिरके मध्य जिनमदिर सोहता भया । तहा रावण जाय विद्याके साधनमें आसक्त ह चित्त जाका, अर स्थिर निश्चय जाका परम अदभुत पूजा करता भया । भगवानका अभिषेक कर अनेक वादित्र बजावता अति मनोहर द्रव्यनिकर, महासुगन्ध धूपकर,नानाप्रकारकी सामग्री कर(अत्यन्त मनोहर मालाओ, धूपो, नवेद्यो के उपहारो- और उत्तम वण के विलेपनो से) शातचित्त भया शातिनाथकी पूजा करता भया, मानो दूजा इन्द्र ही ह । शुक्ल वस्त्र पहिरे महासुन्दर जे भुजबध तिनकर शोभित ह भुजा जाकी, सिरके कश भली भाति बाध, तिनपर मुकुट धर, तापर चूडामणि लहलहाट करती महाज्योतिकू धरे, रावण दोनो हाथ जोड गोडोसें धरतीकू स्पशता, मन वचन कायकर शातिनाथकू प्रणाम करता भया । श्रीशातिनाथक सन्मुख निमल भूमिमें खडा अत्यन्त शोभता भया । कसी ह भूमि ? पद्मराग मणिकी ह फश जाविष । अर रावण स्फटिकमणिकी माला हाथविष अर उरविष धरे कसा सोहता भया ? मानो बकपक्तिकर सयुक्त कारी घटाका समूह ही ह । वह राक्षसनिका अधिपति महा

---

१ अभिषेक सवादित्रमत्यर्तिमनोहर । धूपन पुष्पहारश्च सद्वर्णैरनुलेपन ॥ ४ ॥
(पद्मपुराण ततीय भाग उनहत्तरवा पव । ज्ञानपीठ काशी से प्रकाशित)

धीर विद्याका साधन आरम्भता भया। जब शातिनाथके चत्यालय गया ता पहिले मदोदरीको यह आज्ञा करी, जो तुम मन्त्रिनिकू अर कोटपालकू बुलायकर यह घोषणा नगरमें फेरियो जो सबलोक दयाविष तत्पर नियम धमके धारक होव। समस्त व्यापार तज जिनेन्द्रकी पूजा करहु। अर अर्थी लोग निकू मनवाछित धन देवहु, अहकार तजहु। जौलग मेरा नियम न पूरा होय तौलग समस्त लोग श्रद्धा विष तत्पर सयमरूप रहो। जो कदाचित कोई बाधा कर तो निश्चयसेती सहियो। महाबलवान होय सो बलका गव न करियो। इन दिवसनिविष जो कोऊ क्रोधकर विकार करेगा सो अवश्य सजा पावेगा। जो मरे पितासमान पूज्य होय अर इन दिननिविष कषाय कर, कलह कर ताहि म मारू। जो पुरुष समाधिमरणकर युक्त न होय सो ससारसमुद्रको न तिर। जस अन्धपुरुष पदार्थनिकू न परखे तस अविवेकी धमकू न निरखें। तात सब विवेकरूप रहियो, कोऊ पापक्रिया न करने पाव। यह आज्ञा मन्दोदरी मन्त्रियोको अर यमदण्डनामा कोटपालकू द्वारे बुलाय पतिकी आज्ञा प्रमाण आज्ञा करती भई। तब सबने कही जो आज्ञा होयगी सो ही करगे। यह कह आज्ञा सिरपर धर घर गए, अर सयमसहित नियम धमके उद्यमी होय नपकी आज्ञा प्रमाण करते भए। समस्त प्रजाके लोग जिनपूजाविष अनुरागी होते भए। अर समस्त काय तज सूयकी कातितें हू अधिक ह काति जिनकी ऐसे जे जिनमन्दिर तिनविष तिष्ठे, निमल भावकर युक्त सयम नियमका साधन करते भये।

इति श्री रविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण सस्कृत ग्रन्थ ताकी भाषावचनिकाविषै लकाके लोगनिका अनेकानेक नियम धारण वणन करनेवाला उनत्तरवा पव पूण भया॥ ६९॥

अथानन्तर श्रीरामके कटकमे हलकारोके मुख यह समाचार आए कि रावण बहुरूपिणी विद्याके साधनको उद्यमी भया श्रीशातिनाथके मदिरमे विद्या साधे ह। चौबीस दिनमें यह बहुरूपणी विद्या सिद्ध होयगी। यह विद्या ऐसी प्रबल ह जो देवनिका मद हर। सो समस्त कपिध्वजनिने यह विचार

किया कि जो वह नियममें बैठा विद्या साधै है सो ताको क्रोध उपजावें, जो ताको यह विद्या सिद्ध न होय। तातै रावणको कोप उपजावनेका यत्न करना, जो वाने विद्या सिद्ध कर पाई तो इन्द्रादिक देवनि करहू न जीता जाय, हम सारिखे रंकनिकी कहा बात ? तब विभीषण कही—जो कोप उपजावनेका उपाय करो शीघ्रही करो। तब सबने मंत्र कर रामसूं कहा कि लंका लेनेका यह समय है। रावणके कार्यमें विघ्न करिए अर अपनेकूं जो करना होय सो करिए। तब कपिध्वजनिके यह वचन सुन श्री रामचन्द्र महाधीर महा पुरुषनिकी है चेष्टा जिनकी, सो कहते भए-हो विद्याधर हो ! तुम महामूढता के वचन कहो हो, क्षत्रिनिके कुलका यह धर्म नाहीं जो ऐसे कार्य करें। अपने कुलकी यह रीति है जो भयकर भाजे ताका वध न करना। तो जे नियमधारी जिनमन्दिरमें बैठे हैं तिनसे उपद्रव कैसे करिए ? यह नीचनिके कर्म है, सो कुलवंतनिको योग्य नाहीं। यह अन्याय प्रवर्त्ति क्षत्रियनिकी नाहीं। कैसे हैं क्षत्री ? महामान्यभाव अर शस्त्रकर्माविषै प्रवीण। यह वचन रामके सुन सबने विचारी जो हमारा प्रभु श्रीराम महा धर्मधारी है, उत्तम भावका धारक है सो इनकी कदाचित हू अधर्मविषै प्रवृत्ति न होयगी। तब लक्ष्मणकी जानमें इन विद्याधरनिने अपने कुमार उपद्रवको विदा किए। अर सुग्रीवादिक बडे बडे पुरुष आठ दिनका नियम धर तिष्ठे। अर पूर्ण चन्द्रमा समान वदन जिनके, कमल समान नेत्र, नाना लक्षणके धरणहारे, सिंह, व्याघ्र, वराह, गज, अष्टापद इनकर युक्त जे रथ तिनविषै बैठे, तथा विमाननिमें बैठे, परम आयुधनिकी धरे कपियोंके कुमार रावणको कोप उपजायवेके है अभिप्राय जिनके, मानो यह असुरकुमार देव ही हैं। प्रीत कर दृढरथ, चन्द्राहु, रतिवर्धन, वातायन, गुरुभार सूर्यज्योति, महारथ सामंत बल, नन्दन, सर्वदृष्ट, सिंह, सर्वप्रिय, नल, नील, सागर घोष पुत्र सहित पूर्ण चन्द्रमा, स्कंध चन्द्र मारीच जाबव संकट समाधि बहुल सिंहकट चन्द्रासन इन्द्रमणि बल तुरंग सब इत्यादि अनेक कुमार तुरंगनिके रथ चढे अर अन्य कईएक सिंह, बराह, गज, व्याघ्र इत्यादि मनहूत चंचल जे बाहन तिनपर चढे, पयादनिके पटल तिनके मध्यमहातेजको धरे नानाप्रकारके चिह्न तिनकरि

युक्त ह छत्र जिनके, अर नानाप्रकारकी ध्वजा फहर है जिनके, महा गम्भीर शब्द करते, दशोदिशाको आच्छादित करते, लकापुरीमें प्रवेश करते भए। मनविष विचार करते भए बडा आश्चय ह जो लकाके लोक निश्चित तिष्ठ ह। जानिये ह कछू सग्रामका भय नाहीं! अहो। लकेश्वरका बडा धीय महागम्भीरता देखहु जो कुम्भकरणसे भाई अर इन्द्रजीत मेघनादसे पुत्र पकडे गए है तो हू चिता नाहीं। अर अक्षादिक अनेक योधा युद्धविष हते गए, हस्त प्रहस्त सेनापति मारे गए तथापि लकापतिको शका नाहीं। ऐसा चितवन करते परस्पर वार्तालाप करते नगरमें बठे। तथा विभीषणका पुत्र सुभूषण कपि कुमारनिकू कहता भया तुम निभय लकामें प्रवेश करहु। वाल वद्ध स्त्री इनसू तो कछु न कहना, अर सबकू व्याकल करेगे। तब याका वचन मान विद्याधर कुमार महा उद्धत, कलहप्रिय, आशीविष समान प्रचण्ड, वतरहित, चपल, चचल, लकाविष उपद्रव करते भए। सो तिनके महा भयानक शब्द सुन लोक अति व्याकुल भए। अर रावणके महल हू में व्याकुलता भई। जस तीव पवनकर समुद्र क्षोभकू प्राप्त होय तस लका कपि कुमारनिसू उद्वेगको प्राप्त भई। रावणके महिलविष राजलोकनिकू चिता उपजी। कसा है रावणका मन्दिर? रत्ननिकी कातिकर ददीप्यमान ह। अर जहा मगादिकके मगल शब्द होव ह, जहा निरन्तर स्त्रीजन नत्य कर ह, अर जिनपूजाविषै उद्यमी राजकन्या धम मागविषै आरूढ। सो शत्रुसेनाके क्रूर शब्द सुन आकुलता उपजी। स्त्रीनिके आभूषणनिके शब्द होते भए मानो बीणा बाज ह। सब मनमें विचारती भई—न जानिए कहा होय? या भाति समस्त नगरीके लोग व्याकुलताकू प्राप्त होय विह्वल भए। तब मन्दोदरीका पिता राजा मय, विद्याधरनिविष दत्य कहावै
सो सब सेनासहित बक्तर पहिर आयध धार, महा पराक्रमी युद्धके अथ उद्यमी होय राजद्वार आया, जसे इन्द्रके भवन हिरण्यकशी देव आव। तब मन्दोदरी पितासे कहती भई—हे तात! जा समय लकेश्वर मन्दिर पधारे ता समय आज्ञा करी जो सब लोक सम्बररूप रहियो, कोई कषाय मत करियो। तात तुम कषाय मत करहु। ये दिन धमध्यानके ह सो धम सेवो और भाति करोगे तो स्वामीकी आज्ञा

भग होयगी, अर तुम भला फल न पावोगे। ये वचन पुत्रीके सुन राजा मय उद्धतता तज, महा शात होय, शस्त्र डारते भए, जसे अस्त समय सूय किरणोको तज। मणियोके कुण्डलनि कर मण्डित अर हार कर शोभ ह वक्षस्थल जाका, अपने जिनमन्दिरमें प्रवेश करता भया। अर ये वानरवशी विद्याधरनिके कुमारनिने निज मर्यादा तज नगरका कोट भग किया, बजके कपाट तोडे, दरवाजे तोडे।

अथानन्तर इनको देख नगरके वासियोको अति भय उपज्या। घर घरमें ये बात होय ह भजकर कहा जाइए। ये आए, बाहिर खडे मत रहो, भीतर धसो, हाय मात यह कहा भया ? हे तात ! देखो, हे भात हमारी रक्षा करो, हे आयपुत्र ! महा भय उपजा ह, ठिकाने रहो। या भाति नगरीके लोक व्याकुलताक वचन कहते भए। लोक भाग रावणके महलविष आए। अपने वस्त्र हाथनिमें लिए अति विह्वल, बालकनिको गोदमें लिए स्त्रीजन कापती भागी जाय ह। कईयक गिर पडी, सो गोडे फूट गए। कईएक चली जाय ह, हार टूट गए सो बडे बडे मोती बिखर ह। जसे मेघमाला शीघ जाय तसे जाय ह। त्रासको पाई जो हिरणी ता समान ह नेत्र जिनके, अर ढीले होय गए ह केशनिके बधन जिनके, अर कोई भयकर प्रीतमके उरसे लिपट गई। या भाति लोकनिको उद्वेगरूप महा भयभीत देख जिन शासनके देव, श्रीशातिनाथके मन्दिरके सेवक, अपनी पक्षके पालनेको उद्यमी, करुणावत जिनशासनके प्रभाव करनेकू उद्यमी भए। महाभरव आकार धरे शातिनाथके मन्दिरसे निकसे, नानाभेष धरे, विकराल ह दाढ जिनकी, भयकर ह मुख जिनका, मध्याह्नके सूय समान तेज ह नेत्र जिनके, होठ डसते, दीघ ह काया जिनकी, नाना वण, भयकर शब्द, महा विषम भेषको धरे,विकराल स्वरूप, तिनकू देख कर वानरवशियोके पुत्र महा भयकर अत्यन्त विह्वल भए। वे देव क्षणविष सिंह, क्षणविष मेघ, क्षणविष हाथी, क्षणविष सप, क्षणविषै वायु, क्षणविषै वृक्ष, क्षणविषै पवत, सो इनकर कपिलकुमारनिको पीडित देख कटकके देव मदद करते भए। देवनिमें परस्पर युद्ध भया। लकाके देव कटकके देव निसे, अर कपिलकुमार लकाके सन्मुख भए। तब यक्षनिके स्वामी पूणभद्र महाभद्र महा क्रोधकू प्राप्त

भए। दोनो यक्षेश्वर परस्पर वार्ता करते भए, देखो ए निदई कपिनिके पुत्र महाविकारकू प्राप्त भए। रावण तो निराहार होय देहविषै निस्पृह सब जगतका काय तज पोसे बैठा है। सो ऐसे शांतिचित्तकू यह छिद्र पाय पापी पीडा चाहे है, सो यह योधावोकी चेष्टा नाही। यह वचन पूणभद्रके सुन मणिभद्र बोला—अहो पूणभद्र ! रावणका इन्द्र भी पराभव करिवे समर्थ नाहीं, रावण सुन्दर लक्षणनिकर पूर्ण भात स्वभाव है। तब पूर्णभद्रने कही—जो लंकाको विघ्न उपजा है सो आपा दूर करेंगे। यह वचन कह कर दोनो धीर सम्यकदृष्टि जिनधर्मी यक्षनिके ईश्वर युद्धकू उद्यमी भए। सो वानरवंशिनिके कुमार और उनके पक्षी देव सब भागे। वे दोनो यक्षेश्वर महावायु चलाय, पाषाण बरसावते भए, अर प्रलय कालके मेघ समान गाजते भए। तिनके जाधोकी पवनकर कपिदल सूखे पानकी न्याई उडे, तत्काल भाग गए। तिनके लार ही ये दोनो यक्षेश्वर रामके निकट उलाहना देनेको आए। सो पूणभद्र सुबुद्धि रामकी स्तुति कर कहते भए—राजा दशरथ महाधर्मात्मा तिनके तुम पुत्र, अर अयोग्य कायके त्यागी, सदा योग्य कायनिके उद्यमी, शास्त्रसमुद्रके पारगामी, शुभ गुणनिकर सकलविषै ऊंचे, तिहारी सेना लंकाके लोकनिकू उपद्रव कर यह कहाकी बात ? जो जाका द्रव्य हर सो ताका प्राण हर है, यह धन जीवनिके बाह्य प्राण है। अमोलिक हीरे वडूय मणि मूगा मोती पदमराग मणि इत्यादि अनेक रत्ननिकरि भरी लंका उद्वेगको प्राप्त करी। तब यह वचन पूणभद्रके सुन रामका सेवक गरुडकेतु कहिए लक्ष्मण नीलकमल समान, सो तेजसे विविधरूप वचन कहता भया। ये श्रीरघुचन्द तिनके राणी सीता प्राणहूत प्यारी। शीलरूप आभूषणकी धरणहारी, वह दुरात्मा रावण छलकर हर ले गया ताका पक्ष तुम कहा करो ? हे यक्षेन्द्र ! हमने तिहारा कहा अपराध किया ? अर तान कहा किया जो तुम भृकुटी बाकी कर अर सध्याकी ललाई समान अरुण नेत्रकर उलहना देनेको आए। सो योग्य नाहीं। ऐती वार्ता लक्ष्मणने कही अर राजा सुग्रीव अति भयरूप होय पूणभद्रको अर्घ देय कहता भया—हे यक्षेन्द्र ! क्रोध तजो, अर हम लंकाविष कछु उपद्रव न करें। परन्तु यह वार्ता है रावण

बहुरूपिणी विद्या साध ह सो जो कदाचित ताकू विद्या सिद्ध होय तो वाके सन्मुख काई ठहर न सक, जस जिनधमक पाठकके सन्मुख वादो न टिक । तात वह क्षमावत होय विद्या साध ह, सो ताकू क्रोध उपजावेंगे जो विद्या साध न सक जस मिथ्यादष्टि मोक्षकू साध न सक । तब पूणभद्र बोले—ऐसे ही करो, परन्तु लकाके एक जीण तनकू भी बाधा न कर सकोगे। अर तुम रावणके अगको बाधा मत करो, अर अन्य बातनिकर क्रोध उपजावो । परन्तु रावण अति दृढ ह ताहि क्रोध उपजना कठिन है । ऐसे कह वे दोनो यक्षेन्द्र भव्यजीवनिविषै ह वात्सल्य जिनका, प्रसन्न ह नेत्र जिनके, मुनिनिके समूहोके भक्त, वयावतविषै उद्यमी, जिनधर्मी, अपने स्थानक गए। रामको उलहना देने आए थे सो लक्ष्मणके वचननि कर लज्जावान भए, समभावकर अपने स्थानक गए सो जाय तिष्ठे। गौतमस्वामी कह ह—हे श्रेणिक ! जौंलग निर्दोषता होय तौलग परस्पर अति प्रीति होय, अर सदोषता भए प्रीतिभग होय, जस सूय उत्पात सहित होय तो नीका न लग ।

इति श्रीरविषेणाचायविरचित महापद्मपुराण सस्कृत ग्रन्थ ताकी भाषावचनिकाविष रावणका विद्या साधना अर कपिकुमारनिका लका गमन व रि पूणभद्र का काप क्रोधकी शाति वणन करनेवाला सत्तरवा पव पूण भया ॥ ७ ॥

———

अथानन्तर पूणभद्र मणिभद्रकू शातभाव जान सुग्रीवका पुत्र अगद तान लकाविषै प्रवेश किया। सो अगद किहकधनामा हाथी छढ्या, मोतिनिकी माला कर शोभित, उज्ज्वल चमरनिकर युक्त ऐसा सोहता भया जसा मेघमालाविषै पूणमासीका चन्द्रमा सोह । अति उदार, महा सामत, तथा स्कध इन्द्र नील आदि बडी ऋद्धिकर मडित तुरगनिपर चढे कुमार गमनको उद्यमी भए । अर अनेक पयादे चन्दन कर चर्चित ह अग जिनके, ताबूलनिकर लाल अधर, काधे ऊपर खडग धरे, सुन्दर वस्त्र पहिरे, स्वणके आभूषणकर शोभित सुन्दर चेष्टा धर आगे पोछे अगल बगल पयादे चले जाय ह । वीण वासुरी मृदगादि वादित्र वाज ह, नत्य होता जाय ह । कपिवशियोके कुमार लकाविष ऐसे पठ जस स्वगपुरीविषै असुरकुमार

पद्म पुराण ६४४

प्रवेश कर है। अगदकू लंकाविषै प्रवेश करता देख स्त्रीजन परस्पर वार्ता करती भई—देखहु! यह अगद रूप चन्द्रमा दशमुखकी नगरीविषै निर्भय चला जाय है याने कहा आरम्भा ? आगे अब कहा होयगा ? या भांति लोक बात कर है। ए चले चले रावणके मंदिरविषै गए। सो मणियोंका चौक देख इन्होंने जानी ये सरोवर है। त्रासको प्राप्त भए। बहुरि निश्चय देख मणियोंका चौक जाना तब आगे गए। सुमेरुकी गुफा समान महारत्ननिकर निर्मापित मंदिरका द्वार देख्या। मणियोंके तोरणनिकर बदीप्यमान तहां अंजन पर्वत सारिखे इन्द्रनीलमणिनिके गज देखे। महास्कंध कुम्भस्थल, तिनके स्थूल दन्त अत्यन्त मनोज्ञ, अर तिनके मस्तकपर सिंहनिके चिह्न, जिनके सिरपर पूंछ, हाथिनिके कुम्भस्थलपर सिंह, विकराल वदन, तीक्ष्ण दाढ, डरावने केश, तिनको देख पयादे डरे। जानिए साचे ही हाथी है। तब भयंकर भागे अति विह्वल भए। अंगदने नीके समझाए तब आगे चले। रावणके महिलविषै कपिवंशी ऐसे जाय जैसे सिंहकी गुफाविषै मृग जाय। अनेक द्वार उलंघ आगे जायवेकूं समर्थ भए। घरनिकी रचना गहन सो ऐसे भटके जैसे जन्मका अंधा भ्रमै। स्फटिकमणिके महिल, तहां आकाशकी आशंकाकर भ्रमकूं प्राप्त भए। अर इन्द्र नीलमणिकी भीति सो अंधकारस्वरूप भासै। मस्तकविषै शिलाकी लागी सो आकुल होय भूमिमें पडे। वेदनाकर व्याकुल हैं नेत्र जिनके, काहूप्रकार मार्ग पाय आगे गए जहां स्फटिक मणिकी भीति। सो घननिके गोडे फूटे, ललाट फूटे, दुखी भए। तब उलटे फिरे सो मार्ग न पावै। आगे एक रत्नमई स्त्री देखी। साक्षात स्त्री जान तासू पूछते भए सो वह कहा कहै ? तब महा शंकाके भरे आगे गए। विह्वल होय स्फटिकमणिकी भूमिमें पडे। आगे शांतिनाथके मंदिरका शिखर नजर आया, परन्तु जाय सकै नाहीं, स्फटिककी भीति आडी। तब वह स्त्री दृष्टि पडी थी त्यो एक रत्नमई द्वारपाल दृष्टि पर्या, हेमरूप बेतकी छडी, जाके हाथमें। ताहि कही—श्री शांतिनाथके मंदिरका मार्ग बताओ। सो वह कहा बतावै ? तब वाहि हाथसूं कूट्या सो कूटनहारेकी अंगुरी चूर्ण होय गई। बहुरि आगे गए, जाना यह इन्द्रनीलमणिका द्वार है, शांतिनाथके चैत्यालयमें ६४४

जानेकी बुद्धि करी, कुटिल है भाव जिनके। आगे एक वचन बोलता मनुष्य देखा ताके केश पकडे अर कहा तू हमारे आगे आगे चल। शांतिनाथका मंदिर दिखाय। जब वह अग्रगामी भया तब ए निराकुल भए। श्रीशांतिनाथके मंदिर जाय पहुँचे। पुष्पांजलि चढाय जयजय शब्द किए, स्फटिकके थम्भनिके ऊपर बडा विस्तार देख्या सो अचरजकू प्राप्त भए। मनमें विचारते भए जैसे चक्रवर्तीके मंदिर में जिनमंदिर होय तैसे है। अंगद पहिले ही वाहनादिक तज भीतर गया। ललाट पर दोनो हाथ धर नमस्कार करि तीन प्रदक्षिणा देय स्तोत्र पाठ करता भया, सेना लार थी सो बाहिरले चौकविषै छाडी। कैसा है अंगद ? फूल रहे हैं नेत्र जाके, रत्ननिके चित्रामकर मंडल लिखा सोलह स्वप्नेका भाव देखकर नमस्कार किया, आदि मंडपकी भीतिविषै वह धीर भगवानको नमस्कार कर शांतिनाथके मंदिर विषै गया। अति हर्षका भरा भगवानकी वंदना करता भया।

बहुरि देखे तो सन्मुख रावण पद्मासन धरै तिष्ठै है। इन्द्रनीलमणिकी किरणनिके समूह समान है प्रभा जाकी। भगवानके सन्मुख कैसा बैठा है जैसे सूर्यके सन्मुख राहु बैठा होय। विद्याको ध्यावै जैसे भरत जिनदीक्षाको ध्यावै। सो रावणसू अंगद कहता भया–हे रावण! कहो अब तेरी कहा वार्ता ? तोसू ऐसी करू जैसी यम न करै। तैने कहा पाखण्ड रोप्या ? भगवानके सन्मुख यह पाखण्ड कहा ? धिक्कार तो पापकर्मीकू वृथा शुभक्रियाका आरम्भ किया है। ऐसा कहकरि याका उत्तरासन उतारया। अर याकी रानीनिकू याके आगे कूटता भया। कठोर वचन कहता भया। अर रावणके पास पुष्प पडे हुते सो उठाय लीए अर स्वर्णके कमलनिकर भगवानकी पूजा करी। बहुरि रावणसू कुवचन कहता भया। अर रावणके हाथमें स्फटिककी माला छिनाय लई, सो मणिया बिखर गई। बहुरि मणियें चुनि, माला पोय, रावणके हाथविषै दई, बहुरि छिनाय लई। बहुरि पोय गलेविषै डाली, बहुरि मस्तक पर मेली। बहुरि रावणका राजलोक, सोई भया कमलनिका वन, ताविषै ग्रीषमकर तप्तायमान जो वनका हाथी ताकी न्याई प्रवेश किया। अर निःशंक भया राजलोकमें उपद्रव करता भया। जैसे चंचल

घोडा कूदता फिर तस चपलता करि भमण किया। काहूके कठविष कपडेका रस्सा बनाय बाध्या, अर काहूके कठविष उत्तरासन डार थम्भविष बाध बहुरि छोड दिया। काहूको पकड अपने मनुष्यनिसे कही याहि बेच आवो। ताने हसकर कही पाच दीनारनिको बेच आया। या भाति अनेक चेष्टा करीं। काहूके काननविषै घुगुरू घाले, अर केशनिविष कटिमेखला पहिराई, काहूके मस्तकका चूडामणि उतार चरणनिविष पहिराया। अर काहूको परस्पर केशनिकर बाधी, अर काहूके मस्तकविष शब्द करते मोर बठाए। या भाति जस साड गायनिके समूहविष प्रवेश कर अर तिनकू अति व्याकुल कर तस रावणके समीप सब राजलोकनिकू क्लेश उपजाया। अर अगद क्रोधकर रावणसु कहता भया—हे अधम राक्षस! तन कपटकर सीता हरो, अब हम तरो समस्त स्त्रीनिकू हर ह। तोम शक्ति होय तो यत्न कर। एसा कहकर याक आगे मदोदरीकू पकड ल्याया जस मगराज मगीकू पकड ल्याव, कम्पायमान ह नत्र जाके। चोटी पकड रावणके निकट खीचता भया जस भरत राज्यलक्ष्मीको खींच। अर रावणसू कहता भया—देख! यह पटरानी तेरे जीवहूत प्यारी मदोदरी गुणवती ताहि हम हर ले जाय ह। यह सुग्रीवक चमरग्राहिणी चरी होयगी। सो मदोदरी आखनित आसू डारती भई अर विलाप करने लगी रावणके पायनविषै प्रवेश कर, कभी भुजानिविषै प्रवश कर, अर भरतारसो कहती भई—हे नाथ! मेरी रक्षा करहु। ऐसी दशा मरी कहा न देखो हो, तम क्या और ह। होय गए? तुम रावण हो अक और हो हो। अहो जसी निरग्रथ मुनिकी वीतरागता होय तसी तुम वीतरागता पकडी। सो ऐसे दु खमे यह अवस्था कहा? धिक्कार तिहारे बलको, जो या पापीका सिर खडगसो न काटो। तुम महा बलवान चाव सूय समान पुरुषोका पराभव न सहो सो ऐसे रकका कसे सहो? हे लकेश्वर! ध्यान विषै चित्त लगाया, न काहूकी सुनो न देखो, अधपयकासन धर बठे, अहकार तज दिया। जसा सुमेरुका शिखर अचल होय, तस अचल होय तिष्ठे। सव इन्द्रियनिकी क्रिया तजी, विद्याके आराधनविष तत्पर निश्चल शरीर महाधीर एसे तिष्ठे हो मानो काष्ठके अथवा चित्रामके हो? जस राम सीता

को चिंतवें तस तुम विद्याको चितवौ हो, स्थिरता कर सुमेरुके तुल्य भए हो । जब या भाति मदोदरी रावणसे कहती भई ताही समय बहुरूपिणी विद्या दशोदिशाविष उद्योत करती जय जयकारका शब्द उचारती रावणके समीप आय ठाढी भई, अर कहती भई—हे देव ! आज्ञामें उद्यमी म तुमको सिद्ध भई, मोहि आदेश देवहु । एक चक्री अधचक्रीको टार तिहारी आज्ञासे विमुख होय ताहि वश करू । या लोकविषै तिहारी आज्ञाकारिणी हू । हम सारिखनिकी यही रीति ह जो हम चक्रवर्तियोसे समथ नाहीं । जो तू कहे तो सब दत्यनिको जीतू, देवनिकू वश करू, जो तोस अप्रिय होय ताहि वशीभूत करू । अर विद्याधर तो मेरे तणसमान ह । यह विद्याके वचन सुन रावण योग पूण कर ज्योतिका धारक, उदार चेष्टाका धरणहारा शातिनाथके चत्यालयकी प्रदक्षिणा करता भया । ताही समय अगद मदोदरीको छाड आकाश गमन कर रामके समीप आया, कसा ह अगद ? सूय समान ह तेज जाका ।

इति श्रीरविषेणाचायविरचित महापद्मपुराण सस्कृत ग्र थ ताकी भाषावचनिकाविष श्रीशाति थके मदिरमे रावणको बहुरूपिणीविद्याके सिद्ध होनेका वणन करनेवाला इकहत्तरवा पव पूण भया ॥ ७१ ॥

अथान तर रावणकी अठ्ठारह हजार स्त्री रावणके पास एक साथ सब ही रुदन करती भई, सुन्दर है वशन जिनका । हे स्वामिन ! सब विद्याधरनिके अधीश ! तुम हमारे प्रभु सो तुमको होते सते मूख अगदने आयकर हमारा अपमान किया । तुम परम तेजके धारक सूय समान सो ध्यानारूढ हुते, अर विद्याधर आगिया समान, सो तिहारे मुह आगिला छोहरा सुग्रीवका पुत्र पापी हमको उपद्रव कर । सुनकर तिनके वचन रावण सबकी दिलासा करता भया अर कहता भया—हे प्रिये ! वह पापी ऐसी चेष्टा कर ह सो मृत्युके पाशकर बधा ह । तुम दुख तजो जस सदा आनन्दरूप रहो हो ताही भाति रहो । म सुग्रीवको निग्रीव कहिए मस्तकरहित भूमिपर प्रभात ही करूगा । अर वे दोनो भाई राम लक्ष्मण भूमिगोचरी कीट समान ह तिनपर कहा कोप ? ये दुष्ट विद्याधर सब इनप भेले भए ह तिनका

क्षय करूंगा। हे प्रिये! मेरी भोंह टेढी करनेहीमें शत्रु विलाय जाय। अर अब तो बहुरूपिणी महा विद्या सिद्ध भई मोसे शत्रु कहा जीवें। या भांति सब स्त्रीनिकूं महा धीर्य बधाय मनमें जानता भया मैं शत्रु हते। भगवानके मंदिरसे बाहिर निकसा। नानाप्रकारके वादित्र बाजते भए, गीत नृत्य होते भए। रावणका अभिषेक भया। कामदेव समान है रूप जाका, स्वर्ण रत्ननिके कलशनिकर स्त्री स्नान करावती भई। कैसी है स्त्री? कांतिरूप चांदनीसे मंडित है शरीर जिनका, चंद्रमा समान वदन, अर सुफेद मणिनिके कलशनिकर स्नान करावें। सो अद्‌भुत ज्योति भासती भई। अर कई स्त्री कमलसमान कांतिको धरे मानो सांझ फूल रही है। अर उगते सूर्य समान सुवर्णके कलशनिकर स्नान करावें सो मानो सांझ ही जल बरसे है। अर कई एक स्त्री हरितमणिके कलशनिकर स्नान करावती अति हर्षकी भरी शोभे है, मानो साक्षात लक्ष्मी ही है, कमलपत्र है कलशनिके मुखपर। अर कईएक केलेके गर्भ समान कोमल महासुगंध शरीर जिनपर भ्रमर गुंजार करे है, वे नानाप्रकारके सुगंध उबटनाकरि रावणको नानाप्रकारके रत्नजडित सिंहासनविषै स्नान करावती भई। सो रावणने स्नान कर आभूषण पहिरे महा सावधान भावनिकर पूर्ण शांतिनाथके मंदिरमें गया। वहां अरहंतदेवकी पूजाकर स्तुति करता भया, बारबार नमस्कार भया। बहुरि भोजनशालामें आया, चार प्रकारका उत्तम आहार किया—अशन पान खाद्य स्वाद्य। बहुरि भोजनकर विद्याकी परख निमित्त क्रीडा भूमिविषै गया, वहां विद्याकर अनेकरूप बनाय नानाप्रकारके अद्‌भुत कर्म विद्याधरनिसे न बनें सो बहुरूपिणी विद्यासे किए। अपने हाथको घातकरि भूकम्प किया। रामके कटकविषै कपियोंको ऐसा भय उपजा मानो मृत्यु ही आई। अर रावणकूं मंत्री कहते भए—हे नाथ! तुम टार राघवका जीतनहारा और नाहीं। राम महा योधा है और क्रोधवान होवे तब कहा कहना? सो ताके सन्मुख तुम ही आवहु अर कोई रणविषै रामके सन्मुख आवनेको समर्थ नाहीं।

अथानंतर रावणने बहुरूपिणी विद्यासे मायामई कटक बनाया। अर आप उद्यानविषै जहां सीता

तिष्ठे तहां गया। मन्त्रिनिकरि मंडित जैसे देवनिकर संयुक्त इन्द्र होय, सो सूर्यसमान कांतिकरि युक्त आवता भया। तब ताकूं आवता देख विद्याधरी सीतासों कहती भई–हे शुभे! महाज्योतिवंत रावण पुष्पक विमानसे उतरकर आया। जैसे ग्रीष्म ऋतुविषै सूर्यकी किरणकरि आतापकूं पाता गजेन्द्र सरोवरीकी ओर आवै तैसे कामरूप अग्निसे तापरूप भया आवै है। यह प्रमदनामा उद्यान पुष्पनिकी शोभाकर शोभित, जहां भ्रमर गुंजार करै हैं। तब सीता बहुरूपिणी विद्याकर संयुक्त रावणकूं देख–कर भयभीत भई। मनमें विचारै है याके बलका पार नाहीं। सो राम लक्ष्मण हू याहि न जीतेंगे। मैं मंदभागिनी रामकूं अथवा लक्ष्मणकूं अथवा अपने भाई भामंडलकूं मंत हना सुनूं। यह विचार कर व्याकुल है चित्त जाका, कांपती चितारूप तिष्ठै है। तहां रावण आया, सो कहता भया–हे देवी! मैं पापीने तुझे कपटकर हरी। सो यह बात क्षत्रीकुलविषै उत्पन्न भए हैं जे धीर अतिवीर तिनको सर्वथा उचित नाहीं। परन्तु कर्म की गति ऐसी है। मोहकर्म बलवान है। अर मैं पूर्व अनंतवीर्य स्वामीके समीप व्रत लिया हुता जो परनारी मोहि न इच्छै ताहि मैं न ग्रहूं। उर्वसी, रंभा अथवा और मनोहर होय तो भी मेरे प्रयोजन नाहीं। यह प्रतिज्ञा पालते संते मैं तेरी कृपा ही की अभिलाषा करी, परन्तु बलात्कार रमी नाहीं। हे जगतविषै उत्तम सुन्दरी! अब मेरी भुजानिकर चलाए जे बाण तिनसे तेरे अवलंबन राम लक्ष्मण भिदे ही जान। अर तू मेरे संग पुष्पक विमानमें बैठ आनंदसे विहार कर। सुमेरुके शिखर, चैत्य वृक्ष, अनेक वन उपवन, नदी सरोवर अवलोकन करती विहार कर।

तब सीता दोऊ हाथ काननिपर धर गदगद वाणीसे दीन शब्द कहती भई–हे दशानन! तू बडे कुल–विषै उपजा है तो यह करियो–जो कदाचित संग्रामविषै तेरे अर मेरे वल्लभके शस्त्रप्रहार होय, तो पहले यह संदेशा कहे बगर मेरे कंथकूं मत हतियो! यह कहियो–हे पद्म! भामंडलकी बहिनने तुमकूं यह कहा है–जो तिहारे वियोगकरि महाशोकके भारकरि महा दुखी हूं, मेरे प्राण तिहारे तक ही हैं, मेरी दशा यह भई है जैसे पवनकी हती दीपककी शिखा। हे राजा दशरथके पुत्र! जनकको पुत्रीने तुमकूं बारम्बार ६४९

स्तुतिकर यह कही है—तिहारे दर्शनकी अभिलाषाकर यह प्राण टिक रहे ह । ऐसा कहकर मूर्छित होय भूमिमें पडी, जस माते हाथीत भग्न करी कल्पवक्षकी बेल गिर पडे । यह अवस्था महासतीको देख रावण का मन कोमल भया,परम दु खी भया,यह चिता करता भया अहो कर्मनिके योगकर इनका नि सदेह स्नेहका क्षय नाहीं । अर धिक्कार मोकू म अति अयोग्य काय किया जो ऐसे स्नेहवान युगलका वियोग किया। पापाचारी महा नोच जन समान म नि कारण अपयशरूप मलसे लिप्त भया । शुद्ध च द्रमा समान गोत्र हमारा, म मलिन किया । मेरे समान दु ात्मा मेरे वशमें न भया। ऐसा काय काहूने न किया । जे पुरुषोमे इ द्र ह ते नारीको तुच्छ गिन ह । यह स्त्री साक्षात विष तुल्य ह,क्लेशकी उत्पत्तिका स्थानक सपके मस्तक की मणि समान, अर महा मोहका कारण । प्रथम तो स्त्रीमात्र ही निषिद्ध ह। अर परस्त्रीकी कहा बात? सवथा त्याज्य ही ह । परस्त्री नदी समान कुटिल, महा भयकर, धम अथका नाश करणहारी, सदा सतो को त्याज्य ही ह । म महा पापकी खान, अब तक यह सोता मभे ९वागनाहूत अति प्रिय भासती भई? सो अब विष के कुम्भतुल्य भास ह । यह तो केवल रामसू अनुरागिनी ह । अब लग यह न इच्छती थी पर तु मेरे अभिलाषा हुती। अब जीण तणवत भास ह । यह तो केवल रामसे त मय ह,मौसू कदाचित न मिल । मेरा भाई महाप डत विभीषण सब जानता हुता सो मोहि बहुत समझाया । मेरा मन विकार कू प्राप्त भया सो न मानी, तासू द्वेष किया । जब विभीषणके वचननिकरि मत्री भाव करता तो नीक था । महा युद्ध भया, अनेक हते गए, अब कसी मित्रता ? यह मित्रता सुभटनिकू योग्य नाहीं। अर युद्ध करके बहुरि दया पालनी यह बन नाही । अहो ? म सामा य मनुष्यकी नाईं सकटमें पडा हू। जो कदाचित जानकी रामप पठाव तौ लोग मोहि असमथ जान। अर युद्ध करिए तो महा हिंसा होय । कोई ऐसे ह जिनके दया नाहीं केव न क्रूरतारूप ह, ते भी कालक्षेप कर ह । अर कोईयक दयावान ह, ससार कायसे रहित ह ते सुखसे जीव ह । म मानी युद्धाभिलाषी, अर कछू करुणाभाव नाहीं, सो हम सारिखे महा दुखी ह । अर रामके सिंहवाहन अर लक्ष्मणके गरुडवाहन विद्या सो इनकर महा उद्योत ह । सो

इनकू शस्त्ररहित करू अर जीवते पकडू । बहुरि बहुत धन दू तो मेरी बडी कीर्ति होय । अर मोहि पाप न होय यह न्याय ह । तात यही करू । ऐसा मनमे धारे महा विभवसयुक्त रावण राजलोकविषै गया जस माता हाथी कमलनिके वनविष जाय । बहुरि विचारी अगदने बहुत अनीति क्रोध किया अर लाल नेत्र होय आए । रावण होठ डसता वचन कहता भया–वह पापी सुग्रीव नाहीं दुर्ग्रीव ह । ताहि निग्रीव कहिए मस्तक रहित करूगा । ताके पुत्र अगद सहित चन्द्रहास खडगकर दोयटूक करूगा । अर तमोमडल को लोक भामडल कह ह सो वह महा दुष्ट ह, ताहि दृढबन्धनसे बाधि लोहके मुगदरोसे कूट मारूगा । अर हनुमानकू तीक्ष्ण करोतकी धारसे काठके युगलमें बान्ध बिहराऊगा । वह महा अनीति ह । एक राम न्यायमार्गी ह ताहि छोडूगा । अर समस्त अन्यायमार्गी ह तिनकू शस्त्रनिकर चूर डारूगा । ऐसा विचारकर रावण तिष्ठा । अर उत्पात सकडो होने लगे, सूयका मण्डल आयुध समान तीक्षण दृष्टि पडा । पूणमासीका चन्द्रमा अस्त होय गया । आसन पर भूकम्प भया । दशो दिशा कम्पायमान भई । उल्कापात भए । शृगाली (गीदडी) विरस शब्द बोलती भई । तुरग नाड हिलाय विरस विरूप हींसते भए । हाथी रूक्ष शब्द करते भये, सूण्डसे धरती कूटते भए । यक्षनिकी मूर्तिके अश्रुपात पडे । सूयके सन्मुख काग कटुक शब्द करते भए, ढीले पाख किए महा व्याकुल भए । सरोवर जलकरि भरे हुते ते शोषको प्राप्त भए । अर गिरियोके शिखर गिर पडे । अर रुधिरकी वर्षा भई । थोडे ही दिनमें जानिए ह लकेश्वरकी मत्यु होय । ऐसे अपशकुन और प्रकार नाहीं । जब पुण्य क्षीण होय तब इन्द्र भी न बचे । पुरुषमें पौरुष पुण्यके उदयकरि होय ह । जो कछू प्राप्त होना होय सोई पाइए ह, हीनाधिक नाहीं । प्राणियोके शूरवीरता सुकृतके बलकर ह ।

देखहु रावण नीतिशास्त्रके विष प्रवीण, समस्त लौकिक नीति रीति जाने व्याकरणका पाठी महा गुणनिकर मडित, सो कर्मनिकर प्रेरा सता अनीतिमागकू प्राप्त भया, मूढबुद्धि भया । लोकविषै

६५१

मरण उपरात कोई दु ख नाहीं। सो याकू अत्यन्त गवकर विचार नाहीं। नक्षत्रनिके बलकरि रहित अर ग्रह सब ही क्रूर आए। सो यह अविवेकी रणक्षेत्रका अभिलाषी होता भया। प्रतापके भगका ह भय जाकू, अर महा शूरवीरताके रससे युक्त, यद्यपि अनेक शास्त्रनिका अभ्यास किया ह तथापि युक्त अयुक्तकू न देख। गौतम स्वामी राजा श्रेणिकत कह ह–हे मगधाधिपति! रावण महामानी अपने मनविष विचार ह सो सुन–सुग्रीव भामण्डलादिक समस्तकू जीति अर कुम्भकरण इन्द्रजीत मेघनाद कू छुडाय लकामें लाऊगा। बहुरि वानरवशिनिका वश नाश अर भामण्डलका पराभव करूगा। अर भूमिगोचरिनिकू भूमिविष न रहने दूगा। अर शुद्ध विद्याधरनिकू धराविष थापूगा। तब तीन लोक के नाथ तीथङ्कर देव अर चक्रायुध बलभद्र नारायण हम सारिखे विद्याधर कुलहीविष उपजगे। ऐसा वृथा विचार करता भया। हे मगधेश्वर! जा मनुष्यने जसे सचित कम किए होय तसा ही फल भोगव। ऐस न होय तो शास्त्रोके पाठी कस भूल? शास्त्र ह सो सूय समान ह, ताके प्रकाश होते अधकार कसे रह। परन्तु जे घूघूसमान मनुष्य ह तिनकू प्रकाश न होय।

इति श्रीरविषेणाचायविरचित महा पद्मपुराण सस्कृतग्रन्थ ताकी भाषावचनिकाविष रावण के युद्धका निश्चय कथन वणन करनेवाला बहत्तरवा पव पूण भया ॥ ७२ ॥

अथानन्तर दूजे दिन प्रभातही रावण महादेदीप्यमान आस्थान मडपविष तिष्ठया। सूयके उदय होते सते सभाविष कुवेर वरुण ईशान यम सोम समान जे बडे बडे राजा तिनकरि सेवनीक, जस देवनिकर मडित इन्द्र विराजे तस राजानिकरि मडित सिहासन पर विराज्या। परम कातिकू धर, जसै ग्रह तारा नक्षत्रनिकर युक्त चन्द्रमा सोह। अत्यन्त सुगन्ध, मनोग्य वस्त्र, पुष्पमाला, अर महा मनोहर गजमोतिनिके हार तिनकरि शोभ ह उरस्थल जाका, महा सौभाग्यरूप, सौम्यदशन, सभाकू देखकर चिता करता भया–जो भाई कुम्भकरण इन्द्रजीत मघनाद यहा नाहीं दीख ह सो उन बिना यह

सभा सोह नाहीं। और पुरुष कुमुदरूप बहुत ह, पर वे पुरुष कमलरूप नाहीं। सो यद्यपि रावण महारूपवान सुन्दर वदन हुते, अर फूल रहे ह नेत्र कमल जाके, महामनोग्य तथापि पत्र भाईकी चितासे कुमलाया वदन नजर आवता भया। अर महा क्रोधरूप कुटिल ह भकुटी जाकी, मानो क्रोधका भरया आशीविष सप ही ह। महा भयकर होठ डसे। महा विकरालस्वरूप मत्री देखकर डरे। आज ऐसा कौनसा कोप भया, यह व्याकुलता भई। तब हाथ जोड सीस भूमिमें लगाय राजा मय उग्र शुक लोकाक्ष सारण इत्यादि धरतीकी ओर निरखते चलायमान ह कुण्डल जिनके विनती करते भए—हे नाथ! तिहारे निकटवर्ती योधा सबही यह प्राथना कर ह प्रसन्न होहु। अर कलाशके शिखरतुल्य ऊचे महिल, जिनके मणियोकी भीति, मणियोके झरोखा, तिनमें तिष्ठती भ्रमररूप ह नेत्र जिनके, ऐसी सब राणियो सहित मदोदरी सो याहि देखती भई। कसा देखया? लाल ह नेत्र जाके, प्रतापका भरा। ताहि देखकर मोहित भया ह मन जाका। रावण उठकर आयुधशालामें गया। कसी ह आयुधशाला? अनेक दिव्य शस्त्र अर सामाय शस्त्र तिनसे भरी, अमोघ बाण अर चक्रादिक अमोघ रत्ननिसू भरी, जैस वज शालामें इद्र जाय। जा समय रावण आयुधशालामें गया ता समय अपशकुन भए। प्रथम ही छींक भई सो शकुनशास्त्रविष पूवदिशाकू छींक होय तो मत्यु, अर अग्निकोणविष शोक, दक्षिणमें हानि, नऋत्यमें शुभ, पश्चिमविष मिष्ट आहार, वायुकोणमें सव सम्पदा, उत्तरविष कलह, ईशानविष धनागम, आकाशविष सव सहार, पातालविष सव सम्पदा ये दशो दिशाविष छींकके फल कहे। सो रावणकू मत्युकी छींक भई। बहुरि आगे माग रोके महा नाग निरखया। अर हा शब्द, ही शब्द, धिक शब्द, कहा जाय ह—यह वचन होते भए। अर पवनकर छत्रके वडूयमणिका वण्ड भग्न भया। अर उत्तरासन गिर पडया। काग दाहिना बोला। इत्यादि और भी अपशकुन भए। ते युद्धत निवारते भए, वचनकर कमकर निवारते भए। जे नानाप्रकारके शकुनशास्त्रविष प्रवीण पुरुष हुते वे अत्यन्त आकुल भए। अर मदोदरी शुक सारण इत्यादि बडे बड मत्रिनकू बुलाय कहती भई—तुम स्वामीकू कल्याण

की बात काहेकू न कहो हो ? अब तक कहा अपनी अर उनकी चेष्टा न देखी ? कुम्भकरण इन्द्रजीत मेघनादसे बधनविषे आए, वे लोकपाल समान महातेजके धारक अद्भुत कार्यके करणहारे। तब नमस्कारकर मन्त्री मदोदरीसे कहते भए—हे स्वामिनी ! रावण महामानी, यमराजसा क्रूर आप ही आप प्रधान है। ऐसा या लोकविषे कोई नाही जाके वचन रावण मानै। जो कुछ होनहार है ता प्रमाण बुद्धि उपजै है। बुद्धि कर्मानुसारिणी है। सो इन्द्रादिककर तथा देवनिके समूहकर और भांति न होय। सम्पूर्ण न्यायशास्त्र अर धर्मशास्त्र तिहारा पति सब जाने है परन्तु मोहकरि उन्मत्त भया है। हम बहुत प्रकार कह्या, सो काहूप्रकार माने नाही। जो हठ पकड्या है सो छाडे नाही। जैसे वर्षाकालके समागमविषे महाप्रवाहकर संयुक्त जो नदी ताका तिरना कठिन है, तैसे कर्मनिका प्रेरा जो जीव ताका सम्बोधना कठिन है। यद्यपि स्वामीका स्वभाव दुर्निवार है तथापि तिहारा कहा करै तो करै। तातै तुम हितकी बात कहो, यामैं दोष नाही।

यह मन्त्रिनिने कही तब पटराणी साक्षात लक्ष्मी समान निर्मल है चित्त जाका, सो कम्पायमान पतिके समीप जायवेकू उद्यमी भई। महा निर्मल जलसमान वस्त्र पहिरे। जैसे रति कामके समीप जाय तैसे चाली। सिरपर छत्र फिरै है, अनेक सहेली चमर ढारै है। जैसे अनेक देवनिकर इन्द्राणी इन्द्रपै जाय तैसे यह सुन्दर वदनकी धरणहारी पतिपै गई। निश्वास नाखती, पाय डिगते, शिथिल होय गई है कटिमेखला जाकी भरतारके कार्यविषै सावधान, अनुरागकी भरी ताहि स्नेहकी दृष्टिकरि देखती भई। आपका चित्त शस्त्रनिविषे अर बक्तरविषे तिनकू आदरसे स्पर्शै है सो मदोदरीसे कहते भए—हे मनोहरे ! हंसनी समान चालकी चलनहारी हे देवी ! ऐसा कहा प्रयोजन है जो तुम शीघ्रतासे आवो हो। हे प्रिये ! मेरा मन काहेकू हरो हो, जैसे स्वप्नविषै निधान। तब वह पतिव्रता पूर्णचन्द्रसमान है वदन जाका, फूले कमलसमान नेत्र, स्वत उत्तम चेष्टाकी धरणहारी, मनोहर जे कटाक्ष वेई भए बाण सो पतिकी ओर चलावनहारी, महाविचक्षण, मदनका निवास है अंग जाका, महा मधुर शब्दकी बोलनहारी, स्वर्णके

कुम्भसमान है स्तन जाके, तिनके भारकर नय गया है उदर जाका, दाडिमके बीज समान दांत, मूंगा समान लाल अधर, अत्यन्त सुकुमार, अति सुन्दरी, भरतारकी कृपाभूमि, सो नाथकूं प्रणाम कर कहती भई—हे देव ! मोहि भरतारकी भीख देओ । आप महादयावंत धर्मात्माओंसे अधिक स्नेहवंत, मैं तिहारे वियोगरूप नदीविषै डूबूं हूं, सो महाराज मोहि निकासो । कैसी है नदी ? दुःखरूप जलकी भरी, संकल्प विकल्परूप लहरकर पूर्ण है । हे महाबुद्धे ! कुटुम्बरूप आकाशविषै सूर्यसमान प्रकाशके कर्त्ता एक मेरी विनती सुनहु । तिहारा कुलरूप कमलोंका वन महा विस्तीर्ण प्रलय हुआ जाय है सो क्यों न राखहु । हे प्रभो ! तुम मोहि पटराणीका पद दिया हुता सो मेरे कठोर वचननिकूं क्षमा करो । जे अपने हितू हैं तिनका वचन औषध समान ग्राह्य है । परिणाम सुखदाई, विरोधरहित, स्वभावरूप आनन्दकारी है । मैं यह कहूं हूं तुम काहेकूं संदेहकी तुला चढो हो ? यह तुला चढिवेको नाहीं, काहेकूं आप संताप करो हो, अर हम सबनिकूं संताप करो हो, अब हू कहा गया ? तिहारा सब राज, तुम सकल पृथ्वीके स्वामी, अर तिहारे भाई पुत्रनिकूं बुलाय लेहु । तुम अपना चित्त कुमार्गते निवारो, अपना मन वश करो । तिहारा मनोरथ अत्यन्त अकार्यविषै प्रवरता है सो इन्द्रियरूप तुरल तुरंगोंको विवेकरूप दृढ लगामकर वश करो । इन्द्रियनिके अर्थ कुमार्गविषै मनको कौन प्राप्त करै ? तुम अपवादका देनहारा जो उद्यम ताविषै कहा प्रवर्ते हो ? जैसे अष्टापद अपनी छाया कूपविषै देख क्रोधकर कूपविषै पडै तैसे तुम आपही क्लेश उपजाय आपदामें पडो हो । यह क्लेशका कारण जो अपयशरूप वृक्ष ताहि तजकर सुखसे तिष्ठो । केलिके थम्भसमान असार यह विषय ताहि कहा चाहो हो ? यह तिहारा कुल समुद्र समान गम्भीर प्रशंसा योग्य, ताहि शोभित करो । यह भूमिगोचरोकी स्त्री बडे कुलवंतनिकूं अग्निकी शिखा समान है ताहि तजो । हे स्वामी ! जे सामंत सामंतसों युद्ध कर हैं वे मनविषै यह निश्चय कर हैं हम मरेंगे । हे नाथ ! तुम कौन अर्थ मरो हो ? पराई नारी ताके अर्थ कहा मरणा ? या मरिवेविषै यश नाहीं । अर उनकूं मारो, तिहारी जीत होय तोहू यश नाहीं । क्षत्री

मर ह यशके अर्थ । तात सीतासम्बधी हठको छाडो । अर जे बडे बडे व्रत ह तिनकी महिमा तो कहा कही ? एक यह परदारपरित्याग हीं परुषके होय तो दोऊ जन्म सुधरें । शीलवत परुष भवसागर तिरे । जो सवथा स्त्रीका त्याग कर सो तो अति श्रेष्ठ ही ह । काजल समान कालिमाकी उपजावनहारी यह परनारी, तिनविष जे लोलुपी, तिनविष मेरु समान गुण होय तोहू तण समान लघु होय जाय । जो चक्रवर्तीका पुत्र होय अर देव जाका पक्ष होय अर परस्त्रीके सगरूप कोर्चविष डूब तो महा अपयशकू प्राप्त होय । जो मूढमति परस्त्रीसे रति कर ह सो पापी आशीविष भुजगनीसे रम ह । तिहारा कुल अत्यन्त निमल सो अपयशकर मलिन मत करो । दुबुद्धि तजो ! जे महाबलवान हुते अर दूसरोको निबल जानते अककीर्ति अशनघोषादिक अनेक नाशकू प्राप्त हुए । सो हे सुमुख ! तुम कहा न सुने ?

ये वचन मदोदरीके सुन रावण कमलनयन, कारी घटा समान ह वण जाका मलयागिरिचन्दन कर लिप्त मदोदरीसे कहता भया—हे कान्ते ! तू काहेकू कायर भई । म अककीर्ति नाहीं जो जयकुमार से हारा । अर म अशनघोष नाही जो अमिततेजसे हारा । अर और हू न.ही, म दशमुख हू, तू काहेकू कायरताकी बात कह ह । म शत्रुरूप वक्षनिके समूहकू दग्वानलरूप हू । सीता कदाचित न दू । हे मदमानस ! तू भय मत कर । या कथा कर तोहि कहा ? तोको सीताकी रक्षा सौंपी ह सो रक्षा भली भाति कर । अर जो रक्षा करिवकू समथ नाही तो शोघ्र मोहि सौप देवो । तब मदोदरी कहती भई—तुम उससे रतिसुख बाछो हो तात यह कहो हो—मोहि सोप देवो । सो यह निलज्जताकी बात कुलवतो को उचित नाहीं । बहुरि कहती भई—तुमने सीताका कहा माहात्म्य देखा जो ताहि बारम्बार बाछो हो । वह ऐसी गुणवती नाहीं, ज्ञाता नाही, रूपवतियोका तिलक नाहीं, कलाविष प्रवीण नाहीं, मनमोहनी नाहीं, पतिके छान्दे(आज्ञा बिना)चलनेवारी नाहीं । ता सहित रतिविष बुद्धि करो हो, सो हे कत ! यह कहा वार्ता ? अपनी लघुता होय ह सो तम नाही जानो हो ? म अपने मुख अपनी प्रशसा कहा करू ? अपने मुख अपने गुण कहे गुणोकी गौणता होय ह । अर पराए मुख सुने प्रशसा होय ह । तात म कहा ६५६

कहू तुम सब नीके जानो हो। विचारी सीता कहा ? लक्ष्मी भी मेरे तुल्य नाहीं। तातै सीताकी अभिलाषा तजो। मेरा निरादरकर तुम भूमिगोचरिणीकू इच्छो हो, सो मदमति हो। जैसे बालबुद्धि वडूर्य मणिको तज काचको इच्छे। ताका कछू दिव्यरूप नाहीं, तिहारे मनविषै क्या रुची यह ग्राम्यजनकी नारी समान अल्पमति, ताकी कहा अभिलाषा ? अर मोहि आज्ञा देवो सोई रूप धरू, तिहारे चित्तकी हरणहारी मै लक्ष्मीरूप धरू। अर आज्ञा करो तो शची इन्द्राणीका रूप धरू। कहो तो रतिका रूप धरू। हे देव! तुम इच्छा करो सोई रूप धरू। यह वार्ता मन्दोदरीकी सुन रावण ने नीचा मुख किया। अर लज्जावान भया। बहुरि मन्दोदरी कहती भई—तुम परस्त्री आसक्त होय अपनी आत्मा लघु किया। विषयरूप आमिषकी आसक्ती है जाके सो पापका भाजन है। धिक्कार है ऐसी क्षुद्र चेष्टाकू।

यह वचन सुन रावण मंदोदरीसे कहता भया—हे चन्द्रवदनी! कमललोचने! तुम यह कही—जो कहो जैसा रूप बहुरि धरू सो औरोके रूपसे तिहारा रूप कहा घटती है ? तिहारा स्वतः ही रूप मोहि अति वल्लभ है। हे उत्तमे! मेरे अन्य स्त्रीनि कर कहा ? तब हर्षितचित्त होय कहती भई—हे देव! सूर्यको दीपका उद्योत कहा दिखाइये ? मै जो हितके वचन आपको कहे सो औरोसे पूछ देखो। मै स्त्री हू मेरेमें ऐसी बुद्धि नाहीं। शास्त्रमें कही है जो धनी सबही नय जाने है परन्तु दैवयोग थकी प्रमादरूप भया होय तो जे हितु है ते समझावै। जैसे विष्णुकुमार स्वामीको विक्रियाऋद्धिका विस्मरण भया तो औरोके कहे कर जाना। यह पुरुष, यह स्त्री ऐसा विकल्प मंदबुद्धिनिके होय है। जे बुद्धिमान है हितकारी वचन सबहीका मान लेय। आपका कृपाभाव मो ऊपर है तो मै कहू हू। तुम परस्त्रीका प्रेम तजो, मै जानकीकू लेकर राम पै जाऊ, अर रामकू तिहारे पास ल्याऊ। अर कुम्भकरण, इन्द्रजीत, मेघनादकू लाऊ। अनेक जीवनिकी हिंसा कर कहा ? ऐसे वचन मंदोदरीने कहे तब रावण अति क्रोधकर कहता भया—शीघ्र ही जावो जावो, जहा तेरा मुख न देखू तहा जावो। अहो तू आपको ६५७

वथा पडित मान ह। आपको ऊचता तज परपक्षको प्रशसामें प्रवरती। तू दीनचित्त ह, योधावोंकी माता, तेरे इन्द्रजीत मेघनादकेसे पुत्र, अर मेरी पटराणी, राजा मनकी पुत्री। तोमें एती कायरता कहासे आई ? ऐसा कहा तब मदोदरी बोली–हे पति ! सुनो जो ज्ञानियोके मुख बलभद्र नारायण प्रतिनारायणका जन्म सुनिये ह। पहिला बलभद्र विजय नारायण त्रिपष्ठ, प्रतिनारायण अश्वग्रीव। दूजा बलभद्र अचल, नारायण द्विपष्ठ प्रतिहरि तारक इस भाति अबतक सात बलभद्र नारायण हो चुके। सो इनके शत्रु प्रतिनारायण इन्होने हते। अब तुम्हारे समय यह बलभद्र नारायण भए ह अर तुम प्रतिवासुदेव हो। आगे प्रतिवासुदेव हठ कर हते गए तस तुम नाशको इच्छो हो। जे बुद्धिमान ह तिनको यही काय करना जो या लोक परलोकमें सुख होय। अर दु खके अकुरकी उत्पत्ति न होय सो करना। यह जीव चिरकाल विषयसे तृप्त न भया, तीन लोकविष ऐसा कौन है जो विषयोसे तृप्त होय ? तुम पापकर मोहित भए हो सो वथा ह। अर उचित तो यह ह तुमने बहुकाल भोग किए, अब मुनिव्रत धरो अथवा श्रावकके व्रत धर दु ख नाश करो। अणुव्रतरूप खड्गकर दीप्त ह अग जाका नियम रूप छत्रकर शोभित सम्यकदशनरूप बक्तर पहिरे, शीलरूप ध्वजा कर शोभित, अनित्यादि बारह भावना तेई चन्दन तिनकर चर्चित ह अग जाका, अर ज्ञानरूप धनुषको धरे, वश किया ह इन्द्रियनिका बल जान,शुभ ध्यान अर प्रतापकर युक्त, मर्यादारूप अकुशकर सयक्त, निश्चलरूप हाथीपर चढा, जिन भक्ति कीह महाभक्ति जाके,दुगतिरूप कुनदी सो महा कुटिल पापरूप ह वेग जाका, अतिदु सह पडितनिकर तिरिये ह,ताहि तिरकर सुखी होवो। अर हिमवान सुमेरु पवतविष जिनालयको पूजते सते मेरे सहित ढाई द्वीपमे विहार कर, अष्टापद सहसस्त्रोनिके हस्तकमलपल्लव तिनकर लडाया सता सुमेरु पवतके वनविषै क्रीडा कर, अर गगाके तटपर क्रीडा कर, अर और भी मन वाछित प्रदेशनिविष रमणीक क्षेत्रनिविष हे नरेन्द्र ! सुखसे विहार कर। या युद्धकर कछू प्रयोजन नाहीं, प्रसन्न होवहु। मेरा वचन सवथा सुख का कारण ह। लोकापवाद मत करावहु। अपयशरूप समुद्रमे काहेकू डूबो हो ? यह अपवाद विषतुल्य

महानिन्द्य परम अनर्थका कारण भला नाहीं। दुर्जन लोक सहज ही परनिन्दा करैं सो ऐसी बात सुन कर तो करैं ही करैं। या भांतिके शुभ वचन कह कर यह महासती हाथ जोड पतिका परमहित वांछती पतिके पायनि पडी।

तब रावण मन्दोदरीकूं उठायकर कहता भया—तू निःकारण क्यों भयकूं प्राप्त भई? सुन्दरवदनी! मोसे अधिक या संसारविषै कोई नाहीं। तू स्त्रीपर्यायके स्वभावकर वृथा काहेकूं भय करै है! तैने कही जो यह बलदेव नारायण हैं सो नाम नारायण अर नाम बलदेव भया तो कहा? नाम भए कार्य की सिद्धि नाहीं। नाम नाहर भया तो कहा? नाहरके पराक्रम भए नाहर होय। कोई मनुष्य सिद्ध नाम कहाया तो कहा सिद्ध भया? हे कांते! तू कहा कायरताकी वार्ता करै? रथनूपुरका राजा इन्द्र कहावता सो कहा इन्द्र भया? तैसे यह भी नारायण नाहीं। या भांति रावण प्रतिनारायण ऐसे प्रबल वचन स्त्रीको कह महा प्रतापी क्रीडा भवनविषै मन्दोदरी सहित गया, जैसे इन्द्र इन्द्राणीसहित क्रीडा गृहविषै जाय। सांझके समय सांझ फूली, सूर्य अस्तसमय किरण संकोचने लगा, जैसे संयमी कषायों को संकोचै। सूर्य आरक्त होय अस्तकूं प्राप्त भया, कमल मुद्रित भए। चकवा चकवी वियोगके भय कर दीन वचन रटते भए, मानो सूर्यकूं बुलावैं हैं। अर सूर्यके अस्त होयवेकर ग्रह नक्षत्रनिकी सेना आकाशविषै बिस्तरी, मानो चन्द्रमाने पठाई। रात्रिके समय रत्नद्वीपोंका उद्योत भया। दीपोंकी प्रभा-कर लंका नगरी ऐसी शोभती भई मानो सुमेरुकी शिखा ही है। कोऊ वल्लभा वल्लभसे मिलकर ऐसे कहती भई एक रात्रि तो तुम सहित व्यतीत करेंगे बहुरि देखिए कहा होय? अर कोई एक प्रिया नानाप्रकारके पुष्पनिकी सुगंधताके मकरंदकर उन्मत्त भई स्वामीके अंगविषै मानो महा कोमल पुष्प-निकी वृष्टि ही पडी। कोई नारी कमल तुल्य हैं चरण जाके, अर कठिन हैं कुच जाके, महा सुन्दर शरीरकी धरणहारी, सुन्दरपतिके समीप गई। अर कोई सुन्दरी आभूषणनिकूं पहरती ऐसी शोभती भई मानों स्वर्ण रत्नोंको कृतार्थ करै है। भावार्थ—ता समान ज्योति रत्न स्वर्णनिविषै नाहीं। रात्रि

समय विद्याकरि विद्याधर मनवांछित क्रीडा करते भए। घर घर विषै भोगभूमिकीसी रचना होती भई। महा सुन्दर गीत, अर बीण बांसुरियोंका शब्द तिनकर लंका हर्षित भई। मानो वचनालाप ही कर है। अर ताम्बूल सुगन्ध माल्यादिक भोग अर स्त्री आदि उपभोग सो भोगोपभोगनिकरि लोक देवनिकी न्याई रमते भए। अर कईएक उन्मत्त भए स्त्रियोंको नानाप्रकार रमावते भए। अर कईएक नारी अपने वदनकी प्रतिबिम्ब रत्ननिकी भीतिविषै देखकर जानती भई कि कोई दूजी स्त्री मन्दिरमें आई है, सो ईर्षाकर नीलकमलसे पतिकूं ताडना करती भई। स्त्रीनिके मुखकी सुगन्धताकर मदिरा सुगन्ध होय गई, अर मदिराके योगकर नारिनिके नेत्र लाल होय गए। अर कोईयक नायिका नवोढा हुती, अर प्रीतमनें मदिरा पिलाय उन्मत्त करी। सो मन्मथ कर्मविषै प्रवीण प्रौढाके भावकूं प्राप्त भई। लज्जारूप सखीकूं दूरकर उन्मत्ततारूप सखीने क्रीडाविषै अत्यन्त तत्पर करी। अर घूमै है नेत्र जाके अर स्खलित हैं वचन जाके स्त्री पुरुषनिकी चेष्टा उन्मत्तताकर विकटरूप होती भई। नरनारिनिके अधर मूंगा समान शोभायमान दीखते भए। नर नारी मदोन्मत्त भए सो न कहनेकी बात कहते भये, अर न करनेकी बात करते भये। लज्जा छूट गई, चन्द्रमाके उदयकर मदनकी वृद्धि भई। ऐसा ही तो इनका यौवन, ऐसे ही सुन्दर मन्दिर, अर ऐसा ही अमलका जोर सूं सब ही उन्मत्त चेष्टाका कारण आय प्राप्त भया। ऐसी निशाविषै, प्रभातविषै होनहार है युद्ध जिनके सो सम्भोगका योग उत्सवरूप होता भया। अर राक्षसनिका इन्द्र सुन्दर है चेष्टा जाकी, सो समस्त ही राजलोककूं रमावता भया, बारम्बार मंदोदरीसूं स्नेह जनावता भया। याका वदनरूप चन्द्र निरखते रावणके लोचन तृप्त न भये। मंदोदरी रावणकूं कहती भई—मैं एक क्षणमात्र हू तमको न तजूंगी। हे मनोहर! सदा तिहारे संग ही रहूंगी। जैसे बेल बाहुबलिके सर्व अंगसूं लगी तैसे रहूंगी। आप युद्धविषै विजयकर वेग ही आवो। मैं रत्ननिकूं चूर्णकर चौक पूरूंगी। अर तिहारे अर्घपाद्य करूंगी, प्रभुकी महामख पूजा कराऊंगी। प्रेमकर कायर है चित्त जाका, अत्यन्त प्रेमके वचन कहते निशा व्यतीत भई, अर कूकडा

बोलें, नक्षत्रनिकी ज्योति मिटी, सध्या लाल भई, अर भगवानके चत्यालयनिविष महा मनोहर गीत ध्वनि होती भई। अर सूयलोकका लोचन उदयकू सन्मुख भया, अपनी किरणनिकर सब दिशाविष उद्योत करता सता प्रलयकालके अग्निमण्डल समान ह आकार जाका प्रभात समय भया। तब सब राणी पतिकू छोडती उदास भई। तब रावणने सबकू दिलासा करी। गम्भीर वादित्र बाजे, शखो के शब्द भए। रावणकी आज्ञाकर जे युद्धविषै विचक्षण ह महाभट, महा अहकारकू धरते परम उद्धत अतिहषके भरे नगरसे निकसे। तुरग हस्ती रथोपर चढे, खडग धनुष गदा बरछी इत्यादि अनेक आयुधनिकू धरे, जिनपर चमर ढरते, छत्र फिरते, महा शोभायमान देवनि जसे स्वरूपवान, महा प्रतापी विद्याधरनिके अधिपति योधा, शीघ्र कायके करणहारे, श्रेष्ठ ऋद्धिके धारक युद्धकू उद्यमी भए। ता दिन नगरी स्त्री कमलनयनी करुणाभावकरि दुखरूप होती भई। सो तिनकू निरखे दुजनका चित्त भी दयाल होय। कोईयक सुभट घरसे युद्धकू निकसा अर स्त्री लार लगी आव ह ताहि कहता भया—हे मुग्धे! घर जावो। हम सुखसू जाय ह। अर कोईयक स्त्री भरतार चल ह तिनको पीछेसू जाय कहती भई—हे कत! तिहारा उत्तरासन लेवो, तब पति सन्मुख होय लेते भए! कसी ह मगनयनी? पतिके मुख देखवेकी ह लालसा जाके। अर कोईयक प्राणवल्लभा पतिकू दष्टिसे अगोचर होते सखियोसहित मूर्छा खाय पडी। अर कोईयक पतिसू पाछी आय मौन गह, सेजपर परी, मानो काठकी पुतली ही है। अर कोईयक शूरवीर श्रावणके व्रतका धारक पीठपीछे अपनी स्त्रीकू देखता भया अर आग देवागनाओकू देखता भया। भावाथ—जे सामत अणुव्रत धारक ह वे देवलोकके अधिकारी ह। अर जे सामत पहिले पूणमासीके चन्द्रमा समान सौम्यवदन हुते वे युद्धके आगमनविष कालसमान क्रूर आकार होय गए। सिरपर टोप धरे बक्तर पहिरे शस्त्र लीए तेज भासते भए। ६६१

अथानन्तर चतुरग सेना सयुक्त धनुष छत्रादिककर पूण मारीच महा तेजकू धरे युद्धका अभिलाषी आय प्राप्त भया। फिर विमलचन्द्र आया महा धनुषधारी। अर सुनन्द आनन्द नन्द इत्यादि हजारो

राजा आए। सो विद्याकर निरमापित दिव्यरथ तिनपर चढे अग्नि कीसी प्रभाकू धर मानो अग्नि कुमारदेव ही ह। कईएक तीक्ष्ण शस्त्राकर सम्पूण हिमवान पवतसमान जे हाथी उनपर सवदिशावोकू आच्छादते हुए आए, जस विजुरीसे सयुक्त मेघमाला आव। अर कईएक श्रेष्ठ तुरगोपर चढे पाचो हथियारोकर सयुक्त शीघ्र ही ज्योतिष लोककू उलघ आवते भए। नाना प्रकारके बडे बडे वादित्र और तुरगोका हींसना। गजोका गजना, पयादोके शब्द, योधानिके सिहनाद, ब दीजनोके जय जय शब्द, अर गुणीजनोके गीत वीररसके भरे इत्यादि और भी अनेक शब्द भले भए। धरती आकाश शब्दायमान भए। जस प्रलयकालके मेघपटल होव तस निकसे। मनुष्य हाथी घोडे रथ पियादे परस्पर अत्य त विभूतिकर देदीप्यमान, बडी भुजानिसे बख्तर पहिर उतग है उरस्थल जिनके, विजयके अभिलाषी और पयादे खडग सम्भाले ह महा चाचल आगे आगे चले जाय ह, स्वामीके हष उपजावनहारे तिनके समूहकर आकाश पथ्वी और सव दिशा व्याप्त भइ। ऐसे उपाय करते भी या जीवके पूव कमका जसा उदय ह तसा ही होय ह। यह प्राणी अनेक चेष्टा कर ह परन्तु अ यथा न होय, जसा भवितव्य ह तसा ही होय। सूय ह और प्रकार करिवे समथ नाहीं।

इति श्रीरविषेणाचायवि चित महापद्मपुराण सस्कृत ग थ ताकी भाषावचनिकाविष रावणका युद्धविष उद्यमी होनेका वण करनेवाला तेहत्तरवा पव पूण भया ॥ ७३ ॥

अथान तर लकेश्वर मदोदरीसू कहता भया—हे प्रिये! न जानिये बहुरि तिहारा दशन होय वा न होय। तब मदोदरी कहती भई—हे नाथ! सदा वृद्धिकू प्राप्त होवो, शत्रुवोकू जीत शीघ्र ही आय हमको देखोगे। अर सग्रामसे जीते आओगे। ऐसा कहा अर हजारो स्त्रियोकर अवलोकता साता राक्षसो का नाथ मदिरसे बाहिर गया। महा विकटताकू धरे विद्याकर निरमाप्या ऐ द्रनामा रथ ताहि देखता भया। जाके हजार हाथी जुर्पे, मानो कारी घटाका मेघ ही ह। हे नाथ! मन्दोन्मत्त झरे ह मद

जिनके, मोतियोकी माला तिनकरि पूण, महा घटाके नादकर युक्त ऐरावत समान नानाप्रकारके रगो से शोभित, जिनका जीतना कठिन,अर विनयके धाम, अत्यन्त गजमाकर शोभित ऐसे सोहते भए मानो कारी घटाक समूह ही ह। मनोहर ह प्रभा जिनकी ऐसे हाथियोके रथ चढ्या रावण सोहता भया। भुज बध कर शोभायमान ह भुजा जाकी, मामो साक्षात इन्द्र ही ह। विस्तीण है नेत्र जाके, अनुपम ह आकार जाका, अर तेज कर सकल लोकविष श्रेष्ठ १० हजार आप समान विद्याधर तिनके मडलकर युक्त रणविष आया, सो वे महा बलवान देवो सारिखे अभिप्रायके वेत्ता रावणकू देखि सुग्रीव हनुमान क्रोधकू प्राप्त भए। अर जब रावण चढ्या तब अत्यन्त अपशकुन भए। भयानक शब्द भए, अर आकाश विष गघ्र भ्रमते भए आच्छादित किया ह सूयका प्रकाश जिन्होने, सो ये क्षयके सूचक अपशकुन भए। परन्तु रावणके सुभट न मानते भए, युद्धकू आए ही। अर श्रीरामचन्द्र अपनी सेनाविष तिष्ठते सो लोक निसू पूछते भए—हे लोको! या नगरीके समीप यह कौन पवत ह? तब सुषेणादिक तो तत्कालही जवाब न देय सके अर जाबुवादिक कहते भए—यह बहुरूपिणी विद्यासे रचा पदमनागनामा रथ ह घनेनिकू मृत्यका कारण। अगदने नगरविष जायकर रावणकू क्रोध उपजाया सो अब बहुरूपिणी विद्या सिद्ध भई हमसे महाशत्रुता लिए ह। सो तिनके वचन सुनकर लक्ष्मण सारथीसे कहता भया मेरा रथ शीघ्र ही चलाय। तब सारथीने रथ चलाया अर जस समुद्र गाजै ऐसे वादित्र बाजे। वादित्रोके नाद सुनकर योधा विकट ह चेष्टा जिनकी, लक्ष्मणके समीप आए। कोईयक रामके कटकका सुभट अपनी स्त्रीको कहता भया—हे प्रिये! तू शोक तज पाछी जावहु म लकेश्वरकू जीत तिहारे समीप आऊगा, या भाति गवकर प्रचड जे योधा वे अपनी स्त्रीनिकू धीय बधाय अन्त पुरसे निकसे। परस्पर स्पर्धा करते वेगसे प्रेरे ह वाहन रथादिक जिन्होने ऐसे महायोधा शस्त्रके धारण युद्धकू उद्यमी भए। भूतस्वननामा विद्याधरनिका अधिपति महा हाथियोके रथ चढा निकस्या, गम्भीर ह शब्द जाका। या विधि और भी विद्याधरनिके अधिपति हष सहित रामके सुभट क्रूर ह आकार जिनके, क्रोधायमान होय रावणके

योधानिसू जैसा समुद्र गाजै तैसे गाजते, गंगाकी उतंग लहर समान उछलते, युद्धके अभिलाषी भए, अर राम लक्ष्मण डेरानिसू निकसे। कैसे हैं दोऊ भाई? पृथ्वीविषै व्याप्त है अनेक यश जिनके, क्रूर आकारकू धरे, सिंहनिके रथ चढे बकतर पहिरे। महा बलवान उगते सूर्यसमान श्रीराम शोभते भए। अर लक्ष्मण गरुडकी है ध्वजा जाके अर गरुडके रथ चढ्या। कारी घटा समान है रंग जाका अपनी श्यामताकर श्याम करी है दशोदिशा जाने मुकुटकू धरे कुण्डल पहिरे धनुष चढाय बकतर पहिर बाण लिए जैसा साझके समय अंजनगिर सोहै तैसे शोभता भया। गौतम स्वामी कहै है-हे श्रेणिक! बडे २ विद्याधर नाना प्रकारके वाहन अर विमाननिपर चढे युद्ध करिवेकू कटकसू निकसे। जब श्रीराम चढे तब अनेक शुभ शकुन आनन्दक उपजावनहारे भए। रामको चढ्या जान रावण शीघ्र ही दावानल समान है आकार जाका युद्धकू उद्यमी भया। दोनो ही कटकके योधा जे महा सामंत तिनपर आकाशसे गंधर्व अर अप्सरा पुष्पवृष्टि करती भई। अंजनगिरिसे हाथी महावतोके प्रेरे मदोन्मत्त चले। पियादे कर बेढे अर सूर्यके रथ समान रथ चंचल है तुरंग जिनके सारथीनिकर युक्त। जिनपर महा योधा चढे युद्धको प्रवर्ते। अर घोडो पर चढे सामंत गम्भीर है नाद जिनके परम तेजकू धरे गाजते भए। अर अश्व हींसते भए। परम हर्षके भरे देदीप्यमान है आयुध जिनके अर पियादे गर्वके भरे पृथ्वीविषै उछलते भए। खड्ग खेट बरछी है हाथविषै जिनके, युद्धकी पृथ्वीविषै प्रवेश करत भये। परस्पर स्पर्धा कर है दौड है, योधानिविषै परस्पर अनेक आयुधनिकर तथा लाठी मूका लोहयष्टिनिकर युद्ध भया है, परस्पर केशग्रहण भया। खडग कर विदारा गया है। शरीर जिनका, कईएक बाणकर बींधे गए तथापि योधा युद्धके आगे ही भए, मार है प्रहार कर है गाजै है घोडे व्याकुल भए भ्रमै है, कईएक आसन खाली होय गए असवार मारे गए मुष्टियुद्ध गदायुद्ध भया, कईएक बाणनिकर बहुत मारे गए, कईएक खडग कर, कईएक सेलोकर घाव खाए, बहुरि शत्रुकू घायल करते भए, कईएक मनवांछित भोगनिकर इन्द्रियनिकू रमावते सो युद्धविषै इन्द्रियें इनको छोडती भई। जैसे काय परे कुमित्र तजै, कईएकके आंतनिके ढेर होय गए तथापि ६६४

खेद न मानते भए शत्रुनिपर जाय पडे, अर शत्रुसहित आप प्राणात भए, डसे है होठ जिन्होने। जे राज कुमार देवकुमार सारिखे सुकुमार रत्ननिके महिलोके शिखरविष क्रीडा करते,महा भोगी पुरुष स्त्रीनिके स्तन कर रमाये सते वे खडग चक्र कनक इत्यादि आयुधनिकर विदारे सते सग्रामकी भूमिविषै पडे। विरूप आकार तिनको गद्ध पक्षी अर स्याल भख हैं। अर जसै रगमहिलमें रगकी रामा नखोकर चिह्न करती अर निकट आवर्ती, तस स्यालनी नख दतनिकर चिह्न कर ह, अर समीप आव है। बहुरि श्वासके प्रकाशकर जीवते जानि वे डर जाय है, जस डाकनी मन्त्रवादीसे दूर जाय। अर सामत निकू जीवते जानि यक्षिणी डर कर उड जाती भई, जस दुष्ट नारी, चलायमान ह नेत्र जिसके, पति के समीपसे जाती रहे। जीवोके शुभाशुभ प्रकतिका उदय युद्धविषै लखिए ह। दोनो बराबर, अर कोईकी हार होय कोईकी जीत होय। अर कबहू अल्प सेनाका स्वामी महा सेनाके स्वामीको जीते, अर कोईयक सुकतके सामर्थ्यसे बहुतोको जीते, अर कोई बहुत भी पापके उदयसे हार जाय। जिन जीवोने पूव भवविषै तप किया ते राज्यके अधिकारी होय विजयको पावें ह। अर जिन्होने तप न किया अथवा तप भग किया तिनकी हार होय ह। गौतमस्वामी राजा श्रेणिकसू कह ह–हे श्रेणिक! यह धम ममकी रक्षा कर ह, अर दुजयको जीत ह। धमही बडा सहाई ह। बडा पक्ष धमका है। धम सब ठौर रक्षा कर ह। घोडोकर युक्त रथ, पवत समान हाथी, पवन समान तुरग, असुर कुमारसे पयादे इत्यादि सामग्री पूण ह, परन्तु पूवपुण्यके उदय विना कोई राखिवे समथ नाहीं। एक पुण्याधिकारी ही शत्रुवोकी जीत ह। इन भाति राम रावणके युद्धकी प्रवत्तिविषै योधावोकर योधा हते गए, तिनकर रणक्षेत्र भर गया, अवकाश नाहीं। आयुधोकर योधा उछल है, परै ह सो आकाश ऐसा दृष्टि पडता भया मानो उत्पातके बादलोकर मडित ह।

अथानन्तर मारीच, चन्द्रनिकर, वज्राक्ष, शुकसारण और भी राक्षसोके अधीश तिन्होने रामका कटक दबाया। तब हनुमान चन्द्र मारीच नील मुकुद भूतस्वन इत्यादि रामपक्षके योधा तिन्होने राक्षसनि-

की सेना दबाई। तब रावणके योधा कुद, कुम्भ, निकुम्भ, विक्रम, क्रमाण, जम्बूमाली, काकबली सूर्यार, मकरध्वज, अशनिरथ इत्यादि राक्षसनिके बडे बडे राजा शीघ्रही युद्धकू उठे। तब भूधर, अचल, सम्मेद, निकाल, कुटिल, अगद, सुखेण, कालचन्द्र, उर्मितरग इत्यादि बानरवशी योधा तिनके सन्मुख भए। उनही समान ता समय कोई सुभट प्रतिपक्षी सुभट विना दृष्टि न पडचा। भावार्थ–दोनो पक्षके योधा परस्पर महा युद्ध करते भए। अर अजनीका पुत्र हाथिनिके रथपर चढकर रणमें क्रीडा करता भया, जैसे कमलनिकर भरे सरोवरमे महागज क्रीडा करै। गौतम गणधर कहै है–हे श्रेणिक! वा हनुमान शूरवीरने राक्षसनिकी बडी सेना चलायमान करी, उसे रुचा जो किया। तब राजा मय विद्याधर दैत्य वशी मदोदरीका बाप, क्रोधके प्रसगकर लाल है नेत्र जाके, सो हनुमानके सन्मुख आया। तब वह हनुमान कमल समान है नेत्र जाके बाणवृष्टि करता भया, सो मयका रथ चकचूर किया। तब वह दूजे रथ चढकर युद्धको उद्यमी भया तब हनुमानने बहुरि रथ तोड डाला। तब मयको विह्वल देख रावणने बहुरूपिणी विद्याकर प्रज्वलित उत्तम रथ शीघ्र ही भेजा। सो राजा मयने वा रथपर चढ कर हनुमानसे युद्ध किया अर हनुमानका रथ तोडा। तब हनुमानको दबा देख भामडल मदद आया। सो मयने वाणवर्षाकर भामडलका भी रथ तोडा। तब राजा सुग्रीव इनके मदद आए। सो मयने ताकू शस्त्ररहित किया अर भूमिमें डारा। तब इनकी मदद विभीषण आया। तो विभीषणके अर मयके अत्यन्त युद्ध भया, परस्पर बाण चले। सो मयने विभीषणका बखतर तोडा। सो अशोकवृक्षके पुष्प समान लाल होय तसो लालरूप रुधिरकी धारा विभीषणके पडी। तब वानरवशियोकी सेना चलायमान भई–अर राम युद्धकू उद्यमी भए, विद्यामई सिहनिके रथ चढे शीघ्र ही मय पर आए। अर बानरवशीनिकू कहते भए–तुम भय मत करहु। रावणकी सेना विजुरी सहित कारी घटा समान तामें उगते सूर्य समान श्रीराम प्रवेश करते भए। अर परसेनाका विध्वस करवेकू उद्यमी भए। तब हनुमान भामडल सुग्रीव विभीषणकू धीर्य उपजा अर वानरवशिनिकी सेना युद्ध करवेकू उद्यमी भई।

रामका बल पाय रामके सेवकनिका भय मिटा। परस्पर दोनो सेनाके योधानिविषै शस्त्रोंका प्रहार भया, सो देख देख देव आश्चर्यकूं प्राप्त भए। अर दोनो सेनाविषै अंधकार होय गया। प्रकाशरहित लोक दृष्टि न पडे। श्रीराम राजा मयको बाणनिकर अत्यन्त आच्छादते भए। थोडे ही खेद कर मय कूं विह्वल किया, जैसे इन्द्र चमरेन्द्रकूं करै। तब रामके बाणोकर मयकूं विह्वल देख, रावण काल समान क्रोधकर राम पर धाया। तब लक्ष्मण रामकी ओर रावणकूं आवता देख महातेज कर कहता भया—हो विद्याधर! तू किधर जाय है, मैं तोहि आज देख्या, खडा रहो। हे रंक! पापी, चोर, पर स्त्रीरूप दीपकके पतंग, अधमपुरुष, दुराचारी! आज मैं तोसों ऐसी करूं जैसी काल न करै। हे कुमानुष! श्रीराघवदेव समस्त पृथ्वीके पति तिन्होंने मोहि आज्ञा करी है जो या चोरकूं सजा देहु। तब दशमुख महा क्रोध कर लक्ष्मणसूं कहता भया—रे मूढ! तैंने कहा लोकप्रसिद्ध मेरा प्रताप न सुना? या पृथ्वीविषै जे सुखकारी सार वस्तु हैं सो सब मेरी ही हैं। मैं राजा पृथ्वीपति, जो उत्कृष्ट वस्तु सो मेरी। घंटा गजके कंठविषै सोहै, स्वानके न सोहै। तैसे योग्य वस्तु मेरे घर सोहै औरके नाहीं। तू मनुष्यमात्र वृथा विलाप करै तेरी कहा शक्ति? तू दीन मेरे समान नाहीं। मैं रंकसे क्या युद्ध करूं? तू अशुभके उदयसे मोसे युद्ध किया चाहे है सो जीवनसे उदास भया है, मूवा चाहै है। तब लक्ष्मण बोले तू जैसा पृथ्वीपति है तैसा मैं नीके जानू हूं। आज तेरा गाजना पूर्ण करूं हूं। जब ऐसा लक्ष्मण ने कहा तब रावणने अपने बाण लक्ष्मण पर चलाए, अर लक्ष्मणने रावण पर चलाए! जैसे वर्षाका मेघ जलवृष्टि कर गिरिकूं आच्छादित करै, तैसे बाणवृष्टिकर वाने वाकूं वेध्या अर वाने वाकूं वेध्या। सो रावणके बाण लक्ष्मणने वज्रदंडकर बीचही तोड डारे, आप तक आवने न दिए, बाणोंके समूह छेद भेद तोडे फोडे चूर कर डारे। सो धरती आकाश बाणखंडनिकर भर गए। लक्ष्मणने रावण कूं सामान्य शस्त्रनिकर विह्वल किया। तऊ रावणने जानी यह सामान्य शस्त्रनिकर जीता न जाय, तब लक्ष्मण पर रावणने मेघबाण चलाया सो धरती आकाश जलरूप होय गए। तब लक्ष्मणने पवन ६६७

बाण चलाया, क्षणमात्रमें मघबाण विलय किया। बहुरि दशमुखने अग्निबाण चलाया सो दशो दिशा प्रज्ज्वलित भई। तब लक्ष्मणने वरुणशस्त्र चलाया सो एक निमिषमे अग्निबाण नाशकू प्राप्त भया। बहुरि लक्ष्मणने पापबाण चलाया सो धर्मबाणकर रावणने निवारचा। बहुरि लक्ष्मणने ईधनबाण चलाया सो रावणने अग्निबाण कर भस्म किया। बहुरि लक्ष्मणने तिमिरबाण चलाया सो अंधकार होय गया, आकाश वृक्षनिके समूहकर आच्छादित भया। कसे है वृक्ष? आसार फलनिकू बरसावे है आसार पुष्पनिके पटल छाय गए। तब रावणने सूर्यबाण कर तिमिरबाण निवारचा अर लक्ष्मण पर नागबाण चलाया। अनेक नाग चले, विकराल है फण जिनक। तब लक्ष्मणने गरुडबाणकर नागबाण निवारचा। गरुडकी पाखोकर आकाश स्वर्णकी प्रभारूप प्रतिभासता भया। बहुरि रामके भाईने रावण पर सर्पबाण चलाया। प्रलयकालके मेघ समान है शब्द जाका, अर विषरूप अग्निके कणनिकर महाविषम। तब रावणने मयूरबाणकर सर्पवाण निवारा, अर लक्ष्मणपर विघ्नबाण चलाया। सो विघ्नबाण दुर्निवार, ताका उपाय सिद्धबाण, सो लक्ष्मणकू याद न आया। तब वज्रदड आदि अनेक शस्त्र चलाए। रावण हू सामान्य शस्त्रनिकर युद्ध करता भया, दोनो योधानिमें समान युद्ध भया। जसा त्रिपृष्ठ अर अश्वग्रीवक युद्ध भया हुता, तसा लक्ष्मण रावणके भया। जसा पूर्वोपार्जित कर्मका उदय होय तसा ही फल होय। तसी क्रिया कर जे महा क्रोधके वशमें है अर जो काय आरम्भा ताविष उद्यमी है, ते नर तीव्र शस्त्रकू न गिन, अर अग्निकू न गिने, सूर्यको न गिन, वायुकू न गिने।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रंथ ताकी भाषावचनिकाविषै रावण लक्ष्मणका युद्ध वर्णन करने वाला चौहत्तरवां पर्व पूर्ण भया ॥७४॥

अथानन्तर गौतम स्वामी राजा श्रेणिकसू कहै हैं—हे भव्योत्तम! दोनो ही सेनाविषै तृषावतनिकू शीतल मिष्ट जल प्याइये है, अर क्षुधावन्तोको अमृत समान आहार दीजिए है, अर खेदवन्तोकू मलयागिरि

चन्दनसे छिडकिये हैं, ताडवृक्षके बीजनेसे पवन करिए है, बरफके वारिसे छांटिये है तथा और ह उपचार अनेक कीजिए है। अपना पराया कोई होऊ सबके यत्न कीजिए है। यही संग्रामकी रीति है। दश दिन युद्ध करते भए, दोऊ ही महावीर अभगचित्त। रावण लक्ष्मण दोनो समान, जैसा वह तैसा वह। सो यक्ष गंधर्व किन्नर अप्सरा आश्चर्यकू प्राप्त भए। अर दोऊनिका यश करते भए, दोऊनिपर पुष्प वर्षा करी। अर एक चन्द्रवर्धन नामा विद्याधर ताकी आठ पुत्री, सो आकाशविषै विमानविषै बैठी देख तिनकू कौतूहलसे अप्सरा पूछती भई—तुम देवियो सारिखी कौन हो? तिहारी लक्ष्मणविषै विशेष भक्ति दीखै है, अर तुम सुन्दर सुकुमार शरीर हो। तब वे लज्जासहित कहती भई—तुमको कौतूहल है तो सुनो—जब सीताका स्वयम्बर हुआ तब हमारा पिता हम सहित तहां आया था। तहां लक्ष्मणको देख हमकू देनी करी अर हमारा भी मन लक्ष्मणविषै मोहित भया। सो अब यह संग्राम विषै वर्ते है, न जानिए कहा होय? यह मनुष्यनिविषै चन्द्रमा समान प्राणनाथ है। जो याकी दशा सो हमारी। ऐसे इनके मनोहर शब्द सुनकर लक्ष्मण ऊपरकू चौंके, तब वे आठो ही कन्या इनके देखवेकर परम हर्षकू प्राप्त भई—अर कहती भई—हे नाथ! सर्वथा तिहारा कार्य सिद्ध होहु। तब लक्ष्मणकू विघ्नबाणका उपाय सिद्धबाण याद आया, अर प्रसन्न वदन भया। सिद्धबाण चलाय विघ्न बाण विलय किया। अर आप महाप्रतापरूप युद्धकू उद्यमी भया। जो जो शस्त्र रावण चलावै सो रामका वीर महाधीर शस्त्रनिविषै प्रवीण छेद डारे, अर आप बाणनिके समूहकर सब दिशा पूर्ण करी, जैसे मेघपटलकर पर्वत आच्छादित होय। रावण बहुरूपिणी विद्याके बलकरि रणक्रीडा करता भया। लक्ष्मणने रावणका एक सीस छेदा, तब दोय सीस भए, दोय छेदे तब चार भए, अर दोय भुजा छेदी तब चार भई, अर चार छेदी तब आठ भई। या भांति ज्यो ज्यो छेदी, त्यो त्यो दुगुनी भई। अर सीस दुगुणे भए। हजारो सिर अर हजारो भुजा भई रावणके कर हाथीके सूण्ड समान भुजबन्धन कर शोभित, अर सिर मुकुटोकर मंडित, तिनकर रणक्षेत्र पूर्ण किया। मानो रावणरूप समुद्र

पद्म पुराण ६७ गहा भयकर ताके हजारो सिर वेई भए ग्राह, अर हजारो भुजा वई भई तरग तिनकर बढता भया। अर रावणरूप मेघ, जाके बाहुरूप विजुरी, अर प्रचड ह शब्द, अर सिर ही भए शिखर तिनकर सोहता भया। रावण अकेला ही महासेना समान भया। अनेक मस्तक तिनके समूह, जिनपर छत्र फिर, मानो यह विचार लक्ष्मणन याहि बहुरूप किया। जो आगे म अकेले अनेकनिसू युद्ध किया अब या अकेले से कहा युद्ध करू ? तात याहि बहुशरीर किया। रावण प्रज्ज्वलित बनसमान भासता भया। रत्ननिके आभूषण अर शस्त्रनिकी किरणनिके समूहकर प्रदीप्त रावण लक्ष्मणकू हजारो भुजानिकर, बाण शक्ति खडग वरछी सामा य चक्र इत्यादि शस्त्रनिकी वर्षाकर आच्छादता भया। सो सब बाण लक्ष्मण छेदे अर महाक्रोधरूप होय सूय समान तजरूप बाणनिकर रावणकू आच्छादनेकू उद्यमी भया। एक दोय तीन चार पाच छह दस बीस शत सहस मायामई रावणके सिर लक्ष्मणने छेदे। हजारो सिर भुजा भूमिविष पडे, सो रणभूमि उनकर आच्छादित भई। एमी सोह मानो सर्पादिके फणनि सहित कमलनिके बन ह। भुजोसहित सिर पडे वे उलकापातसे भासे। जेते रावणके बहुरूपिणी विद्याकर सिर अर भुज भए तेते सब सुमित्राके पुत्र लक्ष्मणने छेदे, जस महामुनि कमनिके समूहको छेदै। रुधिरकी धारा निरन्तर पडी। तिनकर आकाशविष मानो साझ फूली। दोय भुजाका धारक लक्ष्मण ताने रावणकी असख्यात भुजा विफल करीं। कसे ह लक्ष्मण ? महा प्रभावकर युक्त ह। रावण पसेवके समूह कर भर गया ह अग जाका, स्वास कर सयुक्त ह मुख जाका, यद्यपि महाबलवान हुता तथापि व्याकुलचित भया। गौतमस्वामी कह ह—श्रेणिक! बहुरूपिणी विद्याके बलकर रावणने महा भयकर युद्ध किया, पर लक्ष्मणके आग वहुरूपिणी विद्याका बल न चला। तब रावण मायाचार तज सहज रूप होय क्रोधका भरा युद्ध करता भया। अनेक दिव्यशस्त्रनिकर अर सामान्य शस्त्रनिकर युद्ध किया, परतु वासुदेवको जीत न सक्या। तब प्रलय कालके सूय समान ह प्रभा जाकी, परपक्षका क्षय करण हारा जो चक्ररत्न ताहि चिन्तता भया। कसा ह चक्ररत्न ? अप्रमाण प्रभावके समूहकू धरे, मोतिनिकी

झालरियोकर मंडित, महा दैदीप्यमान, दिव्य, वज्रमई, महा अद्भुत, नाना प्रकारके रत्ननिकर मंडित है अंग जाका, दिव्यमाला अर सुगंधकर लिप्त, अग्निके समूह तुल्य धारानिके समूहकर महा प्रकाशवन्त, वैडूर्य मणिके सहस्र आरे तिनकर युक्त, जिसका दर्शन सहा न जाय, सदा हजार यक्ष जाकी रक्षा करें, महा क्रोधका भरा, जैसा कालका मुख होय ता समान वह चक्र चितवते ही कर विषै आया। जाकी ज्योतिकर ज्योतिष देवोंकी प्रभा मंद होय गई, अर सूर्यकी कांति ऐसी होय गई मानो चित्राम का सूर्य है। अर अप्सरा विश्वावसु तुंबरु नारद इत्यादि गंधर्वनिके भेद आकाशविषै रणका कौतुक देखते हुते सो भयकर परे गए। अर लक्ष्मण अत्यन्त धीर शत्रुको चक्र संयुक्त देख कहता भया—हे अधम नर! याहि कहा ले रहा है जैसे कृपण कौडीको ले रहै। तेरी शक्ति है तो प्रहार कर। ऐसा कह्या तब वह महा क्रोधायमान होय, दांतनिकर डसे हैं होंठ जाने, लाल हैं नेत्र जाके, चक्रकू फेर लक्ष्मणपर चलाया। कैसा है चक्र? मेघमंडल समान है शब्द जाका, अर महा शीघ्रताकू लिए प्रलयकालके सूर्य समान मनुष्यानकू जीतव्यके संशयका कारण। ताहि सन्मुख आवता देख लक्ष्मण वज्रमई है मुख जिनका ऐसे बाणनिकर चक्रके निवारवेकू उद्यमी भया। अर श्रीराम वज्रावर्त धनुष चढाय अमोघ बाणनिकर चक्रके निवारवेकू उद्यमी भए। अर हल मूशलनकू भ्रमावते चक्रके सन्मुख भए। अर सुग्रीव गदाकू फिराय चक्रके सन्मुख भए। अर भामंडल खड्गकू लेकर निवारिवेकू उद्यमी भए। अर विभीषण त्रिशूल ले ठाढे भए। अर हनुमान मुद्गर लांगूल कनकादि लेकर उद्यमी भए। अर अंगद पारण नामा शस्त्र लेकर ठाढे भए। अर अंगदका भाई अंगकुठार लेकर महा तेजरूप खडे भए। और हू दूसरे श्रेष्ठ विद्याधर अनेक आयुधनिकर युक्त सब एक होयकर जीवनेकी आशा तज चक्रके निवारिवेकू उद्यमी भए, परन्तु चक्रकू निवार न सके। कैसा है चक्र? देव करै हैं सेवा जाकी। ताने आयकर लक्ष्मणकू तीन प्रदक्षिणा देय अपना स्वरूप कर लक्ष्मणके करविषै तिष्ठा, सुखदाई शांत है आकार जाका। यह कथा गौतम स्वामी राजा श्रेणिकसू कहे है—हे मगधाधिपति! राम लक्ष्मणका महा ऋद्धिकू धर यह महात्म्य तोहि

सक्षेपसे कहा । कसा ह इनका माहात्म्य ? जाहि सुने परम आश्चय उपज । अर लोकविष श्रेष्ठ ह ।
कईएकके पुण्यके उदयकर परम विभूति होय ह । अर कईएक पुण्यके क्षयकर नाश होय ह । जस सूयका

अस्त चन्द्रमाका उदय होय ह तस लक्ष्मणके पुण्यका उदय जानना ।

इति श्रीरविषेणाचाय विरचित महापद्मपुराण सस्कृत ग्रथ ताकी भाषावचनिकाविषलक्ष्मणके चक्ररत्नकी उत्पत्ति वणन करनेवाला पचहत्तरवा पव पण भया ॥ ७५ ॥

अथानन्तर लक्ष्मणके हाथविष महासुन्दर चक्ररत्न आया देख सुग्रीव भामण्डलादि विद्याधरनिके अधिपति अति हर्षित भए अर परस्पर कहते भए—आग भगवान अनन्तवीय कवलीने आज्ञा करी जो लक्ष्मण आठवा वासुदेव ह, अर राम आठवा बलदेव ह, सो यह महाज्योति चक्रपाणि भया । अति उत्तम शरीरका धारक याके बलका कौन वणन कर सके । अर यह श्रीराम बलदेव जाके रथकू महा तेजवत सिंह चलाव, जाने राजा मयको पकडा, अर हल मूसल महारत्न देदीप्यमान जाके करविष सोह । ये बलभद्र नारायण दोऊ भाई पुरुषोत्तम प्रकट भए, पुण्यके प्रभावकर परमप्रेमके भरे । लक्ष्मण के हाथविष सुदशन चक्रकू देख राक्षसनिका अधिपति चित्तविष चितार ह जो भगवान अनन्तवीयने आज्ञा करी हुती सोई भई । निश्चय सेती कमरूप पवनका प्रेरा यह समय आया । जाका छत्र देख विद्याधर डरते, अर परकी महासेना भाग जाती, परसेनाकी ध्वजा अर छत्र मेरे प्रतापसे बहे बहे फिरते, हिमाचल विंध्याचल ह स्तन जाके, समुद्र ह वस्त्र जाके, ऐसी यह पथ्वी मेरी दासी सयान आज्ञा कारिणी हुती, ऐसा म रावण सो रणविष भूमिगोचरनिने जीत्या, यह अदभुत बात ह । कष्टकी अवस्था आय प्राप्त भई । धिक्कार या राज्यलक्ष्मीकू । कुलटा स्त्रीसमान ह चेष्टा जाकी । पूज्य पुरुष या पापिनीकू तत्काल तज । यह इन्द्रियनिके भोग इन्द्रायणके फल समान, इनका परिपाक विरस ह, अनन्त दुःख सम्बन्धके कारण साधुनिकर निंद्य ह । पथ्वीविष उत्तम पुरुष भरत चक्रवर्त्यादि भए ते

धन्य हैं जिन्होंने निःकंटक छहखंड पृथ्वीका राज्य किया अर विषके मिले अन्नकी न्याईं राज्यकूं तज जिनेन्द्र व्रत धार रत्नत्रयकूं आराधनकर परमपदकूं प्राप्त भए हैं। मैं रंक विषयाभिलाषी, मोह बलवानने मोहि जीत्या। यह मोह संसारभ्रमणका कारण। धिक्कार मोहि जो मोहके वश होय ऐसी चेष्टा करी। रावण तो यह चितवन करै है। अर आया है चक्र जाके ऐसा जो लक्ष्मण महा तेजका धारक सो विभीषणकी ओर निरख रावणसे कहता भया—हे विद्याधर! अब हू कछू न गया है, जानकीकूं लाय श्रीरामदेवकूं सौंप दे। अर यह वचन कह कि श्रीरामके प्रसादकर जीवूं हूं। हमको तेरा कछु चाहिए नाहीं। तेरी राज्यलक्ष्मी तेरे ही रहो। तब रावण मंद हास्यकर कहता भया—हे रंक! तेरे वृथा गर्व उपजा है। अबार ही अपने पराक्रम तोहि दिखावूं हूं। हे अधमनर! मैं तोहि जो अवस्था दिखाऊं सो भोग। मैं रावण पृथ्वीपति, विद्याधर, तू भूमिगोचरी रंक। तब लक्ष्मण बोले—बहुत कहिवेकर कहा? नारायण सर्वथा तेरा मारणहारा उपजा। तब रावणने कहा इच्छामात्र ही नारायण हूजिए है तो जो तू चाहे सो न हो, इन्द्र हो, तू कुपुत्र पिताने देशसे बाहिर किया, महा दुखी दलिद्री ब्रह्मचारी भिखारी निर्लज्ज तेरी वासुदेव पदवी हमने जानी। तेरे मनविषै मत्सर है सो मैं तेरे मनोरथ भंग करूंगा। यह घेघली समान चक्र है ताकर तू गर्वा है। सो रंकोंकी यही रीति है खलिका टूक पाय मनविषै उत्सव करैं। बहुत कहिवेकर कहा? ये पापी विद्याधर तोसूं मिले हैं तिनसहित अर या चक्रसहित वाहनसहित तेरा नाशकर तोहि पातालकूं प्राप्त कराऊंगा। ये रावणके वचन सुनकर लक्ष्मण ने कोपकर चक्रको भ्रमाय रावण पर चलाया। वज्रपातके शब्दसमान भयंकर है शब्द जाका, अर प्रलय कालके सूर्यसमान तेजकूं धरे चक्र रावणपर आया। तब रावण बाणनिकर चक्रके निवारवेकूं उद्यमी भया। बहुरि प्रचंड दंड अर शीघ्रगामी वज्रनागकर चक्रके निवारनेका यत्न किया तथापि रावणका पुण्य क्षीण भया सो चक्र न रुका, नजीक आया। तब रावण चन्द्रहास खड्ग लेकर चक्रके समीप आया। चक्रके खड्गकी दई सो अग्निके कणनिकर आकाश प्रज्वलित भया। खड्गका जोर चक्रपर न चला।

सन्मुख तिष्ठता जो रावण महाशूरवीर, राक्षसनिका इन्द्र, ताका चक्रने उरस्थल भेदा सो पुण्य क्षयकर अंजनगिरिसमान रावण भूमिविषै परया, मानो स्वर्गसे देव चया, अथवा रतिका पति पृथ्वीविषै परया। ऐसा सोहता भया मानो वीररसका स्वरूप ही है—चढ रही है भौंह जाकी, डसे हैं होठ जाने। स्वामीकूं पडा देख समुद्र समान था शब्द जाका ऐसी सेना भागिवेकूं उद्यमी भई। ध्वजा छत्र बहे बहे फिरे, समस्त लोक रावणके विह्वल भए, विलाप करते भागे जाय हैं। कोई कहे है रथकूं दूरकर मार्ग देहु, पीछेसूं हाथी आवे है। कोई कहे है विमानकूं एकतरफ कर, अर पृथ्वीका पति पडा, अनर्थ भया, महा भयकर कम्पायमान। वह तापर पडे, वह तापर पडे। तब सबको शरणरहित देखि भामंडल सुग्रीव हनुमान रामकी आज्ञासे कहते भए—भय मत करो, भय मत करो! धीर्य बंधाया, अर वस्त्र फेरया, काहूको भय नाहीं। तब अमृत समान कानोंको प्रिय ऐसे वचन सुन सेनाकूं विश्वास उपज्या। यह कथा गौतम गणधर राजा श्रेणिकसूं कहे है—हे राजन! रावण ऐसी महा विभूतिकूं भोग समुद्र पर्यन्त पृथ्वीका राज्यकर, पुण्य पूर्ण भए अन्तदशाकूं प्राप्त भया। तातै ऐसी लक्ष्मीकूं धिक्कार है। यह राजलक्ष्मी महा चंचल, पापका स्वरूप, सुकृतके समागमकै आशाकर वर्जित। ऐसा मनविषै विचारकर हो बुद्धिजन हो! तप ही धन जिनके ऐसे मुनि होवो। कैसे हैं मुनि? तपोधन, सूर्यसे अधिक है तेज जिनका, मोह तिमिरकूं हरै हैं।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रंथ ताकी भाषावचनिकाविषै रावणका वध वर्णन करनेवाला छिहत्तरवां पर्व पूर्ण भया॥ ७६॥

अथानन्तर विभीषणने बडे भाईकूं पडा देख महा दुःखका भरया अपने घातके अर्थ छुरी विषै हाथ लगाया। सो याकूं मरणकी हरणहारी मूर्छा आय गई। चेष्टाकर रहित शरीर हो गया। बहुरि सचेत होय महा दाहका भरया मरनेकूं उद्यमी भया। तब श्रीरामने रथसे उतर हाथ पकडकर उरसे

लगाया, धीय बधाया। फिर मूर्छा खाय पड्या, अचेत होय गया। श्रीरामने सचेत किया। तब सचेत होय विलाप करता भया। जिसका विलाप सुन करुणा उपजे। हाय भाई, उदार क्रियावन्त सामतो के पति, महाशूरवीर, रणधीर, शरणागतपालक, महा मनोहर, ऐसी अवस्थाकू क्यो प्राप्त भए? मै हित के वचन कहे सो क्यो न माने? यह क्या अवस्था भई जो म तुमकू चक्रके विदारे पृथ्वीविषै पड़े देखू हू? हे देव विद्याधरोके महेश्वर! हे लकेश्वर! भोगोके भोक्ता। पृथ्वीविषै कहा पौढे? महाभोगोकर लडाया है शरीर जिनका, यह सेज आपके शयन करने योग्य नाहीं। हे नाथ! उठो, सुन्दर वचनके वक्ता। मै तुम्हारा बालक, मुझे कृपाके वचन कहो। हे गुणाकर कृपाधार! म शोकके समुद्रविषै डूबू हू सो मुझे हस्तावलबन कर क्यो न काढो? इस भाति विभीषण विलाप कर है। डार दिये हैं शस्त्र अर बक्तर भूमिविषै जाने।

अथानन्तर रावणके मरणके समाचार रणवासविषै पहुँचे सो राणिया सब अश्रुपातकी धाराकर पृथ्वी तलको सींचती भई। अर सब ही अन्त पुर शोककर व्याकुल भया। सकल राणी रणभूमिविषै आई, गिरती पडती, गिरती पडती। डिगे है चरण जिनके। वे नारी पतिकू चेतनारहित देख शीघ्रही पृथ्वी विषै पडी। कसा ह पति? पृथ्वीको चूडामणि ह। मन्दोदरी, रभा, चन्द्रानना, चन्द्रमण्डला, प्रवरा, उर्वशी महादेवी, सुन्दरी, कमलानना, रूपिणी, रुक्मिणी, शीला, रत्नमाला, तनूदरी, श्रीकाता, श्रीमती, भद्रा कनकप्रभा, मृगावती, श्रीमाला, मानवी, लक्ष्मी, आनन्दा, अनगसुन्दरी, वसुधरा, तडिन्माला, पद्मा, पद्मावती, सुखादेवी, काति, प्रीति, सध्यावली, शुभा, प्रभावती, मनोवेगा, रतिकाता, मनोवती इत्यादि अष्टादशसहस्र राणी अपने अपने परिवारसहित अर सखिनिसहित महा शोककी भरी रुदन करती भई। कईएक मोहकी भरी मूर्छाकू प्राप्त भई सो चन्दनके जलकर छाटी। कुमलाई कमलिनी समान भासती भई। कईएक पतिके अगसे अत्यन्त लिपटकर परी, अजनगिरिसो लगी सध्याकी द्युतिको धरती भई। कईएक मूर्छासे सचेत होय उरस्थल कूटती भई, पतिके समीप मानो मेघके निकट विजुरी ही चमक

ह । कईएक पतिका वदन अपने अगविषै लेयकर विह्वल होय मूर्छाकू प्राप्त भई । कईएक विलाप कर है—हाय नाथ ! म तिहारे विरहसे अतिकायर, मोहि तजकर तुम कहा गए ? तिहारे जन दु खसागर विषै डूबें ह सो क्यो न देखो ? तुम महाबली, महासु दर, परम ज्योतिके धारक, विभूतिकर इन्द्र समान, मानो भरतक्षेत्रके भूपति, परुषोत्तम, महाराजनिके राजा, मनोरम विद्याधरनिके महेश्वर, कौन अर्थ पथ्वी म पौढे, उठो । हे कात ! करुणानिधे ! स्वजनवत्सल ! एक अमत समान वचन हमसे कहो । हे प्राणेश्वर ! प्राणवल्लभ ! हम अपराध रहित तुमसे अनुरक्त चित्त हमपर तुम क्यो कोप भए ? हमसे बोलो ही नाही । जसे पहिले परिहास कथा करते तसे क्यो न करो ? तिहारा मुखरूपी चन्द्र कातिरूप चादनी कर मनोहर, प्रसन्नतारूप जसे पूव हमे दिखावते हुते तस हमें दिखावो । अर यह तिहारा वक्षस्थल स्त्रियोकी क्रीडाका स्थानक, महासु दर, ताविष चक्रकी धाराने कसे पग धारा ? अर विद्रुम समान तिहारे ये लाल अधर अब क्रीडारूप उत्तरके देनेको क्यो न स्फुटायमान होय ह ? अबतक बहुत देर लगाई । क्रोध कबहू न किया अब प्रसन्न होवो । हम मान करतीं तो आप प्रसन्न करते, मनावते । इन्द्रजीत मेघवाहन स्वगलोकसे चयकर तिहारे उपजे सो यहा भी स्वगलोककेसे भोग भोगे । अब दोऊ बन्धनविष ह, अर कुम्भकरण वधनविष ह, सो महा पुण्याधिकारी सुभट महागुणवत श्रीरामचन्द्र तिनसे प्रीतिकर भाई पुत्रको छुडावहु । हे प्राणवल्लभ ! प्राणनाथ ! उठो, हमसे हित की बात करो । ह देव ! बहुत देर सोवना कहा ? राजानिकू राजनीतिविष सावधान रहना, सो आप राज्य काजविष प्रवर्तो । हे सुन्दर ! हे प्राणप्रिय ! हमारे अग विरहरूप अग्निकर अत्यन्त जरे है सो स्नेहरूप जलकर बुझावो । हे स्नेहियोके प्यारे ! तिहारा यह वदनकमल और ही अवस्थाकू प्राप्त भया ह । सो याहि देख हमारे हृदयक टूक क्यो न हो जाव ? यह हमारा पापी हृदय वज्रका है, दु खका भाजन जो तिहारी यह अवस्था जानकर विनस न जाय ह । यह हृदय महा निर्दई ह । हाय विधाता ! हम तेरा कहा बुरा किया जो तन निर्दई होयकर हमारे सिरपर ऐसा दु ख डारया । हे

प्रीतम! जब हम मान करती तब तुम उरसे लगाय हमारा मान दूर करते, अर वचनरूप अमृत हमको प्यावते, महा प्रेम जनावते। हमारा प्रेमरूप कोप ताके दूर करवेके अर्थ हमारे पायन पडते। सो हमारा हृदय वशीभूत होय जाता, अत्यन्त मनोहर क्रीडा करते,हे राजेश्वर! हमसे प्रीति करो। परम आनंद की करणहारी वे क्रीडा हमको याद आवे हैं। सो हमारा हृदय अत्यन्त दाहको प्राप्त होय है। तातैं अब उठो, हम तिहारे पायनि पडे हैं, नमस्कार करे हैं। जे अपने प्रियजन होय तिनसे बहुत कोप न करिए। प्रीतिविषै कोप न सोहै। हे श्रेणिक! या भांति रावणकी राणी ये विलाप करती भईं जिनका विलाप सुनकर कौनका हृदय द्रवीभूत न होय?

अथानन्तर श्रीराम लक्ष्मण भामंडल सुग्रीवादिक सहित अति स्नेहके भरे विभीषणकूं उरसे लगाय आंसू डारते। महाकरुणावंत, धीर्य बंधावनेविषै प्रवीण, ऐसे वचन कहते भए—लोक वृत्तांतसे महित हे राजन! बहुत रोयवे कर कहा? अब विषाद तजहु। यह कर्मकी चेष्टा तुम कहा प्रत्यक्ष नाहीं जानो हो? पूर्वकर्मके प्रभावकरि प्रमादकूं धरते जे प्राणी तिनके अवश्य कष्टकी प्राप्ति होय है। ताका शोक कहा? अर तुम्हारा भाई सदा जगतके हितविषै सावधान, परम प्रीतिका भाजन, समाधानरूप बुद्धि जिसकी, राजकार्यविषै प्रवीण, प्रजाका पालक, सर्वशास्त्रनिके अर्थकर धोया है चित्त जाने, सो बलवान मोहकर दारुण अवस्थाकूं प्राप्त भया अर विनाशकूं प्राप्त भया। जब जीवनिका विनाशकाल आवै तब बुद्धि अज्ञानरूप होय जाय है। ऐसे शुभ वचन श्रीरामने कहे। बहुरि भामंडल अति माधुर्यताकूं धरे वचन कहते भए। हे विभीषण महाराज! तिहारा भाई रावण महा उदारचित्तकर रणविषै युद्ध करता सन्ता वीर मरणकर परलोककूं प्राप्त भया। जाका नाम न गया ताका कछुही न गया। ते धन्य हैं जिन सुभटता कर प्राण तजे। ते महा पराक्रमके धारक वीर तिनका कहा शोक? एक राजा अरिंदमकी कथा सुनो।

अक्षयकुमार नामा नगर, तहां राजा अरिंदम, जाके महाविभूति। सो एक दिन काहू तरफसे अपने

मन्दिर शीघ्र गामी घोडे चढा अकस्मात आया। सो राणीकू श्रृंगाररूप देख अर महलकी अत्यन्त शोभा देखि राणीकू पूछ्या—तुम हमारा आगम कसे जाण्या ? तब राणीने कही कीर्तिधरनामा मुनि अवधिज्ञानी आज आहारको आए थे। तिनको मने पूछ्या राजा कब आवगे ? सो तिन्होने कह्या राजा आज अचानक आवेंगे। यह बात सुन राजा मुनिप गया अर ईर्ष्याकर पूछता भया—हे मुनि ! तुमकू ज्ञान ह तो कहो मेरे चित्तमें क्या ह। तब मुनिने कहा तेरे चित्तमें यह ह कि म कब मरूगा ? सो तू आज से सातवें दिन वज्रपातस मरेगा, अर विष्टामे कीट होगया। यह मुनिके वचन सुन राजा अरिंदम घर जाय अपने पुत्र प्रीतिकरको कहता भया—म मरकर विष्टाके घरमें स्थूल कीट होऊगा ऐसा मेरा रगरूप होयगा, सो तू तत्काल मार डारियो। ये वचन पुत्रकू कह आप सातवें दिन मरकर विष्टामें कीडा भया। सो प्रीतिकर कीटके हनिवेक गया सो कीट मरनेके भयकरि विष्टामें पठि गया। तब प्रीतिकर मुनिप जाय पूछता भया, हे प्रभो ! मेरे पिताने कही थी जो म मलमें कीट होऊगा सो तू हनियो। अब वह कीट मरवेसू डरे ह अर भाग ह। तब मुनिने कही तू विषाद मत कर, यह जीव जिस गतिमें जाय ह वहा ही रम रहे ह। इसलिए तू आत्मकल्याण कर, जाकरि पापोसे छूटे। अर यह जीव सब ही अपने अपने कमका फल भोगव ह, कोई काहूका नाहीं। यह ससारका स्वरूप महा दुखका कारण जान प्रीतिकर मुनि भया, सव बाछा तजा। तात हे विभीषण ! यह नानाप्रकार जगत की अवस्था तम कहा न जानो हो ? तिहारा भाई महा शूरवीर, दवयोगसे नारायणने हता। सग्रामके सम्मुख महा प्रधान पुरुष ताका सोच क्या ? तम अपना चित्त कल्याणमें लगावो। यह शोक दुखका कारण ताको तजहु। यह वचन अर प्रीतिकरकी कथा भामडलके मुखसे विभीषणने सुनी। कसी ह प्रीतिकर मुनिकी कथा ? प्रतिबोध देनेमें प्रवीण, अर नाना स्वभावकर सयुक्त, अर उत्तम पुरुषोकर कहिवे योग्य। सो सव विद्याधरनिने प्रशसा करी, सुनकर विभीषणरूप सूय शोकरूप मेघ पटलसे रहित

भया, लोकोत्तर आचारका जाननेवाला ।

इति श्रीरविषेणाचार्य विरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रंथ ताकी भाषावचनिकाविषै विभीषणका शोकनिवारण वर्णन करनेवाला सततरवा पर्व पूर्ण भया ॥ ७७ ॥

अथानन्तर श्रीरामचन्द्र भामण्डल, सुग्रीवादि सबनिसू कहते भए—जो पंडितोंके वैर वैरीके मरण पर्यन्त ही है । अब लंकेश्वर परलोकको प्राप्त भए, सो यह महा नर हुते, इनका उत्तम शरीर अग्नि-संस्कार करिए । तब सबनि प्रणाम करी । अर विभीषणसहित राम लक्ष्मण जहां मन्दोदरी आदि अठारह हजार राणीनि सहित जैसे कुरुचि पुकारे तैसे विलाप करती हुती, सो वाहनसे उतर समस्त विद्याधरनि सहित दोऊ वीर तहां गए । सो वे राम लक्ष्मणकू देखि अति विलाप करती भई, तोड डारे हैं सब आभूषण जिन्होंने, अर धूलकर धूसरा है अंग जिनका । तब श्रीराम महादयावन्त नानाप्रकार के शुभ वचननिकर सब राणीनिको दिलासा करी, धीर्य बंधाया । अर आप सब विद्याधरनिकू लेकर रावणके लोकाचारकू गए । कपूर अगर मलियागिरि चन्दन इत्यादि नानाप्रकारके सुगंध द्रव्यनिकर पद्मसरोवरपर प्रतिहरिका दाह भया । बहुरि सरोवरके तीर श्रीराम तिष्ठे, कैसे हैं राम ? महा कृपालु है चित्त जिनका । गृहस्थाश्रमविषै ऐसे परिणाम कोई विरलेके होय हैं । बहुरि आज्ञा करी कुम्भकर्ण इन्द्रजीत मेघनादकू सब सामंतनिसहित छोडहु । तब कईएक विद्याधर कहते भए—वे महाक्रूरचित्त हैं, अर शत्रु हैं, छोडवे योग्य नाहीं, बंधनहीविषै मरें । तब श्रीराम कहते भए—यह क्षत्रियनिका धर्म नाहीं ।
जिनशासनविषै क्षत्रीनिकी कथा कहा तुमने नाहीं सुनी है ? सूतेको, बंधेको, डरतेको, शरणागतकू, दंत-विषै तृण लेतेको, भागेको, बाल, वृद्ध, स्त्रीनिकू न हने । यह क्षत्रीका धर्म शास्त्रनिमें प्रसिद्ध है । तब सबनि कही आप जो आज्ञा करी सो प्रमाण । रामकी आज्ञा प्रमाण लडे बडे योधा नानाप्रकारके आयुधनिकू धरे तिनके ल्यायवेकू गए । कुम्भकर्ण, इन्द्रजीत, मेघनाद, मारीच तथा मन्दोदरीका पिता

राजा मय इत्यादि पुरुषनिको स्थूल व धनसहित सावधान योधा लिए आवे है। सो माते हाथी समान चले आवे है। तिनकूं देख वानरवशी योधा परस्पर बात करते भए—जो कदाचित इन्द्रजीत, मेघनाद, कुम्भकर्ण, रावणकी चिता जरती देख क्रोध करे तो कपिवशिनिमें इनके सन्मुख लडनेकूं कोई समर्थ नाहीं। जो कपिवशी जहां बैठा था तहांसे उठ न सका। अर भामंडलने अपने सब योधानिकूं कहा जो इन्द्रजीत, मेघनादकूं यहां तक बंधेही अति यत्नसे लाइयो। अबार विभीषणका भी विश्वास नाहीं है जो कदाचित भाई भतीजेनिको निधन देख भाईके बैर चितार, सो याकूं विकार उपजि आवे, भाईके दुख कर बहुत तप्तायमान है। यह विचार भामंडलादिक तिनकूं अति यत्नकर राम लक्ष्मणके निकट लाये। सो वे महाविरक्त, राग द्वेषरहित, जिनके मुनि होयवेके भाव, महा सौम्य दृष्टिकर भूमि निरखते आवे शुभ है आनन जिनके। वे महा धीर यह विचारे है कि या असार संसार सागरविषै कोई सार ताका लवलेश नाहीं। एक धर्मही सब जीवनका बांधव है सोई सार है। ये मनमें विचारै है जो आज बंधनसूं छूटे तो दिगम्बर होय पाणिपात्र आहार करें। यह प्रतिज्ञा धरते रामके समीप आए। इन्द्रजीत कुम्भकर्णादिक, विभीषणकी ओर आय तिष्ठे। यथायोग्य परस्पर संभाषण भया। बहुरि कुम्भकर्णादिक श्रीराम लक्ष्मणसूं कहते भए—अहो तिहारा परम धीर्य, परमगम्भीरता, अद्भुत चेष्टा, देवनिहु कर न जीता जाय ऐसा राक्षसनिका इन्द्र रावण मृत्युकूं प्राप्त किया। पंडितनिके अति श्रेष्ठ गुणनिका धारक शत्रुहू प्रशंसा योग्य है। तब श्रीराम लक्ष्मण इनकूं बहुत साता उपजा अति मनोहर वचन कहते भए—तुम पहिले महा भोगरूप जैसे तिष्ठे तैसे तिष्ठो। तब वह महाविरक्त कहते भए—अब इन भोगनिसूं हमारे कछु प्रयोजन नाहीं। यह विषसमान महादारुण, महामोहके, कारण यहाभयंकर, महा नरक निगोदादि दुखदाई जिनकरि कबहू जीवके साता नाहीं। विचक्षण है ते भोगसम्बन्धकूं कबहू न बांछे। राम लक्ष्मणने घना ही कहा तथापि तिनका चित्त भोगासक्त न भया। जैसे रात्रिविषै दृष्टि अन्धकार रूप होय अर सूर्यके प्रकाश कर वहीं दृष्टि प्रकाश रूप होय जाय तैसे ही कुम्भकर्णा-

विककी वष्टि पहिले भोगासक्त हुती सो ज्ञानके प्रकाशकर भोगनित्त विरक्त भई। श्रीरामने तिनके बधन छुडाए, अर इन सबनिसहित पदम सरोवरविष स्नान किया। कसा ह सरोवर ? सुगन्ध है जल जाका। ता सरोवर विष स्नानकर कपि अर राक्षस सब अपने स्थानक गए।

अथानन्तर कईएक सरोवरक तीर बठे विस्मयकर व्याप्त ह चित्त जिनका, शूरवीरोकी कथा करते भए। कईएक क्रूर कमको उलाहना देते भए। कईएक हथियार डारते भए। कईएक रावणके गुणोकर पूण ह चित्त जिनका सो पुकारकर रुदन करते भए। कईएक कमनिकी विचित्रगतिका वणन करते भए। अर कईएक ससारवनकू निदते भए। कसा ह ससारवन ? जा थकी निकसना अतिकठिन ह। कईएक मागविष अरुचिको प्राप्त भए राज्यलक्ष्मीकू महाचचल निरथक जानते भए। अर कई एक उत्तम बुद्धि अकायकी निदा करते भए। कईएक रावणकी गवकी भरी कथा करते भए, श्री रामके गुण गावते भए। कईएक लक्ष्मणकी शक्तिका गुण वणन करते भए। कईएक सुकृतके फल की प्रशसा करते भए, निमल ह चित्त जिनका। घर घर मतकोकी क्रिया होती भई। बाल वृद्ध सबके मुख यही कथा। लकाविष सव लोक रावणके शोककरि अश्रुपात डारते चातुर्मास्य करते भए, शोककर द्रवीभूत भया है हृदय जिनका। सकल लोकनिके नेत्रनिसू जलके प्रवाह बहे सो पथ्वी जल रूप होयगई। अर तत्वोकी गौणता वृष्टि पडी मानो नेत्रोके जलके भयकर आताप घुसकर लोकोके हृदय विष पठा। सव लोकोके मुखसे यह शब्द निकसे धिक्कार धिक्कार ! अहो बडा कष्ट भया, हाय हाय यह क्या अदभुत भया ! या भाति लोक विलाप कर ह, आसू डार ह। कईएक भूमि विष शय्या ६८१
करते भए, मौन धार मुख नीचा करते भये, निश्चल है शरीर जिनका मानो काष्ठके हैं। कईएक शस्त्रोकू तोड डारते भये। कईएकोने आभूषण डार दिए, अर स्त्रीके मुखकमलसे वृष्टि सकोची। कईएक अति दीघ उष्ण निस्वास नाखे हैं सो कलुष होय गए अधर जिनके, मानो दुखके अकुर हैं। अर कईएक ससारके भोगनिसे विरक्त होय मनविष जिनदीक्षाका उद्यम करते भए।

अथानन्तर पिछले पहिर महासघ सहित अनन्तवीय नामा मुनि लकाके कुसुमायुध नामा वनविष छप्पनहजार मुनिसहित आए। जस तारनिकर मडित चन्द्रमा सोह तस मुनिकर मडित सोहते भये। जो ये मुनि रावणके जीवते आते तो रावण मारा न जाता, लक्ष्मणके अर रावणके विशेष प्रीति होती। जहा ऋद्धिधारी मुनि तिष्ठे तहा सव मगल होवें। अर केवली विराज वहा चारो ही दिशाओ में दोयसौ योजन पथ्वी स्वग तुल्य निरुपद्रव होय, अर जीवनके वरभाव मिट जाव। जस आकाशविष अमूतत्व अवकाश प्रदानता, निर्लेपता, अर पवनविष सुवीयता, निसगता, अग्निविष उष्णता, जलविष निमलता पथ्वीविष सहनशीलता, तसे स्वत स्वभाव महामुनिके लोकक आनन्द दायक होय ह। अनेक अदभत गुणोके धारक महामुनि तिनसहित स्वामी विराजे। गौतम स्वामी कह ह, हे श्रेणिक! तिनक गुण कौन वणन कर सक? जस स्वणका कुम्भ अमतका भरचा अति सोह तस महामुनि अनेक ऋद्धि के भरे सोहते भए। निजन्तु स्थानक वहा एक शिला, ताऊपर शुक्ल ध्यान धर तिष्ठे। सो ताही रात्रि विष केवलज्ञान उपज्या। जिनके परम अदभुत गण वणन किए पापनिका नाश होय। तब भवनवासी असुरकुमार, नागकुमार, गरुडकुमार, विद्युतकुमार, अग्निकमार पवनकुमार, मेघकुमार, दिक्कुमार, दीपकुमार, उदधिकुमार, ये दशप्रकार तथा अष्ट प्रकार व्यतर, किन्नर, किंपुरुष, महोरग, गधव, यक्ष, राक्षस, भूत पिशाच तथा पच प्रकार ज्योतिषी चन्द्र सूय ग्रह तारा नक्षत्र, अर सोलह स्वगके सव ही स्वगवासी, ये चतुरनिकायके देव, सौधम, इन्द्रादिक सहित धातुकीखडद्वीपकविष श्रीतीथ कर देवका जन्म भया हुता सो सुमरु पवतविष क्षीरसागरके जलकरि स्नान कराए। जन्मकल्याणकका उत्सवकर
प्रभुकू माता पिताकू सौंपि तहा उत्सवरहित ताडव नत्यकर प्रभुको बारबार स्तुति करते भए। कसे हैं प्रभु? बाल अवस्थाकू धर ह, परन्तु बाल अवस्थाकी अज्ञान चेष्टासू रहित ह। तहा जन्मकल्याणक का समय साध कर सब देव लकाविष अनन्तवीर्य केवलीके दशनकू आए। कईएक विमान चढे आए, कईएक राजहसनिपर चढे आए। अर कईएक अश्व सिह व्याघ्रादिक अनेक वाहननिपर चढे आए,

ढोल, मृदंग, नगारे, बीण, बांसुरी, झांझ, मंजीरे, शंख इत्यादि नानाप्रकारके वादित्र बजावते, मनोहर गान करते, आकाशमंडलकूं आच्छादत, केवलीके निकट महाभक्तिरूप अर्ध रात्रिके समय आए। तिनके विमाननिकी ज्योतिकर प्रकाश होय गया, अर वादित्रनिके शब्दकर दशो दिशा व्याप्त होय गईं। राम लक्ष्मण यह वृत्तांत जान हर्षकूं प्राप्त भए। समस्त वानरवंशी अर राक्षसवंशी विद्याधर इन्द्रजीत कुम्भकर्ण मेघनाद आदि सब राम लक्ष्मणके संग केवलीके दर्शनके लिए जायवेकूं उद्यमी भए। श्रीराम लक्ष्मण हाथी चढे, अर कईएक राजा रथपर चढे, कईएक तुरंगनिपर चढे, छत्र चमर ध्वजाकरि शोभायमान, महा भक्तिकर संयुक्त, देवनि सारिखे महा सुगंध है शरीर जिनके, अति उदार, अपने वाहननित उतर महाभक्तिकर प्रणाम करते, स्तोत्र पाठ पढते केवलीके निकट आए। अष्टांग दण्डवतकर भूमिविषै तिष्ठे, धर्म श्रवणकी है अभिलाषा जिनके, केवलीके मुखतैं धर्म श्रवण करते भए।

दिव्यध्वनिमें यह व्याख्यान भया जो ये प्राणी अष्टकर्मसे बंधे महा दुखके कर्मपर चढे चतुर्गतिविषै भ्रमण करै हैं। आर्त्त रौद्र ध्यानकर युक्त, नाना प्रकारके शुभाशुभ कर्मनिकूं करै है। महा मोहिनीकर्मने ये जीव बुद्धिरहित किये तातैं सदा हिंसा करै है। असत्य वचन कहै है, पराए मर्म भेदका वचन कहै है, परनिंदा करै है, पर द्रव्य हरै है, परस्त्रीका सेवन करै है, प्रमाणरहित परिग्रहकूं अंगीकार करै है, बढ्या है महा लोभ जिनके। वे कैसे हैं? महा निंद्यकर्म कर शरीर तज, अधोलोकविषै जाय है। तहां महा दुखके कारण सप्त नरक तिनके नाम—रत्नप्रभा, शर्करा, बालुका, पंकप्रभा, धूमप्रभा, तम, महातम। सदा महा दुःखके कारण सप्त नरक अंधकारकर युक्त, दुर्गंध सूंघा न जाय, देख्या न जाय, स्पर्शा न जाय, महा भयंकर, महा विकराल है भूमि जिनकी, सदा दुर्वचन त्रास, नाना प्रकारके छेदन भेदन तिनकर सदा पीडित। नारकी खोटे कर्मनित पापबंधकर बहुत काल सागरनि पर्यंत महा तीव्र दुःख भोगवे है। ऐसा जानि पंडित विवेकी पापबंधतैं रहित होय धर्मविषै चित्त धरहु। कैसे है विवेकी? व्रत नियमके धरणहारे, निःकपट स्वभाव, अनेक गुणनिकर मंडित वे नानाप्रकारके

तपकर स्वर्गलोककू प्राप्त होय है। बहुरि मनुष्यदेह पाय मोक्ष प्राप्त होय है। अर जे धर्मकी अभिलाषासे रहित हैं ते कल्याणके मार्गतैं रहित बारम्बार जन्म मरण करते महादुखी संसारविषै भ्रमण करै है। जे भव्यजीव सर्वज्ञ वीतरागके वचनकर धर्मविषै तिष्ठै है ते मोक्षमार्गी, शील सत्य शोच सम्यग्दर्शन ज्ञान चारित्रकर जबलग अष्टकर्मका नाश न करै, तबलग इन्द्र अहमिन्द्र पदके उत्तम सुखको भोगवे है। नानाप्रकारके अद्भुत सुख भोग, वहासे चयकर महाराजाधिराज होय, बहुरि ज्ञान पाय, जिनमुद्रा धर, महा तपकर, केवलज्ञान उपाय, अष्टकर्म रहित सिद्ध होय है। अनन्त अविनाशी आत्मिक स्वभावमयी परम आनन्द भोगवे है।

यह व्याख्यान सुन इन्द्रजीत, मेघनाद अपने पूर्वभव पूछते भये। सो केवली कहै है—एक कौशाबी नामा नगरी, तहां दो भाई दलिद्री, एकका नाम प्रथम, दूजेका नाम पश्चिम। एक दिन विहार करते भवदत्तनामा मुनि वहां आए। सो ये दोनो भाई धर्म श्रवणकर ग्यारमी प्रतिमाके धारक क्षुल्लक श्रावक भए। सो मुनिके दर्शनकू कौशाबी नगरीका इन्द्र नामा राजा आया। सो मुनि महाज्ञानी राजाकू देख जान्या याके मिथ्यादर्शन दुर्निवार है। अर ताही समय नन्दीनामा श्रेष्ठी महाजिनभक्त मुनिके दर्शनकू आया। ताका राजाने आदर किया। ताकू देख प्रथम अर पश्चिम दोऊ भाईनिमें से छोटे भाई पश्चिमने निदान किया जो मैं या धर्मके प्रसादकरि नन्दी सेठके पुत्र होऊ। सो बडे भाईने अर गुरुन बहुत संबोध्या जो जिनशासनविषै निदान महानिंद्य है। सो यह न समझा। कुबुद्धि निदानकर दुखित भया। मरण कर नन्दीके इन्दुमुखी नामा स्त्री ताके गर्भविषै आया। सो गर्भविषै आवते ही बडे बडे राजानिके स्थानकनिविषै कोटका निपात, दरवाजेनिका निपात इत्यादि नानाप्रकारके चिह्न होते भए। तब बडे बडे राजा याकू नानाप्रकारके निमित्त कर महानर जान जन्महीसे अति आदर संयुक्त दूत भेज भेज कर द्रव्य पठाय सेवते भए। यह बडा भया। याका नाम रतिवर्धन, सो सब राजा याकू सेवैं। कौशाबी नगरीका राजा इन्दु भी सेवा करै। नित्य आय प्रणाम करै। या भांति यह रति-

वधन महाविभूति कर सयुक्त भया । अर बडा भाई प्रथम मरकर स्वगलोक गया, सो छोटे भाईके जीवकू सबोधवेके अथ क्षुल्लकका स्वरूप धर आया । सो यह मदोन्मत्त राजा मदकर अधा होय रह्या । सो क्षुल्लककू दुष्ट लोकनिकर द्वारविष पठने न दिया । तब देवने क्षुल्लकका रूप दूरकर रतिवधनका रूप किया । तत्काल ताका नगर उजाड उद्यान कर दिया, अर कहता भया अब तेरी कहा वार्ता ? तब वह पायनि परि स्तुति करता भया तब ताकू सकल वृत्तात कह्या जो आपा दोऊ भाई हुते । मै बडा, तू छोटा । सो क्षुल्लकके व्रत धारे सो त नदीसेठकू देख निदान किया सो मरि नन्दीके घर उपज्या, राजविभूति पाई । अर म स्वगविषै देव भया । यह सब वार्ता सुनि रतिवधनकू सम्यक्त्व उपजा, मुनि भया, अर नदीकू आदि दे अनेक राजा रतिवधनके सग मुनि भए । रतिवधन, तपकरि जहा भाईका जीव देव हुता तहा ही देव भया । बहुरि दोऊ भाई स्वगत चयकर राजकुमार भए । एकका नाम उव, दूजेका नाम उवस, राजा नरेन्द्र राणी विजयाके पुत्र । बहुरि जिनधमका आराधनकरि स्वगविष देव भए । वहासे चयकरि तुम दोऊ भाई रावणके राणी मदोदरी ताके इद्रजीत मेघनाद पुत्र भए । अर नदीसेठक इद्रमुखी रतिवधनकी माता सो जमातरविषै मदोदरी भई । पूव जन्मविष स्नेह हुता सो अब हू माताका पुत्रसे अतिस्नेह भया । कसी ह मदोदरी ? जिनधर्मविषै आसक्त है चित्त जाका यह अपने पूव भव सुन दोऊ भाई ससारकी मायात विरक्त भए । उपजा ह महावराग्य जिनकू, जनेश्वरी दीक्षा आदरी । अर कुम्भकरण, मारीच, राजा मय और हू बडे बडे राजा ससारतै महाविरक्त होय मुनि भए, तजे ह विषय कषाय जिन्होने । विद्याधर राजकी विभूति तृणवत तजी । महा योगीश्वर होय अनेक ऋद्धिके धारक भए, पृथ्वीविषै विहार करते भव्यनिकू प्रतिबोधते भए ।

श्रीमुनिसुव्रतनाथके मुक्ति गए पीछे तिनके तीथविषै यह बडे बडे महापुरुष भए, परम तपके धारक अनेक ऋद्धिसयुक्त, ते भव्यजीवनिकू बारम्बार बदिवेयोग्य हैं । अर मदोदरी पति अर पुत्र दोऊनिके बिरहकरि अतिव्याकुल भई महा शोककर मूर्छाकू प्राप्त भई । बहुरि सचेत होय कुरचिकी न्याई

विलाप करती भई। दुखरूप समुद्रविषै मग्न होय, हाय पुत्र, इन्द्रजीत मेघनाद! यह कहा उद्यम किया, मैं तिहारी माता अतिदीन ताहि क्यों तजी? यह तुमको कहा योग्य जो दुखकरि तप्तायमान माता ताका समाधान किए बगैर चले गये। हाय पुत्र हो! तुम कैसे मुनिव्रत धारोगे? तुम देवनि-सारिखे महा भोगी, शरीरकूं लडावनहारे, कठोर भूमिपर कैसे शयन करोगे? समस्त विभव तजा, समस्त विद्या तजी, केवल अध्यात्मविद्याविषै तत्पर भए। अर राजा मय मुनि भया—ताका शोक कर है—हाय पिता! यह कहा किया? जगत तजि मुनिव्रत धारया। तुम मोतैं तत्काल ऐसा स्नेह क्यों तज्या? मैं तिहारी बालिका, मोतैं दया क्यों न करी? बाल्यावस्थाविषै मोपर तिहारी अतिकृपा हुती, मैं पिता अर पुत्र अर पति सबसे रहित भई, स्त्रीके यही रक्षक हैं। अब मैं कौनके शरण जाऊं? मैं पुण्यहीन महा दुखकूं प्राप्त भई। या भांति मंदोदरी रुदन करै। ताका रुदन सुन सबहीकूं दया उपजै। अश्रुपातकरि चातुर्मास कीया। ताहि शशिकांता आर्यिका उत्तम वचनकरि उपदेश देती भई—हे मूर्खणी! कहा रोवै? या संसारचक्रविषै जीवनिनै अनन्त भव धारे। तिनमें नारकी अर देवनिके तो संतान नाहीं। अर मनुष्य अर तिर्यचनिके हैं, सो तैं चतुरगति भ्रमण करते मनुष्य तिर्यचनिके भी अनन्त जन्म धारे। तिनविषै तेरे अनेक पिता पुत्र बांधव भए। तिनकूं जन्म जन्ममें रुदन किया। अब कहा विलाप करै है? निश्चलता भज। यह संसार असार है, एक जिनधर्म ही सार है। तू जिन-धर्मका आराधन कर, दुखसे निवृत्त होहु। ऐसे प्रतिबोधके कारण आर्यिकाके मनोहर वचन सुन मंदो दरी महा विरक्त भई। उत्तम है गुण जाविषै, समस्त परिग्रह तजकरि, एक शुक्ल वस्त्र धारि आर्यिका भई। कैसी है मंदोदरी? मनवचनकायकरि निर्मल जो जिनशासन, ताविषै अनुरागिणी है। अर चन्द्र-नखा रावणकी बहिन हू याही आर्यिकाके निकट दीक्षा धरि आर्यिका भई। जा दिन मन्दोदरी आर्यिका भई ता दिन अडतालीस हजार आर्यिका भई।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रंथ ताकी भाषावचनिकाविषै इन्द्रजीत मेघनाद कुम्भकर्णका वैराग्य अर मंदोदरी आदि रानीनिका वैराग्य वर्णन करने वाला अठत्तरवां पर्व पूर्ण भया ॥७८॥

अथानन्तर गौतमस्वामी राजा श्रेणिकसू कहै है–हे राजन्! अब श्रीराम लक्ष्मणका महाविभूतिसों लंकाविषै प्रवेश भया सो सुन। महा विमाननिके समूह, अर हाथीनिकी घटा, अर श्रेष्ठ तुरगनिके समूह, अर मंदिर समान रथ, अर विद्याधरनिके समूह, अर हजारां देव तिनकरि युक्त दोऊ भाई महाज्योति कू धरे लंकामें प्रवेश करते भए। तिनकू लोक देखि अति हर्षित भए, जन्मान्तरके धर्मके फल प्रत्यक्ष देखते भए। राजमार्गकेविषै जाते श्रीराम लक्ष्मण तिनकू देख नगरके नर अर नारिनिको अपूर्व आनन्द भया। फूलि रहे हैं मुख जिनके, स्त्री झरोखानिविषै बैठी जालीनिमें होय देखै हैं। कमल समान है मुख जिनके, महा कौतुककरि युक्त परस्पर वार्ता करै है–हे सखी! देखहु! यह राम राजा दशरथका पुत्र, गुणरूप रत्ननिकी राशि, पूर्णमासीके चन्द्रमा समान है वदन जाका, कमल समान हैं नेत्र जाके, अद्भुत पुण्यकर यह पद पाया है, अतिप्रशंसा योग्य है आकार जाका। धन्य है वह कन्या जिन्होंने ऐसे वर पाए। जानै यह वर पाए तानै कीर्तिका थम्भ लोकविषै थाप्या। जानै जन्मांतरविषै धर्म आचरया होय सो ऐसा नाथ पावै। ता समान अन्य नारी कौन? राजा जनककी पुत्री महा कल्याणरूपिणी जन्मांतरविषै महापुण्य उपार्जे है, तातै ऐसे पति याहि मिले। जैसें शची इन्द्रके तसे सीता रामके। अर यह लक्ष्मण वासुदेव चक्रपाणि शोभै है, जाने असुरेंद्रसमान रावण रणविषै हता, नील-कमलसमान कांति जाकी। अर गौर कांतिकर संयुक्त जो बलदेव श्रीरामचन्द्र तिनसहित ऐसे सोहै जैसें प्रयागविषै गंगा यमुनाके प्रवाहका मिलाप सोहै। अर यह राजा चन्द्रोदयका पुत्र विराधित है जानै लक्ष्मणसू प्रथम मिलापकर विस्तीर्ण विभूति पाई। अर यह राजा सुग्रीव किहकंधापुरका धनी, महा पराक्रमी जानै श्रीरामदेवसू परम प्रीति जनाई। अर यह सीताका भाई भामंडल, राजा जनकका पुत्र चंद्र-गति विद्याधरका पल्या सो विद्याधरनिका इन्द्र है। अर यह अंगदकुमार राजा सुग्रीवका पुत्र जो रावणकू बहुरूपिणी विद्या साधते विघ्नकू उद्यमी भया। अर हे सखी! यह हनुमान महासुन्दर उतंग हाथनिके रथ चढ्या पवनकरि हाले है बानरके चिह्नकी ध्वजा जाके, ताहि देखि रणभूमिविषै शत्रु पलाय जाय।

सो राजा पवनका पुत्र अंजनीके उदरविषै उपज्या, जानै लंकाके कोट दरवाजे ढाहे। ऐसी वार्ता परस्पर स्त्रीजन करै है। तिनके वचनरूप पुष्पनिकी मालानिकरि पूजित जो राम सो राजमार्ग होय आगे आए। एक चमर ढारती जो स्त्री ताहि पूछ्या—हमारे विरहके दुःखकरि तप्तायमान जो भामंडलकी बहिन सो कहां तिष्ठै है? तब वह रत्ननिके चूडाकी ज्योतिकरि प्रकाशरूप है भुजा जाकी सो आंगुरी की समस्याकरि स्थानक दिखावती भई। हे देव! यह पुष्पप्रकीर्णनामा गिरि नीझरनानिके जलकरि मानो हास्यही करै है, तहां नन्दनवन समान महा मनोहर वन, ताविषै राजा जनककी पुत्री कीर्ति शील है परिवार जाके, सो तिष्ठै है।

या भांति रामजीसे चमर ढारती स्त्री कहती भई। अर सीताके समीप जो उर्मिका नाम सखी सब सखिनिविषै प्रीतिकी भजनहारी सो आंगुरी पसार सीताकूं कहती भई—हे देवि! चन्द्रमा समान है छत्र जाका, अर चांद सूर्य समान हैं कुण्डल जाके, अर शरदके नीझरने समान है हार जाकै, सो पुरुषोत्तम श्रीरामचन्द्र तिहारे वल्लभ आए। तिहारे वियोगकरि मुखविषै अत्यन्त खेदकूं धरैं, हे कमलनेत्रे! जैसे दिग्गज आवै तैसैं आवै है। यह वार्ता सुनि सीताने प्रथम तो स्वप्न समान वृत्तांत जाण्या। बहुरि आप अति आनन्दको धरैं, जैसे मेघपटलसे चन्द्र निकसै तैसे हाथीतैं उतरि आए, जैसे रोहिणीके निकट चन्द्रमा आवै तैसैं आए। तब सीता नाथकूं निकट आया जान अति हर्षकी भरी उठकरि सन्मुख आई। कैसी है सीता? धूरकरि धूसर हैं अंग, अर केश बिखर रहे हैं, श्याम परि गए हैं होठ जाके, स्वभाव ही करि कृश हुती अर पतिके वियोगकरि अत्यन्त कृश भई। अब पतिके दर्शनकरि उपज्या है अति हर्ष जाकूं प्राणकी आशा बंधी, मानो स्नेहकी भरी शरीरकी कांतिकरि पतिसूं मिलाप ही करै है। अर मानो नेत्रनिकी ज्योतिरूप जलकरि पतिकूं स्नान ही करावै है। अर क्षणमात्रविषै बढ गई है शरीरकी लावण्यतारूप सम्पदा, अर हर्षके भरे जे निश्वास तिनकरि मानो अनुरागका बीज बोवै है। कैसी है सीता? रामके नेत्रनिकूं विश्रामकी भूमि, अर पल्लव समान जे हस्त तिनकरि जीते हैं लक्ष्मी ६८८

के करकमल जान, सौभाग्यरूप रत्ननिकी खान, सम्पूर्ण चन्द्रमा समान है वदन जाका, चन्द्र कलंकी यह निःकलंक, विजुरी समान है कांति जाकी, वह चंचल यह निश्चल, प्रफुल्लित कमल समान हैं नेत्र जाके, मुखरूप चन्द्रकी चन्द्रिकाकरि अति शोभाकूं प्राप्त भई है। यह अद्भुत वार्ता है कि कमल तो चन्द्रकी ज्योतिकरि मुद्रित होय है अर याके नेत्रकमल मुखचन्द्रकी ज्योतिकरि प्रकाशरूप हैं। कलुषता रहित उन्नत हैं स्तन जाके, मानो कामके कलश ही हैं। सरल है चित्त जाका। सो कौशल्याका पुत्र राणी विदेहाकी पुत्रीकूं निकट आवती देखी, कथनविषै न आवै ऐसे हर्षकूं प्राप्त भया। अर यह रतिसमान सुन्दरी रमणकूं आवता देखि विनयकरि हाथ जोड खडी अश्रुपातकरि भरे हैं नेत्र जाके। जैसै शची इन्द्रके निकट आवै, रति कामके निकट आवै,दया जिनधर्मके निकट आवै,सुभद्रा भरतके निकट आवै, तैसे ही सीता सती रामके समीप आई। सो घने दिननिका वियोग, ताकरि खेदखिन्न रामने मनोरथके सैकडानिकर पाया है नवीन संगम जाने, सो महाज्योतिका धरणहारा, सजल हैं नेत्र जाके, भुजबंधनकरि शोभित जे भुजा, तिनकरि प्राणप्रियासूं मिलता भया। ताहि उरसूं लगाय सुखके सागरविषै मग्न भया। उरसूं जुदी न कर सकै, मानो विरहसे डरै है। अर वह निर्मल चित्तकी धरणहारी पतिके कंठविषै अपनी भुजपासि डारि ऐसी सोहती भई जैसे कल्पवृक्षनिसूं लिपटि कल्पवेलि सोहै,भया है रोमांच दोउनिके अंगविषै,परस्पर मिलापकरि दोऊ ही अति सोहते भये। ते देवनिके युगल समान है। जैसै देव देवांगना सोहैं तैसें सोहते भये। सीता अर रामका समागम देखि देव प्रसन्न भये। सो आकाशतैं दोनोनिपर पुष्पनिकी वर्षा करते भए, सुगन्ध जलकी वर्षा करते भए अर ऐसे वचन मुखतैं उचारते भए—अहो! अनुपम है शील सीताका, शुभ है चित्त, सीता धन्य है, याकी अचलता गंभीरता धन्य है, व्रत शीलकी मनोज्ञता भी धन्य है, निर्मलपना जाका धन्य है, सतीनिविषै उत्कृष्टता जाके, जानै मनहूकरि द्वितीय पुरुष न इच्छ्या,शुद्ध हैं नियम व्रत जाका। या भांति देवनि प्रशंसा करी। ताही समय अतिभक्तिका भरचा लक्ष्मण आय सीताके पायनि परचा। विनयकरि संयुक्त सीता अश्रुपात डारतो ताहि उरसूं लगाय कहती

भई—हे वत्स ! महाज्ञानी मुनि कहते जो यह वासुदेव पदका धारक ह सो प्रकट भया । अर अर्धचक्री पदका राज तेरे आया । निर्ग्रंथके वचन अन्यथा न होय । अर यह तेरे बडे भाई बलदेव पुरुषोत्तम जिन्होने विरहरूप अग्निविषै जरती जो म सो निकासी । बहुरि चन्द्रमा समान ह ज्योति जाकी,ऐसा भाई भामडल बहिनके समीप आया । ताहि देखि अति मोहकरि मिलो । कसा ह भाई ? महा विनय वान ह, अर रणमें भला दिखाया ह । अर सुग्रीव वा हनुमान, नल, नील, अगव, विराधित, चन्द्र, सुषेण, जाबव इत्यादिक बडे बडे विद्याधर अपना नाम सुनाय वन्दना अर स्तुति करते भये । नाना प्रकारके वस्त्र आभूषण कल्पवक्षनिके पुष्पनिकी माला सीताके चरणके समीप स्वणके पात्रविष मेल भेंट करते भए । अर स्तुति करते भए—हे देवि ! तुम तीन लोकविषै प्रसिद्ध हो, महा उदारताकू धरौ हो, गुण सम्पदाकर सबनिमें बडी हो,देवनिकरि स्तुति करने योग्य हो, अर मगलरूप ह दशन तिहारा, जैस सूयकी प्रभा सूयसहित प्रकाश कर नस तुम श्री रामचन्द्र सहित जयवत होहु ।

इति श्रीरविषेणाचायविरचित महापद्मपुराण स कृत ग्र थ ताकी भाषावचनिकाविष राम और सीताका मिलाप होनेका वणन करनेवाला उ यासीवा पव पूण भया ॥ ७६ ॥

अथानन्तर सीताके मिलापरूप सूयके उदयकरि फूल गया ह मुख कमल जाका ऐस जो राम सो अपने हाथकरि सीताका हाथ गह उठे, ऐरावत गजसमान जो गज तापर सीतासहित आरोहण किया । मेघ समान वह गज ताको पीठपर जानकीरूप रोहिणीकरि युक्त रामरूप चन्द्रमा सोहते भए, समाधानरूप ह बुद्धि जिनकी । दोऊ अति प्रीतिके भरे, प्राणिनिके समूहकू आनन्दके करता, बडे बडे अनुरागी विद्याधर लार, स्वग विमान तुल्य रावणका महल, तहा श्रीराम पधारे । रावणके महिलके मध्य श्रीशातिनाथका मदिर अति सुन्दर, तहा स्वणके हजारो थम्भ, नानाप्रकारके रत्नोकरि मडित मदिर की मनोहर भीति, जस महाविदेहके मध्य सुमेरु गिरि सोह तस रावणके मदिरविषै श्रीशातिनाथका

मन्दिर सोहै। जाहि देखे नेत्र मोहित होय जाय। तहा घण्टा बाज है, ध्वजा फहर है। महा मनोहर वह शातिनाथका मन्दिर वणनविष न आव। श्रीराम हाथीत उतरे। नागेन्द्र समान है पराक्रम जाका, प्रसन्न नेत्र, महालक्ष्मीवान, जानकीसहित किचित काल कायोत्सगकी प्रतिज्ञा करी। प्रलबित है भुजा, महा प्रशात हृदय, सामायिककू अगीकार करि हाथ जोडि शातिनाथस्वामीका स्तोत्र, समस्त अशुभ कमका नाशक पढते भए—हे प्रभो! तिहार गर्भावतारविष शाति भई, महा कातिकी करणहारी, सव रोगकी हरणहारी, अर सकल जीवनकू आनन्द उपज, अर तिहारे जन्मकल्याणकविषै इन्द्रादिक देव महाहर्षित होय आए। क्षीरसागरके जलकरि सुमेरुके पवतपर तिहारा जन्माभिषेक भया, अर तुमने चक्रवर्ती पद धर जगतका राज्य किया। बाह्य शत्रु वाह्यचक्रसे जीते, अर मुनि होय माहिले मोह रागादिक शत्रु ध्यानकरि जीते। केवलबोध लह्या, जन्म जरा मरणसे रहित जो शिवपुर कहिए मोक्ष ताका तुम अविनाशी राज्य लिया। कमरूप वरी ज्ञान शस्त्रत निराकरण किए। कसे है कमशत्रु? सदा भव-भ्रमणके कारण, अर जन्म जरा मरण भयरूप आयुधनिकर युक्त, सदा शिवपुर पथके निरोधक। कसा है वह शिवपुर? उपमारहित, नित्य, शुद्ध, जहा परभवका आश्रय नाहीं, केवल जिन भावका आश्रय है, अत्यन्त दुलभ, सो तुम आप निर्वाणरूप, औरनिकू निर्वाणपद सुलभ करोहो, सव जगतकू शाति के कारण हो। हे श्रीशातिनाथ! मन वचन कायकरि नमस्कार तुमकू। हे जिनेश! हे महेश! अत्यत शात दशाकू प्राप्त भए हो, स्थावर जगम सव जीवनिके नाथ हो। जो तिहारे शरण आव तिनके रक्षक हो। समाधि बोधके देनहारे तुम एक परमेश्वर सबके गुरु, सबके बाधव हो। मोक्ष मार्गके प्ररूपणहारे, सव इन्द्रादिक देवनिकर पूज्य, धमतीथके कर्ता हो। तिहारे प्रसाद करि सव दुखसे रहित जो परम स्थानक ताहि मुनिराज पावै है। हे देवाधिदेव! नमस्कार है तुमकू। सव कम विलय किया है। हे कृतकृत्य! नमस्कार तुमकू। पाया है परम शातिपद जिन्होने, तीनलोककू शातिके कारण, सकल स्थावर जगम जीवनिके नाथ, शरणागतपालक, समाधि बोधके दाता, महा कातिके धारक हे प्रभो!

तुम ही गुरु, तुमही बाधव, तुमही मोक्षमागके नियता परमेश्वर, इन्द्राविक देवनिकरि पूज्य, धमतीर्थं के कर्ता जिनकरि भव्य जीवनिकू सुख होय, सव दुखके हरणहारे, कमनिके अतक ! नमस्कार तुमकू । हे लब्धलभ्य ! नमस्कार तमकू । लब्धलभ्य कहिए पाया है, पायवे योग्य पद जिन्होने, महाशात स्व भावविषै विराजमान, सव दोष रहित हे भगवान ! कपा करहु । वह अखड अविनाशी पद हमें देवहु। इत्यादि महास्तोत्र पढते कमल-नयन श्रीराम प्रदक्षिणा देकर बदना करते भए, महा विवेकी, पद्म कर्मविषै सदा प्रवीण । अर रामके पोछे नम्रीभूत ह अग जाकी, दोऊ कर जोड, महासमाधानरूप जानकी स्तुति करती भई । श्रीरामके शब्द महा दु दुभी समान अर जानकी महा मिष्ट कोमल वीणा समान बोलती भई । अर विशल्या सहित लक्ष्मण स्तुति करते भए । अर भामडल, सुग्रीव तथा हनुमान मगल स्तोत्र पढते भए। जोडे ह कर कमल, अर जिनराजविष पूण ह भक्ति जिनकी, महा गान करते, मृद गादि बजावते महा ध्वनि करते भए । सो मयूर मेघकी ध्वनि जानि नत्य करते भए। बारम्बार स्तुति प्रणाम करि जिनमन्दिरविषै यथायोग्य तिष्ठे । ता समय राजा विभीषण अपने दादा सुमाली, अर तिनके लघुवीर सुमाल्यवान, अर सुमालीके पुत्र रत्नश्रवा रावणके पिता तिनकू आदि दे अपने बडे तिनका समाधान करता भया । कसा ह विभीषण ? ससारकी अनित्यताके उपदेशविषै अत्यन्त प्रवीण । सो बडनिसू कहता भया—हे तात ! ए सकल जीव अपने उपार्जे कर्मनिकू भोगवे ह । तात शोक करना वृथा ह । अर अपना चित्त समाधान करहु । आप जिन आगमके वेत्ता महा शात चित्त, अर विचक्षण हो, औरनिकू उपदेश देयवे योग्य आपकू हम कहा कहें ? जो प्राणी उपज्या ह सो अवश्य मरणकू
प्राप्त होय ह । अर यौवन पुष्पनिकी सुगधता समान क्षणमात्रविषै और रूप होय ह । अर लक्ष्मी पल्लवनिकी शोभासमान शीघ्र ही और रूप होय ह । अर विजुरीके चमत्कार समान यह जीतव्य ह। अर पानीके बुदबुदासमान बधुनिका समागम ह । अर साझके बादरके रग समान यह भोग ह । अर यह जगतकी करणी स्वप्नकी क्रिया समान ह । जो ये जीव पर्यायार्थिक नयकरि मरण न कर तो हम

भवातरत तिहारे वशविषै कसे आवते ? हे तात ! अपना ही शरीर विनाशीक है तो हितूजनका अत्यन्त शोक काहेकू करिए ? शोक करना मूढता है। सत्पुरुषनिको शोकके दूर करिवे अर्थि ससार का स्वरूप विचारणा योग्य है। देखे, सुने, अनुभवे जे पदार्थ वे उत्तम पुरुषनिकू शोक उपजावे हैं। परन्तु विशेष शोक न करना, क्षणमात्र भया तो भया। शोककरि बाधवका मिलाप नाहीं, बुद्धिभ्रष्ट होय है। तात शोक न करना। यह विचारणा–या ससार असारविषै कौन कौन सम्बन्ध भए, या जीव के कौन कौन बाधव भए–ऐसा जानि शोक तजना। अपनी शक्ति प्रमाण जिनधर्मका सेवन करना। यह वीतरागका मार्ग ससार सागरका पार करणहारा है। सो जिनशासनविषै चित्त धरि आत्मकल्याण करना। इत्यादि मनोहर मधुर वचननिकर विभीषण अपने बडेनिका समाधान किया।

बहुरि अपने निवास गया। अर अपनी विदग्धनामा पटराणी, समस्त व्यवहारविषै प्रवीण हजारा राणीनिमें मुख्य, ताहि श्रीरामके नौतिवेकू भेज्या। सो आयकरि सीतासहित रामकू अर लक्ष्मणकू नमस्कारकरि कहती भई–हे देव ! मेरे पतिका घर आपके चरणारविन्दके प्रसगकरि पवित्र करहु, आप अनुग्रह करिवे योग्य हो। या भाति राणी वीनती करी तब ही विभीषण आया, अति आदरत कहता भया–हे देव ! उठिये, मेरा घर पवित्र करिए। तब आप याके लार ही याके घर जायवेकू उद्यमी भए। नानाप्रकारके वाहन, कारी घटा समान बाजे, अति उत्तग अर पवन समान चचल तुरग, अर मन्दिरसमान रथ इत्यादि नानाप्रकारके जे वाहन तिनपर आरूढ अनेक राजा तिन सहित विभीषण के घर पधारे। समस्त राजमार्ग सामतनिकरि आच्छादित भया। विभीषणने नगर उछाला, मेघकी ध्वनि समान वादित्र बाजते भए। शखनिके शब्दकरि गिरिकी गुफा नाद करती भई। झझा भेरी मृदग ढोल हजारो बाजते भए। लपाक काहला धधु अनेक बाजे अर दुदुभी बाजे, दशो दिशा वादित्र निके नादकरि पूरी गई। ऐसे ही तो वादित्रनिके शब्द, अर ऐसे ही नानाप्रकारके वाहननिके शब्द, ऐसे ही सामतनिके अट्टहास, तिनकर दशो दिशा पूरित भई। कईएक सिंह शार्दूल पर चढे हैं, कई

एक हाथीनपर, कईएक तुरगनिपर चढे है । नानाप्रकारके विद्यामई तथा सामान्य बाहन तिनपर चढ़े चाले । नत्यकारणी नत्य कर है, नट भाट अनेक कला अनेक चेष्टा कर ह । अति सुन्दर नत्य होय ह । बदीजन विरद बखान ह । ऊचे स्वरसे स्तुति कर ह । अर शरदकी पूणमासीके चन्द्रमा समान उज्ज्वल छत्रनिके मडल करि अम्बर छाय रहा ह । नाना प्रकारके आयुधनिकी कांति करि सूयकी काति दबि गई ह । नगरके सकल नर नारीरूप कमलनिके वनकू आनद उपजावते, भानुसमान श्रीराम विभीषणके घर आए। गौतमस्वामी कह ह–हेश्रेणिक! ता समयकी विभूति कही न जाय । महा शुभ लक्षण, जसी देवनिके शोभा होय तसी भई । विभीषणने अघपाद्य किए अति शोभा करी । श्रीशाति नाथके मदिर त लेय अपने महिलतक महा मनोज्ञ ताडव किए । आप श्रीराम हाथीसे उतर सीता अर लक्ष्मण सहित विभीषणके घरमें प्रवेश करते भए । विभीषणके महिलके मध्य पदमप्रभु जिनेन्द्र का मन्दिर रत्ननिके तोरणनिकरि मडित, कनक मई, ताके चौगिद अनेक जिनमन्दिर। जसे पवतनिक मध्य सुमेरु सोह तस पदमप्रभुका मन्दिर सोह । सुवणके हजारा थम्भ, तिनके ऊपर अति ऊचे ददी-प्यमान अति विस्तार सयुक्त जिनमदिर सोह । नानाप्रकारके मणिनिके समूहकरि मडित अनेक रचना कू धर । अति सुदर पदमराग मणिमई पदमप्रभु जिनेन्द्रकी प्रतिमा, अति अनपम विराज जाकी कान्तिकरि मणिनिकी भूमिविष मानो कमलनिकर वन फूल रहे ह । सो राम लक्ष्मण सीतासहित वदनाकरि स्तुतिकरि यथायोग्य तिष्ठे ।

अथानन्तर विद्याधरनिकी स्त्री राम लक्ष्मण सीताके स्नानकी तयारी करावती भई । अनेक प्रकारके सुगन्ध तेल तिनके उबटना किए। नासिकाकू सुगन्ध, अर देहकू अनुकूल पूव दिशाकू मुखकर स्नानकी चौकी पर विराजे, घणी ऋद्धिकर स्नानकू प्रवरते । सुवणके, मरकत मणिके हीरानिके, स्फटिक मणिके, इन्द्रनीलमणिके कलश सुगन्ध जलके भरे तिनकर स्नान भया। नानाप्रकारके वादित्र बाजे। गीत गान भए । जब स्नान होय चुका तब महापवित्र वस्त्र आभूषण पहिरे । बहुरि पदमप्रभु

के चैत्यालय जाय वंदना करी। विभीषणने रामकी मिजमानी करी, ताके विस्तार कहांलग कहिए—दुग्ध, दही, घी, शर्बतकी बावडी भरवाई। पकवान अर अन्नके पर्वत किए। अर जे अद्भुत वस्तु नन्दनादि वन विषै पाइए ते मंगाई। मनकूं आनन्दकारी, नासिकाकूं सुगंध, नेत्रोंकूं प्रिय, अति स्वादकूं धरे जिह्वाकूं वल्लभ, षटरस सहित भोजनकी तयारी करी। सामग्री तो सब सुन्दर ही हुती अर सीताके मिलापकर रामकूं अति प्रिय लागी। रामके चित्तकी प्रसन्नता कथनविषै न आवै। जब इष्टका संयोग होय तब पांचो इन्द्रियनिके सब ही भोग प्यारे लागें, नातर नाहीं। जब अपने प्रीतमका संयोग होय तब भोजन भली भांति रुचै सुन्दर रुचै, सुन्दर वस्त्रका देखना रुचै, रागका सुनना रुचै, कोमल स्पर्श रुचै, मित्रके संयोगकर सब मनोहर लगैं, अर जब मित्रका वियोग होय तब स्वर्ग तुल्य भी नरक तुल्य भासै। अर प्रियके समागमविषै महा विषम वन स्वर्ग तुल्य भासै। महा सुन्दर अमृतसारिखे रस, अर अनेक वर्णके अद्भुत भक्ष्य तिनकर राम लक्ष्मण सीताकूं तृप्त किए। अद्भुत भोजन क्रिया भई। भूमिगोचरी विद्याधर परिवारसहित अति सन्मानकर जिमाए। चन्दनादि सुगन्धके लेप किए, तिनपर भ्रमर गुंजार कर है, अर भद्रसाल नन्दनादिक वनके पुष्पनिसे शोभित किये। अर महा सुन्दर कोमल महीन वस्त्र पहिराए। नानाप्रकारके रत्ननिके आभूषण दिए। कैसे हैं आभूषण ? जिनके रत्ननिकी ज्योतिके समूहकरि दशोदिशाविषै प्रकाश होय रहा है। जेते रामकी सेन के लोक हुते ते सब विभीषणने सन्मान कर प्रसन्न किये, सबके मनोरथ पूर्ण किये। रात्रि अर दिवस सब विभीषण हीका यश करें। अहो ! यह विभीषण राक्षसवंशका आभूषण है, जाने राम लक्ष्मण की बडी सेवा करी। यह महा प्रशंसा योग्य है, मोटा पुरुष है, यह प्रभावका धारक जगतविषै उतंगता कूं प्राप्त भया— जाके मन्दिरविषै श्रीराम लक्ष्मण पधारे। या भांति विभीषणके गुणग्रहणविषै तत्पर विद्याधर होते भए। सब लोक सुखसूं तिष्ठे। राम लक्ष्मण सीता अर विभीषणकी कथा पृथ्वीविषै प्रवरती।

अथानन्तर विभीषणादिके सकल विद्याधर राम लक्ष्मणका अभिषेक करनेकू विनयकर उद्यमी भए। तब श्रीराम लक्ष्मणने कहा—अयोध्याविषै हमारे पिताने भाई भरतकू अभिषेक कराया सो भरत ही हमारे प्रभु है। तब सबने कही आपकू यही योग्य है, परन्तु अब आप त्रिखंडी भए तो यह मंगल स्नान योग्य ही है, यामें कहा दोष है? अर ऐसो सुननेविषै आवै है—भरत महा धीर है, अर मनवचन कायकरि आपकी सेवाविषै प्रवर्तै है, विक्रियाकू नाहीं प्राप्त होय है। ऐसा कह सबने राम लक्ष्मणका अभिषेक किया। जगतविषै बलभद्र नारायणकी अति प्रशंसा भई। जैसे स्वर्गविषै इन्द्र प्रतिइन्द्रकी महिमा होय तैसे लंकाविषै राम लक्ष्मणकी महिमा भई। इन्द्रके नगर समान वह नगर महा भोगनि कर पूर्ण, तहां राम लक्ष्मणकी आज्ञासू विभीषण राज्य करै है। नदी सरोवरनिके तीर अर देश, पुर, ग्रामादिविषै विद्याधर राम लक्ष्मणहीके यश गावते भए। विद्याकरयुक्त अद्भुत आभूषण पहिरे सुन्दर वस्त्र मनोहर हार, सुगन्धादिकके विलेपन उनकर युक्त क्रीडा करत भए, जैसे स्वर्गविषै देव क्रीडा करै। अर श्रीरामचन्द्र सीताका मुख देखते तृप्तिकू न प्राप्त भए। कैसा है सीताका मुख? सूर्यके किरणकरि प्रफुल्लित भया जो कमल ता समान है प्रभा जाकी। अत्यन्त मनकी हरणहारी जो सीता ता सहित राम निरन्तर रमणीय भूमिविषै रमते भए। अर लक्ष्मण विशल्या सहित रतिकू प्राप्त भए। मनवांछित सकल वस्तुका है समागम जिनके। उन दोऊ भाईनिके बहुत दिन भोगोपभोगयुक्त सुखसे एक दिवस समान गए।

एक दिन लक्ष्मण सुन्दर लक्षणनिका धरणहारा विराधितकू अपनी जे स्त्री तिनके लेयवे अर्थ पत्र लिख बडी ऋद्धिसे पठावता भया। सो जायकर कन्यानिके पितानिकू पत्र देता भया। माता पितानि ने बहुत हर्षित होय कन्यानिकू पठाई। सो बडी विभूतिसू आई। दशांग नगरके स्वामी वज्रकर्णकी पुत्री रूपवती महारूपकी धरणहारी, अर कूवर स्थानके नाथ बालखिल्यकी पुत्री कल्याणमाला परम सुन्दरी, अर पृथ्वीपुर नगरके राजा पृथ्वीधरकी पुत्री वनमाला, गुणरूपकर प्रसिद्ध, अर खेमाजलके ६६६

राजा जितशत्रुकी पुत्री जितपद्मा, अर उज्जन नगरीके राजा सिंहोदरकी पुत्री । यह सब लक्ष्मण के समीप आई । विराधित ले आया । जन्मांतरके पूर्व पुण्य, दया, मन इन्द्रियोंको वश करना, शील संयम, गुरुभक्ति, महा उत्तम तप, इन शुभ कर्मनिकर लक्ष्मणसा पति पाइए । इन पतिव्रतानिन पूर्व महा तप किए हुते । रात्रिभोजन तज्या, चतुर्विधसंघकी सेवा करी, तातैं वासुदेव पति पाए । उनको लक्ष्मणही वर योग्य, अर लक्ष्मणके ऐसे ही स्त्री योग्य । तिनकरि लक्ष्मणकू, अर लक्ष्मणकर तिनकू अति सुख होता भया । परस्पर सुखी भए । गौतम स्वामी राजा श्रेणिकसू कहै है—हे श्रेणिक ! जगत विषै ऐसी सम्पदा नाहीं, ऐसी शोभा नाहीं, ऐसी लीला नाहीं, ऐसी कला नाहीं जो इनके न भई । राम लक्ष्मण अर इनकी राणी तिनकी कथा कहा लग कहैं ? अर कहा कमल कहा चन्द्र इनके मुख की उपमा पावै ? अर कहा लक्ष्मी अर कहा रति इनकी राणियोंकी उपमा पावै ? राम लक्ष्मणकी ऐसी सम्पदा देख विद्याधरनिके समूहकू परम आश्चर्य होता भया । चन्द्रवर्धनकी पुत्री अर अनेक राजानिकी कन्या तिनसू श्रीराम लक्ष्मणका अति उत्सवसे विवाह होता भया । सब लोककू आनन्द के करणहारे वे दोऊ भाई महाभोगनिके भोक्ता, मनवांछित सुख भोगते भए । इन्द्र प्रत्येन्द्र समान आनन्दकरि पूर्ण लंकाविषै रमते भए । सीताविषै है अत्यन्तराग जिनका ऐसे श्रीराम तिन्होंने छह वर्ष लंकाविषै व्यतीत किए । सुखके सागरविषै मग्न, सुन्दर चेष्टाके धरणहारे रामचन्द्र सकल दुःख भूल गए ।

अथानन्तर इन्द्रजीतमुनि सब पापनिके हरनहारे अनेक ऋद्धिसहित विराजमान पृथ्वीविषै विहार करते भए । वैराग्यरूप पवनकरि प्रेरी ध्यानरूप अग्निकरि कर्मरूप भस्म किए । कैसी है ध्यानरूप अग्नि ? क्षायिक सम्यक्त्वरूप अरण्यकी लकडी, ताकरि करी है । अर मेघवाहन मुनि भी विषयरूप ईंधनको अग्निसमान आत्मध्यानकर भस्म करते भए, केवलज्ञानकू प्राप्त भए । केवलज्ञान जीवका निज-स्वभाव है । अर कुम्भकर्णमुनि सम्यग्दर्शन ज्ञान चारित्रके धारक, शुक्ल लेश्याकरि निर्मल जो शुक्लध्यान

ताके प्रभावकरि केवलज्ञानकूं प्राप्त भए। लोक अर अलोक इनकूं अवलोकन करते, मोहरजरहित इन्द्रजीत, कुम्भकर्ण केवली आयु पूर्णकरि अनेक मुनिन सहित नर्मदाके तीर सिद्धपदकूं प्राप्त भए। सुर असुर मनुष्यनिके अधिपतिकरि गाइए हैं उत्तमकीर्ति जिनकी, शुद्ध शीलके धरणहारे, महादेदीप्यमान, जगतबंधु, समस्त, ज्ञेयके ज्ञाता, जिनके ज्ञानसमुद्रविषै लोकालोक गायके खुरसमान भासै, संसारका क्लेश महाविषम ताके जलसे निकसे, जा स्थानक गए बहुरि यत्न नाहीं—तहां प्राप्त भए, उपमारहित निर्विघ्न अखंड सुखकूं प्राप्त भए। जे कुम्भकर्णादिक अनेक सिद्ध भए ते जिनशासनके श्रोतावोंकूं आरोग्य पद देवें। नाश किए हैं कर्मशत्रु जिन्होंने, ते जिनस्थानकोंसे सिद्ध भए हैं सो वे स्थानक अद्यापि देखिये हैं। वे तीर्थ भव्यनिकरि वंदवे योग्य हैं। विंध्याचलकी वनीविषै इन्द्रजीत मेघनाद तिष्ठे सो तीर्थ मेघरव कहावै है। अर जाम्बुमाली महा बलवान तूणीमतनामा पर्वतविषै अहमिंद्र पदकूं प्राप्त भए सो पर्वत नानाप्रकारके वृक्ष अर लतानिकरि मंडित, अनेक पक्षिनिके समूहकरि तथा नानाप्रकारके वचननिकर भरया। अहो भव्यजीव हो! जीवदया आदि अनेक गुणनिकर पूर्ण ऐसा जो जिनधर्म ताके सेवनेसे कछु दुर्लभ नाहीं, जैनधर्मके प्रसादसे सिद्ध पद, अहमिंद्र पद इत्यादिके पद सब ही सुलभ हैं। जम्बूमालीका जीव अहमिंद्र पदसे ऐरावतक्षेत्रविषै मनुष्य होय, केवल उपाय, सिद्धपदकूं प्राप्त होवेंगे। अर मंदोदरीका पिता चारण मुनि होय महा ज्योतिकूं धरे अढाईद्वीपविषै कैलाश आदि निर्वाण क्षेत्रनिकी अर चैत्यालयनिकी वंदना करते भए। देवनिका है आगमन जहां। सो मय महामुनि, रत्नत्रयरूप आभूषण करि मंडित, महाधीर्यधारी पृथ्वीविषै विहार करै। अर मारीच मंत्री महामुनि स्वर्गविषै बडी ऋद्धिके धारी देव भये। जिनका जैसा तप तैसा फल पाया सीताके दृढ व्रतकरि पतिका मिलाप भया, जाकूं रावण डिगाय सक्या नाहीं। सीताका अतुल धैर्य अद्भुत रूप, महानिर्मल बुद्धि, भरतारविषै अधिक स्नेह, जो कहनेविषै न आवै। सीता महा गुणनि करि पूर्ण, शीलके प्रसादतै जगतविषै प्रशंसा योग्य भई। कैसी है सीता? एक निजपतिविषै है संतोष

जाके, भवसागरको तरणहारी, परम्पराय मोक्षकी पात्र जाकी साधु प्रशसा करै। गौतम स्वामी कहे है–हे श्रेणिक! जो स्त्री विवाहही नहीं करे, बालब्रह्मचर्य धारै, सो तो महाभाग्य ही है, अर पतिव्रतका व्रत आदरे, मनवचनकायकरि पर पुरुषका त्याग करे, तो यह व्रत भी परम रत्न है। स्त्रीकू स्वर्ग अर परम्पराय मोक्ष देवनेकू समर्थ है। शीलव्रत समान और व्रत नाहीं। शील भवसागरकी नाव है। राजा मय मंदोदरीका पिता राज्य अवस्थाविषै मायाचारी हुता, अर कठोर परणामी हुता तथापि जिनधर्मके प्रसादकरि रागद्वेष रहित हो अनेक ऋद्धिका धारक मुनि भया।

यह कथा सुन राजा श्रेणिक गौतमस्वामीकू पूछते भए–हे नाथ! मै इन्द्रजीतादिकका माहात्म्य सब सुन्या। अब राजा मयका माहात्म्य सुना चाहू हू। अर हे प्रभो! जो या पृथ्वीविषै प्रतिव्रता शीलवती है, निज भरतारविषै अनुरक्त है, वे निश्चयसे स्वर्ग मोक्षकी अधिकारिणी हैं, तिनकी महिमा मोहि विस्तारसू कहो। तब गणधर कहते भए–जे निश्चयकरि सीता समान पतिव्रता शीलकू धारण करे हैं ते अल्प भवनमें मोक्ष होय है। पतिव्रता स्वर्गही जाय परम्पराय मोक्ष पावै, अनेक गुणनिकर पूर्ण। हे राजन! जे मनवचनकायकरि शीलवती है, चित्तकी वृत्ति जिन्होने रोकी है, ते धन्य है। घोडनिमें, हाथीनिमें लोहेनिविषै, पाषाणविषै, वस्त्रनिविषै, जलविषै, वृक्षनिविषै, बेलनिविषै, स्त्रीनिविषै, पुरुषनिविषै बडा अन्तर है। सभी बेलनिमें न ककडी फल न कुम्हडा। वैसे ही सबही नारियोमें पतिव्रता न पाइए, अर सबही पुरुषनिमें विवेकी नाहीं। जे शीलरूप अंकुशकरि मनरूप माते हाथीकू वश करे ते पतिव्रता, सबही कुलविषै होय हैं। अर वृथा पतिव्रताका अभिमान किया तो कहा? जे जिनधर्मसे बहिर्मुख है ते मानरूप माते हाथीकू वश करिवे समर्थ नाहीं। वीतरागकी वाणीकरि निर्मल भया है चित्त जिनका ते ही मनरूप हस्तीकू विवेकरूप अंकुशकरि वशीभूत करि, दया शीलके मार्गविषै चलायवे समर्थ हैं। हे श्रेणिक! एक अभिमाना नामा स्त्री ताकी संक्षेपसे कथा कहिए है–सो सुन, यह प्राचीन कथा प्रसिद्ध है। एक धान्यग्रामनामा ग्राम, तहा नोदन नामा ब्राह्मण, ताके अभिमानानामा स्त्री, सो अग्निनामा ब्राह्मणकी पुत्री, माननी

नामा माताके उदरविषै उपजी, सो अति अभिमानकी धरहणहारी। सो नोवन नामा ब्राह्मण क्षुधा कर पीडित होय अभिमानाकू तज वई, सो गजवनविषै करूरुह नाम राजाकू प्राप्त भई। वह राजा पुष्पप्रकीण नगरका स्वामी, लपट, सो ब्राह्मणीकू रूपवती जान ले गया, स्नेहकर घरविष राखी। एक समय रातिविष तान राजाके मस्तकविषै चरणकी लात वई। प्रात समय सभाविष राजाने पडितनिकू पूछ्या—जान मेरा सिर पाव कर हता होय ताका कहा करना ? सब मूर्ख पडित कहते भए—हे देव ! ताका पाव छेवना अथवा प्राण हरना। ता समय एक हेमाक नामा ब्राह्मण राजाके अभिप्रायका वेत्ता कहता भया—ताके पावकी आभूषणादिकरि पूजा करनी। तब राजाने हेमाककू पूछी—हे पडित ! तुमने रहस्य कस जाना ? तब तान कही—स्त्रीके वतनिके तिहारे अधरनिविषै चिह्न वीखे, तात यह जानी स्त्रीके पावकी लागी। तब राजाने हेमाकको अभिप्रायका वेत्ता जान अपना निकट कपापात्र किया, बडी ऋद्धि वई। सो हेमाकके घरके पास एक मित्रयशानामा विधवा ब्राह्मणी महा दुखी अमोघसर नाम ब्राह्मणकी स्त्री ह सो रह। सो अपने पुत्रकू शिक्षा देती भई। भरतारके गुण चितार चितार कहती भई—हे पुत्र ! बालअवस्थाविषै जो विद्याका अभ्यास कर सो हेमाककी न्याई महाविभूतिकू प्राप्त होय। या हेमाकने बालअवस्थाविषै विद्याका अभ्यास किया सो अब याकी कीर्ति देख। अर तेरा बाप धनुषबाण विद्याविषै अति प्रवीण हुता ताके तुम सुपुत्र भए। आसू डार माताने ए कहे। ताके वचन सुन माताकू धीय बधाया, महा अभिमानका धारक यह श्रीवर्धित नामा पुत्र, विद्या सीखनके अर्थि व्याघपुर नगर गया। सो गुरुके निकट शस्त्र शास्त्र सब विद्या सीख्या। अर या नगरके राजा सुकातकी शीला नामा पुत्री ताहि ले निकस्या। तब कन्याका भाई सिहचन्द्र या ऊपर चढ्या सो या अकेलने शस्त्रविद्याके प्रभावकरि सिहचन्द्रकू जीत्या अर स्त्रीसहित माताके निकट आया। माताकू हर्ष उपजाया। शस्त्रकलाकरि याकी पृथ्वीविषै प्रसिद्ध कीर्ति भई। सो शस्त्रके बलकरि पोवनापुरके राजा करूरुहकू जीत्या अर व्याघपुरका राजा शीलाका पिता मरणकू प्राप्त भया। ताका पुत्र सिह

चन्द्र शत्रुनिने दबाया । सो सुरगके मार्ग होय अपनी रानीकू ले निकस्या, राज्यभ्रष्ट भया । पोदनापुरविषै अपनी बहिनका निवास जान तम्बोलीके लार पाननिकी झोली सिरपर धरे स्त्री सहित पोदनापुरके समीप आया । रात्रिकू पोदनापुरके बनविषै रह्या । ताकी स्त्री सपने डसी । तब यह ताहि काधे धर[1] जहा मय महा मुनि विराजे हुते—वे वज्रके थम्भ समान महा निश्चल कायोत्सर्ग धर, अनेक ऋद्धिके धारक, तिनकू भी सब औषधि ऋद्धि उपजी हुती, सो तिनके चरणारविंदके समीप सिंहचन्द्रने अपनी राणी डारी । सो तिनके ऋद्धिके प्रभावकरि राणी निर्विष भई । स्त्रीसहित मुनिके समीप तिष्ठै था, ता मुनिके दर्शनकू विनयदत्त नाम श्रावक आया ताहि सिंहचन्द्र मिल्या, अर अपना सब वृत्तात कह्या । तब तान जायकरि पोदनापुरके राजा श्रीवर्धितकू कह्या जो तिहारा स्त्रीका भाई सिंहचन्द्र आया है । तब वह शत्रु जान युद्धकू उद्यमी भया । तब विनयदत्तने यथाथत वृत्तात कह्या जो तिहारे शरण आया है तब ताहि बहुत प्रीति ऊपजी अर महाविभूतिसू सिंहचन्द्रके सन्मुख आया, दोऊ मिले, अति हर्ष उपज्या । बहुरि श्रीवर्धित मय मुनिकू पूछता भया—हे भगवान ! मैं मेरे अपने स्वजनोके पूर्वभव सुना चाहू हू । तब मुनि कहते भए—एक शोभापुरनामा नगर वहा भद्राचार्य दिगम्बरने चौमासविषै निवास किया सो अमलनामा नगरका राजा निरतर आचार्यके दर्शनको आवे । सो एक दिवस एक कोढिनी स्त्री, ताकी दुर्गन्ध आई । सो राजा पाव पयादा ही भाग अपने घर गया, ताकी दुर्गन्ध सह न सका । अर वह कोढिनी चैत्यालय दर्शनकरि भद्राचार्यके समीप श्राविकाके व्रत धारे, समाधिमरणकरि देवलोक गई । वहाते चयकर तेरी स्त्री शीला भई । अर वह राजा अमल ७०१

---

१ ज्ञानपीठ काशी द्वारा प्रकाशित पद्मपुराणमे स्त्री को सर्प द्वारा डसनेके बजाय राजा सिंहेन्द्र को सर्प ने डसा—ऐसा संस्कृत और हिन्दीमे वर्णन है । रानी ने कंधेपर लाकर मुनिराज के चरणों में राजा को लिटाया तथा मुनिराज के चरणो का स्पर्शकर पतिके शरीरका स्पर्श किया जिससे वह पुन जीवित हो गया । श्लोक निम्नप्रकार है—

१ महोरगेण सन्दष्टस्त देवी परिदेविनी । कृत्वा स्कन्धे परिप्राप्ता देश यत्र मय स्थित ॥ १८ ॥ [पर्व ८०]

२ पादौ मुने परामृश्य पत्युर्गात्र समास्पृशत । देवी तत परिप्राप्त सिंहेन्दुर्जीवित पुन ॥१८२॥ [पर्व ८०

अपने पुत्रकू राज्यभार सोप आप श्रावकके व्रत धारे, आठ ग्राम पुत्र प ले सतोष धरचा, शरीर तज देवलोक गया। वहासे चयकरि तू श्रीवर्धित भया।

अब तेरी माताके भव सुन—एक विदेशी क्षुधाकरि पीडित ग्रामविषै आय भोजन मागता भया। सो जब भोजन न मिला तब महा कोपकरि कहता भया कि म तिहारा ग्राम बालू गा। ऐसे कटुक शब्द कह निकस्या। दवयोगसे ग्रामविष आग लगी सो ग्रामके लोगनिने जानी ताने लगाई। तब क्रोधायमान होय दौडे अर ताहि ल्याय अग्निविष जराया सो महादुखकरि राजाकी रसोवणि भई। मरकरि नरकविष घोर वेदना पाई। तहासे निकसि तेरी माता मित्रयशा भई। अर पोदनापुरविषै एक गोवाणिज गहस्थ मरकरि तेरी स्त्रीका भाई सिहचन्द्र भया। अर वह भुजपत्रा ताकी स्त्री रतिवधना भई। पूव भवविष पशुओपर बोझ लादे थे सो या भवविष भार वह। ये सबके पूव जन्म कहकरि मय महा मुनि आकाश माग विहारकर गए अर पोदनापुरका राजा श्रीवर्धित सिहचन्द्रसहित नगरविषै गया। गौतम स्वामी कह ह—हे श्रेणिक! यह ससारकी विचित्र गति ह। कोईयक तो निधनते राजा होजाय अर कोईयक राजासे निधन हो जाय ह। श्रीवर्धित ब्राह्मणका पुत्र सो राज्यभ्रष्ट होय राजा होय गया। सिहचन्द्र राजाका पुत्र सो श्रीवर्धितके समीप आया। एक गुरुके निकट प्राणी धमका श्रवण कर, तिनविषै कोई समाधि मरणकरि सुगति पाव, कोई कुमरण करि दुगति पाव। कोई रत्ननिके भरे जहाज सहित समुद्र उलघ सुखसे स्थानक पहुँचे, कोउ समुद्रविष डूब, कोउकू चोर लूट लेय जावे। ऐसा जगतका स्वरूप विचित्र गति जान जे विवेकी ह ते दया, दान, विनय, वराग्य, जप, तप, इन्द्रियोका निरोध, शातता, आत्म—ध्यान तथा शास्त्राध्ययनकरि आत्म—कल्याण कर। ऐसे मय मुनिके वचन सुन राजा श्रीवर्धित अर पोदनापुरके बहुतलोक शातचित्त होय जिनधमका आराधन करते भए। यह मय मुनिका माहात्म्य जे चित्त लगाय पढ, सुन तिनकू बरियोकी पीडा न होय, सिह

व्याघ्रादि न हत, सर्पादि न डस ।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महा पद्मपुराण संस्कृतग्रन्थ ताकी भाषावचनिकाविषै सप्तमुनिका माहात्म्य वर्णन करनेवाला बानवेवा पर्व पूर्ण भया ॥ ९२ ॥

अथानन्तर लक्ष्मणके बडे भाई श्रीरामचन्द्र सर्वलोक समान लक्ष्मीकू मध्यलोकविषै भोगते भए, चन्द्र सूर्य समान है कांति जिनकी । अर इनकी माता कौशिल्या भरतार अर पुत्रके वियोगरूप अग्नि की ज्वालाकर शोककू प्राप्त भया है शरीर जाका । महिलके सातवें खण बैठी, सखियोंकरि मंडित अतिउदास आंसुनिकर पूर्ण हैं नेत्र जाके । जैसे गायको बच्चेका वियोग होय अर वह व्याकुल होय ता समान पुत्रके स्नेहविषै तत्पर, तीव्र शोकके सागरविषै मग्न, दशोंदिशाको ओर देखे । महिलके शिखरविषै तिष्ठता जो काग ताहि कहै—हे वायस! मेरा पुत्र राम आवै तो तोहि खीरका भोजन दू । ऐसे वचन कहकर विलाप करै । अश्रुपात करि किया है चातुर्मास जिसने । हाय वत्स! तू कहा गया? मैं तुझे निरंतर सुखसे लडाया था, तेरे विदेश भ्रमणकी प्रीति कहांसे उपजी? कहा पल्लव समान तेरे चरण कोमल कठोर पथविषै पीडा न पावै? महा गहन वनविषै कौन वृक्षके तले विश्राम करता होयगा? मैं मन्द भागिनी अत्यन्त दुखी, मुझे तजकर तू भाई लक्ष्मण सहित किस दिशाको गया? या भांति माता विलाप करै ता समय नारद ऋषि आकाश मार्ग विषै आए । पृथ्वीमें प्रसिद्ध, सदा अढाई द्वीप विषै भ्रमते ही रहैं, सिरपर जटा, शुक्ल वस्त्र पहिरे । ताकू समीप आवता जान कौशिल्याने उठकर ७०३
सन्मुख जाय नारदकू आदरसहित सिंहासन बिछाय सन्मान किया । तब नारद उस अश्रुपात सहित लोकवन्ती देख पूछते भए—हे कल्याणरूपिणी! तुम ऐसी दुःखरूप क्यों? तुमकू दुःखका कारण कहा? सुकौशल महाराजकी पुत्री, लोकविषै प्रसिद्ध राजा दशरथकी राणी, प्रशंसा योग्य श्रीरामचन्द्र मनुष्यनिविषै रत्न तिनकी माता, महासुन्दर लक्षणकी धरणहारी, तुमकू कौनने रुसाई? जो तिहारी आज्ञा

न माने सो दुरात्मा है । अबार ही ताका राजा दशरथ निग्रह करें । तब नारदकू माता कहती भई– हे देवर्षि ! तुम हमारे घरका वृत्तांत नहीं जानो हो तातैं कहो हो । अर तिहारा जैसा वात्सल्य या घरसू था सो तुम विस्मरण किया, कठोर चित्त होय गए । अब यहां आवना ही तज्या, अब तुम बात ही न बूझो । हे भ्रमणप्रिय ! बहुत दिननिविषै आए । तब नारदने कहा–हे माता ! धातुकीखंड द्वीपविषै पूर्व विदेहक्षेत्र, वहां सुरेन्द्ररमण नामा नगर, वहां भगवान तीर्थङ्कर देवका जन्मकल्याण भया सो इन्द्रादिक देव आए । भगवानको सुमेरुगिरि लेगए, अदभुत विभूतिकर जन्माभिषेक किया । सो देवाधिदेव सब पापके नाशनहारे तिनका अभिषेक मैं देख्या, जाहि देख धर्मकी बढवारी होय । वहां देवनिने आनन्दसू नृत्य किया । श्रीजिनेन्द्रके दर्शनविषै अनुरागरूप है बुद्धि मेरी, सो महामनोहर धातकी खण्डविषै तेईस वर्ष मैंने सुखसे व्यतीत किये । तुम मेरी मातासमान सो तुमकू चितार या जम्बूद्वीपके भरतक्षेत्रविषै आया । अब कईएक दिन इस मंडलहीविषै रहूंगा । अब मोहि सब वृत्तांत कहो । तिहारे दर्शनकू आया हूं । तब कौशल्याने सब वृत्तांत कहा । भामंडलका यहां आवना, अर विद्याधरनिका यहां आवना, अर भामंडलकू विद्याधरनिका राज्य, अर राजा दशरथका अनेक राजानि सहित वैराग्य, अर रामचन्द्रका सीता सहित अर लक्ष्मणके लार विदेशको गमन, बहुरि सीताका वियोग, सुग्रीवादिकका रामसू मिलाप, रावणसे युद्ध, लंकेशकी शक्तिका लक्ष्मणके लगना, बहुरि द्रोणमेघकी कन्याका तहां गमन–ऐती खबर हमकू है । बहुरि क्या भया सो खबर नाहीं । ऐसा कह महादुःखित होय अश्रुपात डारती भई, अर विलाप किया–हाय हाय ! पुत्र तू कहां गया ? शीघ्र अब मोसे वचन कह, मैं शोकके सागरविषै मग्न ताहि निकास । मैं पुण्यहीन तेरे मुख देखे बिना महा दुःखरूप अग्निसे दाहकू प्राप्त भई । मोहि साता देवो । अर सीता बालक, पापी रावण तोहि बंदीगृहविषै डारी, महा दुखसे तिष्ठती होयगी । निर्दई रावणने लक्ष्मणके शक्ति लगाई सो न जानिए जीवे है कै नाहीं ? हाय ! दोनो दुर्लभ पुत्र हो, हाय सीता ! तू पतिव्रता काहे दुःखकू प्राप्त भई ?

यह वृत्तात कौशल्याके मुख सुन नारद अति खेदखिन्न भया। बीण धरतीविषै डार दई, अर अचेत होय गया। बहुरि सचेत होय कहता भया—हे माता! तुम शोक तजहु, मैं शीघ्रही तिहारे पुत्रनिकी वार्ता क्षेम कुशलकी लाऊं हूं। मेरे सब बातविषै सामर्थ्य है। यह प्रतिज्ञाकर नारद बीणाकूं उठाय कांधे धरी, आकाश मार्ग गमन किया। पवन समान है वेग जाका। अनेक देश देखता लंकाकी ओर चाल्या। सो लंकाके समीप जाय विचारा—राम लक्ष्मणकी वार्ता कौन भांति जानिवेविषै आवै? जो राम लक्ष्मणकी वार्ता पूछिए तो रावणके लोकनिसे विरोध होय। तातें रावणकी वार्ता पूछिए तो योग्य है। रावणकी वार्ता कर उनकी वार्ता जानी जायगी। यह विचार नारद पद्म सरोवर गया। तहां अन्तःपुर सहित अंगद क्रीडा करता हुता। ताके सेवकनिको रावणकी कुशल पूछी। वे किंकर सुनकर क्रोधरूप होय कहते भए यह दुष्टतापस रावणका मिलापी है। याकूं अंगदके समीप ले गए जो रावणकी कुशल पूछे है। नारदने कहा मेरा रावणसे कछु प्रयोजन नाहीं। तब किंकरनिने कही तेरा कछु प्रयोजन नाहीं तो रावणकी कुशल क्यों पूछे था? तब अंगदने हँसकर कहा इस तापसकूं पद्मनाभिके निकट ले जावो। सो नारदको खींचकर लेचले। नारद विचारै है न जानिए कौन पद्मनाभि है? कौशल्याका पुत्र होय तो मोसे ऐसी क्यों होय? ये मोहि कहां लेजाय है, मैं संशयविषै पडा हूं, जिनशासनके भक्त देव मेरी सहाय करो। अंगदके किंकर याहि विभीषणके मन्दिर श्रीराम विराजे हुते तहां ले गए। श्रीराम दूरसे देख याहि नारद जान सिंहासनसे उठे अति आदर किया। किंकरनिसे कहा इनसे दूर जावो। नारद श्रीराम लक्ष्मणकूं देख अति हर्षित भया। आशीर्वाद देकर इनके समीप बैठा। तब राम बोले अहो क्षुल्लक! कहांसे आए? बहुत दिननिविषै आए हो, नीके हो? तब नारदने कहा तिहारी माता कष्टके सागरविषै मग्न है। सो वार्ता कहिवेकूं तिहारे निकट शीघ्र ही आया हूं। कौशल्या माता महासती, जिनमती, निरन्तर अश्रुपात डारै है। अर तुम बिना महा दुखी है। जैसे सिंही अपने बालकबिना व्याकुल होय तैसें अति व्याकुल भई विलाप करै है। जाका विलाप

सुन पाषाण भी द्रवीभूत होय। तुमसे पुत्र माताके आज्ञाकारी, अर तुम होते माता ऐसो कष्टरूप रहै—यह आश्चयकी बात! वह महागुणवती साक्ष सकारेविषै प्राणरहित होयगी। जो तुम ताहि न देखोगे तो तिहारे वियोगरूपसूर्यकर सूख जायगी। तात मोप कृपा कर उठहु, ताहि शीघ्र ही देखहु। या ससारविषै माता समान पदार्थ नाहीं। तिहारी दोनो मातानिके दुख करके ककई सुप्रभा सबही दुखी हैं। कौशल्या सुमित्रा दोनो मरणतुल्य होय रही है। आहार नींद सब गई। रातदिन आसू डारै है। तिनको स्थिरता तिहारे दर्शन होसू होय। जैसे कुरुचि विलाप करै तैसे विलाप करै है। अर सिर अर उर हाथोंते कूटै है। दोनो ही माता तिहारे वियोगरूप अग्निकी ज्वाला कर जरै है। तिहारे दर्शनरूप अमृत की धारकर उनका आताप निवारो। नारदके वचन सुन दोनो भाई मातानिके दुखकर अति दुखी भए। शस्त्र डार दिए, अर रुदन करने लगे। तब सकल विद्याधरनिने धीर्य बंधाया। राम लक्ष्मण नारदसू कहते भए—अहो नारद! तुमने हमारा बडा उपकार किया। हम दुराचारी माताकू भूल गए, सो तुम स्मरण कराया। तुम समान हमारे और वल्लभ नाहीं। वही मनुष्य महा पुण्यवान है जो माताके विनयविषै तिष्ठै हैं, दास भए माताकी सेवा करें। जे माताका उपकार विस्मरण करै है वे महा कृतघ्न हैं। या भांति माताके स्नेहकरि व्याकुल भया है चित्त जिनका, दोनो भाई नारदकी अति प्रशंसा करते भए।

अथानन्तर श्रीराम लक्ष्मणने ताही समय अति विभ्रम चित्त होय विभीषणकू बुलाया। अर भामण्डल सुग्रीवादि पास बैठे है। दोऊ भाई विभीषणसू कहते भए—हे राजन! इन्द्रके भवन समान तेरा भवन। तहां हम दिन जाते न जाने। अब हमारे माताके दर्शनकी अति वांछा हैं, हमारे अंग अति तापरूप हैं, सो माताके दर्शनरूप अमृतकर शांतताकू प्राप्त होवें। अब अयोध्या नगरीके देखिवेकू हमारा चित्त प्रवरतया है। वह अयोध्या भी हमारी दूजी माता है। तब विभीषण कहता भया—हे स्वामिन! जो आज्ञा करोगे सो ही होयगा। अबारही अयोध्याकू दूत पठावें जो तिहारी शुभवार्ता मातानिसू कहे अर तिहारे आगमकी वार्ता कहे जो मातावोंके सुख होय अर तुम कृपाकर षोडश दिन

यहां ही विराजो । हे शरणागत प्रतिपालक ! मोसे कृपा करो, ऐसा कह अपना मस्तक रामके चरण तले धरया । तब राम लक्ष्मणने प्रमाण करी ।

अथानन्तर भले भले विद्याधर अयोध्याकू पठाए । सो दोनो माता महिलपर चढीं दक्षिण दिशा की ओर देख रही हुतीं । सो दूरसे विद्याधरनिकू देख कौशल्या सुमित्रासे कहती भई--हे सुमित्रा ! देख, दोय यह विद्याधर पवनके प्रेरे मेघ तुल्य शीघ्र आव है । सो ये श्रावक ! अवश्य कल्याणकी वार्ता कहेंगे । यह दोनो भाइयोके भेजे आव हैं । तब सुमित्रान कहा तुम जो कहो हो सो ही होय । यह वार्ता दोऊ मातानिमें होय है तब ही विद्याधर पुष्पनिकी वर्षा करते आकाशसे उतरे, अतिहर्षके भर भरत के निकट आए । राजा भरत अति प्रमोदका भरया इनका बहुत सन्मान करता भया, अर यह प्रणाम कर अपने योग्य आसनपर बठे, अति सुन्दर ह चित्त जिनका यथावत वृत्तात कहते भए ।

हे प्रभु ! राम लक्ष्मणने रावणकू हता, विभीषणकू लकाका राज्य दीया, श्रीरामकू बलभद्रपद अर लक्ष्मणकू नारायणपद प्राप्त भया, चक्ररत्न हाथमें आया । तिन दोऊ भाइयोके तीन खडका परम उत्कृष्ट स्वामित्व भया । रावणके पुत्र इन्द्रजीत मेघनाद, भाई कुम्भकर्ण जो बंदीगृहमें थे सो श्री रामने छोडे । तिन्होने जिनदीक्षा धर निर्वाण पद पाया । अर गरुडेन्द्र श्रीराम लक्ष्मणसे देशभूषण, कुलभूषण मुनिके उपसर्ग निवारिवेकरि प्रसन्न भए थे सो जब रावणत युद्ध भया उसही समय सिंह-बाण अर गरुडबाण दिये । इस भाति राम लक्ष्मणके प्रतापके समाचार सुन भरत भूप अति प्रसन्न भए, ताम्बूल सुगन्धादिक तिनको दिये अर तिनकू लेकर दोनो माताओंके समीप भरत गया । राम लक्ष्मण की माता पुत्रोंकी विभूतिकी वार्ता विद्याधरोंके मुखसे सुनि आनन्दकू प्राप्त भई । ताही समय आकाशके मार्ग हजारों वाहन विद्यामई स्वर्ण रत्नादिकके भर आए । अर मेघमालाके समान विद्याधरनिके समूह अयोध्यामें आये, जैसे देवनिके समूह आवें । ते आकाशविषै तिष्ठे नगरविषै नाना रत्नमई वृष्टि करते भए । रत्ननिके उद्योत कर दशो दिशाविषै प्रकाश भया । अयोध्याविषै एक एक गृहस्थके घर पर्वत

समान सुवर्ण रत्ननिकी राशि करी। अयोध्याके निवासी समस्त लोक ऐसे अति लक्ष्मीवान किए मानो स्वर्गके देव ही हैं। अर नगर विषै यह घोषणा फेरी कि जाके जिस वस्तुकी इच्छा हो सो लेवो। तब सब लोक आय कर कहते भए—हमारे घरमें अटूट भण्डार भरे हैं, किसी वस्तकी बांछा नाहीं। अयोध्याविषै दरिद्रताका नाश भया। राम लक्ष्मणके प्रतापरूप सूर्य करि फूल गए हैं मुख कमल जिनके, ऐसे अयोध्याके नर नारी प्रशंसा करते भए। अर अनेक सिलावट विद्याधर महा चतुर आयकर रत्न स्वर्णमई मन्दिर बनावते भए। अर भगवानके चैत्यालय महामनोग्य अनेक बनाये मानो विंध्याचलके शिखर ही हैं। हजारनि स्तम्भनिकर मंडित नाना प्रकारके मंडप रचे, अर रत्ननिकरि जडित तिनके द्वार रचे। तिन मंदिरनि पर ध्वजानिकी पंक्ति फरहरे है। तोरणनिके समूह तिन कर शोभायमान जिन मंदिर रचे गिरिनिके शिखर समान ऊंचे, तिनविषै महा उत्सव होत भए। अनेक आश्चर्य कर भरी अयोध्या होती भई, लंकाकी शोभाकूं जीतनहारी। संगीतकी ध्वनि कर दशो दिशा शब्दायमान भई, कारी घटा समान वन उपवन सोहते भए। तिनविषै नाना प्रकारके फल फूल, तिन पर भ्रमर गुंजार करे हैं। समस्त दिशानिविषै वन उपवन ऐसे सोहते भए मानो नंदनवन ही है। अयोध्या नगरी बारह योजन लम्बी, नव योजन चौडी अतिशोभायमान भासती भई। सोलह दिनमें विद्याधर शिलावटनिने ऐसी बनाई जाका सौ वर्ष तक वर्णन भी न किया जाय। तहां वापीनिके रत्नस्वर्णके सिवान, अर सरोवरनिके रत्नके तट, तिनविषै कमल फूल रहे हैं, ग्रीष्मविषै सदा भरपूरही रहें। तिनके तट, भगवानके मंदिर, अर वृक्षनिकी पंक्ति शोभाकूं धरं, स्वर्गपुरी समान नगरी निरमापी। ७०८
सो बलभद्र नारायण लंकासूं अयोध्याकी ओर गमनकूं उद्यमी भए। गौतमस्वामी कहे हैं—हे श्रेणिक! जिस दिनसे नारदके मुखसे राम लक्ष्मणने मातानिकी वार्ता सुनी ताही दिनसे सब बात भूल गए। दोनों मातानिहीका ध्यान करते भए। पूर्व जन्मके पुण्य करि ऐसे पुत्र पाइये। पुण्यके प्रभाव करि सर्व स्तुतिकी सिद्धि होवै है। पुण्य कर क्या न होय? इसलिए हे प्राणी हो! पुण्यविषै तत्पर होहु, जाकरि

शोकरूप सूर्यका आताप न होय।

इति श्रीरविषेणाचार्य विरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रंथ ताकी भाषावचनिकाविषै अयोध्या नगरीका वर्णन करनेवाला इक्यासीवां पर्व पूर्ण भया ॥ ८१ ॥

अथानन्तर सूर्य उदय होते ही बलभद्र नारायण पुष्पकनामा विमानविषै चढकर अयोध्याकूं गमन करते भए। नानाप्रकारके वाहननिपर आरूढ विद्याधरनिके अधिपति, राम लक्ष्मणकी सेवाविषै तत्पर, परिवार सहित संग चाले। छत्र अर ध्वजानिकरि रोकी है सूर्यकी प्रभा जिन्होंने, आकाशमें गमन करते दूरसे पृथ्वीकूं देखते जाय हैं। पृथ्वी गिरि नगर वन उपवनादि कर शोभित लवण समुद्र कूं उलंघनकरि विद्याधर हर्षके भरे लीला सहित गमन करते आगे आए। कैसा है लवण समुद्र ? नाना प्रकारके जलचरजीवनिके समूहकरि भरया है। रामके समीप सीता सती अनेक गुणनिकरि पूर्ण मानो साक्षात लक्ष्मी ही है सो सुमेरु पर्वतकूं देखकरि रामकूं पूछती भई—हे नाथ! यह जम्बूद्वीपके मध्य अत्यन्त मनोज्ञ स्वर्ण कमल समान कहा दीखै है ? तब राम कहते भए हे देवी! यह सुमेरु पर्वत है। जहां देवाधिदेव श्रीमुनिसुव्रतनाथका जन्माभिषेक इन्द्रादिक देवनिने किया। कैसे हैं देव ? भगवानके पांचो कल्याणकविषै जिनके अति हर्ष है। यह सुमेरु रत्नमई ऊंचे शिखरनिकरि शोभित जगतविषै प्रसिद्ध है। अर बहुरि आगे आयकर कहते भए यह दंडकवन है जहां लंकापतिने तुमकूं हरी अर अपना अकाज किया। या वन विषै चारण मुनिकूं हमने पारणा कराया था। याके मध्य यह सुन्दर नदी है। अर हे सुलोचने! यह वंशस्थल पर्वत जहां देशभूषण कुलभूषणका दर्शन किया ताही समय मुनिनकूं केवल उपज्या। अर हे सौभाग्यवती! कल्याणरूपिणी! यह बालखिल्यका नगर जहां लक्ष्मणने कल्याणमाला पाई। अर यह दशांग नगर जहां रूपवतीका पिता वज्रकर्ण परम श्रावक राज्य करे। बहुरि जानकी पृथ्वीपतिकूं पूछती भई—हे कांत! यह नगरी कौन जहां विमान समान घर इन्द्रपुरी

से अधिक शोभ ह ? अबतक यह पुरी मैने कबहू न देखी। ऐसे जानकीके वचन सुन जानकीनाथ अवलो कनकरि कहते भए–हे प्रिये! यह अयोध्यापुरी विद्याधर सिलावटोने बनाई है लकापुरीको ज्योतिकी जीतनहारी।

बहुरि आगे आए। तब रामका विमान सूयके विमान समान देख,भरत महा हस्ती पर चढ़े,अति आनद के भरे, इन्द्र समान विभूतिकरि युक्त, सम्मुख आए। सवदिशा विमाननिकर आच्छादित देखी। भरत कू आवता देख राम लक्ष्मणने पुष्पक विमान भूमिविष उतारा। भरत गजसे उतर निकट आया, स्नेहका भरा दोऊ भाईनिकू प्रणाम करि अघपाद्य करता भया। अर ये दोनो भाई विमानसे उतरि भरतसू मिले, उरसे लगाय लिया, परस्पर कुशल वार्ता पूछी। बहुरि भरतकू पुष्पक विमानविष चढाय लीया, अर अयोध्याविष प्रवेश किया। अयोध्या रामके आगमनकरि अति सिगारी ह, अर नाना प्रकारकी ध्वजा फरहरे ह। नानाप्रकारके विमान अर नानाप्रकारके रथ, अनेक हाथी, अनेक घोडे तिनकरि मागमें अवकाश नाहीं। अनेक प्रकार वादित्रनिके समूह बाजते भए, शख, झाझ, भेरी, ढोल, धूकल, इत्यादि वादित्रोका कहा लग वणन करिए,महा मधुर शब्द होते भए। ऐसे ही वादित्रोके शब्द, ऐसी ही तुरगोकी हींस ऐसी ही गजोकी गजना, सामन्तोके अट्टहास, मायामई सिह व्याघ्रादिकके शब्द,ऐसे ही वीणा बासुरीनिके शब्द तिनकर दशोदिशा व्याप्त भई। बन्दीजन विरद बखाने है, नत्यका रिणी नत्य कर ह, भाड नकल कर ह,नट कला कर ह। सूयके रथ समान रथ तिनके चित्राकार विद्याधर मनुष्य पशुनिके नाना शब्द, सो कहा लग वणन एरिए ? विद्याधरनिके अधिपतिनिने परम शोभा करी। दोनो भाई महा मनोहर अयोध्याविष प्रवेश करते भए। अयोध्या नगरी स्वगपुरी समान, राम लक्ष्मण इन्द्र प्रतीन्द्र समान, समस्त विद्याधर देव समान, तिनका कहा लग वणन करिए। श्रीरामचन्द्रकू देख प्रजारूप समुद्रविष आनन्दकी ध्वनि बढती भई। भले २ पुरुष अघ्यपाद्य करते भए, सोई तरग भई। पैड पडविष जगतकरि पूज्यमान दोनो वीर महाधीर तिनको समस्त जन आशीर्वाद देत भए–

पद्म पुराण ७११

हे देव ! जयवंत होवो, वृद्धिकू प्राप्त होवहु, चिरजीव होवहु। नादो, विरधो। या भांति आसीस देते भए। अर अति ऊँचे विमान समान मन्दिर तिनके शिखरविषै तिष्ठती सुन्दरी, फूल गए है नेत्रकमल जिनके, वे मोतिनिके अक्षत डारती भई। सम्पूर्ण पूर्णमासीके चन्द्रमासमान राम कमलनेत्र, अर वर्षाकी घटा समान लक्ष्मण, शुभ लक्षण तिनके देखिवेकू नर नारी अनुरागी भए। अर समस्त काय तजि झरोखोविषै बैठी नारीजन निरखे है सो मानो कमलोके वन फूल रहे है। अर स्त्रीनिके परस्पर संघट्टकर मोतिनके हार टूटे, सो मानो मोतिनकी वर्षा होय है। स्त्रीनिके मुखसे ऐसी ध्वनि निकसी—ये श्रीराम जाके समीप राजा जनककी पुत्री सीता बैठी, जाकी माता राणी विदेहा है, अर श्रीरामने साहसगति विद्याधर मारा—वह सुग्रीवका आकार धर आया हुता, विद्याधरनिविषै दैत्य कहावै। अर यह लक्ष्मण रामका लघुवीर, इन्द्र तुल्य पराक्रम, जानें लंकेश्वरकू चक्रकर हता। अर यह सुग्रीव जाने रामसू मित्रता करी। अर भामंडल सीताका भाई जिसको जन्मसू ही देव हर लेगया हुता, बहुरि दयाकर छाड्या सो राजा चन्द्रगतिके पल्या, आकाशसू वनविषै गिरा, राजाने लेकर राणी पुष्पवती कू सौंप्या। देवोने काननविषै कुण्डल पहिराकर आकाशसे डाल्या सो कुण्डलकी ज्योतिकर चन्द्रसमान भास्या तातै भामण्डल नाम धरया। अर राजा चन्द्रोदयका पुत्र विराधित, अर यह पवनका पुत्र हनुमान कपिध्वज। या भांति आश्चर्यकर युक्त नगरकी नारी वार्ता करती भई।

अथानन्तर राम लक्ष्मण राजमहिलविषै पधारे। मन्दिरके शिखर तिष्ठती दोनो माता पुत्रनिके स्नेहविषै तत्पर, जिनके स्तनसे दुग्ध झरे, महा गुणनिकी धरणहारी कौशिल्या, सुमित्रा अर केकई, सुप्रभा चारो माता मंगलविषै उद्यमी पुत्रोके समीप आई। राम लक्ष्मण पुष्पक विमानसे उतरि मातानिसू मिले। माताओकू देख हर्षकू प्राप्त भए, कमल समान नेत्र दोनो भाई लोकपालसमान हाथ जोड, नम्रीभूत होय, अपनी स्त्रियोसहित मातानिकू प्रणाम करते भए। वे चारो ही माता अनेक प्रकार आसीस देती भई। तिनकी असीस कल्याणकी करणहारी है। अर चारो ही माता राम लक्ष्मण ७११

को उरसे लगाय परम सुखकू प्राप्त भई । उनका सुख वे ही जाने, कहिवेविषै न आवे । बारम्बार उरसे लगाय सिरपर हाथ धरती भई । आनन्दके अश्रुपात करि पूर्ण है नेत्र जिनके, परस्पर माता पुत्र कुशलक्षेम सुख दुखकी वार्ता पूछि परम संतोषकू प्राप्त भए । माता मनोरथ करती हुती । सो हे श्रेणिक ! बाछासे अधिक मनोरथ पूर्ण भए । वे माता योधावोकी जननहारी, साधओकी भक्त, जिनधर्म विषै अनुरक्त, सुन्दरचित्त, बेटावोकी बहू सकडो तिनको देखि चारो ही अति हर्षित भई । अपने योधा पुत्र तिनके प्रभाव करि पूर्व पुण्यके उदयकरि अति महिमा संयुक्त जगतविषै पूज्य भई । राम लक्ष्मणका सागरापर्यंत कंटक रहित पृथ्वीविषै एक छत्र राज्य भया । सबपर यथेष्ट आज्ञा करते भए । राम लक्ष्मणका अयोध्याविषै आगमन अर माताओसे तथा भाइयोसे मिलाप—यह अध्याय जो पढे, सुने, शुद्ध है बुद्धि जाकी, सो पुरुष मनवांछित सम्पदाकू पावे, पूर्ण पुण्य उपार्जे । शुभमति एक ही नियम दृढ होय भावनकी शुद्धतासे करे तो अतिप्रतापको प्राप्त होय, पृथ्वीमें सूर्य समान प्रकाशकू करे । तातै अव्रत तज नियमादिक धारण करो ।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महा पद्मपुराण संस्कृत ग्रंथ ताकी भाषावचनिकाविषै अयोध्या विषै राम लक्ष्मण का आगमन वर्णन करनेवाला बियासीवा पर्व पूर्ण भया ॥ ८२ ॥

———————

अथानन्तर राजा श्रेणिक नमस्कार कर गौतम गणधरकू पूछता भया, हे देव ! श्रीराम लक्ष्मण की लक्ष्मीका विस्तार सुननेकी मेरे अभिलाषा है । तब गौतमस्वामी कहते भए—हे श्रेणिक ! राम लक्ष्मण भरत शत्रुघन इनका वर्णन कौन करि सके ? तथापि संक्षेपसे कहूं हूं । राम लक्ष्मणके विभव का वर्णन—हाथी घरके बियालीस लाख, अर रथ एते ही, घोडे नौ कोटि, प्यादे ब्यालीस कोटि, अर तीन खण्डके देव विद्याधर सेवक रामके रत्न चार—हल, मूशल, रत्नमाला गदा, अर लक्ष्मणके सात संख, चक्र, गदा, खड्ग, दण्ड, नागशय्या, कौस्तुभमणि । राम लक्ष्मण दोनो ही वीर महाधीर धनुष

धारी, अर तिनका घर लक्ष्मीका निवास, इन्द्रके भवन तुल्य ऊचे दरवाजे, अर चतुश्शाल नामा कोट, महा पर्वतके शिखर समान ऊंचा, अर वैजयन्ती नामा सभा महामनोज्ञ, अर प्रसादहनामा अत्यन्त उत्तग दशो दिशाका अवलोकनका गृह, अर विन्ध्याचलपर्वत सारिखा वर्धमानक नामा नृत्य देखिवेका गृह, अर अनेक सामग्रीसहित कार्य करनेका गृह, अर कूकडेके अडे समान महा अद्भुत शीतकालविषै सोवनेका गर्भगृह, अर ग्रीष्मविषै दुपहरीके विराजनेका धारा मडपगृह, इकथम्भा, महामनोहर, अर राणियोके घर रत्नमई, महा सुन्दर, दोनो भाइयोकी सोयवेकी शय्या, जिनके सिंहोके आकार पाए, पद्मरागमणिके अति सुन्दर। अम्भोदकाड नामा विजुरीकासा चमत्कार धरे वर्षा ऋतुविषै पौढवेका महिल, अर महाश्रेष्ठ उगते सूर्य समान सिंहासन, अर चन्द्रमा तुल्य उज्ज्वल चमर, अर निशाकर समान उज्वल छत्र, अर महा सुन्दर विषमोचक नाम पावडी तिनके प्रभावसे सुखसे आकाशविषै गमन कर, अर अमोलिक वस्त्र, अर महा दिव्य आभरण, अभेद्य बक्तर, महामनोहर मणियोके कुण्डल, अर अमोघ, गदा, खडग, कनक बाण अनेक शस्त्र, महासुन्दर महारणके जीतनहारे, अर पचास लाख हल, कोटिसे अधिक गाय, अक्षय भण्डार, अर अयोध्या आदि अनेक नगर जिनविषै न्यायकी प्रवृत्ति, प्रजा सब सुखी, सम्पदाकर पूर्ण, अर महा मनोहर वन उपवन नानाप्रकार फल पुष्पोकर शोभित, अर महा सुन्दर स्वर्ण रत्नमई सिवाणोकर शोभित क्रीडा करिवे योग्य वापिका, अर पुर तथा ग्रामो विषै लोक अति सुखी, जहा महिल अति सुन्दर। अर किसाणोको किसी भातिका दुख नाहीं, जिनके गाय, भैसोके समूह, सब भातिके सुख। अर लोकपालो जैसे सामत अर इन्द्रतुल्य विभवके धरणहारे महातेजवत अनेक राजा सेवक। अर रामके स्त्री आठहजार, अर लक्ष्मणके स्त्री देवागना समान सोलह हजार, जिनके समस्त सामग्री समस्त उपकरण मनवाछित सुखके देनेहारे। श्रीरामने भगवान के हजारो चैत्यालय कराए जैसे हरिषेण चक्रवर्तीने कराए थे। वे भव्यजीव सदापूजित महाऋद्धिके निवास देश ग्राम नगर वन गृह गली सब ठौर ठौर जिनमन्दिर करावते भए, सदा सर्वत्र धर्मकी कथा,

पद्म
पुर
७१५

लोक अतिसुखी, सुकोशल देशके मध्य इन्द्रपुरी तुल्य अयोध्या, जहा अति उतग जिनमदिर जिनका वणन किया न जाय। अर क्रीडा करवेके पवत मानो देवोके क्रीडा करिवेके पवत हैं,प्रकाशकर मडित मानो शरदके बादर ही ह। अयोध्याका कोट अति उतग,समुद्रकी वेदिकातुल्य, महा शिखरकर शोभित, स्वणरत्नोका समूह अपनी किरणोकर प्रकाश किया ह आकाशविष जिसने, जिसकी शोभा मनसे भी अगोचर, निश्चयसेतो यह अयोध्या नगरी पवित्र मनुष्योकरि भरी सदा ही मनोग्य हुती। अब श्री रामचन्द्रने अति शोभित करी। जस कोई स्वग सुनिये ह जहा महा सम्पदा ह, मानो राम लक्ष्मण स्वगसे आए। सो मानो सव सम्पदा ले आए। आगे अयोध्या हुती तात रामके पधार अति शोभाय मान भई। पुण्यहीन जीवोको जहाका निवास दुलभ, अपने शरीरकर, तथा शुभ लोकोकर, तथा स्त्री धनादि कर रामचन्द्रने स्वग तुल्य करी। सव ठौर रामका यश, परन्तु सीताके पूर्व कमके दोषकर मूढ लोग यह अपवाद कर–देखो विद्याधरोका नाथ रावण उसने सीता हरी–सो राम बहुरि ल्याये, अर गहविष राखी। यह कहा योग्य ? राम महा ज्ञानी, बडे कुलीन, चक्री, महा शूरवीर, तिनके घर विष जो यह रीति तो और लोकोको क्या बात ? इस भाति सब जन वार्ता कर।

अथानन्तर स्वग लोकक् लज्जा उपजावें ऐसी अयोध्यापुरी तहा भरत इन्द्रसमान भोगनिकर भी रति न मानते भए। अनेक स्त्रीनिके प्राणवल्लभ सो निरन्तर राज्य लक्ष्मीसे उदास, सदा भोगोकी निंदा ही कर। भरतका मन्दिर अनेक मन्दिरनिकर मण्डित, नानाप्रकारके रत्ननिकर निर्मापित, ७१४
मोतिनिकी मालाकर शोभित, फूल रहे ह वक्ष जहा, अनेक आश्चयका भरा, सब ऋतुके विलासकर युक्त, जहा वीण मदगादिक अनेक वादित्र बाज, देवागना समान अतिसुन्दर स्त्रीजनोकर पूण, जाके चौगिरद मदोन्मत्त हाथी गाज, श्रेष्ठ तुरग हींस, गीत नृत्य वादित्रनिकरि महामनोहर, रत्नोके उद्योत करि प्रकाशरूप, महारमणीक क्रीडाका स्थानक, जहा देवोको रुचि उपज, परन्तु भरत ससारसे भय-भीत, अति उदास, उसे तहा रुचि नाहीं–जसे पारधीकर भयभीत जो मग सो किसी ठौर विश्राम न

लहै। भरत ऐसा विचार कर कि म यह मनुष्य देह महा कष्टसे पाई सो पानीके बुदबुदावत क्षणभगुर, अर यह यौवन झागोके पु ज समान अति असार दोषोका भरा, अर ये भोग अति विरस। इनविषै
 सुख नाहीं। यह जीतव्य स्वप्न समान, अर कुटुम्बका सम्बन्ध जस वृक्षनिपर पक्षियोका मिलाप रात्रि
 कू होय प्रभात ही दशो दिशाकू उड जावें ऐसा जान जो मोक्षका कारण धम न कर सो जराकर
 जजरा होय शोकरूप अग्निकर जर। यह नव यौवन मूढोकू वल्लभ, याविषै कौन विवेकी राग करे? कदाचित न कर। यह अपवादके समूहका निवास, सध्याके उद्योत समान विनश्वर, अर यह शरीर-रूपी यन्त्र नाना व्याधिके समूहका घर पिताके वीय माताके रुधिरसे उपजा, याविषै कहा रति? जसे ई धनकर अग्नि तप्त न होय, अर समुद्र जलसे तप्त न होय तस इन्द्रियनिके विषयनिकर तप्ति न होय। यह विषय अनादिसे अनन्तकाल सेये परन्तु तप्तिकारी नाहीं। यह मूढ जीव कामविषै आसक्त भला बुरा न जान पतग समान विषयरूप अग्निविषै पडे, पापी महा भयकर दु खकू प्राप्त होय। यह स्त्रीनिके कुच मासके पिण्ड, महावीभत्स गलगड समान तिनविषै कहा रति? अर स्त्रीनिका मुखरूप बिल, दतरूप कीडोकर भरा, ताम्बूलके रसकरि लाल छुरीके घाव समान, ताविषै कहा शोभा? अर स्त्रीनिकी चेष्टा वायु विकार समान विरूप, उन्मादकर उपजी, उसविषै कहा प्रीति? अर भोग रोग समान ह, महा खेदरूप दु खके निवास, इनविषै कहा विलास? अर यह गीत वादित्रोके नाद रुदन समान, तिनविषै कहा प्रीति? रुदनकर भी महल गुमट अर गानकर भी गाजें। नारियोका शरीर मल मूत्रादिककरि पूण, चमकर वेष्टित। याके सेवनविषै कहा सुख होय? विष्टाके कुम्भ तिनका
सयोग अतिवीभत्स अति लज्जाकारी। महा दु खरूप नारियोके भोग उनविषै मूढ सुख मानै। देवनिके भोग इच्छा उत्पन्न होते ही पूण होय तिनकरि भी जीव तप्त न भया तो मनुष्योके भोगोकरि कहा तृप्त होय? जसै दूभकी अणीपर जो ओसकी बूद ताकर कहा तष्णा बुझ? अर जसे ईंधनका बेचनहारा सिरपर भार लाय दुखी होय तसे राज्यके भारका धरणहारा दुखी होय। हमारे बडेनिविषै एक

राजा सौदास उत्तम भोजनकर तृप्त न भया। अर पापी अभक्ष्यका आहारकरि राज्यभ्रष्ट भया। जैसे गंगाके प्रवाहविषै मांसका लोभी काग मृतक हाथीके शरीर चूसता तृप्त न भया, समुद्रविषै डूब मुवा, तैसे यह विषयाभिलाषी भवसमुद्रविषै डूबै है। यह लोक मींडक समान मोहरूप कीचविषै मग्न, लोभरूप सर्पके ग्रसे नरकविषै पडे हैं। ऐसे चिन्तवन करते शांतचित्त भरतको कईएक दिवस अति विरससे बीते। जैसे सिंह महा समर्थ पींजरेविषै पडा खेदखिन्न रहे, ताके वनविषै जायवेकी इच्छा, तैसे भरत महाराजके महाव्रत धारिवेकी इच्छा। सो घरविषै सदा उदास ही रहैं। महाव्रत सब दुःख का नाशक। एक दिवस वह शांतचित्त घर तजिवेको उद्यमी भया। तब केकईके कहेसे राम लक्ष्मण ने थाम्भा, अर महा स्नेहकर कहते भए, हे भाई! पिता वैराग्यकू प्राप्त भए, तब तोहि पृथ्वीका राज्य दिया, सिंहासन पर बैठाया सो तू हमारा सब रघुवंशियोंका स्वामी है, लोकका पालन कर। यह सुदर्शनचक्र, यह देव अर विद्याधर तेरी आज्ञाविषै हैं। या धराको नारी समान भोग। मैं तेरे सिर पर चन्द्रमा समान उज्ज्वल छत्र लिये खडा रहूं। अर भाई शत्रुघ्न चमर ढारे, अर लक्ष्मण सा सुन्दर तेरे मंत्री, अर तू हमारा वचन न मानेगा तो मैं बहुरि विदेश उठ जाऊंगा, मृगोंकी न्याईं वन उपवनविषै रहूंगा। मैं तो राक्षसोंका तिलक जो रावण ताहि जीत तेरे दर्शनके अर्थ आया। अब तू निःकंटक राज्य कर। पीछे तेरे साथ मैं भी मुनिव्रत आदरूंगा। इस भांति महा शुभचित्त श्रीराम भाई भरतसूं कहते भए।

तब भरत महानिस्पृह विषयरूप विषसे अतिविरक्त कहता भया—हे देव! मैं राज्य सम्पदा तुरत ही तजा चाहूं हूं, जिसको तजकरि शूरवीर पुरुष मोक्ष प्राप्त भए। हे नरेन्द्र! अर्थ काम महा दुःख के कारण, जीवोंके शत्रु, महापुरुष करि निंद्य हैं तिनको मूढ जन सेवैं हैं। हे हलायुध! यह क्षणभंगुर भोग तिनमें मेरी तृष्णा नाहीं। यद्यपि स्वर्ग लोक समान भोग तुम्हारे प्रसाद करि अपने घरमें हैं, तथापि मुझे रुचि नाहीं। यह संसार सागर महा भयानक है, जहां मृत्युरूप पातालकुण्ड महा विषम हैं,

अर जन्मरूप कल्लोल उठ हैं, अर राग द्वेषरूप नाना प्रकारके भयकर जलचर ह, अर रति अरतिरूप क्षार जलकर पूर्ण ह। जहा शुभ अशुभ रूप चोर विचर है। सो मै मुनिव्रतरूप जहाजविष बैठकरि ससारसमुद्रकू तिरा चाहू हू। हे राजेन्द्र! म नानाप्रकार योनिविषै अनन्त काल जन्म मरण किए, नरक निगोदविष अनन्त कष्ट सहे, गर्भ वासाविविषै खेदखिन्न भया। यह वचन भरतके सुन बडे बडे राजा आखनिविष आसू डारते भए। महा आश्चर्यकू प्राप्त होय गदगद वाणीसे कहते भए—हे महाराज! पिताके वचन पालो, कईयक दिन राज्य करो। अर तुम इस राजलक्ष्मीकू चचल जान उदास भए हो तो कईएक दिन पीछे मुनि हूजियो। अबार तो तुम्हारे बडे भाई आए हैं तिनको साता देहु। तब भरतने कही मै तो पिताके वचन प्रमाण बहुत दिन राज्यसम्पदा भोगी, प्रजाके दुख हरे, पुत्रकी न्याई प्रजाका पालन किया, दान पूजा आदि गहस्थके धर्म आदरे, साधुवोकी सेवा करी। अब जो पिता ने किया सो मै किया चाहू हू। अब तुम इस वस्तुकी अनुमोदना क्यो न करो? प्रशसायोग्य वस्तुविष कहा विवाद? हे श्रीराम! हे लक्ष्मण! तुमने महा भयकर युद्धमें शत्रुवोको जीत अगले बलभद्र वासुदेवकी न्याई लक्ष्मी उपार्जी, सो तुम्हारे लक्ष्मी और मनुष्योकसी नाहीं। तथापि राजलक्ष्मी मुझे न रुचै, तृप्ति न करै, जसे गगादि नदिया समुद्रकू तृप्त न करै। इसलिए म तत्वज्ञानके मार्गविष प्रवरतूगा। ऐसा कहकरि अत्यन्त विरक्त होय राम लक्ष्मणकू विना पूछे ही वैराग्यकू उठ्या जैसे आग भरत चक्रवर्ती उठे। यह मनोहर चालका चलनहारा मुनिराजके निकट जायवेकू उद्यमी भया। तब अति स्नेहकरि लक्ष्मणने थाभा, भरतके करपल्लव ग्रहे। लक्ष्मण खडा, ताही समय माता केकई आसू डारती आई अर रामकी आज्ञासे दोऊ भाईनिकी राणी सबही आई। लक्ष्मी समान ह रूप जिनके, अर पवन कर चचल जो कमल ता सामन हैं नेत्र जिनके, आय भरतको थामती भई तिनके नाम— ७१७

सीता, उर्वी, भानुमती, विशल्या, सुन्दरी ऐन्द्री, रत्नवती, लक्ष्मी, गुणमती, काता, बधुमती, भद्रा, कुबेरा, नलकूवरा, कल्याणमाला, चन्द्रकूणी, मदनोत्सवा, मनोरमा, प्रियनन्दा, चन्द्रकाता, कलावती,

रत्नस्थली, सरस्वती, श्रीकाता, गुणसागरा, पद्मावत, इत्यादि सब आई, जिनके रूप गुणका वर्णन किया न जाय, मनको हरें आकार जिनके, दिव्य वस्त्र, अर आभूषण पहिरे, बडे कुलविषे उपजीं, सत्यवादनी, शीलवन्ती, पुण्यकी भूमिका, समस्त कालविषे निपुण, सो भरतके चौगिर्द खडीं मानो चारो ओर कमलनिका वन ही फूल रहा है। भरतका चित्त राजसम्पदाविषै लगायवेकू उद्यमी अति आदर करि भरतकू मनोहर वचन कहती भई कि—हे देवर! हमारा कहा मानो, कृपा करहु, आज सरोवरनिविषे जलक्रीडा करहु, अर चिंता तजहु। जा बातकरि तिहारे भाईयोकू खेद न होय सो करहु। अर तिहारी माताके खेद न होय सो करहु। अर हम तिहारी भावज है सो हमारी विनती अवश्य मानिये। तुम विवेकी विनयवान हो। ऐसा कहि भरतकू सरोवर पर ले गई। भरतका चित्त जलक्रीडासे विरक्त यह सब सरोवरविषे पैठीं। वह विनयकरिसयुक्त सरोवरके तीर ऊभा ऐसा सोहै मानो गिरिराज ही है। अर वे स्निग्ध सुगन्ध सुन्दर वस्तुनिकरि याके शरीरका विलेपन करती भई। अर नानाप्रकार जलकेलि करती भई। यह उत्तम चेष्टाका धारक काहूपर जल न डारता भया। बहुरि निर्मल जलसे स्नानकरि सरोवरके तीरा जे जिनमंदिर वहा भगवानकी पूजा करता भया। उस समय त्रैलोक्यमण्डन हाथी, कारी घटा समान है आकार जाका, सो गजबंधन तुडाय भयंकर शब्द करता निज आवासथकी निकसा, अपने मदझरिवेकरि चौमासे कासा दिन करता संता। मेघ गर्जना समान ताका गाज सुनकर अयोध्यापुरीके लोग भयकरि कम्पायमान भए। अर अन्य हाथियोके महावत अपने २ हाथीको ले दूर भागे। अर त्रैलोक्यमंडन गिरिसमान नगरका दरवाजा भंग कर जहा भरत पूजा करते थे वहा आया। तब राम लक्ष्मणकी समस्त राणियें भयकरि कम्पायमान होय भरतके शरण आई, अर हाथी भरतके नजीक आया तब समस्त लोक हाहाकार करते भए। अर इनकी माता अति विह्वल भई, विलाप करती भई, पुत्रके स्नेहविषे तत्पर महा शंकावान भई। अर राम लक्ष्मण गजबन्धनविषे प्रवीण गजके पकडनेकू उद्यमी भए। गजराज महा प्रबल सामान्य जनोसे देखा न जाय, महा भयंकर शब्द करता अति तेजवान

नागफासि कर भी रोका न जाय। अर महा शोभायमान, कमल नयन भरत निर्भय स्त्रियोंके आगे तिनके बचायवेकू खडे। सो हाथी भरतकू देखकर पूर्वभव चितार शातचित्त भया। अपनी सूण्ड शिथिल कर महा विनयवान भया। भरतके आगे ऊभा। भरत याकू मधुरवाणी कर कहते भए अहो गज! तू कौन कारणकरि क्रोधकू प्राप्त भया? ऐसे भरतके वचन सुन अत्यन्त शातचित्त, निश्चल भया। सौम्य है मुख जाका, ऊभा भरतकी ओर देख है। भरत महाशूरवीर शरणागतप्रतिपालक ऐसे सोहैं जैसे स्वर्गविषै देव सोहै। हाथीकू जन्मातरका ज्ञान भया सो समस्त विकारसे रहित होय गया। दीर्घ निश्वास डारे। हाथी मनविषै विचारै है—यह भरत मेरा परममित्र है, छठे स्वर्गविषै हम दोनो एकत्र थे। यह तो पुण्यके प्रसाद करि वहासे चयकर उत्तम पुरुष भया, अर मैंने कर्मके योगसे तिर्यंचकी योनि पाई। कार्य अकार्यके विवेकसे रहित महानिंद्य पशुका जन्म है। 'मै कौन योगसे हाथी भया, धिक्कार इस जन्मको। अब वृथा क्या शोच? ऐसा उपाय करू जिससे आत्मकल्याण होय अर बहुरि ससार भ्रमण न करू। शोच कीए कहा? अब सर्व प्रकार उद्यमी होय भवदुखसे छूटिवेका उपाय करू। चितारे हैं पूर्वभव जाने, गजेन्द्र अत्यन्त विरक्त पापचेष्टासे पराङ्मुख होय पुण्यके उपार्जनविषै एकाग्रचित्त भया। यह कथा गौतमस्वामी राजा श्रेणिकसू कहे हैं—हे राजन! पूर्व जीवने अशुभ कर्म किए वे सतापकू उपजावैं। तातै हे प्राणी हो! अशुभ कर्मको तजि दुर्गतिके गमनसे छूटहु। जैसे सूर्य होते नेत्रवान मार्गविषै न अटकै तैसे जिनधर्मके होते विवेकी कुमार्गविषै न पडै, प्रथम अधर्मको तज धर्मको आदरैं, बहुरि शुभ अशुभसे निवृत्त होय आत्म धर्मसे निर्वाणकू प्राप्त होवैं। ७११

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महा पद्मपुराण संस्कृतग्रन्थ ताकी भाषावचनिकाविषै त्रैलोक्यमंडन हाथीके जातिस्मरण होय उपशांत वर्णन करनेवाला तिरासीवां पर्व पूर्ण भया॥ ८३॥

अथानन्तर वह गजराज महा विनयवान धर्मध्यानका चितवन करता राम लक्ष्मणने देखा, अर

धीरे धीरे इसके समीप आए, कारी घटा समान है आकार जाका। सो मिष्ट वचन बोल पकड्या अर निकटवर्ती लोकनिकूं आज्ञा करि गजकूं सब आभूषण पहिराए। हाथी शांतचित्त भया। तब नगरके लोगोंकी आकुलता मिटी। हाथी ऐसा प्रबल जाकी प्रचण्ड गति विद्याधरोंके अधिपतिसे न रुके। समस्त नगरविषै लोक हाथीकी वार्ता करै हैं। यह त्रैलोक्यमंडन रावणका पाट हस्ती है। याके बल समान और नाहीं। राम लक्ष्मणने पकड़ा। विकार चेष्टाकूं प्राप्त भया था अब शांतचित भया। सो लोकोंके महा पुण्यका उदय है। अर घने जीवोंकी दीर्घ आयु। भरत अर सीता विशल्या हाथी पर चढे बडी विभूतिसे नगरविषै आये। अर अद्भुत वस्त्राभरणसे शोभित समस्त राणी नानाप्रकार वाहनों पर चढी भरतको ले नगरविषै आई। अर शत्रुघ्न भाई अश्व रथ पर आरूढ, महा विभूति सहित महा तेजस्वी, भरतके हाथीके आगे आगे चला। नानाप्रकारके वादित्रनिके शब्द होते नंदनवन समान वनसे वे सब नगरविषै आए, जैसे देव सुरपुरविषै आवें। भरत हाथीसूं उतरि भोजनशालाविषै गए। साधुवोंकूं भोजन देय मित्र बांधवादि सहित भोजन किया, अर भावजोंकूं भोजन कराया। फिर लोक अपने अपने स्थानकूं गए। समस्त लोक आश्चर्यकूं प्राप्त भए। हाथी रूठा, फिर भरतके समीप खडा होय रह्या—सो सबोंको आश्चर्य उपजा। गौतम गणधर राजा श्रेणिकसे कहे हैं कि हे राजन! हाथीके समस्त महावत राम लक्ष्मणपै आय प्रणामकरि कहते भए—कि हे देव! आज गजराजको चौथा दिन है कछू खाय न पीवे न निद्रा करे। सब चेष्टा तजि निश्चल ऊभा है। जिसदिन क्रोध किया था अर शांत भया। उसही दिनसे ध्यानारूढ निश्चल वरते है। हम नानाप्रकारके स्तोत्रो कर स्तुति करें हैं, अनेक प्रिय वचन कहैं हैं, तथापि आहार पाणी न लेय है। हमारे वचन कान न धरे। अपनी सूण्डको दांतोंविषै लिये मुद्रित लोचन ऊभा है, मानो चित्रामका गज है, जिसे देख लोकोंको ऐसा भ्रम होय हैं कि यह कृत्रिम गज है अथवा सांचा गज है। हम प्रिय वचन कहकर आहार दिया चाहे है सो न लेय। नानाप्रकारके गजोंके योग्य सुन्दर आहार उसे न रुचे। चिन्तावान सा ऊभा है, निश्वास डारे है, समस्त

शत्रुवोंके वेत्ता महा पंडित प्रसिद्ध गजवैद्योंके हाथ भी हाथीका रोग न आया। गंधर्व नानाप्रकारके गीत गावे हैं सो न सुने। अर नृत्यकारिणी नृत्य कर हैं सो न देखे। पहिले नृत्य देखे था गीत सुने था, अनेक चेष्टा करे था, सो सब तज्या। नानाप्रकारके कौतुक होय हैं सो दृष्टि न धरै। मंत्रविद्या, औषधादिक अनेक उपाय किए सो न लगे। आहार विहार निद्रा जलपानादिक सब तजे, हम अति बिनती करे हैं सो न माने। जैसे रूठे मित्रको अनेक प्रकार मनाइये सो न माने। न जानिए इस हाथी के चित्तविषै कहा है ? काहू वस्तुसे काहू प्रकार रीझै नाहीं, काहू वस्तुपर लुभावे नाहीं। खिजाया संता क्रोध न करै, चित्राम कैसा खडा है। यह त्रैलोक्यमंडन हाथी समस्त सेनाका शृंगार है, जो आपकू उपाय करना होय सो करो। हम हाथीका सब वृत्तांत आपसे निवेदन किया। तब राम लक्ष्मण गजराजकी चेष्टा सुन अति चिंतावान भए। मनमें विचारैं हैं यह गजबन्धन तुडाय निसरा कौन प्रकार से क्षमाकू प्राप्त भया। अर आहार पानी क्यों न लेय ? दोनो भाई हाथीका शोच करते भए।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रंथ ताकी भाषावचनिकाविषै त्रिलोक्यमंडन हाथी का कथन वर्णन करनेवाला चौरासीवां पर्व पूर्ण भया ॥ ८४ ॥

अथानन्तर गौतमस्वामी राजा श्रेणिकसू कहै हैं—हे नराधिपति ! ताही समय अनेक मुनिनि सहित देशभूषण कुलभूषण केवली, जिनका वंशस्थल गिरि ऊपर राम लक्ष्मणने उपसर्ग निवारा हुता, अर जिनकी सेवा करनेकरि गरुडेंद्रने राम लक्ष्मणसे प्रसन्न होय उनको अनेक दिव्यशस्त्र दिए, जिनकर युद्धमें विजय पाई। ते भगवान केवली, सुर असुरनिकर पूज्य, लोक प्रसिद्ध अयोध्याके नन्दनवन समान महेंद्रोदय नामा वनविषैं महा संघ सहित आय विराजे। तब राम लक्ष्मण भरत शत्रुघ्न दर्शनके अर्थ प्रभात ही हाथिनि पर चढ़ि जायवेकू उद्यमी भए। अर उपजा है जातिस्मरण जाको ऐसा जो त्रैलोक्य मण्डन हाथी सो आगे आगे चला जाय है। जहा वे दोनो केवली कल्याणके पर्वत तिष्ठै हैं तहां देवनि

समान शुभचित्त नरोत्तम गये, अर कौशिल्या सुमित्रा ककई सुप्रभा यह चारो ही माता साधु भक्ति विष तत्पर, जिनशासनकी सेवक, स्वर्गनिवासिनी देविनि समान सकडा राणीनिसे युक्त चलीं। अर सुग्रीवादि समस्त विद्याधर महाविभूति सयुक्त चले। केवलीके स्थानक दूरहीत देख रामादिक हाथीत उतर आगे गए। दोनो हाथ जोड प्रणामकर पूजा करी। आप योग्य भूमिविष विनयत बठे, तिनके वचन समाधान चित्त होय सुनते भए। ते वचन वराग्यके मूल रागादिक नाशक क्योकि रागादिक ससारके कारण अर सम्यग्दशन ज्ञान चारित्र मोक्षका कारण ह। केवलीकी दिव्यध्वनिविषै यह व्याख्यान भया—अणुव्रतरूप श्रावकका धम अर महाव्रत यतिका धम यह दोनोही कल्याणके कारण ह। यतिका धम साक्षात निर्वाणका कारण अर श्रावकका धम परम्पराय मोक्षका कारण है। गहस्थका धम अल्पारम्भ अल्प परिग्रहको लीए कछु सुगम ह अर यतिका धम निरारम्भ निपरिग्रह अति कठिन, महा शूरवीरनिहो त सधें ह। यह लोक अनादिनिधन जाका आदिअन्त नाहीं, ताविष यह प्राणी लोभ कर मोहित नानाप्रकार कुयोनिविषै महादुःखकू पाव ह। ससारका तारक धम ही है। यह धम नामा परम मित्र जीवोका महा हितु ह। जिस धमका मूल जीवदयाकी महिमा कहिवेविषै न आवे ताके प्रसादसे प्राणी मनवाछित सुख पाव ह। धम ही पूज्य ह। जे धमका साधन करें ते ही पडित है। यह दयामूल धम कल्याणका कारण, जिनशासन बिना अन्यत्र नाही। जे प्राणी जिनप्रणीत धममें लगैं ते त्रैलोक्यके अग्र जो परम धाम ह वहा प्राप्त भये। यह जिनधम परम दुलभ है, या धमका मुख्यफल तो मोक्षही ह, अर गौण फल स्वगविष इन्द्रपद, अर पाताल विष नागेन्द्रपद, पृथ्वीविषै चक्रवर्त्यादि नरेन्द्रपद यह फल हैं। इस भाति केवलीने धमका निरूपण किया। तब प्रस्ताव पाय लक्ष्मण पूछते भए, हे प्रभो! त्रैलोक्यमण्डन हाथी गज बन्धन उपाडि क्रोधकू प्राप्त भया, बहुरि तत्काल शात भाव कू प्राप्त भया। सो कौन कारण? तब केवली देशभूषण कहते भए प्रथम तो यह लोकनिकी भीड देख मदोन्मत्तता थकी क्षोभकू प्राप्त भया। बहुरि भरतकू देख पूवभव चितार शात भावकू प्राप्त

भया। चतुर्थ कालके आदि या अयोध्याविषै नाभिराजाके मरु देवीके गर्भविषै भगवान ऋषभ उपजे। पूर्वभवविषै षोडश कारण भावना भाय त्रैलोक्यकू आनन्दका कारण तीर्थंकर पद उपार्ज्या। पृथ्वी विषै प्रकट भए, इन्द्रादिक देवनिने जिनके गर्भ अर जन्मकल्याणक कीए। सो भगवान पुरुषोत्तम तीन लोक करि नमस्कार करिवे योग्य, पृथ्वीरूप पत्नीके पति भए। कैसी है पृथ्वी रूप पत्नी? विन्ध्याचल गिरि वेई हैं स्तन जाके, अर समुद्र है कटिमेखला जाकी। सो बहुत दिन पृथ्वीका राज्य कीया तिनके गुण केवली विना और कोई जानवे समर्थ नाहीं। जिनका ऐश्वर्य देख इन्द्रादिक देव आश्चर्यकू प्राप्त भए।

एक समय नीलाजना नामा अप्सरा नृत्य करती हुती सो विलाय गई, ताहि देख प्रतिबुद्ध भए। ते भगवान स्वयं बुद्ध महामहेश्वर तिनकी लौकान्तिक देवनिने स्तुति करी। ते जगत गुरु भरत पुत्रकू राज्य देय वैरागी भए। इन्द्रादिकदेवनिनें तप कल्याणक किया, तिलक नामा उद्यानविषै महाव्रत धरे तबसे यह स्थान प्रयाग कहाया। भगवानने एक हजार वर्ष तप किया। सुमेरु समान अचल सर्वपरिग्रहके त्यागी, महातप करते भए। तिनके संग चार हजार राजा निकसे ते परीषह न सह सकनेकरि व्रत—भ्रष्ट भए, स्वेच्छाविहारी होय वन फलादिक भखते भए। तिनके मध्य मारीच दण्डीका भेष धरता भया। ताके प्रसंगसे सूर्योदय चन्द्रोदय राजा सुप्रभाके पुत्र राणी प्रल्हादनाकी कुक्षीविषै उपजे ते भी चारित्र भ्रष्ट भए। मारीचके मार्ग लागे कुधर्मके आचरणसू चतुर्गति संसारमें भ्रमे अनेक भवोंविषै जन्म मरण किया। बहुरि चन्द्रोदयका जीव कर्मके उदयसू नागपुरनामा नगरविषै राजा हरिपतिके राणी मनोलताके गर्भविषै उपज्या कुलकर नामा कहाया। बहुरि राज्य पाया। अर सूर्योदयका जीव अनेक भव भ्रमण कर उसही नगरविषै विश्वनामा ब्राह्मण जिसके अग्निकुण्ड नामा स्त्री, उसके श्रुतिरति नामा पुत्र भया। सो पुरोहित पूर्व जन्मके स्नेहसे राजा कुलकरको अतिप्रिय भया। एक दिन राजा कुलकर तापसियोंके समीप जाय था सो मार्गविषै अभिनन्दन नामा मुनिका दर्शन भया। वे मुनि अवधिज्ञानी, सब लोकके हितू, तिन्होने राजासे कही-तेरा दादा सर्प भया, सो तपस्वियोंके काष्ठ

मध्य तिष्ठे हैं। सो तापसी काष्ठ विदारेंगे सो तू रक्षा करियो। तब यह तहा गया जो मुनिने कही थी त्योही दृष्टि पडी। इसनें सर्प बचाया अर तापसियोका मार्ग हिंसारूप जाण्या, तिनसे उदास भया, मुनि व्रत धारिवेकू उद्यम किया। तब श्रुतिरति पुरोहित पापकर्मीने कही–हे राजन! तिहारे कुलविषे वेदोक्त धर्म चला आया है, अर तापसही तिहारे गुरु है। सात तू राजा हरिपतिका पुत्र है तो वेद मार्गका ही आचरण कर, जिनमार्ग मत आचर। पुत्रकू राज देय वेदोक्त विधि कर तू तापसका व्रत धर, मैं तेरे साथ तप धरूंगा। या भांति पापी पुरोहित मूढमतिने कुलकरका मन जिनशासनसे फेरया, अर कुलकर की स्त्री श्रीदामा, सो पापिनी परपुरुषासक्ता। उसने विचारी कि मेरी कुक्रिया राजाने जानी इसलिए तप धारै है, सो न जानिए तपधरै क न धरै, कदाचित मोहि मारे। तातै मैं ही उसे मारूं। तब उसने विष देयकर राजा अर पुरोहित दोनो मारे। सो मरकर निकुंजिया नामा वनमें पशुघातक पाप से दोनो सुआ भए। बहुरि मींढक भए, मूसा भए, मोर भए, सर्प भए, कूकर भए, कर्मरूप पवनके प्रेरे तिर्यंच योनिविषै भ्रमे। बहुरि पुरोहित श्रुतिरतिका जीव हस्ती भया अर राजा कुलकरका जीव मींढक भया। सो हाथीके पगतले दब कर मुवा। बहुरि मींढक भया सो सूखे सरोवरविषै कागने भख्या सो कूकडा भया, हाथी मर कर मार्जार भया। उसने कुक्कुट भखा, कुलकरका जीव तीन जन्म कूकडा भया, सो पुरोहितके जीव मार्जारने भख्या। बहुरि ये दोनो मूसा, मार्जार, मच्छ भए सो धीवरने जालविषै पकड कुहाडनिसे काटे सो मुवे। दोनो मरकर राजगृही नगरविषै बह्वासनामा ब्राह्मण उसकी उल्का नामा स्त्रीके पुत्र भए। पुरोहितके जीवका नाम विनोद, राजा कुलकरके जीवका नाम रमण। सो महा दरिद्री अर विद्यारहित। तब रमणने विचारी देशांतर जाय विद्या पढूं, तब घरसे निकसा, पृथ्वीविषै भ्रमता चारो वेद अर वेदोंके अंग पढे। बहुरि राजगृही नगरी आय पहुंचा। भाईके दर्शन की अभिलाषा, सो नगरके बाहिर सूर्य अस्त होय गया, आकाशविषै मेघपटलके योगसे अति अन्धकार भया, सो जीर्ण उद्यानके मध्य एक यक्षका मन्दिर तहा बैठा। अर याके भाई विनोदकी समिधा नामा

स्त्री सो महा कुशीला, एक अशोकदत्त नामा पुरुषसे आसक्त। सो तास यक्षके मन्दिरका संकेत किया हुता सो अशोकदत्तकू तो मार्गविषै कोटपालके किंकरने पकड्या अर विनोद खड्ग हाथविषै लिए अशोकदत्तके मारवेकू यक्षके मन्दिर आया। सो जार समझि खड्गसे भाई रमणकू मारा, अन्धकार विषै दृष्टि न पड्या सो रमण मवा, विनोद घर गया। बहुरि विनोद भी मुवा सो दोनो अनेक भव धारते भए।

बहुरि विनोदका जीव तो सालवनविषै आरण भसा भया अर रमणका जीव अंधा रीछ भया। सो दोनो दावानलविषै जर, मरकर गिरिवनविषै भील भए। बहुरि मरकर हिरण भए। सो भीलने जीवते पकडे, दोनो अति सुन्दर सो तीसरा नारायण स्वयंभूति श्रीविमलनाथजीके दर्शनकू जायकर पीछा आवे था उसने दोनो हिरण लिए अर जिनमन्दिरके समीप राखे। सो राजद्वारसे इनकू मन वाछित आहार मिलै। अर मुनिनिके दर्शन कर, जिनवाणीका श्रवण करें। तिनविषै रमणका जीव जो मृग हुता सो समाधि मरणकर स्वर्गलोक गया अर विनोदका जीव जो मृग हुता वह आर्तध्यानसे तिर्यंचगतिविषै भ्रम्या। बहुरि जम्बूद्वीपके भरतक्षेत्रविषै कम्पिल्यानगर तहा धनदत्त नामा वणिक बाईस कोटि दीनारका स्वामी भया। चार टाक स्वर्णकी एक दीनार होय है। ता वणिकके वारुणी नामा स्त्री उसके गर्भविषै दूजे भाई रमणका जीव मृग पर्यायसे देव भया था सो भूषण नाम पुत्र भया। निमित्तज्ञानीने इसके पितासे कहा कि यह सर्वथा जिनदीक्षा धरेगा। सुनकर पिता चितावान भया। पिताका पुत्रसे अधिक प्रेम, इसको घरहीविषै राख, बाहिर निकसने न देय, सब सामग्री वाके घर विषै विद्यमान। यह भूषण सुन्दर स्त्रीनिकर सेव्यमान वस्त्र आहार सुगन्धादि विलेपन कर घरविषै सुखसे रहे। याकू सूर्यके उदय अस्तकी गम्य नानाप्रकारके नाहीं, याके पिताने सकडो मनोरथकर यह पुत्र पाया, अर एकही पुत्र, सो पूर्ण जन्मके स्नेहसे पिताकू प्राणसे भी प्यारा। पिता तो विनोदका जीव अर पुत्र रमणका जीव आगे दोनो भाई हुते सो या जन्मविषै पिता पुत्र भए।

संसारकी विचित्रगति है ये प्राणी नटवत् नृत्य करै है। संसारका चरित्र स्वप्नके राज्य समान असार है। एक समय यह धनदत्तका पुत्र भूषण प्रभात समय दुंदुभी शब्द आकाशविषै देवनिका आगमन देख प्रतिबुद्ध भया। यह स्वभावहीसे कोमलचित्त, धर्मके आचार विषै तत्पर, महाहर्षका भरया दोनो हाथ जोड नमस्कार करता श्रीधर केवलीकी वंदनाकूं शीघ्र हो जाय था सो सिवाणसे उतरते सर्पने डसा। देह तज महेन्द्र नाम जो चौथा स्वर्ग तहां देव भया। तहांते चयकर पहुकर द्वीपविषै चन्द्रादित्य नामा नगर तहां राजा प्रकाशयश ताके राणी माधवी ताके जगद्द्युत नामा पुत्र भया। यौवनके उदयविषै राज्यलक्ष्मी पाई, परन्तु संसारसे अति उदास, राजविषै चित्त नाहीं। सो याके वृद्ध मन्त्रिनिने कही यह राज तिहारे कुलक्रमसे चला आवै है सो पालहु। तिहारे राज्यसे प्रजा सुख रूप होयगी। सो मन्त्रिनिके हठसे यह राज्य करै। राज्यविषै तिष्ठता यह साधूनिकी सेवा करै। सो मुनि दानके प्रभावसे देवकुरु भोगभूमि गया, तहांसे ईशान नाम दूजा स्वर्ग तहाँ देव भया। चार सागर दोय पल्य देवलोकके सुख भोग देवांगनानिकर मंडित नानाप्रकार भोग भोगि, तहांसे चया सो जम्बू द्वीपके पश्चिम विदेह मध्य अचल नामा चक्रवर्तीके रत्नानामा राणीके अभिराम नामा पुत्र भया, सो महागुणनिका समूह, अति सुंदर, जाहि देखि सब लोककूं आनन्द होय। सो बाल अवस्थाहीसे अति विरक्त जिनदीक्षा धारया चाहै, अर पिता चाहै यह घरविषै रहै, तीन हजार राणी इसे परणाई, सो वे नानाप्रकारके चरित्रकरें, परन्तु यह विषय सुखकूं विषसमान गिनै। केवल मुनि होयवेकी इच्छा, अति शांतचित्त, परन्तु पिता घरसे निकसने न देय। यह महा भाग्य महाशीलवान महागुणवान महा त्यागी, स्त्रियोका अनुराग नहीं याकूं, ते स्त्री भांति भांतिके वचनकर अनुराग उपजावै, अतियत्नकर सेवा करें, परन्तु याकूं संसारकी माया गर्तरूप भासै। जैसे गर्तमें पडया ताके पकडनहारे मनुष्य नाना भांति ललचावै तथापि गजको गर्त न रुचै ऐसे याहि जगतकी माया न रुचै। यह शांत चित्त पिताके निरोधसे अति उदास भया घरविषै रहै। तिन स्त्रीनिके मध्य प्राप्त हुवा तीव्र असिधारा व्रतपालै।

स्त्रीनिके मध्य रहना अर शील पालना, तिनसे ससग न करना ताका नाम असिधारा व्रत कहिए। मोतिनके हार बाजूबद मुकुटादि अनेक आभूषण पहिरे तथापि आभूषणसू अनुराग नाहीं। यह महा भाग्य सिंहासनपर बठा निरन्तर स्त्रीनिको जिनधमकी प्रशसाका उपदेश देय। त्रैलोक्यविष जिनधम समान और धम नाहीं। ये जीव अनादिकालसे ससार बनविष भ्रमण कर ह सो कोई पुण्य कमके योग से जीवोकू मनुष्यदेहकी प्राप्ति होय ह। यह बात जानता सता कौन मनुष्य ससार कूपविष पडे, अथवा कौन विवेकी विषकू पीव, अथवा गिरिके शिखरपर कौन बद्धिमान निद्रा कर, अथवा मणिकी वाछाकर कौन तडित नागका मस्तक हाथसे स्पर्शे, विनाशीक ये काम भोग तिनविष ज्ञानीकू कसे अनुराग उपजे? एक जिनधमका अनुराग ही महा प्रशसा योग्य मोक्षके सुखका कारण हैं। यह जीवो का जीतव्य अत्यन्त चचल, याविषै स्थिरता कहा? जो अवाछक निस्पह चित्त वश ह तिनके राज्यकाज अर इन्द्रियोके भोगोसे कौन काम? इत्यादिक परमाथके उपदेशरूप याकी वाणी सुनकर स्त्रियें भी शातचित्त भई, नानाप्रकारके नियम धारती भई। यह शीलवान तिनकू भी शीलविषै वढचित्त करता भया। यह राजकुमार अपने शरीरविषै भी रागरहित एकातर उपवास अथवा बेला तेला आदि अनेक उपवासोकर कम कलक खिपावता भया, नाना प्रकारके तपकर शरीरकू शोखता भया, जसे ग्रीष्म का सूय जलकू शोख। समाधान रूप ह मन जाका, मन इन्द्रियनिके जीतवेकू समथ यह सम्यकदृष्टि निश्चल चित्त महाधीर वीर चौंसठ हजार वर्षलग दुधर तप करता भया। बहुरि समाधिमरण कर पचनमोकार स्मरण करता देह त्यागकर छठा जो ब्रह्मोत्तर स्वग तहा महा ऋद्धिका धारक देव भया। ७२७
अर जो भूषणके भवविषै याका पिता धनदत्त सेठ था, विनोद ब्राह्मणका जीव सो मोहके योगत अनेक कुयोनिविषै भ्रमणकरि जम्बूद्वीप भरत क्षेत्र, तहा वादम नाम नगर, ताविषै अग्निमुख नामा ब्राह्मण, ताके शकुना नाम स्त्री, मदुमतिनामा पुत्र भया। सो नामा तो मृदुमति परन्तु कठोर चित्त, अति दुष्ट महाजुवारी अविनयी अनेक अपराधोका भरा दुराचारी। सो लोकोके उराहनेसे माता पिता

ने घरसे निकास्या सो पृथ्वीविषै परिभ्रमण करता पोदनापुर गया। किसीके घर तृषातुर पानी पीवने को पैठा सो एक ब्राह्मणी आंसू डारती हुई इसे शीतल जल प्यावती भई। यह शीतल मिष्टजलसे तृप्त हो ब्राह्मणीकू पूछता भया तू कौन कारण रुदन कर है ? तब ताने कही तेरे आकार एक मेरा पुत्र था सो मैं कठोरचित्त होय क्रोधकर घरसे निकास्या। सो तैंने भ्रमण करते कहू देख्या होय तो कह। नील कमल समान तो सारिखा ही है। तब यह आंसू डार कहता भया–हे माता ! तू रुदन तज, वह मैं ही हूं, तोहि देखे बहुत दिन भए तात मोहि नाहीं पहिचाने है। तू विश्वास गह मैं तेरा पुत्र हूं। तब वह पुत्र जान राखती भई, अर मोहके योगतै ताके स्तनोंसे दुग्ध झरा। यह मृदुमति तेजस्वी रूपवान स्त्रीनिके मनका हरणहारा, धूर्तोंका शिरोमणि, जुवाविषै सदा जीते, बहुत चतुर, अनेक कला जाने, काम भोगविषै आसक्त। एक वसंतमाला नामा वेश्या सो ताके अति वल्लभ, अर याके माता पिताने यह काढ़ा हुता सो इसके पीछे वे अति लक्ष्मीकू प्राप्त भए। पिता कुण्डलादिक अनेक भूषण करि मण्डित, अर माता कांचीदामादिक अनेक आभरणोकर शोभित सुखसू तिष्ठै। अर एक दिन यह मृदुमति ससांक नगरविषै राजमंदिरविषै चोरीकू गया सो राजा नन्दीवर्धन शशांक मुख स्वामीके मुख धर्मोपदेश सुन विरक्त चित्त भया था सो अपनी राणीसू कहे था कि हे देवी ! मैं मोक्ष सुखका देने हारा मुनिके मुख परम धर्म सुना। ये इन्द्रियनिके विषय विषसमान दारुण है, इनके फल नरक निगोद है, मैं जिनेश्वरी दीक्षा धरूंगा, तुम शोक मत करियो। या भांति स्त्रीकू शिक्षा देता हुता, सो मृदुमति चोरने यह वचन सुन अपने मनविषै विचारया देखो यह राजऋद्धि तज मुनिव्रत धारे है अर मैं पापी चोरीकर पराया द्रव्य हरू हूं, धिक्कार मोकू। ऐसे विचारकर निर्मलचित्तहोय सांसारिक विषय भोगोसे उदासचित्त भया, स्वामी चन्द्रमुखके समीप सब परिग्रहका त्यागकर जिनदीक्षा आदरी, शास्त्रोक्त महादुर्धर तप करता महाक्षमावान महाप्रासुक आहार लेता भया।

अथानन्तर दुर्गनाम गिरिके शिखर एक गुणनिधि नाम मुनि चार महीनेके उपवास धर तिष्ठे थे।

वे सुर असुर मनुष्यनिकर स्तुति करिवे योग्य महा ऋद्धिधारी चारण मुनि थे। सो चौमासेका नियम पूर्णकर आकाशके मार्ग होय किसी तरफ चले गए, अर यह मदुमति मुनि आहारके निमित्त दुर्गनामा गिरिके समीप आलोक नाम नगर वहां आहारकू आया। जूडाप्रमाण पृथ्वीकू निरखता जाय था। सो नगरके लोकोंने जानी यह वे ही मुनि हैं जो चारमहीना गिरिके शिखर रहे। यह जानकर अति भक्तिकर पूजाकरी, अर इसे अतिमनोहर आहार दिया। नगरके लोकोंने बहुत स्तुति करी। इसने जानी गिरिपर चार महीना रहे तिनके भरोसे मेरी अधिक प्रशंसा होय है। सो मानका भरया मौन पकड रहा, लोकोंसे यह न कही कि मैं और ही हूं। अर व मुनि और थे और गुरुके निकट माया शल्य दूर न करी, प्रायश्चित्त न लिया। तातैं तिर्यचगतिका कारण भया। तप बहुत किए सो पर्याय पूरी कर छठे देव लोक जहां अभिरामका जीव देव भया था वहां ही यह गया। पूर्व जन्मके स्नेहकर उसके याके प्रति स्नेह भया। दोनों ही समान ऋद्धिके धारक अनेक देवांगनावोंकर मंडित, सुखके सागरविषै मग्न, दोनों ही सागरों पर्यंत सुखसूं रमे। सो अभिरामका जीव तो भरत भया। अर यह मदुमतिका जीव स्वर्गसे चय मायाचारके दोषसे इस जम्बूद्वीपके भरतक्षेत्रविषै, उतंग है शिखर जिसके ऐसा जो निकुंज नामा गिरि, उस विषै महागहन शल्लकी नामा वन, वहां मेघकी घटा समान श्याम अति सुन्दर गज-राज भया, समुद्रकी गाज समान है गर्जना जिसकी, अर पवन समान है शीघ्र गमन जिसका, महा भयंकर आकारकू धरे, अति मदोन्मत्त, चन्द्रमा समान उज्ज्वल हैं दांत जिसके, गजराजोंके गुणोंकरि मंडित, विजयादिक महाहस्ती तिनके वंशविषै उपज्या। महा कांतिका धारक, ऐरावत समान अति स्वच्छंद सिंह व्याघ्रादिकका हननहारा, महा वृक्षोंका उपारनहारा, पर्वतोंके शिखरका ढाहनहारा, विद्याधरोंकर न ग्रहा जाय तो भूमिगोचरियोंकी क्या बात, जाके निवाससे सिंहादिक निवास तजि भाग जावें। ऐसा प्रबल गजराज गिरिके वनविषै नानाप्रकार पल्लवका आहार करता मानसरोवरविषै क्रीडा करता, अनेक गजोंसहित विचरै। कभी कैलाशविषै विलास करै कभी गंगाके मनोहरद्रहोंविषै क्रीडा करै, अर अनेक

पद्म
पुराण
७३

वन गिरि नदी सरोवरविषै सुन्दर क्रीडा कर, अर हजारो हथनीनि सहित रमै। अनेक हाथियोके समूह का शिरोमणि यथेष्ट विचरता ऐसा सोहै जैसा पक्षियोके समूहकर गरुड सोहै। मेघसमान गर्जता अर नीझरने तिनके झरनेका पर्वत, सो एक दिन लंकेश्वरने देखा, सो विद्याके पराक्रमकर महाउग्र उसने यह नीठि नीठि वश किया। इसका त्रैलोक्यमण्डन नाम धरया, सुन्दर है लक्षण जिसके। जैसे स्वर्गविषै चिरकाल अनेक अप्सरावो सहित क्रीडा करी तैसे हाथियोकी पर्यायविषै हजारो हथिनियोसे क्रीडा करता भया। यह कथा देशभूषण केवली राम लक्ष्मणसू कहे है कि ये जीव सब योनिविषै रति मान लेय है निश्चय विचारिए तो सबही गति दुखरूप है। अभिरामका जीव भरत अर मृदुमतिका जीव गजसूर्यो दय चन्द्रोदयके जन्मसे लेकर अनेक भवके मिलापी है तातै भरतकू देखि पूर्व भव चितारि गज उप शांत चित्त भया। अर भरत भोगोसे पराङमुख, दूर भया है मोह जिसका, अब मुनिपद लिया चाहै है इस ही भवसू निर्वाण प्राप्त होवेंगे, बहुरि भव न धरेंगे। श्री ऋषभदेवके समय यह दोनो सूर्योदय चन्द्रोदय नामा भाई थे। मारीचके भरमाए मिथ्यात्वका सेवन कर बहुतकाल संसारविषै भ्रमण किया, त्रस स्थावर योनिविषै भ्रमे। चन्द्रोदयका जीव कईएकभव पीछे राजा कुलकर। बहुरि कईएक भवपीछे रमण ब्राह्मण, बहुरि कईएक भव धर समाधिमरण करणहारा मृग भया, बहुरि स्वर्गविषै देव, बहुरि भूषण नामा वैश्यका पुत्र, बहुरि स्वर्ग, बहुरि जगद्युति नाम राजा, वहासे भोगभूमि, बहुरि दूजे स्वर्ग देव, वहासे चयकर महाविदेह क्षेत्रविषै चक्रवर्तीका पुत्र अभिराम भए, वहासे छठे स्वर्ग देव, देवसे भरत नरेन्द्र सो चरमशरीरी है, बहुरि देह न धारेंगे। अर सूर्योदयका जीव बहुत काल भ्रमण कर राजा कुलकरका श्रुति नामा पुरोहित भया। बहुरि अनेक जन्म लेय विनोदनामा विप्र भया, बहुरि अनेक जन्म लेय आर्तध्यानसे मरणहारा मृग भया, बहुरि अनेक जन्म भ्रमणकर भूषणका पिता धनदत्त नामा वणिक, बहुरि अनेक जन्म धर मृदुमति नामा मुनि, उसने अपनी प्रशंसा सुन राग किया, मायाचारसे शल्य दूर न करी, तपके प्रभावसे छठे स्वर्ग देव भया। वहासे चयकरि त्रैलोक्यमण्डन हाथी,

अब श्रावकके व्रत धर देव होयगा ये भी निकट भव्य हैं । या भांति जीवोंकी गति आगति जान अर इन्द्रियोंके सुख विनाशीक जान या विषम वनकूं तजकर ज्ञानी जीव धर्मविषै रमहु, जे प्राणी मनुष्य देह पाय जिन भाषित धर्म नाहीं करै हैं वे अनन्त काल संसार भ्रमण करेंगे । आत्मकल्याणसे दूर हैं तातैं जिनवरके मुखसे निकस्या दयामई धर्म मोक्ष प्राप्त करनेकूं समर्थ, याके तुल्य और नाहीं, मोह-तिमिरका दूर करणहारा, जीती है सूर्यकी कांति जानै सो मनवचन कायकर अंगीकार करो जातैं निर्मल पद पावो ।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महा पद्मपुराण संस्कृतग्रन्थ ताकी भाषावचनिकाविषै भरतके अर हाथीके पूर्वभव वर्णन करनेवाला पच्यासीवां पर्व पूर्ण भया ॥ ८५ ॥

अथानंतर श्रीदेशभूषण केवलीके वचन महा पवित्र, मोह अंधकारके हरणहारे, संसार सागरके तारणहारे, नानाप्रकारके दुखके नाशक, उनविषै भरत अर हाथीके अनेक भवका वर्णन सुनकर राम लक्ष्मण आदि सकल भव्यजन आश्चर्यकूं प्राप्त भए, सकल सभा चेष्टारहित चित्राम कैसी होय गई । अर भरत नरेन्द्र, देवेन्द्र समान है प्रभा जाकी, अविनाशी पदके अर्थि मुनि होयवेकी है इच्छा जिसके, गुरुवोंके चरणविषै नम्रीभूत है सीस जिसका, महा शांतचित्त परम वैराग्यकूं प्राप्त हुवा । तत्काल उठ करि हाथ जोड केवलीकूं प्रणामकरि महा मनोहर वचन कहता भया—हे नाथ ! मैं संसारविषै अनन्त काल भ्रमण करता नानाप्रकार कुयोनियोंके विषै संकट सहता दुखी भया । अब मैं संसार भ्रमण से थका । मुझे मुक्तिका कारण तिहारी दिगम्बरी दीक्षा देवहु । यह आकाशरूप नदी मरणरूप उग्ररूप तरंगकूं धरै उसविषै मैं डूबूं हूं, सो मुझे हस्तावलम्बन दे निकासो । ऐसा कहकर केवलीकी आज्ञा प्रमाण तज्या है समस्त परिग्रह जिसने, अपने हाथोंसे शिरके केश लोंच किये, परम सम्यक्ती महाव्रतकूं अंगीकार कर जिनदीक्षा धर दिगम्बर भया । तब आकाशविषै देव धन्य धन्य कहते भए अर कल्पवृक्षके ७११

फूलों की वर्षा करते भए ।

हजारसे अधिक राजा भरतके अनुरागसे राजऋद्धि तज जिनेन्द्री दीक्षा धरते भए । अर कईएक अल्प शक्ति हुते ते अणुव्रत धर श्रावक भये । अर माता केकई पुत्रके वैराग्य सुन आसुनिकी वर्षा करती भई, व्याकुल चित्त होय दौडी सो भूमिविषै पडी, महामोहकू प्राप्त भई । पुत्रकी प्रीतिकर मतक समान होय गया है शरीर जाका सो चन्दनादिकके जलसे छांटी तो भी सचेत न भई, घनी बेर विषै सचेत भई । जैसे वत्स बिना गाय पुकारै तसे विलाप करती भई हाय पुत्र ! महा विनयवान, गुणनिकी खान, मनकू आह्लादका कारण, हाय तू कहा गया ? हे अगज ! मेरा अंग शोकके सागर विषै डूबे है सो थाभ । तो सारिखे पुत्र बिना मैं दुखके सागरविषै मग्न शोककी भरी कैसे जीऊंगी ? हाय ! हाय ! यह कहा भया ? या भांति विलाप करती माताको श्रीराम लक्ष्मणने संबोधकरि विश्रामकू प्राप्त करी, अति सुन्दर वचननिकर धीर्य बन्धाया—हे मात ! भरत महा विवेकी ज्ञानवान है तुम शोक तजहु, हम कहा तिहारे पुत्र नाहीं ? आज्ञाकारी किंकर हैं । अर कौशल्या सुमित्रा सुप्रभाने बहुत सम्बोधा तब शोकरहित होय प्रतिबोधकू प्राप्त भई । शुद्ध है मन जाका, अपने अज्ञानकी बहुत निंदा करती भई, धिक्कार या स्त्री पर्यायकू, यह पर्याय महा दोषनिकी खानि है, अत्यन्त अशुचि, बीभत्स नगरकी मोरी समान । अब ऐसा उपाय करू जाकर स्त्री पर्याय न धरू, संसार समुद्रकू तिरू । यह महा ज्ञानवान सदाही जिनशासनकी भक्तिवंत हुती अब महा वैराग्यकू प्राप्त होय पृथ्वीमती आर्यिकाके समीप आर्यिका भई । एक श्वेत वस्त्र धारया अर सब परिग्रह तज निर्मलसम्यक्त्वकू धरती सब आरम्भ टारती भई । याके साथ तीनसौ आर्यिका भई । यह विवेकिनी परिग्रह तज कर वैराग्य धार ऐसी सोहती भई जैसी कलंकरहित चन्द्रमाकी कला मेघपटलरहित सोहै । श्रीदेशभूषण केवलीका उपदेश सुन अनेक मुनि भये, अनेक आर्यिका भई । तिनकर पृथ्वी ऐसी सोहती भई जैसे कमलनिकर सरोवरी सोहै । अर अनेक नर नारी पवित्र है चित्त जिनके, तिन्होंने नानाप्रकार के नियम धर्मरूप श्रावक श्राविकाके व्रत धारे । यह युक्त ही है जो सूर्यके प्रकाश कर नेत्रवान्

वस्तुका अवलोकन करै ही करै।

इति श्रीरविषेणाचार्य विरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रंथ ताकी भाषावचनिकाविषै भरत अर केकईका वैराग्य वर्णन करनेवाला छियासीवां पर्व पूर्ण भया ॥ ८६ ॥

अथानन्तर त्रैलोक्यमंडन हाथी अति प्रशान्तचित्त केवलीके निकट श्रावकके व्रत धारता भया। सम्यकदर्शन संयुक्त, महाज्ञानी, शुभक्रियाविषै उद्यमी हाथी धर्मविषै तत्पर होता भया। पन्द्रह दिनके उपवास तथा मासोपवास करता भया, सूखे पत्रनिकर पारणा करता भया। हाथी संसारसू भयभीत, उत्तम चेष्टाविषै परायण, लोकनिकर पूज्य, महाविशुद्धताकू धरे, पृथ्वीविषै विहार करता भया। कभी मासोपवासके पारणा ग्रामादिकविषै जाय तो श्रावक ताहि अति भक्तिकर शुद्ध अन्न शुद्धजलकर पारणा करावते भए। क्षीण होय गया है शरीर जाका, वैराग्यरूप खूंटेसे बन्धा, महा उग्र तप करता भया। यम नियमरूप है अंकुश जाके। बहुरि महा उग्रतपका करणहारा गज शनै शनै आहारका त्याग कर अंत सलेखणा धर, शरीर तज छठे स्वर्ग देव होता भया। अनेक देवांगनाकरि युक्त हारकुण्डलादिक आभूषणनिकरि मंडित पुण्यके प्रभावतै देवगतिके सुख भोगता भया। छठे स्वर्गहोते आया हुता अर छठे ही स्वर्ग गया, परम्पराय मोक्ष पावेगा। अर भरत महामुनि महातपके धारक, पृथ्वीके गुरु निर्ग्रंथ, जाके शरीरका भी ममत्व नाहीं, वे महा धीर जहां पिछिला दिन रहै तहां ही बैठ रहैं, जिनकू एक स्थान न रहना, पवन सारिखे असंगी, पृथ्वीसमान क्षमाकू धरे, जलसमान निर्मल, अग्नि समान कर्म काष्ठके भस्म करनहारे, अर आकाश समान अलेप, चार आराधनाविषै उद्यमी, तेरह प्रकार चारित्र पालते विहार करते भए। निर्ममत्व, स्नेहके बंधनतै रहित, मृगेन्द्र सारिखे निर्भय, समुद्र समान गम्भीर, सुमेरु समान निश्चल, यथाजात रूपके धारक, सत्यका वस्त्र पहिरे, क्षमारूप खडगकू धरे, बाईस परीषहके जीतनेहारे महातपस्वी, समान है शत्रु मित्र जिनके, अर समान है सुख दुख जिनके, अर समान है

गुण रत्न जिनके, महा उत्कृष्ट मुनि शास्त्रोक्त मार्ग चलते भए। तपके प्रभावकरि अनेक ऋद्धि उपजी। सूई समान तीक्ष्ण तणकी सली पावोमें चुभै है परन्तु ताकी कछु सुध नाहीं। अर शत्रुनिके स्थानक विषे उपसर्ग सहिवे निमित्त विहार करते भए। तपके संयमके प्रभावकरि शुक्लध्यान उपजा। शुक्लध्यानके बलकर मोहका नाशकर ज्ञानावरण, दर्शनावरण, अंतराय कर्म हर, लोकालोककूं प्रकाश करणहारा केवलज्ञान प्रकट भया। बहुरि अघातिया कर्म भी दूरकर सिद्धपदकूं प्राप्त भए, जहांते बहुरि संसार विषे भ्रमण नाहीं। यह केकईके पुत्र भरतका चरित्र जो भक्ति कर पढे, सुनै सो सब क्लेशसे रहित होय यश कीर्ति बल विभूति आरोग्यताकूं पावै, अर स्वर्ग मोक्ष पावै। यह परम चरित्र महा उज्ज्वल श्रेष्ठ गुणनिकर युक्त, भव्यजीव सुनो, जाते शीघ्र ही सूर्यसे अधिक तेजके धारक होहु।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रंथ ताकी भाषावचनिकाविषै भरतका निर्वाण गमन वर्णन करनेवाला सत्यासीवां पर्व पूर्ण भया ॥ ८७ ॥

अथानंतर भरतके साथ जे राजा महाधीर वीर अपने शरीरविषै भी जिनका अनुराग नाहीं घरते निकसि जिनेश्वरी दीक्षा धरि दुर्लभ वस्तुकूं प्राप्त भए, तिनविषै कईएकनिके नाम कहिए है—हे श्रेणिक! तू सुन—सिद्धार्थ, रति वर्धन, मेघरथ, जाबूं, नन्द, शल्य, शशांक, निरसनन्दन, नन्द, आनंद, सुमति, सदाश्रय महाबुद्धि, सूर्य, इन्द्रध्वज, जनवल्लभ, श्रुतिधर, सुचन्द्र, पृथ्वीधर, अलक, सुमति अक्रोध, कुंडर, सत्यवाहन, हरि, वासुमित्र, धर्ममित्र, पूर्णचन्द्र, प्रभाकर, नघोष, सुनन्द, शांति, प्रियधर्मा इत्यादि एक हजारते अधिक राजा वैराग्य धारते भए। विशुद्धकुल विषै उपजे, सदा आचारविषै तत्पर, पृथ्वी विषै प्रसिद्ध है शुभ चेष्टा जिनकी, ये महाभाग्य हाथी घोडे रथ पयादे स्वर्ण रत्न रणवास सब तज करि पंच महाव्रत धारते भए। राज्यकूं जिनने तृणवत तज्या, महाशांत, नानाप्रकार योगीश्वर ऋद्धिके धारक भए। सो आत्मध्यान के ध्याता कईएक तो मोक्ष गए, कईएक अहमिंद्र भए, कईएक उत्कृष्ट देव भए। ७३४

अथानन्तर भरत चक्रवर्ती सारिखे दशरथके पुत्र भरत तिनकू घरसे निकसे पीछे लक्ष्मण तिनके गुण चितार चितार अतिशोकवत भया। अपना राज्य शून्य गिनता भया, शोककरि व्याकुल है चित्त जाका, अति दीर्घ आंसू डारता भया, दीर्घ निश्वास नाखता भया, नील कमल समान है कांति जाकी सो कुमलाय गया। विराधितकी भुजानिपर हाथ धरें ताके सहारे बैठ्या मंद मंद वचन कहै, वे भरत महाराज, गुणही हैं आभूषण जिनके सो कहां गए? जिन तरुण अवस्था विषै शरीरसूं प्रीति छांडी, इन्द्र समान राजा अर हम सब उनके सेवक वे रघुवंशके तिलक समस्त विभूति तजकरि मोक्षके अर्थी, महादुर्धर मुनिका धर्म धारते भए। शरीर तो अति कोमल, कैसे परीषह सहेंगे? धन्य वे। श्रीराम महा ज्ञानवान कहते भए—भरतकी महिमा कही न जाय, जिनका चित्त कभी संसारविषै न रच्या, जो शुद्ध बुद्धि है तो उनकी ही है, अर जन्म कृतार्थ है तो उनका ही है, जे विषके भरे अन्नकी न्याईं राज्य कूं तज करि जिनदीक्षा धरत भए। वे पूज्य, प्रशंसा योग्य, परम योगी, उनका वर्णन देवेन्द्र भी न कर सकें तो औरनिकी कहा शक्ति जो करें? वे राजा दशरथके पुत्र, केकईके नन्दन तिनकी महिमा हमतें न कही जाय। या भरतके गुण गाते एक मुहूर्त सभाविषै तिष्ठे, समस्त राजा भरत ही के गुण गाया करें। बहुरि श्रीराम लक्ष्मण दोऊ भाई भरतके अनुरागकरि अति उद्वेगरूप उठे। सब राजा अपने २ स्थानकूं गए। घर २ भरतकी चर्चा। सब ही लोक आश्चर्यकूं प्राप्त भए। यह तो उनकी यौवन अवस्था, अर यह राज्य, ऐसे भाई, सब सामग्री पूर्ण। ऐसे ही पुरुष तजे सोई परमपदकूं प्राप्त होवें। या भांति सब ही प्रशंसा करते भए। ७३५

बहुरि दूजे दिन सब राजा मंत्रकर रामपै आए। नमस्कारकरि अति प्रीतिसे वचन कहते भए। हे नाथ! जो हम असमझ हैं तो आपके, अर बुद्धिवंत हैं तो आपके। हमपर कृपाकर एक विनती सुनो—हे प्रभो! हम सब भूमिगोचरी अर विद्याधर आपका राज्याभिषेक करें जैसे स्वर्ग विषै इन्द्रका होय। हमारे नेत्र अर हृदय सफल होवें। तिहारे अभिषेकके सुखकरि पृथ्वी सुखरूप होय। तब राम कहते

भए-तुम लक्ष्मणका राज्याभिषेक करो। वह पृथ्वीका स्तम्भ भूधर है, राजनिका गुरु, वासुदेव, राजानिका राजा, सब गुण ऐश्वर्यका स्वामी, सदा मेरे चरणनिकूं नमै। या उपरांत मेरे राज्य कहा?

तब वे समस्त श्रीरामकी अतिप्रशंसा कर जय जयकार शब्द कर लक्ष्मणपै गए अर सब वृत्तांत कह्या। तब लक्ष्मण सबनिकूं साथ लेय रामपै आया, अर हाथ जोड नमस्कार कर कहता भया—हे वीर! या राज्य के स्वामी आप ही हो। मैं तो आपका आज्ञाकारी अनुचर हूं। तब रामने कह्या, हे वत्स! तुम चक्र के धारी नारायण हो तातै राज्याभिषेक तुम्हारा ही योग्य है। सो इत्यादि वार्तालाप से दोनो का राज्याभिषेक ठहरा। बहुरि जैसी मेघ की ध्वनि होय तैसी वादित्रनिकी ध्वनि होती भई। दुंदुभी बाजे, नगारे, ढोल, मृदंग, वीण, तमूरे, झालर, झांझ, मंजीरे, बांसुरी, शंख इत्यादि वादित्र बाजे, अर नानाप्रकारके मंगल गीत नृत्य होते भए। याचकनिकूं मनवांछित दान दीये, सबनिकूं अति हर्ष भया दोऊ भाई एक सिंहासन पर विराजे। स्वर्ण रत्नके कलश जिनके मुख कमल से ढके, पवित्र जलसे भरे, तिनकर विधिपूर्वक अभिषेक भया। दोऊ भाई मुकुट भुजबंध हार केयूर कुण्डलादिककर मंडित मनोज्ञ वस्त्र पहिरे, सुगन्धकरि चर्चित तिष्ठे। विद्याधर भूमिगोचरी तथा तीन खंडके देव जय जय शब्द कहते भए। यह बलभद्र श्रीराम हल मूसलके धारक, अर यह वासुदेव श्री लक्ष्मण चक्रका धारक जयवंत होहु। दोऊ राजेन्द्रनिका अभिषेककरि विद्याधर बडे उत्साहसे सीता अर विशिल्याका अभिषेक करावते भए। सीता रामकी राणी अर विशल्याका लक्ष्मणकी, तिनका अभिषेक विधिपूर्वक होता भया।

अथानंतर विभीषणकी लंका दई, सुग्रीवकूं किहकंधापुर, हनुमानकूं श्रीनगर अर हनूरुह द्वीप दिया। विराधितकूं नागलोक समान अलकापुर दिया। नल नीलकूं किहकंधपुर दिया, समुद्रकी लहरोंके समूहकरि महाकौतुकरूप। अर भामण्डलकूं वैताड्यकी दक्षिण श्रेणिविषै रथनूपुर दिया, समस्त विद्याधरनिका अधिपति किया। अर रत्नजटीकूं देवोपनीत नगर दिया, और भी यथायोग्य सबनिकूं स्थान

दिए। अपने पुण्यके उदय योग्य सबही राम लक्ष्मणके प्रतापत राज्य पावते भए। रामकी आज्ञाकरि यथायोग्य स्थानमें तिष्ठे। जे भव्यजीव पुण्यके प्रभावका जगतविष प्रसिद्ध फल जान धर्मविषै रति करैं है वे मनुष्य सूयसे अधिक ज्योति पाव ह।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रन्थ ताकी भाषावचनिकाविष राम लक्ष्मणका राज्याभिषेक वणन करनेवाला अठासीवा पव पूण भया ॥ ८८ ॥

अथानन्तर राम लक्ष्मण महा प्रीतिकरि भाई शत्रुघ्नसू कहते भए, जो तुमको रुचै सो देश लेवहु। जो तुम आधी अयोध्या चाहो तो आधी अयोध्या लेवहु अथवा राजगह अथवा पोवनापुर अथवा पोड सुन्दर इत्यादि सकडो राजधानी ह। तिनविष जो नीको सो तिहारी। तब शत्रुघ्न कहता भया—मोहि मथुराका राज्य देवो। तब राम बोले—रे भ्रात! वहा राजा मधुका राज्य है अर वह रावणका जमाई है अनेक युद्धनिका जीतनहारा ताकू चमरेन्द्रने त्रिशूल रत्न दिया ह। ज्येष्ठके सूय समान दुस्सह है, अर देवनिसे दुर्निवार ह। ताकी चिंता हमारे भी निरतर रह ह, वह राजा मधु हरिवंशियोके कुलरूप आकाशविष सूय समान प्रतापी है जाने वशविष उद्योत किया ह, अर जाका लवणाणव नामा पुत्र विद्याधरनिहू कर असाध्य ह। पिता पुत्र दोऊ महाशूरवीर हैं। तात मथुरा टार और राज्य चाहो सोही लेवहु। तब शत्रुघ्न कहता भया बहुत कहिवेकरि कहा? मोहि मथुरा ही देवहु जो म मधुके छातेकी न्याई, मधुकू रणसग्रामविष न तोड लू तो दशरथका पुत्र शत्रुघ्न नाहीं। जस सिंहनिके समूहकू अष्टापद तोड डार तस ताके कटकसहित ताहि न चूर डारू तो मै तिहारा भाई नाहीं। जो मधुकू मृत्यु प्राप्त न करू तो म सुप्रभाकी कुक्षिविषै उपजा ही नाहीं। या भाति प्रचड तेजका धरणहारा शत्रुघ्न कहता भया। तब समस्त विद्याधरनिके अधिपति आश्चयकू प्राप्त भए, अर शत्रुघ्नकी बहुत प्रशसा करते भए। शत्रुघ्न मथुरा जायवेकू उद्यमी भया। तब श्रीराम कहते भए, हे भाई! मै एक याचना

करू हू । सो मोहि दक्षिणा देहु । तब शत्रुघ्न कहता भया—सबके दाता आप हो, सब आपके याचक है आप याचहु सो वस्तु कहा ? मेरे प्राणहीके नाथ आप हो तो और वस्तुकी कहा बात ? एक मधुसे युद्ध तो म न तजू , अर कहो सोही करू । तब श्रीरामने कही—हे वत्स ! तू मधुसे युद्ध कर तो जा समय वाके हाथ त्रिशूलरत्न न होय ता समय करियो । तब शत्रुघ्नने कही जो आप आज्ञा करोगे सोही होयगा । ऐसा कह भगवानकी पूजाकर नमोकार मत्र जप, सिद्धनिकू नमस्कारकरि, भोजनशालाविष जाय भोजनकरि माताके निकट आय आज्ञा मागी । तब वे माता अतिस्नेहत याके मस्तकपर हाथ धर कहती भई—हे वत्स ! तू तीक्ष्ण बाणनिकर शत्रुनिके समूहकू जीत । वह योधाकी माता अपने योधापुत्रसे कहती भई—हे पुत्र ! अब तक सग्रामविष शत्रनिने तेरी पीठ नाहीं देखी ह अर अबहु न देखेंगे, तू रण जीत आवेगा, तब म स्वणके कमलनिकर श्रीजिनेन्द्रकी पूजा कराऊगी । वे भगवान त्रलो-क्य मगलके कर्ता, आप महामगलरूप, सुर असुरनिकर नमस्कार करिवे योग्य, रागादिकके जीतनहारे तोहि मगल कर । वे परमेश्वर पुरुषोत्तम अरहत भगवत अत्यन्त दुजय मोहरिपु जीता वे तोहि कल्याण के दायक होहु । सवज्ञ त्रिकालदर्शी स्वयबुद्ध तिनके प्रसादत तेरी विजय होहु । जे केवलज्ञानकरि लोकालोककू हथेलीविष आवलाकी याई देख ह ते तोहि मगलरूप होहु । हे वत्स ! वे सिद्धपरमेष्ठी अष्टकमकर रहित, अष्टगुण आदि अनन्त गुणनिकर विराजमान, लोकके शिखर तिष्ठे, ते सिद्ध तोहि सिद्धिके कर्ता होहु । अर आचाय भव्यजीवनिके परम आधार तेरे विघ्न हर, जे कमल समान अलिप्त, सूयसमान तिमिर हर्ता, अर चन्द्रमा समान आल्हादके कर्त्ता, भूमिसमान क्षमावान, सुमेरु समान अचल, समुद्र समान गम्भीर, आकाश समान अखड इत्यादि अनेक गुणनिकर मडित ह । अर उपाध्याय जिन-शासनके पारगामी तोहि कल्याणके कर्ता होह । अर कम शत्रुनिके जीतवेकू महा शूरवीर बारह प्रकार तपकरि जे निर्वाणको साध है ते साधु तोहि महावीयके दाता होहु। या भाति विघ्नकी हरणहारी,मग लकी करणहारी माता आशीस देतीभई सो शघ्तुन माथे चढाय माताकू प्रणामकरि बाहिर निकस्या !

स्वर्णकी साकलनिकर मंडित जो गज तापर चढ्या। सो ऐसा सोहता भया जैसे मेघमालाके ऊपर चंद्रमा सोहै, अर नाना प्रकारके वाहननिपर आरूढ अनेक राजा संग चाले सो तिनकरि ऐसा सोहता भया—जैसा देवनिकर मंडित देवेंद्र सोहै। राम लक्ष्मणकी भाईसूं अधिक प्रीति सो तीन मंजिल भाईके संग गये तब भाई कहता भया—हे पूज्य पुरुषोत्तम! पीछे अयोध्या जावहु। मेरी चिंता न करो। मैं आपके प्रसादतें शत्रुनिको निस्संदेह जीतूंगा। तब लक्ष्मणने समुद्रावर्त नामा धनुष दिया। प्रज्वलित हैं मुख जिनके, पवन सारिखे वेगकूं धरें ऐसे बाण दिए। अर कृतांतवक्रकूं लार दिया। अर लक्ष्मण सहित राम पीछे अयोध्या आए, परन्तु भाईकी चिंता विशेष।

अथानन्तर शत्रुघ्न महा धीरवीर बडी सेना कर संयुक्त मथुराकी तरफ गया। अनुक्रमसे यमुना नदीके तीर जाय डेरे दिये। जहां मंत्री महासूक्ष्मबुद्धि मंत्र करते भये। देखो, इस बालक शत्रुघ्नकी बुद्धि जो मधुकूं जीतवेकी बांछा करी है। यह नयवर्जित केवल अभिमान कर प्रवर्त्या है, जा मधुने पूर्व राजा मांधाता रणविषै जीत्या, सो मधु देवनिकर विद्याधरनिकर न जीत्या जाय, ताहि यह कैसें जीतेगा? राजा मधु सागर समान है, उछलते पियादे तेई भये उतंग लहर, अर शत्रुनिके समूह तेई भये ग्राह तिनकर पूर्ण ऐसे मधुसमुद्रकूं शत्रुघ्न भुजानिकर तिरघा चाहै है। सो कैसे तिरेगा? तथा मधुभूपति भयानक वन समान है ताविषै प्रवेशकर कौन जीवता निसरै? कैसा है राजा मधुरूप वन? पयादेके समूह तेई हैं वृक्ष जहां, अर माते हाथिनिकर महा भयंकर, अर घोडनिके समूह तेई हैं मृग जहां। ये वचन मंत्रिनिके सुन कृतांतवक्र कहता भया—तुम साहस छोड ऐसे कायरताके वचन क्यों कहो हो? ७३१
यद्यपि वह राजा मधु चमरेंद्र कर दिया जो अमोघ त्रिशूल ताकर अति गर्वित है तथापि ता मधुको शत्रुघ्न सर्वथा जीतेगा। जैसे हाथी महाबलवान है अर सूण्डकर वृक्षनिकूं उपाडे है, मद झरै है तथापि ताहि सिंह जीते है। यह शत्रुघ्न लक्ष्मी अर प्रतापकरि मंडित है, महाबलवान है, शूरवीर है, महा पंडित प्रवीण है, अर याकें सहाई श्रीलक्ष्मण हैं। अर आप सबही भले मनुष्य याके संग हैं, तातें यह शत्रुघ्न

अवश्य शत्रुकू जीतेगा । जब ऐसे वचन कृतान्तवक्रने कहे तब सबही प्रसन्न भए, अर पहिलेही मंत्रीजननिने जो मथुरामें हलकारे पठाये हुते ते आयकर सब वृत्तांत शत्रुघ्नसूं कहते भए। हे देव ! मथुरा नगरीकी पूर्व दिशाकी ओर अत्यन्त मनोग्य उपवन है तहा रणवास सहित राजा मधु रमै है । राजा के जयन्ती नाम पटराणी है ता सहित वनक्रीडा करै है जैसे स्पर्श इन्द्रियके वश भया गजराज बन्धन विषै पड़े है, तैसे राजा मोहित भया विषयनिके बन्धन विषै पड्या है, महा कामी । आज छठा दिन है कि सब राज्य काज तज प्रमादके वश भया वनविषै तिष्ठै है । कामान्ध मूर्ख तिहारे आगमकूं नाहीं जाने है, अर तुम ताके जीतवेकूं वांछा करी है ताकी ताहि सुध नाहीं । अर मंत्रिनिने बहुत समझाया सो काहूकी बात धारे नाहीं, जैसे मूढ रोगी वैद्यकी औषध न धारै । इस समय मथुरा हाथ आवे तो आवे । अर कदाचित मधु परीविषै धसा तो समुद्रसमान अथाह है । यह वचन हलकारोके मुखसे शत्रुघ्न सुनकर कार्यविषै प्रवीण ताही समय बलवान योधानिके सहित दौडकर मथुरा गया, अर्धरात्रिके समय सब लोक प्रमादी हुते, अर नगरी राजा रहित हुती, सो शत्रुघ्न नगरविषै जाय पैठा । जैसै योगी कर्म नाश कर सिद्धपुरीविषै प्रवेश करै, तैसे शत्रुघ्न द्वारकूं चूरकर मथुराविषै प्रवेश करता भया । मथुरा महामनोग्य है । तब बन्दीजननिके शब्द होते भये जो राजा दशरथका पुत्र शत्रुघ्न जयवंत होहु । ये शब्द सुनके नगरीके लोक परचक्रका आगम न जान अति व्याकुल भए । जैसे लंका अंगदके प्रवेशकर अति व्याकुल हुती तैसे मथुराविषै व्याकुलता भई । कईएक कायर हृदयकी धरनहारी स्त्री हुतीं तिनके भय कर गर्भपात होय गये, अर कईएक महाशूरवीर कलकलाट शब्द सुन तत्काल सिंहकी न्याई उठे, शत्रुघ्न राजमन्दिर गया, आयुधशाला अपने हाथ कर लीनी अर स्त्री बालक आदि जे नगरीके लोक अति त्रासकूं प्राप्त भए तिनकूं महामधुर वचनकर धीर्य बंधाया जो यह श्रीरामका राज्य है यहा काहूकूं दुख नाहीं । तब नगरीके लोक त्रासरहित भए अर शत्रुघ्नको मथुराविषै आया सुन राजा मधु महाकोपकर उपवनतै नगरकूं आया, सो मथुराविषै शत्रुघ्नके सुभटोकी रक्षाके कारण प्रवेश न कर ७४०

सक्या जैसै मुनिके हृदयविषै मोह प्रवेश न कर सके। नानाप्रकारके उपायकर प्रवेश न पाया, अर त्रिशूलहू ते रहित भया तथापि महाभिमानी मधुने शत्रुघ्नसे संधि न करी, युद्ध हीकूं उद्यमी भया। तब शत्रुघ्न

के योधा युद्धकूं निकसे। दोनो सेना समुद्रसमान, तिनविषै परस्पर युद्ध भया। रथनिके तथा हाथिनके तथा घोडनिके असवार परस्पर युद्ध करते भए। पयादे भिडे। नानाप्रकारके आयुधनिक धारक, महा समर्थ नाना प्रकार आयुधनि कर युद्ध करते भये। ता समय परसेनाके गवकूं न सहता संता कृतांत वक्र सेनापति परसेनाविषै प्रवेश करता भया, नाहीं निवारी जाय है गति जाकी, तहाँ रणक्रीडा करै है जैसे स्वयंभूरमण उद्यानविषै इन्द्र क्रीडा करै। तब मधुका पुत्र लवणार्णवकुमार याहि देख युद्धके अर्थि आया। अपने बाणनिरूप मेघकर कृतांतवक्ररूप पर्वतकूं आच्छादित करता भया, अर कृतांत-वक्र भी आशीविष तुल्य बाणनिकर ताके बाण छेदता भया अर धरती आकाशकूं अपने बाणनिकर व्याप्त करता भया। दोऊ महायोधा सिंह समान बलवान, गजनिपर चढे, क्रोधसहित युद्ध करते भए। वानैं वाकूं रथरहित किया अर वाने वाकूं। बहुरि कृतांतवक्रने लवणार्णवके वक्षस्थलविषै बाण लगाया अर ताका बख्तर भेदा। तब लवणार्णव कृतांतवक्र ऊपर तोमर जातिका शस्त्र चलावता भया, क्रोधकर लाल हैं नेत्र जाके। दोनो घायल भए, रुधिर कर रंग रहे हैं वस्त्र जिनके। महा सुभटता के स्वरूप दोनो क्रोध कर उद्धत फूले टेसूके वृक्ष समान सोहते भए। गदा खड्ग चक्र इत्यादि अनेक आयुधनिकर परस्पर दोऊ महा भयंकर युद्ध करते भए। बल उन्माद विषादके भरे बहुत बेर लग युद्ध भया। कृतांतवक्रने लवणार्णवके वक्षस्थलविषै घाव किया, सो पृथ्वीविषै पडया। जैसे पुण्यके क्षयतैं ७४१
स्वर्गवासी देव मध्य लोकविषै आय पडे। लवणार्णव प्राणान्त भया। तब पुत्रकूं पडा देख मधु कृतान्तवक्र पर दौडा तब शत्रुघ्नने मधुकूं रोक्या, जैसे नदीके प्रवाहकूं पर्वत रोके। मधु महा दुस्सह शोक अर कोपका भरा युद्ध करता भया। सो आशीविषकी दृष्टि समान मधुकी दृष्टि शत्रुघ्नकी सेना के लोक न सहार सकते भए। जैसे उग्र पवनके योगतैं पत्रनिके समूह चलायमान होय तैसे लोक

पद्म पुराण ७४२

चलायमान भए । बहुरि शत्रुघ्नकू मधुके सन्मुख जाता देख धीयकू प्राप्त भए । शत्रुके भयकर लोक तबलग ही डरै जबलग अपने स्वमीकू प्रबल न देख,अर स्वामीकू प्रसन्नवदन देख धीयकू प्राप्त होय। शत्रुघ्न उत्तम रथपर आरूढ, मनोग्य धनुष हाथविष, सुन्दर हारकर शोभ ह वक्षस्थल जाका, सिरपर मुकुट धरे, मनोहर कुण्डल पहिरे, शरदके सूय समान महातेजस्वी, अखण्डित है गति जाकी शत्रुके सन्मुख जाता अति सोहता भया, जस गजराजपर जाता मृगराज सोह । अर अग्नि सूख पत्रनिको जलाव तस मधके अनेक योधा क्षणमात्रविष विध्वश किए । शत्रुघ्नके सन्मुख मधुका कोई योधा न ठहर सका, जस जिनशासनके पडित स्याद्वादी तिनके सन्मुख एकातवादी न ठहर सक । जो मनुष्य शत्रुघ्नसू युद्ध किया चाहे सो तत्काल विनाशकू पाव, जस सिहक आग मग । मधुकी समस्त सेनाके लोग अति व्याकुल होय मधुके शरण आये । सो मधु महा सुभट शत्रुघ्नकू सन्मुख आवता देख शत्रुघ्न की ध्वजा छेदी अर शत्रुघ्नने बाणनिकर ताके रथके अश्व हते । तब मधु पवत समान जो वरुणेन्द्र गज तापर चढ्या, क्रोधकर प्रज्ज्वलित ह शरीर जाका शत्रुघ्नकू निरन्तर बाणनिकर आच्छादने लगा, जस महामेघ सद्रकू आच्छाव । सो शत्रुघ्न महा शूरवीरने ताके बाण छेद डारे, मधुका बखतर भदा । जस अपने घर कोई पाहुना आव अर ताकी भले मनुष्य भलीभाति पाहुनगति कर तस शत्रुघ्न मधुकी रणविष शस्त्रनिकर पाहुनगति करता भया ।

अथानन्तर मधु महा विवेकी शत्रुघ्नकू दुजय जान,आपक त्रिशूल आयुधसे रहित जान, पत्रकी मत्यु देख, अर अपनी आयु हू अल्प जान मुनिका वचन चितारता भया—अहो जगतका समस्तही आरम्भ महा हिसारूप दुखका देनहारा सवथा त्याज्य ह । यह क्षणभगुर ससारका चरित्र, ताम मूढ जन राचे । या ससारविष धम ही प्रशसा योग्य ह, अर अधमका कारण अशुभ कम प्रशसा योग्य नाहीं । यह प्राप्तकम नरक निगोदका कारण ह । जो दुलभ मनुष्य देहकू पाय धमविष बुद्धि नहीं धरे ह सो प्राणी मोह कमकरि ठग्या अनन्त भव भ्रमण कर है । पापीने ससार असारकू सार, शरीरकू ध्रुव जाना,

आत्महित न किया। प्रमादविषै प्रवरता, रोग समान ये इन्द्रियनिके भोग भले जान भोगे, जब मैं स्वाधीन हुता तब मोहि सुबुद्धि न आई, अब अंतकाल आया अब कहा करूं ? घरमें आग लागी ता समय तालाब खुदवाना कौन अर्थ ? अर सपने डसा ता समय देशांतरसे मंत्राधीश बुलवाने अर दूरदेशसे मणि औषधि मंगवाना कौन अर्थ ? तातैं अब सब चिंता तज निराकुल होय, अपना मन समाधानविषै ल्याऊं। यह विचार वह धीरवीर घावकर पूर्ण हाथी चढ्या ही भाव मुनि होता भया। अरहंत सिद्ध आचार्य उपाध्याय साधुनिकूं मनकरि वचनकरि कायकरि बारम्बार नमस्कार कर अर अरहंत सिद्ध साधु तथा केवली प्रणीत धर्म यही मंगल है, यही उत्तम हैं इनहींका मेरे शरण है। अढाई द्वीपविषै पंद्रह कर्मभूमि तिनविषै भगवान अरहंत देव होय हैं वे त्रैलोक्यनाथ मेरे हृदयविषै तिष्ठो। मैं बारम्बार नमस्कार करूं हूं। अब मैं यावज्जीव सब पाप योग तजे, चारों आहार तजे। जे पूर्व पाप उपार्जे हुते तिनकी निंदा करूं हूं अर सकल वस्तुका प्रत्याख्यान करूं हूं। अनादि कालतैं या संसार वनविषै जो कर्म उपार्जे हुते ते मेरे दुःकृत मिथ्या होहु। भावार्थ–मुझे फल मत देहु, अब मैं तत्व ज्ञानविषै तिष्ठा, तजिवे योग्य जो रागादिक तिनकूं तजूं हूं अर लेयवे योग्य जो निजभाव तिनकूं लेऊं हूं। ज्ञान दर्शन मेरे स्वभाव ही है, सो मोसे अभेद्य है। अर जे शरीरादिकै समस्त परपदार्थ कर्म के संयोग कर उपजे, ये मोसे न्यारे है। देह त्यागके समय संसारी लोक भूमिका तथा तृणका साथरा करे हैं सो साथरा नाहीं। यह जीव ही पाप बुद्धिरहित होय तब अपना आप ही साथरा है। ऐसा विचारकर राजा मधुने दोनों प्रकारके परिग्रह भावोंसे तजे अर हाथीकी पीठ पर बैठा ही सिरके केशलोच करता भया, शरीर घावनिकर अतिव्याप्त है तथापि महा दुर्धर धीयकूं धर करि अध्यात्मयोगविषै आरूढ होय कायाका ममत्व तजता भया, विशुद्ध है बुद्धि जाकी। तब शत्रुघ्न मधुकी परम शांत दशा देखि नमस्कार करता भया अर कहता भया–हे साधो! मो अपराधीके अपराध क्षमा करहु। देवनिकी अप्सरा मधुका संग्राम देखनेकूं आई हुतीं, आकाशसे कल्पवृक्षनिके पुष्पोंकी वर्षा करती भई। मधुका

वीररस शातरस देख देव भी आश्चयकू प्राप्त भए। बहुरि मध महा धीर एक क्षणमात्रविष समाधि मरण कर महासुखके सागरविष तीजे सनतकुमार स्वगविषै उत्कष्ट देव भया। अर शत्रुघ्न मधुकी स्तुति करता महा विवेकी मथुराविष प्रवेश करता भया। जसे हस्तिनापुरविषै जयकुमार प्रवेश करता सोहता भया तैसा शत्रुघ्न मधुपुरीविष प्रवेश करता सोहता भया। गौतमस्वामी राजा श्रेणिकसू कहै है हे नराधिपति श्रेणिक! प्राणियोके या ससारविष कर्मोंके प्रसगकरि नाना अवस्था होय ह तात उत्तमजन सदा अशुभ कम तजकरि शुभकम करो, जाके प्रभाव करि सूय समान कातिकू प्राप्त होहु।

इति श्रीरविषेणाचायविरचित महा पद्मपुराण सस्कृतग्रन्थ ताकी भाषावचनिकाविष मधुकायुद्ध अर वराग्य अर लवणाणवका मरण वणन करनेवाला नवासीवा पव पूण भया॥ ८६॥

अथानन्तर असुरकुमारोके इन्द्र जो चमरेन्द्र महाप्रचड तिनका दिया जो त्रिशूलरत्न मधुके हुता ताके अधिष्ठाता देव त्रिशूलकू लेकर चमरेन्द्रके पास गए। अतिखेद खिन्न महा लज्जावान होय मधुके मरणका वत्तात असुरेन्द्रसू कहते भए। तिनकी मधुसू अतिमित्रता सो पातालसे निकसकरि महाक्रोध के भरे मथुरा आयवेकू उद्यमी भए। ता समय गरुडेन्द्र असुरेन्द्रके निकट आये अर पूछते भए—हे दत्येंद्र! कौन तरफ गमनकू उद्यमी भए हो? तब चमरेन्द्रने कही—जाने मेरा मित्र मधु मारया ह ताहि कष्ट देवेकू उद्यमी भया हू। तब गरुडेन्द्रने कही कहा विशिल्याका माहात्म्य तुमने न सुन्या है? तब चमरेन्द्रने कही वह अदभुत अवस्था विशिल्याकी कुमार अवस्थाविष ही हुती अर अब तो निर्विष भुजगी समान ह। जौलग विशिल्याने वासुदवका आश्रय न किया हुता तौलग ब्रह्मचयके प्रसादत असाधारण शक्ति हुती, अब वह शक्ति विशिल्याविष नाहीं। जे निरतिचार बालब्रह्मचय धारें तिनके गुननि की महिमा कहिवेविष न आव। शीलके प्रसादकरि सुर असुर पिशाचादि सब डरें। जौलग शीलरूप खड्गकू धारें तौलग सबकर जीत्या न जाय, महादुजय ह। अब विशल्या पतिव्रता ह, व्यभिचारिणी ७४४

नाहीं तात वह शक्ति नाहीं। मद्य मास मथुन यह महापाप ह। इनके सेवनसे शक्तिका नाश होय है। जिनका व्रतशील नियमरूप कोट भग्न न भया तिनकू कोई विघ्न करवे समथ नाहीं। एक कालाग्नि नाम रुद्र महा भयकर भया सो हे गरुडेन्द्र! तुम सुना ही होयगा। बहुरि वह स्त्रीसू आसक्त होय नाशकू प्राप्त भया। तात विषयका सेवन विषसे भी विषम ह। परम आश्चयका कारण एक अखड ब्रह्मचय है। अब म मित्रके शत्रुप जाऊगा, तुम तिहारे स्थानक जावहु। ऐसा गरुडेन्द्रसू कहकर चमरेन्द्र मथुरा आए, मित्रके मरणकरि कोपरूप मथुराविष वही उत्सव देख्या जो मधुके समय हुता। तब असुरेन्द्रने विचारी—ये लोक महादुष्ट कतघ्न ह, देशका धनी पुत्र सहित मरगया ह, अर अन्य आय बठ्या ह, इनकू शोक चाहिए कि हष? जाके भुजाकी छाया पाय बहुतकाल सुखसू बसे ता मधुकी मत्युका दुख इनकू क्यो न भया? ये महा कतघ्न ह, सो कतघ्नका मुख न देखिये। लोकनिकरि शूरवीर सेवायोग्य, शूरवीरनिकर पण्डित सेवा योग्य ह। सो पण्डित कौन? जो पराया गुण जान। सो ये कतघ्न महामूख ह। ऐसा विचारकर मथुराके लोकनिपर चमरेन्द्र कोप्या, इन लोकोका नाश करू। यह मथुरापरी या देशसहित क्षय करू। महाक्रोधके वश होय असुरेन्द्र लोकनिकू दुस्सह उपसग करता भया, अनेक रोग लोगनिकू लगाए। प्रलयकालकी अग्नि समान निदई होय लोकरूप वनकू भस्म करवेकू उद्यमी भया। जो जहा ऊभा हुता सो वहा ही मर गया, अर बठ्या हुता सो बठा ही रह गया। सूता था सो सूता ही रहगया। मरी पडी, लोककू उपसग दख, मित्र देव देवताके भयसे शत्रुघ्न अयोध्या आया। सो जीतकर महाशूरवीर भाई आया बलभद्र नारायण अति हर्षित भए, अर शत्रुघ्नकी माता सुप्रभा भगवानकी अदभुत पूजा करावती भई। अर दुखी जीवनिकू करुणाकर, अर धर्मात्मा जीवनिकू अति विनयकर अनेक प्रकार दान देती भई। यद्यपि अयोध्या महा सदर ह, स्वणरत्ननिके मदिरनिकर मडित है, कामधेनु समान सव कामना पूरणहारी देवपुरीसमान पुरी ह तथापि शत्रुघ्नका जीव मथुरासू अति आसक्त, सो अयोध्याविषै अनुरागी न होता भया। जैस कईएक दिन सीता विना राम

उदास रहे तस शत्रुघ्न मथुरा बिना अयोध्याविषै उदास रहे। जीवोंकू सुन्दर वस्तुका संयोग स्वप्न समान क्षण भंगुर है, परम दाहकू उपजावै है, ज्येष्ठके सूर्यसे हू अधिक आतापकारी है।

इति श्रीरविषेणाचार्य विरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रंथ ताकी भाषावचनिकाविषै मथुराके लोकनिक असुरेन्द्रकृत उपसर्ग का वर्णन करनेवाला नव्वेवां पर्व पूर्ण भया ॥ ९० ॥

अथानन्तर राजा श्रेणिक गौतम स्वामीसू पूछता भया—हे भगवन! कौन कारण कर शत्रुघ्न मथुरा हीकू याचता भया। अयोध्याहूतैं ताहि मथुराका निवास अधिक क्यों रुचा? अनेक राजधानी स्वर्गलोक समान सो न वांछी अर मथुरा ही वांछी, ऐसी मथुरासू कहा प्रीति? तब गौतमस्वामी ज्ञानके समुद्र, सकल सभारूप नक्षत्रनिके चन्द्रमा, कहते भये—हे श्रेणिक! इस शत्रुघ्नके अनेक भव मथुराविषै भए तातैं याकू मधुपुरीसू अधिक स्नेह भया। यह जीव कर्मनिके सम्बन्धत अनादिकालका संसार सागर विषै बसै है सो अनन्त भव धरै। यह शत्रुघ्नका जीव अनन्त भव भ्रमणकरि मथुराविषै एक यमन देव नामा मनुष्य भया। महा क्रूर, धर्मसे विमुख सो मरकरि शूकर खर काग ये जन्म धरि अज-पुत्र भया सो अग्नि विषै जल मूवा। भैसा जलके लादनका भया सो छ वार भैसा होय दुखसू मूवा। नीच-कुलविषै निर्धन मनुष्य भया। हे श्रेणिक! महा पापी तो नरककू प्राप्त होय है अर पुण्यवान जीव स्वर्ग विषै देव होय है, अर शुभाशुभमिश्रित करि मनुष्य होय है। बहुरि यह कुलन्धरनामा ब्राह्मण भया, रूपवान अर शील रहित। सो एक समय नगरका स्वामी दिग्विजयनिमित्त देशांतर गया ताकी ललिता नाम राणी महलके झरोखा विषै तिष्ठै हुती सो पापिनी इस दुराचारी विप्रकू देख कामबाणकर वेधी गई। सो याहि महलविषै बुलाया। एक आसनपर राणी अर यह रहे। ताही समय राजा दूरका चल्या अचानक आया अर याहि महलविषै देख्या सो राणी मायाचारकर कही—जो यह बंदीजन है, भिक्षुक है तथापि राजाने न मानी। राजाके किंकर ताहि पकडकर नृपकी आज्ञातैं आठो अंग दूर करवे के अर्थ

नगरके बाहिर ले जाते हुते। सो कल्याणनामा साधुने देख कही जो तू मुनि होय तो तोहि छुडाव। तब याने मुनि होना कबूल किया। तब किंकरनिसे छुडाया सो मुनि होय महातपकरि स्वर्गविषै ऋजु विमानका स्वामी देव भया। हे श्रेणिक! धर्मसे कहा न होय?

अथानन्तर मथुराविषै चन्द्रभद्र राजा, ताके राणी धारा ताके भाई सूर्यदेव, अग्निदेव, यमुनादेव। अर आठपुत्र, तिनके नाम श्रीमुख, समुख, सुमुख, इन्द्रमुख, प्रमुख, उग्रमुख, अर्कमुख, परमुख। अर राजा चन्द्रभद्रके दूजी राणी कनकप्रभा ताकू वह कुलंधर नामा ब्राह्मणका जीव स्वर्गविषै देव होय तहांते चयकर अचल नाम पुत्र भया सो कलावान अर गुणनिकर पूर्ण, सब लोकके मनका हरणहारा, देव कुमार तुल्य क्रीडाविषै उद्यमी होता भया।

अथानन्तर एक अंकनामा मनुष्य धर्मकी अनुमोदनाकर श्रावस्ती नगरीविषै एक कम्पनाम पुरुष ताके अंगिका नामा स्त्री उसके अप नामा पुत्र भया सो अविनयी, तब कम्पने अपकू घरसे निकास दिया सो महादुखी भूमिविषै भ्रमण करै। अर अचलनामा कुमार पिताकू अतिवल्लभ, सो अचल कुमारकी बडी माता धरा उसके तीन भाई अर आठ पुत्र तिन्होंने एकांतमें अचलके मारणेका मन्त्र किया सो यह वार्ता अचलकुमारकी माताने जानी। तब पुत्रकू भगाय दिया। सो तिलकवनविषै उसके पांवविषै कांटा लाग्या सो कम्पका पुत्र अप काष्ठका भार लेकर आवे सो अचल कुमारकू कांटेके दुखसू करुणावंत देख्या। तब अपने काष्ठका भार मेल छुरीसे कुमारका कांटा काढ कुमारकू दिखाया सो कुमार अति प्रसन्न भया अर अपकू कहा—तू मेरा अचलकुमार नाम याद रखियो। अर मोहि भूपति सुने वहां मेरे निकट आइयो। इस भांति कह अपकू विदा किया सो अप गया। अर राजपुत्र महादुखी कौशांबी नगरीके विषै आया, महापराक्रमी सो बाण विद्याका गुरु जो विशिखाचार्य उसे जीतकर प्रतिष्ठा पाई हुती सो राजाने अचल कुमारकू नगरविषै ल्यायकर अपनी इन्द्रदत्ता नामा पुत्री परणाई। अनुक्रमकरि पुण्यके प्रभावसे राज पाया, सो अंगदेश आदि अनेक देशनिकू जीतकर

पद्म
पुराण
८५

से रहित ह। जिन आज्ञा पालक होय तो वर्षाविष विहार क्यो कर ? सो यह तो उठ गया अर याके पुत्रको बधूने अति भक्ति कर प्रासुक आहार दिया। सो मुनि आहार लेय भगवानके चत्यालय आय जहा द्युतिभट्टारक विराजते हुते ये सप्तर्षि ऋद्धिके प्रभावकर धरतीस चार अगुल अलिप्त चले आए अर चत्यालयविष धरतीपर पग धरते आए। आचाय उठ खडे भए अति आदरसे इनकू नमस्कार किया। अर जे द्युतिभट्टारकके शिष्य हुते तिन सवन नमस्कार किया। बहुरि ये सप्त तो जिन बदनाकरि आकाश क माग मथुरा गए। इनके गए पीछ अहदत्त सेठ चत्यालयविष आया। तब द्युतिभट्टारकने कही सप्तमहर्षि महायोगीश्वर चारणमुनि यहा आए हुते, तुमने हू वह बद ह ? वे महा परुष महातपके धारक ह, चार महिने मथुरा निवास किया ह अर चाहे जहा आहार ल जाय। आज अयोध्याविष आहार लिया, चत्यालय दशन कर गए हमसे धमचर्चा करी वे महा तपोधन नगरगामी शुभ चेष्टाके धरणहार परम उदार,ते मुनि बदिवे योग्य ह। तब वह श्रावकनिविष अग्रणी आचायके मखसू चारण मुनिनिको महिमा सुनकर खेदखिन्न होय पश्चाताप करता भया। धिक्कार मोहि म सम्यकदशन रहित वस्तुका स्वरूप न पिछान्या म अत्याचारी मिथ्यादष्टि मो समान और अधर्मी कौन ? वे महामुनि मेरे मन्दिर आहारकू आए अर म नवधा भक्तिकर आहार न दिया। जो साधकू देख सन्मान न कर अर भक्तिकर अन्नजल न देय सो मिथ्यादष्टि ह। म पापी पापात्मा पापका भाजन, महा निद्य, मो समान और अज्ञानी कौन ? म जिनवाणीसे विमुख। अब म जोलग उनका दशन न करू तौलग मेरे मनका दाह न मिट। चारण मनिनिकी तो यही रीति ह-चौमासे निवास तो एक स्थान कर अर आहार अनेक नगरीविषै कर आव। चारण ऋद्धिके प्रभावकरि उनके अगसे जीवनिकू बाधा न होय। ७५०

अथानन्तर कार्त्तिककी पूनो नजीक जान सेठ अहदत्त महासम्यकदष्टि नपतुल्य विभूति जाके, अयोध्यात मथुराकू सवकुटुम्ब सहित सप्तऋषिके पूजन निमित्त चाल्या। जाना ह मुनिनिका महात्म्य जाने, अर अपनी बारम्बार निन्दा कर ह। रथ हाथी पियादे तुरगनिके असवार इत्यादि बडी सेना

सहित योगीश्वरनिकी पूजाकू शीघ्रही चाल्या। बडी विभूति कर युक्त शुभ ध्यानविषै तत्पर कार्तिक सुदी सप्तमीके दिन मुनिनिके चरणनिविषै जाय पहुँचा। वह उत्तम सम्यक्त्वका धारक विधिपूर्वक मुनि बन्दनाकर मथुराविषै अति शोभा करावता भया। मथुरा स्वर्ग समान सोहती भई। यह वृत्तांत सुन शत्रुघ्न शीघ्रही महा तुरंग चढ्या सप्तऋषिनिके निकट आया अर शत्रुघ्नकी माता सुप्रभा भी मुनिनिकी भक्ति कर पुत्रके पीछे ही आई। अर शत्रुघ्न नमस्कार कर मुनिनिके मुख धर्म श्रवण करता भया। मुनि कहते भए, हे नृप! यह संसार असार है, वीतरागका मार्ग सार है, जहां श्रावकके बारह व्रत कहे, मुनिके अठाईस मूल गुण कहे। मुनीनिको निर्दोष आहार लेना। अकृत अकारित राग रहित प्रासुक आहार विधिपूर्वक लीये योगीश्वरोंके तपकी बढबारी होय। तब वह शत्रुघ्न कहता भया—हे देव! आपके आय या नगरतैं मरी गई, रोग गए, दुर्भिक्ष गया, सब विघ्न गए, सुभिक्ष भया, सब साता भई, प्रजाके दुख गए, सब समृद्धि भई, जैसे सूर्यके उदयतैं कमलनी फूलै, कईएक दिन आप यहां ही तिष्ठो।

तब मुनि कहते भए—हे शत्रुघ्न! जिन आज्ञा सिवाय अधिक रहना उचित नाहीं। यह चतुर्थकाल धर्मके उद्योतका कारण है। याविषै मुनीन्द्रका धर्म भव्य जीव धारै है, जिन आज्ञा पालैं हैं, महामुनिके केवलज्ञान प्रकट होय है। मुनिसुव्रतनाथ तो मुक्त भए, अब नमि, नेमि, पार्श्व, महावीर चार तीर्थंकर और होवेंगे। बहुरि पंचमकाल जाहि दुखमाकाल कहिये सो धर्मकी न्यूनतारूप प्रवरतेगा। ता समय पाखंडी जीवनिकर जिनशासन अति ऊंचा है तोहू आच्छादित होयगा, जैसे रजकर सूर्यका बिंब आच्छादित होय। पाखंडी निर्दई दया धर्मकूं लोपकर हिंसाका मार्ग प्रवर्तन करेंगे। ता समय मसान समान ग्राम, अर प्रेत समान लोक, कुचेष्टाके करणहारे होवेंगे, महाकुधर्मविषै प्रवीण क्रूर चोर पाखण्डी, दुष्ट जीव तिनकर पृथ्वी पीडित होयगी। किसान दुखी होवेंगे, प्रजा निर्धन होयगी, महा हिंसक जीव परजीवन के घातक होवेंगे, निरन्तर हिंसाकी बढवारी होयगी, पुत्र माता पिताकी आज्ञा से विमुख

होवेंगे, अर माता पिता हू स्नेह रहित होवेंगे। अर कलिकालविषै राजा लूटेरे होवेंगे, कोई सुखी नजर न आवेगा। कहिवेके सुखी वे पापचित्त दुर्गतिकी दायक, कुकथा कर परस्पर पाप उपजावेंगे। हे शत्रुघ्न! कलिकालविषै कषायकी बहुलता होवेगी, अर अतिशय समस्त विलय जावेंगे। चारण मुनि देव विद्याधरनिका आवना न होयगा। अज्ञानी लोक नग्नमुद्रा के धारक मुनिनकू देख निन्दा करेंगे, मलिनचित्त मूढ जन अयोग्य को योग्य जानेंगे। जसे पतग दीपककी शिखाविषै पडै तसे अज्ञानी पापपथविषै पड दुर्गतिके दुख भोगेंगे। अर जे महा शान्त स्वभाव तिनकी दुष्ट निन्दा करेंगे विषयी जीवनिकू भक्तिकर पूजेंगे। दीन अनाथ जीवनिकू दया भावकर कोई न देवेगा, सो वृथा जायगा। जसे शिलाविषै बीज बोय निरन्तर सींचे तो हू कुछ कायकारी नाहीं, तसे कुशील पुरुषनिकू विनय भक्तिकर दीया कल्याणकारी नहीं। जो कोई मुनिनकी अवज्ञा कर ह अर मिथ्या मार्गियोकू भक्ति कर पूज ह सो मलयागिरिचन्दनकू तजकर कटकवृक्षकू अगीकार कर ह। ऐसा जानकर हे वत्स! तू दान पूजाकरि जन्म कतार्थकर, गृहस्थोकू दान पूजा ही कल्याणकारी ह अर समस्त मथुराके लोक धर्मविषै तत्पर होवो, दया पालो, साधर्मियोसे वात्सल्य धारो, जिनशासनकी प्रभावना करहु, घर-घर जिनबिंब थापहु, पूजा अभिषेककी प्रवृत्ति करहु, जाकरि सब शात हो, जो जिन धर्मका आराधन न करेगा अर जाके घरविषै जिन पूजा न होयगी, दान न होवेगा ताहि आपदा पीडेगी। जसे मृगकू व्याघ्री भख तसे धर्म रहितकू मरी भखगी। अंगुष्ठ प्रमाण हू जिनेन्द्रकी प्रतिमा जिसके विराजेगी उसके घरविषै मरी यू भाजगी जसे गरुडके भयसे नागिनी भागे। ये वचन मुनिनिके सुन शत्रुघ्नने कही—हे प्रभो! जो आप आज्ञा करी त्यो ही लोक धर्मविषै प्रवर्तेंगे।

अथानन्तर मुनि आकाश मार्ग विहार कर अनेक निर्वाण भूमि वदकरि सीताके घर आहारकू आये। कसे ह मुनि? तपही ह धन जिनके। सीता महा हर्षकू प्राप्त होय श्रद्धा आदि गुणोकरि मंडित परम अन्नकर विधिपूर्वक पारणा करावती भई। मुनि आहार लेय आकाशके मार्ग विहार कर गए

शत्रुघ्नने नगरीके बाहिर अर भीतर अनेक जिनमन्दिर कराए। घर घर जिनप्रतिमा पधराई, नगरी सब उपद्रवरहित भई। वन उपवन फल पुष्पादिक कर शोभित भए, वापिका सरोवरी कमलों कर मंडित सोहती भई, पक्षी शब्द करते भए, कैलाशके तटसमान उज्ज्वल मन्दिर नेत्रोंकू आनन्दकारी विमान तुल्य सोहते भए, अर सब किसान लोक सम्पदाकर भरे सुखसूं निवास करते भए। गिरिके शिखर समान ऊंचे अनाजोंके ढेर गावोंविषै सोहते भए। स्वर्ण रत्नादिककी पृथ्वीविषै विस्तीर्णता होती भई। सकल लोक सुखी, रामके राज्यविषै देवो समान अतुल विभूतिके धारक, धर्म अर्थ कामविषै तत्पर होते भए। शत्रुघ्न मथुराविषै राज्य करै। रामके प्रतापसे अनेक राजावोंपर आज्ञा करता सोहै, जैसें देवोंविषै वरुण सोहै। या भांति मथुरापुरीका ऋद्धिके धारी मुनिनके प्रतापकरि उपद्रव दूर होता भया। जो यह अध्याय बांचे सुने सो पुरुष शुभनाम शुभगोत्र शुभ साता वेदनीयका बंध करै। जो साधुवोंकी भक्तिविषै अनुरागी होय अर साधुवोंका समागम चाहे वह मनवांछित फलकूं प्राप्त होय। या साधुवोंके संगकूं पायकरि धर्मकूं आराधकर प्राणी सूर्यसे भी अधिक दीप्तिकूं प्राप्त होहु।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रंथ ताकी भाषावचनिकाविषै मथुराका उपसर्ग निवारण वर्णन करनेवाला बानवेवां पर्व पूर्ण भया॥ ९२॥

अथानन्तर विजयार्धकी दक्षिण श्रेणिविषै रत्नपुर नामा नगर, वहां राजा रत्नरथ, उसकी राणी पूर्णचन्द्रानना, उसके पुत्री मनोरमा महा रूपवती। उसे यौवनवती देख राजा वर ढूंढवेकी बुद्धिकर व्याकुल भया। मंत्रियोंसूं मंत्र किया कि यह कुमारी कौनकूं परणाऊं? या भांति राजा चिंतायुक्त। कई एक दिन गए एक दिन राजाकी सभाविषै नारद आया। राजाने बहुत सन्मान किया। नारद सब ही लौकिक रीतियोंविषै प्रवीण, उसे राजाने पुत्रीके विवाहनेका वृत्तांत पूछया। तब नारदने कही रामका भाई लक्ष्मण महा सुन्दर है, जगतविषै मुख्य है, चक्रके प्रभावकर नवाए हैं समस्त नरेन्द्र जिसने, ऐसो

कन्या उसके हृदयविषै आनन्ददायिनी होवे, जैसे कुमुदनीके वनकूं चांदनी आनन्दायिनी होय। जब या भांति नारदने कही तब रत्नरथके पुत्र हरिवेग मनोवेग वायुवेगादि महामानी स्वजनोके घातकर उपज्या है वैर जिनके, प्रलयकालकी अग्नि समान प्रज्वलित होय कहते भए—जो हमारा शत्रु जिसे हम मारा चाहें उसे कन्या कसै देव? यह नारद दुराचारी है, इसे यहांसे काढहु। ऐसे वचन राजपुत्रोंके सुन किंकर नारद पर दौडे तब नारद आकाशमार्ग विहारकर शीघ्र ही अयोध्या लक्ष्मणपै आया। अनेक देशांतरकी वार्ता कह रत्नरथकी पुत्री मनोरमाका चित्राम दिखाया, सो वह कन्या तीनलोककी सुन्दरियोंका रूप एकत्र कर मानो बनाई है। सो लक्ष्मण चित्रपट देख अति मोहित होय कामके वश भया। यद्यपि महा धीर वीर है तथापि वशीभूत होय गया। मनविषै विचारता भया जो यह स्त्रीरत्न मुझे न प्राप्त होय तो मेरा राज्य निष्फल अर जीतव्य वृथा। लक्ष्मण नारदसूं कहता भया—हे भगवन! आपने मेरे गुणकीर्त्तन किये, अर उन दुष्टोंने आपसूं विरोध किया, सो वे पापी प्रचण्ड मानी, महा क्षुद्र, दुरात्मा, कार्यके विचारसूं रहित हैं, उनका मान मैं दूर करूंगा। आप समाधानविषै चित्त लावो। तिहारे चरण मेरे सिर पर हैं अर उन दुष्टनिकूं तिहारे पायन पाडूंगा। ऐसा कहकर विराधित विद्याधरकूं बुलाया अर कही रत्नपुर ऊपर हमारी शीघ्र ही तयारी हो। तात पत्र लिख सब विद्याधरनिकूं बुलावो, रणका सरजाम करावो।

तब विराधितने सबनिकूं पत्र पठाये। वे महासेना सहित शीघ्र ही आए। लक्ष्मण राम सहित सब नृपोंकूं लेकर रत्नपुरकी तरफ चाले, जैसे लोकपालों सहित इन्द्र चाले। जीत जिसके सन्मुख है, नानाप्रकारके शस्त्रोंके समूहकर आच्छादित करी है सूर्यकी किरण जानें, सो रत्नपुर जाय पहुंचे, उज्ज्वल छत्रकर शोभित। तब राजा रत्नरथ परचक्र आया जान अपनी समस्त सेना सहित युद्धकूं निकस्या महातेजकर, सो चक्र करोंत कुठार बाण खडग बरछी पाश गदादि आयुधनिकर तिनके परस्पर महा युद्ध भया। अप्सराओंके समूह युद्ध देख योधावों पर पुष्पवृष्टि करते भए। लक्ष्मण परसेना-

७५४

रूप समुद्रके सोखिवेकू बडवानल समान आप युद्ध करनेकू उद्यमी भया। परचक्रके योधारूप जलचरों के क्षयका कारण, सो लक्ष्मणके भयकर रथोके, तुरगोके, हाथियोके, असवार सब दशो दिशाओंकू भागे, अर इन्द्रसमान है शक्ति जिनकी, ऐसे श्रीराम अर सुग्रीव हनुमान इत्यादि सब ही युद्धकू प्रवरते। इन योधाओ कर विद्याधरोकी सेना ऐसे भागी जसे पवनकर मेघ पटल विलाय जाव। तब रत्नरथके पुत्रोकू भागते देख नारदने परम हर्षित होय ताली देय हसकर कहा अरे रत्नरथके पुत्र हो! तुम महा चपल, दुराचारी, मदबुद्धि, लक्ष्मणके गुणोकी उच्चता न सह सके तो अब अपमानकू पाय क्यो भागो हो? तब उन्होनें कुछ जवाब नहीं दिया। उसी समय मनोरमा कन्या अनेक सखियो सहित रथपर चढकर महा प्रेमकी भरी लक्ष्मणके समीप आई जस इन्द्राणी इन्द्रके समीप आव। उसे देख कर लक्ष्मण क्रोधरहित भए भकुटी चढ रही थी सो शीतल वदन भए। कन्या आनन्दकी उपजावन-हारी। तब राजा रत्नरथ अपने पुत्रो सहित मान तज नानाप्रकारकी भेंट लकर श्रीराम लक्ष्मणके समीप आया। राजा देश कालकी विधिकू जान है अर देखा ह अपना अर इनका पुरुषाथ जिसने। तब नारद सबके बीच रत्नरथकू कहते भए। हे रत्नरथ! अब तेरी कहा वार्ता तू रत्नरथ है कि रजरथ ह? वृथा मान कर हुता सो नारायण बलदवोसे मानकर कहा? अर ताली बजाय रत्नरथके पुत्रोसे हसकर कहता भया—हो रत्नरथके पुत्र हो? यह वासुदेव जिनकू तुम अपने घरविषे उद्धत चेष्टा रूप होय मनवि ? आया सो ही कही, अब पायन क्यो पडो हो? तब वे कहते भए—हे नारद! तिहारा कोप भी गुण करै, जो तुम हमसे कोप किया तो बडे पुरुषोका सम्बन्ध भया। इनका सम्बन्ध दुलभ ह। या भाति क्षणमात्र वार्ता करि सब नगरविषै गए। श्रीरामकू श्रीदामा परणाई रति समान ह रूप जाका। उसे पायकर राम आनन्दसे रमते भए। अर मनोरमा लक्ष्मणकू परणाई सो साक्षात मनोरमा ही ह। या भाति पुण्यके प्रभावकरि अदभुत वस्तुकी प्राप्ति होय है। तातै भव्यजीव सूयसे अधिक प्रकाशरूप जो

वीतरागका मार्ग उसे जानकर दया धर्मकी आराधना करहु ।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रंथ ताकी भाषावचनिकाविषै रामकू श्रीदामाका लाभ अर लक्ष्मणकू मनोरमाका लाभ वर्णन करने वाला तिराणवेवां पर्व पूर्ण भया ॥९३॥

अथानन्तर और भी विजयार्धके दक्षिण श्रेणीविषै विद्याधर हुते वे सब लक्ष्मणने युद्धकर जीते। कैसा है युद्ध ? जहां नानाप्रकारके शस्त्रोंके प्रहारकरि, अर सेनाके संघट्टकर अंधकार होय रहा है। गौतमस्वामी कहै हैं—हे श्रेणिक ! वे विद्याधर अत्यन्त दुस्सह महा विषधर समान हुते सो सब राम लक्ष्मणके प्रतापकर मानरूप विषसे रहित होय गए, इनके सेवक भए। तिनकी राजधानी देवोंकी पुरी समान, तिनके नाम कईएक तुझे कहूं हूं—रविप्रभ, घनप्रभ, कांचनप्रभ, मेघप्रभ, शिवमंदिर, गंधर्वगीत, अमृतपुर, लक्ष्मीधर, किन्नरपुर, मेघकूट, मर्त्यगति, चक्रपुर, रथनूपुर, बहुरव, श्रीमलय, श्रीगृह, अरिंजय भास्करप्रभ, ज्योतिपुर, चन्द्रपुर, गंधार, मलय, सिंहपुर, श्रीविजयपुर, भद्रपुर, यक्षपुर, तिलक, स्थानक इत्यादि बड़े बड़े नगर सो सब राम लक्ष्मणने वशमें किए। सब पृथ्वीकू जीत सप्त रत्नकर सहित लक्ष्मण नारायणके पदका भोक्ता होता भया। सप्तरत्नोंके नाम चक्र, शंख, धनुष, शक्ति, गदा, खडग, कौस्तुभमणि। अर रामके चार हल, मूसल, रत्नमाला, गदा। या भांति दोनों भाई अभेदभाव पृथ्वीका राज्य करैं। तब श्रेणिक गौतम स्वामीकू पूछता भया—हे भगवन ! तिहारे प्रसाद से मैं राम लक्ष्मणका माहात्म्य विधिपूर्वक सुन्या। अब लवण अंकुशकी उत्पत्ति अर लक्ष्मणके पुत्रों का वर्णन सुना चाहूं हूं, सो आप कहो। तब गौतम गणधर कहते भए—हे राजन ! मैं कहूं हूं सुन— राम लक्ष्मण जगतविषै प्रधान पुरुष निःकंटक राज्य भोगते भए। तिनके दिन, पक्ष, मास वर्ष महा सुखसे व्यतीत होय। जिनके बड़े कुलकी उपजी देवांगना समान स्त्री, लक्ष्मणके सोलह हजार, तिनविषै आठ पटराणी, कीर्तिसमान, लक्ष्मीसमान, रति समान गुणवती, शीलवन्ती, अनेक कलाविषै निपुण,

महा–सौम्य, सुन्दराकार तिनके नाम–प्रथम पटराणी राजा द्रोणमेघकी पुत्री विशल्या, दूजी रूपवती जिससमान और रूपवान नाहीं, तीजी वनमाला, चौथी कल्याणमाला, पाचमी रतिमाला, छठी जिन पद्मा जिसने अपने मुखकी शोभाकर कमल जीते, सातमी भगवती, आठमी मनोरमा। अर रामके राणी आठ हजार देवागना समान तिनविषै चार पटराणी जगतविषै प्रसिद्ध है कीर्ति जिनकी। जिनविषै प्रथम जानकी, दूजी प्रभावती, तीजी रतिप्रभा, चौथी श्रीदामा। इन सबोंके मध्य सीता सुन्दर लक्षण ऐसी सोहै ज्यों तारानिविषै चद्रकला। अर लक्ष्मणके पुत्र अढाईस तिनविषै कईयकोंके नाम कहू हूं सो सुनो–

वृषभ, धरण, चन्द्र, शरभ, मकरध्वज हरिनाग, श्रीधर, मदन। वह महाप्रसिद्ध, सुन्दर चेष्टाके धारक जिनके गुणनिकर सब लोकनिके मन अनुरागी अर विशल्याका पुत्र श्रीधर अयोध्यामें ऐसा सोहै जैसा आकाशविषै चन्द्रमा अर रूपवतीका पुत्र पृथ्वीतिलक, सो पृथ्वीविषै प्रसिद्ध, अर कल्याण मालाका पुत्र महाकल्याणका भाजन मंगल, अर पद्मावतीका पुत्र विमलप्रभ, अर वनमालाका पुत्र अर्जुनवृक्ष, अर अतिवीर्यकी पुत्रीका पुत्र श्रीकेशी, अर भगवतीकापुत्र सत्यकेशी, अर मनोरमाका पुत्र सुपार्श्वकीर्ति, ये सब ही महा बलवान पराक्रमके धारक, शस्त्र शास्त्र विद्यामें प्रवीण। इन सब भाईनिमें परस्पर अधिक प्रीति। जैसे नख मासमें दृढ, कभी भी जुदे न होवें, तैसे भाई जुदे नाहीं। योग्य है चेष्टा जिनकी, परस्पर प्रेमके भरे, वह उसके हृदयमें तिष्ठै, वह वाके हृदयमें तिष्ठै। जैसे स्वर्गविषै देव रमैं तैसे ये कुमार अयोध्यापुरीमें रमते भए। जे प्राणी पुण्याधिकारी है, पूर्व पुण्य उपार्जे हैं, महा शुभ चित्त है, तिनके जन्मसे लेकर सकल मनोहर वस्तु ही आय मिलै है। रघुवंशिनिके साढे चार- कोटि कुमार महामनोज्ञ चेष्टाके धारक, नगरके वन उपवनादिमें महामनोग्य चेष्टासहित देवनिसमान रमते भए। अर राम लक्ष्मणके सोलह हजार मुकुटबन्ध राजा सूर्यहू ते अधिक तेजके धारक सेवक होते भए।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रन्थ ताकी भाषावचनिकाविषै राम लक्ष्मणकी ऋद्धि वर्णन करनेवाला चौरानवेवा पर्व पूर्ण भया ॥ ९४ ॥

अथानन्तर राम लक्ष्मणके दिन अति आनन्दसू व्यतीत होय हैं। धर्म अर्थ काम ये तीनो इनके अविरुद्ध होते भए। एक समय सीता सुखसू विमान समान जो महिल ताविषै शरदके मेघ समान उज्ज्वल सेजपर सोवती थी। सो पिछले पहिर वह कमलनयनी दोय स्वप्न देखती भई। बहुरि दिव्य वादित्रनिके नाद सुन प्रतिबोधकू प्राप्त भई। निर्मल प्रभात भए स्नानादि देहक्रियाकर सखिनसहित स्वामीप गई। जायकर पूछती भई-हे नाथ! मैं आज रात्रिविषै स्वप्न देखे तिनका फल कहौ। दोय उत्कृष्ट अष्टापद, शरदके चन्द्रमासमान उज्ज्वल, अर क्षोभकू प्राप्त भया जो समुद्र ताके शब्दसमान जिनके शब्द कलाशके शिखर समान सुन्दर, सब आभरणनिकरि मंडित, महामनोहर हैं केश जिनके, अर उज्ज्वल हैं दाढ जिनकी, सो मेरे मुखमें पैठे। अर पुष्पक विमानके शिखरसे प्रबल पवनके झकोर करि मैं पृथ्वीविषै पडी। तब श्रीरामचन्द्र कहते भए-हे सुन्दरी! दोय अष्टापद, मुखमें पैठे देख ताके फलकर तेरे दोय पुत्र होयेंगे। अर पुष्पक विमानसे पृथ्वीविषै पडना प्रशस्त नाहीं सो कछु चिंता न करो, दानके प्रभावसे क्रूर ग्रह शांत होवेंगे।

अथानन्तर बसन्तसमयरूपी राजा आया, तिलक जातिके वृक्ष फूले, सोई उसके बख्तर, अर नीम जातिके वृक्ष फूले वेई गजराज तिनपर आरूढ, अर आम मौर आये सो मानो बसंतका धनुष, अर कमल फूले सो बसन्तके बाण, अर केसरी फूले, वेई रतिराजके तरकश, अर भ्रमर गुंजार करै हैं सो मानो निर्मल श्लोकोकर बसंत नृपका यश गावै है। अर कदम्ब फूले, तिनकी सुगन्ध पवन आवै है, सोई मानो बसंत नृपके निवास भये। अर मालतीके फूल फूले, सो मानो बसंत शीतकालादिक अपने शत्रुनिको हसै है, अर कोयल मिष्ट वाणी बोलै है सो मानो बसंत राजाके वचन हैं। या भांति बसंत समय नृपतिकीसी लीला धरे आया। बसंतकी लीला लोकनिकू कामका उद्वेग उपजावनहारी है। बहुरि यह बसंत मानो सिंह ही है। अंकोट जाति वृक्षादिक, के फूल वेई हैं नख जाके, अर कुरवक जाति के वृक्षनिके फूल आए तेई भए दाढ जाके, अर महारक्त अशोकके पुष्प वेई हैं नेत्र जाके, अर चंचल ७५८

पल्लव वेई है जिह्वा जिनकी, ऐसा बसत केसरी आय प्राप्त भया। लोकोंके मनकी वृत्ति, सोई भई गुफा, तिनमें पठा। महेन्द्र नामा उद्यान नन्दनवन समान सदा ही सुन्दर है। सो बसत समय अतिसुदर होता भया। नानाप्रकारके पुष्पनिकी पाखडी अर नानाप्रकारकी कूपल दक्षिणदिशिकी पवनकर हालती भई। सो मानो उन्मत्त भई घूम ह। अर वापिका कमलादिककरि आच्छादित अर पक्षिनिके समूह नाद कर हैं। अर लोक सिवाणोपर तथा तीर पर बठे है। अर हस सारस चकवा क्रौंच मनोहर शब्द कर है अर कारड बोल रहे है। इत्यादि मनोहर पक्षिनिके मनोहर शब्दकरि रागी पुरुषनिकू राग उपजाव ह। पक्षी जलविष पडे ह, अर उठ ह, तिनकर निमल जल कलोलरूप होय रह्या है। जल तो कमलादिक कर भरया ह, अर स्थल जो ह सो स्थल पद्मादिक पुष्पनिकर भरे है। अर आकाश पुष्पनिकी मकरदकरि मडित होय रह्या ह। फूलनिके गुच्छे अर लता वृक्ष अनेक प्रकारके फूल रहे है। वनस्पतिकी परमशोभा होय रही ह। ता समय सीता कछु गभके भारकर दुबल शरीर भई। तब राम पूछते भए—हे काते! तेरे जो अभिलाषा होय सो पूण करू। तब सीता कहती भई—हे नाथ! अनेक चत्यालयनिक दशन करिवेकी मेरे वाछा ह। भगवानके प्रतिबिब पाचो वणके लोकविषै मगलरूप तिनकू नमस्कार करिवेकू मेरा मनोरथ ह। स्वण रत्नमई पुष्पनिकर जिनेन्द्रकू पूजू—यह मेरे महा श्रद्धा है। अर कहा वाछू? य सीताके वचन सुनकर राम हर्षित भये, फूल गया ह मुख कमल जिनका, राजलोक विष विराजते हुते सो द्वारपालीको बुलाय आज्ञा करी कि हे भद्रे! मन्त्रिनिकू आज्ञा पहुंचावो जो समस्त चत्यालयनिविष प्रभावना कर। अर महेन्द्रोदयनामा उद्यानविष जे चत्यालय है तिनकी शोभा करावें। ७५९
अर सब लोकक्र आज्ञा पहुंचावो कि जिनमन्दिरविषै पूजा प्रभावना आदि अति उत्सव कर। अर तोरण ध्वजा घटा झालरी चन्दोवा सायवान महामनोहर वस्त्रनिके बनावें, तथा सुन्दर समस्त उपकरण वहुरा चढावें, लोक समस्त पथ्वीविष जिनपूजा कर। अर कलाश सम्मेदशिखर पावापुर चम्पापुर गिरनार शत्रुजय मागीतुगी आदि निर्वाण क्षेत्रनिविष विशेष शोभा करावो। कल्याणरूप दोहुला सीता

कू उपज्या है सो पृथ्वीविषै जिनपूजाकी प्रवृत्ति करहु । हम सीतासहित धर्मक्षेत्रनिविषै विहार करगे ।

यह रामकी आज्ञा सुन वह द्वारपाली अपने ठौर अन्यकू राखकर जाय मंत्रिनिकू आज्ञा पहुँचावती भई । अर वे स्वामीकी आज्ञा प्रमाण अपने किंकरनिकू आज्ञा करते भए । सब चैत्यालयनिविषै शोभा कराई, अर महा पर्वतोकी गुफाके द्वार पूर्ण कलश थापे, मोतिनिके हारनिकर शोभित, अर विशाल स्वर्णकी भीतिविषै मणिनिके चित्राम रचे । महेन्द्रोदय नाम उद्यानकी शोभा नन्दन वनकी शोभा समानकर अत्यन्त निर्मल शुद्धमणिनिके दर्पण थम्भविषै थापे, अर झरोखनिके मुखविषै निर्मल मोतिनिके हार लटकाये । सो जल नीझरना समान सोहैं । अर पांच प्रकारके रत्ननिकी चूर्णकरि भूमि मंडित करी । अर सहस्रदल कमल तथा नानाप्रकारके कमल तिनकर शोभा करी । अर पांच वर्णके मणिनिके दंड तिनविषै महा सुन्दर वस्त्रनिके ध्वजा लगाय मन्दिरनिके शिखर पर चढाई । अर नाना प्रकारके पुष्पनिकी माला जिनपर भ्रमर गुंजार करें, ठौर ठौर लुम्बाई है, अर विशाल वादित्रशाला नाट्यशाला अनेक रची हैं तिनकर वन अति शोभै है, मानो नन्दन वन ही है । तब श्री रामचन्द्र इन्द्रसमान सब नगरके लोकनिकर युक्त समस्त राजलोकनिसहित वनविषै पधारे । सीता अर आप गजपर आरूढ कैसे सोहैं जैसे शची सहित इन्द्र ऐरावत गजपर चढे सोहै । अर लक्ष्मण भी परम ऋद्धिकू धरे वनविषै जाते भए । अर और हू सब लोक आनन्दसू वनविषै गये । अर सबनिकू अन्नपान वनहीविषै भया, जहां महा मनोग्य लतानिकू मंडप अर कलिके वृक्ष तहां राणी तिष्ठी, अर और हू लोक यथायोग्य वनविषै तिष्ठे । राम हाथीतैं उतरकर निर्मल जलका भरा जो सरोवर, नाना प्रकारके कमलनिकर संयुक्त उसविषै रमते भए, जैसे इन्द्र क्षीरसागरविषै रमै । तहां क्रीडाकर जलतैं बाहिर आये । दिव्य सामग्रीकर विधिपूर्वक सीता सहित जिनेन्द्रकी पूजा करते भए । राम महा सुन्दर, अर वनलक्ष्मी समान जे वल्लभा, तिनकर मंडित ऐसे सोहते भये मानो मूर्तिवन्त बसन्त ही है । आठ हजार राणी देवांगना समान तिनके सहित राम ऐसे सोहैं मानो ये तारानिकर मण्डित चन्द्र ही है ।

अमृतका आहार, अर सुगंधका विलेपन,मनोहर सेज, मनोहर आसन, नानाप्रकारके सुगन्ध माल्यादिक स्पर्श रस गन्धरूप शब्द पांचो इन्द्रियनिके विषय अति मनोहर रामकू प्राप्त भए। जिनमन्दिरविषै भलीविधिसे नृत्य पूजा करी। पूजा प्रभवानाविषै रामके अति अनुराग होता भया। सूर्यकूत अधिक तेजके धारक राम देवांगना समान सुन्दर जे दारा तिनसहित कईएक दिन सुखसे वनविषै तिष्ठे।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महा पद्मपुराण संस्कृतग्रन्थ ताकी भाषावचनिकाविषै जिनेंद्रपूजाकी सीताके अभिलाषा गर्भका प्रादुर्भाव वर्णन करनेवाला पिचानवेवां पर्व पूर्ण भया ॥ ९५ ॥

अथानन्तर प्रजाके लोक रामके दर्शनकी अभिलाषा कर वनहीविषै आए, जैसे तिसाए पुरुष सरोवरविषै आवै। तब बाहिरले दरवाननें लोकोंके आवनेका वृत्तांत द्वारपालियोंसू कह्या। वे द्वारपाली भीतर राजलोकमें रामसू जायकर कहती भई कि—हे प्रभो! प्रजाके लोक आपके दर्शनकूं आए हैं, अर सीताके दाहिनी आंख फुरकी। तब सीता विचारती भई यह आंख मुझे क्या कहै है, कछू दुखका आगमन बतावै है। आगे अशुभके उदयकरि समुद्रके मध्यविषै दुख पाए तौ हू दुष्ट कर्म संतुष्ट न भया। क्या और भी दुख दिया चाहै है। जो इस जीवनें रागद्वेषके योगकर कर्म उपार्जे हैं तिनका फल ए प्राणी अवश्य पावै है, काहूकर निवारा न जाय? सब सीता चितावती होय और राणीनिसूं कहती भई—मेरी दाहिनी आंख फरकनेका फल कहो। तब एक अनुमतिनामा राणी महा प्रवीण कहती भई—हे देवि! या जीवनें जे कर्म शुभ अथवा अशुभ उपार्जे हैं वे या जीवके भले बुरे फलके दाता हैं। कर्महीकूं काल कहिए, अर विधि कहिए, अर दैव कहिए ईश्वर भी कहिए। सब संसारी जीव कर्मनिके आधीन है। सिद्ध परमेष्ठी कर्मनिसूं रहित है।

बहुरि गुण दोषकी ज्ञाता राणी गुणमाला सीताकूं रुदन करती देख धीर्य बधाय कहती भई—हे देवी! तुम पतिके सबनिविषै श्रेष्ठ हो, तुमकूं काहू प्रकारका दुःख नाहीं। अर और राणी कहती

भई बहुत विचारकर कहा ? शांतिकर्म करो, जिनेंद्रका अभिषेक अर पूजा करावो, अर किमिइच्छक दान देवो। जाकी जो इच्छा होय सो ले जावो। दान पूजाकर अशुभका निवारण होय है। तातें शुभ कार्यकर अशुभकू निवारो। या भांति इन्होंने कही तब सीता प्रसन्न भई अर कही—योग्य है, दान पूजा अभिषेक अर तप ये अशुभके नाशक हैं। दान धर्म विघ्नका नाशक, वैरका नाशक है पुण्यका अर जशका मूल कारण है। यह विचारकर भद्रकलश नामा भंडारीकू बुलायकर कही—मेरे प्रसूति होय तौलग किमिच्छा दान निरन्तर देवो। तब भद्रकलशने कही जो आप आज्ञा करोगी सो ही होयगा। यह कहकर भंडारी गया अर जिनपूजादि शुभक्रियाविषै प्रवर्ता। जितने भगवानके चैत्यालय हैं तिन विषै नाना प्रकारके उपकरण चढाये। अर सब चैत्यालयनिविषै अनेक प्रकारके वादित्र बजवाए। मानो मेघ ही गाजे हैं। अर भगवानके चरित्र पुराण आदि ग्रंथ जिनमंदिरनिविषै पधराए। अर दूध दही घृत जल मिष्टान्नके भरे कलश अभिषेककू पठाए। अर खोजाओंविषै प्रधान जो खोजा सो वस्त्राभूषण पहरे हाथी चढा नगरविषै घोषणा फेर—जाकू जो इच्छा होय सो ही लेवो। या भांति विधिपूर्वक दान पूजा उत्सव कराए। लोक पूजा दान तप आदिविषै प्रवर्ते, पापबुद्धिरहित समाधानके प्राप्त भए। सीता शांतिचित्त धर्मविषै अनुरक्त भई, अर श्रीरामचन्द्र मण्डपविषै आय तिष्ठे। द्वारपालने जे नगरीके लोक आए हुते ते रामसे मिलाए। स्वर्ण रत्नकर निर्मापित अद्भुत सभाकू देख प्रजाके लोक चकित होय गए। हृदयकू आनंदके उपजावनहारे राम तिनकू देखकर नेत्र प्रसन्न भए। प्रजाके लोक हाथ जोड नमस्कार करते भए। कांपै है तन जिनका, अर डरै है मन जिनका। तब राम कहते भए, हे लोको ! तिहारे आगमनका कारण कहो। तब विजय, सुराजी, मधुमानव, सुलोधर, काश्यप, पिंगल, कालोप इत्यादि नगरके मुखिया मनुष्य निश्चल होय चरणनिकी तरफ चोके। गल गया है गर्व जिनका राजतेजके प्रतापकरि कछु कह न सकें। यद्यपि चिरकालमें सोच सोच कहा चाहै तथापि इनके मुखरूप मंदिरसे वाणीरूप वधू न निकसे। तब रामने बहुत दिलासा कर कही तुम कौन अर्थ आए हो सो

कहो। या भांति कही तो भी वे चित्राम कैसे होय रहे, कछु न कहैं। लज्जारूप फांसकर बंधा है कंठ जिनका, अर चलायमान हैं नेत्र जिनके, जैसे हिरणके बालकक् व्याकुल चित्त तैसे देखे। तब तिनविषै मुख्य विजयनाम पुरुष, चलायमान हैं शब्द जिसका, सो कहता भया, हे देव! अभयदानका प्रसाद होय। तब रामने कही तुम काहू बातका भय मत करहु, तिहारे चित्तविषै जो होय सो कहो। तिहारा दुःख दूरकर तुमको साता उपजाऊंगा, तिहारे औगुन न लूंगा, गुण ही लूंगा। जैसे मिले हुए दूध जल तिनमें जलकू टार हंस दूध ही पीवै है। श्रीरामने अभयदान दिया तो भी अतिकष्टसे विचार २ धीरे स्वरकर विजय हाथजोड सिर निवाय कहता भया कि—हे नाथ नरोत्तम! एक विनती सुनो। अब सकल प्रजा मर्यादा रहित प्रवर्ते है। यह लोक स्वभाव ही से कुटिल है। अर एक दृष्टांत प्रकट पावैं तब इनकू अकार्य करनविषै कहा भय?

जैसे बानर सहज ही चपल है अर महाचपल जो यन्त्र-पिंजरा उसपर चढा तब कहा कहना? निबलो की यौवनवती स्त्री पापी बलवंत छिद्र पाय बलात्कार हरै है। अर कोईएक शीलवती विरहकर पराये घर अत्यन्त दुखी होय है तिनकू कईएक सहाय पाय अपने घर ले आवै हैं। सो धर्मकी मर्यादा जाय है, यह न जाय सो यत्न करहु। प्रजाके हितकी वाञ्छा करहु। जिस विधि प्रजाका दुख टरै सो करहु। या मनुष्य लोकविषै तुम बडे राजा हो। तुम समान अर कौन? तुम ही जो प्रजाकी रक्षा न करोगे तो कौन करेगा? नदियोंके तट, तथा वन उपवन कूप वापिका सरोवरके तीर, ग्राम ग्रामविषै, घर घरविषै, सभाविषै, एक यही अपवादकी कथा है और नाहीं कि श्रीराम राजा दशरथके पुत्र, सब शास्त्रविषै प्रवीण। सो रावण सीताकू हर लेगया, ताहि घरविषै ले आये, तब औरनिकू कहा दोष है? जो बडे पुरुष करै सो सब जगतकू प्रमाण। जिस रीति राजा प्रवर्तै उसी रीति प्रजा प्रवर्तै। "यथा राजा तथा प्रजा" यह वचन है। या भांति दुष्टचित्त निरंकुश भए पृथ्वीविषै अपवाद करै हैं तिनका निग्रह करहु। हे देव! आप मर्यादाके प्रवर्तक पुरुषोत्तम हो। एक यही अपवाद तिहारे राज्यविषै न होता तो तिहारा यह

राज्य इन्द्रसे भी अधिक है। यह वचन विजयके सुनकर क्षणएक रामचन्द्र विषादरूप मुद्गर के मारे चलायमान चित्त होय गए। चित्तविषै चितवते भए यह कौन कष्ट उपज्या ? मेरा यशरूप कमलोका वन अपयशरूपी अग्निकर जलने लाग्या है। जिस सीताके निमित्त मैं विरहका कष्ट सहा सो मेरे कुलरूप चन्द्रमाकू मलिन कर है। अयोध्याविषै मैं सुखके निमित्त आया। अर सुग्रीव हनुमानादिकसे मेरे सुभट सो मेरे गोत्ररूप कुमुदिनीकू यह सीता मलिन कर है। जिसके निमित्त मैंने समुद्र तिरि रण-संग्रामकर रिपुकू जीत्या सो जानकी मेरे कुलरूप दर्पणको कलुषित कर है। अर लोक कहै सो साच है। दुष्ट पुरुषके घरविषै तिष्ठी सीता मैं क्यो लाया ? अर सीतासे मेरा अति प्रेम, जिसे क्षणमात्र न देखू तो विरहकर आकुलता लहू, अर वह पतिव्रता मोसे अनुरक्त, उसे कैसे तजू ? जो सदा मेरे नेत्र अर उरविषै बसै, महागुणवती निर्दोष सीता सती, उसे कैसे तजू ? अथवा स्त्रियोके चित्तकी चेष्टा कौन जाने, जिनविषै सब दोषोका नायक मनमथ बसै है। धिक्कार स्त्रीके जन्मकू। सर्वदोषो की खान, आतापका कारण, निर्मल कुलविषै उपजे पुरुषोकू कर्दम समान मलिनताका कारण है, अर जैसे कीचविषै फसा मनुष्य तथा पशु निकल न सके स्त्रीके रागरूप पंकविषै फसा प्राणी निकस न सकै। यह स्त्री समस्त बलका नाश करणहारी है, अर रागका आश्रय है, अर बुद्धिकू भ्रष्ट करै है, अर सत्यतै पटवेकू खाई समान है, निर्वाण सुखकी विघ्न करणहारी, ज्ञानकी उत्पत्तिकू निवारणहारी, भवभ्रमणका कारण है, भस्मसे दबी अग्निके समान दाहक है, डाभकी सुई समान तीक्ष्ण है, देखवे मात्र मनोज्ञ परन्तु अपवादका कारण। ऐसी सीता उसे मैं दुख दूर करिवेनिमित्त तजू, जैसै सर्प काचिलीकू तजै। फिर जिसकर मेरा हृदय तीव्रस्नेहके बन्धनकर वशीभूत सो कैसे तजी जाय, यद्यपि मैं स्थिर हू, तथापि यह जानकी निकटवर्तिनी अग्निकी ज्वाला समान मेरे मनकू आताप उपजावै है। अर यह दूर रही भी मेरे मनकू मोह उपजावै, जैसे चन्द्ररेखा दूरही से कुमुदिनीकू विकसित करै। एक ओर लोकापवादका भय, अर एक ओर सीताके दुर्निवार स्नेहका भय। अर रागकर विकल्पके सागर

विषै पड्या हूं । अर सीता सब प्रकार देवांगनासे भी श्रेष्ठ महापतिव्रता, सती शीलरूपिणी मोसूं सदा एकचित्त, उसे कैसैं तजूं अर जो न तजूं तो अपकीर्ति प्रकट होय है । इस पृथ्वीविषै मोसमान और दीन नाहीं । स्नेह अर अपवादका भय उसविषै लाग्या है मन जिसका, दोनोंकी मिलताका तीव्र विस्तार देखकर वशीभूत जो राम सो अपवादरूप तीव्र कष्टकूं प्राप्त भए । सिंहकी है ध्वजा जिसके ऐसे राम तिनकूं दोनो बातोंकी अति आकुलतारूप चिंता असाताका कारण दुस्सह आताप उपजावती भई, जैसैं ज्येष्ठके मध्याह्नका सूर्य दुस्सह दाह उपजावै ।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रंथ ताकी भाषावचनिकाविषै रामके लोकापवादकी चिन्ताका वर्णन करनेवाला छियानवेवां पर्व पूर्ण भया ।। ९६ ।।

अथानन्तर श्रीराम एकाग्र चित्त कर द्वारपालकूं लक्ष्मणके बुलावनेकी आज्ञा करते भये । सो द्वारपाल लक्ष्मणपै गया, आज्ञा प्रमाण तिनकूं कही । लक्ष्मण द्वारपालके वचन सुनकर तत्काल तेज तुरंगपर चढि रामके निकट आया । हाथ जोड नमस्कारकर सिंहासनके नीचे पृथ्वीपर बैठा, रामके चरणोंकी ओर है दृष्टि जाकी । राम उठकर आधे सिंहासन पर ले बैठे, शत्रुघ्न आदि सब ही राजा, अर विराधित आदि सब ही विद्याधर, यथायोग्य बैठे । पुरोहित श्रेष्ठी मन्त्री सेनापति सब ही सभा में तिष्ठे । तब क्षणएक विश्रामकर रामचन्द्रने लक्ष्मणसूं लोकापवादका वृत्तांत कहा । सुनकर लक्ष्मण क्रोधकर लालनेत्र भए अर योधावोंकूं आज्ञा करी—अबार मैं उन दुर्जनोंके अंत करिवेकूं जाऊंगा, पृथ्वीकूं मृषावादरहित करूंगा । जे मिथ्या वचन कहै हैं तिनकी जिह्वा छेद करूंगा । उपमा रहित जो शीलव्रतकी धारणहारी सीता ताकी जे निन्दा करै हैं तिनका क्षय करूंगा । या भांति लक्ष्मण महा क्रोधरूप भए, नेत्र अरुण होय गए । तब श्रीराम इन वचनोंसे शांत करते भए कि—हे सौम्य ! यह पृथ्वी सागर पर्यन्त ताकी श्रीऋषभदेवने रक्षा करी । बहुरि भरतने प्रतिपालना करी । अर इक्ष्वाकु-वंशके तिलक बडे बडे राजा भए, जिनकी पीठ रणमें रिपुओंने न देखी, जिनकी कीर्तिरूप चान्दनी

से यह जगत् शोभित है, सो अपने वशविषै अनेक यशके उपजावनहारे भए। अब मैं क्षणभंगुर पाप रूप रागके निमित्त यशकूं कैसे मलिन करूं? अल्प भी अकीर्ति जो न टारिए तो वृद्धिकूं प्राप्त होय, अर उन नीतिवान पुरुषोंकी कीर्ति इन्द्रादिक देवोंसूं गाइए है। ये भोग विनाशीक तिनसे क्या? जिनसे अकीर्तिरूप अग्निकीर्ति वनकूं बाले। यद्यपि सीता सती शीलवती निर्मल चित्त है तथापि इसको घरविषै राखे मेरा अपवाद न मिटै। यह अपवाद शस्त्रादिकसे हता न जाय। यद्यपि सूर्य कमलोंके वनका प्रफुल्लित करणहारा है, अति तिमिरका हरणहारा है तथापि रात्रिके होते सूर्य अस्त होय है। तैसे अपवादरूप रज महा विस्तारकूं प्राप्त भई तेजस्वी पुरुषोंकी कांतिकी हानि करै है। सो यह रज निवारनी चाहिए। हे भ्रात! चन्द्रमा समान निर्मल गोत्र हमारा अकीर्तिरूप मेघमालासूं आच्छादा जाय है, सो न आच्छादा जाय—यही मेरे यत्न है। जैसे सूखे इन्धनके समूहविषै लगी आग जलसूं बुझाए विना वृद्धिकूं प्राप्त होय है तैसे अकीर्तिरूप अग्नि पृथ्वीविषै विस्तरै है सो निवारे विना न मिटै। यह तीर्थंकर देवोंका कुल महा उज्ज्वल प्रकाशरूप है याकूं कलंक न लगै। सो उपाय करहु। यद्यपि सीता महा निर्दोष शीलवती है तथापि मैं तजूंगा अपनी कीर्ति मलिन न करूंगा। तब लक्ष्मण कहता भया। कैसा है लक्ष्मण? रामके स्नेहविषै तत्पर है बुद्धि जाकी। हे देव! सीताकूं शोक उपजावना योग्य नाहीं। लोकतो मुनियोंका भी अपवाद करै है, जिनधर्मका अपवाद करै है। तो क्या लोकापवादसे धर्म तजिए है? तैसे लोकापवादमात्रसूं जानकी कैसे तजिए, जो सब सतियोंके सीस विराजै है, काहू प्रकार निंदा के योग्य नाहीं। अर पापी जीव शीलवंत प्राणियोंकी निन्दा करै है। क्या तिनके वचनसे शीलवतोंकूं दोष लागै है? वे निर्दोष ही हैं। ये लोक अविवेकी है। इनके वचनविषै परमार्थ नाहीं। विषकर दूषित हैं नेत्र जिनके, वे चन्द्रमाकूं श्यामरूप देखै है, परन्तु चन्द्रमा श्वेत ही है, श्याम नाहीं। तैसे लोकोंके कहें निकलंकियोंकूं कलंक नाहीं लागै है। जे शीलसे पूर्ण हैं तिनकूं अपना आत्मा ही साक्षी है, परजीवनिका प्रयोजन नाहीं। नीच जीवनिके अपवादकरि पण्डित विवेकी क्रोधकूं न प्राप्त होय, जैसे

श्वानके भोकनेत गजेन्द्र नाहीं कोप कर है। ये लोक विचित्रगति है, तरंग समान है चेष्टा जिनकी, परदोषकथिवे विषै आसक्त। सो इन दुष्टोका स्वयमेव ही निग्रह होयगा। जसे कोई अज्ञानी शिलाकू उपाडकर चन्द्रमाकी ओर बगाय (फेंककरि) बहुरि मारा चाहे सो सहज ही आप निःसंदेह नाशकू प्राप्त होय है। जो दुष्ट पराए गुणनिकू न सहि सकै अर सदा पराई निन्दा करै है सो पापकर्मी निश्चय सेती दुर्गतिकू प्राप्त होय है।

जब ऐसे वचन लक्ष्मणने कहे तब श्रीरामचन्द्र कहते भये-हे लक्ष्मण! तू कहै है सो सब सत्य है। तेरी बुद्धि रागद्वेषरहित, अति मध्यस्थ, महा शोभायमान है, परन्तु जे शुद्ध न्यायमार्गी मनुष्य हैं वे लोकविरुद्ध कार्यकू तजै है। जाकी दशो दिशामें अकीर्तिरूप दावानलकी ज्वाला प्रज्वलित है ताकू जगतमें कहा सुख अर कहा ताका जीतव्य? अनर्थका करणहारा जो अर्थ ताकरि कहा, अर विषकर संयुक्त जो औषधि ताकरि कहा? अर बलवान होय जीवनिकी रक्षा न करै शरणागतपालक न होय, ताके बलकर कहा? अर जाकर आत्मकल्याण न होय ता आचरणकर कहा? चारित्र सोई जो आत्महित करै। अर जो अध्यात्मगोचर आत्माकू न जाने ताके ज्ञानकर कहा? अर जाकी कीर्तिरूप वधू अपवाद रूप बलवान हरै ताका जन्म प्रशस्त नाहीं, ऐसे जीवनतै मरण भला। लोकापवादकी बात दूर ही रहो, मोहि यह महा दोष है जो परपुरुषने हरी सीता मैं बहुरि घरमें ल्याया। राक्षसके भवनमें उद्यान तहां यह बहुत दिन रही, अर ताने दूती पठाय मनवांछित प्रार्थना करी, अर समीप आय दुष्ट दृष्टि करि देखी, अर मनमें आए सो वचन कहे। ऐसी सीता मैं घरमें ल्याया। या समान अर लज्जा कहा? सो मूढोसे कहा न होय? या संसारकी मायाविषै मैं हू मूढ भया। या भांति कहकर आज्ञा करी जो शीघ्र ही कृतान्तवक्र सेनापतिकू बुलावो। यद्यपि दो बालकनिके गर्भसहित सीता है तौ हू याहि तत्काल मेरे घरतै निकासो, यह आज्ञा करी। तब लक्ष्मण हाथ जोड नमस्कारकर कहता भया—हे देव! सीताकू तजना योग्य नाहीं। यह राजा जनककी पुत्री, महा शीलवती, जिनधर्मिणी, कोमल चरणकमल

जाके, महा सुकुमार, भोरी, सदा सुखिया, अकेली कहा जायगी ? गर्भके भारकर संयुक्त परम खेदकू धरे यह राजपुत्री तिहारे तजे कौनके शरण जायगी ? अर आपने देखवेकी कही सो देखवेकर कहा दोष भला ? जैसे जिनराजके निकट चढाया द्रव्य निर्माल्य होय है, ताहि देखिए है, परन्तु दोष नाहीं। अयोग्य अभक्ष्य वस्तु आंखिनिसू देखिये है परन्तु देखे दोष नाहीं, अंगीकार कीये दोष है। तात हे नाथ ! मोपर प्रसन्न होहु, मेरी विनती सुनहु, महा निर्दोष सीता सती, तुममें विष एकाग्र है चित्त जाका, ताहि न तजो। तब राम अत्यन्त विरक्त होय क्रोधमें आए गए अर अप्रसन्न होय कही—लक्ष्मण ! अब कछू न कहना। मैं यह अवश्य निश्चय किया, शुभ होव अथवा अशुभ होव, निमानुषवन जहां मनुष्यका नाम नाहीं सुनिए वहां द्वितीय सहायरहित अकेली सीताकू तजहु। अपने कर्मके योगकरि जीवो अथवा मरो। एक क्षणमात्र हू मेरे देशविषै, अथवा नगरविषै, काहूके मन्दिरविषै मत रहो। वह मेरी अपकीर्तिकी करणहारी है। कृतांतवक्रकू बुलाया। सो चार घोडका रथ चढा बडी सेनासहित जाका बंदीजन विरद बखान है, लोक जय जयकार कर है सो राजमार्ग होय आया। जापर छत्र फिरता अर धनुष चढाय बखतर पहिरे कुण्डल पहिरें ताहि या विधि आवता देख नगरके नर नारी अनेक विकल्प की वार्ता करते भये। आज यह सेनापति शीघ्र दौडा जाय है कौन पर विदा होयगा ? आप कौन पर कोप भए हैं ? आज काहूका कछू बिगाड है ? ज्येष्ठके सूर्य समान ज्योति जाकी, काल समान भयंकर शस्त्रनिके समूहके मध्य चला जाय है सो आज न जानिए कौन पर कोप है ? या भांति नगरके नर नारी वार्ता करै हैं। अर सेनापति रामदेव समीप आया। स्वामीकू सीस निवाय नमस्कार कर कहता भया—हे देव ! जो आज्ञा होय सो ही करू ।

तब रामने कही, शीघ्रही सीताकू ले जावो। अर मार्गविषै जिनमन्दिरनिका दर्शन कराय सम्मेदशिखर अर निर्वाणभूमि तथा मार्गके चैत्यालय तहां दर्शन कराय वाकी आशा पूर्णकर, अर सिंहनाद नामा अटवी जहां मनुष्यका नाम नाहीं तहां अकेली मेल, उठ आवो। तब तानें कही जो आज्ञा होयगी

सोही होयगा, कछू वितर्क न करहु । अर जानकीप जाय कही—हे माता ! उठो रथविषै चढो, चैत्यालयनिकी वांछा है सो करो । या भांति सेनापतिने मधुरस्वरकर हर्ष उपजाया । तब सीता रथ चढ़ी, चढते समय भगवानकूं नमस्कार किया अर यह शब्द कहा जो चतुर्विध संघ जयवंत होवैं । श्रीरामचन्द्र महाजिनधर्मी उत्तम आचरणविषै तत्पर सो जयवंत होहु । अर मेरे प्रमादसे असुन्दर चेष्टा भई होय सो जिनधर्मके अधिष्ठाता देव क्षमा करहु । अर सखीजन लार भए तिनसूं कही तुम सुखसे तिष्ठो, मैं शीघ्र ही जिनचैत्यालयनिके दर्शनकर आऊं हूं, या भांति तिनसे कही । अर सिद्धनिकूं नमस्कारकर सीता आनन्दसे रथ चढ़ी । सो रत्न स्वर्णका रथ तापर चढी ऐसी सोहती भई जैसी विमान चढ़ी देवांगना सोहै । वह रथ कृतांतवक्रने चलाया सो ऐसा शीघ्र चलाया जैसा भरत चक्रवर्तीका चलाया बाण चले । सो चलते समय सीताकूं अपशकुन भए, सूखे वृक्षपर काग बैठा, विरस शब्द करता भया, अर माथा धुनता भया । अर सन्मुख स्त्री महा शोककी भरी, शिरके बाल बखेरे रुदन करती भई । इत्यादि अनेक अपशकुन भए तो पुणि सीता जिनभक्तिविषै अनुरागिणी निश्चलचित्त चली गई, अपशकुन न गिने । पहाडनिके शिखर कन्दरा अनेक वन उपवन उलंघकर शीघ्र ही रथ दूर गया । गरुड समान वेग जाका ऐसे अश्वनिकर युक्त सफेद ध्वजाकर विराजित सूर्यके रथ समान रथ शीघ्र चला । मनोरथ समान वह रथ तापर चढी रामकी राणी इन्द्राणीसमान सो अति सोहती भई । कृतांतवक्र सारथीने मार्गविषै सीताकूं नानाप्रकारकी भूमि दिखाई, ग्राम नगर वन अर कमलसे फूल रहे हैं सरोवर, नानाप्रकारके वृक्ष, कहूं सघन वृक्षनिकर वन अन्धकाररूप है, जैसे अंधेरी रात्रि मेघमालाकर मंडित महा अंधकाररूप भासै, कछू नजर न आवै । अर कहूं विरले वृक्ष हैं सघनता नाहीं, तहां कैसा भासै है ? जैसा पंचमकालमें भरत ऐरावत क्षेत्रनिकी पृथ्वी विरले सत्पुरुषनिकरि सोहै । अर कहूं वनी पतझर होय गई है सो पत्ररहित, पुष्प फलादिरहित छायारहित दीखै जैसे बडे कुलकी स्त्री विधवा । भावार्थ—विधवा हू पुत्ररूपी पुष्प फलादि रहित हैं अर आभरण तथा सुन्दर वस्त्रादिरहित, अर कांतिरहित है, शोभा

रहित है, सो तैसी वनी दीख है। अर कहूइक वनविषै सुन्दर माधुरीलता आम्रके वृक्षसे लगी ऐसी सोहै है जैसी चपल वेश्या, आम्रसू लगि अशोककी वांछा करै है। अर कईएक दावानलकर वृक्ष जर गए है सो नाहीं सोहै है, जैसे हृदय क्रोधरूप दावानलकरि जरा न सोहै। अर कहूइक सुन्दर पल्लवनि के समूह मंद पवनकर हालते सोहै है, मानो वसंतराजके आयवेकर वनपंक्तिरूप नारी आनन्दसे नृत्य ही करै है। अर कहूइक भीलनिके समूह तिनके जे कलकलाट शब्दकर मृग दूर भाग गए है, अर पक्षी उड गए है। अर कहूइक वनी, अल्प है जल जिनमें ऐसी नदी तिनकर कैसी भासै है? जैसी संतापकी भरी विरहिनी नायिका असुवनकर भरे नेत्र संयुक्त भासै। अर कहू इक वनी नाना पक्षिनिके नादकर मनोहर शब्द करै है। अर कहूइक नीझरनावोंके नादकरि शब्द करती तीव्र हास्य करै है। अर कहूइक मकरंदमें अति लुब्ध जे भ्रमर तिनके गुंजारकरि मानो वनी वसंत नृपकी स्तुति ही करै है। अर कहूइक वनी फूलनिकर नम्रीभूत भई शोभाकू धरै है, जैसे सफल पुरुष दातार नम्रीभूत भए सोहै है। कहूइक वायुकर हालते जे वृक्ष तिनकी शाखा हालै है अर पल्लव हालै है अर पुष्प पडे है सो मानो पुष्पवृष्टिही करै है। इत्यादि रीतिकू धरे वनी अनेक क्रूर जीवनिकर भरी ताहि देखती सीता चली जाय है, रामविषै है चित्त जाका, मधुर शब्द सुनकर विचारती भई मानो रामके दुंदुभी बाजे बाजै है। या भांति चितवती सीता आगे गंगाको देखती भई। कैसी है गंगा? अति सुंदर हैं शब्द जाके, अर जाके मध्य अनेक जलचर जीव मीन मकर ग्रहादिक विचरै है, तिनके विचरिवेकरि उद्धत लहर उठै है, तातै कम्पायमान भए है कमल जाविषै, अर मूलसे उपाडे है तीरके उतंग वृक्ष जाने, अर उखाडे है पर्वतनिके पाषाणोंके समूह जाने, समुद्रकी ओर चली जाय है, अति गम्भीर है, उज्ज्वल फूलोंकर शोभै है, झागोंके समूह उठै है, अर भ्रमते जे भंवर तिनकर महा भयानक है। अर दोनों ढाहावोंपर बैठे पक्षी शब्द करै है सो परमतेजके धारक रथके तुरंग ता नदीको तिर पार भए, पवन समान है वेग जिनका, जैसे साधु संसार समुद्रके पार होय।

नदीके पार जाय सेनापति यद्यपि मेरुसमान अचलचित्त हुता तथापि दयाके योगकर अति विषाद कू प्राप्त भया। महा दुखका भरघा कछू न कहि सके, आखनितै आसू निकल आए। रथकू थाम ऊँचे स्वरकर रुदन करने लगा। ढीला होय गया है अग जाका, जाती रही है काति जाकी। तब सीता सती कहती भई—हे कतातवक्र! तू काहेकू महादुखीकी न्याईं होवे है? आज जिनवन्दनाके उत्सव का दिन, तू हर्षमें विषाद क्यो करे है? या निजन वनमें क्यो रोवे है? तब वह अति रुदनकर वृत्तात कहता भया। जो वचन विषसमान अग्नि समान शस्त्र समान है। हे मात! दुर्जननिके वचनतै राम अकीर्तिके भयसे जो न तजा जाय तिहारा स्नेह ताहि तजकर चैत्यालयनिके दर्शनकी तिहारे अभिलाषा उपजी हुती सो तुमकू चैत्यालयोके अर निर्वाणक्षेत्रोके दर्शन कराय भयानक वनविषै तजी है। हे देवी! जैसे यति रागपरणतिकू तज तैसे रामने तुमकू तजी है। अर लक्ष्मणने जो कहिवेकी हद थी सो कही, कछू कमी न राखी। तिहारे अर्थि अनेक न्यायके वचन कहे, परन्तु रामने हठ न छोडी। हे स्वामिनि! राम तुमसे निराग भए। अब तुमकू धर्म ही शरण है। सो या ससारविषै न माता, न पिता, न भ्राता, न कुटुम्ब एक धर्म ही जीवका सहाई है। अब तुमकू यह मृगोका भरा वन ही आश्रय है। ये वचन सीता सुनकर वज्रपातकी मारी जैसी होय गई। हृदयविषै दुखके भारकर मूर्छाकू प्राप्त भई। बहुरि सचेत होय गदगद वाणीसू कहती भई—शीघ्र ही मोहि प्राणनाथसू मिलाओ। तब वाने कही—हे माता! नगरी दूर रही, अर रामका दर्शन दूर। तब अश्रुपातरूप जलकी धारासू मुखकमल प्रक्षालती हुई कहती भई कि हे सेनापति! तू मेरे वचन रामसू कहियो कि मेरे त्यागका विषाद आप न करणा, परम धीर्यकू अवलम्बनकर सदा प्रजाकी रक्षा करियो, जैसे पिता पुत्रकी रक्षा करै। आप महान्यायवत हो अर समस्त कलाके पारगामी हो, राजाकू प्रजा ही आनन्दका कारण है। राजा वही जाहि प्रजा शरदकी पूनोके चन्द्रमाकी न्याई चाहे। अर यह ससार असार है, महा भयकर दुखरूप है। जा सम्यग् दर्शनकर भव्यजीव ससारसू मुक्त होवे है सो तिहारे आराधिवे योग्य है। तुम राजतै सम्यग्दर्शनकू विशेष

भला जानियो। यह राज्य तो विनाशीक है अर सम्यग्दर्शन अविनाशी सुखका दाता है सो अभव्य जीव निंदा करै तो उनकी निंदाके भयसे हे पुरुषोत्तम! सम्यग्दर्शनकू कदाचित न तजना। यह अत्यन्त दुर्लभ है। जैसैं हाथविषै आया रत्न समुद्रविषै डालिए तौ बहुरि कौन उपायसू हाथ आवै। अर अमृतफल अंधकूपमें डारघा बहुरि कैसे मिले? जैसे अमृतफलकू डाल बालक पश्चात्ताप करै तैसे सम्यग्दर्शनसे रहित हुवा जीव विषाद करै है। यह जगत दुर्निवार है, जगतका मुख बन्द करवेकू कौन समर्थ है? जाके मुखमें जो आवै सो ही कहै। तातैं जगतकी बात सुनकर जो योग्य होय सो करियो। लोक गडरिया प्रवाह है सो अपने हृदयविषै हे गुणभूषण! लौकिक वार्ता न धरणी, अर दानकरि, प्रीतिके योगकरि जनोंकू प्रसन्न राखना। अर विमल स्वभावकर मित्रोंकू वश करना अर साधु तथा आर्यिका आहारकू आवैं तिनकू प्रासुक अन्नसू अति भक्तिकर निरंतर आहार देना। अर चतुर्विध संघकी सेवा करनी। मन वचन कायकरि मुनिकू प्रणाम पूजन अर्चनादिकरि शुभ कर्म उपार्जना करना। अर क्रोधकू क्षमाकरि, मानकू निगर्वता करि, मायाकू निष्कपटताकरि, लोभकू संतोषकरि जीतना। आप सब शास्त्रविषै प्रवीण हो सो हम तुमकू उपदेश देनेकू समर्थ नाहीं, क्योंकि हम स्त्रीजन हैं। आपकी कृपाके योगकरि कभी कोई परिहास्यकरि अविनय भरा वचन कहा हो तो क्षमा करियो। ऐसा कहकर रथसू उतरी अर तृण पाषाणकरि भरी जो पृथ्वी उसमें अचेत होय मूर्छा खाय पडी। सो जानकी भूमिविषै पडी ऐसी सोहती भई मानो रत्नोंकी राशि ही पडी है। ७७२

कृतांतवक्र सीताकू चेष्टारहित मूर्छित देख महा दुखी भया, अर चित्तविषै चिंतवता भया— हाय! यह महा भयानक वन अनेक दुष्ट जीवोंकरि भरया, जहां जे महा धीर शूरवीर होय तिनकै भी जीवनेकी आशा नाहीं तो यह कैसे जीवेगी? इसके प्राण बचना कठिन है। इस महासती माताकू मैं अकेली वनविषै तजकर जाऊं हूं सो मुझ समान निर्दई कौन? मुझे किसी प्रकार भी किसी ठौर शांति नाहीं। एक तरफ स्वामीकी आज्ञा, अर एक तरफ ऐसी निर्दयता! मैं पापी दुखके भंवर

विषै पडा हू। धिक्कार पराई सेवाकू, जगतविषै निंद्य पराधीनता, जो स्वामी कहे सो ही करना, जैसे यन्त्रकू यन्त्री बजावै त्योही बाजै। सो पराया सेवक यन्त्र तुल्य है। अर चाकरसू कूकर भला जो स्वाधीन आजीवका पूर्ण करै है। जैसे पिशाचके वश पुरुष ज्यो वह बकावै त्यो बकै, तैसे नरेन्द्रके वश नर, वह जो आज्ञा करै सो करै। चाकर क्या न करै अर क्या न कहै ? अर जैसे चित्राभका धनुष निष्प्रयोजन गुण कहिये फिणचकू धरै है, सदा नम्रीभूत है, तैसे परकिंकर निःप्रयोजन गुणकू धरै है, सदा नम्रीभूत है। धिक्कार किंकरका जीवना। पराई सेवा करना तेजरहित होना है। जैसे निर्माल्य वस्तु निंद्य है, तैसे परकिंकरता निंद्य है। धिग २ पराधीनके प्राण धारणकू। यह पराधीन पराया किंकर टीकली समान है। जैसे टीकली परतन्त्र होय कूपका जीव कहिए जल हरै है तैसे यह परतन्त्र होय पराए प्राण हरै है। कभी भी चाकरका जन्म मत होवे। पराया चाकर काठकी पूतली समान है। ज्यो स्वामी नचावै त्यो नाचै। उच्चता, उज्ज्वलता, लज्जा, अर कांति, तिनसे परकिंकर रहित है। जैसे विमान पराये आधीन है, चलाया चाले, थमाया थमें, ऊचा चढावे तो ऊचा चढे, नीचा उतारे तो नीचा उतरे। धिक्कार पराधीनके जीतव्यकू जो निबल, अपने मासकू बेचनहारा, महालघु, अपने अधीन नहीं, सदा परतन्त्र, धिक्कार किंकरके प्राण धारणकू। मैं पराई चाकरी करी, अर परवश भया, तो ऐसे पाप कर्मकू करू हू, जो इस निर्दोष महासतीकू अकेली भयानक वनविषै तजकर जाऊ हू। हे श्रेणिक! जैसे कोई धर्मकी बुद्धिकू तजै तैसे वह सीताकू वनविषै तजकर अयोध्याकू सन्मुख भया। अतिलज्जावान होयकर चाल्या। सीता याके गए पाछें केतीक वारमें मूर्च्छासे सचेत होय महा दुखकी भरी यूथभ्रष्ट मृगीकी न्याई विलाप करती भई। सो याके रुदनकर मानो सबही वनस्पति रुदन करै है। वृक्षनिके पुष्प पडे हैं सोई मानो आंसू भए। स्वतः स्वभाव महारमणीक याके स्वर तिनकर विलाप करती भई। महा शोककी भरी हाय कमलनयन राम! नरोत्तम! मेरी रक्षा करहु, मोसे वचनालाप करहु। अर तुम तो निरन्तर उत्तम चेष्टाके धारक हो, महागुणवंत शांतचित्त हो, तिहारा लेशमात्र हू दोष नाहीं। ७७३

तुम तो पुरुषोत्तम हो, मैं पूर्वभवविषै जो अशुभकर्म कीए थे तिनके फल पाये। जैसा करना तैसा भोगना। कहा करे भर्तार अर कहा करे पुत्र? तथा माता पिता बांधव कहा करे? अपना कर्म अपने उदय आवै सो अवश्य भोगना। मैं मन्दभागिनी पूर्व जन्मविषै अशुभ कर्म कीये ताके फलतैं या निर्जन वनविषै दुखकूं प्राप्त भई। मैं पूर्व भवविषै काहूका अपवाद किया, परनिंदा करी होगी ताके पापकरि यह कष्ट पाया। तथा पूर्वभवविषै गुरुनिके समीप व्रत लेकर भग्न कीया ताका यह फल पाया। अथवा विषफल समान जो दुर्वचन तिनकर काहूकूं अपमान कीया तातैं यह फल पाये। अथवा मैं परभवविषै कमलनिके वनविषै तिष्ठता चकवा चकवीका युगल विछोया तातैं मोहि स्वामीका वियोग भया। अथवा मैं परभवविषै कुचेष्टाकर हंस हंसिनीका युगल विछोहा जे कमलनिकर मंडित सरोवर में निवास करणहारे, अर बड़े बड़े पुरुषनिकूं जिनकी चालकी उपमा दीजै, अर जिनके वचन अति सुन्दर, जिनके चरण, चोंच, लोचन, कमल समान अरुण, सो मैं विछोहे, तिनके दोषकरि ऐसी दुख अवस्थाकूं प्राप्त भई। अथवा मैं पापिनी कबूतर कबूतरीके युगल बिछोहे हैं, जिनके लाल नेत्र आधी चिरम समान, अर परस्पर जिनविषै अतिस्नेह, अर कृष्णागुरु समान जिनका अंग अथवा श्याम घन समान अथवा धूम समान धूसरे, आरंभी है सुखसे क्रीडा जिन्होंने, अर कंठविषै तिष्ठै है मनोहर शब्द जिनके सो मैं पापनी जुदे कीए, अथवा भले स्थानसूं बुरे स्थानमें मेले अथवा बांधे, मारे, ताके पापकरि असाध्य दुःख मोहि प्राप्त भया। अथवा बसंतके समय फूले वृक्ष तिनविषै केलि करते कोकिल कोकिली के युगल महामिष्ट शब्दके करनहारे परस्पर भिन्न भिन्न कीये, ताका यह फल है। अथवा ज्ञानी जीवनि के वंदिवे योग्य महाव्रती जितेन्द्रिय महा मुनि तिनकी निंदा करी। अथवा पूजा दानविषै विघ्न किया, अर परोपकारविषै अन्तराय कीए, हिंसादिक पाप किए, ग्रामदाह, वनदाह, स्त्री बालक पशुहत्यादि पाप कीए तिनके यह फल है। अनछाना पानी पिया, रात्रीकूं भोजन किया, बीधा अन्न भखा, अभक्ष्य वस्तुका भक्षण किया, न करिवे योग्य काम किए, तिनका यह फल है। मैं बलभद्रकी पटराणी, स्वर्ग

समान महिलकी निवासिनी, हजारा सहेली मेरी सेवाकी करनहारी, सो अब पापके उदयकरि निर्जन वनविषै दुखके सागरविष डूबी कस तिष्ठू ? रत्ननिके मन्दिरविष महा रमणीक वस्त्र तिनकर शोभित
 सुन्दर सेजपर शयन करणहारी म कहा पडी हू ? सब सामग्रीकरि पूर्ण महा रमणीक महिलविष
 रहणहारी म अब कसै अकेली वनका निवास करू गी ? महा मनोहर बीण, बासुरी, मृदगादिकके
 मधुर स्वर तिनकर सुख निद्राकी लेनहारी म कस भयकर शब्दकर भयानक वनविष अकेली तिष्ठू गी ? रामदेवकी पटराणी, अपयशरूपी दावानल कर जरी, महा दु खिनी, एकाकिनी पापिनी कष्टका कारण जो वन, जहा अनेक जातिके कीट, अर करकश डाभकी अणी, अर काकरनिसे भरी पृथ्वी, ताविष कैसे शयन करू गी ? ऐसी अवस्था भी पायकर मेरे प्राण न जाय तो ये प्राण ही वज्रके हैं। अहा ऐसी अवस्था पायकरि मेरे हृदयके सौ टूक न होय है सो यह वज्रका हृदय ह। कहा करू ? कहा जाऊ ? कौनसू कहा कहू ? कौनके आश्रय तिष्ठू ? हाय गुणसमुद्र राम ! मोहि क्यो तजी ? हे महा भक्त लक्ष्मण ! मेरी क्यो न सहाय करी ? हाय पिता जनक ! हाय माता विदेही ! यह कहा भया ? अहो विद्याधरनिके स्वामी भामण्डल ! म दुखके भँवरविष पडी कसे तिष्ठू ? म ऐसी पापिनी जो भोसहित पतिन परम सपदाकर जिनेन्द्रका दशन अचन चितया था सो मोहि इस वनीविष डारी।

हे श्रेणिक ! या भाति सीता सती विलाप कर है। अर राजा वज्रजघ पुण्डरीकपुरका स्वामी, हाथी पकडिवे निमित्त वनमें आया था सो हाथी पकड बडी विभूतिसे पाछे जाय था। सो ताकी सेना के प्यादे शूरवीर कटारी आदि नाना प्रकारके शस्त्र धरे कमर बाधे आय निकसे। सो याके रुदनके मनोहर शब्द सुनकर सशयकू अर भयकू प्राप्त भए,एक पैंड भी न जाय सके। अर तुरगनिके सवार हू ताका रुदन सुन खडे होय रहे। उनको यह आशका उपजी जो या वनविष अनेक दुष्ट जीव तहा यह सुन्दर स्त्रीके रुदनका नाद कहा होय है ? मृग, सुसा, रोझ, साप, रीछ, ल्याली, बघेरा, आरणे भसे, चीता, गैंडा, शार्दूल, अष्टापद, वनशूकर, गज तिनकर विकराल यह वन ताविषैं यह चन्द्रकला

समान महामनोग्य कौन रोवै है ? यह कोई देवागना सौधर्म स्वर्गसे पृथ्वीविषै आई है। यह विचारकर सेनाके लोक आश्चर्यकू प्राप्त होय खडे रहे। अर वह सेना समुद्र समान, जिसमें तुरंग ही मगर, अर पयादे मीन, अर हाथी ग्राह हैं। समुद्र भी गाजे, अर सेना भी गाजे है। अर समुद्रमें लहर उठै है, सेनामें सूर्यकी किरणकरि शस्त्रोंकी जोति उठै है। समुद्र भी भयकर है, सेना भयकर है। सो सकल सेना निश्चल होय रही।

इति श्रीरविषेणाचार्य विरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रंथ ताकी भाषावचनिकाविषै सीताका वनविषै विलाप अर वज्रजंघका आगमन वर्णन करनेवाला सत्तानवां पर्व पूर्ण भया ॥ ९७ ॥

अथानन्तर जैसी महाविद्याकी थांभी गंगा थंभी रहै तैसे सेनाकू थंभी देख राजा वज्रजंघ निकटवर्ती पुरुषोंकू पूछता भया कि सेनाके थमनेका कारण क्या है ? तब वह निश्चयकर राजपुत्रीके समाचार कहते भये। उससे पहिले राजाने भी रुदनके शब्द सुने, सुनकर कहता भया—जिसका यह मनोहर रुदनका शब्द सुनिये सो कहो कौन है ? तब कई एक अग्रेसर होय जायकर पूछते भये—हे देवि ! तू कौन है ? अर इस निर्जन वनविषै क्यों रुदन करै है ? तो समान कोऊ और नाहीं। तू देवी है अक नागकुमारी है, अक कोई उत्तम नारी है। तू महा कल्याणरूपिणी उत्तम शरीरकी धारणहारी, तोहि यह शोक कहा ? हमकू यह बडा कौतुक है। तब यह शस्त्रधारक पुरुषकू देख भयकू प्राप्त भई, कांपै है शरीर जाका, सो भयकरि उनको अपने अपने आभरण उतारकरि देने लगी। तब वे स्वामीके भयकरि यह कहते भये—हे देवी ! तू क्यों डरै है, शोककू तज, धीरता भज। आभूषण हमकू काहेकू देवे है ? तेरे ये आभूषण तेरे ही रहो, ये तोहि योग्य है। हे माता ! तू विह्वल क्यों होय है ? विश्वास गहु, यह राजा वज्रजंघ पृथ्वीविषै प्रसिद्ध, महा नरोत्तम, राजनीतिकर युक्त है, अर सम्यग्दर्शनरूप रत्न भूषणकरि शोभित है। कैसा है सम्यग्दर्शन ? जिस समान और रत्न नाहीं। अविनाशी है, अमोलिक है,

काहूसे हरचा न जाय, महा सुखका दायक, शंकादिक मल रहित, सुमेरु सारिखा निश्चल है। हे माता! जाके सम्यग्दर्शन होवे उसके गुण हम कहां लग वर्णन करें? यह राजा जिनमार्गके रहस्यका ज्ञाता शरणागतप्रतिपालक है। परोपकारमें प्रवीण, महा दयावान, महा निर्मल, पवित्रात्मा, निंद्यकर्मसूं निवृत्त, लोकोंका पिता समान रक्षक, महा दातार, जीवोकी रक्षाविषै सावधान, दीन अनाथ दुर्बल देहधारियों कूं माता समान पालै है, सिद्धि कार्यका करणहारा, शत्रुरूप पर्वतनिकूं वज्रसमान है। शास्त्रविद्या का अभ्यासी, परधनका त्यागी, परस्त्रीकूं माता बहिन बेटीके समान मानै है। अन्यायमार्गकूं अजगर सहित अन्धकूप समान जानै है। धर्मविषै तत्पर, अनुरागी, संसारके भ्रमणसे भयभीत, सत्यवादी, जितेन्द्रिय है। याके समस्त गुण जो मुखसूं कहा चाहै सो भुजानिकर समुद्रकूं तिरा चाहै है। ये बात वज्रजंघके सेवक कहै है। इतनेविषै ही राजा आप आया। हाथीसे उतरि बहुत विनय करि सहज ही है सुन्दर दृष्टि जाकी, सो सीतातैं कहता भया—हे बहिन! वह वज्रसमान कठोर महा असमझ है, जो तोहि ऐसे बनमें तजै, अर तोहि तजत जाका हृदय न फट जाय। हे पुण्यरूपिणी! अपनी अवस्थाका कारण कहि, विश्वासकूं भजि, भय मत कर, अर गर्भका खेद मत कर। तब यह शोककरि पीडित-चित्त बहुरि रुदन करती भई। राजाने बहुत धीर्य बधाया। तब यह हंसकी न्याईं आंसू डार गदगद वाणीतैं कहती भई—हे राजन! मो मन्दभागिनीकी कथा अत्यन्त दीर्घ है। यदि तुम सुना चाहो हो तो चित्त लगाय सुनो। मैं राजा जनककी पुत्री, भामण्डलकी बहिन, राजा दशरथके पुत्रकी वधू, सीता मेरा नाम, रामकी राणी। राजा दशरथने केकईकूं वरदान दिया हुता सो भरतकूं राज्य देकर राजा वैरागी भए। अर राम लक्ष्मण वनकूं गए सो मैं पतिके संग वनमें रही। रावण कपटसे मोहि हर ले गया। ग्यारहवें दिन मैंने पतिकी वार्त्ता सुन भोजन किया। पति सुग्रीवके घर रहे। बहुरि अनेक विद्याधरनिकूं एकत्रकर आकाशके मार्ग होय समुद्रकूं उलंघ लंका गये, रावणकूं जीत मोहि ल्याये। बहुरि राजरूप कीचकूं तज भरत तो वैरागी भये। कैसे है भरत? जैसे ऋषभदेवके भरत चक्रवर्ती

तिन समान हैं उपमा जिनकी। सो भरत तो कर्मकलंक रहित परमधामकू प्राप्त भये। अर केकई शोकरूप अग्निकर आतापकू प्राप्त भई। बहुरि वीतरागका मार्ग सार जानकर आर्यिका होय महा तपसे स्त्रीलिंग छेद स्वर्गविषै देव भई, मनुष्य होय मोक्ष पावेगी। राम लक्ष्मण अयोध्याविषै इन्द्र समान राज्य करैं। सो लोक दुष्टचित्त निश्शंक होय अपवाद करते भए कि रावण हरकर सीताकू ले गया, बहुरि राम ल्याय घरमें राखी। सो राम महा विवेकी, धर्मशास्त्रके वेत्ता न्यायवन्त, ऐसी रीति क्यों आचरैं? जिस रीति राजा प्रवर्तै उसी रीति प्रजा प्रवर्तै। सो लोक मर्यादारहित होने लगे, कहैं रामहीके घर यह रीति तो हमकू कहा दोष? अर मैं गर्भसहित दुर्बल शरीर यह चितवन करती हुती कि जिनेन्द्रके चैत्यालयोंकी अर्चना करूंगी। अर भरतार भी मुझ सहित जिनेन्द्रके निर्वाण स्थानक अर अतिशय स्थानक तिनकू वंदना करनेकू भावसहित उद्यमी भए हुते। अर मोहि ऐसे कहते थे कि प्रथम तो हम कैलाश जाय श्री ऋषभदेवके निर्वाण क्षेत्र वंदेंगे। बहुरि और निर्वाणक्षेत्रकू वंद करि अयोध्याविषै ऋषभ आदि तीर्थंकर देवनिका जन्मकल्याणक है सो अयोध्याकी यात्रा करेंगे। जेते भगवानके चैत्यालय हैं तिनका दर्शन करेंगे। कम्पिल्या नगरीविषै विमलनाथका दर्शन करेंगे। अर रत्नपुर में धर्मनाथका दर्शन करेंगे। कैसे हैं धर्मनाथ? धर्मका स्वरूप जीवनिकू यथार्थ उपदेशै है। बहुरि श्रावस्ती नगरी संभवनाथका दर्शन करेंगे। अर चम्पापुरमें वासुपूज्यका, अर काकंदीपुरमें पुष्पदंतका, चन्द्रपुरीविषै चन्द्रप्रभका, कौशांबीपुरीमें पद्मप्रभका, भद्रलपुरमें शीतलनाथका, अर मिथिलापुरीमें मल्लिनाथ स्वामीका दर्शन करेंगे। अर बाणारसीमें सुपार्श्वनाथ स्वामीका दर्शन करेंगे। अर सिंहपुरीमें श्रेयांसनाथका अर हस्तनागपुरमें शांति कुंथु अरहनाथका पूजन करेंगे। अर हे देवि! कुशाग्रनगरमें श्रीमुनिसुव्रतनाथका दर्शन करेंगे। जिनका धर्मचक्र अब प्रवर्तै है, अर और हू जे भगवानके अतिशय स्थानक महापवित्र हैं, पृथ्वीमें प्रसिद्ध हैं, तहां पूजा करेंगे। भगवानके चैत्यालय, अर सुर असुर अर गंधर्वनिकर स्तुति करिवे योग्य हैं, नमस्कार योग्य हैं तिन सबनिकी वंदना हम करेंगे। अर

पुष्पक विमानविषै चढ सुमेरुके शिखरपर जे चैत्यालय हैं तिनका दर्शनकरि भद्रशाल वन, नन्दन वन सोमनस वन, तहा जिनेन्द्रकी अर्चाकरि अर कृत्रिम अकृत्रिम अढ़ाई द्वीपविषै जेते चैत्यालय हैं तिनकी वंदनाकरि हम अयोध्याकू आवेंगे।

हे प्रिये ! भावसहित एक बार हू नमस्कार श्रीअरहंतदेवकू करैं तो अनेक जन्मके पापनिसे छूटैं हैं। हे काते ! धन्य तेरा भाग्य जो गर्भके प्रादुर्भावविषै तेरे जिन वन्दनाकी वांछा उपजी। मेरे हू मन में यही है तो सहित महापवित्र जिनमन्दिरनिका दर्शन करू। हे प्रिये ! पहिले भोगभूमिविषै धर्मकी प्रवृत्ति न हुती, लोक असमझ थे। सो भगवान ऋषभदेवने भव्योकू मोक्षमार्गका उपदेश दिया। जिनकू संसारभ्रमणका भय होय तिनको भव्य कहिये। कैसे हैं भगवान ऋषभ ? प्रजाके पति, जगतविषै श्रेष्ठ, त्रैलोक्यकरि वंदिवे योग्य, नानाप्रकार अतिशयकर संयुक्त, सुर नर असुरनिकू आश्चर्यकारी, ते भगवान भव्यनिकू जीवादिक तत्वोका उपदेश देय अनेकनिकू तारि निर्वाण पधारे, सम्यक्त्वादि अष्ट गुणमंडित सिद्ध भए। जिनका चैत्यालय सर्व रत्नमई भरत चक्रवर्तीने कैलाश पर कराया। अर पाचसे धनुषकी रत्नमई प्रतिमा, सूर्यहूतें अधिक तेजकू धरे मन्दिरविषै पधराई सो विराजै है। जाकी अबहु देव विद्याधर गन्धर्व किन्नर नाग दैत्य पूजा करै है जहा अप्सरा नृत्य करै हैं। जो प्रभु स्वयंभू सर्वगति निर्मल त्रैलोक्यपूज्य जाका अन्त नाहीं, अनन्तरूप अनन्त ज्ञान विराजमान, परमात्मा सिद्ध शिव आदिनाम ऋषभ तिनको कैलाश पर्वत पर हम चलकर पूजा कर स्तुति करेंगे ? वह दिन कब होयगा, या भांति मोसू कृपा कर वार्ता करते थे। अर ताही समय नगरके लोक भेले होय प्राय लोकापवादकी दावानलसे दुस्सह वार्ता रामसू कही। सो राम बडे विचारके कर्ता चित्तमें यह चिताई यह लोक स्वभावही कर वक्र हैं। सो और भांति अपवाद न मिटै या लोकापवादसे प्रिय जनकू तजना भला अथवा मरणा भला, लोकापवादतै यशका नाश होय, कल्पांतकाल पर्यंत अपयश जगतमें रहै सो भला नाहीं। ऐसा विचार महाप्रवीण मेरा पति ताने लोकापवादके भयतै मोहि महा अरण्यवनमें

तजा। मैं दोषरहित सो पति नीके जाने, अर लक्ष्मणने बहुत कहा सो न माना। मेरे ऐसा ही कर्मका उदय जे विशुद्ध कुलमें उपजे क्षत्री शुभचित्त, सब शास्त्रनिके ज्ञाता, तिनकी यही रीति है। अर काहूसे न डरें, एक लोकापवादसे डरें। यह अपने निकासनेका वृत्तांत कह बहुरि रुदन करने लगी, शोकरूप अग्निकरि तप्तायमान है चित्त जाका। सो याकूं रुदन करती अर रजकर धूसरा है अंग जाका, महा दीन दुखी देख राजा वज्रजंघ उत्तम धर्मका धरणहारा अति उद्वेगकूं प्राप्त भया। अर याकूं जनककी पुत्री जान समीप आय बहुत आदरसें धीर्य बधाया। अर कहता भया—हे शुभमते! तू जिनशासनमें प्रवीण है। शोक कर रुदन मत करै। यह आर्तध्यान दुखका बढावनहारा है। हे जानकी! या लोककी स्थिति तू जाने है। तू महा सुज्ञान अनित्य अशरण एकत्व अन्यत्व इत्यादि द्वादश अनुप्रेक्षावोंकी चितवन करण हारी, तेरा पति सम्यग्दृष्टि, अर तू सम्यत्वसहित विवेकवन्ती है मिथ्यादृष्टि जीवनिकी न्याईं कहा बारम्बार शोक करै? तू जिनवाणीकी श्रोता, अनेक बार महा मुनिनिके मुख श्रुतिके अर्थ सुने, निरंतर ज्ञान भावकूं धरणहारी, तोहि शोक उचित नाहीं। अहो या संसारमें भ्रमता यह मूढ प्राणी वाने मोक्षमार्गकूं न जाना, यातें कहा कहा दुख न पाये। याकूं अनिष्टसंयोग इष्टवियोग अनेकबार भये। यह अनादिकालसूं भवसागरके मध्य क्लेशरूप भंवरमें पडा है। या जीवने तिर्यंच योनिविषै जलचर नभचरके शरीर धर वर्षा शीत आताप आदि अनेक दुख पाये। अर मनुष्य देहविषै अपवाद बिरह रुदन क्लेशादि अनेक दुख भोगे। अर नरकविषै शीत उष्ण छेदन भेदन शूलारोहण, परस्पर घात, महा दुर्गंध, क्षीरकुण्डविषै निपात, अनेक रोग, अनेक दुख लहे। अर कबहू अज्ञान तपकरि अल्प ऋद्धिका धारक देव हू भया, तहां हू उत्कृष्ट ऋद्धिके धारक देवनिकूं देख दुखी भया। अर मरण समय महा दुखी होय विलापकर मूवा। अर कबहू महा तपकर इन्द्रतुल्य उत्कृष्ट देव भया, तोहू विषयानुरागकरि दुखी ही भया। या भांति चतुर्गतिविषै भ्रमण करते या जीवने भववनविषै आधि व्याधि संयोग वियोग रोग शोक जन्म मृत्यु दुख दाह दरिद्र हीनता नानाप्रकारकी वांछा, विकल्पताकर शोच ७८०

संतापरूप होय अनन्त दुख पाये। अधोलोक मध्यलोक ऊर्ध्वलोकविषै ऐसा स्थानक नाहीं जहां या जीवने जन्म मरण न किये। अपने कर्मरूप पवनके प्रसंगकर भवसागरविषै भ्रमण करता जो यह जीव ताने मनुष्य देहविषै स्त्रीका शरीर पाया। तहां अनेक दुख भोगे। तेरे शुभ कर्मके उदयकरि राम सारिखे सुन्दर पति भये, जिनके सदा शुभका उपार्जन सो पुण्यके उदयकरि पति सहित महा सुख भोगे। अर अशुभके उदयतें दुस्सह दुखकू प्राप्त भई। लंकाद्वीपविषै रावण हर कर ले गया तहां पतिकी वार्ता न सुन ग्यारह दिनतक भोजन विना रही। अर जबतक पतिका दर्शन न भया तब तक आभूषण सुगंध लेपनादि रहित रही। बहुरि शत्रुको हत पति ले आये तब पुण्यके उदयतें सुखकू प्राप्त भई। बहुरि अशुभका उदय आया तब विना दोष गर्भवतीकू पतिने लोकापवादके भयतैं घरतैं निकासी। लोकापवादरूप सर्पके डसिवेकर पति अचेत चित्त भया। सो विना समझे भयंकर बनमें तजी। उत्तम प्राणी पुण्यरूप पुष्पनिका घर ताहि जो पापी दुर्वचनरूप अग्निकर बाले हैं सो आपही दोषरूप दहन करि दाहकू प्राप्त होय। हे देवि! तू परम उत्कृष्ट पतिव्रता महासती है, प्रशंसायोग्य है चेष्टा जाकी। जाके गर्भाधानविषै चैत्यालयनिके दर्शनकी वांछा उपजी अबहू तेरे पुण्यहीका उदय है। तू महा शीलवती जिनमती है। तेरे शीलके प्रसाद करि या निर्जन वनविषै हाथीके निमित्त मेरा आवना भया। मैं वज्रजंघ पुण्डरीकपुरका अधिपति राजा द्विरदवाह सोमवंशी, महाशुभ आचरणके धारक, तिनके सुबंधु, महिषी नामा राणी, ताका मैं पुत्र। तू मेरे धर्मके विधानकर बड़ी बहिन है। पुण्डरीकपुर चालहु। शोक तज। हे बहिन! शोकसे कछू कार्यसिद्धि नाहीं। वहां पुण्डरीकपुरसें राम तोहि हू कृपाकर बुलावेंगे। राम हू तेरे वियोगसू पश्चात्तापकरि अति व्याकुल हैं। अपने प्रमादकरि अमोलिक महा गुणवान रत्न नष्ट भया, ताहि विवेकी महा आदरसे ढूंढै ही। तातैं हे पतिव्रते! निसंदेह राम तुझे आदरसू बुलावेंगे। या भांति वा धर्मात्माने सीताकू शांतता उपजाई। तब सीता धीर्यकू प्राप्त भई। मानो भाई भामण्डल ही मिला। तब वाकी अति प्रशंसा करती भई। तू मेरा अति उत्कृष्ट

भाई है। महा यशवंत, शूरवीर, बुद्धिमान, शांतचित्त, साधर्मिनिपर वात्सल्यका करणहारा, उत्तम जीव है। गौतम स्वामी कहे हैं—हे श्रेणिक! राजा वज्रजंघ अधिगमसम्यग्दृष्टि, अधिगम कहिए गुरु-उपदेशकरि पाया है सम्यक्त जाने, अर ज्ञानी है, परम तत्वका स्वरूप जाननहारा पवित्र है आत्मा जाकी, साधु समान है, जाके व्रत गुण शीलकर संयुक्त मोक्षमार्गका उद्यमी सो ऐसे सत्पुरुषनिके चरित्र दोषरहित पर—उपकारकरयुक्त कौनका शोक न निवारै? कैसे हैं सत्पुरुष? जिनमतविषै प्रति निश्चल है चित्त जिनका। सीता कहै है—हे वज्रजंघ! तू मेरे पूर्वभवका सहोदर है सो जो या भवविषै तैंने साचा भाईपना जनाया। मेरा शोक संतापरूप तिमिर हरा सूर्यसमान तू पवित्र आत्मा है।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महा पद्मपुराण संस्कृतग्रन्थ ताकी भाषावचनिकाविषै सीताके वज्रजंघका धीर्य बंधावनेका वर्णन करनेवाला अठानवेवां पर्व पूर्ण भया ॥ ९८ ॥

अथानंतर वज्रजंघने सीताके चढिवेकूं क्षणमात्रविषै अद्भुत पालकी मंगाई। सो सीता तापर आरूढ भई। पालकी विमान समान महा मनोग्य समीचीन प्रमाणकर युक्त, सुन्दर हैं थंभ जाके, श्रेष्ठ दर्पण थंभोविषै जडे हैं। अर मोतिनिकी झालरीकरि पालकी मंडित है। अर चन्द्रमा समान उज्ज्वल चमर तिनकर शोभित है, मोतिनके हार जलके बुदबुदे समान शोभै हैं, अर विचित्र जे वस्त्र तिनकर मंडित चित्रामकर शोभित है, सुंदर है, झरोखा जाविषै। ऐसी सुखपालकी पर चढ़ परम ऋद्धि कर युक्त बडी सेना मध्य सीता चली जाय है, आश्चर्यकूं प्राप्त भई कर्मोंकी विचित्रताकूं चितवे है। तीन दिनविषै भयंकर वनकूं उलंघ पुण्डरीक देशविषै आई। उत्तम है चेष्टा जाकी, सब देशके लोक माताकूं आय मिले ग्राम ग्रामविषै भेंट कर। कैसा है वज्रजंघका देश? समस्त जातिके अन्नकर जहां समस्त पृथ्वी आच्छादित होय रही है। अर कूकडाउडान नजीक हैं ग्राम जहां, रत्ननिकी खान, स्वर्ण रूपादिककी खान, सुरपुर जैसे पुर, सो देखती थकी सीता हर्षकूं प्राप्त भई। वन उपवनकी शोभा ७८२

देखती चली जाय है। ग्रामके महंत भेंटकर नानाप्रकार स्तुति करे हैं। हे भगवती! हे माता! आपके दर्शनकर हम पापरहित भए, कृतार्थ भए। अर बारम्बार वन्दना करते भए, अर्घपाद्य किए। अर अनेक राजा देवनि समान आय मिले सो नानाप्रकार भेंट करते भए अर बारम्बार वंदना करते भए। या भांति सीता सती पैंड २ पर राजा प्रजादिकर पूजी सती चली जाय है। वज्रजंघका देश अतिसुखी ठौर ठौर वन उपवनादिकरि शोभित, ठौर ठौर चैत्यालय देख अति हर्षित भई। मन विषै विचारै है जहां राजा धर्मात्मा होय वहां प्रजा सुखी होय ही। अनुक्रमकर पुण्डरीकपुरके समीप आए सो राजाकी आज्ञातैं सीताका आगमन सुन नगरके सब लोक सन्मुख आए अर भेंट करते भए। नगरकी अति शोभा करी। सुगन्धकर पृथ्वी छाटी, गली बाजार सब सिंगारे, अर इन्द्रधनुष समान तोरण चढ़ाए, अर द्वारनिविषै पूर्ण कलश थापे, जिनके मुख सुन्दर पल्लवयुक्त हैं अर मंदिरनिपर ध्वजा चढ़ी, अर घर घर मंगल गावैं हैं। मानो वह नगर आनन्दकर नृत्य ही करै है। नगरके दरवाजेपर तथा कोटके कंगूरनिपर लोक खड़े देखें हैं। हर्षकी वृद्धि होय रही है! नगरके बाहिर अर भीतर राजद्वारतक सीताके दर्शनकूं लोक खड़े हैं। चलायमान जे लोकनिके समूह तिनकर नगर यद्यपि स्थावर है तथापि जानिए जंगम होय रह्या है। नानाप्रकारके वादित्र बाजै हैं। तिनके नादकर दशों दिशा शब्दायमान होय रही हैं, शंख बाजै हैं, बंदीजन बिरद बखानै हैं। समस्त नगरके लोक आश्चर्यकूं प्राप्त भए देखैं हैं। अर सीताने नगरविषै प्रवेश किया, जैसे लक्ष्मी देवलोकविषै प्रवेश करै। वज्रजंघके मंदिरविषै अति सुन्दर जिनमन्दिर है। सब राजलोककी स्त्रीजन सीताके सन्मुख आईं। सीता पालकीसूं उतर जिनमन्दिरविषै गई। कैसा है जिनमन्दिर? महा सुन्दर उपवनकर वेष्टित है अर वापिका सरोवरी तिनकर शोभित है, सुमेरु शिखर समान सुन्दर स्वर्णमई है। जैसे भाई भामण्डल सीताका सन्मान करै तैसे वज्रजंघ आदर करता भया। वज्रजंघके समस्त परिवारके लोक अर राजलोककी समस्त राणी सीताकी सेवा करैं। अर ऐसे मनोहर शब्द निरन्तर कहै हैं, हे देवते! हे पूज्ये! हे स्वामिनी! हे ईशानने! सदा जयवंत

होहु, बहुत दिन जीवो, आनन्दकू प्राप्त होहु, वृद्धिको प्राप्त होहु, आज्ञा करहु। या भांति स्तुति कर। अर जो आज्ञा करैं सो सीस चढावैं। अति हर्षसू दौडकर सेवा करैं। अर हाथ जोड सीस निवाय नमस्कार करैं। वहां सीता अति आनन्दतैं जिनधर्मकी कथा करती तिष्ठै। अर जो सामंतनिकी भेंट आवै अर राजा भेंट करे सो जानकी धर्मकार्यविषै लगावै। यह तो यहां धर्मकी आराधना करै है।

अर वह कृतान्तवक्र सेनापति तप्तायमान है चित्त जाका, रथके तुरंग खेदकू प्राप्त भए हुते, तिनकू खेदरहित करता हुआ श्रीरामचन्द्रके समीप आया। याकू आवता सुन अनेक राजा सन्मुख आये। सो कृतान्तवक्र आयकर श्रीरामचन्द्रजीके चरणनिकू नमस्कार कर कहता भया—हे प्रभो! मैं आज्ञाप्रमाण सीताकू भयानक वनविषै मेलकर आया हू। वाके गर्भमात्र ही सहाई है। हे देव! वह वन नाना प्रकारके भयंकर जीवनिकरि अति घोर शब्दकर महा भयकारी है। अर जैसा बैताल कहिये प्रेतनिका वन, ताका आकार देखा न जाय तैसे सघन वृक्षनिके समूह कर अंधकाररूप है। जहां स्वतः स्वभाव आरणे भैंसे अर सिंह द्वेषकर सदा युद्ध करै है। अर जहां घूघू बसै है सो विरूप शब्द करै है। अर गुफानिविषै सिंह गुंजार करै है सो गुफा गुंजार रही है। अर महाभयंकर अजगर शब्द करै है, अर चीतानिकर हते गये हैं मृग जहां, कालकू भी विकराल ऐसा वन ताविषै। हे प्रभो! सीता अश्रुपात करती महा दीनवचन आपकू जो शब्द कहती भई सो सुनो—आप आत्मकल्याण चाहो हो तो जैसे मोहि तजी तैसे जिनेन्द्रकी भक्ति न तजनी। जैसे लोकनिके अपवादकर मोसू अति अनुराग हुता तोहू तजी, तैसे काहूके कहिवेतै जिन-शासनकी श्रद्धा न तजनी। लोक बिना विचार निर्दोषनिकू दोष लगावै है, जैसैं मोहि लगाया। सो आप
न्याय करो, सो अपनी बुद्धिसे विचार यथार्थ करना, काहूके कहेतैं काहू कू झूठा दोष न लगावना। अर सम्यग्दर्शनतैं विमुख मिथ्यादृष्टि जिनधर्मरूप रत्नका अपवाद करै है सो उनके अपवादके भयतैं सम्यक्दर्शनकी शुद्धता न तजनी। वीतरागका मार्ग उरविषै दृढ़ धारणा। मेरे तजनेका या भवविषै किंचित्मात्र दुख है अर सम्यग्दर्शनकी हानितैं जन्म जन्मविषै दुख है। या जीवकू लोकविषै निधि

रत्न स्त्री वाहन राज्य सबही सुलभ है एक सम्यग्दर्शन रत्न ही महा दुर्लभ है। राजविषै पापकर नरकविषै पड़ना है, एक ऊर्ध्वगमन सम्यक्दर्शनके प्रतापहीसे होय। जाने अपना आत्मा सम्यग्दर्शन-

रूप आभूषणकर मंडित किया सो कृतार्थ भया। ये शब्द जानकीने कहे हैं जिनकूं सुनकर कौनके धर्म बुद्धि न उपजै ? हे देव ! एक तो वह सीता स्वभावही कर कायर, अर महा भयंकर वनके दुष्ट जीवनि-तैं कैसें जीवैगी ? जहां महा भयानक सर्पनिके समूह अर अल्पजल ऐसे सरोवर तिनविषै माते हाथी कर्दम करै है, अर जहां मृगनिके समूह मृगतृष्णाविषै जल जानि वृथा दौड व्याकुल होय हैं, जैसें संसार की मायाविषै रागकर रागी जीव दुखी होय। अर जहां कौंछिकी रजके संगकर मर्कट अति चंचल होय रहे हैं अर जहां तृष्णासूं सिंह व्याघ्र ल्यालियोके समूह तिनकी रसनारूप पल्लव लहलहाट करै है। अर चिरमसमान लालनेत्र जिनके ऐसे क्रोधायमान भुजंग फुंकार कर है। अर जहां तीव्र पवनके संचारकर क्षणमात्रविषै वृक्षनिके पत्रोंके ढेर होय हैं। अर महा अजगर तिनकी विषरूप अग्निकर अनेक वृक्ष भस्म होय गये हैं। अर माते हाथिनिकी महा भयंकर गर्जना ताकर वह वन अति विक-राल है। अर वनके शूकरनिकी सेनाकर सरोवर मलिनजल होय रहे हैं। अर जहां ठौर ठौर भूमि कांटे अर सांठे अर सांपोंकी बांमी अर कंकर पत्थर तिनकर भूमि महा संकटरूप है। अर डाभकी अणी सूईतैं अति पैनी हैं, अर सूखे पान फूल पवनकर उडे उडे फिरै है। ऐसे महा अरण्यविषै, हे देव ! जानकी कैसें जीवेगी ? मैं ऐसा जानूं हूं क्षणमात्र हू वह प्राण राखिवेको समर्थ नाहीं।

हे श्रेणिक ! सेनापतिके यह वचन सुन श्रीराम अति विषादकूं प्राप्त भए। कैसे हैं वचन ? जिन
कर निर्दईका भी मन द्रवीभूत होय। श्रीरामचन्द्र चितवते भए, देखो मो मूढचित्तने दुष्टनिके वचननि-करि अत्यन्त निंद्यकार्य किया। कहां वह राजपुत्री अर कहां वह भयंकर वन ? यह विचारकर मूर्छाकूं प्राप्त भये। बहुरि शीतोपचारकरि सचेत होय विलाप करते भए। सीताविषै है चित्त जिनका, हाय श्वेत श्याम रक्त तीन वर्णके कमल समान नेत्रनिकी धरणहारी ! हाय निर्मल गुणनिकी खान ! मुखकर

जीता है चन्द्रमा जाने, कमलकी किरण समान कोमल, हाय ! जानकी मोसू वचनालाप कर । तू जाने ही है कि मेरा चित्त तो विना अति कायर है । हे उपमारहित शीलव्रतकी धारणहारी ! मेरे मनकी हरणहारी ! हितकारी है आलाप जिसके, हे पापवर्जिते, निरपराध, मेरे मनकी निवासनी ! तू कौन अवस्थाकू प्राप्त भई होयगी ? हे देवी ! वह महा भयकर वन क्रूर जीवोंकर भरया, उसविषै सबसामग्री रहित कैसे तिष्ठेगी ? हे मोविषै आसक्त चकोरनेत्र लावण्यरूप जलकी सरोवरी, महालज्जावती, विनयवती ! तू कहा गई ? तेरे श्वासकी सुगधकर मुख पर गुजार करते जे भ्रमर तिनकू हस्तकमलकर निवारती अति खेदकू प्राप्त होयगी । तू यूथसे बिछुरी मृगीकी न्याई अकेली भयकर वनविषै कहा जायगी ? जो वन चितवन करते भी दुस्सह, उसविषै तू अकेली कैसे तिष्ठैगी ? कमलके गर्भ समान कोमल तेरे चरण महासुन्दर लक्षणके धारणहार, कर्कश भूमिका स्पर्श कैसे सहेंगे ? अर वनके भील महा म्लेच्छ कृत्य अकृत्यके भेदसे रहित है मन जिनका, सो तुझे पाकर भयकर पल्लीविषै ले गये होवेंगे । सो पहिले दुखसे भी यह अत्यन्त दुख है । तू भयानक वनविषै मो बिना महा दुःखकू प्राप्त भई होयगी, अथवा तू खेदखिन्न महा अधेरी रात्रिविषै बनकी रजकर मडित कहीं पडी होयगी । सो कदाचित तुझे हाथियोंने दाबी होयगी । तो इस समान और अनर्थ कहा ? अर गृध, रीछ, सिंह, व्याघ्र, अष्टापद इत्यादि दुष्ट जीवोंकर भरया जो वन ताविषै कैसे निवास करेगी ? जहा मार्ग नाहीं, विकराल दाढके धरणहारे व्याघ्र महा क्षुधातुर तिनकरी अवस्थाकू प्राप्त करी होयगी जो कहिवेविषै न आवै । अथवा अग्निकी ज्वालाके समूहकर जलता जो वन उसविषै अशुभ अवस्थानककू प्राप्त भई होयगी, अथवा सूर्यकी अत्यन्त दुस्सह किरण तिनके आतापकर लाखकी न्याई पिघल गई होयगी, छाया विषै जायवेकी नाहीं शक्ति जाकी अथवा शोभायमान शीलकी धरणहारी मो निर्दईविषै मनकर हृदय फटकर मृत्युकू प्राप्त भई होयगी । पहिले जैसे रत्नजटीने मोहि सीताके कुशलकी वार्ता आय कही थी तैसे कोई अब भी कहै । हाय प्रिये ! पतिव्रते विवेकवती, सुखरूपिणी, तू कहा गई ? कहा तिष्ठेगी

क्या करेगो ? अहो कृतान्तवक्र ! कह, क्या तैंने सचमुच वनहीविषै डारी ? जो कहूं शुभ ठौर मेली होय तो तेरे मुखरूप चन्द्रसे अमृतरूप वचन खिर। जब ऐसा कहा तब सेनापतिने लज्जाके भारकर नीचा मुख किया, प्रभारहित होय गया, कछु कह न सक्या, अति व्याकुल भया, मौन गह रह्या। तब रामने जानी सत्यही यह सीताकूं भयकर वनविषै डार आया। तब मूर्च्छाकूं प्राप्त होय राम गिरे। बहुरि बहुत बेर विषै नीठि नीठि सचेत भए तब लक्ष्मण आए। अन्त करणविषै सोचकूं धरे कहते भए—हे देव ! क्यो व्याकुल भए हो, धीर्यको अंगीकार करहु। जो पूर्वकर्म उपार्ज्या है उसका फल आय प्राप्त भया, अर सकल लोककूं अशुभके उदयकर दु ख प्राप्त भया। केवल सीताहीकूं दु ख न भया।

सुख अथवा दुख जो प्राप्त होना होय सो स्वयमेव ही किसी निमित्तसूं आय प्राप्त होय है, हे प्रभो ! जो कोई किसीकूं आकाशविषै ले जाय अथवा क्रूर जीवोके भरे वनविषै डारे अथवा गिरिके शिखिर धरे तो भी पूर्व पुण्यकर प्राणीकी रक्षा होय है। सब ही प्रजा दुखकर तप्तायमान है, आसुओके प्रवाहकर मानो हृदय गल गया है सोई झरै है। यह वचन कह लक्ष्मण भी अत्यन्त व्याकुल होय रुदन करने लगा। जैसा दाहका मारया कमल होय तैसा होय गया है मुखकमल जाका। हाय माता ! तू कहा गई ! दुष्टजनोके वचनरूप अग्निकर प्रज्वलित है शरीर जिनका, हे गुणरूप धान्यके उपजावनेकी भूमि ? बारह अनुप्रेक्षाके चितवनकी करणहारी है, शीलरूप पर्वतकी पृथ्वी है, सीते ! सौम्य स्वभावकी धारक है। विवेकिनी, दुष्टोके वचन सोई भए तुषार तिनकर दाहा गया है हृदय कमल जाका, राजहंस श्रीराम तिनके प्रसन्न करिवेकूं मानसरोवर समान, सुभद्रा सारिखी कल्याणरूप, सब आचारविषै प्रवीण, लोककूं मूर्तिवन्त सुखकी आशिखा, हे श्रेष्ठे ! तू कहा गई ? जैसे सूर्य विना आकाशकी शोभा कहा अर चन्द्रमा विना निशाकी शोभा कहा ? तैसे हे माता ! तो विना अयोध्याकी शोभा कहा ? इस भांति लक्ष्मण विलाप कर रामसूं कहै है—हे देव ! समस्त नगर बीण बासुरी मृदंगादिकी ध्वनिकर रहित भया है, अहर्निश रुदनकी ध्वनि कर पूर्ण है। गली गलीविषै, वन उपवनविषै, नदियो ७८७

के तटविषै चौहटेविषै, हाट हाटविषै, घर घरविषै, समस्त लोक रुदन करै है। तिनके अश्रुपातकी धारा कर कीच होय रही है। मानो अयोध्याविषै वर्षाकालही फिर आया है। समस्त लोक आसू डारते गदगद वाणीकर कष्टसू वचन उचारते, जानकी प्रत्यक्षनहीं है परोक्ष ही है, तो भी एकाग्र चित्त भए गुण कीर्तिरूप पुष्पोके समूह कर पूजै है। वह सीता पतिव्रता समस्त सतियोके सिरपर विराजै है, गुणोकर महा उज्ज्वल। उसके यहा आवने की अभिलाषा सबकू है। यह सब लोक माता ने ऐसे पाले है जैसे जननी पुत्रकू पाले। सो सब ही महा शोककर गुण चितार चितार रुदन करै है। ऐसा कौन है जाके जानकीका शोक न होय, तात हे प्रभो! तुम सब बातोविषै प्रवीण हो अब पश्चाताप तजहु। पश्चातापसू कछु कार्यकी सिद्धि नाहीं, जो आपका चित्त प्रसन्न है तो सीताकू हेरकर बुलाय लेंगे। अर उनकू पुण्यके प्रभावकर कोई विघ्न नहीं। आप धीर्य अवलम्बन करिवे योग्य हो। या भांति लक्ष्मणके वचनकर रामचन्द्र प्रसन्न भए। कछु एक शोक तज कर्तव्यविषै मन धरया। भद्रकलश भण्डारीकू बुलाय कर कही—तुम सीताकी आज्ञा सू जिस विधि किमिच्छा दान करते थे तैसे ही किया करो। सीताके नामसू दान बटे। तब भंडारीने कही जो आप आज्ञा करोगे सो ही होयगा। नव महीने अर्थियोकू किमिच्छा दान बटिवो किया। रामके आठ हजार स्त्री तिनकर सेवमान तौ भी एक क्षणमात्र भी मनकर सीताकू न विसारता भया। सीता सीता यह आलाप सदा होता भया। सीताके गुणोकर मोह्या है मन जाका, सर्वदिशा सीतामई देखता भया। स्वप्नविषै सीताकू या भांति देखै—पर्वतकी गुफाविषै पडी है, पृथ्वीकी रजकरि मंडित है, अर नेत्रनिके अश्रुपात कर चौमासा कर राख्या है, महाशोककर व्याप्त है। या भांति स्वप्नविषै अवलोकन करता भया। सीताका शब्द करता राम ऐसा चितवन करै है—देखो, सीता सुन्दर चेष्टाकी धरणहारी, दूर देशान्तरविषै है तो भी मेरे चित्तसू दूर न होय है। वह माधवी शीलवती मेरे हितविषै सदा उद्यमी। या भांति सदा चितारवो करै। अर लक्ष्मणके उपदेश कर, अर सूत्र सिद्धांतके श्रवण कर कछूइक रामकू शोक क्षीण भया, ७८८

धीयकू धरि धर्मध्यानविषै तत्पर भया। यह कथा गौतम स्वामी राजा श्रेणिकसू कहै है। वे दोनो भाई महा न्यायव्रत, अखण्ड प्रीतिके धारक, प्रशंसा योग्य गुणोके समुद्र, रामके हल मूसलका आयुध, लक्ष्मणके चक्रायुध, समुद्र पर्यंत पृथ्वीकू भली भांति पालते सन्ते, सौधर्म ईशान इन्द्र सारिखे शोभते भए। वे दोनो धीरवीर स्वर्ग समान जो अयोध्या ताविषै देवो समान ऋद्धि भोगते, महा कांतिके धारक, पुरुषोत्तम पुरुषोके इन्द्र देवेन्द्र समान राज्य करते भए। सुकृतके उदयसू सकल प्राणियोकू आनन्द देयवेविषै चतुर, सुन्दर चरित्र जिनके, सुख सागरविषै मग्न, सूर्य समान तेजस्वी, पृथ्वीविषै प्रकाश करते भए।

इति श्रीरविषेणाचार्य विरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रंथ ताकी भाषावचनिकाविषै रामकूं सीताका शोक वर्णन करनेवाला निन्यानवेवा पर्व पूर्ण भया ॥ ९९ ॥

अथानन्तर गौतमस्वामी कहै है—हे नराधिप! राम लक्ष्मण तो अयोध्याविषै तिष्ठै है अर अब लवणांकुशका वृत्तांत कहै है सो सुनो। अयोध्याके सबही लोक सीताके शोकसू पांडुताकू प्राप्त भये, अर दुर्बल होय गये। अर पुण्डरीकपुरविषै सीता गर्भके भारकर कछूएक पांडुताकू प्राप्त भई, अर दुर्बल भई। मानू सकल प्रजा महा पवित्र उज्ज्वल इसके गुण वर्णन करै है, सो गुणोकी उज्ज्वलता कर श्वेत होय गई है। अर कुचोकी बीटली श्यामताकू प्राप्त भई, सो मानू माताके कुच पुत्रोके पान करिवेके पयके घट है सो मुद्रित कर राखे है। अर दृष्टि क्षीरसागर समान उज्ज्वल अत्यन्त मधुरताकू प्राप्त भई। अर सर्वमंगलके समूहका आधार जिनका शरीर, सर्वमंगलका स्थानक जो निर्मल रत्नमई आंगण ताविषै मंद मंद विचरै सो चरणोके प्रतिबिंब ऐसे भासै मानू पृथ्वी कमलनिसू सीताकी सेवाही करै है। अर रात्रिविषै चन्द्रमा याके मन्दिर ऊपर आय निकसै सो ऐसा भासै मानू सफेद छत्र ही है। अर सुगंधके महिलविषै सुन्दर सेज ऊपर सूती ऐसा स्वप्न देखती भई कि महागजेन्द्र कमलोके पुटविषै जल भरकर अभिषेक करावै है, अर बारम्बार सखीजनोके मुख जय जयकार शब्द सुनकर

जाग्रत होय ह, परिवारके लोक समस्त आज्ञारूप प्रवर्तें ह। क्रीडाविष भी यह आज्ञा भग न सह सक। सब आज्ञाकारी भए, शीघ्रही आज्ञाप्रमाण कर है तो भी सबो पर तेज कर हैं, काहेसू ? कि तेजस्वी पुत्र गर्भविष तिष्ठे ह। अर मणियोके दर्पण निकट ह तौ भी खड्गविषं मुख देख ह। अर बीणा, बासुरी, मदगादि अनेक वादित्रोक नाद होय ह, सो न रुचे, अर धनुषके चढायवेकी ध्वनि रुच ह। अर सिंहोके पिजरे देख जिनके नेत्र प्रसन्न होय अर जिनका मस्तक जिनेन्द्र टार औरकू न नम।

अथान तर नव महीना पूर्ण भये श्रावण सुदी पूर्णमासीके दिन, श्रवण नक्षत्रके विष वह मगल रूपिणी सव लक्षण पूर्ण शरदकी पूनोके चन्द्रमा समान ह वदन जिनका सुखसू पुत्रयुगल जनती भई। सो पुत्रोके जन्मविष पुण्डरीकपुरकी सकल प्रजा अति हर्षित भई। मानू नगरी नाच उठी, ढोल नगारे आदि अनेक प्रकारके वादित्र बाजने लगे, शखोके शब्द भये। राजा बज्रजघने अति उत्साह किया, बहुत सम्पदा याचकनिकू दई। अर एक का नाम अनगलवण दूजे का नाम मदनाकुश ये यथार्थ नाम धर। फिर य बालक वृद्धिकू प्राप्त भए। माताके हृदयकू अति आनन्दके उपजावनहारे महा धीर शूरवीर ताके अकुर उपजे। सरसू के दाणे इनकी रक्षाक निमित्त इनके मस्तक डारे सो ऐसे सोहते भए मानू प्रतापरूप अग्नि के कण ही ह। जिनका शरीर ताये सुवर्ण समान अति देदीप्यमान, सहज स्वभाव तेजकर अति सोहता भया। अर जिनके नख दर्पणसमान भासते भए। प्रथम बालअवस्थाविषै अव्यक्त शब्द बोले सो सवलोकके मनकू हर। अर इनकी मद मुसकान महामनोग्य पुष्पोके विकसने समान लोकनके हृदयकू मोहती भई। अर जस पुष्पनिकी सुगन्धता भ्रमरोके समूहकू अनुरागी कर तसैं इनकी वासना सबके मनकू अनुरागरूप करती भई। यह दोनो माताका दूध पान कर पुष्ट भए। अर जिनका मुख महासुदर सुफेद दातो कर अति सोहता भया। मानू यह दात दुग्ध समान उज्ज्वल हास्यरस समान शोभायमान दीख ह। धायकी आगरी पकड आगनविष पाव धरते कौनका मन न हरत भए ? जानकी ऐसे सुन्दर क्रीडाके करणहारे कुमारोकू देखकर समस्त दु ख भूलि गई। बालक

बडे भए। अति मनोहर, सहज ही सुन्दर है नेत्र जिनके, विद्याके पढने योग्य भए। तब इनके पुण्यके योगकर एक सिद्धार्थनामा क्षुल्लक शुद्धात्मा पृथ्वीविषै प्रसिद्ध वज्रजंघके मन्दिर आया। सो महाविद्याके प्रभाव कर त्रिकाल संध्याविषै सुमेरुगिरिके चैत्यालय वंदि आवे। प्रशांतवदन, साधु समान है भावना जाके, अर खंडितवस्त्र मात्र है परिग्रह जाके, उत्तम अणुव्रतका धारक, नानाप्रकारके गुणनिकर शोभायमान, जिनशासनके रहस्यका वेत्ता, समस्त कलारूप समुद्रका पारगामी, तपकरि मंडित अति सोहै। सो आहारके निमित्त भ्रमता संता जहां जानकी तिष्ठै हुती वहां आया। सीता महासती मानो जिनशासनकी देवी पद्मावती ही है। सो क्षुल्लककूं देख अति आदरसे उठकर सन्मुख जाय इच्छाकार करती भई, अर उत्तम अन्नपानसे तृप्त किया। सीता जिनधर्मियोंकूं अपने भाई समान जाने है। सो क्षुल्लक अष्टांग निमित्तज्ञानका वेत्ता दोनों कुमारनिकूं देखकर अति संतुष्ट होयकर सीतासे कहता भया—हे देवि! तुम सोच न करो, जिनके ऐसे देवकुमार समान प्रशस्त पुत्र उसे कहा चिंता?

अथानन्तर यद्यपि क्षुल्लक महा विरक्तचित्त है तथापि दोनों कुमारनिके अनुरागसे कईएक दिन तिनके निकट रहा। थोडे दिनोंमें कुमारनिकूं शस्त्रविद्याविषै निपुण किया। सो कुमार ज्ञान विज्ञानविषै पूर्ण, सर्व कलाके धारक, गुणनिके समूह, दिव्यास्त्रके चलायवे अर शत्रुओंके दिव्यास्त्र आवैं तिनके निराकरण करिवेकी विद्याविषै प्रवीण होते भए। महापुण्यके प्रभावसूं परम शोभाकूं धारैं, महालक्ष्मीवान, दूर भए हैं मति श्रुति आवरण जिनके, मानो उघडे निधिके कलश ही हैं। शिष्य बुद्धिमान होय तब गुरुकूं पढायवेका कछू खेद नाहीं। जैसे मंत्री बुद्धिमान होय तब राजाकूं राज्यकार्यका कछु खेद नाहीं अर जैसे नेत्रवान पुरुषनिकूं सूर्यके प्रभावकर घटपटादिक पदार्थ सुखसूं भासैं, तैसे गुरुके प्रभावकर बुद्धिवंतकूं शब्द अर्थ सुखसूं भासै। जैसे हंसनिकूं मानसरोवरविषै आवते कछु खेद नाहीं तैसे विवेकवान विनयवान बुद्धिमानकूं गुरुभक्तिके प्रभावसूं ज्ञान आवत परिश्रम नाहीं। सुखसूं अति गुणनिकी वृद्धि होय है। अर बुद्धिमान शिष्यनिकूं उपदेश देय गुरु कृतार्थ होय है। अर कुबुद्धि-

कू उपदेश देना वृथा है, जैसे सूर्यका उद्योत घूघूवोंकू वृथा है। यह दोनो भाई दैदीप्यमान है यश जिनका अति सुन्दर, महाप्रतापी सूर्यकी न्याई जिनकी ओर कोऊ विलोक न सके, दोऊ भाई चन्द्र सूर्य समान, दोनोंविषै अग्नि अर पवन समान प्रीति, मानू वह दोनो ही हिमाचल विंध्याचल समान है, वज्रवृषभनाराचसंहनन है जिनके, सब तेजस्वीनिके जीतिवेकू समर्थ, सब राजावोंका उदय अर अस्त जिनके आधीन होयगा, महाधर्मात्मा, धर्मके धारी, अत्यन्त रमणीक, जगतकू सुखके कारण, सब जिनकी आज्ञाविषै। राजा ही आज्ञाकारी तो औरनिकी कहा बात ? काहूकू आज्ञारहित न देख सक्या। अपने पावनिके नखनिविषै अपनाही प्रतिबिम्ब देख न सकै तो और कौनसे नम्रीभूत होय ? अर जिनकू अपने नख अर केशोंका भंग न रुचै तो अपनी आज्ञाका भंग कैसे रुचै ? अर अपने सिर पर चूडामणि धरिये अर सिरपर छत्र फिरै अर सूर्य ऊपर होय आय निकसै तो भी न सहार सकें तो औरनिकी ऊंचता कैसे सहारैं ? मेघका धनुष चढा देख कोप करैं तो शत्रुके धनुषकी प्रबलता कैसे देख सकैं ? चित्रामके नृप न नमैं तो भी सहार न सकैं तो साक्षात नृपोंका गर्व कैसे देख सकैं ? अर सूर्य नित्य उदय अस्त होय उसे अल्प तेजस्वी गिनैं। अर पवन महा बलवान है परन्तु चंचल सो उसे बलवान न गिनैं, जो चलायमान सो बलवान काहेका ? जो स्थिरभूत अचल सो बलवान। अर हिमवान पर्वत उच्च है स्थिरीभूत है, परन्तु जड अर कठोर कंटक सहित है तातें प्रशंसा योग्य न गिनैं। अर समुद्र गम्भीर है, रत्नोंकी खान है परन्तु क्षार अर जलचर जीवोंको धरै, अर शंखोंकर युक्त तातैं समुद्र कू तुच्छ गिनैं। महा गुणनिके निवास, अति अनुपम जेते प्रबल राजा हुते तेज रहित होय उनकी सेवा करते भये। ये महाराजाओंके राजा सदा प्रसन्नवदन मुखसू अमृत बचन बोलैं, सबनिकर सेवने योग्य जे दूरवर्ती दुष्ट भूपाल हुते ते अपने तेजकर मलिन वदन किए सब मुरझाय गए। इनका तेज ये जब जन्मे तबसे इनके साथ ही उपज्या है। शस्त्रनिके धारणकर जिनके कर अर उदर श्यामताकू धरै है, अर मानू अनेक राजावोंके प्रतापरूप अग्निके बुझावनेसू श्याम है। समस्त दिशारूप स्त्री वशीभूत कर देनेवाली

भई, महा धीर धनषके धारक तिनके सब आज्ञाकारी भए। जसा लवण तसा ही अकुश। दोनो भाइनि विषै कोई कमी नहीं। ऐसा शब्द पृथ्वीविषै सबके मुख। ये दोनो नवयौवन, महा सुन्दर, अदभुत चेष्टाके धरणहारे, पृथ्वीविषै प्रसिद्ध, समस्त लोकनिकर स्तुति करिवे योग्य, जिनके देखिवेकी सबके अभिलाषा, पुण्य परमाणुनिकर रचा ह पिड जिनका, सुखका कारण है दर्शन जिनका स्त्रियोके मुखरूप कुमुद तिनके प्रफुल्लित करनेको शरदकी पूर्णमासीके चन्द्रमा समान सोहते भए। माताके हृदय कू आनन्दके चलते फिरते सुमेरु ही ये कुमार सूर्यसमान कमल नेत्र देवकुमार सारिखे, श्रीवत्स लक्षणकर मडित ह वक्षस्थल जिनका अनत पराक्रमके धारक, ससार समुद्रके तट आए, चरम शरीर, परस्पर महाप्रेम के पात्र, सदा धर्मके मार्गमें तिष्ठ ह, देवनिका अर मनुष्यनिका मन हर है।

भावार्थ—जो धर्मात्मा होय सो काहूका कुछ न हर। ये धर्मात्मा परधन परस्त्री तो न हरैं परन्तु पराया मन हर। इनकू देख सबनिका मन प्रसन्न होय। ये गुणनिकी हृदकू प्राप्त भए है। गुण नाम डोरेका भी ह, सो हृदपर गाठकू प्राप्त होय ह। अर इनके उरविषै गाठ नाहीं, महानिष्कपट है। अपने तेजकर सूर्यकू जीते ह, अर कातिकर चद्रमाकू जीत हैं। अर पराक्रमकर इद्रकू, अर गम्भीरता कर समुद्रकू, स्थिरताकर सुमेरुकू, अर क्षमाकर पृथ्वीकू, अर शूरवीरताकर सिहकू, चालकर हसकू जीतैं हैं। अर महा जलविषै मकर ग्राह नक्रादिक जलचरनिसू क्रीडा कर ह। अर माते हाथियोसू तथा सिह अष्टापदोसू क्रीडा करते खेद न गिनै। अर महा सम्यकदृष्टि, उत्तम स्वभाव, अति उदार उज्ज्वलभाव, जिनसू कोई युद्ध न कर सक, महायुद्धविषै उद्यमी जे कुमार सारिखे, मधुकटभ सारिखे, इद्रजीत मेघनाद सारिख योधा, जिनमार्गी, गुरुसेवाविषै तत्पर, जिनेश्वरकी कथाविषै रत, जिनका नाम सुन शत्रुवोको त्रास उपज। यह कथा गौतम स्वामी राजा श्रेणिकसू कहते भए—हे राजन! ते दोनों वीर महाधीर गुणरूप रत्नके पर्वत महा ज्ञानवान, लक्ष्मीवान, शोभा काति कीर्तिके निवास, चित्तरूप माते हाथीके वश करिवेकू अकुश, महाराजरूप मन्दिरके दृढ स्तम्भ, पृथ्वीके सूर्य, उत्तम आश्च-

रणके धारक, लवण अंकुश नरपति विचित्र कार्यके करणहारे, पुण्डरीकनगरविषै यथेष्ट देवनिकी न्याईं रमैं। महा उत्तम पुरुष जिनके निकट, जिनका तेज लख सूर्य भी लज्जावान होय। जैसे बलभद्र नारायण अयोध्याविषै रमैं तैसे यह पुण्डरीकपुरविषै रमैं हैं।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रन्थ ताकी भाषावचनिकाविषै लवणांकुशका पराक्रम वर्णन करनवाला एकसौवां पर्व पूर्ण भया ॥ १ ॥

अथानन्तर अति उदार क्रियाविषै योग्य, अति सुन्दर तिनकूं देख वज्रजंघ इनके परणायवेविषै उद्यमी भया। तब अपनी शशिचूला नामा पुत्री लक्ष्मीराणीके उदरविषै उपजी बत्तीस कन्या सहित लवणकुमारकूं देनी विचारी। अर अंकुशकुमारका भी विवाह लारही करना, सो अंकुशयोग्य कन्या हूं ढिवेकूं चितावान भया। फिर मनविषै विचारी पृथ्वीपुर नगरका राजा पृथु ताकी राणी अमृतवती, ताकी पुत्री कनकमाला, चन्द्रमाकी किरण समान निर्मल, अपने रूपकर लक्ष्मीकूं जीते है। वह मेरी पुत्री शशिचूला समान है। यह विचार तापै दूत भेज्या। सो दूत विचक्षण पृथ्वीपुर जाय पृथुसूं कही। जौं लग दूतने कन्यायाचनके शब्द न कहे तौंलग उसका अति सन्मान किया। अर जब याने याचनेका वृत्तांत कहा तब वह क्रोधायमान भया अर कहता भया—तू पराधीन है, अर पराई कहाई कहै है। तुम दूत लोग जलकी धारा समान हो, जा दिशा चलावे वाही दिश चालो। तुमविषै तेज नाहीं, बुद्धि नाहीं। जो ऐसे पापके वचन कहै ताकूं निग्रह करूं। पर तू पराया प्रेरा यन्त्र समान है, यन्त्री यन्त्र बजावे है त्यो बाजै, तातै तू हनिवे योग्य नाहीं। हे दूत! १ कुल, २ शील, ३ धन, ४ रूप ५ समानता, ६ बल, ७ वय, ८ देश, ९ विद्या ये नव गुण वरके कहे हैं। तिनविषै कुल मुख्य है, सो जिनका कुल ही न जानिये, तिनकूं कन्या कैसे दीजिए? तातैं ऐसी निलज्ज बात कहै है सो राजा नीतिसूं प्रतिकूल है। सो कुमारी तो मैं न द्यूं अर कु कहिए खोटी मारी कहिये मृत्यु सो द्यूं। या भांति दूतकूं विदा किया। सो दूतने आयकर वज्रजंघकूं ब्यौरा कह्या। सो वज्रजंघ आपही चढ़कर

आधी दूर आय डेरा किये । अर बडे पुरुषनिकू भेज बहुरि पथुसू कन्या याची । ताने न दई । तब राजा वजजघ पृथुका देश उजाडने लगा, अर देशका रक्षक राजा व्याघरथ ताहि युद्धविषै जीति बाध लिया । तब राजा पथुने सुना कि व्याघरथकू राजा वजजघ बाधा अर मेरा देश उजाडे है तब पथुने अपना परम मित्र पोवनापुरका पति परम सेनासू बुलाया । तब वजजघने पुण्डरीकपुरसू अपने पुत्र बुलाए । तब पिताकी आज्ञा पाय पुत्र शीघ ही चलिवे कू उद्यमी हुए । नगरविषै राजपुत्रनिके कूचका नगारा बाजा । तब सामन्त बखतर पहिरे आयुध सजकर युद्धके चलिबेकू उद्यमी भए । नगरविषै अति कोलाहल भया, पुण्डरीकपुरविषै जसा समुद्र गाजै ऐसा शब्द भया । तब सामन्तनिके शब्द सुन लवण अर अकुश निकटवर्तीनिकू पूछते भए यह कोलाहल शब्द काहेका है ? तब काहूने कही अकुशकुमार के परणायवे निमित्त वजजघ राजाने पथुकी पुत्री याची हुती, सो ताने न दई । तब राजा युद्धकू चढे । अर राजा अपनी सहायताके अर्थ अपने पुत्रनिकू बुलाया है, अर सेना बुलाई है सो यह सेना का शब्द है । यह समाचार सुन कर दोऊ भाई आप युद्धके अर्थ अति शीघही जायवेकू उद्यमी भए । कसे है कुमार ? आज्ञाभगकू नाहीं सह सके है । तब राजा वजजघके पुत्र इनकू मने करते भए, अर सब राजलोक मने करते भए, तौ हू इन न मानी । तब सीता पुत्रनिके स्नेहकर द्रवीभूत हुवा है मन जाका सो पुत्रनिकू कहती भई—तुम बालक हो, तिहारा युद्धका समय नाहीं । तब कुमार कहते भए—हे माता ! तू यह कहा कहो ? बडा भया अर कायर भया तो कहा ? यह पृथ्वी योधानिकर भोगवे योग्य है । अर अग्निका कण छोटा ही होय है अर महा बनकू भस्म करै है । या भाति कुमारने कही । तब माता इनकू सुभट जान आखोसे हर्ष अर शोकके किंचितमात्र अश्रुपात करती भई । ये दोऊ वीर महाधीर स्नान भोजन कर आभूषण पहिरे, मन वचन काय कर सिद्धनिकू नमस्कारकर बहुरि माताकू प्रणामकर, समस्त विधिविषै प्रवीण घरत बाहिर आए । तब भले भले शकुन भए । दोऊ रथ चढ सम्पूर्ण शस्त्रनिकर युक्त शीघ्रगामी तुरग जोड पथुपर चाले । महा सेनाकर मडित,

धनुषबाण ही ह सहाय जिनके, महा पराक्रमी, परम उदारचित्त, सग्रामके अग्रेसर, पाच दिवसमें वज्रजघप जाय पहुँचे। तब राजा पथु शत्रुनिकी बडी सेना आई सुन आप भी बडो सेनासहित नगर से निकस्या। जाके भाई, मित्र, पुत्र, मामाके पुत्र, सबही परम प्रीतिपात्र, अर अगदेश, बगदेश, मगध देश आदि अनेक देशनिके बडे बडे राजा तिन सहित, रथ तुरग हाथी पयादे बडे कटक सहित, वज्रजघके सामत परसेनाके शब्द सुन युद्धकू उद्यमी भए। दोऊ सेना समीप भई। तब दोऊ भाई लवणाकुश महा उत्साहरूप परसेनाविष प्रवेश करते भए। वे दोऊ योधा महा कोपकू प्राप्त भए, अति शीघ्र ह परावर्त जिनका, परसेनारूप समुद्रविष क्रीडा करते सब ओर परसेनाका निपात करते भए। जैसे बिजलीका चमत्कार जिस ओर चमक उस ओर चमक उठ तस सब ओर मार मार करते भए। शत्रुनित न सहा जाय पराक्रम जिनका, धनुष पकडते बाण चलाते दृष्टि न पड, अर बाणनि कर हते अनेक दृष्टि पड। नाना प्रकारके क्रूर बाण तिनकरि वाहनसहित परसेनाके अनेक घोडा पीडे पृथ्वी दुगम्य होय गई। एक निमिषमें पृथुकी सेना भागी, जस सिहके त्राससू मदोन्मत्त गजनिके समूह भाग। एक क्षणमात्रमें पृथुकी सेनारूप नदी, लवणाकुशरूप सूय, तिनके बाणरूप किरणनिकरि शोषकू प्राप्त भई। कईएक मारे पड, कईएक भयत पीडित होय भागे, जस आकके फूले उड उड फिरे। राजा पृथु सहायरहित खिन्न होय भागवेकू उद्यमी भया। तब दोऊ भाई कहते भए—हे पृथु! हम अज्ञात-कुल शील, हमारा कुल कोऊ जाने नाहीं, तिनप भागता तू लज्जावान न होय ह? तू खडा रह, हमारा कुल शील तौहि बाणनिकर बताव। तब पथु भागता हुता सो पीछा फिर हाथ जोड नमस्कारकर स्तुति करता भया। तुम महा धीर वीर हो। मेरा अज्ञानताजनित दोष क्षमा करहु। म मूख तिहारा माहात्म्य अब तक न जाना हुता। महा धीरवीरनिका कुल या सामतताही त जा या जाय ह। कछु वाणीके कहे न जा या जाय ह। सो अब म नि सदेह भया। वनके दाहकू समथ जो अग्नि सो तेज ही तै जानी जाय ह। सो आप परम धीर महाकुलविष उपजे हमारे स्वामी हो। महा भाग्यके योग्य तिहारा

वशन भया। तुम सबकू मनवाछित सुखके दाता हो या भांति पथुने प्रशसा करी।

तब दोऊ भाई नीचे होय गए, अर क्रोध मिट गया, शात मन अर शात सुख होय गए। वजजघ कुमारनिके समीप आया, अर सब राजा आए। कुमारनिके अर पथुके प्रीति भई। जे उत्तम पुरुष है वे प्रणाममात्र ही करि प्रसन्नताकू प्राप्त होय ह। जस नदीका प्रवाह नमीभूत जे बेल तिनकू न उपाडे, अर जे महा वृक्ष नमीभूत नाहीं तिनकू उपाडे। फिर राजा वजजघकू अर दोऊ कुमारनिकू पथु

नगरविषै ले गया। दोऊ कुमार आनदके कारण। मदनाकुशकू अपनी कन्या कनकमाला महाविभूति सहित पथुने परणाई। एक रात्रि यहा रहे। फिर ये दोऊ भाई विचक्षण दिग्विजय करिवेकू निकसे। सुह्मदेश मगधदेश, अगदेश, बगदश जीति पोदनापुरके राजाकू आदि दे अनेक राजा सग ले लोकाक्ष नगर गए। वा तरफक बहुत देश जीते। कुबरकात नामा राजा अतिमानी ताहि ऐसा वश किया जस गरुड नागकू जीतै। सत्यार्थपनेत दिन दिन इनक सेना बढी, हजारो राजा वश भए, अर सेवा करने लगे। फिर लपाक देश गए। वहा करण नामा राजा अति प्रबल, ताहि जीतकर बिजयस्थलकू गए। वहाके राजा सौ भाई, तिनकू अवलोकनमात्रत ही जीति गगा उतर कलाश की उत्तर दिश गए। वहाके राजा नाना प्रकारकी भेंट ले आय मिले। झष कुतल नामा देश तथा सालाय नन्दि नन्दन स्यघल शलभ अनल चल भीम भूतरव इत्यादि अनेक देशाधिपतिनिकू वशकर सिंधु नदीके पार गये। समुद्रके तटके राजा अनेकनिकू नमाये। अनेक नगर, अनेक खेट, अनक अटम्ब, अनेक देश, वश कीये। भीरुदेश, यवन, कच्छ, चारव, त्रजट, नट, मक, केरल, नेपाल, मालव, अरल, सबर, त्रिशिर पार, शल, गोशाल, कुसीनर, सूरपाक, सनत विधि शूरसन, बाह्लीक, उलूक, कोशल, गाधार, सौवीर अध्र काल, कलिंग इत्यादि अनेक देश वश किये। कसे ह देश? जिनविषै नानाप्रकारकी भाषा अर वस्त्रनिका भिन्न भिन्न पहराव, अर जुदे जुदे गुण, नाना प्रकारके रत्न अनेक जातिके वृक्ष जिनविषै अर नानाप्रकार स्वर्ण आदि धनके भरे।

कईएक देशनिके राजा प्रताप होत आय मिले। कईएक युद्धविषै जीति वश किये, कईएक भाग गये। बड बडे राजा देशपति अति अनुरागी होय लवणाकुशके आज्ञाकारी होते भये। इनकी आज्ञा प्रमाण पृथ्वीविषै विचर। वे दोनो भाई पुरुषोत्तम पृथ्वीकू जीत हजारो राजनिके शिरोमणि होते भए। सबनिकू वशकर लार लिए, नानाप्रकारकी सुन्दर कथा करते, सबका मन हरते पुण्डरीकपुरकू उद्यमी भए। बजजंघ लार ही है। अति हर्षके भरे अनेक राजनिकी अनेक प्रकार भेंट आई सो महाविभूतिकू लिए अति सेना कर मण्डित पुण्डरीकपुरके समीप आए। सीता सतखणे महिल चढी देखे है, राजलोककी अनेक राणी समीप है अर उत्तम सिंहासनपर तिष्ठे है। दूरसे अति सेनाकी रजके पटल उठे देख सखीजनकू पूछती भई—यह दिशाविषै रजका उडाव कैसा है। तब तिन कही—हे देवी! सेनाकी रज है जैसे जलविषै मकर किलोल करे तैसे सेनाविषै अश्व उछलते आवे है। हे स्वामिनि! ये दोनो कुमार पृथ्वी वशकर आए। या भांति सखीजन कहे है, अर बधाई देनहारे आए, नगरकी अति शोभा भई, लोकनिकू अति आनंद भया, निर्मल ध्वजा चढाई, समस्त नगर सुगंधकर छांटा, अर वस्त्र आभूषणनिकर शोभित किया, दरवाजेपर कलश थाप, सो कलश पल्लवनिकरि ढके, अर ठौर ठौर वंदनमाला शोभायमान दिखती भई, अर हाट बाजार पाटंबरादि वस्त्रकर शोभित भए। जैसी श्रीराम लक्ष्मणके आए अयोध्याकी शोभा भई हुती तैसे ही पुण्डरीकपुरकी शोभा कुमारनिके आएसू भई। जादिन महाविभूतिसू प्रवेश किया तादिन नगरके लोगनिकू जो हर्ष भया सो कहिवेविषै न आवे। दोऊ पुत्र कृतकृत्य, तिनकू देखकर सीता आनंदके सागरविषै मग्न भई। दोऊ वीर महाधीर आयकर हाथ जोड माताकू नमस्कार करत भए। सेनाकी रजकरि धूसरा है अंग जिनका। सीताने पुत्रनिकू उरसू लगाय माथे हाथ धरा। माताकू अति आनन्द उपजाय दोऊ कुमार चांद सूर्यकी न्याई लोकविषै प्रकाश करते भये।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रंथ ताकी भाषावचनिकाविषै लवणांकुश दिग्विजय वर्णन करनेवाला एकसौएकवां पर्व पूर्ण भया ॥ १०१ ॥

७९८

अथानन्तर ये उत्तम मानव परम ऐश्वर्य धारक प्रबल राजानिपर आज्ञा करते सुखसू तिष्ठै। एक दिन नारदने कतातवक्रकू पूछी कि तू सीताकू कहा मेल आया। तब ताने कही कि सिंहनाद अटवीविषै मेती। सो यह सुनकर अति व्याकुल होय ढूढता फिरै हुता सो दोऊ कुमार वनक्रीडा करते देखे। तब नारद इनके समीप आया। कुमार उठकर सन्मान करते भए। नारद इनकू विनयवान देख बहुत हर्षित भया अर असीस दई जसे राम लक्ष्मण नरनाथके लक्ष्मी है तैसी तुम्हारे होहु। तब ये पूछते भए कि देव! राम लक्ष्मण कौन है, अर कौन कुलविषै उपजे है, अर कहा उनविषै गुण है, अर कैसा तिनका आचरण है? तब नारद क्षण एक मौन पकढ कहते भए, हे दोऊ कुमारो! कोई मनुष्य भुजानिकर पर्वतकू उखाडै अथवा समुद्रकू तिरै तौहू राम लक्ष्मणके गुण न कहि सकै। अनेक वदनानकर दीर्घ कालतक तिनके गुण वर्णन करै तौ भी राम लक्ष्मणके गुण कह न सकै, तथापि मै तिहारे वचनसू किंचितमात्र वर्णन करू हू, तिनके गुण पुण्यके बढावनहारे है।

पद्म
पुराण
७९९

अयोध्यापुरीविषै राजा दशरथ होते भए। दुराचाररूप ईधनके भस्म करिवेकू अग्नि समान, अर इक्ष्वाकुवंशरूप आकाशविषै चन्द्रमा, महा तेजोमय सूर्य समान, सकल पृथ्वीविषै प्रकाश करते अयोध्याविषै तिष्ठै। वे पुरुषरूप पर्वत तिनकरि कीर्तिरूप नदी निकसी, सो सकल जगतकू आनन्द उपजावती समुद्र पर्यन्त विस्तारकू धरती भई। ता दशरथ भूपतिके राज्यभारके धुर धरही चार पुत्र महा गुणवान भए, एक राम, दूजा लक्ष्मण, तीजा भरत, चौथा शत्रुघ्न। तिनविषै राम अति मनोहर, सर्व शस्त्रके ज्ञाता पृथ्वीविषै प्रसिद्ध। सो छोटे भाई लक्ष्मण सहित अर जनककी पुत्री जो सीता ता सहित ७९९
पिताकी आज्ञा पालिवे निमित्त अयोध्याकू तज पृथ्वीविषै विहार करते दंडकवनविषै प्रवेश करते भए। सो स्थानक महाविषम, जहा विद्याधरनिके गम्यता नहीं, खरदूषणत संग्राम भया। रावणने सिंहनाद किया। ताहि सुनकर लक्ष्मणकी सहाय करिवेकू राम गया। पीछेसू सीताकू रावण हर ले गया। तब रामसू सुग्रीव हनुमान विराधित आदि अनेक विद्याधर भेले भये, रामके गुणनिके अनुरागकरि वशीभूत है हृदय जिनका। सो विद्याधरनिकू लेयकरि राम लंकाकू गए। रावणकू जीत, सीताकू लय अयोध्या

पद्म पुराण ८

आए। स्वर्गपुरी समान अयोध्या विद्याधरनिने बनाई। तहां राम लक्ष्मण पुरुषोत्तम नागेन्द्र समान सुखसूं राज्य करें। रामकूं तुम अब तक कैसे न जाना, जाके लक्ष्मणसा भाई, ताके हाथ सुदर्शन चक्र सो आयुध, जाके एक एक रत्नकी हजार हजार देव सेवा करें। सात रत्न लक्ष्मणके, अर चार रत्न रामके जानें। प्रजाके हितनिमित्त जानकी तजी। ता रामकूं सकल लोक जानें। ऐसा कोई पृथ्वीविषै नाहीं जो रामकूं न जानें। या पृथ्वीकी कहा बात, स्वर्गविषै देवनिके समूह रामके गुण वर्णन करें हैं।

तब अंकुशने कही—हे प्रभो! रामने जानकी काहे तजी सो वृत्तांत मैं सुना चाहूं। तब सीताके गुणनिकर धर्मानुरागमें है चित्त जाका ऐसा नारद सो आंसू डार कहता भया—हे कुमार हो! वह सीता सती महा कुलविषै उपजी शीलवती, गुणवती, पतिव्रता, श्रावकके आचारविषै प्रवीण, रामकी आठ हजार राणी तिनकी शिरोमणि, लक्ष्मी कीर्ति धृति लज्जा तिनकूं अपनी पवित्रतातैं जीतकर साक्षात जिनवाणीतुल्य। सो कोई पूर्वोपार्जित पापके प्रभावकर मूढ़ लोक अपवाद करते भए। तातैं रामने दुखित होय निर्जन वनविषै तजी। खोटे लोक तिनकी वाणी सोई भई जेठके सूर्यकी किरण, ताकर तप्तायमान वह सती कष्टकूं प्राप्त भई। महा सुकुमार, जाविषै अल्प भी खेद न सहारा पड़े। मालतीकी माला दीपके आतापकरि मुरझाय सो दावानलका दाह कैसे सहार सकै? महा भीम वन जाविषै अनेक दुष्ट जीव तहां सीता कैसे प्राणनिकूं धरै? दुष्ट जीवनिकी जिह्वा भुजंग समान निरपराध प्राणिनिकूं क्यों डसै? शुभ जीवनिकी निन्दा करते दुष्टनिके जीभके सौ टूक क्यों न होंय? वह महा सती पतिव्रतानिकी शिरोमणि पटुता आदि अनेक गुणनिकर प्रशंसा योग्य, अत्यंत निर्मल, महा सती, ताकी जो निंदा करैं सो या भव अर परभवविषै दुखकूं प्राप्त होय। ऐसा कहकरि शोकके भारकर मौन गहि रहा, विशेष कछू न कहा सक्या। सुनकर अंकुश बोले—हे स्वामी! भयंकर वनविषै रामने सीताकूं तजते भला न किया। यह कुलवंतोंकी रीति नाहीं है। लोकापवाद निवारिबेके

और अनेक उपाय ह, ऐसा अविवेकका काय ज्ञानवत क्यो कर ? अकुशन तो यही कही अर अनगलवण बोल्या यहासू अयोध्या केतीक दूर ह ?

तब नारव कही—यहासे एकसौ साठ योजन ह जहा राम विराजे ह । तब दोऊ कुमार बोले—हम राम लक्ष्मणपर जावग । या पथ्वीविष एसा कौन जाकी हम आगे प्रबलता ? नारदसू यह कही अर वजजघसू कही—हे मामा ! सूभ्रदेश, सिधदेश, कलिगदेश इत्यादि देशनिके राजानिकू आज्ञापत्र पठा वहु जो सग्रामका सब सरजाम लेकर शीघ ही आव । हमारा अयोध्याकी तरफ कूच है । अर हाथी सम्हारो, मदोन्मत्त केते अर निमद केते ? अर घोडे वायु समान ह वेग जिनका सो सग लेकर अर जे योधा रणसग्रामविष विख्यात कभी पीठ न दिखाव तिनकू लार लेवहु । सब शस्त्र सम्हारो, बक्तरनिकी मरम्मत करावहु । अर युद्धके नगाडे दिवावहु, ढोल बजावहु, शखनिके शब्द करावहु । सब सामतनिकू युद्धका विचार प्रकट करहु । यह आज्ञाकर दोऊ वीर मनविष युद्धका निश्चयकरि तिष्ठे, मानो दोऊ भाई इन्द्र ही ह । देवनि समान जे देशपति राजा तिनकू एकत्र करिवेकू उद्यमी भए । तब राम लक्ष्मणपर कुमारनिकी असवारी सुनि सीता रुदन करती भई । अर सीताके समीप नारदकू सिद्धार्थ कहता भया यह अशोभन काय तुम कहा आरम्भा ? रणविष उद्यम करिवेका ह उत्साह जिनके ऐसे तुम, सो पिता अर पुत्रनिविष क्यो विरोधका उद्यम किया ? अब काहू भाति यह विरोध निवारो, कुटुम्बभेद करना उचित नाहीं । तब नारद कही म तो ऐसा कछू जान्या नाहीं । इन विनय किया म आशीस दई कि तुम राम लक्ष्मणसे होवहु । इनने सुनकर पूछी राम लक्ष्मण कौन ह ? म सब वृत्तात कह्या । अब भी तुम भय न करहु सब नीके ही होयगा । अपना मन निश्चल करहु । कुमारनिने सुनी कि माता रुदन कर ह । तब दोऊ पुत्र माताके पास आय कहते भए, हे मात ! तुम रुदन क्यो करो हो ? सो कारण कहहु । तिहारी आज्ञाकू कौन लोप ? असुन्दर वचन कौन कह ता दुष्टके प्राण हर । ऐसा कौन है जो सपकी जीभतैं क्रीडा कर ? एसा कौन मनुष्य अर देव जो तुमकू असाता उपजाव ? ह

माता ! तुम कौनपर कोप किया है ? जापर तुम कोप करहु ताकू जानिए आयुका अन्त आया है। हमपर कृपाकर कोपका कारण कहहु। या भांति पुत्रनि विनती करी तब माता आंसू डार कहती भई। हे पुत्र ! मैं काहूपर कोप न किया, न मुझे काहूने असाता दई। तिहारा पितासूं युद्धका आरम्भ सुनि मैं दुखित भई रुदन करूं हूं। गौतम स्वामी कहे हैं। हे श्रेणिक ! तब पुत्र मातासूं पूछते भए, हे माता ! हमारा पिता कौन ? तब सीता आदिसूं लेय सब वृत्तांत कह्या। रामका वंश, अर अपना वंश, विवाहका वृत्तांत, अर वनका गमन, अपना रावणकर हरण अर आगमन, जो नारदने वृत्तांत कह्या हुता सो सब विस्तारसूं कह्या, कछु छिपाय न राख्या। अर कही तुम गर्भविषै आए तब ही तिहारे पिताने लोकापवादका भयकर सिंहनाद अटवीविषै तजी। तहां मैं रुदन करती हुती, सो राजा वज्रजंघ हाथी पकडने गया हुता, सो हाथी पकड बाहुडे था, मोहि रुदन करती देखी सो यह महा धर्मात्मा शीलवंत श्रावक मोहि महा आदरसूं ल्याय बडी बहिनका आदर जनाया अर सत सन्मानते यहां राखी। मैं भाई भामंडल समान याका घर जान्या। तिहारा यहां सन्मान भया। तुम श्रीरामके पुत्र हो। राम महाराजाधिराज हिमाचल पर्वतसूं लेय समुद्रांत पृथ्वीका राज्य करे हैं। जिनके लक्ष्मण सा भाई महा बलवान संग्रामविषै निपुण है। न जानिए नाथकी अशुभ वार्ता सूनूं, अक तिहारी अथवा देवरकी। तातें आर्तचित्त भई रुदन करूं हूं। अर कोऊ कारण नाहीं। तब सुनकर पुत्र प्रसन्न वदन भए अर मातासूं कहते भये, हे माता ! हमारा पिता महा धनुषधारी लोकविषै श्रेष्ठ लक्ष्मीवान विशालकीर्तिका धारक है अर अनेक अद्भुत कार्य किए हैं, परन्तु तुमकूं वनविषै तजी सो भला न किया। तातें हम शीघ्र ही राम लक्ष्मणका मानभंग करेंगे। तुम विषाद मत करहु। तब सीता कहती भई, हे पुत्र हो ! वे तिहारे गुरुजन हैं, उनसूं विरोध योग्य नाहीं, तुम चित्त सौम्य करहु। महा विनयवन्त होय जाकर पिताकूं प्रणाम करहु। यह ही नीतिका मार्ग है।

तब पुत्र कहते भए, हे माता ! हमारा पिता शत्रुभावकूं प्राप्त भया। कैसे जाय प्रणाम करें

अर दीनताके वचन कैसे कहैं? हम तो माता तिहारे पुत्र हैं तात रणसंग्रामविषै हमारा मरण होय तो होवो परन्तु योधानिसे निंद्य कायर वचन तो हम न कहैं। यह वचन पुत्रनिके सुन सीता मौन पकड रही, परन्तु चित्तमें अति चिन्ता है। दोऊ कुमार स्नानकर भगवानकी पूजाकरि मंगलपाठ पढ, सिद्धनिकूं नमस्कारकरि माताकूं धीय व धाय प्रणामकरि दोऊ महा मंगलरूप हाथीपर चढे, मानूं चांद सूर्य गिरिके शिखर तिष्ठे हैं। अयोध्या ऊपर युद्धकूं उद्यमी भए, जैसे राम लक्ष्मण लंका ऊपर उद्यमी भए हुते। इनका कूच सुन हजारो योधा पुण्डरीकपुरसूं निकसे, सब ही योधा अपना अपना हल्ला देते भए। वह जानें मेरी सेना अच्छी दीखै है वह जानें मेरी। महाकटक संयुक्त नित्य एक योजन कूच कर सो पृथ्वीकी रक्षा करते चले जाय हैं किसीका कुछ उजाडै नाहीं। पृथ्वी नानाप्रकार के धान्यकरि शोभायमान है। कुमारनिका प्रताप आगे आगे बढता जाय है। मार्गके राजा भेंट दे मिलै हैं। दस हजार बेलदार कुदाल लिए आगे आगे चले जाय हैं, अर धरती ऊंची नीचीकूं सम कर हैं। अर कुल्हाडे हैं हाथविषै जिनके वे भी आगे आगे चले जाय हैं। अर हाथी, ऊंट, भैंसा, बलद, खच्चर खजानेके लदे जाय हैं। मंत्री आगे आगे चले जाय हैं। अर प्यादे हिरणकी न्याई उछलते जाय हैं। अर तुरंगनिके असवार अति तेजीसे चले जाय हैं। तुरंगनिकी हींस होय रही है। अर गजराज चले जाय हैं जिनके स्वर्णकी सांकल, अर महा घण्टानिका शब्द होय है, अर जिनके कानोंपर चमर शोभै हैं। अर शंखनिकी ध्वनि होय रही है। अर मोतिनिकी झालरी पानीके बुदबुदा समान अत्यन्त सोहै हैं। अर सुन्दर हैं आभूषण जिनके, महा उद्धत, जिनके उज्ज्वल दांतनिके स्वर्ण आदिक बंधे बन्धे हैं, अर रत्न स्वर्ण आदिककी माला तिनकरि शोभायमान, चलते पर्वत समान नानाप्रकारके रंग सूं रंगे अर जिनके मद झरै हैं अर कारी घटा समान श्याम प्रचण्ड वेगकूं धरैं जिनपर पाखर परी हैं नानाप्रकारके शस्त्रनिकरि शोभित हैं अर गर्जना करै हैं, अर जिनपर महादीप्तिके धारक सामंत लोक चढे हैं, अर महावतनिने अति सिखाये हैं, अपनी सेनाका अर परसेनाका शब्द पिछानै हैं, सुन्दर हैं चेष्टा

जिनकी । अर घोडानिके असवार बखतर पहिरे खेट नामा आयुधनिकू धरे, वरछी ह जिनक हाथविष, घोडानिके समूह तिनके खुरनिके घातकर उठी जो रज ताकरि आकाश व्याप्त होय रह्या ह, ऐसा सोहै ह मानो सुफेद बादलनिसू म डित ह । अर पियादे शस्त्रनिके समूहकरि शोभित अनेक चेष्टा करते गवसे चले जाय ह । वह जान म आगे चलू, वह जाने म । अर शयन आसन ताबूल सग ध माला महामनोहर वस्त्र आहार विलेपन नानाप्रकारकी सामग्री बटती जाय ह, ताकरि सबही सेनाके लोक सुखरूप ह । काहूकू काहू प्रकारका खेद नाही । अर मजल मजलत कुमारनिकी आज्ञाकरि भले भले मनुष्यनिकू लोक नानाप्रकारकी वस्तु देव ह । उनकू यही काय सौंप्या ह सो बहुत सावधान ह । नानाप्रकारके अन्न जल मिष्टान्न लवण घत, दुग्ध, दही, अनेक रस भाति भाति खानेकी वस्तु आदरसू देव ह । समस्त सेनाविष कोई दीन बुभुक्षित तषातुर कुवस्त्र मलिन चि तावान दष्टि नाहीं पड ह । सेनारूप समुद्रमें नर नारी नानाप्रकारके आभरण पहिरे स दर वस्त्रनिकर शोभायमान महा रूपवान अति हर्षित दीख । या भाति महा विभूति कर मण्डित सीताके पुत्र चले चले अयोध्याके देशविष आये, मानो स्वग लोकविष इन्द्र आए । जा देशविष यव गेहू चावल आदि अनेक धा य फल रहे ह अर पौंड साठेनिके बाड ठौर ठौर शोभ ह । पथ्वी अन्न जल तण कर पूण ह । अर जहा नदीनिके तीर हू मुनिके समूह क्रीडा कर ह, अर सरोवर कमलनिके शोभायमान ह अर पवत नानाप्रकारके पुष्पनिकर सुग-न्धित होय रहे ह, अर गीतनिकी ध्वनि ठौर ठौर होय रही ह, अर गाय, भस, बलधनिके समूह विचर
रहे ह । अर ग्वालणी बिलोवणा बिलोव ह, जहा नगरनि सारिखे नजीक नजीक ग्राम ह, अर नगर ऐसे शोभ ८४
है मानो सुरपुर ही ह । महा तेजकरि युक्त लवणाकुश देशकी शोभा देखते अति नीतिसे आये । काहूकू काहूही प्रकारका खद न भया । हाथिनिके मद झरिवेकरि पथविष रज दब गई, कीच होय गयी । अर चचल घोडनिके खुरनिके घातकरि पथ्वी जजरी होय गई । चले चले अयोध्याके समीप आए । दूरसे सध्याके बादलनिके रग समान अति सु दर अयोध्या देख वज्रजघकू पूछी—हे माम ! यह महा ज्योति

रूप कौनसी नगरी है ? तब वज्रजघने निश्चयकर कही, हे देव ! यह अयोध्या नगरी है । जाके स्वर्ण मई कोट तिनकी यह ज्योति भास है । या नगरीविषै तिहारा पिता बलदेव स्वामी विराजै है, आके लक्ष्मण अर शत्रुघन भाई । या भाति वज्रजघने कही । अर दोऊ कुमार शूरवीरताकी कथा करते हुए सुखसू आय पहुँचे । कटकके अर अयोध्याके बीच सरयू नदी रही । दोऊ भाईनिके यह इच्छा कि शीघ्र ही नदीको उतर नगरी लेव । जस कोई मुनि शीघ्र ही मुक्त हुवा चाहे, ताहि मोक्षकी आशारूप नदी यथाख्यातचारित्र होने न देय, आशारूप नदीकू तिर तब मुनि मुक्त होय । तस सरयू नदीके योगसे शीघ्र ही नदीत पार उतरि नगरीविषै न पहुँच सके । तब जस नन्दन वनविषै देवनिकी सेना उतरै तैस नदीके उपवनादिविषै ही कटकके डेरा कराए ।

अथानन्तर परसेना निकट आई सुन राम लक्ष्मण आश्चर्यकू प्राप्त भए । अर दोनो भाई परस्पर बतलावै ये कोई युद्धके अर्थ हमारे निकट आए है सो मूवा चाहे है । बासदेवने विराधितकू आज्ञाकरी युद्धके निमित्त शीघ्र ही सेना मेली करो, ढील न होय । जिन विद्याधरनिके कपियोकी ध्वजा, अर हाथिनिकी ध्वजा, अर वलनिकी ध्वजा, सिहनिकी ध्वजा इत्यादि अनेक भातिकी ध्वजा तिनकू वेग बुलाओ । सो विराधितन कही जो आज्ञा होयगी सोई होयगा । उसही समय सुग्रीवादिक अनेक राजावो र र दूत पठाए सो दूतके दखिवेमात्र ही सव विद्याधर बडी सेनासू अयोध्या आए । भामडल भी आया । सो भामण्डलकू अत्यन्त आकुलता देख शीघ ही सिद्धार्थ अर नारद जायकर कहते भए– यह सीताके पुत्र है । सीता पुण्डरीकपुरविषै है । तब यह बात सुनकर बहुत दुखित भया अर कुमारोके अयोध्या आयवेपर आश्चर्यकू प्राप्त भया, अर इनका प्रताप सुन हर्षित भया । मनके वेग समान जो विमान, उसपर चढकर परिवारसहित पुण्डरीकपुर गया, बहिनसू मिला । सीता भामडलकू देख अति मोहित भई आसू नाखती सती विलाप करती भई । अर अपने ताई घरसू काढनेका अर पुण्डरीकपुर आयवेका सर्व वृत्तात कह्या । तब भामण्डल बहिनको धीर्य बधाय कहता भया–हे बहिन !

८५

तेरे पुण्यके प्रभावसू सब भला होयगा । अर कुमार अयोध्या गए सो भला न कीया, जायकर बलभद्र नारायणकू क्रोध उपजाया । राम लक्ष्मण दोनो भाई पुरुषोत्तम देवोसे भी न जीते जाय, महा योधा है । अर कुमारोके अर उनके युद्ध न होय सो एसा उपाय कर इसलिए तुमहू चलो ।

तब सीता पुत्रोकी बधूसयुक्त भामण्डलके विमानविषै बैठि चाली । राम लक्ष्मण महा क्रोधकर रथ घोटक गज पियादे देव विद्याधर तिनकर मडित समुद्रसमान सेना लय बाहिर निकसे । अर घोडानिके रथ चढा शत्रुघ्न, महा प्रतापी, मोतिनके हारकर शोभायमान है वक्षस्थल जाका सो रामके सग भया । अर कृतातवक्त्र सब सेनाका अग्रेसर भया, जसे इन्द्रकी सेनाका अग्रगामी हृदयकेशी नामा देव होय । उसका रथ अत्यन्त सोहता भया । देवनिके विमान समान जिसका रथ सो सेनापति चतुरग सेना लिए अतुलबली, अतिप्रतापी महा ज्योतिकू धरे धनुष चढाय बाण लिए चला जाय है, जिसकी श्याम ध्वजा शत्रुवोसे देखी न जाय । उसके पीछे त्रिमूघन विह्णि शिखीसिहविक्रम दीर्घभुज सिहोदर सुमेरु बालखिल्य रौद्रभूत जिसके अष्टापदोके रथ, वज्रकर्ण पृथु मारदमन मृगेन्द्रदेव इत्यादि पाचहजार नपति कृतातवक्त्रके सग अग्रगामी भए । बन्दीजन बखाने है विरद जिनके, अर अनेक रघुवशी कुमार देखे है अनेक रण जिन्होने, शस्त्रोपर है दृष्टि जिनकी, युद्धका है उत्साह जिनके, स्वामिभक्तिविषै तत्पर, महाबलवान धरतीकू कम्पाते शीघ्रही निकसे । कईएक नानाप्रकारके रथोपर चढे, कईएक पवन समान ऊचे कारी घटा समान हाथिनिपर चढे कईएक समुद्रकी तरग समान चचल तुरग तिन-पर चढे इत्यादि अनेक वाहनोपर चढे युद्धकू निकसे । वादित्रोके शब्दोकर करी है व्याप्त दशो दिशा जिन्होने । बखतर पहिरे, टोप धरे, क्रोधकर सयुक्त है चित्त जिनका । तब लव अकुश परसेनाका शब्द सुन युद्धकू उद्यमी भए । वज्रजघकू आज्ञा करी । कुमारकी सेनाके लोक युद्धके उद्यमी हुते ही । प्रलयकालकी अग्निसमान महाप्रचड अगदेश, बगदेश, नपाल, बर्बर पौड मागध पारसेल स्यघल कलिग इत्यादि अनेक देशनिके राजा रत्नाककू आदि दे महा बलवत ग्यारह हजार राजा उत्तम तेजके धारक युद्धके उद्यमी

भए। दोनो सेनानिका सघट्ट भया। दोनो सेनानिके संगमविषै देवनिकूं असुरनिकूं आश्चर्य उपजै ऐसा महा भयंकर शब्द भया, जैसा प्रलयकालका समुद्र गाजै। परस्पर यह शब्द होते भए-क्या देख रह्या है प्रथम प्रहार क्यो न करै? मेरा मन तोपर प्रथम प्रहार करिवेपर नाहीं, तातैं तू ही प्रथम प्रहारकर। अर कोई कहै है एक डिग आगे होवो जो शस्त्र चलाऊं। कोई अत्यन्त समीप होय गए तब कहै हैं खञ्जर तथा कटारी हाथ लेवो, निपट नजीक भए बाणका अवसर नाहीं। कोई कायरकूं देख कहै है तू क्यो कांपै है मैं कायरकूं न मारूं तू परे हो, आगे महायोधा खडा है उससे युद्ध करने दे। कोई वृथा गाजै है उसे सामंत कहै है-हे क्षुद्र! कहा वृथा गाजै है गाजतेविषै सामंतपना नाहीं। जो तोविषै सामर्थ्य है तो आगे आव, तेरी रणकी भूख भगाऊं। इस भांति योधानिविषै परस्पर वचनालाप होय रहे हैं, तरवार बहै हैं, भूमिगोचरी विद्याधर सब ही आए हैं। भामण्डल पवनवेग वीर मृगांक विद्युद्ध्वज इत्यादि बडे २ राजा विद्याधर बडी सेनाकरि युक्त महा रणविषै प्रवीण सो लवण अंकुशके समाचार सुन युद्धसे पराङ्मुख शिथिल होय गए, अर सब बातोविषै प्रवीण हनुमान सो भी सीताके पुत्र जान युद्धसूं शिथिल होय रह्या। विमानके शिखरविषै आरूढ जानकीकूं देख सब ही विद्याधर हाथ जोड शीस निवाय प्रणामकर मध्यस्थ होय रहे। सीता दोनो सेना देख रोमांच होय आई कांपै है अंग जाका। लवण अंकुश लहलहाट करै है ध्वजा जिनकी। राम लक्ष्मणसूं युद्धकूं उद्यमी भए। रामके सिंहकी ध्वजा, लक्ष्मणके गरुडकी सो दोनो कुमार महायोधा राम लक्ष्मणसूं युद्ध करते भए। लवण तौ रामसे लडै अर अंकुश लक्ष्मणसे लडै, सो लवने आवते ही श्रीरामकी ध्वजा छेदी अर धनुष तोडा। ८७
तब राम हसकर और धनुष लेयवेकूं उद्यमी भए। इतनेविषै लवने रामका रथ तोडा। तब राम और रथ चढे। प्रचण्ड है पराक्रम जिसका क्रोधकर भृकुटी चढाय ग्रीष्मके सूर्य समान तेजस्वी जैसे चमरेन्द्रपर इन्द्र जाय तैसैं गया। तब जानकीका नन्दन लवण युद्धकी पाहुनिगति करनेकूं रामके सम्मुख आया। रामकें अर लवकें परस्पर महा युद्ध भया। वाने वाके शस्त्र छेदे वाने वाके। जैसा युद्ध राम

अर लवका भया तसा ही अंकुश अर लक्ष्मणका भया। या भांति परस्पर दोनो युगल बल तड। योधा भी परस्पर लडे। घोडोके समूह रणरूप समुद्रकी तरग समान उछलते भए। कोईएक योधा प्रतिपक्षीकू टूट बखतर देख दयाकर मौन गह रह्या। अर कईएक योधा मनो करते परसेनाविष पैठे सो स्वामीका नाम उचारते परचक्रस लडते भए। कइएक महाभट माते हाथियोसो भिडते भए। कईएक हाथियोके दातरूप सेजपर रणनिद्रा सुखसू लेते भए। काहू एक महाभटका तुरग काम आया सो पियादा ही लडने लगा। काहूके शस्त्र टूट गए तो भी पीछे न होता भया, हाथोसे मुष्टिप्रहार करता भया। अर काईइक सामत बाण बाहनो चूक गया उसे प्रतिपक्षी कहता भया, बहुरि चलाय, सो लज्जाकर न चलावता भया। अर कोईएक निर्भयचित्त प्रतिपक्षीकू शस्त्ररहित देख आप भी शस्त्र तज भुजाओसे युद्ध करता भया। ते योधा बड दाता रणसग्रामविष प्राण देते भए परन्तु पीठ न दते भए। जहा रुधिरकी कीच होय रही ह सो रथोक पहिए डूब गए ह, सारथी शीघ्र ही नहीं चला सक ह। परस्पर शास्त्रोके सम्पातकर अग्नि पड रही ह अर हाथियोकी सूण्डके छाटे उछले ह। अर सामन्तोने हाथियोके कुम्भस्थल विदारे ह अर सामतनिके उरस्थल विदारे ह। हाथी काम आय गए ह तिनकर माग रुक रह्या ह। अर हाथियोके मोती बिखर रहे ह। वह युद्ध महा भयकर होता भया। जहा सामत अपना सिर देयकर यशरूप रत्न खरीदते भए, जहा मूर्छितपर कोई घात नहीं कर अर निबल पर घात न कर सामन्तोका ह युद्ध जहा महायुद्धके करणहार योधा जिनके जीवनेकी आशा नहीं, क्षोभकू प्राप्त भया समद्र गाज तसा होय रह्या ह शब्दजहा, सो वह सग्राम समरस कहिए समान रस होता भया। ८८

भावार्थ—न वह सेना हटी न वह सेना हटी योधानिविष न्यूनाधिकता परस्पर दृष्टि न पडी। कसे ह योधा ? स्वामीविष ह परमभक्ति जिनकी। अर स्वामीने आजीविका दई थी उसके बदले यह जीव दिया चाहे ह। प्रचण्ड रणकी ह खाज जिनके, सूर्य समान तेजकू धरे सग्रामके धुरधर होते भए।

इति श्रीरविषणाचार्यविरचित महापद्मपराण संस्कृत ग्रन्थ ताकी भाषावचनिकाविष लवणाकशका राम लक्ष्मणस युद्ध वर्णन करनवाला एकसो-ावा पर्व पूर्ण भया ।। १ २ ।।

अथानन्तर गौतम स्वामी कह ह-हे श्रेणिक ! अब जो वृत्तात भया सो सुनो । अनगलवणके तो सारथी राजा वजजघ अर मदनाकुशके राजा पथु, अर लक्ष्मणके विराधित, अर रामके कृतातवक्र । तब श्रीराम वजावत धनुषकू चढायकर कृतातवक्रसू कहते भए–अब तुम शीघ्रही शत्रुवो पर रथ चलावो, ढोल न करो । तब वह कहता भया, हे देव ! देखो यह घोडे नरवीरके बाणनिकर जरजरे होय रहे ह, इनविष तेज नाहीं, मानू निद्राकू प्राप्त भए ह । यह तुरग लोहूकी धाराकर धरतीकू रग ह, मानू अपना अनुराग प्रभुकू दिखाव ह । अर मेरी भुजा इसके बाणनिकर भेदी गई ह, बक्तर टूट गया ह । तब श्रीराम कहते भए मेरा भी धनुष युद्धकर्मरहित ऐसा होय गया ह मानू चित्रामका धनुष ह, अर यह मूसल भी कार्यरहित होय गया ह, अर दुर्निवार जे शत्रुरूप गजराज तिनकू अकुश समान यह हल सा भी शिथिलताकू भज ह । शत्रुके पक्षकू भयकर मेरे अमोघशस्त्र जिनकी सहस्र यक्ष रक्षा कर वे शिथिल होय गए ह । शस्त्रोकी सामर्थ्य नाहीं जो शत्रुपर चल । गौतमस्वामी कहे है–हे श्रेणिक ! जस अनगलवण आगे रामके शस्त्र निरर्थक होय गये तस ही मदनाकुशके आगे लक्ष्मणके शस्त्र कार्यरहित होय गए । वे दोनो भाई तो जाने कि ये राम लक्ष्मण तो हमारे पिता अर पितृव्य (चचा) ह सो वे तो इनका अग बचाय शर चलाव । अर ये उनको जाने नाहीं सो शत्रु जानकर शर चलाव । लक्ष्मण दिव्यास्त्रकी सामर्थ्य उनपर चलिवे की न जान शर शेल सामान्यचक्र खडग अकुश चलावता भया । सो अकुशने बजदण्डकर लक्ष्मणके आयुध निराकरण किए । अर रामके चलाए आयुध लवणने निराकरण किए । फिर लवणने रामकी ओर शेल चलाया अर अकुशने लक्ष्मणपर चलाया सो ऐसी निपुणतासे दोनोके मर्मकी ठौर न लागे, सामान्य चोट लगी । सो लक्ष्मणके नेत्र घूमने लगे । विराधितने अयोध्याकी ओर रथ फेरा । तब लक्ष्मण सचेत होय कोपकर विराधितसू कहता

भया—हे विराधित ! तने क्या किया ? मेरा रथ फेरघा। अब पीछे बाहुरि शत्रुका सन्मुख लेवो, रणविषै पीठ न दीजिये। जे शूरवीर हैं तिनकूं शत्रुके सन्मुख मरण भला, परन्तु यह पीठ देना महा निन्द्यकर्म शूरवीरोंकूं योग्य नाहीं। कैसे हैं शूरवीर ? युद्धविषै बाणनिकरि पूरित हैं अंग जिनके, जे देव मनुष्यनि कर प्रशंसाके योग्य वे कायरता कर्म भजैं ? मैं दशरथका पुत्र, रामका भाई वासुदेव पृथ्वीविषै प्रसिद्ध सो संग्राममें पीठ कैसे देऊं ? यह वचन लक्ष्मणने कहे तब विराधितने रथकूं युद्धके सन्मुख किया। सो लक्ष्मणके अर मदनांकुशकै महा युद्ध भया। लक्ष्मणने क्रोधकर महाभयंकर चक्र हाथविषै लिया। महाज्वालारूप देख्या न जाय, ग्रीष्मके सूर्य समान। सो अंकुश पर चलाया सो अंकुशके समीप जाय प्रभावरहित होय गया अर उलटा लक्ष्मणके हाथविषै आया। बहुरि लक्ष्मणने चक्र चलाया सो पीछे आया। या भांति बारबार पाछै आया। बहुरि अंकुशने धनुष हाथविषै गह्या, तब अंकुशकूं महातेजरूप देख लक्ष्मणके पक्षके सब सामन्त आश्चर्यकूं प्राप्त भए। तिनकूं यह बुद्धि उपजी यह महापराक्रमी अर्धचक्री उपज्या, लक्ष्मणने कोटि शिला उठाई, अर मुनिके वचन जिनशासनका कथन और भांति कैसे होय ? अर लक्ष्मण भी मनविषै जानता भया कि ये बलभद्र नारायण उपजे। आप प्रति लज्जावान होय युद्धकी क्रियासे शिथिल भया।

अथानन्तर लक्ष्मणकूं शिथिल देख, सिद्धार्थ नारदके कहेसूं लक्ष्मणके समीप आय कहता भया—वासुदेव तुम ही हो। जिनशासनके वचन सुमेरुसूं अति निश्चल हैं। यह कुमार जानकीके पुत्र हैं, गर्भविषै थे तब जानकीकूं वनविषै तजी। यह तिहारे अंग हैं। तातैं इनपर चक्रादिक शस्त्र न चलैं। तब लक्ष्मणने दोनों कुमारोंका वृत्तान्त सुनि हर्षित होय, हाथसे हथियार डार दिए, बक्तर दूर किया। सीताके दुःखकर अश्रुपात डारने लगा। अर नेत्र घूमने लगे। राम शस्त्र डार बक्तर उतार मोहकर मूर्छित भए, चन्दनसे छांटि सचेत किये। तब स्नेहके भरे पुत्रनिके समीप चाले। पुत्र रथसे उतर हाथ जोड सीस निवाय पिताके पायन पडे। श्रीराम स्नेहकर द्रवीभूत भया है मन जिनका, पुत्रोंकूं उरसे

 ८२१

लगाय विलाप करते भए। आसुनि कर मघकासा दिन किया। राम कहै है हाय पुत्र हो ! मै मन्द-
बुद्धि गर्भविषै तिष्ठते तुमकू सीता सहित भयकर वनविषै तजी। तिहारी माता निर्दोष। हाय पुत्र
हो ! मै कोई विस्तीर्ण पुण्यकरि तुम सारिखे पुत्र पाए, सो उदरविषै तिष्ठते तुम भयकर वनविषै कष्ट
कू प्राप्त भए। हाय वत्स ! जो यह वज्रजघ वनविषै न आवता तो तिहारा मुखरूप चन्द्रमा मै कैसे

देखता ? हाय बालक हो ! इन अमोघ दिव्यास्त्रोकर तुम न हते गए सो पुण्यके उदयकर देवोने सहाय
करी। हाय मेरे अगज हो ! मेरे बाणनिकर बींधे तुम रणक्षेत्रविषै पडते तो न जानू जानकी क्या
करती। सब दुखोविषै घरसे काढनेका बडा दुःख है। सो तिहारी माता महा गुणवन्ती, व्रतवन्ती
पतिव्रता मै वनविषै तजी। अर तुमसे पुत्र गर्भविषै, सो मै यह काम बहुत विना समझे किया अर जो
कदाचित तिहारा युद्धविषै अन्यथा भाव भया होता तो मै निश्चयसे जानू हू शोकसे विह्वल जानकी न
जीवती। या भाति रामने विलाप किया। बहुरि कुमार विनय कर लक्ष्मणकू प्रणाम करते भए।
लक्ष्मण सीताके शोकसे विह्वल, आसू डारता स्नेहका भरया, दोनो कुमारनिकू उरसे लगावता
भया। शत्रुघ्न आदि यह वृत्तात सुन वहा आए। कुमार यथायोग्य विनय करते भये, ये उरसू लगाय
मिले। परस्पर अति प्रीति उपजी। दोनो सेनाके लोक अतिहित कर परस्पर मिले, क्योकि जब स्वामी
कू स्नेह होय तब सेवकनिके भी होय। सीता पुत्रोका माहात्म्य देख अति हर्षित होय, विमानके मार्ग
होय पीछे पुण्डरीकपुरविषै गई। अर भामडल विमानसे उतर स्नेहका भरया आसू डारता भानजोसे
मिला, अति हर्षित भया। अर प्रीतिका भरया हनुमान उरसू लगाय मिल्या। अर बारम्बार कहता
भया—भली भई, भली भई। अर विभीषण सुग्रीव विराधित सब ही कुमारनिसू मिले। परस्पर हित-
सभाषण भया। भूमिगोचरी विद्याधर सबही मिले। अर देवनिका आगमन भया। सबोकू आनन्द
उपज्या, राम पुत्रनिकू पायकर अति आनन्दकू प्राप्त भए। सकल पृथ्वीके राज्यसे पुत्रनिका लाभ
अधिक मानते भए। जो रामके हर्ष भया सो कहिवेविषै न आवै। अर विद्याधरी आकाशविषै

आनन्दसू नृत्य करती भई । अर भूमिगोचरिनिकी स्त्री पृथ्वीविषै नृत्य करती भई । अर लक्ष्मण आपकू कृतार्थ मानता भया, मानो सब लोक जीत्या, हर्षसू फूल गए है लोचन जिनके। अर राम मनविषै जानता भया मैं सगर चक्रवर्ती समान हू अर कुमार दोनो भीम अर भागीरथ समान है। राम वज्रजंघसे अति प्रीति करता भया जो तुम मेरे भामंडल समान हो। अयोध्यापुरी तो पहले ही स्वर्गपुरी समान थी तो बहुरि कुमारनिके आयवेकरि अति शोभायमान भई, जैसे सुन्दर स्त्री सहज ही शोभायमान होय अर शृंगारकरि अति शोभाकू पावै। श्रीराम लक्ष्मणसहित अर दोऊ पुत्रो सहित सूर्यकी ज्योति समान जो पुष्पक विमान उसविषै विराजे, सूर्यसमान है ज्योति जिनकी। राम लक्ष्मण अर दोऊ कुमार अद्भुत आभूषण पहिरे सो कैसी शोभा बनी है मानू सुमेरुके शिखरपर महामेघ बिजुरीके चमत्कार सहित तिष्ठा है।

भावार्थ—विमान तो सुमेरुका शिखर भया, अर लक्ष्मण महामेघका स्वरूप भया, अर राम तथा रामके पुत्र विद्युत समान भए सो ए चढकर नगरके बाह्य उद्यानविषै जिनमन्दिर है तिनके दर्शनकू चाले। सो नगरके कोटपर ठौर ठौर ध्वजा चढी है, तिनकू देखते धीरे धीरे जाय है। लार अनेक राजा कई हाथियोपर चढे, कई घोडो पर, कई रथोपर चढे जाय है, अर पियादोके समूह जाय है। धनुष बाण इत्यादि अनेक आयुध अर ध्वजा छत्रनिकर सूर्यकी किरण नजर नाहीं पडे है। अर स्त्रीनिके समूह झरोखनिविषै बैठ देखै है। लव अंकुशके देखिवेका सबनिकू बहुत कौतूहल है। नेत्ररूप अंजुलिनिकर लवणांकुशके सुन्दरतारूप अमृतका पान करै है सो तृप्त नाहीं होय है। एकाग्रचित्त भई उनकू देखै है। अर नगरविषै नर नारीनिकी ऐसी भीड भई कि काहूके हार कुण्डलकी गम्य नाहीं। अर नारीजन परस्पर वार्ता करै है। कोई कहै है—हे माता! टूक मुख इधर कर मोहि कुमारनिके देखिवेका कौतुक है। हे अखण्डकौतुक! तूने तो घनी बार लगि देखे अब हमें देखने देवो, अपना सिर नीचा कर ज्यो हमकू दीखै, कहा ऊंचा सिर कर रही है। कोई कहै है—हे सखि! तेरे सिरके केश बिखर रहे है,

सो नीके सम्हार। अर कोई कहै है—हे क्षिप्तमानस कहिये एक ठौर नाहीं चित्त जाका सो तू कहा हमारे प्राणनिकूं पीडै है ? तू न देख, यह गर्भवती स्त्री खडी है, पीडित है। कोऊ कहै टुक परे होहु कहा अचेतन होय रहो है। कुमारनिकूं न देखने दे है, यह दोनो रामदेवके कुमार रामदेवके समीप बैठे अष्टमीके चन्द्रमा समान है ललाट जिनका। कोई पूछे है इनविषै लवण कौन अर अंकुश कौन ? यह तो दोनो तुल्यरूप भासै हैं। तब कोई कहै है यह लाल वस्त्र पहिरे लवण है अर यह हरे वस्त्र पहिरे अंकुश है। अहो धन्य सीता महापुण्यवती जिनने ऐसे पुत्र जने। अर कोई कहै है धन्य है वह स्त्री जिसने ऐसे वर पाए हैं। एकाग्रचित्त भई स्त्री इत्यादि वार्ता करती भई, इनके देखिवेविषै है चित्त जिनका, अति भीड भई। सो भीडविषै कर्णाभरणरूप सर्पकी डाढकर डस गए है कपोल जिनके सो न जानती भई, तद्गत है चित्त जिनका। काहूकी काचीदाम जाती रही सो वाहि खबर नहीं। काहूके मोतिनके हार टूटे सो मोती बिखर रहे हैं। मानूं कुमार आय सो ये पुष्पांजली बरसै है। अर कईएकोंकूं नेत्रोंकी पलक नाहीं लगै है असवारी दूर गई है तो भी उसी ओर देखै है। नगरकी उत्तम स्त्री वेई भई वेल सो पुष्पवृष्टि करती भई सो पुष्पनिकी मकरंदकर मार्ग सुगंध होय रह्या है। श्रीराम अति शोभाकूं प्राप्त भए पुत्रनि सहित बनके चैत्यालयनिके दर्शनकर अपने मन्दिर आए। कैसा है मन्दिर ? महा मंगलकर पूर्ण है ऐसे अपने प्यारे जनोंके आगमका उत्साह सुखरूप, ताकूं वर्णन कहां लग कहिए। पुण्यरूपी सूर्यका प्रकाशकर फूल्या है मनकमल जिनका ऐसे मनुष्य वेई अद्भुत सुखकूं पावै है।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृतग्रन्थ ताकी भाषावचनिकाविषै राम लक्ष्मणसे लवणांकुशका मिलाप वर्णन करनेवाला एकसौ तीनवां पर्व पूर्ण भया ॥ १०३ ॥

अथानन्तर विभीषण, सुग्रीव, हनुमान मिलकर रामसे विनती करते भये, हे नाथ ! हमपर कृपा करहु, हमारी विनती मानो, जानकी दुखसूं तिष्ठै है। इसलिए यहां लायवेकी आज्ञा करहु। तब राम दीर्घ उष्ण निश्वास नाख क्षणएक विचारकर बोले, मैं सीताकूं शील दोषरहित जानूं हूं, वह उत्तम

चित्त है। परन्तु लोकापवादकर घरसे काढी है। अब कैसे बुलाऊं ? इसलिये लोकनिकूं प्रतीति उपजाय कर जानकी आवै तब हमारा उसका सहवास होय, अन्यथा कैसे होय। इसलिये सब देशनिके राजानिकूं बुलावो समस्त विद्याधर अर भूमिगोचरी आवें, सबनिके देखते सीता दिव्य लेकर शुद्ध होय मेरे घरविषै प्रवेश करै। जैसे शची इन्द्रके घरविषै प्रवेश करै। तब सबने कही जो आप आज्ञा करोगे सोही होयगा। तब सब देशनिके राजा बुलाये सो बाल वृद्ध स्त्री परिवार सहित अयोध्या नगरी आए। जे

सूर्यकूं भी न देखैं, घर ही विषै रहैं, वे नारी भी आई और लोकनिकी कहा बात ? जे वृद्ध बहुत वृत्तांतके जाननहार देशविषै मुखिया, सब देशनिसूं आए। कईएक तुरगनिपर चढे, कईएक रथनिपर चढे तथा पालकी अर अनेक प्रकार असवारिनिपर चढे बडी विभूतिसूं आए। विद्याधर आकाशके मार्ग होय विमान बैठे आए अर भूमिगोचरी भूमिके मार्ग आए। मानो जगत जंगम होय गया। रामकी आज्ञासे जे अधिकारी हुते तिन्होंने नगरके बाहिर लोकनिके रहनेके लिए डेरे खडे कराए। अर महा विस्तीर्ण अनेक महिल बनाए तिनके दृढ स्तम्भके ऊंचे मंडप, उदार झरोखे, सुन्दर जाली, तिनविषै स्त्रियें भेली अर पुरुष भेले भए। पुरुष यथायोग्य बैठे दिव्यकूं देखिवेकी है अभिलाषा जिनके जेते मनुष्य आए तिनकी सब भांति पाहुनगति राजद्वारके अधिकारियोंने करी। सबनिकूं शय्या आसन भोजन तांबूल वस्त्र सुगन्ध मालादिक समस्त सामग्री राजद्वारसे पहुंची। सबनिकी स्थिरता करी। अर रामकी आज्ञासूं भामण्डल, विभीषण, हनुमान, सुग्रीव विराधित रत्नजटी यह बडे २ राजा आकाशके मार्ग क्षणमात्रविषै पुण्डरीकपुर गए। सो सब सेना नगरके बाहिर राखि अपने समीप ८१४
लोगनि सहित जहां जानकी थी वहां आए, जय जय शब्दकर पुष्पांजलि चढाय पायनकूं प्रणामकर अति विनयसंयुक्त आंगणविषै बैठे। तब सीता आंसू डारती अपनी निंदा करती भई—दुर्जनोंके वचनरूप दावानलकरि दग्ध भए हैं अंग मेरे सो क्षीरसागरके जलकर भी सींचो शीतल न होय। तब वे कहते भए—हे देवि भगवति सौम्य उत्तमे ! अब शोक तजो, अर अपना मन समाधानविषै लावो। या

पृथ्वीविषै ऐसा कौन प्राणी है जो तुम्हारा अपवाद करै ? ऐसा कौन जो पृथ्वीकू चलायमान करै अर अग्निकी शिखाकू पीवै, अर सुमेरुके उठायवेका उद्यम करै, अर जीभकर चांद सूर्यकू चाटै ? ऐसा कोई नाहीं । तुम्हारा गुणरूप रत्ननिका पर्वत कोई चलाय न सकै । अर जो तुम सारखी महासतियों का अपवाद करै तिनकी जीभके हजार टूक क्यों न होंय ? हम सेवकोंके समूहकू भेजकर जो कोई भरतक्षेत्रविषै अपवाद करेंगे उन दुष्टोंका निपात करेंगे । अर जो विनयवान तुम्हारे गुणगायवेविषै

अनुरागी हैं उनके गृहविषै रत्नवृष्टि करेंगे । यह पुष्पक विमान श्रीरामचन्द्रने भेज्या है उसविषै आनन्द रूप हो अयोध्याकी अरफ गमन करहु । सब देश अर नगर अर श्रीरामका घर तुम विना न सोहै जैसे चन्द्रकला विना आकाश न सोहै, अर दीपक विना मन्दिर न सोहै, अर शाखाबिना वृक्ष न सोहै । हे राजा जनककी पुत्री ! आज रामका मुखचन्द्र देखो । हे पंडिते पतिव्रते ! तुमकू अवश्य पतिका वचन मानना । जब ऐसा कहा तब सीता मुख्य सहेलियोंको लेकर पुष्पकविमानविषै आरूढ होय शीघ्र ही संध्याके समय अयोध्या आई । सूर्य अस्त होय गया सो महेन्द्रोदय नामा उद्यानविषै रात्रि पूर्ण करी । आगे रामसहित यहां आवती हुती सो वन अति मनोहर देखती हुती सो अब राम बिना रमणीक न भासा ।

अथानन्तर सूर्य उदय भया कमल प्रफुल्लित भए । जैसे राजाके किंकर पृथ्वीविषै विचरै तैसे सूर्य की किरणें पृथ्वीविषै विस्तरीं । जैसे दिव्यकर अपवाद नश जाय तैसे सूर्यके प्रतापकर अंधकार दूर भया । तब सीता उत्तम नारियोंकर युक्त रामके समीप चाली, हथिनीपर चढी । मनकी उदासीनता कर हती गई है प्रभा जाकी तौ भी भद्र परिणामकी धरणहारी अत्यन्त सोहती भई । जैसे चन्द्रमाकी कला ताराओंकर मंडित सोहै तैसे सीता सखियोंकरि मंडित सोहै । सब सभा विनय संयुक्त सीताकू देख वंदना करती भई । यह पापरहित धीरताकी धरणहारी रामकी रमा सभाविषै आई । राम समुद्र समान क्षोभकू प्राप्त भए । लोक सीताके जायवेकर विषादके भरे थे, अर कुमारोंका प्रताप देख

आश्चर्य भरे भए, अब सीताके आयवेकर हर्षके भरे ऐसें शब्द करते भए—हे माता! सदा जयवत होवो, नन्दो, वरधो, फूलो, फलो। धन्य यह रूप, धन्य यह धीर्य, धन्य यह सत्य, धन्य यह ज्योति, धन्य यह भावुकता, धन्य यह गम्भीरता, धन्य निर्मलता। ऐसे वचन समस्त ही नर नारीनिके मुखसे निकसे। आकाशविषै विद्याधर भूमिगोचरी महा कौतुक भरे पलक रहित सीताके दर्शन करते भए। अर परस्पर कहत भए—पृथ्वीके पुण्यके उदयसे जनकसुता पीछे आई। कईएक तो वहा श्रीरामकी ओर निरख हैं जैसे इन्द्रकी ओर देव निरखे। कईएक रामके समीप बैठे लव अर अंकुश तिनकू देख परस्पर कहै है ये कुमार रामके सदृश ही है। अर कईएक लक्ष्मणकी ओर देखै है। कैसे है लक्ष्मण? शत्रुओंके पक्षके क्षय करिवेकू समर्थ। अर केई शत्रुघ्नकी ओर, केईएक भामडलकी ओर, केईएक हनुमानकी ओर केईएक विभीषणकी ओर, केईएक विराधितकी ओर, अर केईएक सुग्रीवकी ओर निरखे है अर कईएक आश्चर्यकू प्राप्त भए सीताकी ओर देखै है।

अथानन्तर जानकी जायकर रामकू देख आपकू वियोग सागरके अन्तकू प्राप्त भई मानती भई। जब सीता सभाविषै आई तब लक्ष्मण अर्घ देय नमस्कार करता भया, अर सब राजा प्रणाम करते भए। सीता शीघ्रताकर निकट आवने लगी तब राघव यद्यपि क्षोभित है, तथापि सकोप होय मनमें विचारत भये इसे विषम वनविषै मेली थी सो मेरे मनकी हरणहारी फिर आई। देखो यह महा ढीठ है। मैं तजी तो भी मोसे अनुराग नाहीं छाडे है। यह रामकी चेष्टा जान महासती उदासचित्त होय विचारती भई—मेरे वियोगका अन्त नहीं आया, मेरा मनरूप जहाज विरहरूप समुद्रके तीर आय फटा चाहै है। ऐसी चितासे व्याकलचित्त भई, पगके अगूठेसू पृथ्वी कुचरती भई, बलदेवके समीप भामण्डलकी बहिन कैसी सोहै है जैसी इन्द्रके आगे सम्पदा सोहै। तब राम बोले—हे सीते! मेरे आगे कहा तिष्ठै है? तू परे जा, मैं तेरे देखिवेका अनुरागी नाहीं। मेरी आख मध्याह्नके सूर्य अर आशीविषसर्प तिनकू देख सकें परन्तु तेरे तनकू न देख सकै है। तू बहुत मास दशमुखके मन्दिरविषै रही

अब तोहि घराविष राखना मोहि कहा उचित ? तब जानकी बोली—तुम महा निर्दईचित्त हो, तुमने महा पंडित होयकर भी मूढलोकनिकी न्याई मेरा तिरस्कार किया सो कहा उचित ? मुझे गर्भवती कू जिनदर्शनका अभिलाष उपजा हुता सो तुम कुटिलतासू यात्राका नाम लेय विषम बनविष डारी, यह कहा उचित ? मेरा कुमरण होता अर कुगति जाती याविषै तुमकू कहा सिद्ध होता ? जो तिहारे मनविषै तजिवेकी हुती तो आर्यिकावोंके समीप मेली होती। जे अनाथ दीन दरिद्री, कुटुम्ब रहित महादुखी तिनकू दुख हरिवेका उपाय जिनशासनका शरण है, या समान और उत्कृष्ट नाहीं। हे पद्मनाभ! तुम करिवेविषै तो कछू कमी न करी, अब प्रसन्न होवो, आज्ञा करो सो करू। यह कह कर दुखकी भरी रुदन करती भई। तब राम बोले—मैं जानू हूं। तिहारा निर्दोष शील है, अर तुम निरचार अणुव्रतकी धरणहारी मेरी आज्ञाकारिणी हो, तिहारे भावनकी शुद्धता मैं भली भांति जानू हूं, परन्तु ये जगतके लोक कुटिलस्वभाव हैं। इन्होंने वृथा तरा अपवाद उठाया सो इनकू संदेह मिटै, अर इनकू यथावत प्रतीत आवै, सो करहु। तब सीताने कहा आप आज्ञा करो सो ही प्रमाण। जगत विषै जेते प्रकारके दिव्य हैं सो सब करके पृथ्वीका संदेह हरू। हे नाथ! विषोंविषै महा विष कालकूट है, जिसे सूंघकर आशाविष सर्प भी भस्म होय जाय सो मैं पीऊं। अर अग्निकी विषम ज्वालाविषै प्रवेश करू। अर जो आप आज्ञा करो सो करू। तब क्षण एक विचारकर राम बोले अग्नि कुण्डविषै प्रवेश करो। सीता महाहर्षकी भरी कहती भई—यही प्रमाण। तब नारद मनविषै विचारते भए यह तो महासती है, परन्तु अग्निका कहा विश्वास? याने मृत्यु आदरी। अर भामण्डल हनुमानादिक महाकोपसे पीडित भए, अर लव अंकुश माताका अग्नि विषै प्रवेश करिवेका निश्चय जान अति व्याकुल भये। अर सिद्धार्थ दोनो भुजा ऊंचीकर कहता भया, हे राम! देवोंसे भी सीताके शीलकी महिमा न कही जाय तो मनुष्य कहा कहें? कदाचित सुमेरु पातालविषै प्रवेश करै, अर समस्त समुद्र सूख जाय, तो भी सीताका शीलव्रत चलायमान न होय। जो कदाचित चन्द्रकिरण उष्ण होय, अर

सूर्यकिरण शीतल होय तो भी सीताकू दूषण न लगे। मैं विद्याके बलसे पञ्च सुमेरुविषै तथा जे और अकृत्रिम चैत्यालय शास्वते वहां जिनवन्दना करी–हे पद्मनाभ! सीताके व्रतकी महिमा मैं ठौर २ मुनियोंके मुखसे सुनी है। तातैं तुम महा विचक्षण हो, महा सतीकू अग्निप्रवेशकी आज्ञा न करो। अर आकाशविषै विद्याधर और पृथ्वीविषै भूमिगोचरी सब यही कहते भए–हे देव! प्रसन्न होय सौम्यता भजहु। हे नाथ! अग्नि समान कठोर चित्त न करो, सीता सती है, सीता अन्यथा नाहीं। अन्यथा जे महा पुरुषोंकी राणी होय कदे ही विकार रूप न होय। सब प्रजाके लोक यही वचन कहते भए, अर व्याकुल भए मोटी मोटी आसुओंकी बूंद डारत भए।

तब रामने कहा तुम ऐसे दयावान हो तो पहिले अपवाद क्यों उठाया? रामने किंकरोंकू आज्ञा करी–एक तीनस हाथ चौखटिया वापी खोदहु, अर सूके ईंधन चन्दन अर कृष्णागुरु तिनकर भरहु, अर अग्नि कर जाज्वल्यमान करहु, साक्षात मृत्युका स्वरूप करहु। तब किंकरनिने आज्ञा प्रमाण कुदालनिसे खोद अग्निवापिका बनायी। अर ताही रात्रिकू महेन्द्रोदय नामा उद्यानविषै सकल भूषण मुनिकू पूर्व वरके योगकर महा रौद्र विद्युद्वक्रनामा राक्षसीने अत्यन्त उपसर्ग किया सो मुनि अत्यन्त उपसर्गकू जीति केवलज्ञानकू प्राप्त भये। यह कथा सुनि गौतमस्वामीसू श्रेणिकने पूछी, हे प्रभो! राक्षसीके अर मुनिके पूर्व वर कहा? तब गौतमस्वामी कहते भये–हे श्रेणिक! सुनो–विजियार्द्धगिरि की उत्तर श्रेणी विषै महा शोभायमान गुंजनामा नगर, तहां सिंहविक्रमराजा ताके श्रीराणी ताके पुत्र सकलभूषण, ताके स्त्री आठसै, तिनविषै मुख्य किरणमण्डला। सो एक दिन उसने अपनी सौतिनके कहेसू अपने मामाके पुत्र हेमशिखका रूप चित्रपटविषै लिखा। सो सकलभूषणने देख कोप किया। तब सब स्त्रीनिने कही यह हमने लिखवाया है इसका कोई दोष नाहीं। तब सकलभूषण कोप तजि प्रसन्न भया। एक दिन यह किरणमण्डला पतिव्रता पतिसहित सूती थी। सो प्रमादथकी बरड़िकर हेमशिख ऐसा नाम कहा, सो यह तो निर्दोष, याके हेमशिखसे भाईकी बुद्धि, अर सकलभूषणने कछू और भाव विचारा। राणी

सू कोपकरि वैराग्यकूं प्राप्त भए। अर राणी किरणमंडला भी आर्यिका भई, परन्तु धनीसूं द्वेषभाव, जो याने मोहि झूठा दोष लगाया। सो मरकर विद्युद्वक्र नामा राक्षसी भई। सो पूर्व वैर थकी सकल भूषण स्वामी आहारकूं जाय तब यह अन्तराय करै, कभी माते हाथियोंके बंधन तुडाय देय, हाथी ग्राममें उपद्रव कर इनकूं अन्तराय होय। कभी यह आहारकूं जाय तब अग्नि लगाय देय। कभी यह रजोवृष्टि करै, इत्यादि नाना प्रकारके अन्तराय करै। कभी अश्वका, कभी वृषभका रूपकरि इनके सन्मुख आवै। कभी मार्गमें कांटे बखेरै। या भांति यह पापिनी कुचेष्टा करै। एक दिन स्वामी कायोत्सर्ग धर तिष्ठे थे अर इसने शोर किया—यह चोर है सो इसका शोर सुनकर दुष्टोंनें पकड अपमान किया। बहुरि उत्तम पुरुषोने छुडाय दिये। एक दिन यह आहार लेकर जाते थे सो पापिनी राक्षसीने काहू स्त्रीका हार लेकर इनके गलेमें डार दिया अर शोर किया कि यह चोर है, हार लिये जाय है। तब लोग आय पहुंचे इनको पीडा करी, हार लिया, भले परुषोने छुडाय दिये। या भांति यह क्रूर-चित्त दयारहित पूर्व वैर विरोधसे मुनिकूं उपद्रव करै। गई रात्रिकूं प्रतिमायोग धर महेन्द्रोदय नामा उद्यानविषै विराजे हुते सो राक्षसीने रौद्र उपसर्ग किया, वितर दिखाये अर हस्ती सिंह, व्याघ्र, सर्प दिखाये अर रूप गुणमण्डित नानाप्रकारकी नारी दिखाई, भांति भांतिके उपद्रव किये, परन्तु मुनिका मन न डिगा। तब केवलज्ञान उपजा। सो केवलकी महिमाकर दर्शनकूं इन्द्रादिक देव कल्पवासी, भवन वासी, व्यन्तर, जोतिषी कईएक हाथिनिपर चढे, कईएक सिंहनिपर चढे, कईएक ऊंट, खच्चर, मींढा, बघेरा, अष्टापद इनपर चढे, कईएक पक्षियोंपर चढे, कईएक विमान बैठे, कईएक रथनिपर पालकी चढे इत्यादि मनोहर वाहनोपर चढे आए। देवोकी असवारीके तिर्यंच नाहीं, देवों ही की माया है। देव ही विक्रियाकरि तिर्यंचका रूप धरै हैं। आकाशके मार्ग होय महाविभूति सहित सर्व दिशाविषै उद्योत करते आये। मुकुट धरे हार कुण्डल पहिरे अनेक आभूषणनिकर शोभित सकलभूषण केवलीके दर्शनकूं आये। पवनसे चंचल है ध्वजा जिनकी। अप्सरानिके समूह अयोध्याकी ओर आए। महेन्द्रोदय

उद्यानविषै विराजे हैं तिनके चरणारविंदविषै है मन जिनका, पृथ्वीकी शोभा देखते, आकाशसे नीचे उतरे। अर सीताके विध्यकू अग्निकुण्ड तयार होय रहा हुता सो देखकर एक मेघकेतु नामा देव इन्द्र से कहता भया—हे देवेन्द्र! हे नाथ! सीता महा सतीकू उपसर्ग आय प्राप्त भया है। यह महा श्राविका पतिव्रता शीलवती अति निर्मल चित्त है। इसे ऐसा उपद्रव क्यो होय? तब इन्द्रने आज्ञा करी है मेघकेतु! मैं सकलभूषण केवलीके दर्शनकू जाऊ हू, अर तू महासतीका उपसर्ग दूर करियो। या भांति आज्ञाकर इन्द्र तो महेन्द्रोदय नामा उद्यानविषै केवलीके दर्शनकू गया, अर मेघकेतु सीताके अग्निकुण्ड के ऊपर आय आकाशविषै विमानविषै तिष्ठा। कैसा है विमान? सुमेरुके शिखर समान है शोभा जाकी। वह देव आकाशविषै सूर्य सरीखा देदीप्यमान श्रीरामकी ओर देखै, राम महासुन्दर सब जीवनि के मनकू हरै है।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रन्थ ताकी भाषा वचनिकाविषै सकलभूषणकेवलीके दर्शनकू देवनिका आगमन वर्णन करनेवाला एकसौचारवां पर्व पूर्ण भया ॥ १ २ ॥

अथानन्तर श्रीराम उस अग्निवापिकाकू निरखकरि व्याकुलमन भया विचारै है—अब इस कांताकू कहां देखूंगा? यह गुणनिकी खान, महा लावण्यताकरि युक्त, कांतिकी धरणहारी, शीलरूप वस्त्रकरि मण्डित, मालतीकी माला समान सुगंध, सुकुमार शरीर, अग्निके स्पर्शही सौ भस्म होय जायगी। जो यह राजा जनकके घर न उपजती तो भला था। यह लोकापवाद, अग्निविषै मरण तो न होता। इस बिना मुझ क्षणमात्र भी सुख नाहीं। इस सहित वनविषै वास भला अर या बिना स्वर्गका वास भी भला नाहीं। यह शीलवती परम श्राविका है, इसे मरणका भय नाहीं, इहलोक, परलोक, मरण, वेदना, अकस्मात, असहायता, चार यह सप्त भय तिनकर रहित, सम्यकदर्शन इसके दृढ है, यह अग्निविषै प्रवेश करैगी। अर मैं रोकू तो लोकनिविषै लज्जा उपजै। अर यह लोक सब मोहि कह रहे यह

महा सती ह याहि अग्निकुण्डविषै प्रवेश न करावो, सो म न मानो। अर सिद्धार्थ हाथ ऊंचो कर कर पुकारा सो म न मानो, सो वह भी चुप होय रहा। अब कौन मिसकर इसे अग्निकुण्डविषै प्रवेश न कराऊं? अथवा जिसक जिस भांति मरण उदय होय ह उसी भांति होय ह, टारा टरे नाहीं। तथापि इसका वियोग मुझसे सहा न जाय। या भांति राम चिंता कर है। अर वापीविषै अग्नि प्रज्ज्वलित भई, समस्त नर नारियोंक आसुवोंक प्रवाह चले, धूमकरि अंधकार होय गया। मानो मेघमाला आकाशविषै फैल गई। आकाश भ्रमर समान श्याम होय गया अथवा कोकिलस्वरूप होय गया। अग्निके धूमकर सूर्य आच्छादित हुवा, मानो सीताका उपसर्ग देख न सक्या सो दयाकर छिप गया। ऐसी अग्नि प्रज्वली जिसकी दूरतक ज्वाला विस्तरी, मानो अनेक सूर्य ऊगे, अथवा आकाशविषै प्रलयकालकी सांझ फूली, जानिये दशो दिशा स्वर्णमयी होय गई ह मानो जगत विजुरीमय होय गया। अथवा सुमेरुके जीतिवेकूं दूजा जंगम सुमेरु और प्रकटा। तब सीता उठी, अत्यंत निश्चलचित्त होय कायोत्सर्गकरि अपने हृदयविषै श्रीऋषभादि तीर्थंकरदेव विराजे ह तिनकी स्तुतिकर, सिद्धनिकूं, साधुनिकूं नमस्कारकरि श्रीमुनिसुव्रतनाथ हरिवंशके तिलक बीसवां तीर्थंकर जिसके तीर्थविषै ये उपजे ह तिनका ध्यानकरि सव प्राणियोंक हितू आचार्य तिनकूं प्रणामकरि, सव जीवनिसूं क्षमाभावकरि जानकी कहती भई मनकरि वचनकरि कायकरि स्वप्नविषै भी राम बिना और पुरुष म न जाना। जो म झूठ कहती हूं तो यह अग्निकी ज्वाला क्षणमात्रविषै मुझे भस्म करियो। जो मेरे पतिव्रता भावविषै अशुद्धता होय राम सिवाय और नर मनसे भी अभिलाषा होय तो हे वैश्वानर! मुझ भस्म करियो। जो म मिथ्यादर्शिनी, पापिनी, व्यभिचारिणी हूं तो इस अग्निसे मेरी देह दाहकूं प्राप्त होव। अर जो म महा सती पतिव्रता अणुव्रतधारिणी श्राविका हूं तो मुझे भस्म न करियो, ऐसा कहकर नमोकार मंत्र जप सीता सती अग्निवापिकामें प्रवेश करती भई। सो याके शीलके प्रभावसे अग्नि थी सो स्फटिक मणि सारिखा निर्मल शीतल जल होय गया। मानो धरतीको भेदकर यह वापिका पातालसें निकसी। जलविषै कमल

फूल रहे है, भमर गु जार कर ह, अग्निकी सामग्री सब विलाय गई, न ई धन, न अगार। जलके झाग उठने लगे, अर अति गोल गम्भीर महा भयकर भमर उठने लगे। जसी मृदगकी ध्वनि होय तस शब्द जलविष होते भए, जसा क्षोभकू प्राप्त भया समुद्र गाज वसा शब्द वापीविषै होता भया। अर जल उछला, पहले गोडो तक आया, बहुरि कमर तक आया, फिर निमिषमात्रविषै छाती तक आया। तब भूमिगोचरी डरे, अर आकाशविषै जे विद्याधर हुते तिनकू भी विकल्प उपजा न जानिए क्या होय? बहुरि वह जल लोगोके कठतक आया तब अति भय उपजा। सिर ऊपर पानी चला तब लोग अति भयकू प्राप्त भए। ऊची भुजाकर वस्त्र अर बालकोको उठाय पुकार करते भए-हे देवि! हे लक्ष्मी! हे सरस्वती! हे कल्याणरूपिणी! हे धमधरधरे! हे मान्य! हे प्राणीदयारूपिणी! हमारी रक्षा करो! हे महा साध्वी! मुनिसमान निमल मनकी धरणहारी! दया करो। हे माता! बचावो, बचावो, प्रसन्न होवो। जब ऐसे वचन विह्वल जो लोक तिनके मुखसे निकसे तब माताकी दयासे जल थम्भा, लोक बचे, जलविषै नानाजातिक ठौर ठौर कमल फूले, जल साम्यताकू प्राप्त भया। जे भवर उठे थे सो मिटे, अर भयकर शब्द मिटे। वह जल जो उछला था मानो वापीरूप वधू अपने तरगरूप हस्तोंकर माताके चरणयुगल स्पशती हुती। कसे ह चरणयुगल? कमलके गभसे हू अति कोमल है, अर नखो की ज्योतिकर देदीप्यमान ह। जलविषै कमल फूले, तिनकी सुगधताकरि भमर गु जार कर हैं सो मानो सगीत कर ह। अर क्रौंच चकवा हस तिनके समूह शब्द कर ह। अति शोभा होय रही ह। अर मणि स्वणके सिवाण बन गए तिनकू जलके तरगोके समूह स्पर्शे ह, अर जिसके तट मरकत मणिकर निर्मापे अति सोहे ह। ८२२

ऐसे सरोवरके मध्य एक सहस्रदलका कमल कोमल, विमल, विस्तीण, प्रफुल्लित, महाशुभ, उसके मध्य देवनिने सिहासन रचा रत्ननिको किरणनिकर मडित, चन्द्रमडल तुल्य निमल। उसमें देवा-गनाओने सीताकू पधराई, अर सेवा करती भई। सो सीता सिहासनविषै तिष्ठी, अति अदभुत है

उदय जाका, शची तुल्य सोहती भई। अनेक देव चरणनिके तल पुष्पांजली चढाय धन्य धन्य शब्द कहते भए। आकाशविषै कल्पवृक्षनिके पुष्पनिकी वृष्टि करते भए। अर नानाप्रकारके दुन्दुभी बाजे तिनके शब्दकर सब दिशा शब्दरूप होती भई। गुंजजातिके वादित्र महामधुर गुंजार करते भये। अर मृदंग बाजते भए। ढोल दमामा बाजे, नांदी जातिके वादित्र बाजे, अर कोलाहल जातिके वादित्र बाजे अर तुरही करनाल अनेक वादित्र बाजे, शंखके समूह शब्द करते भए। अर बीणा बाजा, ताल, झांझ, मंजीर झालरी इत्यादि अनेक वादित्र बाजे। विद्याधरनिके समूह नाचते भए अर देवनिके यह शब्द भए—श्रीमत जनक राजाकी पुत्री, परम उदयकी धरणहारी, श्रीमत रामकी राणी अत्यन्त जयवंत होवे, अहो निर्मल शील जाका आश्चर्यकारी। ऐसे शब्द सब दिशाविषै देवनिके होते भये। तब दोनों पुत्र लवण अंकुश अकृत्रिम है मातासूं हित जिनका, सो जल तिरकर अतिहर्षके भरे माताके समीप गए। दोनों पुत्र दोनो तरफ जाय ठाढे भए। माताकूं नमस्कार किया। सो माताने दोनोंके शिर हाथ धरा। रामचंद्र मिथिलापुरीके राजाकी पुत्री मैथिली कहिए सीता उसे कमलवासिनी लक्ष्मी समान देख महा अनुरागके भरे समीप गए। कैसी है सीता? मानो स्वर्णकी मूर्ति अग्निविषै शुद्ध भई है, अति उत्तम ज्योतिके समूहकर मंडित है शरीर जाका। राम कहै है हे देवि! कल्याणरूपिणी, उत्तम जीवनिकर पूज्य, महा अद्भुत चेष्टाकी धरणहारी, शरदकी पूर्णमासीके चन्द्रमा समान है मुख जाका, ऐसी तुम सो हमपर प्रसन्न होहु। अब मैं कभी ऐसा दोष न करूंगा जिसमें तुमकूं दुःख होय। हे शीलरूपिणी! मेरा अपराध क्षमा करहु। मेरे आठ हजार स्त्री हैं तिनकी सिरताज तुम हो, मोकूं आज्ञा करहु सो करूं। हे महासती! मैं लोकापवादके भयसे अज्ञानी होयकरि तुमकूं कष्ट उपजाया सो क्षमा करहु। अर हे प्रिये! पृथ्वीविषै मो सहित यथेष्ट विहार करहु। यह पृथ्वी अनेक वन उपवन गिरियों कर मंडित है, देव विद्याधरनिकर संयुक्त है, समस्त जगतकर आदरसों पूजी थकी मोसहित लोकविषै स्वर्ग समान भोग भोगि, उगते सूर्यसमान यह पुष्पकविमान ताविषै मेरे सहित आरूढ होय, सुमेरु

पवतके वनविष जिनमन्दिर ह तिनका दशनकर अर जिनजिन स्थाननिविष तेरी इच्छा होय वहा क्रीडा कर। हे काते ! तू जो कह सो ही म करू, तेरा वचन कदाचित न उलघू, देवागनासमान वह विद्याधरी तिनकर मडित ह बुद्धिवती ! तू ऐश्वयकू भज, जो तेरी अभिलाषा होयगी सो तत्काल सिद्ध होयगी। म विवेकरहित दोषके सागरविष मग्न तेरे समीप आया हू सो साध्वी अब प्रसन्न होहु।

अथानन्तर जानकी बोली—हे राजन ! तिहारा कुछ दोष नाहीं, अर लोकनिका दोष नाहीं। मेरे पूर्वोपार्जित अशुभ कमके उदय से यह दुःख भया, मेरा काहूपर कोप नाहीं। तुम क्यो विषादकू प्राप्त भए ? हे बलदेव ! तिहारे प्रसादसे स्वग समान भोग भोगे। अब यह इच्छा ह एसा उपाय करू जिस कर स्त्रीलिगका अभाव होय। यह महा क्षुद्र विनश्वर भयकर इन्द्रियनिके भोग मूढजनोकरि सेव्य तिनकर कहा प्रयोजन ? म अनन्त जन्म चौरासी लक्ष योनिविष खेद पाया। अब समस्त दुःखके निवृत्तिके अथ जिनेश्वरी दीक्षा धरूगी। एसा कहकर नवीन अशोक वक्षक पल्लव समान अपने जे कर तिनकर सिरके केश उपाड रामके समीप डारे। सो इन्द्रनीलमणि समान श्याम, सचिक्कण, पातरे, सुगन्ध, वक्र लबायमान, महामदु महा मनोहर, ऐसे केशनिकू देख राम मोहित होय मूर्छा खाय धरतीविष पडे। सो जौलग इनकू सचेत कर तौलग सीता पथ्वीमती आर्यिकाप जायकर दीक्षा धरती भई। एक वस्त्रमात्र ह परिग्रह जाके। सब परिग्रह तजकर आर्यिकाके व्रत धरे। महा पवित्रता परम वराग्यकर दीक्षा धरती भई। व्रतकर शोभायमान जगतके वदिवे योग्य होती भई। अर राम अचत भए थे सो मुक्ताफल अर मलयागिरि चन्दनके छाटिवेकरि तथा ताडके बीजनोकी पवनकरि सचत भए। तब दशो दिशाकी ओर देख तो सीताकू न देखकरि चित्त शून्य होय गया। शोककरि कषाय करि युक्त महा गजराजपर चढे, सीताकी ओर चाले। सिरपर छत्र फिर ह, चमर ढुर ह, जसे देवनिकर मडित इन्द्र चाल तस नरेन्द्रनिकरि युक्त राम चाले। कमलसारिखे ह नेत्र जिनके, कषायके वचन कहते भए अपने प्यारे जनका मरण भला पर तु विरह भला नाहीं। देवनिने सीताका प्रातिहाय

किया सो भला किया पर उसने हमकू तजना विचारा सो भला न किया। अब मेरी राणी जो यह देव न दें तो मेरे अर देवनिके युद्ध होयगा। यह देव न्यायवान होयकरि मेरी स्त्रीकू हरै ऐसे अविचार के वचन कहे। लक्ष्मण समभाव सो समाधान न भया। अर क्रोध संयुक्त श्रीरामचन्द्र सकलभूषण केवलीकी गंधकुटीकू चाले। सो दूरसे सकलभूषण केवलीकी गंधकुटी देखी। केवली महाधीर सिंहा-
 सन पर विराजमान, अनेक सूर्यकी दीप्ति धरें केवली ऋद्धिकर युक्त, पापोंके भस्म करिवेकू साक्षात
 अग्निरूप जैसे मेघपटल रहित सूर्यका बिंब सोहै तैसे कर्मपटलरहित केवलज्ञानके तेजकर परम ज्योति-
 रूप भासै हैं। इन्द्रादिक समस्त देव सेवा करै हैं, दिव्यध्वनि खिरै है धर्मका उपदेश होय है। सो श्रीराम गंधकुटीकू देखकरि शांतचित्त होय हाथीतैं उतरि प्रभुके समीप गए। तीन प्रदक्षिणा देय हाथ जोड नमस्कार किया। केवलीके शरीरकी ज्योतिकी छटा राम पर आय पडी सो अति प्रकाशरूप होय गए। भाव सहित नमस्कारकरि मनुष्यनिकी सभाविषै बैठे। अर चतुरनिकायके देवनिकी सभा नानाप्रकारके आभूषण पहिरे ऐसी भासै मानो केवलीरूप जे रवि तिनकी किरण ही हैं। अर राजानि-के राजा श्रीरामचन्द्र केवलीके निकट ऐसे सोहै मानो सुमेरुके शिखरके निकट कल्पवृक्ष ही है। अर लक्ष्मण नरेन्द्र मुकुट कुण्डल हारादिकर शोभित ऐसे सोहैं मानो बिजुरीसहित श्याम घटा ही है। अर शत्रुघ्न शत्रुनिके जीतनहारे ऐसे सोहैं मानो दूसरे कुवेर ही हैं। अर लव अंकुश दोऊ वीर, महा धीर, महासुन्दर, गुण सौभाग्यके स्थानक, चांद सूर्यसे सोहै। अर सीता आर्यिका आभूषणादि रहित एक वस्त्रमात्र परिग्रह ऐसी सोहै मानो सूर्यकी मूर्ति शांतताकू प्राप्त भई है। मनुष्य अर देव सब ही विनय
संयुक्त भूमिविषै बैठे। धर्म श्रवणकी है अभिलाषा जिनके। तहां एक अभयघोष नामा मुनि सब मुनिन विषै श्रेष्ठ, संदेहरूप आतापकी शांतिके अर्थ केवलीकू पूछते भए—हे सर्वोत्कृष्ट सर्वज्ञदेव! ज्ञानरूप शुद्ध आत्मतत्वका स्वरूप नीके जाननेसे मुनिनिकू केवलबोध होय उसका निर्णय करो। तब सकल-भूषण केवली, योगीश्वरोंके ईश्वर, कर्मोंके क्षयका कारण तत्वका उपदेश दिव्यध्वनिकर कहते भए।

हे श्रेणिक ! केवलीने जो उपदेश दिया ताका रहस्य मैं तुमकू कहू हू । जैसे समुद्रमेंसे एक बूंद कोई लेय तैसे केवलीकी वाणी प्रति प्रवाह उसके अनुसार सक्षेप व्याख्यान करू हू सो सुनो।

हो भव्य जीव हो ! आत्मतत्व जो अपना स्वरूप सो सम्यकदर्शन ज्ञान आनन्दरूप, अर अमूर्तीक, चिद्रूप, लोकप्रमाण, असख्य प्रदेशी, अतींद्रिय अखड अव्याबाध निराकार निमल निरंजन, परवस्तुसे रहित, निज गुण पर्याय स्वद्रव्य स्वक्षेत्र स्वकाल स्वभावकर अस्तित्वरूप है, जिसका ज्ञान निकट भव्यकू होय । शरीरादिक परवस्तु असार है, आत्मतत्व सार है सो अध्यात्म विद्याकरि पाइये हैं। वह सबका देखनहारा जाननहारा अनुभवदृष्टिकर देखिये, आत्मज्ञानकरि जानिये । अर जड पदार्थ पुद्गल धम अधम काल आकाश ज्ञेयरूप है, ज्ञाता नाहीं । अर यह लोक अनन्त अलोकाकाशके मध्य अनतवें भागविषे तिष्ठ है । अधोलोक, मध्यलोक, ऊर्ध्वलोक ये तीनलोक । तिनविषै सुमेरु पवतकी जड हजार योजन उसके तले पाताल लोक है । उसविषे सूक्ष्म स्थावर तो सवत्र है, अर बादर स्थावर आधारविषे है । विकलत्रय अर पचेन्द्रिय तिय च नाहीं, मनुष्य नाहीं । खर भाग, पकभागविषै भवन वासी देव तथा व्यतरदेवनिके निवास हैं। तिनके तलें सात नरक है । तिनके नाम—रत्नप्रभा १, शकराप्रभा २, बालका प्रभा ३, पकप्रभा ४, धूमप्रभा ५, तम प्रभा ६, महातम प्रभा ७ । सो सात ही नरककी धरा, महा दुखकी देनहारी, सदा अधकाररूप है । चार नरकनिविषे तो उष्णकी बाधा है अर पाचवें नरकमें ऊपरले तीन भाग उष्ण, अर नीचला चोथा भाग शीत। अर छठा नरक शीत ही है । अर सातवाँ महाशीत । ऊपरले नरकविषे उष्णता है, सो महा विषम । अर नीचले नरकविषै शीत सो अति विषम । नरककी भूमि महा दुस्सह और परम दुगम है, जहा राधि रुधिरका कीच है महा दुग ध है, श्वान, सप मार्जार मनुष्य, खर, तुरग, ऊट इनका मृतक शरीर सड जाय, उसकी दुग धसे असख्यात गुणी दुर्ग ध है । नाना प्रकार दुर्खानिक सव कारण है । अर पवन महा प्रचण्ड विकराल चलै है, जाकरि भयकर शब्द होय रहया है । जे जीव विषय कषाय सयुक्त है, कामी है, क्रोधी हैं, पच इन्द्रियोंके लोलुपी है, जैसें लोह

का गोला जलविषै डूब तैसे नरकविषै डूबै है। जे जीवनिकी हिंसा करैं, मृषावाणी बोलैं, परधन हरैं, परस्त्री सेवें, महा आरम्भी, परिग्रही, ते पापके भारकर नरकविषै पड़े हैं। मनुष्य देह पाय जे निरंतर भोगासक्त भए हैं जिनके जीभ वश नाहीं, मन चंचल, ते प्रचंड कर्मके करणहारे नरक जाय हैं। जे पाप करैं करावैं पापकी अनुमोदना करैं, ते आर्त रौद्रध्यानी नरकके पात्र हैं। वह वज्राग्निके कुण्डमें डारिए हैं, वजाग्निके दाहकर जलते थके पुकारैं हैं। अग्निकुण्डसे छूटें हैं तब वैतरणी नदीकी ओर शीतल जलकी वांछाकर जाय हैं। वहां जल महाक्षार, दुर्गंध, उसके स्पर्शसे ही शरीर गल जाय है। दुखका भाजन वैक्रियिक शरीर ताकर आयुपर्यंत नानाप्रकार दुख भोगवे हैं। पहिले नरक आयु उत्कृष्ट सागर १, दूजे ३, तीजे ७, चौथे १३, पांचवें १७, छठे २२, सातमें ३३, सो पूर्णकर मरैं हैं मारेसे मरैं नाहीं। वैतरणीके दुखसे डरे छायाके अर्थ असिपत्र वनमें जाय हैं, तहां खड्ग बाण बरछी कटारी सभी पत्र असराल पवनकर पड़ें हैं, तिनकर तिनका शरीर विदारा जाय है, पछाड़ खाय भूमिमें पड़ैं हैं, अर तिनकूं कभी कुंभीपाकमें पकावैं हैं, कभी नीचा माथा ऊंचा पगकर लटकावैं हैं, मुद्गरनिसूं मारिए हैं, कुहाड़ोसे काटिवे हैं, करोतनसे विदारिए हैं, घानीमें पेलिए हैं, नानाप्रकारके छेदन भेदन हैं। यह नारकी जीव महा दीन महा तृषाकरि, तृषित, पीनेका पानी मांगे हैं तब तांबादिक गाल प्यावैं हैं। ते कहैं हैं हमको यहां तृषा नाहीं, हमारा पीछा छोड़ दो, तब बलात्कार तिनकूं पछाड़ सडासियोंसे मुख फार मार मार प्यावैं हैं। कंठ हृदय विदीर्ण होय जाय है, उदर फट जाय है। तीजे नरकतक तो परस्पर ही दुःख है, अर असुरकुमारिनकी प्रेरणासे भी दुःख है। अर चौथेसे लेय सातवें ८२७
तक असुरकुमारिनका गमन नाहीं, परस्पर ही पीड़ा उपजावैं हैं। नरकविषै नीचलेसे नीचलेमें, बहुता दुख है। सातवां नरक सबनिमें महा दुखरूप है। नारकियोंकूं पहिला भव याद आवै है, अर दूसरे नारकी तथा तीजे लग असुरकुमार पूर्वलेकर्म याद करावैं हैं। तुम भले गुरुनिके वचन उलंघ कुगुरुकुशास्त्रके बलकर मांसकूं निर्दोष कहते हुते, नानाप्रकारके मांसकर, अर मधुकर, अर मदिराकरि कुदेवनि

पद्म
पुराण
८२८

का आराधन करते हुते, सो मासके दोषतें नरकविषै पडे हो। ऐसा कहकरि इनहीका शरीर काट काट इनके मुखविषै देय है। अर लोहेके तथा ताम्बेके गोला बलते पछाड पछाड सडासियोसे मुख फाड फाड छातीपर पाव देय देय तिनके मुखविषै घाल है। अर मुदगरोसे मार है। अर मद्यपायीकू मार मार ताता ताबा शीशा प्याव है। अर परदारारत पापिनकू वज्राग्निकर तप्तायमान लोहेकी जे पूतली तिनसू लिपटाव है। अर जे परदारारत फूलनिके सेज सते है तिनकू सूलनिके सेज ऊपर सुवावें है। अर स्वप्नकी माया समान असार जो राज्य उसे पायकर जे गर्वें है, अनीति कर है, तिनकू लोहेके कीलोपर बठाय मुदगरोसे मार है,सो महा विलाप कर है। इत्यादि पापी जीवनिकू नरकके दुख होय है। सो कहा लग कहे। एक निमिषमात्र भी नरकमें विश्राम नाहीं। आयुपर्यंत तिलमात्र आहार नाहीं, अर बूंदमात्र जलपान नाहीं, केवल मारहीका आहार है।

तातें यह दुस्सह दुःख अधर्मके फल जान अधर्मकू तजहु। ते अधर्म मधुमांसादिक अभक्ष्य भक्षण,अन्याय वचन, दुराचार, रात्रि आहार, वेश्यासेवन, परदारागमन, स्वामिद्रोह, मित्रद्रोह, विश्वासघात, कृतघ्नता लपटता, ग्रामदाह वनदाह, परधनहरण, अमार्गसेवन परनिंदा, परद्रोह, प्राणघात, बहुआरम्भ, बहु-परिग्रह, निर्दयता, खोटी लेश्या रौद्रध्यान, मृषावाद, कृपणता, कठोरता, दुर्जनता, मायाचार, निर्माल्यका अंगीकार माता पिता गुरुओंकी अवज्ञा, बाल वृद्ध स्त्री दीन अनाथनिका पीडन इत्यादि दुष्ट कर्म नरकके कारण है। वे तज शांतभाव धर जिनशासनकू सेवहु, जाकर कल्याण होय। जीव छै कायके है—पृथ्वीकाय, अप (जल) काय, तेज (अग्नि) काय, वायुकाय, वनस्पतिकाय, त्रसकाय तिनकी दया पालहु। अर जीव पुद्गल धर्म अधर्म आकाश काल छह द्रव्य है, अर सात तत्व, नव पदार्थ, पंचास्ति-काय तिनकी श्रद्धा करहु। अर चतुर्दश गुणस्थानस्वरूप अर सप्तभंगी वाणीका स्वरूप भली भांति केवलीकी आज्ञा प्रमाण उरविषै धारो। स्यात् अस्ति, स्यान्नास्ति,स्यातअस्तिनास्ति, स्यादवक्तव्य, स्यात् अस्ति अवक्तव्य, स्यान्नास्ति अवक्तव्य, स्यात अस्तिनास्ति अवक्तव्य, ये सप्तभंग कहे। अर प्रमाण ८२८

कहिए वस्तुका सर्वांग कथन, अर नय कहिए वस्तु का एकअग कथन, अर निक्षेप कहिए नाम स्थापना द्रव्य भाव ये चार, अर जीवनिविष एकेंद्रीके दोय भेद सूक्ष्म बादर, अर पचेंद्रीके दोय भेद सैनी असैनी- अर बेइन्द्री तेइन्द्री चौइन्द्री ये सात भेद जीवोके ह, सो पर्याप्त अपर्याप्तकर चौदह भेद जीवसमास होय है। अर जीवक दोय भेद एक ससारी एक सिद्ध। जिसमें ससारीके दोय भेद—एक भव्य दूसरा अभव्य। जो मुक्ति होने योग्य सो भव्य, अर मुक्ति न होने योग्य सो अभव्य। अर जीवका निज- लक्षण उपयोग ह ताके दोय भेद, एक ज्ञान एक दशन। ज्ञान समस्त पदाथकू जान, दशन समस्त पदाथकू देख। सो ज्ञानके आठ भेद मति, श्रुति, अवधि, मन पयय, कवल, कुमति, कुश्रुत, कुअवधि, अर दशनके चार भेद—चक्षु, अचक्षु, अवधि, केवल। अर जिनक एक स्पशन इन्द्री होय सो स्थावर कहिये, तिनके भेद पाच—पथ्वी अप तेज वायु वनस्पति। अर त्रसके भेद चार—वेइन्द्री, तेइन्द्री, चौइन्द्री, पचन्द्री। जिनके स्पश अर रसना वे द्वइन्द्री, जिनके स्पश रसना नासिका सो तेइन्द्री जिनके स्पश रसना नासिका चक्षु वे चौइन्द्री, जिनके स्पश रसना नासिका चक्ष श्रोत्र वे पचेन्द्री। चौइन्द्री तक तो सब सम्मूछन अर असनी ह, अर पचेन्द्रीविष कई सम्मूछन, कई गभज। तिनविष कई सनी कई असनी। जिनके मन वे सनी, अर जिनके मन नाहीं वे असनी। अर जे गभसे उपजे वे गभज अर जे गभविना उपजे स्वत स्वभाव उपजै वे सम्मूछन। गभजके भेद तीन—जरायुज अडज पोतज। जे जराकर मडित गभते निकसे मनुष्य घोटकादिक वे जरायुज, अर जे बिना जेरके सिहादिक सो पोतज, अर जे अडावोसे उपजे पक्षी आदिक वे अडज। अर देव नारकियोंका उपपाद जन्म ह, माता पिताके सयोग विनाही पण्य पापके उदयसे उपज ह। देव तो उत्पादकशय्याविष उपज है, अर नारकी बिलोमें उपज ह। देवयोनि पण्यके उदयसे है अर नारकयोनि पापके उदयसे ह। अर मनुष्य जन्म पण्य पापकी मिश्रतासे ह, अर तिय च गति मायाचारके योगसें ह। देव नारकी मनुष्य इन बिना सब तिय च जानने। जीवोकी चौरासी लाख योनियें हैं, उनके भेद सुनो—पृथ्वीकाय, जलकाय, अग्निकाय, वायुकाय, नित्य निगोद, इतरनिगोद वे तो सात सात

लाख योनि हैं, सो बयालीस लाख योनि भई । अर प्रत्येक बनस्पति दस लाख ये बावन लाख भेद स्थावरके भये । अर बइन्द्री, तेइन्द्री चौइन्द्री ये दोय दोय लाख योनि, उसके छ लाख योनि भेद विकलत्रयके भए, अर पचेन्द्री तिर्यचके भेद चार लाख योनियें, सब तिर्यच योनिके बासठ लाख भेद भए, अर देवयोनिके भेद चार लाख, नरकयोनिके भेद चार लाख, अर मनुष्य योनिके चौदह लाख । ये सब चौरासी लाख योनि महा दुखरूप हैं । इनसे रहित सिद्धपद ही अविनाशी सुखरूप है । ससारी जीव सब ही देहधारी ह, अर सिद्ध परमेष्ठी देहरहित निराकार हैं । शरीरके भेद पाच–औदारिक वक्रियक, आहारक, तजस, कार्माण । तिनविषै तजस कार्माण तो अनादिकालसे सब जीवनकू लगि रहे ह तिनका अतकरि महामुनि सिद्ध पद पाव हैं । औदारिकसे असख्यात गुणी अधिक वगणा वक्रियकके ह अर वक्रियकत असख्यातगुणी आहारकके है, अर आहारकत अनतगुणी तजसकी ह, अर तेजसत अनन्त-गुणी कार्माण ह । जा समय ससारी जीव देहकू तजकर दूसरी गतिकू जाय ह ता समय अनाहार कहिए । जितनी देर एक गतिसे दूसरी गतिविष जाते ह जीवको लग ह उस अवस्थामें जीवकू अना-हारी कहिए । अर जितना वक्त एक गतिसे दूसरी गतिमें जानेमें लगे सो वह एक समय तथा दो समय, अधिकत अधिक तीन समय लग ह । सो ता समय जीवके तैजस अर कार्माण ये दो ही शरीर पाइय है । बगर शरीरके यह जीव सिवा सिद्ध अवस्थाके अर काहू अवस्थामें काहू समय नाहीं होता । या जीवके हर वक्त अर हर गतिमें जन्मते मरते साथ ही रहते ह । जा समय यह जीव घातिया अघातिया दोऊ प्रकारके कम क्षय करके सिद्ध अवस्थाकू जाता ह ता समय तजस अर कार्माणका क्षय होता है । अर ८३० जीवनिके शरीरके परमाणुनिकी सूक्ष्मता या प्रकार ह–औदारिकत वक्रियक सूक्ष्म, अर वैक्रियकतै आहारक सूक्ष्म, आहारकत तजस सूक्ष्म, अर तैजसत कार्माण सूक्ष्म ह । सो मनुष्य अर तिर्यचनिके तो औदारिक शरीर ह, अर देव नारकिनिके वक्रियक ह । अर आहारक ऋद्धिधारी मुनिनिके सदेह निवारिवेके अथ दसमें द्वारसे निकसे सो केवलीके निकट जाय सदेह निवारि पीछा आय दसमें द्वार

में प्रवेश करै है। ये पाच प्रकारके शरीर कहे, तिनमे एक काल एक जीवके कबहू चार शरीर हू पाइए ताका भेद सुनहु–तीन तो सबही जीवनिके पाईए–नर अर तिर्यचके औदारिक, अर देव नारकिनिके वैक्रियक, अर तैजस कार्माण सबके है। तिनमे कार्माण तो दृष्टिगोचर नाहीं, अर तैजस काहू मुनि के प्रकट होय है। ताके भेद दोय है–एक शुभ तैजस एक अशुभ तैजस। सो शुभ तैजस तो लोकनि-कू दुखी देख दाहिनी भुजातै निकसि लोकनिका दुख निवारै है, अर अशुभ तैजस क्रोधके योगकर वामभुजातै निकसि प्रजाकू भस्म करै है, अर मुनिकू हू भस्म करै है। अर काहू मुनिके विक्रियाऋद्धि प्रकट होय है तब शरीरकू सूक्ष्म तथा स्थूल करै है सो मुनिके चार शरीर हू काहू समय पाइए एक काल पाचो शरीर काहू जीवके न होय।

अथानन्तर मध्यलोकमें जम्बूद्वीप आदि असख्यात द्वीप, अर लवण समुद्र आदि असख्यात समुद्र है। शुभ हैं नाम जिनके सो द्विगुण द्विगुण विस्तारकू लिए वलयाकार तिष्ठै हैं। सबके मध्य जम्बू-द्वीप है, ताके मध्य सुमेरुपर्वत तिष्ठै है। सो लाख योजन ऊचा है। अर जे द्वीप समुद्र कहे तिनमें जम्बू-द्वीप लाख योजनके विस्तार है, अर प्रदक्षिणा तिगुणीसे कछु इक अधिक है। जम्बूद्वीपविषै देवारण्य अर भूतारण्य दो बन हैं। तिनविषै देवनिके निवास है। अर षट कुलाचल हैं, पूर्व समुद्रसू पश्चिमके समुद्रतक लाबे पडे हैं। तिनके नाम हिमवान, महाहिमवान, निषध, नील, रुक्मी, शिखरी। समुद्रके जल का है स्पर्श जिनके, तिनमें ह्रद, अर ह्रदनिमे कमल, तिनमे षटकुमारिका देवी है–श्री ह्री धृति कीर्ति बुद्धि लक्ष्मी। अर जम्बूद्वीपमे सात क्षेत्र है–भरत, हैमवत, हरि, विदेह रम्यक, हैरण्यवत, ऐरावत। ८३१
अर षटकुलाचलनिसू गगादिक चौदह नदी निकसी है, आदिकेसे तीन अर अतकसे तीन अर मध्यके चारोसे दोय २ यह चौदह है। अर दूजा द्वीप धातकीखण्ड सो लवणसमुद्रतै दूना है। ताविषै दोय सुमेरुपर्वत है, अर बारह कुलाचल अर चौदह क्षेत्र। यहा एक भरत वहा दोय, यहा एक हिमवान वहा दोय, याही भाति सब दूजे जानने। अर तीजा द्वीप पुष्कर ताके अर्ध भागविषै मानुषोत्तर पर्वत है, सो अढाई द्वीप ही

विषै मनुष्य पाईये ह आगे नाहीं। आधे पुष्करविष दोय दोय मेरु, बारह कुलाचल चौदह क्षेत्र, धातकी खड द्वीप समान तहा जानने। अढाई द्वीपविष पाच सुमेरु, तीस कुलाचल, पाच भरत, पाच ऐरावत, पाच महाविदेह, तिनमे एक सौ साठ विजय, समस्त कमभूमिके क्षेत्र एक सौ सत्तर, एक एक क्षेत्रमे छह छह खण्ड, तिनमे पाच पाच म्लेच्छखण्ड, एक एक आयखण्ड। आयखण्डमे धमकी प्रवत्ति, विदेहक्षेत्र अर भरत ऐरावत इनविष कर्मभूमि, तिनमे विदेहमे तो शाश्वती कर्मभूमि अर भरत ऐरावतमें अठारा कोडाकोडी सागर भोगभूमि, दोय दोय कोडाकोडी सागर कर्मभूमि। अर देवकुरु उत्तर कुरु यह शाश्वती उत्कष्ट भोगभूमि। तिनमें तीन तीन पल्य की आयु, अर तीन तीन कोसकी काय, अर तीन तीन दिन पीछे अल्प आहार। सो पांच मेरु सम्बन्धी पाच देवकुरु, पाच उत्तरकुरु, अर हरि, अर रम्यक, यह मध्य भोगभूमि तिनविष दोय पल्यकी आयु अर दोय कोसकी काय, दो दिन गए आहार। या भाति पाच मेरु सम्बन्धी पाच हरि, पाच रम्यक यह दश मध्य भोगभूमि। अर हमवत हरण्यवत यह जघन्य भोगभूमि, तिनमे एक पल्यकी आयु अर एक कोसकी काय, एक दिनके आतरे आहार, सो पाच मेरु सबधी पाच हमवत, पाच हरण्यत, जघन्य भोगभूमि दश या भाति तीस भोगभूमि अढाई द्वीपमें जाननी। अर पच महा विदेह, पच भरत, पच ऐरावत यह पन्द्रह कर्मभूमि ह तिनमे मोक्षमाग प्रवरत ह।

अढाईद्वीपके आगे मानुषोत्तरकेपर नाहीं, देव अर तियच ही है। तिनविषै जलचर तो तीन ही समुद्रविष ह—लवणोदधि, कालोदधि तथा अतका स्वयभूरमण। इन तीन बिना और समुद्रनिविषै जलचर नाहीं। अर विकलत्रय जीव अढाईद्वीपविष ह। अर स्वयभूरमण द्वीप ताके अध भागविषै नागेन्द्र पवत ह। ताके परे आधे स्वयभूरमण द्वीपविष अर सारे स्वयरभूमण समुद्रविषै विकलत्रय ह। मानुषोत्तरसू लेय नागेन्द्र पवत पय त जघन्य भोग भूमिकी रीति ह। वहा तिय चनिकी एक पल्यकी आयु ह। अर सूक्ष्म स्थावर तो सवत्र तीन लोकमें ह अर बादर स्थावर आधारविषै सवत्र नाहीं।

८३२

एकराजूविषे समस्त मध्य लोक है। मध्य लोकमें अष्टप्रकार व्यंतर अर दशप्रकार भवनपतिनिके निवास है। अर ऊपर ज्योतिषी देवनिके विमान है। तिनके पाच भेद–चन्द्रमा सूर्य ग्रह तारा नक्षत्र, सो अढाई द्वीपविषे ज्योतिषी चर हू है अर स्थिर हू है। आगे असख्यात द्वीपनिमे ज्योतिषी देवनिके विमान स्थिर ही है। बहुरि सुमेरुके ऊपर स्वर्गलोक है। तहाँ सोलह स्वर्ग तिनके नाम, सौधर्म, ईशान, सनत्कुमार, माहेन्द्र, ब्रह्म, ब्रह्मोत्तर, लातव, कापिष्ठ, शुक्र, महाशुक्र, शतार, सहस्रार, आनत, प्राणत, आरण, अच्युत, यह सोलह स्वर्ग, तिनमे कल्पवासी देव देवी है। अर सोलह स्वर्गनिके ऊपर नवग्रीव, तिनके ऊपर नव अनुत्तर, तिनके ऊपर पचोत्तर विजय वैजयत जयत अपराजित सर्वार्थसिद्धि। यह अहमिंद्रनिके स्थानक है। जहा देवागना नाहीं, अर स्वामी सेवक नाहीं, और ठौर गमन नाहीं। अर पाचवा स्वर्ग ब्रह्म ताके अन्तमे लोकातिक देव है, तिनके देवागना नाहीं, वे देवर्षि है। भगवानके तपकल्याणमे ही आवे। ऊर्ध्वलोकमे देव ही है अथवा पच स्थावर ही है। हे श्रेणिक ! यह तीन लोकका व्याख्यान जो केवलीने कह्या ताका सक्षेपरूप जानना। विस्तारसू त्रिलोकसारसू जानना। तीनलोकके शिखर सिद्धलोक है। ता समान देदीप्यमान और क्षेत्र नाहीं, जहा कर्मबन्धनसे रहित अनन्त सिद्ध विराजे है, मानो वह मोक्ष स्थानक तीन भुवनका उज्ज्वल छत्र ही है। वह मोक्ष स्थानक अष्टमी धरा है। ये अष्ट पृथ्वीके नाम, नारक १, भवनवासी २, मानुष ३, ज्योतिषी ४, स्वर्गवासी ५, ग्रीव, ६, अर अनुत्तर विमान ७, मोक्ष ८, ये आठ पृथ्वी है सो शुद्धोपयोगके प्रसादकरि जे सिद्ध भए हैं तिनकी महिमा कही न जाय। तिनका मरण नाहीं। बहुरि जन्म नाहीं, महा सुखरूप है, अनेक शक्तिके धारक समस्त दुखरहित महा निश्चल सबके ज्ञाता दृष्टा है। ८३३

यह कथन सुन रामचन्द्र सकलभूषण केवलीसू पूछते भए–प्रभो ! अष्टकर्मरहित अष्टगुण आदि अनन्तगुण सहित सिद्ध परमेष्ठी ससारके भावनसे रहित है सो दुख तो उनको काहू प्रकारका नाहीं अर सुख कैसा ? तब केवली दिव्यध्वनिकर कहते भए–इस तीन लोकविषे सुख नाहीं, दुख ही है,

अज्ञानसे वृथा सुख मान रहे हैं। संसारका इन्द्रियजनित सुख बाधासंयुक्त क्षणभंगुर है। अष्टकर्म करि बंधे, सदा पराधीन ये जबतक जीव तिनके तुच्छ मात्राहू सुख नाहीं। जैसे स्वर्णका पिंड लोह-करि संयुक्त होय तब स्वर्णकी कांति दब जाय है तैसे जीवकी शक्ति कर्मनिकरि दब रही है सो सुख-रूप दुख ही भोगवे है। यह प्राणी जन्म मरण रोग शोक जे अनन्त उपाधी तिनकरि महा पीडित है।

तिनका अर मनका दुख मनुष्य तिर्यंच नारकीनिकू है। अर देवनिकू दुख मनहीका है सो मनका महा दुख है ताकर पीडित है। या संसारविषै सुख काहेका? ये इन्द्रियजनित विषयके सुख इन्द्र धरणींद्र चक्रवर्तीनिकू शहदकी लपेटी खड्गकी धारा समान है, अर विषमिश्रित अन्न समान है। अर सिद्धनि-के मन इन्द्री नाहीं, शरीर नाहीं, केवल स्वाभाविक अविनाशी उत्कृष्ट निराबाध निरुपम सुख है। ताकी उपमा नाहीं। जैसे निद्रारहित पुरुषकू सोयवेकरि कहा अर निरोगनिकू औषधिकर कहा? तैसे सर्वज्ञ वीतराग कृतार्थ सिद्ध भगवान तिनकू इन्द्रीनिके विषयनिकर कहा? दीपककू सूर्य चन्द्रादिक कर कहा? जे निर्भय, जिनके शत्रु नाहीं, तिनके आयुधनिकरि कहा? जे सबके अंतर्यामी सबकू देखें, जानें, जिनके सकल अर्थ सिद्ध भए, कछु करना नाहीं, वांछा काहू वस्तुकी नाहीं, ते सुखके सागर हैं। इच्छा मनसू होय है, सो मन नाहीं, परम आनन्द स्वरूप क्षुधा तृषादि बाधारहित हैं। तीर्थंकर देव जा सुखकी इच्छा करें ताकी महिमा कहांलग कहिए। अहमिंद्र इन्द्र नागेन्द्र नरेन्द्र चक्रवर्त्यादिक निरंतर ताही पदका ध्यान करें हैं। अर लोकांतिक देव ताही सुखके अभिलाषी हैं ताकी उपमा कहांलग करें। यद्यपि सिद्धपदका सुख उपमारहित केवली गम्य है, तथापि प्रतिबोधके अर्थ तुमकू सिद्धनिके सुख का कछु इक वर्णन करें हैं।

अतीत अनागत वर्तमान तीन कालके तीर्थंकर चक्रवर्त्यादिक सर्व उत्कृष्ट भूमिके मनुष्यनिका सुख, अर तीन कालका भोगभूमिका सुख, अर इन्द्र अहमिंद्र आदि समस्त देवनिका सुख, भूत भवि-ष्यत वर्तमानकालका सकल एकत्र करिए, अर ताहि अनन्त गुणा फलाइए, सो सिद्धनिके एक समय

के सुख तुल्य नाहीं। काहेसे ? जो सिद्धनिका सुख निराकुल निर्मल अव्याबाध अखण्ड अतींद्रिय अविनाशी है। अर देव मनुष्यनिका सुख उपाधिसयुक्त, बाधासहित, विकलपरूप व्याकुलताकरि भरचा विनाशीक है। अर एक दृष्टांत और सुनहु—मनुष्यनित राजा सुखी, राजानित चक्रवर्ती सुखी, अर चक्रवर्ती नित व्यंतरदेव सुखी, अर व्यंतरनित ज्योतिषी देव सुखी, तिनमें भवनवासी अधिक सुखी, अर भवन वासीनित कल्पवासी सुखी, अर कल्पवासीनित नवग्रीवके सुखी, नवग्रीवतैं नव अनुत्तरके सुखी, अर

तिनत पचोत्तरके सुखी, पचोत्तर सर्वार्थसिद्धि समान और सुखी नाहीं। सो सर्वार्थसिद्धिके अहमिंद्र-नित अनन्तानन्तगुणा सुख सिद्धपदमें है, सुखकी हद्द सिद्धपदका सुख है, अनन्तदर्शन, अनन्तज्ञान, अनन्तसुख, अनन्तवीर्य्य यह आत्माका निज स्वरूप सिद्धनिमें प्रवर्ते है। अर संसारी जीवनिके दर्शन ज्ञान सुख वीर्य कर्मनिके क्षयोपशमसे बाह्य वस्तुके निमित्त थकी विचित्रतालिए अल्परूप प्रवरत है। यह रूपादिक विषय सुख व्याधिरूप विकलपरूप मोहके कारण इनमें सुख नाहीं। जैसे फोडा राध रुधिरकरि भरचा फूले ताहि सुख कहा ? तैसे विकलपरूप फोडा महा व्याकुलतारूप राधका भरचा जिनके है तिनके सुख कहा ? सिद्ध भगवान गतागतरहित समस्त लोकके शिखर विराजे हैं। तिनके सुख समान दूजा सुख नाहीं। जिनके दर्शन ज्ञान लोकालोकक्ू देखैं, जानैं, तिनसमान सूर्य कहा ? सूर्य तो उदय अस्तकू धरै है सकल प्रकाशक नाहीं। वह भगवान सिद्ध परमेष्ठी हथलीविषै आंवलेकी नाईं सकल वस्तुकू देखै जानै। छद्मस्थ पुरुषका ज्ञान उस समान नाहीं। यद्यपि अवधिज्ञान महा पर्यय ज्ञानी मुनि अविभागी परमाणु पर्यन्त देखै है, अर जीवनिके असंख्यात जन्म जानै है तथापि अरूपी पदार्थनिकू न जानै हैं अर अनन्तकालकी न जानै, केवली ही जानै। केवलज्ञान केवलदर्शनकरि युक्त तिन समान और नाहीं। सिद्धनिके ज्ञान अनन्त, दर्शन अनन्त अर संसारी जीवनिके अल्पज्ञान अल्प दर्शन, सिद्धनिके अनन्त सुख अनन्त वीर्य अर संसारनिके अल्पसुख अल्पवीर्य। यह निश्चय जानो। सिद्धनिके सुखकी महिमा केवलज्ञानी ही जानै, अर चार ज्ञानके धारकहू पूर्ण न जानै। यह सिद्धपद

अभव्योकू अप्राप्य है। इस पदकू निकट भव्य ही पावै, अभव्य अनन्त कालहू काय क्लेशकरि अनेक यत्न करै तौहू न पावै। अनादि कालकी लगी जो अविद्यारूप स्त्री ताका विरह अभव्यनिके न होय। सदा विद्याकू लिये भववनविषै शयन करै। अर मुक्तिरूप स्त्रीके मिलापकी वाछाविषै तत्पर जे भव्य जीव ते कईएक दिन ससारविषै रहै है, सो ससारमें राजी नाहीं, तपविषै तिष्ठते मोक्ष हीके अभिलाषी है। जिनविषै सिद्ध होनेकी शक्ति नाहीं उन्हें अभव्य कहिये। अर जे सिद्ध होनहार हैं उन्है भव्य कहिए। केवली कहै है हे रघुनन्दन! जिनशासन बिना और कोई मोक्षका उपाय नाहीं। बिना सम्यक्त कर्मनिका क्षय न होय। अज्ञानी जीव कोटि भवविषै जे कर्म न खिपाय सकै सो ज्ञानी तीन गुप्तिकू धरे एक मुहूर्तविषै खिपावै। सिद्ध भगवान परमात्मा प्रसिद्ध है सब जगतके लोग उनकू जानै है कि वे भगवान है। केवली बिना उनकू कोई प्रत्यक्ष देख न जान सकै। केवलज्ञानी ही सिद्धनिकू देखें जानै हैं। मिथ्यात्वका मार्ग ससारका कारण या जीवने अनन्त भवविषै धारचा। तुम निकटभव्य हो, परमार्थकी प्राप्तिके अर्थ जिनशासनकी अखण्ड श्रद्धा धारहु।

हे श्रेणिक! यह वचन सकलभूषण केवलीके सुनि श्रीरामचन्द्र प्रणामकरि कहते भये—हे नाथ! या ससार समुद्रतै मोहि तारहु, हे भगवन! यह प्राणी कौन उपायकरि ससारके वासतै छूटै है। तब केवली भगवान कहते भए—हे राजन! सम्यकदर्शन ज्ञान चारित्र मोक्षका मार्ग है, जिनशासनविषै यह कहा है। तत्त्वका जो श्रद्धान ताहि सम्यग्दर्शन कहिए, अनन्तगुणपर्यायरूप है ताके दोय भेद है—एक चेतन दूसरा अचेतन। सो जीव चेतन है, अर सब अचेतन है। अर दर्शन दोय प्रकारतैं उपजै हैं एक निसर्ग एक अधिगम। जो स्वतः स्वभाव उपजै सो निसर्गज, अर गुरुके उपदेशतै उपजै सो अधिगमज। सम्यकदृष्टि जीव जिनधर्मविषै रत है। सम्यक्त्वके अतीचार पाच है—शका कहिये जिनधर्मविषै सदेह, अर काक्षा कहिये भोगनिकी अभिलाषा, अर विचिकित्सा कहिए महामुनिकू देख ग्लानि करनी, अर अन्यदृष्टि प्रशसा कहिये मिथ्यादृष्टिकू मनविषै भला जानना, अर सस्तव कहिये वचनकरि मिथ्या

८३६

दृष्टिको स्तुति करना, इनकरि सम्यक्तविप दूषण उपज ह । अर मत्री प्रमोद करुणा माध्यस्थ ये चार भावना अथवा अनित्यादि बारह भावना, अथवा प्रशम सवेग अनुकम्पा आस्तिक्य अर शकादि दोष रहितपना, जिनप्रतिमा जिनमन्दिर जिनशास्त्र मुनिराजनिकी भक्ति इनकरि सम्यग्दशन निमल होय ह । अर सवज्ञके वचन प्रमाण वस्तुका जानना सो ज्ञानकी निमलताका कारण ह । अर जो काहूतें न सध ऐसी दुधरक्रिया आचरणो ताहि चारित्र कहिए । पाचो इन्द्रियनिका निरोध मन का निरोध, वचनका निरोध, सव पापक्रियानिका त्याग सो चारित्र कहिए । त्रस स्थावर सव जीवकी दया सब कू आप समान जाने सो चारित्र कहिए । अर सुननेवालेके मन अर काननिकू आनन्दकारी स्निग्ध मधुर अर्थसयुक्त कल्याणकारी वचन बोलना सो चारित्र कहिए । अर मन वचन कायकरि परधनका त्याग करना, किसीका विना दीया कछू न लेना, अर दीया हुआ आहारमात्र लेना, सो चारित्र कहिए । अर जो देवनिकरि पूज्य महादुधर ब्रह्मचयव्रतका धारण सो चारित्र कहिए । अर शिवमाग कहिए निर्वाणका माग ताहि विघ्नकरणहारी मूर्छा कहिए मनकी अभिलाषा ताका त्याग सोई परिग्रहका त्याग, सो हू चारित्र कहिए ह । ये मुनिनिक धम कहे । अर जो अणुव्रती श्रावक मुनिनिकू श्रद्धा आदि गुणनिकरि युक्त नवधा भक्तिकर आहार देना सो एकदेशचारित्र कहिए । अर परदारा–परधनका परिहार, परपीडाका निवारण, दयाधमका अगीकार, दानशील पूजा प्रभावना, पर्वोपवासादिक सो ये देशचारित्र कहिए, अर यम कहिए । यावज्जीव पापका परिहार नियम कहिए, मर्यादारूप व्रत तपका अगीकार, वराग्य, विनय विवेक, ज्ञान, म ा–इन्द्रियोका निरोध ध्यान इत्यादि धमका आचरण सो एकदेश चारित्र कहिए । यह अनेक गुणकरि युक्त, जिनभासित चारित्र परम धामका कारण कल्याणकी प्राप्तिके अर्थ सेवने योग्य ह । जो सम्यकदृष्टि जीव जिनशासनका श्रद्धानी परनिदाका त्यागी अपनी अशुभ क्रियाका निदक जगत से न सध ऐसे दुद्धर तपका धारक सयमका साधनहारा सो ही दुलभ चारित्र धारिवेकू समथ होय । अर जहा दया आदि समीचीन गुण नाहीं, अर चारित्र

८३७

विना ससारसू निवत्ति नाही। जहाँ दया क्षमा ज्ञान वराग्य तप सयम नाहीं तहा धम नाहीं। विषय कषायका त्याग सोई धम ह। शम कहिए समता भाव, परम शात, दम कहिये मन इन्द्रियोका निरोध, सवर कहिए नवीन कमका निरोध, जहा ये नाही तहां चारित्र नाहीं। जे पापी जीव हिसा कर हैं झूठ बोले ह चोरी करे हैं परस्त्री सेवन करे ह महा आरम्भी ह, परिग्रही ह तिनके धम नाहीं। जे धमके निमित्त हिसा कर ह ते अधर्मी अधमगतिके पात्र ह। जो मूढ जिनदीक्षा लेकर आरम्भ कर हैं सो यति नाहीं। यतिका धम आरम्भ परिग्रहसू रहित ह। परिग्रह धारियोकू मुक्ति नाहीं। जे हिसा में धम जान षटकायिक जीवोकी हिसा कर ह ते पापी ह। हिसाविष धम नाहीं,हिसकोकू या भव पर भवके सुख नाहीं, शिव कहिए मोक्ष नाहीं। जे सुखके अथ धमके अथ जीवधात कर ह सो वथा ह। जे ग्राम क्षेत्रादिकविष आसक्त ह गाय, भस राख ह, मार ह, बाध ह, तोडे ह, दाह ह, उनके वराग्य कहा? जे क्रय विक्रय कर ह, रसोई परहडा आदि आरम्भ राखें ह, सुवर्णादिक राखे ह तिनकू मुक्ति नाहीं। जिनदीक्षा निराम्भ ह अतिदुलभ ह। जे जिनदीक्षा धारि जगतका धधा करै ह वे दीघ ससारी ह। जे साध होय तैलादिकका मदन कर ह शरीरका सस्कार कर ह। पष्पादिककू सूघ ह सुगध लगावै है, दीपकका उद्योत कर ह, धप खेवै ह, सो साधु नाहीं, मोक्षमागसू परागमुख ह। अपनी बुद्धिकरि जे कह ह—हिसाविष दोष नाहीं वे मूख ह। तिनकू शास्त्रका ज्ञान नाहीं, चारित्र नाहीं।

जे मिथ्यादष्टि तप करै ह ग्रामविष एक रात्रि बस ह, नगरविषै पाच रात्रि, अर सदा ऊध्व बाहु राख है, मास मासोपवास कर ह, अर वनविष विचर ह, मौनी ह, निपरिग्रही है, तथापि दयावान नाहीं, दुष्ट ह हृदय जिनका, सम्यक्त बीज विना धमरूप वक्षकू न उपाय सकै। अनेक कष्ट करै तौ भी शिवालय कहिए मुक्ति उसे न लहै। जे धर्मको बुद्धिकर पवतसू पडे, अग्निविषै जरै, जल विष डूबै, धरतीविष गडे, वे कुमरणकर कुगतिकू जावै है। जे पापकर्मी कामना परायण, आत रौद्र ध्यानी, विपरीत उपाय कर वे नरक निगोद लह। मिथ्यादष्टि जो कदाचित दान दे तप करै, सो

पुण्यके उदयकरि मनुष्य अर देव गतिके सुख भोग है, परन्तु श्रेष्ठ मनुष्य न होय, सम्यग्दृष्टियोंके फलके असख्यातवें भाग भी फल नाहीं। सम्यग्दष्टि चौथ गुणठाणे अव्रती है—तो ह नियमविषै हैं प्रेम जिनके सो सम्यकदशनके प्रसादस् देवलोकविष उत्तम देव होव, अर मिथ्यादृष्टि कुलिगी महा तप भी कर तो देवनिके किकर हीनदेव होय, बहुरि ससारभ्रमण कर। अर सम्यकदृष्टि भाव धर तो उत्तम मनुष्य होय, तिनमें देवनके भव सात, मनुष्यनिके भव आठ या भाति पन्द्रह भवविष पचम गति पाव। वीतराग सवज्ञदेवने मोक्षका मार्ग प्रकट दिखाया ह परन्तु यह विषयी जीव अगीकार न कर है। आशारूपी फासासे बधे मोहके वश पडे तृष्णाके भरे पापरूप जजीरसे जकडे, कुगतिरूप बदीगहविष पड ह स्पश अर रसना आदि इन्द्रियोके लोलुपी दुखहीकू सुख मान ह। यह जगतके जीव एक जिनधमके शरण विना क्लेश भोग ह, इन्द्रियोके सुख चाह सो मिले नाहीं अर मृत्युसू डरै सो मृत्यु छोडे नाहीं विफल कामना अर विफल भयके वश भए जीव केवल तापहीकू प्राप्त होय ह। तापके हरिवेका उपाय और नाहीं, आशा अर शका तजना यही सुखका उपाय है। यह जीव आशाकरि भरचा भोगनिका भोग किया चाह ह, अर धमविष धीय नाहीं धर ह। क्लेशरूप अग्नि कर उष्ण महा आरभविष उद्यमी कछु भी अथ नाहीं पाव ह उलटा गाठका खोव ह। यह प्राणी पाप के उदयसू मनवाछित अथकू नाहीं पावै ह, उलटा अनथ होय ह सो अनथ अतिदुजय ह, यह म किया यह म करू हू, यह करू गा, ऐसा विचार करते ही मरकर कुगति जाय ह। ये चारो ही गति कुगति है। एक पचमगति निर्वाण सोई सुगति ह। जहासे बहुरि आवना नाही, अर जगतविष मृत्यु ऐसी नाहीं देख ह, जो याने यह किया, यह न किया, बाल अवस्था आदिसे सब अवस्थाविष आय दाव ह, जसे सिह मृगकू सब अवस्थाविषै आय दाब। अहो! यह अज्ञानी जोव अहितविष हितकी बाछा धर हैं, अर दुखविष सुखकी आशा कर ह। अनित्यकू नित्य जान हैं, भयविष शरण मान हैं। इनके विपरीतबुद्धि हैं। यह सब मिथ्यात्वका दोष ह। यह मनुष्यरूप माता हाथी मायारूप गतविष पडचा अनेक दुख

रूप बन्धनकरि बन्धे है, विषयरूप मासका लोभी मत्स्यकी नाई विकल्परूपी जालमें पडे है। यह प्राणी दुर्बल बलदकी न्याई कुटुम्बरूप कीचमें फसा खेदखिन्न होय है। जैसे बरियोसे बध्या अर अंध-कूपमें पड्या उसका निकसना अति कठिन तैसे स्नेहरूप फासीकरि बध्या संसाररूप अंधकूपविषै पडा, अज्ञानी जीव उसका निकसना अति कठिन है। कोई निकटभव्य जिनवाणीरूप रस्सेकूं गहै अर श्रीगुरु निकासनेवाले होय तो निकसै। अर अभव्य जीव जैनेन्द्री आज्ञारूप अति दुर्लभ आनन्दका कारण जो आत्मज्ञान उसे पायवे समर्थ नाहीं। जिनराजका निश्चय मार्ग निकटभव्य ही पावै अर अभव्य सदा कर्मनिकरि कलंकी भए अति क्लेशरूप संसार चक्रविषै भ्रमै है। हे श्रेणिक! यह वचन श्री भगवान सकलभूषण केवलीने कहे। तब श्रीरामचन्द्र हाथ जोड सीस निवाय कहते भए–हे भगवान! मैं कौन उपायकरि भवभ्रमणसूं छूटूं? मैं सकल राणी अर पृथ्वीका राज्य तजिवे समर्थ हूं, परन्तु भाई लक्ष्मणका स्नेह तजिवे समर्थ नाहीं। स्नेह समुद्रकी तरंगनिविषै डूबूं हूं। आप धर्मोपदेशरूप हस्ता-वलंबन कर काढहु। हे करुणानिधान! मेरी रक्षा करहु। तब भगवान कहते भए–हे राम! शोक न कर, तू बलदेव है। कईयक दिन वासुदेव सहित इन्द्रकी न्याई या पृथ्वीका राज्य कर जिनेश्वरका व्रतधरि केवलज्ञान पावेगा। ये केवलीके वचन सुनि श्रीरामचन्द्र हर्षकरि रोमांचित भए, नयनकमल फूलि गए, वदनकमल विकसित भया, परम धीर्य युक्त होते भए। अर रामकूं केवलीके मुखसे चरम शरीरी जान सुर नर असुर सबही प्रशंसाकरि अति प्रीति करते भए।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृतग्रन्थ ताकी भाषावचनिकाविषै रामकूं केवलीके मुख धर्मश्रवण वर्णन करनेवाला एकसौ पांचवा पर्व पूर्ण भया ॥ १०५ ॥

अथानन्तर विद्याधरनिविषै श्रेष्ठ राजा विभीषण रावणका भाई, सुन्दर शरीरका धारक, रामकी भक्ति ही है आभूषण जाके सो दोऊ कर जोडि प्रणामकरि केवलीकूं पूछता भया, हे देवाधिदेव!

श्रीरामचन्द्रने पूर्व भवविषै क्या सुकृत किया जाकरि ऐसी महिमा पाई अर इनकी स्त्री सीता दण्डक वनतैं कौन प्रसंगकरि रावण हर ले गया। धर्म अर्थ काम मोक्ष चारो पुरुषार्थका वेत्ता अनेक शास्त्र का पाठी, कृत्य अकृत्यकूं जाने, धर्म अधर्मकूं पिछाने, प्रधानगुण सम्पन्न, सो काहेसूं मोहके वश होय परस्त्रीकी अभिलाषारूप अग्निविषै पतंगके भावकूं प्राप्त भया ? अर लक्ष्मणने उसे संग्रामविषै हत्या। रावण ऐसा बलवान विद्याधरनिका महेश्वर अनेक अद्भुत कार्यनिका करणहारा कैसैं ऐसे मरणकूं प्राप्त भया ? तब केवली अनेक जन्मकी कथा विभीषणकूं कहते भए—हे लंकेश्वर ! राम लक्ष्मण दोनों अनेकभवके भाई हैं अर रावणके जीवसूं लक्ष्मणके जीवका बहुत भवसे बैर है सो सुन। जम्बूद्वीपके भरतक्षेत्रविषै एक नगर वहां नयदत्तनामा वणिक अल्प धनका धनी, उसकी सुनन्दा स्त्री, उसके धनदत्तनामा पुत्र, सो रामका जीव अर दूजा वसुदत्त सो लक्ष्मणका जीव, अर एक यज्ञवलिनामा विप्र वसुदत्तका मित्र सो तेरा जीव। अर उस ही नगरविषै एक और वणिक सागरदत्त, जिसके स्त्री रत्नप्रभा, पुत्री गुणवती सो सीताका जीव, अर गुणवतीका छोटा भाई जिसका नाम गुणवान सो भामंडल का जीव, अर गुणवतीका रूप यौवन कला कांति लावण्यताकरि मण्डित, सो पिताका अभिप्राय जान धनदत्तसूं बहिनकी सगाई गुणवानने करी। अर उसही नगरमें एक महा धनवान वणिक श्रीकांत सो रावणका जीव जो निरंतर गुणवतीके परणवेकी अभिलाषा राखै, अर गुणवतीके रूपकर हरा गया है मन जाका सो गुणवतीका भाई लोभी धनदत्तकूं अल्प धनवंत जान, श्रीकांतकूं महाधनवंत देख परणायवेकूं उद्यमी भया।

सो यह वृत्तांत यज्ञवलि ब्राह्मणने वसुदत्तसूं कहा। तेरे बडे भाईकी मांग कन्याका बडा भाई श्रीकांतकूं धनवान जान परणाया चाहै है। तब वसुदत्त यह समाचार सुन श्रीकांतके मारिवेकूं उद्यमी भया, खड्ग पैनाय अंधेरी रात्रिविषै श्याम वस्त्र पहिर शब्दरहित धीरा धीरा पग धरता जाय—श्रीकांतके घरविषै गया सो वह असावधान बैठा हुता सो खड्गसूं मारया। तब पडते पडते श्रीकांतने भी वसुदत्त

कू खडगसू मारचा सो दोऊ मरे सो बिध्याचलके वनमें हिरण भए। अर नगरके दुजन लोक हुते तिन्होने गुणवती धनदत्तकू न परणायवे दीनी कि इसके भाईने अपराध कीया। दुजन लोक विना अपराध कोप कर सो यह तो एक बहाना पाया तब धनदत्त अपने भाईका मरण अर अपना अपमान तथा मागका अलाभ जान महा दुखी होय घरसू निकस विदेश गमन करता भया अर वह कन्या धन दत्तकी अप्राप्तिकरि अति दुखी भई और भी किसीकू न परणती भई, अर कन्या मुनिनिकी निंदा अर जिनमार्गकी अश्रद्धा मिथ्यात्वके अनुरागकरि पाप उपार्जे, काल पाय आर्तध्यानकरि मूई सो जिस वनविष दोनो मग भए हुते तिस वनविष यह मृगी भई। सो पूर्वले विरोधकरि इसीके अर्थत दोनो मग परस्पर लडकरि मूए, सो वन सूकर भए बहुरि हाथी, भसा, बल वानर, गडा, ल्याली, मींढा इत्यादि अनेकजन्म धरते भए। अर यह वाही जातिकी तिय चनी होती भई। सो याके निमित्त परस्पर लडकर मूए। जलके जीव थलके जीव होय प्राण तजते भए। अर धनदत्त मार्गके खेदकरि अति दुखी एक दिन सूर्यके अस्त समय मुनिनके आश्रय गया। भोला कछु जान नाहीं, साधुनिसू कहता भया म तषाकरि पीडित हू मुझे जल पिलावहु, तुम धर्मात्मा हो। तब मुनि तो न बोले अर कोई जिनधर्मी मधर वचन करि इसे सतोष उपजायकरि कहता भया, हे मित्र! रात्रिकू अमृत भी न पीवना, जलकी कहा बात? जिससमय आंखनिकर कछू सूझ नाहीं। सूक्ष्म जीव दृष्टि न पडे ता समय, हे वत्स! यदि तू अति आतुर भी होय तो भी खानपान न करना। रात्रि आहारविष मासका दोष लाग ह इसलिये तू न कर जाकरि भवसागरविष डूबिये। यह उपदेश सुन धनदत्त शातचित्त भया, शक्ति अल्प थी इसलिए यति न होय सका। दयाकरि युक्त ह चित्त जाका सो अणुव्रती श्रावक भया, बहुरि काल पाय समाधि मरण करि सौधर्म स्वर्गविष बडी ऋद्धिका धारक देव भया, मुकुट हार भुजबधादिककरि शोभित पूर्व पुण्यके उदयसू देवागनादिक सुख भोगे। बहुरि स्वर्गसू चयकरि महापुरनामा नगरविष मेरु नामा श्रेष्ठी ताकी धारिणी स्त्रीके पद्मरुचि नामा पुत्र भया। अर ताही नगरविष राजा छत्रछाय, राणी ८४२

पद्म पुराण ८४३

श्रीदत्ता, गुणनिकी मजूषा हूती सो एक दिन सेठका पुत्र पदमरुचि अपने गोकुलविषै अश्व चढ़ा आया सो एक वृद्धिगति बलदकू कठगत प्राण देख्या। तब इस सुगन्ध वस्त्र मालाके धारकने तुरगतैं उतरि अति दयाकरि बलदके कानविष नमोकार मन्त्र दिया। सो बलदने चित्त लगाय सुन्या, अर प्राण तजि राणी श्रीदत्ताके गर्भविष आय उपज्या। राजा छत्रछायके पुत्र न था सो पुत्रके जन्मविष अतिहर्षित भया, नगरकी अतिशोभा करी, बहुत द्रव्य खरच्या, बडा उत्सव कीया। वादित्रोंके शब्दकरि दशो दिशा शब्दायमान भई। यह बालक पुण्यकर्मके प्रभावकरि पूर्व जन्म जानता भया। सो बलदके भवका शीत आताप आदि महादुख, अर मरणसमय नमोकार मन्त्र सुन्या ताके प्रभावकरि राजकुमार भया, सो पूर्वअवस्था यादकरि बालक अवस्थाविष ही महाविवेकी होता भया। जब तरुण अवस्था भई, तब एक दिन विहार करता बलदके मरणके स्थानक गया, अपना पूर्व चरित चितार यह वृषभध्वजकुमार हाथीसूं उतर पूर्वजन्मकी मरणभूमि देख दुखित भया। अपने मरणका सुधारणहारा, नमोकारमन्त्रका देनहारा उसके जानिवेके अर्थ एक कलाशके शिखर समान ऊंचा चैत्यालय बनाया। अर चैत्यालयके द्वारविष एक बलदकी मूर्ति जिसके निकट बैठा एक पुरुष नमोकार मन्त्र सुनावै है ऐसा एक चित्रपट लिखाय मेल्या अर उसके समीप समझनेके मनुष्य मेले। दर्शन करिवेकूं मेरु श्रेष्ठी का पुत्र पदमरुचि आया, सो देख अतिहर्षित भया। अर भगवानका दर्शनकरि पीछे आय बलदके चित्रपटकी ओर निरखकरि मनविष विचारै है बलदकूं नमोकार मन्त्र मैंने सुनाया था। सो खडा खडा देखै। जे पुरुष रखवारे थे तिन जाय राजकुमारकूं कही। सो सुनते ही बडी ऋद्धिसूं युक्त हाथी चढ्या शीघ्र ही अपने परम मित्रसूं मिलने आया। हाथीसूं उतरि जिनमन्दिरविष गया, बहुरि बाहिर आया। पदमरुचिकूं बलदकी ओर निहारता देख्या। राजकुमारने श्रेष्ठीके पुत्रकूं पूछी तुम बलदके चित्रपटकी ओर कहा निरखो हो? तब पदमरुचिने कही एक मरते बलदको मैंने नमोकार मन्त्र दिया था सो कहा उपज्या है यह जानिवेकी इच्छा है। तब वृषभध्वज बोले वह मैं हूं। ऐसा कह पायन ८४३

पडया, अर पद्मरुचिकी स्तुति करी, जैसे गुरुकी शिष्य करे, अर कहता भया मैं पशु महा अविवेकी मृत्युके कष्टकरि दुखी था सो तुम मेरे महामित्र नमोकारमंत्रके दाता समाधिमरणके कारण होते भए। तुम दयालु पर भवके सुधारणहारेने महा मंत्र मुझे दिया उससे मैं राजकुमार भया। जैसा उपकार राजा, देव, माता, सहोदर, मित्र, कुटुम्ब कोई न करै तैसा तुमने किया। अहो! जो तुम नमोकार मंत्र दिया उस समान पदार्थ त्रैलोक्यमें नाहीं। ताका बदला मैं क्या दूं। तुमसे उऋण नाहीं, तथापि तुमविषै मेरी भक्ति अधिक उपजी है जो आज्ञा देवो सो करूं। हे पुरुषोत्तम! तुम आज्ञा दानकरि मोकूं भक्त करो। यह सकल राज्य लेहु, मैं तुम्हारा दास, यह मेरा शरीर उसकरि इच्छा होय सो सेवा करावो। या भांति वृषभध्वजन कही तब पद्मरुचिके अर याके अति प्रीति बढी। दोनो सम्यकदृष्टि राजविषै श्रावकके व्रत पालते भए। ठौर ठौर भगवानके बडे २ चैत्यालय कराए तिनमें जिन बिंब पधराए। यह पृथ्वी तिनकरि शोभायमान होती भई। बहुरि समाधि मरण करि वृषभध्वज पुण्यकर्मके प्रसादकरि दूजे स्वर्गविषै देव भया, देवांगनानिके नेत्ररूप कमल तिनके प्रफुल्लित करनेकूं सूर्य समान होता भया, तहां मन वांछित क्रीडा करता भया। अर पद्मरुचि सेठ भी समाधि मरण करि दूजे ही स्वर्ग देव भया। दोऊ वहां परम मित्र भए। वहांसे चयकरि पद्मरुचिका जीव पश्चिम विदेहविषै विजयार्धगिरि जहां द्यावर्त नगर वहां राजा नंदीश्वर उसकी राणी कनकप्रभा उसके नयनानन्द नामा पुत्र भया। सो विद्याधरनिके चक्रपदकी सम्पदा भोगी बहुरि महा मुनिकी अवस्था धरि विषम तप किया। समाधि मरणकरि चौथे स्वर्ग देव भया। वहां पुण्य रूप बलके सुख रूप फल महा मनोग्य भोगे। बहुरि वहांसे चयकरि सुमेरु पर्वतके पूर्व दिशाकी ओर विदेह, वहां क्षेमपुरी नगरी, राजा विपुलवाहन, राणी पद्मावती तिनके श्रीचन्द्र नामा पुत्र भया। वहां स्वर्ग समान सुख भोगे। तिनके पुण्यके प्रभावसूं दिन दिन राजाकी वृद्धि भई, अटूट भंडार भया, समुद्रांत पृथ्वी एक ग्रामकी न्याईं वश करी। अर जिसके स्त्री इन्द्राणी समान, सो इन्द्रकेसे सुख भोगे, हजारों वर्ष सुखसूं राज्य

किया। एक दिन महा संघ सहित तीन गुप्तिके धारक समाधिगुप्ति योगीश्वर नगरके बाहिर आय विराजे। तिनकूं उद्यानविषै आया जान नगरके लोक बन्दनाकूं चले। सो महा स्तुति करते वादित्र बजावते हर्षसे जाय है। श्रीचन्द्र समीपके लोकनिकूं पूछता भया, यह हर्षका नाद जैसा समुद्र गाजै तैसा होय है सो कौन कारण है? तब मन्त्रियनिने किंकर दौडाए, निश्चय किया जो मुनि आए हैं तिनके दर्शनकूं लोक जाय है। यह समाचार सुनकरि राजा फूले कमल समान भए हैं नेत्र जाके, अर शरीरविषै हर्षकरि रोमाच होय आये। राजा समस्त लोक अर परिवारसहित मुनिके दर्शनकूं गया, प्रसन्न है मुख जिनका, ऐसे मुनिराज तिनकूं राजा देखि प्रणामकरि महा विनयसंयुक्त पृथ्वीविषै बैठा। भव्यजीव रूप कमल तिनके प्रफुल्लित करिवेकूं सूर्य समान ऋषिनाथ तिनके दर्शनकूं राजाकूं अति धर्म-स्नेह उपज्या। वे महा तपोधर, धर्म शास्त्रके वेत्ता, परम गम्भीर, लोकनिकूं तत्व ज्ञानका उपदेश देते भए। यतिका धर्म अर श्रावकका धर्म, संसार समुद्रका तारणहारा अनेक भेद संयुक्त कह्या। अर प्रथमानुयोग, करणानुयोग, चरणानुयोग द्रव्यानुयोगका स्वरूप कह्या। प्रथमानुयोग कहिए उत्तम पुरुषनिका कथन, अर करणानुयोग कहिए तीन लोकका कथन, चरणानुयोग कहिए मुनि श्रावकका धर्म, अर द्रव्यानुयोग कहिए षटद्रव्य सप्त तत्व नव पदार्थ पंचास्तिकायका निर्णय। कैसे हैं मुनिराज? वक्तानिविषै श्रेष्ठ हैं। अर आक्षेपणी कहिए जिनमार्ग उद्योतनी, अर विक्षेपणी कहिए मिथ्यात्वखंडनी, अर संवेगिनी कहिए धर्मानुरागणी, अर निर्वेदिनी कहिए वैराग्यकारिणी यह चार प्रकार कथा कहते भए। इस संसार असारविषै कर्मके योगसूं भ्रमता जो यह प्राणी सो महा कष्टसूं मोक्षमार्गकूं प्राप्त होय है। संसारके ठाठ विनाशीक हैं। जैसा संध्या समयका वर्ण, अर जलका बुदबुदा, तथा जलके झाग अर लहर, अर बिजुरीका चमत्कार, इन्द्र धनुष क्षण भंगुर हैं, असार हैं, ऐसा जगतका चरित्र क्षण भंगुर जानना। यामैं सार नाहीं। नरक तिर्यंचगति तो दुःखरूप ही है, अर देव मनुष्यगतिविषै यह प्राणी सुख जानै है सो सुख नाहीं, दुःख ही है। जिससे तृप्ति नाहीं सो ही दुःख। जो महेंद्र स्वर्गके

भोगनिकरि तप्त नाहीं भया, सो मनुष्यभवके तुच्छ भोगनिकरि कस तप्त होय ? यह मनुष्यभव भोग योग्य नाहीं, वैराग्य योग्य है। काहु एक प्रकारसू दुर्लभ मनुष्य देह पाया, जैसे दरिद्री निधान पावे, सो विषयरसका लोभी होय वृथा खोय, मोहकू प्राप्त भया। जैसे सूखे ईंधनसू अग्निकू कहा तृप्ति, अर नदीनिके जलकरि समुद्रकू कहा तप्ति ? तैसे विषयसुखसू जीवनकू तप्ति न होय। चतुर भी विषयरूप मदकरि मोहित भया मंदताकू प्राप्त होय है। अज्ञानरूप तिमिरसू मंद भया है मन जाका सो, जलविषै डूबता खेदखिन्न होय त्यो खेदखिन्न है। परन्तु अविवेकी तो विषय ही कू भला जानै है। सूर्य तो दिनकू ताप उपजावै है, अर काम रात्रिदिन आताप उपजावै। सूर्यके आताप निवारिवे के अनेक उपाय है, अर कामके निवारिवेका उपाय एक विवेक ही है। जन्म जरा मरणका दुःख संसार-विषै भयकर है जिसका चितवन किए कष्ट उपजे। यह कर्म जनित जगतका ठाठ अरहटके यत्रकी घडी समान है, रीता भर जाय है भरा रीता होय है, नीचला ऊपर, ऊपरला नीचे। अर यह शरीर दुर्गन्ध है, यंत्र समान चलाया चलै है, विनाशीक है, मोह कर्मके योगसू जीवका कायासू स्नेह है। जलके बुदबुदा समान मनुष्य भवके उपजे सुख असार जानि बडे कुलके उपजे पुरुष विरक्त होय जिनराजका भाषा मार्ग अंगीकार करे है। उत्साहरूप बखतर पहिर निश्चय रूप तुरंगके असवार, ध्यान-रूप खडगके धारक, धीर कर्मरूप शत्रुकू विनाशि निर्वाणरूप नगर लेय है। यह शरीर भिन्न अर मैं भिन्न, ऐसा चितवन करि शरीरका स्नेह तजै है। हे मनुष्यो! धर्मकू करो। धर्म समान और नाहीं। अर धर्मनिमें मुनिका धर्म श्रेष्ठ है। जिन महामुनियोके सुख दुःख दोनो तुल्य अपना अर पराया तुल्य। जे राग द्वेष रहित महापुरुष है वे परम उत्कष्ट शुक्ल ध्यानरूप अग्निसू कर्मरूप वनो दुःखरूप दुष्टोंसे भरी भस्म करै है।

ये मुनिके वचन राजा श्रीचन्द्र सुन बोधकू प्राप्त भया। विषयानुभव सुखतै वैराग्य होय अपने ध्वजकान्तिनामा पुत्रकू राज्य देय समाधिगुप्त नामा मुनिके समीप मुनि भया। विरक्त है मन जाका,

सम्यक्की भावनाकरि तीनो योग मन वचन काय तिनकी शुद्धता धरता सता, पाच समिति, तीन गुप्तिसू मडित, राग द्वषसू परागमुख, रत्नत्रयरूप आभूषणनिका धारक, उत्तम क्षमा आदि दशलक्षण धर्मकरि मडित, जिनशासनका अनुरागी, समस्त अग पूर्वा गका पाठक, समाधानरूप पच महाव्रतका धारक, जीवनिका दयालु, सप्त भयरहित, परमधैर्यका धारक, बाईस परीषहका सहनहारा, बेला तेला पक्ष मासादिक अनेक उपवासका करणहारा, शुद्ध आहारका लेनहारा, ध्यानाध्ययनमें तत्पर, निर्ममत्व, अतींद्रिय भोगनिकी बाछाका त्यागी, निदान बधनरहित, महाशात जिनशासनमे ह वात्सल्य जाकी यतिके आचारमें सघक अनुग्रहविषै तत्पर, बालके अग्रभागके कोटिमे भागहू नाहीं ह परिग्रह जाकै, स्नानका त्यागी, दिगम्बर, ससारके प्रबधतै रहित, ग्रामके वनविषै एक रात्रि अर नगरके वनविषै पाच रात्रि रहनहारा, गिरिशिखर नदीके पुलिन उद्यान इत्यादि प्रशस्त स्थानविषै निवास करणहारा, कायोत्सर्गका धारक, देहतै हू निर्ममत्व निश्चल, मौनी, पडित, महातपस्वी इत्यादि गुणनिकार पूर्ण कर्म पिंजरकू जर्जराकरि काल पाय श्रीचन्द्रमुनि रामचन्द्रका जीव पाचवें स्वर्ग इन्द्र भया। तहा लक्ष्मी कीर्ति काति प्रतापका धारक, देवनिका चूडामणि, तीन लोकविषै प्रसिद्ध, परम ऋद्धिकरयुक्त, महा सुख भोगता भया। नन्दनादिक वनविषै सौधर्मादिक इन्द्र याकी सम्पदाकू देख रहे ह। याके अवलोकनकी बाछा रह। महा सुन्दर विमान मणि हेममई मोतिनिकी झालरिनिका मण्डित, तामे बैठा विहार कर। दिव्य स्त्रीनिक नेत्रोकू उत्सवस्वरूप महासुखतै काल व्यतीत करता भया। श्रीचन्द्रका जीव ब्रह्मेंद्र ताकी महिमा, हे विभीषण! वचन कर न कही जाय, केवलज्ञानगम्य ह। यह जिनशासन अमोलिक परमरत्न उपमारहित त्रैलोक्यविषै प्रकट ह तथापि मूढ न जान। श्रीजिनेन्द्र मुनीन्द्र अर जिनधर्म इनकी महिमा जानकर हू मूर्ख मिथ्या अभिमानकरि गर्वित भए, धर्मसे परागमुख रहैं। जो अज्ञानी या लोकके सुखविषै अनुरागी भया ह, सो बालक समान अविवेकी है। जसे बालक विना समझे अभक्ष्य का भक्षण करै ह, विषपान करै ह, तसे मूढ अयोग्यका आचरण करै हैं। जे विषयके अनुरागी हैं

सो अपना बुरा कर है। जीवोके कर्म बन्धकी विचित्रता है। इसलिए सब ही ज्ञानके अधिकारी नाहीं। कईएक महाभाग्य ज्ञानकू पाव है, अर कईएक ज्ञानकू पाय और वस्तुकी वाछाकरि अज्ञान दशाकू प्राप्त होय है। अर कईएक महानिंद्य जो यह ससारी जीवनिके मार्ग तिनमे रुचि कर है। वे मार्ग महादोषके भरे है जिनमे विषय कषायकी बहुलता है। जिनशासनसू और कोई दुखत छुडायवेका मार्ग नाहीं, तातै हे विभीषण ! तुम आन द चित्त होयकर जिनेश्वर देवका अर्चन करहु। इस भाति धनदत्तका जीव मनुष्यसे देव, देवसे मनुष्य होयकर नवमे भव रामचन्द्र भया, उसकी विगत पहले भव धनदत्त १, दूजे भव पहले स्वर्ग देव २, तीजे भव पदमरुचि सेठ ३, चौथे भव दूजे स्वर्ग देव ४, पाचवें भव नयनानन्दराजा ५, छठे भव चौथे स्वर्ग देव ६, सातवें भव श्रीचन्द्र ७, आठवें भव पाचवें स्वर्ग ८, नवमे भव रामचन्द्र ९, आगे मोक्ष। यह तो रामके भव कहे, अब हे लकेश्वर ! वसुदत्तादिकका वृत्तात सुन–कर्मनिकी विचित्रगति, ताके योगकरि मणालकुण्ड नामा नगर, तहा राजा विजयसेन, राणी रत्नचूला, उसके वज्रकबुनामा पुत्र, उसके हेमवती राणी, उसके शभु नामा पुत्र पृथ्वीमे प्रसिद्ध, सो यह श्रीकातका जीव रावण होनहार सो पृथ्वीमे प्रसिद्ध अर वसुदत्तका जीव राजा का पुरोहित उसका नाम श्रीभूति सो लक्ष्मण होनहार, महा जिनधर्मी सम्यग्दृष्टि। उसके स्त्री सरस्वती उसके वेदवती नामा पुत्री भई। सो गुणवतीका जीव सीता होनहार गुणवतीके भवसू पूर्व सम्यक्त्व बिना अनेक तिर्यच योनिविषै भ्रमणकरि साधुनिकी निदाके दोषकरि गगाके तट मरकर हथिनी भई। एक दिन कीचमे फसी, पराधीन होय गया है शरीर जाका, नेत्र तिरमिराट अर मद मद सास लेय, सो एक तरगवेग नामा विद्याधर महादयावान, उसने हथिनीके कानमे नमोकार मन्त्र दिया। सो नमोकार मन्त्रके प्रभाव करि मद कषाय भई। अर विद्याधरने व्रत भी दिए। सो जिनधर्मके प्रसादसे श्रीभूति पुरोहितके वेदवती पुत्री भई। एक दिन मुनि आहारकू आए सो यह हसने लगी। तब पिताने निवारी सो यह शातचित्त होय श्राविका भई। अर यह कन्या परमरूपवती सो अनेक राजानिके पुत्र

याके परिणवेकू अभिलाषी भए। अर यह राजा विजयसेनका पोता शम्भु जो रावण होनहार है सो विशेष अनुरागी भया। अर यह पुरोहित श्रीभूति महा जिनधर्मी, सो उसने जो मिथ्यादृष्टि कुबेर समान धनवान होय तो हू मैं पुत्री न दू, यह मेरे प्रतिज्ञा है। तब शम्भुकुमारने रात्रिविषै पुरोहितकू मारया सो पुरोहित जिनधर्मके प्रसादतै स्वर्गलोकविषै देव भया। अर शम्भुकुमार पापी वेदवती साक्षात देवी समान उसे न इच्छतीकू बलात्कार परणिवेकू उद्यमी भया। वेदवतीके सर्वथा अभिलाषा नाहीं तब कामकरि प्रज्वलित इस पापीने जोरावरी कन्याकू आलिंगनकरि मुख चुम्ब मैथुन किया। तब कन्या विरक्त हृदय, कांपे शरीर जाका, अग्निकी शिखा समान प्रज्ज्वलित अपने शील घातकरि, अर पिताके घातकरि, परम दुखकू धरती, लाल नेत्र होय महा कोपकरि कहती भई—अरे पापी! तैने मेरे पिताकू मारा, मो कुमारीसू बलात्कार विषयसेवन किया, सो नीच! मैं तेरे नाशका कारण होऊंगी। मेरा पिता तैने मारा सो बड़ा अनर्थ किया। मैं पिताका मनोरथ कभी भी न उलघू। मिथ्या-दृष्टि सेवनसू मरण भला। ऐसा कह वेदवती श्रीभूति पुरोहितकी कन्या हरिकांता आर्यिकाके समीप जाय आर्यिकाके व्रत लेय परम दुर्धर तप करती भई। केशलुंच किए, महा तपकरि रुधिर मांस सुखाय दिए। प्रकट दीखै है अस्थि अर नसां जिसके, तपकर सुखाय दिया है देह जिसने, समाधिमरणकरि पांचवें स्वर्ग गई। पुण्यके उदयकरि स्वर्गके सुख भोगे। अर शम्भु संसारविषै अनीतिके योगकर अति निंदनीक भया। कुटुम्ब, सेवक अर धनसे रहित भया। उन्मत्त होय गया, अर जिनधर्म परांगमुख भया। साधुनिकू देख हंसै, निंदा करै, मद्य मांस शहदका आहारी, पापक्रियाविषै उद्यमी, अशुभ उदयकरि नरक तिर्यंचविषै महा दुख भोगता भया।

अथानन्तर कछु इक पापकर्मके उपशमसे कुशध्वज नामा ब्राह्मण, ताके सावित्री नामा स्त्रीके प्रभासकुंद नामा पुत्र भया। सो दुर्लभ जिनधर्मका उपदेश पाय विचित्रमुनिके निकट मुनि भया। काम क्रोध मद मत्सर हरे, आरम्भरहित भया, निर्विकार तपकरि दयावान, निस्पृही, जितेन्द्री, पक्ष

मास उपवास करै। जहां सूर्य अस्त होय तहां शून्य वनविषै बैठ रहै। मूलगुण उत्तरगुणका धारक, बाईस परीषहका सहनहारा, ग्रीषमविषै गिरिके शिखर रहै, वर्षामें वृक्षतले बसै, अर शीतकालविषै नदी सरोवरीके तट निवास करै। या भांति उत्तम क्रियाकर युक्त श्री सम्मेदशिखरकी वंदनाकू गया। वह निर्वाण क्षेत्र कल्याणका मन्दिर, जाका चितवन किये पापनिका नाश होय। तहां कनक प्रभ नामा विद्याधरकी विभूति आकाशविषै देख मूर्खने निदान किया जो जिनधर्मके तपका माहात्म्य सत्य है तो ऐसी विभूतिमैं हूं पाऊं। यह कथा भगवान केवलीने विभीषणकू कही—देखो जीवनिकी मूढ़ता, तीनलोक जाका मोल नाहीं ऐसा अमोलिक तपरूप रत्न, भोगरूपी मूठी सागके अर्थ बेच्या। कर्मके प्रभावकरि जीवनकी विपर्यय बुद्धि होय है। निदानकरि दुःखित विषम तपकरि वह तीजे स्वर्ग देव भया। तहांते चयकरि भोगनिविषै है चित्त जाका, सो राजा रत्नश्रवाके राणी केकसी, ताके रावण नामा पुत्र भया। लंकामें महा विभूति पाई, अनेक हैं आश्चर्यकारी बात जाकी, प्रतापी पृथ्वीमें प्रसिद्ध। अर धनदत्तका जीव रात्रि भोजनके त्यागकरि सुर नर गतिके सुख भोग श्रीचन्द्र राजा होय, पंचम स्वर्ग दश सागर सुख भोगि, बलदेव भया। रूपकरि बलकरि विभूतिकरि जा समान जगतविषै और दुर्लभ है। महामनोहर, चन्द्रमासमान उज्ज्वल यशका धारक। अर वसुदत्तका जीव अनुक्रमसे लक्ष्मीरूप लताके लिपटानेका वृक्ष वासुदेव भया। ताके भव सुनो—वसुदत्त १, मृग २, सूकर ३, हस्ती ४, महिष ५, वृषभ ६, बानर ७, चीता ८, ल्याली ९, मींढा १०, अर जलचर स्थलचरके अनेक भव ११, श्रीभूति पुरोहित १२, देवराजा १३, पुनर्वसु विद्याधर १४, तीजे स्वर्गदेव १५, वासुदेव १६ मेघा १७, कुटुम्बीका पुत्र १८, देव १९, वणिक् २०, भोगभूमि २१, देव २२, चक्रवर्तीका पुत्र २३। बहुरि कईएक उत्तमभव धर पुष्कराद्धके विदेहविषै तीर्थंकर अर चक्रवर्ती दोय पदका धारी होय मोक्ष पावेगा। अर दशाननके भव श्रीकान्त १, मृग २, सूकर ३, गज ४, महिष ५, वृषभ ६ बानर ७, चीता ८, ल्याली ९, मींढा १०, अर जलचर थलचरके अनेक भव ११, शंभु १२, प्रभासकुन्द १३,

तीजे स्वर्ग १४, वज्रमुख १५, बालुका १६, कुटुम्बी पुत्र १७, देव १८, वणिक १९, भोगभूमि २०, देव २१, चक्रीपुत्र २२, बहुरि कईएक उत्तम भव धरि भरतक्षेत्रविषैं जिनराज होय मोक्ष पावेगा, बहुरि जगत जालविषै नाहीं। अर जानकीके भव गुणवती १, मृगी २, सूकरी ३, हथिनी ४, महिषी ५, गो ६, वानरी ७, चीती ८, स्याली ९, गाडर १०, जलचर स्थलचरके अनेक भव ११, चितोत्सवा १२, पुरोहितकी पुत्री वेदवती १३, पाचवें स्वर्ग देवी अमृतवती १४, बलदेवकी पटराणी १५, सोलहवें स्वर्ग प्रतेन्द्र १६, चक्रवर्ती १७, अहमिंद्र १८, रावणका जीव तीर्थंकर होयगा। ताके प्रथम गणधर देव होय मोक्ष प्राप्त होयगा। भगवान सकलभूषण विभीषणसूं कहै हैं—श्रीकांतका जीव कईएक भवमें शम्भु प्रभासकुन्द होय अनुक्रमसूं रावण भया, जाने अर्द्ध भरतक्षेत्रमें सकल पृथ्वी वश करी, एक अंगुल आज्ञा सिवाय न रही। अर गुणवतीका जीव श्रीभूतिकी पुत्री होय अनुक्रमकरि सीता भई, राजा जनककी पुत्री, श्रीरामचन्द्रकी पटराणी, विनयवती, शीलवती, पतिव्रतानिमें अग्रेसर भई। जैसैं इन्द्रके शची, चन्द्रके रोहिणी, रविके रेणा, चक्रवर्तीके सुभद्रा, तैसैं रामके सीता, सुन्दर है चेष्टा जाकी। अर जो गुणवतीका भाई गुणवान सो भामण्डल भया। श्रीरामका मित्र जनक राजाकी राणी विदेहाके गर्भविषैं युगल बालक भए, भामण्डल भाई सीता बहिन, दोनों महा मनोहर। अर यज्ञबलि ब्राह्मणका जीव विभीषण भया अर बलका जीव जो नमोकारमन्त्रके प्रभावतैं स्वर्गगति नरकगतिके सुख भोगे यह सुग्रीव कपिध्वज भया। भामण्डल, सुग्रीव अर तू पूर्व भवकी प्रीतिकर तथा पुण्यके प्रभावकरि महा पुण्याधिकारी श्रीराम ताके अनुरागी भए। यह कथा सुन विभीषण बालि के भव पूछता भया सो केवली कहै है—हे विभीषण! तू सुन! राग द्वेषादि दुःखनिके समूहकरि भरा यह संसार सागर चतुर्गतिमई, ताविषै वृन्दावनविषै एक कालेरा मृग, सो साधु स्वाध्याय करते हुते तिनका शब्द अंतकालमें सुनकरि ऐरावत क्षेत्रविषै दित नामा नगर तहां विहित नामा मनुष्य, सम्यग्दृष्टि सुन्दर चेष्टाका धारक, ताकी स्त्री शिवमति, ताके मेघदत्त नामा पुत्र भया सो जिन पूजाविषैं उद्यमी, भग-

दानका भक्त, अणुव्रतधारक, समाधिमरणकरि दूजे स्वर्गदेव भया। वहांसे चयकरि जम्बूद्वीपविषै पूर्व विदेह, विजयावतीपुरी, ताके समीप महाउत्साहका भरघा एक मत्तकोकिला नामा ग्राम ताका स्वामी कांतिशोक, ताकी स्त्री रत्नांगिनी, ताके स्वप्रभ नामा पुत्र भया, महासुन्दर, जाकूं शुभ आचार भाव। सो जिनधर्मविषै निपुण संयतनामा मुनि होय हजारों वर्ष विधिपूर्वक बहुत भांतिके महातप किए। निर्मल है मन जाका सो तपके प्रभावकरि अनेक ऋद्धि उपजी, तथापि अति निर्गर्व संयोग संबंधविषै ममताकूं तजि, उपशमश्रेणी धार शुक्लध्यानके पहिले पायेके प्रभावते सर्वार्थसिद्धि गया, सो तेतीस सागर अहमिंद्र पदके सुख भोगि राजा सूरज ताके बालि नामा पुत्र भया विद्याधरनिका अधिपति, किहकंधपुरका धनी, जिसका भाई सुग्रीव सो महा गुणवान। सो जब रावण चढ आया तब जीवदयाके अर्थ बालीने युद्ध न किया, सुग्रीवकूं राज्य देय दिगम्बर भया। सो जब कैलाशविषै तिष्ठै था अर रावण आय निकस्या। क्रोधकरि कैलाशके उठायवेकूं उद्यमी भया, सो बाली मुनि चैत्यालयकी भक्तिसूं ढीला सो अंगुष्ठे दाब्या, सो रावण दबने लगा। तब राणीने साधुकी स्तुति करि अभयदान दिवाया। रावण अपने स्थानक गया। अर बाली महामुनि गुरुके निकट प्रायश्चित्तनामा तप लेय दोष निराकरणकरि क्षपकश्रेणी चढ कर्म दग्ध किए, लोकके शिखर सिद्धक्षेत्र है वहां गए, जीवका निज स्वभाव प्राप्त भया। अर वसुदत्तके अर श्रीकांतके गुणवतीके कारण महा वैर उपज्या था सो अनेक भवविषै दोऊ परस्पर लड लड मूवे। अर गुणवतीसूं तथा वेदवतीसूं रावणके जीवके अभिलाषा उपजी हुती, उस कारणकरि रावणने सीता हरी। अर वेदवतीका पिता श्रीभूति सम्यग्दृष्टि उत्तम ब्राह्मण सो वेदवतीके अर्थ शंभुने हता, सो स्वर्ग जाय वहांसे चयकर प्रतिष्ठित नाम नगरविषै पुनर्वसु नाम विद्याधर भया। सो निदान सहित तपकर तीजे स्वर्ग जाय रामका लघु भ्राता महा स्नेहवंत लक्ष्मण भया। अर पूर्वले वैरके योगसूं रावणकूं मारघा। अर वेदवतीसूं शम्भुने विपर्यय करी तातैं सीता रावणके नाशका कारण भई, जो जाकूं हतै सो ताकरि हत्या जाय। तीन खण्डकी

लक्ष्मी सोई भई रात्रि, ताका चन्द्रमा रावण, ताहि हतकरि लक्ष्मण सागरात पृथ्वीका अधिपति भया। रावणसा शूरवीर पराक्रमी या भांति मारया जाय यह कर्मनिका दोष है। दुबलसे सबल होय, सबलसे दुबल होय, घातक है सो हता जाय अर हता होय सो घातक होय जाय। संसारके जीवनि की यही गति है। कर्मकी चेष्टाकरि कभी स्वर्गके सुख पावै, कभी नरकके दुःख पावै। अर जैसे काहू महा स्वादरूप परम अन्नविषै विष मिलाय दूषित करै तैसे मूढ जीव उग्र तपकूं भोगविलास करि दूषित करै है। जैसे कोई कल्पवृक्षकूं काटि कोदूकी बाढ करै, अर विषके वृक्षकूं अमृत रसकरि सींचे, अर भस्मके निमित्त रत्ननिकी राशिकूं जलावै, अर कोयलनिके निमित्त मलयागिरि चन्दनकूं दग्ध करै, तैसे निदान बंधकर तपकूं यह अज्ञानी दूषित करै। या संसारविषै सब दोषकी खान स्त्री है। ताके अर्थ कहा कुकर्म अज्ञानी न करै? जो या जीवनैं कर्म उपार्जे है सो अवश्य फल देय है, कोऊ अन्यथा करिवे समर्थ नाहीं। जे धर्मविषै प्रीति करैं बहुरि अधर्म उपार्जें वे कुगतिकूं प्राप्त होय हैं। तिनकी भूल कहा कहिए? जे साधु होयकर मदमत्सर धरै हैं तिनकूं उग्र तपकरि मुक्ति नाहीं। अर जाके शांति भाव नाहीं संयम नाहीं, तप नाहीं, उसे दुर्जन मिथ्यादृष्टिके संसार सागरके तिरवेका उपाय कहा? अर जैसे असराल पवनकरि मदोन्मत्त गजेंद्र उडे तो सुसाके उडिवेका कहा आश्चर्य? तैसे संसारकी झूठी मायाविषै चक्रवर्त्यादिक बडे पुरुष भूलैं तो छोटे मनुष्यनिकी कहा बात? या जगतविषै परम दुःखका कारण वैर भाव है सो विवेकी न करैं, आत्म कल्याणकी है भावना जिनके पापकी करणहारी वाणी कदापि न बोलें। गुणवतीके भवविषै मुनिका अपवाद किया था अर वेदवतीके भवमें एक मंडलकानामा ग्राम वहां सुदर्शननामा मुनि वनमें आये। लोक वंदना कर पीछे गए, अर मुनिकी बहिन सुदर्शना नामा आर्यिका सो मुनिके निकट बैठी धर्म श्रवण करै थी। सो वेदवतीने देखकर ग्रामके लोकनिके निकट मुनिकी निंदा करी कि मैं मुनिकूं अकेली स्त्रीके समीप बैठा देख्या। तब कईएकनिने बात मानी, अर कईएक बुद्धिवंतनिने न मानी, परन्तु ग्राममें मुनिका अपवाद भया।

८५३

तब मुनिने नियम किया कि यह झूठा अपवाद दूर होय तो आहारकू उतरना अन्यथा नाहीं। तब नगरके देवताने वेदवतीके मुखकरि समस्त ग्रामके लोकनिकू कहाई कि मैं झूठा अपवाद किया। यह बहिन भाई है, अर मुनिके निकट जाय वेदवतीने क्षमा कराई कि हे प्रभो! मैं पापिनीने मिथ्यावचन कहे सो क्षमा करहु। या भांति मुनिकी निंदाकरि सीताका झूठा अपवाद भया, अर मुनिसू क्षमा

कराई, उसकरि अपवाद दूर भया। तातें जे जिनमार्गी हैं ते कभी भी परनिंदा न करें। किसीमें साचा दोष है तौहू ज्ञानी न कहै। अर कोऊ कहता होय ताहि मने करै। सर्वथा प्रकार पराया दोष ढाकै। जे कोई परनिंदा करै हैं सो अनन्तकाल संसार वनविषै दुख भोगवे है। सम्यकदर्शन रूप जो रत्न ताका बडा गुण यही है जो पराया अवगुण सर्वथा ढाकै। जो साचा भी दोष पराया कहै सो अपराधी है। अर जो अज्ञानसू मत्सर भावसे पराया झूठा दोष प्रकाशै उस समान और पापी नाहीं। अपने दोष गुरुके निकट प्रकाशनो अर पराए दोष सर्वथा ढाकनो। जो पराई निन्दा करै सो जिनमार्गसे पराङ्मुख है।

यह केवलीके परम अद्भुत वचन सुनकरि सुर असुर नर सब ही आनन्दकू प्राप्त भए। वैरभावके दोष सुन सब सभाके लोग महादुखके भयकरि कम्पायमान भए। मुनि तो सर्व जीवनिसू निर्वैर हैं अधिकशुद्ध भाव धारते भए। अर चतुर्निकायके सर्व ही देव क्षमाकू प्राप्त होय वैरभाव तजते भए। अर अनेक राजा प्रतिबुद्ध होय शांतिभाव धार, गर्वका भार तजि मुनि अर श्रावक भए। अर जे मिथ्यावादी थे वह हू सम्यक्तकू प्राप्त भए। सब ही कर्मनिकी विचित्रता जान निश्वास नाखते भए। धिक्कार या जगतकी मायाकू, या भांति सब ही कहते भए। अर हाथ जोड सीस निवाय केवलीकू प्रणाम-
करि सुर असुर मनुष्य विभीषणकी प्रशंसा करते भए जो तिहारे आश्रयसू हमनें केवलीके मुख उत्तम पुरुषनिके चारित्र सुने। तुम धन्य हो बहुरि देवेन्द्र, नरेन्द्र, नागेन्द्र सबही आनन्दके भरे अपने परिवारगण सहित सर्वज्ञ देवकी स्तुति करते भए। हे भगवान पुरुषोत्तम! यह त्रैलोक्य सकल तुमकरि शोभै है। तातैं तिहारा सकलभूषण नाम सत्यार्थ है। तिहारी केवलदर्शन केवलज्ञानमई निज विभूति सब जगत

की विभूतिकू जीतकरि शोभ ह । यह अनन्त चतुष्टय लक्ष्मी सब लोकका तिलक ह । यह जगतके जीव अनादि कालके कर्मवश होय रहे ह, महा दुखक सागरमें पडे है, तुम दीननिके नाथ दीनबन्धु करुणानिधान जीवनिकू जिनराजपद देहु । हे केवलिन ! हम भव वनके मृग, जन्म जरा मरण रोग शोक वियोग व्याधि अनेक प्रकारके दुख भोक्ता, अशुभ कर्मरूप जाल विष पडे है तातै छूटना अति कठिन ह, सो तुम ही छुडायवे समर्थ हो । हमकू निज बोध देवहु जाकरि कर्मका क्षय होय । हे नाथ ! यह विषय, वासनारूप गहन वन, तामें हम निजपुरीका मार्ग भूल रहे ह, सो तुम जगतके दीपक हम कू शिवपुरीका पथ दरसावो । अर जे आत्मबोधरूप शातरसके तिसाए तिनकू तुम तषाके हरणहारे महासरोवर हो, अर कर्म भर्मरूप वनके भस्म करिवेकू साक्षात दावानल रूप हो, अर जे विकल्प-जाल नाना प्रकारके तेई भए बरफ ताकरि कम्पायमान जगतके जीव तिनकी शीत व्यथा हरिवेकू तुम साक्षात सूर्य हो । हे सर्वेश्वर ! सब भूतेश्वर ! जिनेश्वर ! तिहारी स्तुति करिवेकू चारज्ञानके धारक गणधरदेव हू समर्थ नाहीं तो और कौन ? हे प्रभो ! तुमकू हम बारम्बार नमस्कार करें हैं ।

पद्म पुराण ८५५

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रन्थ ताकी भाषा वचनिकाविषै राम लक्ष्मण विभीषण सुग्रीव सीता भामण्डलका वर्णन करनवाला एकसौ छहवां पर्व पूर्ण भया ।। १०६ ।।

अथानन्तर केवलीके वचन सुन संसार भ्रमणका जो महा दुःख ताकरि खेदखिन्न होय जिनदीक्षा की है अभिलाषा जाके, ऐसा रामका सेनापति कृतान्तवक्र रामसू कहता भया—हे देव ! मैं या संसार ८५५
असारविषै अनादिकालका मिथ्या मार्गकर भ्रमता हुवा दुःखित भया । अब मेरे मुनिव्रत धरिवेकी इच्छा है । तब श्रीराम कहते भए—जिनदीक्षा अति दुर्धर है, तू जगतका स्नेह तजि कैसे धारेगा ? महा तीव्र शीत उष्ण आदि बाईस परीषह कैसे सहेगा ? अर दुर्जन जननिके दुष्ट वचन कंटक तुल्य कैसे सहेगा ? अर अब तक तैने कभी भी दुःख सहे नाहीं, कमलकी कर्णिका समान शरीर तेरा सो

कैसे विषमभूमिके दुख सहेगा ? गहन वनविषै कैसे रात्रि पूरी करेगा ? अर प्रकट दृष्टि पड़े है शरीर के हाड अर नसाजाल जहां, ऐसे उग्रतप कैसे करेगा ? अर पक्ष मास उपवास, वोष टाल परघर नीरस भोजन कैसे करेगा ? तू महा तेजस्वी, शत्रुवोंकी सेनाके शब्द न सहि सके, सो कैसे नीच लोकनिके किए उपसर्ग सहेगा ? तब कृतांतवक्र बोला—हे देव ! जब मैं तिहारे स्नेहरूप अमृतकूं ही तजवेकूं समर्थ भया तो मुझे कहा विषम है । जब तक मृत्युरूप वज्रकरि यह देहरूप स्तंभ न चिगै ता पहिले मैं महादुखरूप यह भववन अंधकारमई वाससूं निकस्या चाहूं हूं । जो बलते घरमेंसे निकसै उसे दयावान न रोकै । यह संसार असार महानिंद्य है, इसे तजकरि आत्महित करूं । अवश्य इष्टका वियोग होयगा या शरीरके योगकरि सर्व दुख है सो हमारे शरीर बहुरि उदय न आवै या उपायविषै बुद्धि उद्यमी भई है । ये वचन कृतांतवक्रके सुन श्रीरामके आंसू आए अर नीठे नीठे मोहकूं दाबि कहते भए—मेरीसी विभूतिकूं तज तू तपके सन्मुख भया है सो धन्य है । जो कदाचित या जन्मविषै मोक्ष न होय अर देव होय तो संकटविषै आय मोहि संबोधियो । हे मित्र ! जो तू मेरा उपकार जाने है तो देवगतिमें विस्मरण मत करियो ।

तब कृतांतवक्रने नमस्कारकर कही, हे देव ! जो आप आज्ञा करोगे सोही होयगा । ऐसा कह सर्व आभूषण उतारे अर सकलभूषण केवलीकूं प्रणामकरि अंतर बाहिरके परिग्रह तजे । कृतांतवक्र था सो सौम्यवक्र हो गया । सुन्दर है चेष्टा जाकी, इसको आदि दे अनेक महाराजा वैरागी भए । उपजी है जिनधर्मकी रुचि जिनके निर्ग्रंथव्रत धारते भए । अर कईएक श्रावक व्रतकूं प्राप्त भए, अर कईएक सम्यक्त्वकूं धारते भए । वह सभा, हर्षित होय रत्नत्रय आभूषणकरि शोभित भई । समस्त सुर असुर नर सकलभूषण स्वामीकूं नमस्कारकरि अपने अपने स्थानक गए । अर कमलसमान है नेत्र जिनके, ऐसे श्रीराम सकलभूषण स्वामीकूं अर समस्त साधुनिकूं प्रणामकरि महा विनयरूपी सीताके समीप आए । कैसी है सीता ? महा निर्मल तपकरि तेज धरे । जैसी घृतकी आहूतिकरि अग्निकी शिखा

८५६

प्रज्ज्वलित होय तसी पापोके भस्म करिवेकू साक्षात अग्निरूप तिष्ठो है। आर्यिकानिके मध्य तिष्ठती देखी, देदीप्यमान है किरणनिका समूह जाके, मानो अपूर्व चन्द्रकांति तारानिके मध्य तिष्ठी है, आर्यिकानिके व्रत धरे। अत्यन्त निश्चल है। तजे हैं आभूषण जाने, तथापि श्रीह्री धृति कीर्ति बुद्धि लक्ष्मी लज्जा इनकी शिरोमणि सोहै है। श्वेत वस्त्रकू धरे कैसी सोहै है ? मानो मंद पवनकर चलायमान है फेन कहिए झाग जाके, ऐसी पवित्र नदी ही है, अर मानो निर्मल शरद पूनोकी चांदनी समान

शोभाकू धरे समस्त आर्यिकारूप कुमुदनियोकू प्रफुल्लित करणहारी भासै है। महा वैराग्यकू धरे मूर्तिवंती जिनशासनकी देवता ही है। सो ऐसी सीताकू देख आश्चर्यकू प्राप्त भया है मन जिनका, ऐसे श्रीराम कल्पवृक्ष समान क्षणएक निश्चल होय रहे। स्थिर हैं नेत्र भ्रकुटी जिनकी जैसें शरदकी मेघमालाके समीप कंचनगिरि सोहै तैसे श्रीराम आर्यिकानिके समीप भासते भए। श्रीराम चित्तविषै चितवते हैं यह साक्षात चन्द्रकिरण भव्यजन कुमुदनीकू प्रफुल्लित करणहारी सोहै है। बड़ा आश्चर्य है—यह कायर स्वभाव मेघके शब्दसे डरती सो अब महा तपस्विनी भयंकर वनविषै कैसे भयकू न प्राप्त होयगी ? नितम्बहीके भारसू आलस्यरूप गमन करणहारी महा कोमलशरीर तपसू विलाय जायगी। कहा यह कोमल शरीर, अर कहा यह दुर्धर जिनराजका तप ? सो अति कठिन है। जो दाह बड़े २ वृक्षनिकू दाहे, ताकरि कमलिनीकी कहा बात ? यह सदा मनवांछित मनोहर आहारकी करणहारी, अब कैसे यथालाभ भिक्षाकरि कालक्षेप करेगी ? यह पुण्याधिकारिणी रात्रिविषै स्वर्गके विमान समान सुन्दर महिलमें मनोहर सेजपर पौढती, अर बीण, बांसुरी, मृदंगादि मंगल शब्दकरि निद्रा लेती, ८५७
सो अब भयंकर वनविषै कैसे रात्रि पूर्ण करेगी ? वन तो डाभकी तीक्ष्ण अणियोकर विषम अर सिंह व्याघ्रादिकके शब्दकरि डरावना। देखहु मेरी भूल जो मूढ लोकनिके अपवादसू मैं महा सती पतिव्रता शीलवती सुन्दरी मधुर भाषिणी घरसे निकासी। या भांति चिंताके भारकरि पीडित श्रीराम पवन करि कम्पायमान कमल समान कम्पायमान होते भए। फिर केवलीके वचन चितार धीर्य धरि, आंसू

पोंछि, शोकरहित होय महा विनयकरि सीताकू नमस्कार किया। लक्ष्मण भी सौम्य है चित्त जाका, हाथ जोडि नमस्कारकरि राम सहित स्तुति करता भया। हे भगवती! धन्य, तू सती वन्दनीक है, सुन्दर है चेष्टा जाकी। जैसे धरा सुमेरुकू धारै तैसे तू जिनराजका धर्म धारै है। तैंनें जिनवचनरूप अमृत पीया उसकरि भवरोग निवारगी, सम्यक्त ज्ञानरूप जहाजकरि संसार समुद्रकू तिरैगी। जे पतिव्रता निर्मलचित्तकी धरणहारी हैं तिनकी यही गति है—अपनी आत्मा सुधारैं, अर दोऊ लोक अर दोऊ कुल सुधारैं। पवित्र चित्तकरि ऐसी क्रिया आदरी। हे उत्तम नियमकी धरणहारी! हम जो कोई अपराध किया होय सो क्षमा करियो। संसारी जीवनिके भाव अविवेकरूप होय हैं सो तू जिनमार्गविषैं प्रवरती संसारकी माया अनित्य जानी, अर परम आनन्दरूप यह दशा जीवनिकू दुर्लभ है। या भांति दोऊ भाई जानकीकी स्तुतिकरि लव अंकुशकू आगे धरैं। अनेक विद्याधर महीपाल तिनसहित अयोध्यामें प्रवेश करते भए, जैसे देवनिसहित इन्द्र अमरावतीमें प्रवेश करै। अर समस्त राणी नानाप्रकारके वाहन

निप र चढी परिवारसहित नगरमें प्रवेश करती भई। सो रामकू नगरमें प्रवेश करता देख मन्दिर ऊपर बैठी स्त्री परस्पर वार्ता करै है यह श्रीरामचन्द्र महा शूरवीर शुद्ध है अन्तःकरण जिनका, महा विवेकी, मूढ लोकनिके अपवादसूं ऐसी पतिव्रता नारी खोई। तब कईयक कहती भई जे निर्मल कुलके जन्मे शूरवीर क्षत्री हैं तिनकी यही रीति है—किसी प्रकार कुलकू कलंक न लगावैं। लोकनिके संदेह दूर करिवे निमित्त रामने उसकू दिव्य दई। वह निर्मल आत्मा दिव्यमें सांची होय लोकनिके संदेह मेटि जिनदीक्षा धारती भई। अर कोई कहै—हे सखी! जानकी विना राम कैसे दीखै है जैसें विना चांदनी चांद, अर दीप्ति विना सूर्य। तब कोई कहती भई यह आप ही महा कांतिधारी है इनकी कांति पराधीन नाहीं। अर कोई कहती भई सीताका वज्रचित्त है जो ऐसे पुरुषोत्तम पतिकू छोडि जिन-दीक्षा धारी। तब कोई कहती भई धन्य है सीता जो अनर्थरूप गृहवासकू तजि आत्मकल्याण किया। अर कोई कहती भई ऐसे सुकुमार दोऊ कुमार महा धीर लव अंकुश कैसे तजे गए? स्त्रीका प्रेम पति

सू छूटे, परन्तु अपने जाए पुत्रनिसूं न छूटे। तब कोई कहती भई ये दोऊ पुत्र परम प्रतापी हैं इनका माता क्या करेगी ? इनका सहाई पुण्य ही है। अर सब ही जीव अपने अपने कर्मके आधीन हैं। या भांति नगरकी नारी वचनालाप करै हैं। जानकीकी कथा कौनकूं आनन्दकारिणी न होय, अर यह सबही रामके दर्शनकी अभिलाषिनी रामकूं देखती २ तृप्त न भई, जैसे भ्रमर कमलके मकरंदसूं तृप्त न होय। अर कईएक लक्ष्मणकी ओर देख कहती भई ये नरोत्तम नारायण लक्ष्मीवान अपने

प्रतापकरि वश करी है पृथ्वी जिन्होंने, चक्रके धारक उत्तम राज्य लक्ष्मीके स्वामी वैरनिकी स्त्रीनिकूं विधवा करणहारे, रामके आज्ञाकारी हैं। या भांति दोनों भाई लोककरि प्रशंसा योग्य अपने मंदिर में प्रवेश करते भए। जैसे देवेन्द्र देवलोकमें करै। यह श्रीरामका चारित्र जो निरंतर धारण करै सो अविनाशी लक्ष्मीकूं पावै।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृतग्रंथ ताकी भाषावचनिकाविषै कृतांतवक्रका वैराग्य वर्णन करनेवाला एकसौ सातवां पर्व पूर्ण भया ॥१०७॥

अथानंतर राजा श्रेणिक गौतम स्वामीके मुख श्रीरामका चरित्र सुन मनविषै विचारता भया कि सीताने लव अंकुश पुत्रनिसूं मोह तज्या सो वह सुकुमार मृगनेत्र निरंतर सुखके भोक्ता कैसे माताका वियोग सहि सके ? ऐसे पराक्रमके धारक उदारचित्त तिनकूं भी इष्ट वियोग अनिष्ट संयोग होय हैं तो औरकी कहा बात ? यह विचार करि गणधर देवसूं पूछ्या, हे प्रभो ! मैं तिहारे प्रसादकरि राम लक्ष्मणका चरित्र सुण्या, अब बाकी लव अंकुशका सुण्या चाहूं हूं। तब इन्द्रभूति कहिए, गौतम स्वामी कहते भए—हे राजन ! काकंदी नाम नगरी, तामें राजा रतिवर्द्धन, राणी सुदर्शना, ताके पुत्र दोय एक प्रियंकर, दूजा हितंकर। अर मंत्री सर्वगुप्त राज्यलक्ष्मीका धुरंधर सो स्वामीद्रोही, राजाके मारिवेका उपाय चिंतवे। अर सर्वगुप्तकी विजयावती सो पापिनी राजासूं भोग किया चाहै। अर राजा शीलवान परदारापरांगमुख याकी मायाविषै न आया। तब याने राजासूं कही—मंत्री तुम

कू मारघा चाहे है सो राजाने याकी बात न मानी। तब यह पतिकू भरमावती भई—जो राजा तोहि मार मोहि लिया चाहै है। तब मन्त्री दुष्टने सब सामंत राजासू फोरे, अर राजाका जो सोवनेका महिल तहां रात्रिकू अग्नि लगाई। सो राजा सदा सावधान हुता अर महिलविषै गोप्य सुरंग रखाई थी सो सुरंगके माग होय दोऊ पुत्र अर स्त्रीकू लेय राजा निकस्या। सो काशीका धनी राजा कश्यप महा न्यायवान, उग्रवंशी राजा रतिवर्धनका सेवक था, ताके नगरकू राजा गोप्य चाल्या। अर सर्वगुप्त रतिवर्धनके सिंहासनपर बैठ्या। सबकू आज्ञाकारी किए। अर राजा कश्यपकू भी पत्र लिख दूत पठाया कि तुम भी आय मोहि प्रणामकरि सेवाकरो। तब कश्यपने कही, हे दूत! सर्वगुप्त स्वामीद्रोही है, सो दुर्गतिके दुःख भोगेगा, स्वामीद्रोहीका नाम न लीजे, मुख न देखिये, सो सेवा कैसे कीजे? ताने राजाकू दोऊ पुत्र अर स्त्री सहित अग्निमें जलाया सो स्वामिघात, स्त्रीघात, अर बालघात यह महादोष उसने उपार्जे। तातै ऐसे पापीका सेवन कैसे करिये? जाका मुख न देखना। सो सब लोकनिके देखते उसका शिर काटि धनीका वैर लूंगा। तब यह वचन कहि दूत फेर दिया। दूतने जाय सर्वगुप्तकू सब वृत्तांत कहा। सो अनेक राजानिकरियुक्त महासेनासहित कश्यप ऊपर आया। सो आयकरि कश्यपका देश घेरा, काशीके चौगिर्द सेना पडी तथापि कश्यपके सुलहकी इच्छा नाहीं, युद्धहीका निश्चय। अर राजा रतिवर्धन रात्रिकेविषै काशीके वनविषै आया। अर एक द्वारपाल तरुण कश्यप पर भेजा सो जाय कश्यपसू राजाके आवनेका वृत्तांत कहता भया। सो कश्यप अतिप्रसन्न भया अर कहा महाराज! कहां महाराज! ऐसे वचन बारम्बार कहता भया। तब द्वारपालने कह्या, महाराज वनविषै तिष्ठै है। तब यह धर्मी स्वामिभक्त अतिहर्षित होय परिवार सहित राजापै गया अर उसकी आरती करी, अर पांव पडकरि जय जयकार करता नगरमें लाया, नगर उछाला। अर यह ध्वनि नगरविषै विस्तरी कि जो काहूसू न जीत्या जाय ऐसा रतिवर्धन राजेन्द्र जयवंत होहू। राजा कश्यपने धनीके आवनेका अति उत्सव किया। अर सब सेनाके सामंतनिकू कहाय भेज्या जो स्वामी तो विद्य-

मान तिष्ठ हु अर तुम स्वामीद्रोहीके साथ होय स्वामीसू लडोगे, कहा यह तुमकू उचित है?

तब वह सकल सामंत सवगुप्तकू छोडि स्वामीप आए। अर युद्धविषै सवगुप्तकू जीवता पकडि काकंदी नगरीका राज्य रतिवर्धनके हाथविषै आया। राजा जीवता बच्या सो बहुरि जन्मोत्सव किया, महा दान किए, सामंतनिके सन्मान किए, भगवानकी विशेष पूजा करी, कश्यपका बहुत सन्मान किया, अति बधाया, अर घरकू विदा किया। सो कश्यप काशीकेविषै लोकपालनिकी नाईं रमै। अर सवगुप्त सवलोकनिद्य मतकके तुल्य भया कोई भेटै नाहीं, मुख देखे नाहीं। तब सवगुप्तने अपने स्त्री विजयावतीका दोष सवत्र प्रकाशा, जो यान राजाबीच अर मो बीच अन्तर डाल्या। यह वृत्तांत सुन विजयावती अति द्वेषकू प्राप्त भई—जो मैं न राजाकी भई, न धनीकी भई। सो मिथ्या तपकरि राक्षसी भई, अर राजा रतिवर्धनने भोगनित उदास होय सुभानुस्वामीके निकट मुनिव्रत धरे। सो राक्षसीने रतिवर्धन मुनिकू अत्यन्त उपसर्ग किए। मुनि शुद्धोपयोगके प्रसादत केवली भए। प्रियंकर हितंकर दोनो कुमार पहिले याही नगरविषै दामदेव नामा विप्रके श्यामली स्त्रीके सुदेव वसुदेव नामा पुत्र हुते। सो वसुदेवकी स्त्री विश्वा अर सुदेवकी स्त्री प्रियगु। इनका गृहस्थ पद प्रशंसा योग्य हुता। इन श्रीतिलकनामा मुनिकू आहारदान दिया सो दानके प्रभावकरि दोनो भाई स्त्रीसहित उत्तरकुरु भोगभूमिविषै उपजे, तीनपल्यकी आयु भई। साधुका जो दान सोई भया वृक्ष, ताके महाफल भोग भूमिविषै भोगि दूजे स्वर्ग देव भए। वहा सुख भोगि चये सो सम्यग्ज्ञानरूप लक्ष्मी करि मंडित पाप कर्मके क्षय करणहारे प्रियंकर हितंकर भये। मुनि होय ग्रैवेयक गये। तहात चयकरि लवणांकुश भये, महाभव्य, तद्भव मोक्षगामी। अर राजा रतिवर्धनकी राणी सुदर्शना प्रियंकर हितंकरकी माता पुत्रनि से जाका अत्यन्त अनुराग था सो भरतार अर पुत्रनिके वियोगत अत्यन्त आर्तरूप होय नाना योनिमे भ्रमणकरि किसी एक जन्मविषै पुण्य उपार्जि, यह सिद्धार्थ भया, धर्मविषै अनुरागी, सर्वविद्याविषै निपुण। सो पूर्व भवके स्नेहसू लव अंकुशकू पढाए। ऐसे निपुण किए जो देवनिकरि भी न जीते

जाय। यह कथा गौतम स्वामीने राजा श्रेणिकसू कही। अर हे आज्ञाकारी हे नृप! यह संसार असार है। अर इस जीवके कौन कौन माता पिता न भये? जगतके सबही सम्बन्ध झूठे है एक धर्म हीका सम्बन्ध सत्य है। इसलिये विवेकिनिकू धर्महीका यत्न करना, जिसकरि संसारके दुखनिसू छूटै। समस्त कर्म महानिंद्य, दुःखकी वृद्धिके कारण, तिनकू तजकरि जनका भाव्या तपकरि अनेक सूर्यकी कांति कू जीत साधु शिवपुर कहिये मुक्ति तहां जाय है।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रन्थ ताकी भाषा वचनिकाविषै लवणांकुशके पूर्व भवका वर्णन करनेवाला एकसौ आठवां पर्व पूर्ण भया ॥ १०८ ॥

अथानन्तर सीता पति अर पुत्रनिकू तजकरि कहा कहां तप करती भई सो सुनहु—कैसी है सीता? लोकविषै प्रसिद्ध है यश जाका। जिस समय सीता भई वह श्रीमुनिसुव्रतनाथजीका समय था। तेवीसवें भगवान महा शोभायमान, भवभ्रमके निवारणहार, जैसा अरहनाथ अर मल्लिनाथका समय तैसा मुनिसुव्रतनाथका समय, ताविषै श्रीसकल भूषण केवली केवलज्ञानकरि लोकालोकके ज्ञाता विहार करै हैं। अनेक जीव महाव्रत किए, सकल अयोध्याके लोक जिनधर्मविषै निपुण विधिपूर्वक गृहस्थका धर्म आराधैं। सकल प्रजा भगवान् श्रीसकलभूषणके वचनविषै श्रद्धावान। जैसे चक्रवर्तीकी आज्ञाकू पालैं तैसे भगवान धर्मचक्री तिनकी आज्ञा भव्य जीव पालै। रामका राज्य महाधर्मका उद्योतरूप जा समय घने लोक विवेकी साधुसेवाविषै तत्पर। देखहु जो सीता अपनी मनोग्यताकरि देवांगनानिकी शोभाकू जीतती हुती सो तपकरि ऐसी होय गई मानो दग्ध भई माधुरी लता ही है। महा वैराग्यकरि मंडित अशुभ भावकरि रहित, स्त्री पर्यायकू अतिनिंदती, महातप करती भई। धूरकर धूसर होय रहे हैं केश जाके, अर स्नानरहित, शरीरके संस्काररहित, पसेवकरि युक्त गात्र, जाविषै रज आय पडै सो शरीर मलिन होय रहा है। बेला तेला पक्ष उपवासकरि तनु क्षीण किया, दोष टारि शास्त्रोक्त पारणा

करै। शीलव्रत गुणनिविषै अनुरागिणी, अध्यात्मके विचारकरि अत्यन्त शांत होय गया है चित्त जाका वश किये हैं इन्द्रिय जान औरनित न बन ऐसा उग्रतप करती भई। मांस अर रुधिरकरि वर्जित भया है सब अंग जाका, प्रकट नजर आवे है अस्थि अर नशाजाल जाके, मानों काठकी पुतली ही है। सूखी नदी समान भासती भई। बैठ गये हैं कपोल जाके, जूडा प्रमाण धरती देखती चलै, महा दयावन्ती, सौम्य है दृष्टि जाकी, तपका कारण वह ताके समाधानके अर्थि विधिपूर्वक भिक्षावृत्तिकरि आहार करै। ऐसा तप किया कि शरीर और ही होय गया। अपना पराया कोई न जाने जो यह सीता है। इसे ऐसा तप करती देख सकल आर्या याहीकी कथा करें, याहीकी रीति देखि और हू आचरै, सबनि विषै मुख्य भई। या भांति बासठ वर्ष महा तप कीए। अर तेतीस दिन आयुके बाकी रहे तब अनशन व्रत धार परम आराधना आराधि, जैसे पुरुषादिक उच्छिष्ट सांथरेकू तजिये तैसे शरीरकू तजकरि अच्युतस्वर्गविषै प्रतीन्द्र भई।

गौतम स्वामी कहे हैं, हे श्रेणिक! जिनधर्मका महात्म्य देखो जो यह प्राणी स्त्री पर्यायविषै उपजी हुती सो तप के प्रभावकरि देवोंका प्रभु होय सीता अच्युतस्वर्गविषै प्रतीन्द्र भई। वहां मणिनिकी कांतिकरि उद्योत किया है आकाशविषै जाने ऐसे विमानविषै उपजी, मणि कांचनादि महाद्रव्यनिकरि मंडित, विचित्रता धरे, परम अद्भुत सुमेरुके शिखर समान ऊंचा है, वहां परम ईश्वरताकरि, सपन्न प्रतेन्द्र भया। हजारों देवांगना तिनके नेत्रोंका आश्रय, जैसा ताराओंकरि मंडित चन्द्रमा सोहै तैसा सोहता भया। अर भगवानकी पूजा करता भया। मध्यलोकमें आय तीर्थोंकी यात्रा, साधुवोंकी सेवा करता भया अर तीर्थंकरोंके समोसरणमें गणधरोंके मुखसू धर्म श्रवण करता भया। यह कथा सुनि गौतमस्वामीसू राजा श्रेणिक पूछी—हे प्रभो! सीताका जीव सोलहवें स्वर्ग प्रतेन्द्र भया उस समय वहां इन्द्र कौन था? तब गौतमस्वामी ने कही उस समय वहां राजा मधुका जीव इन्द्र था। उसके निकट यह आया, सो वह मधुका जीव नेमिनाथ स्वामीके समय अच्युतेन्द्रपदसू चयकरि वासुदेवकी रुक्मणी

राणी ताके प्रद्युम्न पुत्र भया अर उसका भाई कटभ जाम्बुवतीके शम्भु नामा पुत्र भया। तब श्रेणिकने गौतम स्वामीसू विनती करी हे प्रभो! म तुम्हारे वचनरूप अमृत पीवता पीवता तप्त नाहीं, जसे लोभी जीव धनसू तप्त नाहीं। इसलिए मुझे मधुका अर उसके भाई कैटभका चारित्र कहो। तब गणधर कहते भए—एक मगधनामा देश सब धान्यकरि पूण, जहाँ चारो वण हृषसू बस, धम काम अथ मोक्षके साधन अनेक पुरुष पाइए, अर भगवानके सुन्दर चत्यालय, अर अनेक नगर ग्राम तिनकरि वह देश शोभित, जहा नदियोके तट गिरियोके शिखर वनमें ठौर ठौर साधुवोके सघ विराजे हैं। राजा नित्योदित राज्य कर। उस देशमें एक शालि नाम ग्राम, नगर सारिखा शोभित, वहा एक ब्राह्मण सोमदेव, उसके स्त्री अग्निला, पुत्र अग्निभूत वायुभूत सो वे दोनो भाई लौकिक शास्त्रमें प्रवीण अर पठन पाठन दान प्रतिग्रहमें निपुण, अर कुलके तथा विद्याके गवकरि गर्वित, मनविष ऐसा जाने हमते अधिक कोई नाहीं। जिनधमत परागमुख रोग समान इन्द्रिनिके भोग तिनहीकू भले जान। एक दिन स्वामी नन्दीवधन अनेक मुनिनिसहित वनविष आय विराजे, बडे आचाय अवधिज्ञानकरि समस्त मूर्तिक पदाथनिकू जान। सो मुनिनिका आगमन सुनि ग्रामके लोक सब दशनकू आए हुते अर अग्निभूत वायुभूतन काहूसू पूछी जो यह लोक कहा जाय ह? तब वाने कही नन्दीवधन मुनि आए ह तिनके दशनकू जाय ह। तब सुनकरि दोऊ भाई क्रोधायमान भए जो हम वादकरि साधुनिकू जीतेंगे। तब इनकू माता पिताने मना किया जो तुम साधुनित वाद न करो तथापि इन्होंने न मानी। वादकू गए। तब इनकू आचायके निकट जाते देखि एक सात्विकनामा मुनि अवधिज्ञानी इनकू पूछते भए—तुम कहा जावो हो? तब इन्होने कही तुमविष श्रेष्ठ तुम्हारा गुरु ह, उसकू वादकरि जीतवे जाय ह। तब सात्विक मुनिने कही हमसू चर्चा करो। तब यह क्रोधकरि मुनिके समीप बैठे अर कही तू कहांते आया ह। तब मुनिने कही तुम कहात आए? तब वह क्रोधकरि कहते भए यह त कहा पूछी? हम ग्रामत आए ह। कोई शास्त्रकी चर्चा करहु। तब मुनिने कही यह तो हम जान ह तुम शालिग्रामसू आए

है अर तिहारे बापका नाम सोमदेव, माताका नाम अग्निला, अर तिहारे नाम अग्निभूत वायुभूत। तुम विप्रकुल हो, सो यह तो प्रकट है परन्तु हम तमसे यह पूछे है—अनादिकालके भववनविषै भ्रमण करो हो सो या जन्मविषै कौन जन्मसूं आए हो ? तब इनने कही यह जन्मातरकी बात हमकूं पूछी सो और कोई जाने है ? तब मुनिने कही हम जाने है, तुम सुनो। पूर्वभवविषै तुम दोऊ भाई या ग्रामके वनविषै परस्पर स्नेह के धारक स्याल हुते, विरूपमुख। अर याही ग्रामविषै एक बहुत दिनका वासी पामर नामा पितहड ब्राह्मण, सो वह खेतविषै सूर्य अस्त समय क्षुधाकरि पीडित नाडी आदि उपकरण तजकरि आया। अर अंजनगिरि तुल्य मेघ माला उठी। सात दिन अहो रात्रका भड भया। सो पामर तो घर से आय न सक्या। अर वे दोऊ स्याल अति क्षुधातुर अंधेरी रात्रिविषै आहारकूं निकसे। सो पामरके खेतविषै भीजी नाडी कर्दमकरि लिप्त पडी हुती सो उन भक्षण करी। उसकरि विकराल उदर वेदना उपजी, स्याल मूवे, अकाम निर्जराकरि तुम सोमदेवके पुत्र भए। अर वह पामर सात दिन पीछे खेत में आया सो दोऊ स्याल मूए देखि अर नाडी कटी देखि स्यालनिकी चर्म ले भाथडी करी सो अबतक पामरके घरविषै टगी है। अर पामर मरकरि पुत्रके घर पुत्र भया सो जातिस्मरण होय मौन पकड्या जो मैं कहा कहो ? पिता तो मेरा पूर्वभवका पुत्र अर माता पूर्व भवकी पुत्रकी वधू तातै न बोलना ही भला। सो यह पामरका जीव मौनी यहा ही बैठा है। ऐसा कहि मुनि पामरकेजीवसूं बोले—अहो तू पुत्रके पुत्र भया सो यह आश्चर्य नाहीं, ससारका ऐसा ही चरित्र है। जैसे नृत्यके अखाडेमें बहुरूपिया अनेक रूप बनाय नाचे, तैसे यह जीव नाना पर्यायरूप भेष धर नाचै है, राजातै रंक होय, रंक सूं राजा होय, स्वामीसूं सेवक, सेवकसूं स्वामी, पितासूं पुत्र, पुत्रसूं पिता, मातासूं भार्या, भार्यासूं माता। यह ससार अरहटकी घडी है। ऊपरली नीचे, नीचली ऊपर, ऐसा ससारका स्वरूप जान, हे वत्स ! अब तू गूंगापन तजि वचनालाप करहु। या जन्मका पिता है तासे पिता कहि, मातासूं माता कहि। पूर्वभवका कहा व्यवहार रहा ? यह वचन सन वह विप्र हर्षकरि रोमाच होय फूल गए है नेत्र

८६५

जाके मुनिकू तीन प्रदक्षिणा देय नमस्कारकरि जस वृक्षकी जड उखड जाय अर गिर पडै तैसे पायन पड्या। अर मुनिकू कहता भया—हे प्रभो! तुम सवज्ञ हो, सकल लोककी व्यवस्था जानो हो या भयानक ससार सागरविषे म डूबू था सो तुम दयाकरि निकास्या, आत्मबोध दिया। मेरे मनकी सब जानी। अब मोहि दीक्षा देवहु ऐसा कहकरि समस्त कुटुम्बका त्यागकरि मुनि भया।

यह पामरका चरित्र सुन अनेक लोक मुनि भए, अनेक श्रावक भए, अर इन दोनो भाईनिकी पूर्व भवकी खाल लोक ले आए सो इननने देखी, लोकोने हास्य करी जो यह मासके भक्षक स्याल थे सो यह दोऊ भाई द्विज बडे मूर्ख जो मुनिनिसू वाद करने आए। ये महामुनि तपोधन, शुद्धभाव, सबके गुरु, अहिसा महाव्रतके धारक, इन समान और नाहीं, यह महामुनि महाव्रतरूप शिखाके धारक, क्षमारूप यज्ञोपवीत धरे, ध्यानरूप अग्निहोत्रके कर्ता महाशात मुक्तिके साधनविषै तत्पर। अर जे सब आरम्भविषे प्रवरते ब्रह्मचर्यरहित वे मुखसू कहै है कि हम द्विज है परन्तु क्रिया करे नाहीं। जसे कोई मनुष्य या लोकमे सिह कहावै, देव कहावै, परन्तु वह सिह देव नाहीं, तसे यह नाममात्र ब्राह्मण कहावै परन्तु इनमे ब्रह्मत्व नाहीं। अर मुनिराज धन्य है परम सयमी महा क्षमावान तपस्वी जितेन्द्री निश्चय थकी ये ही ब्राह्मण है। ये साधु महाभद्रपरणामी भगवतके भक्त, महा तपस्वी, यति, धीर, वीर, मूलगुण उत्तरगुणके पालक, इन समान और कोऊ नाहीं। यह अलौकिक गुण लिए है। अर इनहीकू परिव्राजक कहिए, काहेतै? जो वह ससारकू तजि मुक्तिकू प्राप्त होय ये निर्ग्रन्थ, अज्ञान, तिमिरके हर्ता तपकरि कर्मनिकी निर्जरा करै हैं। क्षीण किए है रागादिक जिन्होने महाक्षमावान पापनिके नाशक तातै इनकू क्षपणक हू कहिए। यह सयमी कषायरहित शरीरतै निर्मोह दिगम्बर योगीश्वर ध्यानी ज्ञानी पडित निस्पृह सो ही सदा वदिवे योग्य है। ए निर्वाणकू साधै तातै ये साधु कहिए। अर पच आचारकू आप आचरै औरनिकू आचरावैं तातै आचार्य कहिए। आगार कहिए घर ताके त्यागी, तातैं अनगार कहिए। शुद्ध भिक्षाके ग्राहक तातै भिक्षुक कहिए। अति कायक्लेशकरि अशुभकर्मके

त्यागी, उज्ज्वल क्रियाके कर्ता, तप करते खेद न मान तातै श्रमण कहिए। आत्मस्वरूपकू प्रत्यक्ष अनुभवै तातैं मुनि कहिए। रागादिक रोगोके हरिवेका यत्न कर तातै यति कहिए। या भांति लोकनिने साधकी स्तुति करी अर इन दोनो भाईनिकी निंदा करी। तब यह मानरहित बिलखे होय घर गए रात्रिकेविषे पापी मुनिके मारिवेकू आए। अर वे सात्विक मुनि अपरिग्रही संघकू तजि अकेले मसान भूमिविषे अस्थ्यादिकसू दूर एकांत पवित्र भूमिमें विराजे थे। कैसी है वह भूमि? जहां रीछ व्याघ्र आदि दुष्ट जीवोंका नाद होय रहा है। अर राक्षस भूत पिशाचोंकरि भरया है, नागोंका निवास है, अंधकाररूप भयंकर। तहां शुद्ध शिला जीव जंतुरहित उसपर कायोत्सर्ग धरि खडे थे। सो उन पापियों ने देख। दोनों भाई खड्ग काढि क्रोधायमान होय कहते भए जब तो तोहि लोकोंने बचाया अब कौन बचावेगा? हम पंडित पृथ्वीविषे श्रेष्ठ, प्रत्यक्ष देवता, तू निलज्ज हमकू स्याल कहै। यह शब्द कहि दोनो अत्यंत प्रचंड होठ डसते लाल नेत्र दयारहित मुनिके मारिवेकू उद्यमी भए। तब वनका रक्षक यक्ष उसने देखे, मनविषैं चितवता भया—देखो ऐसे निर्दोष साधु ध्यानी कायासू निर्ममत्व तिनके मारिवेकू उद्यमी भए। तब यक्षने इन दोनो भाईकू कीले, सो हलचल सकै नाहीं, दोनों पसवारे खडे। प्रभात भया, सकल लोक आए, देखें तो यह दोनो मुनिके पसवारे कीले खडे हैं। अर इनके हाथविषैं नंगी तलवार है। तब इनकू सब लोक धिक्कार धिक्कार कहते भए। यह दुराचारी पापी अन्याई ऐसा कर्म करनेकू उद्यमी भए इन समान अर पापी नाहीं। और यह दोनो चित्तविषै चितवते भए जो यह धर्म का प्रभाव है हम पापी थे सो बलात्कार कीले, स्थावरसम करि डारे। अब या अवस्थासू जीवते बचें तो श्रावकके व्रत आदरें। अर उस ही समय इनके माता पिता आए बारम्बार मुनिकू प्रणामकरि विनती करते भए—हे देव! यह कपूत पुत्र है। इन्होंने बहुत बुरी करी। आप दयालु हो, जीवदान देवो। तब साधु बोले हमारे काहूसू कोप नाहीं, हमारे सब मित्र बांधव हैं। तब यक्ष लाल नेत्रकरि अति गुंजारसू बोल्या अर सबोंके समीप सब वृत्तांत कहया कि जो प्राणी साधुवोंकी निंदा करें सो

अनर्थकूं प्राप्त होवें । जसे निर्मल काचविषै बाका मुखकरि निरखै तो बाका ही दीखै, तैसे जो साधुवों कूं जैसा भावकरि देख तैसा ही फल पावै । जो मुनियोकी हास्य करै सो बहुत दिन रुदन करै । अर कठोर वचन कहै सो क्लेश भोगवै, अर मुनिका वध करै तो अनेक कुमरण पावै, द्वेष करै सो पाप उपार्जे, भव भव दुख भोगवै । अर जैसा करै तैसा फल पावै यक्ष कहै है, हे विप्र ! तेरे पुत्रोंके दोषकरि मैं कीले है, विद्याके मानकरि गर्वित मायाचारी दुराचारी संयमियोके घातक है । ऐसे वचन यक्षने कहे । तब सोमदेव विप्र हाथ जोडि साधुकी स्तुति करता भया, अर रुदन करता भया । आपकूं निंदता छाती कूटता, ऊर्ध्व भुजाकरि स्त्रीसहित विलाप करता भया । तब मुनि परम दयालु यक्षकूं कहते भए-हे सुन्दर ! हे कमल नेत्र ! यह बालबुद्धि है, इनका अपराध तुम क्षमा करो । तुम जिनशासनके सेवक हो, सदा जिनशासनकी प्रभावना करो हो, तातै मेरे कहेसूं इनकूं क्षमा करो । तब यक्षने कही आप कही सो ही प्रमाण । वे दोनो भाई छोडे । तब यह दोनो भाई मुनिकूं प्रदक्षिणा देय नमस्कार करि साधुका व्रत धरिवेकूं असमर्थ, तातै सम्यक्त्वसहित श्रावकके व्रत आदरते भए । जिनधर्मकी श्रद्धा के धारक भए । अर इनके माता पिता व्रत ले छोडते भए सो वे तो अव्रतके योगसूं पहिले नरक गये अर यह दोनो विप्रपुत्र निसंदेह जिनशासन रूप अमृतका पानकरि हिंसाका मार्ग विषवत तजते भए । समाधिमरणकरि पहिलेस्वर्ग उत्कृष्ट देव भए । वहांसूं चयकरि अयोध्याविषै समुद्र सेठ, उसके धारणी स्त्री, उसकी कुक्षिविषै उपजे, नेत्रनिकूं आनंदकारी, एकका नाम पूर्णभद्र, दूजेका नाम कांचनभद्र । सो श्रावकके व्रत धारि पहिले स्वर्ग गए । अर ब्राह्मण के भवके इनके पिता माता पापके योगसूं नरक गए हुते वे नरकसूं निकसि चांडाल अर कूकरी भए वे पूर्णभद्र अर कांचनभद्रके उपदेशसूं जिनधर्मका आराधन करते भए, समाधिमरणकरि सोमदेव द्विजका जीव चांडालसूं नन्दीश्वर द्वीपका अधिपति देव भया, अर अग्निला ब्राह्मणीका जीव कूकरीसूं अयोध्याके राजाकी पुत्री होय उस देवके उपदेशसूं विवाहका त्यागकरि आर्यिका होय उत्तम गति गई । वे दोनो परम्पराय मोक्ष पावेंगे ।

अर पूणभद्र काचनभद्रका जीव प्रथम स्वगसू चयकरि अयोध्याका राजा हेम, राणी अमरावती, तिसके मधु कटभ नामा पुत्र जगत विख्यात भए। जिनकू कोई जीत न सक, महा प्रबल, महा रूपवान, जिन्होने यह समस्त पृथ्वी वश करी। सब राजा तिनके आधीन भए। भीम नाम राजा गढके बलकरि इनकी आज्ञा न मान। असैं चमरेन्द्र असुर कुमारनिका इन्द्र नन्दनवनकू पाय प्रफुल्लित होय ह तस वह अपने स्थानके बलकरि प्रफुल्लत रह। अर एक वीरसेन नाम राजा बटपुरका धनी, मधु कटभका सेवक, उसने मधु कटभकू विनती पत्र लिख्या–हे प्रभो! भीमरूप अग्निने मेरा देशरूप वन भस्म किया। तब मधु क्रोधकरि बडी सेनासू भीम ऊपरि चढ्या, सो मार्गविषै वटपुर जाय डेरा किए। वीरसेनने सम्मुख जाय अति भक्तिकरि मिहमानी करी। उसके स्त्री चन्द्रमा समान ह वदन जाका, सो वीरसेन मूखने उसके हाथ मधुका आरत्या कराया, अर उसहीके हाथ जिमाया। चन्द्राभाने पतिसू घनी ही कही जो अपने घरविषै सुन्दर वस्तु होय सो राजाकू न दिखाइए, पतिने न मानी। राजा मधु चन्द्राभाकू देखि मोहित भया। मनविषै विचारी इस सहित विन्ध्याचलके वनका वास भला अर या बिना सब भूमिका राज्य भी भला नाहीं। सो राजा अन्याय ऊपर आया। तब मन्त्रीने समझाया–अबार यह बात करोगे तो काय सिद्ध न होयगा, अर राज्य भष्ट होयगा। तब राजा मन्त्रियोके कहेसू राजा वीरसेनकू लार लेय भीमप गया। उसे युद्धविषै जीत वशीभूत किया अर और सब राजा वश किए। बहुरि अयोध्या आय चन्द्राभाक लेयवेका उपाय चितया। सब राजा वसतकी क्रीडाके अर्थ स्त्रीसहित बुलाये। अर वीरसेनकू चन्द्राभासहित बुलाया, तब हू चन्द्राभाने कही कि मुझे मत ले चलो, सो न मानी, ले ही आया। राजाने मासपर्यंत वनविषै क्रीडा करी। अर राजा आए थे तिनकू दान सन्मानकरि स्त्रियो सहित विदा किए। अर वीरसेनकू कयक दिन राख्या अर वीरसेनकू भी अतिदान सन्मानकरि विदा किया। अर चन्द्राभाके निमित्त कही इनके निमित्त अद्भुत आभूषण बनवाए हैं सो अभी बन नहीं चुके हैं। तात इनकू तिहारे पीछे विदा करेंगे। सो वह भोला कुछ समझे नाहीं, घर गया। वाके गए

पीछे मधुने चन्द्राभाकू महलविष बुलाया। अभिषेककरि पटराणीपद दिया, सब राणियोके ऊपर करी। भोगकरि अंध भया है मन जिसका, इसे राखि आपकू इन्द्र समान मानता भया। अर वीरसेन ने सुना कि चन्द्राभा मधुने राखी तब पागल होय कयक दिनविष मंडवनामा तापसका शिष्य होय पचाग्नि तप करता भया। अर एक दिन राजा मधु न्यायके आसन बठ्या सो एक परदारारतका न्याय आया। सो राजा न्यायविष बहुत देरतक बठ रहे। बहुरि मन्दिरविष गए, तब चन्द्राभाने हस-करि कही महाराज! आज घनी वेर क्यो लागी? हम क्षुधाकरि खेदखिन्न भई। आप भोजन करो तो पीछे भोजन करू। तब राजा मधुने कही आज एक परनारीरतका न्याय आय पड्या, तात वेर लागी। तब चन्द्राभाने हसकरि कही जो परस्त्रीरत होय उसकी बहुत मानता करनी। तब राजाने क्रोधकरि कह्या तुम यह क्या कही जे दुष्ट? व्यभिचारी ह तिनका निग्रह करना। जे परस्त्रीका स्पश करें ते पापी ह। सेवन करें तिनकी कहा बात? ऐसे कम करें तिनकू महादण्ड दे नगरसू काढने। जे अन्याय मार्गी ह वे महा पापी नरकविष पडे है। अर राजाओके दड योग्य है तिनका मान कहा? तब राणी चन्द्राभा राजाकू कहती भई—हे नप! यह परदारा सेवन महा दोष ह तो तुम आपकू दड क्यो न देवो? तुमही परदाररत हो तो औरोकू कहा दोष? जसा राजा तसी प्रजा। जहा राजा हिंसक होय अर व्यभिचारी होय तहा न्याय कसा? तात चुप होय रहो। जिस जलकरि बीज उग अर जगत जीवे, सो जलही जो जलाय मारे तो और शीतल करणहारा कौन? ऐसे उलाहनाके वचन चन्द्राभाके सुन राजा कहता भया—हे देवी! तम कहो हो सो ही सत्य। बारम्बार इसकी प्रशंसा करी, अर कहा मै पापी लक्ष्मीरूप पाशकरि बेढ्या विषयरूप कीचविष फस्या, अब इस दोषसू कसे छूटू? राजा ऐसा विचार कर है। अर अयोध्याके सहश्रीनामा वनविष महासघसहित सिहपाद नामा मुनि आए। राजा सुनकरि रणवास-सहित अर लोकूसहित मुनिके दशनकू गया। विधिपूवक तीन प्रदक्षिणा देय प्रणामकरि भूमिविष बठ्या, जिनेंद्रका धम श्रवणकरि भोगोसू विरक्त होय मुनि भया। अर राणी चन्द्राभा बडे राजाकी बेटी रूपकरि

अतुल्य, सो राज विभूति तजि आर्यिका भई। दुर्गतिकी वेदनाका है अधिक भय जिसकू। अर मधुका भाई कैटभ राजकू विनाशीक जान महा व्रतधारि मुनि भया। दोऊ भाई महा तपस्वी पृथ्वीविषैं विहार करते भए अर सकल स्वजन परजनके नेत्रनिकू आनन्दका कारण मधुका पुत्र कुलवर्धन अयोध्याका राज्य करता भया, अर मधु सकडो वरस व्रत पाल दर्शन ज्ञान चारित्र तप यही चार आराधना

आराधि समाधिमरणकरि सोलहवा अच्युतनामा स्वर्ग वहा अच्युतेन्द्र भया। अर कैटभ पन्द्रहवा आरण नामा स्वर्ग वहा आरणेन्द्र भया। गौतम स्वामी कहे है—हे श्रेणिक! यह जिनशासनका प्रभाव जानो जो ऐसे अनाचारी भी अनाचारका त्यागकरि अच्युतेन्द्र पद पावैं अथवा इन्द्र पदका कहा आश्चर्य? जिनधर्मके प्रसादसू मोक्ष पावे। मधुका जीव अच्युतेन्द्र था उसके समीप सीताका जीव प्रतेन्द्र भया अर मधुका जीव स्वर्गसू चयकरि श्रीकृष्णकी रुक्मिणी राणीके प्रद्युम्न नामा पुत्र कामदेव होय, मोक्ष लही अर कैटभका जीव कृष्णकी जामवती राणीके शम्भुकुमारनामा पुत्र होय परम धामकू प्राप्त भया। यह मधुका व्याख्यान तुझे कह्या। अब हे श्रेणिक! बुद्धिवतोके मनकू प्रिय ऐसे लक्ष्मणके अष्ट पुत्र महा धीर वीर तिनका चरित्र पापोका नाश करणहारा चित्त लगाय सुनहु।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रन्थ ताकी भाषा वचनिकाविषै राजा मधुका वैराग्य वर्णन करनेवाला एकसौ नौवा पर्व पूर्ण भया ॥१०९॥

अथानन्तर काचन स्थान नामा नगर, वहा राजा काचनरथ, उसकी राणी शतहृदा, ताके पुत्री दोय, अति रूपवती, रूपके गर्वकरि महा गर्वित, तिनके स्वयवरके अर्थ अनेक राजा भूचर खेचर तिनके पुत्र कन्याके पिताने पत्र लिख दूत भेजि शीघ्र बुलाए। सो दूत प्रथम ही अयोध्या पठाया। अर पत्रविषै लिख्या मेरी पुत्रियोका स्वयवर है सो आप कृपाकरि कुमारोकू शीघ्र पठावो। तब राम लक्ष्मण ने प्रसन्न होय परम ऋद्धियुक्त सब सुत पठाए। दोनो भाइयोंके सकल कुमार लव अंकुशकू अग्रेसर

करि परस्पर महा प्रेमके भरे काचनस्थानपुरकू चाले । सकडो विमानविषै बैठे अनेक विद्याधर लार, रूपकरि लक्ष्मीकरि देवनि सारिखे आकाशके मार्ग गमन करते भये सो बडी सेना सहित आकाशसू पृथ्वीकू देखते जावें, काचनस्थानपुर पहुँचे । वहा दोनो श्रेणियोके विद्याधर राजकुमार आये थे सो यथायोग्य तिष्ठे । जैसें इन्द्रकी सभाविषै नानाप्रकारके आभूषण पहिरे देव तिष्ठै, अर नन्दनवनविषै देव नानाप्रकारकी चेष्टा करें, चेष्टा तैसे करते थे। अर वे दोनो कन्या मन्दाकनी अर चन्द्रवक्त्रा मंगल स्नानकरि सब आभूषण पहिरे । निज वाससू रथ चढी निकसी, मानो साक्षात लक्ष्मी अर लज्जा ही है । महा गुणोकरि पूर्ण तिनके खोजा लार था, सो राजकुमारोके देश कुल सम्पत्ति गुण नाम चेष्टा सब कहता भया । अर कही ए आए है तिनविषै कई वानरध्वज, कई सिंहध्वज, कई वृषभध्वज, कई गज ध्वज इत्यादि अनेक भातिकी ध्वजाकू धरे महा पराक्रमी है । इनविषै इच्छा होय ताहि वरहु । तब वह सबनिकू देखती भई अर वह सब राजकुमार उनकू देखि सदेहकी तुला विषै आरूढ भए कि यह रूप गर्वित है न जानिए कौनकू वरे । ऐसी रूपवती हम देखी नाहीं । मानो ये दोनो समस्त देवियो का रूप एकत्रकरि बनाई है । यह कामकी पताका लोकनिकू उन्मादका कारण । इस भाति सब राजकुमार अपने अपने मनविषै अभिलाषारूप भए । दोनो उत्तमकन्या लव अंकुशकू देखि कामबाणकरि बेधी गई । उनमें मदाकिनी नामा जो कन्या उसने लवके कंठविषै वरमाला डारी । अर दूजी कन्या चन्द्रवक्त्राने अंकुशके कंठ विषै वरमाला डारी । तब समस्त राजकुमारोके मनरूप पक्षी तनुरूप पिंजरेसू उड गए । अर जे उत्तम जन हुते तिन्होने प्रशसा करी कि इन दोनो कन्याओंने रामके दोनो पुत्र वरे सो नीके करी । ए कन्या इनही योग्य है । इस भाति सज्जनोके मुखसू वाणी निकसी । जे भले पुरुष है तिनका चित्त योग्य सम्बन्धसू आनन्दकू प्राप्त होय ।

अथानन्तर लक्ष्मणकी विशल्यादि आठ पटरानी तिनके पुत्र आठ महा सुन्दर उदार चित्त शूरवीर पृथ्वीविषै प्रसिद्ध इन्द्रसमान सो अपने अढाईस भाइयोसहित महाप्रीति युक्त तिष्ठते थे । जैसे

तारावोमें ग्रह तिष्ठे । सो आठ कुमारनि विना और सब ही भाई रामके पुत्रनिपर क्रोधित भए। जो हम नारायणके पुत्र कांतिधारी कलाधारी नवयौवन लक्ष्मीवान बलवान सेनावान कौन गुणकरि हीन जो इन कन्यानिने हमकूं न वरचा अर सीताके पुत्र वरे। ऐसा विचारकरि कोपित भए। तब बडे भाई आठने इनकूं शांतचित्त किए, जैसे मंत्रकरि सर्पकूं वश करिए। तिनके समझावेतैं सब ही भाई लव अंकुशसूं शांतचित्त भए अर मनविषै विचारते भए जो इन कन्यानिने हमारे बाबाके बेटे बडे भाई वरे तब ए हमारे भावज सो माता समान है, अर स्त्री पर्याय महा निंद्य है। स्त्रीनिकी अभिलाषा अविवेकी करें। स्त्रियें स्वभाव ही तैं कुटिल हैं इनके अर्थ विवेकी विकारकूं न भजें। जिनकूं आत्मकल्याण करना होय सो स्त्रीनितैं अपना मन फेरै। या भांति विचार, सबही भाई शांतचित्त भए। पहिले सब ही युद्धकूं उद्यमी भए हुते, रणके वादित्रनिका कोलाहल शंख झंझा भेरी झंझार इत्यादि अनेक जातिके वादित्र बाजने लगे, अर जैसे इन्द्रकी विभूति देख छोटे देव अभिलाषी होय तैसे ये सब स्वयंवरविषै कन्यानिके अभिलाषी भए हुते। सो बडे भाईनिके उपदेशतैं विवेकी भये, अर उन आठो बडे भाईनिकूं वैराग्य उपज्या। सो विचारै है यह स्थावर जंगमरूप जगतके जीव कर्मनिकी विचित्रताके योगकरि नानारूप है, विनश्वर है। जैसा जीवनिके होनहार है तैसा ही होय है। जाके जो प्राप्ति होनी है सो अवश्य होय है, और भांति नाहीं। अर लक्ष्मणकी राणीका पुत्र हंसकर कहता भया हे भ्रात हो! स्त्री कहा पदार्थ है? स्त्रीनितैं प्रेम करना महा मूढता है। विवेकिनकूं हासी आवै है जो यह कामी कहा जानि अनुराग करै है। इन दोऊ भाईनिने ये दोनो राणी पाई तौ कहा बडी वस्तु पाई। जे जिनेश्वरी दीक्षा धरैं वे धन्य हैं। केलाके स्तम्भ समान असार काम भोग आत्माके शत्रु, तिनके वश होय रति अरति मानना महा मूढता है, विवेकिनकूं शोक हू न करना, अर हास्य हू न करना। ए सब ही संसारी जीव कर्मके वश भ्रमजालविषै पडे हैं। ऐसा नाहीं करै है जाकर कर्मोंका नाश होय, कोई विवेकी करै सोई सिद्धपदकूं प्राप्त होय, या गहन संसार वनविषै ये प्राणी निज पुरका मार्ग

भूल रहे ह, ऐसा करहु जात भवदुख निवत्ति होय । हे भाई हो ! यह कमभूमि, आर्यक्षेत्र, मनुष्य देह उत्तम कुल हमने पाया सो एते दिन योंही खोये । अब वीतरागका धम आराधि मनुष्य देह सफल करो । एक दिन म बालक अवस्थाविषै पिताकी गोदविष बठा हुता सो वे पुरुषोत्तम समस्त राजानि कू उपदेश देते थे । वे वस्तुका स्वरूप सुन्दर स्वरसू कहते भए । सो म रुचिसू सुण्या—चारोगतिविष मनुष्यगति दुलभ ह । जो मनुष्यभव पाय आत्महित न कर ह सो ठगाए गए जानो । दानकरि तो मिथ्या दृष्टि भोगभूमि जाव, अर सम्यग्दृष्टि दानकरि तपकरि स्वग जाय, परम्पराय मोक्ष जावें । अर शुद्धोपयोग रूप आत्मज्ञानकरि यह जीव याही भव मोक्ष पाव । अर हिंसादिक पापनिकरि दुगति लह । जो तप न कर सो भव वनविष भटक, बारम्बार दुगतिके दु ख सकट पाव, या भाति विचार वे अष्ट कुमार शूरवीर प्रतिबोधकू प्राप्त भए । ससार सागरके दु खरूप भवनिसू डरे, शीघ ही पिताप गए, प्रणामकरि विनयसू खडे रहे, अर महा मधुर वचन हाथ जोड कहते भए—हे तात ! हमारी विनती सुनहु । हम जनेश्वरी दीक्षा अगीकार किया चाह ह, तुम आज्ञा देवहु । यह ससार विजुरीके चमत्कार समान अस्थिर ह, केलाके स्तम्भ समान असार ह हमकू अविनाशीपुरके पथ चलते विघ्न न करहु । तुम दयालु हो, कोई महाभाग्यके उदयत हमकू जिनमागका ज्ञान भया, अब ऐसा करें जाकरि भवसागरके पार पहुचे । ये काम भोग आशीविष सपके फण समान भयकर ह, परम दु खके कारण हम दूर हीत छोड्या चाह ह । या जीवके कोई माता पिता पुत्र बाधव नाहीं, कोई याका सहाई नाहीं, यह सदा कमके आधीन भववनविष भ्रमण कर ह । याके कौन कौन जीव कौन सम्बन्धी न भए । हे तात ! हमसू तिहारा अत्यन्त वात्सल्य ह अर माताओका ह, सो ये ही बन्धन है । हमने तिहारे प्रसाद त बहुत दिन नानाप्रकार ससारके सुख भोगे । निदान एक दिन हमारा तिहारा वियोग होयगा, यामे सदेह नाहीं । या जीवने अनेक भोग किए परन्तु तप्त न भया । ये भोग रोग समान हैं । इनविष अज्ञानी राचें । अर यह देह कुमित्र समान ह, जसे कुमित्रकू नानाप्रकारकरि पोषिये परन्तु वह अपना

नाहीं, तसे यह देह अपना नाहीं । याके अथ आत्माका काय न करना यह विवेकिनका काम नाहीं । यह देह तो हमकू तजगी हम इनसू प्रीति क्यो न तज ।

यह वचन पुत्रनिके सुन लक्ष्मण परम स्नेह करि विह्वल हो गए । इनकू उरसू लगाय मस्तक चूम्ब बारम्बार इनकी ओर देखते भए, अर गदगद वाणीकरि कहते भए, हे पुत्र हो ! ये कैलासके

शिखर समान हजारा कनकके स्तभ तिनविष निवास करहु । नानाप्रकार रत्नोंसे निरमाए है आगन जिनके, महा सुन्दर, सब उपकरणोकरि मण्डित, मलयागिरि चन्दनकी आव ह सुगन्ध जहा, उसकरि भवर गु जार कर ह, अर स्नानादिककी विधि जहा ऐसी मजनशाला, अर सब सम्पत्तिसू भरे निमल है भूमि जिनकी, इन महिलोंविष देवो समान क्रीडा करहु । अर तिहारे सुन्दर स्त्री देवागना समान दिव्यरूपकू धरें शरदके पूनोके चन्द्रमा समान प्रजा जिनकी, अनेक गुणनिकरि मडित वीण बासुरी मृदगादि अनेक वादित्र बजायवेविष निपुण, महा सुकण्ठ, सुन्दर गीत गायवेविषै निपुण, नत्यकी करण-हारी, जिनेन्द्रकी कथाविष अनुरागिणी, महापतिव्रता पवित्र तिनसहित वन उपवन तथा गिरि नदियो के तट निज भवनके उपवन तहा नाना विधि क्रीडा करते देवोको न्याई रमो । हे वत्स ! ऐसे मनोहर सखोकू तजकरि जिनदीक्षा धरि कसे विषम वन अर गिरिके शिखर कसे रहोगे ? म स्नेहका भरचा अर तिहारी माता तिहारे शोककरि तप्तायमान तिनकू तजकरि जाना तुमकू योग्य नाहीं । कैयक दिन पृथ्वीका राज्य करहु । तब वे कुमार स्नेहकी वासनासे रहित भया है चित्त जिनका, ससारसे भयभीत, इन्द्रियोके सुखसू पराडमुख, महा उदार, महाशूरवीर, कुमारश्रेष्ठ, आत्मतत्त्वविषै लाग्या ह चित्त जिनका, क्षणएक विचारकर कहते भए—हे पिता ! इस ससारविषै हमारे माता पिता अनन्त भए । यह स्नेहका बन्धन नरकका कारण ह । यह घर रूप पिंजरा पापारम्भका अर दुखका बढावन-हारा है । उसमें मूख रति माने ह, ज्ञानी न मानै । अब कबहू देह सम्बन्धी तथा मन सबधी दुख हम कू न होय निश्चयसे ऐसा ही उपाय करेंगे । जो आत्मकल्याण न करै सो आत्मघाती है । कदाचित

घर न तजे अर मनविष ऐसा जाने म निर्दोष हू, मुझे पाप नाहीं तो वह मलिन ह, पापी है। जसे सुफेद वस्त्र अगके सयोगसे मलिन होय तसे घरके सयोगसे गहस्थी मलिन होय है। जे गहस्थाश्रमविषै निवास करै है तिनके निरतर हिंसा आरम्भकर राग उपज। तात सत्पुरुषोंने गहस्थाश्रम तजे। अर तुम हमसू कही कईएक दिन राज्य भोगो सो तुम ज्ञानवान होयकर हमकू अधकूपविष डारो हो? जसे तृषाकर आतुर मग जल पीवै अर उसे पारधी मारै तस भोगनिकर अतप्त जो पुरुष उसे मृत्यु मारे है। जगतके जीव विषयकी अभिलाषा कर सदा आर्त्तध्यानरूप पराधीन हैं। ज काम सेवे है, वे अज्ञानी विषहरणहारी जडी विना आशीविष सपसे क्रीडा करै ह, सो कसे जीव? यह प्राणी मीन समान गहरूप तालावविष वसते, विषयरूप मासके अभिलाषी, रोगरूप लोहेके आकडेके योगकर कालरूप धीवरके जालविष पडे ह। भगवान श्रीतीर्थकर देव, तीन लोकके ईश्वर, सुर नर विद्याधरनिकर वदित, यह ही उपदेश देते भये कि यह जगतके जीव अपने अपने उपार्जे कर्मोंके वश ह। अर या जगतकू तज सो कर्मोंकू हते। तात हे तात! हमारे इष्टसयोगके लोभकर पूणता न होवे। यह सयोग सम्बध बिजुरीके चमत्कारवत चचल ह। जे विचक्षण जन ह वे इनसे अनुराग न करै, अर निश्चय सेती इस तनुसे अर तनुके सम्बधियोसू वियोग होयगा। इनविषै कहा प्रीति! अर महाक्लेशरूप यह ससार वन उसविष कहा निवास? अर यह मेरा प्यारा ऐसी बुद्धि जीवोंके अज्ञानसे ह। यह जीव सदा अकेला भवविष भटके ह, गति गतिविष गमन करता महा दुखी ह।

हे पिता! हम ससारसागरविष झकोला खाते अति खेदखिन्न भए। कसा ह ससार सागर? मिथ्या शास्त्ररूप है दुखदाई द्वीप जिसविष, अर मोहरूप ह मगर जिसमें, अर शोक सतापरूप सिवानकर सयुक्त सो, अर दुर्जयरूप नदियोकर पूरित ह, अर भ्रमणरूप भवरके समूहकरि भयकर है, अर अनेक आधिव्याधि उपाधिरूप कलोलोकर युक्त ह, अर कुभावरूप पाताल कुण्डोकर अगम है, अर क्रोधादिकर भावरूप जलचरोंके समूहसे भरा ह, अर वथा बकवादरूप होय ह शब्द जहा, अर ममत्वरूप पवनकर उठ ह विकल्प

रूपतरग जहाँ, अर दुर्गतिरूप क्षार जलकर भरा है, अर महादुस्सह इष्ट वियोग अनिष्ट सयोगरूप आताप सोई है वडवानल जहा, ऐसे भवसागरविषे हम अनादिकालके खेदखिन्न पडे है। नाना योनि-विषे भ्रमण करते अतिकष्टसू मनुष्यदेह उत्तम कुल पाया है सो अब ऐसा करेंगे बहुरि भवभ्रमण न होय। सो सबसे मोह छुडाय आठो कुमार महाशूरवीर घररूप बन्दीखानेसे निकसे। उन महाभाग्यों के ऐसी वैराग्य बुद्धि उपजी जो तीनखडका ईश्वरपणा जीर्ण तृणवत तजा। ते विवेकी महेन्द्रोदय नामा उद्यानविषे जायकर महाबल नामा मुनिके निकट दिगम्बर भए। सब आरम्भरहित अन्तर्बाह्य परिग्रहके त्यागी, विधिपूर्वक ईर्यासमिति पालते, विहार करते भए। महा क्षमावान इन्द्रियोके वश करण-हारे, विकल्परहित, निस्पृही, परम योगी, महाध्यानी, बारहप्रकारके तपकर कर्मोंकू भस्मकर अध्यात्म-योगसे शुभाशुभ भावोका निराकरण कर क्षीणकषाय होय, केवलज्ञान लहि अत्यन्त सुखरूप सिद्धपदकू प्राप्त भए। जगतके प्रपचसे छूटे। गौतम गणधर राजा श्रेणिकसू कहे है—हे नृप! यह अष्ट कुमारो का मगलरूप चरित्र जो विनयवान भक्तिकर पढे सुने उसके समस्त पाप क्षय जावें जैसे सूर्यकी प्रभाकर तिमिर विलाय जाय।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रन्थ ताकी भाषा वचनिकाविषे लक्ष्मणके आठ कुमारोका वैराग्य वर्णन करनेवाला एकसौ दशवां पर्व पूर्ण भया ।। ११० ।।

अथानन्तर महावीर जिनेन्द्रके प्रथम गणधर मुनियोविषे मुख्य गौतमऋषि श्रेणिकसू भामंडलका चरित्र कहते भए—हे श्रेणिक! विद्याधरनिकी जो ईश्वरता सोई भई कुटिला स्त्री, उसका विषय-वासनारूप मिथ्या सुख सोई भया पुष्प, उसके अनुरागरूप मकरंदविषे भामण्डलरूप भ्रमर आसक्त होता भया। चित्तमें यह चिंतवे जो मै जिनेन्द्रदीक्षा धरूगा तो मेरी स्त्रियोका सौभाग्यरूप कमलनि का वन सूख जायगा। ये मेरेसे आसक्त चित्त है, अर इनके विरह कर मेरे प्राणनिका वियोग होयगा।

मैं यह प्राण सुखसूं पाले हैं, इसलिए कईयक दिन राज्यके सुख भोग कल्याणका कारण जो तप सो करूं गा। यह कामभोग दुर्निवार है। अर इनकर पाप उपजेगा सो ध्यानरूप अग्निकर क्षणमात्र विषै भस्म करूं गा। केईयक दिन राज्य करूं। बडी सेना राख जे मेरे शत्रु हैं तिनकूं राज्य रहित करूं गा। वे खडगके धारी बडे सामंत मुझसे परागमुख, ते भए खडगी कहिए गैंडा, तिनके मानरूप खडगकूं भंग करूं गा। अर दक्षिणश्रेणी उत्तरश्रेणी विषै अपनी आज्ञा मनाऊं, अर सुमेरु पर्वत आदि पर्वतों

विषै मरकत मणि आदि नानाजातिके रत्ननिकी निर्मलशिला तिनविषै स्त्रियोंसहित क्रीडा करूं गा। इत्यादि मनके मनोरथ करता हुवा भामंडल सैकडो वर्ष एक मुहूर्तकी न्याईं व्यतीत करता भया। यह किया यह करूं यह करूं गा, ऐसा चितवन करता आयुका अंत न जानता भया। एक दिन सतखणे महिलके ऊपर सुंदर सेजपर पौढा हुता सो बिजुरी पडी अर तत्काल कालकूं प्राप्त भया।

दीर्घसूत्री मनुष्य अनेक विकल्प करे, परन्तु आत्माके उद्धारका उपाय न करै। तृष्णाकर हता क्षणमात्रमें साता न पावे, मृत्यु सिरपर फिरै ताकी सुध नाहीं। क्षणभंगुर सुखके निमित्त दुर्बुद्धि आत्महित न करै। विषय वासनाकर लुब्ध भया अनेक भांति विकल्प करता रहै। सो विकल्प कर्म बंधके कारण हैं। धन योवन जीतव्य सब अस्थिर है। जो इनकूं अस्थिर जान सर्व परिग्रहका त्याग कर आत्मकल्याण करै सो भवसागर न डूबे। अर विषयाभिलाषी जीव भवविषैं कष्ट सहैं, हजारों शास्त्र पढे, अर शांतता न उपजी तो क्या? अर एक ही पदकर शांतदशा होय तो प्रशंसा योग्य है। धर्म करिवेकी इच्छा तो सदा करबहु करे, अर करे नाहीं, सो कल्याणकूं न प्राप्त होय। जैसे कटी पंखका काग उडकर आकाशविषै पहुँचा चाहै पर जाय न सकै। जो निर्वाणके उद्यमकर रहित है सो निर्वाण न पावै। जो निरुद्यमी सिद्धपद पावैं, तो कौन काहेकूं मुनिव्रत आदरै? जो गुरुके उत्तम वचन उरविषै धार धर्मकूं उद्यमी होय सो कभी खेदखिन्न न होय। जो गृहस्थ द्वारे आया साधु उसकी भक्ति न करै, आहारादिक न दे सो अविवेकी है अर गुरुके वचन सुन धर्मकूं न आदरै सो भव-

भ्रमणसे न छूटे । जो घने प्रमादी हैं अर नानाप्रकारके अशुभ उद्यम कर व्याकुल है, उनकी आयु वृथा जाय है, जैसे हथेलीमें आया रत्न जाता रहै । ऐसा जान, समस्त लौकिक कार्यकू निरर्थक मान, दु खरूप इन्द्रियोंके सुख तिनकू तजकर परलोक सुधारिवेके अर्थ जिनशासनविषे श्रद्धा करहु । भामंडल मरकर पात्रदानके प्रभावसू उत्तम भोगभूमि गया ।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण सस्कृतग्रन्थ ताकी भाषावचनिकाविषे भामण्डलका मरण वर्णन करनेवाला एकसौ ग्यारवा पर्व पूर्ण भया । ११ ॥

———

अथानन्तर राम लक्ष्मण परस्पर महा स्नेहके भरे प्रजाके पिता समान परम हितकारी तिनका राज्यविषे सुखसू समय व्यतीत होता भया । परम ईश्वरतारूप अति सुन्दर राज्य सोई भया कमलोका वन, उसविषे क्रीडा करते वे पुरुषोत्तम पृथ्वीकू प्रमोद उपजावते भए । इनके सुखका वर्णन कहा तक करें ? ऋतुराज कहिए वसंतऋतु उसमें सुगन्ध वायु वहै, कोयल बोलें भ्रमर गुंजार करें, समस्त वनस्पति फूलें, मदोन्मत्त होय समस्तलोक हर्षके भरे शृंगार क्रीडा करें । मुनिराज विषम वनविषे विराजें आत्मस्वरूपका ध्यान करें । उस ऋतुविषे राम लक्ष्मण रणवाससहित अर समस्त लोकनि सहित रमणीक वनविषे तथा उपवनविषे नानाप्रकारके रंग-क्रीडा रागक्रीडा, जलक्रीडा, वनक्रीडा करते भए । अर ग्रीष्मऋतुविषे नदी सूखे दावानल समान ज्वाला वरसे महामुनि गिरिके शिखर सूर्यके सन्मुख कायोत्सर्ग धर तिष्ठें । उस ऋतुविषे राम लक्ष्मण धारामंडप महलविषे, अथवा महारमणीक वनविषें, जहा अनेक जलयन्त्र चन्दन कपूर आदि शीतल सुगन्ध सामग्री वहा सुखसू विराजे है, चमर ढुरे हैं, ताडके बीजना फिरे है, निर्मल स्फटिककी शिलापर तिष्ठे है, अगुरु चन्दन कर चर्चे जलकर तर ऐसे कमलदल तथा पुष्पोंके साथरे पर तिष्ठे, महामनोहर निर्मल शीतल जल, जिसविषे लवंग इलायची कपूर अनेक सुगन्धद्रव्य उनकर महासुगन्ध उनका पान करते, लतावोंके मंडपविषे विराजते

नानाप्रकारकी सुन्दर कथा करते, सारग आदि अनेक राग सुनते सुन्दर स्त्रीनि सहित उष्ण ऋतुकू बलात्कार शीतकाल सम करते, सुखसू पूर्ण करते भए। अर वर्षाऋतु विषै योगीश्वर तरु तले तिष्ठते महातपकर अशुभ कर्मका क्षयकर है। बिजुरी चमकै है, मेघकर अंधकार होयरहा है, मयूर बोले है ढाहा उपाडती महाशब्द करती नदी बहै है, उस ऋतुविषै दोनो भाई सुमेरुके शिखर समान ऊचे, नाना मणिमई, जे महिल तिनविषै महा श्रेष्ठ रगीले वस्त्र पहिरे, केसरके रगकर लिप्त है अग जिनका, अर कृष्णागरुका धूप खेए रहे है महासुन्दर स्त्रियोके नेत्ररूप भ्रमरोके कमल सारिखे इन्द्र समान क्रीडा करत सुखसू तिष्ठे। अर शरदऋतुविषै आकाश निर्मल होय, चन्द्रमाकी किरण उज्ज्वल होय, कमल फूलै हंस मनोहर शब्द करैं, मुनिराज वन पर्वत सरोवर नदीके तीर बैठ चिद्रूपका ध्यान करैं। उस ऋतुविषै राम लक्ष्मण राजलोको सहित चादनीके वस्त्र आभरण पहिरे सरिता सरोवरके तीर नाना विधि क्रीडा करते भए। अर शीतऋतुविषै योगीश्वर धर्मध्यानको ध्यावते रात्रिविषै नदी तालावोके तटपर जहा अति शीत पडे, बर्फ बरसे, महाठण्डी पवन बाजे, तहा निश्चल तिष्ठे है। महाप्रचण्ड शीत पवन कर वृक्ष दाह मारे है। अर सूर्यका तेज मन्द होय गया है। ऐसी ऋतुविषै राम लक्ष्मण महिलनिके भीतरले चौवारोविषै तिष्ठते मन वाछित विलास करते, सुन्दर स्त्रीनिके समूह सहित, बीण, मृदग, बासुरी आदि अनेक वादित्रनिके शब्द कानोको अमृत समान श्रवणकर मनकू आल्हाद उपजावते, दोनो वीर महाधीर, देवा समान, अर जिनके स्त्री देवागना समान, वीणाकर जीती है वीणाकी ध्वनि जिन्होने महापतिव्रता, तिनकर आदरते सन्ते पुण्यके प्रभावते सुखसू शीतकाल व्यतीत करते भए। ८८० अद्भुत भोगोंकी सम्पदाकर मण्डित वे पुरुषोत्तम प्रजाकू आनन्दकारी दोनो भाई सुखसू तिष्ठे है।

अथानन्तर गौतमस्वामी कहे है—हे श्रेणिक! अब तू हनुमानका वृत्तात सुन। हनुमान पवनका पुत्र कर्णकुण्डल नगरविषै पुण्यके प्रभावसू देवनिके सुख भोगवै, जिसकी हजारा विद्याधर सेवा करैं। अर उत्तम क्रियाका धारक स्त्रियोसहित परिवारसहित अपनी इच्छाकरि पृथ्वीमें विहार करै। श्रेष्ठ

विमानविषै आरूढ परम ऋद्धिकर मंडित महा शोभायमान सुन्दर वनोमें देवनि समान क्रीडा करै। सो बसतका समय आया। कामी जीवनकू उन्मादका कारण, अर समस्त वृक्षोकू प्रफुल्लित करणहारा, प्रिया अर प्रीतमके प्रेमका बढावनहारा, सुगन्ध चले है पवन जिसमें, ऐसे समयमें अंजनीका पुत्र जिनेन्द्रकी भक्तिमें आरूढचित्त, अति हर्ष कर पूर्ण हजारा स्त्रीनिसहित सुमेरु पर्वतकी ओर चल्या। हजारा विद्याधर है संग जिसके, श्रेष्ठ विमानविषै चढे, परम ऋद्धिकरि संयुक्त मार्गविषै वनविषै क्रीडा करते भए। कैसे हैं वन ? शीतल मंद सुगन्ध चले है पवन जहां, नानाप्रकारके पुष्प अर फलो करि शोभित वृक्ष है, जहां देवांगना रमे है, अर कुलाचलोकेविषै सुन्दर सरोवरो करि युक्त अनेक मनोहर वन जिनविषै भ्रमर गुंजार करें है, अर कोयल बोल रही है, अर नाना प्रकारके पशु पक्षियोके युगल विचरै हैं जहां सर्व जातिके पत्र पुष्प फल शोभे है, अर रत्ननिकी ज्योतिकरि उद्योतरूप है पर्वत जहां, अर नदी निर्मल जलकी भरी सुन्दर हैं तट जिनके, अर सरोवर अति रमणीक नाना प्रकारके कमलोके मकरंदकरि रंग रूप होय रहा है सुगन्ध जल जिनका, अर वापिका अति मनोहर जिनके रत्नोके सिवान अर तटोके निकट बडे बडे वृक्ष है, अर नदीमें तरंग उठे है, झागोके समूहसहित महा शब्द करती बहै है, जिनमें मगरमच्छ आदि जलचर क्रीडा करै, अर दोनो तटविषै लहलहाट करते अनेक वन उपवन महा मनोहर विचित्रगति लिये शोभै हैं, जिनमें क्रीडा करिवेके सुन्दर महिल अर नाना प्रकार रत्ननिकरि निर्मापे जिनेश्वरके मन्दिर पापोके हरणहारे अनेक है। पवनपुत्र सुन्दर स्त्रियोकरि सेवित, परम उदयकरि युक्त अनेक गिरियोविषै अकृत्रिम चैत्यालयोका दर्शनकरि विमानविषै चढ्या स्त्रियोकू पृथ्वीकी शोभा दिखावता, अति प्रसन्नतासू स्त्रियोसू कहै हैं-हे प्रिये! सुमेरुविषै अति रमणीक जिनमन्दिर स्वर्णमयी भासे है। अर इनके शिखर सूर्य समान देदीप्यमान महामनोहर भासै हैं। अर गिरिकी गुफा तिनके मनोहर द्वार रत्नजडित शोभा नाना रंगकी ज्योति परस्पर मिल रही हैं। वहां अरति उपजे नाहीं, सुमेरुकी भूमितलविषै अतिरमणीक भद्रशालवन है अर सुमेरुकी कटिमेखला

८८१

विषै विस्तीर्ण नन्दनवन अर सुमेरुके वक्षस्थलविषै सौमनसवन है, जहा कल्पवृक्ष कल्पलताओंसे बेढे सोहै है, अर नानाप्रकार रत्नोकी शिला शोभित है। अर सुमेरुके शिखरमें पांडुक वन है जहा जिनेश्वर देव का जन्मोत्सव होय है। इन चारो ही वनविषै चार चार चैत्यालय हैं, जहा निरतर देव देवियोका आगम है। यक्ष किन्नर गन्धर्वोंके संगीतकरि नाद होय रहा है। अप्सरा नृत्य करै हैं। कल्पवृक्षोके पुष्प मनोहर है। नानाप्रकारके मंगल द्रव्यकरि पूर्ण यह भगवानके अकृत्रिम चैत्यालय अनादिनिधन हैं। हे प्रिये! पांडुक वनविषै परम अद्भुत जिन मंदिर सोहै है, जिनकों देख मन हरा जाय, महाप्रज्वलित निर्धूम अग्नि समान सध्याके बादरोके रंग समान उगते सूर्य समान स्वर्णमई शोभै हैं, समस्त उत्तम रत्ननिकरि शोभित सुन्दराकार हजारो मोतियोकी माला, तिनकरि मंडित महामनोहर है। मालावों के मोती कैसे सोहै हैं मानो जलके बुदबुदाही है। अर घण्टा, झांझ, मंजीरा, मृदग, चमर तिनकरि शोभित है। चौगिरद कोट ऊंचे दरवाजे इत्यादि परम विभूति करि विराजमान है। नाना रंगकी फहराती हुई ध्वजा स्वर्णके स्तभनि करि दैदीप्यमान। इन अकृत्रिम चैत्यालयोकी शोभा कहा लग कहें जिनका सम्पूर्ण वर्णन इन्द्रादिक देव भी न कर सकें। हे कांते! पाण्डुकवनके चैत्यालय मानो सुमेरुके मुकुट ही हैं, अति रमणीक है।

पद्म पुराण ८८२

या भांति महाराणी पटराणियोसे हनुमान बात करते, जिनमन्दिरकी प्रशसा करते मंदिरके समीप आए। विमानसूं उतरि महा हर्षित होय प्रदक्षिणा दई। वहा श्रीभगवानके अकृत्रिम प्रतिबिंब सर्व अतिशय विराजमान महा ऐश्वर्यकरि मंडित, महा तेज पुंज दैदीप्यमान शरदके उज्ज्वल बादर तिनमें जैसे चन्द्रमा सोहै तैसे सर्व लक्षणमंडित हनुमान हाथ जोड रणवास सहित नमस्कार करता भया। कैसा है हनुमान ? जैसे ग्रह तारावोंके मध्य चन्द्रमा सोहै तैसे राजा लोकके मध्य सोहै है। जिनेन्द्रके दर्शन करि उपज्या है अतिहर्ष जिसकूं सो सम्पूर्ण स्त्रीजन अति आनन्दकूं प्राप्त भई। रोमांच होय आए, नेत्र प्रफुल्लित भए। विद्याधरी परम भक्तिकरि युक्त सर्व उपकरणो सहित परम चेष्टाकी ८८२

धरणहारी, महापवित्र कुलविषै उपजी देवागनाओंकी न्याईं अति अनुरागसे देवाधिदेवकी विधिपूर्वक पूजा करती भई। महा पवित्र पदमह्रद आदिका जल अर महा सुगंध चन्दन मुक्ताफलनिके अक्षत, स्वर्णमई कमल तथा पद्मराग मणिमई तथा चन्द्रकांति मणिमई तिनकर पूजा करती भई। अर कल्पवृक्षनिके पुष्प अर अमृतरूप नैवेद्य अर महा ज्योतिरूप रत्नोंके दीप चढाए, अर मलयागिरि चंदन आदि महासुगन्ध जिनकरि दशोदिशा सुगंधमई होय रही है, अर परम उज्ज्वल महाशीतल जल,

अर अगुरु आदि महापवित्र द्रव्योंकरि उपज्या जो धूप, सो खेवती भई। अर महा पवित्र अमृत फल चढ़ावती भई। अर रत्नोंके चूर्णकरि मांडला मांडती भई। महा मनोहर अष्ट द्रव्योंसे पति सहित पूजा करती भई। हनुमान राणिनि सहित भगवानकी पूजा करता कैसे सोहै है जैसा सौधर्म इन्द्र पूजा करता सोहै। कैसा है हनुमान? जनेऊ पहिरे, सब आभूषण पहरे, महीन वस्त्र पहिरे, महा पवित्र पापरहित बानरके चिह्नका है देदीप्यमान रत्नमई मुकुट जिसके, महा प्रमोदका भरया, फूल रहे है नेत्रकमल जिसके, सुन्दर है बदन जिसका, पूजाकरि पापनिके नाश करणहारे स्तोत्र तिनकरि सुर असुरोंके गुरु जिनेश्वर तिनके प्रतिबिंबकी स्तुति करता भया। सो पूजा करता अर स्तुति करता इन्द्रकी अप्सरावोंने देख्या सो अति प्रशंसा करती भई। अर यह प्रवीण बीण लेयकरि जिनेंद्रचंद्र के यश गावता भया। जे शुद्ध चित्त जिनेन्द्रकी पूजाविषै अनुरागी है सब कल्याण तिनके समीप है, तिनकूं कुछ दुर्लभ नाहीं। तिनका दर्शन मंगलरूप है। उन जीवोंने अपना जन्म सुफल किया जिन्होंने उत्तम मनुष्य देह पाय श्रावकके व्रतधरि जिनवरविषै दृढ भक्ति धारी। अपने करविषै कल्याण
कूं धरै है, जन्मका फल तिनही पाया। हनुमानने पूजा स्तुति वन्दना करि बीण बजाय अनेक राग गाय अद्भुत स्तुतिकरी। यद्यपि भगवानके दर्शनसे विछुरनेका नहीं है मन जिसका तथापि चैत्यालय विषै अधिक न रहहु, भति कोऊ आच्छादनालाग, तातै जिनराजके चरण उर विषै धरि मन्दिरसूं बाहिर निकस्या। विमानोंमें चढे। हजारों स्त्रियोंकरि संयुक्त सुमेरुकी प्रदक्षिणा दी। जैसे सूर्य देय

तसे श्रीशल कहिए हनुमान सुन्दर है क्रिया जिसकी, सो शलराज कहिए सुमेरु उसकी प्रदक्षिणा देय, समस्त चत्यालयोविषे दर्शन करि भरतक्षेत्रकी ओर सन्मुख भया। सो मार्ग विषे सूर्य अस्त होय गया। अर सन्ध्या भी सूर्यके पीछे विलय गई। कृष्णपक्षकी रात्रि सो तारारूप बधुओंकर मंडित चन्द्रमा रूप पति विना न सोहती भई। हनुमानने तले उतर एक सुरदुन्दुभी नामा पर्वत वहां सेना सहित रात्रि व्यतीत करी। कमल आदि अनेक सुगन्ध पुष्पोंसे स्पर्श पवन आई, उसकरि सेनाके लोक सुखसूं रहे। जिनेश्वर देव की कथा करतो किए। रात्रिकू आकाशसू देदीप्यमान एक तारा टूट्या सो हनुमानने देखकरि मनविषे विचारी—हाय हाय! इस संसार असार वनविषे देव भी कालवश हैं। ऐसा कोई नाहीं जो कालसूं बचे। बिजुरीका चमत्कार अर जलकी तरंग जैसे क्षणभंगुर है तैसें शरीर विनश्वर है। इस संसारविषे इस जीवने अनन्त भवविषे दुख ही भोगे। यह जीव विषयके सुखकू सुख मानै है सो सुख नाहीं दुख ही है। विषम क्षणभंगुर संसारविषे दुःख ही है, सुख नाहीं होय है। मोहका माहात्म्य है जो अनन्तकाल जीव दुख भोगता भ्रमण करै है। अनन्तावसर्पणी काल भ्रमणकरि मनुष्य देह कभी कोई पावै है, सो पायकरि धर्मके साधन वृथा खोवै है। यह विनाशीक सुखविषे आसक्त होय महासंकट पावै है। यह जीव रागादिकके वश भया वीतराग भावकू नाहीं जानै है। यह इन्द्रिय जैन-मार्गके आश्रय विना न जीती जाय। ये इन्द्री चंचल कुमार्गविषे लगायकरि इस जीवकू इस भव पर भवविषे दुःखदायी है। जसे मृग, मीन अर पक्षी लोभके वशसूं बधिकके जालमें पडै है तैसे यह कामी क्रोधी लोभी जीव जिनमार्गकू पाए विना अज्ञानके वशसूं प्रपंचरूप पारधीके बिछाए विषयरूप जाल विषे पडै है। जो जीव आशीविष सर्प समान यह मन इन्द्री तिनके विषयोंमें रमै है सो मूढ दुःखरूप अग्निविषे जरै है। जैसे कोई एक दिन राज्यकरि वर्ष दिन त्रास भोगवे तैसे यह मूढ जीव अल्पदिन विषयोंके सुख भोगि अनन्तकाल पर्यंत निगोदके दुख भोगवै है। जो विषयके सुखका अभि-लाषी है सो दुखोंका अधिकारी है। नरक निगोदके मूल यह विषय तिनकू ज्ञानी न चाहै। मोहरूप

ठगका ठग जो आत्मकल्याण न करै सो महा कष्टकू पावै। जो पूर्व भवविषै धर्म उपार्जे, मनुष्यदेह पाय धर्म का आदर न करै सो जैसे धन ठगाय कोई दुखी होय तैसे दुखी होय है। अर देवोंके भी भोग भोगि यह जीव मरकरि देवसू एकेन्द्री होय है। इस जीवके पाप शत्रु है, अर यह भोग ही पाप के मूल है। इनसू तृप्ति न होय। यह महा भयकर है। अर इनका वियोग निश्चय होगा। यह रहनेके नाहीं। जो मै इस राज्यकू अर यह जो प्रियजन है तिनकू तजकरि तप न करू तो अतृप्त भया सुभूमि चक्रवर्तीकी नाई मरकर दुर्गतिको जाऊगा। अर यह मेरे स्त्री शोभायमान, मृगनयनी, सर्व मनोरथकी पूर्णहारी, पतिव्रता, स्त्रियोंके गुणनिकर मण्डित, नवयौवन है सो अबतक मैं अज्ञानसू तज न सका। सो मैं अपनी भूलको कहातक उराहना दू। देखो! मैं सागर पर्यंत स्वर्गविषै अनेक देवांगना सहित रम्या। अर देवसू मनुष्य होय इस क्षेत्रविषै भया। सुन्दर स्त्रियो सहित रम्या, परन्तु तृप्त न भया। जैसे ईंधनसू अग्नि तृप्त न होय अर नदियोंसू समुद्र तृप्त न होय तैसे यह प्राणी नानाप्रकारके विषयसुख तिनकरि तृप्त न होय। मै नानाप्रकारके जन्म तिनविषै भ्रमणकरि खेदखिन्न भया। रे मन! अब तू शातताकू प्राप्त होहु। कहा व्याकुल होय रहा है। क्या तैने भयकर नरकोंके दुःख न सुने। जहा रौद्रध्यानी हिंसक जीव जाय है, जिन नरकनिविषै महा तीव्र वेदना, असिपत्र वन वैतरणी नदी, सकटरूप है सकल भूमि जहां। रे मन तू नरकसू न डरै है। राग द्वेष करि उपजे जे कर्म—कलक तिनकू तपकरि नाहि खिपावे है। तेरे एते दिन यो ही वृथा गए, विषय सुखरूप कूपविषै पड़ा अपने आत्माकू भवपिंजरसू निकास। पाया है जिन मार्गविषै बुद्धिका प्रकाश तैंने, तू अनादिकालका ससार भ्रमणसू खेदखिन्न भया। अब अनादिके बधे आत्माकू छुडाय। हनुमान ऐसा निश्चयकरि ससार शरीर भोगोसू उदास भया। जाना है यथार्थ जिनशासनका रहस्य जिसने। जैसे सूर्य मेघरूप पटलसे रहित महा तेजरूप भासै तैसे मोह पटलसू रहित भासता भया। जिस मार्ग होय जिनवर सिद्ध पदकू सिधारे उस मार्गविषै चलिवेकू उद्यमी भया।

इति श्रीरविषणाचायविरचित महापद्मपराण सस्कतग्रन्थ ताकी भाषावचनिकाविष हनुमानका वराग्य चितवन वणन करनवाला एकसौ बारहवा पव पण भया ॥११२ ॥

अथानन्तर रात्रि व्यतीत भई, सोला बानीके स्वण समान सूय अपनी दीप्तिकरि जगतविष उद्योत करता भया, जसे साधु मोक्षमागका उद्योत करें। नक्षत्रोके गण अस्त भए, अर सूयके उदय करि कमल

फूले जसे जिनराजके उद्योतकरि भव्य जीवरूप कमल फूले। हनुमान महा वराग्यका भरचा, जगतके भोगोसू विरक्त मन्त्रियोसू कहता भया जसे भरत चक्रवर्ती पूव तपोवनकू गए तसे हम जावेंगे। तब मन्त्री प्रेमके भरे परम उद्वगकू प्राप्त होय नाथसू विनती करते भए, हे दव ! हमकू अनाथ न करो प्रसन्न होवो, हम तिहारे भक्त है हमारा प्रतिपालन करो, तब हनुमानने कही तुम यद्यपि निश्चयकर मेरे आज्ञाकारी हो तथापि अनथके कारण हो, हितके कारण नाहीं। जो ससार समुद्रसू उतर अर उसे पीछे सागरमें डार ते हितू कसे ? निश्चय थकी उनकू शत्रु ही कहिए। जब या जीवने नरकके निवास-विष महादुःख भोगे तब माता पिता, मित्र भाई, कोई ही सहाई न भया। यह दुलभ मनुष्यदेह अर जिनशासनका ज्ञान पाय बुद्धिमानोकू प्रमाद करना उचित नाही। अर जसे राज्यके भोगसू मेरे अप्रीति भई तसे तुमसू भी भई। यह कमजनित ठाठ सब विनाशीक ह। निसदेह हमारा तिहारा वियोग होयगा। जहा सयोग ह तहा वियोग ह। सुर नर अर इनके अधिपति इन्द्र नरेन्द्र यह सब ही अपने अपने कर्मोंके आधीन ह। कालरूप दावानल करि कौन २ भस्म न भए ? म सागरा पय त अनेक
भव दवोके सुख भोगे, परन्तु तप्त न भया, जसे सूखे ईधनकरि अग्नि तप्त न होय। गति जाति शरीर इनका कारण नाम कम ह, जाकरि ये जीव गति गतिविष भ्रमण कर ह। सो मोहका बल महाबल-वान ह, जाके उदयकरि यह शरीर उपज्या ह, सो न रहगा। यह ससार वन महाविषम है, जाविषै ये प्राणी मोहकू प्राप्त भए भवसकट भोग ह। उसे उलघकरि म जन्म जरा मृत्यु रहित जो पव तहा

गया चाहू हू । यह बात हनुमान मन्त्रियोसू कही सो रणवासकी स्त्रियोने सुनी, उसकरि खेदखिन्न होय महारुदन करती भई । जे समझानेविषै समर्थ ते उनकू शांतचित्त करी । कैसे हैं समझावन हारे ? नाना प्रकारके वृत्तांतविषै प्रवीण । अर हनुमान निश्चल है चित्त जाका सो अपने बडे पुत्रकू राज्य देय अर सबनिकू यथायोग्य विभूति देय रत्नोके समूहकरि युक्त देवोके विमान समान जो अपना मंदिर उसे तजकरि निकस्या । स्वर्ण रत्नमई देदीप्यमान जो पालकी तापर चढि चैत्यवान नामा वन तहा गया । सो नगरके लोक हनुमानकी पालकी देख सजल नेत्र भये । पालिकीपर ध्वजा फरहरे हैं, चमरोकरि शोभित है, मोतियोकी झालरियोकरि मनोहर है । हनुमान वनविषै आया सो वन नाना प्रकारके वृक्षोकरि मंडित । अर जहा सूवा, मैना, मयूर, हंस, कोयल, भ्रमर सुन्दर शब्द कर है, अर नानाप्रकारके पुष्पोकरि सुगन्ध है, वहा स्वामी धर्मरत्न, संयमी, धर्मरूप रत्नकी राशि, योगीश्वर, जिनके दर्शनसू पाप विलाय जाय ऐसे संत चारण मुनि अनेक चारण मुनियोकरि मंडित तिष्ठते थे । आकाशविषै है गमन जिनका । सो दूरसू उनकू देखि हनुमान पालकीसू उतरया । महा भक्तिकर युक्त नमस्कारकरि हाथ जोडि कहता भया—हे नाथ ! मैं शरीरादिक परद्रव्योसू निर्ममत्व भया । यह परमेश्वरी दीक्षा आप मुझे कृपाकर देवहु । तब मुनि कहते भए—अहो भव्य ! तैने भली विचारी । तू उत्तम जन है, जिनदीक्षा लेहु । यह जगत असार है, शरीर विनश्वर है । शीघ्र आत्मकल्याण करो । अविनश्वर पद लेवेकी परमकल्याणकारणी बुद्धि तुम्हारे उपजी है । यह बुद्धि विवेकी जीवके ही उपजै है । ऐसी मुनिकी आज्ञा पाय मुनिकू प्रणामकरि पद्मासन धर तिष्ठा । मुकुट, कुण्डल, हार आदि सब आभूषण डारे । जगतसू मनका राग निवारया, स्त्रीरूप बंधन तुडाय, ममता मोह मिटाय, आपकू स्नेहरूप पाशसे छुडाय, विष समान विषय सुख तजकरि, वैराग्यरूप दीपकी शिखाकरि राग रूप अंधकार निवारकरि, शरीर अर संसारकू असार जान, कमलोकू जीत, ऐसे सुकुमार जे कर तिन-करि सिरके केश लौंच करता भया । समस्त परिग्रहसू रहित होय मोक्षलक्ष्मीकू उद्यमी भया, महा ८८७

व्रत धरे, असंयम परिहरे। हनुमानकी लार साडे सातसौ बडे राजा विद्याधर, शुद्ध चित्त विद्युद्गतिकू आदि दे, हनुमानके परम मित्र, अपने पुत्रोकू राज्य देय, अठाईस मूलगुण धार योगीन्द्र भए। अर हनुमानकी रानी अर इन राजावोकी राणी प्रथम तो वियोगरूप अग्निकरि तप्तायमान विलाप करती भई फिर वराग्यकू प्राप्त होय बधुमति नामा आर्यिकाके समीप जाय महा भक्तिकरि सयुक्त नमस्कार करि आर्यिकाके व्रत धारती भई। वे महाबुद्धिवती शीलवती भवभ्रमणके भयसू आभूषण डार एक सफेद वस्त्र राखती भई। शील ही ह आभूषण जिनके तिनकू राज्यविभूति जीण तृण समान भासती भई। अर हनुमान महाबुद्धिमान महातपोधन महापुरुष ससारसू अत्यन्त विरक्त, पच महाव्रत, पच समिति, तीन गुप्ति धार शल कहिए पवत उससे भी अधिक अशल कहिए हनुमान राजा पवनके पुत्र चारित्रविष अचल होते भए। तिनका यश निमल इन्द्रादिक देव गाव, बारम्बार वन्दना कर अर बडे २ कीर्ति कर। निमल ह आचरण जिनका, ऐसा सवज्ञ वीतराग देवका भाषा निमल धम आचरया सो भवसागरके पार भया। वे हनुमान महामुनि पुरुषोविष सूय समान तजस्वी जिनेन्द्रदेवका धम आराधि ध्यान अग्निकरि अष्ट कमकी समस्त प्रकति ई धनरूप तिनकू भस्मकरि तुगी गिरिके शिखरसू सिद्ध भए। कवलज्ञान केवलदशन आदि अनन्त गुणमई सदा सिद्ध लकविष रहगे।

इति श्रीरविषेणाचायविरचित महा पद्मपुराण सस्कृत ग्रन्थ ताकी भाषा वचनिकाविष हनमानका निर्वाण गमन वणन करनवाला एकसौ तेरहवा पव पूण भया ॥ ११३ ॥

अथानन्तर राम सिहासनपर विराजे थे। लक्ष्मणके आठो पुत्रोका अर हनुमानका मुनि होना मनुष्यो के मुखसू सुनकरि हसे, अर कहते भए—इन्होने मनुष्य भवके क्या सुख भोगे? यह छोटी अवस्थामें ऐसे भोग तजकरि योग धारण कर ह सो बडा आश्चय ह? यह हठरूप ग्राहकरि ग्रहे ह। देखो! ऐसे मनोहर काम भोग तजि विरक्त होय बठे ह। या भाति कही। यद्यपि श्रीराम सम्यग्दष्टि ज्ञानी हैं

तथापि चारित्रमोहके वश कईएक दिन लोकोकी न्याई जगतविष रहते भये। ससारके अल्पसुख तिन विष राम लक्ष्मण न्याय सहित राज्य करते भए। एक दिन महाज्योतिका धारक सौधम इन्द्र परम ऋद्धिकरि युक्त महाधीय अर गम्भीरताकरि मडित, नाना अलकार धरे सामान्य जातिके देव जे गुरुजन तुल्य, अर लोकपाल जातिके देव देशपाल तुल्य, अर त्रायस्त्रिशत जातिके देव मत्री समान तिनकरि मडित, तथा अन्य सकल देव सहित इन्द्रासनविष बठे कसे सोह जैसे सुमेरु पवत और पर्वतोंके मध्य सोह। महातेज पुज अदभुत रत्नोका सिहासन, उसपर सुखसू विराजता ऐसा भासै जसे सुमेरुके ऊपर जिनराज भास। चन्द्रमा अर सूयकी ज्योतिकू जीत ऐसे रत्नोके आभूषण पहिरे। सुन्दर शरीर मनोहर रूप नेत्रोकू आनन्दकारी जसी जलकी तरग निमल तसी प्रभाकर युक्त हार पहिरे ऐसा सोह मानो शीतोदा नदीके प्रवाहकरि युक्त निषद्याचल पवत ही ह। मुकट कठाभरण कुण्डल केयूर आदि उत्तम आभूषण पहिरे देवोकरि मडित जसा नक्षत्रोकरि चन्द्रमा सोह तसा सोह ह। अपने मनुष्य लोकविष चन्द्रमा नक्षत्र ही भासें तातै चन्द्रमा नक्षत्रोका दृष्टात दिया ह। चन्द्रमा नक्षत्र जोतिषी देव ह तिनसू स्वगवासी देवोकी अति अधिक ज्योति ह। अर सब देवोसू इन्द्रकी ही अधिक ह। अपने तेजकरि दशो दिशाविष उद्योत करता सिहासनविष तिष्ठता जसा जिनेश्वर भासे तसा भासे। इन्द्रके इन्द्रासनका अर सभाका जो समस्त मनुष्य जिह्वाकरि सैकडो वष लग वणन कर तौभी न कर सक। सभाविषै इन्द्रके निकट लोकपाल सब देवनिविष मुख्य ह। सुन्दर ह चित्त जिनके स्वगसू चयकरि मनुष्य होय मुक्ति जाव ह। सोलह स्वगके बारह इन्द्र ह। एक एक इन्द्रके चार चार लोकपाल एक भवधारी ह। अर इन्द्रनिविष सौधम सनत्कुमार महेन्द्र, लातवेन्द्र, शतारेन्द्र, आरणेन्द्र यह षट एक भवधारी ह। अर शची इन्द्राणी लोकातिक देव, पचम स्वगके तथा सर्वार्थसिद्धिके अहमिन्द्र मनुष्य होय मोक्ष जावे है। सो सौधम इन्द्र अपनी सभाविष अपने समस्त देवनिकरि युक्त बैठे, लोकपालादिक अपने अपने स्थानक बठे। सो इन्द्र शास्त्रका व्याख्यान करते भए। वहाँ प्रसग पाय यह कथन किया अहो देवो! तुम अपने

भावरूप पुष्प निरंतर महा भक्तिकरि अर्हंत देवकूं चढावो। अर्हंतदेव जगतका नाथ है। समस्त दोषरूप वनके भस्म करिवेकूं दावानल समान है, जिसने संसारका कारण मोहरूप महा असुर अत्यन्त दुर्जन ज्ञानकरि मारा, वह असुर जीवोंका बडा बैरी निर्विकल्प सुखका नाशक है। अर भगवान वीतराग भव्य जीवोंकूं संसार समुद्रसे तारिवे समर्थ हैं। संसार समुद्र कषायरूप उग्र तरंगकरि व्याकुल है। कामरूपग्राहकरि चंचलतारूप, मोहरूप मगरकरि मृत्युरूप है ऐसे भवसागरसूं भगवान बिना कोई तारिवे समर्थ नाहीं। कैसे है भगवान? जिनकूं जन्म कल्याणकविषै इन्द्रादिक देव सुमेरुगिरि ऊपर क्षीरसागरके जलकरि अभिषेक करावे है। अर महा भक्तिकरि एकाग्रचित्त होय परिवार सहित पूजा करै है। अर धर्म अर्थ अर काम मोक्ष यह चारों पुरुषार्थ है तिनविषै लगा है चित्त जिनका। जिनेन्द्रदेव पृथ्वीरूप स्त्रीकूं तजकरि सिद्धरूप वनिताकूं वरते भए। कैसी है पृथ्वीरूप स्त्री? विंध्याचल अर कैलाश हैं कुच जिसके, अर समुद्रकी तरंग है कटिमेखला जिसके। ये जीव अनाथ महा मोहरूप अंधकार कर आच्छादित तिनकूं वे प्रभु स्वर्गलोकसे मनुष्यलोकविषै जन्म धरि भवसागरसूं पार करते भए। अपने अद्भुत-अनन्तवीर्य कर आठों कर्मरूप वैरी क्षणमात्रविषै खिपाए। जैसे सिंह मदोन्मत्त हस्तियोंकूं नसावै। भग-वान सर्वज्ञदेवकूं अनेक नामकरि भव्य जीव गावै है जिनेन्द्र भगवान अर्हंत स्वयंभू शम्भु स्वयंप्रभु सुगत शिवस्थान महादेव कालंजर हिरण्यगर्भ देवाधिदेव ईश्वर महेश्वर ब्रह्मा विष्णु बुद्ध वीतराग विमल विपुल प्रबल धर्मचक्री प्रभु विभु परमेश्वर परमज्योति परमात्मा तीर्थंकर कृतकृत्य कृपालु संसारसूदन सुर ज्ञानचक्षु भवांतक इत्यादि अपार नाम योगीश्वर गावै है, अर इन्द्र धरणींद्र चक्रवर्ती भक्तिकरि स्तुति करै है जो गोप्य हैं अर प्रकट है जिनके नाम सकल अर्थ संयुक्त है जिसके प्रसादकरि यह जीव कर्मसे छूटकरि परम धामकूं प्राप्त होय है जैसा जीवका स्वभाव है तैसा वहां रहै है। जो स्मरण करै उसके पाप विलाय जाय। वह भगवान पुराण पुरुषोत्तम परम उत्कृष्ट आनन्दकी उत्पत्तिका कारण महा कल्याणका मूल देवनिके देव उसके तुम भक्त होवो। अपना कल्याण चाहो हो तो

अपने हृदय कमलविषै जिनराजकू पधरावो । यह जीव अनादि निधन है, कर्मोंका प्रेरया भव वनविषै भटक है । सब जन्मविषै मनुष्य भव दुर्लभ है । सो मनुष्यजन्म पायकर जे भूले हैं तिनकू धिक्कार है। चतुर्गतिरूप है भ्रमण जिसविषै ऐसा संसाररूप समुद्र उसमें बहुरि कब बोध पावोगे । जे अरहंतका ध्यान नाहीं करै है, अहो ! धिक्कार उनकू जे मनुष्यदेह पायकर जिनेन्द्रकू न जपै है । जिनेन्द्र कर्म-

रूप वैरीका नाश करणहारा उसे भूल पापी नाना योनिविषै भ्रमण करै है । कभी मिथ्या तपकरि क्षुद्र देव होय है । बहुरि मरकरि स्थावर योनिविषै जाय महा कष्ट भोगै है । यह जीव कुमार्गके आश्रयकरि महा मोहके वश भए इन्द्रोंका इन्द्र जो जिनेन्द्र उसे नाहीं ध्यावै है । देखो मनुष्य होयकरि मूर्ख विषयरूप मांसके लोभी मोहिनी कर्मके योगकरि अहंकार ममकारकू प्राप्त होय हैं, जिनदीक्षा नाहीं धरै हैं । मंदभागियोंके जिनदीक्षा दुर्लभ है । कभी कुतपकरि मिथ्यादृष्टि स्वर्गसू आन उपजे है । सो हीन देव होय पश्चात्ताप करै है कि हम मध्यलोक रत्न द्वीपविषै मनुष्य भए थे, सो अरहंत का मार्ग न जान्या, अपना कल्याण न किया, मिथ्या तपकरि कुदेव भए । हाय हाय ! धिक्कार उन पापियोंकू जो कुशास्त्रकी प्ररूपणाकरि मिथ्या उपदेश देय महा मानके भरे जीवोंकू कुमार्गविषै डारै हैं । मूढोंकू जिनधर्म दुर्लभ है तातै भव भवविषै दुखी होय है । अर नारकी तिर्यंच तो दुखी ही है, अर हीन देव भी दुखी ही है । अर बडी ऋद्धिके धारी देव भी स्वर्गसू चये हैं सो मरणका बडा दुख है, अर इष्ट वियोगका बडा दुःख है । बडे देवोंकी भी यह दशा तो और क्षुद्रोंकी कहा बात ? जो मनुष्य देहविषै ज्ञान पाय आत्मकल्याण करै है सो धन्य है । इन्द्र या भांति कहकर बहुरि कहता भया—ऐसा दिन कब होय जो मेरी स्वर्गलोकविषै स्थिति पूर्ण होय अर मैं मनुष्यदेह पाय, विषयरूप वैरियोंकू जीत, कर्मोंका नाशकरि तपके प्रभावसू मुक्ति पाऊं । तब एक देव कहता भया यहां स्वर्ग-विषै तो अपनी यही बुद्धि होय है परन्तु मनुष्य देह पाय भूल जाय है । जो कदाचित मेरे कहेकी प्रतीति न करो तो पंचम स्वर्गका ब्रह्मेंद्रनामा इन्द्र अब रामचन्द्र भया है । सो यहां तो यों ही कहते

थे अर अब वैराग्यका विचार ही नाहीं। तब शचीका पति सौधर्म इन्द्र कहता भया सब बंधनमें स्नेहका बडा बंधन है। जो हाथ, पग, कंठ आदि अंग अंग बंधा होय सो तो छूटे, परन्तु स्नेहरूप बंधन-करि बंध्या कैसे छूटे ? स्नेहका बंध्या एक अंगुल न जाय सके। रामचन्द्रके लक्ष्मणसूं अति अनुराग है। लक्ष्मणके देखे विना तृप्ति नाहीं। अपने जीवसूं भी उसे अधिक जाने है। एक निमिषमात्र भी लक्ष्मणकूं न देखे तो रामका मन विकल होय जाय। सो लक्ष्मणकूं तजकरि कैसे वैराग्यकूं प्राप्त होय ? कर्मोंकी ऐसी ही चेष्टा है जो बुद्धिमान भी मूर्ख होय जाय है। देखो सुने हैं अपने सब भव जिसने ऐसा विवेकी राम भी आत्महित न करे। अहो देव हो! जीवोंके स्नेहका बडा बंधन है, या समान और नाहीं तातैं सुबुद्धियोंकूं स्नेह तजि संसार सागर तरिवेका यत्न करना चाहिए। या भांति इन्द्रके मुखका उपदेश तत्वज्ञानरूप अर जिनवरके गुणोंके अनुरागसूं अत्यन्त पवित्र उसे सुनकर देव चित्तकी विशुद्धताकूं पाय जन्म जरा मरणके भयसूं कम्पायमान भए, मनुष्य होय मुक्ति पायवेकी अभिलाषा करते भए।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रन्थ ताकी भाषा वचनिकाविषै इन्द्रका देवनिकूं उपदेश वर्णन करनेवाला एकसौ चौदहवां पर्व पूर्ण भया ।। ११४ ।।

अथानन्तर इन्द्र सभासे उठे। तब सुर कहिए कल्पवासी देव अर असुर कहिए भवनवासी विंतर ज्योतिषी देव इन्द्रकूं नमस्कारकरि उत्तम भावधरि अपने अपने स्थानक गए। पहिले दूजे स्वर्ग लग भवनवासी विंतर ज्योतिषीदेव कल्पवासी देवोंकरि ले गए जाय हैं। सो सभामेंके दो स्वर्गवासी देव रत्नचूल अर मृगचूल बलभद्र नारायणके स्नेह परखिवेकूं उद्यमी भए। मनविषै यह धारणा करी-ते दोनों भाई परस्पर प्रेमके भरे कहिये है, देखे उन दोनोंकी प्रीति ? रामके लक्ष्मणसूं एता स्नेह है जाके देखे विना न रहै। सो रामका मरण सुनि लक्ष्मणकी क्या चेष्टा होय ? लक्ष्मण शोककरि विह्वल

भया क्या चेष्टा कर ? सो क्षण एक देखकरि आवेंगे। शोककरि लक्ष्मणका कसा मुख हो जाय, कौन सू कोप कर, क्या कहे, ऐसी धारणाकरि दोनो दुराचारी देव अयोध्या आए। सो रामके महिलविषै विक्रियाकरि समस्त अन्त पुरकी स्त्रीनिका रुदन शब्द कराया। अर ऐसी विक्रिया करी—द्वारपाल उमराव मन्त्री पुरोहित आदि नीचा मुखकरि लक्ष्मणप आए। अर रामका मरण कहते भए, कि हे नाथ ! राम परलोक पधारे। ऐसे वचन सुनकरि लक्ष्मणने मद पवनकरि चपल जो नील कमल ता समान सुदर ह नेत्र जाके सो हाय ! यह शब्द हू आधासा कह तत्काल ही प्राण तजे, सिंहासन ऊपर बठ्या हुता सो वचनरूप वज्रपातका मारचा जीवरहित होय गया। आखकी पलक ज्यो थी त्योंही रह गई। जीव जाता रह्या। शरीर अचेतन रह गया। लक्ष्मणकू भ्राताकी मिथ्या मत्युके वचन रूप अग्निकरि जरा देखि दोनो देव व्याकुल भए। लक्ष्मणके जिवायवेकू असमर्थ। तब विचारी याकी मृत्यु इस ही विधि कही हुती, मनविष अति पछताए। विषाद अर आश्चर्यके भरे अपने स्थानक गए। शोकरूप अग्निकरि तप्तायमान ह चित्त जिनका। लक्ष्मणकी वह मनोहर मूर्ति मतक भई देव देखि न सके। तहा खडे न रहे, निद्य ह उद्यम जिनका। गौतम स्वामी राजा श्रेणिकसू कहे ह—हे राजन ! विना विचारे जे पापी काय कर तिनकू पश्चात्ताप ही होय। देवता गए। अर लक्ष्मणकी स्त्री पति कू अचेतनरूप देखि प्रसन्न करनेकू उद्यमी भई। कह ह, हे नाथ ! किस अविवेकिनी सौभाग्यके गव-करि गर्वितने आपका मान न किया, सो उचित न करी। हे देव ! आप प्रसन्न होवहु। तिहारी अप्र सन्नता हमकू दुखका कारण ह। ऐसा कहकरि वे परम प्रेमकी भरी लक्ष्मणके अगसू आलिंगनकरि पायन पडी। वे राणी चतुराईके वचन कहिवेविषै तत्पर कोईएक तो वीण लेय बजावती भई, कोई मृदग बजावती भई, पतिके गुण अत्यन्त मधुर स्वरसू गावती भई। पतिके प्रसन्न करिवेविष उद्यमी है चित्त जिनका। कोई एक पतिका मुख देख ह अर पतिके सुनिवेकी है अभिलाषा जिनके। कोई एक निर्मलस्नेहकी धरणहारी पतिके तनुसू लिपटकरि कुण्डलकरि मडित महासुन्दर कांतिके कपोलोकू

८९३

स्पर्शती भई। अर कोईएक मधुरभाषिणी पतिके चरणकमल अपने सिरपर मेलती भई। अर कोई मृगनयनी उन्मादकी भरी विभ्रमकरि कटाक्षरूप जे कमल पुष्प तिनका सेहरा रचती भई, जम्भाई लेती पति का वदन निरखि अनेक चेष्टा करती भई।

या भांति ये उत्तम स्त्रियें पतिके प्रसन्न करिवेकू अनेक यत्न करें हैं, परन्तु उनके शरीरविषै निरर्थक भए। वे समस्त राणी लक्ष्मणकी स्त्री ऐसे कम्पायमान हैं जैसे कमलोंका वन पवनकरि कम्पायमान होय। नाथकी यह दशा होते संते स्त्रियोंका मन अतिव्याकुल भया। संशयकू प्राप्त भई कि क्षण मात्रमें यह क्या भया? चितवनमें न आवै अर कथनमें न आवै ऐसा खेदका कारण शोक, उसे मनमें धरकरि वे मुग्धा, मोहकी मारी पसर गई। इन्द्रकी इन्द्राणी समान है चेष्टा जिनकी, ऐसी वे राणी तापकरि तप्तायमान सूख गई। न जानिए तिनकी सुन्दरता कहां जाती रही? यह वृत्तांत भीतरके लोकोंके मुखसू सुनि श्रीरामचन्द्र मन्त्रियोंकरि मंडित महा संभ्रमके भरे भाईपै आए। भीतर राजलोक में गए। लक्ष्मणका मुख प्रभातके चन्द्रमा समान मंदकांति देख्या। जैसा तत्कालका वृक्ष मूलसू उखड पड़ा होय तैसा भाईको देख्या। मनमें चितवते भये विनाकारण भाई आज मोसू रूस्या है। यह सदा आनन्द रूप आज क्यों विषादरूप होय रहा है? स्नेहके भरे शीघ्र ही भाईके निकट जाय ताकू उठाय उरसू लगाय मस्तक चूमते भए। दाहका मारया जो वृक्ष उस समान हरिकू निरखि हलधर अंगसे लिपट गया। यद्यपि जीतव्यताके चिह्न रहित लक्ष्मणकू देख्या तथापि स्नेहके भरे राम उसे मूवा न जानते भए। वक्र होय गई है ग्रीवा जिसकी, शीतल होय गया है अंग जिसका, जगतकी आगल ऐसी भुजा सो शिथिल होय गई, सासोस्वास नाहीं, नेत्रोंकी पलक लगे न विघटे। लक्ष्मणकी यह अवस्था देखि राम खेदखिन्न होयकरि पसेवसू भर गए। यह दीनोंके नाथ राम दीन होय गए' बारम्बार मूर्छा खाय पड़े। आंसुवोंकरि भर गए हैं नेत्र जिनके, भाईके अंग निरखे। इसके एक नखकी भी रेखा न आई कि ऐसा यह महाबली कौन कारणकरि ऐसी अवस्थाकू प्राप्त भया? यह विचार करते संते

भया है कम्पायमान शरीर जिनका, यद्यपि आप सव विद्याके निधान, तथापि भाईके मोहकरि विद्या बिसर गई। मूर्छाका यत्न जान ऐसे वद्य बुलाए। मन्त्र ओषधिविष प्रवीण, कलाके पारगामी ऐसे वद्य आए सो जीवना होय तो कछु यत्न करें। वे माथा धुन नीचे होय रहे। तब राम निराश होय मूर्छा खाय पडे। जसे वक्षकी जड उखड जाय अर वक्ष गिर पडे तस आप पडे। मोतियोके हार चवनकरि मिश्रित जल ताडके वीजनावोकी पवनकरि रामकू सचेत किया। तब महाविह्वल होय विलाप करते भए—शोक अर विषादकरि महापोडित राम आसुवोके प्रवाहकरि अपना मुख आच्छावित करते भए। आसुवोकरि आचछावित रामका मुख ऐसा भास जसा जलधाराकरि चन्द्रमा भास। अत्यन्त विह्वल रामकू वेखि सर्वराजलोकरूप समुद्रसू रुवनरूप ध्वनि होती भई। दुखरूप सागरविष मग्न सकल स्त्रीजन अत्यथपणे रुदन करती भई। तिनके शब्दकरि दशोदिशा पूर्ण भई। कसे विलाप करे हैं? हाय नाथ! पृथ्वीकू आनन्दके कारण सब सुन्दर हमकू वचनरूप दान देवहु। तुमने बिना अर्थ क्यो मौन पकडी? हमारा अपराध क्या? बिना अपराध हमकू क्यो तजो हो? तुम तो ऐसे दयालु हो जो अनेक चूक पडे तो क्षमा करो।

पद्म पुराण ८९५

अथानन्तर इस प्रसगविष लव अकुश परमविषादकू प्राप्त होय विचारते भए कि धिक्कार इस ससार असारकू। अर इस शरीर समान और क्षणभगुर कौन? जो एक निमिष मात्रमें मरणकू प्राप्त होय। जो वासुदेव विद्याधरोकरि न जीत्या जाय सो भी कालके जालमें आय पड्या। इसलिए यह विनश्वर शरीर, यह विनश्वर राज्य सम्पदा उसकरि हमारे क्या सिद्धि? यह विचार सीताके पुत्र फिर गर्भमें आयवेका है भय जिनकू, पिताके चरणारविंदकू नमस्कारकरि महेन्द्रोदयनामा उद्यान विषै जाय अमृतेश्वर मुनिकी शरण लेय दोनो भाई महाभाग्य मुनि भए। जब इन दोनो भाइयोने दीक्षा धरी तब लोक अतिव्याकुल भए कि हमारा रक्षक कौन? रामकू भाई के मरणका बडा दुख सो शोकरूप भवरमें पडे। जिनकू पुत्र निकसनेकी कुछ सुधि नाहीं। रामकू राज्यसू पुत्रोसू प्रियाओसू ८९५

अपने प्राणसू लक्ष्मण अतिप्यारा। यह कर्मोंकी विचित्रता जिसकर ऐसे जीवोकी ऐसी अशुभ अवस्था होय। ऐसा ससार का चरित्र देखि ज्ञानी जीव वराग्यकू प्राप्त होय ह। जे उत्तम जन ह तिनके कछु इक निमित्त मात्र वाह्य कारण देखि अ तरग के विकारभाव दूर होय ज्ञानरूप सूयका उदय होय ह। पूर्वोपार्जित कर्मोका क्षयोपशम होय तब वराग्य उपज ह।

इति श्रीरविषणाचायविरचित महापद्मपराण सस्कनग्र थ ताकी भाषावचनिकाविष लक्ष्मणका मरण अर लवणाकुशका वराग्य वणन वरनेवाला एकसौ प द्रहवा पव पण भया ॥११५॥

अथान तर गौतम स्वामी राजा श्रेणिकसू कह ह—हे भव्योत्तम! लक्ष्मणके काल प्राप्त भए। समस्त लोक व्याकुल भए। अर युगप्रधान जे राम सो अति व्याकुल होय सब बातोसू रहित भए। कछु सुध नाही। लक्ष्मणका शरीर स्वभाव ही करि महासुरूप कोमल सुग ध मतक भया तो जसेका तसा। सो श्रीराम लक्ष्मणकू एक क्षण न तजें। कबहू उरसें लगाय लेय, कभी पपोलें, कभी चूमें, कबहू इसे लेकर आप बठ जाव, कभी लेकर उठ चलें, एकक्षण काहूका विश्वास न कर, एकक्षण न तज। जसे बालकके हाथ अमत आव अर वह गाढा २ गह तसे राम महाप्रिय जो लक्ष्मण उसकू गाढा २ गह। अर दीनोकी नाई विलाप कर। हाय भाई! यह तोहि कहा योग्य जो मुझे तजकरि तने अकले भाजिवेकी बुद्धि करी। म तेरा विरह एकक्षण सहारिव समथ नाहीं। यह बात तू कहा न जान ह? तू तो सब बातोविष प्रवीण ह। अब मोहि दु खके सागरविषै डारकरि ऐसी चेष्टा करै ह। हाय भ्रात! यह क्या क्रूर उद्यम किया जो मेरे बिना जाने, मेरे बिना पूछे कूचका नगारा बजाय दिया। हे वत्स! हे बालक! एक बार मुझे वचनरूप अमत प्याय। तू जो अति विनयवान हुता, विना अपराध मोसू क्यो कोप किया? हे मनोहर! अब तक कभी मोसू ऐसा मान न किया, अब कछु और ही होय गया। कह म क्या किया, जो तू रूसा। तू सदा ऐसा विनय करता मुझे दूरसू देखि

उठ खडा होय, सन्मुख आवता, मोहि सिंहासन ऊपर बठावता, आप भूमिमें बठता। अब कहा दशा भई ? म अपना सिर तेरे पायनमें दू तो भी नहीं बोल ह। तेरे चरणकमल चन्द्रकात मणिसू अधिक ज्योतिकू धरे जे नखोकरि शोभित देव विद्याधर सेवै है। हे देव ! अब शीघ्र ही उठो। मेरे पुत्र वनकू गय, सो दूर न गय ह, तिनकू हम तुरत ही उलटा लावें। अर तुम विना यह तिहारी राणी आर्त्तध्यानकी भरी कुरचीकी नाई कलकलाट कर है, तुम्हारे गुणरूप पाशसू बधी पृथ्वीमें लोटी फिर हैं। तिनके हार विखर गये है, अर शीशफूल चूडामणि कटिमेखला कर्णाभरण विखरे फिर हैं। यह महा विलापकरि रुदन कर हैं, अति आकुल हैं। इनकू रुदनसू क्यो न निवारो ? अब मै तुम विना कहा करू कहा जाऊ ? ऐसा स्थानक नाहीं जहा मोहि विश्राम उपजे। अर यह तिहारा चक्र तुमसू अनुरक्त इसे तजना तुमकू कहा उचित ? अर तिहारे वियोगमें मोहि अकेला जानि यह शोकरूप शत्रु दबाव ह, अब म हीनपुण्य कहा करू ? मोहि अग्नि ऐसे न दह अर ऐसा विष कठकू न सोख जसा तिहारा विरह सोख ह अहो लक्ष्मीधर ! क्रोध तजि, घनी वेर भई। अर तुम ऐसे धर्मात्मा त्रिकालसामायिकके करणहारे, जिनराज की पूजामें निपुण, सो सामायिकका समय टल पूजा का समय टल्या। अब मुनिनिके आहार देयनेकी बेला है सो उठो। तुम सदा साधुनिके सेवक ऐसा प्रमाद क्यो करो हो ? अब यह सूय भी पश्चिम दिशाकू आया। कमल सरोवरमें मुद्रित होय गये तैसे तिहारे दर्शन विना लोकोके मन मुद्रित होय गये। या प्रकार विलाप करते २ दिन व्यतीत भया, निशा भई। तब राम सुन्दर सेज बिछाय भाईकू भजावोमें लेय सूते, किसी का विश्वास नाहीं। राम ८६७
ने सब उद्यम तजि एक लक्ष्मणमें जीव, रात्रिकू कानोविषै कह है-हे देव ! अब तो म अकेला हू, तिहारे जीवकी बात मोहि कहो। तुम कौन कारण ऐसी अवस्थाकू प्राप्त भये हो, तिहारा वदन चन्द्रमाहूत अतिमनोहर अब कातिरहित क्यो भास ह ? अर तिहारे नेत्र मद पवनकरि चचल जो नील कमल उस समान अब और रूप क्यो भास हैं ? अहो तुमकू कहा चाहिए सो ल्याऊं। हे लक्ष्मण !

पद्म पुराण ८९८

ऐसी चेष्टा करनी तुमकू सोह नाहीं, जो मनविष होय सो मुखकरि आज्ञा करो। अथवा सीता तुम कू याव आई होय वह पतिव्रता अपने दुखविष सहाय थी सो तो अब परलोक गई, तुमकू खेद करना नाहीं। हे धीर! विषाद तजो। विद्याधर अपने शत्रु है सो छिद्र देख आए। अब अयोध्या लुटेगी तातै यत्न करना होय सो करो। अर हे मनोहर! तुम काहूसू क्रोध ही करते तब भी ऐसे अप्रसन्न देखे नाहीं, अब ऐसे अप्रसन्न क्यो भासो हो। हे वत्स! अब ये चेष्टा तजो, प्रसन्न होवो। मै तिहारे पायन परू हू, नमस्कार करू हू। तुम तो महा विनयवत हो। सकल पृथ्वीविष यह बात प्रसिद्ध है कि लक्ष्मण रामका आज्ञाकारी ह सदा सन्मुख ह, कभी पराडमुख नाहीं। तुम अतुल प्रकाश जगतके दीपक हो, मत कभी ऐसा होवे जो कालरूप वायुकरि बुझ जावो। हे राजनिके राजन्! तुमने या लोककू अति आनन्दरूप किया। तिहारे राज्यमें अचन किसीने न पाया। या भरतक्षेत्रके तुम नाथ हो। अब लोकनिकू अनाथकरि गमन करना उचित नाहीं। तुमने चक्रकरि शत्रुनिके सकल चक्र जीते अब काल-चक्रका पराभव कसे सहो हो? तिहारा यह सुन्दर शरीर राज्यलक्ष्मीकरि जसा सोहता था, वसा ही मूछित भया सोह ह। हे राजेन्द्र! अब रात्रि भी पूण भई, सध्या फूली, सूय उवय होय गया। अब तुम निद्रा तजो। तुम जस ज्ञाता श्रीमुनिसुव्रतनाथके भक्त प्रभातका समय क्यो चूको हो। जो भग-वान वीतरागदेव मोहरूप रात्रिकू हर लोकालोकका प्रकट करणहारा केवलज्ञानरूप प्रताप करते भए, वे त्रलोक्यके सूय भव्य जीवरूप कमलोकू प्रकट करणहारे तिनका शरण क्यो न सेवो? अर यद्यपि प्रभात समय भया परन्तु मुझे अधकार ही भास ह। क्योकि म तिहारा मुख प्रसन्न नाहीं देखू। तातै ८९८ हे विचक्षण! अब निद्रा तजो, जिनपूजाकरि सभाविष तिष्ठो, सब सामत तिहारे दशनकू खडे ह। बडा आश्चय ह! सरोवरविषै कमल फूले, तिहारा वदनकमल म फूला नाहीं देखू हू। ऐसी विपरीत चेष्टा तुमने अब तक कभी भी नहीं करी। उठो, राज्यकार्यविषै चित्त लगावो। हे भ्रात! तिहारी दीघ निद्रासू जिनमन्दिरोकी सेवाविष कमी पडे ह, सम्पूण नगरविषै मगल शब्द मिट गए, गीत

नृत्यवादित्रादि बन्द हो गये ह। औरोकी कहा बात? जे महाविरक्त मुनिराज ह तिनकू भी तिहारी यह दशा सुनि उद्वेग उपज ह। तुम जिनधमके धारी हो, सब ही साधर्मीजन तिहारी शुभदशा चाह ह। वीण, वासुरी, मदगादिकक शब्दरहित यह नगरी तिहारे वियोगकरि व्याकुल भई नहीं सोह ह। कोई अगिले भवमें महाअशुभ कम उपार्जे तिनके उदयकरि तुम सारिखे भाईकी अप्रसन्नतासू महाकष्टकू प्राप्त भया हू। हे मनुष्योके सूय! जस युद्धविष शक्तिके घावकरि अचेत होय गए थे अर आनन्दसू उठे, मरा दुख दूर किया, तस ही उठकरि मेरा खेद निवारो।

इति श्रीरविषणाचार्यविरचित महा पद्मपुराण सस्कृत ग्रन्थ ताकी भाषा वचनिकाविष रामदेवका विलाप वणन करनेवाला एकसौ सोलहवा पव पूण भया ॥ ११६ ॥

अथानन्तर यह वत्तात सुन विभीषण अपने पुत्रनिसहित अर विराधित सकल परिवार सहित अर सुग्रीव आदि विद्याधरनिके अधिपति अपनी स्त्रियोसहित शीघ्र अयोध्यापुरी आए। आसुनिकरि भरे हैं नेत्र जिनके, हाथ जोडि सीस निवाय रामके समीप आए। महा शोकरूप है चित्त जिनके, अति विषादके भर रामकू प्रणामकरि भूमिविषै बठे, क्षण एक तिष्ठकरि मद २ वाणीकरि विनती करते भए—हे देव! यद्यपि यह शोक दुर्निवार ह तथापि आप जिनवाणीके ज्ञाता हो, सकल ससारका स्वरूप जानो हो, तात आप शोक तजिवे योग्य हो। ऐसा कहि सबही चुप होय रहे। बहुरि विभीषण सब बातविष महा विचक्षण सो कहता भया—हे महाराज! यह अनादि कालकी रीति ह कि जो जन्मा सो मूवा। सब ससारविष यही रीति है, इनहीकू नाहीं भई। जन्मका साथी मरण ह। मृत्यु अवश्य ह, काहूसू न टरी अर न काहूसू टर। या ससार पिंजरेविषै पडे यह जीवरूप पक्षी सबही दुखी हैं, कालके वश है। मृत्युका उपाय नाहीं अर सबके उपाय ह। यह देह नि सदेह विनाशीक ह। तात शोक करना वृथा ह। जे प्रवीण पुरुष हैं वे आत्मकल्याणका उपाय करै हैं। रुदन किएसू मरा न जीवै अर न

वचनालाप कर । तात हे नाथ ! शोक न करो । यह मनुष्यनिके शरीर तो स्त्री पुरुषनिके सयोगसू उपजे ह, सो पानीके बुदबुदावत विलाय जाय । इसका आश्चय कहा ? अहमिद्र इन्द्र लोकपाल आदि देव आयुके क्षयभए स्वगसू चये हं । जिनकी सागरोकी आयु अर किसीके मारे न मरें वे भी काल पाय मरें,मनुष्यनिको कहा बात ? यह तो गभ के खेदकरि पोडित अर रोगनिकरि पूण,डाभकी अणी के ऊपर जो ओसकी बूद आय पडे, उस समान पडनेकू सन्मुख ह, महा मलिन हाडोके पिजरे ऐसे शरीर

पद्म पुराण १० के रहिवेकी कहा आशा ? आप यह प्राणी अपने सुजनोका सोच कर सो आप क्या अजर अमर ह ? आप ही कालकी दाढमें बठे है उसका सोच क्यो न कर ? जो इनहोकी मत्यु आई होय, अर और अमर हैं तो रुदन करना । जब सबकी यही दशा ह तो रुदन काहेका ? जेते देहधारी हैं तेते सब कालके आधीन है । सिद्ध भगवानके देह नाहीं तात मरण नाहीं । यह देह जिस दिन उपज्या उसही विनसू काल इसके लेयवेके उद्यममे ह । यह सब ससारी जीवोकी रीति ह । तात सतोष अगीकार करो । इष्टके वियोगसू शोक कर सो वथा ह । शोककरि मर तो भी वह वस्तु पीछी न आव । तात शोक क्यो करिये । देखो काल तो वजदण्ड लिए सिरपर खडा ह, अर ससारी जीव निभय भये तिष्ठ ह । जस सिंह तो शिर पर खडया ह अर हिरण हरा तण चर ह । त्रलोक्यनाथ परमेष्ठी, अर सिद्ध परमेश्वर तिन सिवाय कोई तीन लोकविषै मत्युसू बच्या सुण्या नाहीं । वे ही अमर ह, अर सब जन्म मरण करै है । यह ससार विध्याचलके वन समान कालरूप दावानल समान बल ह । सो तुम क्या न देखो हो ? यह

जीव ससार वनमें भमणकरि अति कष्टसू मनुष्य देह पाव है सो वथा खोव ह, काम भोगके अभिलाषी होय माते हाथीकी न्याई बधनविष पडे ह, नरक निगोदके दुख भोगवे ह । कभीयक व्यवहार धमकरि स्वगविष देव भी होय ह, आयुके अन्तमें वहासू पडे हैं । जसे नदीके ढाहेका वक्ष कभी उखडे ही तैसें चारोगतिके शरीर मत्युरूप नदीके ढाहेके वक्ष हैं । इनके उखडिवेका क्या आश्चय है ? इन्द्र, धरणेंद्र, चक्रवर्ती आदि अनन्तनाशकू प्राप्त भए । जसे मेघकरि दावानल बुझै तसे शातिरूप मेघकरि

पद्म पुराण ६०१

कालरूप दावानल बुझै, और उपाय नाहीं। पातालविषै, भूतलविषै अर स्वर्गविषै ऐसा कोई स्थान नाहीं जहां कालसूं बचै। अर छठे कालके अन्त इस भरतक्षेत्रमें प्रलय होयगी, पहाड विलय हो जावेंगे तो मनुष्यनिकी कहा बात? जे भगवान तीर्थंकर देव, वज्रवृषभ नाराचसंहननके धारक, जिनके समचतुरस्रसंस्थानक, सुर असुर नरोंकरि पूज्य, जो किसी कर जीते न जाय, तिनका भी शरीर अनित्य, वे भी देह तजि सिद्धलोकविषै निज भावरूप रहे तो औरोंकी देह कैसें नित्य होय? सुर, नर नारक तिर्यंचोंका शरीर केलेके गर्भ समान असार है। जीव तो देहका यत्न करे है, अर काल प्राण हरै है। जैसे बिलके भीतरसूं गरुड सर्पकूं ले जाय तैसे देहके भीतरसूं काल ले जाय है। यह प्राणी अनेक मूवोंकूं रोवै है—हाय भाई! हाय पुत्र! हाय मित्र! या भांति शोक करै है। अर कालरूप सर्प सबोंकूं निगले है। जैसे सर्प मींडककूं निगले। यह मूढ बुद्धि झूठे विकल्प करे है—यह मैं किया, यह मैं करूं हूं, यह करूंगा। सो ऐसे विकल्प करता कालके मुखविषै जाय है, जैसे टूटा जहाज समुद्रके तले जाये। परलोककूं गया जो सज्जन उसके लार कोई जाय सके तो इष्टका वियोग कभी न होय। जो शरीरादिक पर वस्तुसूं स्नेह करें हैं सो क्लेशरूप अग्निविषै प्रवेश करें हैं। अर इन जीवोंके इस संसारविषै एते स्वजनोंके समूह भए जिसकी संख्या नाहीं, जे समुद्रकी रेणुकाके कण तिनसूं भी अपार हैं। अर निश्चयकरि देखिये तो या जीवके न कोई शत्रु है, न कोई मित्र है। शत्रु तो रागादिक हैं, अर मित्र ज्ञानादिक हैं। जिनकूं अनेक प्रकारकरि लडाईये, अर निज जानिए सो भी वैरकूं प्राप्त भया मगर महा रोषकरि हणे, जिसके स्तनोंका दुग्ध पाया, जिसकरि शरीर वृद्ध भया, ऐसी माताकूं भी हनै है। धिक्कार है इस संसारकी चेष्टाकूं जो पहिले स्वामी था, अर बार बार नमस्कार करावता सो भी दास होय जाय है, तब पावोंकी लातोंसूं मारिये हैं। हे प्रभो! मोहकी शक्ति देखो इसके वश भया यह जीव आपकूं नहीं जाने है, परकूं आप माने है। जैसे कोई हाथकरि कारे नागकूं गहै तैसे कनक कामिनीकूं गहे है। इस लोकाकाशविषै ऐसा तिलमात्र क्षेत्र नाहीं जहां जीवने जन्म मरण न किए। ६०१

अर नरकविषै इसकू प्रज्ज्वलित ताम्बा प्याया। अर एतीबार यह नरककू गया जो उसका प्रज्ज्व लित ताम्रपान जोडिये तो समुद्रके जलसू अधिक होय। अर सूकर कूकर गदभ होय इस जीवने एता मलका आहार किया जो अनन्त जन्मका जोडिये तो हजारा विंध्याचलको राशिसू अधिक होय। अर या अज्ञानी जीवने क्रोधके वशसू एते पराए शिर छेदे अर उन्होने इसके छेदे जो एकत्र करिए तो ज्योतिषचक्रकू उलघकरि अधिक होंगे। जीव नरक प्राप्त भया वहा अधिक दुख पाय निगोद गया। वहा अनन्तकाल जन्म मरण किए। यह कथा सुनकरि कौन मित्रसू मोह माने? एक निमिषमात्र विषय का सुख उसके अर्थ कौन अपार दुःख सहै? यह जीव मोहरूप पिशाचके वश पड्या ससार वनविषै भटकै है। हे श्रेणिक! विभीषण रामसू कहै है हे प्रभो! यह लक्ष्मणका मतक शरीर तजिवे योग्य है, अर शोक करना योग्य नाहीं। यह कलेवर उरसू लगाय रहना योग्य नाही। या भाति विद्याधरनिका सूय जो विभीषण उसने श्रीरामसू विनती करी अर राम महाविवेकी, जिनसू और प्रतिबुद्ध होय, तथापि मोहके योगसू लक्ष्मणकी मूर्तिकू न तजी। जैसे विनयवान गुरुकी आज्ञा न तजै।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महा पद्मपुराण सस्कत ग्रन्थ ताकी भाषा वचनिकाविषै लक्ष्मणका वियोग रामका विलाप अर विभीषणका समारस्वरूप वर्णन करनेवाला एकसौ सत्रहवा पर्व पूर्ण भया ।। ११७।।

अथानन्तर सुग्रीवादिक सब राजा रामचन्द्रसू विनती करते भए—अब वासुदेवकी दग्ध क्रिया करो। १०२
तब श्रीरामकू यह वचन अतिअनिष्ट लगा अर क्रोधकरि कहते भए—तुम अपने माता पिता पुत्र, पौत्र सबो की दग्धक्रिया करो, मेरे भाई की दग्धक्रिया क्यो होय? जो तुम्हारा पापियोका मित्र बधु कुटुम्ब सो सब नाशकू प्राप्त होय। मेरा भाई क्यो मरै? उठो लक्ष्मण! इन दुष्टनिके सयोगतै और ठोर चलें, जहा इन पापीनिके कटुवचन न सुनिये। ऐसा कहि भाईकू उरसू लगाय काधे धरि, उठ चले। विभीषण सुग्रीवादिक अनेक राजा इनकी लार पीछे २ चले आवें। राम काहूका विश्वास न करै। भाईकू काधे

धरे फिरैं। जैसें बालकके हाथ विषफल आया अर हितू छुडाया चाहै, वह न छोडे, तैसें राम लक्ष्मण के शरीरकूं न छोडे। आंसुनिकरि भीज रहे हैं नेत्र जिनके, भाईसूं कहते भए हे भ्राता! अब उठो, बहुत वेर भई, ऐसे कहा सोवो हो? अब स्नानकी बेला भई। स्नानके सिंहासन विराजो। ऐसा कहि मृतक शरीरकूं स्नानके सिंहासन पर बैठाया। अर मोहका भरया राम मणि स्वर्णके कलशोंसूं स्नान करावता भया। अर मुकुट आदि सब आभूषण पहिराये। अर भोजनकी तयारी कराई सेवकोंकूं कही नानाप्रकार रत्न स्वर्णके भाजनमें नानाप्रकारका भोजन ल्यावो उसकरि भाईका शरीर पुष्ट होय। सुन्दर भात, दाल, फुलका नानाप्रकारके व्यंजन नाना प्रकारके रस शीघ्रही ल्यावो। यह आज्ञा पाय सेवक सब सामग्रीकरि ल्याये, नाथके आज्ञाकारी। तब आप रघुनाथ लक्ष्मणके मुखमें ग्रास देवें सो न ग्रसै, जैसे अभव्य जिनराजका उपदेश न ग्रहै। तब आप कहते भए जो तैंने मोसूं कोप किया तो आहारसूं कहा कोप? आहार तो करो, मोसूं मति बोलो। जसैं जिनवाणी अमृतरूप है परन्तु दीर्घ संसारीकूं न रुचै, तैसे वह अमृतमई आहार लक्ष्मणके मृतक शरीरकूं न रुच्या। बहुरि रामचन्द्र कहै हैं—हे लक्ष्मीधर! यह नानाप्रकारकी दुग्धादि पीवने योग्य वस्तु सो पीवो। ऐसा कहकरि भाईकूं दुग्धादि प्याया चाहैं सो कहा पीवे? यह कथा गौतमस्वामी श्रेणिकसूं कहै है। वह विवेकी राम स्नेह-करि जीवतेकी सेवा करिये तैसें मृतक भाईकी करता भया। अर नानाप्रकारके मनोहर गीत, बीण, बांसुरी आदि नानाप्रकारके नाद करता भया। सो मृतककूं कहा रुचै? मानो मरा हुवा लक्ष्मण राम का संग न तजता भया। भाईकूं चन्दनसूं चर्चा भुजावोंसूं उठाय लेय, उरसूं लगाय लेय, सिर चूम्बै, मुख चूम्बै, हाथ चूम्बै, अर कहै है—हे लक्ष्मण! यह क्या भया? तू तो ऐसा कभी न सोवता, अब तो विशेष सोवने लगा। अब निद्रा तजो। या भांति स्नेहरूप ग्रहका ग्रहा बलदेव नानाप्रकारकी चेष्टा करैं। यह वृत्तांत सब पृथ्वीमें प्रकट भया कि लक्ष्मण मूवा, लव अंकुश मुनि भये, अर राम मोहका मारया मूढ होय रहा है। तब बैरी क्षोभकूं प्राप्त भए, जैसें वर्षाऋतुका समय पाय मेघ गाजै। शंबूक

का भाई सुंदर इसका नन्दन विरोधरूप है चित्त जिसका, सो इन्द्रजीतके पुत्र वज्रमालीपै आया, अर कहा मेरा बाबा अर दादा दोनो लक्ष्मणने मारे सो मेरा रघुवंशिनिसूं वैर है। अर हमारा पाताल लंकाका राज्य खोस लिया, अर विराधितकूं दिया, अर वानरवंशियोका शिरोमणि सुग्रीव स्वामीद्रोही होय रामसूं मिला, सो राम समुद्र उल्लंघ लंका आए, राक्षसद्वीप उजाड्या। रामकूं सीताका अति

पद्म पुराण ६४ दुःख, सो लंका लेयवेका अभिलाषी भया। अर सिंहवाहिनी अर गरुडवाहिनी दोय महाविद्या राम लक्ष्मणकूं प्राप्त भई तिनकरि इन्द्रजीत कुम्भकर्ण बंदीमे किए। अर लक्ष्मणके चक्र हाथ आया। उसकरि रावणकूं हत्या। अब कालचक्रकरि लक्ष्मण मूवा सो वानरवंशियोकी पक्ष टूटी, वानरवंशी लक्ष्मणकी भुजावोके आश्रयसूं उन्मत्त होय रहे थे। अब क्या करेंगे, वे निरपक्ष भए। अर रामकूं ग्यारह पक्ष हो चुके, बारहमा पक्ष लगा है, सो गहला होय रहा है। भाईके मृतक शरीरकूं लिए फिरै है। ऐसा मोह कौनकूं होय? यद्यपि राम समान योधा पृथ्वीमे और नाहीं, वह हल मूसलका धरणहारा अद्वितीय मल्ल है, तथापि भाईके शोकरूप कीचमे फस्या निकसवे समर्थ नाहीं। सो अब रामसूं वैर भाव लेनेका दाव है। जिसके भाईने हमारे वंशके बहुत मारे। शम्बूकके भाईके पुत्रने इन्द्रजीतके बेटेकूं यह कह्या सो क्रोधकरि प्रज्ज्वलित भया, मंत्रियोकूं आज्ञा देय रणभेरी बिवाय सेना भेलीकर शम्बूकके भाईके पुत्रसहित अयोध्याकी ओर चाल्या। सेनारूप समुद्रकूं लिए प्रथम तो सुग्रीवपर कोप किया कि सुग्रीवकूं मार अथवा पकड उसके देश खोसलें। बहुरि रामसूं लडें। यह विचार इन्द्रजीत के पुत्र वज्रमालीने किया। सुन्दरके पुत्र सहित चढ्या। तब ये समाचार सुनकरि सब विद्याधर जे ९०४

रामके सेवक थे वे रामचन्द्रके निकट अयोध्यामे आय भेले भए। जैसी भीड अयोध्यामे अंकुशके आयवे के दिन भई थी तैसी भई। वैरियोकी सेना अयोध्याके समीप आई सुनकरि रामचन्द्र लक्ष्मणकूं कांधे लिए ही धनुष बाण हाथविषै सम्हारे, विद्याधरनिकूं संग लेय आप बाहिर निकसे। उस समय कृतांतवक्रका जीव अर जटायु पक्षीका जीव चौथे स्वर्ग देव भए थे तिनके आसन कम्पायमान भए।

कृतांतवक्रका जीव स्वामी, अर जटायु पक्षी का जीव सेवक। सो कृतांतवक्रका जीव जटायु के जीवसू कहता भया—हे मित्र! आज तुम क्रोधरूप क्यो भए हो? तब वह कहता भया—जब मै गृधपक्षी था तो रामने मुझे प्यारे पुत्रकी न्याई पाल्या, अर जिनधर्म का उपदेश दिया। मरणसमय नमोकार मन्त्र दिया। उसकरि मै देव भया। अब वह तो भाईके शोककरि तप्तायमान है अर शत्रु की सेना उस पर आई है। तब कृतांतवक्र का जीव जो देव था उसने अवधि जोडकरि कही—हे मित्र! मेरा वह स्वामी था। मैं उसका सेनापति था। मुझे बहुत लडाया, भ्रात पुत्रोंसू भी अधिक गिण्या, अर मेरे उनके वचन है, जब तुमकू खेद उपजेगा तब तिहारे पास मै आऊगा। सो ऐसा परस्पर कहकरि वे दोनो देव चौथे स्वर्गके वासी सुन्दर आभूषण पहिरे, मनोहर हैं केश जिनके, सो अयोध्याकी ओर आए। दोनो विचक्षण, परस्पर दोनो बतलाए। कृतांतवक्रके जीवने जटायुके जीवसू कहा—तुम तो शत्रुओ की सेना की ओर जावो, उनकी बुद्धि हरो। अर मै रघुनाथके समीप जाऊ हू। तब जटायुका जीव शत्रुओ की ओर गया। कामदेव का रूपकरि उनकू मोहित किया। अर उनकू ऐसी माया दिखाई जो अयोध्या के आगे अर पीछे दुर्गम पहाड पडे हैं, अर अयोध्या काहूसू जीती न जाय। यह कौशलीपुरी सुभटो करि भरी है। कोट आकाश लग रहे है। अर नगर के बाहिर भीतर देव विद्याधर भरे हैं। हमने न जानी जो यह नगरी महा विषम है। धरतीविषै देखिए तो आकाशमें देखिए तो देव विद्याधर भर रहे है। अब कौन प्रकार हमारे प्राण बचें? कैसे जीवते घर जावें? जहा श्रीरामदेव विराजे सो नगरी हमसू कैसे लई जाय? ऐसी विक्रियाशक्ति विद्याधरनिविषै कहा? हम बिना विचारे ये काम किया। जो पटबीजना सूर्यसू वैर विचारे तो क्या कर सके। अब जो भागो तो कौन राह होयकरि भागो, मार्ग नाहीं। या भांति परस्पर वार्ता करि कांपने लगे। समस्त शत्रुओकी सेना विह्वल भई। तब जटायुके जीवने देव विक्रियाकी क्रीडा कर उनकू दक्षिणकी ओर भागनेका मार्ग दिया। वे सब प्राण रहित होय कांपते भागे जैसे सिचान आगे पर वे भागें। आगे जायकरि इन्द्रजीतके पुत्रने विचारी जो

हम विभीषणकू कहा उत्तर देंगे। अर लोकोकू क्या मुख दिखावेंगे ? ऐसा विचार लज्जावान होय सुन्दरके पुत्र चारो रत्नसहित अर विद्याधरनि सहित इन्द्रजीतके पुत्र वज्रमाली रतिवेग नामा मुनि के निकट मुनि भए, तब यह जटायुका जीव देव उन साधुओका दर्शनकरि अपना सकल वृत्तात कहि क्षमा कराय अयोध्या आया, जहा राम भाईके शोककरि बालककीसी चेष्टा कर रहे है। तिनके सबोधिवेके अर्थ वे दोनो देव चेष्टा करते भए। कृतातवक्रका जीव तो सूखे वृक्षकू सींचने लगा, अर जटायु का जीव मृतक बैल युगल तिनकरि हल बाहवेका उद्यमी भया, अर शिला ऊपर बीज बोने लगा। सो ये भी दृष्टान्त रामके मनमें न आया। बहुरि कृतातवक्रका जीव रामके आगे जलकू घृत के अर्थ विलोवता भया अर जटायुका जीव बालू रेतकू घानीमें तेलके निमित्त पेलता भया। सो इन दृष्टातनिकरि रामकू प्रतिबोध न भया। और भी अनेक कार्य इसी भाति देवोने किए। तब रामने पूछी तुम बडे मूढ हो, सूखा वृक्ष सींचा सो कहा ? अर मूवे बलोसू हल बाहना करो सो कहा। अर शिला ऊपर बीज बोवना सो कहा। अर जलका विलोवना अर बालूका पेलना इत्यादि कार्य तुम किए सो कौन अर्थ ? तब वे दोनो कहते भए तुम भाईके मृतक शरीरकू वृथा लिए फिरोहो उसविषे क्या ? यह वचन सुनकरि लक्ष्मणकू गाढा उरसू लगाय पृथ्वी का पति जो राम सो क्रोधकरि उनसू कहता भया—हे कुबुद्धि हो। मेरा भाई पुरुषोत्तम उसे अमगल के शब्द क्यो कहो हो ? ऐसे शब्द बोलते तुमकू दोष उपजेगा। या भाति कृतातवक्रके जीवके और रामके विवाद होय है। उसही समय जटायु का जीव मूवे मनुष्यका कलेवर लेय रामके आगे आया। उसे देख राम बोले मरेका कलेवर काहेकू काधे लिए फिरोहो ? तब उसने कही तुम प्रवीण होय प्राणरहित लक्ष्मणके शरीरकू क्यो लिए फिरो हो ? पराया अणुमात्र भी दोष देखो हो, अर अपना मेरु प्रमाण दोष नाहीं देखो हो। सारिखेकी सारिखेसू प्रीति होय है। सो तुमकू मूढ देखि हमारे अधिक प्रीति उपजी है। हम वृथा कार्यके करणहारे तिनविषै तुम मुख्य हो। हम उन्मत्तताकी ध्वजा लिए फिरे है, सो तुमकू अति उन्मत्त देखि तुम्हारे

निकट आए है।

या भांति उन दोनो मित्रोके वचन सुनि राम मोहरहित भया। शास्त्रनिके वचन चितार सचेत भए जैसे सूर्य मेघपटलसूं निकसि अपनी किरणकरि देदीप्यमान भासै, तैसे भरतक्षेत्रका पति राम सोई भया भानु, सो मोहरूप मेघपटलसूं निकसि, ज्ञानरूप किरणनिकरि भासता भया, जैसे शरदऋतुमें कारी घटासूं रहित आकाश निर्मल सोहै तैसे रामका मन शोकरूप कर्दमसूं रहित निर्मल भासता भया। राम समस्त शास्त्रनिमें प्रवीण, अमृत समान जिनवचन चितार खेदरहित भए। धीरता के अवलम्बनकरि ऐसे सोहै जैसा भगवानका जन्माभिषेकविषै सुमेरु सोहै। जैसे महा दाह की शीतल पवन के स्पर्शसूं रहित कमलोका वन सोहै, अर फूलै तैसे शोकरूप कलुषतारहित रामका चित्त विकसता भया। जैसे कोई रात्रिके अंधकारमें मार्गभूल गया था अर सूर्यके उदयके भए मार्ग पाय प्रसन्न होय महाक्षुधाकरि पीडित मन वांछित भोजन खाय अत्यन्त आनन्दकूं प्राप्त होय, अर जैसे कोई समुद्रके तिरिवेका अभिलाषी जहाजकूं पाय हर्षरूप होय, अर वनमें मार्ग भूल नगरका मार्ग पाय खुशी होय, अर तृषाकरि पीडित महा सरोवरकूं पाय सुखी होय, रोगकरि पीडित रोग हरण औषधकूं पाय अत्यन्त आनन्दकूं पावै, अर अपने देश गया चाहै अर साथी देखि प्रसन्न होय, अर बंदीगृहसूं छूट्या चाहै, अर बेडी कटै जैसे हर्षित होय तैसे रामचन्द्र प्रतिबोधकूं पाय प्रसन्न भए। प्रफुल्लित भया है हृदयकमल जिनका परम कांतिकूं धारते, आपकूं संसार अंधकूपसूं निकस्या मानते भए। मनमें जानी मैं नया जन्म पाया। श्रीराम विचारै हैं अहो डाभकी अणीपर पडी ओसकी बूंद ता समान चंचल मनुष्य का जीतव्य एक क्षणमात्रमें नाशकूं प्राप्त होय है। चतुर्गति संसारमें भ्रमण करते मैं अत्यन्त कष्टसूं मनुष्य शरीरकूं पाया सो वृथा खोया। कौनके पुत्र, कौन का परिवार, कौनका धन, कौनकी स्त्री? या संसारमें या जीवने अनन्त सम्बन्धी पाये। एक ज्ञान दुर्लभ है। या भांति श्रीराम प्रतिबुद्ध भए। तब वे दोनो देव अपनी माया दूरकरि लोकोंकूं आश्चर्यकी करणहारी स्वर्ग की विभूति प्रकट दिखा-

६०७

वते भए । शीतलमंद सुगंधपवन बाजी अर आकाशमें देवोके विमानही विमान होय गए,अर देवागना गावती भई , बीण, बासरी, मदगादि बाजते भए । वे दोनो देव रामसू पूछते भए—आप इतने दिवस राज्य किया सो सुख पाया ? तब राम कहते भए, राज्यविषै काहेका सुख ? जहा अनेक व्याधि है । जो याहि तजि मुनि भए वे सुखी । अर मै तुमकू पूछू हू तुम महा सौम्य वदन कौन हो, अर कौन कारण करि मोसू इतना हित जनाया । तब जटायुका जीव कहता भया—हे प्रभो ! मै वह गद्ध पक्षी हू। आप मुनिनकू आहार दिया वहा मै प्रतिबुद्ध भया । अर आप मोहि निकट राख्या, पुत्रकी न्याई पाल्या अर लक्ष्मण सीता मोसू अधिक कृपा करते। सीता हरी गई तादिन मै रावणसू युद्धकरि कण्ठगत प्राण भया । आपने आय मोहि पचनमोकारमत्र दिया,सो मै तिहारे प्रसादकरि चौथे स्वर्ग देव भया। स्वर्गके सुखकरि मोहित भया, अबतक आपके निकट न आया । अब अवधिज्ञानकरि तुमकू लक्ष्मण के शोककरि व्याकुल जान तिहारे निकट आया हू । अर कृतातवक्रके जीवने कही—हे नाथ ! मै कृतातवक्र आपका सेनापति हुता। आप मोहि भात पुत्रनितेहू अधिक जान्या। अर वैराग्य होते मोहि आप आज्ञा करीहुती जो देव होवो तो हमकू कबहू चिन्ता उपजै तब चितारियो । सो आपके लक्ष्मणके मरण की चिन्ता जानि हम तुमपै आए । तब राम दोनो देवनिसू कहते भए—तुम मेरे परममित्र हो । महा प्रभावके धारक चौथे स्वर्गके महाऋद्धिधारी देव मेरे संबोधिवेकू आए । तुमकू यही योग्य । ऐसा कहकरि रामने लक्ष्मणके शोकसू रहित होय लक्ष्मणके शरीरकू सरयू नदीके ढाहे दग्ध किया । श्री राम आत्मभावके ज्ञाता धर्मकी मर्यादा पालनेके अर्थ शत्रुघ्न भाईकू कहते भए—हे शत्रुघ्न ! मै मुनिके व्रतधारि सिद्धपदकू प्राप्त हुआ चाहू हू । तू पृथ्वी का राज्य करि । तब शत्रुघ्न कहते भए हे देव ! मै भोगनिका लोभी नाहीं जाके राग होय सो राज्य करै । मै तिहारे सग जिनराजके व्रत धारूगा, अन्य अभिलाषा नाहीं है । मनुष्यनिके शत्रु ये काम भोग मित्र बाधव जीतव्य इनसू कौन तृप्त भया ? कोई ही तृप्त न भया । तात इन सर्वनिका त्याग ही जीवकू कल्याणकारी है ।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रन्थ ताकी भाषावचनिकाविषै लक्ष्मणकी दग्धक्रिया अर मित्रन्देवनिका आगमन वर्णन करने वाला एकसौ अठारहवां पर्व पूर्ण भया ॥ ११८ ॥

अथानन्तर श्रीरामचन्द्र ने शत्रुघ्न के वैराग्यरूप वचन सुनि ताहि निश्चयसू राज्यसू पराङ्मुख जानि क्षणएक विचारि अनंग लवणके पुत्रकू राज्य दिया। सो पिता तुल्य गुणनिकी खानि, कुलकी धुराका धरणहारा, नमस्कार करै है समस्त सामंत जाकू, सो राज्यविषै तिष्ठ्या। प्रजा का अति अनुराग है जासू। महा प्रतापी पृथ्वीविषै आज्ञा प्रवर्तावता भया। अर विभीषण लंकाका राज्य अपने पुत्र सुभूषणकू देय वैराग्यकू उद्यमी भया। अर सुग्रीवहू अपना राज्य अंगदकू देयकरि संसार शरीर भोगसू उदास भया। ये सब राम के मित्र रामकी लार भवसागर तरिवेकू उद्यमी भए। राजा दशरथका पुत्र राम भरतचक्रवर्तीकी न्याईं राज्यका भार तजता भया। कैसा है राम? विषसहित अन्न समान जाने विषय सुख जाने, अर कुलटा स्त्री समान जानी है समस्त विभूति जाने। एक कल्याण का कारण मुनिनिके सेयवे योग्य, सुर असुरोंकरि पूज्य श्री मुनिसुव्रतनाथका भाख्या मार्ग ताहि उरविषै धारता भया। जन्म मरणके भयसू कम्पायमान भया है हृदय जाका, ढीले किए है कर्मबंध जाने, धोय डाले हैं रागादिक कलंक जाने, महावैराग्यरूप चित्त है जाका। क्लेशभावसू निवृत्त जैसा मेघपटलसू रहित भानु भासै तैसा भासता भया। मुनिव्रत धारिवेका है अभिप्राय जाके। ता समय अरहदास सेठ आया। तब ताहि श्रीराम चतुर्विधसंघकी कुशल पूछते भए। तब वह कहता भया—हे देव! तिहारे कष्टकरि मुनिनकाहू मन अनिष्टे संयोगकू प्राप्त भया। ये बात करै है अर खबर आई है कि मुनिसुव्रतनाथके वंश में उपजे चार ऋद्धिके धारक स्वामी सुव्रत, महाव्रतके धारक, कामक्रोध के नाशक आए हैं। यह वार्ता सुनकरि महाआनन्दके भरे राम, रोमांच होयगया है शरीर जिनका, फूल गए हैं नेत्रकमल जिनके, अनेक भूचर खेचर नृपनिसहित जैसे प्रथम बलभद्र विजय स्वर्णकुम्भ स्वामी

के समीप जाय मुनि भए हुते तस मुनि होनेकू सुव्रतमुनि के निकट गये। ते महा श्रेष्ठगुणो क धारक,
हजारो मुनि मान ह आज्ञा जिनकी, तिनप जाय प्रदक्षिणा देय हाथ जोडि सिरनवाय नमस्कार किया।
साक्षात मुक्तिके कारण महामुनि तिनका दर्शन करि अमृतके सागरविषै मग्न भए। परमश्रद्धाकरि
मुनिराजत रामचन्द्रने जिनचन्द्रकी दीक्षा धारिवेकी विनती करी। हे योगीश्वरनिके इन्द्र! म भव

प्रपचसू विरक्त भया तिहारी शरण ग्रहा चाहू हू। तिहारे प्रसादसू योगीश्वरनिके मार्गविषै विहार
करू। या भाति रामने प्राथना करी। कसे ह राम? धोये ह समस्त रागद्वेषादिक कलक जिन्होने।
तब मुनींद्र कहते भए--हे नरेन्द्र! तुम या बात के योग्य ही हो, यह ससार कहा पदार्थ है? यह तज-
करि तुम जिनधर्म रूप समुद्रका अवगाह करो। यह मार्ग अनादिसिद्ध बाधारहित अविनाशी सुख का
देनहारा तुमसे बुद्धिमान ही आदर। एसा मुनिने कहा तब राम ससारसू विरक्त महा प्रवीण, जस
सूर्य सुमेरुकी प्रदक्षिणा कर तसें मुनीन्द्रकी प्रदक्षिणा करते भए। उपज्या ह महाज्ञान जिनकू, वैराग्य
रूप वस्त्र पहिरे, बाधी ह कर्मोंके नाशकू कमर जिन्होने, आशारूप पाश तोडि, स्नेहका पींजरा दग्ध-
करि, स्त्रीरूप बधनसू छूटि, मोह का मान मारि,हार कुण्डल मुकुट केयूर कटिमेखलादि सब आभूषण
डारि, तत्काल वस्त्र तजे। परम तत्त्वविषै लगाह मन जिनका,वस्त्राभरण यू तजे ज्यो शरीर तजिए।
महासुकुमार अपने कर तिनकरि केशलोच किए। पद्मासन धरि विराजे। शीलक मन्दिर अष्टम बल-
भद्र समस्त परिग्रहकू तजकरि एस सोहते भए जसा राहुसू रहित सूर्य सोह। पचमहाव्रत आदरे।

पचसमिति अगीकार करि तीन गुप्तिरूप गढविषै विराजे। मनोदण्ड, वचनदण्ड, कायदण्डके दूर करण
हारे, षटकायके मित्र सप्त भयरहित, आठ कर्मोंके रिपु,नवधा ब्रह्मचर्यके धारक,श्रीवत्स लक्षणकरि
शोभित ह उरस्थल जिनका, गुणभूषण, सकलदूषणरहित, तत्त्वज्ञानविषै दृढ, रामचन्द्र महामुनि भए।
देवनिने पचाश्चर्य किए। सुन्दर दुदुभी बाजे। अर दोनो देव कृतातवक्त्रका जीव अर एक जटायुका जीव
तिनने परम उत्साह किए। जब पृथ्वीका पति राम पृथ्वीकू तजि निकस्या तब भूमिगोचरी विद्या-

घर सब ही राजा आश्चर्यकू प्राप्त भए। अर विचारते भए जो ऐसी विभूति, ऐसे रत्न, यह प्रताप तजकरि रामदेव मुनि भए तो और हमारे कहा परिग्रह, जाके लोभते घरमें तिष्ठे। व्रत विना हम एते दिन योंही खोए। ऐसा विचारकरि अनेक राजा गृहबंधनसू निकसे। अर रागमई पाशी काटि द्वेषरूप वरीकू विनाशि सब परिग्रहका त्यागकरि भाई शत्रुघ्न मुनि भए। अर विभीषण, सुग्रीव, नील, नल,चन्द्रनख, विराधित इत्यादि अनेक राजा मुनि भए। विद्याधर सर्व विद्याका त्यागकरि ब्रह्म-विद्याकू प्राप्त भए। कई एकनिकू चारणऋद्धि उपजी। या भांति रामके वैराग्य भए सोलह हजार कछु अधिक महीपति मुनि भए। अर सत्ताईस हजार राणी श्रीमती आर्यिकाके समीप आर्यिका भई।

अथानन्तर श्रीराम गुरुकी आज्ञा लेय एकविहारी भए। तजे है समस्त विकल्प जिन्होने गिरिनि-की गुफा अर गिरिनिके शिखर अर विषम वन जिनविषे दुष्टजीव विचरें वहा श्रीराम जिनकल्पी होय ध्यान धरते भए। अवधिज्ञान उपज्या। जाकरि परमाणुपर्यंत देखते भए। अर जगतके पदार्थ सकल भासे। लक्ष्मणके अनेक भव जाने, मोह का सम्बन्ध नाहीं, तातै मन ममत्वकू न प्राप्त होता भया। अब रामकी आयुका व्याख्यान सुनो। कौमार कालवर्ष सौ १००, मडलीक पद वर्ष तीन सौ ३००, दिग्विजय वर्ष चालीस ४०, अर ग्यारह हजार पाच सौ साठ वर्ष ११५६० तीन खडका राज्यकरि बहुरि मुनि भए। लक्ष्मणका मरण याही भांति था। देवनिका दोष नाहीं। अर भाईके मरण निमित्तत रामके वैराग्य का उदय था। अवधिज्ञानके प्रतापकरि रामने अपने अनेक भव जाने। महा धीर्यकू धरे व्रत शीलके पहाड, शुक्ल लेश्याकरि युक्त, महा गम्भीर गुणनि के सागर, समाधान चित्त, मोक्ष लक्ष्मीविषै तत्पर, शुद्धोपयोगके मार्गविषै प्रवरते। सो गौतमस्वामी राजा श्रेणिक आदि सकल श्रोताओ-सू कहै है जैसे रामचन्द्र जिनेन्द्रके मार्गविषै प्रवर्ते तैसे तुमहू प्रवरतो,अपनी शक्ति प्रमाण महा भक्ति-करि जिनशासनविषै तत्पर होवो। जिन नामके अक्षर महारत्नोकू पायकरि हो प्राणी हो! खोटा आच-रण तजहु। दुराचार महादुःख का दाता है, खोटे ग्रथनिकरि मोहित है आत्मा जिनका, अर पाखण्ड

क्रियाकरि मलिन है चित्त जिनका, वे कल्याणके मार्गकू तजि जन्मके आंधे की न्याईं खोटे पन्थ में प्रवरते है। कईएक मूर्ख साधुका धर्म नहीं जानै है अर नाना प्रकार के उपकरण साधु के बतावे हैं। अर निर्दोष जान ग्रहै है वे वाचाल है। जे कुलिंग कहिये खोटे भेष मूढनिने आचरे है वे वृथा हैं। तिनसू मोक्ष नाहीं। जैसे कोई मूर्ख मृतकके भारकू वहै है सो वृथा खेद करै है। जिनके परिग्रह नाहीं अर काहूसू याचना नाहीं, वे ऋषि है, निर्ग्रन्थ, उत्तम गुणनिकरि मंडित पंडितोकरि सेयवे योग्य हैं। यह महाबली बलदेव के वैराग्य का वर्णन सुनि संसारसू विरक्त होवो, जाकरि भवतापरूप सूर्य का आताप न पावो।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रन्थ ताकी भाषावचनिकाविषै श्रीराम का वैराग्य वर्णन करनवाला एकसौ उन्नीसवा पर्व पूर्ण भया ॥ ११९ ॥

अथानन्तर गौतमस्वामी राजा श्रेणिकसू कहै है—हे भव्योत्तम! रामचन्द्रके अनेक गुण धरणींद्र हू अनेक जीभकरि गायवे समर्थ नाहीं, वे महामुनीश्वर जगतके त्यागी, महाधीर, पंचोपवासकी है प्रतिज्ञा जिनके, सो ईर्यासमिति पालते नन्दस्थलीनामा नगरी, तहा पारणाके अर्थ गए। उगते सूर्य समान है दीप्ति जिनकी, मानो चालते पहाड ही है। महा स्फटिकमणि समान शुद्ध हृदय जिनका, वे पुरुषोत्तम मानो मूर्तिवंत धर्म ही मानो तीन लोकका आनन्द एकत्र होय रामकी मूर्ति निपजी है। महा कांतिके प्रवाहकरि पृथ्वीकू पवित्र करते मानो आकाशविषै अनेक रंगकरि कमलोका वन लगवाते नगरविषै प्रवेश करते भए। तिनके रूपकू देखि नगरके सब लोक क्षोभकू प्राप्त भए। लोक परस्पर बतलावें हैं—अहो देखो! यह अद्भुतरूप, ऐसा आकार, जगतविषै दुर्लभ, कबहू देखिवेविषै न आवै, यह कोई महापुरुष महासुन्दर शोभायमान, अपूर्व नर दोनो बाहु लम्बाये आवै है। धन्य यह धीर्य! धन्य यह

पराक्रम ! धन्य यह रूप ! धन्य यह कांति ! धन्य यह दीप्ति ! धन्य यह शांति ! धन्य यह निर्ममत्वता ! यह कोई मनोहर पुराण पुरुष है ऐसा और नाहीं। जूडे प्रमाण धरती देखता,जीवदया पालता, शान्ति-दृष्टि, समाधानचित्त जनका यति चाल्या आवे है। ऐसा कौनका भाग्य जाके घर यह पुण्याधिकारी आहारकरि कौनकू पवित्र करे ? ताके बडे भाग्य जाके घर यह आहार लेय। यह इन्द्र समान रघुकुल का तिलक,अक्षोभ पराक्रमी,शील का पहाड रामचन्द्र पुरुषोत्तम है। याके दर्शनकरि नेत्र सफल होय मन निर्मल होय,जन्म सफल होय,देही पाये का यह फल जो चारित्र पालिए। या भांति नगर के लोक राम के दर्शनकरि आश्चर्यकू प्राप्त भए,नगर में रमणीक ध्वनि भई। श्रीराम नगरविषै पैठे,अर समस्त गली अर मार्ग स्त्री पुरुषनिके समूहकरि भरि गया। नरनारी नानाप्रकारके भोजन है घरविषै जिनके, प्रासुक जलकी झारी भरे द्वारे पेखन करै है, निर्मल जल दिखावते पवित्र धोवती पहिरे नमस्कार करै है। हे स्वामी ! अत्र तिष्ठो, अन्न जल शुद्ध है या भांतिके शब्द करै है। नाहीं समावै है हृदयविषै हर्ष जिनके हे मुनीन्द्र ! जयवंत होवो, हे पुण्यके पहाड ! नांदो विरदो। इन वचनोंकरि दशोंदिशा पूरित भई, घर घरविषै लोग परस्पर बात करै है। स्वर्णके भाजनमें दुग्ध दधि घृत ईखरस दाल भात क्षीर शीघ्र ही तैयार करि राखो, मिश्री मोदक कपूरकरि युक्त शीतल जल। सुन्दर पूरी शिखिरणी भलीभांति विधि से राखो। या भांति नर नारिनिके वचनालाप तिनकरि समस्त नगर शब्दरूप होय गया। महासंभ्रमके भरे जन अपने बालकोको न विलोकते भए। मार्गमें लोक दौडे सो काहूके धक्केसू कोई गिर पडे। या
भांति लोकनिके कोलाहल करि हाथी खूटा उपाडते भए,अर ग्रामविषै दौडते भए,तिनके कपोलोसू मद झरिवेकरि मार्गविषै जलका प्रवाह होय गया। हाथिनिके भयसू घोडे घास तजि तजि बन्धन तुडाय तुडाय भाजे,अर हींसते भए, सो हाथी घोडनिकी घमसाणकरि लोक व्याकुल भए। तब दान-विषै तत्पर राजा कोलाहल शब्द सुनि मंदिरके ऊपर आय खडया रह्या। दूरसू मुनिका रूप देखि मोहित भया। राजाके मुनिसू राग विशेष, परन्तु विवेक नाहीं। सो अनेक सामंत दौडाए अर आज्ञा

करी—स्वामी पधारे है,सो तुम जाय प्रणाम करि बहुत भक्ति विनती करि यहां आहारकूं ल्यावो। सो सामंत भी मूर्ख, जाय पायनपर पडि कहते भये—हे प्रभो! राजाके घर भोजन करहु। वहां महा पवित्र सुन्दर भोजन है। अर सामान्य लोकनिके घर आहार विरस आपके लेयवे योग्य नाहीं। अर लोकोंकूं मने किए कि तुम कहां वे जानो हो? यह वचन सुनकरि महामुनि आपकूं अन्तराय जानि नगरसूं पीछे चाल्ये। तब सब लोग व्याकुल भए। वे महापुरुष जिन आज्ञाके प्रतिपालक, आचारांग सूत्रप्रमाण है आचरण जिनका, आहारके निमित्त नगरविषै विहारकरि अन्तराय जानि नगरसूं पीछे वनविषै गए। चिद्रूपध्यानविषै मग्न कायोत्सर्ग धरि तिष्ठे। वे अद्भुत अद्वितीय सूर्य, मन अर नेत्रकूं प्यारा लागे रूप जिनका, नगरसूं विना आहार गए,तब सब ही खेदखिन्न भए।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महा पद्मपुराण संस्कृत ग्रन्थ ताकी भाषा वचनिकाविषै राम मुनि का आहार के अर्थि नगर में आगमन बहुरि लोकनिके कोलाहलत अन्तराय पाय वनमें आना वर्णन करने वाला एकसौ बीसवा पर्व पूर्ण भया॥ १२०

अथानन्तर राम मुनियो में श्रेष्ठ, बहुरि पंचोपवासका प्रत्याख्यान करि यह अवग्रह धारते भये कि वनविषै कोई श्रावक शुद्ध आहार देय तो लेना, नगर में न जाना। या भांति कांतारचर्या की प्रतिज्ञा करी। सो एक राजा प्रतिनन्द वाकूं दुष्ट तुरंग लेय भागा। सो लोकनिकी दृष्टिसूं दूर गया। तब राजाकी पटरानी प्रभवा अति चिंतातुर शीघ्रगामी तुरंग पर आरूढ राजा के पीछे ही सुभटनि के समूह करि चाली। अर राजाकूं तुरंग हर ले गया था सो वनके सरोवरनिविषै कीचमें फस गया। उतने ही में पटराणी जाय पहुंची। राजा राणीपै आया। तब राणी राजासूं हास्य के वचन कहती भई- हे महाराज! जो यह अश्व आपकूं न हरता तो यह नन्दनवनसा वन अर मानसरोवरसा सर कैसे

देखते ! राजाने कही हे राणी ! वनयात्रा अब सुफल भई जो तिहारा दर्शन भया। या भांति दम्पति परस्पर प्रीतिकी बातकरि सखीजन सहित सरोवरके तीर बैठि नानाप्रकार जल क्रीडा करि दोनों भोजनके अर्थ उद्यमी भए। ता समय श्रीराम मुनि कातारचर्याके करणहारे या तरफ आहारकू आए। यह साधु की क्रिया में प्रवीण, तिनकू देखि राजा हर्षकरि रोमाच भया, राणी सहित सम्मुख जाय नमस्कारकरि ऐसे शब्द कहता भया—हे भगवान ! यहा तिष्ठो, अन्न जल पवित्र है। प्रासुक जलकरि

राजाने मुनिके पग धोए। नवधा भक्ति करि सप्तगुण सहित मुनिकू महापवित्र क्षीर आहार दिया। स्वर्णके पात्रमे लेयकरि महापात्र जे मुनि तिनके करपात्रमे पवित्र अन्न देता भया। निरतराय आहार भया। तब देव हर्षित होय पचाश्चर्य करते भए। अर आप अक्षीण महा ऋद्धिके धारक सो वा दिन रसोईका अन्न अटूट होय गया। पचाश्चर्यके नाम—पच वर्ण रत्नोकी वर्षा, अर महा सुगन्ध कल्पवृक्षों के पुष्पकी वर्षा शीतल मद सुगध पवन, दुदुभी नाद, जय जय शब्द। धन्य यह दान, धन्य यह पात्र, धन्य यह विधि, धन्य यह दाता नीके करी नीके करी नादो विरधो फूलो। या भांति के शब्द आकाश में देव करते भए। अथवा नवधा भक्तिके नाम मुनिको पडगाहनो, ऊचे स्थानक राखना, चरणारविंद धोवने, चरणोदक माथे चढावना, पूजा करनी, मन शुद्ध, वचन शुद्ध, काय शुद्ध, आहार शुद्ध, यह नवधा भक्ति। अर श्रद्धा शक्ति, निर्लोभता, दया, क्षमा, अदेयसापणी नहीं, हर्ष सयुक्त यह दाताके सात गुण। वह राजा प्रतिनन्दी मुनिदानसू देवोकरि पूज्य भया, अर श्रावक के व्रत धारे। निर्मल है
सम्यक्त जाके, पृथ्वी में प्रसिद्ध होता भया। बहुत महिमा पाई। अर पचाश्चर्यमें नानाप्रकारके रत्न स्वर्ण की वर्षा भई, सो दशो दिशा में उद्योत भया अर पृथ्वी का दरिद्र गया। राजा राणी सहित महाविनयवान भक्तिकरि नमीभूत महामुनिकू विधिपूर्वक निरन्तराय आहार देय प्रबोधकू प्राप्त भया अपना मनुष्य जन्म सफल जानना भया। अर राम महामुनि तप के अर्थ एकान्त रहें। बारह प्रकार तप के करणहारे, तप ऋद्धिकरि अद्वितीय, पृथ्वी में अद्वितीय सूर्य विहार करते भए ।

इति श्रीरविषणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रन्थ ताकी भाषावचनिकाविषै राम मुनिक निरन्तराय आहार वर्णन करने वाला एकसौ इक्कीसवां पर्व पूर्ण भया ॥ १२१ ॥

अथानन्तर गौतमस्वामी राजा श्रेणिकसूं कहै है–हे श्रेणिक! वह आत्माराम महामुनि बलदेव स्वामी–शान्त किए हैं राग द्वेष जान, जो और मनुष्योंसूं न बन आवे ऐसा तप करते भए। महा वन-विषै विहार करते पंचमहाव्रत, पंच समिति, तीन गुप्ति पालते शास्त्रके वेत्ता, जितेन्द्री, जिनधर्म में है अनुराग जिनका, स्वाध्याय ध्यान में सावधान, अनेक ऋद्धि उपजी, परन्तु ऋद्धिनि की खबर नाहीं। महाविरक्त निर्विकार, बाईस परीषह के जीतनहारे, तिनके तप के प्रभाव तें वन के सिंह व्याघ्र मृगादिक के समूह निकट आय बैठे जीवों का जाति विरोध मिट गया। राम का शान्त रूप निरखि शांतरूप भए। श्रीराम महाव्रती, चिदानन्दविषै है चित्त जिनका, परवस्तु की वांछारहित, विरक्त, कर्मकलंक हरिवेकूं है यत्न जिनका, निर्मल शिला पर तिष्ठते, पद्मासन धरे आत्मध्यानविषै प्रवेश करते भए। जैसे रवि मेघमालाविषै प्रवेश करै। वे प्रभु सुमेरु सारिखे, अचल हैं चित्त जिनका, पवित्र स्थानविषै कायोत्सर्ग धरे निज स्वरूप का ध्यान करते भए। कबहुक विहार करें सो ईर्य्यासमिति पालते जूड़ा प्रमाण पृथ्वी निरखते, महा शांत जीवदया प्रतिपालक देव देवांगनादिक करि पूजित भए। वे आत्म-ज्ञानी जिन आज्ञा के पालक जैन के योगी ऐसा तप करते भए जो पंचम कालविषै काहू के चितवन विषै न आवै। एक दिन विहार करते कोटिशिला आए जो लक्ष्मण ने नमोकार मंत्र जप कर उठाई हुती। सो आप कोटि शिला पर ध्यान धरि तिष्ठे। कर्मों के खिपायवेविषै उद्यमी क्षपकश्रेणि चढिवे का है मन जिनका। ९१६

अथानन्तर अच्युत स्वर्ग का प्रतीन्द्र सीता का जीव स्वयंप्रभ नामा, अवधिकरि विचारता भया–

राम का अर आपका परम स्नेह, अपने अनेक भव, अर जिन शासन का माहात्म्य, अर राम का मुनि होना अर कोटिशिला पर ध्यान धरि तिष्ठना। बहुरि मन विषै बिचारी वे मनुष्यनि के इन्द्र, पृथ्वी के आभूषण मनुष्यलोकविषै पति हुते, मैं उनकी स्त्री सीता हुती। देखो कर्म की विचित्रता, मैं तो व्रत के प्रभावतैं स्वर्गलोक पाया, अर लक्ष्मण राम का भाई प्राणहूतैं प्रिय सो परलोक गया, राम अकेले रह गये। जगत के आश्चर्य के करणहारे दोनो भाई बलभद्र नारायण कर्म के उदयतैं बिछुरे।

श्रीराम कमल सारिखे नेत्र जिनके, शोभायमान हल मूसल के धारक बलदेव, महाबली सो वासुदेव के वियोगकरि जिनदेव की दीक्षा अंगीकार करते भए। राज अवस्था विषै तो शस्त्रोंकरि सब शत्रु जीते, बहुरि मुनि होय मन इन्द्रिय जीते। अब शुक्लध्यान धार करि कर्म शत्रुकूं जीत्या चाहै है। ऐसा होय जो मेरी देव मायाकरि कछु इक इनका मन मोहमें आवै। वह शुद्धोपयोगसूं च्युत होय शुभोपयोगविषै आय यहां अच्युत स्वर्गविषै आवै। मेरे इनके महाप्रीति है। मैं अर वे मेरु नन्दीश्वरादिक की यात्रा करें, अर बाईस सागर पर्यन्त भेले रहें। मित्रता बढावें अर दोनों मिल लक्ष्मणकूं देखें। यह विचारकरि सीता का जीव प्रतीन्द्र जहां राम ध्यानारूढ थे तहां आया। इनको ध्यानसूं च्युत करवे अर्थ देवमाया रची। वसन्त ऋतु वनविषै प्रकट करी। नाना प्रकारके फूल फूले। अर सुगन्ध वायु बाजने लगी, पक्षी मनोहर शब्द करने लगे, अर भ्रमर गुंजार करै है, कोयल बोलै है, मैना, सुवा नाना प्रकार की ध्वनि कर रहे हैं, आम्र मौर आये, भ्रमरोंकरि मण्डित सोहै है। काम के बाण जे पुष्प तिनकी सुगंधता फैल रही है। अर कणकार जाति के वृक्ष फूले हैं तिनकरि वन पीत हो रहा है, सो मानो वसन्तरूप राजा पीताम्बरकरि क्रीडा कर रहा है। अर मौलश्री की वर्षा होय रही है। ऐसी वसन्त की लीलाकरि आप वह प्रतीन्द्र जानकी का रूप धरि राम के समीप आया।
वह मनोहर वन जहां अर कोई जन नाहीं, अर नाना प्रकार के वृक्ष, सब ऋतु के फूल रहे हैं। ता समय राम के समीप सीता सुन्दरी कहती भई—हे नाथ! पृथ्वीविषै भ्रमण करते कोई पुण्य के योगतैं

तुमकू देखे। वियोगरूप लहर का भरया जो स्नेह रूप समुद्र ताविषै मैं डूबू हू। सो मोहि थाभो। अनेक प्रकार राग के वचन कहे, परन्तु मुनि अकम्प। सो वह सीता का जीव मोह के उदयकरि कभी दाहिने कभी बाये भ्रमै, कामरूप ज्वर के योगकरि कम्पित है शरीर, अर महा सुन्दर अरुण है अधर जाके, या भांति कहती भई–हे देव! मैं बिना बिचारे तिहारी आज्ञा बिना दीक्षा लीनी। मोहि विद्याधरनि ने बहकाया। अब मेरा मन तुमविषै है। या दीक्षाकरि पूर्णता होव। यह दीक्षा अत्यन्त वृद्धनिकू योग्य है। कहा यह यौवन अवस्था अर कहा यह दुर्द्धर व्रत? महा कोमल फूल दावानल की ज्वाला कैसे सहार सकै? अर हजारां विद्याधरनि की कन्या और हू तुमकू वरया चाहै है मोहि आगे धार ल्याई है कहै है—तिहारे आश्रय हम बलदेवकू वरें। यह कहै है। अर हजारां दिव्य कन्या नाना प्रकार के आभूषण पहरे राजहंसनी समान है चाल जिनकी, सो प्रतीन्द्र की विक्रियाकरि मुनीन्द्र के समीप आई। कोयलतै हू अधिक मधुर बोल–ऐसी सोहै मानो साक्षात लक्ष्मी ही है, मन कू आह्लाद उपजावे, कानोंकू अमृत समान ऐसा दिव्य गीत गावती भई। अर बीण, बांसुरी, मृदंग बजावती भई। भ्रमर सारिखे श्याम केश बिजुरी समान चमत्कार, महासुकुमार पातरी कटि, कठोर अति उन्नत है कुच जिनके सुन्दर श्रृंगार करे, नाना वर्ण के वस्त्र पहिरे, हाव भाव विलास विभ्रम कू धरती झलकती अपनी कांति करि व्याप्त किया है आकाश जिन्होंने, मुनि के चौगिर्द बैठी प्रार्थना करती भई–हे देव! हमारी रक्षा करो। अर कोई एक पूछती भई–हे देव! यह कौन वनस्पति है? अर कोई एक माधवी लता के पुष्प के ग्रहण के मिस बाहु ऊंची करती अपना अंग दिखावती भई, ११८
अर कई एक भेली होयकरि ताली देती रासमण्डल रचती भई। पल्लव समान है कर जिनके, अर कोई परस्पर जलकेलि करती भई। या प्रकार नाना भांति की क्रीडा करि मुनिके मन डिगायवे का उद्यम करती भई। सो हे श्रेणिक! जैसे पवनकरि सुमेरु न डिगै तैसे श्रीरामचन्द्र मुनि का मन न डिगा। आत्मस्वरूप के अनुभवी रामदेव, सरल है दृष्टि जिनकी, विशुद्ध है आत्मा जिनका, परीषहरूप

वज्रपातसूं न डिग । क्षपकश्रेणी चढे शुक्लध्यान के प्रथम पाएविषै प्रवेश किया । रामचन्द्र का भाव आत्माविष लगि अत्यन्त निमल भया । सो उनका जोर न पहुच्या । मूढजन अनेक उपाय करें परन्तु ज्ञानी पुरुषनि का चित्त न चलें । वे आत्मस्वरूपविषै ऐसे दृढ भए जो काहू प्रकार न डिगे । प्रतीन्द्र देव ने मायाकरि राम का ध्यान डिगायवेकू अनेक यत्न किए परन्तु कछु ही उपाय न चल्या । वे भगवान पुरुषोत्तम अनादि काल के कर्मों की वगणा के दग्ध करिवेकू उद्यमी भए । पहिले पाए के प्रसादसूं मोह का नाशकरि बारहवें गुणस्थान चढे । तहा शुक्लध्यान के दूजे पाए के प्रसाद तै ज्ञानावरण दर्शनावरण अन्तराय का अन्त किया । माघ शुक्लद्वादशी की पिछली रात्रि केवलज्ञानकू प्राप्त भए । केवलज्ञान विष सव द्रव्य समस्त पर्याय प्रतिभासूं ज्ञानरूप दपण मे लोकालोक सब भासे । तब इन्द्रादिक देवनिके आसन कम्पायमान भए । अवधिज्ञानकरि भगवान रामकू केवल उपज्या जानकरि केवलकल्याणक की पूजाकू आए । महा विभूति सयुक्त देवनि के समूह सहित बडे श्रद्धावान सब ही इन्द्र आए । घातिया कर्म के नाशक अरहन्त परमेष्ठी तिनकू चारणमुनि अर चतरनिकाय के देव सब ही प्रणाम करते भए । वे भगवान छत्र चमर सिहासन आदिकर शोभित त्रलोक्यकरि वन्दिवे योग्य सयोगकेवली, तिनकी गधकुटी देव रचत भए दिव्यध्वनि खिरती भई । सब ही श्रवण करते भए । अर बारम्बार स्तुति करते भए । सीता का जीव स्वयप्रभ नामा प्रतीन्द्र केवली की पूजा करि तीन प्रदक्षिणा देय बारम्बार क्षमा करावता भया । हे भगवन ! मैं दुबुद्धि ने जो दोष किए सो क्षमा करहु । गौतम स्वामी कहे ह-हे श्रेणिक ! वे भगवान बलदेव अनन्त लक्ष्मी कातिकरि सयुक्त आनन्द मूर्ति, केवली तिनकी इन्द्रादिक देव महा हष के भरे अनादि रीति प्रमाण पूजा स्तुति कर विनती करते भए । केवली विहार किया तब देवहू विहार करते भए ।

इति श्रीरविषेणाचायविरचित महापद्मपुराण सस्कृत ग्रन्थ ताकी भाषावचनिकाविष रामक केवलज्ञान की उत्पत्ति वणन करने वाला एकसो बाईसवा पव पूण भया ।। १ २ ।।

६१६

अथानन्तर सीता का जीव प्रतीन्द्र लक्ष्मण के गुण चितारि लक्ष्मण का जीव जहा हुता, अर खर-दूषणका पुत्र शम्बूक असुरकुमार जातिका देव हुता तहा जायकरि ताकू सम्यग्ज्ञान का ग्रहणकराया। सो तीजे नरक नारकिनकू बाधा कराव। हिसानन्द रौद्रध्यानविष तत्पर, पापी नारकीनिकू परस्पर लडाव। पाप के उदयकरि जीव अधोगति जाय। सो तीजे तक तो असुर कुमारहू लडाव आगे असुर कुमार न जाय। नारकी ही परस्पर लडें। जहा कईएकनि कू अग्निकुण्डविष डारें ह सो पुकार है। कई एकनिकू काटनिकर युक्त शाल्मली वक्ष तिन पर चढाय घसीटे है। कई एकनिकू लोहमई मुदगरनि करि कूटे ह। अर जे मास आहारी पापी तिनकू उनही का मास काटि खवाव हं। अर प्रज्ज्वलित लोहके गोला तिनकू मुखमे मारि २ दह। अर कइएक मार के मारे भूमिविष लोट ह अर मायामयी श्वान, मार्जार, सिह, व्याघ्र दुष्ट पक्षी भख है। तहा तिर्यच नाहीं नक की विक्रिया ह। कई एकनिकू सूली चढाव ह अर वज्र क मुदगरनित मार है। कई एकनिकू ताता ताम्बा गालि २ प्यावं हैं अर कह ह ये मदिरापान के फल ह। कई एको को काठ मे बाधकरि करोतासू चीर ह। अर कई एको को कुठारनिसू काट ह। कई एको को घानी मे पेले है। कईयो की आंख काढे हैं। कईयों की जीभ काढे है। वह क्रूर कई एकोक दात तोडे हं। इत्यादि नारकीनिकू अनेक दुख है सो अवधि ज्ञानकरि प्रतीन्द्र नारकीनिकी पीडा देखि शम्बूक के समझायबेकू तीजी भूमि गया। सो असुरकुमार जाति के देव क्रीडा करते हुते वे तो इनके तेजसू डर गए। अर शम्बूककू प्रतीन्द्र कहते भए—अरे पापी निर्दई तैनें
यह क्या आरम्भा जो जीवोकू दुख देव ह। हे नीच देव! क्रूर कर्म तजि क्षमा पकड। यह अनर्थ के कारण कर्म तिनकरि कहा? अर यह नरक के दुख सुनकरि भय उपज ह। तू प्रत्यक्ष नारकीनिकू पीडा करै हैं, कराव ह सो तुझे त्रास नाही। यह वचन प्रतीन्द्र के सुन शबूक प्रशात भया। दूसरे नारकी तेज न सह सके, रोवते भए, अर भागते भए। तब प्रतीन्द्र ने कही हो नारकी हो। मुझसू मत डरहु, जिन पापनिकरि नरक मे आए हो तिनसूं डरो। जब या भांति प्रतीन्द्र ने कही तब उनमे

कईएक मनमें विचारते भए जो हम हिंसा, मषावाद, परधन हरण, परनारि रमण, बहु आरम, बहु परिग्रह में प्रवर्ते, रौद्र ध्यानी भए,उसका यह फल है। भोगनिविष आसक्त भए, क्रोधादिककी तीव्रता भई, खोटे कम कीए, उससू दुख पाया। देखहु यह स्वर्गलोकके देव पुण्य के उदयसू नानाप्रकार के विलास कर है, रमणीक विमान चढे जहा इच्छा होय वहा ही जाय। या भाति नारकी विचारते भए। अर शबूकका जीव जो असुरकुमार उसकू ज्ञानउपज्या। फिर रावणके जीवने प्रतींद्रकू पूछा—तुम कौन हो ? तब वाने सकल वृत्तात कहा। म सीता का जीव तप के प्रभावकरि सोलहवें स्वग में प्रतींद्र भया। अर श्रीरामचन्द्र महा मुनीन्द्र होय ज्ञानावरण दर्शनावरण मोहनीय अन्तरायन का नाशकरि केवली भए। सो धर्मोपदेश देते जगतकू तारते भरतक्षेत्रविष तिष्ठ हैं। नाम गोत्र वेदनी आयु का अन्तकरि परमधाम पधारेंगे। अर तू विषयवासना करि विषम भूमिविष पड्या। अब भी चेत ज्यू कृतार्थ होय। तब रावण का जीव प्रतिबोधकू प्राप्त भया। अपने स्वरूप का ज्ञान उपज्या, अशुभ कम बुरे जाने। मन में विचारता भया मैं मनुष्य भव पाय अणुव्रत महाव्रत न आराधे तात इस अवस्थाकू प्राप्त भया। हाय हाय! मैं कहा किया जो आपकू दुख समुद्र मे डारया। यह मोह का माहात्म्य है जो जीव आत्महित न कर सके। रावण प्रतीन्द्रकू कह ह—हे देव तुम धन्य हो! विषय की वासना तजी, जिनवचन रूप अमृतकू पीकर देवो के नाथ भए। तब प्रतीन्द्र ने दयालु होयकर कही तुम भय मत करो, चलो हमारे स्थानकू चलो। ऐसा कहि याके उठायवेकू उद्यमी भया। तब रावण के जीव के शरीर की परमाणु बिखर गई। जस अग्निकरि माखन पिघल जाय। काहू उपाय करि याहि लेजायवे समथ न भया। जसे दपण में तिष्ठती छाया न ग्रही जाय। तब रावण का जीव कहता भया—हे प्रभो! तुम दयालु हो,सो तुमकू दया उपजे ही, परन्तु इन जीवनिने पूर्व जे कम उपार्जे हैं तिनका फल अवश्य भोगै ह। विषयरूप मास का लोभी दुर्गति की आयु बाध हैं सो आयु पर्यन्त दुख भोगवे ह। यह जीव कर्मों के आधीन, इसका देव क्या करें ? हमने अज्ञान के योगसू अशुभ कम

उपार्जे ह, इनका फल अवश्य भोगेगे। आप छुडायवे समथ नाहीं। तिससू कृपा करि वह उपदेश कहो जिसकरि फिर दुगति के दुख न पाव। हे दयानिधे! तुम परम उपकारी हो। तब देव ने कही—परम कल्याण का मूल सम्यग्ज्ञान ह, सो जिन शासन का रहस्य ह, अविवेकियोकू अगम्य है, तीन लोक में प्रसिद्ध ह, आत्मा अमूर्तिक सिद्ध समान उसे समस्त परद्रव्योसू जुदा जान। जिनधर्म का निश्चयकरि यह सम्यग्दशन कर्मों का नाशक शुद्ध पवित्र परमाथ का मूल जीवो ने न पाया। तात अनन्त भव ग्रहे। यह सम्यग्दशन अभव्योकू अप्राप्य है, अर कल्याण रूप है, जगत मे दुलभ ह, सकल में श्रेष्ठ ह। सो जो तू आत्मकल्याण चाह ह तो उसे अगीकार करहु, जिसकरि मोक्ष पावै। उससू श्रेष्ठ और नाहीं, न हुआ, न होयगा। याहीकरि सिद्ध भए है, अर होयेंगे। जे अरहन्त भगवान ने जीवादिक नव पदाथ भास ह तिनकी दृढ श्रद्धा करनी उसे सम्यग्दशन कहिए। इत्यादि वचनोकरि रावण के जीव कू सुरेन्द्र ने सम्यक्त्व ग्रहण कराया। अर याकी दशा देखि विचारता भया जो देखो रावण के भव में याकी कहा काति थी, महासुन्दर लावण्यरूप शरीर था, सो अब ऐसा होय गया जैसा नवीन वन अग्निकरि दग्ध हो जाय। जिसे देखि सकल लोक आश्चयकू प्राप्त होते सो ज्योति कहा गई? बहुरि ताहि कहता भया कमभूमि में तुम मनुष्य भए थे सो इन्द्रियोके क्षुद्र सुख के कारण दुराचारकरि ऐसे दुख रूप समुद्र में डूबे।

इत्यादि प्रतीन्द्र ने उपदेश के वचन कहे। तिनकू सुनकरि उसके सम्यग्दर्शन दृढ़ भया। अर मन में विचारता भया कर्मों के उदयकरि दुगति के दुख प्राप्त भए, तिनकू भोगि, यहा से छूट मनुष्यदेह पाय, जिनराज का शरण गहूगा। प्रतीन्द्रसू कही—अहो देव! तुम मेरा बडा हित किया जो सम्यग्दशन मे मोहि लगाया। हे प्रतीन्द्र महाभाग्य! अब तुम जावो। वहा अच्युत स्वग में धम के फलसू सुख भोगि मनुष्य होय शिवपुरकू प्राप्त होवो। जब ऐसा कह्या तब प्रतीन्द्र उसे समाधानरूपकरि कर्मों के उदय कू सोचते सते सम्यग्दष्टि वहासू ऊपर आया। ससार की मायासू शकित है आत्मा

जाका। अरहन्त सिद्ध साधु जिनधम के शरणविष तत्पर ह मन जाका, तीन बेर पचमेरु की प्रदक्षिणा-करि चत्यालयो का दशनकरि, नारकीनि के दु खसू कम्पायमान है चित्त जाका, स्वगलोक में हू भोगाभिलाषी न भया। मानो नारकीनिकी ध्वनि सुन ह। सोलहव स्वग के देव कू छठे नरक लग अवधिज्ञानकरि दीख ह। तीजे नरक के विष रावण के जीवकू अर शबूक का जीव जो असुरकुमार देव था ताहि सबोधि सम्यक्त्व प्राप्त किया। हे श्रेणिक! उत्तम जीवोसू पर उपकार बन। बहुरि स्वगलोकसू भरतक्षेत्र में श्रीराम के दशन कू आए। पवनसू हू शीघ्रगामी जो विमान तामे आरूढ, अनक देवनिजू सग लिए, नानाप्रकार के वस्त्र पहिरे, हार माला मुकुटादिककरि मडित, शक्ति गदा खडग धनुष बरछी शतघ्नी इत्यादि अनेक आयुधोकू धरे, गज तुरग सिह इत्यादि अनेक वाहनोपर चढे मृदग, बासुरी, बीण इत्यादि अनेक वादध्वनि के शब्द तिनकरि दशो दिशा पूण करते, केवली के निकट आए। देवो के वाहन गज तुरग सिहादिक तिय च नाहीं देवो की विक्रिया ह। श्रीरामकू हाथ जोडि सीस नवाय बारम्बार प्रणामकरि सीता का जीव प्रतीद्र स्तुति करता भया—हे ससारसागर के तारक! तुमनें ध्यानरूप पवनकरि ज्ञान रूप अग्नि दीप्त करी, ससाररूप बन भस्म किया अर शुद्ध लेश्यारूप त्रिशूलकरि मोहरिपु हता, वराग्य रूप वज्रकरि दढ स्नेहरूप पिजरा चूण किया। हे नाथ! हे मुनीद्र! हे भवसूदन ससाररूप वनसू जे डरै ह तिनकू तुम शरण हो। हे सवज्ञ कतकत्य! जगत गुरु! पाया ह पाइवे योग्य पद जिन्होने, हे प्रभो! मेरी रक्षा करो। ससारके भ्रमणसू अति व्याकुल ह मन मेरा, तम अनादिनिधन जिन शासन का रहस्य जानि प्रबल तप करि ससारसागरसू पार भए। देवाधिदेव! यह तुमकू कहा युक्त—जो मुझे भववन में तजि आप अकले विमल पद कू पधारे। तब भगवान कहते भए—हे प्रतीद्र! तू राग तजि जे वराग्य में तत्पर हैं तिनहीकू मुक्ति ह। रागी जीव ससार में डूबे ह। जसे कोई शिलाकू कठ में बांधि भुजावो करि नदीकू नही तिर सक तसै रागादिक के भारकरि चतुगतिरूप नदी न तिरी जाय। जे ज्ञान वराग्य शील सतोष के धारक ह वेई

संसारकूं तिरें हैं। जे श्रीगुरु के वचनकरि आत्मानुभव के लगे वेई भव भ्रमणसूं छूटें, और उपाय नाहीं। काहू का भी लें जाया लोकशिखर न जाय, एक वीतराग भावहीसूं जाय। इस भांति श्रीराम भगवान सीता के जीवकूं कहते भए। सो यह वार्ता गौतमस्वामी ने राजा श्रेणिकसूं कही। बहुरि कहते भए—हे नृप! सीता के जीव प्रतींद्र ने जो केवलीसूं पूछी अर इनने कहा सो सुन। प्रतीन्द्र ने

पूछी—हे नाथ! दशरथादिक कहां गए, अर लव अंकुश कहां जावेंगे? तब भगवान ने कही दशरथ कौशल्या सुमित्रा केकई सुप्रभा अर जनक अर जनक का भाई कनक यह सब तप के प्रभावकरि तेरहवें देवलोक गए हैं। यह सबही समान ऋद्धिके धारी देव हैं। अर लव अंकुश महा भाग्य कर्मरूप रजसूं रहित होय विमलपदकूं इसही जन्मसूं पावेंगे। इस भांति केवली की ध्वनि सुनि भामण्डलकी गति पूछी। हे प्रभो! भामंडल कहां गया? तब आप कहते भए—हे प्रतींद्र! तेरा भाई राणी सुन्दर मालिनी सहित मुनिदान के प्रभावकरि देवकुरु भोगभूमि में तीनपल्यकी आयुके भोक्ता भोगभूमिया भए। तिनके दानकी वार्ता सुनि—अयोध्यामें एक बहुकोटि धनका धनी सेठ कुलपति, उसके मकरा-नामा स्त्री, जिसके पुत्र राजावोंके तुल्य पराक्रमी, सो कुलपतिने सुनी सीताकूं वनमें निकासी। तब उसने विचारी वह महागुणवती शीलवती सुकुमारअंग निर्जन वनमें कैसे अकेली रहेगी। धिक्कार है संसारकी चेष्टाकूं। यह विचारि दयालुचित्त होय द्युति भट्टारकके समीप मुनि भया। अर उसके दोय पुत्र एक अशोक दूजा तिलक। यह दोनों मुनि भए। सो द्युति भट्टारक तो समाधिमरणकरि नवम-ग्रैवेयकमें अहमिंद्र भए अर यह पिता पुत्र तीनों मुनि ताम्रचूणनामा नगर वहां केवलीकी वंदनाकूं गए।
सो मार्गमें पचास योजनकी एक अटवी वहां चातुर्मासिक आय पड्या। तब एक वृक्षके तले तीनों साधु विराजे मानों साक्षात रत्नत्रय ही है। वहां भामंडल आय निकस्या। अयोध्या आवै था सो विषमवन में मुनिनकूं देखि विचार किया यह महापुरुष जिनसूत्रकी आज्ञा प्रमाण निर्जनवनमें विराजे, चौमासे मुनियोंका गमन नाहीं। अब यह आहार कैसे करें? तब विद्याकी प्रबल शक्तिकरि निकट एक नगर

बसाया, जहा सब सामग्री पूण, बाहिर नानाप्रकार के उपवन,सरोवर अर धानके क्षेत्र, अर नगर के भीतर बडी बस्ती, महासम्पत्ति, चारमहीना आप भी परिवारसहित उस नगर में रह्या अर मुनियों के वैयावत किय। वह वन ऐसा था जिसमें जल नाहीं,सो अदभुत नगर बसाया,जहा अन्नजलकी बाहुल्यता। सो नगरमें मुनियोंका आहार भया,अर और भी दु खित भुखित जीवोकू भाति भाति के दान दिए अर सुन्दरमालिनी राणीसहित आप मुनियोकू अनेकवार निरतराय आहार दीया। चतुर्मास पूण भए मुनि विहार करते भए। अर भामण्डल अयोध्या आय फिर अपने स्थानक गया। एक दिन सुन्दर-

मालिनी राणीसहित सुखसू शयन कर था सो महलपर विजुरी पडी। राजा राणी दोनो मरकरि मुनिदानके प्रभावसू सुमेरुपवत की दाहिनी ओर देवकुरु भोगभूमि,वहा तीन पल्यके आयुके भोक्ता-युगल उपजे। सो दानके प्रभावसू सुख भोगवें ह। सम्यक्तरहित ह,अर दान करें हैं,सो सुपात्रदानके प्रभावसू उत्तमगति के सुख पाव ह। सो यह पात्रदान महासुख का दाता ह। यह बात सुनि फिर प्रतींद्र ने पूछी हे नाथ! रावण तीजी भूमिसू निकसि कहा उपजेगा, अर मै स्वगसू चयकरि कहा उपजूगा मेंरे अर लक्ष्मण के अर रावण के केते भव बाकी ह सो कहो।

तब सवज्ञदव ने कही—हे प्रतींद्र सुन! वे दोनो विजयावती नगरी में सनन्दनामा कुटुम्बी सम्यक-दृष्टि उसके रोहिणीनामा भार्या, उसके गभविष अरहदास ऋषिदास नामा पुत्र होवेंगे, महा गुणवान निर्मलचित्त दोनो भाई उत्तम क्रिया के पालक, श्रावक के व्रत आराधि समाधि मरणकरि जिनराज का ध्यान धरि स्वगविषै देव होवेंगे। तहा सागरात पर्यंत सुख भोगि स्वगसू चयकरि बहुरि वाही
नगरी विषै बडे कुलविषै उपजेंगे। सो मुनिनिकू दान देकर हरिक्षेत्र जो मध्यम भोगभूमि वहा युगलिया होय, दोय पल्य की आयु भोगि, स्वग जावेंगे। बहुरि उसही नगरीविष राजा कुमारकीर्ति, राणी लक्ष्मी, तिनके महा योद्धा जयकात जयप्रभ नामा पुत्र होवेंगे। बहुरि तपकरि सातवें स्वर्ग उत्कृष्ट देव होवेंगे देवलोक के महासुख भोगेगे। अर तू सोलहवा अच्युत स्वर्ग वहा सू चयकरि या भरतक्षेत्रविषै रत्न

स्थलपुरनामा नगर वहां चौदह रत्न का स्वामी षट्खण्ड पृथ्वी का धनी चक्रनामा चक्रवर्ती होयगा। तब वे सातवें स्वर्गसूं चयकरि तेरे पुत्र होवेंगे। रावण के जीव का नाम तो इन्द्ररथ, अर वसुदेव के जीव का नाम मेघरथ, दोनो महा धर्मात्मा होवेंगे। परस्पर उनमें अति स्नेह होयगा। अर तेरा उनसूं अति स्नेह होयगा। जिस रावण ने नीतिसूं तीन खण्ड पृथ्वी का अखण्ड राज्य कीया अर ये प्रतिज्ञा जन्म पर्यन्त निभाही जो पर स्त्री मोहि न इच्छे ताहि मैं न सेऊं, सो रावण का जीव इन्द्ररथ धर्मात्मा कई एक श्रेष्ठ भवधरि तीर्थंकर देव होयगा, तीन लोक उसकूं पूजेंगे। अर तू चक्रवर्ती राज्यपद तजि मुनिव्रत धारी होय, पंचोत्तरोविषै वैजयंतनामा विमान, तहां तप के प्रभावसूं अहमिन्द्र होवेगा। तहांसूं चयकरि रावण का जीव तीर्थंकर, उसके प्रथम गणधर होय निर्वाण पद पावेगा। यह कथा श्री भगवान राम केवली तिनके मुख प्रतींद्र सुनकरि अति हर्षित भया। बहुरि सर्वज्ञ देव ने कही—हे प्रतींद्र! तेरा चक्रवर्ती पद का दूजा पुत्र मेघरथ सो कई एक महा उत्तम भवधरि धर्मात्मा पुष्कर द्वीप के महाविदेह क्षेत्र विषै शतपत्रनामा नगर तहां पंच कल्याणक का धारक तीर्थंकर देव चक्रवर्ती पद कूं धरे होयगा—संसार का त्यागकरि केवल उपाय अनेको कूं तारेगा। अर आप परमधाम पधारेगा। ये वासुदेव के भव तोहि कहे। अर मैं अब सात वर्ष विषै आयु पूर्णकरि लोक शिखर जाऊंगा। जहांसूं बहुरि आना नाहीं। अर जहां अनंत तीर्थंकर गए अर जावेंगे, अनंत केवली तहां पहुंचे, जहां ऋषभादि भरतादि विराजे हैं, अविनाशीपुर त्रैलोक्यके शिखर है। जहां अनन्तसिद्ध हैं,वहां मैं तिष्ठूंगा। ये वचन सुनि प्रतींद्र पद्मनाभ जे श्रीरामचन्द्र सर्वज्ञ वीतराग तिनकूं बार बार नमस्कार करता भया। अर मध्यलोकके सर्व तीर्थ वंदे, भगवानके कृत्रिम अकृत्रिम चैत्यालय अर निर्वाणक्षेत्र वहां सर्वत्र पूजाकरि अर नन्दीश्वरद्वीपविषै अंजनगिरि दधिमुख रतिकर तहां बडे विधानसूं अष्टाह्निका की पूजा करी। देवाधिदेव जे अरहन्त सिद्ध तिनका ध्यान करता भया। अर केवली के वचन सुन ऐसा निश्चय भया जो मैं केवली होय चुका अल्प भव है, अर भाई के स्नेहसूं भोगभूमिविषै जहां भामण्डल का जीव है

तहा उसे देखा अर उसकू कल्याणका उपदेश दीया अर बहुरि अपना स्थान सोलहवा स्वर्ग वहा गया, जाके हजारो देवागना तिनसहित मानसिक भोग भोगता भया। श्रीरामचन्द्र का सत्रह हजार वर्ष की आयु, सोलह धनुष की ऊंची काया, कईएक जन्मके पापोसे रहित होय सिद्ध भये। वे प्रभु भव्यजीवों

का कल्याण करो। जन्म जरा मरण महारिपु जीते। परमात्मा भये जिनशासनविषै प्रकट है महिमा जिनकी, जन्मजरा मरणका विच्छेदकरि अखण्ड अविनाशी परम अतीन्द्रिय सुख पाया। सुर असुर मुनिवर तिनके जे अधिपति तिनकर सेयवे योग्य, नमस्कार करवे योग्य, दोषो के विनाशक, पच्चीस वर्ष तपकरि मुनिव्रत पालि केवली भये। सो आयु पर्यन्त केवलीदशाविषै भव्योकू धर्मोपदेश देय तीन भवन का शिखर जो सिद्धपद वहा सिधारे।

सिद्धपद सकल जीवोका तिलक है। राम सिद्ध भए। तुम रामकू सीस निवाय नमस्कार करो। राम सुरनर मुनियोकरि आराधिवे योग्य है। शुद्ध है भाव जिनके,ससारके कारण जे रागद्वेष मोहादिक तिनसू रहित है। परम समाधि के कारण है। अर महामनोहर है। प्रतापकरि जीत्या है तरुण सूर्य का तेज जिनने,अर उन जसी शरद की पूर्णमासी के चन्द्रमा मे काति नाहीं। सर्व उपमारहित अनुपम वस्तु है। अर स्वरूप जो आत्मरूप उसमें आरूढ है, श्रेष्ठ है चरित्र जिनके, श्रीराम यतीश्वरो के ईश्वर देवो के अधिपति,प्रतींद्र की मायासू मोहित न भए। जीवोके हितू परम ऋद्धिकरि युक्त अष्टम बलदेव पवित्र शरीर शोभायमान अनन्त वीर्यके धारी, अतुल महिमाकरि मडित, निर्विकार, अठारह दोषकरि रहित, अष्टादशसहस शीलके भेद तिनकरि पूर्ण,अति उदार, अति गम्भीर ज्ञानके दीपक, तीनलोक
में प्रकट है प्रकाश जिनका,अष्टकर्मके दग्ध करणहारे, गुणोके सागर, क्षोभरहित सुमेरुसे अचल, धर्म के मूल कषायरूप रिपुके नाशक,समस्त विकल्परहित महानिर्द्वन्द्व,जिनेन्द्रके शासन का रहस्य पाय अतरात्मासू परमात्मा भए। उनने त्रैलोक्यपूज्य परमेश्वरपद पाया, तिनकू तुम पूजो। धोय डारे है कर्मरूप मल जिनने, केवल दर्शनमई। योगीश्वरोंके नाथ, सब दु:खके दूर करणहारे, मन्मथके मथनहारे तिनकू

प्रणाम करो। यह श्रीबलदेवका चरित्र महामनोज्ञ जो भावधर निरन्तर बाच, सुन, पढे, पढावें, शंका रहित होय महाहर्षका भरा रामकी कथाका अभ्यास कर, तिसके पुण्यकी वृद्धि होय। अर बैरी खड्ग हाथमें लिए मारिवेकू आया होय सो शांत होय जाय। या ग्रन्थके श्रवणसू धर्म के अर्थी इष्टधर्मकू लहैं, यशका अर्थी यशकू पाव, राज्यभ्रष्ट हुआ अर राज्य कामना होय तो राज्य पाव, यामें सन्देह नाहीं। इष्ट संयोगका अर्थी इष्टसंयोग लहै, धनका अर्थी धन पावे, जीतका अर्थी जीत पाव, स्त्री का अर्थी सुन्दर स्त्री पावै, लाभ का अर्थी लाभ पाव, सुख का अर्थी सुख पाव, अर काहूका कोई बल्लभ विदेश गया होय अर उसके आयवेकी आकुलता होय सो वह सुखसू घर आव, जो मनविष अभिलाषा होय सो ही सिद्ध होय। सब व्याधि शांत होय,ग्रामके नगरके वनके देव जलके देव प्रसन्न होय। अर नवग्रहो की बाधा न होय, क्रूर ग्रह सौम्य होय जाय, अर जे पाप चिंतवनमें न आवें वे विलाय जाय, अर सकल अकल्याण राम कथाकरि क्षय होय जाय अर जितने मनोरथ ह वे सब रामकथाके प्रसादतै पाव, अर वीतराग भाव दृढ होय उसकरि हजाराभवके उपार्जे पापोकू प्राणी दूर कर। कष्टरूप समुद्र कू तिर सिद्धपद शीघ्रही पावै। यह ग्रन्थ महापवित्र ह, जीवको समाधि उपजावनेका कारण है। नाना जन्ममें जीवने पाप उपार्जे, महाक्लेशके कारण तिनका नाशक ह अर नाना प्रकार के व्याख्यान तिन-करि संयुक्त ह। जिसमें बडे बडे पुरुषोकी कथा भव्यजीवरूप कमलोको प्रफुल्लित करणहारी है। सकल लोककरि नमस्कार करिवे योग्य श्रीवर्धमान भगवान उनने गौतमसू कहा अर गौतमने श्रेणिकसू कहा। ९२८

याही भांति केवली श्रुतकेवली कहते भए। रामचन्द्रका चरित्र साधुओंकी समाधिकी वृद्धि का कारण, सर्वोत्तम महामंगलरूप सो मुनिनिकी परिपाटीकरि प्रकट होता भया। सुन्दर है वचन जिसमें, समी-चीन अर्थकू धरे, अति अद्भुत इन्द्रगुरुनामा मुनि तिनके शिष्य दिवाकरसेन,तिनके शिष्य लक्ष्मणसेन, तिनके शिष्य रविषेण, तिन जिन आज्ञा अनुसार कहा। यह रामका पुराण सम्यग्दर्शन को सिद्धिका कारण, महाकल्याणका कर्ता, निर्मल ज्ञानका दायक, विचक्षण जीवोंके निरंतर सुनिबे योग्य है, अतुल

पराक्रमी, अद्भुत आचरण के धारक, महासुकृती जे दशरथके नन्दन तिनकी महिमा कहा लग कहू।
इस ग्रन्थमें बलभद्र, नारायण, प्रतिनारायण, तिनका विस्ताररूप चरित्र है। जो यामें बुद्धि लगावे
तो अकल्याणरूप पापोकू तजकरि शिव कहिये मुक्ति उसे अपनी करै। जीव विषय की बाछाकरि
अकल्याणको प्राप्त होय है। विषयाभिलाष कदाचित शातिके अर्थ नाहीं। देखो विद्याधरनिका अधि-
पति रावण परस्त्रीकी अभिलाषाकरि कष्टकू प्राप्त भया, कामके रोगकरि हता गया। ऐसे पुरुषो की

यह दशा है तो और प्राणी विषय वासनाकरि कसे सुख पावैं? रावण हजारा स्त्रियोंकरि मण्डित
निरन्तर सुख सेवे था, तृप्त न भया, परदाराकी कामनाकर विनाशकू प्राप्त भया। इन व्यसनोंकरि
जीव कसै सुखी होय। जो पापी परदाराका सेवन कर सो कष्टके सागरमे पड़े। अर श्रीरामचन्द्र महा
शीलवान, परदारा पराङ्मुख, जिनशासनके भक्त, धर्मानुरागी वे बहुतकाल राज्य भोग ससारकू असार
जानि वीतरागके मार्गमें प्रवर्ते परमपदकू प्राप्त भए। और भी जे वीतरागके मार्गमें प्रवर्तेंगे वे शिव-
पुर पहुचेंगे। इसलिए जे भव्य जीव हैं वे जिनमार्गकी दृढप्रीति कर अपनी शक्ति प्रमाण व्रतका आच-
रण करो जो पूर्णशक्ति होय तो मुनि होवो अर न्यून शक्ति होय तो अणुव्रतके धारक श्रावक होवो।
यह प्राणी धर्मके फलकरि स्वर्ग मोक्षके सुख पावै है, अर पापके फलसू नरक निगोदके फल पावै है।
यह निसदेह जानो। अनादिकालकी यही रीति है धर्म सुखदाई। पाप किसे कहिये अर पुण्य किसे कहिए
सो उरविषे धारो। जेते धर्मके भेद हैं तिनविषे सम्यक्त्व मुख्य है। अर जितने पापके भेद हैं तिनमें
मिथ्यात्व मुख्य है। सो मिथ्यात्व कहा? अतत्त्वकी श्रद्धा, अर कुगुरु कुदेव कुधर्मका आराधन, परजीव
कू पीडा उपजावना, अर क्रोध मान माया लोभकी तीव्रता, अर पाच इन्द्रियोंके विषय सप्तव्यसनका
सेवन, अर मित्रद्रोह, कृतघ्न, विश्वासघात, अभक्ष्य का भक्षण, अगम्यविषै गमन, मर्मका छेदक वचन,
दुर्जनता इत्यादि पापके अनेक भेद हैं वे सब तजने। अर दया पालनी, सत्य बोलना, चोरी न करनी,
शीलपालना, तृष्णा तजनी, कामलोभ तजने, शास्त्र पढ़ना, काहूकू कुवचन न कहना, गर्व न करना,

प्रपच न करना, अवेखसका न होना, शातभाव धरना, परउपकार करना, परदारा—परधन परद्रोह तजना, परपीडाका वचन न कहना, बहु आरभ बहु परिग्रहका त्याग करना, दान देना, तप करना, परदु खहरन इत्यादि जो अनेक भेद पुण्यके हैं वे अगीकार करने । अहो प्राणी हो ! सुखदाता शुभ है अर दुखदाता अशुभ है । दारिद्र दु ख रोग पीडा अपमान दुगति यह सब अशुभके उदयसू होय हैं । अर सुख सम्पत्ति सुगति यह सब शुभके उदयसू होय हैं । शुभ अशुभ ही सुख दु खके कारण है । अर कोई देव दानव मानव सुख दुखका दाता नाहीं । अपने अपने उपजे कमका फल सब भोगवे हैं । सब जीवोसू मित्रता करना, किसी से वर न करना, किसीको दुख न देना, सब ही सुखी हों, यह भावना मनमें धरनी, प्रथम अशुभको तज शुभमें आवना, बहुरि शुभाशुभत रहित होय शुद्ध पदकू प्राप्त होना। बहुत कहिवे कर क्या ? इस पुराणके श्रवणकर एक शुद्ध सिद्धपद में आरूढ होना, उनके भेद कर्मनिका विलयकरि आनन्दरूप रहना । हो पडित हो ! परम पदके उपाय निश्चय थकी जिनशासनमें कहे है वे अपनी शक्ति प्रमाण धारण करो, जिसकरि भवसागरसे पार होवो । यह शास्त्र अति मनोहर, जीवोंको शुद्धताका देनहारा, रविसमान सकल वस्तुका प्रकाशक है सो सुनकर परमानन्द स्वरूप मग्न होवो । ससार असार है, जिन धम सार है, जाकरि सिद्धपदको पाइये है । सिद्धपद समान और पदाथ नाहीं । जब श्रीभगवान त्रलोक्यके सूय वद्धमान देवाधिदेव सिद्धलोक को सिधारे तब चतुथ काल के तीन वष साढे आठ महीना शेष थे । सो भगवान को मुक्त भए पीछे पचमकालमें तीन केवली, अर पाच श्रुतकेवली भए । सो वहा लग तो पुराण पूण रह्या । जसे भगवान ने गौतम गणधरसू कहा अर गौतमने श्रेणिकसू कहा वसा श्रुतकेवलीनिने कहा । श्रीमहावीर पीछे बासठवष लग केवलज्ञान रहा। अर केवली पीछे सौ वर्ष तक श्रुतकेवली रहे । पचम श्रुतकेवली श्रीभद्रबाहुस्वामी, तिनके पीछे काल के दोषसू ज्ञान घटता गया । तब पुराणका विस्तारका न्यून होता भया । श्री भगवान महावीरकू मुक्ति पधारे बारह सौ साढ़ तीन वष भये तब रविषेणाचार्यने अठारह हजार अनुष्टुप श्लोकों में

व्याख्यान किया। यह राम का चरित्र सम्यक्त्वचारित्र का कारण केवली,श्रुतकेवली प्रणीत सदा पृथ्वी में प्रकाश करो। जिनशासन के सेवक देव, जिनभक्तिविषै परायण, जिनधर्मी जीवो की सेवा करै है। जे जिन मार्ग के भक्त है उनके सभी सम्यकदृष्टि देव प्रावै है, नानाविधि सेवा करे है, महा आदर सयुक्त सब उपाय कर आपदा में सहाय करै है। अनादिकालसू सम्यकदृष्टि देवो की ऐसी रीति है। जनशास्त्र अनादि है, काहूका किया नाहीं, व्यजन स्वर यह सब अनादि सिद्ध रविषेणाचाय कहे है। मै कुछ नाहीं किया, शब्द अथ अकृत्रिम है। अलकार छन्द आगम निमलचित्त होय नीके जानने। या ग्रन्थविषे धम अथ काम मोक्ष सब ह। अठारह हजार तेईस श्लोक का प्रमाण पद्मपुराण सस्कृत ग्रन्थ ह। इस पर यह भाषा भई सो जयवत होवै, जिनधम की वृद्धि होवै, राजा प्रजा सुखी होवें।

इति श्रीरविषेणाचायविरचित महापद्मपुराण सस्कृत ग्रन्थ ताकी भाषावचनिकाविष मोक्षप्राप्तिका वर्णन करनवाला एकसौतेईसवा पव पूर्ण भया ॥ १२३ ॥

९३१

भाषाकार का परिचय

चौपाई—जम्बूद्वीप सदा शुभथान। भरतक्षेत्र ता माँहि प्रमाण। उसमें आरजखण्ड पुनीत। बसै ताहिमें लोक विनीत ॥१॥ तिनके मध्य ढुंढार जु देश। निवसें जैनी लोक विशेष। नगर सवाई जयपुर महा। तासकी उपमा जाय न कहा ॥२॥ राज्य करै माधव नृप जहां। कामदार जैनी जन तहा। ठौर ठौर जिन मन्दिर बने। पूजै तिनकूं भविजन घने ॥३॥ बसें महाजन नाना जाति। सेवें जिनमारग बहु भांति॥ रायमल्ल साधर्मी एक। जाके घटमें स्वपर विवेक ॥४॥ दयावत गुणवत सुजान। पर उपकारी परम निधान॥ दौलतराम सु ताको मित्र। तासो भाष्यो वचन पवित्र ॥५॥ पदमपुराण महाशुभ ग्रन्थ। तामें लोकशिखरको पन्थ। भाषारूप होय जो येह। बहुजन बाच करैं अति नेह ॥६॥ ताके वचन हियेमें धार। भाषा कीनी मति अनुसार॥ रविषेणाचारज कृतसार। जाहि पढै बुधजन गुणधार ॥ ७ ॥ जिनधर्मिनकी आज्ञा लेय। जिनशासनमाहीं चित्त देय॥ आनन्दसुतने भाषा करी। नन्दो विरदो अति रस भरी ॥८॥ सुखी होहु राजा अर लोक। मिटो सबनिके दुख अरु शोक। बरतो सदा मंगलाचार। उतरो बहुजन भवजल पार ॥९॥ सम्वत अष्टादश शत जान। ता ऊपर तईस बखान (१८२३)। शुक्लपक्ष नवमी शनिवार। माघमास रोहिणि ऋख सार ॥१०॥

दोहा—ता दिन सम्पूरण भयो, यह ग्रन्थ सुखदाय। चतुरसंघ मंगल करो, बढ़ै धर्म जिनराय।
या श्रीरामपुराणके छन्द अनूपम जान। सहस बीस द्वय पाचसौ भाषा ग्रन्थ प्रमान ॥

इति श्रीपद्मपुराणजी भाषा समाप्त